મળવાનું ઠેકાણું :
શ્રી અ. ભા. શ્વે. સ્થાનકવાસી
જૈન શાસ્ત્રોદ્ધાર સમિતિ,
ઠે. ગરેડિયાકૂવા રોડ,
રાજકોટ, (સૌરાષ્ટ્ર)

Published by
Shri Akhil Bharat S. S.
Jain Shastroddhara Samiti,
Garedia Kuva Road RAJKOT
(Saurashtra) W. Ry. India.



ये नाम केचिदिह नः प्रथयन्त्यवज्ञां,
जानन्ति ते किमपि तान् प्रति नैष यत्नः ।
उत्पत्स्यतेऽस्ति मम कोऽपि समानधर्मा,
कालो ह्ययं निरवधिर्विपुला च पृथ्वी ॥ १ ॥



हरिगीतच्छन्दः



करते अवज्ञा जो हमारी यत्न ना उनके लिये ।
जो जानते हैं तत्त्व कुछ फिर यत्न ना उनके लिये ॥
जनमेगा मुझसा व्यक्ति कोई तत्त्व इससे पायगा ।
है काल निरवधि विपुल पृथ्वी ध्यान में यह लायगा ॥ १ ॥

મૂલ્ય રૂ. ૨૫=૦૦

પ્રથમ આવૃત્તિ : પ્રત ૧૨૦૦
વીર સંવત્ : ૨૪૯૧
વિક્રમ સંવત્ ૨૦૨૨
ઈસવીસન ૧૯૬૫

: મુદ્રક :
મણિલાલ છગનલાલ શાહ
નવપ્રભાત પ્રિન્ટીંગ પ્રેસ
ઘીકાંટા રોડ, અમદાવાદ.

आद्यमुरब्बीश्री



श्रीमान् सेठश्री खीमराजजी सा. चोरडिया

श्रीमान् सेठ श्री खीमराजजी सा, चोरडियाका संक्षिप्त जीवन चरित्र

संसारके विशाल प्रांगनमें कार्यरूपी क्रीडा करते हुए विरलेही पुरुष असीम सफलताके भागी बनते हैं। दानवीर महोदय श्रीमान खीमराजजी साहब चोरडिया उन उन्नायकोंमें से है, जिन्होंने अपनी सुकार्यदक्षता एवं सुव्यवस्थासे अच्छी उन्नति की.

आपका जन्म सं. १९७१ मिति आसोज सुदि ९ को हुआ। आपका निवास नागोरके समीप चन्दावतोंका नोखा है। इस नोखा गावके नवनिर्माणमें चोरडिया परिवारका महत्वपूर्ण योग रहा है। आपके पिता स्व० श्रीमान् सीरेमलजी साहब चोरडियाका आप पर धार्मिकताका अच्छा असर पडा। बचपनसे ही आप प्रतिभाशाली छात्रोंमेंसे थे। अतः स्वल्प समयमेंही शिक्षा समाप्त कर व्यापारक्षेत्रमें उतर पडे जिसमें से आपने अच्छी सफलता प्राप्त की। पिताके स्वर्गवासके पश्चात् आप मद्रास चले गये। आपकी वैज्ञानिक बुद्धिके कारण थोडेही दिनोंमें इस कार्यमें कुशलता प्राप्त कि " खिमराज मोटर्स–जिसमें बेड-फोर्ड ट्रक, एम्बेसडरकार टेम्पो, ओटोरिक्शा और वेल्पा स्कुटरकी एजेन्सियां है। आपने अपने जीवनमें व्यवसायिक कार्योमें अतिशय उन्नति की। आप मद्रासके एक प्रमुख श्रीमन्त व्यवसायी है।

आप स्थानकवासी जैन धर्मानुयायी एवं उदार धर्मप्रेमी सज्जन हैं। सार्वजनिक जनहितके कार्योमें पूरी दिलचस्पी रखते है। उदारचेता है, साहित्यरसिक होनेके साथ साथ धार्मिक नित्यनियम व व्रत, उपवास आदि तपश्चर्यामें भी अच्छी रुचि रखते है।

जैन हाइस्कूलमें २१००)की लागतका एक हॉल बनवाकर अपने अपनी शिक्षाप्रेमका अच्छा परिचय दिया। आपकी ओरसे मद्रासमें 'खीवराज डीस्पे-

न्सरी चलती है। मोरवामें दूसरे सज्जनोंकी मददके साथ 'सिरेमल जोरावर मल' 'हेल्थसेन्टर' चल रहा है। दानकी ओर आपका झुकाव इतना अधिक है कि कोई भी व्यक्ति किसी प्रकारकी सहायताके लिए आपके पास पहुंचता है तो वह निराश नहीं लौटता है। आप जहां कहीं भी जाते हैं वहांकी संस्था ओंको कुछ न कुछ सहायता जरूर करते हैं। विद्यादानमें आपकी ओरसे हजारों रुपये लगते हैं। कई छात्रालयोंको आपकी ओर आर्थिक सहायता मिलती है।

जैन साहित्य प्रकाशन कार्यमें आपकी बडी दिलचस्पी है। कई ग्रन्थोंके प्रकाशनमें आपका आर्थिक सहयोग रहा है। आगम प्रकाशनकी जब आपसे चर्चा की गई तो आपने स्वयमेव पांच हजार रुपयेकी महान सहायता प्रदान करनेकी उदारता प्रगट की।

आप स्वयं धर्म प्रेमी हैं और धार्मिक कार्योंमें तन मन व धनसे सदा आगेवान रहते हैं। यही कारण है कि स्थानकवासी समाजमें और ओसवाल समाजमें आपका नाम सर्वोपरि आगेवान पुरुषोंमें बडे सन्मानके साथ आता है। समाजसुधार तथा धन बाजुतिके कामोंमें आपकी अच्छी रुचि है।

आपने अ० भा० श्वे० स्था० शास्त्रोद्धार समितिको आगम प्रकाशनके हेतु ५०००) रुपया प्रदान कर स्थाईसदस्यता स्वीकार की है, अतः समिति आपका हार्दिक आभार मानती है।

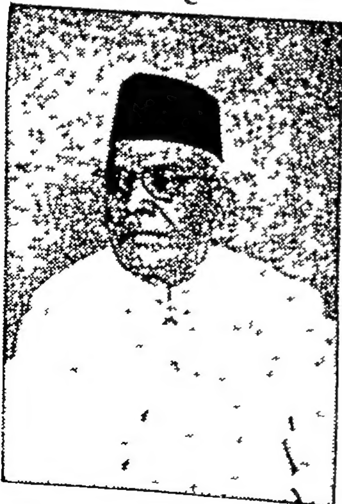
આદ્યમુરબ્બીશ્રીઓ



શેઠશ્રી શાંતિલાલ મંગળદાસભાઈ
અમદાવાદ



(સ્વ) શેઠશ્રી શામજીભાઈ વેલજીભાઈ
વીરાણી-રાજકોટ



શેઠશ્રી રામજીભાઈ શામજીભાઈ
વીરાણી-રાજકોટ.



(સ્વ) શેઠશ્રી હરખચંદ કાલીદાસ વારિઆ
ભાણવડ.



(સ્વ.) શેઠશ્રી ધારશીભાઈ જીવણલાલ
બારસી



શેઠશ્રી હરગોવિંદ જેઠાભાઈ
રાજકોટ



(સ્વ.) શેઠશ્રી દિનેશભાઈ કાંતિલાલ શાહ
અમદાવાદ



સ્વ. શેઠશ્રી આત્મારામ માણેકલાલ
અમદાવાદ

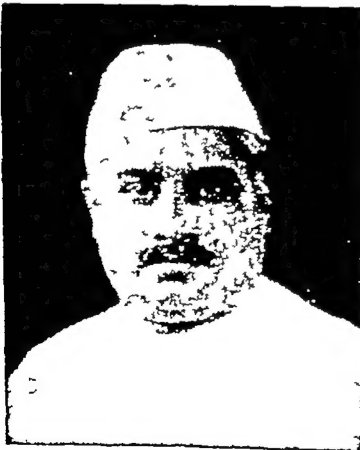
આદ્યમુરબ્બીશ્રીઓ



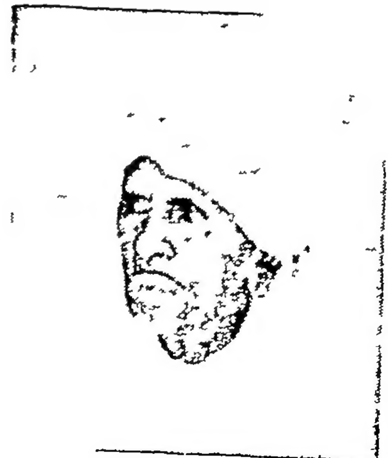
(સ્વ) શેઠશ્રી છગનલાલ શામળદાસ ભાવસાર
અમદાવાદ



(સ્વ) શેઠ રંગજીભાઈ મોહનલાલ શાહ
અમદાવાદ



શેઠશ્રી જેસિંગભાઈ પોચાલાલભાઈ
અમદાવાદ



સ્વ. શ્રીમાન્ શેઠશ્રી મુકનચંદજી સા.
બાલિયા પાલીમારવાડ.

આદ્યમુરબ્બીશ્રીઓ



૧ વચ્ચે બેઠેલા મોટાભાઈ શ્રીમાન્ મૂલચંદજી જવાહીરલાલજી બરડિયા
૨ બાજુમાં બેઠેલા ભાઈ મિશ્રીલાલજી બરડિયા
૩ ઊભેલા સૌથી નાનાભાઈ પૂનમચંદ બરડિયા

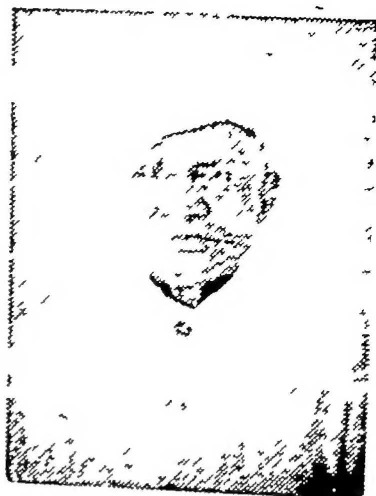


શેઠશ્રી મિશ્રીમલજી સાતમલજી સા. લુણિયા
તથા શેઠશ્રી ખેતરાજજી લાલચંદજી સા.

આદ્યમુરબ્બીશ્રીઓ



શ્રી વિનોદકુમાર વીરાણી



શ્રી વૃજલાલ દુર્લભજી પારેખ
રાજકોટ.



સ્વ. શેઠશ્રી હરિલાલ અનોપચંદ શાહ
ખંભાત.



વચ્ચે બેઠેલા
લાલાજી કિશનચંદજી સા જોહરી
ઉભેલા સુપુત્ર ચિ મહેતાબચન્દજી સા. જૈન
નાના – અનિલકુમાર જૈન (દોયત્તા)



स्व. सेठ ताराचंदजी साहेब गेलड़ा
मद्रास

श्री स्थानाङ्गसूत्र भा. तीसरे की

विषयानुक्रमणिका

अनुक्रमाङ्क	विषय	पृष्ठाङ्क
	स्था. ४ तीसरा उद्देशा	
१	उदकदृष्टान्तसे चार प्रकारके भावोंका निरूपण	१–५
२	पक्षीके दृष्टान्तसे चार प्रकारके पुरुषजातका निरूपण	५–१४
३	दृष्टान्त सहित पुरुषजातका निरूपण	१४–१६
४	दृष्टान्त सहित श्रमणोपासकके आश्वास–विश्राम का निरूपण	१७–२५
५	किसी पुरुष विशेषका निरूपण	२५–३२
६	भावसे जीवोंका निरूपण	३२–३४
७	लेश्या का निरूपण	३५–३६
८	यानादिके दृष्टान्तसे पुरुषजातका निरूपण	३६–४३
९	युग्य–वृषभादि के दृष्टान्तसे दार्ष्टान्तिक पुरुषजात का निरूपण	४४–४६
१०	सारथीके दृष्टान्तसे पुरुषजातका निरूपण	४७–५१
११	गजके दृष्टान्तसे पुरुषजातका निरूपण	५२–५६
१२	पुष्पके दृष्टान्तसे पुरुषजातका निरूपण	५६–५७
१३	जातिसम्पन्नादि पुरुषजातका निरूपण	५८–६६
१४	चार प्रकारके फलके स्वरूपका निरूपण	६६–६८
१५	चार प्रकारके पुरुषजातका निरूपण	६८–७८
१६	चार प्रकारके आचार्यके स्वरूपका निरूपण	७९–८३
१७	निर्ग्रन्थके स्वरूपका निरूपण	८३–८८
१८	श्रमणोपासकके स्वरूपका निरूपण	८८–९२
१९	महावीरस्वामीके श्रमणोपासकोंके सौधर्म कल्पस्थित अरुणाभ विमानकी स्थितिका निरूपण	९३–
२०	मनुष्यलोकमें देवोंके आगमन–आना और अनागमन–नहीं आनेके कारणोंका निरूपण	९४–१०८
२१	लोकान्धकार–एवं लोकोद्द्योत के कारणोंका निरूपण	१०८–११२

॥ समाप्त ॥

शुद्धि पत्र

सुज्ञ पाठकगण

सविनय निवेदन है कि शास्त्रोंमें प्रुफ और प्रिंटिंग सम्बन्धी कंई गलती होना संभवित हैं, जो सुज्ञ वाचकवृन्द नीरक्षीर न्याय से समझ कर पढलेंगे, पर जो शास्त्रीय गलती रह गई है जो देखनेमें अगर सुज्ञ वाचकजन द्वारा दृष्टि-गोचर हुई हैं, इनका शुद्धिपत्र देनेमें आता है।

सूत्रका नाम	पृ.	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
समवायङ्ग सूत्र	१६४	५	रामः खलु बलदेवो द्वादश वर्ष सहस्राणि सर्वायुष्कं	रामः खलु बलदेवो द्वादश वर्षशतानि सर्वायुष्कं
”	”	१६	बारह हजार वर्ष-	बारहसौ वर्ष
”	”	२८	બાર હજાર વર્ષ—	બારસો વર્ષ
ज्ञातधर्मकथाङ्ग सूत्र भा. २	२६१	१ पहली पंक्ति पूरी होने पर		त्रैमासिकीं पद छूट गया है सो त्रैमासिकीं यह पद वहांकेपढें
ज्ञातधर्मकथाङ्ग सूत्र	२६१	११		आठवीं भिक्षुप्रतिमाके अनन्तर प्रथम सात-दिकरात प्रमाणवाली नववीं भिक्षुप्रतिमा यह पाठ छूटा है सो 'नववीं भिक्षु पडिमा' वहां इतना जोडके पढें
ज्ञातधर्म कथाङ्गसूत्र भा. ३	३९७	१७	प्रवचनसिद्ध	प्रवचनविरुद्ध
”		२१	પ્રવચનસિદ્ધ	પ્રવચનવિરુદ્ધ

ज्ञातधर्मकथाङ्गसूत्र भा २	१४७	१७	मद्यपानमें आसक्त–	निद्राजनक द्रव्यमें आसक्त
" "	१४७	२६	મદ્યપાનમાં આસક્ત –	નિદ્રાજનક દ્રવ્યમાં આસક્ત
ज्ञातधर्मकथाङ्गसूत्र भा ३	११४	२	भगवताऽऽवश्यके–	भगवताऽनुयोगद्वारे
ज्ञातधर्मकथाङ्ग भा २	३१४	१७	आवश्यकसूत्रमें	अनुयोगद्वारसूत्रमें
" "		१६	આવશ્યકસૂત્રમાં	અનુયોગદ્વારસૂત્રમાં
अन्तकृद्दशाङ्गसूत्र	२९६	१०	वसदस –	वसमद्ध
अन्तकृद्दशांगसूत्र	२९९	११		सत्तमवग्गे थेरस्स उद्देसगा, इतना पाठ छूट गया है सो यहां समझ लेवें
आचारांगसूत्र भा २	१२२	८	नेव परिण्णाणा अपरिहीणा फरस– परिण्णाणा अपरिहीणा	नेवपरिण्णाणा अपरिहीणा नीइ परिण्णाणा अपरिहीणा फरिस परिण्णाणा अपरिहीणा
आचारांग सूत्र भा २	२८१	१४	निग्गानथे	अज्ञानथे
		२६	ન યથુ	અજ્ઞાન
दशाश्रुतस्कंध	४१०	२०	कालकरके ग्रैवेयक आदि	कालकरके देवलोकमें से
दशाश्रुतस्कंध	४१०	२६	કાલ કરીને ગ્રૈવેયકઆદિ	કાલ કરીને દેવલોકમાંના
ज्ञातधर्मकथाङ्गसूत्र भा २	७३०	२१	ગુણશિલક ચૈત્ય (જિન દેરાસર) –	ગુણશિલક ચૈત્ય ઉદ્યાન બગીચો

॥ श्री वीतरागाय नमः ॥

श्री जैनाचार्य-जैनधर्मदिवाकर-पूज्यश्री-घासीलालव्रतिविरचितया सुधाख्यया व्याख्यया समलङ्कृतम्

श्री-स्थानाङ्गसूत्रम्

(तृतीयो भागः)

गतो द्वितीयोद्देशः, तत्र जीवक्षेत्रपर्याया उक्ताः, प्रारभ्यमाणे तृतीयोद्देशके तु जीवपर्याया उच्यन्ते, इत्येवं सम्बन्धेनायातस्यास्येदमाद्यं सूत्रम्—

मूलम्—चत्तारि उदगा पण्णत्ता, तं जहा—कद्दमोदए १, खंजणोदए २, वालुओदए ३, सेलोदए ४। एवामेव चउव्विहे भावे पण्णत्ते, तं जहा—कद्दमोदगसमाणे १, खंजणोदगसमाणे २, वालुओदगसमाणे ३, सेलोदगसमाणे ४,

कद्दमोदगसमाणं भावमणुप्पविट्ठे जीवे कालं करेइ णेरएसु उववज्जइ, एवं जाव सेलोदगसमाणं भावमणुप्पविट्ठे जीवे कालं करेइ देवेसु उववज्जइ। सू० १ ॥

चौथे स्थानके तीसरा उद्देशा प्रारम्भ—

"दूसरा उद्देशा समाप्त हो चुका इस में जीव-और क्षेत्र की पर्याय कही गई है, अब-प्रारभ्यमाण तृतीय उद्देशे में केवल जीव की ही पर्याय कही जायेगी इसी सम्बन्ध को लेकर आगत इस उद्देशे का आद्य सूत्र है—' चत्तारि उदगा पण्णत्ता "-इत्यादि—१

ચોથા સ્થાનના ત્રીજા ઉદ્દેશાનો પ્રારંભ

બીજો ઉદ્દેશક પૂરો થયો તેમાં જીવ અને ક્ષેત્રની પર્યાય કહેવામાં આવી. હવે શરૂ થતા આ ત્રીજા ઉદ્દેશામાં માત્ર જીવની પર્યાયનુજ કથન કરવામાં આવશે આગલા ઉદ્દેશા સાથે આ પ્રકારનો સંબંધ ધરાવતા આ ઉદ્દેશાનુ પ્રથમ સૂત્ર આ પ્રમાણે છે—" चत्तारि उदगा पण्णत्ता " ઈત્યાદિ—

छाया—चत्वारि उदकानि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा—कर्दमोदकं १, खञ्जनोदकं २, वालुकोदकं ३, शैलोदकम् ४ एवमेव चतुर्विधो भावः प्रज्ञप्तः, तद्यथा—कर्दमोदकसमान १, खञ्जनोदकसमानः २, वालुकोदकसमानः ३, शैलोदकसमान ४।

कर्दमोदकसमानं भावमनुप्रविष्टो जीवः कालं करोति नैरयिकेषूपपद्यते, एवं यावत् शैलोदकसमाने भावमनुप्रविष्टो जीवः कालं करोति देवेषूपपद्यते ॥सू०१॥

टीका—"चत्तारि उदगा" इत्यादि अस्यैतस्मादुदकसूत्रात् पूर्वं यथेक राशिसूत्र तद्द्वितीयोद्देशे गतम् उदकानि – जलानि, चत्वारि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा-कर्दमोदकं १, खञ्जनोदकं २, वालुकोदकं ३, शैलोदकं ४ चेति। तत्र कर्दमोदकं—कर्दमप्रधानमुदकं, यत्र प्रविष्टं पादादि कर्दमबाहुल्येन सहसाऽऽक्रष्टु न शक्यते, तत् १। तथा—खञ्जनोदकं—खञ्जनं—दीपादीनां कज्जलं तद्वत् पादादि लेपकारकर्दमविशेषरूपमेव, तत्प्रधानमुदकं खञ्जनोदकम्, तत्र लग्नं सत् पर

सूत्रार्थ—जल चार प्रकार के कहे गये हैं, कर्दमोदक १ खञ्जनोदक २ वालुकोदक—३ शैलोदक—४। भाव चार प्रकारका कहा गया है, जैसे—कर्दमोदक समान—१ खञ्जनोदक समान—२ वालुकोदक समान—३ और शैलोदक समान—४। कर्दमोदक समान भाव में अनुप्रविष्ट हुआ जीव यदि कालवश होता है, तो—वह नरक में उत्पन्न होता है, इस तरह से यावत्—शैलोदक समान भाव में अनुप्रविष्ट हुवा जीव यदि कालवश होता है तो—वह देवों में उत्पन्न होता है।

टीकार्थ — कर्दम प्रधान जो उदक होता है वह—कर्दमोदक है ऐसे कर्दमोदक में फसा हुवा पैर आदि शारीरिक अङ्ग सहसा उस से खींचा नहीं जा सकता है। दीपादिकों के कज्जल—स्याही का नाम खञ्जन है, यह—पादादि को में लिप्त करने पर

સૂત્રાર્થ—ઉદક (જળ) ચાર પ્રકારનું કહ્યું છે—(૧) કર્દમોદક, (૨) ખંજનોદક, (૩) વાલુકોદક અને (૪) શૈલોદક જળની જેમ ભાવ પણ ચાર પ્રકારના કહ્યા છે—કર્દમોદક સમાન (૨) ખંજનોદક સમાન (૩) વાલુકોદક સમાન અને શૈલોદક સમાન કર્દમોદક સમાન ભાવમાં પ્રવેશેલો જીવ જો મરણ પામે છે, તો નારકોમાં ઉત્પન્ન થાય છે પરંતુ શૈલોદક સમાન ભાવમાં પ્રવેશેલો જીવ જો મરણ પામે છે તો દેવોમાં ઉત્પન્ન થાય છે

ટીકાર્થ—કર્દમયુક્ત પાણીને કર્દમોદક કહે છે એવાં કર્દમોદકમાં (કાદવમાં) જો પગ આદિ કોઇ અંગ ફસાયું હોય તો તેને સરળતાથી એમાંથી લઇ શકાતું નથી તેમાં ફસાયેલ પ્રાણી બહાર નીકળવાનો પ્રયત્ન જેમ વધુ કરે તેમ તેમાં વધારે ને વધારે ખૂંપતું જાય છે દિપાદિકોના કાજળને ખંજન કહે છે આ

णादिकं मलिनीकरोति पुनर्जलादिना विशोध्यते २। तथा-वालुकोदकं-वालुका-प्रसिद्धा, तत्प्रधानमुदकं वालुकोदकम्, तच्च पादाद्यङ्गे लग्नं शुष्कं च ततोऽङ्गसंक्षालनमात्रेण वालुका दूरीभवति ३। तथा-शैलोदकं-शिलाः-पाषाणाः, तासां विकाराः शैलाः-शर्करा. 'करुर' इति भाषाप्रसिद्धाः, तत्प्रधानमुदकं शैलोदकं, शैलास्तु चिक्कणाः, ते पादादि स्पृष्टाः किञ्चिद्दुःखं कुर्वन्तोऽपि कर्दमादिवन्न लेपं कुर्वन्ति ४। इत्युदकदृष्टान्तसूत्रम्।

अथ दार्ष्टान्तिकभावसूत्रमाह—"एवामेवे-त्यादि - एवमेव-कर्दमाद्युदकवदेव, भावः-जीवस्य रागादि परिणामः. स चतुर्विधः प्रज्ञप्तः, तद्यथा-कर्दमोदक-

---

कर्दम विशेष का जैसा होना है अर्थात्—कज्जल को मथकर इस से पैर आदिकों में यदि लेप किया जाता है, तो वह भी कर्दम जैसा ही चिपक जाता है-और उस स्थान को काला कर देता है इसकी प्रधानता वाला जो उदक है वह-खञ्जनोदक है। यह खञ्जनोदक भी यदि कहीं पर लग जाता है, तो वह भी उस स्थान को मलिन कर देता है, फिर पानीसे उसे साफ करने पर शुद्ध हो जाता है। वालुकाप्रधान जो उदक है वह-वालुकोदक है, यह-वालुकोदक भी यदि कहीं अङ्ग में लग जाय. और-शुष्क हो जाय, तो वह वालुका अङ्ग सञ्चालनमात्र से ही दूर हो जाती है। तथा-जिस जल में शैल-पत्थर के कङ्कड प्रधान होते हैं वे-शैलोदक हैं. कङ्कड चिकने होते हैं वे-चरण- पग आदि से स्पृष्ट होने पर कुछ दुःख तो देते हैं तो भी कर्दम आदि के जैसे चिपकते नहीं हैं।

કાજળને પાણીની સાથે ઘુંટીને જે લેપ તૈયાર થાય તેને હાથ, પગ આદિ પર લગાવવાથી કાદવની જેમ જ તે અંગોને કાળા કરી નાખે છે આ પ્રકારના ખંજનની પ્રધાનતાવાળા પાણીને ખંજનોદક કહે છે આ ખંજનોદકનો જે જગ્યાએ સ્પર્શ થાય છે તે જગ્યા પણ મલિન થઈ જાય છે, પરન્તુ તે ડાઘને પાણીની મદદથી સાફ કરી શકાય છે વાલુકાપ્રધાન જે પાણી છે તેને વાલુકોદક કહે છે. આ પ્રકારનુ રતિમિશ્રિત પાણી શરીરના કોઇ પણ ભાગને કે કોઈ પણ વસ્તુને લાગવાથી શરીરના તે ભાગ અથવા તે વસ્તુ સાથે રેતી ચોંટી જાય છે, પરન્તુ જેવુ પાણી સૂકાઇ જાય છે કે તુરતજ શરીરના સંચાલન માત્રથી જ અને વસ્તુને ખખેરવાથી જ તે રેતી ખરી જાય છે જે પાણીમાં કાકરા હોય છે તે પાણીને શૈલોદક કહે છે. તે કાંકરા પર પગ પડવાથી સહેજ પીડા તો થાય છે, પણ તે કાંકરા કાદવ આદિની જેમ શરીરે ચોંટી જતાં નથી "एवामेव" ઇત્યાદિ-જેમ પાણીના ચાર પ્રકાર છે, તેમ

समानः १, खञ्जनोदकसमानः २, वालुकोदकसमानः ३, शैलोदकसमान ४ श्चेति । भावे कर्दमोदकादि समानत्वं च लेपकत्वेन, तत्र कर्दमोदकसमानो भावः—यथा कर्दमोऽङ्गे लग्नो महता प्रयासेन विमोच्यते तथा भावोऽपि १, तथा-खञ्जनसमानो भावः—यथा खञ्जनं (कज्जलं) लग्नं-लिप्तं कर्दमापेक्षया किञ्चित्प्रयासेनापनीयते तथा भावोऽपि तथा-वालुकोदकसमानो भावः—यथा वालुकाऽङ्गे लग्नाऽल्पेन प्रयासेनापनीयते, तथा भावोऽपि ३, तथा-शैलोदकसमानोभावः—

"एवामेव"-इत्यादि, जल की चतुर्विधता जैसे जीव के राग परिणाम भी चार प्रकार के होते हैं। जैसे—कोई एक रागादि परिणाम कर्दमोदक समान है कोई एक खञ्जनोदक समान, तो कोई एक रागादि परिणाम वालुकोदक समान, और—कोई एक रागादि परिणाम शैलोदक के समान होता है।

भाव में यह कर्दमोदक आदि से समानता प्रकट की गई है, वह—लेपकारक होने के कारण चिकनाहट—चिकनापन से प्रगट की गई है। इन में कर्दमोदक समान जो भाव होता है, वह—कर्दम जैसे अङ्ग में लग जाता है और—अति प्रयास से छुड़ाया जाता है, उसी तरह दूर किया जाता है। जो—खञ्जनोदक समान भाव होता है वह—जैसे खञ्जन लग जाने पर किञ्चित् प्रयास से ही कर्दम की अपेक्षा दूर कर दिया जाता है, उसी तरह दूर किया जाता है। तथा—वालुकोदक समान जो भाव होता है वह जैसे वालुका अङ्ग में लग जाने पर अल्प ही प्रयास

રાગપરિણામના પણ ચાર પ્રકાર છે કોઈ એક રાગાદિ પરિણામ કર્દમોદક સમાન હોય છે, કોઈ એક ખંજનોદક સમાન તો કોઈ એક વાલુકોદક સમાન તો કોઈ એક રાગાદિ પરિણામ શૈલોદક સમાન હોય છે

ભાવમાં કર્દમોદક આદિની સાથે જે સમાનતા પ્રકટ કરવામાં આવી છે તેનું કારણ એ છે કે કર્દમ આદિની જેમ તેમાં ચિકાશ હોવાને કારણે તેને કારણે આત્મા કર્મોનો બંધ કરે છે જેમ શરીર પર લાગેલા કાદવને અતિ પ્રયાસથી દૂર કરી શકાય છે તેમ કર્દમોદક સમાન ભાવને પણ અતિ પ્રયાસથી દૂર કરી શકાય છે જેમ કાદવ કરતાં ખંજન (કાજળ) ના ડાઘને વધારે સહેલાઈથી દૂર કરી શકાય છે તેમ ખંજનોદક સમાન ભાવને પણ કર્દમોદક સમાન ભાવ કરતાં વધારે સરળતાથી દૂર કરી શકાય છે જેમ શરીરે ચોંટેલી રેતી અલ્પ પ્રયાસથી જ દૂર કરી શકાય છે તેમ વાલુકોદક સમાન ભાવને થોડા પ્રયાસથી જ દૂર કરી છે જેમ પથ્થર, કાંકરા આદિનો ઘાવ

यथा शैलाः=पाषाणशर्कराः पादादौ स्पृष्टाः किञ्चिद्दुःखं जनयन्ति न तु लिप्यन्ते, तथा भावोऽपि ४।

एतद्भावचतुष्टयानुप्रविष्टजीवस्य फलमाह-"कद्दमोदगसमाणं" इत्यादि, क्रमेण चतुर्णां फलं-नैरयिक-तिर्यङ्-मनुष्य-देवगतिप्राप्तिरूपं बोध्यम्। सू० १।

अनन्तरं भाव उक्तः, साम्प्रत भावतत्पुरुषजातं दृष्टान्तप्रदर्शनपुरस्सर निरूपयति—

मूलम्—चत्तारि पक्खी पण्णत्ता, तं जहा—रूयसंपन्ने णाममेगे णो रूवसंपन्ने १, रूवसंपन्ने णाममेगे णो रूयसंपन्ने २, एगे रूवसंपन्नोऽवि रूयसंपन्नेऽवि ३, एगे नो रूयसंपन्ने नो रूवससंपन्ने ४। एवामेव चत्तारि पुरिसजाया पण्णत्ता, तं जहा—रूयसंपन्ने णाममेगे णो रूवसंपन्ने १-४, ।१।

चत्तारि पुरिसजाया पण्णत्ता, तं जहा—पत्तियं करेमीतेगे पत्तियं करेइ १, पत्तियं करेमीतेगे अपत्तियं करेइ २, अप्पत्तियं

से दूर कर दी जाती है, उसी तरह दूर कर दिया जाता है, और-जो भाव शैलोदक समान होता है वह जैसे-पाषाण शर्करा पादादिकों में स्पृष्ट होने पर कुछ दुःख देती है किन्तु-चिपकती नहीं है, उसी तरह चिपकता नहीं है। इन चार प्रकार के भावों में प्रविष्ट जीव क्रम गतिसे नैरयिक-तिर्यञ्च मनुष्य और देवोंमें जाता है। अर्थात् कर्दमोदक जैसे मलीन भाववाला नरकमें, और खञ्जनोदक समान भाववाला तिर्यंचमें और वालुकासमान भाववाला मनुष्य में एवं शैलोदक समान भाववाला देवताओं में जाता है ॥ सू० १ ॥

દિકોને સ્પર્શ થતાં સહેજ પીડા થાય છે પણ તે કાકરા આદિ પગની સાથે ચોટી જતાં નથી, એ જ પ્રમાણે શૈલોદક સમાન ભાવ આત્મામા ચોટી જતા નથી-સ્થિર થતા નથી આ ચાર પ્રકારના ભાવોમા પ્રવિષ્ટ જીવ ક્રમશઃ નૈરયિક, તિર્યંચ, મનુષ્ય અને દેવોમાં ઉત્પન્ન થાય છે અર્થાત્ કર્દમોદક જેવા મલીન ભાવવાળો નરકમા, તેમ જ કાજળ જેવા ભાવવાળો તિર્યંચમાં અને વાલુકા રેતી સમાન ભાવવાળો મનુષ્યમા અને શૈલોદક સમાન ભાવવાળો દેવોમાં ઉત્પન્ન થાય છે ॥ સૂ. ૧ ॥



करेमीतेगे पत्तिय करेइ ३, अपत्तिय करेमीतेगे अपत्तिय करेइ ४ । २ ।

चत्तारि पुरिसजाया पण्णत्ता, त जहा—अप्पणो णाममेगे पत्तिय करेइ णो परस्स १, परस्स णाममेगे पत्तिय करेइ णो अप्पणो० ४, । ३ ।

चत्तारि पुरिसजाया पण्णत्ता, त जहा—पत्तिय पवेसामी तेगे पत्तिय पवेसेइ १, पत्तिय पवेसामीतेगे अपत्तिय पवेसेइ० ४,

चत्तारि पुरिसजाया पण्णत्ता, त जहा—अप्पणो णाममेगे पत्तिय पवेसेइ णो परस्स, १, परस्स णाममेगे पत्तिय पवेसेइ णो अप्पणो २–४ ॥ सू० २ ॥

छाया—चत्वारः पक्षिणः प्रज्ञप्ताः, तद्यथा—रुतसम्पन्नो नामैको नो रूपसम्पन्नः १, रूपसम्पन्नो नामैको नो रुतसम्पन्नः २, एको रूपसम्पन्नोऽपि रुतस

अथ सूत्रकार दार्ष्टान्तिक भावसे पुरुषजात का निरूपण करते हैं–

चत्तारि पक्खी पण्णत्ता–इत्यादि–२

सूत्रार्थ–पक्षी चार प्रकारके कहे गयेहैं, जैसे–कोई एक पक्षी ऐसा होता है, जिस का शब्द तो आनन्द दायक होता है पर–वह स्वयं सुन्दर आकार वाला नहीं होता है–१ । कोई एक पक्षी ऐसा होता है जो रूप में तो सुन्दर है पर–उसका शब्द आनन्द दायक नहीं होता है–२ । कोई एक पक्षी ऐसा होता है जो रूप में भी सुन्दर होता है और–

હવે સૂત્રકાર દૃષ્ટાન્ત અને દાર્ષ્ટાન્તિક સૂત્રો દ્વારા પુરુષોના પ્રકારો પ્રકટ કરે છે " ચત્તારિ પક્ખી પણ્ણત્તા ' ઇત્યાદિ—

સૂત્રાર્થ–પક્ષીના નીચે પ્રમાણે ચાર પ્રકાર કહ્યા છે–(૧) કોઈ એક પક્ષી એવું હોય છે કે જેનો અવાજ આનંદદાયક હોય છે, પણ તે સુંદર હોતું નથી (૨) કોઈ એક પક્ષી એવું હોય છે કે જે સુંદર હોય છે પણ તેનો અવાજ આનંદદાયક હોતો નથી. (૩) કોઈ એક પક્ષી એવું હોય છે કે જે દેખાવમાં

म्पन्नोऽपि ३, एको नो रुतसम्पन्नो नो रूपसम्पन्न ४। एवमेव चत्वारि पुरुषजातानि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा–रुतसम्पन्नो नामैको नो रूपसम्पन्न. ४। १॥

चत्वारि पुरुषजातानि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा–प्रीतिकं करोमीत्येकः प्रीतिकं करोति १, प्रीतिकं करोमीत्येकोऽप्रीतिकं करोति २, अप्रीतिकं करोमीत्येकः प्रीतिकं करोति ३, अप्रीतिकं करोमीत्येकोऽप्रीतिकं करोति ४। ।२।

चत्वारि पुरुषजातानि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा–आत्मनो नामैकोऽप्रीतिकं करोति नो परस्य १, परस्य नामैकः प्रीतिकं करोति नो आत्मनः ४, । ३ ।

शब्द भी उसका आनन्द दायक होता है–३ और–कोई एक पक्षी ऐसा होता है. जो–नतो बोलने में और–न देखने में सुन्दर होता है–४ .

इसी प्रकार पुरुष जात चार हैं कोई एक ऐसा होता है जिसका शब्द आनन्द दायक होता है किन्तु–आकार सुन्दर नहीं होता है–१ कोई पुरुष ऐसा होता है जो रूप में तो सुन्दर, पर–बोलने में नहीं–२ कोई एक ऐसा होता है जो बोलने में भी और–आकार में भी सुन्दर होता है–३ कोई एक न तो बोलने में–न देखने में सुन्दर होता है–४ फिरभी—चार प्रकार के पुरुष होता हैं, जैसे–कोई एक ऐसा होता है जो–"मैं प्रीति करूं"–ऐसा निश्चय करके प्रीति करता है–१ कोई एक मैं प्रीति करूं ऐसा निश्चय करके भी प्रीति नहीं करताहै-२ कोई एक पुरुष "मैं अप्रीति करूं" ऐसा निश्चय करके भी अप्रीति नहीं करता है–३

પણ સુંદર હોય છે અને તેનો અવાજ પણ આનંદદાયક હોય છે (૪) કોઈ એક પક્ષી એવું હોય છે કે જેનો અવાજ પણ મધુર હોતો નથી અને દેખાવ પણ સુંદર હોતો નથી.

એ જ પ્રમાણે પુરુષ પણ ચાર પ્રકારના હોય છે. (૧) કોઈ એક પુરુષની વાણી આનંદદાયક હોય છે, પણ દેખાવ સુંદર હોતો નથી (૨) કોઈનો દેખાવ સુંદર હોય છે પણ વાણી મધુર હોતી નથી (૩) કોઇની વાણી પણ મધુર હોય છે અને દેખાવ પણ સુંદર હોય છે (૪) કોઈની વાણી પણ મીઠી હોતી નથી અને દેખાવ પણ સુદર હોતો નથી પુરુષના આ પ્રમાણે પણ ચાર પ્રકાર પડે છે—(૧) કોઇ એક પુરુષ એવો હોય છે કે જે પ્રીતિ કરવાનો નિશ્ચય કરીને પ્રીતિ કરી શકે છે (૨) કોઈ પ્રીતિ કરવાનો નિશ્ચય કરવા છતા પ્રીતિ કરતો નથી. (૪) કોઈ પુરુષ અપ્રીતિ કરવાનો નિશ્ચય કરીને અપ્રીતિ જ કરે છે.

चत्वारि पुरुषजातानि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा-प्रीतिकं प्रवेशयामीत्येकः प्रीतिकं प्रवेशयति प्रीतिकं प्रवेशयामीत्येकोऽप्रीतिकं प्रवेशयति० ४।

चत्वारि पुरुषजातानि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा-आत्मनो नामैकः प्रीतिकं प्रवेशयति नो परस्य १, परस्य नामैकः प्रीतिकं प्रवेशयति नो स्वस्य २-४ ॥ सू० २ ॥

कोई एक मैं अप्रीति करूं ऐसा निश्चय कर के अप्रीति ही करता है-४

फिरभी-पुरुष जात चार हैं, जैसे-कोई एक ऐसा होता है जो-अपने प्रति प्रीति करता है, परके प्रति नहीं-१ कोई एक परके प्रति प्रीति करता है, अपने प्रति नहीं-२ कोई एक अपने, और-परके प्रति भी प्रीति करता है-३ एक कोई नतो अपने प्रति न परके प्रति ही प्रीति करता है-४-३। फिरभी-पुरुष चार हैं, कोई एक अपने स्नेह को पर चित्तमें प्रविष्ट कराऊं ऐसा निश्चय करके परचित्तमें अपने स्नेहको स्थापित करता है-१ कोई एक अपने स्नेहको परचित्त में प्रविष्ट कराऊं निश्चय करके भी परचित्त में अपनी प्रीति प्रविष्ट नहीं करता है-२ एक ऐसा होता है जो परचित्त में अप्रीति प्रविष्ट कराऊं निश्चय करके भी प्रीति को प्रविष्ट करता है-३ कोई एक परचित्त में अप्रीति प्रविष्ट कराऊं निश्चय न करके उसके चित्त में अपनी अप्रीति ही प्रविष्ट करता है-४-४

પુરુષના આ પ્રમાણે ચાર પ્રકાર પણ પડે છે—(૧) કોઇ એક પુરુષ એવો હોય છે કે જે પોતાના પ્રત્યે પ્રીતિ રાખે છે અન્ય તરફ પ્રીતિ રાખતો નથી. (૨) કોઈ પુરુષ એવો હોય છે કે જે પરપ્રત્યે પ્રીતિ રાખે છે પણ પોતાના પ્રત્યે રાખતો નથી (૩) કોઇ સ્વ અને પર બન્ને પ્રત્યે પ્રીતિ રાખે છે (૪) કોઈ સ્વ કે પર કોઇ પ્રત્યે પ્રીતિ રાખતો નથી.

પુરુષના આ પ્રમાણે ચાર પ્રકાર પણ પડે છે—(૧) કોઇ પોતાના સ્નેહને પરચિત્તમાં પ્રવિષ્ટ કરાવવાનો નિશ્ચય કરીને પરચિત્તમાં પોતાના પ્રત્યે સ્નેહ ઉત્પન્ન કરાવી શકે છે (૨) કોઇ પોતાને માટે પરચિત્તમાં પ્રીતિ ઉત્પન્ન કરાવવાનો નિશ્ચય કરવા છતાં પરચિત્તમાં પોતાના પ્રત્યે પ્રીતિ ઉત્પન્ન કરાવી શકતો નથી. (૩) કોઇ પુરુષ પરચિત્તમાં અપ્રીતિ ઉત્પન્ન કરાવવાનો નિશ્ચય કરવા છતાં પણ પોતાના પ્રત્યે પ્રીતિ જ ઉત્પન્ન કરાવે છે (૪) કોઇ એક પુરુષ પરચિત્તમાં અપ્રીતિ ઉત્પન્ન કરાવવાનો નિશ્ચય કરીને અપ્રીતિ જ ઉત્પન્ન કરે છે

टीका—" चत्तारि पक्खी "-इत्यादि-स्पष्टम्, नवरं-रुतं-शब्दः, रूपं च सर्वेषां पक्षिणां भवत्येव, अत एतद्‌द्वयं विशिष्टमेव गृह्यते, एवं च रुतं-श्रवणाऽऽह्लादको मनोज्ञशब्दस्तेन सम्पन्नो-युक्तः एकः पक्षी भवति, परन्तु नो रूपसम्पन्नः-सुन्दराऽऽकारो न भवति, कोकिलवत्, इति प्रथमो भङ्गः १।

तथा—पुरुषजात चार हैं, कोई एक तो ऐसा होता है जो, अपने चित्त में प्रीति को प्रविष्ट करता है, पर-परके चित्त में प्रीति को प्रविष्ट नहीं करता है-१ कोई एक ऐसा होता है जो परचित्त में प्रीति को स्थापित करता है, अपने चित्त में नहीं-२ कोई एक ऐसा होता है जो अपने चित्त में प्रीति को स्थापित करता है, और-परचित्त में भी-३ और-कोई एक अपने चित्त में भी और-परचित्त में-भी स्थापित नहीं करता है-४-४

टीकार्थ—इस सूत्र में पक्षी का दृष्टान्त देकर पुरुष चार प्रकार प्रकट किये गये हैं उस सम्बन्ध में ऐसा कथन जानना चाहिये कि—रुत, शब्द, आवाज, बोली पक्षियों का होता है, और रूप भी पक्षियों का होता है, परन्तु-यहां जो ये दो बातें प्रगट की गई हैं, इस से ये दोनों विशिष्ट रूप से गृहीत हुवे हैं। तथा च-जो मनुष्यों के श्रोत्रेन्द्रियो का आनन्ददायक होताहै ऐसा मनोज्ञ शब्द और जो रूप रुचिर-सुन्दर आकार वाला होता है उसे ऐसा मनोज्ञ रुत और-रूप से समझना चाहिये। इस प्रकार समझ कर फिर इस दृष्टान्त सूत्र का इस

પુરુષના આ પ્રમાણે ચાર પ્રકાર પણ પડે છે—(૧) કોઈ એક પુરુષ એવો હોય છે કે જે પોતાના ચિત્તમાં તો પ્રીતિ ઉત્પન્ન કરી શકે છે પણ પરના ચિત્તમા પ્રીતિ ઉત્પન્ન કરાવી શકતો નથી (૨) કોઇ પુરુષ પરમાં પ્રીતિ ઉત્પન્ન કરાવી શકે છે પણ પોતાના ચિત્તમા પ્રીતિને સ્થાપિત કરી શકતો નથી (૩) કોઇ એક પુરુષ પોતાના અને પરના, બન્નેના ચિત્તમાં પ્રીતિ સ્થાપિત કરી શકે છે (૪) કોઈ પુરુષ પોતાના ચિત્તમા પણ પ્રીતિને સ્થાપિત કરી શકતો નથી અને પરના ચિત્તમા પણ પ્રીતિને સ્થાપિત કરી શકતો નથી

ટીકાર્થ—પહેલા સૂત્રમા પક્ષીનુ દૃષ્ટાન્ત આપીને ચાર પ્રકારના પુરુષો પ્રકટ કરવામાં આવ્યા છે. પક્ષીઓમાં અવાજ (બોલી, શબ્દ) અને રૂપ બન્નેનો સદ્‌ભાવ હોય છે પરન્તુ અહીં તે બન્ને બાબતોને વિશિષ્ટ રૂપે ગ્રહણ કરવામા આવેલ છે અહીં 'રૂપ' પદથી એવું સમજવું જોઇએ કે મનુષ્યોની દૃષ્ટિને ગમે તેવુ મનોજ્ઞ (રુચિર) રૂપ અને 'શબ્દ' પદથી મનુષ્યોની કર્ણેન્દ્રિયને મનોજ્ઞ લાગે એવો મધુર અવાજ ગ્રહણ થવો જોઇએ.

एकः-कश्चित् पक्षी रूपसम्पन्नः-सुन्दराऽऽकारो भवति, किन्तु नो रुतसम्पन्नः साधारणशुकवत्, इति द्वितीयो भङ्गः २। एको रुतरूपोभयसम्पन्नो भवति मयूरवत्, इति तृतीयो भङ्गः ३। एको नो रुतसम्पन्नो नो रूपसम्पन्नश्च भवति काकवत्, इति चतुर्थो भङ्गः ४।

"एवामेव" इत्यादि-एवमेव=पक्षिवदेव पुरुषजातानि चत्वारि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा-रुतसम्पन्नो नामैको नो रूपसम्पन्नः इत्यादि। अत्रेदं बोध्यम्-पुरुषो हि लौकिकलोकोत्तरभेदेन द्विधा। तत्र लौकिकपुरुषपक्षे चत्वारो भङ्गा एव बोध्याः, तथाहि-एकः पुरुषः प्रियवादित्वेन रुतसम्पन्नः-मनोज्ञशब्दयुक्तो भवति, किन्तु

प्रकार से अर्थ करना चाहिये। कोई एक पक्षी ऐसा है कि-उसकी आवाज सुरीली मीठी, आकर्षक, आनन्ददायक, कर्णप्रिय होतीहै परन्तु वह रूप सम्पन्न नहीं होता, जैसे-कोकिल-कोयल १ कोई एक देखने में इतना सुन्दर कि दर्शकोंका मन खींचले, किन्तु-उसका शब्द आकारका अनुरूप नहीं, जैसे साधारण शुक, (तोता) २ कोई एक उभय था, (दोनों तरहसे) सुन्दर होता, जिसका शब्द भी कर्ण सुखावह और-रुचिररूप भी, जैसे-मोर-३ कोई एक दोनों प्रकारसे ठीक नहीं होताहै शब्दसे भी -रूप से भी, जैसे-कौवा-४ इस दृष्टान्त का समन्वय पुरुषों के साथ करते हुवे सूत्रकारने पुरुषमें चार प्रकारका भेद कहा है। पुरुष लौकिक-अलौकिक भी होते हैं, सो इन लौकिक पुरुषोंमें पक्षी सम्य भी चार भङ्ग होंगे। जैसे-कोई एक प्रिय रुत (शब्द) सम्पन्न होता है किन्तु-रूप से सम्पन्न नहीं-१ कोई एक सुन्दर रूप वाला है तो-सुन्दर बोलचाल

આ દૃષ્ટિએ વિચાર કરવામાં આવે તો પક્ષીઓના નીચે પ્રમાણે ચાર પ્રકાર પડે છે—(૧) કોઈ પક્ષીનો અવાજ મધુર કર્ણપ્રિય હોય છે, પણ તે દેખાવમાં સુંદર હોતું નથી. દા. ત. કોયલ. (૨) કોઈ એક પક્ષીનો દેખાવ મનોહર હોય છે પણ તેનો અવાજ મીઠો હોતો નથી. દા. ત. સામાન્ય પોપટ. (૩) કોઈ એક પક્ષીનો અવાજ પણ કર્ણપ્રિય હોય છે અને દેખાવ પણ મનોહર હોય છે દા. ત. મોર. (૪) કોઈ એક પક્ષીનો અવાજ પણ કર્કશ હોય છે અને દેખાવ પણ ખરાબ હોય છે દા. ત. કાગડો.

પક્ષીની જેમ પુરુષના પણ ચાર પ્રકાર પડે છે—પુરુષ લૌકિક પણ હોય છે અને અલૌકિક પણ હોય છે લૌકિક પુરુષોના પણ પક્ષી જેવા ચાર પ્રકાર સમજવા—(૧) કોઈ એક પુરુષનો અવાજ કર્ણપ્રિય હોય છે પણ તે સુંદર હોતો નથી (૨) કોઈ એક પુરુષ રૂપની અપેક્ષાએ સુંદર હોય છે પણ તેની

यथोक्तरूप रहितत्वेन नो रूपसम्पन्नः–सुन्दराऽऽकारवान् न भवति, इति प्रथमो भङ्गः ।१। तथा–एकः पुरुषो रूपसम्पन्नो भवति न तु रुतसम्पन्न, इति द्वितीयः २।

एको रुतसम्पन्नोऽपि रूपसम्पन्नोऽपि भवति। इति तृतीयः ३। एको न रुतसम्पन्नो नापि रूपसम्पन्न इति चतुर्थः ४। लोकोत्तरपुरुषपक्षेत्वेवं, तथाहि–एकः साधुपुरुषो रुतसम्पन्नः – रुतेन – जिनप्ररूपितशुद्धधर्मदेशनादिप्रबन्धरूपशब्देन सम्पन्नो–युक्तो भवति, किन्तु रूपसम्पन्नः – रूपेण – लोचाल्पकेशशिरस्कत्व–तपः कृशीकृतशरीरत्व–मलमलिनकायत्वाऽल्पोपकरणत्वप्रभृतिसाधूचितरूपेण सम्पन्नो न भवति, इति प्रथमो भङ्गः १। एवमेवावशिष्टं भङ्गत्रयमपि यथायोग्यं बोध्यम् ।१।

" चत्तारि पुरिसजाया " इत्यादि–स्पष्टम्, नवरं–प्रीतिकं- प्रीतिरेव प्रीतिकं- प्रेम करोमीति निश्चित्य एकः प्रीतिकं करोति १, एकः–अन्यस्तु प्रीतिकं करो-

---

वाला नहीं–२ कोई एक देखने में भी सुहावना और बोल से भी–३ कोई एक गधा–गदहा, और–ऊट जैसा न तो शब्द से–न तो रूप से सुन्दर होता है-४ । अब लोकोत्तर में घटाना हैं-कोई एक साधु (शब्द) से (जिनप्रणीत धर्मदेशना से) सम्पन्न होता है, किंतु–रूप से–लोच करना, अल्प केशोंसे युक्त शिरवाला होना, तप से कृश शरीर वाला होना, शरीर संस्कार वर्जित होना, अल्पोपकरण रखना, आदि साधूचित सम्पन्न नहीं होता है–१ इसी प्रकार शेप भङ्ग त्रय को–यथायोग्य समझना चाहिये ४ । " चत्तारि पुरिसजाया "–इत्यादि सूत्र स्पष्ट है। यहां–प्रीतिक शब्द का अर्थ प्रेम है. प्रीति शब्द से स्वार्थ में ही कन्

વાણી આનંદદાયક હોતી નથી (૩) કોઈ એક પુરુષ દેખાવમાં પણ સુંદર હોય છે અને તેની વાણી પણ મીઠી હોય છે (૪) કોઈ એક પુરુષની વાણી પણ મધુર હોતી નથી અને દેખાવ પણ સુંદર હોતો નથી હવે લોકોત્તર પુરુષોના ચાર પ્રકાર પ્રકટ કરવામા આવે છે—(૧) કોઈ એક સાધુ રુતથી (જિન પ્રણીત ધર્મદેશનાથી) સંપન્ન હોય છે, પરન્તુ રૂપ સંપન્ન હોતો નથી એટલે કે લોચ કરવો, અલ્પ કેશોથી યુક્ત શિરવાળો હોવું, તપથી કૃશ શરીર વાળા હોવું, શરીર સસ્કારવિહીન હોવુ, અલ્પોપકરણ રાખવા, આદિ સાધૂચિત રૂપથી સંપન્ન હોતો નથી એ જ પ્રમાણે બાકીના ત્રણ પ્રકારો પણ સમજી લેવા.

" चत्तारि पुरिमजाया " ઈત્યાદિ સૂત્રનો અર્થ સ્પષ્ટ છે. અહીં પ્રતિક શબ્દ પ્રેમના અર્થમા વપરાયો છે ' प्रीति ' પદને સ્વાર્થ ' કન્ ' પ્રત્યય લગા

मीति निश्चित्यापि अप्रीतिकं करोति २, एकः पुरुषः अप्रीतिकं करोमीति निश्चित्य प्रीतिकं करोति येन केनापि कारणेन पूर्वभावपरिवर्तनात् ३, एकः पुरुषः अप्रीतिकं करोमिति निश्चित्य अप्रीतिकं करोति ४।

" चत्तारि पुरिसजाया " इत्यादि-स्पष्टम्, नवरम्-एकः पुरुषः आत्मनः-स्वस्य प्रीतिकम्-आनन्दं भोजनवस्त्रादिभिः करोति-सम्पादयति स्वार्थपरायण त्वात्, किन्तु परस्य-अन्यस्य प्रीतिकं भोजनवस्त्रादिभिर्नो करोति, इति प्रथमो भङ्गः १। एकः पुरुषः परस्य प्रीतिकं भोजनवस्त्रादिभिः करोति परमार्थपरायण त्वात् मोहवत्त्वाद्वा किन्तु आत्मनः-स्वस्य नो करोति, इति द्वितीयः २। एकः

प्रत्यय होने से पता है, " मैं प्रेम करू " मन में निश्चय करके कोई एक पुरुष प्रीति करता है-१ कोई पुरुष तो प्रीति करू ऐसा निश्चय करके भी अप्रीति करताहै २ अप्रीति करू ऐसा निश्चय करकेभी कोई एक प्रीति करता है, क्योंकि—उसमें किसी कारण से तब तक परिवर्तन होता है-३ कोई एक अप्रीति करू निश्चय करके अप्रीति करता है-४। " चत्तारि पुरिसजाया "-इत्यादि स्पष्ट है, इस में ऐसा प्रगट किया गया है कि-कोई एक पुरुष स्वार्थ परायणतासे अपने आपको ही भोजन-वस्त्र आदि से सुसज्जित करनेमें आनन्द मानताहै, औरोंको भी तथा सुसज्जित करने में नहीं-१ कोई एक पर को ही भोजन वस्त्रादिकों से परपरायणता के कारण आनन्दित होता है, क्योंकि-हो सकता है-उसके प्रति वह मोह वाला हो, पर तु-अपने प्रति इस प्रकार के ख्याल से रहित होता है-२

કવાથી 'પ્રીતિ કરું' આવો એ છે " હું પ્રેમ કરું' આવો નિશ્ચય કરીને કોઈ વ્યક્તિ પ્રીતિ કરે છે (૨) 'હું પ્રેમ કરું' આ પ્રકારનો નિશ્ચય કરીને પણ કોઈ પુરુષ અપ્રીતિ કરે છે (૩) અપ્રીતિ કરું " આ પ્રકારનો નિશ્ચય કરીને કોઈ પુરુષ પ્રીતિ કરે છે કારણ કે કોઈ કારણથી તેનામાં પરિવર્તન થઈ જાય છે (૪) 'અપ્રીતિ કરું" આ પ્રકારનો નિશ્ચય કરીને કોઈ પુરુષ અપ્રીતિ કરે છે

ચત્તારિ પુરિસજાયા ' ઇત્યાદિ આ સૂત્રમાં નીચે પ્રમાણે ચાર પ્રકારના પુરુષો કહ્યા છે—(૧) કોઈ એક પુરુષ એવો હોય છે કે જે સ્વાર્થી સ્વભાવને કારણે પોતે જ સુંદર સુંદર ભોજનો વડે પોતાને જ તૃપ્ત કરતો હોય છે અને સુંદર વસ્ત્રાદિથી પોતાના શરીરને વિભૂષિત કરતો હોય છે અને તેમાં જ આનંદ માનતો હોય છે પણ પરને તે વસ્તુઓ આપીને આનંદ માનતો નથી (૨) કોઈ એક પુરુષ પરને વસ્ત્રાદિ આપીને આનંદ પામતો હોય છે મોહાદિકને કારણે એવું સંભવી શકે છે પણ પોતાને માટે એવા ખ્યાલથી રહિત હોય છે (૩) કોઈ એક પુરુષ સ્વાર્થ અને પરમાર્થ પરાય

पुरुषः आत्मनः परस्य च प्रीतिकं भोजनाऽऽच्छादनादिभिः करोति स्वार्थपरमार्थपरायणत्वात्, इति तृतीयः ३। तथा-एकः पुरुषो न स्वस्य प्रीतिकं करोति न च परस्य, स्वार्थपरमार्थरहितत्वादिति चतुर्थः ४।

"चत्तारि पुरिसजाया" इत्यादि-स्पष्टम्, नवरम्-एकः पुरुषः प्रीतिकं-स्वसम्बन्धि प्रेम परकीयचित्ते प्रवेशयामीत्येवं निश्चित्य प्रीतिकं परचित्ते प्रवेशयति-स्थापयति १, एकः पुरुषः प्रीतिकं प्रवेशयामीत्येव निश्चित्यापि केनापि कारणेन पूर्वभावपरिवर्तनादप्रीतिकं परचित्ते प्रवेशयति १, एकः पुरुषोऽप्रीतिकं परचित्ते प्रवेशयामीत्येवं निश्चित्यापि प्रीतिकं प्रवेशयति ३। एकः पुरुषस्तु अप्रीतिकं परचित्ते प्रवेशयामीत्येवमप्रीतिकं परचित्ते प्रवेशयति द्वेषयतीतिभावः ४।

कोई एक उभय था. स्वार्थ-और परमार्थ परायणतासे अपने और पर दोनों को भोजन वस्त्रादि से आनन्द सम्पन्न बनाये रखता है-३ कोई एक स्वार्थ और-परमार्थ वञ्चित होने के कारण भोजन वस्त्रादि द्वारा अपने आपको-और-औरों को भी आनन्द युक्त करने कराने से वञ्चित रखता है-४ "चत्तारि पुरिसजाया"-इत्यादि स्पष्ट है, इस में-यह समझाया गया है कि-कोई एक स्वसम्बन्धित स्नेह को परकीयचित्त में प्रवेश कराऊ" निश्चित करके परचित्त में स्थापित करता है-१ कोई एक पुरुष अपना स्नेह "परचित्त में स्थापित करू" निश्चय करके भी किसी कारण से पूर्व भाव परिवर्तन हो जाने पर परचित्तमें अप्रीति को ही स्थापित करता है-२ कोई एक "अप्रीति को ही स्थापित करूं" निश्चय करके फिर भी वह प्रीति को ही परचित्त में स्थापित करता है-३

હોવાને કારણે પોતે પણ સુંદર ભોજન, વસ્ત્રાદિથી આનંદ માને છે અને બીજાને પણ ભોજન, વસ્ત્રાદિ આપીને આનંદ કરાવે છે. (૪) કોઇ એક પુરુષ સ્વાર્થ અને પરમાર્થથી રહિત હોવાને કારણે પોતાને પણ ભોજન વસ્ત્રાદિ દ્વારા આનંદ કરાવતો નથી અને અન્યને પણ એ રીતે આનંદિત કરતો નથી

"ચત્તારિ પુરિસજાયા" ઇત્યાદિ આ સૂત્રમાં ચાર પ્રકારના પુરુષો કહ્યા છે. (૧) કોઇ એક પુરુષ "અન્યના ચિત્તમાં મારા પ્રત્યે સ્નેહ સ્થાપિત કરાવું" આ પ્રકારનો નિશ્ચય કરીને અન્યના ચિત્તમાં પોતાના પ્રત્યે સ્નેહ સ્થાપિત કરી દે છે (૨) કોઈ એક પુરુષ પરચિત્તમાં પોતાના પ્રત્યે સ્નેહ સ્થાપિત કરવાનો નિશ્ચય કરવા છતાં પણ કોઇ કારણે પૂર્વ ભાવમાં પરિવર્તન થઇ જવાથી પરચિત્તમાં અપ્રીતિ જ સ્થાપિત કરે છે (૩) કોઇ એક પુરુષ

"चत्तारि पुरिसजाया" इत्यादि–स्पष्टम्, नवरम्–एकः पुरुषः आत्मनः–स्वस्य चित्ते प्रीतिकं प्रवेशयति, किन्तु परस्य चित्ते प्रीतिकं नो प्रवेशयति, इति प्रथमो भङ्गः १। शेषभङ्गत्रयं पूर्ववद्बोध्यम् । सू० २।

पुनः सदृष्टान्तं पुरुषजातं निरूपयति–

सूत्रम्–चत्तारि रुक्खा पण्णत्ता, तं जहा पत्तोवए १, पुप्फोवए २, फलोवए ३, छायोवए ४। एवामेव चत्तारि पुरिसजाया पण्णत्ता, तं जहा–पत्तोवगरुक्खसमाणे १, पुप्फोवगरुक्खसमाणे २, फलोवगरुक्खसमाणे ३, छायोवगरुक्खसमाणे ४।सू०३।

छाया–चत्वारो वृक्षाः प्रज्ञप्ताः, तद्यथा–पत्रोपगः १, पुष्पोपगः २, फलोपगः ३, छायोपगः ४। एवमेव चत्वारि पुरुषजातानि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा–पत्रोपग

कोई एक परचित्त में अप्रीति स्थापित करूं निश्चय करके पूर्व विचार के अनुसार अप्रीति को ही परकीय चित्त में स्थापित करता है–४

"चत्तारि पुरिसजाया"–इत्यादि स्पष्ट हैं, इस में कहा गया है कि–कोई एक अपने ही चित्त को प्रसन्न रखता है परचित्त को नहीं–१ शेष भङ्ग त्रय पूर्व की तरह जानना चाहिये–॥ सू० २ ॥

"पुनः सूत्रकार सदृष्टान्त पुरुषजातकी प्ररूपणा करते हैं–

"चत्तारि रुक्खा पण्णत्ता"–३

सूत्रार्थ–चार प्रकारके वृक्ष कहे गयेहैं, जैसे–कोई एक वृक्ष पत्रोपग होता है १ कोई एक पुष्पोपग होता है, २ कोई एक फलोपग होता है, ३

परचित्तमां अप्रीति स्थापित करवानो निश्चय करवा छतां पण प्रीति ज स्थापित करे छे (४) कोई एक पुरुष परचित्तमां अप्रीति स्थापित करवानो विचार करीने पूर्व भाव अनुसार अप्रीति ज स्थापित करे छे

"चत्तारि पुरिसजाया" इत्यादि. आ प्रकारे पण पुरुषोना चार प्रकार कह्या छे (१) कोई एक पुरुष पोताना चित्तने ज प्रसन्न राखे छे अन्यना चित्तने प्रसन्न राखतो नथी बाकीना त्रण प्रकारो आगला सूत्रमां कह्या प्रमाणे ज समजी लेवा ॥ सू. २ ॥

वृक्षना दृष्टान्त द्वारा सूत्रकार पुरुषोना प्रकारोनी प्ररूपणा करे छे–

चत्तारि रुक्खा पण्णत्ता" इत्यादि–(सू. ३)

सूत्रार्थ–वृक्षना चार प्रकार कह्या छे(१) कोई वृक्ष पत्रोपग (पत्रयुक्त) होय छे, (२) कोई वृक्ष पुष्पोपग होय छे (३) कोई वृक्ष फलोपग होय छे,

वृक्षसमानः १, पुष्पोपगवृक्षसमानः २, फलोपगवृक्षसमानः ३, छायोपगवृक्षसमानः ४। सू० ३।

टीका—"चत्तारि रुक्खा" इत्यादि-स्पष्टम्, नवरं-पत्रोपगः-पत्राण्युपगच्छति-प्राप्नोतीति पत्रोपगः-पत्रयुक्तः, एवं पुष्पोपगादयस्त्रयः ४। "एवामेव" इत्यादि-एवमेव-पत्रोपगादि वृक्षवदेव पुरुषजातानि चत्वारि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा-पत्रोपगवृक्षसमानः १, पुष्पोपगवृक्षसमानः २, फलोपगवृक्षसमानः ३, छायोपगवृक्षसमानः ४। पत्रोपगादिवृक्षसमानत्वं लौकिकानां लोकोत्तराणां च पुरुषाणां संभवति। तत्र लौकिकपक्षे-यथा पत्रोपगवृक्षः पत्रमात्रेण जनमुपकरोति तथैव तत्समानः पुरुषो वचनमात्रेण जनमुपकरोतीति प्रथमः १। पुष्पोपगवृक्षो यथा पुष्पेण

और-कोई एक छायोपग होता है, ४। इसी प्रकार से पुरुषजात चार कहे गये हैं, जैसे-कोई एक पुरुष पत्रोपग वृक्ष समान होता है, १ कोई एक पुष्पोपग वृक्ष समान होता है, २ कोई एक फलोपग वृक्ष समान होता है, ३ और कोई एक पुरुष छायोपग वृक्ष समान होता है, ४।

इस सूत्रका तात्पर्य ऐसा है कि-कोई एक वृक्ष ऐसा है जो पत्रोपग पत्रों से युक्त होता है, १ कोई एक वृक्ष पुष्पोपग-पुष्पोंसे संयुक्त होता है, २ कोई एक वृक्ष ऐसा होता है जो फलोपग, फलों से युक्त होता है, ३ और-कोई एक वृक्ष ऐसा होता है जो छायोपग-छाया से युक्त होताहै, ४ इनके समान चार पुरुष होतेहैं इसका तात्पर्य है कि-कोई एक लौकिक पुरुष ऐसा होता है जो, पत्रोपग वृक्ष समान होता है, अर्थात्-जैसे पत्रोपग वृक्ष केवल अपने पत्रों से ही जन-उपकार करता है उसी प्रकार पुरुष भी केवल वचन से ही जनों का उपकार करता है, १ पुष्पों-

---

અને (૪) કોઈ વૃક્ષ છાયોપગ હોય છે એ જ પ્રમાણે પુરુષો પણ ચાર પ્રકારના હોય છે. (૧) કોઈ પુરુષ પત્રોપગ વૃક્ષ સમાન હોય છે, (૨) કોઇ પુષ્પોપગ વૃક્ષ સમાન હોય છે, (૩) કોઇ ફલોપગ વૃક્ષ સમાન હોય છે અને (૪) કોઇ છાયોપગ વૃક્ષસમાન હોય છે

આ સૂત્રનો ભાવાર્થ નીચે પ્રમાણે છે (૧) કોઈ એક વૃક્ષ પાનથી યુક્ત હોય છે (૨) કોઇ વૃક્ષ પુષ્પોથી યુક્ત હોય છે, (૩) કોઇ વૃક્ષ ફલોથી યુક્ત હોય છે અને (૪) કોઇ વૃક્ષ છાયાથી યુક્ત હોય છે વૃક્ષની જેમ પુરુષો પણ ચાર પ્રકારના હોય છે (૧) પત્રોપગ વૃક્ષ સમાન પુરુષ-જેમ પત્રોપગ વૃક્ષ પોતાના પાન વડે જ લોકો પર ઉપકાર કરે છે, એ જ પ્રમાણે કોઈ એક લૌકિક પુરૂષ પોતાની વાણી દ્વારા જ લોકોનું ભલુ કરે છે.

जनमुपकरोति तथैव तत्समानः पुरुषः कष्टनिवारणोपायप्रदानेनोपकारी भवति, इति द्वितीयः २। फलोपगवृक्षः फलप्रदानेन यथा विशिष्टोपकारको भवति, तथैव तत्समानः पुरुष आपन्नान् जनानर्थादि प्रदानेनोपकरोतीति तृतीयः ३। तथा-छायोपगवृक्षो यथा छायया जनानां सन्तापं हरति, तथैव तत्समानः पुरुष आश्रयप्रदानादिनाऽऽपन्नान् जनानुपकरोति, इति चतुर्थः ४।

लोकोत्तरपक्षे तु यः सूत्रदानेन जनमुपकरोति स पत्रोपगवृक्षसमानः ।१। यः पुनरर्थप्रदानेनोपकरोति स पुष्पोपगवृक्षसमानः ।२। यस्तु सूत्रार्थोभयप्रदानेनोपकरोति स फलोपगवृक्षसमानः ।३। यः पुनर्भवजरामरणादयपायाद् रक्षति स छायोपगवृक्षसमान इति । सू० १ ॥

पग पुरुष कष्ट निवारण उपाय प्रदान करता है जैसे-पुष्पोपग वृक्ष अपने पुष्पों से जनका उपकार करता है, २ तथा-फलोपग वृक्ष समान वह पुरुष है जो आपन्नों को अर्थादि प्रदान से उसका उपकारक होता है जैसे-फलोपग वृक्ष अपने फलों से चलते जनों का उपकार करता है, ३ छायोपग वृक्ष का जैसा वह पुरुष होता है जो-आश्रय प्रदान द्वारा उपकार करता है जैसे-छायोपग वृक्ष छायासे जनों का सन्ताप करता है, ४ लोकोत्तर पुरुष इन वृक्षों के समान होते हैं-जो लोकोत्तर पुरुष सूत्र दान से जन उपकारक होता है वह पत्रोपग वृक्ष समान है, १ जो अर्थ प्रदान से उपकारक होता है वह पुष्पोपग वृक्ष समान है, २ जो सूत्र

---

(२) પુષ્પોપગ વૃક્ષ સમાન પુરુષ—જેમ પુષ્પોપગ વૃક્ષ પોતાના પુષ્પોથી જ લોકો પર ઉપકાર કરે છે તેમ કોઈ પુરુષ કષ્ટ નિવારણના ઉપાય બતાવીને લોકોનુ ભલુ કરે છે (૩) ફલોપગ વૃક્ષ સમાન પુરુષ-જેવી રીતે ફલોપગ વૃક્ષ પોતાના ફલો આપીને જતાં આવતાં લોકોનો ઉપકાર કરે છે તેમ કોઈ પુરુષ અર્થાદિનુ પ્રદાન કરીને લોકોનો ઉપકાર કરે છે

(૪) છાયોપગ વૃક્ષ સમાન પુરુષ—જેમ કોઈ વૃક્ષ પોતાના છાયડામાં લોકોને આશ્રય આપે છે તેમ કોઈ પુરુષ આશ્રય પ્રદાન કરીને પણ લોકોનો ઉપકાર કરે છે અથવા સતાપ દૂર કરે છે

લોકોત્તર પુરુષોને વૃક્ષોની સાથે આ પ્રમાણે સરખાવી શકાય—

(૧) જે લોકોત્તર પુરુષ સૂત્રદાન દ્વારા જન ઉપકારક હોય છે તેને પત્રોપગ વૃક્ષ સમાન કહી શકાય (૨) જે અર્થપ્રદાન દ્વારા ઉપકારક થાય છે તેને પુષ્પોપગ વૃક્ષ સમાન કહી શકાય (૩) સૂત્ર અને અર્થ બન્ને દ્વારા ઉપકાર કરનાર લોકોત્તર પુરુષને ફલોપગ વૃક્ષ સમાન કહી શકાય (૪) જે

अथ श्रमणोपासकस्याऽऽश्वास सदृष्टान्तमाह—

सूलम्–भारं णं वहमाणस्स चत्तारि आसासा पण्णत्ता, तं जहा–जत्थ णं अंसाओ अंसं साहरइ तत्थवि य से एगे आसासे पण्णत्ते १, जत्थवि य णं उच्चारं वा पासवणं वा परिट्ठावेइ तत्थवि य से एगे आसासे पण्णत्ते २, जत्थवि य णं णागकुमारावासंसि वा सुवण्णकुमारावासंसि वा वासं उवेइ तत्थवि य से एगे आसासे पण्णत्ते ३, जत्थवि य णं आवकहाए चिट्ठइ तत्थवि य से एगे आसासे पण्णत्ते ४। एवामेव समणोवासगस्स चत्तारि आसासा पण्णत्ता, तं जहा–जत्थ णं सीलव्वयगुणव्वय-वेरमणपच्चक्खाणपोसहोववासाइं पडिवज्जेइ तत्थवि अ से एगे आसासे पण्णत्ते १, जत्थवि य णं सामाइयं देसावगासियं सम्ममणुपालेइ तत्थवि य से एगे आसासे पण्णत्ते २, जत्थवि य णं चाउद्दसट्ठमुद्दिट्ठपुण्णमासिणीसु पडिपुण्णं पोसहं सम्मं अणुपालेइ, तत्थवि य से एगे आसासे पण्णत्ते ३, जत्थवि य णं अपच्छिममारणंतिअसंलेहणाजोसणाजूसिए भत्तपाणपडियाइ-क्खिए पाओवगए कालमणवकंखमाणे विहरइ तत्थवि य से एगे आसासे पण्णत्ते ४ ॥ सू० ४ ॥

अर्थ दोनों से जन कल्याण करता है वह फलोपग वृक्ष समान है, ३ और जो जन्म जरा मरण रूप अपायों से बचाता है, संरक्षण करता है वह लोकोत्तर पुरुष छायोपग समान है, ४ ॥ सू० ३ ॥

જન્મ, જરા અને મરણ રૂપ અપાયોથી બચાવે છે, તે લોકોત્તર પુરુષને છાયોપગ વૃક્ષ સમાન કહી શકાય છે ॥ સૂ૦ ૩ ॥

छाया—भार खलु वहमानस्य चत्वार आश्वासाः प्रज्ञप्ताः, तद्यथा—यत्र खलु अंसादंसं संहरति तत्रापि च तस्य एक आश्वासः प्रज्ञप्तः १, यत्रापि च खलु उच्चारं वा प्रस्रवणं वा परिष्ठापयति तत्रापि च तस्य एक आश्वासः प्रज्ञप्तः २ यत्रापि च खलु नागकुमारावासे वा सुवर्णकुमारावासे वा वासमुपैति तत्रापि च तस्य एक आश्वासः प्रज्ञप्तः ३, यत्रापि च खलु – यावत्कथया – तिष्ठति तत्रापि च तस्यैक आश्वासः प्रज्ञप्तः ४। एवमेव श्रमणोपासकस्य चत्वार आश्वासाः प्रज्ञप्ताः, तद्यथा–यत्र खलु शीलव्रतगुणव्रत – विरमणप्रत्याख्यानपोषधोपवासान् प्रतिपद्यते तत्रापि च तस्यैक आश्वासः प्रज्ञप्तः १, यत्रापि च खलु सामायिकं

" अब सूत्रकार सदृष्टान्त श्रमणोपासकको आश्वासन देते हैं—

सूत्रार्थ–"भारं णं वहमाणस्स चत्तारि आसासा पण्णत्ता"–इत्यादि–४ एक स्थान से दूसरे स्थान तक भार पहुंचाने वाले पुरुषों के लिये चार विश्राम कहे गये हैं जैसे–वह अपने भार को जहां पर एक कन्धे से दूसरे कन्धे पर रखता है, एक विश्राम, १ वह जहां–टट्टी, या, पेशाब की बाधा दूर करता है, दूसरा विश्राम २ तीसरा विश्राम वहां कहा गया है, जहां कि नागकुमाराऽऽवास में, या–सुवर्णकुमारावासमें वह ठहर जाता है, ३ चौथा विश्राम वहां कहा गया है जहां उसे भार पहुंचाने के लिये कहा गया है पहुंच कर भारको उतारेगा, ४। इसी तरह से चार (आयाम) विश्राम श्रमणोपासक के भी हैं–एक आवास वह जबकि–शीलव्रत, गुणव्रत विरमण, अनर्थदण्डविरमण प्रत्याख्यान, और–पोषधोपवास को स्वीकार करता है, १ दूसरा विश्राम यह कहा

હવે સૂત્રકાર દૃષ્ટાન્ત દ્વારા શ્રમણોપાસકને આશ્વાસન દે છે—

' भारं णं वहमाणस्स चत्तारि आसासा पण्णत्ता " ઇત્યાદિ—

સૂત્રાર્થ–એક સ્થાનેથી બીજે સ્થાને ભાર વહન કરીને લઈ જનાર પુરુષ માટે ચાર વિશ્રામસ્થાન કહ્યા છે પહેલો વિશ્રામ તે છે કે જ્યાં તે પોતાના ભાર (બોજ) ને એક ખભા પરથી બીજા ખભા પર મૂકે છે બીજો વિશ્રામ તે છે કે જ્યાં તે ઝાડા પેશાબ રૂપ કુદરતી હાજત દૂર કરી શકે છે ત્રીજો વિશ્રામ એ છે કે જ્યાં નાગકુમારાવાસ અથવા સુપર્ણકુમારાવાસ રૂપ કોઈ સ્થાનમાં તે થોડો સમય થોભી જાય છે ચોથો વિસામો એ છે કે જ્યાં તે બોજો પહોંચાડવાનો હોય ત્યાં પહોંચીને બોજાને કાયમને માટે ખભા પરથી ઉતારી નાખે છે

એ જ પ્રમાણે શ્રમણોપાસકોને માટે પણ ચાર વિશ્રામસ્થાન (આશ્વાસ) કહ્યાં છે—(૧) શીલવ્રત ગુણવ્રત અનર્થદંડ વિરમણ, પ્રત્યાખ્યાન અને પૌષધો પવાસ ગ્રહણ કરવા રૂપ પહેલું વિશ્રામસ્થાન સમજવું (૨) સામાયિક, દેશા

देशावकाशिकं सम्यगनुपालयति तत्रापि च तस्यैक आश्वासः प्रज्ञप्तः २, यत्रापि च खलु चतुर्दश्यष्टम्युद्दिष्टपौर्णमासीषु प्रतिपूर्णं पोषधं सम्यगनुपालयति तत्रापि च तस्यैक आश्वासः प्रज्ञप्तः ३, यत्रापि च खलु अपश्चिममरणान्तिकसंलेखनाजोषणाजुष्टो भक्तपानप्रत्याख्यातः पादपोपगतः कालमनवकाङ्क्षन् विहरति तत्रापि च तस्यैक आश्वासः प्रज्ञप्तः । सू० ४ ।

टीका—" भारं णं " इत्यादि-भारं धान्यादीनां वहमानस्य-एकस्मात् स्थानादपरस्थानं प्रापयतः पुरुषस्य आश्वासा-विश्रामाः चत्वारः प्रज्ञप्ताः, तत्तथा-यत्र-यस्मिन्नवसरे, 'खलुः' वाक्यालङ्कारे सर्वत्र अंसात्-अंसं एकस्मात् स्कन्धात् अपरंस्कन्धं संहरति-भार प्रापयति, तत्रापिच-स्कन्धात्, स्कन्धान्तरे भारस्य नयनावसरेऽपि च तस्य-भारवाहकस्य एकः-प्रथम, आश्वासः प्रज्ञप्तः

गया है जबकि सामायिक देशावकाशिक का सम्यक् रीतिसे वह-पालन करने लगता है, २ तीसरा विश्राम उसका वह कहा गया है जब वह चतुर्दशी, अष्टमी, अमावस्या, और-पूर्णिमा तिथियों में पौषध का पूर्ण रूप से पालन करता है, ३ तथा चौथा आवास वह कहा गया है जब वह मरणकाल सम्बन्धिनी अपश्चिम संलेखना को धारण कर लेता है भक्तपान का प्रत्याख्यान कर देता है. और-अपने काल की आकाङ्क्षा रहित हुवा पादपोपगमन "संथारा"-वाला होता है, ४

टीकार्थ-दृष्टान्तमें आये भारवाहकके विश्राम जैसा श्रमणोपासकके चार आवासका तात्पर्य है कि-जो व्यक्ति साधुजनों की सुश्रूषा करता है वह सेवक श्रमणोपासक कहलाता है, जिस प्रकार भारवाहक भारसे अक्रान्त रहता है उसी प्रकार श्रमणोपासक भी सावद्यव्यापार रूप से आक्रान्त होता है। भारवाहक भार को निश्चित स्थानपर पहुंचाने

વકાશિકનુ સમ્યક્ રીતે પાલન કરવું તે ત્રીજો વિશ્રામ છે (૩) આઠમ, ચૌદશ, પૂર્ણિમા અને અમાવાસ્યાની તિથિઓમા પૌષધવ્રતનુ સારી રીતે પાલન કરવું તે ત્રીજો વિશ્રામ છે (૪) મરણકાળ નજીક આવતા અપશ્ચિમ સંલેખના ધારણ કરવી, આહાર પાણીના પ્રત્યાખ્યાન કરવા, અને મૃત્યુની આકાંક્ષા રાખ્યા વિના પાદપોપગમન સંથારો કરવા રૂપ ચોથો વિશ્રામ સમજવો.

ટીકાર્થ-દૃષ્ટાન્ત સૂત્રમા દર્શાવવામાં આવેલા ભારવાહકના ચાર વિસામા જેવા શ્રમણોપાસકના પણ ચાર વિસામા કહ્યાં છે જે વ્યક્તિ શ્રમણોની સુશ્રૂષા કરે છે તેને શ્રમણોપાસક કહે છે જેમ ભારવાહક ભારથી આક્રાંત રહે છે એ જ પ્રમાણે શ્રમણોપાસક પણ સાવદ્ય વ્યાપાર રૂપ ભારથી આક્રાંત હોય છે. જેમ

।१। यत्रापि च उच्चारं वा प्रस्रवणं वा परिष्ठापयति-नितारयति, तत्रापि च तस्य एक:-अपरो द्वितीय इत्यर्थ, आश्वासः प्रज्ञप्तः।२। यत्रापि च 'नागकुमारावासे वा सुवर्णकुमाराऽऽवासे वा' अत्र नागकुमाराऽऽवास-सुवर्णकुमाराऽऽवासयोरुप लक्षणतयाऽन्येऽपि देवावासा गृह्यन्ते, तेन - नागसुवर्णकुमारादिदेवविशेषस्य आवास-स्थाने इत्यर्थः, वासम् उपैति=प्राप्नोति, तत्रापि च तस्यैकः-अन्यस्तृ तीय इत्यर्थः, आश्वास प्रज्ञप्तः ३, यत्रापि च स्थाने खलु आपकथया-आपनम् आप' मापणं तस्य कथा, तया भारस्वामिना भारमापणविषये यस्य स्थानस्य निर्देशः कृतस्तदनुसारेण भारवाहको भारमवतार्य तिष्ठति-स्थितोभवति तत्रापि च तस्य एक -अपरश्चतुर्थ इत्यर्थः आश्वासः प्रज्ञप्त'। यद्वा-'यावत्कथया' इति च्छाया, यावत -यत्परिमाणस्य स्थानस्य कथा कृता-कथन कृतं भारस्वामिना, तदनुसारेण च यत्र भारं स्थापयतीत्यादि पूर्ववद्बोध्यम् ४। इति।

इति दृष्टान्तसूत्रम्।

अथ दार्ष्टान्तिकसूत्रम्—

"एवामेवे"—इत्यादि - एवमेव=भारवाहकदृष्टान्ताऽऽश्वासवदेव, श्रमणोपास कस्य-श्रमणानां-साधूनाम् उपासक -सेवकः श्रमणोपासकः=श्रावकः, तस्य साव द्यव्यापारभाराऽऽक्रान्तस्य आश्वासा -तद्विमोचनेन विश्रामाः-चित्तसमाधिरूपा चत्वार' प्रज्ञप्ताः। अयं भावः-श्रमणोपासको जिनाऽऽगमसम्बन्धविमलीकृतबुद्धि तया 'नरकनिगोदादि विविधदुःखपरम्पराजनकावारम्भपरिग्रहौ हेयाविति

तक के सिलसिले में बीच बीच में विश्रान्ति लेता चलता है, उसी प्रकार श्रमणोपासक भी सावद्य व्यापार को छोड़ने के लिये उनका परित्याग करने के लिये अपने त्याग को उत्तरोत्तर बढाता है बस यही इसका विश्राम है। विश्राम चित्त समाधि रूप होता है, यद्यपि-श्रमणोपासक जिनागम के सम्बन्ध से, गुर्वादिकों के सदुपदेशोंसे निर्मल बुद्धि होकर 'आरम्भ'-और परिग्रह नरक निगोद आदि विविध दुःख परम्परा का जनक है, देख भी रहा हूं-आरम्भ, परिग्रहों से अभी तक अकल्याण

ભારવાહક ભારને નિશ્ચિત સ્થાને પહોંચાડતા સુધીમાં વચ્ચે વચ્ચે વિસામા લેતા રહે છે એ જ પ્રમાણે શ્રમણોપાસક પણ સાવદ્ય પાપારોને છોડવાને માટે-તેમનો પરિત્યાગ કરવાને માટે ધીરે ધીરે ત્યાગની માત્રા વધારતો જાય છે બસ એજ તેનો વિશ્રામ છે વિશ્રામ ચિત્તસમાધિ રૂપ હોય છે જો કે શ્રમણોપાસક જિનાગમના સબંધથી, ગુરુ આદિના સદુપદેશોથી એટલું તો સમજી શકે છે કે 'આરંભ અને પરિગ્રહ નરક નિગોદ આદિ વિવિધ દુઃખ પરંપરાના જનક છે આરંભ પરિગ્રહ આદિને કારણે હજી સુધી મારૂં અક

जानन्नपि दुर्दमेन्द्रियभटपटलवशीभूतस्तत्र प्रवर्तमानः सभय सन्तापकलापमुपैति, भावयति चैवम्—

" हियइ जिणाणं आणा, चरियं मह एरिसं अपुन्नस्स ।
एयं आलप्पाल, अव्वो ? दूरं विसंवयइ । १ ।
हयमम्हाणं नाणं, हयमम्हाणं मणुस्समाहप्प ।
जे किल लद्धविवेया, विचेट्ठिमो बालबालव्व । २ ।

ही होता चला आ रहा है, कल्याणाभिलाषी मेरे लिये अवश्य हेय त्याज्य है, ऐसा जान लेना है। तथापि-दुर्दम इन्द्रिय समूह रूप नटो से वशी भूत होकर प्रवृत्त तो होता है फिर भी आसक्ति से नहीं, किन्तु-गरम लोहेका तवाको पकडनेके लिये जैसे डरता डरता अपनी प्रवृत्ति करताहै। उस प्रवृत्ति में मोद युक्त नहीं होता है। किन्तु-पश्चात्ताप ही करता है क्योंकि-उसकी विचारधारा उस समय ऐसी हो जाती है—

" हियए जिणाणं आणा "—इत्यादि

अरे ? मैं कितना नासमझ हूं जो मेरे हृदय में जिनेन्द्रदेव की आज्ञा विराजित होने पर भी मेरा चरित्र-रहन सहन ऐसा बन रहा है. मेरा यह ज्ञान किस कामका जब कि ज्ञानके रहने पर भी मेरा मनुष्यभव मेरे हाथों नष्ट किया जा रहा है, मैं तो-सर्वथा अज्ञानी जैसा ही अपनी प्रवृत्ति करने में अभी तक लगा हुवा हूं, इस प्रकार

લ્યાણ જ થતું રહ્યું છે કલ્યાણની અભિલાષા રાખના એવા મારે માટે તો તે અવશ્ય હેય (ત્યાજ્ય) છે " છતા પણ દુર્દમ ઇન્દ્રિય સમૂહ રૂપ ભટોથી પરાસ્ત થઈને તેમાં પ્રવૃત્ત તો થાય છે. પરન્તુ તેમાં આસક્ત થઈને પ્રવૃત્તિ કરતો નથી પણ ગરમ લોઢાના તવાને પકડવાની જેમ ડરતા ડરતા પોતાની પ્રવૃત્તિ કરે છે. તે પ્રવૃત્તિથી આનંદ પામતો નથી, પણ તેના હૃદયમાં પશ્ચાત્તાપ જ કર્યા કરે છે, કારણ કે તે સમયે તેની વિચારધારા આ પ્રકારની હોય છે–

" हियए जिणाण आणा " ઈત્યાદિ—

" અરે ! હું કેવો અણુસમજુ છુ કે મારા હૃદયમા જિનેન્દ્ર દેવની આજ્ઞા વિરાજિત હોવા છતાં પણ મારુ ચારિત્ર અને રહેણીકરણી આ પ્રકારના બની ગયાં છે. મારુ આ જ્ઞાન શા કામનું છે ? કારણ કે આ જ્ઞાન હોવા છતાં પણ હું મારો મનુષ્ય ભવ મારે હાથે જ ફોગટ ગુમાવી રહ્યો છુ ? હુ તો બિલકુલ અજ્ઞાની હોઉં એવી રીતે મારી પ્રવૃત્તિમાં હજી સુધી લીન રહ્યા જ કરૂ છું." આ પ્રકારની ભાવનાથી ઓતપ્રોત થયેલા તે શ્રમ-

छाया—" इदये जिनानामाज्ञा चरित्र ममेदशमपुण्यस्य ।
एतदालप्यासम् अन्हो (अहो-आश्चर्य) दूर विसंवदति । १ ।
हतमस्माकं ज्ञानं हतमस्माकं मनुष्यमाहात्म्यम् ।
यत् किल लब्धविवेका विचेष्टामहे बालबाला इव ।२। " इति,

इत्य भावयतस्तस्य चत्वार आश्वासा भवन्तीति । तद्यथा-यत्रापि च खलु-यस्मिन्नवसरे शीलव्रत-गुणव्रत-विरमण-प्रत्याख्यान-पोषधोपवासान् -तत्र शीलं-चित्तसमाधिरूप, व्रतानि-स्थूलप्राणातिपात-विरमणादीनि पञ्च गुणव्रते-दिग्व्रतो पभोगपरिभोगव्रतरूप, विरमणम्-अनर्थदण्डविरमण रागादिविरमणं वा, प्रत्या ख्यानानि-नमस्कारसहितादीनि पोषधोपवास -अष्टम्यादिपर्वदिवसेष्वाहारादि त्यागः, एषामितरेतरयोगद्वन्द्वः तान् प्रतिपद्यते-स्वीकरोति, तत्रापि-शील-व्रतादि स्वीकारेऽपि । तस्य-श्रावकस्य एक आश्वासः प्रज्ञप्तः ।

यत्रापि च खलु सामायिकं-समः-समत्वं रागद्वेषरहितत्वेन सर्वेषु जीवेषु स्वसमानत्वं, समशब्दस्यात्र भावप्रधाननिर्दिष्टत्वात्, तस्याऽऽयः-प्राप्तिः समायः-

की भावना से ओतप्रोत बने हुवे इस श्रमणोपासक के चार आश्वास होते हैं । इनमें इसका सर्व प्रथम आश्वास उस समय होता है जब यह चित्त समाधि रूप शीलको, स्थूल प्राणातिपात विरमण आदि पांच व्रतों को दिग्व्रत उपभोग परिभोग रूप गुणव्रतों को, और-अनर्थदण्ड विरमण रूप विरमण को, अथवा—रागादि विरमण को तथा-नमस्कार सहित पोषधोपवास को-अष्टमी आदि पर्व दिनों में आहारादि त्याग को स्वीकार करता है—१

द्वितीय विश्राम तब होता है, जब-यह सामायिक को, तथा-देशा वकाशिक को धारण कर लेता है, रागद्वेष रहित होकर सब जीवों में

શ્રોપાસકના નીચે પ્રમાણે ચાર આવાસ (વિશ્રામ) હોય છે-શ્રમણોપાસકને સાવદ્ય વ્યાપારના ત્યાગ રૂપ પહેલો વિશ્રામ આ પ્રકારનો હોય છે-ત્યારે તે ચિત્તસમાધિ રૂપ શીલને, સ્થૂલ પ્રાણાતિપાત વિરમણ આદિ પાંચ વ્રતોને, દિગ્ વ્રત ઉપભોગ પરિભોગ રૂપ ગુણવ્રતોને, અને અનર્થદંડ વિરમણરૂપ વિરમણને, અથવા રાગાદિ વિરમણને તથા નમસ્કાર સહિત પૌષધોપવાસને અષ્ટમ આદિ પર્વ દિનોમાં આહારાદિ ત્યાગનો સ્વીકાર કરે છે

બીજો વિશ્રામ આ પ્રકારનો હોય છે-જ્યારે તે સામાયિક તથા દેશા વકાશિકને ધારણ કરે છે ત્યારે સાવદ્ય વ્યાપારના ત્યાગ રૂપ બીજો વિશ્રામ

प्रवर्धमानशारदचन्द्रकलावत् प्रतिक्षणविलक्षणज्ञानादिलाभः, यद्वा – सम –साम्यं समभावजनितः प्रतिक्षणमपूर्वापूर्वकर्मनिर्जराहेतुभूत आत्मपरिणामः, तस्य आयो– लाभः समाऽऽयः, स प्रयोजनमस्येति सामायिकं व्रतम्, यद्वा–समस्याऽऽयो यस्मात् तत् समाय तदेव सामायिकम्, तत् यत्र स्थितः श्रावकः श्रमणभूतो भवति, तत् सावद्ययोगपरिवर्जननिरवद्ययोगप्रतिसेवनलक्षणं सामायिकमुच्यते । उक्तंच–

" सामायिकं गुणानामाधारः खमिव सर्वभावानाम् ।
न हि सामायिकहीनाश्चरणादिगुणान्विता येन । १ ।
तस्माज्जगाद भगवान् सामायिकमेव निरुपमोपायम् ।
शरीरमानसानेकदुःखनाशस्य मोक्षस्य । २ ।" इति,

सामायिकविवरणं विस्तरत उपासकदशाङ्गसूत्रस्यास्मत्कृतागार–धर्मसंजीवनी टीकातोऽवसेयम् ।

अपनी समानता की भावना का नाम सम है, सम शब्द भावप्रधान है, सम प्राप्ति समाय है। यह–समाय प्रवर्धमान शरच्चन्द्र चान्दनी जैसा प्रतिक्षण विलक्षण ज्ञानादि का लाभ रूप होता है।

अथवा—समनाम, साम्य का है, यह–साम्य समभाव जनित–आत्मपरिणाम है, और–यह प्रतिपल अनिर्वचनीय कर्मनिर्जराका हेतु होता है, इस समका जो आय–लाभ है वह समाय है यह समाय जिसका प्रयोजन है वह सामायिक है। अथवा–समका लाभ जिससे होता है वह–समाय है, यह–समाय ही सामायिक है। इस सामायिक में स्थित श्रावक श्रमण समान होता है, क्योंकि–सामायिक व्रत सावद्य योगका परिवर्जन–और निरवद्य योगका प्रति सेवन रूप होता है। कहा भी है—'सामायिकं गुणानामाधार"–इत्यादि, इस सामायिक का

પ્રાપ્ત થાય છે રાગદ્વેષથી રહિત થઈને સમસ્ત જીવો પ્રત્યે સમાનતાની ભાવના રાખવી તેનું નામ 'સમ' છે 'સમ' શબ્દ ભાવપ્રધાન છે સમ પ્રાપ્તિનું નામ 'સમાય' છે તે સમાય પ્રવર્ધમાન શરદ્ ચન્દ્રની ચાન્દની સમાન પ્રતિક્ષણ વિલક્ષણ જ્ઞાનાદિના લાભરૂપ હોય છે અથવા 'સમ' એટલે 'સામ્ય' તે સામ્ય સમભાવ જનિત આત્મપરિણામ છે, અને તે પ્રતિપળ અનિર્વચનીય કર્મનિર્જરાના કારણ રૂપ બને છે. આ સમનો જે આય (લાભ) છે તેનું નામ સમય છે આ સમાય જેનું પ્રયોજન છે, તે સામાયિક છે અથવા સમનો લાભ જેનાથી થાય છે તે સમાય છે, અને તે સમાય જ સામાયિક છે આ સામાયિકની આરાધના કરનો શ્રાવક શ્રમણ સમાન હોય છે, કારણ કે સામાયિક વ્રત સાવદ્યયોગના પરિવર્જન રૂપ અને નિરવદ્ય યોગના પ્રતિસેવન રૂપ હોય છે કહ્યું પણ છે કે–" સામાયિક ગુણાનામાધાર " ઈત્યાદિ આ સામાયિકનું વિશેષ વિવરણ

तथा-देशावकाशिक-देशे दिग्व्रतगृहीतस्य दिक्परिमाणस्य विभागे अवकाशो-ऽवस्थानं विषयो यस्य तद्देशावकाशं, तदेव देशावकाशिकं, तत् दिग्व्रतगृहीतस्य दिक्परिमाणस्य प्रतिदिनं संक्षेपकरणलक्षणं सर्वव्रत-संक्षेपकरणलक्षणं वा सम्यक्=सावधानतया अनुपालयति, तत्रापि च=सामायिकदेशावकाशिकानुपालनेऽपि च तस्य एक आश्वासः प्रज्ञप्तः २

यत्रापि च चतुर्दश्यष्टम्युद्दिष्टपौर्णमासीषु-चतुर्दशी, अष्टमी, उद्दिष्टा=अमावास्या पौर्णमासी-पूर्णिमा, एतासु तिथिषु प्रतिपूर्णं-सम्पूर्णमहोरात्रं पोषधं सम्यगनुपालयति, तत्रापि-चतुर्दश्यादितिथिषु प्रतिपूर्णपोषधानुपालनेऽपि च तस्यैक आश्वासः प्रज्ञप्तः ३।

यत्रापि च खलु श्रमणोपासकः अपश्चिममरणान्तिकसंलेखना जोषणाजुष्ट-पश्चात्-अन्ते भवा पश्चिमा न विद्यते पश्चिमा-अन्तिमा यस्याः सा अपश्चिमा=सा चासौ मरणान्तिकसंलेखना-मरणसमीपवर्तितपोविशेषः, तस्या जोषणा-सेवनं तया जुष्टः-सेवितः-युक्तो वा, जुष्टा अपश्चिममरणान्तिकसंलेखनाजोषणा येन स तथा, क्तान्तस्यात्र परनिपातः। तथा-भक्तपानप्रत्याख्यातः-प्रत्याख्याते-

---

विशेष विवरण मैंने उपासकदशाङ्ग सूत्रकी अगार संजीवनी टीका में लिखा है वहां देखें। दिग्व्रत में की गई दिशाओं में आने जाने की मर्यादा को प्रतिदिन संक्षिप्त करना, अथवा-सर्व व्रतोंको संक्षिप्त करना इसका नाम-देशावकाशिक व्रत है, इस सामायिक एवं-देशावकाशिक व्रत को सम्यक् रूप से पालना द्वितीय आश्वास विश्राम स्थान कहा गया है, २। जहां-चतुर्दशी, अष्टमी आदि पर्वतिथियों में सम्पूर्ण अहोरात्र का जो पोषध व्रत पालन किया जाता है यह-उपासक का तीसरा आश्वास-विश्रामस्थान है, ३ जहां श्रमणोपासक अपश्चिम-सर्वान्तिम-मारणान्तिक संलेखना रूप तप विशेष का प्रीतिपूर्वक सेवन करता है,

---

ઉપાસકદશાંગ સૂત્રની અગારસંજીવની ટીકામાં મે લખેલું છે તો ત્યાંથી વાંચી લેવું અમુક નિયત દિશામાં અવર જવરની મર્યાદાને પ્રતિદિન સંક્ષિપ્ત કરવી અથવા સવ વ્રતોને સંક્ષિપ્ત કરવા તેનું નામ દેશાવકાશિક વ્રત છે આ સામાયિક અને દેશાવકાશિક વ્રતનું સમ્યક્ રીતે પાલન કરવું એને (૨) બીજુ વિશ્રામસ્થાન કહ્યું છે શ્રમણોપાસકનું વિશ્રામસ્થાન-આઠમ ચૌદશ આદિ પર્વ તિથિઓમાં સંપૂર્ણ અહોરાત્ર (દિનરાત) નું જે પૌષધવ્રત કરવામાં આવે છે તે તેનું ત્રીજુ વિશ્રામસ્થાન છે (૪) અપશ્ચિમ (અંતિમ)-મારણાન્તિક સંલેખના રૂપ તપવિશેષનું પ્રીતિપૂર્વક સેવન કરવું, ચારે પ્રકારના આહારના પરિ

त्यक्ते भक्तपाने येन स तथा-त्यक्तभक्तपान इत्यर्थः, अत्रापि क्तान्तस्य परप्रयोगः। तथा-पादपोपगतः-पादपो-वृक्षः स इव निर्व्यापारतया उपगतः-पादपोपगमन-नामकानशनविशेषं प्रतिपन्नः, तथा कालं-मरणकालम्-अनवकाङ्क्षन्-अनभिलषन्, विहरति-सर्वतो निवृत्तस्तिष्ठतीति भावः, तत्रापि च तस्य एक आश्वासः प्रज्ञप्तः ४। (सू० ४)।

पुनः पुरुषविशेषं निरूपयितुमाह—

मूलम्—चत्तारि पुरिसजाया पण्णत्ता, तं जहा-उदिओदिए णाममेगे १, उदियत्थमिए णाममेगे २, अत्थमिओदिए णाममेगे ३, अत्थमियत्थमिए णाममेगे ४। भरहे राया चाउरंतचक्कवट्टी णं उदिओदिए १, बंभदत्ते णं राया चाउरंतचक्कवट्टी उदिअत्थमिए २, हरिएसबले णाममणगारेणं अत्थमिओदिए ३, काले णं सोयरिये अत्थमिअत्थमिए ४। । सू० ५ ।

छाया—चत्वारि पुरुषजातानि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा-उदितोदितो नामैकः १, उदितास्तमितो नामैकः २, अस्तमितोदितो नामैकः ३, अस्तमितास्तमितो नामैकः ४; भरतो राजा चातुरन्तचक्रवर्ती खलु उदितोदितः १, ब्रह्मदत्तः खलु

तथा-भक्त पानका प्रत्याख्यान करता है, एवं-मरणाशंसा रहित हो कर पादपोपगमन नामक अनशन विशेष को सर्वतोभाव से धारता है वह-श्रमणोपासकका चौथा आवास -विश्राम स्थान है ॥ सू०४॥

" पुनः पुरुष विशेषका निरूपण—

" चत्तारि पुरिसजाया " इत्यादि— ५

सूत्रार्थ—चार पुरुषजात कहे गयेहैं, जैसे-प्रथम उदितोदित १ उदितास्तमित-२ अस्तमितोदित- ३ और--अस्तमितास्तमित-४ ।

त्याग पूर्वक मरणुनी आकांक्षाथी रहित बनीने पादपोपगमन नामना संथारानु सर्वतो भाव पूर्वक आराधन करवु, ते श्रमणोपासकनु चोथु विश्रामस्थान छे ।।सू ४।।

पुरुष विशेषनु सूत्रकार निरूपण करे छे—

' चत्तारि पुरिसजाया " ईत्यादि—(सू. ५)

सूत्रार्थ—चार प्रकारना पुरुषो कह्या छे—(१) उदितोदित (२) उदितास्तमित (३) अस्तमितोदित

राजा चातुरन्तचक्रवर्ती उदितास्तमितः २, हरिकेशबलो नामानगारः खलु अस्त मितोदित ३, कालः खलु सौकरिक अस्तमितास्तमित। (सू० ५)।

टीका—" चत्तारि पुरिसजाया " इत्यादि–स्पष्टम्–नवरम्–एक पुरुष उदितोदितः–पूर्वमुदित – उत्तमकुलबलसमृद्धिपुण्यकर्मादिभिरभ्युदय माप्तः पश्चादपि उदित –अमन्दानन्द सन्दोहरूपमोक्षोदयं माप्त उदितोदितः, एतस्य पुरुषमुदाहरति–' भरहे राये "–त्यादि–यथा–चातुरन्त–चक्रवर्ती–चत्वारः–दि क्त्रये समुद्राः एकस्यां हिमवांश्च अन्ता –अवधयो यस्याः सा चातुरन्ता पृथिवी,

चातुरन्त चक्रवर्ती भरत नरेश उदितोदित थे, १ चातुरन्त चक्र वर्ती ब्रह्मदत्त उदितास्तमित थे, २ हरिकेश नामके अनगार अस्तमितो दित थे, ३ एवं सूकरका शिकार करनेवाला कालसौकरिक अस्तमिता स्तमित था, ४।

टीकार्थ–इस सूत्रद्वारा जो चार प्रकारके पुरुष कहे गये हैं उनके सम्बन्ध में स्पष्टीकरणयों है–कोई एक पुरुष ऐसा होता है जो– उत्तम कुल में जन्म लेना, बल समृद्धि से सम्पन्न होना, तथा पुण्यकर्मादिका अनुभव करना आदि अभ्युदय को पहले से जन्म से ही प्राप्त करता है, और बाद में भी वह अत्यन्त आनन्द समूह अव्याबाध मोक्षोदय को प्राप्त कर लेताहै, इस प्रथम भङ्गमें चातुरन्त चक्रवर्ती ऋष भनन्दन भरतराजा हुवेहैं। तीन दिशाओंमें समुद्र और एक दिशामें हिम वान् ये चार जिसके अन्त हैं अवधियां हैं, ऐसी चतुरन्ता पृथिवी का जो स्वामी हो वे चातुरन्त हैं, तथा चक्रसे छण्डमें वर्तन करना (राजकरना)

ચાતુરન્ત ચક્રવર્તી ભરતરાજા ઉદિતોદિત હતા ચાતુરન્ત ચક્રવર્તી બ્રહ્મ દત્ત ઉદિતાસ્તમિત હતા હરિકેશ નામના અણુગાર અસ્તમિતોદિત હતા, અને સૂવરનો શિકાર કરનાર કાલસૌકરિક અસ્તમિતાસ્તમિત હતો,

આ ચાર પ્રકારના પુરુષોનું સ્પષ્ટીકરણ આ પ્રમાણે સમજવું—

(૧) ઉદિતોદિત—કોઈ એક પુરુષ એવો હોય છે કે જે ઉત્તમ કુળમાં જન્મ લે છે બળ સમૃદ્ધિ આદિથી સપન્નતા પુણ્યકર્મનો અનુભવ આદિ અભ્યુદય જ મથી જ પ્રાપ્ત કરે છે અને આ મનુષ્યભવનું આયુષ્ય પૂર્ણ કરીને અત્યન્ત આનંદદાયક અવ્યાબાધ મોક્ષોદયને પણ પ્રાપ્ત કરે છે ચાતુરન્ત ચક્રવર્તી ઋષભનન્દન ભરત રાજાને આ પ્રકારના પુરુષ કહી શકાય ત્રણ દિશા ઓમાં સમુદ્ર અને એક દિશામાં હિમવાન્ પર્વત આ ચાર જેનાં અન્ત (અવધિ–હદ) હોય છે એવી ચાતુરન્તા પૃથ્વીનો જે સ્વામી હોય તેને

अयं (स्वामी) चातुरन्तः, स चासौ चक्रवर्ती–चक्रेण सह वर्तते इत्येवंशिलश्चक्रवर्ती च चातुरन्तचक्रवर्ती भरतः–ऋषभनन्दनःप्रसिद्धो राजा खलु उदितोदितोबोध्यः१।

तथा–एकः पुरुषः उदितास्तमितः–उदितश्चासावस्तमितश्च तथा=पूर्वं सूर्य इवोदितः पश्चात् सकलसमृद्धिभ्रष्टत्वाद् दुर्गतिप्राप्तत्वाच्च अस्तमितो भवति। यथा-ब्रह्मदत्तश्चातुरन्त द्वादश चक्रवर्ती राजा, स हि पूर्वं सुकुलोत्पन्नत्वादिना निज-बाहुबलोपार्जितमहासाम्राज्यत्वेन चाभ्युदितः पश्चाच्चानुचितकारणज्जातकोप ब्राह्मणप्रयुक्तपशुपाल प्रक्षिप्तधनुर्गोलिकाघातभग्ननेत्रगोरुकत्वेन कालधर्मप्राप्त्य-नन्तरं सप्तमनरके प्रतिष्ठानाख्यनरकावासस्य महातीव्रवेदनानुभवेन चास्त-मित इति २।

जिसका स्वभाव हो वे चक्रवर्ती हैं, ऐसे चातुरन्त चक्रवर्ती ऋषभदेव तीर्थ करके पुत्र राजा भरत उदितोदित कहे गये हैं। तथा–कोई एक पुरुष ऐसा होता है जो उदितास्तमित होता है पहले वह सूर्य जैसा उदित होता है–पश्चात्–सकल समृद्धि से भ्रष्ट होजाने से और दुर्गतिमें पतित होने से अस्तमित हो जाता है–२ ऐसा चातुरन्त चक्रवर्ती ब्रह्म-दत्त हुवा है, यह पहले अच्छे कुलमें उत्पन्न हुवा, वहांपर उसने अपने बाहुबल प्रतापसे षट् खण्डका महान् साम्राज्य स्थापित कर लिया, चक्रवर्ती बन गया, पश्चात् किसी अनुचित निमित्तवश उत्पन्न कोपसे युक्त हो गया, इत्यादि और सब कथन इसकी कथामें निबद्ध हैं। बादमें यह मर कर सप्तम नरकमें अप्रतिष्ठान नामक नरकावासकी महा तीव्र वेदनाको अनुभव करता करता अस्तमित हो गया। इस

ચાતુરન્ત કહે છે ચક્રથી વર્તન કરવાનો જેનો સ્વભાવ હોય તેને ચક્રવતી કહે છે. એવા ચાતુરન્ત ચક્રવતી ઋષભદેવ તીર્થંકરના પુત્ર રાજા ભરતને ઉદિ-તોદિત કહેવામા આવેલ છે.

(૨) ઉદિતાસ્તમિત પુરુષ—કોઈ પુરુષ પહેલાં સૂર્ય જેવો ઉદિત અથવા અભ્યુદય સ પન્ન હોય છે, પણ પાછળથી સકળ સમૃદ્ધિ ગુમાવી બેસવાથી અને દુર્ગતિમા જવાથી અસ્તમિત (અભ્યુદયવિહીન) થઇ જાય છે. ચાતુરન્ત ચક્રવતી બ્રહ્મદત્ત રાજાને આ પ્રકારમા ગણાવી શકાય. પહેલાં તો તે સારા કુળમા ઉત્પન્ન થયો હતો તેણે પોતાના બાહુબળના પ્રતાપથી છ ખંડનુ મહાન સામ્રાજ્ય સ્થાપ્યું–ચક્રવતી થઈ ગયો ત્યાર બાદ કોઇ અનુચિત્ત નિમિત્તથી ઉત્પન્ન થયેલા ક્રોધને અધીન થયો, ઇત્યાદિ કથન તેની કથામાથી જાણી લેવુ. ત્યાર બાદ તે મરીને સાતમી નરકના અપ્રતિષ્ઠાન નામના નરકવાસમા ઉત્પન્ન થઇને મહા તીવ્ર વેદનાનો અનુભવ કરવા લાગ્યો આ રીતે તે અસ્તમિત થઇ

तथा-एकः पुरुषः अस्तमितोदित-अस्तमितश्चासावुदितश्च तथा-पूर्वं हीन कुलोत्पन्नत्व - दुर्भगत्वादिनाऽस्तमितः-अवनतः, पश्चात् समृद्धिसुकीर्तिसुगति लाभादिनोदितो भवति, यथा-हरिकेशबलः-तदाख्यः अनगारः-साधुरभूत्, स हि जन्मान्तरोपार्जितनीचगोत्रकर्मप्राप्तचाण्डालकुलत्वेन दौर्भाग्यदारिद्र्या कुलत्वेन चास्तमितोऽपि पश्चात् प्रव्रजितो निश्चलचरणगुणवशीकृतदेवत्वेन प्रसिद्धि सुगतिलाभेन चोदितोऽभूत् ।३।

तरह उदित होकर अस्तमित होनेवाला प्राणी इस द्वितीय भङ्गमें परि गणित होता है। इस कथाको विस्तृत रूपमें मैने उत्तराध्ययनकी प्रिय दर्शिनी टीकाके १३वें अध्यन ७२५ पृष्ठमें लिखाहै वहां देखलें। कोईएक पुरुष ऐसा होता है जो पहले हीन कुलमें उत्पन्न हुवा दुर्भगत्व-दुर्ग त्यादिमें अस्तमित रहा बाद में समृद्धि-सुगति-सुकीर्ति लाभसे उदित हो जाता है, जैसे-हरिकेशबल अनगार। इसने जन्मान्तरमें उपा र्जित कर्मोदयसे चाण्डाल कुलमें जन्म लिया और दौर्भाग्य दारिद्र्यादिसे आकुल रहा बादमें प्रव्रजित होकर चारित्र आराधनाकी जिससे मरणका लमें कालकर देवपर्याय से उत्पन्न हुवा। यह चारित्र उ के बारहवे अध्ययन में कथित हैं ऐसा व्यक्ति अस्तमितोदित कहा गया है ३।

ગયો. આ રીતે ઉદિત થઈને અસ્તમિત થવા છતાં આ બીજા ભાગમાં પ્રતિ પાદન કરવામાં આવ્યુ છે પહેલાં અભ્યુદય અને પછી પતન પામતાં પુરુષના આ ભાંગામાં સમાવેશ થાય છે. બ્રહ્મદત્તની કથા ઉત્તરાધ્યયનની પ્રિયદર્શિની ટીકાના ૧૩ માં અધ્યયનના ૭૨૫ માં પાના પર આપી છે તો ત્યાંથી તે વાંચી લેવી.

(૩) અસ્તમિતોદિત પુરુષ—કોઈ એક પુરુષ પહેલાં દુર્ગતિમાં હોય અને ત્યાંથી હીનકુળમાં ઉત્પન્ન થાય અને ત્યારબાદ સમૃદ્ધિ, સુકીર્તિ, અને સુગતિ પામે તો એવા પુરુષને આ પ્રકારમાં મૂકાવી શકાય છે એવો પુરુષ પતનના પંથ તરફથી ઉત્થાનને પંથે વળે છે હરિકેશબલ અણગાર આ પ્રકા રના પુરુષ થઈ ગયા. તેમણે જન્માન્તરમાં ઉપાર્જિત પાપકર્મોના ઉદયથી ચાંડાલ કુળમાં જન્મ લીધો હતો, તેઓ અતિશય દારિદ્રયથી પીડાતા હતા પણ ત્યારબાદ પ્રવ્રજ્યા અંગીકાર કરીને ચારિત્રારાધના કરીને મનુષ્યભવનું આયુ પૂરું કરીને દેવની પર્યાયે ઉત્પન્ન થઇ ગયા તેમની કથા પણ અન્ય ગ્રન્થોમાંથી વાંચી લેવી એવા પુરુષને 'અસ્તમિતોદિત' કહે છે

तथा—एकः पुरुषः अस्तमितास्तमितः—अस्तमितश्चासावस्तमितस्तथा=पूर्वमधार्मिकाधर्मानुरागाधर्मसेव्यधर्मिष्ठाधर्माख्यायध्यधर्मरागयधर्मप्रलोक्यधर्मजीवि दुष्कुलोत्पन्नत्व सावद्य व्यापारत्वादिना कीर्तिसमृद्धिरूपतेजोरहितत्वात् सायंकालसूर्यइवास्तमितः पश्चादपि दुर्गतिगमनादस्तमितो भवति, यथा—निश्शीलो निर्मर्यादो निष्ठुरो निष्करुण' कालः—तदाख्या सौकरिकोऽस्तमितास्तमितोऽभूत्, स हि सूकरैश्चरतीति सौकरिकः—सूकरमृगयाकारीति यथार्थो प्रति दिने पञ्चशतमहिषघातको दुष्कुलोत्पन्नत्वात् सकललोकनिन्दितत्वात् अकृत्यकारित्वाच्च पूर्वमस्तमितः पश्चादपि मृत्वा सप्तमपृथिवी गत इति अस्तमित इति । ४ । (सू० ५) ।

तथा कोई एक पुरुष अस्तमित होकर अस्तमितही बना रहता है, ऐसा पुरुष अधार्मिक अधर्मरागी—अधर्माख्यायी—अधर्माऽनुष्ठाता—अधर्म जीवी होता है और सर्वदा सावद्यव्यापारसे कीर्ति—समृद्धि—रुप—तेजोरहित बनकर सायं सूर्य के समान अस्तमित बन जाता है। और फिर बादमेंभी दुर्गति गमनसे अस्तमित बन जाताहै। इसमें दृष्टान्तभूत कालसौकरिकहै, यह निश्शील—मर्यादारहीत था दयाहीन था सूकरकी शिकारका प्रेमी था, जोकि—प्रतिदिन पांचसौ भैसा का घात करता था, दुष्कुलोत्पन्न होनेके नति सकलजनों द्वारा निन्दित था, और अकृत्यकारी था इस कारण यह पहलेही से अस्तमित हुवा और बादमें भी मरकर सप्तम पृथिवीमें गया-अस्तमित बना रहा ॥सू ५

---

(४) અસ્તમિતાસ્તમિત પુરુષ—કોઈ એક પુરુષ પહેલા પણ અસ્તમિત (અભ્યુદયવિહીન) હોય છે અને પછી પણ અસ્તમિત જ રહે છે એવો પુરુષ અધાર્મિક, અધર્મરાગી, અધર્માખ્યાયી, અધર્માનુષ્ઠાતા અને અધર્મજીવી હોય છે, અને સર્વદા સાવદ્ય વ્યાપારમા પ્રવૃત્ત રહેવાને કારણે કીર્તિ, સમૃદ્ધિ, રૂપ અને તેજ રહિત જ રહેવાને કારણે સાયકાલિન સૂર્યસમાન અસ્તમિત જ બની જાય છે વળી મરીને દુર્ગતિમા જવાને લીધે અસ્તમિત જ ચાલુ રહે છે કાલસૌકરિકને આ પ્રકારમાં ગણાવી શકાય. તે નિ.શીલ—મર્યાદાવિહીન હતો. દયાહીન હતો, સૂવરના શિકારનો શોખીન હતો, તે દરરોજ ૫૦૦ પાડાનો ઘાત કરતો હતો, હીન કુળમાં જન્મેલો હોવાથી સકળ જનો તેની નિંદા કરતા હતા અને અકૃત્યકારી હતો. આ રીતે પહેલાં પણ તે અસ્તમિત હતો અને આખી જિંદગી પણ એવો જ રહ્યો. તે મરીને સાતમી નરકમાં ઉત્પન્ન થયો, આ રીતે તેણે દુર્ગતિ રૂપ અસ્તમિતા પ્રાપ્ત કરી । સૂ. ૫ ।

ये एवं विविधभावैश्चिन्त्यन्ते ते सर्व एव जीवाश्चतुर्षु राशिष्ववतरन्तीति तान् प्रदर्शयितुमाह—

मूलम्—चत्तारि जुम्मा पण्णत्ता त जहा-कडजुम्मे १ तेओए २, दावरजुम्मे ३, कलिओए ४। सू० ६।

छाया—चत्वारो युग्माः प्रज्ञप्ताः, तद्यथा-कृतयुग्मः १, त्र्योजः ३, द्वापरयुग्मः २, कल्योजः ४। (सू० ६)।

टीका—"चत्तारि जुम्मा" इत्यादि—युग्माः—राशिविशेषाः चत्वारः प्रज्ञप्ताः तद्यथा-कृतयुग्मः—चतुष्कापहारेण अपह्रियमाणश्चतु पर्यवसितो राशिः १। तथा-त्र्योजः-त्रिपर्यवसितो राशिः २, द्वापरयुग्मः-द्विपर्यवसितो राशिः ३ कल्योजः-

---

इस प्रकारके विविध भावोंसे जीव विचारे जाते हैं, वे ही सब जीव चार राशियोंमें अवतरित होतेहैं, यही बात अब सूत्रकार प्रदर्शित करते हैं—" चत्तारि जुम्मा पण्णत्ता—" इत्यादि—

सूत्रार्थ-युग्म चार कहे गये हैं, एक-कृत युग्म १ दूसरा-ओज-२ तीसरा द्वापर युग्म-३ और चौथा-कल्योज-४

टीकार्थ-युग्म शब्दसे यहाँ राशि विशेष गृहीतहै, ये युग्म चार प्रकारके जो कहे गये हैं उसका तात्पर्य ऐसा है—जिस राशिमें चारको घटाने पर अन्तमें चार ही बचते हों वह कृतयुग्म रूप राशि है, जिस राशिमें तीनको घटाने पर तीनही बचते हों वह राशि त्र्योज है, जिस राशिमें से दो को घटाने पर दोही बचें वह राशि द्वापर युग्म है, और जिस राशिमेंसे एकको घटाने पर अन्तमें एक ही बचता है वह-राशि कल्योज है। यहाँ गणितकी परिभाषामें युग्म शब्द से सम राशि और-ओज

विविध भावोनी अपेक्षाओ छवोनी प्ररूपणा करीने हवे सूत्रकार समस्त छवोने चार राशिओमां विभक्त करी नाखे छे—" चत्तारि जुम्मा पण्णत्ता " इत्यादि-

सूत्रार्थ-युग्म चार कह्या छे-(१) कृत युग्म (२) त्र्योज, (३) द्वापर युग्म अने (४) कल्योज

'युग्म' पद अहीं राशिविशेषनुं वाचक छे तेना चार प्रकारोनुं हवे स्पष्टीकरण करवामां आवे छे-जे राशिमां चारने घटाववाथी अन्ते चार ज बचे छे तेने कृतयुग्म रूप राशि कहे छे जे राशिमां त्रणने घटाववाथी अन्ते त्रण ज बचे छे ते राशिने त्र्योज कहे छे जे राशिमां बेने घटाववाथी बे ज बचे छे ते राशिने द्वापर युग्म कहे छे जे राशिमां एकने घटाववाथी अन्ते एक ज बचे छे ते राशिने कल्योज कहे छे अहीं गणितनी परिभाषामां युग्म शब्दथी समराशि अने ओज शब्दथी विषमराशि

एकपर्यवसिती राशिः । ४ । इह गणितपरिभाषायां युग्मशब्देन समराशिरुच्यते, ओजशब्देन-तु विषमराशिः । इति सिद्धान्तः । सू० ६ ॥

उक्तराशीन् नारकादिषु निरूपयितुमाह—

मूलम्—नेरइयाणं चत्तारि जुम्मा पण्णत्ता, तं जहा- कडजुम्मे १, तेओए २, दावरजुम्मे ३, कलिओए ४, एवं असुरकुमाराणं जाव थणियकुमाराणं, एवं पुढविकाइयाणं आउकाइयाणं तेउकाइयाणं वाउकाइयाणं सव्वेसिं जहा णेरइयाणं। सू० ७।

छाया—नैरयिकाणां चत्वारो युग्माः प्रज्ञप्ताः, तद्यथा-कृतयुग्मः १, त्र्योज २, द्वापरयुग्मः ३, कल्योजः ४ । एवमसुरकुमाराणां यावत् स्तनितकुमाराणाम्, एवं पृथिवीकायिकानामप्कायिकानां तेजस्कायिकानां वायुकायिकानां सर्वेषां यथा नैरयिकाणाम् । (सू० ७)

टीका—" नेरइयाणं चत्तारि " इत्यादि-स्पष्टम् । नवरं-नैरयिकादारभ्य वैमानिक पर्यन्ताश्चतुर्विंशति दण्डकस्थाः सर्वेऽपि जीवाः कृतयुग्मादि श्चतुर्विधा एव भवन्ति जन्म-मरणाभ्यां न्यूनाधिकत्वसम्भवात् । (सू० ७)

शब्दसे विषम राशि कही जाती है, तथा-लोकमें कृतयुग्मादि शब्दसे तो सत्ययुग आदि युग चतुष्टय कहा जाता है। सू० ६ ॥—

अब सूत्रकार उक्त राशियोंका निरूपण नरकादिकोंमें करते हैं—

" नेरइयाणं चत्तारि जुम्मा पण्णत्ता " इत्यादि ७ ॥

नैरयिकों के चार युग्म होते हैं, कृतयुग्म-१ त्र्योज-२ द्वापर युग्म ३ और कल्योज-४ इसी तरह-असुर कुमारोंसे लेकर यावत् स्तनितकुमार तक पृथिवीकायिक-अप्कायिक-तेजस्कायिक-वायुकायिकों में

કહેવામા આવે છે, તથા લોકમા કૃતયુગ્મ આદિ શબ્દ દ્વારા સત્યુગ આદિ ચાર યુગ જ ગ્રહણ થાય છે ॥ સૂ. ૬ ॥

હવે સૂત્રકાર ઉપર્યુક્ત રાશિઓનું નારકાદિકોમાં નિરૂપણ કરે છે—

" नेरइयाणं चत्तारि जुम्मा पण्णत्ता " ઇત્યાદિ—

નારકોના ચાર યુગ્મ હોય છે-(૧) કૃતયુગ્મ, (૨) ત્ર્યોજ, (૩) દ્વાપર યુગ્મ અને (૪) કલ્યોજ એ જ પ્રમાણે અસુરકુમારોથી લઇને સ્તનિતકુમારો સુધીના, પૃથ્વીકાયિક, અપ્કાયિક, તૈજસ્કાયિક અને વાયુકાયિકોમા પણ ચાર યુગ્મ કહ્યા છે. આ કથનનો ભાવાર્થ એ છે કે નારક આદિ ચાર પ્રકાર...

पुनर्भावानेव भावैर्निरूपयति—

मूलम्-चत्तारि सूरा पण्णत्ता, तं जहा-खंतिसूरे १, तवसूरे २, दाणसूरे ३, जुद्धसूरे ४। खंतिसूरा-अरहंता १, तवसूरा-अणगारा २, दाणसूरे-वेसमणे ३, जुद्धसूरा-वासुदेवा ४। सू० ८।

छाया—चत्वारः शूराः प्रज्ञप्ताः, तद्यथा-क्षान्तिशूरः १, तपःशूरः २, दानशूरः ३, युद्धशूरः ४। क्षान्तिशूराः-अर्हन्तः १, तपःशूराः-अनगाराः २, दानशूराः-वैश्रमणः ३। युद्धशूराः-वासुदेवाः ४। (सू० ८)।

टीका—"चत्तारि सूरा" इत्यादि-स्पष्टम्, नवरं-शूराः-वीराः, क्षान्तिः-क्षमा-तत्र शूराः, एवं तपःशूरादयो बोध्याः १ क्रमेण तान्दृष्टान्तयति-'खंतिसूरा' इत्यादि-क्षान्तिशूराः-अर्हन्तः श्रीमहावीरस्वामिवत् १, तपःशूराः-अनगाराः-

चार युग्म कहे गये हैं। तात्पर्य ऐसा है कि-नैरयिक आदि चार प्रकारके युग्म वाले हो कभी जन्म-मरण लेकर न्यूनाधिक होते रहते हैं। सू ७॥

अब सूत्रकार भावोंको लेकर जीवोंकी प्ररूपणा करते हैं—

"चत्तारि सूरा पण्णत्ता" इत्यादि ८

सूत्रार्थ-शूर चार प्रकारके होते हैं क्षान्तिशूर-१ तपःशूर-२ दानशूर-३ और युद्धशूर-४ इनमें-क्षान्तिशूर अर्हन्त हैं-१ तपःशूर-अनगार हैं-२ दानशूर-वैश्रमण हैं-३ युद्धशूर-वासुदेव हैं ४

टीकार्थ-क्षान्तिमें प्रधानरूपको क्षान्तिशूर, तपस्यामें प्रधानको तपःशूर, दान देनेमें जो हिचकिचाहट नहीं करे वे दानशूर, युद्धमें नाम कमानेवालेको युद्धशूर कहते हैं। इसी बातको सूत्रकारने दृष्टान्त देकर समझाया है,

યુગ્મ (રાશિ) વાળા હોવા છતાં પણ જન્મ-મરણની અપેક્ષાએ ન્યૂનાધિક થતાં રહે છે । સૂ ७।

હવે સૂત્રકાર ભાવોની અપેક્ષાએ જીવોની પ્રરૂપણા કરે છે—

"ચત્તારિ સૂરા પણ્ણત્તા" ઇત્યાદિ—

સૂત્રાર્થ-શૂર ચાર પ્રકારના કહ્યા છે-(૧) ક્ષાન્તિશૂર, (૨) તપશૂર, (૩) દાનશૂર અને (૪) યુદ્ધશૂર ક્ષાન્તિશૂર અર્હન્ત હોય છે તપશૂર અણગાર હોય છે દાનશૂર વૈશ્રમણ છે અને યુદ્ધશૂર વાસુદેવ છે

ટીકાર્થ—ક્ષાન્તિ પ્રધાન પુરુષને ક્ષાન્તિશૂર ઉગ્ર તપસ્યા કરનારને તપ શૂર દાન આપવામાં જે પાછો પડતો નથી તે દાનશૂર અને યુદ્ધમાં વીરતા બતાવનારને યુદ્ધશૂર કહે છે અર્હંત મહાવીર પ્રભુ ક્ષાન્તિ (ક્ષમા) માં શૂર ગણાય,

साधवः धन्यनामानगारवत् २, दानशूरः-वैश्रवणः-कुवेराख्य उत्तरदिग्लोकपालः, तस्य तीर्थङ्करादिजन्मपारणक=प्रभृतिकल्याणकेषु रत्नवृष्टिकारित्वात्, प्रभुसेवक-दैन्यदूरीकरत्वाच्च । उक्तं च-" वेसमणवयणसंपेरिया उ ते तिरियजंभगा देवा ।
कोडिग्गसो हिरण्णा, रयणाणि य तत्थ उवणेंति ।१।"

छाया —"वैश्रवणवचनसंप्रेरितास्तु ते तिर्यग्जृम्भका देवाः ।
कोटयग्रशो हिरण्यानि रत्नानि च तत्रोपनयन्ति । १ । " इति,

युद्धशूरा वासुदेवाः श्रीकृष्णवत्, तस्य षष्टयधिकशतत्रयसंख्य-युद्धेषु विजयित्वात् । (सू० ८) ।

पुनर्जीवानेव भावैर्निरूपयति-

मूलम्--चत्तारि पुरिसजाया पण्णत्ता, तं जहा--उच्चे णाममेगे उच्चच्छंदे १, उच्चे णाममेगे णीअच्छंदे २, णीए णाममेगे उच्चछंदे ३, णीए णाममेगे णीयच्छंदे ४। ॥ सू० ९ ॥

छाया —चत्वारि पुरुषजातानि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा -उच्चो नामैक उच्चच्छन्दः

अर्हन्त महावीर स्वामी क्षान्ति क्षमामें शूर कहे गये हैं १ धन्य नामक अनगारकी तरह साधुजन तपःशूर होते हैं-२ उत्तरदिक्पाल कुवेर दानशूर हैं-३ यह कुवेर आदिके जन्म कल्याणके अवसर पर और पारणक आदि समयमें रत्नोंकी वर्षा करता है, इसलिये-इसे दानशूर कहा गया है उस समय यह प्रभु सेवकके भेदभावको दूर कर देता है। कहा भी हैं—वेसमाणवयणसपेरिया—इत्यादि कृष्णकी तरह वासुदेव युद्धशूर होते है श्री कृष्ण तीनसौ साठ युद्धमें विजयी हुवे हैं॥ सू० ८॥

पुनः भावोंको लेकर सूत्रकार जीवोंका ही निरूपण करते हैं—
" चत्तारि पुरिसजाया पण्णत्ता "—इत्यादि ९

पुरुष जात चार कहे गये हैं, उच्च उच्चच्छन्दवाला-१ उच्च नीच

ધન્ય નામના અણુગાર જેવા સાધુઓ તપ:શૂર ગણાય છે ઉત્તર દિશાના દિક્‌-પાલ દાનશૂર ગણાય છે આ કુબેર તીર્થંકરના જન્મ કલ્યાણક, પારણા આદિ અવસરે રત્નોની વૃષ્ટિ કરે છે તેથી તેને દાનશૂર કહ્યો છે તે સમયે તે સ્વામી અને સેવકના ભેદભાવને દૂર કરી નાખે છે, કહ્યુ પણ છે કે-" વેસમણ વયણ-સંપરિયા " ઇત્યાદિ કૃષ્ણની જેમ વાસુદેવ યુદ્ધશૂર હોય છે શ્રી કૃષ્ણે ૩૬૦ યુદ્ધોમા વિજય પ્રાપ્ત કર્યો હતો ।સૂ ૮।

ભાવોની અપેક્ષાએ સૂત્રકાર જીવોનું વિશેષ નિરૂપણ કરે છે—
" ચત્તારિ પુરિસજાયા પણ્ણત્તા " ઇત્યાદિ—
ચાર પ્રકારના પુરુષો કહ્યા છે—(૧) ઉચ્ચ ઉચ્ચ છન્દવાળો, (૨) ઉચ્ચ

१, तथो नामैको नीचच्छन्द २, नीचो नामैक उच्चच्छन्द ३, नीचो नामैको नीचच्छन्दः ४। (सू० ९)।

टीका—"चत्तारि पुरिसमाया" इत्यादि–स्पष्टम्। नवरम्–एकः कश्चित् पुरुषः उच्चः–शरीरकुलसमृद्ध्यादिभिर्महान, उच्चच्छन्द –उच्चश्छन्दोऽभिप्रायो यस्य स तथा=उत्कृष्टाभिप्रायवान भवति, औदार्यादिसम्पन्नत्वात् १, तथा–एकः–अन्यः पुरुषः उच्चोऽपिसन् नीचच्छन्दः–अपकृष्टाभिप्रायवान् भवति मलिनविचार त्वात् २, तथा–एकः–अपर पुरुष नीच –शरीरकुलविभवादिभिर्हीनोऽपि उच्चच्छन्दो भवति ३, तथा–एकः–इतरः पुरुषस्तु नीचो नीचच्छन्दो भवति ४। सू ९।

अनन्तर नीचाभिप्राय उक्तः स च लेश्याविशेषाद्भवतीति लेश्यां निरूपयति–

मूलम्‌ असुरकुमाराणं चत्तारि लेसाओ पण्णत्ताओ, त जहा कण्हलेसा १, णीललेसा २, काउलेसा ३, तेउलेसा ४।

च्छन्दवाला–२ नीच उच्च च्छन्दवाला–३ एवं नीच नीचच्छन्दवाला–४ तात्पर्य यह है कि जो पुरुष शरीर–कुल–समृद्धि आदि से महान् महान् होता हुआ भी उदारता आदि गुणों से युक्त होने के कारण अभिप्राय से महान् होता है वह–प्रथम भङ्गमें परिणत हुआ है।, तथा–जो शरीर–कुलादिसे महान् होता हुआ भी मलिन विचार वाला होने के कारण अपकृष्ट अभिप्रायवाला होता है, वह–द्वितीय भङ्ग में गिना गया है। तथा–जो शरीर–कुल–विभव आदि से हीन होता हुआ भी उन्नत विचार वाला होता है वह–तृतीय भङ्ग में गिना गया है। और–जो शरीर–कुल–आदि से हीन होता है–और अभिप्राय से भी हीन होता है–वह चतुर्थ भङ्ग में–लिया गया है ॥ सू०९ ॥

નીચ–છન્દવાળો, (૩) નીચ ઉચ્ચ છન્દવાળો અને (૪) નીચ નીચ છન્દવાળો.

હવે આ ચારે પ્રકારનું સ્પષ્ટીકરણ કરવામાં આવે છે–(૧) કોઈ પુરુષ એવો હોય છે કે જે શરીર કુલ અને સમૃદ્ધિની અપેક્ષાએ પણ મહાન હોય છે અને ઉદારતા આદિ ગુણોથી યુક્ત હોવાને કારણે વિચારોની અપેક્ષાએ પણ મહાન હોય છે (૨) કોઈ પુરુષ શરીર કુલ આદિની અપેક્ષાએ મહાન હોવા છતાં મલિન વિચાર હોવા આદિને કારણે અધમ હોય છે (૩) કોઈ પુરુષ એવો હોય છે કે જે શરીર, કુલ, સમૃદ્ધિ આદિની અપેક્ષાએ હીન હોવા છતાં પણ ઉન્નત વિચારોવાળો હોય છે (૪) કોઈ પુરુષ શરીર, કુલ, વૈભવ આદિની અપેક્ષાએ પણ હીન હોય છે અને ઔદાર્ય આદિ ગુણો અને વિચારોની અપેક્ષાએ પણ હીન જ હોય છે । સૂ ૯ ।

एवं जाव थणियकुमाराणं, एवं पुढविकाइयाणं आउवणस्सइकाइयाणं वाणमन्तराणं सव्वेसिं जहा असुरकुमाराणं ॥सू०१०॥

छाया—असुरकुमाराणां चतस्रो लेश्याः प्रज्ञप्ताः, तद्यथा-कृष्णलेश्या १, नीललेश्या २, कापोतलेश्या ३, तेजोलेश्या ४। एवं यावत् स्तनितकुमाराणाम्। एवं पृथिवीकायिकानामप्वनस्पतिकायिकानां व्यन्तराणां यथा असुरकुमाराणाम्। ॥ सू० १० ॥

टीका—" असुरकुमाराणं " इत्यादि—असुरकुमाराणां लेश्याः-लिश्यते-श्लिष्यते कर्मणा संबध्यते जीवो याभिस्ता लेश्याः-कर्मणा सह सम्बन्धे हेतुभूता आत्मपरिणामविशेषाः, चतस्रः प्रज्ञप्ता, तद्यथा-कृष्णलेश्या-कृष्णाचासौ लेश्या कृष्णलेश्या १, एवं नीललेश्या २, कापोतलेश्या ३, तेजोलेश्या ४। एवम्-अनेन प्रकारेण स्तनितकुमारान्तानां देवानां चतस्रो लेश्या बोध्याः। एताश्चतस्रो लेश्या असुरकुमारादिस्तनितकुमारान्तानां द्रव्यतो भवन्ति। भावतस्तु सर्वेषां देवानां पञ्च-

---

नीच अभिप्रायवाला होना—यह लेश्या विशेष से होता है, अतः-अब सूत्रकार लेश्या की प्ररूपणा करते हैं—

" असुरकुमाराणं चत्तारि लेसाओ "—इत्यादि-१०

टीकार्थ-असुरकुमारों को चार लेश्याएं कही गई हैं। जिसके द्वारा जीव कर्मों से बद्ध होता है वह लेश्या है. यह लेश्या कर्म के साथ सम्बन्ध होने में हेतु है-आत्मा का परिणाम विशेष है। कृष्णलेश्या, नीललेश्या, कापोतलेश्या, तेजोलेश्या, ये लेश्याएं असुरकुमारों को जैसे होती हैं. वैसे-स्तनितकुमार तक के देवों को भी होती हैं। इन में ये लेश्याएं द्रव्य की अपेक्षा से कही गई हैं, क्योंकि—भाव की अपेक्षा तो छे के-

---

વિચારો અથવા ભાવોમાં નીચતા લેશ્યાવિશેષોને કારણે ઉત્પન્ન થાય છે. તેથી સૂત્રકાર લેશ્યાઓની પ્રરૂપણા કરે છે

" असुरकुमाराणं चत्तारि लेस्साओ " ઇત્યાદિ—

ટીકાર્થ-અસુરકુમારોમાં ચાર લેશ્યાઓનો સદ્ભાવ હોય છે જેના દ્વારા આત્મા કર્મો વડે બદ્ધ થાય છે, તેનુ નામ લેશ્યા છે કર્મની સાથે આત્માનો સબંધ કરવામા આ લેશ્યા કારણભૂત બને છે એટલે કે તે આત્માના પરિણામ વિશેષ રૂપ હોય છે અસુરકુમારોમાં કૃષ્ણ, નીલ, કાપોત અને તેજોલેશ્યાનો સદ્ભાવ હોય છે સ્તનિતકુમાર પર્યન્તના ભવનપતિઓમા પણ આ ચાર લેશ્યાઓનો સદ્ભાવ હોય છે તેમનામાં દ્રવ્યની અપેક્ષાએ આ ચાર લેશ્યાઓનો સદ્ભાવ સમજવો. ભાવની અપેક્ષાએ તો છએ છ લેશ્યાઓનો-કૃષ્ણ, નીલ, કાપોત,

लेश्या शुक्ललेश्या सहिताः पूर्वोक्तास्तस्र इति षड् लेश्या भवन्ति । तथा असुरकुमाराणाम्—एवमेव पृथिवीकायिकानाम् अप्कायिकानां वनस्पतिकायिकानां सर्वेषां व्यन्तराणां च चतस्रश्चतस्रो लेश्या बोध्याः । पृथिव्यब्वनस्पतिषु देवाना मुत्पत्तिसम्भवापेक्षया तेजोलेश्याऽपि भवतीति चतस्रो लेश्या प्रोक्ता इति ।सू०१०।

अनन्तरोक्तलेश्या विशेषेण मनुष्या विविधपरिणामा भवन्तीति यानादिदृष्टान्तचतुर्भङ्गिकाभिः पुरुषान् दर्शयितुमाह—

मूलम्—चत्तारि जाणा पण्णत्ता, त जहा—जुत्ते णाममेगे जुत्ते १, जुत्ते णाममेगे अजुत्ते २, अजुत्ते णाममेगे जुत्ते ३, अजुत्ते णाममेगे अजुत्ते ४। एवामेव चत्तारि पुरिसजाया पण्णत्ता, त जहा—जुत्ते णाममेगे जुत्ते । जुत्ते णाममेगे अजुत्ते ४ । १।

चत्तारि जाणा पण्णत्ता, त जहा—जुत्ते णाममेगे जुत्तपरिणए, जुत्ते णाममेगे अजुत्तपरिणए० ४। एवामेव चत्तारि पुरिसजाया पण्णत्ता, त जहा—जुत्ते णाममेगे जुत्तपरिणए० ४ । २।

चत्तारि जाणा पण्णत्ता, त जहा—जुत्ते णाममेगे जुत्तरूवे १, जुत्ते णाममेगे अजुत्तरूवे २, अजुत्ते णाममेगे जुत्तरूवे ३, अजुत्ते णाममेगे अजुत्तरूवे ४। एवामेव चत्तारि पुरिसजाया पण्णत्ता, त जहा—जुत्ते णाममेगे जुत्तरूवे० ४ । ३।

छवों कृष्ण, नील, कापोत, पीत, तेज, पद्म, शुक्ल लेश्याएं लेश्याएं होती हैं। असुरकुमारों के जैसे ही पृथिवीकायिक—अप्कायिक, वनस्पतिकायिक, और—व्यन्तरों को भी चार लेश्याएं होती हैं। पृथिवी—अप्, तेजस्कायिकोंमें देवोंकी उत्पत्ति सम्भावनासे तेजोलेश्या होतीहै।।सू १०।।

તેને પદ્મ અને શુક્લ લેશ્યાઓનો સદ્ભાવ હોય છે પૃથ્વીકાયિકો અપ્કાયિકો, વનસ્પતિકાયિકો અને વાન વ્યન્તરોમાં પણ અસુરકુમારો જેવી ચાર લેશ્યાઓનો જ સદ્ભાવ હોય છે પૃથ્વીકાયિકો અપ્કાયિકો અને તેજસ્કાયિકોમાં દેવોની ઉત્પત્તિની સંભાવનાની અપેક્ષાએ તેજોલેશ્યાનો સદ્ભાવ કહ્યો છે । સૂ. ૧૦।

चत्तारि जाणा पण्णत्ता, तं जहा—जुत्ते णाममेगे जुत्तसोहे० ४। एवामेव चत्तारि पुरिसजाया पण्णत्ता, तं जहा—जुत्ते णाममेगे जुत्तसोहे० ४॥ सू० ११ ॥

छाया—चत्वारि यानानि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा—युक्तं नामैकं युक्तं १, युक्तं नामैकमयुक्तम् २, अयुक्तं नामैकं युक्तम् ३, अयुक्तं नामैकमयुक्तम् ४। एवमेव चत्वारि पुरुषजातानि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा—युक्तो नामैको युक्तः, युक्तो नामैकोऽयुक्तः ४।

चत्वारि यानानि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा—युक्तं नामैकं युक्तपरिणतं, युक्तं नामैकमयुक्तपरिणतम्० ४। एवमेव चत्वारि पुरुषजातानि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा—युक्तो नामैको युक्तपरिणतः ४,

चत्वारि यानानि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा—युक्तं नामैकं युक्तरूपं १, युक्तं नामैक-

---

अनन्तरोक्त लेश्या विशेष से मनुष्य विचित्र परिणामवाले होते हैं, अतः—अब सूत्रकार यानादि दृष्टान्त की चतुर्भङ्गी द्वारा पुरुषों की प्ररूपणा करते हैं—" चत्तारि जाणा पण्णत्ता "—इत्यादि—११

इस सूत्र के अन्तर्गत चार सूत्र हैं। यान चार कहे गये हैं—युक्त युक्त—१ युक्ताऽयुक्त—२ अयुक्तयुक्त—३ अयुक्ताऽयुक्त—४, ऐसे ही युक्तयुक्त आदि के भेद से पुरुष भी चार प्रकार के हैं।

फिर भी—यान चार प्रकारके हैं—युक्तयुक्त—परिणत—१ युक्ताऽयुक्त—परिणन—२ अयुक्तयुक्त—परिणत—३ और — अयुक्ताऽयुक्त — परिणत—४ इसी प्रकारसे युक्तयुक्त परिणत आदि भेदवाले पुरुष भी चार होतेहैं ४,

(२) फिर भी—यान चार हैं, युक्त युक्त—रूप, १ युक्तायुक्त—रूप, २

લેશ્યાવિશેષના સદ્ભાવે કરીને મનુષ્ય વિચિત્ર પરિણામવાળા થાય છે તેથી હવે સૂત્રકાર યાત્રાદિના દૃષ્ટાન્ત દ્વારા ચાર પ્રકારના પુરુષોની પ્રરૂપણા કરે છે—" चत्तारि जाणा पण्णत्ता " ઇત્યાદિ—

આ સૂત્રમા ચાર સૂત્રોને સમાવી લીધા છે યાનના ચાર પ્રકાર કહ્યા છે–(૧) युक्तयुक्त, (૨) युक्ताऽयुक्त, (૩) अयक्तयुक्त, (૪) अयुक्ताऽयुक्त એ જ પ્રમાણે યુક્તયુક્ત આદિના ભેદથી ચાર પ્રકારના પુરુષો પણ હોય છે. (૧) યાનના નીચે પ્રમાણે ચાર પ્રકાર પણ કહ્યા છે (૧) યુક્ત યુક્તપરિણત, (૨) યુક્તાયુક્ત પરિણત, (૩) અયુક્તયુક્ત પરિણત અને (૪) અયુક્તાયુક્ત પરિણત એજ પ્રમાણે પુરુષના પણ યુક્તાયુક્ત પરિણત આદિ ચાર ભેદ છે ।૨।

યાનના નીચે પ્રમાણે ચાર પ્રકાર પણ પડે છે–(૧) યુક્તયુક્ત રૂપ, (૨)

लेश्या शुक्ललेश्या सहिताः पूर्वोक्तास्तस्र इति षड् लेश्या भवन्ति । तथा असु रकुमाराणाम्-एवमेव पृथिवीकायिकानाम् अप्कायिकानां वनस्पतिकायिकानां सर्वेषां व्यन्तराणां च चतस्रश्चतस्रो लेश्या बोध्याः । पृथिव्यब्वनस्पतिषु देवाना मुत्पत्तिसम्भवात्तेषां तेजोलेश्याऽपि भवतीति चतस्रो लेश्याः प्रोक्ता इति ।सू०१०।

अनन्तरोक्तलेश्यया विशेषेण मनुष्या विचित्रपरिणामा भवन्तीति यानादि दृष्टान्तचतुर्भङ्गिकाभिः पुरुषान् दर्शयितुमाह—

मूलम्—चत्तारि जाणा पण्णत्ता, त जहा—जुत्ते णाममेगे जुत्ते १, जुत्ते णाममेगे अजुत्ते २, अजुत्ते णाममेगे जुत्ते ३, अजुत्ते णाममेगे अजुत्ते ४। एवामेव चत्तारि पुरिसजाया पण्णत्ता, त जहा—जुत्ते णाममेगे जुत्ते । जुत्ते णाममेगे अजुत्ते ४ । १।

चत्तारि जाणा पण्णत्ता, त जहा—जुत्ते णाममेगे जुत्तपरि णए, जुत्ते णाममेगे अजुत्तपरिणए० ४। एवामेव चत्तारि पुरि सजाया पण्णत्ता, त जहा—जुत्ते णाममेगे जुत्तपरिणए० ४।२।

चत्तारि जाणा पण्णत्ता, त जहा—जुत्ते णाममेगे जुत्तरूवे १, जुत्ते णाममेगे अजुत्तरूवे २, अजुत्ते णाममेगे जुत्तरूवे ३, अजुत्ते णाममेगे अजुत्तरूवे ४। एवामेव चत्तारि पुरिसजाया पण्णत्ता, त जहा—जुत्ते णाममेगे जुत्तरूवे० ४ । ३।

छवों कृष्ण नील, कापोत, पीत, तेज, पद्म, शुक्ल लेश्याए लेश्याएं होती हैं। असुरकुमारों के जैसे ही पृथिवीकायिक-अप्कायिक, वनस्पतिकायिक, और-व्यन्तरों को भी चार लेश्याए होती हैं। पृथिवी-अप्, तेजस्कायिकोंमें देवोंकी उत्पत्ति सम्भावनासे तेजोलेश्या होतीहैं॥सू १०॥

તેજો, પદ્મ અને શુકલ લેશ્યાઓનો સદ્ભાવ હોય છે પૃથ્વીકાયિકો, અપ્કાયિકો, વનસ્પતિકાયિકો અને વાનવ્યન્તરોમાં પણ અસુરકુમારો જેવી ચાર લેશ્યાઓનો જ સદ્ભાવ હોય છે પૃથ્વીકાયિકો, અપ્કાયિકો અને તેજસ્કાયિકોમાં દેવોની ઉત્પત્તિની સંભાવનાની અપેક્ષાએ તેજોલેશ્યાનો સદ્ભાવ કહ્યો છે । સૂ. ૧૦।

चत्तारि जाणा पण्णत्ता, तं जहा–जुत्ते णाममेगे जुत्तसोहे० ४। एवामेव चत्तारि पुरिसजाया पण्णत्ता, तं जहा–जुत्ते णाममेगे जुत्तसोहे० ४॥ सू० ११ ॥

छाया—चत्वारि यानानि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा–युक्तं नामैकं युक्तं १, युक्तं नामैकमयुक्तम् २, अयुक्तं नामैकं युक्तम् ३, अयुक्तं नामैकमयुक्तम् ४। एवमेव चत्वारि पुरुषजातानि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा–युक्तो नामैको युक्तः, युक्तो नामैकोऽयुक्तः४।

चत्वारि यानानि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा–युक्तं नामैकं युक्तपरिणतं, युक्तं नामैकमयुक्तपरिणतम्० ४। एवमेव चत्वारि पुरुषजातानि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा–युक्तो नामैको युक्तपरिणतः ४,

चत्वारि यानानि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा–युक्तं नामैकं युक्तरूपं १, युक्तं नामैक-

---

अनन्तरोक्त लेश्या विशेष से मनुष्य विचित्र परिणामवाले होते हैं, अतः–अब सूत्रकार यानादि दृष्टान्त की चतुर्भङ्गी द्वारा पुरुषों की प्ररूपणा करते हैं—" चत्तारि जाणा पण्णत्ता "–इत्यादि–११

इस सूत्र के अन्तर्गत चार सूत्र हैं। यान चार कहे गये हैं–युक्त युक्त–१ युक्ताऽयुक्त–२ अयुक्तयुक्त–३ अयुक्ताऽयुक्त–४, ऐसे ही युक्तयुक्त आदि के भेद से पुरुष भी चार प्रकार के हैं।

फिरभी—यान चार प्रकारके हैं–युक्तयुक्त–परिणत–१ युक्ताऽयुक्त–परिणत–२ अयुक्तयुक्त–परिणत–३ और – अयुक्ताऽयुक्त – परिणत–४ इसी प्रकारसे युक्तयुक्त परिणत आदि भेदवाले पुरुष भी चार होतेहैं ४,

(२) फिरभी—यान चार हैं, युक्त युक्त–रूप, १ युक्तायुक्त–रूप, २

લેશ્યાવિશેષના સદ્ભાવે કરીને મનુષ્ય વિચિત્ર પરિણામવાળા થાય છે તેથી હવે સૂત્રકાર યાત્રાદિના દૃષ્ટાન્ત દ્વારા ચાર પ્રકારના પુરુષોની પ્રરૂપણા કરે છે—" चत्तारि जाणा पण्णत्ता " ઇત્યાદિ—

આ સૂત્રમા ચાર સૂત્રોને સમાવી લીધા છે યાનના ચાર પ્રકાર કહ્યા છે–(૧) युक्तयुक्त, (२) युक्ताऽयुक्त, (૩) अयक्तयुक्त, (४) अयुक्ताऽयुक्त એ જ પ્રમાણે યુક્તયુક્ત આદિના ભેદથી ચાર પ્રકારના પુરુષો પણ હોય છે. (૧) યાનના નીચે પ્રમાણે ચાર પ્રકાર પણ કહ્યા છે (૧) યુક્ત યુક્તપરિણત, (૨) યુક્તાયુક્ત પરિણત, (૩) અયુક્તયુક્ત પરિણત અને (૪) અયુક્તાયુક્ત પરિણત એજ પ્રમાણે પુરુષના પણ યુક્તાયુક્ત પરિણત આદિ ચાર ભેદ છે ।૨।

યાનના નીચે પ્રમાણે ચાર પ્રકાર પણ પડે છે–(૧) યુક્તયુક્ત રૂપ, (૨)

मयुक्तरूपम् २, अयुक्तं नामैकं युक्तरूपम् ३, अयुक्तं नामैकमयुक्तरूपम् ४। एवमेव चत्वारि पुरुषजातानि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा—युक्तो नामैको युक्तरूपः० ४,

चत्वारि यानानि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा—युक्तं नामैकं युक्तशोभम्० ४, एवमेव चत्वारि पुरुषजातानि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा—युक्तो नामैको युक्तशोभः ४। सू० ११॥

टीका—" चत्तारि जाणा " इत्यादि—यानानि—शकटादीनि, चत्वारि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा—एकं यानं युक्तं—बलीवर्दादिभिः संयुक्तं सत् पुनर्युक्तं—सकलसामग्रीसहितं, यद्वा—पूर्वकालेऽपरकाले च बलीवर्दादिभिर्युक्तं भवति, इति प्रथमो भङ्गः १। एकं बलीवर्दादिभिर्युक्तं सदपि अयुक्तं सामग्रीरहितम् अपरकाले बलीवर्दादियोगरहितं वा भवति। इति द्वितीयो भङ्गः। २। तथा—एकं वर्तमानकाले

अयुक्तयुक्त-रूप, ३ अयुक्ताऽयुक्त-रूप, ४, इसी प्रकार से पुरुष भी युक्तयुक्त-रूप आदि चार प्रकार के होते हैं—४, । ३ ।

फिर भी—यान चार प्रकारके हैं, युक्त युक्त-शोभावाले-१ युक्ताऽयुक्त-शोभावाले-२ अयुक्तयुक्त-शोभावाले-३ अयुक्तायुक्त शोभावाले ४, इसी प्रकार से पुरुष भी चार प्रकार के हैं, जैसे-युक्तयुक्त शोभावाला-१ आदि-(४)

टीकार्थ—कोई एक यान (प्रवहण) ऐसा होता है जो-बली वर्द आदि से भी युक्त होता है और-सकल सामग्री से भी युक्त होता है। अथवा—पूर्वकाल में भी, और-अपरकाल में भी बलीवर्दादिकों से युक्त होता है, या-किया जाता है-१ कोई एक यान बलीवर्दादिकों से युक्त होता तो है पर-यान सामग्री से रहित होता है-२ अथवा—पूर्व

યુક્ત અયુક્ત રૂપ (૩) અયુક્ત યુક્ત રૂપ અને (૪) અયુક્ત અયુક્ત રૂપ એજ પ્રમાણે પુરુષના પણ યુક્ત યુક્ત રૂપ આદિ ચાર પ્રકાર સમજવા ।૩।

યાનના આ પ્રમાણે ચાર પ્રકાર પણ પડે છે-(૧) યુક્તયુક્ત શોભાવાળુ, (૨) યુક્ત અયુક્ત શોભાવાળુ (૩) અયુક્ત યુક્ત શોભાવાળુ અને (૪) અયુક્ત અયુક્ત શોભાવાળુ એજ પ્રમાણે પુરુષના પણ 'યુક્ત યુક્ત શોભાવાળો" આદિ ચાર પ્રકાર સમજવા ।૪।

હવે પહેલા સૂત્રના ચાર ભાંગાનું સ્પષ્ટીકરણ કરવામાં આવે છે (૧) કોઈ એક યાન (રથ ગાડુ આદિ વાહન) બળદ આદિથી પણ યુક્ત હોય છે અને સકળ સામગ્રીથી પણ યુક્ત હોય છે અથવા પહેલાં બળદાદિથી યુક્ત રહે છે અને પછી પણ યુક્ત જ રહે છે (૨) કોઈ એક યાન બળદોથી યુક્ત હોય છે પણ અન્ય સામગ્રીથી રહિત હોય છે અથવા પહેલાં બળદ આદિથી યુક્ત હોય છે પણ પછી તેમનાથી રહિત બની જાય છે (૩) કોઈ એક યાન વર્તમાન કાળે તો બળદ આદિથી

अयुक्तं-सामग्रीरहित बलीवर्दादियोगरहित वा सदपि अपरकाले युक्तं भवतीति तृतीयो भङ्गः । ३ । तथा-एकं वर्तमानकाले अयुक्तं. भविष्यत्कालेऽप्ययुक्तं भवतीति चतुर्थो भङ्गः । ४ ।

"एवामेवे"-त्यादि-एवमेव पुरुषजातानि चत्वारि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा-एकः पुरुषः युक्तः-समृद्ध्यादिभिः सम्पन्नः, पुनरपि युक्तः-सदाचारादिभिः सम्पन्नो भवति, यद्वा-पूर्वं युक्तः-धनादिभिः सम्पन्नः, स एव पश्चादपि युक्तः-धनादिभिः सम्पन्नो भवति, इति साधारणपुरुषमाश्रित्य प्रथमभङ्ग व्याख्या १, एवं शेषास्त्रयोऽपि भङ्गा बोध्याः ४। साधुपुरुषमाश्रित्य तु-पूर्वं युक्तः-द्रव्यलिङ्गेन भावलिङ्गेन च सहितः, स एव पश्चादपि युक्तः-तथाभूतः, इति प्रथमो भङ्ग. १। तथा-एको

काल में बलीवर्दादि से युक्त होता है और-अपरकाल में नहीं-२ तथा-कोई एक यान वर्तमान काल में तो सामग्री से-अथवा बलीवर्दादिकों के योगसे रहित होता है, बाद में-युक्त हो जाता है-३, कोई एक रथादियान वर्तमान-और भविष्यत् काल में भी बलीवर्दादिकों के, या-सामग्रियों के योग से रहित ही बना रहता है-४, इसी प्रकार से पुरुष जात भी चार होते हैं, जैसे—कोई एक जन्मकाल से ही समृद्धि सम्पन्न होता है और-सदाचार आदि से भी-१ अथवा-जो पहले से भी सम्पन्न होता है. और-बाद में भी अपने अन्तिम काल तक भी धनादि सम्पन्न बना रहता है, यह प्रथम भङ्ग साधारण पुरुष को लेकर बनाया गया है। इसी प्रकार शेष भङ्ग त्रय भी साधारण पुरुष को लेकर कथित कर लेना चाहिये। साधु पुरुषों को आश्रित करके इन भङ्गों का व्याख्यान इस प्रकार है—कोई एक पुरुष साधु बनते समय में द्रव्यलिङ्ग,

રહિત હોય છે પણ ભવિષ્યમા તેમનાથી યુક્ત બની જાય છે (૪) કોઈ એક રથાદિ યાન વર્તમાન કાળે પણ બળદ આદિથી રહિત હોય છે અને ભવિષ્યમા પણ બળદાદિથી રહિત જ રહે છે

એજ પ્રમાણે પુરુષો પણ ચાર પ્રકારના હોય છે-(૧) કોઇ પુરુષ જન્મ-કાળથી જ સમૃદ્ધિ સંપન્ન પણ હોય છે અને સદાચાર સંપન્ન પણ હોય છે અથવા જે પહેલા પણ સમૃદ્ધિ, સદાચાર આદિથી યુક્ત હોય છે અને પોતાના મરણકાળ પર્યન્ત પણ તેનાથી યુક્ત જ રહે છે આ પહેલો ભાગો સામાન્ય પુરુષની અપેક્ષાએ સમજવો, એજ પ્રમાણે બાકીના ત્રણ ભાગા પણ સમજી શકાય એવા છે સાધુ પુરુષોને આ ચાર ભાગા આ પ્રમાણે

युक्ता-पूर्वं द्रव्यलिङ्गेन भावलिङ्गेन च सम्पन्नो भवति, स पश्चात् अयुक्ता-भाव लिङ्गेन रहितो भवति, यथा जमालिप्रभृतिनिह्नव, उभाभ्यां वा रहितो भवति, यथा संयमपतित कण्डरीकादिः। इति द्वितीयो भङ्गः २। तथा-एकः पुरुष अयुक्ता-द्रव्यलिङ्गेन रहितोऽपि युक्तो-भावलिङ्गेन युक्तो भवति यथा प्रत्येकबुद्धादि। इति तृतीयो भङ्गः ३। तथा-एकः पुरुषः पूर्वमयुक्तः-द्रव्यभावलिङ्गरहित, पश्चा दपि अयुक्तस्तथैव भवति, यथा गृहस्थादिः। इति चतुर्थोभङ्गः ४।

"चत्तारि भासा" इत्यादि-स्पष्टम्, नवरं-युक्त बलीवर्दादिभि, युक्तपरि णतम्-सत्सामर्थ्या युक्तभावमाप्तम् इति प्रथमो भङ्ग १। तथा युक्त बलीवर्दो

या-भावलिङ्ग से युक्त होता है, वही यदि उसी लिङ्ग से अपने जीवन काल तक भी युक्त बना रहता है तो-ऐसा यह प्रथम भङ्गवाला है-१ तथा-कोई एक साधु पुरुष प्रव्रज्या लेते समय तो द्रव्यलिङ्ग से या-भावलिङ्ग से युक्त हो जाता है, पर-आगे चलकर यदि वह उस लिङ्ग से-भाव लिङ्ग से-रहित हो जाता है जमालिनिह्नव की तरह अथवा-कण्डरीक की तरह दोनों लिङ्गों से रहित हो जाता है, तो ऐसा वह साधु पुरुष द्वितीय भङ्ग में गिना गया है-२ तथा-जो प्रत्येक बुद्ध आदि की तरह द्रव्यलिङ्ग से रहित हुआ भी भावलिङ्ग से सहित होता है उसकी अपेक्षा तृतीय भङ्ग है-३ तथा-गृहस्थादि की तरह जो पहले भी द्रव्यलिङ्ग, या-भावलिङ्ग से रहित हो और-बाद में भी वह वैसा ही बना रहे तो-इसकी अपेक्षा चतुर्थ भङ्ग है ४। द्वितीय सूत्रगत चार भङ्ग इस प्रकार से व्याख्यात करना चाहिये-जैसे-कोई एक रथादियान

સાધુ પડે છે-(૧) કોઈ એક પુરુષ સાધુ બનતી વખતે દ્રવ્યલિંગ કે ભાવ લિંગથી યુક્ત હોય છે અને પોતાના જીવન કાળ પર્યન્ત એજ લિંગથી યુક્ત રહે છે (૨) કોઈ એક પુરુષ દીક્ષા અંગીકાર કરતી વખતે દ્રવ્યલિંગથી કે ભાવલિંગથી યુક્ત હોય છે, પરન્તુ આગળ જતા તે લિંગથી ભાવલિંગથી રહિત થઈ જાય છે તેવા પુરુષને બીજા ભાંગામાં ગણાવી શકાય છે જેમકે-જમાલિ નિહ્નવ અથવા કંડરિકની જેમ બન્ને લિંગથી રહિત થઈ જનારને પણ બીજા ભાંગામાં ગણાવી શકાય છે પ્રત્યેક બુદ્ધ આદિની જેમ દ્રવ્યલિંગથી રહિત હોવા છતાં ભાવલિંગથી યુક્ત હોય એવા સાધુને ત્રીજા ભાગ માં ગણાવી શકાય છે (૪) તથા ગૃહસ્થાદિની જેમ જે પહેલાં પણ દ્રવ્યલિંગ અથવા ભાવલિંગથી રહિત હોય છે પછી પણ એવો જ રહ્યા રહે છે તેને ચોથા ભાંગામાં ગણાવી શકાય છે

दिमि, अयुक्तपरिणतं—सत्सामग्रीवर्जितम् २, इति द्वितीयो भङ्गः २। एवं शेषभङ्ग द्वयमपि बोध्यम् ४।

"एवामेव" इत्यादि–एवमेव पुरुषजातानि चत्वारि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा–एकः पुरुषः युक्तो=द्रव्यभावलिङ्गसम्पन्नः पश्चादपि युक्तपरिणतः–युक्तभावापन्नो भवति, इति प्रथमो भङ्गः । १ । एकः पुरुषः पूर्वं युक्तः पश्चाद् अयुक्तपरिणतः=भावलिङ्ग-रहितो भवति, यथा जमाल्यादि निह्नवः । उभाभ्यां वा रहितो भवति यथा कण्ड-रीकः । इति द्वितीयो भङ्गः । २ । तथा–एकः पुरुषः अयुक्त–पूर्वं द्रव्यलिङ्गरहितः

ऐसा होता है जो–बलीवर्द आदिकों से युक्त होता है. और–प्रशस्त-अच्छी सामग्री से भी युक्त रहता है, तथा–कोई एक रथादियान बलीवर्दादिकों से युक्त होता हुवा भी सत्सामग्री से रहित होता है, २ इसी तरह से शेष दो भङ्गों को भी समझ लेना चाहिये–४। इसी तरह चार पुरुष जात कहे गये हैं–कोइ एक पुरुष ऐसा होता है जो द्रव्य–भाव लिङ्ग से सम्पन्न होने से युक्त होता है, और पश्चात्–भी वह युक्त भाव से युक्त होता है, ऐसा यह–प्रथम भङ्ग है, १ द्वितीय भङ्ग इस प्रकार से है, जैसे कोई एक पुरुष पहले युक्त होता है, द्रव्य भाव लिङ्ग से सहित होता है, पश्चात्–वह अयुक्त परिणत हो जाता है, भावलिङ्ग से रहित हो जाता है, यथा–जमालि-आदि निह्नव, या–दोनों लिङ्गों से रहित हो जाता है जैसे–कण्डरीक ऐसा वह द्वितीय भङ्ग है, २ तृतीय भङ्ग इस प्रकार है, जैसे कोई एक पुरुष अयुक्त-पहले द्रव्यलिङ्ग से रहित

બીજા સૂત્રના ચાર ભાગાનું સ્પષ્ટીકરણ–(૧) કોઇ એક રથાદિ યાન એવું હોય છે કે જે બળદ આદિથી પણ યુક્ત હોય છે અને પ્રશસ્ત સામગ્રીથી પણ યુક્ત રહે છે (૨) કોઈ એક રથાદિ યાન બળદાદિથી યુક્ત હોવા છતાં પણ પ્રશસ્ત સામગ્રીથી રહિત હોય છે ત્રીજા અને ચોથા નબરના ભાગા પણ એજ પ્રમાણે સમજી લેવા એજ પ્રમાણે પુરુષોના ચાર પ્રકાર પડે છે–(૧) કોઇ એક પુરુષ એવો હોય છે કે જે દ્રવ્ય–ભાવ લિંગથી સપન્ન હોવાને કારણે યુક્ત હોય છે અને પછી પણ તે પુરુષ તે ભાવથી સપન્ન જ રહે છે (૨) કોઈ એક પુરુષ પહેલા યુક્ત હોય છે–દ્રવ્યભાવ લિંગથી સપન્ન હોય છે પણ પાછળથી તે અયુક્ત પરિણત થઈ જાય છે–એટલે ભાવલિંગથી રહિત થઇ જાય છે જેમ કે જમાલિ આદિ નિહ્નવ અથવા બન્ને લિંગથી પણ રહિત થઇ જાય છે જેમ કે કંડરીક આ પ્રકારનો બીજો ભાગો સમજવો.

पश्चाद् युक्तपरिणतो-द्रव्यभावलिङ्ग सम्पन्नो भवति, यथा-प्रत्येकबुद्धादिः । इति तृतीयो भङ्ग । ३ । तथा-एकः पूर्वमयुक्तः सन् पश्चादप्ययुक्तपरिणतो भवति, यथा-गृहस्थः, इति चतुर्थो भङ्ग ४। एषा चतुर्भङ्गी विशिष्टपुरुषमाश्रित्य। सामान्य पुरुषमाश्रित्य तु-एकः पुरुषः पूर्वं युक्त =धनधान्यादि सम्पन्न , पश्चादपि युक्तप रिणतो भवतीति प्रथमो भङ्ग । १ । एक पुरुषः पूर्वं युक्त पश्चाद् अयुक्तपरि णतो-धनधान्यादिरहितो भवतीति द्वितीयो भङ्गः।२। एवं शेषभङ्गद्वयमपि बोध्यम्४।

होता है पश्चात्-वह युक्त परिणत-द्रव्यलिङ्ग से सम्पन्न हो जाता है जैसे-प्रत्येक बुद्ध आदि ऐसा यह तृतीय भङ्ग है, ३। चतुर्थभङ्ग इस प्रकार है, जैसे-कोई एक पहले से भी अयुक्त होता है और पश्चात् भी अयुक्तपरिणत बना रहता है जैसे-गृहस्थ ऐसा यह चतुर्थ भङ्ग है, ४। यह-इस प्रकारकी चतुर्भङ्गी, विशिष्ट पुरुषको आश्रित करके कही गई है।

अब सामान्य पुरुष को आश्रित करके यही चतुर्भङ्गी इस प्रकार से है-जैसे कोई एक पुरुष ऐसा होता है जो पहले भी धनधान्यादि से सम्पन्न होता है, और बाद में भी वैसा ही सम्पन्न बना रह जाता है, यह प्रथम भङ्ग है, १ द्वितीय भङ्ग इस प्रकार है-कोई एक पुरुष पहले तो धनधान्यादि सम्पन्न होता है बाद में उससे रहित हो जाता है २ तृतीय भङ्ग इस प्रकार है-जैसे-कोई एक पुरुष पहले तो धनधान्यादि रहित होता है और-बाद में सम्पन्न हो जाता है, ३ तथा-चतुर्थ भङ्ग

ત્રીજો ભાંગો—કોઈ એક પુરુષ પહેલાં અયુક્ત (દ્રવ્યલિંગથી રહિત) હોય છે પરન્તુ પાછળથી યુક્ત પરિણત-દ્રવ્યલિંગથી સંપન્ન થઈ જાય છે જેમ કે પ્રત્યેક બુદ્ધ વગેરે

ચોથો ભાંગો—કોઈ એક પુરુષ પહેલાં પણ અયુક્ત (દ્રવ્યલિંગથી રહિત) હોય છે અને પાછળથી પણ અયુક્ત પરિણત જ રહે છે જેમ કે ગૃહસ્થ આ પ્રકારની ચતુર્ભંગી વિશિષ્ટ પુરુષોને આધારે કહેવામાં આવી છે સામાન્ય પુરુષોની અપેક્ષાએ એજ ચતુર્ભંગીને આ પ્રમાણે ઘટાવી શકાય

(૧) કોઈ એક પુરુષ એવો હોય છે કે જે પહેલાં પણ ધનધાન્ય આદિથી સંપન્ન હોય છે અને ત્યારબાદ પણ જીવનપર્યન્ત તેનાથી યુક્ત જ રહે છે (૨) કોઈ પુરુષ પહેલાં ધનધાન્યાદિથી યુક્ત હોય છે પણ પાછળથી તેનાથી રહિત બની જાય છે (૩) કોઈ એક પુરુષ પહેલાં ધનધાન્યાદિથી રહિત હોય છે પણ પાછળથી ધનધાન્યથી સંપન્ન બની જાય છે

"चत्तारि जाणा" इत्यादि—स्पष्टम्, नवरं—युक्तं बलीवर्दादिभिः युक्तरूपं—सुरचिताऽऽकारं भवति १, युक्तं सदपि अयुक्तरूप सुन्दरसंस्थानवर्जितम्, एवं शेषभङ्गद्वयं बोध्यम् ४। एवमेव पुरुषो युक्तो—धनादिभिः ज्ञानादिगुणैर्वा सम्पन्नः सन् युक्तरूपः—उचितवेषः, यद्वा—सुरचितवेषो भवति। इति प्रथमो भङ्गः। १। शेषभङ्गत्रयमेवमेव बोध्यम् ४। एवमेव पुरुषो युक्तः—गुणैर्युक्तः युक्तशोभः—युक्ता—उचिता शोभा यस्य स तथा भवति १। एवं शेषभङ्गत्रयमपि ४। ॥ सू० ११ ॥

इस प्रकार है—कोइ एक पुरुष ऐसा होता है जो—पहले भी धनधान्य रहित—होता है, और बाद में भी धनधान्य रहित बना रहता है—४।

"चत्तारि जाणा"—इत्यादि, सूत्रार्थ स्पष्ट है, तात्पर्य इसका यह है कि—कोई एक रथादियान ऐसा होता है जो बलीवर्द आदि से युक्त होता है, और—युक्त रूपवाला सुरचित रुचिर आकारवाला भी होता है ? द्वितीय भङ्ग में—जैसे कोई एक रथ ऐसा है जो, बलीवर्द आदि वाहन से युक्त होता हुवा भी अयुक्त रूपवाला (सुन्दर-सुरुचिर आकारवाला नहीं) होता है, २ इसी तरह शेष ३-४—भङ्गों को भी समझना। इसी प्रकार पुरुष भी चार होते हैं, जैसे—कोई एक पुरुष ऐसा होता है जो धनादि युक्त हुवा भी ज्ञानादि गुणवाला होता है, और—उचित वेषवाला होता है, अथवा—सुरचित वेषवाला होता है। द्वितीय भङ्ग में—कोई एक पुरुष ऐसा होता है जो धनादि सम्पन्न तो होता है

---

(४) કોઈ એક પુરુષ પહેલા પણ ધનધાન્યાદિથી રહિત હોય છે અને પાછળથી પણ તેનાથી રહિત જ રહે છે. "चत्तारि जाणा" ઈત્યાદિ સૂત્રાર્થ સ્પષ્ટ છે દૃષ્ટાન્ત સૂત્રનો ભાવાર્થ આ પ્રમાણે છે—(૧) કોઈ એક રથાદિ યાન બળદ આદિથી પણ યુક્ત હોય છે અને યુક્તરૂપ સંપન્ન—સુરચિત રુચિર આકારવાળું પણ હોય છે (૨) કોઈ એક રથાદિ યાન બળદ આદિથી યુક્ત હોવા છતાં અયુક્તરૂપવાળુ હોય છે એટલે કે સુંદર અને સુરુચિકર આકારવાળુ હોતું નથી એજ પ્રમાણે બાકીના બે ભાંગાનો ભાવાર્થ પણ સમજી શકાય એવો છે

એજ પ્રમાણે પુરુષો પણ ચાર પ્રકારના હોય છે—

(૧) કોઇ એક પુરુષ ધનાદિથી પણ યુક્ત હોય છે, જ્ઞાનાદિથી પણ સંપન્ન હોય છે અને ઉચિત વેષવાળો—સુરચિત વેષવાળો પણ હોય છે

(૨) કોઈ એક પુરુષ ધનાદિથી સંપન્ન હોવા છતા અયુક્ત રૂપવાળો હોય છે એટલે કે જ્ઞાનાદિ ગુણોથી રહિત, ઉચિત વેષથી રહિત અથવા

इति यन्नत्प्रष्टान्त पुरुषदार्ष्टान्तिकसूत्राणि ॥

मूलम्—चत्तारि जुग्गा पण्णत्ता, त जहा–जुत्ते णाममेगे जुत्ते ४। एवामेव चत्तारि पुरिसजाया पण्णत्ता, त जहा जुत्तेणाम मेगे जुत्ते ४, ।५। एव जहा जाणेण चत्तारि आलावगा तहा, जुग्गेणवि, पडिवक्खो तहेव पुरिसजाया जाव सोहेत्ति ॥सू०१२॥

छाया—चत्वारो युग्या प्रज्ञप्ता, तद्यथा-युक्त नामैक युक्तम् ४, एवमेव चत्वारि पुरुषजातानि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा -युक्तो नामैको युक्तः ४, एवं यथा यानेन

पर–अयुक्तरूपवाला होता है–ज्ञानादि गुणवाला, या उचित वेषवाला, या सुरचित वेषवाला नहीं होता है। अवशिष्ट दो भग भी इसी तरह से समझ लेना चाहिये। इसी प्रकार से कोई एक पुरुष ऐसा होता है, जो ज्ञानादि गुणों से युक्त होता है और–उचित शोभावाला भी होता है यह प्रथम भङ्ग है, १ अवशिष्ट तीन भङ्ग भी इसी प्रकार से जान लेना चाहिये ॥ सू०११ ॥

अब पुनः सूत्रकार दृष्टान्त और–पुरुषदार्ष्टान्तिक सूत्रों को कहते हैं

"चत्तारि जुग्गा पण्णत्ता"—इत्यादि–१२

सूत्रार्थ—युग्य चार कहे गये हैं, युक्तयुक्त, १ युक्तायुक्त, २ अयुक्तयुक्त ३ और - अयुक्तायुक्त, ४। ऐसे पुरुष भी चार कहे गये हैं जैसे युक्तयुक्त, १ इत्यादि। यान के जैसे युग्य के साथ भी युक्तयुक्त परिणत युक्तरूप, युक्तशोभा आदि पदों को जोडकर चार आलापक बन जाते हैं ऐसा समझ लेना चाहिये।

સુરચિત વેષથી રહિત હોય છે બાકીના બે ભાંગા પણ એજ પ્રમાણે સમજી શકાય એવાં છે

યાનના 'યુક્તાયુક્ત શોભાવ જી' આદિ ચાર ભાંગા સરળ છે

પુરુષના પણ એવાં જ ચાર ભાંગા સમજવા જેમ કે (૧) કોઈ એક પુરુષ જ્ઞાનાદિ ગુણોથી યુક્ત હોય છે અને ઉચિત શોભાવાળો પણ હોય છે બાકીના ત્રણ ભાંગા પણ આ પહેલા ભાંગાને આધારે સમજી લેવા ।સૂ. ૧૧।

હવે સૂત્રકાર દૃષ્ટાન્ત અને દાર્ષ્ટાન્તિક પુરુષના સૂત્રોનું નિરૂપણ કરે છે— 'चत्तारि जुग्गा पण्णत्ता" ઇત્યાદિ—

યુગ્ય (વાહનને ખેંચનાર કે ઉપાડનાર બળદ અથવા પુરુષ) ચાર પ્રકારના હોય છે (૧) યુક્તાયુક્ત (૨) યુક્તાયુક્ત (૩) અયુક્તયુક્ત અને (૪) અયુક્તાયુક્ત એજ પ્રમાણે પુરુષો પણ ચાર પ્રકારના હોય છે

त्वार आलापकास्तथा युग्येनापि । प्रतिपक्षस्तथैव पुरुषजातानि यावत् शोभेति ।
॥ सू० १२ ॥

टीका—" चत्तारि जुग्गा " इत्यादि—युग्या -युगं--रथं वहन्तीति युग्या= वृषभाश्वादयः, यद्वा-युग्मानि- द्विहस्तप्रमाणानि चतुरस्राणि सवेदिकानि सालङ्काराणि गोल्लदेशप्रसिद्धानि जम्पानानि तानि चत्वारि मज्ञप्तानि, तद्यथा- एकं युक्तं--

---

इसी तरह से पुरुष भी चार प्रकार के होते हैं ऐसा प्रारम्भ करके युक्त- शोभा तकके समस्त भङ्गों को पुरुष सम्बन्धी चतुर्भङ्गी में कह देना चाहिये. । युक्तयुक्त, १ युक्ताऽयुक्त, २ अयुक्तयुक्त, ३ अयुक्तायुक्त, ४ युक्तयुक्त- परिणत, १ युक्तायुक्त -परिणत, २ अयुक्तयुक्त परिणत, ३ अयुक्ताऽयुक्त-परिणत, ४ युक्तयुक्त- रूप, १ युक्तायुक्त-रूप- २ अयुक्त युक्त रूप, ३ अयुक्ताऽयुक्त-रूप, ४ युक्तयुक्त-शोभासम्पन्न, १ युक्ताऽयुक्त शोभासम्पन्न, २ अयुक्तयुक्त शोभासम्पन्न, ३ और -अयुक्ताऽयुक्त शोभासम्पन्न, ४, इस प्रकार से सब १६ भङ्गों को युग्य दृष्टान्त में और--पुरुष दार्ष्टान्तिक में प्रतिपादक ये सूत्र हैं ।

इस सूत्र में --" युगं- रथाङ्गं (प्रवहणाङ्गं) शिबिकाङ्गं वा वहन्ति--इति युग्याः, ४ इस व्युत्पत्ति के अनुसार युग्य शब्द से वृषभादि, या -- मनुष्य गृहीत होते हैं । क्योंकि-

---

(૧) યુક્તયુક્ત બાકીના ત્રણ પ્રકાર ઉપર મુજબ સમજવા.

યાનની જેમ યુગ્યની સાથે પણ યુક્ત, યુક્તપરિણત, યુક્તરૂપ અને યુક્તશોભા આ દિ પદોને જોડીને ચાર આલાપક બની જાય છે એજ પ્રમાણે પુરુષ વિષયક પણ ચાર આલાપક બને છે એમ સમજવું. આરીતે પુરુષ વિષયક ચાર ચતુર્ભંગી બને છે

યુગ્ય વિષયક પહેલી ચતુર્ભંગી તો ઉપર આપવામા આવી છે. હવે બીજી ચતુર્ભંગી પ્રકટ કરવામા આવે છે–(૧) યુક્તયુક્ત પરિણત, (૨) યુક્તા ક્ત પરિણત, (૩) અયુક્તયુક્ત પરિણત અને (૪) અયુક્તાયુક્ત પરિણત.

ત્રીજી ચતુર્ભંગી–(૧) યુક્તયુક્ત રૂપ, (૨) યુક્તાયુક્ત રૂપ, (૩) અયુક્તયુક્ત રૂપ અને (૪) અયુક્તાયુક્ત રૂપ

ચોથી ચતુર્ભંગી—(૧) યુક્તયુક્ત શોભાસંપન્ન, (૨) યુક્તાયુક્ત શોભાસંપન્ન (૩) અયુક્તયુક્ત શોભાસંપન્ન, અને (૪) અયુક્તાયુક્ત શોભાસંપન્ન.

આ પ્રકારની ચાર ચતુર્ભંગીઓ પુરુષના વિષયમા પણ સમજવી. આ સૂત્રમાં " युग रथाङ्ग (प्रवहणाङ्ग) शिविकाङ्गं वा वहन्ति इति युग्या " આ વ્યુત્પત્તિ અનુસાર યુગ્ય શબ્દથી બળદ આદિ પ્રાણી અથવા પાલખી આદિ

याहनाऽऽरोहणसामग्र्या सहितं सत् पुनर्युक्त-वेगादिसम्पन्नमिति प्रथमो भङ्गः । १। शेषभङ्गत्रय स्वयमूह्यम् ४। एवमेव लौकिके लोकोत्तरे च पुरुषे चत्वारो भङ्गा बोध्याः ४। एवम्=अमुना प्रकारेण यानेन यथा=यानवद् युग्यनाऽपि युक्त-युक्त परिणत-युक्तरूप युक्तशोभादिघटिताश्चत्वार आलापका बोध्या । प्रतिपक्षः-दार्ष्टान्तिकस्तथैव=पूर्ववदेव, तत्र 'युग्यजातानि चत्वारि ' इत्युपक्रम्य 'युक्त शोभ'-पर्यन्ता सर्वेऽपि भङ्गा वक्तव्या इति । तथाहि—युक्त युक्तं १ युक्तमयुक्तम् २ अयुक्तं युक्तम् ३ अयुक्तमयुक्तम् ४। युक्त युक्तपरिणतं १, युक्तमयुक्त परिणतम् २, अयुक्त युक्तपरिणतम् ३ अयुक्तमयुक्तपरिणतम् ४। युक्तं युक्त रूपं, १ युक्तमयुक्तरूपम् २, अयुक्त युक्तरूपम् ३ अयुक्तमयुक्तरूपम् ४। युक्तं युक्तशोभं १, युक्तमयुक्तशोभम् २, अयुक्त युक्तशोभम् ३, अयुक्तमयुक्तशोभम् ४। इति युग्यदृष्टान्ते पुरुषदार्ष्टान्तिकेऽपि च सूत्रमीयमिति पर्यवसितम् ।सू०१२।

मूलम्—चत्तारि सारही पण्णत्ता, त जहा--जोयावइत्ता णाम मेगे णो विजोयावइत्ता १, विजोयावइत्ता णाममेगे णो जोया

चिहस्तप्रमाणोपेत चौकोर वेदिका सहित अलङ्कारयुक्त "जम्पान" "पालखी' विशेष, जोकि गोल्ल देशमें प्रसिद्ध है वे भी "युग्य" है। इसमें प्रथम भङ्ग इस प्रकार घटित करना चाहिये-जैसे कोई एक युग्य ऐसा होता है, जो युक्त वाहन पर आरोहण करनेकी साधन सामग्री सहित होता है और वेग आदि से भी सम्पन्न होता है यह युक्त युक्त इस प्रथम भङ्गवाला युग्य है-१ अवशिष्ट भङ्गोंकी घटना स्वय कर लेना चाहिये-४ इसी तरह लौकिक एवं [अलौकिक] लोकोत्तर पुरुषों मे चार भङ्ग जानना चाहिये ॥सू०१२॥

ઉપાડનાર મનુષ્ય ગૃહીત થાય છે એ કે બે હાથના પ્રમાણવાળી ગોલ દેશમાં ચોખૂણ વેદિકા સહિતની અલંકારયુક્ત 'જમ્પાન" (પાલખી વિશેષ)ને પણ યુગ્ય કહે છે પણ અહીં તે ગ્રહણ કરવાની નથી

યુગ્યના પહેલા ભાંગાનો ભાવાર્થ—કોઈ એક યુગ્ય (ગાડા આદિ) હોય છે કે જે યુક્ત-વાહન પર આરોહણ કરવાની સાધન સામગ્રીથી યુક્ત હોય છે અને વેગ આદિથી પણ યુક્ત હોય છે આ "યુક્તયુક્ત" નામનો પહેલો ભાંગો થયો બાકીના ભાગાઓનો ભાવાર્થ પણ જાતે જ સમજી લેવો એજ પ્રમાણે લૌકિક પુરુષો અને લોકોત્તર પુરુષોને અનુલક્ષીને પણ ચાર ચતુર્ભંગી સમજી લેવી ॥ સૂ. ૧૨ ॥

वइत्ता २, एगे जोयावइत्तावि विजोयावइत्तावि ३, एगे जोयावइत्ता णो विजोयावइत्ता ४। एवामेव चत्तारि पुरिसजाया पण्णत्ता, तं जहा–जोयावइत्ता णाममेगे णो विजोयावइत्ता० ४। एवामेव चत्तारि हया पण्णत्ता, तं जहा--जुत्ते, णाममेगे जुत्ते, जुत्ते, णाममेगे अजुत्ते० ४। एवामेव चत्तारि पुरिसजाया पण्णत्ता, तं जहा--जुत्ते णाममेगे जुत्ते १, एवं जुत्तपरिणए, जुत्तरूवे, जुत्तसोहे, सव्वेसिं पडिवक्खो पुरिसजाया। सू० १३ ॥

छाया—चत्वारः सारथयः प्रज्ञप्ताः, तद्यथा–योजयिता नामैको नो वियोजयिता १, वियोजयिता नामैको नो योजयिता २, एको योजयिताऽपि वियोजयिताऽपि ३, एको नो योजयिता नो वियोजयिता ४। एवमेव चत्वारि पुरुषजातानि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा–योजयिता नामैको नो वियोजयिता० ४, एवमेव

"चत्तारि सारही पण्णत्ता" इत्यादि–१३

सारथी चार प्रकारके होते हैं, जैसे कोई एक सारथि योजयिता होता है वियोजयिता नहीं होता है–१ कोई एक वियोजयिता होता है योजयिता नहीं–२ कोई एक योजयिता–वियोजयिता भी–३ और कोई एक न तो योजयिता, न वियोजयिता होता है–४ ऐसे ही पुरुष भी चार कहे गये हैं जैसे कोई एक पुरुष योजयिता होता है वियोजयिता नहीं–१ इत्यादि–४

"चत्तारिसारही पण्णत्ता" ઈત્યાદિ— ।સૂ ૧૩।

સારથિના નીચે પ્રમાણે ચાર પ્રકાર છે–(૧) કોઇ એક સારથિ યોજયિતા હોય છે, વિયોજયિતા હોતો નથી. (૨) કોઈ એક સારથિ વિયોજયિતા હોય છે પણ યોજયિતા હોતો નથી, (૩) કોઈ એક સારથિ યોજયિતા પણ હોય છે અને વિયોજયિતા પણ હોય છે. કોઇ એક સારથિ યોજયિતા પણ હોય છે, અને વિયોજયિતા પણ હોય છે (૪) કોઇ એક સારથિ યોજયિતા પણ હોતો નથી અને વિયોજયિતા પણ હોતો નથી. એજ પ્રમાણે પુરુષો પણ ચાર પ્રકારના હોય છે–(૧) કોઇ એક પુરુષ યોજયિતા હોય છે, પણ વિયોજયિતા હોતો નથી, ઈત્યાદિ ચાર પ્રકાર સમજવા

चत्वारो हयाः प्रज्ञप्ताः, तद्यथा—युक्तो नामैको युक्त, युक्तो नामैकोऽयुक्तः ४, एवमेव चत्वारि पुरुषजातानि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा—युक्तो नामैको युक्त, एवं युक्त परिणतः, युक्तरूपः, युक्तशोभः, सर्वेषां प्रतिपक्षः पुरुषजातानि । सू० १३ ।

टीका—" चत्तारि सारही " इत्यादि — सारथयः-रथवाहकाश्चत्वारः प्रज्ञप्ताः, तद्यथा-एको योजयिता-रथेऽश्वादीनां सङ्गनीकर्ता भवति किन्तु नो वियोजयिता-रथादश्वादीनां पृथक्कर्ता न भवति इति प्रथमो भङ्गः । १ । तथा-एको वियोजयिता भवति नो योजयिता, इति द्वितीयः ।२। एको योजयिता भवति वियोजयिताऽपि इति तृतीयो भङ्गः ।३। एको नो योजयिता भवति नो वियोज

इसी प्रकारसे चार प्रकारके 'हय' कहे गये हैं, जैसे कोई एक हय (घोडा) युक्त युक्त होता है–१ इत्यादि–४ । इसी प्रकार ४ चार पुरुष जात कहे गये हैं, जैसे युक्त युक्त इत्यादि–४ । इसी प्रकार युक्त परिणत–युक्तरूप और युक्त शोभा सम्पन्न ये सब पद जोडकर यहां भङ्ग रचना कर लेनी चाहिये

तात्पर्य इस सूत्रका ऐसा है – रथवाहक नाम सारथिका है वे चार प्रकार के कहे गये हैं सो उनमें कोई एक सारथि ऐसा होता है जो रथ में अश्व आदिकों का संलग्न ही करता है किन्तु–रथसे उन अश्वादिकों को अलग नहीं करता है इस प्रकार का यह प्रथम भङ्ग है । तथा–कोई एक सारथि ऐसा होता है जो केवल रथादिकोंसे अश्वादिकोंको अलग ही करता है उन्हें उसमें संलग्न–जोडना नहीं करता है ऐसा यह द्वितीय भङ्ग है–२ तथा–कोई एक सारथि ऐसा होता है जो रथादिमें अश्वादिकों को योजित और वियोजित भी करता है ऐसा यह तृतीय भङ्ग है–३ तथा–कोई एक सारथि

એજ પ્રમાણે ઘોડાના પણ ચાર પ્રકાર કહ્યા છે—(૧) કોઇ એક ઘોડા યુક્તયુક્ત હોય છે, ઇત્યાદિ ચાર પ્રકાર સમજવા પુરુષના પણ યુક્તયુક્ત આદિ ચાર પ્રકાર સમજવા એજ પ્રમાણે યુક્તપરિણત, યુક્તરૂપ અને યુક્તશોભા સંપન્ન આ પદોને જોડીને પણ ત્રીજી ત્રણ ચતુર્ભંગી દૃષ્ટાન્તસૂત્ર અને દાર્ષ્ટાન્તિક પુરુષસૂત્ર વિષે સમજી લેવી.

આ સૂત્રનો ભાવાર્થ આ પ્રમાણે છે—રથ ચલાવનારને સારથિ કહે છે તેના નીચે પ્રમાણે ચાર પ્રકાર કહ્યા છે—(૧) કોઈ એક સારથિ એવો હોય છે કે જે રથ સાથે અશ્વાદિને જોડે છે ખરો પણ તેમને રથથી છૂટા કરતો નથી (૨) કોઈ એક સારથિ અશ્વાદિકોને રથથી અલગ કરે છે પણ તેમને રથ સાથે જોડતો નથી (૩) કોઈ એક સારથિ અશ્વાદિકોને રથ સાથે જોડે છે પણ ખરો અને તેમને વિયોજિત (અલગ) પણ કરે છે (૪) કોઈ

यिता, इति चतुर्थभङ्गः ४॥ चतुर्थभङ्गनिर्दिष्टः सारथिस्तु अश्वादीन् चालयत्येवेति।

"एवमेवे"—त्यादि–एवमेव पुरुषजातानि चत्वारि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा–एको योजयिता–संयमयोगेषु साधूनां प्रवर्तयिता भवति किन्तु नो वियोजयिता–अनुचितकार्यप्रवृत्तानां निवर्तयिता न भवति, इति प्रथमः १। तथा–एको वियोजयिता–अनुचितकार्यप्रवृत्तानां निवर्तयिता भवति किन्तु नो योजयिता–संयमयोगेषु प्रवर्तयिता न भवतीति द्वितीयः। २। तथा–एको योजयिताऽपि–संयमयोगेषु प्रवर्तयिताऽपि वियोजयिताऽपि–अनुचितकार्यप्रवृत्तानां निवर्तयिताऽपि भवति,

---

ऐसा होता है जो–अश्वादिकों को रथमें न तो संलग्न करता है और न उससे उन्हें दूर–पृथक् ही करता है यह चतुर्थ भङ्ग है–४ यह चतुर्थ भङ्गवाला सारथि केवल अश्वादिकों को चलाता है।

इसी तरहसे पुरुषजात जो चार कहे गये हैं उनका तात्पर्य ऐसा है–कोई एक पुरुष ऐसा होता है जो संयमयोगोंमें साधुजनोंको प्रवृत्त ही करता है किन्तु—अनुचित कार्यमे प्रवृत्त को वहांसे हटानेवाला नहीं होताहै, ऐसा यह प्रथम भङ्ग है–१ तथा कोई एक साधु पुरुष ऐसा ही होताहै जो–अनुचित कार्यमें प्रवृत्त हुवे जनों को वहांसे हटानेवाला ही होता है किन्तु—संयमयोगोंमें प्रवृत्ति करानेवाला नहीं होता होता है ऐसा यह द्वितीय भङ्ग है–२ तथा–कोई एक साधुपुरुष ऐसा है जो संयमयोगोंमें प्रवृत्ति भी कराता है और अनुचित कार्योंमें प्रवृत्तों को वहांसे हटाता भी है यह—ऐसा तृतीय भङ्ग है–३

એક સારથી અશ્વાદિકોને રથ સાથે યોજિત પણ કરતો નથી અને તેમને રથથી વિયોજિત (અલગ) પણ કરતો નથી. આ ચોથા પ્રકારનો સારથિ માત્ર અશ્વાદિકોને અથવા રથને ચલાવવાનુ કામ જ કરે છે.

એજ પ્રમાણે પુરુષોના પણ જે ચાર પ્રકાર કહ્યા છે, તેમનું હવે સ્પષ્ટીકરણ કરવામાં આવે છે—(૧) કોઈ એક સાધુપુરુષ એવો હોય છે કે જે સાધુઓને સંયમયોગોમાં પ્રવૃત્ત જ કરાવે છે, પણ અનુચિત્ત કાર્યમાં પ્રવૃત્ત થયેલા સાધુને તેમ કરતા અટકાવતો નથી (૨) કોઇ એક સાધુપુરુષ એવો હોય છે કે જે અનુચિત કાર્યોમાં પ્રવૃત્ત થયેલા માણસોને તે પ્રકારની પ્રવૃત્તિ કરતા અટકાવે છે, પણ તેમને સંયમયોગોમાં પ્રવૃત્ત કરનારો હોતો નથી. (૩) કોઇ એક સાધુપુરુષ એવો હોય છે કે જે માણસોને સંયમયોગોમાં પ્રવૃત્ત પણ કરે છે અને અનુચિત કાર્યમાં પ્રવૃત્ત થનારને તે કાર્ય કરતાં અટકાવે છે પણ ખરો (૪) કોઇ એક સાધુ પુરુષ એવો હોય છે કે જે

इति तृतीयः । ३ । तथा-एको नो योजयिता नो वियोजयिता भवति, स च साधारणशक्तिकंभङ्गो मुनिः ४। इति चतुर्थः ४। इति लोकोत्तरपुरुषमपेक्ष्य व्याख्यानम् । साधारणपुरुषविवक्षायां तु-एको योजयिता-क्वचित् कार्ये प्रवर्तयिता भवति, किन्तु नो वियोजयिता-ततो निवर्तयिता न भवतीति प्रथमः ।१। एवं शेषभङ्गत्रयमपि बोध्यम् ४।

" एवमेव हया " इत्यादि—एवमेव=यानवदेव हयाः – अश्वाः चत्वारः प्रज्ञप्ताः, तद्यथा-" युक्तो नामैकः " इत्यादि । एतत्सूत्र यानसूत्रवद् व्याख्येयम् ।

तथा-कोई एक साधु पुरुष ऐसा भी होता है जो न संयमयोगोंमें प्रवृत्ति कराता है और न अनुचित कार्योंमें फसेको वहांसे हटाता ही है ऐसा चतुर्थ भङ्गवाला कोई एक साधारण शक्तिशाली मुनिजन होता है-४ इस प्रकारका यह व्याख्यान इन चार भङ्गोंका लोकोत्तर पुरुष की अपेक्षा लेकर किया गया है । साधारण पुरुषकी अपेक्षासे इनका व्याख्यान ऐसा है—जैसे कोई एक पुरुष ऐसा होता है जो किसी कार्यमें किसीको प्रवृत्त करानेवाला ही होता है उससे उसे निवृत्त करानेवाला नहीं-१ अवशिष्ट तीन भग इसी तरहसे समझ लेना चाहिये-४ एवामेव—इत्यादि यानके समान हय अश्वके भी चार प्रकार होते हैं जैसे कोई एक तो ऐसा अश्व होता है जो पहले भी रथादिमें जोता जाता है और बादमें भी-१ कोई एक पहलेही जोता

લેકાને સંયમયોગોમાં પ્રવૃત્ત પણ કરતા નથી અને અનુચિત કાર્ય કરનારને તેમ કરતા અટકાવતા પણ નથી કોઈ સાધારણ શક્તિશાળી મુનિને આ ચોથા પ્રકારમાં ગણાવી શકાય છે આ ચારે ભાંગાનું કથન લોકોત્તર પુરુષની અપેક્ષાએ કરવામાં આવ્યું છે હવે સામાન્ય પુરુષની અપેક્ષાએ ચારે ભાંગાનું સ્પષ્ટીકરણ કરવામાં આવે છે

(૧) કોઈ એક પુરુષ એવો હોય છે કે જે કોઈ કાર્યમાં કોઈ વ્યક્તિને પ્રવૃત્ત કરાવનાર જ હોય છે, પણ તેમાંથી તેને નિવૃત્ત કરાવનાર હોતો નથી, બાકીના ત્રણ ભાંગા પણ એજ પ્રમાણે સમજી લેવા

'एवामेव" ઈત્યાદિ—યાનની જેમ અશ્વના પણ ચાર પ્રકાર હોય છે—(૧) કોઈ એક અશ્વ એવો હોય છે કે જે પહેલાં પણ રથાદિની સાથે જોડી શકાય છે અને પછી પણ જોડી શકાય છે (૨) કોઈ એક અશ્વ પહેલાં જોડી શકાય છે પણ પછી જોડી શકાતો નથી. (૩) કોઈ એક અશ્વ એવો

" एवामेव चत्तारि पुरिसजाया " इत्यादि–एवमेव=हयवदेव पुरुषजातानि चत्वारि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा–युक्तो नामैक इत्यादि लौकिकलोकोत्तरपक्षमनुसृत्य व्याख्येयम् ।

" एवं जुत्तपरिणए " इत्यादि । एवं–यानवद् " युक्तपरिणतो युक्तरूपो युक्तशोभः " इत्येतैः पदैः सार्कं हयसूत्रचतुर्भङ्गी बोध्या ४। " सव्वेसिं "–सर्वेषां प्रत्येकं भङ्गांश्चतुरश्चतुरः कृत्वा एकैकभङ्गचतुष्टयस्य ' पडिवक्खो ' प्रतिपक्षो–दार्ष्टान्तिको भणनीयः । तत्र को दार्ष्टान्तिकः ? इत्यपेक्षायामाह–' पुरिसजाया ' इति । पुरुषजातानि–पुरुषजातरूपो दार्ष्टान्तिक सर्वेषां भणनीय इति । सू० १३ ।

मूलम्——चत्तारि गया पण्णत्ता, तं जहा–जुत्ते णाममेगे जुत्ते ४, एवामेव चत्तारि पुरिसजाया पण्णत्ता, तं जहा–जुत्ते णाममेगे जुत्ते ४, एवंजहा हयाणं तहा गयाणं भाणियव्वं, पडिवक्खो तहेव पुरिसजाया । सू० १४ ।

जाता बादमें नहीं–२ कोई एक पहले भी, बादमें भी, और भी समयमें जोता जाता है–३ तथा—कोई एक ऐसा होता है जो नतो पहले, न बादमें ही जोता जाता है–४ । अथवा—इन युक्तयुक्त आदि भङ्गोंकी व्याख्या यान जैसी जाननी चाहिये और–यानके समान ही 'युक्त परिणत' ' युक्तरूप ' और ' युक्त शोभा सम्पन्न ' इन पदोंको घटित करके हय चतुर्भङ्गी जाननी चाहिये । और प्रत्येक चतुर्भङ्गी के समान प्रतिपक्ष दार्ष्टान्तिक जो पुरुषजात हैं वे भी चार प्रकारके हैं ऐसा जानना चाहिये ॥ सू०१३ ॥

હોય છે કે જે પહેલા જોડી શકાતો નથી પણ પછી જોડી શકાય છે (૪) કોઈ એક અશ્વ એવો હોય છે કે જેને પહેલા પણ જોડી શકાતો નથી અને પછી પણ જોડી શકાતો નથી. અથવા આ યુક્તાયુક્ત આદિ ભાંગાઓની વ્યાખ્યા યાનના સૂત્રમાં કહ્યા પ્રમાણે જ સમજવી અને યાનની જેમ જ યુક્તપરિણત, યુક્તરૂપ અને યુક્તશોભા સંપન્ન આ પદોને યોજવાથી અશ્વ વિષયક બીજી ત્રણ ચતુર્ભંગી પણ બનાવી શકાય છે, અશ્વવિષયક જેવી ચાર ચતુર્ભંગી કહી છે એવી જ ચાર ચતુર્ભંગી દાર્ષ્ટાન્તિક પુરુષ વિષે પણ સમજી લેવી જોઈએ. ॥ સૂ. ૧૩ ॥

छाया—चत्वारो गजाः प्रज्ञप्ताः तद्यथा—युक्तो नामैको युक्तः ४। एवमेव चत्वारि पुरुषजातानि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा—युक्तो नामैको युक्तः ४ एव यथा हयानां तथा गजानामपि भणितव्यं, प्रतिपक्षस्तथैव पुरुषजातानि । सू० १४ ।

टीका—"चत्तारि गया" इत्यादि—सुगमम्।

"एवामेव चत्तारि पुरिसजाया" इत्याद्यपि स्पष्टमेव ।

"एव जहा-हयाणं" इत्यादि—एवम्=इत्थं-प्रदर्शितक्रमेणेत्यर्थः, यथा हयानां युक्तादिपदयोजनया प्रत्येकं चत्वारश्चत्वारो भङ्गा भणिताः, तथा=तेन क्रमेण गजानामपि युक्तादि शोभान्तपदचतुष्टययोजनापुरस्सरं प्रत्येकं भङ्गचतुष्टयं भणितव्यम् ।

"पडिवक्खो तहेव पुरिसजाया" पुरुषजातकदार्ष्टान्तिकोऽपि तथैव भणितव्यः । सू० १४ ।

मूलम्—चत्तारि जुग्गायरिया पण्णत्ता, तं जहा—पथजाई णाममेगे णो उप्पहजाई १, उप्पहजाई णाममेगे णो पथजाई २, एगे पथजाई वि उप्पहजाईवि ३, एगे णो पथजाई णो उप्पहजाई ४, एवामेव चत्तारि पुरिसजाया । सू० १५ ।

"चत्तारि गया पण्णत्ता"—इत्यादि १४

सूत्रार्थ—गज-हाथी चार प्रकारकेहैं, युक्तयुक्त-१ युक्ताऽयुक्त-२ अयुक्त युक्त-३ और अयुक्तायुक्त-४ । ऐसे ही पुरुष जात भी युक्तयुक्त आदिके भेदसे चार कहे गये हैं ४।

टीकार्थ – हयोंकी युक्तादि पद योजनासे बनाई गई चतुर्भङ्गी के जैसे युक्तादि पदसे लेकर युक्त शोभासम्पन्न तक के पदोंकी योजना से गजोंकी चतुर्भङ्गी बना लेनी चाहिये । और साथ साथ पुरुष जात भी चार हैं इन सब सूत्रोंका व्याख्यान हयसूत्र जैसा कर लेना चाहिये ॥सू०१४॥

સૂત્રાર્થ—"ચત્તારિ ગયા પણ્ણત્તા" ઈત્યાદિ—

ગજ (હાથી) ચાર પ્રકારના કહ્યા છે—(૧) યુક્તયુક્ત (૨) યુક્તાયુક્ત, (૩) અયુક્તયુક્ત અને (૪) અયુક્તાયુક્ત એજ પ્રમાણે પુરુષના પણ યુક્તયુક્ત આદિ ચાર પ્રકાર સમજવા

ટીકાર્થ — અશ્વની જેમ જ યુક્તપરિગત યુક્તરૂપ અને યુક્ત શોભાસંપન્ન, આ પદોને યોજવાથી ગજવિષયક બીજી ત્રણ ચતુર્ભંગી પણ બને છે એજ પ્રકારની બીજી ત્રણ ચતુર્ભંગી દાર્ષ્ટાન્તિક પુરુષ વિષે પણ સમજવી. હયસૂત્ર (સૂ. ૧૩)ના જેવો જ આ સૂત્રનો ભાવાર્થ સમજવો. સૂ. ૧૪

छाया—चतस्रो युग्याऽऽचर्याः प्रज्ञप्ताः, तद्यथा-पथियायि नामैकं नो उत्पथयायि १, उत्पथयायि नामैकं नो पथियायि २, एकं पथियाय्यपि उत्पथयाय्यपि ३, एकं नो पथियायि नो उत्पथयायि ४, एवमेव चत्वारि पुरुषजातानि । सू० १५ ॥

टीका—" चत्तारि जुग्गायरिया " इत्यादि — युग्याऽऽचर्याः – युगं-रथं वहतीति युग्यमश्वादि वाहन तस्याऽऽचरणान्याचर्याः-वहनक्रियाः गमनक्रिया वा चतस्रः प्रज्ञप्ताः, तद्यथा-" पथजाई " इत्यादि-एकं युग्यम्-अश्वादिवाहन पथियायि-पन्थानं-मार्गयति=गच्छतीत्येवं शीलं तथा भवति, किन्तु नो उत्पथयायि-उत्सृष्टः-त्यक्तः पन्थाः उत्पथः=कुमार्गः, तं गच्छतीत्येवंशील मुत्पथयायि न भवति, इति प्रथमो भङ्गः । १ ।

तथा-एकम् उत्पथयायि भवति, किन्तु नो पथियायि, इति द्वितीयः २।

" चत्तारि जुग्गायरिया पण्णत्ता "—इत्यादि १५

सूत्रार्थ-युग्याचर्या चार कही गई हैं, पथियायी नो उत्पथयायी-१ उत्पथयायी नो पथियायी-२ पथियायी भी-उत्पथयायीभी-३ और नो पथियायी नो उत्पथयायी-४ । इसी प्रकारसे पुरुष जात भी चार कहे गयेहैं

भावार्थ-युग्यपदसे रथ वहन करनेवाले अश्वादि वाहन यहां गृहीत हुवे हैं, इनकी जो वहनक्रिया या गमनक्रिया है वह आचर्या पदसे गृहीत है । इसे चार प्रकार होनेका तात्पर्य ऐसा है-कोई अश्वादि वाहन ऐसा होता है जिसका स्वभाव मार्गसे चलनेका कुमार्गसे नहीं होता है – १ यह पथियायी मार्ग में चलनेवाला का प्रथम भङ्ग है कोई एक ऐसा होता है जो कुमार्ग से चलने का स्वभाववाला होता है मार्ग से नहीं, २ यह द्वितीय भङ्ग है ।

" चत्तारि जुग्गायरिया पण्णत्ता " ईत्यादि—

युग्याचर्या (अश्वादिनी गमन क्रिया) चार प्रकारनी कही छे—(१) पथियायी नो उत्पथयायी, (२) उत्पथयायी नो पथियायी, (३) पथियायी अने उत्पथयायी (४) नो पथियायी नो उत्पथयायी એ જ प्रमाणे पुरुषोना पण चार प्रकार कह्या छे

ભાવાર્થ—યુગ્ય એટલે રથાદિને ખેંચનાર અશ્વાદિ તે અશ્વાદિની જે વહન ક્રિયા અથવા ગમનક્રિયાને ' આચર્યા ' કહે છે તેના ચાર પ્રકાર હવે સ્પષ્ટ કરવામાં આવે છે—(૧) કોઇ અશ્વાદિ યુગ્ય હોય છે જે માર્ગે ચાલવાના સ્વભાવવાળું હોય છે-કુમાર્ગે ચાલતું નથી. (૨) કોઇ એક અશ્વાદિ વાહન કુમાર્ગે જ ચાલવાના સ્વભાવવાળું હોય છે. માર્ગે તો ચાલતું જ નથી. (૩)

तथा–एकं पथियाय्यपि भवति, उत्पथयाय्यपि, इति तृतीयः ।३।

तथा–एकं नो पथियायि भवति नो उत्पथयायि, इति चतुर्थ ।४।

यद्यपि सामान्यसूत्रे युग्यस्याचर्यायाश्चतुर्विभजनीयत्वेनोक्तास्तथापि आश्रया ऽऽश्रयिणोरभेदविवक्षया चर्याऽऽश्रयो युग्यमेव चतुर्विधत्वेनोक्तमिति' । इति द्रव्ययुग्यपक्षे । भावयुग्यपक्षेतु–युग्यशब्दस्योपचारिकत्वेन युग्यसदृशा इत्यर्थ, तत्सादृश्य च संयमयोगभारवोढृतया साधुषु प्राप्त, तेषामाचर्या युग्याचर्याश्च तत्र भङ्गस्ता इत्यर्थो यो य, अत्रापि युग्यपदलक्षितस्य साधाराचर्याद्वारेण चातु र्विध्य, तत्र प्रथमः पथियायी अप्रमत्त, सदनुष्ठायित्वात् १, उत्पथयायी लिङ्गी

तथा–कोई अश्वादि वाहन ऐसा होता है जो मार्गसे जानेका स्वभाव वाला होता है और कुमार्गसेभी–३ ऐसा यह तृतीय भङ्ग है । कोई एक अश्वादि न मार्गसे–न कुमार्गसे जानेका स्वभाववाला होता है–४ यद्यपि इस सामान्य सूत्रमें युग्यकी आचर्या चार प्रकार से कही गई है फिर भी आश्रय और आश्रेय में अभेद विवक्षासे आचर्याके आश्रय भूत युग्यही चार प्रकारके कहे गये हैं ऐसा समझना चाहिये । यह कथन द्रव्य युग्यके पक्षमें किया है, भावयुग्यके पक्षमें इन भङ्गोंका यों कथन करना चाहिये । युग्य शब्दको औपचारिक मानके युग्य जैसा जो हों वे युग्य हैं, ऐसे युग्य साधु होते हैं, क्योंकि–ये संयम भारको वहन करते हैं अतः इनमें–युग्य सादृश्य है इनकी चर्या युग्याचर्या है । यहां चर्या द्वारा युग्य पदोपलक्षित साधुमें चतुर्विधता इस

કોઈ અશ્વાદિ વાહન માર્ગ પર થઈને ચાલવાના સ્વભાવવાળુ પણ હોય છે અને કુમાર્ગે ચલવાના સ્વભાવવાળુ પણ હોય છે (૪) કોઈ એક અશ્વાદિ (યુગ્ય) માર્ગે થઈને જવાના સ્વભાવવાળુ પણ હોતું નથી અને કુમાર્ગે ચાલવાના સ્વભાવવાળુ પણ હોતું નથી, જો કે આ સામાન્ય સૂત્રમાં યુગ્યની આચર્યા (અશ્વાદિની ગમનક્રિયા) ચાર પ્રકારની કહી છે, છતાં પણ આશ્રય અને આશ્રેયમાં અભેદોપચારની અપેક્ષાએ આચર્યાના આશ્રયભૂત યુગ્ય (અશ્વાદિનાં) જ અહીં ચાર પ્રકાર સમજવા જોઈએ આ કથન દ્રવ્યયુગ્યને અનુલક્ષીને કરવામાં આવ્યુ છે, ભાવયુગ્યની અપેક્ષાએ આ ભાંગાઓનું કથન આ પ્રમાણે થવુ જોઈએ યુગ્ય શબ્દને ઔપચારિક ગણીને યુગ્ય જેવા જે હોય તેને પણ યુગ્ય કહી શકાય. સંયમભારનું વહન કરનાર સાધુને જ એવાં યુગ્યસમાન ગણી શકાય. એવા સાધુની આચર્યાને યુગ્યાચર્યા કહી શકાય. અહીં ચર્યા દ્વારા યુગ્ય પદોપલક્ષિત સાધુમાં ચતુર્વિધતા આ પ્રમાણે

असदनुष्ठायित्वात् २, उभययायी प्रमत्तः, उभयानुष्ठायित्वात् ३, अनुभययायी सिद्धः, अनुभयानुष्ठायित्वादिति ४।

"एवामेवे"—त्यादि—एवमेव-युग्यवदेव चत्वारि पुरुषजातानि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा—एकः—कश्चित् पुरुषः पथियायी—सुशास्त्रज्ञानसम्पन्न—सुगुरूपदिष्टसुदेवाऽऽराधनादिमार्गगामी भवति, किन्तु नो उत्पथयायी=कुशास्त्रज्ञानोपहतकुगुरूपदिष्ट कुदेवाऽऽराधनादिकुपथगामी नो भवति १ एवं शेषभङ्गत्रयं बोध्यम् । ४।

प्रकार है—कोई एक साधु ऐसा होता है जो पथियायी सदनुष्ठान करनेवाला अप्रमत्त होता है-१ कोई एक असदनुष्ठान करनेवाला उत्पथयायी प्रमत्त होता है-१ केवल साधुलिङ्गधारी होता है-२ कोई एक सद्-असद् अनुष्ठान करनेवाला उभययायी प्रमत्त और अप्रमत्त भी होता है-३ कोई एक अनुभययायी होता है क्योंकि—वह उभय प्रकारके अनुष्ठानमें एक का भी अनुष्ठान करनेवाला नहीं होता है ऐसा वह सिद्ध होता है-४ । युग्य के सम्बन्ध से सम्बद्ध पुरुष जातभी चार होते हैं, जैसे—कोई एक पुरुष पथियायी होता है सुशास्त्र ज्ञान सम्पन्न गुर्वादि उपदेशसे सुदेवकी आराधना आदिके मार्गमें गमन स्वभाववाला होता है, परन्तु उत्पथयायी नहीं होता है कुशास्त्रज्ञानसे उपहत कुगुरु द्वारा प्रतिपादित कुदेवाराधन आदि कुमार्गमें जानेवाला नहीं होता है-१ इसी प्रकारसे शेष तीन भङ्ग भी समझना चाहिये । यद्वा

પ્રતિપાદન કરી શકાય—(૧) કોઈ એક સાધુ એવો હોય છે કે જે પથિયાયી હોય છે એટલે કે સદનુષ્ઠાન કરનારો અપ્રમત્ત સંયત હોય છે (૨) કોઈ એક સાધુ એવો હોય છે કે જે અસદનુષ્ઠાન કરનાર ઉત્પથયાયી પ્રમત્ત હોય છે એટલે કે કેવળ વેષધારી સાધુ જ હોય છે (૩) કોઈ એક સાધુ સદનુષ્ઠાન અને અસદનુષ્ઠામ કરનારો ઉભયયાયી પ્રમત્ત અને અપ્રમત્ત હોય છે (૪) કોઈ એક સાધુ અનુભયયાયી હોય છે, કારણ કે તે સદઅનુષ્ઠાન પણ કરતો નથી અને અસદનુષ્ઠાન પણ કરતો નથી એવો તે સિદ્ધ હોય છે

યુગ્યના દૃષ્ટાન્તને અનુરૂપ ચાર પ્રકારના પુરુષો હોય છે—(૧) કોઈ એક પુરુષ પથિયાયી હોય છે એટલે કે સુશાસ્ત્રજ્ઞાનસંપન્ન, ગુરુ આદિના ઉપદેશ રૂપ માર્ગે અને સુદેવની આરાધનાને માર્ગે ગમન કરવાના સ્વભાવવાળો હોય છે, પરન્તુ ઉત્પથયાયી હોતો નથી, એટલે કે કુશાસ્ત્રજ્ઞાનને કુમાર્ગે, કુગુરુ પ્રતિપાદિત કુદેવારાધના આદિ કુમાર્ગે ગમન કરનારો હોતો નથી. એજ પ્રમાણે બાકીના ત્રણ ભાંગા પણ સમજી લેવા.

यद्वा—पथ्युत्पथशब्दौ स्वसिद्धान्त-परसिद्धान्तपरौ गत्यर्थस्य 'या' धातोः 'ये गत्यर्थास्ते ज्ञानार्था' इति बोधार्थकत्वमपि, ततश्चायमर्थः—पथियायी-स्वसिद्धान्तयायी, उत्पथयायी—परसिद्धान्तयायीति, शेषं प्राग्वद्बोध्यम् । सू० १५ ।

मूलम्—चत्तारि पुप्फा पण्णत्ता, तं जहा—रूवसपन्ने णाममेगे णो गंधसपन्ने १, गंधसपन्ने णाममेगे णो रूवसपन्ने २, एगे रूवसपन्नेवि गंधसपन्नेवि ३, एगे णो रूवसपन्ने णो गंधसपन्ने ४। एवामेव चत्तारि पुरिसजाया पण्णत्ता तं जहा—रूवसपन्ने णाममेगे णो सीलसपन्ने ४। सू० १६ ।

छाया—चत्वारि पुष्पाणि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा रूपसम्पन्नं नामैकं नो गन्धसम्पन्नं १, गन्धसम्पन्नं नामैकं नो रूपसम्पन्नम् २ एकं रूपसम्पन्नमपि गन्धस

पथी और उत्पथ ये दो शब्द स्वसिद्धान्त परसिद्धान्त परक हैं, क्योंकि गत्यर्थक धातु ज्ञानार्थक भी होता है, यहां—"या" धातु गत्यर्थक है अतः—यह बोधार्थक भी हो सकता है, इसलिये—"पथियायी" इस भङ्गका अर्थ स्वसिद्धान्तानुयायी, तथा—"उत्पथयायी" इसका परसिद्धान्तयायी ऐसा भी अर्थ होता है। इस प्रकारका अर्थ करके शेष भङ्ग भी समझ लेना चाहिये ॥सू०१५॥

"चत्तारि पुप्फा पण्णत्ता इत्यादि"—१६

सूत्रार्थ—चार प्रकारके पुष्प कहे गयेहैं, जैसे कोई एक पुष्प ऐसा होता है जो केवल रूप सम्पन्न ही होता है—गन्ध सम्पन्न नहीं—१ कोई एक पुष्प केवल गन्धसम्पन्नही होता है रूप सम्पन्न नहीं—२ तथा—कोई

અથવા—'પથી' પદ સ્વસિદ્ધાન્તવાચક અને 'ઉત્પથ' પદ પરસિદ્ધાન્તવાચક છે કારણ કે ગત્યર્થક ધાતુ જ્ઞાનાર્થક પણ હોય છે અહીં 'યા' ધાતુ ગત્યર્થક હોવાથી બોધાર્થક પણ સંભવી શકે છે તેથી 'પથિયાયી' એટલે સ્વસિદ્ધાન્તનો અનુયાયી અને 'ઉત્પથયાયી' એટલે પરસિદ્ધાન્તનો અનુયાયી, આ પ્રકારનો અર્થ પણ થાય છે આ પ્રકારના અર્થને અનુલક્ષીને બાકીના ભાંગા સમજી લેવા જોઈએ. । સૂ ૧૫ ।

'ચત્તારિ પુપ્ફા પણ્ણત્તા' ઇત્યાદિ—

ચાર પ્રકારના ફૂલો કહ્યાં છે—(૧) કોઈ એક ફૂલ રૂપ સંપન્ન હોય છે, પણ ગંધસંપન્ન હોતું નથી (૨) કોઈ ફૂલ માત્ર ગંધસંપન્ન જ હોય છે, પણ રૂપસંપન્ન હોતું નથી (૩) કોઈ એક ફૂલ રૂપસંપન્ન પણ હોય

सम्पन्नमपि ३, एकं नो रूपसम्पन्नं नो गन्धसम्पन्नम् ४। एवमेव चत्वारि पुरुष-जातानि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा-रूपसम्पन्नो नामैको नो शीलसम्पन्नः ४, । सू०१६।

टीका—"चत्तारि पुप्फा" इत्यादि—पुष्पाणि चत्वारि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा—एकं पुष्पं रूपसम्पन्नं-दर्शने सुन्दरं भवति, किन्तु नो गन्धसम्पन्नं=सुगन्धि न भवति १, एवं शेषभङ्गत्रयं स्वयं विवरणीयम् । ४। क्रमेण पलाश-बकुल-जाती-बदरीपुष्पाणि तदुदाहरणानि ।

"एवामेव चत्तारि पुरिसजाया" इत्यादि—एवमेव=पुष्पवदेव चत्वारि पुरुषजातानि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा-एकः पुरुषो रूपसम्पन्न.=सुन्दरसंस्थानवान् भवति, किन्तु नो शीलसम्पन्नः-सद्वृत्तवान् न भवति १, एवं शेषभङ्गत्रिकं स्वय-मूहनीयम् ४। । सू० १६ ।

एक पुष्प रूपसम्पन्न भी और गन्ध सम्पन्नभी होता है-३ और कोई एक नतो रूपसम्पन्न न गन्ध सम्पन्न ही होताहै-४ इसी प्रकारसे पुरुष जात भी चार कहे गये हैं, जैसे कोई एक पुरुष रूपसम्पन्न होता है पर-शील सम्पन्न नहीं-१ इत्यादि-४

सूत्रमें पुष्प सम्बन्धी चतुर्भङ्गीका तात्पर्य है कि कोई एक पुष्प रूप सम्पन्न तो होता है अर्थात्-देखनेमें सुहावना होता है किन्तु-सुगन्धवाला नहीं, जैसे पलाश पुष्प १ इसी प्रकारसे शेष भङ्गत्रय बनाते समय दृष्टान्त के स्थान पर बकुल जाती-बदरिका पुष्पोंको रख लेना चाहिये-४ इसी तरहसे पुरुषजातमें कोई एक पुरुष देखनेमें अति

છે અને ગંધસંપન્ન પણ હોય છે (૪) કોઈ એક ફૂલ રૂપસંપન્ન પણ હોતુ નથી અને ગંધસંપન્ન પણ હોતું નથી

એજ પ્રમાણે પુરુષો પણ ચાર પ્રકારના હોય છે—(૧) કોઈ એક પુરુષ રૂપસંપન્ન હોય છે પણ શીલસંપન્ન હોતો નથી એજ પ્રમાણે બાકીના ત્રણ ભાંગા પણ સમજી લેવા.

પુષ્પ વિષયક ચતુર્ભંગીનુ સ્પષ્ટીકરણ—(૧) કોઈ એક પુષ્પ દેખાવમાં સુંદર હોય છે પણ સુગંધવાળું હોતુ નથી. જેમકે પલાશ પુષ્પ

એજ પ્રમાણે બાકીના ત્રણ ભાગા પણ સમજી લેવા. ગંધસંપન્ન ન રૂપસંપન્ન પુષ્પ તરીકે બકુલ પુષ્પ ગણાવી શકાય ગંધ અને રૂપસંપન્ન પુષ્પમાં ગુલાબ પુષ્પ ગણાવી શકાય ન ગંધ સંપન્ન અને ન રૂપસંપન્ન ફૂલમાં બદરિકા પુષ્પ ગણાવી શકાય. એજ પ્રમાણે પુરુષોના ચાર પ્રકાર નીચે પ્રમાણે સમજવા—

मूलम्—चत्तारि पुरिसजाया पण्णत्ता त जहा—जाइसपन्ने णाममेगे णो कुलसम्पन्ने० ४। ॥१॥

चत्तारि पुरिसजाया पण्णत्ता, जाइसपण्णे णाममेगे णो बलसपन्ने, बलसपन्ने णाममेगे णो जाइसपन्ने० ४, (२)। एव जाईए रूवेण ४ चत्तारि, आलावगा (३), एव जाईए सुपण ४ (४), एव जाईए सीलेण ४ (५), एव जाईए चरित्तेण ४ (६), एव कुलेण बलेण ४ (७), एव कुलेण रूवेण ४ (८), एव कुलेण सुपण ४ (९), कुलेण सीलेण ४ (१०), कुलेण चरित्तेण ४ (११)॥

चत्तारि पुरिसजाया पण्णत्ता, त जहा—बलसपण्णे णाम मेगे णो रूवसपण्णे ४ (१२) एव बलेण सुयण ४ (१३) एव बलेण सीलेण (१४) एवं बलेण चरित्तेण ४ (१५)

चत्तारि पुरिसजाया पण्णत्ता, तं जहा—रूवसपन्ने णाम मेगे णो सुयसपण्णे ४ (१६) एव रूवेण सीलेण ४ (१७) रूवेण चरित्तेण ४ (१८)

चत्तारि पुरिसजाया पण्णत्ता, त जहा—सुयसपन्ने णाम मेगे णो सीलसपण्णे ४ (१९) एव सुएण चरित्तेण य ४ (२०)

चत्तारि पुरिसजाया पण्णत्ता, त जहा—सीलसपन्ने णाम मेगे णो चरित्तसपन्ने ४ (२१) एया एक्कवीस चउभगीओ भाणियव्वा ॥ सू० १७ ॥

सुन्दर परन्तु सद्वृत्तवाला नहीं होता है १ बाकीके तीन भङ्ग स्वयं समझना चाहिये ॥१६॥

(१) કોઈ એક પુરુષ દેખાવમાં અતિ સુંદર હોય છે પણ સદ્‌વૃત્તિવાળો હોતો નથી, એજ પ્રમાણે બાકીના ત્રણ પ્રકારો પણ સમજી લેવા ॥૧૯, ૧૬॥

छाया—चत्वारि पुरुषजातानि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा-जातिसम्पन्नो नामैको नो कुलसम्पन्नः ४ (१)

चत्वारि पुरुषजातानि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा-जातिसम्पन्नो नामैको नो बलसम्पन्न, बलसम्पन्नो नामैको नो जातिसम्पन्नः ४ (२) एवं जात्या रूपेण चत्वार आलापकाः (३) एव जात्या श्रुतेन ४ (४) एवं जात्या शीलेन ४ (५) एवं जात्या चारित्रेण ४ (६) एवं कुलेन बलेन ४ (७) एव कुलेन रूपेण ४ (८) एव कुलेन श्रुतेन ४ (९) कुलेन शीलेन ४ (१०) कुलेन चारित्रेण ४ (११)

चत्वारि पुरुषजातानि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा-बलसम्पन्नो नामैको नो रूपसम्पन्नः ४ (१२) एवं बलेन श्रुतेन ४ (१३) एवं बलेन शीलेन ४ (१४) एवं बलेन चारित्रेण ४ (१५)

चत्वारि पुरुषजातानि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा-रूपसम्पन्नो नामैको नो श्रुतसम्पन्नः ४ (१६) एवं रूपेण शीलेन ४ (१७) रूपेण चारित्रेण ४ (१८)

चत्वारि पुरुषजातानि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा-श्रुतसम्पन्नो नामैको नो शीलसम्पन्नः ४ (१९) एवं श्रुतेन चारित्रेण च ४ (२०)

चत्वारि पुरुषजातानि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा-शीलसम्पन्नो नामैको नो चारित्रसम्पन्नः ४ (२१) एत एकविंशतिश्चतुर्भङ्गा भणितव्याः। सू० १७॥

टीका—अथ पुष्पस्यैव दार्ष्टान्तिकरूपाणि पुरुषसूत्राणि माह—

"चत्तारि पुरिसजाया" इत्यादि—स्पष्टम्। एकः पुरुषो जातिसम्पन्नः—उत्तमजातिको भवति, परन्तु नो कुलसम्पन्नः—उत्तमकुलसम्पन्नो न भवति १, एकः कुलसम्पन्नो भवति न जातिसम्पन्नः २, एक उभयसम्पन्नः ३, एक उभयवर्जितो भवति ४। इति प्रथमा चतुर्भङ्गी ।१॥

"चत्तारि पुरिसजाया पण्णत्ता" इत्यादि—१७

पुरुष जात चार है जातिसम्पन्न नो कुल सम्पन्न-१ अर्थात् कोई एक उत्तम जातिवाला होता है पर उत्तम कुलका नहीं-१ दूसरा कोई एक उत्तम कुलका होता है पर उत्तम जातिका नहीं-२ कोई एक पुरुष उत्तम कुलका भी और उत्तम जातिका भी होता है-३ तथा-कोई एक पुरुष उभय वर्जित होता है न उत्तम कुलका न उत्तम जातिका ४

"चत्तारि पुरिसजाया पण्णत्ता" ઇત્યાદિ—

ચાર પ્રકારના પુરુષો કહ્યા છે—(૧) કોઇ પુરુષ ઉત્તમ જાતિવાળો હોય છે, પણ ઉત્તમ કુળવાળો હોતો નથી. (૨) કોઇ ઉત્તમ કુળવાળો હોય છે પણ ઉત્તમ જાતિવાળો હોતો નથી (૩) કોઈ એક પુરુષ ઉત્તમ કુળવાળો પણ હોય છે અને ઉત્તમ જાતિવાળો પણ હોય છે. (૪) કોઈ એક પુરુષ ઉત્તમકુળ રહિત અને ઉત્તમ જાતિ રહિત હોય છે ।૧।

पुनः "चत्तारि पुरिसजाया" इत्यादि—स्पष्टम् एकः पुरुषो जातिसम्पन्नो भवति किन्तु नो बलसम्पन्न—वीर्यसम्पन्नो न भवति १, एको बल सम्पन्नो भवति नो जातिसम्पन्न २, एक उभयसम्पन्नः ३, एक उभयवर्जितो भवति, इति द्वितीया चतुर्भङ्गी। २।

"एवं जाईए रूवेण" इति—एवम्=अमुना प्रकारेण जात्या सह रूपेण युक्ताश्चत्वार आलापका बोध्याः ? तथाहि—जातिसम्पन्नो नामैको नो रूपसम्पन्नः १ रूपसम्पन्नो नामैको नो जातिसम्पन्न २ एको जातिसम्पन्नोऽपि रूपसम्पन्नोऽपि ३, एको नो जातिसम्पन्नो नो रूपसम्पन्नः ४। इति तृतीया चतुर्भङ्गी ३।

"एवं जाईए सुएण" इति—एवम्=अनन्तरोक्तप्रकारेण जात्या सह श्रुतेन युक्ताश्चत्वार आलापका, तथाहि—जातिसम्पन्नो नामैको नो श्रुतसम्पन्नः १,

---

फिर भी—पुरुषजाति चार कहे गये हैं जैसे–कोई एक पुरुष ऐसा होता है जो जाति सम्पन्न होता है पर बल सम्पन्न नहीं–१ अर्थात् वीर्य सम्पन्न नहीं होता है। कोई बलसम्पन्न है पर–जाति सम्पन्न नहीं–२ कोई एक उभय सम्पन्न होता है–३ और कोई एक उभयवर्जित होता है–४ एवं जाईए रूवेण–इत्यादि इसी प्रकार तरहसे जातिके साथ रूपने युक्त चार आलापक जानना चाहिये, जैसे कोई एक पुरुष जातिसे सम्पन्न होता है पर रूपसे सम्पन्न नहीं–१ कोई एक रूपसे सम्पन्न होता है पर जाति सम्पन्न नहीं–२ कोई एक जाति और रूपसे भी सम्पन्न होता है–३ कोई एक न तो जाति सम्पन्न ही न रूप सम्पन्न हीहोता है ४ "एवं जाईए सुएण" इसी तरहसे जातिसे श्रुतसे युक्त चार आलापक होते हैं, जैसे कोई एक पुरुष

નીચે પ્રમાણે પણ ચાર પ્રકારના પુરુષો કહ્યા છે—(૧) કોઈ એક પુરુષ ઉત્તમ જાતિસંપન્ન હોય છે પણ બળસંપન્ન (વીર્યસંપન્ન) હોતો નથી, (૨) કોઈ બળસંપન્ન હોય છે પણ જાતિસંપન્ન હોતો નથી (૩) કોઈ બળસંપન્ન અને જાતિસંપન્ન હોય છે (૪) કોઈ બળસંપન્ન પણ હોતો નથી અને જાતિ સંપન્ન પણ હોતો નથી. ।૨।

' एवं जाईए रूवेण " એજ પ્રમાણે જાતિની સાથે રૂપના યોગથી ચાર વિકલ્પો બને છે. જેમકે (૧) કોઈ એક પુરુષ જાતિસંપન્ન હોય છે, પણ રૂપસંપન્ન હોતો નથી (૨) કોઈ રૂપસંપન્ન હોય છે પણ જાતિસંપન્ન હોતો નથી (૩) કોઈ જાતિસંપન્ન પણ હોય છે અને રૂપસંપન્ન પણ હોય છે (૪) કોઈ જાતિસંપન્ન પણ હોતો નથી અને રૂપસંપન્ન પણ હોતો નથી. ।૩।

' एवं जाईए सुएण' એજ પ્રમાણે જાતિ અને શ્રુતના યોગથી નીચે પ્રમાણે ચાર ભાંગા બને છે—(૧) કોઈ એક પુરુષ જાતિસંપન્ન હોય છે,

श्रुतसम्पन्नो नामैको नो जातिसम्पन्नः २, एको जातिसम्पन्नोऽपि श्रुतसम्पन्नोऽपि ३, एको नो जातिसम्पन्नो नो श्रुतसम्पन्नः ४। इति चतुर्थी चतुर्भङ्गी ।४।

" एवं जाईए सीलेण " इति-एवं-पूर्वोक्तरीत्या जात्या सह शीलेन युक्ताश्चत्वार आलापका बोध्याः, तथाहि-जातिसम्पन्नो नामैको नो शीलसम्पन्नः १, शीलसम्पन्नो नामैको नो जातिसम्पन्नः २, एको जातिसम्पन्नोऽपि शीलसम्पन्नोऽपि ३, एको नो जातिसम्पन्नो नो शीलसम्पन्नः ४। इति पञ्चमी चतुर्भङ्गी ५।

" एवं जाईए चरित्तेण " इति-एवं पूर्वोक्तप्रकारेण जात्या सह चारित्रेण युक्ताश्चत्वार आलापका बोध्या, तथाहि-जातिसम्पन्नो नामैको नो चारित्रसम्पन्नः १, चारित्रसम्पन्नो नामैको नो जातिसम्पन्नः २, एको जातिसम्पन्नोऽपि चारित्रसम्पन्नोऽपि ३, एको नो जातिसम्पन्नो नो चारित्रसम्पन्नः ४। इति षष्ठी चतुर्भङ्गी ६।

जातियुक्त होता है पर श्रुतसे सम्पन्न नहीं-१ कोई एक श्रुतसम्पन्न होता है तो जातिसम्पन्न नहीं-२ कोई एक जातिसे भी और श्रुतसे भी सम्पन्न होता है-३ और कोई एक न तो जातिसम्पन्न न श्रुतसम्पन्न होता है-४।

" एवं जाईए सीलेण "—इत्यादि इसी प्रकार शीलयुक्त जातिके चार आलापक होते हैं, कोई एक पुरुष जाति सम्पन्न होता है पर-शील सम्पन्न नहीं-१ कोई एक पुरुष शील सम्पन्न होता है तो जाति सम्पन्न नहीं-२ कोई एक जाति और शील सम्पन्न भी होता है-३ कोई एक न तो जाति सम्पन्न ही होता है न शील सम्पन्न ही-४। " एवं जाइए चरित्तेण "—इसी प्रकार जातिके साथ चरित्रसे युक्त चार भङ्ग होते हैं, जैसे कोई एक पुरुष जाति सम्पन्न होता है तो चारित्र

પણ શ્રુતસંપન્ન હોતો નથી (૨) કોઈ શ્રુતસંપન્ન હોય છે, પણ જાતિસંપન્ન હોતો નથી (૩) કોઇ જાતિસંપન્ન પણ હોય છે અને શ્રુતસંપન્ન પણ હોય છે (૪) કોઇ જાતિસંપન્ન પણ નથી હોતો, અને શ્રુતસંપન્ન પણ હોતો નથી ।૪।

" एवं जाईए सीलेण " એજ પ્રમાણે જાતિ અને શીલના યોગથી નીચે પ્રમાણે ચાર ભાંગા બને છે—(૧) કોઇ એક પુરુષ જાતિસંપન્ન હોય છે, પણ શીલસંપન્ન હોતો નથી (૨) કોઇ શીલસંપન્ન હોય છે, પણ જાતિસંપન્ન હોતો નથી (૩) કોઈ જાતિસંપન્ન પણ હોય છે અને શીલસંપન્ન પણ હોય છે. (૪) કોઈ જાતિસંપન્ન પણ હોતો નથી અને શીલસંપન્ન પણ હોતો નથી ।૫।

" एवं जाईए चरित्तेणं " એજ પ્રમાણે જાતિ અને ચારિત્રના યોગથી નીચે પ્રમાણે ચાર ભાંગા બને છે—(૧) કોઇ પુરુષ જાતિસંપન્ન હોય છે પણ ચારિત્રસંપન્ન હોતો નથી. (૨) કોઈ ચારિત્રસંપન્ન હોય છે પણ જાતિ-

"एवं कुलेण बलेण" इति-एवं कुलेन सह बलेन युक्ताभपि चत्वारो भङ्गा योध्याः, तथाहि-कुलसम्पन्नो नामैको नो बलसम्पन्न १, बलसम्पन्नो नामैको नो कुलसम्पन्नः २, एकः कुलसम्पन्नोऽपि बलसम्पन्नोऽपि ३, एको नो कुलसम्पन्नो नो बलसम्पन्नः ४। इति सप्तमी चतुर्भङ्गी । ७।

"एवं कुलेण रूवेण" इति-एवं कुलेन सह रूपेण युक्ताश्चत्वारो भङ्गा योध्या , इत्यष्टमी चतुर्भङ्गी । ८।

एवं कुलेन सह श्रुतेन युक्ताश्चत्वारो भङ्गाः । इति नवमी । ९ ।

सम्पन्न नहीं-३ कोई एक चारित्र सम्पन्न होता है तो जाति सम्पन्न नहीं-२ कोई एक जाति सम्पन्न होता है और चारित्र से भी-३ कोई एक जाति-चारित्र उभयसे विकल होता है-४ । "एवं कुलेण बलेण"—इसी प्रकार कुल और बलके योगसे चार भङ्ग होते हैं, कोई एक पुरुष कुल सम्पन्न होता है तो बल सम्पन्न नहीं-१ कोई एक बल सम्पन्न होता है तो कुल सम्पन्न नहीं-२ कोई एक कुल सम्पन्न होता है और बल सम्पन्न भी-३ कोई एक न तो बल सम्पन्न न कुल सम्पन्न ही होता है-४ "एवं कुलेण रूवेण"—इसी प्रकार कुल और रूपसे चार भङ्ग होते हैं। कोई एक पुरुष कुल सम्पन्न होता तो रूपसम्पन्न नहीं-१ कोई एक रूप सम्पन्न होता है तो कुलसम्पन्न नहीं-२ कोई एक उभय सम्पन्न होता है-३ कोई एक उभय विहीन होता है-४।

संपन्न હોતો નથી. (૩) કોઈ જાતિ અને ચારિત્ર બન્નેથી સંપન્न હોય છે (૪) કોઈ જાતિ અને ચારિત્ર બન્નેથી વિહીન હોય છે ।૬।

"एवं कुलेण बलेण" એજ પ્રમાણે કુળ અને બળના યોગથી ચાર ભાંગા બને છે—(૧) કોઈ પુરુષ કુળસંપન્ન હોય છે પણ બળસંપન્ન હોતો નથી, (૨) કોઈ બળસંપન્ન હોય છે પણ કુળસંપન્ન હોતો નથી (૩) કોઈ બળ અને કુળ બન્નેથી સંપન્ન હોય છે (૪) કોઈ બળસંપન્ન પણ હોતો નથી અને કુળસંપન્ન પણ હોતો નથી ।૭।

"एवं कुलेण रूवेण" એજ પ્રમાણે કુળ અને રૂપના યોગથી નીચે પ્રમાણે ચાર ભાંગા બને છે—(૧) કોઈ કુળસંપન્ન તો હોય છે પણ રૂપ સંપન્ન હોતો નથી (૨) કોઈ રૂપસંપન્ન હોય છે પણ કુળસંપન્ન હોતો નથી. (૩) કોઈ કુળસંપન્ન પણ હોય છે અને રૂપસંપન્ન પણ હોય છે (૪) કોઈ કુળસંપન્ન પણ હોતો નથી અને રૂપસંપન્ન પણ હોતો નથી. ।૮। એજ પ્રમાણે કુળ અને શ્રુતના યોગથી પણ ચાર ભાંગા બને છે ।૯।

कुलेन सह शीलेन युक्ताश्चत्वारो भङ्गा इति दशमी । १० ।

कुलेन सह चारित्रेण युक्ताश्चत्वारो भङ्गा इत्येकादशी । ११ ।

"चत्तारि पुरिसजाया" इत्यादि-पुनः पुरुषजातानि चत्वारि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा-बलसम्पन्नो नामैको नो रूपसम्पन्नः १, रूपसम्पन्नो नामैको नो बलसम्पन्नः २, एको बलसम्पन्नोऽपि रूपसम्पन्नोऽपि ३, एको नो बलसम्पन्नो नो रूपसम्पन्नः ४। इति द्वादशी । १२ ।

"एव बलेण सुएण" इति—एव बलेन सह श्रुतेन युक्ता अपि चत्वारो भङ्गा बोध्याः इति-त्रयोदशी । १३ ।

"एवं बलेण सीलेण" इति-एवं बलेन सह शीलेन युक्ताश्चत्वारो भङ्गा बोध्याः । इति चतुर्दशी । १४ ।

इसी प्रकार कुल और श्रुतके योगमें चार भङ्ग होते है-४ इसी प्रकार कुल शील से भी चार भंग होते हैं-४ इसी प्रकार कुल चारित्र युक्त चार भङ्ग होते हैं-४ इस प्रकारसे यहां तक ग्यारह चतुर्भङ्गी है। ११

पुनश्च—"चत्तारि पुरिसजाया"—पुरुष जात चार हैं, जैसे कोई एक पुरुष बल सम्पन्न है तो रूप सम्पन्न नहीं-१ कोई एक रूप सम्पन्न होता है तो बल सम्पन्न नहीं-२ कोई एक बल सम्पन्न और रूप सम्पन्न भी होताहै-३ कोई एक न तो बल सम्पन्न न रूप सम्पन्न होता है-४, १२

"एवं बलेण सुएण"—इसी प्रकार बल श्रुतके योगमें चार भङ्ग होते हैं-४, १३

"एव बलेण सीलेण"—ऐसे बल और शील संयोगसे चार भङ्ग होते हैं-४, १४

એજ પ્રમાણે કુળ અને શીલના ચોગથી પણ ચાર ભાગા બને છે ।૧૦।

એજ પ્રમાણે કુળ અને ચારિત્રના ચોગથી પણ ચાર ભાંગા બંને છે ।૧૧। આ રીતે અહીં સુધીમાં ૧૧ ચતુર્ભંગી પ્રકટ કરવામાં આવી છે.

"चत्तारि पुरिसजाया" ચાર પ્રકારના પુરુષો હોય છે— ૧) કોઇ પુરુષ બળસંપન્ન હોય છે પણ રૂપસંપન્ન હોતો નથી (૨) કોઈ રૂપસંપન્ન હોય છે પણ બળસંપન્ન હોતો નથી (૩) કોઈ બળ અને રૂપ બન્નેથી સંપન્ન હોય છે (૪) કોઇ બળસંપન્ન પણ હોતો નથી અને રૂપસંપન્ન પણ હોતો નથી ।૧૨।

"एवं बलेण सुएण" એજ પ્રમાણે બળ અને શ્રતના ચોગથી ચાર ભાગા બને છે ।૧૩।

"एव बलेण सीलेण" એજ પ્રમાણે બળ અને શીલના ચોગથી ચાર ભાંગા બને છે ।૧૪।

"एव चलेण चरित्तेण" इति–एवं चलेन सह चारित्रेण युक्ताश्चत्वारो भङ्गा बोध्याः। इति पञ्चदशी। १५।

"चत्तारि पुरिसजाया" इत्यादि–पुन पुरुषजातानि चत्वारि प्रज्ञप्तानि तद्यथा–रूपसम्पन्नो नामैको नो श्रुतसम्पन्नः १, श्रुतसम्पन्नो नामैको नो रूप सम्पन्नः २, एको रूपसम्पन्नोऽपि, श्रुतसम्पन्नोऽपि ३, एको नो रूपसम्पन्नो नो श्रुतसम्पन्नः ४। इति षोडशी। १६।

"एव रूवेण सीलेण" इति–एव रूपेण सह शीलेन युक्ताश्चत्वारो भङ्गा बोध्याः। इति सप्तदशी। १७।

"रूवेण चरित्तेण" इति–रूपेण सह चारित्रेण युक्ताश्चत्वारो भङ्गा बोध्याः। इत्यष्टादशी। १८।

"चत्तारि पुरिसजाया" इत्यादि–पुनः पुरुषजातानि चत्वारि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा–श्रुतसम्पन्नो नामैको नो शीलसम्पन्नः १, शीलसम्पन्नो नामैको नो श्रुत

"एव चलेण चरित्तेण"—इसी प्रकार बल चारित्रसे चार भङ्ग होते हैं–४, १५

'चत्तारि पुरिस जाया'—पुरुष जात चार कहे गयेहैं, जैसे कोई एक पुरुष रूप सम्पन्न होता है श्रुत सम्पन्न नहीं–१ कोई एक श्रुत सम्पन्न होता है रूप सम्पन्न नहीं–२ कोई एक रूप और श्रुत सम्पन्न भी–३ और कोई एक दोनोंसे रहित होता है–४, १६ "एव रूवेण सीलेण" इसी प्रकार रूप शील से युक्त ४ भङ्ग होते हैं, १७ "रूवेण चरित्तेण" इसी तरह रूप चारित्र युक्त ४ भङ्ग होते हैं—१८

"एव बलेण चरित्तेण" એજ પ્રમાણે બળ અને ચારિત્રના યોગથી ચાર ભાંગા બને છે ।૧૫।

चत्तारि पुरिस जाया પુરુષના નીચે પ્રમાણે ચાર પ્રકાર પણ પડે છે—(૧) કોઇ એક પુરુષ રૂપસંપન્ન હોય છે, પણ શ્રુતસંપન્ન હોતો નથી. (૨) કેઈ શ્રુતસંપન્ન પણ હોય છે પણ રૂપસંપન્ન હોતો નથી. (૩) કોઇ શ્રુતસંપન્ન પણ હોય છે અને રૂપસંપન્ન પણ હોય છે (૪) કોઇ રૂપસંપન્ન પણ હોતો નથી અને શ્રુતસંપન્ન પણ હોતો નથી ।૧૬।

एव रूवेण सीलेण ' એજ પ્રમાણે રૂપ અને શીલના યોગવાળા ચાર ભાંગા બને છે ।૧૭। 'एव रूवेण चरित्तेण" એજ પ્રમાણે રૂપ અને ચારિત્રના યોગથી પણ ચાર ભાંગા બને છે ॥ ૧૮॥

सम्पन्नः २, एकः श्रुतसम्पन्नोऽपि शीलसम्पन्नोऽपि ३, एको नो श्रुतसम्पन्नो नो शीलसम्पन्नः ४। इत्येकोनविंशा चतुर्भङ्गी। १९।

"एवं सुणए चरित्तेण य" इति-एवं श्रुतेन सह चारित्रेण युक्ताश्चत्वारो भङ्गा बोध्याः। इति विंशतितमा चतुर्भङ्गी। २०।

"चत्तारि पुरिसजाया" इत्यादि-पुनः पुरुषजातानि चत्वारि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा-शीलसम्पन्नो नामैको नो चारित्रसम्पन्नः १, चारित्रसम्पन्नो नामैको नो शीलसम्पन्नः २, एकः शीलसम्पन्नोऽपि चारित्रसम्पन्नोऽपि ३, एको नो शील-सम्पन्नो नो चारित्रसम्पन्नः ४। इत्येकविंशतितमा चतुर्भङ्गी। २१। इत्थं जाति १

पुनश्च—"चत्तारि पुरिसजाया पण्णत्ता" पुरुष जात चार कहे गये हैं जैसे कोई एक पुरुष श्रुत सम्पन्न होता है शील सम्पन्न नहीं-१ कोई एक शील सम्पन्न होता है तो श्रुतसम्पन्न नहीं-२ कोई एक श्रुत सम्पन्न भी शील सम्पन्न भी होता है-३ कोई एक न तो श्रुत सम्पन्न न शील सम्पन्न होता है-४ १९

"एवं सुएण चरित्तेणय"—इसी प्रकार श्रुत चारित्र युक्त ४ भङ्ग होते हैं -२०

पुनश्च—"चत्तारि पुरिसजाया"—इत्यादि पुरुष जात चार हैं, जैसे कोई एक मनुष्य शील सम्पन्न होता है चारित्र सम्पन्न नहीं-१ कोई एक चारित्र सम्पन्न होता है शील सम्पन्न नहीं-२ कोई एक शील से चारित्र से भी सम्पन्न होता है-३ कोई एक न तो शीलसे न चारित्रसे ही सम्पन्न होता है-४ यह एक्कीसवीं चतुर्भङ्गी है। इस प्रकार

"चत्तारि पुरिसजाया पण्णत्ता" પુરુષોના નીચે પ્રમાણે ચાર પ્રકાર પણ પડે છે—(૧) કોઈ એક પુરુષ શ્રુતસંપન્ન હોય છે પણ શીલસંપન્ન હોતો નથી (૨) કોઇ શીલસંપન્ન હોય છે પણ શ્રુતસંપન્ન હોતો નથી (૩) કોઇ શ્રુત અને શીલ બન્નેથી સંપન્ન હોય છે (૪) કોઈ શ્રુત અને શીલ બન્નેથી વિહીન હોય છે ।૧૯।

"एवं सुएण चरित्तेणय" એજ પ્રમાણે શ્રુત અને ચારિત્રના યોગથી ચાર ભાંગા બને છે ।૨૦।

"चत्तारि पुरिसजाया" પુરુષોના નીચે પ્રમાણે ચાર પ્રકાર કહ્યા છે-(૧) કોઈ પુરુષ શીલસંપન્ન હોય છે પણ ચારિત્રસંપન્ન હોતો નથી. (૨) કોઈ ચારિત્રસંપન્ન હોય છે, પણ શીલસંપન્ન હોતો નથી (૩) કોઈ શીલ અને ચારિત્ર બન્નેથી સંપન્ન હોય છે (૪) કોઈ શીલ અને ચારિત્ર બન્નેથી વિહીન હોય છે. આ ૨૧ મી ચતુર્ભંગી છે. ।૨૧।

कुल २ बल ३ रूप ४ श्रुत ५ शील ६ चारित्रे ७ तिपदसप्तके परस्पर द्विकसंयोगेनैक विंशतिश्चतुर्भङ्गिकाः २१ भवन्ति । एषां व्याख्या सुगमा । सू० १७ ।

मूलम्—चत्तारि फला पण्णत्ता, तं जहा—आमलगमहुरे १, मुद्दिआमहुरे २, खीरमहुरे ३, खंडमहुरे ४। एवामेव चत्तारि आयरिया पण्णत्ता, तं जहा—आमलगमहुरफलसमाणे जाव खंडमहुरफलसमाणे ॥ सू० १८ ॥

छाया—चत्वारि फलानि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा—आमलकमधुरं १, मृद्वीकामधुरं २, क्षीरमधुरं ३ खण्डमधुरम् ४। एवं चत्वार आचार्याः प्रज्ञप्ताः, तद्यथा—आमलकमधुरफलसमानः यावत् खण्डमधुरफलसमानः । सू० १८ ॥

टीका—'चत्तारि फला' इत्यादि—फलानि चत्वारि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा—आमलकमधुरम्—आमलकी—धात्रीवृक्षविशेषः, तस्या इदम् (फलं) आमलकं, तदिव

जाति-१ कुल-२ बल-३ रूप-४ श्रुत-५ शील-६ और चारित्र इन सात पदोंमें परस्पर द्विकसंयोगसे ये २१ चतुर्भङ्गी होती हैं सुगम हैं। १७

"चत्तारि फला पण्णत्ता"—इत्यादि

फल चार प्रकारके हैं—आमलक मधुर-१ मृद्वीक मधुर-२ क्षीर मधुर-३ खण्ड मधुर-४ इसी प्रकार आचार्य भी चार प्रकारके हैं, आमलक मधुर फल समान-१ यावत् कोई एक खण्ड मधुर फल समान-४। इस सूत्र द्वारा प्रतिपादित आमलक मधुरका तात्पर्य ऐसा है—आमलकी नामका एक वृक्ष विशेष होता है, इसका दूसरा नाम धात्रीतरु है इस का जो फल है वह आमलक है। जो फल इसका जैसा मधुर

આ રીતે (૧) જાતિ (૨) કુળ, (૩) બળ (૪) રૂપ (૫) શ્રુત (૬) શીલ અને (૭) ચારિત્ર આ સાત પદોનો અનુક્રમે પછીના પદો સાથે દ્વિક સંયોગ કરવાથી કુલ ૨૧ ચતુર્ભંગી બને છે ભાવાર્થ સુગમ છે ાસૂ. ૧૭ા

"ચત્તારિ ફલા પણ્ણત્તા" ઇત્યાદિ (સૂ. ૧૮)

ફળના નીચે પ્રમાણે ચાર પ્રકાર કહ્યા છે—(૧) આમલક મધુર, (૨) મૃદ્વીક મધુર (૩) ક્ષીરમધુર અને (૪) ખંડમધુર. એજ પ્રમાણે આચાર્યના પણ 'આમલક મધુર ફલ સમાન થી લઈને ખંડમધુરફલસમાન' પર્યન્તના ચાર પ્રકાર સમજવા આમલક મધુરનો ભાવાર્થ નીચે પ્રમાણે છે— આમલકી (આંબળાનું ઝાડ) નામનું એક વૃક્ષ થાય છે તેનું બીજું નામ

तदेव, वा, मधुरमामलकमधुरम् १, तथा–मृद्वीकामधुरं–मृद्वीका=द्राक्षा सेव सैव वा मधुरं तथा २, तथा–क्षीरमधुरं क्षीर–दुग्धं तदिव मधुरं क्षीरमधुरम् ३, तथा–खण्डमधुरं–खण्डं=शर्करा तदिव मधुरं खण्डमधुरम् ४, क्रमेणेमानि चत्वारि अल्प-बहु–बहुतर–बहुतममधुराणि भवन्ति।

"एवामेव चत्तारि आयरिया" इत्यादि–एवमेव–उक्तफलवदेव आचार्याश्चत्वारः प्रज्ञप्ताः, तद्यथा–आमलकमधुरफलसमानः, यावत्पदेन 'मृद्वीकामधुरफलसमानः, क्षीरमधुरफलसमानः' इति पदद्वयग्रहणम्, तथा–खण्डमधुरफलसमान इति। तत्राऽऽमलकमधुरफलसमान–आमलकवन्मधुर यत्फलं तत्तुल्यः, यथाऽऽम-

है वह आमलक मधुर है या स्वयं वही एक फल मधुर है–१ इस लिये वह आमलक मधुर (फल) है। कोई एक फल मृद्वीका मधुर होता है, मृद्वीका दाखका नाम है, द्राक्ष जैसा जो मधुर हो वह मृद्वीका मधुर है–२ या यों कहिये कि मृद्वीका स्वयं ही एक मधुर फल है। कोई एक क्षीर मधुर होता है, क्षीर–दूधका नाम है दूध जैसा मीठा जो हो वह क्षीर मधुर फल है–३ कोई एक खण्ड मधुर होता है, शक्कर जैसा मधुर होनेसे खण्ड मधुर फल होता है–४ ये सब क्रमशः अल्प बहु बहुतर, और बहुतम मधुरवाले होते हैं। इसी प्रकारसे आचार्यभी चार प्रकारके होते हैं, इनमें कोई एक आचार्य आमलक मधुर फल समान होता है, आमलकके जैसे मधुर फल समान होता है, जैसे आमलक तुल्य मधुर फलमें अल्प माधुर्य होता है वैसे ही उसमें भी उपशमादि गुण अल्प मात्रामें होता है अतः–ऐसे आचार्यको आमलक मधुर

'धात्रीतरु" છે. તેના ફળને આમલક (આમળું) કહે છે તેના જેવા મધુર સ્વાદને આમલક મધુર કહે છે તે પોતે જ એક મધુર ફળ છે

મૃદ્વીકામધુરનો ભાવાર્થ—મૃદ્વીકા એટલે દ્રાક્ષ દ્રાક્ષ જેવાં મધુર રસને મૃદ્વીકા કહે છે અથવા એમ કહી શકાય કે દ્રાક્ષ પોતે જ એક મધુર ફળ છે.

દૂધ જેવા મીઠા ફળને ક્ષીર મધુર ફલ કહે છે સાકર જેવાં મધુર ફળને ખંડમધુર ફળ કહે છે આ ચારે અનુક્રમે અલ્પ, બહુ, બહુતર અને બહુતમ મધુરતાવાળા હોય છે.

એજ પ્રમાણે આચાર્ય પણ ચાર પ્રકારના હોય છે—(૧) કોઈ એક આચાર્ય આમલક મધુર ફલ સમાન હોય છે જેમ આમલક સમાન ફળમાં અલ્પ માધુર્ય હોય છે, એજ પ્રમાણે કોઇ આચાર્યમા ઉપશમ આદિ ગુણો અલ્પ માત્રામાં હોય છે તે કારણે એવા આચાર્યને આમલક મધુર ફળસમાન કહ્યા છે એજ પ્રમાણે જે આચાર્યજન બહુ માત્રામા, બહુતર માત્રામાં અને

कमधुरफलेऽस्य माधुर्यं तथाऽऽचार्येऽपि अल्प क्षयोपशमादिगुण इति तत्समान आचार्यो व्यपदिश्यते, एवं बहुबहुतर बहुतमोपशमादिगुणसम्पन्नेष्वाचार्येषु मृद्वीकामधुरफलादि समानत्वं बोध्यम् ४। ॥ सू० १८ ॥

मूलम्—चत्तारि पुरिसजाया पण्णत्ता, तं जहा—करेइ णाम मेगे वेयावच्चं णो पडिच्छइ १, पडिच्छइ णाममेगे वेयावच्चं णो करेइ २, एगे पडिच्छइवि करेइवि ३, एगे नो पडिच्छइ नो करेइ ४।

चत्तारि पुरिसजाया पण्णत्ता, तं जहा—अट्ठकरे णाममेगे णो माणकरे १, माणकरे णाममेगे णो अट्ठकरे २, अट्ठकरेऽवि माणकरेऽवि ३ एगे णो अट्ठकरे णो माणकरे ४,

चत्तारि पुरिसजाया पण्णत्ता, तं जहा गणट्ठकरे णाममेगे णो माणकरे० ४,

चत्तारि पुरिसजाया पण्णत्ता, तं जहा गणसंगहकरे णाम मेगे णो माणकरे० ४,

चत्तारि पुरिसजाया पण्णत्ता, तं जहा—गणसोहाकरे णाम मेगे णो माणकरे० ४,

चत्तारि पुरिसजाया पण्णत्ता, तं जहा—गणसोहिकरे णाममेगे णो माणकरे० ४।

चत्तारि पुरिसजाया पण्णत्ता, तं जहा—रूवं णाममेगे जहइ

फलसे उपमित किया गया है। इसी प्रकारसे जो आचार्यजन बहुमात्रा में, बहुतर मात्रामें, बहुतम मात्रामें उपशमादि गुणोंसे युक्त होते हैं उनमें क्रमशः मृद्वीका मधुर फलादि समानता जाननी चाहिये ॥सू०१८॥

બહુતમ માત્રામાં ઉપશમાદિ ગુણોથી સંપન્ન હોય છે, તેમને અનુક્રમે મૃદ્વીકા (દ્રાક્ષ) મધુર, ક્ષીરમધુર અને ખંડ (સાકર) મધુર ફળ સમાન સમજવા. ।સૂ. ૧૮।

णो धम्मं १, धम्मं णाममेगे जहइ णो रूवं २, एगे रूवंपि जहइ धम्मंपि जहइ ३, एगे णो रूवं जहइ णो धम्मं ४।

चत्तारि पुरिसजाया पण्णत्ता, तं जहा--धम्मं णाममेगे जहइ णो गणसंठिइं० ४,

चत्तारि पुरिसजाया पण्णत्ता, तं जहा—पियधम्मे णाममेगे णो दढधम्मे १, दढधम्मे णाममेगे णो पियधम्मे २, एगे पियधम्मेवि दढधम्मेवि ३, एगे णो पियधम्मे णो दढधम्मे ४। सू०१९

छाया---चत्वारि पुरुषजातानि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा—आत्मवैयावृत्त्यकरो नामैको नो परवैयावृत्त्यकरः ४।

चत्वारि पुरुषजातानि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा—अर्थकरो नामैको नो मानकरः १ मानकरो नामैको नो अर्थकरः २, एकोऽर्थकरोऽपि मानकरोऽपि ३, एको नो अर्थकरो नो मानकरः ४।

चत्वारि पुरुषजातानि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा—गणार्थकरो नामैको नो मानकरः० ४

चत्वारि पुरुषजातानि प्रज्ञप्तानि तद्यथा गणसङ्ग्रहकरो नामैको नो मानकरः४

चत्वारि पुरुषजातानि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा गणशोभाकरो नामैको नो मानकरः ४

चत्वारि पुरुषजातानि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा गणशोधिकरो नामैको नो मानकरः४

चत्वारि पुरुषजातानि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा—रूपं नामैको जहाति नो धर्मं १ धर्मं नामैको जहाति नो रूपम् २, एको रूपमपि जहाति धर्ममपि जहाति ३ एको नो रूपं जहाति नो धर्मम् ४।

चत्वारि पुरुषजातानि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा—प्रियधर्मा नामैको नो दृढधर्मा १ दृढधर्मा नामैको नो प्रियधर्मा २, एकः प्रियधर्माऽपि दृढधर्माऽपि ३, एको नो प्रियधर्मा नो दृढधर्मा ४। सू० १९ ॥

टीका--" चत्तारि पुरिसजाया " इत्यादि—पुरुषजातानि चत्वारि प्रज्ञप्तानि तद्यथा—एकः—कश्चित् पुरुष आत्मवैयावृत्त्यकरः—आत्मनः—स्वस्य वैयावृत्त्यं—भक्त

पुनश्च—" चत्तारि पुरिसजाया पण्णत्ता " १९

टीकार्थ—पुरुष चार प्रकारके कहे गयेहैं, जैसे कोई एक पुरुष ऐसा होता है जो आत्म वैयावृत्त्यकर होता है, भक्तपानसे स्वयंकीही सहायता

" चत्तारि पुरिसजाया पण्णत्ता " ईत्यादि—

टीकार्थ—પુરુષના નીચે પ્રમાણે ચાર પ્રકાર પણ કહ્યા છે—(૧) કોઇ એક પુરુષ એવો હોય છે કે જે આત્મવૈયાવૃત્યકર હોય છે. એટલે કે ભક્તપાન આદિ

पानादिभिः साहाय्यं करोतीत्येवंशील आत्मवैयावृत्यकरो भवति किन्तु ना पर वैयावृत्यकरो भवति, स चाऽलसो जिनकल्पिको वा १, इति प्रथमो भङ्गः १, तथा–परवैयावृत्यकरो नामैको नो आत्मवैयावृत्यकरः, स च स्वार्थनिरपेक्षः २, तथा–एक आत्मवैयावृत्यकरोऽपि परवैयावृत्यकरोऽपि, स च स्थविरकल्पिकः ३, तथा–एको ना आत्मवैयावृत्यकरो नो परवैयावृत्यकरः, स चानशनविशेषप्रतिपन्नादिः ४। भक्त पानादि वर्जक इति ॥

'चत्तारि पुरिसजाया" इत्यादि पुनः पुरुषजातानि चत्वारि प्रज्ञप्तानि, तथथा एकः पुरुषो वैयावृत्यं परस्य करोत्येव, किन्तु नो प्रतीच्छति–स्वस्य वैयावृत्यं परतो न वाञ्छति निःस्पृहत्वात् १, तथा–प्रतीच्छति नामैको वैयावृत्य नो

करनेका स्वभाववाला है, परकी सहायता करनेका स्वभाववाला नहीं होता है–१ ऐसा जन यातो आलसी, या जिनकल्पिक होता है–१ तथा–कोई एक भोजन पान आदिसे परकी सहायता करनेवाला होता है अपनी सहायता करनेवाला नहीं होता है, ऐसा व्यक्ति स्वार्थ निरपेक्ष होता है–२ तथा–कोई एक भोजन पान आदिसे अपनी और परकी सहायता करनेका स्वभाववाला होता है, ऐसा व्यक्ति स्थविर कल्पित होता है–३ और कोई एक पुरुष न आत्मवैयावृत्यकर होता है न पर वैयावृत्यकर ही ऐसा वह अनशन विशेष को धारण किये हुवे व्यक्ति विशेष होता है–४

" चत्तारिपुरिस जाया " पुनश्च—पुरुष चार प्रकारके हैं, जैसे कोई एक पुरुष परका वैयावृत्य करता है किन्तु अपना वैयावृत्य दूसरोंसे

દ્વારા પોતાની જ સેવા કરનારો હોય છે અન્યને તે આબતમાં સહાયતા કરવાના સ્વભાવવાળો હોતો નથી એવો પુરુષ કાં તો આળસુ અથવા તો જિનકલ્પિક હોય છે (૨) કોઈ પુરુષ એવો હોય છે કે જે ભોજનાદિ દ્વારા અન્યની સહાયતા કરનારો હોય છે પોતાની અાતની જ સેવા કરનારો હોતો નથી એવી વ્યક્તિ નિઃસ્વાર્થ હોય છે (૩) કોઈ પુરુષ એવો હોય છે કે જે ભોજનાદિથી પોતાની અને પરની સહાયતા કરનારો હોય છે એવી વ્યક્તિ સ્થવિર કલ્પિક હોય છે (૪) કોઈ વ્યક્તિ એવી હોય છે કે જે આત્મવૈયાવૃત્યકર પણ હોતી નથી અને પરવૈયાવૃત્યકર પણ હોતી નથી અનશન વિશેષને ધારણ કરનાર કોઈ વિશિષ્ટ સાધુને આ પ્રકારમાં ગણાવી શકાય.

" ચત્તારિ પુરિસજાયા " ચાર પ્રકારના પુરુષો કહ્યા છે—(૧) કોઈ એક પુરુષ એવો હોય છે કે જે પરનું વૈયાવૃત્ય કરે છે, પણ અન્યની પાસે

करोति, आचार्यो ग्लानो वा २। तथा-एको वैयावृत्त्यं करोत्यपि प्रतीच्छत्यपि, स च स्थविरविशेषः ३, तथा-एको वैयावृत्त्य नो करोति नो प्रतीच्छति, स च जिनकल्पिकादिः ४, इति।

"चत्तारि पुरिसजाया" इत्यादि-पुनः पुरुषजातानि चत्वारि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा-एकः पुरुषोऽर्थकरः-अर्थान् करोतीत्येवंशीलस्तथा=राजादीनां दिग्यात्रादौ तथोपदेशतो हितप्राप्त्यहितपरिहारादिकारी भवति, किन्तु नो मानकरः-मानं-गर्वं करोतीत्येवंशीलस्तथा='कथमहमनभ्यर्थितो राजादीनेवं कथयिष्यामीत्य-भिमानी न भवति. अपितु तद्धितो भवति, स च सन्मन्त्री नैमित्तिको वा १,

---

नहीं करवाता है, क्योंकि-वह व्यक्ति निःस्पृह होता है-१ कोई एक अपना वैयावृत्त्य करवाता है पर औरोंका वैयावृत्त्य स्वयं नहीं करता है ऐसा वह यातो आचार्य, या ग्लान होता है-२ कोई एक वैयावृत्त्य करता भी है और अपना भी वैयावृत्त्य परोंसे करवाता है, ऐसा स्थविर विशेष होता है-३ कोई एक न तो वैयावृत्त्य करता है न अपना वैयावृत्त्य करानाही चाहता है ऐसा जिनकल्पिक आदि होता है।-४

"चत्तारि पुरिसजाया"—इत्यादि पुनश्च—पुरुष चार कहे गये हैं, जैसे कोई एक पुरुष अर्थकर होता है मानकर नहीं, अर्थात् राजा आदिकोंके साथ दिग्यात्रा आदिके समयमें उस प्रकारके उपदेश से उनका हित प्राप्तिकारी और अहित परिहारकारी होता है पर अहङ्कारका करनेवाला नहीं होता है, अर्थात् वह ऐसा अहङ्कार नहीं करता है कि

પોતાનુ વૈયાવૃત્ય કરાવતો નથી, કારણકે તે પુરુષ નિઃસ્પૃહ હોય છે (૨) કોઈ વ્યકિત એવી હોય છે કે જે અન્યની પાસે પોતાનુ વૈયાવૃત્ય કરાવે છે, પણ પોતે અન્યનુ વૈયાવૃત્ય કરતી નથી આચાર્ય અથવા ગ્લાન (માંદા સાધુને આ પ્રકારમા ગણાવી શકાય. (૩) કોઇ પુરુષ પરનુ વૈયાવૃત્ય પણ કરે છે અને અન્ય દ્વારા પોતાનુ વૈયાવૃત્ય પણ કરાવે છે સ્થવિર વિશેષનો આ ભાંગામા સમાવેશ કરી શકાય છે (૪) કોઇ પુરુષ એવો હોય છે કે જે પરનુ વૈયાવૃત્ય પણ કરતો નથી અને પોતાનુ વૈયાવૃત્ય કરાવતો પણ નથી. જિન કલ્પિત આદિને આ પ્રકારમાં ગણાવી શકાય છે

"ચત્તારિ પુરિસજાયા" પુરુષના નીચે પ્રમાણે પણ ચાર પ્રકાર પડે છે— કોઈ એક પુરુષ અર્થકર હોય છે પણ માનકર હોતો નથી એટલે કે દિગ્વિજય આદિ સમયે રાજા આદિને યોગ્ય સલાહ આપીને તેમનું હિત કરનાર અને અહિતપરિહારી હોય છે, પણ અહંકાર કરનાર હોતો નથી આ કથનનો

तथा-मानकरो नामैको नो अर्थकर-अभिमानकरो भवति किन्तु नो अर्थकरः-परहितादिरूपमर्थं न करोति, स च विद्यादिगुणाभिमानी २, तथा-एकः अर्थकरोऽपि, मानकरोऽपि, स चाभिमानी मन्त्री, अभिमानि मित्र वा ३, तथा-एको नो अर्थकरो ना मानकरः, स च गुणवर्जितो जनः ४।

" चत्तारि पुरिसजाया " इत्यादि-पुनः पुरुषजातानि चत्वारि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा-एकः पुरुषो गणार्थकर -गणस्य-साधुसमुदायस्यार्थ-भक्तपानादि प्रयोजन करोतीत्येवंशीलस्तथा भवति, किन्तु नो मानकरः-' कथमहमप्रार्थितो गणस्यार्थं करिष्यामी'त्येवमभिमानकारी न भवति मायनाम तरणेन तस्य गणोपक्त

' मैं बिना पूछे राजादिकोंसे ऐसा कैसे करूं " ऐसा अभिमानी नहीं होता है किन्तु अभिमान रहित होताहै ऐसा यह पुरुष या तो सन्मन्त्री या नैमित्तिक (ज्योतिषी) होता है-१ कोई एक मानकर होता है अर्थकर नहीं-२ ऐसा व्यक्ति विद्यादिगुणाऽभिमानी होता है, क्योंकि-वह परहितादि रूप अर्थ को नहीं करता है। कोई एक अर्थकर और माणकरभी होता है ऐसा अभिमानी वह मन्त्री, या मित्र होता है-३ कोई एक अर्थकरभी नहीं मानकरभी नहीं, ऐसा वह गुणवर्जित जन होता है-४ ' चत्तारि पुरिसजाया " इत्यादि पुनश्च-पुरुष चार है, जैसे कोई एक पुरुष गणार्थकर होता है मानकर नहीं, साधु समुदायका नाम गण है इस गणके भक्तपान आदि प्रयोजनों साधनेका स्वभाव

આવાય આ પ્રમાણે છે—તે એવો અહંકાર કરતો નથી કે " વિના પૂછ્યે મારે રાજાદિકને આ માટે સલાહ આપવી જોઈએ " તે એવો નિરાભિમાની હોય છે કે રાજા ન પૂછે તો પણ તેનું હિત થાય એવી સલાહ આપતો જ રહે છે કોઈ સમંત્રી અથવા નૈમિત્તિકને (જ્યોતિષી) આ પ્રકારમાં ગણાવી શકાય (૨) કોઈ પુરુષ માનકર હોય છે પણ અર્થકર હોતો નથી વિદ્યાદિ ગુણનું અભિમાન કરનાર પુરુષ આ પ્રકારનો હોય છે, કારણ કે તે પરહિતાદિ રૂપ અર્થ (કાર્ય) કરતો નથી પણ અહંકાર જ કરતો હોય છે (૩) કોઈ અર્થકર પણ હોય છે અને માનકર પણ હોય છે અભિમાની મંત્રી અથવા અભિમાની મિત્રને આ ભાંગામાં મૂકી શકાય (૪) કોઈ અર્થકર પણ હોતો નથી અને માનકર પણ હોતો નથી ગુણહીન જનને આ પ્રકારમાં મૂકી શકાય

' ચત્તારિ પુરિસજાયા " ઇત્યાદિ પુરુષના આ પ્રમાણે ચાર પ્રકાર પણ પડે છે—(૧) કોઈ એક પુરુષ ગણાર્થકર હોય છે પણ માનકર હોતો નથી સાધુ સમુદાયને ગણ કહે છે તે ગણના આહાર પાણી આદિ પ્રયોજનોને

रित्वात् १, तथा-मानकरो नामैको नो गणार्थकरः २, तथा-एको गणार्थकरोऽपि मानकरोऽपि ३, तथा-एको नो गणार्थकरो नो मानकरः ४ एते सुगमाः। उक्तंच-

अनन्तरं गणस्यार्थ उक्तः, स च सङ्ग्रहरूप इति गणसङ्ग्रहकरसूत्रमाह- "चत्तारि पुरिसजाया" इत्यादि-पुनः पुरुषजातानि चत्वारि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा-एको गणसङ्ग्रहकर-गणस्य-गच्छस्य द्रव्यत आहारादिना भावतो ज्ञानादिना सङ्ग्रहं करोतीत्येवशीलस्तथा भवति किन्तु नो मानकरो भवति १, तथा-मानकरो नामैको नो गणसङ्ग्रहकरः २, तथा-एको गणसङ्ग्रहकरोऽपि मानकरोऽपि ३, एको नो गणसङ्ग्रहकरो नो मानकरः ४।

वाला होता है "विना कहे सुने गणका प्रयोजन कैसे साधू" ऐसा अभिमानकारी नहीं क्योंकि—वह तो प्रार्थना के विना ही गणहित साधन का स्वभाववाला हैं, १ कोई एक मानकर होता है पर-गणार्थ कर नहीं, २ कोई एक गणार्थकर भी मानकर भी होता है, ३ तथा-कोई एक नतोगणार्थकर न मानकर ही होताहै, ४ ए सब सुगमहैं। गण सग्रह रूप होताहै अब सूत्रकार गण सग्रह सूत्रका कथन करतेहैं-"चत्तारि पुरिसजाया"-पुरुष जात चार कहे गये हैं, जैसे-कोई एक पुरुष गण-गच्छ का संग्रह कर होता है, द्रव्य की अपेक्षा आहारादि द्वारा और, भाव की अपेक्षा ज्ञानादि द्वारा संग्रह करने का स्वभाव वाला होता है, किन्तु, मानकर नहीं होता है, १ कोई एक मानकर होता है गण-संग्रहकर नहीं, २ कोई एक गणसंग्रह कर भी मानकर भी होता है, ३ कोई एक नतो-गणसंग्रहकर न मानकर ही होता है, ४।

સાધવાના સ્વભાવવાળો હોય છે કોઇ કહે તો જ ગણુહિત સાધવાને બદલે કોઈના કહેવાની અપેક્ષા રાખ્યા વિના તે ગણુહિત સાધવાને તત્પર રહે છે. (૨) કોઈ એક સાધુ માનકર હોય છે પણુ ગણુાર્થંકર હોતો નથી (૩) કોઈ એક સાધુ ગણુાર્થંકર પણુ હોય છે અને માનકર પણુ હોય છે (૪) કોઈ સાધુ ગણુાર્થંકર પણુ હોતો નથી અને માનકર પણુ હોતો નથી અર્થ સુગમ છે

ગણુ સંગ્રહરૂપ હોય છે, તેથી હવે સૂત્રકાર ગણુસંગ્રહ સૂત્રનુ કથન કરે છે—"चत्तारि पुरिसजाया" ઇત્યાદિ—પુરુષોના નીચે પ્રમાણે ચાર પ્રકાર પણુ પડે છે--(૧) કોઇ પુરુષ ગણુસંગ્રહકર (ગચ્છ સંગ્રહકર) હોય છે એટલે કે દ્રવ્યની અપેક્ષાએ આહારાદિ દ્વારા અને ભાવની અપેક્ષાએ જ્ઞાનાદિ દ્વારા સંગ્રહ કરવાના સ્વભાવવાળો હોય છે, પણુ માનકર હોતો નથી (૨) કોઈ એક પુરુષ માનકર હોય છે પણુ ગણુસંગ્રહકર હોતો નથી (૩) કોઈ ગણુસંગ્રહકર પણુ હોય છે અને માનકર પણુ હોય છે. (૪) કોઇ ગણુસંગ્રહકર પણુ હોતો નથી અને માનકર પણુ હોતો નથી

'चत्तारि पुरिसजाया' इत्यादि—पुनः पुरुषजातानि चत्वारि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा—एको गणशोभाकरः—गणस्य=साधुसमुदायस्य—अनवद्यसाधुसामाचारी प्रवर्तनया चारित्र-धर्मोपदेशित्व-नैमित्तिकत्व-विद्यासिद्धत्वादिना या शोभा करो तीत्यवंशीलस्तथा भवति, किन्तु नो मानकरः अहङ्कारकारी न भवति विनैव प्रार्थनया गणशोभाकरणपरायणत्वाद् निरहङ्कारत्वाद्वा १, तथा—मानकरो नामैको नो गणशोभाकरः २, एको गणशोभाकरोऽपि मानकरोऽपि ३, एको नो गणशोभाकरो नो मानकरः ४। इति।

"चत्तारि पुरिसजाया" इत्यादि—पुनः पुरुषजातानि चत्वारि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा—एको गणशोधिकरः—गणस्य शोधि-समुचितप्रायश्चित्तदानादिना शोधनं

पुनश्च — "चत्तारि पुरिसजाया" — इत्यादि, पुरुष जात चार कहे गये हैं, जैसे—कोई एक पुरुष गण साधुसमुदाय की अनवद्य—निर्दोष साधु समाचारी की प्रवर्तना से, चारित्र गुण से, धर्मोपदेश करने से, नैमित्तिकत्व से, या—विद्यासिद्धित्व आदि से शोभा करने का स्वभाव वाला होता है, किन्तु—"नो मानकर" मानकर नहीं होता है इस बात का अभिमान करने का स्वभाव वाला नहीं होता है, क्योंकि—वह बिना कहे सुने ही गण की शोभा करने में तल्लीन रहता है, अथवा अहङ्कार बिना का होता है ऐसा यह प्रथम भंग है १ कोई पुरुष मानकर होता है गण शोभाकर नहीं, २ कोई एक गण की शोभाकर भी होता है और—मानकर भी, ३ कोई एक न गणकी शोभाकर होता है और—न मानकर ही होता है, ४ "चत्तारि पुरिसजाया"—पुनश्च—पुरुष जात चार कहे गये हैं, जैसे—कोई एक गण

"चत्तारि पुरिसजाया' આ પ્રકારે પુરુષોના ચાર પ્રકાર પડે છે—(૧) કોઈ એક પુરુષ અનવદ્ય (નિર્દોષ) સાધુ સમાચારીની પ્રવર્તના દ્વારા ચારિત્ર ગુણ દ્વારા ધર્મોપદેશ દ્વારા નૈમિત્તિકત્વ વડે, અથવા વિદ્યાસિદ્ધિત્વ આદિ વડે ગણની (સાધુસમુદાયની) શોભા વધારનાર હોય છે પરન્તુ 'નો માનકરઃ' (એ વાતનું અભિમાન કરનાર) હોતો નથી કારણ કે તે કોઈની વિનંતિની અપેક્ષા રાખ્યા વિના ગણની શોભા વધારવાને તત્પર રહે છે અને તેનામાં અહંકાર હોતો નથી (૨) કોઈ પુરુષ માનકર હોય છે પણ ગણશોભાકર હોતો નથી (૩) કોઈ પુરુષ ગણશોભાકર પણ હોય છે અને માનકર પણ હોય છે (૪) કોઈ પુરુષ ગણશોભાકર પણ હોતો નથી અને માનકર પણ હોતો નથી.

ચત્તારિ પુરિસજાયા પુરુષના નીચે પ્રમાણે ચાર પ્રકાર પણ પડે છે—કોઈ એક પુરુષ ગણશોધિકર હોય છે એટલે કે સમુચિત પ્રાયશ્ચિત્ત

करोतीत्येवंशीलस्तथा भवति, यद्वा--अकल्पनीयत्वसंशयाधिष्ठिते भक्तपानादौ अनभ्यर्थित एव गृहस्थगृहं गत्वा पृच्छादिना गणस्य भक्तादिपदार्थस्य शुद्धिं करोतीत्येवंशीलस्तथा भवति, किन्तु नो मानकरो भवति १, तथा-मानकरो नामैको नो गणशोधिकरः २, तथा-एको गणशोधिकरोऽपि मानकरोऽपि ३, तथा-एको नो गणशोधिकरो नो मानकरः ४।

"चत्तारि पुरिसजाया" इत्यादि-पुनः पुरुषजातानि चत्वारि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा-एको रूपं-साधूनां वेषं जहाति-राजादिकारणेन त्यजति, किन्तु नो धर्म-

---

शोधि कर होता है, समुचित प्रायश्चित्त दान आदि द्वारा गण की शुद्धि करने का स्वभाव वाला होता है, यद्वा आहारादि में, अकल्पनीयता की संशीति (संदेह) हो जाने पर विना कहे सुने ही जो गृहस्थके घर पर जा कर उसका निर्णय कर के उस गण सम्बन्धी आनीत भक्तादि पदार्थ की शुद्धि करने का स्वभाव वाला होता है, किन्तु-"नो मानकरः" मानकर नहीं होता है, १ मान करने का स्वभाव वाला नहीं होता है, १ कोई एक पुरुष मानकर होता है पर-गणशोधि कर नहीं होता है, २ कोई एक ऐसा होता है जो गण शोधिकर भी होता है और-मान: कर भी होताहै, ३ और-कोई एक न तो गणशोधिकर होताहै, न मानकर ही होता है, ४। पुनश्च-"चत्तारि पुरिसजाया"-इत्यादि. पुरुष जात चार कहे गये हैं, जैसे-कोई एक पुरुष राजादि विशेष कारण

આદિ દ્વારા ગણુની શુદ્ધિ કરવાના સ્વભાવવાળો હોય છે, અથવા આહારાદિમાં અકલ્પનીયતાનો સદેહ ઉત્પન્ન થતાં જ કોઇના કહેવાની રાહ જોયા વિના, ગૃહસ્થને ઘેર જઇને તેનો નિર્ણય કરીને, તે ગણુને માટે વહોરી લાવવામાં આવેલ આહારપાણીની શુદ્ધિ કરવાના સ્વભાવવાળો હોય છે. પણ "नो मानकर." પણ માનકર હોતો નથી-અહંકાર કરવાના સ્વભાવવાળો હોતો નથી. (૨) કોઇ પુરુષ માનકર હોય છે પણ ગણુશોધિકર હોતો નથી. (૩) કોઈ ગણુશોધિકર પણ હોય છે અને માનકર પણ હોય છે (૪) કોઈ ગણુશોધિકર પણ હોતો નથી અને માનકર પણ હોતો નથી.

"चत्तारि पुरिसजाया" પુરુષના નીચે પ્રમાણે ચાર પ્રકાર પડે છે—(૧) કોઇ એક સાધુ એવો હોય છે કે જે રાજાદિના ભયના કારણે વેષનો ત્યાગ કરે છે, પણ ચારિત્ર ધર્મનો ત્યાગ કરતો નથી. (૨) કોઈ એક સાધુ

चारित्रलक्षणं त्यजति बोटिकमध्यस्थित बोटिकवेषधारि (बौद्धसाधु) मुनिवत् १, एको धर्मं त्यजति नो रूपं, निह्नववत् २, एको रूपधर्मौ अपि त्यजति उत्प्रव्रजितवत्–भूत पूर्व गृहीतसंयमगृहस्थवत् ३, एको नो रूपं जहाति नो धर्मं जहाति सुसाधुवत् ४।

से वेष को छोडता है चारित्र धर्म नहीं, १ बोटिक (बौद्ध) वेषधारी बोटिक मध्य में स्थित मुनि जैसे। कोई एक धर्म छोडता है वेष नहीं, २ निह्नव जैसे। कोई एक दोनों को छोड देता है, ३ गृहस्थ के जैसे। कोई एक धर्म, और वेष में एक को भी नहीं छोडता है, ४ सच्चे साधु जैसे। पुनश्च–" चत्तारि पुरिसजाया "–पुरुषजात चार होते हैं, जैसे–" जिनाज्ञा धर्म का परित्याग कर देता है पर–गच्छ मर्यादा नहीं " तात्पर्य है कि– ' योग्य साधु समुदाय को श्रुत देना चाहिये ' तीर्थंकर की आज्ञा है, इस आज्ञा की उपेक्षा कर के बृहत्कल्पादि विशिष्ट श्रुत अन्य गच्छवाले साधु को नहीं देता है प्रवर्तक द्वारा प्रवर्तित अपनी ऐसी गच्छ मर्यादा का अनुसरण करता है वह जिनाज्ञा विराधक होकर धर्म का परित्याग करता है पर गणस्थिति का परित्याग नहीं करता है ऐसा यह प्रथम भङ्ग है, १। कोई एक गणस्थिति का परित्याग करता है धर्म का नहीं, २ वह योग्य साधुओं को श्रुत देनेवाला होता है। कोई एक धर्म–और

એવો હોય છે કે જે ધર્મ છોડે છે પણ વેષ છોડતો નથી જેમકે નિહ્નવ (૩) કોઈ એક સાધુ વેષ પણ છોડે છે અને ધર્મ પણ છોડે છે (૪) કોઈ એક સાધુ વેષ પણ છોડતો નથી અને ધર્મ પણ છોડતો નથી જેમકે સત્ય સાધુ

"ચત્તારિ પુરિસજાયા" પુરુષના નીચે પ્રમાણે ચાર પ્રકાર પણ પડે છે—(૧) કોઈ એક પુરુષ એવો હોય છે કે જે ધર્મનો પરિત્યાગ કરે છે પણ ગણસ્થિતિનો પરિત્યાગ કરતો નથી—'જિનાજ્ઞાધર્મનો પરિત્યાગ કરી નાખે છે પણ ગચ્છમર્યાદાનો પરિત્યાગ કરતો નથી' આ કથનનો ભાવાર્થ નીચે પ્રમાણે છે—તીર્થંકરની એવી આજ્ઞા છે કે યોગ્ય સાધુ સમુદાયને શ્રુતદાન દેવુ જોઈએ. આ આજ્ઞાની ઉપેક્ષા કરીને બૃહત્કલ્પાદિ વિશિષ્ટ શ્રુતનું અન્ય ગચ્છવાળા સાધુને તે દાન દેતો નથી પણ પ્રવર્તક દ્વારા પ્રવર્તિત એવી પોતાની ગચ્છમર્યાદાનું તો અનુસરણ કરે છે આ પ્રકારનો સાધુ જિનાજ્ઞાનો વિરાધક હોવાને કારણે ધર્મનો પરિત્યાગ કરનારો ગણાય છે પણ ગણની મર્યાદાનું પાલન કરનારો હોવાને કારણે ગણસ્થિતિનો પરિત્યાગકર્તા ગણાતો નથી. (૨) કોઈ એક સાધુ ગણસ્થિતિનો પરિત્યાગ કરે છે પણ ધર્મનો પરિત્યાગ કરતો નથી તે યોગ્ય સાધુઓને શ્રુતદાન દેતો હોય છે (૩) કોઈ ધર્મ અને ગણ

"चत्तारि पुरिसजाया" इत्यादि–पुनः पुरुषजातानि चत्वारि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा–एको धर्म–जिनाज्ञारूपं जहाति–त्यजति, किन्तु नो गणसंस्थितिं गणस्य–स्वगच्छस्य संस्थितिं=स्वगच्छप्रवर्तकप्रवर्तितमर्यादां न जहाति । इहायं विवेकः–तीर्थङ्करा एवमुपदिशन्ति–' सर्वेभ्यो योग्यसाधुभ्यः श्रुतं दातव्यमिति तदाज्ञामुपेक्ष्य बृहत्कल्पादि विशिष्टश्रुतमन्यगच्छीयाय न देयमिति स्वगच्छप्रवर्तकप्रवर्तित-मर्यादामनुसरन् योऽन्यगच्छीयाय श्रुत न ददाति स धर्मं त्यजति, जिनाऽऽज्ञा विराधकत्वात्, नो गणसंस्थितिम्, इति प्रथमो भङ्ग । १ । एकः पुरुषो गणसंस्थितिं जहाति नो धर्मं, स च योग्येभ्यः श्रुतदायकः, इति द्वितीयः २। एको धर्मगणसंस्थित्युभयं जहाति, स चायोग्येभ्यः श्रुतदायकः इति तृतीयः । ३ । एको नो धर्मं जहाति नो गणसंस्थितिं, स च श्रुताव्यवच्छेदार्थपरगच्छस्थं साधुं स्वगणमर्यादायां संस्थाप्य श्रुतदायी । इति चतुर्थः । ४ ।

" चत्तारि पुरिसजाया " इत्यादि—पुनः पुरुषजातानि चत्वारि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा–एकः प्रियधर्मा–प्रियो धर्मो यस्य स तथा=प्रीतिभावेन सुखेन च धर्म-स्वीकारको भवति, किन्तु नो दृढधर्मा–दृढत्वाभावाद् विपदि धर्मात् प्रचलितो भवति,—

गण स्थिति दोनों का परित्याग करता है, ३ ऐसा वह-अयोग्यों को श्रुत देने वाला होता है, ३। कोई एक पुरुष न नो-धर्म का, न गण स्थिति का परित्याग करता है, ४। पुनश्च-" चत्तारि पुरिसजाया "-- इत्यादि, पुरुष जात चार कहे गयेहैं, जैसे-कोई एक पुरुष धर्मप्रिय होताहै-प्रीति भावसे सानन्द धर्मको स्वीकार कर लेताहै, किन्तु-'नो दृढ धर्मा,' विपत्तिमें धर्मसे विचलित हो जाताहै, अतः–दृढ धर्मा नहीं होता है, १। कोई एक पुरुष आपत् काल में भी अङ्गीकृत धर्म का परित्याग नहीं

સ્થિતિ બન્નેને। પરિત્યાગ કરે છે અયોગ્ય વ્યક્તિઓને શ્રુતદાન દેનારને આ પ્રકારમા મૂકી શકાય (૪) કોઇ એક સાધુ ધર્મને। પણ પરિત્યાગ કરતો નથી અને ગણુસ્થિતિને। પણ પરિત્યાગ કરતો નથી

" ચત્તારિ પુરિસજાયા ' પુરુષના નીચે પ્રમાણે ચાર પ્રકાર પણ કહ્યા છે—(૧) કોઈ એક પુરુષ ધર્મપ્રિય હોય છે-પ્રીતિભાવથી આનંદપૂર્વક ધર્મને સ્વીકારી લે છે, પરન્તુ " નો દૃઢધર્મા. " દૃઢધર્મા હોતો નથી–એટલે કે વિપત્તિમા ધર્મથી વિચલિત થઇ જનારો હોય છે.

तथा—एकः दृढधर्मा-आपद्यपि स्वीकृतधर्मो परित्यागेन स्थिरधर्मा भवति, किन्तु नो प्रियधर्मा-सुखेन धर्मस्वीकारी न भवति, यत स कष्टेन धर्म गृह्णाति, २। एकः प्रियधर्मोऽपि दृढधर्मोऽपि ३, एको नो प्रियधर्मा नो दृढधर्मा ४।

अस्यायमर्थः—द्वितीयो दुःखेन धर्ममुपयाति-धर्मग्रहण कार्येषु, तु=पुन रसौ गृहीत धर्म तीर=पार नयति=यावज्जीवन सविधि समनुतिष्ठतीति तृतीयः समयान्तः=प्रियधर्मत्व-दृढधर्मत्वोभयस्वभाव कल्याणः=शोभनो भवति ३। चरमः ...विमश्रतुर्थ प्रतिकुष्टः=निषिद्धो निवारित इत्यर्थः। सू० १९।

मूलम्—चत्तारि आयरिया पण्णत्ता, त जहा पव्वायणायरिए णाममेगे णो उवट्ठावणायरिए १, उवट्ठावणायरिए णाममेगे णो

करता है (स्थिर धर्मधारी होता है,) पर-सहसा सुख से धर्म का स्वीकार नहीं करता है, क्योंकि ऐसा व्यक्ति बहुत कुछ सोच समझ कर धर्म ग्रहण करता है, २ कोई एक प्रियधर्मा और दृढधर्मा भी होता है, ३ कोई एक पुरुष न तो प्रियधर्मा ही न दृढधर्मा ही होता है, ४। इसका तात्पर्य है-कि यहा जो द्वितीय पुरुष है वह-सरलतासे धर्मको नहीं ग्रहण करता है बहुत ही सोच समझ कर उसे स्वीकार करता है, और जब स्वीकार कर लेता है तो फिर यावज्जीवन उसका वह सविधि पालन करता। अ.प पदों का भाव सुगम है, ॥ सू० १० ॥

(२) કોઈ એક પુરુષ એવા હોય છે કે જે ગમે તેવી આફત આવે તો પણ ધર્મનો પરિત્યાગ કરતો નથી (સ્થિર ધર્મધારી હોય છે), પણ પૂર્ણ વિચાર કર્યા વિના ધર્મને અંગીકાર કરતો નથી (૩) કોઈ પુરુષ પ્રિય ધર્મા પણ હોય છે અને દૃઢ ધર્મા પણ હોય છે (૪) કોઈ પુરુષ પ્રિયધર્મા પણ હોતો નથી અને દૃઢધર્મા પણ હોતો નથી કહ્યું પણ છે કે—

અહી જે બીજા પ્રકારનો પુરુષ કહ્યો છે તે સરળતાથી ધર્મને ગ્રહણ કરતો નથી-ઘણો જ વિચાર કરીને ધર્મને સ્વીકારે છે આ રીતે ધર્મને સ્વીકાર્યા બાદ તે ગમે તેવી પરિસ્થિતિમાં પણ વિધિપૂર્વક, આજીવન તેનું પાલન કરે છે બાકીના પદોનો ભાવ સુગમ છે ॥ સૂ ૧૯ ॥

पव्वायणायरिए २, एगे पव्वायणायरिएवि उवट्ठावणायरिएवि ३, एगे णो पव्वायणायरिए णो उवट्ठावणायरिए धम्मायरिए ४।

चत्तारि आयरिया पण्णत्ता, तं जहा--उद्देसणायरिए णाममेगे णो वायणायरिए, धम्मायरिए० ४,

चत्तारि अंतेवासी पण्णत्ता, तं जहा--पव्वायणंतेवासी णाममेगे णो उवट्ठावणंतेवासी १, धम्मंतेवासी ४,

चत्तारि अंतेवासी पण्णत्ता, तं जहा--उद्देसणंतेवासी णाममेगे णो वायणंतेवासी १, धम्मंतेवासी० ४, । सू० २० ॥

छाया-चत्वार आचार्याः प्रज्ञप्ताः, तद्यथा प्रव्राजनाऽऽचार्यो नामैको नो उपस्थापनाऽऽचार्यः १, उपस्थापनाऽऽचार्यो नामैको नो प्रव्राजनाऽऽचार्यः २, एकः प्रव्राजनाऽऽचार्योऽपि उपस्थापनाऽऽचार्योऽपि ३, एको नो प्रव्राजनाऽऽचार्यो नो उपस्थापनाऽऽचार्यः धर्माऽऽचार्यः ४।

चत्वार आचार्याः प्रज्ञप्ता, तद्यथा-उद्देशनाऽऽचार्यो नामैको नो वाचनाऽऽचार्यः धर्माऽऽचार्यः ४।

चत्वारोऽन्तेवासिनः प्रज्ञप्ताः, तद्यथा-प्रव्राजनाऽन्तेवासी नामैको नो उपस्थापनाऽन्तेवासी १, धर्मान्तेवासी ४।

चत्वारोऽन्तेवासिनः प्रज्ञप्ताः, तद्यथा-उद्देशाऽन्तेवासी नामैको नो वाचनाऽन्तेवासी १, धर्मान्तेवासी० ४। ॥सू० २० ॥

टीका—" चत्तारि आयरिया " इत्यादि — आचार्याश्चत्वारः प्रज्ञप्ताः, तद्यथा-एक प्रव्राजनाऽऽचार्यः-प्रव्राजना-प्रव्रज्याप्रदानं तया आचार्यो भवति, किन्तु नो उपस्थापनाऽऽचार्यः-उपस्थापना-शिष्ये महाव्रताऽऽरोपणं तथा आचार्य

" चत्तारि आयरिया पण्णत्ता "--इत्यादि, २० ॥

आचार्य चार कहे गये हैं, जैसे — कोई एक आचार्य ऐसा होता है जो - प्रव्राजनाचार्य होता है - उपस्थापनाचार्य नहीं, १ दीक्षा देने द्वारा जो आचार्य होता है वह - प्रव्राजनाचार्य है, तथा-शिष्य में महाव्रतोंका आरोपक जो हो वह-उपस्था-

---

" चत्तारि आयरिया पण्णत्ता " ઇત્યાદિ (૨૦)

આચાર્યના નીચે પ્રમાણે ચાર પ્રકાર કહ્યા છે—(૧) કોઇ એક આચાર્ય એવા હોય છે કે જે પ્રવ્રજનાચાર્ય હોય છે, પણ ઉપસ્થાપનાચાર્ય હોતા

उपस्थापनाऽऽचार्यः शिष्ये महाव्रतानाऽऽरोपको न भवति इति प्रथमो भङ्गः ।१। एक उपस्थापनाऽऽचार्यो भवति न तु प्रव्राजनाऽऽचार्यः । इति द्वितीयः ।२। एक उभयाऽऽचार्यो भवति । इति तृतीयः ।३। एको नोभयाचार्यः, स हि धर्माऽऽचार्यो भवति । इति चतुर्थः ।४।

"चत्तारि आयरिया" इत्यादि—पुनराचार्याश्चत्वारः प्रज्ञप्ताः तद्यथा—एक उद्देशनाऽऽचार्यः—उद्देशनम्-अङ्गादिपठनाधिकारित्वकरणम्, तेन तत्र वाऽऽ

पनाचार्य है, अर्थात्-छेदोपस्थापनीय चारित्र देनेवाला उपस्थापनाचार्य है। कोई एक आचार्य शिष्य में महाव्रतों का आरोपण करने से उपस्थापनाचार्य होता है, प्रव्राजनाचार्य नहीं, २ ऐसा द्वितीय भङ्ग है। तथा-कोई एक प्रव्रजना से, और शिष्य में महाव्रतों की आरोपणासे दोनों तरहोंसे आचार्य होता है, ३ ऐसा तृतीय भङ्ग है। तथा-कोई एक आचार्य न तो प्रव्राजना से, न उपस्थापनासे आचार्य होता है, ४ यह चतुर्थ भङ्ग है। कहा भी है " धम्मो जेणुवइट्ठो " इत्यादि पुनश्च- " चत्तारि आयरिया,-इत्यादि आचार्य चार प्रकार के होते हैं, जैसे-कोई एक आचार्य ऐसा होता है जो, उद्देशनाचार्य होता है, आचाराङ्गादि ग्यारह अङ्गादिकों को पढने का अधिकारी करना, इसका नाम उद्देशन है, इस उद्देशन से अथवा-इस उद्देशन में जो आचार्य होता है वह-उद्देशनाचार्य है, किन्तु-वह वाचनाचार्य नहीं होता है १ ऐसा यह

નથી દીક્ષા અંગીકાર કરાવવાને લીધે આચાર્ય બનનારને પ્રવ્રજનાચાર્ય કહે છે તથા શિષ્યોમાં મહાવ્રતોનું આરોપણ કરનારને ઉપસ્થાપનાચાર્ય કહે છે એટલે કે છેદોપસ્થાપનીય ચારિત્ર દેનારને ઉપસ્થાપનાચાર્ય કહે છે (૨) કોઈ એક આચાર્ય શિષ્યોમાં મહાવ્રતોનું આરોપણ કરવાને કારણે ઉપસ્થાપનાચાર્ય હોય છે પણ પ્રવ્રજનાચાર્ય હોતા નથી (૩) કોઈ એક શિષ્યોને પ્રવ્રજિત કરવાને કારણે પ્રવ્રજનાચાર્ય પણ હોય છે અને મહાવ્રતોનું આરોપણ કરવાને કારણે ઉપસ્થાપનાચાર્ય પણ હોય છે (૪) કોઈ એક આચાર્ય પ્રવ્રાજનાની અપેક્ષાએ પણ આચાર્ય હોતા નથી અને ઉપસ્થાપનાની અપેક્ષાએ પણ આચાર્ય હોતા નથી

'ચત્તારિ આયરિયા' ઇત્યાદિ—આચાર્યના નીચે પ્રમાણે પણ ચાર પ્રકાર પડે છે—(1) કોઈ એક આચાર્ય એવા હોય છે કે જે ઉદ્દેશનાચાર્ય હોય છે પણ વાચનાચાર્ય હોતા નથી આ કથનનો ભાવાર્થ નીચે પ્રમાણે છે—આચારાંગાદિ અગિયાર અંગોનું અધ્યયન કરવાને અધિકારી કરવો તેનુ

चार्य उद्देशनाऽऽचार्यो भवति, किन्तु वाचनाऽऽचार्यो न भवति १, शेषास्त्रयो भङ्गाः सुगमाः ४। तत्रोभयरहितो धर्माऽऽचार्यो ज्ञेय इति ।

"चत्तारि अंतेवासी" इत्यादि अन्तेवासिनः–अन्ते=गुरोः सन्निधौ (गुरोराज्ञायां) वसन्तीत्येवंशीला अन्तेवासिनः=शिष्याः चत्वारः प्रज्ञप्ताः, तद्यथा-एकः प्रव्राजनया–दीक्षयाऽन्तेवासी तथा=दीक्षितो भवति, किन्तु नो उपस्थापनाऽन्तेवासी–उपस्थापना–पञ्चमहाव्रतसमारोपणा तत्र तया वाऽन्तेवासी तथा=महाव्रताऽऽरोपणाशिष्यो न भवति १, एकः उपस्थापनाऽन्तेवासी भवति परन्तु प्रव्राजनाऽन्तेवासी न

प्रथम भङ्ग है। इस सम्बन्ध के बाकी के तीन भङ्ग सुगम हैं। जैसे–कोई एक आचार्य ऐसा होता है जो वाचनाचार्य होता है उद्देशनाचार्य नहीं, २ कोई एक उद्देशनाचार्य और वाचनाचार्य भी होता है. ३ कोई एक न तो उद्देशनाचार्य न वाचनाचार्य ही होता है, ४ यह चतुर्थ भङ्ग है। "चत्तारि अंतेवासी "–अन्तेवासी चार होते हैं, गुरु की सेवा में रहने वाला शिष्य अन्तेवासी कहा जाताहै, कोई एक प्रव्राजनान्तेवासी होताहै पर उपस्थापनान्तेवासी नहीं होताहै, जो दीक्षासे अन्तेवासी होता है वह-प्रव्राजनान्तेवासी कहा गया है, और-जो पञ्चमहाव्रतों की आरोपणा में, या-आरोपणा से अन्तेवासी होता है वह-उपस्थापना अन्तेवासी कहा गया है, इस प्रकार का यह प्रथम भङ्ग है, १ कोई एक

નામ ઉદ્દેશન છે આ ઉદ્દેશનની અપેક્ષાએ અથવા આ ઉદ્દેશનમા જે આચાર્ય હોય છે તેને ઉદ્દેશનાચાર્ય કહે છે. અને સૂત્રાદિનુ પઠન (અધ્યયન) કરાવનારને વાચનાચાર્ય કહે છે.

કોઈ એક આચાર્ય એવાં હોય છે કે જે વાચનાચાર્ય હોય છે, પણ ઉદ્દેશનાચાર્ય હોતા નથી (૩) કોઇ એક આચાર્ય એવા હોય છે કે જે ઉદ્દેશનાચાર્ય પણ હોય છે અને વાચનાચાર્ય પણ હોય છે. (૪) કોઇ એક આચાર્ય ઉદ્દેશાચાર્ય પણ હોતા નથી અને વાચનાચાર્ય પણ હોતા નથી

"ચત્તરિ અંતેવાસી" ગુરુની સમીપે રહેનાર શિષ્યને અન્તેવાસી કહે છે તે અન્તેવાસીના નીચે પ્રમાણે ચાર પ્રકાર કહ્યા છે

(૧) કોઈ એક પ્રવ્રાજનાન્તેવાસી હોય છે પણ ઉપસ્થાપનાન્તેવાસી હોતો નથી જે શિષ્ય દીક્ષાને કારણે અન્તેવાસી ગણાય છે, તેને પ્રવ્રજનાન્તેવાસી કહે છે જે શિષ્ય પાચ મહાવ્રતોની આરોપણાને કારણે અન્તેવાસી ગણાય છે તેને ઉપસ્થાપનાન્તેવાસી કહે છે આ પહેલો ભાગો છે

भवति २, एकः प्रव्राजनान्तेवास्यपि उपस्थापनान्तेवास्यपि भवति ३, एको नो प्रव्राजनाऽन्तेवासी भवति नापि चोपस्थापनाऽन्तेवासी भवति, चतुर्थभङ्गस्य शिष्यो धर्मान्तेवासी धर्ममात्रस्वीकारे शिष्यो भवति, यद्वा धर्माभिलापितयोपागतश्चतुर्थो बोध्यः ४ इति ॥

" चत्तारि अंतेवासी " इत्यादि—पुनरन्तेवासिनश्चत्वारः प्रज्ञप्ताः, तद्यथा-एक उद्देशनान्तेवासी-उद्देशनेन-अङ्गादिपठनाधिकारित्वकरणेन शिष्यो भवति, किन्तु नो वाचनाऽन्तेवासी-वाचना-गुरुभ्यः श्रवणमधिगमो वा, तया यत्र वाऽन्तेवासी तथा न भवति १ एको वाचनाऽन्तेवासी भवति, नो उद्देशनाऽन्तेवासी

अन्तेवासीहै जो कि उपस्थापनासे अन्तेवासी होताहै प्रव्राजनासे नहीं, यह द्वितीय भङ्गहै, २ कोई एक अन्तेवासी ऐसा होताहै जो प्रव्राजनासे भी और-उपस्थापनासे भी, यह तृतीय भङ्ग है, ३ कोई एक प्रव्राजना से भी उपस्थापना से भी उभय या अन्तेवासी नहीं होता है, ऐसा वह शिष्य धर्मान्तेवासी होता है धर्म मात्र के स्वीकार से शिष्य होता है, ऐसा यह चौथा भङ्ग है, ४ जो धर्माभिलापा से युक्त हो कर गुरु के पास में शिष्यत्व अङ्गीकार करता है, वह भी इस चतुर्थ भङ्ग वाला होता है, । पुनश्च-" चत्तारि अंतेवासी-" अन्तेवासी चार कहे गये हैं, जैसे-कोई एक अन्तेवासी उद्देशनासे अङ्गादि पठनाऽधिकारित्व करने से अन्तेवासी-शिष्य होता है, पर वाचना से गुरु के पास श्रवण से या-अधिगमसे अन्तेवासी नहीं होताहै, ऐसा यह उद्देशनान्ते वासी नो वाचनान्ते वासी नामका प्रथम भङ्ग है, १ तथा-कोई एक अन्तेवासी

(२) કોઈ એક ઉપસ્થાપનાન્તેવાસી હોય છે, પણ પ્રવ્રજનાન્તેવાસી હોતો નથી (૩) કોઈ એક પ્રવ્રજના તેવાસી પણ હોય છે અને ઉપસ્થાપ નાન્તેવાસી પણ હોય છે (૪) કોઈ એક પ્રવ્રાજનાની અપેક્ષાએ પણ અન્તે વાસી હોતો નથી અને ઉપસ્થાપનાની અપેક્ષાએ પણ અન્તેવાસી હોતો નથી એવા શિષ્યને ધર્માન્તેવાસી કહે છે, કારણ કે માત્ર ધર્મના સ્વીકારની અપે ક્ષાએ જ તે અન્તેવાસી બનાય છે

' ચત્તારિ અન્તેવાસી " અન્તેવાસીના નીચે પ્રમાણે ચાર પ્રકાર પણ કહ્યા છે-(૧) કોઈ એક અન્તેવાસી ઉદ્દેશનાન્તેવાસી હોય છે પણ વાચનાન્તે વાસી હોતો નથી એટલે કે અંગાદિનું પઠન કરવાને અધિકારી હોય છે પરન્તુ વાચનાની અપેક્ષાએ-ગુરુની સમીપે શ્રવણની અપેક્ષાએ અથવા અધિ ગમની અપેક્ષાએ અન્તેવાસી હોતો નથી. એવો આ ઉદ્દેશનાન્તેવાસી નો વચના ન્તેવાસી " આ પહેલો ભાંગો છે

२, एक उद्देशनाऽन्तेवास्यपि भवति वाचनाऽन्तेवास्यपि ३, एको नो उद्देशनाऽन्तेवासी नापिच वाचनाऽन्तेवासी भवति ४। तत्र चतुर्थभङ्गस्थोऽन्तेवासी को भवतीत्याह–" धम्मंतेवासी "–ति, धर्मान्तेवासी–धर्मशिष्यः, धर्ममात्राभिलापितयोपपन्नो वा । ४ । इति ॥ सू० २० ॥

मूलम्--चत्तारि णिग्गंथा पण्णत्ता, तं जहा--राइणिये समणे णिग्गंथे महाकम्मे महाकिरिए अणायावी असमिए धम्मस्स अणाराहए भवइ १, राइणिए समणे णिग्गंथे अप्पकम्मे अप्पकिरिये आयावी समिए धम्मस्स आराहए भवइ २, ओमराइणिए समणे णिग्गंथे महाकम्मे महाकिरिए अणायावी असमिए धम्मस्स अणाराहए भवइ ३, ओमराइणिए समणे णिग्गंथे अप्पकम्मे अप्पकिरिए आयावी समिए धम्मस्स आराहए भवइ४।

चत्तारि णिग्गंथीओ पण्णत्ताओ, तं जहा--राइणिया समणी णिग्गंथी एवं चेव ४,

---

वाचनान्तेवासी होता है-उद्देशनान्तेवासी नहीं, ऐसा यह द्वितीय भङ्ग है, तथा–कोई एक अन्तेवासी उद्देशनसे भी–वाचनासे भी अन्तेवासी होता है, ३ यह तृतीय भङ्ग है । एव-कोई एक अन्तेवासी न तो उद्देशना से, और–न वाचना से ही अन्तेवासी होता है, ऐसा अन्तेवासी धर्मशिष्य होता है, धर्ममात्र की अभिलाषा से युक्त हो कर वह शिष्य बनता है, ऐसा यह चतुर्थ भङ्ग है, ४॥ सू०२०॥

---

(२) કોઈ એક અન્તેવાસી વચનાન્તેવાસી હોય છે, પણ ઉદ્દેશનાન્તેવાસી હોતો નથી. (૩) કોઈ એક અન્તેવાસી ઉદ્દેશનાન્તેવાસી પણ હોય છે અને વાચનાન્તેવાસી પણ હોય છે (૪) કોઈ એક શિષ્ય ઉદ્દેશનાન્તેવાસી પણ હોતો નથી અને વાચનાન્તેવાસી પણ હોતો નથી એવો અન્તેવાસી ધર્મ-શિષ્ય હોય છે. માત્ર ધર્મની અભિલાષાથી યુક્ત થવાને કારણે જ તે શિષ્ય બન્યો હોય છે. ॥ સૂ. ૨૦ ॥

चत्तारि समणोवासगा पण्णत्ता, तं जहा राइणिए समणोवासए महाकम्मे तहेव ४,

चत्तारि समणोवासियाओ पण्णत्ताओ, तं जहा-राइणिया समणोवासिआ महाकम्मा तहेव चत्तारि गमा। सू० २१ ॥

छाया-चत्वारो निर्ग्रन्थाः प्रज्ञप्ताः, तद्यथा-रात्निकः श्रमणो निर्ग्रन्थो महाकर्मा महाक्रियः अनातापी असमितो धर्मस्यानाराधको भवति १, रात्निकः श्रमणो निर्ग्रन्थोऽल्पकर्माऽल्पक्रिय आतापी समितो धर्मस्याऽऽराधको भवति २, अवमरात्निकः श्रमणो निर्ग्रन्थो महाकर्मा महाक्रियोऽनातापी असमितो धर्मस्याऽऽराधको भवति ३, अवमरात्निकः श्रमणो निर्ग्रन्थोऽल्पकर्माऽल्पक्रिय आतापी समितो धर्मस्याऽऽराधको भवति ४।

चतस्रो निर्ग्रन्थ्यः प्रज्ञप्ताः, तद्यथा-रात्निकी श्रमणी निर्ग्रन्थी एवमेव ४,
चत्वारः श्रमणोपासकाः प्रज्ञप्ताः, तद्यथा-रात्निकः श्रमणोपासको महाकर्मा तथैव ४।

चतस्रः श्रमणोपासिकाः प्रज्ञप्ताः, तद्यथा-रात्निकी श्रमणोपासिका महाकर्मा तथैव चत्वारो गमाः। सू० २१ ॥

टीका—" चत्तारि णिग्गथा " इत्यादि-निर्ग्रन्थाः-बाह्याभ्यन्तरग्रन्थरहिताः साधवश्चत्वार प्रज्ञप्ताः, तद्यथा-रात्निकः-रत्नैः-भावतो ज्ञानादिलक्षणै र्व्यवहरतीति रात्निक-ज्ञानादिरत्नव्यवहारसम्पन्नो बृहत्पर्यायः पर्यायज्येष्ठ इत्यर्थः,

टीकार्थ-" चत्तारि णिग्गथा पण्णत्ता '-इत्यादि-। २१ ॥

निर्गन्थ चार प्रकार के कहे गये हैं, जैसे - कोई एक निर्ग्रन्थ श्रमणरात्निक पर्याय ज्येष्ठ होता है, दीक्षापर्याय की अपेक्षा ज्येष्ठ होता है, तपश्चरणशील होता है निर्ग्रन्थ

' चत्तारि णिग्गंथा पण्णत्ता " ઈત્યાદિ—(૨૧)

શ્રમણ નિર્ગ્રંથના નીચે પ્રમાણે ચાર પ્રકાર કહ્યા છે—

(૧) કોઈ એક શ્રમણ નિર્ગ્રંથ રાત્નિક હોય છે એટલે કે દીક્ષાપર્યાયની અપેક્ષાએ જ્યેષ્ઠ હોય છે, તપશ્ચરણશીલ હોય છે બાહ્ય અને આભ્યન્તર પરિગ્રહોથી રહિત હોય છે, પરન્તુ જ્ઞાનાવરણીય આદિ કર્મોની સ્થિતિની

श्रमणः-तपश्चरणशीलः, निर्ग्रन्थः, महाकर्मा-महान्ति-गुरूणि स्थित्यादिभिस्ता-दृशप्रमादलक्षितानि कर्माणि=ज्ञानाऽऽवरणीयादीनि यस्य स तथा, महाक्रियः= महती-बृहती क्रिया-कर्मबन्धहेतुभूता कायिक्यादिका यस्य स तथा, अनातापी-आसमन्तात् तापयति-शीतोष्णादिसहनलक्षणमातापनां करोतीत्येवंशील आतापी, न आतापीत्यनातापी=शीतोष्णादिपरीषहसहनकरणवर्जितः मन्दश्रद्धत्वात्, अत एव असमितः-समितिभिः ऐर्यापथिक्यादिभीरहितः साधुः धर्मस्य-दुर्गतिपतज्जन्तुसमुद्धरणपरायणस्य चारित्रलक्षणस्य अनाराधकः-आराधयतीत्याराधकः स न भवतीति तथा भवति, इति प्रथमो निर्ग्रन्थो ज्ञेयः । १ ।

तथा-रात्निकः-पर्यायज्येष्ठः श्रमणो निर्ग्रन्थोऽल्पकर्मा-लघुकर्मा, अल्पक्रियः-अल्पा क्रिया कायिक्यादिका यस्य स तथा, आतापी-परीषहसहनधीरः,

---

बाह्य-आभ्यन्तर परिग्रहसे रहित होता है, परन्तु फिरभी वह ज्ञानावरणीयादि कर्मोंकी स्थितिकी अपेक्षासे महा कर्मा होताहै कर्मबन्ध हेतुभूत प्राणातिपात आदि कायिकी क्रियाएँ जिसकी महती होती है. मन्दश्रद्धावाला होनेसे शीत उष्ण आदि परीषहोंको जीतनेसे रहित होता है असमित होता है-ईर्यापथिकी आदि समितियोंके पालनेसे विहीन होता है और इसीसे दुर्गतिमें पडते हुवे जीवोंके उद्धरण करनेमें तत्पर ऐसे चारित्ररूप धर्मका वह आराधक नहीं होता है ऐसा वह प्रथम प्रकारका निर्ग्रन्थ है-१ कोई एक श्रमण निर्ग्रन्थ रात्निक दीक्षापर्यायकी अपेक्षा ज्येष्ठ होताहै श्रमण-तपश्चरणशील होताहै निर्ग्रन्थ बाह्य आभ्यन्तर परिग्रहका त्यागी होता है, पर लघुकर्मा होता है, कायिकी आदि अल्प क्रियावाला होता है, आतापी होता है, परीषहोंको सहनेमें धीर

અપેક્ષાએ તે મહાકર્મા હોય છે તે કારણે કર્મબન્ધના કારણ રૂપ પ્રાણાતિપાત આદિ કાયિકી ક્રિયાઓથી અધિક પ્રમાણમા તે યુક્ત હોય છે, મન્દ શ્રદ્ધાવાળો હોવાને કારણે શીત, ઉષ્ણ આદિ પરીષહોને જીતવાને અસમર્થ હોય છે, અસમિત હોય છે-ઈર્યાપથિકી આદિ સમિતિઓના પાલનથી વિહીન હોય છે અને તે કારણે દુર્ગતિમા પડતા જીવોનો ઉદ્ધાર કરવાને સમર્થ એવા ચારિત્રરૂપ ધર્મનો તે આરાધક હોતો નથી આ પહેલા પ્રકારનો નિર્ગ્રંથ સમજવો.

(૨) કોઈ એક શ્રમણ નિર્ગ્રંથ રાત્નિક હોય છે-દીક્ષાપર્યાયની અપેક્ષાએ જ્યેષ્ઠ હોય છે, તપશ્ચરણ શીલ હોય છે અને બાહ્ય-આભ્યન્તર પરિગ્રહનો ત્યાગી હોય છે, પરન્તુ તે લઘુકર્મા હોય છે કાયિકી આદિ અલ્પ ક્રિયાવાળો હોય છે, આતાપી હોય છે-પરીષહોને સહન કરવામાં ધીરવીર હોય છે, અને

अत एव समित–समितिगुणसम्पन्नश्च भवन्नतो धर्मस्याऽऽराधको भवति २।
इति द्वितीयो निर्ग्रन्थः २। तथा–अवमरात्निकः–श्रमणो–लघु पर्यायेण स चासौ
रात्निकोऽवमरात्निकः–लघुपर्यायः, श्रमणो निर्ग्रन्थो महाकर्मा महाक्रियोऽनातापी
अत एवासमितो भवन्नत एव च धर्मस्याऽनाराधको भवति। इति तृतीयो निर्ग्रन्थः
३। तथा–अवमरात्निक –लघुरात्निक श्रमणो निर्ग्रन्थोऽल्पकर्माऽल्पक्रिय आतापी
अत एव समितोऽत एव धर्मस्याऽऽराधको भवति। इति चतुर्थो निर्ग्रन्थः। ४।

वीर होता है, समित होता है–समिति गुण सम्पन्न होता है अत वह धर्माराधक होता है, यह द्वितीय प्रकारका श्रमणनिर्ग्रन्थ है–२ कोई एक श्रमण निर्ग्रन्थ दीक्षापर्यायकी अपेक्षा लघुपर्यायवाला होता है तपश्चरणशील होता है बाह्य–आभ्यन्तर परिग्रहसे रहित होता है, फिरभी महाकर्मा होता है, महा क्रियावाला होता है, अनातापी होता है, अतएव—असमित होता है और इसी कारण वह धर्मका आराधक नहीं होता है—ऐसा यह तृतीय प्रकारका श्रमण निर्ग्रन्थ है–३ कोई एक श्रमण निर्ग्रन्थ अवमरात्निक होता है–दीक्षापर्यायकी अपेक्षा लघु पर्यायवाला होता है तपश्चरणशील होता है बाह्याऽभ्यन्तर परिग्रहका त्यागी होता है, पर वह अल्प कर्मा होता है, अल्प क्रियावाला होता है आतापी होता है, समित होता है, इसलिये वह धर्मका आराधक होता है–४।

સમિત હોય છે-ઇર્યાસમિતિ આદિ સમિતિઓનું પાલન કરનાર હોય છે, તે કારણે તે નિર્ગ્રંથ ધર્મારાધક હોય છે બીજા પ્રકારના શ્રમણ નિર્ગ્રંથોના આ લક્ષણો સમજવા

હવે ત્રીજા પ્રકારના શ્રમણ નિર્ગ્રંથના લક્ષણો બતાવવામાં આવે છે- કોઈ એક શ્રમણ નિર્ગ્રંથ દીક્ષાપર્યાયની અપેક્ષાએ લઘુપર્યાયવાળો હોય છે, તપશ્ચરણશીલ હોય છે અને બાહ્ય–આભ્યન્તર પરિગ્રહોથી રહિત હોય છે, પરન્તુ તે મહાકર્મા હોય છે મહાક્રિયાવાળો હોય છે અનાતાપી હોય છે, પરીષહોને સહન કરવાને અસમર્થ હોય છે, તે કારણે તે અસમિત હોય છે અને એજ કારણે તે ધર્મનો આરાધક હોતો નથી.

ચોથા પ્રકારના શ્રમણ નિર્ગ્રંથના લક્ષણો હવે પ્રકટ કરવામાં આવે છે—કોઈ એક શ્રમણ નિર્ગ્રંથ 'અવમરાત્નિક' હોય છે એટલે કે લઘુ દીક્ષાપર્યાયવાળો હોય છે, તપશ્ચરણશીલ હોય છે અને બાહ્ય–આભ્યન્તર પરીગ્રહનો ત્યાગી હોય છે પરન્તુ તે લઘુકર્મા હોય છે અલ્પક્રિયાવાળો હોય છે પરીષહોને સહન કરનારો હોય છે અને સમિત હોય છે તે કારણે તે ધર્મનો આરાધક હોય છે

"चत्तारि णिग्गंथीओ" इत्यादि—एतद्विवरणं निर्ग्रन्थसूत्रवद्बोध्यम्, इत्यत आह–"एवं चेव"–एवमेव–निर्ग्रन्थवदेव भङ्गचतुष्टय भणनीयम्।

"चत्तारि समणोवासगा" इत्यादि—एतदपि श्रमणोपासकसूत्रं निर्ग्रन्थसूत्रवद् बोध्यम्, इत्यत आह–"तहेवे"–ति–तथैव–यथा निर्ग्रन्था उक्तास्तथैव श्रमणोपासका अपि चतुर्भङ्गीयुक्ता बोध्या इति।

संक्षेपसे श्रमण निर्ग्रन्थोंके चार भेद इस प्रकारसे हैं—कोई एक श्रमण निर्ग्रन्थ दीक्षापर्यायकी अपेक्षा ज्येष्ठ होता हुवाभी अनाराधक होता है–१ कोई एक श्रमण निर्ग्रन्थ दीक्षापर्यायकी अपेक्षा ज्येष्ठ हुवाभी आराधक होता है–२।

कोई एक श्रमण निर्ग्रन्थ दीक्षापर्यायकी अपेक्षा लघु हुवाभी अनाराधक होता है–३ और एक श्रमण निर्ग्रन्थ दीक्षापर्यायकी अपेक्षा लघु हुवाभी आराधक होता है–४ "चत्तारि णिग्गंथीओ" इत्यादि.

इस सूत्रका विवरण निर्ग्रन्थ सूत्र जैसा जानना चाहिये अतः पूर्वोक्त रूपसेही यहां भङ्ग चतुष्ट्य कर लेना चाहिये। "चत्तारि समणोवासगे" इत्यादि इस श्रमणोपासक सूत्रकी व्याख्या भी पूर्वोक्त निर्ग्रन्थ सूत्रकी तरह करलेनी चाहिये इसीलिये तहेव ऐसा कहते हुवे सूत्रकार प्रकट करते हैं कि श्रमणोपासकभी निर्ग्रन्थोंके समानही चतु-

---

હવે શ્રમણ નિર્ગ્રંથોના ચાર ભેદ સંક્ષિપ્તમાં પ્રકટ કરવામાં આવે છે

(૧) દીર્ઘ દીક્ષા પર્યાયવાળો પણ અનારાધક હોય એવો શ્રમણ નિર્ગ્રંથ.

(૨) દીર્ઘ દીક્ષાપર્યાયવાળો પણ આરાધક હોય એવો શ્રમણ નિર્ગ્રંથ.

(૩) લઘુ દીક્ષાપર્યાયવાળો પણ અનારાધક હોય એવો શ્રમણ નિર્ગ્રંથ.

(૪) લઘુ દીક્ષાપર્યાયવાળો પણ આરાધક હોય એવો શ્રમણ નિર્ગ્રંથ.

"चत्तारि णिग्गथीओ" ઇત્યાદિ—

ચાર પ્રકારની શ્રમણ નિર્ગ્રંથિણીઓ (સાધ્વીઓ) હોય છે આ સૂત્રનું વિવરણ નિર્ગ્રંથ સૂત્ર અનુસાર કરવુ જોઈએ. એટલે કે આ સૂત્રમાં નિર્ગ્રંથના જે ચાર પ્રકારો કહ્યા છે, એવા જ પ્રકારો શ્રમણ નિર્ગ્રંથિણીના પણ સમજી લેવા.

"चत्तारि समणोपासगे" ઇત્યાદિ—

શ્રમણોપાસકોના પણ ચાર પ્રકાર કહ્યા છે શ્રમણ નિર્ગ્રંથના જે પ્રકાર આગળ કહેવામાં આવ્યા છે, એવા જ ચાર પ્રકાર શ્રમણોપાસકોના પણ સમજવા. "तहेव" આ પદ દ્વારા એ વાત જ પ્રકટ કરવામાં આવી છે કે શ્રમણોપાસકો પણ શ્રમણનિર્ગ્રંથોની જેમ ચાર પ્રકારના હોય છે.

" चत्तारि समणोवासिया " इत्यादि—एतदपि निर्ग्रन्थसूत्रवत् बोध्यम्, अत आह–" तहेव चत्तारि गमा "–तथैव–निर्ग्रन्थसूत्रे यथा चत्वारो गमाः= आलापका–भङ्गा उक्तास्तथा श्रमणोपासिकासूत्रेऽपि चत्वार आलापका भणनीयाः। ॥ सू० २१ ॥

मूलम्—चत्तारि समणोवासगा पण्णत्ता, त जहा अम्मा पिउसमाणे १, भाईसमाणे २, मित्तसमाणे ३ सवत्तिसमाणे ४,।१।

चत्तारि समणोवासगा पण्णत्ता, त जहा–अद्दागसमाणे १, पडागसमाणे २, खाणुसमाणे ३, खरकटकसमाणे ४।२। ॥ सू० २२ ॥

छाया—चत्वारः श्रमणोपासकाः प्रज्ञप्ता, तद्यथा–मातापितृसमान १ भ्रातृसमानः २, मित्रसमानः ३, सपत्नीसमानः ४।

भंगो युक्त होते है। " चत्तारि समणोवासिया " इत्यादि इस सूत्रका कथनभी निग्रंथ सूत्र जैसा करलेना चाहिये निर्ग्रन्थ सूत्रमें जिस प्रकारसे चार आलापक कहे गये हैं उसी प्रकारसे श्रमणोपासिका सूत्रमेंभी चार आलापक करलेना चाहिये ॥सू०२१॥

" चत्तारि समणोवासगा पण्णत्ता " इत्यादि–२२

सूत्रार्थ–श्रमणोपासक चार प्रकारके कहे गयेहैं, जैसे कोई एक श्रमणो पासक माता–पिताके जैसा होता है–१ कोई एक श्रमणोपासक अपने भाईके समान होता है–२ कोई एक श्रमणोपासक मित्रके समान होता है–३ और कोई एक श्रमणोपासक सपत्नीके समान होता

" चत्तारि समणोवासिया " ઇત્યાદિ—શ્રમણોપાસિકા (શ્રાવિકા)ના પણ ચાર પ્રકાર કહ્યા છે શ્રમણ નિર્ગ્રંથના જેવા ચાર પ્રકાર કહ્યા છે એવા જ ચાર પ્રકાર શ્રમણોપાસિકાના પણ સમજવા નિર્ગ્રંથ સૂત્ર જેવું જ કથન શ્રમણોપાસિકા સૂત્રમાં પણ કહેવું જોઈએ. ॥ સૂ. ૨૧ ॥

"चत्तारि समणोवासगा पण्णत्ता" ઇત્યાદિ

સૂત્રાર્થ–શ્રમણોપાસકોના નીચે પ્રમાણે ચાર પ્રકાર પડે છે–(૧) કોઈ શ્રમણો પાસક માતાપિતા સમાન હોય છે (૨) કોઈ શ્રમણોપાસક ભાઈ જેવો હોય છે (૩) કોઈ શ્રમણોપાસક મિત્ર જેવો હોય છે (૪) કોઈ શ્રમણોપાસક સપત્નીના જેવો હોય છે–એટલે કે શોકયસમાન હોય છે

चत्वारः श्रमणोपासकाः प्रज्ञप्ताः, तद्यथा-आदर्शसमानः १, पताकासमानः २, स्थाणुसमानः ३, खरकण्टकसमानः ४।

टीका—" चत्तारि समणोवासगा " इत्यादि—श्रमणोपासकाः-श्रमणानुपासत इति श्रमणोपासकाः=साधुसेवाकारकाः श्रावका इत्यर्थः, चत्वारः प्रज्ञप्ताः, तद्यथा-मातापितृसमानः-माता च पिता चेति मातापितरौ तयोस्ताभ्यां वा समान स्तथा=मातापितरौ यथा स्वपुत्रे निर्हेतुकमत्यन्तं वात्सल्यं कुरुतस्तथा यः श्रावकः साधुषु कारणं विनैवैकान्तेन वात्सल्य करोति स मातापितृतुल्यो भवति, अपूर्वधर्मानुरागरञ्जितहृदयत्वात् १, तथा-भ्रातृसमानः भ्राता यथा प्रत्येक-

है-४ पुनश्च—श्रमणोपासक चार कहे गये हैं, जैसे कोई एक श्रमणोपासक आदर्शके समान होता है-१ कोई एक श्रमणोपासक पताका के समान होता है २, कोई एक श्रमणोपासक स्थाणु के समान होता है-३ कोई एक श्रमणोपासक खरकण्टकके समान होता है-४।

टीकार्थ-श्रमणोंकी जो उपासना करते हैं वे श्रमणोपासक हैं, अर्थात्-साधुजनोंकी सेवा करनेवाला श्रावक श्रमणोपासक हैं। इनमें जो चतुर्विधता है उसका तात्पर्य है कि जैसे मातापिता अपने पुत्रों पर अत्यन्त वात्सल्य रखते हैं उसी प्रकार जो श्रावक साधुओं पर विना कारणही एकान्त रूपसे वात्सल्य रखते हैं, वे श्रावक मातापिताके समान कहे गये हैं। क्योंकि इनका हृदय अपूर्व धर्मानुरागसे रञ्जित

શ્રમણોપાસકના નીચે પ્રમાણે ચાર પ્રકાર પણ પડે છે—(૧) કોઇ શ્રમણોપાસક આદર્શ (દર્પણ) સમાન હોય છે (૨) કોઈ શ્રમણોપાસક પતાકા સમાન હોય છે. (૩) કોઈ એક શ્રમણોપાસક સ્થાણું (વૃક્ષનું ઠુંઠું-થડ) સમાન હોય છે (૪) કોઇ એક શ્રમણોપાસક ખરકંટક (બાવળના કાંટા) સમાન હોય છે.

ટીકાર્થ—હવે આ સૂત્રનો સ્પષ્ટ કરવામાં આવે છે—શ્રમણોની ઉપાસના કરનારને શ્રમણોપાસક (શ્રાવક) કહે છે એટલે કે સાધુજનોની સેવા કરનાર શ્રાવકને શ્રમણોપાસક કહે છે હવે તેના ચાર પ્રકારનું સ્પષ્ટીકરણ કરવામાં આવે છે જેમ માતાપિતા પોતાના સતાનો પ્રત્યે અસીમ વાત્સલ્ય રાખે છે, એજ પ્રમાણે સાધુઓ પ્રત્યે કોઈ પણ પ્રકારની સ્પૃહા વિના અપાર વાત્સલ્ય રાખનાર શ્રાવકને માતાપિતા સમાન કહ્યો છે, કારણ કે તેનુ હૃદય અપૂર્વ ધર્માનુરાગથી રંજિત હોય છે. (૨) જેમ ભાઇ પ્રત્યેક કાર્યમાં સહાયક થાય

कार्ये सहायको भवति तथा साधूनां प्रत्येकधर्मकार्ये यः श्रावकः सहायको भवति स भ्रातृसमानः-बन्धुसदृश इत्यर्थः, भ्रातृमिव धर्मकार्यविषये स्मरणादिकं कर्तव्यम् उक्तं च—

" भवगिहमज्झम्मि पमायजलणजलिअम्मि ।
उट्ठवइ जो सुयंतं सो तस्स जणो परमबंधू ॥१॥

छाया—" भवगृहमध्ये प्रमादज्वलनज्वलिते ।
उत्थापयति यः स्वपन्तं स तस्य जनः परमबन्धुः ॥१॥ " इति ।२।

तथा-मित्रसमानः-मित्रतुल्यः-मित्रं यथा-सदा हितचिन्तकं भवति तथा य श्रावकः साधूनां सदा हितचिन्तको भवति स मित्रसमानः ३।

उक्तञ्च—" केन रत्नमिदं सृष्टं, मित्रमित्यक्षरद्वयम् ।
आपदां च परित्राणं संसारमलनाशनम् ।।१।। " इति ।

तथा—सपत्नीसमानः—सपत्नी—एकस्वामिका स्त्री तत्समानः, सपत्नी यथा सपत्न्या दूषणं गवेषयति अपकरोति च, तथा यः श्रावकः साधुषु दोषमन्वेषयति अपकरोति च स सपत्नीसमानो भवति ।४। ॥१॥

होता है-१ तथा जिस प्रकारसे भ्राता प्रत्येक कार्यमें सहायक होता है उसी प्रकारसे जो साधुजनोंके प्रत्येक धर्मकार्यमें सहायक होते हैं, वे श्रावक भ्राताके समान कहे गये हैं-२ परम बन्धुके विषयमें ऐसा कहा गया है " भवगिह मज्झम्मि "—इत्यादि

तथा जिस प्रकारसे हितचिन्तक मित्र होता है उसी प्रकारसे जो सदा साधुजनोंका हितचिन्तक होता है वे श्रावक मित्रके समान कहे गये हैं । कहामी है—" केन रत्नमिदं सृष्टं " इत्यादि । तथा जिस प्रकारसे सपत्नी (सौत) सपत्नीके दूषणोंकी ओर निगाह रखतीहै उनकी खोजमें रहती है उसका अपकार करती है, उसी प्रकारसे जो श्रावक

છે એજ પ્રમાણે પ્રત્યેક ધર્મકાર્યમાં સાધુજનોને સહાયભૂત બનાર શ્રાવકને ભ્રાતા સમાન કહ્યો છે ઉત્તમ ભ્રાતા વિષે આ પ્રમાણે કહ્યું છે—

" ભવગિહમજ્ઝમ્મિ " ઇત્યાદિ—

જેમ મિત્ર પોતાના મિત્રનો હિતચિન્તક હોય છે, એજ પ્રમાણે જે શ્રાવક સાધુજનોનો હિતચિન્તક હોય છે તેને મિત્ર સમાન શ્રમણોપાસક કહ્યો છે કહ્યું પણ છે કે–' કેન રત્નમિદં સૃષ્ટ " ઇત્યાદિ

જેમ સપત્ની બીજી સપત્નીનાં (શોકયના) દૂષણો જ શોધ્યા કરે છે, અને તેનો અપકાર જ કરે છે, એજ પ્રમાણે જે શ્રાવક સાધુજનોના દોષો જ

पुनः "चत्तारि समणोवासगा" इत्यादि—चत्वारः श्रमणोपासकाः प्रज्ञप्ताः, तद्यथा-आदर्शसमानः-आदर्शो-दर्पणः, तेन समानस्तथा=यथा-दर्पणः स्वसन्निहितानर्थान् प्रतिबिम्बितान् यथावत् प्रतिपद्यते, तथा यः श्रावकः साधुभिरुपदिश्यमानान् उत्सर्गापवादादीन् भावान् प्रतिपद्यते-स्वीकरोति स आदर्शसमानः १।

तथा-पताकासमानः-पताका यथा विचित्रपवनेन सर्वतश्चाल्यते तथा यस्य श्रावकस्यानवस्थितबोधो विचित्रदेशनया चाल्यते स पताकासमानः २। तथा-स्थाणुसमानः-तिष्ठतीति स्थाणुः-शङ्कुः, तत्समानः-स्थाणुर्यथा न नम्रीक्रियते नापि चाल्यते तथा यः श्रावकः सुगुरुदेशनया कुतश्चिदपि कदाग्रहान्न नम्री क्रियते

साधुजनोंके दोषोंकाही अन्वेषण किया करते हैं उनकी बुराई-या अपकार करते हैं वे श्रावक सपत्नी समान कहे गये हैं। पुनश्च—आदर्श नाम दर्पण (ऐनक) जैसे अपने समीपवर्ती पदार्थोंके प्रतिबिम्बको धारण करता है उसी प्रकार साधुजन द्वारा उपदिष्ट या उपदिश्यमान उत्सर्ग और अपवादरूप भावोंको जो श्रावक यथावत् स्वीकार करता है वह आदर्शका समान कहा गया है-१ तथा पताका जिस प्रकार विचित्र पवन द्वारा सब ओर से चञ्चल करदी जाती है वैसे जिन श्रावकका अनवस्थित बोध विलक्षण देशनासे नयमिश्रित कथनसे चलायमान किया जा सके वह श्रावक पताका के समान कहा गया है-२ जैसे स्थाणु न कभी चलायमान किया जाता है और न कभी नमाया जा सकता है वैसे तो श्रावक सुगुरुकी देशनासे भी

શોધ્યા કરે છે, તેમનુ અહિત જ કરે છે અથવા તેમનો ઉપકાર કરે છે, એવા શ્રાવકને સપત્ની સમાન કહ્યો છે.

શ્રમણોપાસકોના આદર્શ સમાન આદિ ચાર પ્રકારોનું હવે સ્પષ્ટીકરણ કરવામા આવે છે—(૧) આદર્શ એટલે દર્પણ જેમ દર્પણ પોતાની સામેની વસ્તુઓના યથાર્થ પ્રતિબિંબને ધારણ કરે છે, એજ પ્રમાણે સાધુજનો દ્વારા ઉપદિષ્ટ અથવા ઉપદિશ્ય માન, ઉત્સર્ગ અને અપવાદ રૂપ ભાવોનો જે શ્રાવક યથાર્થ રૂપે સ્વીકાર કરે છે તે શ્રાવકને આદર્શ સમાન કહે છે. (૨) જેમ પતાકા પવન દ્વારા ચલાયમાન થાય છે-સ્થિરતા છોડીને ચચલતા સપન્ન બને છે, એજ પ્રમાણે જે શ્રાવકના અનવસ્થિત બોધને વિલક્ષણ દેશના દ્વારા નયમિશ્રિત કથન દ્વારા ચલાયમાન કરી શકાય છે તે શ્રાવકને પતાકા સમાન કહ્યો છે (૩) જેમ સ્થાણુને (વૃક્ષના ઠૂંઠાને) કદી ચલાયમાન કરી શકાતું નથી કે નમાવી શકાતું નથી, એજ પ્રમાણે જે શ્રાવક સુગુરુની દેશના સાભળવા

नापि च माल्यरो दुर्बोधत्वात् स स्थाणुसमानः ३। तथा-खरकण्टकसमानः-खरा -तीक्ष्णा कण्टका यस्मिन् तत् खरकण्टकं बर्बुरवृक्षशाखादि तस्य क्वचिदङ्गे वस्त्रे वा लग्न सत् केवलमङ्ग वा पटं सहसा मुञ्चति, अपि तु तन्मोचकपुरुषादिकं करादिपु कण्टकैर्विध्यति, यद्वा खरकण्टयति-छेदयन्त करोतीति खरकण्टं तदेव खरकण्टकम्-बब्बुरादिवस्तु तेन समानः खरकण्टकसमानः, यथा खरकण्टक संसर्गमात्रादेवापनयनकारक दोषयुक्तं करोति, तथा यः श्रावकः संसर्गमात्रात् साधु 'कुबोधकुशीलतादिजनकत्वेनोत्सूत्रप्ररूपकोऽयं' मित्याद्यसद्दोषप्रकल्पनया दोषवन्त करोति स खरकण्टकसमानः ।४। सू० २२ ।

अपने कदाग्रह अनुचित हठसे पीछे नहीं हटता-टलता है नम्रीभूत नहीं होता है ऐसा वह दुर्बोध्य श्रावक स्थाणु-टूठा वृक्षके समान है-३ जैसे तीक्ष्ण कांटोंसे भरपूर बबूल आदिका डाल यदि किसी अङ्गमें या कपडोंमें उलझ जाय तो वह सहसा अलग नहीं होती किन्तु उसे छुडानी पडती है ऐसी स्थितिमें वह छुडानेवालोंके हाथको भी बेधती है ऐसे पदार्थोंका नाम खरकण्टक है, जो श्रावक इसके समानताको धारण करे वह खरकण्टक समान है, जैसे खरकण्टक वस्तु संसर्ग मात्रसे दोषयुक्त बना देती है वैसे जो श्रावक अपने संसर्ग मात्रासेही उस साधुके असद्दोषोंकी उद्भावना करता हुआ "यह

છતાં પણ પોતાનો કદાગ્રહ છોડતો નથી-પોતાની અનુચિત વાતને જ પકડી રાખે છે-સહેજ પણ ઝૂકતો (નમ્રીભૂત) થતો નથી એવા શ્રાવકને સ્થાણુ સમાન કહે છે (૪) ખરકંટક સમાન શ્રમણોપાસકનો ભાવાર્થ—તીક્ષ્ણ કાંટાઓથી ભરપૂર બાવળ આદિની ડાળી કોઈ અંગમાં કે કપડામાં ભરાઈ જાય તો તે સરળતાથી અલગ થતી નથી પણ પ્રયત્નપૂર્વક તેને અલગ કરવી પડે છે અને એ વખતે અલગ કરવાનો પ્રયત્ન કરનારના હાથમાં પણ તે તીક્ષ્ણ કાંટા વાગી જાય છે આ પ્રકારના પદાર્થોને ખરકંટક કહે છે જે શ્રાવકનો સ્વભાવ આ ખરકંટકના જેવો હોય છે તેને ખર સમાન કહે છે જેમ ખરકંટકનો સ્પર્શ માત્ર જ દોષયુક્ત અથવા વ્યથાજનક થઈ પડે છે એજ પ્રમાણે ખરકંટક સમાન શ્રાવક પોતાના સંસર્ગ માત્રથી સાધુમાં અસદ્દોષોની (જે દોષનું અસ્તિત્વ જ ન હોય એવા દોષોની) ઉદ્ભાવના કરે છે "આ સાધુ કુબોધ, કુશીલતા આદિનો જનક હોવાથી ઉત્સૂત્ર પ્રરૂપક છે" ઇત્યાદિ રૂપે સાધુમાં ખોટા દોષોનું આરોપણ કરનાર હોય છે અને કંટકની જેમ

श्रमणोपासकप्रसङ्गाच्छ्रीमहावीरस्वामिनः श्रमणोपासकानामरुणाभविमानस्थितिं निरूपयितुमाह—

मूलम्—समणस्स णं भगवओ महावीरस्स समणोवासगाणं सोहम्मकप्पे अरुणाभे विमाणे चत्तारि पलिओवमाइं ठिई पण्णत्ता ॥ सू० २३ ॥

छाया—श्रमणस्य खलु भगवतो महावीरस्य श्रमणोपासकानां सौधर्मकल्पे अरुणाभे विमाने चत्वारि पल्योपमानि स्थितिः प्रज्ञप्ता । सू० २३ ॥

टीका—"समणस्स णं" इत्यादि-स्पष्टम्, नवरं-श्रमणोपासकानां दशानाम् आनन्द १ कामदेव २ गाथापतिचुलनीपितृ ३ सुरादेव ४ क्षुद्रशतक ५ गाथापति-कुण्डकौलिक ६ सद्दालपुत्र ७ महाशतक ८ नन्दिनीपितृ ९ शालेयिकापितॄणा १० मुपासकदशाङ्गोक्तानामिति ॥ सू० २३ ॥

कुबोध-कुशीलता आदिका जनकहोनेसे उत्सूत्र प्ररूपक है" इत्यादि रूपसे साधुको दोषवाला कर देता है वह खरकण्टक समानहै ॥सू०२२॥

अब सूत्रकार श्रमणोपासकके प्रसङ्गसेही श्री महावीरस्वामीके श्रमणोपासकोंकी विमानमें वर्तमानस्थितिका कथन करते हैं—

"समणस्स भगवओ" इत्यादि २३

श्रमण भगवान् महावीरके श्रमणोपासकोंको सौधर्म कल्पमें अरुणाभ विमानमें चार पल्योपमकी स्थिति कही गई है। भगवान् महावीरके १० श्रमणोपासक थे. आनन्द-१ कामदेव-२ गाथापति चुलनी पिता-३ सुरादेव-४ क्षुद्रशतक-५ गाथापति कुण्डकौलिक-६ सद्दालपुत्र-७ महाशनक-८ नन्दिनी पिता-९ और शालेयिका पिता-१० ये इनके नाम उपासकदशाङ्गमें कहे गये है ॥सू०२३॥

તેમના હૃદયમાં વ્યથા ઉત્પન્ન કરનાર હોય છે તે કારણે એવા શ્રાવકને ખર કંટક સમાન કહ્યો છે ॥ સૂ ૨૨ ॥

શ્રમણોપાસકોના કથનને અનુલક્ષીને હવે સૂત્રકાર વૈમાનિક દેવપર્યાયને પામેલા મહાવીર પ્રભુના શ્રમણોપાસકોની ત્યાંની આયુસ્થિતિની પ્રરૂપણા કરે છે-

"સમણસ્સ ણ ભગવઓ ઇત્યાદિ સૂ ૨૩

શ્રમણ ભગવાન મહાવીરના જે શ્રમણોપાસકો સૌધર્મ કલ્પના અરુણાભ વિમાનમા દેવપર્યાયે ઉત્પન્ન થયા છે તેમની ત્યાંની સ્થિતિ ચાર પલ્યોપમની કહી છે આ પ્રકારના મહાવીર પ્રભુના ૧૦ શ્રમણોપાસકોના નામ આ પ્રમાણે હતા—(૧) આનંદ, (૨) કામદેવ (૩) ગાથાપતિ ચુલની પિના, (૪) સુરાદેવ, (૫) ક્ષુદ્રશતક, (૬) ગ થાપતિ કુડકૌશિક, (૭) સદ્દાલ પુત્ર, (૮) મહાશનક, (૯) નન્દિની પિતા (૧૦) શાલેયિકા પિતા. આ નામો ઉપાસક દશ ગમાં આપ્યા છે. ॥ સૂ ૨૩ ॥

देवानामनागमनकारणम्—

मूलम्—चउहिं ठाणेहिं अहुणोववन्ने देवे देवलोएसु इच्छेज्जा माणुस लोगं हव्वमागच्छित्तए णो चेव णं संचाएइ हव्वमागच्छित्तए, तं जहा—अहुणोववण्णे देवे देवलोएसु दिव्वेसु कामभोगेसु मुच्छिए गिद्धे गढिए अज्झोववण्णे से णं माणुस्सए कामभोगे नो आढाइ णो परियाणाइ णो अट्ठं बंधइ णो णियाणं पगरेइ णो ठिइपगप्पं पगरेइ १, अहुणोववन्ने देवे देवलोगेसु दिव्वेसु कामभोगेसु मुच्छिए गिद्धे गढिए अज्झोववण्णे तस्स णं माणुस्सए पेमे वोच्छिन्ने दिव्वे पेमे संकते भवइ २।

अहुणोववण्णे देवे देवलोएसु दिव्वेसु कामभोगेसु मुच्छिए गिद्धे गढिए अज्झोववण्णे, तस्स णं एवं भवइ इण्हिं गच्छं मुहुत्तेणं गच्छं, तेणं कालेणमप्पाउया माणुस्सा कालधम्मुणा संजुत्ता भवंति ३,

अहुणोववण्णे देवे देवलोएसु दिव्वेसु कामभोगेसु मुच्छिए गिद्धे गढिए अज्झोववणे, तस्स णं माणुस्सए गंधे पडिकूले पडिलोमे यावि भवइ, उड्ढंपि य णं माणुस्सए गंधे जाव चत्तारि पंच जोयणसयाइं हव्वमागच्छइ ४, इच्चेएहिं चउहिं ठाणेहिं अहुणोववण्णे देवे देवलोएसु इच्छेज्जा माणुस लोगं हव्वमागच्छित्तए णो चेव णं संचाएइ हव्वमागच्छित्तए ४।

देवानामागमनकारणम्

चउहिं ठाणेहिं अहुणोववण्णे देवे देवलोएसु इच्छेज्जा माणुस लोगं हव्वमागच्छित्तए, संचाएइ हव्वमागच्छित्तए, तं जहा अहुणोववण्णे देवे देवलोएसु दिव्वेसु कामभोगेएसु अमुच्छिए

जाव अणज्झोववन्ने तस्स णं एवं भवइ--अत्थि खलु मम माणुस्सए भवे आयरिएइ वा उवज्झाएइ वा पवत्तीइ वा थेरेइ वा गणीइ वा गणधरेइ वा गणावच्छेएइ वा, जेसिं पभावेणं मए इमा एयारूवा दिव्वा देविड्ढी दिव्वा देवजुई लद्धा पत्ता अभिसमन्नागया, तं गच्छामि णं ते भगवंते वंदामि जाव पज्जुवासामि १।

अहुणोववण्णे देवे देवलोएसु जाव अणज्झोववण्णे, तस्स णमेवं भवइ–एस णं माणुस्सए भवे णाणीति वा तवस्सीति वा अइदुक्करदुक्करकारए, तं गच्छामि णं ते भगवंते वंदामि जाव पज्जुवासामि २,

अहुणोववण्णे देवे देवलोएसु जाव अणज्झोववण्णे, तस्स णमेवं भवइ–अत्थि णं मम माणुस्सए भवे मायाइ वा जाव सुण्हाइ वा तं गच्छामि णं तेसिमंतिअं पाउब्भवामि, पासंतु ता मे इममेयारूवं दिव्वं देविड्ढिं दिव्वं देवजुइं लद्धं पत्तं अभिसमन्नागयं ३,

अहुणोववण्णे देवे देवलोएसु जाव अणज्झोववण्णे, तस्स णमेवं भवइ--अत्थि णं मम माणुस्सए भवे सित्तेइ वा सहीइ वा सुहीइ वा सहाएइ वा संगइएइ वा, तेसिं च णं अम्हे अन्नमन्नस्स संगारे पडिसुए भवइ, जो मे पुव्विं चयइ से संबोहेयव्वे, इच्चेएहिं जाव संचाएइ हव्वमागच्छित्तए ४। ॥ सू० २४ ॥

छाया—चतुर्भिः स्थानैः अधुनोपपन्नो देवो देवलोकेषु इच्छेत् मानुषं लोकं हव्यमागन्तुं नो चैव खलु शक्नोति हव्यमागन्तुम्, तद्यथा–अधुनोपपन्नो देवो

देवलोकेषु दिव्येषु काममोगेषु मूर्च्छितो गृद्धो ग्रथितोऽध्युपपन्नः, स खलु मानुष्यक काममोग नो आद्रियत नो परिमानाति नो अर्थं बध्नाति नो निदान प्रकरोति नो स्थितिप्रकल्पं प्रकरोति १।

अधुनोपपन्नो देवो देवलोकेषु दिव्येषु काममोगेषु मूर्च्छितो गृद्धो ग्रथितोऽध्युपपन्नः, तस्य खलु मानुष्यक प्रेम व्युच्छिन्नं दिव्य प्रेम सक्रान्त भवति । २।

देवोंके अनागमनका कारण—

" चउहिं ठाणेहिं अहुणोववन्ने देवे " इत्यादि २४

सूत्रार्थ–किसी एक देवलोकमें उत्पन्न हुआ देव मनुष्यलोकमें शीघ्र आनेकी इच्छा तो करता है पर इन चार कारणोंसे शीघ्र यहां आ नहीं सकता है । देवलोकमें उत्पन्न होते ही वहांके काममोगोंमें मूर्च्छित–गृद्ध–ग्रथित–अध्युपपन्न हो जाता है अतः–मनुष्य सम्बन्धी काममोगोंको वह आदर दृष्टिसे नहीं देखता है, ये मेरे कामके हैं ऐसा उन्हें नहीं मानता है इनसे मेरा प्रयोजन सिद्ध होगा एसी बुद्धि उनमें नहीं करता है, ये पुनः मुझे मिलें ऐसी भावना नहीं करता है और उनमें स्थितिका विकल्पही करता है । यह प्रथम कारण है–१

दूसरा कारण—देवलोकमें उत्पन्न नया देव दिव्य काममोगोंमें मूर्च्छित–गृद्ध–अध्युपपन्न होकर ऐसा हो जाता है कि उसको मीत रसे मनुष्य सम्बन्धी प्रेम व्युच्छिन्न हो जाता है और दिव्य प्रेम उसमें समान्त हो जाता है–२

—દેવોના અનાગમનનાં કારણો—

ચઉહિં ઠાણેહિં અહુણોવવન્ને દેવે " ઇત્યાદિ—(સૂ ૨૪)

સૂત્રાર્થ–કોઈ એક દેવલોકમાં ઉત્પન્ન થયેલો દેવ તુરત જ મનુષ્યલોકમાં આવવાની ઇચ્છા તો કરે છે પણ આ ચાર કારણોને લીધે તુરંત જ અહીં આવી શકતો નથી–(૧) દેવલોકમાં ઉત્પન્ન થતાંની સાથે જ તે ત્યાંના કામભોગોમાં મૂર્ચ્છિત ગૃદ્ધ ગ્રથિત અને અધ્યુપપન્ન થઈ જાય છે તે કારણે મનુષ્યભવના કામભોગોને તે આદરની દૃષ્ટિએ જોતો નથી તે માટે કામના છે એવું માનતો નથી તે કામભોગે દ્વારા પોતાનું પ્રયોજન સિદ્ધ થશે એવું તે માનતો નથી, તે ફરી પોતાને પ્રાપ્ત થાય એવી ભાવના સેવતો નથી અને હું તે કામ ભોગોનો ઉપભોક્તા જ બની રહું એવો સ્થિતિ વિકલ્પ પણ તે ઇચ્છતો નથી આ પહેલું કારણ છે

બીજું કારણ—દેવલોકમાં ઉત્પન્ન થયેલો નવો દેવ દિવ્ય કામભોગોમાં એવો તો મનુષ્યભવ પ્રત્યેનો પ્રેમ વ્યુચ્છિન્ન (નષ્ટ) થઈ જાય છે, અને દેવ લોક પ્રત્યેનો પ્રેમ સક્રાન્ત થઈ જાય છે

अधुनोपपन्नो देवो देवलोकेषु दिव्येषु कामभोगेषु मूर्च्छितो गृद्धो ग्रथितोऽध्युपपन्नः, तस्य खलु एवं भवति-इदानीं गमिष्यामि मुहूर्तेन गमिष्यामि, तेन कालेन अल्पायुषो मनुष्याः कालधर्मेण संयुक्ता भवन्ति ३,

अधुनोपपन्नो देवो देवलोकेषु दिव्येषु कामभोगेषु मूर्च्छितो गृद्धो ग्रथितोऽध्युपपन्नः, तस्य खलु मानुष्यको गन्धः प्रतिकूलः प्रतिलोमश्चापि भवति, ऊर्ध्वमपि च खलु मानुष्यको गन्धो यावत् चत्वारि पञ्चयोजनशतानि हव्यमागच्छति ४। इत्येतैश्चतुर्भिः स्थानैः अधुनोपपन्नो देवो देवलोकेषु इच्छेद् मानुषं लोकं हव्यमागन्तुं नो चैव खलु शक्नोति हव्यमागन्तुम् ।

तृतीय कारण-ऐसा है कि देवलोकमें नया-१ उत्पन्नदेव कामभोगोंमें मूर्च्छित-गृद्ध-ग्रथित अध्युपपन्न " अब जाता हूं थोडी देर बाद जाऊंगा " आदि विचारता जब तक आना चाहता है उसके अन्दर-२ यहां जो उनके माता-पिता आदि परिवार होते हैं वे तब तक कालधर्म संयुक्त हो जाते हैं अतः फिर वह नहीं आता है-३

चौथा कारण—कि वह देवलोकमें अधुनोपपन्नदेव वहां के दिव्य काम भोगोंमें जब तल्लीन हो जाता है तब उसे मनुष्यगन्ध प्रतिकूल बिलकुल अमनोज्ञ जान पडती है वह गन्ध मनुष्य लोकसे ऊपर ४-५ सौ युगलियों की अपेक्षा ४०० चारसौ कर्मभूमि की अपेक्षा पांचसौ योजन तक ऊंची पहुंचती है जो उन्हें रुचती नहीं इससे देव यहां आते नहीं-४

ત્રીજુ કારણ—દેવલોકમાં ઉત્પન્ન થયેલો નવો દેવ કામભોગોમાં એવો તો આસક્ત, ગૃદ્ધ, ગ્રથિત અને અધ્યુપપન્ન થઇ જાય છે કે "હમણાં જ મનુષ્યલોકમાં જઉં છુ-થોડી વાર આ કામભોગો ભોગવીને મનુષ્યલોકમાં જઈશ" આ પ્રકારનો વિચાર કરતા કરતાં એટલો લાંબો સમય પસાર થઈ જાય છે કે ત્યા સુધીમા તેના માતા, પિતા આદિ સગાંસબંધીઓ કાળધર્મ પામી જાય છે અને તેમને કાળધર્મ પામેલા જાણીને તે દેવ મનુષ્યલોકમાં આવવાનો વિચાર જ માંડી વાળે છે

ચોથું કારણ—દેવલોકમાં ઉત્પન્ન થયેલો નવો દેવ જ્યારે ત્યાંના કામભોગોમા લીન થઇ જાય છે, ત્યારે તેને મનુષ્યગંધ પ્રતિકૂળ-અમનોજ્ઞ લાગે છે તે ગંધ મનુષ્યલોકની ઉપર '૪૦૦-૫૦૦ યોજન સુધી ફેલાયેલી હોય છે તે ગંધ નહી રુચવાને કારણે તે અહીં આવતો નથી.

चतुर्भिः स्थानैरधुनोपपन्नो देवो देवलोकेषु इच्छेत् मानुषं लोकं हव्यमागन्तुं शक्नोति हव्यमागन्तुम्, तद्यथा–अधुनोपपन्नो देवो देवलोकेषु दिव्येषु काममोगेषु अमूर्च्छितो यावत् अनध्युपपन्नः, तस्य खलु एवं भवति–अस्ति खलु मम मानुष्यके भवे आचार्य इति वा उपाध्याय इति वा प्रवर्ती इति वा स्थविर इति वा गणी इति वा गणधर इति वा गणावच्छेदक इति वा, येषां प्रभावेण मया इमा एतद्रूपा दिव्या देवर्द्धिः दिव्या देवद्युतिः लब्धा प्राप्ता अभिसमन्वागता, तत् गच्छामि खलु तान् भगवतः वन्दे यावत् पर्युपासे १।

अधुनोपपन्नो देवो देवो देवलोकेषु यावत् अध्युपपन्न, तस्य खलु एवं भवति-एष खलु मानुष्यके भवे ज्ञानीति वा तपस्वीति वा अतिदुष्करदुष्करकारकः तद्गच्छामि खलु तान् भगवतो वन्दे यावत पर्युपासे २।

अधुनोपपन्नो देवो देवलोकेषु यावत् अनध्युपपन्नः, तस्य खलु एवं भवति–अस्ति खलु मम मानुष्यके भवे मातेति वा यावत् स्नुषेति वा, तद्गच्छामि खलु तेषामन्तिकं प्रादुर्भवामि पश्यन्तु तावत् मे इमामेतद्रूपां दिव्यां देवर्द्धि दिव्यां देवद्युतिं लब्धां प्राप्तामभिसमन्वागताम् ।३

अधुनोपपन्नो देवो देवलोकेषु यावत् अनध्युपपन्नः तस्य खलु एवं भवति–अस्ति खलु मम मानुष्यके भवे मित्रमिति वा सखेति वा सुहृदिति वा सहाय इति वा सांगतिक इति वा, तेषां च खलु अस्माभिः अन्योन्य सङ्केतः प्रतिश्रुतो भवति–योऽस्माकं पूर्वं च्यवते स सम्बोधयितव्यः । इत्यते यावत् शक्नोति हव्य मागन्तुम् ॥ सू० २४ ॥

टीका–' चउहिं ठाणेहिं ' इत्यादि–

चतुर्भिः वक्ष्यमाणैः स्थानैः=कारणैः अधुनोपपन्नः–अचिरोत्पन्नः–तत्काले उत्पन्न इत्यर्थः, देवो देवलोकेषु मानुष=मनुष्यसम्बन्धिन लोक–मर्त्यलोकं 'हव्य' मिति देशिकशब्दोऽयं शीघ्रार्थक, तेन शीघ्रमित्यर्थः, आगन्तुम्, इच्छेत्, नो= नैव च=पुन नैव स हव्य=शीघ्रमागन्तु शक्नोति, कुतो नाऽऽगन्तु शक्नोतीत्याह– " तद्यथा "–अधुनोपपन्नो देवो देवलोकेषु दिव्येषु–मनोज्ञेषु कामभोगेषु–काम्यन्त इति कामाः–कमनीयास्त च भोगाः–भुज्यन्त–इन्द्रियैः सेव्यन्त इति भोगा"

इस सूत्रमें आये हुये अधुनोपपन्नक आदि पदोंका स्पष्टीकरण तत्काल उत्पन्न को अधुनोपपन्न कहा गया है हव्य शब्द शीघ्रार्थक है चाहनाका विषयभूत जो हो वह काम है कामही भोग है । क्योंकि

ભાવાર્થ—તત્કાલ ઉત્પન્ન થયેલા દેવને અધુનોપપન્નક દેવ કહે છે “ હવ્ય ” આ પદ શીઘ્રાર્થક છે ચાહનાને વિષયભૂત વસ્તુને કામ કહે છે અને એ કામ જ ભોગરૂપ છે કારણ કે તેમને ઇન્દ્રિયો દ્વારા ભોગવાય છે

शब्दादयश्चेति कामभोगाः, यद्वा-काम्येते इति कामौ=शब्दरूपलक्षणौ च भोगाः-गन्धरसस्पर्शाश्चेति कामभोगाः, यद्वा-कामानां-कमनीयानां शब्दादीनां भोगाः=सेवनानि, तेषु मूर्च्छितः-कामभोगानां विनश्वरत्वादि ज्ञातुमशक्यतया मोहं गतः, गृद्धः=कामभोगेच्छासमन्वितो घृतसिक्तवह्निरिवाऽतृप्तः, ग्रथितः=कामभोगानुरागरज्जुबद्धः, अध्युपपन्नः-अत्यन्तं विषयपरिभोगाधीनो भवति अत एव स-देवः खलु मानुष्यकान्-मनुष्यलोकभवान् कामभोगान् नो आद्रियते=आदरं न करोति,

यह इन्द्रियों द्वारा भोगा जाता है अथवा—जिनमें चाहना जाती है ऐसे शब्दरूप काम हैं तथा गन्ध रस और स्पर्श ये भोग है। अथवा कामका अर्थ कमनीय है, ऐसे कमनीय शब्दादिकोंका जो भोग है वह सेवन करना है वह कामभोग है। देव कामभोगोंकी विनश्वरता जाननेमें असमर्थ होता है, अतः-वे उनका कामभोगोंमें मूर्च्छित-मोहंगत हो जाते हैं। कामभोगकी इच्छासे समन्वित हुआ देव घृत-सिक्त अग्नि जैसे गृद्ध-अतृप्त वन जाता है। ग्रथित कामभोगानुराग रूपी रस्सीसे वह जकड जाता है, और इस तरह वह अन्तमें अध्यु-पपन्नक अत्यन्त विषयभोगका सर्वथा अधीन वन जाता है। तात्पर्यकि देवलोकोंमेंसे किसी एक देवलोकमें अधुनोपपन्नक देव वहांके काम-भोगोंको इतना अधिक आनन्ददायक मानने लगता है जिससे फिर वह मनुष्यलोक सम्बन्धी कामभोगोंको बिलकुल असार मानने लगता है और इस तरहसे वह उनको आदर दृष्टिसे नहीं देखता है कारणकि

અથવા જેની ચાહના થાય છે એવા શબ્દ રૂપ કામ હોય છે અને ગંધ, રસ અને સ્પર્શ, એ ભોગરૂપ છે અથવા કામનો અર્થ કમનીય પણ થાય છે એવા કમનીય શબ્દાદિકોનો જે ભોગ છે તેને કામભોગ કહે છે દેવો કામભોગોની વિનશ્વરતા (અનિત્યતા) જાણવાને અસમર્થ હોય છે, તેથી તેઓ તે કામભોગોમાં મૂર્ચ્છિત (આસકત) થઈ જાય છે કામભોગની ઇચ્છાથી યુકત થયેલો દેવ ઘૃતાસિકત અગ્નિ સમાન ગૃદ્ધ (અતૃપ્ત, લોલુપ) બની જાય છે કામભોગરૂપી દોરડા વડે જકડાવાને કારણે તે તેમાં ગ્રથિત થઈ જાય છે અને 'અધ્યુપપન્ન' વિષય ભોગને સર્વથા આધીન બની જાય છે આ કથનનો ભાવાર્થ એ છે કે કોઈ એક દેવલોકમા ઉત્પન્ન થયેલો નવો દેવ (અધુનો-પપન્નક દેવ) ત્યાંના કામભોગોને એટલા બધા આનંદદાયક માનવા લાગે છે કે મનુષ્યલોક સંબંધી કામભોગો તો તેને બિલકુલ અસાર લાગે છે, અને આ રીતે તે તેમને આદર દૃષ્ટિથી જોતો નથી કારણ કે તે એવું માનતો નથી

नो परिजानाति-एते मनुष्यसम्बन्धिकामभोगा अपि ममोपभोग्यपदार्थाः सन्तीति न मन्यते, दिव्यकामभोगापेक्षया तेषां तुच्छत्वात्, तथा-मानुष्यककामभोगेषु नो अर्थं बध्नाति=' अमीभिरेतत्प्रयोजन ' मित्याकारकनिश्चयं न करोति, तथा-तेषु नो निदानम्-' एते मे भवन्त्वि 'त्येवमभिलाषं नो प्रकरोति, तथा-नो स्थितिविकल्पम्-एषूपभोक्तृत्वेनाह-तिष्ठामि, यद्वा-' ममैते तिष्ठन्त्वि ' त्येवरूप मवस्थानविकल्पं न प्रकरोति=न प्रारभते ' प्र ' शब्दस्य प्रारम्भद्योतकत्वात् प्रारम्भं न करोतीत्यर्थः १। इति प्रथमकारणम् । १ ।

" अहुणोववन्ने "—त्यादि-अधुनोपपन्नो देवो देवलोकेषु दिव्येषु काम भोगेषु मूर्च्छितो गृद्धो ग्रथितोऽध्युपपन्नो भवत्यत एव तस्य देवस्य इदि खलु

" ये मनुष्य सम्बन्धी कामभोग भी उपभोग्य पदार्थ हैं " फिर ऐसा वह उन्हें नहीं समझता है। क्योंकि-वह उन्हें दिव्यकामभोगोंकी अपेक्षा तुच्छ-असार मानने लगता है " इन मनुष्य सम्बन्धी कामभोगों से मेरा यह प्रयोजन सधेगा इस प्रकार का निश्चय विश्वास फिर वह उनमें नहीं बांधता है।, तथा-" मुझे ये पुनः प्राप्त हों " ऐसी उनमें अभिलाषभी नहीं करता है " मैं इनका उपभोक्ता बना रहूं " ऐसा वह स्थितिका विकल्प भी नहीं करता है। अथवा " ये मेरे पास बने रहें " ऐसा अवस्थान रहनेका विकल्प तकभी उसे नहीं उठता है, यहां "प्र" शब्द आरम्भका द्योतक है। इस प्रकारका यह प्रथम कारण है मर्त्यलोकमें स्वर्गसे नहीं आनेका-१ द्वितीय कारणभी ऐसाही है परन्तु—वह देव जब पूर्वोक्त इन विशेषणोंवाला हो जाता है तब

કે 'મનુષ્ય સબંધી કામભોગો પણ ઉપભોગ્ય પદાર્થો છે," કારણ કે દિવ્ય કામભોગોની અપેક્ષાએ તો તે કામભોગો તેને બિલકુલ તુચ્છ-અસાર લાગે છે, વળી તેને એવું પણ લાગતું નથી કે " મનુષ્યભવ સબંધી કામભોગોથી મારું પ્રયોજન સિદ્ધ થશે " વળી "એ કામભોગોની મને ફરી પ્રાપ્તિ થાય", એવી અભિલાષા પણ તે રાખતો નથી ' હું તે કામભોગોનો ઉપભોક્તા જ બની રહું " એવો તે સ્થિતિનો વિકલ્પ પણ કરતો નથી. અથવા ' તે મારી પાસે જ કાયમ રહે ' આ પ્રકારનો અવસ્થાન (સ્થિતિ) રહેવાનો વિકલ્પ પણ તેના મનમાં ઉદ્ભવતો નથી. અહીં "પ્ર" શબ્દ આરંભનો દ્યોતક છે આ કારણે તે અધુનોપપન્ન દેવ દેવલોકમાંથી મર્ત્યલોકમાં આવતો નથી. અહીં પહેલા કારણનું સ્પષ્ટીકરણ પૂરું થાય છે

બીજા કારણનું સ્પષ્ટીકરણ—તે અધુનોપપન્ન દેવ જ્યારે મૂર્ચ્છિત આદિ પૂર્વોક્ત વિશેષણોથી યુક્ત બને છે, ત્યારે મનુષ્યભવ સબંધી કામભોગ

मानुष्यकं प्रेम-मनुष्यभवसम्बन्धिकामभोगानुरागः, व्युच्छिन्नं-विनष्ट, दिव्यं-देवलोकसम्बन्धि प्रेम संक्रान्तं-प्रविष्टं भवति । इति द्वितीयम् । २ ॥

" अहुणोववन्ने " इत्यादि-प्राग्वत् नवरं-तस्यैवं भवति-' इण्हि ' इदानीं गमिष्यामि-अधुना मर्त्यलोकं यास्यामि, कियता समयेनेत्याह-' मुहूर्तेन ' गमिष्यामि, तेन-समयेन मनुष्या अल्पायुषः सन्तः कालधर्मेण-मृत्युना संयुक्ताः-सयुताः मृता भवन्ति, अतो न मानुष्यलोकं समागच्छति । इति तृतीयम् ।३।

" अहुणोववन्ने " इत्यादि-प्राग्वत् , नवरं-मानुष्यकः-मनुष्यसम्बन्धी गन्धः-

उसके हृदयमें मनुष्यभव सम्बन्धी कामभोगानुराग नष्ट हो जाता है और देवलोक सम्बन्धी प्रेम प्रविष्ट हो जाता है । अतः-वह चाहता चाहताभी नही आपाता है

तृतीय कारणभी ऐसाही है परन्तु जब वह देव विशेषणसे युक्त हो जाता है तब वह सोचता है कि चलूं जहां मेरे पूर्वभव सम्बन्धी माता-पिता आदि परिजन हैं उनसे मिल आऊं फिर सोचता है अभी चला जाऊंगा तथा-ऐसी जल्दी कया पडीहै ऐसे सोचते-२ समय निकल जाता है और अन्तमें यहां उनके पूर्वभव सम्बन्धी अल्पायुवाले परिचित मनुष्य मनुष्यलोकसे काल कर जाते हैं, अतः वह फिर मनुष्य लोकमें नहीं आता है-३

चतुर्थ कारणभी ऐसाही है परन्तु इसमें पूर्वोक्त विशेषण विशिष्ट

પ્રત્યેનો તેનો અનુરાગ ઉત્પન્ન થઇ જાય છે તે કારણે તે મનુષ્યલોકમા આવવાની ઇચ્છા થવા છતા પણ આવી શકતો નથી.

ત્રીજા કરણનું સ્પષ્ટીકરણ—દેવલોકમા ઉત્પન્ન થયેલા નવા દેવના મનમાં એવી ઇચ્છા થાય છે કે " મારા પૂર્વભવના માતા, પિતા આદિને મળવા માટે જવુ જોઇએ " પરન્તુ તેને એમ થાય છે કે થોડી જ વારમાં અહીંથી ત્યાં જવા ઉપડીશ, થોડી વાર અહીંના કામભોગોને ભોગવી લઉ, પછી મનુષ્યલોકમાં જવા માટે ઉપડીશ ઉતાવળ કરવાની શી જરૂર છે " આ પ્રમાણે વિચાર કરતાં કરતાં એટલો બધો કાળ વ્યતીત થઈ જાય છે કે મનુષ્યલોકમાં રહેલા તેના પૂર્વભવના માતા, પિતા આદિ પરિચિત વ્યકિતઓ તો અલ્પાયુષી હોવાને કારણે મનુષ્યભવ સબધી આયુષ્ય પૂરૂં થઇ જવાથી કોઈ અન્ય ગતિમા ઉત્પન્ન થઈ ગયેલ હોય છે. આ વાત જાણીને તે મનુષ્યલોકમાં આવવાનો વિચાર માંડી વાળે છે

ચોથા કારણનુ સ્પષ્ટીકરણ—પૂર્વોક્ત મૂર્च્છિત આદિ વિશેષણોવાળો તે

प्रसिद्धं 'प्रतिकूलः प्रतिलोम' इत्युभौ समानार्थौ, तदर्थश्च–इन्द्रियमनसोरनाह्लादकत्वात् दिव्यगन्धमपेक्ष्य विपरीतवृत्तिः, समानार्थयोर्द्वयोरुपादानं मानुष्यकगन्धेऽतिशयितनिकृष्टताख्यापनार्थम्, तेन मानुष्यकगन्धो दिव्यगन्धापेक्षयाऽत्यन्तामनोज्ञः, अत एव प्रतिकूल 'च अपि' इति समुच्चये, भवति, स च 'उड्ढं पि य" इत्यादि–ऊर्ध्वमपि ऊर्ध्वदेशमपि मानुष्यको गन्धः चत्वारीति – कदाचित् भरतादिष्वेकान्तसुषमादौ चत्वारि योजनशतानि पञ्चेति–एकान्तसुषमातिरिक्ते तु पञ्चयोजनशतानि यावत् – अभिव्याप्य हव्यमागच्छति–मनुष्यक्षेत्रमागन्तुमिच्छं देवं प्रति समुपैति, यतो मनुष्यपञ्चेन्द्रियतिरश्चां प्रचुरत्वेनौदारिकशरीराणां तदङ्ग तन्मलानां च पुष्कलत्वेन दुर्गन्धोऽपि बहुर्भवतीति चतुर्थकारणम् ।४। 'इच्चे एहिं' इत्यादि स्पष्टम् ।

यह देव मनुष्य सम्बन्धी गन्धको प्रतिकूल और प्रतिलोम मानने लगता है क्योंकि—दिव्य गन्धकी अपेक्षा मनुष्यगन्ध इन्द्रिय और मनको आह्लादकारक नहीं होती है, मनुष्यगन्ध दिव्य गन्धकी अपेक्षा अत्यन्त अमनोज्ञ होती है यही बात प्रगट करनेके लिये सूत्रकारने प्रतिकूल–प्रतिलोम समानार्थक इन दोनों शब्दोंका प्रयोग किया है। मनुष्य गन्ध ऊपरमें भी कदाचित् चार–पांचसौ योजन तक मनुष्यक्षेत्रमें आनेके लिये पर्युत्सुक देवोंकी ओर जाती है, भरतादि क्षेत्रोंमें जब एकान्त सुषम आदि काल होता है उसमें तो चारसौ योजन तक और जब एकान्त सुषमासे अतिरिक्त काल होता है, उस समय पांचसौ योजन तक यह गन्ध आती है। क्योंकि—मनुष्य क्षेत्रमें मनुष्य और पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्चोंकी प्रचुरता होती है, अतः–उनके औदारिक शरीरोंकी और

અધુનોપપન્નક દેવ મનુષ્ય સંબંધી ગંધને પ્રતિકૂળ અને અમનોજ્ઞ માનવા લાગે છે કારણ કે દિવ્યગંધ મનને આહ્લાદકારક લાગે છે જ્યારે મનુષ્ય ગંધ મનને અતિશય અમનોજ્ઞ લાગે છે એજ વાતને પ્રકટ કરવા માટે સૂત્રકારે પ્રતિકૂળ–પ્રતિલોમ, આ બે સમાનાર્થક શબ્દોનો પ્રયોગ કર્યો છે મનુષ્ય ગંધ ઉપરની બાજુ ૪૦૦ થી ૫૦૦ યોજન સુધી જાય છે મનુષ્યલોકમાં આવવાને ઉત્સુક દેવને તે ગંધ અમનોજ્ઞ લાગવાથી તે અહીં આવવાનો વિચાર માંડી વાળે છે ભરતાદિ ક્ષેત્રોમાં જ્યારે એકાન્ત સુષમ આદિ કાળ હોય છે ત્યારે તે ગન્ધ ૪૦૦ યોજન ઊંચે જાય છે પણ તે સિવાયના કાળોમાં તો તે ગન્ધ ૫૦૦ યોજન ઊંચે જાય મનુષ્યક્ષેત્રમાં મનુષ્યો અને પંચેન્દ્રિય જીવો ઘણા હોય છે તેમના ઔદારિક શરીરો અને તેમના મળની દુર્ગંધ ઉપર

अथाऽऽगमनकारणानि—

" चउहिं " इत्यादि—स्पष्टम्, नवरम्–' एवम् '–एतादृशं वक्ष्यमाण प्रकारक देवस्य मनो भवति, किं प्रकारकं तदाह–" अत्थिणं " इत्यादि–अस्ति–विद्यते मम–मे मानुष्यके भवे आचार्यः–प्रतिबोधकप्रव्रज्यादायकोपस्थापकादिः

उनके मलोंकी दुर्गन्ध भी पुष्कल रूपसे बहुत होती है। इस प्रकारके ये चार ऐसे कारण है जो देवोंको इस मनुष्य लोकमें आनेमें बाधक होते हैं।

अब सूत्रकार देवोंके आगमनका कारण कथन करते हैं–" चउहिं " इत्यादि इन कारणोंमें एक कारण ऐसा है कि देवलोकमें अधुनोपपन्न-देव दिव्य कामभोगोंमें अमूर्च्छित यावत् अनध्युपपन्न होता हुवा ऐसा विचार करता है मनुष्य भवमें जब मैं था तबके मेरे यहां आचार्य हैं उपाध्याय हैं प्रवर्ता हैं, स्थविर हैं–गणी हैं–गणधर हैं गणावच्छेदक हैं, मैंने जो ऐसी अनुपम देवर्द्धि देवद्युति लब्ध की है–प्राप्त की है अभिसमन्वागत (उपभोग रूप (सर्वथा) आधीन) की हैं सो यह उन्हीं का सब प्रभाव है। अतः–उचित है कि मैं चलूं और उनको वन्दना करूं यावत् उनकी पर्युपासना करूं इस प्रकारके विचार से प्रेरित वह देव इस मनुष्य लोकमें शीघ्रही आ सकता है। इस सूत्रमें कथित आचार्यादि पदोंका भाव ऐसा है जो प्रतिबोध देता है प्रव्रज्या-दायक होता है उपस्थापक आदि होता है, पांच आचारोंका स्वयं पालन

૪૦૦–૫૦૦ યોજન સુધી ફેલાય છે. આ પ્રકારના ચાર કારણો અધુનોપપન્ન દેવને મનુષ્યલોકમાં આવવામા બાધક થઇ પડે છે.

મનુષ્યલોકમાં દેવોના આગમનનાં કારણોનું નિરૂપણ—

" ચઉહિ " ઈત્યાદિ. પહેલુ કારણ—દેવલોકમાં ઉત્પન્ન થયેલો નવો દેવ દિવ્ય કામભોગો પ્રત્યે અમૂર્છા ભાવ આદિથી યુકત થઈ ને એવો વિચાર કરે છે કે–" મનુષ્યલોકમા મારા પૂર્વભવના (મનુષ્ય ભવના) આચાર્ય છે, ઉપાધ્યાય છે, પ્રવર્તી છે, સ્થવિર છે, ગણી છે, ગણધર છે, અને ગણાવચ્છેદક છે તેમના પ્રભાવથી જ મે આ અનુપમ દેવર્દ્ધિ, દેવદ્યુતિ આદિ લબ્ધિ પ્રાપ્ત કરેલ છે અને અભિસમન્વાગત (મારે આધીન) કરેલ છે તો એજ વાત ઉચિત ગણાય કે મારે અહીંથી મનુષ્યલોકમા જઈ ને તેમને વંદણા નમસ્કાર કરવા જોઈએ અને તેમની પર્યુપાસના કરવી જોઈએ " આ પ્રકારના વિચારથી પ્રેરાઇને તે દેવ તુરત જ આ મનુષ્યલોકમાં આવી શકે છે

આચાર્ય કોને કહેવાય? જેઓ પ્રતિબોધ દે છે, પ્રવ્રજ્યા અંગીકાર કરાવે છે, ઉપસ્થાપક આદિ હોય છે, જેઓ પોતે પાંચ આચારોનું પાલન

उपाध्याया-मध्यापकाः-सूत्रादिदाता, प्रवर्ती-प्रवर्तयति आचार्योपदिष्टेषु तपो वैयावृत्त्यादिकार्येषु साधूनिति प्रवर्ती=प्रवर्तकः, ।

उक्तं च—

" तवनियमविणयगुणनिहि पवत्तया नाणदंसणचरित्ते ।
सगहुग्गहकुसला पवत्ति एयारिसा हुंति ॥ १ ॥ "

छाया—' तपो नियमविनयगुणनिधयः प्रवर्तका ज्ञानदर्शनचारित्रेषु ।
सङ्ग्रहोपग्रहकुशलाः प्रवर्तिन एतादृशा भवन्ति ॥१॥ इति ।

स्थविरा-प्रवर्तिप्रवर्तितान् संयमयोगेषु सीदतः साधून् ज्ञानादिष्वैहिकाऽऽमुष्मिकापायप्रदर्शनतः स्थिरीकरोतीति तथा, गणी-गणः-कतिपयसाधुसमुदायः सोऽस्त्यस्येति गणी, गणधराः-च आचार्यसदृशो गुर्वादेशात्साधुगणं गृहीत्वा पृथग् विहरति सः, तथा गणावच्छेदका-गणस्य अवच्छेदो विभागोंऽशोऽस्यास्तीति

करता है और दूसरे साधुओंसे इनका पालन कराता है वह-आचार्य है। शिष्योंको जो सूत्रादिका अध्ययन कराता है वह उपाध्याय है, तथा-जो आचार्योपदिष्ट तप-वैयावृत्त्य-आदि कार्योंमें साधुओंको प्रवृत्ति कराताहै वह प्रवर्त्ती-प्रवर्तकहै। कहाभीहै-" तव नियम विणय गुणनिहि' इत्यादि प्रवर्ती द्वारा प्रवर्तित हुवे साधु जनोंको जो कि संयम योगोंमें ज्ञानादिकोंमें शिथिल हो रहे हों उन्हें इहलोक-परलोकके अपायोंका दिग्दर्शन कराकर स्थिर करताहै वह स्थविरहै। कितनेक साधु समुदायका नाम गण है, यह गण जिसको है वह गणी है, जो आचार्यका जैसा हो एवं गुरुके आदेश से साधुगणको लेकर पृथक् विहार करता है वह-गणधर है। जिसके गणका विभाग-अंश होता है वह गणा

કરે છે અને બીજા સાધુઓ પાસે તેનું પાલન પણ કરાવે છે તેમને આચાર્ય કહે છે

શિષ્યોને સૂત્રાદિનું અધ્યયન કરાવનારને ઉપાધ્યાય કહે છે

આચાર્યોપદિષ્ટ તપ, વૈયાવૃત્ય આદિ કાર્યોમાં સાધુઓને પ્રવૃત્ત કરાવનારને પ્રવર્તી અથવા પ્રવર્તક કહે છે કહ્યું પણ છે કે- " तवनियमविणयगुणनिहि " ઈત્યાદિ. પ્રવર્તક દ્વારા તપ આદિમાં પ્રવર્તિત કરાયેલા જે સાધુઓ સંયમ યોગોમાં અને જ્ઞાનાદિકોમાં શિથિલ થઈ રહ્યા હોય તેમને આલોક-પરલોકના અપાયોનું દિગ્દર્શન કરાવીને તપાદિમાં સ્થિર કરનારને સ્થવિર કહે છે કેટલાક સાધુઓના સમુદાયનું નામ ગણ છે તે ગણનો જે અધિપતિ હોય તેને ગણી કહે છે જે આચાર્યના જેવો જ હોય અને ગુરુના આદેશથી સાધુ

गणावच्छेदः, स एव गणावच्छेदकः–जिनशासनप्रभावने गणकार्यमाश्रित्योद्धावने क्वचिद्गमने क्षेत्रोपधिगवेषणासु चाविषादी सूत्रार्थज्ञायकश्च । उक्तं च—

" प्रभावनोद्धावनयोः क्षेत्रोपध्येषणासु च ।
अविषादी गणावच्छेदकः सूत्रार्थविन्मतः ॥१॥ " इति ॥

येषाम्–आचार्यादीनां प्रभावेण–अनुभावेन मया–देवेन इयं–साक्षादनुभूयमाना एतद्रूपा–एतद् रूप यस्याः सा तथा=एतादृशी दिव्या देवर्द्धिः विमानरत्नादिरूपा सुरसम्पत्तिः तथा–दिव्या देवद्युतिः–देवशरीरकान्तिः लब्धा=समुपार्जिता, प्राप्ता–अधीना जाता, अभिसमन्वागता–भोग्यावस्थां प्राप्ताऽस्ति, तत्–तस्मात् कारणाद् अहं गच्छामि, गत्वा च तान् भगवतो वन्दे–स्तौमि, 'यावत्'–

वच्छेदक है यह गणावच्छेदक जिनशासनकी प्रभावनामें गणकार्यको लेकर कहीं पर जानेमें और क्षेत्र–उपधि इनकी गवेषणा करनेमे अविषादी–दुःख माननेवाला नहीं होता है, और सूत्रार्थवेत्ता होता है। कहाभी है—" प्रभावनोद्धावनयोः" इत्यादि.

विमानरत्न आदि रूप सुरसंपत्ति देवर्द्धि एवं देवशरीर सम्बन्धी कान्ति देवद्युति है इनका अच्छी तरहसे उपार्जन करना सो लब्ध है, उसे अपने आधीन करना सो प्राप्त है। तथा=उसे अपने भोग्यमें लगाना इसका नाम–अभिसमन्वागत है, " वंदे यावत् पर्युपासे " में आगत यावत् शब्दसे नमस्यामि–सत्करोमि–सम्मानयामि–कल्याणं मङ्गलं–दैवतं–चैत्यं, इन पदोंका ग्रहण हुवा है, स्तुति करना इसका

ગણુને સાથે લઇને વિહાર કરતો હોય તેને ગણુધર કહે છે-ગણુના વિભાગને ગણુાવચ્છેદક કહે છે.

એવા ગણુાવચ્છેદના અગ્રેસરને ગણુાવચ્છેદક કહે છે, તે ગણુાવચ્છેદક જિનશાસનની પ્રભાવનામાં, ગણુકાર્ય નિમિત્તે કોઇ પણુ સ્થળે જવામાં, અને ક્ષેત્ર, ઉપધિ આદિની ગવેષણા કરવામાં અવિષાદી હોય છે–એટલે કે આ કાર્યો કરવામા દુઃખ માનનાર હોતો નથી અને સૂત્રાર્થનો જ્ઞાતા પણુ હોય છે. કહ્યુ પણુ છે કે–" प्रभावनोद्धावनयो " ઇત્યાદિ

વિમાન, રત્ન આદિ રૂપ સુરસંપત્તિને દેવર્દ્ધિ કહે છે દેવશરીર સંબંધી કાન્તિને દેવદ્યુતિ કહે છે તેને સારી રીતે ઉપાર્જિત કરવી તેનુ નામ 'લબ્ધ' છે તેને પોતાને આધીન કરવી તેનુ નામ પ્રાપ્ત છે, અને તેને પોતાના ભોગોપભોગમાં લેવી તેનુ નામ 'અભિસમન્વાગત' છે

" वंदे यावत् पर्युपासे " આ સૂત્રપાઠમાં વપરાયેલા 'યાવત્' પદથી

यावच्छब्देन—नमस्यामि—पश्चान्नमनपूर्वकं नमस्करोमि सत्करोमि—आदरेण सम्मानयामि—अभ्युत्थानादिलक्षणया उचितप्रतिपत्त्या, कल्याणं—कल्याणस्वरूपान् मङ्गलं मङ्गलस्वरूपान्, दैवतं धर्मदेवस्वरूपान्, चैत्यं ज्ञानस्वरूपान् पर्युपासे—सेवे इति प्रथममागमनकारणम् १।

"अहुणोववण्णे" इत्यादि—पूर्ववत्, नवरम्—एषः=वक्ष्यमाणः खलु मानुष्यके भवे ज्ञानी श्रुतज्ञानादिना सम्पन्नः, तपस्वी=तपश्चरणशीलः, अतिदुष्कर दुष्करकारकः – कठिनातिकठिनसाभिग्रहतपश्चर्यादि कारकोऽस्ति, तद्गच्छामि यावत् पर्युपासे। इति द्वितीयमागमनकारणम् २।

"अहुणोववण्णे" इत्यादि—प्राग्वत्, नवर-मम मानुष्यके भवे माता 'यावत्' पदेन 'मायाइ वा भज्जाइ वा भइणीइ वा पुत्ताइ वा धूयाइ वा' इति पदानि ग्राह्याणि, तत्=माता—मातेति वा भार्येति भगिनीति वा पुत्र इति वा दुहितेति वा, स्नुषा-पुत्रभार्या चास्ति तत्—तस्मात् तेषां=मात्रादिपरिवाराणाम्

नाम वन्दना है, पश्चात् नमनपूर्वक नमस्कार करना इसका नाम नमस्कार है। आदर देना इसका नाम सत्कार है, अभ्युत्थानादि रूप उचित प्रतिपत्ति सेवा) करना इसका नाम सम्मान है, कल्याणस्वरूप होनेसे आचार्य आदिकोंको कल्याण, मङ्गलस्वरूप होनेसे मङ्गल धर्मदेव स्वरूप होनेसे दैवत और ज्ञानस्वरूप होनेसे चैत्यरूप कहा गया है, सेवा करनेका नाम पर्युपासना है। ऐसा यह प्रथम कारण है-१ द्वितीयकारण भी ऐसाही है, पर इसमें ऐसा विचार करता है कि मनुष्यभवमें श्रुत ज्ञानादिकसे सम्पन्न ज्ञानीजन हैं तपश्चरणशील तपस्वी जन हैं, और अति दुष्कर दुष्करकारक—कठिनातिकठिन साभिग्रह तपश्चर्यादिकारक साधुजन हैं, इसलिये चलू और यावत् उनकी पर्युपासना करूं ऐसा

नीचेनो सूत्रपाठ ग्रहीत थयो छे–'नमस्यामि, सत्करोमि, सम्मानयामि, कल्याणं, मंगलं, दैवतं चैत्यं"

स्तुति करवी तेनुं नाम वंदणा छे पांचे अंगोने नमावीने नमवुं तेनुं नाम नमस्कार छे आदर देवो तेनु नाम सत्कार छे अभ्युत्थान आदि उचित विधि करवी तेनुं नाम सन्मान छे आचार्य आदि कल्याण स्वरूप होवाथी મંગળ સ્વરૂપ હોવાથી, ધર્મદેવ સ્વરૂપ હોવાથી અને જ્ઞાનસ્વરૂપ હોવાથી તેમને અનુક્રમે કલ્યાણરૂપ, મંગળરૂપ, દેવરૂપ અને ચૈત્યરૂપ કહેવામાં આવેલ છે સેવા કરવી તેનું નામ પર્યુપાસના છે

આ રીતે પહેલા કારણનું સ્પષ્ટીકરણ કરીને હવે સૂત્રકાર બીજા કારણને પ્રકટ કરે છે—દેવલોકમાં ઉત્પન્ન થયેલો તે નવો દેવ એવો વિચાર કરે છે કે મનુષ્યલોકમાં શ્રુતજ્ઞાનાદિથી સંપન્ન જ્ઞાનીજનો છે તપશ્ચરણશીલ તપસ્વીઓ છે દુષ્કરમાં દુષ્કર (કઠિનમાં કઠિન) અભિગ્રહ પૂર્વક તપશ્ચર્યાદિ કરનારા સાધુઓ છે તો મારે ત્યાં જઈને તેમને વંદણા, નમસ્કાર આદિ કરવા જોઈએ

अन्तिकं-समीपं गच्छामि, गत्वा च प्रादुर्भवामि=प्रकटो भवामि ताः=मात्रादयो मे=मम इमां-प्रत्यक्षामेतद्रूपाम्-एतादृशीं दिव्यां देवर्द्धिं दिव्यां देवद्युतिं लब्धां प्राप्तामभिसमन्वागतां पश्यन्तु । इति तृतीयमागमनकारणम् ।३।

"अहुणोववण्णे" इत्यादि—प्राग्वत् नवरं-मम मानुष्यके भवे मित्रं पश्चात्स्नेही, सखा-बालवयस्यः, सुहृत्-हितैषी सज्जनः सहायः-सह अयते इति सहायः-सहचरः एककार्यप्रवृत्त', साङ्गतिकः=सङ्गतिकः=सङ्गतं-परिचयोऽस्त्यस्येति साङ्गतिकः-परिचितोवाऽस्ति, तेषां=मित्रादीनां च खलु अस्माभिः अन्योऽन्यं= परस्परं सङ्केतः प्रतिश्रुतः-प्रतिज्ञातः स्वीकृतो भवतिस्म=आसीत् कीदृशः सङ्केत ? इत्याह-"जो मे" इत्यादि—यः-जनः मे-अस्माकं मध्ये पूर्वं-प्राक्च्यवते- देवलोकात् च्युतो भवेत् स जनः सम्बोधयितव्यः-प्रतिबोधनीय' इति तस्मादहं

यह द्वितीय कारण है-२ तृतीय कारण भी ऐसाही है, पर इसमें वह ऐसा विचार करता है कि मेरे मनुष्यभवके सम्बन्धी माता यावत् भ्राता-भगिनी-पुत्र-पुत्री-पुत्रवधू ये सब है, इसलिये मैं उनके पास जाऊं, वे मेरी ऐसी इस प्रत्यक्षभूत दिव्य देवर्द्धिको एवं दिव्य देव द्युतिको कि जिसे मैंने लब्ध की है प्राप्तकी है अभिसमन्वागत की है देखें, ऐसा यह तृतीय कारण है-३ चतुर्थ कारण भी ऐसा ही हैं, पर इसमें वह ऐसा विचारता है कि मेरे मनुष्यभवके मित्र हैं, सुहृद्जन हैं, सहायक हैं, साङ्गतिक हैं, उन्होंने हमारे साथ ऐसा सङ्केत किया था ऐसी बात स्वीकार कीथी कि जो कोई भी हमलोगों के बीचमेंसे देवलोकसे पहले चवे वह जन संबोधयितव्य है-

---

અહીં પર્યુંપાસના પર્યન્તના ઉપર્યુક્ત પદો પણ ગ્રહણ કરવા જોઈએ. આ કારણે પણ તે અધુનોપપન્ન દેવ મનુષ્યલોકમાં આવે છે.

ત્રીજું કારણ પણ લગભગ એવું જ છે તેને એવો વિચાર આવે છે કે મારા પૂર્વભવના (મનુષ્ય ભવના) માતા, પિતા, ભાઈ, બેન, પુત્ર, પુત્રી, પત્ની વગેરેને મળવા માટે મારે મર્ત્યલોકમા જવું જોઈએ તેઓ મારી આ દિવ્ય દેવર્દ્ધિ, દેવદ્યુતિ આદિના ભલે દર્શન કરે આ રીતે પોતે લબ્ધ, પ્રાપ્ત અને અભિસમન્વાગત કરેલી દેવર્દ્ધિ, દેવદ્યુતિ આદિ તેમને બતાવવાના હેતુથી તે અધુનોપપન્ન દેવ આ મર્ત્યલોકમા આવવાની ઇચ્છા કરે છે.

ચોથું કારણ—તે અધુનોપપન્ન દેવને એવો વિચાર થાય છે કે મનુષ્ય- લોકમાં પૂર્વભવના મારા મિત્રો છે, સુહૃદ્જનો છે, સહાયક છે અને સાંગતિક છે તેમણે અને મેં અરસપરસમા એવો સંકેત કર્યો હતો-એવું વચન આપ્યું હતું કે આપણામાનુ જે કોઈ દેવલોકમાંથી પહેલા ચવે (ત્યાંનું

पूर्वच्युतान् संबोधयितु मनुष्यलोकं गच्छामि, सूत्रे 'म' इत्यार्षत्वादेकवचनम्। इति चतुर्थमागमनकारणम् ।४। ॥ सू० २४ ॥

अनन्तरं देवाऽऽगमनमुक्त, तच तत्कृतोद्योतो भवतीति तद्विपरीत लोकान्धकारं प्राह—

मूलम्—चउहिं ठाणेहिं लोगधयारे सिया, त जहा—अरहतेहिं वोच्छिज्जमाणेहिं १, अरहतपन्नत्ते धम्मे वोच्छिज्जमाणे २, पुव्वगए वोच्छिज्जमाणे ३, जायतेए वोच्छिज्जमाणे ४।

चउहिं ठाणेहिं लोउज्जोए सिया, त जहा—अरहंतेहिं जायमाणेहिं १, अरहतेहिं पव्वयमाणेहिं २, अरहताणं णाणुप्पायमहिमासु ३, अरहताण परिणिव्वाणमहिमासु ४। एव देवधगारे देवुज्जोए देवसनिवाए दवुकलिया देवकहकहे।

चउहिं ठाणेहिं देविंदा माणुस्स लोग हव्वमागच्छति,

प्रतिबोधनीय है, इसलिये मैं पूर्वमें चवे हुवोंको संबोधन करनेके लिये मनुष्य लोकमें जाऊं।

पश्चात्-स्नेहीका नाम मित्र है, बाल वयस्यका नाम सखा है, हितैषी सज्जनका नाम सुहृत् है एक किसी भी कार्यमें साथ रहनेवालेका नाम सहचर है जिससे जान पहिचान हो उसका नाम साङ्गतिक है, ऐसा यह चौथा कारण है ॥ सू०२४॥

આયુષ્ય પૂરૂં કરીને ફરી મનુષ્યલોકમાં ઉત્પન્ન થઈ જાય), તે આયુષ્મ સંબોધિતવ્ય-પ્રતિબોધનીય (બોધ પ્રાપ્ત કરવાને પાત્ર) ગણવો જોઈએ

આ પ્રકારના વિચારથી પ્રેરિત થઈને પોતાના પહેલાં દેવલોકમાંથી જેઓ ચવેલા છે તેમને સંબોધન કરવાને માટે તે અધુનોપપન્ન દેવ આ મનુષ્યલોકમાં આવવા માગે છે

ઘણા લાંબા સમયથી જેની સાથે સ્નેહ હોય તેને મિત્ર કહે છે બાલ્યકાળથી જેની સાથે મૈત્રી હોય તેને સખા કહે છે હિતૈષી સજ્જનને સુહૃદ કહે છે કોઈ એક કાર્યમાં સાથે રહેનારને સહચર કહે છે, જેની સાથે ઓળખાણ પીછાણ હોય તેને સાંગતિક કહે છે ॥ સૂ. ૨૪ ॥

एवं जहा-तिट्ठाणे जाव लोगंतिया देवा माणुस्सं लोगं हव्व-मागच्छेज्जा, तं जहा-अरिहंतेहिं जायमाणेहिं जाव अरिहंताणं परिनिव्वाणमहिमासु ॥ सू० २५ ॥

छाया—चतुर्भिः स्थानैः लोकान्धकारः स्यात्, तद्यथा-अर्हत्सु व्यवच्छिद्य मानेषु १, अर्हत्प्रज्ञप्ते धर्मे व्यवच्छिद्यमाने २, पूर्वगते व्यवच्छिद्यमाने ३, जात-तेजसि व्यवच्छिद्यमाने ४,

चतुर्भिः स्थानै लोकोद्द्योतः स्यात्, तद्यथा-अर्हत्सु जायमानेषु १, अर्हत्सु प्रव्रजत्सु २, अर्हतां ज्ञानोत्पादमहिमसु ३, अर्हतां परिनिर्वाणमहिमसु ४, एवं देवान्धकारः, देवोद्द्योतः, देवसन्निपातः देवोत्कलिकाः, देवकलकलः।

चतुर्भिः स्थानैः देवेन्द्राः मानुष्यं लोकं हव्यमागच्छन्ति, एवं यथा त्रिस्थाने यावत् लोकान्तिका देवा मानुष्यं लोकं हव्यमागच्छन्ति, तद्यथा-अर्हत्सु जायमानेषु यावत् अर्हतां परिनिर्वाणमहिमसु ॥ सू० २५ ॥

टीका--"चउहिं ठाणेहिं" इत्यादि-चतुर्भिः स्थानैः लोकान्धकारः-लोकेऽन्धकारः-द्रव्यतो भावतश्च स्यात्-भवेत्, कैश्चतुर्भिः स्थानैरित्याह-"तं जहा" इत्यादि-तद्यथा-अर्हत्सु-जिनेषु व्यवच्छिद्यमानेषु-निर्वाणं गच्छत्सु द्रव्य तोऽन्धकारः स्यात्, तस्योत्पातरूपत्वात्, छत्रभङ्गादौ रजउद्धतवत्, इति प्रथमं लोकाऽन्धकारस्य कारणम् ।१।

तथा-अर्हत्प्रज्ञप्ते धर्मे व्यवच्छिद्यमाने, इति द्वितीयम् ।२।

देवकृत उद्द्योत के अभावमें लोकमें किन-किन कारणोंसे अन्धकार हो जाता है अब सूत्रकार इस बातका कथन करते हैं—

"चउहिं ठाणेहिं लोगंधयारे सिया" इत्यादि २४

टीकार्थ-इन चार कारणोके हो जाने पर लोकमें द्रव्यसे और भावसे अन्धकार हो जाता हैं वे चार कारण ये हैं—एक कारण है जिनेन्द्र देवका निर्वाण प्राप्त कर लेना-१ द्वितीय कारण है-अर्हत् प्रज्ञप्त धर्मका

દેવકૃત ઉદ્યોતના અભાવે કયાં કયા કારણોથી લોકમાં અધકાર વ્યાપી જાય છે, તેનુ હવે સૂત્રકાર નિરૂપણ કરે છે—

"चउहिं ठाणेहिं लोगंधयारे सिया" ઈત્યાદિ—(૨૫)

ટીકાર્થ-નીચેના ચાર કારણોને લીધે લોકમાં દ્રવ્યાંધકાર અને ભાવાંધકાર વ્યાપી જાય છે—(૧) જિનેન્દ્ર દેવના નિર્વાણુ કાળે, (૨) અર્હંત પ્રજ્ઞપ્ત ધર્મ વ્યુચ્છિન્ન

विशिष्टा । एकैकस्मिन् समये एकैक एव वाग्योगो देवादीनां भवतीत्यर्थः । एकत्वं च वाग्योगस्य तथाविधमनोयोगपूर्वकत्वात्, एकस्मिन् समये सत्यादीनामन्यतमस्यैवसद्भावाद् वा । उक्तं चापि—

" छहिं ठाणेहिं णत्थिजीवाणं इड्ढीइ वा जीव परक्कमेइ वा, त जहा–जीवं वा अजीवं करणयाए १, अजीवं वा जीवं करणयाए २, एगसमएणं दो भासाओ भासित्तए " ॥

छाया—षड्भिः स्थाने र्नास्ति जीवानाम् ऋद्धिरिति वा यावत् पराक्रम इति वा, तद्यथा–जीवं वा अजीवं कर्तुम्, अजीवं वा जीवं कर्तुम्, एक समयेन द्वे भाषे भाषितुम् । इति ॥ सू० ४२ ॥

अथवा—एक समय में सत्यादि वाग्योगों में से किसी एक ही वाग्योग का सद्भाव होता है इसलिये भी यहां एकता कही गई है ऐसा जानना चाहिये । कहा भी है—

"छहिं ठाणेहिं णत्थि जीवाणं इड्ढीइवा जईइवा, जसेइवा, बलेइवा, वीरिए वा, पुरिसक्कारपरक्कमेइ वा–तं जहा जीवं वा अजीवं करणयाए १ अजीव वा जीवं करणयाए २, एग समएण दो भासाओ भासित्तए ३, सय कडं वा कम्मं वेएमि वा मा वा वेएमि ४, परमाणुपोग्गल वा छिंदित्तए वा भिंदित्तए वा अगणिकाएण वा समोदहित्तए ५, बहिया वा लोगता गमणयाए ६ " इन छह स्थानों को लेकर के जीव में न कोई ऐसीऋद्धि है और न कोई ऐसा पराक्रम है कि जिससे वह जीव को अजीवरूप में एवं अजीव को जीव रूपमें कर सके और एक ही समय में दो भाषाओं को बोल सके अतः जब जीव में ऐसी कोई शक्ति

वाग्योग होय छे आ रीते तथाविध (ते प्रकारना) मनोयोगपूर्वक थवाथी वाग्योगमां एकता होय छे अथवा–सत्यादि वाग्योगमांथी एक समये कोई एक ज वाग्योगनो सद्भाव रहे छे तेथी पण अहीं वाग्योगमां एकत्व प्रकट कर्युं छे कह्युं पण छे के—

(छहिं ठाणेहिं नत्थि जीवाणं इड्ढीइ वा, जुईइ वा, जसेइ वा, बलेइ वा, वीरिए वा, पुरिसक्कारपरक्कमेइ वा,–त जहा जीवं वा अजीव करणयाए१ अजीवं वा जीव करणयाए२, एग समएणं दो भासाओ भासित्तए३, सय कडं वा कम्म वेएमि वा मा वा वेएमि४ परमाणुपोग्गलं वा छिंदित्तए वा भिंदित्तए वा अगणिकाएण वा समोदहित्तए५, बहिया वा लोगंता गमणयाए६)

आ ७ स्थानोनी अपेक्षाए जीवमां एवी कोई ऋद्धि पण नथी के जेथी ते पराक्रम पण नथी के जे ते (१) जीवने अजीवरूपे के अजीवने जीवरूपे करी शके, (२) के एक ज समये बे भाषाओ बोली शके, ईत्यादि. जीवमां जे

अथ कायव्यायामं निरूपयति—

मूलम्—एगे कायवायामे देवासुरमणुयाणं तंसि तंसि समयंसि ॥ सू० ४३ ॥

छाया-एकः कायव्यायामो देवासुरमनुजानां तस्मिन् तस्मिन् समये ॥सू०४३॥

टीका—'एगे कायवायामे' इत्यादि—

देवासुरमनुजानां तस्मिन् तस्मिन् समये कायव्यायामः=काययोग एकः=एकत्वसंख्याविशिष्टः। सप्तसु काययोगेषु मध्ये देवासुरमनुजानाम् एकदा एक एव काययोगो भवति, न तु द्व्यादिकः, अत एवात्र एकत्वमुक्तम्।

नहीं है तो उसके एक समय में एक ही वाग्योग होता है द्व्यादि वाग्योग नहीं होते हैं इसलिये वह वाग्योग एकत्व संख्यावाला कहा गया है ॥४२॥

कायव्यायाम-योग का निरूपण किया गया है

'एगे कायवायामे देवासुरमणुयाणं तंसि तंसि समयंसि' ॥४३॥

मूलार्थ— देव असुर और मनुष्यों के उस उस समय में एक ही काययोग होता है।

टीकार्थ—यद्यपि काययोग सात प्रकार का कहा गया है परन्तु वह देव, असुर और मनुष्यों के एक समय में एक ही होता है इस कारण एकत्व संख्यावाला कहा गया है कायव्यायाम का मतलब यहां काययोग से है एक समय में वह एक ही होता है इससे ऐसा समझाया गया है

આ પ્રકારની કોઈ શક્તિનો સદ્ભાવજ નથી, તો તે એક સમયમાં એક જ વાગ્યોગવાળો હોઇ શકે છે-તે બે, ત્રણ આદિ વાગ્યોગવાળો હોઇ શકતો નથી. તે કારણે જીવોના વાગ્યોગમાં એકત્વ પ્રકટ કરવામાં આવ્યું છે. ॥ સૂ૦૪૨ ॥

કાયવ્યાયામ (કાયયોગ) નુ નિરૂપણુ—

" एगे कायवायामे देवासुरमणुयाण तंसि तंसि समयंसि ॥ ४३ ॥

સૂત્રાર્થ—કાયયોગમા પ્રવૃત્ત થયેલા, દેવ, અસુર અને મનુષ્યોમાં તે તે સમયે એક જ કાયયોગનો સદ્ભાવ હોય છે

ટીકાર્થ—જો કે કાયયોગના સાત પ્રકાર કહ્યા છે, પરંતુ દેવ, અસુર અને મનુષ્યોમાં એક જ સમયે કાયયોગ થતો હોવાથી, અહીં તેમના કાયયોગમાં એકત્વ પ્રકટ કર્યું છે 'કાયવ્યાયામ' એટલે "કાયયોગ" એક સમયમાં

विशिष्टा । एकैकस्मिन् समये एकैक एव वाग्योगो देशादीनां भवतीत्यर्थः । एकत्वं च वाग्योगस्य तथाविधमनोयोगपूर्वकत्वात्, एकस्मिन् समये सत्यादीनामन्यतमस्यैवसद्भावाद् वा । उक्तं चापि—

"छहिं ठाणेहिं णत्थिजीवाणं इड्ढीइ वा जाव परक्कमेइ वा, तं जहा-जीवं वा अजीवं करणयाए १, अजीवं वा जीवं करणयाए २, एगसमएणं दो भासाओ भासित्तए" ॥

छाया—षड्भिः स्थानैः नास्ति जीवानाम् ऋद्धिरिति वा यावत् पराक्रम इति वा, तद्यथा-जीवं वा अजीवं कर्तुम्, अजीवं वा जीवं कर्तुम्, एक समयेन द्वे भाषे भाषितुम् । इति ॥ सू० ४२ ॥

अथवा—एक समय में सत्यादि वाग्योगों में से किसी एक ही वाग्योग का सद्भाव होता है इसलिये भी यहां एकता कही गई है ऐसा जानना चाहिये । कहा भी है—

"छहिं ठाणेहिं णत्थि जीवाणं इड्ढीइवा जईइवा, जसेइवा, बलेइवा, वीरिए वा, पुरिसक्कारपरक्कमेइ वा-तं जहा जीव वा अजीव करणयाए १ अजीव वा जीवं करणयाए २, एग समएण दो भासाओ भासित्तए ३, सयं कडं वा कम्मं वेएमि वा मा वा वेएमि ४, परमाणुपोग्गल वा छिंदित्तए वा भिंदित्तए वा अगणिकाएण वा समोदहित्तए ५, बहिया वा लोगता गमणयाए ६" इन छह स्थानों को लेकर के जीव में न कोई ऐसी ऋद्धि है और न कोई ऐसा पराक्रम है कि जिससे वह जीव को अजीवरूप में एवं अजीव को जीव रूपमें कर सके और एक ही समय में दो भाषाओं को बोल सके अतः जब जीव में ऐसी कोई शक्ति

વાગ્યોગ હોય છે આ રીતે તથાવિધ (તે પ્રકારના) મનોયોગપૂર્વક થવાથી વાગ્યોગમાં એકતા હોય છે અથવા–સત્યાદિ વાગ્યોગમાંથી એક સમયે કોઈ એક જ વાગ્યોગનો સદ્ભાવ રહે છે તેથી પણ અહીં વાગ્યોગમાં એકત્વ પ્રકટ કર્યું છે કહ્યું પણ છે કે—

(છહિં ઠાણેહિં णत्थि जीवाणं इड्ढीइ वा, जुईइ वा, जसेइ वा, बलेइ वा, वीरिए वा, पुरिसक्कारपरक्कमेइ वा,-तं जहा जीवं वा अजीव करणयाए१, अजीवं वा जीव करणयाए२, एग समएणं दो भासाओ भासित्तए३ सयं कडं वा कम्म वेएमि वा मा वा वेएमि४, परमाणुपोग्गल वा छिंदित्तए वा भिंदित्तए वा अगणिकाएण वा समोदहित्तए५, बहिया वा लोगंता गमणयाए६)

આ છ સ્થાનોની અપેક્ષાએ જીવમાં એવી કોઈ ઋદ્ધિ પણ નથી કે એવો તે પરાક્રમ પણ નથી કે જે તે (૧) જીવને અજીવરૂપે કે અજીવને જીવરૂપે કરી શકે, (૨) કે એક જ સમયે બે ભાષાઓ બોલી શકે, ઇત્યાદિ જીવમાં જો

यप्रयोगप्रतिपादनमसंगतं स्यात्, अत एकदा एक एव काययोगः प्रतिपत्तव्यः। एवमेव यदा चक्रवर्त्यादि वैक्रियशरीरं विकरोति, तदाऽप्यौदारिकशरीरं निर्व्यापारमेव तिष्ठति। यदि औदारिकशरीरमपि यदा सव्यापारं भवेत्तदा उभयोरपि व्यापारवत्त्वात् केवलिसमुद्घातवद् मिश्रयोगता स्यात्, अत एकदा एक एव काययोगो भवतीति मन्तव्यम्। अथ चेत् काययोगोऽपि औदारिकतया वैक्रियतया च क्रमेण व्यापारयुक्तो भवति, व्यापारस्य च शीघ्रवृत्तितया मनोयोगवत्तस्य यौगपद्यभ्रान्तिर्भवति, तदाऽप्येकत्वमव्याहतमेवेति नास्ति कश्चिद् दोषः।

समयों में औदारिक मिश्रता होती है, इस तरह से आहारक प्रयोक्ता ही को उपलब्ध नहीं हो सकेगा तब सात प्रकार के काययोग का प्रतिपादन असंगत पड़ जावेगा इसलिये यही मानना चाहिये कि एक समय में एक जीव को एक ही काययोग होता है इसी तरह से सब चक्रवर्ती आदि वैक्रियशरीर की विकुर्वणा करते हैं उस समय भी औदारिक शरीर अपने व्यापार से रहित ही होता है यदि उस समय औदारिक शरीर भी अपने व्यापार करनेवाला माना जावेगा तो ऐसी हालत में दोनों ही काययोग अपना २ व्यापार करने वाले एक समय में हो जावेंगे तो केवली समुद्घात की तरह वहां मिश्रयोगता आ जावेगी इसलिये यही मानना चाहिये कि एक काल में एक जीव में एक ही काययोग होता है यदि इस पर यों कहा जावे कि काययोग भी औदारिकरूप से और वैक्रियरूप से यद्यपि क्रम २ से ही अपने २ व्यापार से युक्त होता है परन्तु फिर भी उनके व्यापार में आशु (शीघ्र) वृत्तिता होने के

યોમા જ સભવી શકે છે આ રીતે આહારક શરીરનુ નિર્માણ કરનાર જીવમાં જો ઔદારિક મિશ્રતા જ સભવતી નથી, તો સાત પ્રકારના કાયયોગ તો કેવી રીતે સભવી જ શકે ? તેથી એ વાત માનવી જ પડશે કે એક સમયે એક જીવમાં એક જ કાયયોગને સદ્‌ભાવ હોઈ શકે છે. એજ પ્રમાણે જ્યારે ચક્રવર્તી આદિ વૈક્રિય શરીરની વિકુર્વણા કરે છે, ત્યારે પણ ઔદારિક શરીરના વ્યાપાર (પ્રવૃત્તિ) ને અભાવ જ રહે છે. જો તે સમયે ઔદારિક શરીરને પણ પોતાના વ્યાપારથી યુક્ત માનવામા આવે, તો બન્ને કાયયોગ એક જ સમયે પોતપોતાના વ્યાપારથી યુક્ત બની જશે, એવી પરિસ્થિતિમાં તો ત્યાં કેવલી સમુદ્ઘાતના જેવી મિશ્રયોગતા આવી જશે તે કારણે એવુ જ માનવું પડશે કે એક કાળે એક જીવમાં એક જ કાયયોગને સદ્‌ભાવ રહે છે. જો અહીં એવી દલીલ કરવામા આવે કે બન્ને કાયયોગ–ઔદારિકરૂપે અને વૈક્રિય રૂપે ભલે વારાફરતી પોતપોતના વ્યાપારથી યુક્ત રહેતા હોય, પરન્તુ તેમના

ननु जीवो यदा आहारक शरीरमाहरति तदा तस्य औदारिकशरीरमप्यवस्थितं भवतीति श्रूयते, तर्हि कथमेकदा एक एव काययोग उक्तः ? इति चेत्,

अत्रोच्यते—सत्यपि औदारिके शरीरे तदा तस्य व्यापारो न भवति आहारक शरीरस्यैव व्याप्रियमाणत्वात्। यदि च औदारिक शरीरमपि तदा व्याप्रियमाण भवेत् तर्हि मिश्रयोगता स्यात् केवलिसमुद्घाते द्वितीयषष्ठसप्तमसमयेषु औदारिकमिश्रवत्, सतम आहारकमयोक्ता एव नोपलभ्येत, इत्थं च सप्तविभक्ता

कि दो आदि काययोग एक समय में एक जीव के नहीं होते हैं। इसीसे उसमें एकता कही गई है

शंका—जीव जिस समय आहारक शरीर का आहरण करता है-निर्माण करता है उस समय उसके औदारिक शरीर भी रहता है ऐसी बात सुनी जाती है-तो फिर एक समय में एक ही काययोग होता है यह बात कैसे बन सकती है ?

उ०—जीव० छठे गुणस्थानवर्ती कोई २ मुनि-जब आहारक शरीर का निर्माण करता है उस समय उसके यद्यपि औदारिक शरीर रहता है परन्तु फिर भी उसके उसका व्यापार नहीं होता है क्यों कि उस समय उसका आहार शरीर ही व्यापृत होता है यदि औदारिक शरीर भी उस समय उसका व्यापृत हुआ मान लिया जावे-अर्थात् आहारक शरीर के व्यापार करने के समय में औदारिक शरीर भी व्यापार कर रहा है ऐसा स्वीकार किया जावे तो उसके मिश्रयोगता होनी चाहिये जैसी कि केवली समुद्घात के समय में द्वितीय, षष्ठ, और सप्तम

એક જ કાયયોગ થાય છે—જીવ દ્વારા એક જ સમયે બે ત્રણ આદિ કાયયોગ થતા નથી. તે કારણે જ તેમાં એકતા કહી છે

શંકા—જીવ જે સમયે આહારક શરીરનું નિર્માણ કરે છે, તે સમયે તેને ઔદારિક શરીરનો પણ સદ્ભાવ રહે છે, એવું સાંભળવામાં આવ્યું છે છતાં એક સમયમાં એક જ કાયયોગ કેવી રીતે સંભવી શકે છે ?

ઉત્તર—જીવ છઠ્ઠા ગુણસ્થાનવર્તી કોઈ મુનિ-જ્યારે આહારક શરીરનું નિર્માણ કરે છે, ત્યારે જો કે તેના ઔદારિક શરીરનું અસ્તિત્વ તો રહે જ છે પરન્તુ તે સમયે તેના ઔદારિક શરીરની પ્રવૃત્તિ બંધ થઈ જાય છે જો તે સમયે તેના આહારક શરીરની સાથે સાથે તેના ઔદારિક શરીરની પ્રવૃત્તિ પણ ચાલુ રહેતી હોય, તો તેને મિશ્રયોગતાનો સદ્ભાવ હોવો જોઈએ. તે પ્રકારની મિશ્રયોગતા તો કેવલી સમુદ્ઘાતના બીજા, છઠ્ઠા અને સાતમાં સમ

योगप्रतिपादनमसंगतं स्यात्, अत एकदा एक एव काययोगः प्रतिपत्तव्यः। एवमेव यदा चक्रवर्त्यादि वैक्रियशरीरं विकरोति, तदाऽप्यौदारिकशरीरं निर्व्यापारमेव तिष्ठति। यदि औदारिकशरीरमपि यदा सव्यापारं भवेत्तदा उभयोरपि व्यापारवत्त्वात् केवलिसमुद्घातवद् मिश्रयोगता स्यात्, अत एकदा एक एव काययोगो भवतीति मन्तव्यम्। अथ चेत् काययोगोऽपि औदारिकतया वैक्रियतया च क्रमेण व्यापारयुक्तो भवति, व्यापारस्य च शीघ्रवृत्तितया मनोयोगवत्तस्य यौगपद्यभ्रान्तिर्भवति, तदाऽप्येकत्वमव्याहतमेवेति नास्ति कश्चिद् दोषः।

समयों में औदारिक मिश्रता होती है, इस तरह से आहारक प्रयोक्ता ही को उपलब्ध नहीं हो सकेगा तब सात प्रकार के काययोग का प्रतिपादन असंगत पड़ जावेगा इसलिये यही मानना चाहिये कि एक समय में एक जीव को एक ही काययोग होता है इसी तरह से सब चक्रवर्ती आदि वैक्रियशरीर की विकुर्वणा करते हैं उस समय भी औदारिक शरीर अपने व्यापार से रहित ही होता है यदि उस समय औदारिक शरीर भी अपने व्यापार करनेवाला माना जावेगा तो ऐसी हालत में दोनों ही काययोग अपना २ व्यापार करने वाले एक समय में हो जावेंगे तो केवली समुद्घात की तरह वहां मिश्रयोगता आ जावेगी इसलिये यही मानना चाहिये कि एक काल में एक जीव में एक ही काययोग होता है यदि इस पर यों कहा जावे कि काययोग भी औदारिकरूप से और वैक्रियरूप से यद्यपि क्रम २ से ही अपने २ व्यापार से युक्त होता है परन्तु फिर भी उनके व्यापार में आशु (शीघ्र) वृत्तिता होने के

યોમા જ સભવી શકે છે આ રીતે આહારક શરીરનુ નિર્માણ કરનાર જીવમા જો ઔદારિક મિશ્રતા જ સંભવતી નથી, તો સાત પ્રકારના કાયયોગ તો કેવી રીતે સભવી જ શકે? તેથી એ વાત માનવી જ પડશે કે એક સમયે એક જીવમાં એક જ કાયયોગનો સદ્‌ભાવ હોઈ શકે છે. એજ પ્રમાણે જ્યારે ચક્રવર્તી આદિ વૈક્રિય શરીરની વિકુર્વણા કરે છે, ત્યારે પણ ઔદારિક શરીરના વ્યાપાર (પ્રવૃત્તિ) નો અભાવ જ રહે છે. જો તે સમયે ઔદારિક શરીરને પણ પોતાના વ્યાપારથી યુક્ત માનવામાં આવે, તો બન્ને કાયયોગ એક જ સમયે પોતપોતાના વ્યાપારથી યુક્ત બની જશે, એવી પરિસ્થિતિમાં તો ત્યાં કેવલી સમુદ્‌ઘાતના જેવી મિશ્રયોગતા આવી જશે. તે કારણે એવું જ માનવું પડશે કે એક કાળે એક જીવમાં એક જ કાયયોગનો સદ્‌ભાવ રહે છે. જો અહીં એવી દલીલ કરવામા આવે કે બન્ને કાયયોગ–ઔદારિકરૂપે અને વૈક્રિયરૂપે ભલે વારાફરતી પોતપોતાના વ્યાપારથી યુક્ત રહેતા હોય, પરન્તુ તેમના

इत्थं च काययोगस्यैकत्वे सिद्धे सति मनोयोगवाग्योगयोरकत्वं बोध्यम्। तथाहि—औदारिकादिकाययोगाहृतानां मनोद्रव्यवाग्द्रव्याणां साचिव्याद् यो जीव व्यापारो भवति स एव मनोयोगो वाग्योगश्च भवति। मनोयोगो वाग्योगश्च एकका ययोगपूर्वक एव। अतश्चापि—मनोयोग वाग्योगयोरेकत्वं सिध्यति ॥ सू०४३ ॥

सम्प्रति कायव्यायामस्यैव भेदानामेकत्वमाह—

मूलम्—एगे उट्ठाण कम्मबलवीरियपुरिसकारपरक्कमे देवा

कारण एक जीवको एक काल में एक ही काययोग होता है ऐसी भ्रान्ति होती है, सो इस कथन में भी हमारा ही पक्ष सिद्ध होता है क्यों कि एक कालमें एक जीव को एक ही काययोग होता है यह हमारा पक्ष है और इस तुम्हारे कथन से भी इसी पक्ष की पुष्टि हो जाती है इस प्रकार से एक काल में एक जीव में एक ही काययोग होने की सिद्धि हो जाने पर मनोयोग और वाग्योग में भी एकत्व जानना चाहिये औदारिक आदि काययोगसे आहृत मनोद्रव्यवर्गणा और वाग्द्रव्यवर्गणा ओंकी सहायतासे जो जीवका व्यापार होता है वही मनोयोग और वाग्योग कहा गया है, मनोयोग और वाग्योग एक काययोगपूर्वक ही होता है। इसलिये भी मनोयोग और वाग्योगमें भी एकता सिद्ध होती है ॥सू०४३॥

कायव्यायाम के ही भेदों में एकत्व का कथन

'एगे उट्ठाणकम्मबलवीरियपुरिसकारपरक्कमे देवासुरमणुयाण

વ્યાપારમાં શિથિલવૃત્તિતા હોવાને કારણે એક જીવ દ્વારા એક કાળે એક જ કાયયોગ થાય છે એવો ભ્રમ પેદા થાય છે તો આ કથન દ્વારા તો અમારી વાતને જ સમર્થન મળે છે કારણ કે અમે પણ એમ જ કહીએ છીએ કે એક કાળે એક જીવ દ્વારા એક જ કાયયોગ થાય છે, અને તમારી વાત દ્વારા પણ અમારી ઉપર્યુક્ત માન્યતાને જ પુષ્ટિ મળે છે આ રીતે એક કાળે એક જીવમાં એક જ કાયયોગનો સદ્ભાવ હોવાની વાત સિદ્ધ થવાથી મનોયોગ અને વચનયોગમાં પણ એકત્વ સિદ્ધ થાય છે ઔદારિક આદિ કાયયોગથી આહૃત (ગ્રહણ કરાયેલ) મનોદ્રવ્ય વર્ગણા અને વાગ્દ્રવ્ય વર્ગણાઓની સહાયતાથી જીવની જે પ્રવૃત્તિ (વ્યાપાર) થાય છે તેને જ મનોયોગ અને વાગ્યોગ કહેવામાં આવેલ છે મનોયોગ અને વાગ્યોગ એક કાયયોગ પૂર્વક જ થાય છે તેથી પણ મનોયોગ અને વાગ્યોગમાં એકતા સિદ્ધ થાય છે ॥સૂ૦૪૩॥

કાય વ્યાયામના જ ભેદોમાં એકત્વનું કથન—

એગે ઉટ્ઠાણ કમ્મબલવીરિયપુરિસકારપરક્કમે દેવાસુરમણુયાણં તંસિ

सुरमणुयाणं तंसि तंसि समयंसि ॥ सू० ४४ ॥

छाया—एकम् उत्थानकर्मवलवीर्यपुरुषकारपराक्रमं देवासुरमनुजानां तस्मिन् तस्मिन् समये ॥ सू० ४४ ॥

टीका—' एगे उट्ठाण ' इत्यादि—

देवासुरमनुजानां तस्मिन् तस्मिन् समये उत्थानकर्मवलवीर्यपुरुषकारपराक्रमम्—तत्र उत्थानम्=ऊर्ध्वीभवनरूपा चेष्टा कर्म=क्रिया-गमनादिरूपम्, बलम्-शारीरिकशक्तिः, वीर्यम्=आत्मनः शक्तिः, पुरुषकारः=पुरुषत्वाभिमानः, पराक्रमः=उत्साहः, एषां समाहारद्वन्द्वः, उत्थानादिकं प्रत्येकम् एकम्=एकत्वसंख्याविशिष्टम्। उत्थानादयश्च वीर्यान्तरायक्षयक्षयोपशमसमुत्पन्ना जीवपरिणामविशेषाः। वीर्यान्तरायक्षयक्षयोपशमवैचित्र्यात् उत्थानादिकमेकैकं यद्यपि जघन्यादि भेदैरनेकविधम्,

---

तंसि तंसि समयंसि ॥ ४४ ॥

मूलार्थ—देव, असुर, मनुष्य इनके उत्थान कर्म, बल, वीर्य, पुरुषकार और पराक्रम उस उस समय में एक होता है ॥ ४४ ॥

टीकार्थ—ऊर्ध्वीभवनरूप चेष्टा का नाम अर्थात् उठने का नाम उत्थान है गमनादिरूप क्रिया का नाम कर्म है शारीरिक शक्ति का नाम बल है आत्मा की शक्ति का नाम वीर्य है पुरुषत्वाभिमान-पुरुषार्थ-का नाम पुरस्कार है उत्साह का नाम पराक्रम है इनमें से प्रत्येक देव, असुर और मनुष्यों को उस २ काल में एक ही होता है ये उत्थान आदिक वीर्यान्तरायकर्म के क्षय और क्षयोपशमसे उत्पन्न होते हैं, अतः ये जीव के ही परिणाम विशेषरूप माने गये हैं। यद्यपि ये उत्थानादिक प्रत्येक, वीर्यान्तराय के क्षय और क्षयोपशम की विचित्रता को लेकर

तंसिं समयसि " ॥ ४४ ॥

સૂત્રાર્થ—દેવ, અસુર અને મનુષ્યોના ઉત્થાન, કર્મ, બલ, વીર્ય, પુરુષકાર અને પરાક્રમ તે તે સમયે એક હોય છે

ટીકાર્થ—ઉત્થાન એટલે ઉઠવું તે અથવા ઉર્ધ્વી-ભવનરૂપ ચેષ્ટા. એટલે કે ઉઠવાની ક્રિયાને ઉત્થાન કહે છે. ગમનાદિરૂપ ક્રિયાને કર્મ કહે છે. શારીરિક શક્તિને બળ કહે છે. આત્મિક શક્તિને વીર્ય કહે છે પુરુષત્વાભિમાન પુરુષાર્થનુ નામ પુરસ્કાર છે, અને ઉત્સાહનું નામ પરાક્રમ છે તે ઉત્થાન આદિ છ ક્રિયાઓમાથી એક જ સમયે દેવ, અસુર અને મનુષ્યોમાં એક જ ક્રિયાનો સદ્‌ભાવ હોય છે વીર્યાન્તરાય કર્મના ક્ષય અને ક્ષયોપશમથી તે ઉત્થાન આદિની ઉત્પત્તિ થાય છે, તેથી તેમને જીવના જ પરિણામ વિશેષરૂપ માનવામાં આવ્યાં છે. જો કે વીર્યાન્તરાયના ક્ષય અને ક્ષયોપશમની વિચિત્રતાને લીધે

तथापि एक जीवस्य एकदा एकविधैव क्षयक्षयोपशममात्रा भवति, अतस्तज्जन्यो जघन्याद्यन्यतमविशिष्ट उत्थानादि रेक एव भवति, कारणमात्राधीनत्वात् कार्यमात्राया इति ॥ सू० ४४ ॥

अभ्युत्थानादिभिश्च ज्ञानादिर्मोक्षमार्गो लभ्यते, अतो ज्ञानादिकं निरूपयति-

मूलम्—एगे नाणे एगे दंसणे एगे चरित्ते ॥ सू० ४५ ॥

छाया—एकं ज्ञानम् एकं दर्शनम् एकं चारित्रम् ॥ सू० ४५ ॥

टीका—'एगे नाणे' इत्यादि—

ज्ञानम्—ज्ञायन्ते परिच्छिद्यन्ते यथावस्थितपदार्था अनेनेति ज्ञानम्—ज्ञानावरण-दर्शनावरणयोः क्षयः क्षयोपशमो वा, ज्ञाति र्वा ज्ञानम्—ज्ञानावरणदर्शनावरणक्षय

जघन्यादि के भेद से अनेक प्रकार के होते हैं फिर भी एक जीव के एक काल में एक प्रकार के ही क्षय क्षयोपशम की मात्रा होने से तज्जन्य जघन्य उत्थान आदि में से कोई एक जघन्यादि उत्थान आदि ही होता है क्यों कि कार्यमात्र कारणमात्राका आधीन होता है ॥ सू०४४ ॥

अभ्युत्थान आदि द्वारा ज्ञानादिरूप मोक्षमार्ग प्राप्त होता है इसलिये अब सूत्रकार ज्ञानादिक का निरूपण करते हैं-

'एगे नाणे एगे दसणे एगे चरित्ते' ॥४५॥

मूलार्थ—ज्ञान एक है दर्शन एक है चारित्र एक है।

टीकार्थ—पदार्थ यथा व्यवस्थितरूप से जिसके द्वारा जाने जाते हैं उसका नाम ज्ञान है अथवा-ज्ञानावरण और दर्शनावरण का क्षय और क्षयोपशम ज्ञान है अथवा ज्ञाति-जानने रूप क्रिया का नाम ज्ञान है

તે ઉત્થાન આદિ પ્રત્યેક કાયયોગના જઘન્ય આદિના ભેદથી અનેક પ્રકાર પડે છે, છતાં પણ એક જીવમાં એક કાળે એક પ્રકારના જ ક્ષય અથવા ક્ષયોપશમની માત્રા હોવાથી તેના દ્વારા જનિત જઘન્ય ઉત્થાન આદિમાંથી કોઈ એક જઘન્ય ઉત્થાનાદિ જ સંભવી શકે છે કારણ કે કાર્યમાત્રા (કાર્યની માત્રા) કારણમાત્રાને આધીન હોય છે ॥ ૪૪ ॥

અભ્યુત્થાન આદિ દ્વારા જ્ઞાનાદિરૂપ મોક્ષમાર્ગની પ્રાપ્તિ થાય છે, તેથી હવે સૂત્રકાર જ્ઞાનાદિકનું નિરૂપણ કરે છે—

"एगे नाणे एगे दसणे एगे चरित्ते" ॥ ૪૫ ॥

સૂત્રાર્થ—જ્ઞાન એક છે, દર્શન એક છે અને ચારિત્ર એક છે

ટીકાર્થ—પદાર્થના યથાર્થ સ્વરૂપને જેના દ્વારા જાણી શકાય છે, તે જ્ઞાન છે અથવા-જ્ઞાનાવરણ અને દર્શનાવરણનો ક્ષય અને ક્ષયોપશમ જ જ્ઞાનરૂપ છે

क्षयोपशमाविर्भूतं स्वपरस्वरूपपरिच्छेदरूपम्। इदं सामान्यविशेषात्मके वस्तुनि विशेषांशग्रहणपटु सामान्यांशग्राहकं च ज्ञानपञ्चकाज्ञानत्रयदर्शनचतुष्टयरूपम्। तद् ज्ञानम्-एकम्=एकत्वसंख्याविशिष्टम्। इदं चानेकविधमपि ज्ञानसामान्यमाश्रित्य एकम्। यद्वा-एकसमये एक एव उपयोगो भवतीति उपयोगापेक्षया एकत्वम्। अयं भावः-लब्धिवशादेकस्मिन् समये बहूनां ज्ञानविशेषाणां यद्यपि संभवोऽस्ति, तथाऽप्युपयोगत एकमेव ज्ञानं भवति, जीवानामेकोपयोगित्वादिति।

अथवा ज्ञानावरण दर्शनावरण के क्षय और क्षयोपशम से अन्यत्र हुआ जो स्वपर के स्वरूपका परिच्छेद है (निर्णय) वह ज्ञान है यह ज्ञान सामान्य विशेषात्मक वस्तु में विशेषांश और सामान्यांश का ग्राहक होता है मतिश्रुत आदि पांच ज्ञान स्वरूप होता है मत्यज्ञान, श्रुतज्ञान और विभंगज्ञान रूप तीन अज्ञान स्वरूप होता है चक्षुदर्शन आदि रूप चार दर्शन रूप होता है ऐसा भी यह ज्ञान एक-एकत्व संख्याविशिष्ट होता है इस प्रकार के कथन का कारण ज्ञान सामान्य है अर्थात् पूर्वोक्तरूप से यद्यपि ज्ञान अनेक प्रकार का होता है परन्तु फिर भी वह ज्ञान सामान्य की अपेक्षा से एक है अथवा जीव को एक समय में एक ही उपयोग होता है इस अपेक्षा ज्ञान में एकता है मतलब कहने का यह है यद्यपि लब्धि के वश से एक समय में एक जीव में अनेक ज्ञान हो सकते हैं फिर भी उपयोग की अपेक्षासे एक जीव में एक ही ज्ञान होता है, क्यों कि जीव एक समय में एक ही उपयोग वाला होता है।

અથવા-“ ज्ञाति ” જાણવારૂપ ક્રિયાને જ્ઞાન કહે છે અથવા-જ્ઞાનાવરણુ અને દર્શનાવરણુના ક્ષય અને ક્ષયોપશમ વિના બીજી રીતે થયેલ જે સ્વ અને પરના સ્વરૂપનો પરિચ્છેદ (જ્ઞાન) છે, તેને જ્ઞાન કહે છે. તે જ્ઞાન સામાન્ય વિશેષાત્મક વસ્તુમાં વિશેષાંશ અને સામાન્યાંશનુ ગ્રાહક હોય છે મતિજ્ઞાન, શ્રુતજ્ઞાન આદિ પાંચ જ્ઞાનસ્વરૂપ હોય છે, અને મત્યજ્ઞાન (મતિ-અજ્ઞાન) શ્રુતજ્ઞાન અને વિભ ગજ્ઞાન, એ ત્રણુ અજ્ઞાનસ્વરૂપ હોય છે ચક્ષુદર્શન આદિ રૂપ ચાર દર્શનરૂપ હોય છે એવુ તે જ્ઞાન પણુ એકત્વ સંખ્યાવિશિષ્ટ છે. જો કે પૂર્વોક્ત રૂપે જ્ઞાન અનેક પ્રકારનુ હોય છે, પણુ તે જ્ઞાનને અહીં જ્ઞાનસામાન્યની અપેક્ષાએ એક કહ્યું છે અથવા જીવમાં એક સમયે એક જ ઉપયોગનો સદ્‌ભાવ હોય છે, તે દૃષ્ટિએ વિચારતા જ્ઞાનમા એકતા દેખાય છે. કહેવાનું તાત્પર્ય એ છે કે લબ્ધિના પ્રભાવથી જો કે એક જીવમા એક સમયે અનેક જ્ઞાનનો સદ્‌ભાવ હોઇ શકે છે, છતા પણુ ઉપયોગની અપેક્ષાએ તો એક જીવમા એક સમયે એક જ જ્ઞાન હોય છે, કારણુ કે જીવ એક સમયે એકજ ઉપયોગવાળો હોય છે.

ननु दर्शनमपि यद् ज्ञानपदेन व्यपदिश्यते, तदयुक्तम्, तयोर्विषयभेदात्, उक्तं च-" जं सामण्णगहणं दंसणमेयं विसेसियं नाणं ॥ "

छाया—यत्सामान्यग्रहणं दर्शनमेतद् विशेषितं ज्ञानम् " इति ।

अत्रोच्यते—सामान्यग्राहकत्वाद् अवग्रहेहारूपं दर्शनम्, तथा-विशेषग्राहकत्वादवायधारणे ज्ञानम्, इति दर्शनं च यद्यपि पृथग्विषयम्, तथापि-आगमे ज्ञानशब्देन ज्ञानदर्शनोभयमपि गृहीतम् । उक्तं च—

आभिनिबोहियनाणे अट्ठावीसं हवंति पयडीओ " ।

छाया—आभिनिबोधिकज्ञानेऽष्टाविंशतिर्भवन्ति प्रकृतयः"-इति ।

टीका—आपने यहां जो ज्ञानपद से दर्शन को भी ग्रहण कर लिया है वह ठीक नहीं है क्यों कि इन दोनों का विषय भिन्न २ है अतः इनमें भेद है ।

उक्तं च—" जं सामण्णगहणं दंसणमेयं विसेसियं नाणं "

सामान्य को ग्रहण करनेवाला दर्शन होता है और विशेष को ग्रहण करने वाला ज्ञान होता है

उ०—सामान्य ग्राहक होने से अवग्रह एवं ईहारूप दर्शन होता है तथा-विशेष ग्राहक होने से अवाय और धारणारूप ज्ञान होता है इस तरहसे यद्यपि ज्ञान और दर्शन पृथक् पृथक् विषयवाले होते हैं फिर भी आगममें ज्ञान शब्दसे ज्ञान और दर्शन इन दोनोंका भी ग्रहण हुआ है।

શંકા—આપે અહીં જે જ્ઞાનપદ દ્વારા દર્શનને પણ ગ્રહણ કર્યું છે તે યોગ્ય લાગતું નથી, કારણ કે તે બન્નેના વિષય ભિન્ન ભિન્ન છે; વળી શાસ્ત્રે તે બન્નેમાં ભેદ પ્રકટ કર્યો છે કહ્યું પણ છે કે-' जं सामण्णगहणं दंसणमेयं विसेसियं नाणं " " સામાન્યને ગ્રહણ કરનાર દર્શન છે અને વિશેષને ગ્રહણ કરનાર જ્ઞાન છે '

ઉત્તર—સામાન્યને ગ્રહણ કરનારું હોવાથી અવગ્રહ અને ઈહારૂપ દર્શન હોય છે તથા વિશેષને ગ્રહણ કરનારું હોવાથી અવાય અને ધારણારૂપ જ્ઞાન હોય છે આ રીતે જ્ઞાન અને દર્શન જુદા જુદા વિષયવાળા હોવા છતાં પણ તે બન્નેને આગમમાં જ્ઞાનરૂપે જ ગણવામાં આવેલ છે આ રીતે ' જ્ઞાન ' પદ દ્વારા જ્ઞાન અને દર્શનને ગ્રહણ કરવામાં આવેલ છે

કહ્યું પણ છે કે— आभिनिबोहियनाणे अट्ठावीसं हवंति पयडीओ" આ ગાથાદ્વારા " આભિનિબોધિક જ્ઞાન " પદથી જ્ઞાન અને દર્શન, એ બન્નેને ગ્રહણ કરવામાં

अत्र—आभिनिबोधिकज्ञानशब्देन ज्ञानं दर्शनं च गृहीतम् । अत एवास्य अष्टाविंशतिर्भेदा भवन्तीति बोध्यम् । तस्मात् ज्ञानसामान्याद् दर्शनमपि ज्ञानपद-व्यपदेश्यं भवति ।

ननु अत्र सूत्रे 'एगे दंसणे' इत्यनेन दर्शनं पृथगेवोक्तम्, कथं पुनर्ज्ञान-शब्देन दर्शनमपि व्यपदिश्यते ? इति चेत्, अत्रोच्यते तत्र हि दर्शनं श्रद्धानं विव-क्षितम् । यतो ज्ञानादित्रयस्य सम्यग्भावविशिष्टस्यैव मोक्षमार्गत्वमुक्तं, नतु ज्ञान-

---

उक्तं च—"आभिणिबोहियनाणे अट्ठावीसं हवंति पयडीओ"

इस गाथामें आभिनिबोधिक ज्ञान शब्दसे ज्ञान और दर्शन ये दोनों ही गृहीत हुए हैं, तभी जाकर २८ भेद हुए यहां समझाये गयेहैं । इसलिये ज्ञान सामान्यसे दर्शन भी ज्ञानपद व्यपदेश्य हुआ है ऐसा जानना चाहिये।

शंका—इस सूत्र में "एगे दंसणे" इस पदसे दर्शन जब अलग ही कहा गया है तो फिर आप ऐसा कैसे कहते हैं कि ज्ञान शब्दद्वारा दर्शन भी कह दिया जाता है अर्थात् ज्ञानपदका वाच्य दर्शन भी हो जाता है ?

उ०—सूत्र में "दर्शन" शब्द से श्रद्धान विवक्षित हुआ है क्यों कि सम्यग् भाव से विशिष्ट ही ज्ञानादित्रय में मोक्षमार्ग कहा गया है ज्ञानदर्शन चारित्र मात्रा में मोक्षमार्गता नहीं कही गई है अतः मोक्ष के मार्गभूत ऐसे सम्यग्भाव विशिष्ट ज्ञानादित्रय में दर्शन शब्द श्रद्धान रूप अर्थ का ही वाचक है इसलिये कोई दोष नहीं है तात्पर्य कहने का यह है कि सूत्र में दर्शनपद श्रद्धान रूप दर्शन का वाचक है सामान्य

કરવામાં આવેલ છે ત્યારે જ આભિનિબોધિક જ્ઞાનના ૨૮ ભેદ થયેલા બતાવી શકાયા છે. આ રીતે 'જ્ઞાન સામાન્ય' પદના પ્રયોગ દ્વારા દર્શન પદનો પણ તેમાં સમાવેશ થયો છે, એમ સમજવુ

પ્રશ્ન—આ સૂત્રમા "एगे दंसणे" આ પદના પ્રયોગદ્વારા દર્શનનુ અલગ રૂપે પ્રતિપાદન કરવામાં આવ્યુ છે, તો આપ શા કારણે એવું કહો છો કે જ્ઞાન શબ્દના પ્રયોગદ્વારા દર્શનને પણ ગ્રહણ કરવામાં આવેલ છે ? અથવા જ્ઞાન પદનુ વાચક દર્શન પણ છે ?

ઉત્તર—સૂત્રમાં 'દર્શન' પદ શ્રદ્ધાના અર્થમા વપરાયુ છે કારણ કે સમ્યગ્ભાવથી યુક્ત જ્ઞાનાદિત્રયમાં (જ્ઞાન, દર્શન અને ચારિત્રમા) મોક્ષમાર્ગતા કહી છે-જ્ઞાન, દર્શનચારિત્રમા જ મોક્ષમાર્ગતા કહી નથી તેથી મોક્ષના માર્ગરૂપ સમ્યગ્ભાવયુક્ત જ્ઞાનાદિત્રયમાં દર્શન શબ્દ શ્રદ્ધારૂપ અર્થનું જ વાચક છે. તેથી તેનુ અલગરૂપે પ્રતિપાદન કરવામા કોઈ દોષ જણાતો નથી સૂત્રમા તો દર્શનપદ શ્રદ્ધાવાચક છે-સામાન્યને ગ્રહણ કરનાર દર્શનનુ

दर्शनचारित्रमात्रस्य । मोक्षमार्गभूते सम्यग्मात्रविशिष्टे ज्ञानादित्रये दर्शनं श्रद्धानरूपमत्र विवक्षितम्, अतो नास्ति कश्चिद् दोष इति ।

अथ श्रद्धानरूपं दर्शनं निरूपयति—'एगे दंसणे' इति । दर्शनम्-दृश्यन्ते श्रद्धीयन्ते पदार्था अनेन अस्मात् अस्मिन्वेति दर्शनम्-दर्शनमोहनीयस्य क्षयः क्षयोपशमो वा । यद्वा-दृष्टिर्दर्शनम्-दर्शनमोहनीयक्षयक्षयोपशमजन्यस्तत्त्वश्रद्धानरूप आत्मपरिणामः । तत् एकम्=एकत्वसंख्याविशिष्टम् । यद्यपीदमुपाधिभेदाद्

को ग्रहण करनेवाले दर्शन का नहीं इसीलिये सूत्र में उसका पाठ अलग से किया गया है परन्तु जहां ज्ञान दर्शन का ग्रहण होता है वहां वह दर्शन पद श्रद्धानरूप अर्थ के वाचक दर्शन का बोधक नहीं होता है किन्तु सामान्य रूप अर्थ को ग्रहण करने वाले दर्शन का ही बोधक होता है सामान्य ज्ञान की दो धाराएँ बहती हैं एक धारा विशेष ग्राहक रूप होती है और दूसरी धारा सामान्यग्राहक रूप होती है विशेष ग्राहक रूप धारा का नाम ज्ञान है और सामान्य ग्राहक रूप धारा का नाम दर्शन है इसीलिये सामान्य ज्ञान पद से ज्ञान और दर्शन इन दोनों का ग्रहण हुआ बतलाया गया है ।

श्रद्धानरूप दर्शन का निरूपण—"एगे दंसणे" जिसके द्वारा अथवा जिससे अथवा जिसके होने पर पदार्थ श्रद्धा के विषयभूत किये जाते हैं उसका नाम दर्शन है यह दर्शन दर्शनमोहनीय कर्म के क्षय से और क्षयोपशम से जन्य होता है और तत्त्वों का श्रद्धान करने रूप आत्मा

વાચક નથી તેથી સૂત્રમાં તેનું અલગરૂપે પ્રતિપાદન કરાયું છે પરન્તુ જ્યાં જ્ઞાનપદ દ્વારા દર્શનને ગ્રહણ કરવામાં આવ્યું હોય છે ત્યાં દર્શન પદ શ્રદ્ધારૂપ અર્થનું બોધક બનતું નથી, પણ સામાન્યરૂપ અર્થને ગ્રહણ કરનાર દર્શનનું જ બોધક થાય છે સામાન્ય જ્ઞાનની બે ધારાઓ વહે છે—એક ધારા વિશેષ ગ્રાહકરૂપ હોય છે અને બીજી ધારા સામાન્ય ગ્રાહકરૂપ હોય છે તેમાંથી વિશેષગ્રાહકરૂપ ધારાનું નામ જ્ઞાન છે અને સામાન્ય ગ્રાહકરૂપ ધારાનું નામ દર્શન છે સામાન્ય જ્ઞાનપદના પ્રયોગદ્વારા જ્ઞાન અને દર્શન, એ બન્નેને ગ્રહણ કરવામાં આવે છે

શ્રદ્ધારૂપ દર્શનનું નિરૂપણ— "એગે દંસણે" જેના દ્વારા અથવા જેના સદ્ભાવને લીધે પદાર્થોને શ્રદ્ધાના વિષયભૂત કરાય છે પદાર્થોપર શ્રદ્ધા મૂકાય છે-તેનું નામ દર્શન છે તે દર્શનમોહનીય કર્મના ક્ષયથી ક્ષયોપશમથી જન્ય હોય છે અને તત્ત્વો પ્રત્યે શ્રદ્ધા રાખવારૂપ આત્મના એક પરિણામ વિશેષરૂપ

नेकविधं तथापि श्रद्धानसाम्यादेकमेव । अथवा-जीवस्य एकस्मिन् समये एकमेव श्रद्धानं भवतीति हेतोरस्यैवैकत्वं विवक्षितम् ।

ननु ज्ञाने दर्शने चाववोधसामान्यमस्ति, ततश्च तयोः को भेदः ? इति चेत्-अत्रोच्यते-तत्त्वश्रद्धानरूपं दर्शनमुच्यते, तत्कारणं तु ज्ञानम्, इत्येवानयोर्भेदः ।

अथ चारित्रं निरूपयति-'एगे चारित्ते' इत्यादि । चर्यते=मोक्षार्थिभिरासेव्यते इति चारित्रम्, चर्यते-गम्यते वाऽनेन निर्वृत्ताविति चारित्रम्, यद्वा-अष्टविधकर्मणां चयस्य रिक्तीकरणात् निरुक्तविधिनाचरित्रं, तदेव चारित्रम्-चारित्रमो-

का एक परिणाम विशेष होता है यद्यपि यह श्रद्धानरूप परिणाम उपाधि के भेद से अनेक प्रकार का होता है फिर श्रद्धान के साम्य को लेकर यह एक ही होता है अथवा-जीव को एक समय में एक ही श्रद्धान होता है इस कारण भी इसमें एकता कही गई है ऐसा जानना चाहिये।

शंका—ज्ञान और दर्शन में अवबोध सामान्य है-सामान्यबोध है इसलिये इनमें भेद क्यों कहा गया है ?

उ०—तत्त्व श्रद्धानरूप दर्शन होता है और इस दर्शन का कारण ज्ञान होता है इसलिये इन दोनों में कारण कार्य की अपेक्षा से भेद माना गया है।

चारित्र का निरूपण—"एगे चरित्ते" मोक्षाभिलाषियों द्वारा जो सेवित किया जाता है उसका नाम चारित्र है अथवा मुक्ति में जिस के द्वारा जाया जाता है वह चारित्र है अथवा-आठ प्रकार से कर्मों का समूह जिसके द्वारा आत्मासे रिक्त किया जाता है उसका नाम चारित्र

હોય છે. જો કે શ્રદ્ધારૂપ પરિણામના અનેક ભેદ કહ્યાં છે, છતાં પણ શ્રદ્ધાના સામ્યની અપેક્ષાએ તેમાં એકતા બતાવવામાં આવી છે અથવા જીવને એક સમયમાં એક જ શ્રદ્ધા થતી હોય છે, તે કારણે પણ તેમા એકતા પ્રકટ કરવામાં આવી છે, એમ સમજવું.

શંકા—જ્ઞાન અને દર્શનમા સામાન્ય બોધની અપેક્ષાએ તો એકતા રહેલી છે. છતા તે બન્નેને અલગ અલગ શા માટે ગણ્યા છે ?

ઉત્તર—દર્શન તત્ત્વશ્રદ્ધારૂપ હોય છે અને તે દર્શનનુ કારણ જ્ઞાન હોય છે. તેથી કારણકાર્યની અપેક્ષાએ તે બન્નેમા ભેદ માનવામાં આવેલ છે.

ચારિત્રનુ નિરૂપણ—"एगे चारित्ते" મોક્ષાભિલાષી જીવો દ્વારા જેનું સેવન કરવામા આવેલ છે, તેનુ નામ ચારિત્ર છે. અથવા જેના દ્વારા મુક્તિમાં જવાય છે તે ચારિત્ર છે. અથવા આઠ પ્રકારના કર્મોના સમૂહને જેના દ્વારા આત્માપરથી દૂર કરવામા આવે છે, તેનુ નામ ચારિત્ર છે. ચારિત્રમોહનીયના

हनीयस्य क्षयेण क्षयोपशमेन च जनित आत्मनो विरतिरूप परिणाम इति । तर्च एकम्=एकत्वसंख्याविशिष्टम् । समेषशनां सामायिकादीना विरतिसामान्येन ग्रहणा च्चारित्रस्यैकत्वम् । अथवा–एकस्मिन् समये एकमेव तत् भवतीति चारित्रस्यैकत्व मिति । ननु प्रथम ज्ञानं ततो दर्शनं ततश्चारित्रमिति यः क्रमो विधीयते, तत्र का युक्ति ? इति चेत्, उच्यते–यत किमप्यज्ञातं न श्रद्धीयते, यत्र श्रद्धा नास्ति, नहि तदनुष्ठीयते । अत एवं क्रमो निर्दिष्ट इति ॥ सू० ४५ ॥

ज्ञानादीनि ह्युत्पत्तिस्थितिविगतियुक्तानि भवन्ति, स्थितिश्च समयादिरेवेति समयं प्ररूपयति—

मूलम्—एगे समये ॥ सू० ४६ ॥

छाया—एक समयः ॥ सू० ४६ ॥

है यह चारित्र चारित्रमोहनीय के क्षय से और क्षयोपशम से उत्पन्न होता है इसलिये यह आत्मा का एक विरतिरूप परिणाम विशेष यद्यपि इसके सामायिक चारित्र आदि अनेक भेद हैं फिर भी विरति सामान्यसे इन सब का इसी में ग्रहण हो जाता है, इसलिये यह एक है–एकत्व-संख्याविशिष्ट है अथवा–एक समयमें यह एक ही होता है–इसलिये भी उसमें एकता कही गई है।

शंका—पहिले ज्ञान होता है फिर दर्शन होता है बाद में चारित्र होता है सो इस प्रकार के क्रम में क्या युक्ति है?

उ०—अज्ञात कोई भी पदार्थ श्रद्धा का विषय नहीं होता है और जिस पर श्रद्धा नहीं होती है वह अनुष्ठानक्रिया का विषय नहीं होता है इसीलिये ऐसा क्रम रक्खा है यही इसमें युक्ति है ॥ सू० ४५ ॥

ક્ષયથી અને ક્ષયોપશમથી આ ચારિત્ર ઉત્પન્ન થાય છે, તેથી તે આત્માનુ એક વિરતિરૂપ પરિણામવિશેષ છે જો કે તેના સામાયિક આદિ અનેક ભેદ છે છતાં પણ વિરતિ સામાન્યની અપેક્ષાએ તેમાં એકત્વ પ્રકટ કરવામાં આવ્યુ છે અથવા–એક સમયમાં તે એક જ હોય છે તેથી પણ તેને એક કહ્યુ છે

પ્રશ્ન—પહેલાં જ્ઞાન થાય છે ત્યારબાદ દર્શન થાય છે અને ત્યારબાદ ચારિત્રની પ્રાપ્તિ થાય છે તો આ ક્રમમાં શી યુક્તિ રહેલી છે ?

ઉત્તર—અજ્ઞાત હોય એવા કોઈ પણ પદાર્થ પ્રત્યે શ્રદ્ધા ઉત્પન્ન થતી નથી અને જેના ઉપર શ્રદ્ધા ઉત્પન્ન ન થાય તે અનુષ્ઠાન (ક્રિયા) નો વિષય પણ બની શકતો નથી તેથી જ આ પ્રકારનો ક્રમ રાખવામાં આવ્યો છે, અને એજ તેમાં યુક્તિ રહેલી છે ॥સૂ૦૪૫॥

टीका—'एगे' इत्यादि—

समय—निर्विभागः सर्वसूक्ष्मकालांशः, स च शास्त्रप्रसिद्धात् जीर्ण पट्टशाटिकापाटनदृष्टान्तात् शतपत्रोत्पलवेधदृष्टान्ताद् वा बोध्यः। स समयः—एकः=एकत्वसंख्याविशिष्टः। एकत्व च अतीतानागतयोर्विनष्टानुत्पन्नत्वेनासत्वाद् वर्तमानस्यैव एकस्य सत्त्वाद् वोध्यम्। अथवा—समयस्य निरंशत्वेनैकत्वादेकत्वं बोध्यमिति।सू० ४६।

ज्ञानादिक उत्पत्ति स्थिति और विगतियुक्त होते हैं इन में स्थिति जो है वह समयादिरूप ही होती है अतः सूत्रकार समय की प्ररूपणा करते हैं—'एगे समए' इत्यादि ॥ ४६ ॥

मूलार्थ—समय एक है ॥ ४६ ॥

टीकार्थ—जिसका विभाग नहीं हो सकता है ऐसा जो सर्वसूक्ष्म कालांश है उसका नाम समय है यह शास्त्रप्रसिद्ध जीर्ण पट्टशाटिका के फाडने के उदाहरण से या शतपत्रोत्पल के वेधने के दृष्टान्त से वोध्य है यह समय एकत्व संख्याविशिष्ट है क्यों कि अतीत और अनागत समय विनष्ट एवं अनुत्पन्न होनेसे एकत्वके रूप में विवक्षित हो जाने के कारण है नहीं अतः एक वर्तमान ही वचता है और यह वर्तमान काल एक समय मात्र होता है इसलिये समय को एक कहा गया है अथवा समय निरंश होने से एक होता है इसलिये उसमें एकता कही गई है ॥ सू० ४६ ॥

જ્ઞાનાદિ ઉત્પત્તિ, સ્થિતિ અને વિગતિરૂપ હોય છે. તેમાં જે સ્થિતિ હોય છે. તે સમયાદિ રૂપ જ હોય છે તેથી સૂત્રકાર હવે સમયની પ્રરૂપણા કરે છે—" एगे समए " ઇત્યાદિ ॥ ૪૬ ॥

સૂત્રાર્થ—સમય એક છે. ॥ ૪૬ ॥

ટીકાર્થ—જેનો વિભાગ થઇ શકતો નથી એવાં કાળના સૌથી સૂક્ષ્મ અંશને સમય કહે છે તે શાસ્ત્રપ્રસિદ્ધ જીર્ણ પટ્ટશાટિકા (વસ્ત્ર) ને ફાડવાના ઉદાહરણ દ્વારા તથા શતપત્રોત્પલ (સો પાંખડીવાળું પુષ્પ વિશેષ) ના દૃષ્ટાન્ત દ્વારા બોધ્ય છે. એટલે કે તે બે દૃષ્ટાન્તો દ્વારા તેનો અર્થ સમજાવવામાં આવ્યો છે. તે સમયમાં અહીં એકત્વ પ્રકટ કરવામાં આવ્યુ છે, કારણ કે અતીત અને અનાગત (ભવિષ્યકાળ) કાળરૂપ સમય વિનષ્ટ અને અનુત્પન્ન હોવાથી અસત્વના રૂપે (અસ્તિત્વહીન) બની જતો હોવાથી તેનુ અસ્તિત્વજ રહેતું નથી તેથી એક વર્તમાનકાળનું જ અસ્તિત્વ રહે છે તે વર્તમાનકાળનું અસ્તિત્વ પણ એક સમયનુજ હોય છે તે કારણેજ સમયને એક કહ્યો છે અથવા સમય નિરંશ હોવાથી એક હોય છે, તેથી તેમા એકતા કહી છે. ॥સૂ૦૪૬॥

निरंश समयं निरूप्य प्रस्तावसरो निरंशं वस्त्वपि निरूपयति—

मूलम्—एगे पएसे एगे परमाणू ॥ सू० ४७॥

छाया—एकः प्रदेशः, एकः परमाणुः ॥ सू० ४७ ॥

टीका—' एगे ' इत्यादि—

प्रदेश —प्रकृष्टो देशः प्रदेशः—धर्माधर्माकाशजीवानां निरंशोऽवयवविशेषः, स च एकः—एकत्वसंख्यावान् । एकत्वं चास्य स्वरूपतो बोध्यम् ।

अथ परमाणुं निरूपयति—' एगे परमाणू ' इति । परमाणुः—परमश्चासौ अणुश्चेति—द्व्यणुकादिस्कन्धकारणभूतोऽपि सूक्ष्मोऽणुः, उक्तं च—

" कारणमेव तदन्त्यं सूक्ष्मो नित्यश्च भवति परमाणुः ।
एकरसवर्णगन्धो द्विस्पर्शः कार्यलिङ्गश्च " ॥ १ ॥ इति ।

निरंश समय की प्ररूपणा करके अब सूत्रकार निरंश वस्तु की प्ररूपणा करते हैं—

'एगे पएसे एगे परमाणू' इत्यादि

मूलार्थ—प्रदेश एक है परमाणु एक है ॥ ४७ ॥

टीकार्थ—प्रकृष्ट देश का नाम प्रदेश है यह प्रदेश धर्म, अधर्म आकाश और जीवद्रव्यका निरंश अवयवविशेषरूप होता है यह एकत्व संख्याविशिष्ट है एकत्व इसमें स्वरूप से कहा गया है।

परमाणु का निरूपण—परम जो अणु है उसका नाम परमाणु है यह परमाणु द्व्यणुकादि स्कन्ध का कारणभूत होता है और अति सूक्ष्म होता है । कहा भी है—'कारणमेव तदन्त्यं ' इत्यादि

यह परमाणु कारणरूप ही होता है कार्यरूप नहीं होता है क्योंकि यह नित्य माना गया है इसमें एकरस, एकवर्ण, एकगन्ध और अवि

"एग पएसे एगे परमाणू" ઈત્યાદિ ॥ ४७ ॥

સૂત્રાર્થ—પ્રદેશ એક છે, પરમાણુ એક છે ॥ ४७ ॥

ટીકાર્થ—પ્રકૃષ્ટ દેશનું નામ પ્રદેશ છે તે પ્રદેશ ધર્મ, અધર્મ, આકાશ અને જીવદ્રવ્યના નિરંશ અવયવ વિશેષરૂપ છે તે એક છે તેમાં સ્વરૂપની અપેક્ષાએ એકત્વ સમજવાનું છે

પરમાણુનું નિરૂપણ—પરમ જે અણુ છે તેને પરમાણુ કહે છે બે, ત્રણ આદિ અણુવાળા સ્કંધની ઉત્પત્તિમાં આ અણુ કારણભૂત હોય છે તે અતિ શય સૂક્ષ્મ હોય છે કહ્યું પણ છે—'કારણમેવ' ઈત્યાદિ

આ પરમાણુ કારણરૂપ જ હોય છે, કાર્યરૂપ હોતું નથી, કારણ કે તેને નિત્ય માનવામાં આવેલ છે તેમાં એક રસ, એક વર્ણ, એક ગંધ અને કાઇ

स चायं परमाणुः, एक=एकत्वसंख्यावान्। एकत्वं चास्य स्वरूपत एव बोध्यम्। अथवा—समयप्रदेशपरमाणवो यद्यप्यनन्ताः, तथापि तेषु अनन्तभेदात्मकस्य एकैकस्य तुल्यरूपत्वमपेक्ष्यैकत्वमिति ॥ सू० ४७ ॥

यथा परमाणोस्तथाविधैकत्वपरिणामविशेषादेकत्वं भवति, तथैव तथाविधैक-परिणामविशेषादेव अनन्ताणुमयस्कन्धस्यापि एकत्वं स्यादिति दर्शयन् समस्तबादर-स्कन्धशीर्षस्थानीयमीषत्प्राग्भारनामकं पृथिवीस्कन्धं प्ररूपयति—

मूलम्—एगा सिद्धी, एगे सिद्धे, एगे परिनिव्वाणे, एगे परिनिव्वुए॥४८॥

रोधी कोई से दो स्पर्श रहते हैं तथा इस की सिद्धि इसके कार्यभूत घटादिकों से होती है ऐसा यह परमाणु एक संख्यावाला होता है यह एकता इसमें स्वरूपसे कही गई है अथवा—समय, प्रदेश और परमाणु यद्यपि अनन्त होते हैं परन्तु फिर भी इनमें से अनन्तभेदात्मक एक एक में तुल्यरूपताकी अपेक्षा लेकरके एकता है ऐसा जाना चाहिये॥सू०४७॥

जिस प्रकार से परमाणु में तथाविध एकत्वपरिणामरूप विशेषता को लेकर एकत्व होता है उसी तरह से तथाविध एकत्वपरिणामरूप विशेषता को लेकर अनन्ताणुमय स्कन्ध में भी एकता हो सकती है इसी बात को प्रकट करने के लिये समस्त बादर स्कन्धों में प्रधान जो ईषत्प्रा-ग्भार नाम का पृथिवी स्कन्ध है उसकी सूत्रकार प्ररूपणा करते हैं—

'एगा सिद्धी, एगे सिद्धे, एगे, परिनिव्वाणे, एगे परिनिव्वुए' ॥४८॥

मूलार्थ—सिद्धि एक है, सिद्ध एक है, परिनिर्वाण एक है, परि-निर्वृत्त एक है। ४८ ॥

પણ બે અવિરોધી સ્પર્શ વિદ્યમાન હોય છે તેથી સિદ્ધિ તેના કાર્યભૂત ઘટા-દિકોથી થાય છે. તે પરમાણુમાં તેના સ્વરૂપની અપેક્ષાએ એકત્વ પ્રકટ કરવામાં આવ્યું છે અથવા—જો કે સમય, પ્રદેશ અને પરમાણુ અનંત હોય છે, પરન્તુ અનેક ભેદાત્મક એક એકમા (પ્રત્યેકમાં) તુલ્યરૂપતા હોવાને લીધે તેમા એકતા કહી છે, એમ સમજવું ॥ ૪૭ ॥

જે પ્રકારે પરમાણુમાં તથાવિધ એકત્વ પરિણામરૂપ વિશેષતાની અપે-ક્ષાએ એકત્વ હોય છે, એજ પ્રમાણે તથાવિધ એકત્વ પરિણામરૂપ વિશેષતાની અપેક્ષાએ અનન્તાણુમય સ્કન્ધોમાં પણ એકતા હોઈ શકે છે. તેથી સમસ્ત બાદર સ્કન્ધોમાં મુખ્ય એવો જ ઇષત્પ્રાગ્ભારા નામના પૃથ્વી સ્કન્ધ છે, તેની સૂત્રકાર પ્રરૂપણા કરે છે—

" एगा सिद्धि, एगे सिद्धे, एगे परिनिव्वाणे, एगे परिनिव्वुए " ॥ ४८ ॥

छाया—एका सिद्धिः, एकः सिद्धः, एकं परिनिर्वाणम्, एकः परिनिर्वृतः ॥ सू० ४८ ॥

टीका—'एगा' इत्यादि—

सिद्धि-सिध्यन्ति=कृतकृत्या भवन्ति जीवा यस्यां सा सिद्धिः—ईषत्प्राग्भारा पृथिवी, सिद्धिश्च यद्यपि लोकाग्रम्,

उक्तं च—"इह बोंदिं चइत्ताणं तत्थ गंतूण सिज्झइ" ।

छाया—इह शरीरं त्यक्त्वा तत्र गत्वा सिध्यति—इति ॥

तथापि-तदुपलक्षकत्वात् ईषत्प्राग्भाराऽपि सिद्धिरुच्यते ।

उक्तं च—"बारसहिं जोयणेहिं सिद्धी सव्वट्ठसिद्धाउ ॥"

छाया—द्वादशभिर्योजनैः सिद्धिःसर्वार्थसिद्धात्—इति ॥

लोकाग्रमेव चेत् सिद्धिः स्यात्तर्हि—

"निम्मलदगरयवण्णा तुसारगोक्खीरहारसरिवण्णा" ॥

टीकार्थ—जीव जिसमें कृतकार्य हो जाते हैं उसका नाम सिद्धि है यह सिद्धि ईषत्प्राग्भारापृथिवी रूप है यद्यपि लोकाग्र का नाम सिद्धि है जैसा कि यहां कहा है—"इह बोंदिं चइत्ताणं तत्थ गंतूण सिज्झइ" जीव यहां मनुष्य लोक शरीर को छोड़कर के वहां जाकर सिद्ध हो जाते हैं—तो भी यह सिद्ध पद उसका उपलक्षक होने से ईषत्प्राग्भारा पृथिवी भी सिद्ध पद से व्यवहृत हो जाती है

उक्तं च—"बारसहिं जोयणेहिं सिद्धी सव्वट्ठसिद्धाउ"

सर्वार्थसिद्ध से आगे १२ योजन पर सिद्धि है इस तरह सिद्धि ईषत्प्राग्भारा पृथिवीरूप है यदि लोक का अग्रभाग ही सिद्धि है ऐसा माना जाये तो फिर यह वर्णन "निम्मलदगरयवण्णा तुसार

સૂત્રાર્થ—સિદ્ધ એક છે, સિદ્ધિ એક છે, પરિનિર્વાણ એક છે અને પરિનિવૃત્ત એક છે ॥ ૪૮ ॥

ટીકાર્થ—જીવ જેમાં કૃતકાર્ય થઈ જાય છે, તે સ્થાનનું નામ સિદ્ધિ છે તે સિદ્ધિ ઈષત્પ્રાગ્ભારા પૃથ્વીરૂપ છે એ કે "इह बोंदिं चइत्ताणं तत्थ गंतूण सिज्झइ" જીવ અહીંથી મનુષ્યલોક સંબંધી શરીરને છોડીને ત્યાં જઈને સિદ્ધ થઈ જાય છે" આ કથન અનુસાર લોકાગ્રનું નામ સિદ્ધિ છે, તો પણ આ સિદ્ધિપદ તેનું ઉપલક્ષક હોવાથી ઈષત્પ્રાગ્ભારા પૃથ્વી પણ સિદ્ધિપદથી ગૃહીત થઈ જાય છે કહ્યું પણ છે કે—'बारसहिं जोयणेहिं सिद्धी सव्वट्ठसिद्धाउ" સર્વાર્થ સિદ્ધ વિમાનથી આગળ વધતાં ૧૨ યોજનને અંતરે સિદ્ધસ્થાન છે આ રીતે સિદ્ધિ ઈષત્પ્રાગ્ભારા પૃથ્વીરૂપજ છે એ લોકના અગ્રભાગનેજ સિદ્ધિ માન

छाया—निर्मलदकरजोवर्णा तुषारगोक्षीर हारसदृशवर्णा–इत्यादि यत् सिद्धिस्वरूपवर्णनं कृतं तन्न संगच्छेत, लोकाग्रस्यामूर्तत्वात्। तस्मादस्मिन् सूत्रे सिद्धिपदेन–ईषत्प्राग्भारा पृथिव्येव बोध्या। सा च एका=एकत्वसंख्याविशिष्टा। द्रव्यार्थतया पञ्चचत्वारिंशद्योजनलक्षप्रमाणस्कन्धस्यैकपरिणामत्वात् सिद्धेरेकत्वम्। पर्यायार्थतया तु सिद्धेरनन्तत्वम्। अथवा–सिद्धिः–कृतकृत्यत्वं, लोकाग्रम्, अणिमादिका वा। एकत्वं च सामान्यतो बोध्यम्।

गोक्खीरहारसरिवण्णा" कि सिद्धि निर्मल जल, तुषार, गोक्षीर, और हार के जैसी वर्णवाली है संगत नहीं हो सकता है क्यों कि लोकाग्र अमूर्त होने से वर्ण सहित कैसे वर्णित किया जा सकता है क्यों कि लोक का अग्रभाग आकाश रूप है और आकाश को अमूर्त द्रव्य माना गया है अमूर्त का तात्पर्य होता है रूप रस गन्ध और स्पर्श इन पौद्गलिक गुणों से रहित होना अतः इस प्रकार का उसका वर्णन होने से यही मानना चाहिये कि ईषत्प्राग्भारा पृथिवी ही सिद्ध पद से यहां वाच्य हुई है। यह सिद्धि एकत्व संख्याविशिष्ट है क्यों कि द्रव्यार्थिक दृष्टि से यह सिद्ध रूप स्कन्ध एक परिणाम से परिणत हुआ ही माना गया है यद्यपि यह ईषत्प्राग्भारा पृथिवीरूप स्कन्ध ४५ लाख योजन प्रमाणवाला है फिर भी यह इस दृष्टि से भिन्न २ रूप से परिणत हुआ नहीं माना गया है अतः एक परिणाम से परिणत होने के कारण यह

વામાં આવે, તો "निम्मलदगरयणवण्णा तुसारगोक्खीरहारसरिवण्णा" સિદ્ધિ નિર્મળ, જળ, તુષાર, ગોક્ષીર અને હાર જેવા વર્ણવાળી છે." આ વર્ણન સગત લાગતુ નથી, કારણ કે લોકાગ્ર અમૂર્ત હોવાથી તેને વર્ણયુક્ત કેવી રીતે કહી શકાય? લોકને અગ્રભાગ તો આકાશરૂપ છે અને આકાશને તો અમૂર્ત દ્રવ્ય માનવામાં આવ્યુ છે. અમૂર્ત દ્રવ્ય તો રૂપ, રસ ગધ અને સ્પર્શ, આ પૌદ્ગલિક ગુણોથી રહિત જ હોય છે સિદ્ધિને નિર્મળ જળ, તુષાર, ગોક્ષીર અને હાર જેવા વર્ણવાળી કહેલી હોવાથી એ જ વાત માનવી પડશે કે ઇષત્પ્રાગ્ભારા પૃથ્વીજ અહીં સિદ્ધિપદ દ્વારા ગૃહીત થયેલ છે તે સિદ્ધિ એક છે, કારણ કે દ્રવ્યાર્થિકનયની દૃષ્ટિએ આ સિદ્ધરૂપ સ્કન્ધ એક પરિણામથી પરિણત થયેલો માનવામાં આવ્યો છે જો કે આ ઇષત્પ્રાગ્ભારા પૃથ્વીરૂપ સ્કન્ધ ૪૫ લાખ યોજનપ્રમાણવાળો છે, છતાં પણ તે એક પરિણામથી પરિણત થયેલો હોવાથી ભિન્ન ભિન્ન રૂપે પરિણત થયેલો માન્યો નથી આ રીતે એક પરિ-

छाया—एका सिद्धिः, एकः सिद्धः, एकं परिनिर्वाणम्, एकः परिनिर्वृत ॥ सू० ४८ ॥

टीका—' एगा ' इत्यादि—

सिद्धिः—सिध्यन्ति—कृतकार्या भवन्ति जीवा यस्यां सा सिद्धिः—ईषत्प्राग्भारा पृथिवी, सिद्धिश्च यद्यपि लोकाग्रम्,

उक्तं च—" इह बोंदिं चइत्ताण तत्थ गंतूण सिज्झइ " ।

छाया—इह शरीरं त्यक्त्वा तत्र गत्वा सिध्यति—इति ॥

तथापि—तदुपलक्षकत्वात् ईषत्प्राग्भाराऽपि सिद्धिरुच्यते ।

उक्तं च—" बारसहिं जोयणेहिं सिद्धी सव्वट्ठसिद्धाउ ॥ "

छाया—द्वादशभिर्योजनैः सिद्धिः सर्वार्थसिद्धात्—इति ॥

लोकाग्रमेव चेत् सिद्धिः स्यात्तर्हि—

" निम्मलदगरयवण्णा तुसारगोक्खीरहारसरिवण्णा " ॥

टीकार्थ—जीव जिसमें कृतकार्य हो जाते हैं उसका नाम सिद्धि है यह सिद्धि ईषत्प्राग्भारापृथिवी रूप है यद्यपि लोकाग्र का नाम सिद्धि है जैसा कि यहां कहा है—" इह बोंदिं चइत्ताण तत्थ गंतूण सिज्झइ " जीव यहां मनुष्य लोक शरीर को छोड़कर के वहां जाकर सिद्ध हो जाते हैं—तो भी यह सिद्ध पद उसका उपलक्षक होने से ईषत्प्राग्भारा पृथिवी भी सिद्ध पद से व्यवहृत हो जाती है

उक्तं च—" बारसहिं जोयणेहिं सिद्धी सव्वट्ठसिद्धाउ "

सर्वार्थसिद्ध से आगे १२ योजन पर सिद्धि है इस तरह सिद्धि ईषत्प्राग्भारा पृथिवीरूप है यदि लोक का अग्रभाग ही सिद्धि है ऐसा माना जाये तो फिर यह वर्णन " निम्मलदगरयवण्णा तुसार

સૂત્રાર્થ—સિદ્ધ એક છે, સિદ્ધિ એક છે, પરિનિર્વાણ એક છે અને પરિનિવૃત્ત એક છે ॥ ૪૮ ॥

ટીકાર્થ—જીવ જેમાં કૃતકાર્ય થઈ જાય છે, તે સ્થાનનું નામ સિદ્ધિ છે તે સિદ્ધિ ઈષત્પ્રાગ્ભારા પૃથ્વીરૂપ છે એ કે " इह बोंदिं चइत्ताणं तत्थ गंतूण सिज्झइ " જીવ અહીંથી મનુષ્યલોક સંબંધી શરીરને છોડીને ત્યાં જઈને સિદ્ધ થઈ જાય છે " આ કથન અનુસાર લોકાગ્રનું નામ સિદ્ધિ છે, તો પણ આ સિદ્ધિપદ તેનું ઉપલક્ષક હોવાથી ઈષત્પ્રાગ્ભારા પૃથ્વી પણ સિદ્ધિપદથી ગ્રહીત થઈ જાય છે કહ્યું પણ છે કે—" बारसहिं जोयणेहिं सिद्धी सव्वट्ठसिद्धाउ ' સર્વાર્થ સિદ્ધ વિમાનથી આગળ જતા ૧૨ યોજનને અંતરે સિદ્ધસ્થાન છે આ રીતે સિદ્ધિ ઈષત્પ્રાગ્ભારા પૃથ્વીરૂપ જ છે એ લોકના અગ્રભાગને જ સિદ્ધિ માન

यस्तु कर्मक्षयसिद्धस्तस्य धर्मस्तु परिनिर्वाणं भवतीति परिनिर्वाणस्वरूपमाह– 'एगे परिनिव्वाणे' इति। परिनिर्वाणम्–परि=समन्ताद् निर्वाणं परिनिर्वाणम्– कर्मकृतसन्तापाभावेन शीतलीभवनम्, तत् एकम्=एकत्वसंख्याविशिष्टम्। एकदा परिनिर्वाणे संजाते पुनस्तन्न भवतीति तस्यैकत्वं बोध्यमिति।

यः परिनिर्वाणधर्मसंयुक्तः स एव कर्मक्षयसिद्धः परिनिर्वृतो भवतीति परिनिर्वृतं निरूपयति–'एगे परिनिव्वुए' इति। परिनिर्वृतः–परि=समन्ताद् निर्वृतः=स्वस्थीभूतः–शारीरिकमानसिकदुःखेन सर्वथा रहित इत्यर्थः। स च एकः=एकत्वसंख्यावान्। एकत्वं च द्रव्यार्थतया बोध्यम्। पर्यायार्थतया त्वनन्तत्वम् ॥सू० ४८॥

जो कर्मक्षय से सिद्ध होता है उसका धर्म परिनिर्वाण होता है इसलिये अब सूत्रकार परिनिर्वाण का स्वरूप प्रकट करते हैं–"एगे परिनिव्वाणे" कर्मकृत सन्ताप के अभाव से शीतलीभूत होने का नाम परिनिर्वाण है। यह परिनिर्वाण एकत्व संख्याविशिष्ट है क्यों कि एकबार परिनिर्वाण हो जाने पर फिर दुबारा वह होता नहीं है।

जो परिनिर्वाण धर्म से युक्त होता है वही कर्मक्षय से सिद्ध हुआ जीव परिनिर्वृत होता है इसलिये अब सूत्रकार परिनिर्वृत का प्ररूपण करते हैं "एगे परिनिव्वुए" शारीरिक एवं मानसिक दुःख से सर्वथा रहित जो जीव हो जाता है वह जीव परिनिर्वृत कहा गया है इस परिनिर्वृत में द्रव्यार्थतासे एकत्व और पर्यायार्थतासे अनन्तत्व है ॥सू०४८॥

કર્મક્ષયથી સિદ્ધપદ પ્રાપ્ત કરનાર આત્માનો ધર્મ પરિનિર્વાણ હોય છે. તેથી હવે સૂત્રકાર પરિનિર્વાણના સ્વરૂપનું નિરૂપણ કરે છે—

"एगे परिनिव्वाणे" કર્મજનિત સંતાપના અભાવને લીધે શીતલીભૂત થઈ જવુ તેનું નામ પરિનિર્વાણ છે તે પરિનિર્વાણમાં એકત્વ હોય છે, કારણ કે એકવાર પરિનિર્વાણ થઇ ગયા પછી, તે કાયમ જ રહે છે. તેનો અભાવ થઈ જાય અને ફરીથી તેની પ્રાપ્તિ કરવી પડે એવુ બનતું નથી

પરિનિર્વાણ ધર્મથી યુક્ત હોય એવો કર્મક્ષયથી સિદ્ધ થયેલો જીવ જ પરિનિવૃત્ત થાય છે, તેથી હવે સૂત્રકાર પરિનિવૃત્ત આત્માની પ્રરૂપણા કરે છે.

"एगे परिनिव्वुए" શારીરિક અને માનસિક દુખોથી સર્વથા રહિત થયેલા જીવને પરિનિવૃત્ત કહે છે તે પરિનિર્વૃત્તમા દ્રવ્યાર્થતાની અપેક્ષાએ એકત્વ છે અને પર્યાયાર્થતાની અપેક્ષાએ અનંતતા છે. ॥સૂ૦૪૮॥

इत्थं सिद्धिं निरूप्य सम्प्रति सिद्धिमन्तं निरूपयति–' एगे सिद्धे ' इत्यादि । सिद्ध–सिध्यति स्म=कृतकृत्योऽभवदिति सिद्धः, सेधति स्म–अगच्छत् अपुनरावृत्त्या लोकाग्रमिति वा सिद्धः, सितं=बद्धं कर्मध्मातं=दग्धं येन स इति निरुक्तरीत्या सिद्धः । सिद्धश्च कर्मप्रपञ्चरहितः । स च एकः=एकत्वसंख्याविशिष्टः । एकत्वं च द्रव्यार्थतया बोध्यम् । पर्यायार्थतया त्वनन्तत्वमपि । अथवा–सिद्धानामनन्तत्वेऽपि सिद्धस्वरूपं सामान्यमाश्रित्यैकत्वं बोध्यम् ।

इस द्रव्यार्थता की अपेक्षा से एकसंख्याविशिष्ट कहा गया है तथा पर्यायार्थता की अपेक्षा से सिद्धि में अनन्तता है ।

अथवा—कृतकृत्यता का नाम सिद्धि है लोकाग्र का नाम सिद्धि है अणिमादिकों का नाम सिद्धि है फिर भी सामान्य की अपेक्षा इस में एकता है ऐसा जानना चाहिये

सिद्धि का निरूपण करके अब सूत्रकार सिद्धिवाले का निरूपण करते हैं–" एगे सिद्धे " जो कृतकृत्य हो चुके हैं अपुनरावृत्तिरूप से जो लोकके अग्रभागमें पहुँच चुके हैं । अथवा—बद्धकर्मों को जिन्होंने दग्ध कर दिया है वे सिद्ध हैं। ऐसे वे सिद्ध कर्म प्रपञ्चसे रहित होते हैं सिद्ध में एकता द्रव्यार्थता की अपेक्षा से कही गई है, ऐसा जानना चाहिये तथा पर्यायार्थता की अपेक्षासे अनन्तता भी कही गई है। इस प्रकारके सिद्धोंमें अनन्तता होनेपर भी सामान्यरूप सिद्धस्वरूप को लेकर एकता सिद्धों में प्रकट की गई है।

ગુણમથી પરિપૂર્ણ થયેલો છે. તેથી તેને તે દ્રવ્યાર્થતાની અપેક્ષાએ એક કહેલ છે પર્યાયાર્થતાની અપેક્ષાએ તો સિદ્ધિમાં અનન્તતા છે

અથવા—કૃતકૃત્યતાનું નામ સિદ્ધિ છે લોકાગ્રનું નામ સિદ્ધિ છે અણિમાદિકોનું નામ સિદ્ધિ છે, છતાં પણ સામાન્યની અપેક્ષાએ તેમાં એકત્વ સમજવું જોઈએ

સિદ્ધિનું નિરૂપણ કરીને હવે સૂત્રકાર સિદ્ધોનું (સિદ્ધિમાં ગયેલા આત્મા ઓનું) નિરૂપણ કરે છે–" एगे सिद्धे " જે કૃતકૃત્ય થઈ ગયા છે, જેઓ લોકના અગ્રભાગમાં પહોંચી ગયા છે જેમનું ત્યાંથી સંસારમાં પુનરાગમન થવાનું નથી, એવાં જીવોને સિદ્ધ કહે છે અથવા બદ્ધકર્મોને જેમણે બાળી નાખ્યાં છે તેઓ સિદ્ધ કહેવાય છે એવા તે સિદ્ધો કર્મપ્રપંચથી રહિત હોય છે સિદ્ધમાં દ્રવ્યાર્થતાની અપેક્ષાએ એકતા પ્રકટ કરી છે અને પર્યાયાર્થતાની અપેક્ષાએ અનન્તતા પણ કહી છે આ પ્રકારે સિદ્ધોમાં અનન્તતા હોવા છતાં પણ સામાન્યરૂપ સિદ્ધ સ્વરૂપની અપેક્ષાએ સિદ્ધોમાં એકતા પ્રકટ કરવામાં આવી છે

यस्तु कर्मक्षयसिद्धस्तस्य धर्मस्तु परिनिर्वाणं भवतीति परिनिर्वाणस्वरूपमाह– 'एगे परिनिव्वाणे' इति। परिनिर्वाणम्–परि=समन्ताद् निर्वाणं परिनिर्वाणम्–कर्मकृतसन्तापाभावेन शीतलीभवनम्, तत् एकम्=एकत्वसंख्याविशिष्टम्। एकदा परिनिर्वाणे संजाते पुनस्तन्न भवतीति तस्यैकत्वं बोध्यमिति।

यः परिनिर्वाणधर्मयुक्तः स एव कर्मक्षयसिद्धः परिनिर्वृतो भवतीति परिनिर्वृतं निरूपयति–'एगे परिनिव्वुए' इति। परिनिर्वृतः–परि=समन्ताद् निर्वृतः=स्वस्थीभूतः–शारीरिकमानसिकदुःखेन सर्वथा रहित इत्यर्थः। स च एकः=एकत्वसंख्यावान्। एकत्वं च द्रव्यार्थतया बोध्यम्। पर्यायार्थतया त्वनन्तत्वम् ॥सू० ४८॥

जो कर्मक्षय से सिद्ध होता है उसका धर्म परिनिर्वाण होता है इसलिये अब सूत्रकार परिनिर्वाण का स्वरूप प्रकट करते हैं–"एगे परिनिव्वाणे" कर्मकृत सन्ताप के अभाव से शीतलीभूत होने का नाम परिनिर्वाण है। यह परिनिर्वाण एकत्व संख्याविशिष्ट है क्यों कि एकवार परिनिर्वाण हो जाने पर फिर दुबारा वह होता नहीं है।

जो परिनिर्वाण धर्म से युक्त होता है वही कर्मक्षय से सिद्ध हुआ जीव परिनिर्वृत होता है इसलिये अब सूत्रकार परिनिर्वृत का प्ररूपण करते हैं "एगे परिनिव्वुए" शारीरिक एवं मानसिक दुःख से सर्वथा रहित जो जीव हो जाता है वह जीव परिनिर्वृत कहा गया है इस परिनिर्वृत में द्रव्यार्थतासे एकत्व और पर्यायार्थतासे अनन्तत्व है ॥सू०४८॥

કર્મક્ષયથી સિદ્ધપદ પ્રાપ્ત કરનાર આત્માનો ધર્મ પરિનિર્વાણુ હોય છે. તેથી હવે સૂત્રકાર પરિનિર્વાણુના સ્વરૂપનુ નિરૂપણ કરે છે—

" एगे परिनिव्वाणे " કર્મજનિત સંતાપના અભાવને લીધે શીતલીભૂત થઈ જવું તેનુ નામ પરિનિર્વાણુ છે તે પરિનિર્વાણુમા એકત્વ હોય છે, કારણ કે એકવાર પરિનિર્વાણુ થઇ ગયા પછી, તે કાયમ જ રહે છે. તેનો અભાવ થઈ જાય અને ફરીથી તેની પ્રાપ્તિ કરવી પડે એવું બનતું નથી

પરિનિર્વાણુ ધર્મથી યુક્ત હોય એવો કર્મક્ષયથી સિદ્ધ થયેલો જીવ જ પરિનિવૃત્ત થાય છે, તેથી હવે સૂત્રકાર પરિનિવૃત્ત આત્માની પ્રરૂપણા કરે છે.

" एगे परिनिव्वुए " શારીરિક અને માનસિક દુખોથી સર્વથા રહિત થયેલા જીવને પરિનિવૃત્ત કહે છે તે પરિનિવૃત્તમા દ્રવ્યાર્થતાની અપેક્ષાએ એકત્વ છે અને પર્યાયાર્થતાની અપેક્ષાએ અનંતતા છે. ॥સૂ૦૪૮॥

प्रायेण जीवधर्माः प्ररूपिताः। अधुना पुद्गलानां जीवोपग्राहकत्वात् पुद्गलरूपाऽजीवधर्माः 'एगे सद्दे' इत्यारभ्य 'जाव लुक्खे' इत्यन्तेन एकत्वेनैव प्ररूप्यन्ते। तत्रातीन्द्रियाणां परमाण्वादीनां पुद्गलानां सत्ताऽनुमानतोऽवगम्यते। तथाहि—घटादिकार्यतस्तत्कारणभूतस्य परमाण्वादेः सत्ताऽनुमीयते। घटादिकार्यरूपाणां स्कन्धपुद्गलानां तु सांव्यवहारिकप्रत्यक्षत एव सत्ताऽवबोध्यते।

प्राय करके जीव के धर्मो का तो प्ररूपण हो चुका है अब जीव के उपग्राहक-उपकारक-होने से पुद्गलों के स्वरूप दिखलाते हैं अर्थात् "एगे सद्दे" यहां से लगाकर "जाव लुक्खे" यहां तक के सूत्र पाठ से एक स्वरूप से प्ररूपित किये जाते हैं। इनमें अतीन्द्रिय जो परमाणु आदि पुद्गल हैं उनकी सत्ता अनुमान से जानी जाती है यह अनुमान इस प्रकार से है—"परमाणवः सन्ति घटादि कार्यान्यथानुपपत्तेः" घटादि रूप कार्यो की परमाणुरूप कारण के अभाव में उत्पत्ति नहीं हो सकती है—अतः परमाणु हैं" इस तरह से परमाणु के कार्यभूत घटादिकों के प्रत्यक्ष से उनकी सत्ता जानी जाती है ये घटादिरूप कार्य पुद्गल के स्कन्धरूप होते हैं। इनकी सत्ता व्यवहारी जन साम्व्यवहारिक प्रत्यक्ष से जानते हैं। तात्पर्य कहने का यह है कि "इन्द्रियानिन्द्रियनिमित्त देशतः साम्व्यवहारिक" जो ज्ञान पांच इन्द्रियों और मन से उत्पन्न होता है वह साम्व्यवहारिक प्रत्यक्ष कहा गया है क्यों कि ऐसे ज्ञान में एकदेश से विशदता रहती है पूर्णरूप से नहीं। घटपटादि जितने भी पदार्थ हैं वे

હવે જીવના ધર્મોની પ્રરૂપણા તો પૂરી થઈ ગઈ છે જીવનું ઉપગ્રાહક (ઉપકારક) હોવાને કારણે હવે પુદ્ગલોનું સ્વરૂપ બતાવવામાં આવે છે—

"એગે સદ્દે" આ સૂત્રથી લઈને "જાવ લુક્ખે" પર્યન્તના સૂત્રપાઠ દ્વારા તે પુદ્ગલોનું એકત્વ પ્રતિપાદિત કરવામાં આવ્યું છે જે પરમાણુ આદિ પુદ્ગલ ઇન્દ્રિયગમ્ય નથી તેમનું અસ્તિત્વ નીચેનાં અનુમાનો દ્વારા જાણી શકાય છે 'પરમાણવઃ સન્તિ ઘટાદિકાર્યાન્યથાનુપપત્તેઃ" ઘટાદિરૂપ કાર્યોની પરમાણુરૂપ કારણના અભાવમાં ઉત્પત્તિ જ થઈ શકતી નથી. તેથી પરમાણુના કાર્યભૂત ઘટાદિકોને જોવાથી તેમનું અસ્તિત્વ જાણી શકાય છે તે ઘટાદિરૂપ કાર્ય પુદ્ગલના સ્કન્ધરૂપ હોય છે તેમનું અસ્તિત્વ વ્યવહારીજન સાંવ્યવહારિક પ્રત્યક્ષથી જાણી શકે છે જે જ્ઞાન 'ઇન્દ્રિયાનિન્દ્રિયનિમિત્તં દેશતઃ સાંવ્યવહારિક" પાંચ ઇન્દ્રિયો અને મનની સહાયતાથી ઉત્પન્ન થાય છે તે જ્ઞાનને "સાંવ્યવહારિક પ્રત્યક્ષ" કહે છે કારણ કે એવા જ્ઞાનમાં એક દેશની અપેક્ષાએ વિશદતા રહે છે—પૂર્ણરૂપે રહેતી નથી ઘટપટ વગેરે જે પદાર્થો છે તે સ્કન્ધ

मूलम्—एगे सद्दे । एगे रूवे । एगे गंधे । एगे रसे। एगे फासे। एगे सुब्भिसद्दे । एगे दुब्भिसद्दे एगे सुरूवे । एगे दुरूवे । एगे दीहे । एगे हस्से । एगे वट्टे । एगे तंसे । एगे चउरंसे । एगे पिहुले । एगे परिमंडले । एगे किण्हे । एगे णीले । एगे लोहिए । एगे हलिद्दे । एगे सुक्किल्ले । एगे सुब्भिगंधे । एगे दुब्भि गंधे । एगे तित्ते। एगे कडुए । एगे कसाए। एगे अंबिले। एगे महुरे। एगे कक्खडे जाव लुक्खे ॥ सू० ४९ ॥

छाया—एकः शब्दः । एकं रूपम् । एको गन्धः । एको रसः एकः–स्पर्शः । एकः सुरभिशब्दः । एको दुरभिशब्दः । एकं सुरूपम् । एकं दूरूपम् एकं दीर्घम् । एकं ह्रस्वम् । एकं वृत्तम् । एकं त्र्यस्रम् । एकं चतुरस्रम् । एकं पृथुलम् एकः कृष्णः ।

सब स्कन्धरूप हैं । पुद्गल को शास्त्रकारों ने दो विभागों में विभक्त किया है एक परमाणुरूप विभाग में और दूसरे स्कन्धरूप विभाग में–परमाणु किसी भी इन्द्रिय से गम्य नहीं होते हैं–अतः उनकी सत्ता कार्यरूप अनुमान से ही जानी जाती है तथा स्कन्धरूप पुद्गल की सत्ता इन्द्रिय-जन्य प्रत्यक्ष से जानी जाती है । 'एगे सद्दे' इत्यादि ॥ ४९॥

मूलार्थ—शब्द एक है, रूप एक है, गन्ध एक है, रस एक है, स्पर्श एक है सुरभिशब्द एक है दुरभिशब्द एक है सुरूप एक है दूरूप एक है दीर्घ एक है ह्रस्व एक है वृत्त एक है त्र्यस्र एक है चतुरस्र एक है

રૂપ જ હોય છે શાસ્ત્રકારોએ પુદ્ગલોના બે વિભાગ પાડયા છે–(૧) પરમાણુ રૂપ વિભાગ અને (૨) સ્કન્ધરૂપ વિભાગ પરમાણુ કોઇ પણ ઇન્દ્રિયથી ગમ્ય (અનુભવી શકાય એવા) નથી, તેથી તેમની સત્તા (અસ્તિત્વ) કાર્યરૂપ અનુમાનથી જ જાણી શકાય છે, તથા સ્કન્ધરૂપ પુદ્ગલની સત્તા (અસ્તિત્વ) ઇન્દ્રિયજન્ય પ્રત્યક્ષથી (અનુભવથી) જાણી શકાય છે

"एगे सद्दे" ઇત્યાદિ ॥ ૪૯ ॥

મૂલાર્થ—શબ્દ એક છે, રૂપ એક છે, ગંધ એક છે, રસ એક છે, સ્પર્શ એક છે, સુરભિશબ્દ (મધુર શબ્દ) એક છે, દુરભિ શબ્દ એક છે, સુરૂપ એક છે, દુરૂપ એક છે દીર્ઘ એક છે હ્રસ્વ એક...

एको नीलः । एको लोहित । एको हारिद्र । एकः शुक्लः । एक सुरभिगन्ध । एको दुरभिगन्धः । एकः तिक्त । एक कटुकः । एक कषायः । एक अम्लः । एको मधुर । एकः कर्कशो यावत् रूक्ष ॥ सू० ४९ ॥

टीका—'एगे सद्दे' इत्यादि—

शब्दः—शब्द्यते=अभिधीयतेऽर्थोऽनेनेति शब्दः, श्रोत्रेन्द्रियग्राह्यनियतक्रम वर्णात्मको ध्वनि । स एकः=एकत्वसंख्याविशिष्टः । शब्दो यद्यपि नामस्थापनादि भेदैश्चतुर्विधः, तथापि शब्दत्वसामान्यमाश्रित्यैकत्वं बोध्यमिति । तथा—रूपम्—रूप्यते=अवलोक्यते इति रूपम्—आकारश्चक्षुर्विषयः तच्च—एकम्=एकत्वसंख्यावि

पृथुल एक है परिमण्डल एक है कृष्ण एक है नील एक है लोहित एक है हारिद्र एक है शुक्ल एक है सुरभिगन्ध एक है दुरभिगन्ध एक है तिक्तरस एक है कटुकरस एक है कषायरस एक है अम्लरस एक है मधुररस एक है कर्कश स्पर्श एक है यावत् रूक्षस्पर्श एक है ।

टीकार्थ—जिसके द्वारा अर्थ का कथन किया जाता है वह शब्द है ऐसा वह शब्द श्रोत्रेन्द्रिय से ग्राह्य नियतक्रमवर्णरूप ध्वनिस्वरूप होता है । वह ध्वनिरूप शब्द एकत्वसंख्याविशिष्ट है यद्यपि शब्द नाम स्थापना शब्द आदि के भेद से चार प्रकार का कहा गया है तथापि शब्दस्वरूप सामान्य की अपेक्षा से यह एक है, जो देखा जाता है उसका नाम रूप है यह रूप आकाररूप है, चक्षु इन्द्रिय से यह ग्राह्य होता है रूपत्व सामान्य की अपेक्षा से इसमें एकता कही गई है यहां

એક છે, ત્ર્યસ્ર (ત્રિકોણ) એક છે, ચતુરસ્ર (ચતુષ્કોણ) એક છે, પૃથુલ એક છે, પરિમંડલ એક છે કૃષ્ણ એક છે, નીલ એક છે, લોહિત (લાલ રંગ) એક છે હારિદ્ર (પીળો રંગ) એક છે શુક્લવર્ણ એક છે, સુરભિગંધ એક છે, દુરભિગંધ એક છે, તિક્તરસ (તીખો સ્વાદ) એક છે, કડવો રસ એક છે, કષાયરસ એક છે અમ્લરસ એક છે, મધુરરસ એક છે, કર્કશસ્પર્શ એક છે અને રૂક્ષસ્પર્શ પર્યન્તના પ્રત્યેક સ્પર્શમાં પણ એકત્વ છે

ટીકાર્થ—જેના દ્વારા અર્થનું કથન કરાય છે તે શબ્દ છે તે શ્રોત્રેન્દ્રિય દ્વારા ગ્રાહ્ય નિયતક્રમવર્ણરૂપ ધ્વનિસ્વરૂપ હોય છે તે ધ્વનિરૂપ શબ્દ એક હોય છે જો કે શબ્દ નામ સ્થાપના શબ્દ આદિના ભેદથી તેને ચાર પ્રકારનો કહ્યો છે, છતાં પણ શબ્દસ્વરૂપ સામાન્ય લક્ષણની અપેક્ષાએ તેમાં એકત્વ પ્રકટ કરવામાં આવ્યું છે જે દેખવામાં આવે છે તે રૂપ છે તે રૂપ આકારરૂપ છે અને ચક્ષુઇન્દ્રિય વડે ગ્રાહ્ય હોય છે રૂપત્વ સામાન્યની અપેક્ષાએ તેમાં એકતા કહી છે અહીં જેમાં જેમાં એકત્વ પ્રકટ કર્યું છે તે સામાન્યની અપેક્ષાએ જ

शिष्टम्। एकत्वं च सामान्यमाश्रित्य बोध्यम्। इति सर्वत्र संयोज्यम्, तथा-गन्धः-गन्ध्यते=आघ्रायते इति गन्धः-घ्राणविषयः। स च एकः=एकत्वसंख्या-विशिष्टः। तथा-रसः-रस्यते=आस्वाद्यते इति रसः-रसनेन्द्रियविषयः स च एकः। तथा-स्पर्शः-स्पृश्यते=स्पर्शविषयीक्रियते इति स्पर्शः-त्वगिन्द्रियविषयः। स च एकः। इत्थं शब्दादीन् सामान्येनाभिधाय सम्प्रति तानेव विशेषत आह। तत्र प्रथमं शब्दस्य भेदद्वयमाह। तथाहि-सुरभिशब्दः-शुभशब्दो मनोज्ञशब्द इति यावत्। स एकः। दुरभिशब्द-अशुभशब्दः अमनोज्ञशब्द इति यावत्। स एकः। अन्येऽपि शब्दभेदा अत्रैवान्तर्भूता विज्ञेयाः।

जिनमें एकत्व कहा गया है वह सामान्य की अपेक्षा से ही कहा गया है, ऐसा जानना चाहिये, घ्राणेन्द्रिय द्वारा जो सूंघा जाता है वह गन्ध है यह भी गन्धत्व सामान्य की अपेक्षा से एक है, रसना इन्द्रिय से जिस का स्वाद लिया जाता है वह रस है यह रस भी रसत्व सामान्य की अपेक्षा से एक है, स्पर्शन इन्द्रिय से जो छूकरके जाना जाता है वह स्पर्श है यह स्पर्श यद्यपि आठ प्रकार का कहा गया है फिर भी सामान्य की अपेक्षा से यह एक है, इस प्रकार से सामान्यतः शब्दादिकों का कथन करके अब सूत्रकार उन्हीं का विशेषरूप से कथन करते हैं-इसमें सर्वप्रथम शब्द के दो भेद वे प्रकट करते हैं-शब्द के वे दो भेद सुरभिशब्द और दुरभिशब्दरूप से हैं शुभशब्द या मनोज्ञशब्दका नाम सुरभिशब्द है यह एक इसलिये कहा गया है कि इसमें शब्दत्वसामान्य रूप धर्म रहता है, अशुभशब्द या अमनोज्ञ श्रोत्रेन्द्रिय को न रुचे ऐसे

પ્રકટ કરવામાં આવેલ છે, એમ સમજવું. ઘ્રાણેન્દ્રિ દ્વારા જે સૂંઘવામાં આવે છે, તેનું નામ ગન્ધ છે તેમાં પણ ગન્ધત્વ સામાન્યની અપેક્ષાએ એકત્વ છે. જીભ દ્વારા જેનો સ્વાદ લેવાય છે, તે રસ છે. તેમાં પણ રસત્વસામાન્યની અપેક્ષાએ એકત્વ છે. સ્પર્શેન્દ્રિયની સહાયતાથી જે સ્પર્શજ્ઞાન થાય છે, તેમાં પણ એકત્વ છે. જો કે સ્પર્શના આઠ પ્રકાર છે, તો પણ સ્પર્શત્વસામાન્યની અપેક્ષાએ તેમાં એકત્વ સમજવું. આ પ્રકારે શબ્દાદિકોનું સામાન્ય કથન કરીને હવે સૂત્રકાર તેમની વિશેષ પ્રરૂપણા કરે છે

પહેલાં તેઓ શબ્દના બે ભેદોનુ કથન કરે છે-તે બે ભેદ નીચે પ્રમાણે છે-(૧) સુરભિ શબ્દ. અથવા મનોજ્ઞ શબ્દ, (૨) દુરભિ શબ્દ અથવા અમનોજ્ઞ-કર્ણેન્દ્રિયને ન ગમે એવો શબ્દ. સુરભિ શબ્દમાં એકત્વ પ્રકટ કરવાનુ કારણ એ છે કે તેમાં શબ્દત્વ સામાન્યરૂપ ધર્મ રહેલો હોય છે. દુરભિ શબ્દમાં

एको नील । एको लोहित । एको हारिद्र । एकः शुक्लः । एकः सुरभिगन्धः । एको दुरभिगन्ध । एक तिक्त । एकः कटुकः । एक कषायः । एक अम्लः । एको मधुरः । एकः कर्कशो यावद् रूक्ष ॥ सू० ४९ ॥

टीका—'एगे सद्दे' इत्यादि—

शब्दः—शब्द्यते=अभिधीयतेऽर्थोऽनेनेति शब्दः, श्रोत्रेन्द्रियग्राह्यनियतक्रमवर्णात्मको ध्वनि । स एकः=एकत्वसंख्याविशिष्ट । शब्दो यद्यपि नामस्थापनादिभेदैश्चतुर्विधः, तथापि शब्दत्वसामान्यमाश्रित्यैकत्व बोध्यमिति । तथा—रूपम्-रूप्यते=अवलोक्यते इति रूपम्—आकारश्चक्षुर्विषयः तच्च-एकम्=एकत्वसंख्यावि

पृथुल एक है परिमण्डल एक है कृष्ण एक है नील एक है लोहित एक है हारिद्र एक है शुक्ल एक है सुरभिगन्ध एक है दुरभिगन्ध एक है तिक्तरस एक है कटुकरस एक है कषायरस एक है अम्लरस एक है मधुररस एक है कर्कश स्पर्श एक है यावत् रूक्षस्पर्श एक है।

टीकार्थ—जिसके द्वारा अर्थ का कथन किया जाता है वह शब्द है ऐसा यह शब्द श्रोत्रेन्द्रिय से ग्राह्य नियतक्रमवर्णरूप ध्वनिस्वरूप होता है। यह ध्वनिरूप शब्द एकत्वसंख्याविशिष्ट है यद्यपि शब्द नाम स्थापना शब्द आदि के भेद से चार प्रकार का कहा गया है तथापि शब्दस्वरूप सामान्य की अपेक्षा से यह एक है, जो देखा जाता है उसका नाम रूप है यह रूप आकाररूप है, चक्षु इन्द्रिय से यह ग्राह्य होता है रूपत्व सामान्य की अपेक्षा से इसमें एकता कही गई है यहां

એક છે, ત્ર્યસ્ર (ત્રિકોણ) એક છે, ચતુરસ્ર (ચતુષ્કોણ) એક છે, પૃથુલ એક છે, પરિમંડલ એક છે, કૃષ્ણ એક છે, નીલ એક છે, લોહિત (લાલ રંગ) એક છે હારિદ્ર (પીળો રંગ) એક છે શુક્લવર્ણ એક છે, સુરભિગંધ એક છે દુરભિગંધ એક છે, તિક્તરસ (તીખો સ્વાદ) એક છે, કડવો રસ એક છે, કષાયરસ એક છે અમ્લરસ એક છે મધુરરસ એક છે, કર્કશસ્પર્શ એક છે અને રૂક્ષસ્પર્શ પર્યન્તના પ્રત્યેક સ્પર્શમાં પણ એકત્વ છે

ટીકાર્થ—જેના દ્વારા અર્થનું કથન કરાય છે તે શબ્દ છે તે શ્રોત્રેન્દ્રિય દ્વારા ગ્રાહ્ય નિયતક્રમવર્ણરૂપ ધ્વનિસ્વરૂપ હોય છે તે ધ્વનિરૂપ શબ્દ એક હોય છે જો કે શબ્દ નામ સ્થાપના શબ્દ આદિના ભેદથી તેને ચાર પ્રકારનો કહ્યો છે, છતાં પણ શબ્દસ્વરૂપ સામાન્ય લક્ષણની અપેક્ષાએ તેમાં એકત્વ પ્રકટ કરવામાં આવ્યું છે જે દેખવામાં આવે છે તે રૂપ છે તે રૂપ આકારરૂપ છે અને ચક્ષુરિન્દ્રિય વડે ગ્રાહ્ય હોય છે રૂપત્વ સામાન્યની અપેક્ષાએ તેમાં એકતા કહી છે અહીં જેમાં જેમાં એકત્વ પ્રકટ કર્યું છે તે સામાન્યની અપેક્ષાએ જ

वृत्तत्वेन एकमिति। तथा—त्र्यस्रं—तिस्रः अस्रयः कोणा अस्येति त्र्यस्रं—त्रिकोणम्। पूर्ववच्चेदमपि चतुर्विधम्। तच्च एकम्—त्र्यस्रत्वसामान्यापेक्षया। तथा—चतुरस्रं—चतुष्कोणम्। इदमपि पूर्ववच्चतुर्विधम्। एकत्वं चास्य सामान्यापेक्षया बोध्यम्। तथा—पृथुल=विस्तीर्णम्। तच्च एकम्=एकत्वसंख्याविशिष्टम्। अस्मिन् विषयेऽन्यत्र यत् आयतमुच्यते, तदेव चेह दीर्घह्रस्वपृथुलशब्दैर्विभज्योच्यते। आयतधर्मत्वाद् दीर्घाद्यपि आयतम्। तच्च आयतं प्रतरघनश्रेणिभेदात्त्रिविधम्। एकैकं पुनः समप्रदेशावगाढविषमप्रदेशावगाढत्वेन द्विविधमिति, षड्विधमायतम्। यच्चादौ आयतभेदयोः ह्रस्वदीर्घयोरभिधानं, तत् वृत्तादिष्वायतस्यैव प्राय: समा-

फिर भी वृत्तत्व सामान्य की अपेक्षा से यह एक कहा गया है। तीन कोण जिस संस्थान में होते हैं उसका नाम त्र्यस्र है पहिले की तरह यह भी चार प्रकार का होता है फिर भी त्र्यस्रत्व सामान्य की अपेक्षा यह एक कहा गया है अस्र नाम कोने का है जिस संस्थान में चार कोने होते हैं वह चतुरस्र संस्थान है विस्तीर्ण संस्थान का नाम आयत संस्थान है यह आयत संस्थान भी एक है इस विषय में जो अन्यत्र आयत कहा गया है वही यहां दीर्घ ह्रस्व पृथुलशब्दों द्वारा विभक्त कर के कहा गया है आयत के धर्म होने से दीर्घादिक भी आयत है। यह आयत प्रतर घन और श्रेणि के भेदसे त्रिविध होता है इनमें एक एक आयत समप्रदेशावगाढ और विषमप्रदेशावगाढ के भेद से दो २ प्रकार का होता है। इस तरह से आयत छह प्रकार का हो जाता है आदि में जो आयत के भेद ह्रस्वदीर्घ कहे गये हैं, वे इस बात को बताने के लिये

જે સંસ્થાન (આકાર) મા ત્રણ ખૂણા હોય છે, તે સંસ્થાનને ત્ર્યસ્ર (ત્રિકોણાકાર) સંસ્થાન કહે છે વૃત્તસંસ્થાનની જેમ તેના પણ ચાર પ્રકાર છે, પરન્તુ ત્ર્યસ્રત્વ સામાન્યની અપેક્ષાએ તેને એક કહેવામાં આવેલ છે અસ્ર એટલે ખૂણો જે સંસ્થાનમાં ચાર ખૂણા હોય છે તે સંસ્થાનને ચતુરસ્ર સંસ્થાન કહે છે વિસ્તીર્ણ સંસ્થાનને આયત સંસ્થાન કહે છે આ આયત સંસ્થાન પણ એક છે આ વિષયને અનુલક્ષીને ફરીથી જે આયત સંસ્થાનની વાત કરવામા આવી છે, તે દીર્ઘ, હ્રસ્વ, પૃથુલ આદિ શબ્દો દ્વારા વિભક્ત કરીને આયત સંસ્થાનની જ વાત કરી છે એમ સમજવુ, કારણ કે આયત સંસ્થાનના ધર્મરૂપ દીર્ઘ, હ્રસ્વ આદિ પણ આયત જ છે તે આયતના (૧) પ્રતર, (૨) ઘન (૩) શ્રેણિના ભેદથી ત્રણ પ્રકાર હોય છે, તે પ્રત્યેકના સમપ્રદેશાવગાઢ અને વિષમપ્રદેશાવગાઢ નામના બબ્બે ભેદ પડે છે આ રીતે આયતના કુલ છ ભેદ છે. શરૂઆતમા આયતના જે હ્રસ્વ અને દીર્ઘ નામના

अथ सुरूपादारभ्य शुक्लपर्यन्तान् रूपस्य चतुर्दश भेदानाह–' एगे सुरूवे ' इत्यादिना । सुरूपम्–शुभरूपं मनोज्ञरूपम् इति यावत् । तच्चैकम्–दूरूपम्–अशुभरूपम्–अमनोज्ञरूपमिति यावत् । तदेकम् । तथा–दीर्घम्=आयतम् । तच्चैकम् । ह्रस्वं दीर्घमिव, तदप्येकम् । तथा — वृत्तत्र्यस्रचतुरस्रपृथुलपरिमण्डलाख्याः पञ्चस्कन्धसंस्थानभेदा बोध्या । तत्र — वृत्तं = वृत्तसंस्थान मोदकवत् । तच्च प्रतरघनभेदाद् द्विविधम् । तदपि पुनः प्रत्येकं समप्रदेशावगाढ विषमप्रदेशावगाढभेदाद् द्विविधमित्येवं वृत्त चतुर्विधम् । चतुर्विधमपीद वृत

शब्दका नाम दुरभिशब्द है यह सामान्यकी अपेक्षासे एक है अन्य और भी जो शब्द भेद हैं उनका अन्तर्भाव इन्हीं दो भेदों में हो जाता है।

अथ सुरूप से लेकर शुक्लपर्यन्त जो रूप के १४ भेद हैं वे प्रकट किये जाते हैं–" एगे सुरूवे " शुभरूप या मनोज्ञरूप का नाम सुरूप है यह सुरूप एक है अशुभरूप या अमनोज्ञरूप का नाम दूरूप है यह भी एक है दीर्घ, आयत, ह्रस्व तथा वृत्त–गोल, त्र्यस्र–तिकोण, चतुरस्र–चौकोर आयत और परिमण्डल से सब भी एक है वृत्त आदि ये पांच स्कन्ध संस्थान के भेद हैं मोदककी तरह जो आकार गोल होता है वह वृत्तसंस्थान है यह वृत्तसंस्थान प्रतर और घन के भेद से दो प्रकार होता है इन दोनों के भी समप्रदेशावगाढ और विषमप्रदेशावगाढ ऐसे दो २ भेद और होते हैं इस तरह वृत्तसंस्थान चार प्रकार का होता है

પણ શબ્દત્વ સામાન્યની અપેક્ષાએ એકત્વ છે શબ્દનાં બીજા જે ભેદો છે તેમનો સમાવેશ આ બે ભેદોમાં જ થઈ જાય છે હવે સુરૂપથી લઈને શુક્લ પર્યન્તના જે રૂપના ૧૪ ભેદો છે તેમને પ્રકટ કરવામાં આવે છે

" एगे सुरूवे " શુભરૂપ કે મનોજ્ઞ રૂપને સુરૂપ કહે છે તે એક છે અશુભ રૂપ કે અમનોજ્ઞરૂપને દુરૂપ કહે છે તે પણ એક છે દીર્ઘ, આયત, હ્રસ્વ, વૃત્ત (ગોળાકાર) ત્ર્યસ્ર (ત્રિકોણાકાર) ચતુરસ્ર (ચોખૂણિયું), આયત અને પરિમંડલ, એ પ્રત્યેકમાં પણ એકત્વ સમજવું જોઈએ. વૃત્ત આદિ પાંચ સ્કન્ધ સંસ્થાનના ભેદ છે

લાડુના જેમ જેનો આકાર ગોળ હોય છે તેને વૃત્ત સંસ્થાન કહે છે તે વૃત્ત સંસ્થાનના બે ભેદ છે–(૧) પ્રતર અને (૨) ઘન. તે બન્નેના પણ નીચે પ્રમાણે બે ભેદો પડે છે–(૧) સમપ્રદેશાવગાઢ અને (૨) વિષમપ્રદેશાવગાઢ. આ રીતે વૃત્તસંસ્થાન ચાર પ્રકારનું હોય છે છતાં પણ વૃત્તત્વ સામાન્યની અપેક્ષાએ તેને એક કહેવામાં આવેલ છે.

वृत्तत्वेन एकमिति। तथा-त्र्यस्त्र-तिस्रः अस्रयः कोणा अस्येति त्र्यस्रं-त्रिकोणम्। पूर्ववच्चेदमपि चतुर्विधम्। तच्च एकम्-त्र्यस्त्रत्वसामान्यापेक्षया। तथा-चतुरस्रं-चतुष्कोणम्। इदमपि पूर्ववच्चतुर्विधम्। एकत्वं चास्य सामान्यापेक्षया बोध्यम्। तथा-पृथुल=विस्तीर्णम्। तच्च एकम्=एकत्वसंख्याविशिष्टम्। अस्मिन् विषयेऽन्यत्र यत् आयतमुच्यते, तदेव चेह दीर्घह्रस्वपृथुलशब्दैर्विभज्योच्यते। आयतधर्मत्वाद् दीर्घाद्यपि आयतम्। तच्च आयतं प्रतरघनश्रेणिभेदात्त्रिविधम्। एकैकं पुनः समप्रदेशावगाढ विषमप्रदेशावगाढत्वेन द्विविधमिति, षड्विधमायतम्। यच्चादौ आयतभेदयोः ह्रस्वदीर्घयोरभिधानं, तत् वृत्तादिष्वायतस्यैव प्राय समा-

---

फिर भी वृत्तत्व सामान्य की अपेक्षा से यह एक कहा गया है। तीन कोण जिस संस्थान में होते हैं उसका नाम त्र्यस्त्र है पहिले की तरह यह भी चार प्रकार का होता है फिर भी त्र्यस्त्रत्व सामान्य की अपेक्षा यह एक कहा गया है अस्त्र नाम कोने का है जिस संस्थान में चार कोने होते हैं वह चतुरस्त्र संस्थान है विस्तीर्ण संस्थान का नाम आयत संस्थान है यह आयत संस्थान भी एक है इस विषय में जो अन्यत्र आयत कहा गया है वही यहाँ दीर्घ ह्रस्व पृथुलशब्दों द्वारा विभक्त कर के कहा गया है आयत के धर्म होने से दीर्घादिक भी आयत है। यह आयत प्रतर घन और श्रेणि के भेदसे त्रिविध होता है इनमें एक एक आयत समप्रदेशावगाढ और विषमप्रदेशावगाढ के भेद से दो २ प्रकार का होता है। इस तरह से आयत छह प्रकार का हो जाता है आदि में जो आयत के भेद ह्रस्वदीर्घ कहे गये हैं, वे इस बात को बताने के लिये

જે સંસ્થાન (આકાર) મા ત્રણ ખૂણા હોય છે, તે સસ્થાનને ત્ર્યસ્ર (ત્રિકોણાકાર) સસ્થાન કહે છે વૃત્તસસ્થાનની જેમ તેના પણ ચાર પ્રકાર છે, પરન્તુ ત્ર્યસ્રત્વ સામાન્યની અપેક્ષાએ તેને એક કહેવામા આવેલ છે. અસ્ર એટલે ખૂણો જે સસ્થાનમાં ચાર ખૂણા હોય છે તે સસ્થાનને ચતુરસ્ર સસ્થાન કહે છે વિસ્તીર્ણ સસ્થાનને આયત સસ્થાન કહે છે આ આયત સસ્થાન પણ એક છે આ વિષયને અનુલક્ષીને ફરીથી જે આયન સસ્થનની વાત કરવામા આવી છે, તે દીર્ઘ, હ્રસ્વ, પૃથુલ આદિ શબ્દો દ્વારા વિભક્ત કરીને આયત સસ્થાનની જ વાત કરી છે એમ સમજવું, કારણ કે આયત સંસ્થાનના ધર્મરૂપ દીર્ઘ, હ્રસ્વ આદિ પણ આયત જ છે તે આયતના (૧) પ્રતર, (૨) ઘન (૩) શ્રેણિના ભેદથી ત્રણ પ્રકાર હોય છે, તે પ્રત્યેકના સમપ્રદેશાવગાઢ અને વિષમપ્રદેશાવગાઢ નામના બબ્બે ભેદ પડે છે આ રીતે આયતના કુલ છ ભેદ છે. શરૂઆતમા આયતના જે હ્રસ્વ અને દીર્ઘ નામના

येशो भवतीति दर्शनार्थम् । यथाऽय स्तम्भो दीर्घ आयत वृत्तस्त्र्यस्रश्चतुरस्र इत्यादि । तथा-परिमण्डलम्-परिमण्डलसंस्थान-वलयाकारमिति यावत् । यच्च एकम्=एकत्वसङ्ख्याविशिष्टम् । यद्यपीदं प्रतरघनभेदाद् द्विविध, तथापि सामान्य माश्रित्यैक बोध्यम् । तथा-रूपभेदो वर्णः, स च कृष्णनीललोहितहारिद्रशुक्ल भेदात् पञ्चविधः । कृष्णादयः प्रसिद्धाः नवरं हारिद्रः=पीतवर्णो विशेषः । कपि शादयस्तु कृष्णादि संसर्गजन्या इति न तेषा पृथगुपन्यास कृतः । कृष्णादिषु प्रत्येकमेकत्व सामान्यविवक्षया बोध्यम् । अथ गन्धभेदावाह-'एगे सुब्भिगधे, एगे दुब्भिगधे' इति । सुरभिगन्ध -सुरभिः=मनोज्ञः स चासौ गन्धश्चेति सुरभि

कहे गये हैं कि वृत्तादिकों में आयत का ही प्राय समावेश होता है जैसे यह स्तम्भ दीर्घ है आयत है वृत्त है त्र्यस्र है और चतुरस्र है इत्यादि, तथा वलय के आकार जो संस्थान होता है वह परिमण्डल संस्थान कहा गया है यह परिमण्डल संस्थान भी एकत्व सङ्ख्याविशिष्ट है यद्यपि यह प्रतर और घन के भेद से दो प्रकार का होता है फिर भी यह सामान्य की अपेक्षा से एक ही कहा गया है, रूप का ही नाम वर्ण है और यह वर्ण कृष्ण नील लोहित हारिद्र और शुक्ल के भेद से पाच प्रकार का कहा गया है पीत (पीले) वर्ण का नाम हारिद्र है कृष्णादि वर्णों के संसर्ग से ही कपिशादिक वर्ण बनते हैं अतः इनका पृथकरूप से कथन नहीं किया है इन कृष्णादिकों में से प्रत्येक वर्ण में एकता सामान्य की विवक्षा से ही कही गई जाननी चाहिये, सुरभिगन्ध और दुरभिगन्ध के भेद से गन्ध दो प्रकार का होता है मनोज्ञगन्ध का नाम

વેશે કહ્યા છે તે એ વાતને પ્રકટ કરવા માટે કહેવામાં આવેલ છે કે વૃત્તાદિકોમાં આયતનો સામાન્ય રીતે સમાવેશ થઈ જાય છે જેમકે આ સ્તંભ દીર્ઘ છે, આયત છે, વૃત્ત છે ત્ર્યસ્ર છે ચતુરસ્ર છે ઇત્યાદિ.

વલયના આકારના સંસ્થાનને પરિમંડલ સંસ્થાન કહે છે તેના પણ પ્રતર અને ઘનના ભેદથી બે પ્રકાર પડે છે પરન્તુ સામાન્યની અપેક્ષાએ તેમાં એકત્વ છે રૂપનું નામ જ વર્ણ છે તેના નીચે પ્રમાણે પાંચ પ્રકાર કહ્યાં છે (૧) કૃષ્ણવર્ણ (૨) નીલવર્ણ (૩) લાલવર્ણ (૪) પીળોવર્ણ અને (૫) સફેદ વર્ણ કૃષ્ણાદિ વર્ણના સંસર્ગથી જ કાપિશાદિક વર્ણો બને છે તેથી અહીં તેમનુ અલગરૂપે કથન કર્યું નથી. કૃષ્ણ આદિ પ્રત્યેક વર્ણમાં સામાન્યની અપેક્ષાએ એકત્વ પ્રકટ કરવામાં આવ્યું છે ગંધના બે પ્રકાર છે-(૧) સુરભિ ગંધ, અને (૨) દુરભિગંધ મનોજ્ઞ ગંધને સુરભિ ગંધ અને અમનોજ્ઞ ગંધને

गन्धः-शुभगन्धो मनोज्ञगन्ध इति यावत्। स च एकः। एकत्वं च सामान्यापेक्षया। तथा-दुरभिगन्धः-दुरभिः=अमनोज्ञः, स चासौ गन्धश्चेति दुरभिगन्धः-अशुभगन्धः अमनोज्ञगन्ध इति यावत्। स च एकः। एकत्वं सामान्यापेक्षया। अथ रसस्य पञ्च भेदानाह-'एगे तित्ते' इत्यादिना। तत्र-तिक्तः, कटुकः, कषायः, अम्लः, मधुरः। तिक्तादिषु सामान्यविवक्षयैकत्वं बोध्यम्। लवणस्तु संसर्गजो रस इति पृथङ्नोक्तः। अथ स्पर्शस्य कर्कशादीन् अष्टभेदानाह-'एगे कक्कसे जाव लुक्खे' इत्यनेन। तत्र-कर्कशः=कठिनः, यावत्-यावत्करणात्-मृदुगुरुलघुशीतोष्णस्निग्धरूपाः षट् स्पर्शा ग्राह्याः। तत्र-मृदुः=कोमलः। गुरुः=अधोगमशीलः। लघुः=प्रायस्तिर्यगूर्ध्वगमनशीलः। शीतः-स्तम्भनस्वभावः।

सुरभिगन्ध और अमनोज्ञगन्ध का नाम दुरभिगन्ध है इनमें मनोज्ञगन्धरूप सुरभिगन्ध सामान्य की अपेक्षा से ही एक कहा गया है, और अमनोज्ञगन्धरूप दुरभिगन्ध भी सामान्य की अपेक्षा से एक कहा गया है, तिक्त, कटुक, कषाय, अम्ल और मधुर के भेद से रस पांच प्रकार का कहा गया है इन तिक्तादिकों में सामान्य की विवक्षा से ही एकत्व कहा गया है यद्यपि लवण भी एक रस होता है परन्तु वह स्वतन्त्ररूप से रस नहीं होता है संसर्ग से जन्य होता है इसलिये इसे पृथक्रूप से रस नहीं कहा गया है "एक्के कक्कसे जाव लुक्खे" कर्कश-कठिन यावत्-मृदु, गुरु, लघु, शीत, उष्ण, स्निग्ध और रूक्ष इन भेदों से स्पर्श आठ प्रकार का होता है कोमल स्पर्श का नाम मृदु है अधोगमनशील स्पर्श का नाम गुरु है प्रायः तिर्यग् उर्ध्वगमनशील स्पर्श का

દુરભિગંધ કહે છે. તે પ્રત્યેક ગંધમાં સામાન્યની અપેક્ષાએ એકત્વ પ્રકટ કરવામાં આવ્યું છે.

રસના પાંચ પ્રકાર છે—(૧) તિક્ત (તીખો), (૨) કડવો, (૩) કષાય (તુરો) (૪) ખાટો અને (૫) મધુરસ તે પ્રત્યેકમાં સામાન્યની અપેક્ષાએ જ એકત્વ કહેવામાં આવ્યું છે જો કે લવણ પણ એક રસ છે, પરન્તુ તેને સ્વતંત્રરૂપે રસ કહી શકાય તેમ નથી, તે સંસર્ગજન્ય હોવાથી તેને અલગ રીતે રસ ગણ્યો નથી. "एक्के कक्कसे जाव लुक्खे" કર્કશ (કઠિન), મૃદુ, ગુરુ, લઘુ, શીત, ઉષ્ણ, સ્નિગ્ધ (સુંવાળો) અને રુક્ષ (ખરબચડો), આ ભેદોથી સ્પર્શ આઠ પ્રકારનો હોય છે કોમલ સ્પર્શને મૃદુ સ્પર્શ કહે છે, અધોગમનશીલ સ્પર્શને ગુરુ સ્પર્શ કહે છે, સામાન્યત તિર્યગ્ ઉર્ધ્વગમનશીલ સ્પર્શને લઘુ સ્પર્શ કહે છે, સ્તમ્ભન સ્વભાવવાળા સ્પર્શને શીત સ્પર્શ કહે છે.

उष्णो-दाहस्वभावः। स्निग्धः=चिक्कणः संयोगे सति संयोगिनां बन्धकारणम्। रूक्षः=नि स्नेहः, संयोग सत्यपि संयोगिनामबन्धकारणम्। कर्कशादिषु प्रत्येक मेकत्व सामान्यविवक्षया बोध्यमिति॥ सू० ४९॥

इत्थ पुद्गलधर्माणामेकता प्रोक्ता। सम्प्रति पुद्गलसंयुक्तजीवानां येऽष्टादश पापस्थानरूपा अप्रशस्तधर्मास्तेषां प्रत्येकमेकत्वं-'एगे पाणाइवाए' इत्यादिना 'दसणसल्ले' इत्य तेन सन्दर्भेण प्रोच्यते—

मूलम्—एगे पाणाइवाए जाव एगे परिग्गहे। एगे कोहे जाव लोभे। एगे पेज्जे एगे दोसे जाव एगे परपरिवाए। एगा अरतिरती। एगे मायामोसे, एगे मिच्छादसणसल्ले॥ सू०५०॥

छाया—एकः प्राणातिपातो यावत् एकः परिग्रहः। एकः क्रोधो यावत्

नाम लघु है स्तम्भन स्वभाव वाले स्पर्श का नाम शीत है दाहस्वभाव वाले स्वभाव का नाम उष्ण है जो स्पर्श चिकना होता है वह स्निग्ध स्पर्श है यह स्निग्ध स्पर्श संयोग के होने पर सयोगी पदार्थों के आपस में बन्ध होने में कारण होता है इन कर्कश आदि स्पर्शों में से प्रत्येक स्पर्श में सामान्य की अपेक्षा से ही एकता है एसा जानना चाहिये॥ सू० ४९॥

इस प्रकारसे पुद्गलधर्मों में एकता कही। अब पुद्गल सयुक्त जीवोंके जो अठारह पापस्थानरूप अप्रशस्तधर्म हैं उनमें प्रत्येक में एकता "एगे पाणाइवाए" इत्यादि सूत्रद्वारा "मिच्छादसणसल्ले" इस अन्तिम सूत्र तक के सदर्भ से कही जाती है

'एगे पाणाइवाए जाव एगे परिग्गहे' इत्या०॥ ५०॥

मूलार्थ—प्राणातिपात एक है यावत् परिग्रह एक है क्रोध एक है

દાહક સ્વભાવવાળા સ્પર્શને ઉષ્ણ સ્પર્શ કહે છે સુંવાળા સ્પર્શને સ્નિગ્ધ સ્પર્શ કહે છે આ સ્નિગ્ધ સ્પર્શને કારણે સંયોગી પદાર્થો પરસ્પરમાં બંધાય છે આ કર્કશ આદિ પ્રત્યેક સ્પર્શમાં સામાન્યની અપેક્ષાએ એકત્વ છે, એમ સમજવું॥૪૯॥

આ પ્રમાણે પુદ્‌ગલ ધર્મોમાં એકતાનું પ્રતિપાદન કરીને હવે સૂત્રકાર પુદ્‌ગલ-સંયુક્ત જીવોના જે ૧૮ પાપસ્થાનકરૂપ અપ્રશસ્ત ધર્મ છે તે પ્રત્યેકમાં એકતાનું પ્રતિપાદન કરવા નિમિત્તે "एगे पाणाइवाए थी शरू करीने "मिच्छादसणसल्ले ' પર્યન્તનાં સૂત્રોનું નિરૂપણ કરે છે—

एगे पाणाइवाए जाव एगे परिग्गहे" ઇત્યાદિ॥ ૫૦॥

સૂત્રાર્થ—પ્રાણાતિપાત એક છે, પરિગ્રહ એક છે ક્રોધ એક છે, લોભ

लोभः । एकं प्रेम एको द्वेषो यावत् एकः परपरिवादः । एकम् अरतिरति । एका मायामृषा, एकं मिथ्यादर्शनशल्यम् ॥ सू० ५० ॥

टीका—' एगे पाणाइवाए ' इत्यादि—

प्राणातिपातः-प्राणः=उच्छ्वासादयः, तेषाम्-अतिपातनं प्राणिभ्यो वियोजनं-प्राणातिपातो हिंसेत्यर्थः, उक्तं च—

" पञ्चेन्द्रियाणि त्रिविधं बलं च उच्छ्वासनिःश्वासमथान्यदायुः ।
प्राणादशैते भगवद्भिरुक्तास्तेषां वियोजीकरणं तु हिंसा ॥ १ ॥ इति ।

प्राणातिपातश्च द्रव्यभावभेदाद् द्विविधः, विनाशपरिताप संक्लेश भेदाद् वा त्रिविधः । यद्वा – मनसा वाचा कायेन च प्राणातिपातस्य करणात् अनु-

---

यावत् लोभ एक है राग एक है द्वेष एक है यावत् पर परिवाद एक है रति अरति एक है मायामृषा एक है मिथ्यादर्शन शल्य एक है । ५० ।

टीकार्थ—उच्छ्वास आदिको का नाम प्राण है इन प्राणों का प्राणियों से अलग करना इसका नाम प्राणातिपात-हिंसा है ।

कहा भी है—" पञ्चेन्द्रियाणि " इत्यादि ।

पांच इन्द्रियों-स्पर्शन ५, रसना ४, घ्राण ३, चक्षु २, कर्ण,-तीन बल-मनोबल, वचनबल, कायबल,-श्वासोच्छ्वास, आयुः ये १० प्राण हैं इनमें से एकेन्द्रिय जीव के ४ प्राण होते हैं, दो इन्द्रिय से लेकर असंज्ञी पञ्चेन्द्रियों तक के जीवों में क्रमशः एक एक इन्द्रिय की वृद्धि होने से ९ प्राण तक होते हैं और संज्ञी पञ्चेन्द्रियों में मनोबल की वृद्धि होने से १० प्राण होते हैं इन यथा संभव प्राणों का घात करना

પર્યન્તના કષાયો એક છે, પ્રેમ એક છે, દ્વેષ એક છે, યાવત્ પરપરિવાદ એક છે, રતિઅરતિ એક છે, માયામૃષા એક છે મિથ્યાદર્શનશલ્ય એક છે ॥૫૦॥

ટીકાર્થ—ઉચ્છ્વાસ આદિ રૂપ ૧૦ પ્રાણુ હોય છે આ પ્રાણોથી જીવોને અલગ (રહિત) કરવા તેનું નામ પ્રાણાતિપાત (હિંસા) છે.

કહ્યુ પણ છે—" પઞ્ચેન્દ્રિયાણિ " ઈત્યાદિ

પાચ ઇન્દ્રિયો—સ્પર્શેન્દ્રિય, રસના, ઘ્રાણ, ચક્ષુ અને કર્ણ, ત્રણ બળ-મનોબળ, વચનબળ અને કાયબળ, શ્વાસોચ્છ્વાસ અને આયુ, આ ૧૦ પ્રાણુ ગણાય છે તેમાથી એકેન્દ્રિય જીવને ચાર પ્રાણ હોય છે, દ્વીન્દ્રિયથી લઈને અસંજ્ઞી પંચેન્દ્રિય પર્યન્તના જીવોમા ક્રમશ એક એક પ્રાણની વૃદ્ધિ થતાં વધારેમાં વધારે નવ પ્રાણ સભવી શકે છે અને સંજ્ઞી પંચેન્દ્રિયોમા મનોબળની વૃદ્ધિની અપેક્ષાએ દસ પ્રાણનો સદ્ભાવ હોય છે આ યથાસભવ પ્રાણોનો ઘાત કરવો તેનુ નામ પ્રાણાતિપાત (હિંસા) છે. પ્રાણાતિપાતના મુખ્ય બે

मननाच्च प्राणातिपातो नवविध । पुन क्रोधादिभेदात् षट्त्रिंशद्विधो वा भवति। स प्राणातिपातश्च एक =एकत्वसंख्यावान् । एकत्वं च सामान्यमाश्रित्य बोध्यमिति मिथ्यादर्शनशल्यपर्यन्तं वाच्यम् । यावत्करणाद् मृषावादादयो ग्राह्या । तत्र-मृषा वाद-मृषावदन मृषावाद-मिथ्याभाषणमित्यर्थ । स च एक । मृषावादश्च यद्यपि द्रव्यभावभेदात् द्विविध, अभूतोद्भाव १ भूतनिह्नव २ वस्त्वन्तरन्यास ३

इसका नाम हिंसा है यह हिंसारूप प्राणातिपात, द्रव्यप्राणातिपात और भावप्राणातिपात के भेद से दो प्रकार का कहा गया है

अथवा—विनाश, परिताप और संक्लेश के भेद से तीन प्रकार का भी कहा गया है।

अथवा-मनसे हिंसा करना मनसे हिंसा कराना और मनसे हिंसा करनेवालेकी अनुमोदना करना, वचन से हिंसा करना, वचनसे हिंसा कराना और वचनसे हिंसा करनेवालेकी अनुमोदना करना कायसे हिंसा करना, कायसे हिंसा कराना और कायसे हिंसा करनेवालेकी अनुमोदना करना इस प्रकार से भी हिंसा के भेद होते हैं तथा क्रोधादि कषाय के साथ इनका गुणा करने से हिंसा के भेद ३६ हो जाते हैं इस तरह से इतने भेदों वाला भी प्राणातिपात एक रूप जो कहा गया है वह सामान्य की अपेक्षा लेकर ही कहा गया है इसी तरह का कथन मिथ्यादर्शन शल्य तक कह लेना चाहिये यावत् शब्द से मृषावाद आदिकों का ग्रहण हुआ है झूठ बोलने का नाम मृषावाद है इसका अपर नाम मिथ्याभाषण भी है यह एकत्व संख्याविशिष्ट है यह मिथ्याभाषण मृषावाद यद्यपि द्रव्य और भाव के भेद से दो प्रकार का है

પ્રકાર છે—(૧) દ્રવ્ય પ્રાણાતિપાત અને (૨) ભાવ પ્રાણાતિપાત અથવા વિનાશ, પરિતાપ અને સંક્લેશના ભેદથી તેના ત્રણ પ્રકાર પણ કહ્યાં છે અથવા મનથી હિંસા કરવી, મનથી હિંસા કરાવવી અને હિંસા કરનારને મનથી અનુમોદના આપવી, વચનથી હિંસા કરવી, વચનથી હિંસા કરાવવી હિંસા કરનારને વચનથી અનુમોદના આપવી, કાયાથી હિંસા કરવી, કાયાથી હિંસા કરાવવી અને હિંસા કરનારને કાયાથી અનુમોદના આપવી, આ પ્રકારે પણ હિંસાના નવ ભેદ પડે છે તથા ક્રોધાદિ ચાર કષાયો વડે આ નવ ભેદોનો ગુણાકાર કરવાથી કુલ ૩૬ ભેદ થાય છે આટલા ભેદવાળા પ્રાણાતિપાતમાં પણ જે એકત્વ કહેવામાં આવ્યું છે તે સામાન્યની અપેક્ષાએ કહેવામાં આવ્યું છે, એમ સમજવું એજ પ્રકારનું કથન મિથ્યાદર્શનશલ્ય સુધીના પાપસ્થાનકો વિષે મહણ કરવું અહીં "યાવત્ (સુધી)" પદના પ્રયોગદ્વારા મૃષાવાદ આદિ પાપસ્થાનકો ગ્રહણ કરવા જોઇએ.

निन्दामिश्रतुर्विधो वा । तत्र-अभूतोद्भावनं यथा-'सर्वगत आत्मा' इति । भूतनिह्नवो-यथा-'नास्ति आत्मा' इति । वस्त्वन्तरन्यासो यथा-गौरपि सन्नश्वोऽयमिति । निन्दा यथा-कुष्ठी त्वमसि-इति । तथा-अदत्तादानम्-अदत्तस्य-देवगुरुराजस्वामिसाधर्मिकैरवितीर्णस्य-अननुज्ञातस्य-सचित्ताचित्तमिश्रलक्षणस्य वस्तुनो यद् आदानं-ग्रहणमित्यर्थः। तच्च-एकम्=एकत्वसंख्याविशिष्टम् । तथा-मैथुनम्-मिथुनस्य=स्त्रीपुंसलक्षणस्य यत्कर्म तन्मैथुनम्-अब्रह्मसेवनमित्यर्थः । औदा-

अथवा-अभूतोद्भावन१ भूतनिह्नव२ वस्त्वन्तरन्यास३ और निन्दा४ इस प्रकार से चार तरह का है इनमें जो वस्तु जैसी नहीं हो उसे उस प्रकारकी कहना इसका नाम अभूतोद्भावन है जैसे आत्माको सर्वव्यापि कहना मौजूदवस्तु का अपलाप करना इसका नाम भूतनिह्नव है जैसे यह कहना कि आत्मा नहीं है वस्तु को विपरीतरूप से कथन करना इसका नाम वस्त्वन्तरन्यास है, जैसे गाय होते हुए भी उसे घोड़ा कहना, निंदा करनेवाले वचन कहना इसका नाम निंदा है जैसे तू कुष्ठी (कोढवाला) है आदि, तथा देव गुरु राजा स्वामी एवं साधर्मिक जन इनके द्वारा अननुज्ञात (इनके आज्ञा विना) सचित्त अचित्त और मिश्र वस्तु का ग्रहण करना इसका नाम अदत्तादान है यह अदत्तादान भी एकत्व संख्याविशिष्ट है तथा स्त्री और पुरुष रूप मिथुन का जो कर्म है वह मैथुन है इसीका दूसरा नाम अब्रह्म सेवन है यद्यपि यह औदारिक

અસત્ય ભાષણને મૃષાવાદ કહે છે તેનું બીજું નામ મિથ્યાભાષણ પણ છે તે મૃષાવાદના દ્રવ્ય અને ભાવની અપેક્ષાએ બે ભેદ છે. અથવા (૧) અભૂતોદ્ભાવન, (૨) ભૂતનિહ્નવ, (૩) વસ્ત્વન્તરન્યાસ અને (૪) નિન્દા, આ પ્રમાણે તેના ચાર પ્રકાર પણ છે. જે વસ્તુ જેવી ન હોય એવી કહેવી તેનું નામ અભૂતોદ્ભાવન છે જેમકે આત્માને સર્વગત કહેવો તે અભૂતોદ્ભાવન છે વિદ્યમાન વસ્તુને અવિદ્યમાન કહેવી તેનુ નામ ભૂતનિહ્નવ છે. જેમકે "આત્મા નથી" આ પ્રમાણે કહેવું તે ભૂતનિહ્નવ છે વસ્તુનું વિપરીત રૂપે કથન કરવું તેનું નામ વસ્ત્વન્તરન્યાસ છે જેમકે ગાયને ઘોડો કહેવો. નિંદા કરનારા વચન બોલવા તેનું નામ નિંદા છે જેમકે "તું કોઢિયલ (કોઢવાળો) છે." છતાં મિથ્યાવાદમા સામાન્યની અપેક્ષાએ એકત્વ પ્રકટ કરવામાં આવ્યું છે. હવે અદત્તાદાનનું સ્વરૂપ સમજાવવામા આવે છે-દેવ, ગુરુ, રાજા, સ્વામી અને સાધર્મિકજનની આજ્ઞા લીધા વિના સચિત્ત, અચિત્ત અને મિશ્ર વસ્તુને ગ્રહણ કરવી તેનું નામ અદત્તાદાન છે તે અદત્તાદાનમાં પણ એકત્વ સમજવું.

સ્રી અને પુરુષ સેવનરૂપ જે મિથુનકર્મ છે તેને મૈથુન કહે છે. તેનું બીજું નામ અબ્રહ્મસેવન છે. જો કે તે ઔદારિક અને વૈક્રિય આ બે શરી-

रिकवैक्रियशरीरद्वयमाश्रित्य मनोवाक्कायानां कृतकारितानुमोदितभेदैरिदं यद्यपि अष्टादशविधं भवति, विविधोपाधिवशाद् वा विविधं भवति, तथापि सामान्यमाश्रित्यैकत्वं बोध्यम् । तथा-परिग्रहः-परिगृह्यते=स्वीक्रियते इति परिग्रहः । स च एकः । परिग्रहो बाह्याभ्यन्तरभेदेन द्विधा । तत्र-बाह्यः परिग्रहो धर्मोपकरणव्यतिरिक्तो धनधान्यद्विपदचतुष्पदादिरनेकधा । आभ्यन्तरस्तु मिथ्यात्वाविरतिकषाय प्रमादादिरनेकधा । यद्वा-परिग्रहणं परिग्रहः-मूर्च्छेत्यर्थः । तथा-क्रोधो यावत् लोभ एकः । यावत्पदात् मानमाये च ग्राह्ये । क्रोधादयश्च जीवपरिणामा । एते

एवं वैक्रिय इस शरीरद्वय को आश्रित करके मन वचन और काय इनके कृत कारित और अनुमोदना के भेद से १८ प्रकार का होता है ।

अथवा—विविध उपाधि के वश से अनेक प्रकार का भी होता है तब भी सामान्य की अपेक्षा से यह एकत्वसंख्याविशिष्ट कहा गया है तथा परिग्रह जो स्वीकार किया जाता है वह परिग्रह है यह बाह्यपरिग्रह और आभ्यन्तर परिग्रह के भेद से दो प्रकार का कहा गया है इनमें धर्मोपकरणके व्यतिरिक्त जो धन धान्य द्विपद चतुष्पद आदि रूप होता है वह बाह्य परिग्रह है और यह अनेक प्रकार का होता है और जो मिथ्यात्व अविरति कषाय प्रमाद आदि रूप होता है वह आभ्यन्तर परिग्रह है यह आभ्यन्तर परिग्रह भी अनेक तरह का होता है ।

अथवा—मूर्च्छा का नाम परिग्रह है यह सब भी अपने २ सामान्य की अपेक्षा एकत्वसंख्याविशिष्ट है तथा क्रोध यावत्-मान माया और

तेनी अपेक्षाओ मन, वचन अने काय द्वारा कृत, कारित अने अनुमोदनाना भेदथी १८ प्रकारनु होय छे, अथवा-विविध उपाधिनी अपेक्षाओ अनेक प्रकारनु पण होय छे, छतां पण सामान्यनी अपेक्षाओ तेमां ओकत्व बताववामां आव्युं छे जे वस्तुनो स्वीकार (ग्रहण) करवामां आवे छे तेने परिग्रह कहे छे बाह्यपरिग्रह अने आभ्यन्तर परिग्रहना भेदथी तेना बे प्रकार कह्या छे धर्मसाधन सिवायनां जे धन, धान्य, द्विपद, चतुष्पद आदिना परिग्रहने बाह्यपरिग्रह कहे छे, अने ते परिग्रह अनेक प्रकारनो होय छे तथा जे मिथ्यात्व, अविरति, कषाय, प्रमाद आदिरूप होय छे, ते परिग्रहने आभ्यन्तर परिग्रह कहे छे ते आभ्यन्तर परिग्रह पण अनेक प्रकारनो होय छे अथवा मूर्च्छाभावने पण परिग्रह कहे छे ते बधां परिग्रहो पण सामान्यनी अपेक्षाओ ओकत्व संख्यावाळा छे.

च कषायमोहनीयकर्मपुद्गलोदयात् सजायन्ते। एते यद्यप्यनन्तानुबन्ध्यादिभेदाद् असंख्याताध्यवसायस्थानभेदाद् वा बहुविधास्तथापि सामान्यमाश्रित्यैकत्वं बोध्यमिति। तथा-प्रेम-प्रियस्य भावः कर्म वा प्रेम, तच्च-अनभिव्यक्तमायालोभलक्षणभेदस्वभावमासक्तिमात्रं बोध्यम्। एतच्च एकम्। तथा-द्वेषः-द्वेषणं द्वेषः, 'दोष' इतिच्छायापक्षे दूषणं दोषः। स च-अनभिव्यक्तक्रोधमानलक्षणभेदस्वाभावोऽप्रीतिमात्रम्। अयं च एकः। तथा-' यावत् ' शब्दात् कलहः अभ्याख्यानं पैशुन्यं चेति त्रितयं ग्राह्यम्। तत्र-कलह -विग्रहः। अभ्याख्यानम्=असद्भूत-

---

लोभ ये चार कषाय मोहनीय कर्म के उदय से जीव में उत्पन्न होते हैं अतः ये जीव के विकृत परिणाम विशेष हैं। ये क्रोधादि रूप परिणाम अनन्तानुबन्धी आदि के भेद से अथवा असंख्यात अध्यवसायस्थानों के भेद से अनेक प्रकार के हैं फिर भी सामान्य की अपेक्षा से ही ये एकत्वसंख्या विशिष्ट हैं ऐसा कहा गया जानना चाहिये तथा राग प्रिय का जो भाव या कर्म है वह राग है इसमें माया और लोभ के लक्षण अनभिव्यक्त होते हैं और यह आसक्तिमात्र रूप होता है यह भी रूप से एकत्वसंख्या विशिष्ट द्वेष अनभिव्यक्त क्रोधमान वाला होता है और वह अप्रीतिमात्र रूप होता है यह भी सामान्य की अपेक्षा से एकत्व संख्याविशिष्ट कहा गया है यहां यावत् शब्द से कलह अभ्याख्यान एवं पैशुन्य इन तीनों का ग्रहण हुआ है लडाई आदि का नाम

ક્રોધ, માન, માયા અને લોભ, આ ચાર કષાય છે. મોહનીય કર્મના ઉદયથી જીવમાં આ કષાયોની ઉત્પત્તિ થાય છે તેથી તેઓ જીવના વિકૃત પરિણામ વિશેષરૂપ છે. તે ક્રોધાદિરૂપ પરિણામ અનન્તાનુબંધી આદિના ભેદથી અથવા અસંખ્યાત અધ્યવસાય સ્થાનોના ભેદથી અનેક પ્રકારના છે, છતાં પણ સામાન્યની અપેક્ષાએ તેમને એકત્વ સંખ્યાવાળા કહેવામાં આવ્યા છે.

પ્રિયનો જે ભાવ તેને પ્રેમ કહે છે. તેમાં માયા અને લોભનાં લક્ષણ અનભિવ્યક્ત હોય છે એટલે કે તેમાં માયા અને લોભરૂપ કારણોનો સદ્ભાવ હોતો નથી, પણ તે માત્ર આસક્તિરૂપ જ હોય છે તે પણ સામાન્યની અપેક્ષાએ એક છે દ્વેષ અનભિવ્યક્ત (અપ્રકટ) ક્રોધમાનવાળો હોય છે, અને તે માત્ર અપ્રીતિરૂપ જ હોય છે તે દ્વેષમા પણ સામાન્યની અપેક્ષાએ એકત્વ હોય છે ત્યારબાદ વપરાયેલા "यावत्" પદથી કલહ, અભ્યાખ્યાન અને પૈશુન્ય, આ ત્રણ પાપસ્થાનકો ગ્રહણ કરવામાં આવ્યા છે. લડાઈ, ઝગડા આદિને કલહ કહે છે. અસદ્ભૂત (અવિદ્યમાન) દોષોનું આરોપણ કરવું

दोषारोपणम्। पैशुन्य=परोक्षे सदसद्दोषप्रकटनम्। कलहादिषु प्रत्येकमेकत्वमस्या विशिष्टम्। तथा-परपरिवादः-परेषां परिवादो=निन्दा। स च एकः। तथा-अरतिरती-अरतिश्च रतिश्चेति द्वन्द्वः। तत्र-अरतिः-मोहनीयोदयाज्जात उद्वेगलक्षणश्चित्तविकारः। रतिश्च मोहनीयोदयज आनन्दलक्षणश्चित्तविकारः। तच्च एकम्। अरतिः रतिश्चेत्युभयमपि एकत्वेनात्र विवक्षितम्। यतो यत्र क्वापि विषये या रतिः सा विषयान्तरापेक्षया अरतिर्भवति। एवमेव यत्र क्वापि या अरतिः सा विषयान्तरापेक्षया रतिर्भवति। इत्थं च अरतिरेवरतिः, रतिरेव चारतिः व्यपदि

कलह है असद्भूत दोषारोपण का नाम अभ्याख्यान है परोक्ष में सत् असत् दोषों का आरोप करना (आल चढाना) इसका नाम पैशुन्य है इन कलहादिकों में प्रत्येक में एकता सामान्य की अपेक्षा से ही कही गई है परपरिवाद-दूसरों की निन्दा करने रूप परपरिवाद भी सामान्य की अपेक्षा से एक है तथा मोहनीय के उदय से उत्पन्न हुआ उद्वेग लक्षणवाला जो चित्तविकार है उसका नाम अरति है तथा मोहनीय के उदय से उत्पन्न हुआ जो आनन्दरूप लक्षण वाला चित्तविकार है वह रति है अरति रति ये दोनों यहां एकरूप से विवक्षित हुए हैं क्यों कि जिस किसी भी विषय में जीव को जो रति होती है वह विषया न्तर की अपेक्षा से अरति होती है इसी तरह से जिस किसी भी विषय में जो अरति होती है वह विषयान्तर की अपेक्षा से रति होती है इस

તેનું નામ અભ્યાખ્યાન છે અને પરોક્ષરૂપે સાચા ખોટા દોષોનું આરોપણ કરવું અથવા આળ ચઢાવવું તેનું નામ પૈશુન્ય છે કલહ આદિમાં સામાન્યની અપેક્ષાએ એકત્વ કહેવામાં આવેલ છે પરવિવાદ-બીજા લોકોની નિંદા કરવા રૂપ પરપરિવાદમાં પણ સામાન્યની અપેક્ષાએ એકત્વ પ્રકટ કરવામાં આવ્યું છે, એમ સમજવું

મોહનીયના ઉદયથી ઉત્પન્ન થયેલ ઉદ્વેગ લક્ષણવાળો જે ચિત્તવિકાર છે તેને અરતિ કહે છે અને મોહનીયના ઉદયથી ઉત્પન્ન થયેલ આનંદરૂપ લક્ષણ વાળા ચિત્તવિકારને રતિ કહે છે આ બન્નેને અહીં એકરૂપે પ્રકટ કર્યા છે, કારણ કે જે કોઈ પણ વિષયમાં જીવને રતિ ઉત્પન્ન થાય છે તે વિષયાન્તરની અપેક્ષાએ અરતિરૂપે પલટાઈ જાય છે. એજ પ્રમાણે જે કોઈ વિષયમાં અરતિ થાય છે તે વિષયાન્તરની અપેક્ષાએ રતિરૂપે પલટાઈ જાય છે આ રીતે જે રતિ હોય તેને જ અરતિ અને અરતિ હોય છે તેને જ રતિ કહેવામા આવે

शन्ति। अतश्चानयो रौपचारिकमेकत्वं बोध्यम्। तथा-मायामृषा-माया=कपटश्च मृषा=मिथ्या चेति द्वन्द्वः। यद्वा-मायया सहिता मृषा=मृषावादो-मायामृषा= सकपटमसत्यवचनम्। सा च एका। 'मायामोसे' इति सूत्रे पुंस्त्वं प्राकृतत्वात्। इदमुपलक्षणं-क्रोधमानलोभमृषारूपसंयोगदोषाणामपि। प्रेमादीनि विषयभेदेन अध्यवसायस्थानः भेदेन च यद्यपि बहुविधानि तथापि सामान्यापेक्षया एकत्वं बोध्यम्। तथा - मिथ्यादर्शनशल्यम्-मिथ्यादर्शनं=विपरीतदृष्टिः, तत् शल्यमिव=बाणादि शल्यमिव शल्यं दुःखहेतुत्वात्, तच्च एकम्। मिथ्यादर्शनं यद्यपि आभिग्रहिकानाभिग्रहिकाभिनिवेशिकाऽनाभोगिकसांशयिकभेदात् पञ्चविधम्, उपाधिभेदाद् वा बहुतरभेदं, तथापि सामान्यापेक्षया एकम्॥ सू० ५०॥

तरह जो रति होती है वही अरति और जो अरति होती है वही रति कही जाती है इसलिये इनमें औपचारिक एकत्व है ऐसा जानना चाहिये, तथा-माया कपट, और मृषा मिथ्या। अथवा-मायासहित मृषावाद- कपटसहित असत्यवचन ये सब भी सामान्य अपेक्षासे एकत्वसंख्याविष्ट हैं। यह क्रोध, मान, लोभ और मृषारूप संयोग दोषोंका भी उपलक्षक है यद्यपि रागादिक विषयभेदसे और अध्यवसाय स्थान भेदसे अनेक प्रकार के होते हैं तब भी सामान्य की अपेक्षासे ही ये सब एकत्वसंख्याविशिष्ट कहे गये हैं। तथा-मिथ्यादर्शन शल्य विपरीतदृष्टिका नाम मिथ्यादर्शन है यह बाणादि शल्यकी तरह दुःखका हेतु होनेसे शल्य जैसी कही गई है यह भी सामान्य की अपेक्षा से एकत्वसंख्याविशिष्ट है यद्यपि मिथ्यादर्शन, आभिग्रहिक, अनाभिग्रहिक, आभिनिवेशिक, अनाभोगिक और सांशयिक के भेदसे पांच प्रकार का है अथवा उपाधि के भेद से अनेक प्रकार का भी है फिर भी सामान्य की अपेक्षा से ही यह एकत्वसंख्यावाला प्रकट किया गया है॥ सू० ५०॥

છે, તે કારણે તે બન્નેમાં ઔપચારિક એકત્ર છે, એમ સમજવું. એજ પ્રમાણે માયા (કપટ) અને મૃષામિથ્યા-માયા સહિત મૃષાવાદ (કપટ સહિત અસત્ય વચન), આ બન્નેમાં પણ સામાન્યની અપેક્ષાએ એકત્ર સમજવું. તે ક્રોધ, માન, લોભ અને મૃષારૂપ સયોગ દોષોનો પણ ઉપલક્ષક છે જો કે પ્રેમાદિક વિષય ભેદથી અને અધ્યવસાયસ્થાન ભેદથી તેમના અનેક પ્રકાર પડે છે, છતાં પણ સામાન્યની અપેક્ષાએ આ દરેકમાં એકત્વ બતાવવામા આવ્યું છે

વિપરીત દૃષ્ટિને મિથ્યાદર્શન કહે છે. તે તોમરાદિક શલ્યની જેમ દુ ખનું કારણ બને છે, માટે તેને શલ્ય સમાન કહેલ છે તેના નીચે પ્રમાણે પાચ પ્રકાર છે-આભિગ્રહિક, અનાભિગ્રહિક, આભિનિવેશિક, અનાભોગિક અને સાશયિક ઉપાધિના ભેદથી તે અનેક પ્રકારનું પણ હોય છે છતા પણ સામાન્યની અપેક્ષાએ તેમા એકત્ર બતાવવામાં આવ્યુ છે. ॥ સૂ૦૫૦ ॥

इत्थमष्टादश पापस्थानानि निरूपितानि, सम्प्रति तत्प्रतिपक्षभूतानां प्राणाति-पातविरमणादीनामेकत्वमाह—

मूलम्—एगे पाणाइवायवेरमणे जाव परिग्गहवेरमणे । एगे कोहविवेगे जाव मिच्छादंसणसल्लविवेगे ॥ सू० ५१ ॥

छाया—एकं प्राणातिपातविरमणं यावत् परिग्रहविरमणम् । एकः क्रोधविवेको मिथ्यादर्शनशल्यविवेकः ॥ सू० ५१ ॥

टीका—'एगे पाणाइवायवेरमणे' इत्यादि—

प्राणातिपातविरमणम्-प्राणातिपातः=हिंसा, तस्माद् विरमणं=विरतिः-अहिंसेत्यर्थः । तच्च एकम्=एकत्वसंख्याविशिष्टम् । यावत् करणात्-मृषावादविरमणाऽदत्तादानविरमणमैथुनविरमणानि ग्राह्याणि । तथा – क्रोधविवेकः-क्रोधस्य

इस प्रकार से १८ पापस्थानों का एकत्व निरूपण किया अब उनके विपक्षभूत जो प्राणातिपात विरमण आदि हैं उनका एकत्व निरूपण किया जाता है

'एगे पाणाइवाय वेरमणे' इत्यादि ॥ ५१ ॥

मूलार्थ—प्राणातिपात विरमण एक है यावत् परिग्रहविरमण एक है क्रोधविवेक एक है यावत् मिथ्यादर्शनशल्यविवेक एक है ॥५१॥

टीकार्थ—हिंसा का नाम प्राणातिपात है इस हिंसारूप प्राणातिपात से जो विरति हो जाती है उसका नाम प्राणातिपात विरमण है इसी प्राणातिपात विरमण का दूसरा नाम अहिंसा है यह एकत्व संख्याविशिष्ट है यहां यावत् शब्द से मृषावादविरमण, अदत्तादानविरमण,

આ પ્રકારે ૧૮ પાપસ્થાનોના એકત્વનું નિરૂપણ કરીને હવે સૂત્રકાર તેમના વિપક્ષભૂત એવાં પ્રાણાતિપાત વિરમણ આદિના એકત્વનું નિરૂપણ કરે છે

એગેપાણાઇવાયવેરમણે" ઇત્યાદિ ॥ ૫૧ ॥

સૂત્રાર્થ—પ્રાણાતિપાત વિરમણમાં એકત્વ છે (યાવત્) પરિગ્રહ વિરમણ એક છે ક્રોધવિવેક (ક્રોધનો ત્યાગ) એક છે (યાવત્) મિથ્યાદર્શન શલ્યવિવેક એક છે

ટીકાર્થ—હિંસાને પ્રાણાતિપાત કહે છે તે હિંસારૂપ પ્રાણાતિપાતથી દૂર રહેવાની ક્રિયારૂપ વિરતિને પ્રાણાતિપાત વિરમણ કહે છે તેનું જ બીજું નામ અહિંસા છે તેમાં અહીં એકત્વ પ્રકટ કરવામાં આવેલ છે ત્યારબાદ જે 'યાવત્' પદનો પ્રયોગ થયો છે તેના દ્વારા મૃષાવાદ વિરમણ, અદત્તાદાન

विवेकः=त्यागः । यावत् शब्दात्-मानविवेको मायाविवेको लोभविवेकः प्रेमविवेको द्वेषविवेकः कलहविवेकः अभ्याख्यानविवेकः पैशुन्यविवेकः परपरिवादविवेकः अरतिरतिविवेको मायामृषाविवेकः, इत्येते ग्राह्या । एकत्वं च सर्वत्र सामान्यापेक्षया बोध्यम् ॥ सू० ५१ ॥

इत्थं पुद्गलानां जीवधर्माणां चैकत्वमुक्तम् । सम्प्रति कालस्य स्थितिरूपत्वेन तद्धर्मत्वात् कालविशेषाणामेकत्वम्-' एगा ओसप्पिणी ' इत्यादि-'एगा सुसमासुसमा ' इत्यन्तेन सन्दर्भमाह—

मूलम्—एगा ओसप्पिणी । एगा सुसमसुसमा जाव एगा दूसमदूसमा । एगा उस्सप्पिणी । एगा दुस्समदुस्समा जाव एगा सुसमसुसमा ॥ सू० ५२॥

मैथुनविरमण इनकाग्रहण हुआ है तथा क्रोध के त्याग का नाम क्रोध विवेक है यहां पर भी यावत् शब्द से " मानविवेक, मायाविवेक, लोभविवेक, प्रेमविवेक, द्वेषविवेक, कलहविवेक, अभ्याख्यानविवेक, पैशुन्य विवेक, परपरिवादविवेक, अरतिरतिविवेक, मायामृषाविवेक " इनसब का ग्रहण हुआ है इन सब में एकता सामान्यकी अपेक्षा से जाननी चाहिये ॥ ५१ ॥

इस तरह से पुद्गलों के और जीव धर्मों के एकत्व को कहा, अब स्थितिरूप होने से कालके और कालके विशेषरूप कालों के एकत्व को " एगा ओसप्पिणी " यहां से लेकर " एगा सुसम सुसमा " यहां तक के संदर्भ द्वारा कहा जाता है ।'एगा ओसप्पिणी इत्यादि ' ॥ ५२ ॥

વિરમણ અને મૈથુન વિરમણને ગ્રહણ કરવામાં આવેલ છે. તે પ્રત્યેકમાં પણ એકત્વ સમજવું. પરિગ્રહ વિરમણમા પણ એકત્વ છે ક્રોધના ત્યાગને ક્રોધ-વિવેક કહે છે. અહીં "યાવત્" પદથી માનવિવેક, માયાવિવેક, લોભવિવેક, પ્રેમવિવેક, દ્વેષવિવેક, કલહવિવેક, અભ્યાખ્યાનવિવેક, પૈશૂન્યવિવેક, પરપરિવાદ વિવેક, રતિઅરતિવિવેક, અને માયામૃષા વિવેકને ગ્રહણ કરવામાં આવેલ છે. આ પ્રત્યેકમાં તથા મિથ્યાદર્શન શલ્ય વિવેકમાં એકત્વ હોય છે. તે બધામાં સામાન્યની અપેક્ષાએ એકત્વ જાણવું. ॥ સૂ૦ ૫૧ ॥

આ રીતે પુદ્ગલોના અને જીવધર્મોના એકત્વનું પ્રતિપાદન કરીને હવે સ્થિતિરૂપ હોવાને લીધે કાળનુ અને કાળના ભેદોના એકત્વનું " एगा ओसप्पिणी " થી લઇને " एगा सुसमसुसमा " પર્યન્તના સૂત્રો દ્વારા નિરૂપણ કરવામાં આવે છે—" एगा ओसप्पिणी " ઇત્યાદિ ॥ ૫૨ ॥

छाया—एका अवसर्पिणी । एका सुषमसुषमा यावत् एका दुष्षमदुष्षमा । एका उत्सर्पिणी । एका दुष्षमदुष्षमा यावत् एका सुषमसुषमा ॥ सू० ५२ ॥

टीका—' एगा ओसप्पिणी ' इत्यादि—

बकुलचम्पकाशोकादिषु पुष्पोद्गमो नियमेन दृश्यते, तन्नियामकश्च काल एव, अतः कालस्य सत्ता निर्णीयते । स च कालोऽवसर्पिण्युत्सर्पिणीभेदेन द्विविधः । तत्रावसर्पिण्या एकत्वं यत्तुमाह—' एगा ओसप्पिणी' इति । अवसर्पिणी–अवसर्पति=हीयमानारकतयाऽवकामतीत्येवं शीला । यद्वा-अवसर्पिणी=अवसर्पयति= आयुष्कशरीरादिभावान् हापयति ह्रस्वीकरोतीत्येवं शीला । अवसर्पिणी च दश सागरोपम कोटीकोटिप्रमाणः कालविशेषः । सा च एका । एकत्वं चास्याः स्वरूपेणैकत्वाद् बोध्यमिति । अवसर्पिण्यां हि समस्ता अपि शुभा भावाः क्रमेण अनन्तगुणतया हीयन्ते । अशुभाभावाः क्रमेणानन्तगुणतया परिवर्द्धन्ते ॥ इति ।

मूलार्थ—अवसर्पिणी एक है सुषम सुषमा एक है यावत् दुष्षमदुष्षमा एक है उत्सर्पिणी एक है दुष्षमदुष्षमा एक है यावत् सुषम सुषमा एक है ।

टीकार्थ—बकुलचम्पक अशोक आदि कों में जो पुष्पोद्गम नियम से देखनेमें आता है सो इसका नियामक काल ही है अतः इससे काल की सत्ता का निश्चय होता है यह काल अवसर्पिणी और उत्सर्पिणी के भेद से दो प्रकार का होता है इनमें अवसर्पिणीकाल एकत्व सख्याविशिष्ट है जिसकाल में आयुष्क शरीरादि भावों की हीनता होती जाती है उसकाल का नाम अवसर्पिणी काल है यह काल १० कोडाकोडी सागरोपम का है इसमें जो एकता कही गई है वह स्वरूप की अपेक्षा से कही गई है अवसर्पिणीकाल में समस्त ही शुभ भाव अनन्त

સૂત્રાર્થ—અવસર્પિણી એક છે, સુષમસુષમા એક છે, (યાવત્) દુષ્ષમદુષ્ષમા એક છે ઉત્સર્પિણી એક છે, દુષ્ષમદુષ્ષમા એક છે, (યાવત્) સુષમસુષમા એક છે

ટીકાર્થ—બકુલ ચમ્પા, અશોક આદિ પુષ્પો આવવાની ક્રિયા નિયમિત રીતે અમુક સમયે થયા કરે છે તેનો નિયામક કાળ જ છે આ રીતે કાળની સત્તા પુરવાર થાય છે તે કાળ અવસર્પિણી અને ઉત્સર્પિણીના ભેદથી બે પ્રકારનો છે જે કાળમાં આયુષ્ય, શરીરાદિ ભાવોની હીનતા થતી જાય છે, તે કાળને અવસર્પિણીકાળ કહે છે તે ૧૦ કોડાકોડી સાગરોપમ પ્રમાણ હોય છે તે અવસર્પિણી કાળમાં સ્વરૂપની અપેક્ષાએ અહીં એકત્વ પ્રકટ કરવામાં આવ્યું છે આ અવસર્પિણી કાળમાં સમસ્ત શુભ ભાવ અનન્તગણા ઘટતાં

संम्प्रति अवसर्पिणी भेदानां सुषमसुषमादीनां षण्णां प्रत्येकमेकत्वं प्ररूपयितुमाह—'एगा सुषमसुसमा' इत्यादि। सुष्ठु=शोभनाः समा वर्षाणि यस्यां सा सुषमा, सा चासौ सुषमा चेति सुषमसुसमा। यद्वा—सुष्ठु समा सुषमा, अत्यन्तं सुषमा सुषमसुषमा। द्वयोः सामानार्थयोः प्रकृष्टार्थवाचकत्वात् अत्यन्तसुषमा अत्यन्तसुखस्वभावा इति यावत्। सा च एका एकत्वं चास्याः स्वरूपेणैकत्वात्। एवं सुषमादिष्वपि एकत्वं बोध्यम्। इय चावसर्पिण्याः प्रथमारके भवति। अस्याः प्रमाणं तु चतुःसागरकोटीकोटयात्मकं बोध्यमिति। यावच्छब्देन—'एगा सुसमा, एगा सुसमदुस्समा, एगा दुस्समसुसमा, एगा दुस्समा' इति चत्वारो भेदा ग्राह्याः।

गुणरूप से घटते जाते हैं और अशुभभाव क्रम से अनन्तगुणरूप से बढते जाते हैं। यह अवसर्पिणीकाल ६ भेदों वाला होता है इनमें प्रथम भेद सुषमसुषमा है यहां सुषमसुषमा ये दोनों शब्द समान अर्थवाले हैं समा शब्द का अर्थ वर्ष होता है अच्छे वर्ष का नाम सुषमा है अच्छे वर्ष जिसकाल में होते जाते हैं वह सुषमसुषमा है सुषमा सुषमा ऐसे ये दो शब्द हैं जो अत्यन्त सुखस्वभाव के वाचक हैं अर्थात् जिसकाल में अत्यन्त सुखस्वभाववाले वर्ष होते हैं वह सुषम सुषमा काल है इस काल में स्वरूप से एकता है ऐसा जानना चाहिये यह सुषमसुषमाकाल अवसर्पिणी के प्रथम आरक में होता है इसका प्रमाण चार कोडाकोडी सागर का है यहां यावत् शब्द से "एगा सुसमा, एगा सुसमदुस्समा एगा दुस्समसुसमा, एगा दुस्समा" इन चार भेदों का ग्रहण हुआ है।

જાય છે, અને અશુભ ભાવ ક્રમે ક્રમે અનન્તગણા વધતાં જાય છે. તે અવસર્પિણી કાળના નીચે પ્રમાણે ૭ ભેદ પડે છે.

(૧) સુષમસુષમા—આ પદમાં બન્ને શબ્દો સમાન અર્થવાળાં છે. 'સમા' એટલે 'વર્ષ' સારા વર્ષને સુષમા કહે છે. જે કાળમાં સારાં વર્ષો આવે છે, તે કાળને સુષમસુષમા કહે છે. સુષમા સુષમા આ બે શબ્દો અત્યન્ત સુખસ્વભાવના વાચક છે કહેવાનું તાત્પર્ય એ છે કે જે કાળમાં અત્યન્ત સુખસ્વભાવવાળાં વર્ષો આવ્યા કરે છે, તે કાળનું નામ સુષમસુષમાકાળ છે. આ કાળમા સ્વરૂપની અપેક્ષાએ એકતા સમજવી જોઈએ. આ સુષમસુષમાકાળ અવસર્પિણીના પહેલા આરકમાં (આરામા) આવે છે. તે ચાર કોડાકોડી સાગર પ્રમાણનો હોય છે અહીં 'યવત્' પદથી નીચેના ચાર ભેદોને ગ્રહણ કરવામાં આવ્યા છે "एगा सुसमा, एगा सुसमदुस्समा, एगा दुस्समसुसमा, एगा दुस्समा" સુષમસુષમા કાળ પછી સુષમા કાળ શરૂ થાય છે. તે કેવળ

तम-सुषमा=सुखस्वभावा । एकत्वं चास्याः स्वरूपेणैकत्वाद् बोध्यम् । अस्याः प्रमाणं त्रिसागरकोटीकोटयात्मकं बोध्यम् । इत्यवसर्पिण्या द्वितीयारकः २ ।

तथा-सुषमदुष्षमा-दुष्टु समा-दुष्षमा, यद्वा-दुष्टु-दुःखात्मकाःसमा वर्षाणि यस्यां सा दुष्षमा, सुषमा चासौ दुष्षमा चेति सुषमदुष्षमा । सुषमानुभावबहुला ऽल्पदुष्षमानुभावेत्यर्थः । सा चैका । अस्याः प्रमाणं द्विसागरकोटीकोटयात्मकम् । इत्यवसर्पिण्यास्तृतीयारकः ३ ।

तथा-दुष्षमसुषमा-दुष्षमा चासौ सुषमा चेति दुष्षमसुषमा । दुष्षमानुभावबहुलाऽल्पसुषमानुभावेत्यर्थः । इयं च एका । अस्याः प्रमाणं तु द्विचत्वारिंशद्वर्षसहस्रोनमेकसागरकोटीकोटयात्मकं बोध्यम् । इत्यवसर्पिण्याश्चतुर्थारकः ४ ।

सुषमसुषमा काल की अपेक्षा जो केवल सुखस्वभाव वाला काल होता है वह सुषमा काल है इसमें भी एकत्व स्वरूप की अपेक्षा से कहा गया है ऐसा जानना चाहिये इसका प्रमाण ३ कोडाकोडी सागर का है सुषमदुष्षमा यह अवसर्पिणी का तृतीय आरक है इसमें सुखानुभव बहुलरूप से और दुःखानुभव अल्परूप से होता है यह भी स्वरूप की अपेक्षा से एक है इसका प्रमाण दो सागरोपम कोटाकोटी का है दुष्षमसुषमा यह अवसर्पिणी का चौथा आरक है इसमें दुःखानुभव बहुत और सुखानुभव अल्प होता है यह भी स्वरूपतः एक है इसका प्रमाण ४२ हजार वर्ष कम १ कोडाकोडी सागरका है दुष्षमा-यह दुःखस्वरूप भाववाला होता है यह भी स्वरूपतः एक कहा गया है इसका प्रमाण २१ हजार वर्ष का है यह अवसर्पिणी का पांचवा आरक है दुष्षमदुष्षम

સુખસ્વભાવવાળો જ હોય છે તેમાં પણ સ્વરૂપની અપેક્ષાએ એકત્વ સમજવું જોઈએ. તે સુષમાકાળ ત્રણ કોડાકોડી સાગર પ્રમાણવાળો હોય છે અવસર્પિણીના ત્રીજા આરાને સુષમદુષ્ષમાકાળ કહે છે તેમાં અધિક પ્રમાણમાં સુખનો અને અલ્પ પ્રમાણમાં દુઃખનો અનુભવ થાય છે તે બે કોડાકોડી સાગર-પ્રમાણવાળો હોય છે તેમાં પણ સ્વરૂપની અપેક્ષાએ એકત્વ સમજવું અવસર્પિણીના ચોથા આરાને દુષ્ષમસુષમા કાળ કહે છે તે ચોથા આરામાં દુઃખનો અધિક અને સુખનો અલ્પ અનુભવ થાય છે તે એક કોડાકોડી સાગર કરતાં ૪૨ હજાર વર્ષ ન્યૂન પ્રમાણવાળો છે તેમાં પણ સ્વરૂપની અપેક્ષાએ એકત્વ સમજવું અવસર્પિણીના પાંચમાં આરાને દુષ્ષમા કાળ કહે છે આ આરામાં જીવો દુઃખનો જ અનુભવ કરે છે, તે ૨૧ હજાર વર્ષનો કહ્યો છે અને તેમાં

तथा–दुष्षमा=दुःखस्वभावा। सा च एका। अस्यां प्रमाणम् एकविंशतिवर्ष-सहस्रात्मकं बोध्यम्। इत्यवसर्पिण्याः पञ्चमारकः ५।

तथा–दुष्षमदुष्षमा–अत्यन्तदुःखस्वभावा। सा चैका। अस्या अपि प्रमाण-मेकविंशतिसहस्रवर्षात्मकं बोध्यम्। इत्यवसर्पिण्याः षष्ठारकः ६॥ इत्यवसर्पिणी॥

अथ सभेदामुत्सर्पिणीं निरूपयति–'एगा उस्सप्पिणी' इत्यादि। उत्सर्पिणी–उत्सर्पन्ति शुभा भावा अस्यामिति। उत्सर्पति=वर्द्धते अरकापेक्षया, या सा–उत्सर्पिणी। यद्वा–उत्सर्पयति–वर्द्धयति क्रमेणायुष्कशरीरादि भावानिति उत्सर्पिणी। सा चैका। एकत्वमुत्सर्पिण्याः स्वरूपेणैकत्वाद् बोध्यम् एवं–दुष्षमदुष्षमादिष्वप्ये-कत्वं बोध्यम्। उत्सर्पिण्यां हि क्रमेण शुभा भावा अनन्तगुणतया वर्द्धन्ते, अशुभा भावाश्च हीयन्ते इति। इह यावच्छब्देन–' एगा दूसमा, एगा दूसमसुसमा, एगा सुसमा दूसमा, एगा सुसमा' इति द्रष्टव्यम्। तथाच–उत्सर्पिण्याः षड्

यह अत्यन्त दुःखस्वरूप होता है इस का भी प्रमाण २१ हजार वर्ष का है यह अवसर्पिणी का छठा आरक है।

भेद सहित उत्सर्पिणी का निरूपण

जिस काल में शुभ भावों की वृद्धि होती जाती है उसका नाम उत्सर्पिणी है अथवा जिसमें क्रमशः आयुष्क शरीर आदिकों की वृद्धि होती जाती है उसका नम उत्सर्पिणी है यह उत्सर्पिणी भी स्वरूपतः एकत्व संख्याविशिष्ट है दुष्षमदुष्षमादिकों में भी इसी तरह से एकत्व कहा गया जानना चाहिये इस उत्सर्पिणी काल में क्रमशः अरकों की अपेक्षा शुभभाव अनन्तगुणरूप से बढते रहते हैं और अशुभभाव अनन्तगुणरूप से घटते रहते हैं। यहां यावत् शब्द से " एगा दूसमा एगा दूसमसुसमा एगा सुसमादूसमा एगा सुसमा " इनका ग्रहण

સ્વરૂપની અપેક્ષાએ એકત્વ બતાવ્યુ છે અવસર્પિણીના છઠ્ઠા આરાને દુષ્ષમ-દુષ્ષમા કહે છે. આ આરા અત્યન્ત દુઃખસ્વરૂપ હોય છે. તેનું પ્રમાણ પણ ૨૧ હજાર વર્ષનુ કહ્યુ છે તેમાં પણ સ્વરૂપની અપેક્ષાએ એકત્વ સમજવું જોઈએ

ઉત્સર્પિણીકાળ અને તેના ભેદોનુ નિરૂપણ—

જે કાળમાં શુભ ભાવનાઓની વૃદ્ધિ થતી જાય છે, તે કાળને ઉત્સર્પિણી કહે છે અથવા જેમા ક્રમશ આયુષ્ય, શરીર વગેરેની વૃદ્ધિ થતી જાય છે, તે કાળને ઉત્સર્પિણી કહે છે. તે ઉત્સર્પિણીમા પણ સ્વરૂપની અપેક્ષાએ એકત્વ સમજવું જોઈએ. તેના દુષ્ષમદુષ્ષમાદિક ભેદોમાં પણ સામાન્યની અપેક્ષાએ એકત્વ સમજવુ. આ ઉત્સર્પિણી કાળમાં ક્રમશઃ એક પછી એક આરામા શુભ ભાવ અનંતગણાં વધતા જાય છે અને અશુભ ભાવ અનંતગણાં ઘટતાં જાય છે અહીં " યાવત્ " પદથી " एगा दूसमा, एगा दूसमसुसमा, एगा सुसमा-

मारकाः सन्तीति बोध्यम् । ते यथा-दुष्षमदुष्षमा १, दुष्षमा २, दुष्षमसुषमा ३, सुषमदुष्षमा ४, सुषमा ५, सुषमसुषमा ६, इति दुष्षमदुष्षमादीनामर्थं पूर्ववद् बोध्यः । दुष्षमदुष्षमादीनां प्रत्येकमेकस्वसंख्याविशिष्टं बोध्यम् । परिमाणमासां पूर्ववद् बोध्यम् । इत्युत्सर्पिणी ॥ सू० ५२ ॥

इत्थं जीवपुद्गलकालरूपाणां द्रव्याणां विविधधर्मविशेषा एकत्वेनोक्ताः । सम्प्रति संसारिमुक्तजीवपुद्गलानां द्रव्यविशेषाणां नारकपरमाण्वादीनां समुदायलक्षणधर्मस्य एकत्वं 'एगा नेरइयाण वग्गणा' इत्यारभ्य 'एगा अणंतगुणलुक्खाणं पोग्गलाण वग्गणा' इत्यन्तेन सन्दर्भेण प्ररूप्यते—

मूलम्–एगा नेरइयाण वग्गणा, एगा असुरकुमाराण वग्गणा, चउवीसदंडओ जाव वेमाणियाण वग्गणा ॥ १ ॥

एगा भवसिद्धियाण वग्गणा, एगा अभवसिद्धियाण वग्गणा, एगा भवसिद्धियाण नेरइयाण वग्गणा, एगा अभवसिद्धियाण नेरइयाण वग्गणा, एवं जाव एगा भवसिद्धियाण वेमाणियाण वग्गणा, एगा अभवसिद्धियाण वेमाणियाणं वग्गणा ॥ २ ॥

एगा सम्मद्दिट्ठियाण वग्गणा, एगा मिच्छद्दिट्ठियाण वग्गणा, एगा सम्मामिच्छद्दिट्ठियाण वग्गणा । एगा सम्मद्दिट्ठियाण णेरइयाण वग्गणा, एगा मिच्छद्दिट्ठियाण णेरइयाण

हुआ है इस तरह उत्सर्पिणी काल के ये ६ आरक होते हैं। इनमें दुष्षमदुष्षमा १, दुष्षमा २, दुष्षमसुषमा ३ सुषमदुष्षमा ४, सुषमा ५ और सुषमसुषमा ६ ये इनके नाम हैं। इन सब का अर्थ पूर्व की तरह से है। तथा इनका परिमाण भी जैसा पहिले कहा गया है वैसा ही जानना चाहिये ॥ सू०५२ ॥

सुसमा एगा सुसमा" आ सूत्रपाठ ग्रहण करवामां आव्यो छे आ रीते उत्सर्पिणी काळना नीचे प्रमाणे छ आरा छे-(१) दुष्षमदुष्षमा, (२) दुष्षमा (३) दुष्षमसुषमा (४) सुषमदुष्षमा, (५) सुषमा अने (६) सुषमसुषमा आ छ्येनो अर्थ पहेलां कह्या मुजब समजवो. ते प्रत्येकनुं प्रमाण पण पहेलां कह्या अनुसार समजवुं ॥ सू ५२ ॥

वग्गणा, एगा सम्मामिच्छद्दिट्ठियाणं णेरइयाणं वग्गणा, एवं जाव थणियकुमाराणं वग्गणा। एगा मिच्छादिट्ठियाणं पुढविकाइयाणं वग्गणा एवं जाव वणस्सइकाइयाणं। एगा सम्मद्दिट्ठियाणं बेइंदियाणं वग्गणा, एगा मिच्छद्दिट्ठियाणं बेइंदियाणं वग्गणा। एवं तेइंदियाणं पिचउरिंदियाणवि। सेसा जहा नेरइया जाव एगा सम्मामिच्छद्दिट्ठियाणं वेमाणियाणं वग्गणा ॥ ३ ॥

एगा कण्हपक्खियाणं वग्गणा, एगा सुक्कपक्खियाणं वग्गणा। एगा कण्हपक्खियाणं णेरइयाणं वग्गणा, एगा सुक्कपक्खियाणं णेरइयाणं वग्गणा। एवं चउवीसदंडओ भाणियव्वो।४।

एगा कण्हलेस्साणं वग्गणा, एगा नीललेस्साणं वग्गणा, एवं जाव सुक्कलेस्साणं वग्गणा। एगा कण्हलेस्साणं नेरइयाणं वग्गणा जाव काउलेस्साणं णेरइयाणं वग्गणा। एवं जस्स जइ लेस्साओ। भवणवइवाणमंतरपुढवि आउवणस्सइकाइयाणं च चत्तारि लेस्साओ तेउवाउबेइंदिय तेइंदिय चउरिंदियाणं तिन्नि लेस्साओ, पंचिंदियतिरिक्खजोणियाणं मणुस्साणं छल्लेस्साओ, जोइसियाणं एगा तेउलेसा, वेमाणियाणं तिन्नि उवरिमलेस्साओ ॥ ५ ॥

एगा कण्हलेस्साणं भवसिद्धियाणं वग्गणा, एवं छसु वि लेस्सासु दो दो पयाणि भाणियव्वाणि। एगा कण्हलेस्साणं भवसिद्धियाणं णेरइयाणं वग्गणा, एगा कण्हलेस्साणं अभवसिद्धियाणं णेरइयाणं वग्गणा। एवं जस्स जइ लेस्साओ तस्स तइ भाणियव्वाओ जाव वेमाणियाणं ॥ ६ ॥

एगा कण्हलेस्साणसम्माद्दिट्ठियाण वग्गणा, एगा कण्हले स्साणं मिच्छद्दिट्ठियाणं वग्गणा,एगा कण्हलेस्साणं सम्मामिच्छ द्दिट्ठियाणं वग्गणा। एव छसु वि लेस्सासु जाव वेमाणियाणं जेसिं जइ दिट्ठिओ ॥ ७ ॥

एगा कण्हलेस्साण कण्हपक्खियाणं वग्गणा, एगा कण्ह लेस्साणं सुक्कपक्खियाणं वग्गणा, जाव वेमाणियाणं जस्स जइ लेस्साओ। एए अट्ठ चउवीसदडया ॥ ८ ॥

एगा तित्थसिद्धाण, वग्गणा, एव जाव एगा एगसिद्धाणं वग्गणा, एगा अणेगसिद्धाण वग्गणा, एगा अपढमसमयसि द्धाण वग्गणा एवं जाव अणंतसमयसिद्धाणं वग्गणा। एगा परमाणुपोग्गलाण वग्गणा एव जाव एगा अणतपएसियाण खधाण वग्गणा। एगा एगपएसोगाढाण पोग्गलाण वग्गणा। जाव एगा असखेज्जपएसोगाढाण वग्गणा। एगा एगसमयठि इयाण पोग्गलाण वग्गणा। जाव असखेज्जसमयट्ठिइयाणं पोग्गलाणं वग्गणा। एगा एगगुणकालगाणं पोग्गलाणं वग्गणा जाव एगा असखेज्जगुणकालगाणं वग्गणा, अणतगुण कालगाण पोग्गलाण वग्गणा। एव वण्णा गधा रसा फासा भाणियव्वा जाव अणंतगुणलुक्खाण वग्गणा। एगा जहन्नपए सियाण खधाण वग्गणा, एगा उक्कोसपएसियाण खधाण वग्गणा, एगा अजहन्नुक्कोसपएसियाण खधाणं वग्गणा, । एव जहन्नो

गाहणयाणं उक्कोसोगाहणयाणं अजहन्नुक्कोसोगाहणयाणं, जहन्नट्ठिइयाणं उक्कोसट्ठिइयाणं अजहन्नुक्कोसट्ठिइयाणं, जहन्नगुणकालगाणं उक्कोसगुणकालगाणं अजहन्नुक्कोसगुणकालगाणं । एवं वण्णगंधरसफासाणं वग्गणा भाणियव्वा, जाव एगा अजहन्नुक्कोसगुणलुक्खाणं पोग्गलाणं वग्गणा ॥ सू० ५२ ॥

छाया-एका नैरयिकाणां वर्गणा, एका असुरकुमाराणां वर्गणा, चतुर्विंशतिदंडको यावद् वैमानिकानां वर्गणा ॥ १ ॥

एका भवसिद्धिकानां वर्गणा, एका अभवसिद्धिकानां वर्गणा, एका भवसिद्धिनैरयिकाणां वर्गणा, एका अभवसिद्धिकानां नैरयिकाणां वर्गणा, एवं यावत् एका भवसिद्धिकानां वैमानिकानां वर्गणा, एका अभवसिद्धिकानां वैमानिकानां वर्गणा॥२॥

एका सम्यग्दृष्टिकानां वर्गणा, एका मिथ्यादृष्टिकानां वर्गणा, एका सम्यग्मिथ्यादृष्टिकाणां वर्गणा । एका सम्यग्दृष्टिकानां नैरयिकाणां वर्गणा, एका मिथ्यादृष्टिकानां नैरयिकाणां वर्गणा, एका सम्यग्मिथ्यादृष्टिकानां नैरयिकाणां वर्गणा एवं यावत् स्तनितकुमाराणां वर्गणा । एका मिथ्यादृष्टिकानां पृथिवीकायिकानां वर्गणा, एवं यावद् वनस्पतिकायिकानाम् । एका सम्यग्दृष्टिकानां द्वीन्द्रियाणां वर्गणा, एका मिथ्यादृष्टिकानां द्वीन्द्रियाणां वर्गणा । एवं त्रीन्द्रियाणामपि चतुरिन्द्रियाणामपि । शेषा यथा नैरयिका यावत् एका सम्यग्मिथ्यादृष्टिकानां वैमानिकानां वर्गणा॥३॥

एका कृष्णपाक्षिकाणां वर्गणा, एका शुक्लपाक्षिकाणां वर्गणा । एका कृष्णपाक्षिकाणां नैरयिकाणां वर्गणा, एका शुक्लपाक्षिकाणां नैरयिकाणां वर्गणा । एवं चतुर्विंशतिदण्डको भणितव्यः ॥ ४ ॥

एका कृष्णलेश्यानां वर्गणा, एका नीललेश्यानां वर्गणा, एवं यावत् शुक्ललेश्यानां वर्गणा । एका कृष्णलेश्यानां नैरयिकानां वर्गणा यावत् कापोतलेश्यानां नैरयिकाणां वर्गणा । एवं यस्य यावत्यो लेश्याः । भवनपतिव्यन्तरपृथिव्यब्वनस्पतिकायिकानां च चतस्रो लेश्याः, तेजोवायुद्वीन्द्रियचतुरिन्द्रियाणां तिस्रो लेश्याः, पञ्चेन्द्रियतिर्यग्योनिकानां मनुष्याणां षड् लेश्याः, ज्योतिषिकाणामेका तेजोलेश्या, वैमानिकानां तिस्र उपरितनलेश्याः ॥ ५ ॥

एका कृष्णलेश्यानां भवसिद्धिकानां वर्गणा, एवं षट्स्वपि लेश्यासु द्वे द्वे पदे भणितव्ये । एका कृष्णलेश्यानां भवसिद्धिकानां नैरयिकाणां वर्गणा, एका कृष्णलेश्यानाम् अभवसिद्धिकानां नैरयिकाणां वर्गणा । एवं यस्य यावत्यो लेश्याः, तस्य तावत्यो भणितव्या यावद् वैमानिकानाम् ॥ ६ ॥

एका कृष्णलेश्यानां सम्यग्दृष्टिकानां वर्गणा, एका कृष्णलेश्यानां मिथ्यादृष्टिकानां वर्गणा, एका कृष्णलेश्यानां सम्यग्मिथ्यादृष्टिकानां वर्गणा । एवं षट्स्वपि लेश्यासु यावद् वैमानिकाना, येषा यावत्यो दृष्टयः ॥ ७ ॥

एका कृष्णलेश्यानां कृष्णपाक्षिकाणां वर्गणा, एका कृष्णलेश्यानां शुक्लपाक्षिकाणां वर्गणा, यावद् वैमानिकानां, यस्य यावत्यो लेश्याः एते अष्ट चतुर्विंशतिदण्डकाः ॥ ८ ॥

एका तीर्थसिद्धानां वर्गणा, एवं यावत् एका एकसिद्धानां वर्गणा, एका अनेकसिद्धानां वर्गणा, एका अप्रथमसमय सिद्धानां वर्गणा, एवं यावत् अनन्तसमयसिद्धानां वर्गणा । एका परमाणुपुद्गलानां वर्गणा, एवं यावत् एका अनन्तप्रदेशिकानां स्कन्धानां वर्गणा । एका एकप्रदेशावगाढानां पुद्गलानां वर्गणा, यावत् एका असङ्ख्येयप्रदेशावगाढानां पुद्गलानां वर्गणा । एका एकसमयस्थितिकानां पुद्गलानां वर्गणा, यावत् असङ्ख्येयसमयस्थितिकानां पुद्गलानां वर्गणा । एका एकगुणकालकानां पुद्गलानां वर्गणा, यावत् एका असङ्ख्येयगुणकालकानां पुद्गलानां वर्गणा, अनन्तगुणकालकानां पुद्गलानां वर्गणा । एवं वर्णा गन्धा रसा स्पर्शा भणितव्या यावद् अनन्तगुणरूक्षाणां पुद्गलानां वर्गणा एका जघन्यप्रदेशिकानां स्कन्धानां वर्गणा, एका उत्कर्षप्रदेशिकानां स्कन्धानां वर्गणा, एका अजघन्योत्कर्षप्रदेशिकानां स्कन्धानां वर्गणा । एवं जघन्यावगाहनकानाम् उत्कर्षावगाहनकानाम् अजघन्योत्कर्षावगाहकानां, जघन्यस्थितिकानाम् , उत्कर्षस्थितिकानाम् अजघन्योत्कर्षस्थितिकानां, जघन्यगुणकालकानाम् उत्कर्षगुणकालकानाम् । एवं वर्णगन्धरसस्पर्शानां वर्गणा भणितव्या, यावत् एका अजघन्योत्कर्षगुणरूक्षाणां पुद्गलानां वर्गणा॥सू०५२॥

टीका—' एगा नेरइयाणं ' इत्यादि—

नैरयिकाणाम्—निर्गताः अयात्=सातवेदनीयादिरूपात् शुभादिति निरयाः, नरकावासाः=तेषु भवा नैरयिकाः ते च पृथिवीप्रस्तटनरकावासस्थितिभव्यत्वादि

इस प्रकार से जीव पुद्गल और काल इन द्रव्यों के विविध धर्मविशेष एकत्व संख्याविशिष्ट कहे । अब संसारी जीव मुक्त जीव और पुद्गलद्रव्यविशेषों के तथा नारक परमाणु आदिकों के समुदाय रूप धर्म की एकता का कथन " एगा नेरइया ण " आदि सूत्र से लेकर के

આ રીતે જીવ, પુદ્‌ગલ અને કાળ આ દ્રવ્યોના વિવિધ ધર્મવિશેષમાં એકત્વનું પ્રતિપાદન કરીને હવે સંસારી જીવ, મુક્ત જીવ અને પુદ્‌ગલ દ્રવ્ય વિશેષોના તથા નારક પરમાણુ આદિકોના સમુદાયરૂપ ધર્મની એકતાનું પ્રતિ

भेदादनेकविधाः, तेषां वर्गणा=राशिः एका = एकत्वसंख्याविशिष्टा । एकत्वं च नारकत्वपर्यायसाम्याद् बोध्यम् । एवमग्रेऽपि सर्वत्र तत्तत्पर्याय साम्यादेकत्वं बोध्यम् । तथा–असुरकुमाराणाम्–असुराश्च ते कुमाराश्चेति असुरकुमाराः, कुमारत्वं

" एगा अजहण्णुक्कोसगुणलुक्खाणं पोग्गलाणं वग्गणा " इस अन्तिम संदर्भ द्वारा करते हैं–' एगा नेरइयाणं वग्गणा ' इत्यादि ॥ ५३ ॥

टीकार्थ—सातावेदनीय आदि शुभरूप कर्मों से जो स्थान निर्गत -रहित होते हैं वे निरय हैं यहां निर शब्द का अर्थ निर्गति है और अय शब्द का अर्थ सातावेदनीय आदिरूप शुभकर्म है इन निरयों में नरकावासों में जो होते हैं वे नैरयिक हैं अर्थात् इन नरकावासों में जो जन्म लेते हैं वे नारक हैं। ये नारक, पृथिवी, प्रस्तर नरकावास, स्थिति और भव्यत्वादि के भेद से अनेक प्रकार के होते हैं। वर्गणा नाम राशि का है इस तरह नैरयिकों की राशि एकत्वसंख्याविशिष्ट है यह एकत्व उनमें नारकपर्याय की समानता को लेकर कहा गया है। इसी तरह से आगे भी अपनी २ पर्याय की समानता को लेकर एकत्व समझना चाहिये तथा असुरकुमारों की वर्गणामें भी एकता है, इन असुरों को जो कुमार कहा गया है उसका कारण इनका सदा नवयुवक जैसे

પાદન " एगा नेरइयाणं " આ સૂત્રથી લઇને " एगा अजहण्णुक्कोसगुणलुक्खाणं पोग्गलाणं वग्गणा " આ સૂત્ર પર્યન્તના સદ્દભા કરવામાં આવે છે.

" एगा नेरइयाणं वग्गणा " ઇત્યાદિ ॥ ૫૩ ॥

ટીકાર્થ—સાતાવેદનીય આદિ શુભરૂપ કર્મોથી જે સ્થાન નિર્ગત (રહિત) હોય છે, તે સ્થાનને ' નિરય ' કહે છે. અહીં ' નિઃ ' શબ્દનો અર્થ નિર્ગતિ (રહિતતા) છે, અને ' અય " નો અર્થ સાતાવેદનીય આદિરૂપ શુભ કર્મ છે. આ નિરયોમાં (નરકાવાસોમાં) જન્મ લેનારા જીવોને નૈરયિકો કહે છે નૈરયિકોનું બીજું નામ નારકો છે. તે નારકો પૃથ્વી, પ્રસ્તર, નરકાવાસ, સ્થિતિ અને ભવ્યત્વ આદિના ભેદથી અનેક પ્રકારના હોય છે. રાશિને વર્ગણા કહે છે. આ રીતે નૈરયિકોની રાશિને એકત્વ સંખ્યાવાળી કહી છે. નારક પર્યાયની સમાનતાની અપેક્ષાએ તેઓમા એકત્વ કહ્યું છે. એજ પ્રમાણે આગળ પણ પોતપોતાની પર્યાયની સમાનતાની અપેક્ષાએ જ એકત્વ સમજવું. અસુરકુમારોની વર્ગણામાં પણ આ દૃષ્ટિએ જ એકત્વ સમજવું જોઇએ. આ અસુરોને

येषां नवयौवनतया कुमारसादृश्येन योग्यम् । तेषां वर्गणा एका । एवमेव चतुर्विंशतिदण्डकः=चतुर्विंशतिपदप्रतिबद्धो दण्डको=वाक्यरचनाविशेषो वक्तव्य' । चतुर्विंशतिदण्डकश्च—

' नेरइया १ असुराई १०, पुढवाइ ५ बेइंदियादओ चेव ४ ।
नर १ वंतर १, जोइसिय १ वमाणी १ दण्डओ एवं ॥"

छाया—नैरयिका असुरादि पृथिव्यादि द्वीन्द्रियादयश्चैव ।
नरो व्यन्तरो ज्योतिषिको वैमानिको दण्डक एवम् ॥ इति ।

तत्र—भवनपतयो दशविधा भवन्ति । तथाहि—

"असुरा१, नाग२, सुवण्णा३, विज्जू४, अग्गी५, य दीव६, उदही७, य ।
दिसि८, पवण९, थणिय१०, नामा, दसहा एए भवणवासी ॥"

पने रहता है इसीलिये इनमें कुमार का सादृश्य होने से इन्हें कुमार कहा गया है इसी प्रकार से चतुर्विंशति दण्डकस्थ जीवों की वर्गणा में भी एकत्व समझना चाहिये चतुर्विंशतिपद प्रतिबद्ध जो वाक्यरचना विशेष है उसका नाम चौवीसदण्डक है वह चतुर्विंशति दण्डक इस प्रकार से है–' नेरइया ' इत्यादि ।

नैरयिक का एकदण्डक, असुरकुमार आदि दशका दशदण्डक १० पृथिवीकायिक आदि पांच स्थावर का पांच दण्डक५, दो इन्द्रियादि तीन विकलेन्द्रियोंका तीन (आदि शब्दसे) तिर्यंच पञ्चेन्द्रियका एक दण्डक इस तरह चार दण्डक ४, नर १, व्यन्तर १, ज्योतिषिक १, वैमानिक १, इस प्रकारसे ये २४ दण्डक हैं ।

કુમાર કહેવાનું કારણ એ છે કે તેઓ સદા નવયુવક જેવાં દેખાય છે આ રીતે કુમારો અને તેમની વચ્ચે નવયૌવનરૂપ ગુણની સમાનતા હોવાથી તેમને અસુરકુમારો કહ્યાં છે એજ પ્રમાણે ૨૪ દંડકસ્થ જીવોની વર્ગણાઓમાં પણ એકત્વ સમજવું જોઈએ ૨૪ પદ દ્વારા પ્રતિબદ્ધ જે વાક્યરચના વિશેષ છે, તેને ચોવીસ દંડક કહે છે ને ચોવીસ દંડક નીચે પ્રમાણે છે—

' નેરઇયા " ઇત્યાદિ

નારકોનું એક દંડક, અસુરકુમારાદિ દસ ભવનપતિ દેવોના દસ દંડક, પૃથ્વીકાયિક આદિ સ્થાવરના પાંચ દંડક દ્વીન્દ્રિયથી ચતુરિન્દ્રિય પર્યન્તના વિકલેન્દ્રિયના ત્રણ અને પંચેન્દ્રિય તિર્યંચોનું એક એમ ચાર દંડક, મનુષ્યોનું એક દંડક, વ્યન્તરોનું એક દંડક, જ્યોતિષ્કોનું એક અને વૈમાનિકોનું એક દંડક આ પ્રમાણે કુલ ૨૪ દંડક છે

छाया—असुरा नागसुपर्णा विद्युत् अग्निश्च द्वीप उदधिश्च ।
दिक्पवन स्तनितनामानो दशधा एते भवनवासिनः ॥ इति ॥

एतदनुसृत्य चतुर्विंशतिः सूत्राणि वक्तव्यानि । कियदवधि वक्तव्यानि ? इत्याह—' जाव ' इत्यादि-वैमानिकाना वर्गणा एका बोध्येति । एषः सामान्य-दण्डकः । ननु नारकवर्गणाया यदेकत्वमुक्तम्, तदसंगतम्, नारकसत्ताया एव दुरुपपादत्वात् । तथाहि—नारका असद्भूताः, तत्साधक प्रमाणाभावात्, शशशृङ्गवदिति । अनेनानुमानप्रमाणेन गम्यते, यत् नारक जीवा न सन्तीति चेत्, उच्यते—

असुरकुमारादि१० इस प्रकार से हैं-' असुरा नागसुवण्णा" इत्यादि ।

असुरकुमार१, नागकुमार२, सुवर्णकुमार३, विद्युत्कुमार४, अग्निकुमार५, द्वीपकुमार६, उदधिकुमार७, दिशाकुमार८, वायुकुमार९, और स्तनितकुमार१० इन पदों का अनुसरण करके २४ दण्डक कह लेना चाहिये ये चौवीस सूत्र कहां तक कहना चाहिये-इसके लिये कहा गया है-" जाव वेमाणिया वग्गणा " वैमानिकवर्गणा तक ये २४ दण्डक कहना चाहिये यह सामान्य दण्डक है ।

शंका—आपने जो नारक वर्गणा में एकत्व कहा है वह असंगत है क्योंकि नारकों की सत्ता ही सिद्ध नहीं है तथाहि-नारकों के साधक प्रमाण का अभाव होने से नारक हैं ही नहीं जैसे साधक प्रमाण के अभाव से शशश्रृङ्ग नही है ?

અસુરકુમારાદિ ૧૦ દંડકો નીચે પ્રમાણે છે—
" असुरा नागसुवण्णा" ઇત્યાદિ

(૧) અસુરકુમાર (૨) નાગકુમાર (૩) સુવર્ણકુમાર, (૪) વિદ્યુત્કુમાર, (૫) અગ્નિકુમાર, (૬) દ્વીપકુમાર, (૭) ઉદધિકુમાર (૮) દિશાકુમાર (૯) વાયુ કુમાર અને (૧૦) સ્તનિતકુમાર

આ પદોને અનુસરીને ૨૪ સૂત્ર હોવા જોઇએ. "जाव वेमाणिया वग्गणा" તે ૨૪ સૂત્ર ક્યાં સુધી હોવા જોઇએ ? તો સૂત્રકાર કહે છે કે વૈમાનિક વર્ગણા પર્યન્તના ૨૪ દંડક સૂત્ર કહેવા જોઇએ. આ સામાન્ય દંડક છે.

શંકા—આપે નારક વર્ગણામા જે એકત્વ પ્રકટ કર્યું છે તે અસંગત લાગે છે, કારણ કે નારકોનુ અસ્તિત્વ જ સિદ્ધ થતું નથી. નારકોના સાધક પ્રમાણનો અભાવ હોવાથી નારકોનું અસ્તિત્વ જ નથી એમ માની શકાય છે જેમ સાધક પ્રમાણને અભાવે, સસલાને શિંગડા હોતા નથી એ વાત માનવી પડે છે, એજ રીતે નારકોનુ અસ્તિત્વ પણ નથી, એમ માનવામાં શો વાંધો છે ?

'सत्साधकप्रमाणाभावात्' इति यो हेतुरुपदर्शितः, स हेतुरसिद्धः, तत्साधकानुमानसद्भावात्। तथाहि—प्रकृष्टपापफलं विद्यमानभोक्तृकं, कर्मफलत्वात्, पुण्यकर्मफलवत्, न च तिर्यङ्नरा एव प्रकृष्टपापफलभोगिनः, औदारिकशरीरिणा तस्य वेदयितुमशक्यत्वात्, विशिष्टसुरजन्महेतु प्रकृष्टपुण्यफलमिवेति।

इति प्रथमश्चतुर्विंशति दण्डकः ॥ १ ॥

इत्थं सामान्येन चतुर्विंशति दण्डकमुक्त्वा सम्प्रति विशेषतस्तमाह—'एगा

उत्तर—नारकों की सत्ता सिद्ध करने के लिये जो "तत्साधक प्रमाणाभावात्" ऐसा हेतु कहा गया है वह असिद्ध है क्योंकि नारकों की सत्ता का साधक अनुमान प्रमाण इस प्रकार से है—" प्रकृष्ट पाप फलम् *विद्यमानभोक्तृकं कर्मफलत्वात् पुण्यकर्मफलवत्* " पुण्यकर्म के फल की तरह प्रकृष्ट पापफल विद्यमान है भोक्ता जिस का ऐसा है क्यों कि यह कर्म का फल है यहां ऐसा नहीं कहना चाहिये कि तिर्यञ्च और मनुष्य ही प्रकृष्ट पाप के फल के भोक्ता होते हैं क्यों कि प्रकृष्ट पाप फल औदारिक शरीर से युक्त प्राणी द्वारा वेदयितुं (वेदने के लिये) अशक्य होता है जैसे विशिष्ट सुरजन्म का हेतुभूत जो प्रकृष्ट पुण्यफल होता है वह औदारिक द्वारा वेदयितुं अशक्य होता है।

इस प्रकार से यह प्रथम चतुर्विंशति दण्डक है ?

इस प्रकार सामान्यतः चौबीस दण्डक कहकर अब विशेष रूप

સમાધાન—" નારકોના અસ્તિત્વને સિદ્ધ કરવાને માટે સાધક પ્રમાણનો અભાવ છે ' એમ કહેવું તે બરાબર નથી. કારણ કે નારકોના અસ્તિત્વને સિદ્ધ કરનાર અનુમાન પ્રમાણ મોજૂદ છે તે અનુમાન પ્રમાણ નીચે પ્રમાણે છે-' પ્રકૃષ્ટપાપફલમ્ વિદ્યમાનભોક્તૃકં કર્મફલત્વાત્ પુણ્યકર્મફલવત્ " પુણ્ય કર્મના ફળની જેમ પ્રકૃષ્ટ પાપફળ પણ વિદ્યમાન ભોક્તાવાળું હોય છે, કારણ કે તે કર્મનું ફળ છે અહીં એવું ના કહેવું જોઈએ કે તિર્યંચો અને મનુષ્યો જ પ્રકૃષ્ટ પાપફળના ભોક્તા હોય છે કારણ કે પ્રકૃષ્ટ પાપફળ ઔદારિક શરીરથી યુક્ત પ્રાણી (જીવ) દ્વારા વેદાવું તે અશક્ય હોય છે—ઔદારિક શરીરવાળો જીવ તેનું વેદન કરી શકતો નથી જેવી રીતે પ્રકૃષ્ટ પુણ્યફળ ઔદારિક શરીર દ્વારા વેદી શકાતું નથી પણ દેવો દ્વારા જ વેદી શકાય છે, એજ પ્રમાણે પ્રકૃષ્ટ પાપફળનો ભોક્તા પણ નારક જીવ જ બને છે

આ પ્રકારનું આ ૨૪ દંડકોમાંનું પહેલું દંડક છે

भवसिद्धियाणं' इत्यादि। भवसिद्धिकानां–भविष्यतीति भवा=भाविनी, सा सिद्धिः=निर्वृतिर्येषां ते भवसिद्धिकाः=भव्याः, तेषां वर्गणा एका। तद्भिन्ना अभवसिद्धिका=अभव्यास्तेषामपि वर्गणा एका। भवसिद्धिकाभवसिद्धिकाभ्यां विशेषितानां चतुर्विंशतिदण्डकस्थपदानामेकैकस्य वर्गणा एका बोध्येति भावः।

इति द्वितीयश्चतुर्विंशति दण्डकः ॥ २ ॥

अथ सम्यग्दृष्टिकादि वर्गणानामेकत्वमाह—'एगा सम्मदिट्ठियाणं' इत्यादि। सम्यग्दृष्टिकानां–सम्यक्=अविपरीता दृष्टिः=दर्शनं–तत्त्वं प्रति रुचिर्येषां ते सम्यग्दृष्टिकास्तेषां वर्गणा एका। मिथ्यात्वमोहनीयक्षयक्षयोपशमोपशमेभ्यः सम्यग्दृष्टिका भवन्ति। तथा–मिथ्यादृष्टिकानां–मिथ्या=विपरीता जिनोक्ततत्त्वेषु श्रद्धा

से उसी को कहा जाता है–"एगा भवसिद्धिया णं" इत्यादि जिन्हें आगे सिद्धि निर्वृत्ति (मोक्ष) प्राप्त होती है वे भवसिद्धिक भव्य जीव हैं इनकी वर्गणा राशि एकत्व संख्याविशिष्ट है भवसिद्धिकों से जो भिन्न हैं वे अभवसिद्धिक हैं अभव्य हैं इन अभव्यसिद्धिकों की वर्गणा भी एक है भवसिद्धिक और अभवसिद्धिक इन दोनों से विशेषित चतुर्विंशति दण्डकस्थपदोंके एक२ पदकी वर्गणा एकत्व संख्याविशिष्ट है यह द्वितीय चतुर्विंशति (चौवीस) दण्डक२ "एगा सम्मादिट्ठियाणं" इत्यादि–जिनकी दृष्टि–दर्शन तत्त्व के प्रति रुचि अविपरीत होती है उनका नाम सम्यग्दृष्टिक है इन सम्यग्दृष्टिकों की वर्गणा–एकत्व संख्याविशिष्ट होती है मिथ्यात्व मोहनीय कर्म के क्षय क्षयोपशम और उपशम से जीव सम्यग् दृष्टिक होते हैं। तथा जिनोक्त तत्त्वों में जिनकी

આ રીતે ૨૪ દંડકનું સામાન્યરૂપે નિરૂપણ કરીને હવે વિશેષરૂપે એનુંજ પ્રતિપાદન કરવામાં આવે છે–"एगा भवसिद्धियाणं" ઇત્યાદિ. જેને ભવિષ્યમાં સિદ્ધિ–નિર્વૃત્તિ (મોક્ષ) પ્રાપ્ત થવાની છે, તે જીવોને ભવસિદ્ધિક (ભવ્ય જીવો) કહે છે. તેમની વર્ગણા (રાશી) માં એકત્વ સમજવું ભવસિદ્ધકોથી ભિન્ન એવા જે અભવસિદ્ધિકો છે, તેમની વર્ગણામા પણ એકત્વ સમજવું. ભવસિદ્ધિક અભવસિદ્ધિક, આ બન્ને પદોથી વિશેષિત (યુક્ત) ૨૪ દંડકસ્થ પદોના પ્રત્યેક પદની વર્ગણામાં એકત્વ સમજવું જોઇએ. આ દ્વિતીય ચોવીસ દંડક થયું ॥૨॥

"एगा सम्मादिट्ठियाणं" ઇત્યાદિ જેમની દૃષ્ટિ જૈન તત્ત્વ પ્રત્યે અવિપરીત રુચિવાળી હોય છે, એવા જીવોને સમ્યગ્દૃષ્ટિક કહે છે તે સમ્યગ્દૃષ્ટિકોની વર્ગણામા પણ એકત્વ સમજવું મિથ્યાત્વ મોહનીય કર્મના ક્ષયોપશમથી અને ઉપશમથી જીવ સમ્યગ્દૃષ્ટિક બને છે. જૈન તત્ત્વોમા જેને શ્રદ્ધા હોતી નથી

रहिता दृष्टिः=दर्शनं-रुचिः येषां ते मिथ्या दृष्टिकाः-मिथ्यात्वमोहनीयोदयाद् जिनवचनेषु श्रद्धानरहिताः ।

तेषां वर्गणा एका । तथा-सम्यग्मिथ्यादृष्टिकानां-सम्यक् च मिथ्या च दृष्टिर्येषां ते सम्यग्मिथ्यादृष्टिकाः - ये मिश्रमोहनीयोदयाज्जिनप्रणीततत्त्वेषु अर्धविशुद्धश्रद्धानवन्त इत्यर्थः, तेषां वर्गणा एका भवतीति । सम्यग्मिथ्यादृष्टित्व जीव एवं प्रतिपद्यते, यथाहि-अपारसंसारसमुद्रान्तराले विपरिवर्त्तमानो जीवोऽ नाभोगनिर्वर्तितेन गिरिसरिदुपलघोलनाकल्पेन यथा-प्रवृत्तिकरणेन अन्तः साग

दृष्टि श्रद्धा विपरीत होती है-जिनोक्त तत्त्वों में जिन्हें श्रद्धा नहीं होती है वे मिथ्यादृष्टिक हैं इन जीवों को मिथ्यात्व मोहनीय कर्म का उदय होता है इसलिये इन्हें जिनोक्त तत्त्वों में श्रद्धान नहीं होता है इनकी वर्गणा भी एकत्व सख्याविशिष्ट है तथा जो सम्यग् मिथ्यादृष्टिक जीव हैं अर्थात् जिनके श्रद्धानमें मिश्रमोहनीय कर्म के उदय से न पूर्णरूपसे शुद्धि है और न अशुद्धि है अर्थात् जिन प्रणीततत्त्वोंमें अर्धविशुद्ध श्रद्धान से जो युक्त हैं ऐसे वे जीव सम्यग् मिथ्यादृष्टिक हैं, इनकी वर्गणा भी एक है जीव इस सम्यग् मिथ्यादृष्टित्व को इस प्रकार से प्राप्त करता है अपार संसार रूपी समुद्र के भीतर गोते खाता हुआ जीव जिस प्रकार से प्रवाहित नदी के भीतर पड़ा हुआ पत्थर उसके प्रवाह से इधर से उधर रगड़ता हुआ गोल हो जाता है इसी प्रकार से अनाभोग द्वारा निर्वर्तित यथा प्रवृत्तिकरण से मिथ्यात्व वेदनीय कर्म की स्थिति को एक

જિનોક્ત તત્ત્વોમાં જેની દૃષ્ટિ શ્રદ્ધારહિત હોય છે, એવાં જીવોને મિથ્યાદષ્ટિક કહે છે તે જીવોમાં મિથ્યાત્વ મોહનીય કર્મનો ઉદય હોય છે, તેથી તે જીવોને જિનોક્ત તત્ત્વો પ્રત્યે શ્રદ્ધા ઉત્પન્ન થતી નથી તે મિથ્યાદૃષ્ટિકોની વર્ગણામાં પણ એકત્વ સમજવું જોઈએ.

મિશ્રમોહનીય કર્મના ઉદયથી જેને જિનોક્ત તત્ત્વો પ્રત્યે પૂર્ણરૂપે શ્રદ્ધા પણ નથી અને પૂર્ણરૂપે અશ્રદ્ધા પણ નથી એટલે કે જેની શ્રદ્ધામાં પૂર્ણરૂપે શુદ્ધિ પણ નથી અને અશુદ્ધિ પણ નથી-જિન પ્રરૂપિત તત્ત્વોમાં જે અર્ધ વિશુદ્ધ શ્રદ્ધાથી યુક્ત છે એવાં જીવને સમ્યગ્મિથ્યાદષ્ટિક કહે છે તેમની વર્ગણામાં પણ એકત્વ સમજવું

જીવ આ સમ્યગ્મિથ્યાદૃષ્ટિત્વ આ પ્રમાણે છે-જેવી રીતે નદીના પ્રવાહમાં પડેલો પત્થર તેના પ્રવાહમાં ઘસાતો ઘસાતો ગોળાકારરૂપે બની જાય છે, એજ પ્રમાણે અપાર સંસારરૂપી સમુદ્રમાં ભ્રમણ કરતો-ગોથાં ખાતો જીવ અનાભોગ દ્વારા નિવર્તિત યથા પ્રવૃત્તિકરણથી મિથ્યાત્વ વેદનીય કર્મની

नीयं कर्म समुपार्जयति । तस्य कर्मणः
करणानिवृत्तिकरणाभिधानाभ्यां विशु-
रकरणं करोति । अन्तरकरणे कृते सति
न्तरकरणादधस्तनी स्थितिः प्रथमस्थितिः
रकरणादुपरितनी द्वितीयस्थितिः । तत्र
ाद् मिथ्यादृष्टिर्भवति । अन्तर्मुहूर्त्तेन तु
मय एव औपशमिकसम्यक्त्वं प्राप्नोति,

ा देता है अर्थात् यथा प्रवृत्तिकरण
य कर्म की ७० कोडाकोडी सागरोपम
गरोपम के भीतर २ कर लेता है ॥
अन्तर्मुहूर्त तक उदय के बाद अपूर्व
दो विशुद्धियों के द्वारा अन्तर करण
ाल भी एक अन्तर्मुहूर्त का होता है
कर्म की दो स्थितियां होती हैं । अन्तः
ी है वह प्रथम स्थिति होती है यह
उसी अन्तरकरण से जो उपरितनी
अन्तर्मुहूर्त की होती है प्रथमस्थिति
करता है इससे वह मिथ्यादृष्टि होता
है अन्तर्मुहूर्त ... ...थति समाप्त हो जाती है तब अन्तर

સ્થિતિને એક સાગરોપમ કોટાકોટિથી પણ કંઈક ન્યૂન પ્રમાણવાળી બનાવી દે છે. એટલે કે યથા પ્રવૃત્તિકરણના પ્રભાવથી તે મિથ્યાત્વ મોહનીય કર્મની ૭૦ કોડાકોડી સાગરોપમની સ્થિતિને ઘટાડીને ૧ સાગરોપમ પ્રમાણ કરતાં પણ ઓછા પ્રમાણવાળી બનાવી નાખે છે. ત્યારબાદ તેના દ્વારા, તે કર્મની સ્થિતિના અન્તર્મુહૂર્ત પર્યન્તના ઉદય બાદ અપૂર્વકરણ અને અનિવૃત્તિકરણ નામની બે વિશુદ્ધિઓ દ્વારા અન્તરકરણ કરાય છે. આ અન્તરકણનો કાળ પણ એક અન્તર્મુહૂર્તનો હોય છે આ અન્તકરણ કરવાથી તે કર્મની બે સ્થિતિઓ થાય છે અન્ત કરણથી નીચેની જે સ્થિતિ થાય છે, તે પ્રથમ સ્થિતિ ગણાય છે. તે અન્તર્મુહૂર્તમાત્રની જ હોય છે તથા એજ અન્તરકણથી જે ઉપરિતની બીજી સ્થિતિ હોય છે તે પણ એક અન્તર્મુહૂર્તની જ હોય છે પ્રથમ સ્થિતિમા જીવ મિથ્યાત્વ દલિકોનું વેદન કરે છે, તેથી તે મિથ્યાદૃષ્ટિ રહે છે અન્ત મુંહૂર્ત કાળ પછી જ્યારે તે સ્થિતિ સમાપ્ત થઈ જાય છે ત્યારે અન્તરકરણના પ્રથમ સમયમા જ જીવ ઔપશમિક સમ્યકત્વને પ્રાપ્ત કરે છે, કારણ કે તે

मिथ्यात्वदलिकवेदनाया अभावात् । यथा हि दावानलः पूर्वदग्धेन्धनम् ऊपरं वा देशमवाप्य विध्यायति तथा मिथ्यात्ववेदनाग्निरन्तरकरणमवाप्य विध्यायतीति । तदेवमौषधविशेष सदृश सम्यक्त्वमासाद्य मदनकोद्रवस्थानीयं दर्शनमोहनीयम् अशुद्ध कर्म त्रिविधं भवति–अशुद्धम् अर्धविशुद्ध विशुद्ध चेति । तेषां त्रयाणां पुञ्जानां स्वजातीयः पृथक् पृथक् पुञ्जो भवति । तत्र यदा जीवस्यार्धविशुद्धः पुञ्जः समुदेति, तदा तस्य तदुदयवशादर्धविशुद्धमर्हद्दृष्टतत्त्वश्रद्धान भवति । तेन तदाऽसौ सम्यग्मिथ्यादृष्टि भवति अन्तर्मुहूर्तावधि । तत ऊर्ध्वं स जीवः सम्यक्त्वपुञ्ज

करण के प्रथम समय में ही जीव औपशमिक सम्यक्त्व को प्राप्त करता है क्यों कि उस समय में मिथ्यात्व दलिकों के वेदन का अभाव रहता है जिस प्रकार दावानल पूर्वदग्ध ईन्धन को अथवा ऊसरभूमि को प्राप्त कर बुझ जाता है उसी प्रकार मिथ्यात्व वेदनरूप अग्नि भी अन्तकरण को प्राप्त करके बुझ जाता है इस तरह से जीव औषधि तुल्य सम्यक्त्व को प्राप्तकर मदनकोद्रव स्थानीय के जैसे दर्शन मोहनीय कर्म को जो कि अशुद्ध कर्म है तीन प्रकार का करता है दर्शनमोहनीय कर्म के जो तीन पुंज होते हैं उनमें एक पुंज अशुद्धरूप होता है, दूसरा पुज अर्धविशुद्ध और तीसरा पुंज विशुद्धरूप होता है इन तीनों पुंजों के अपने २ जाति के पृथक् पुज होते हैं । इनमें जीव को जब अर्धविशुद्ध पुज का उदय होता है तब वह जीव सम्यग् मिथ्यादृष्टि होता है इस अवस्था में इसका अर्हत् दृष्ट तत्त्वों का श्रद्धान अर्धविशुद्ध रहता है यह अवस्था इसकी अन्तर्मुहूर्त तक रहती है इसके बाद वह जीव या तो सम्यक्त्व पुंज को

સમયે મિથ્યાત્વદલિકોના વેદનનો અભાવ રહે છે એવી રીતે પૂર્વદગ્ધ ઈંધન (લાકડાં) અથવા વેરાનભૂમિ આવતાં જ દાવાનળ ઓલવાઈ જાય છે, એજ પ્રમાણે મિથ્યાત્વ–વેદનરૂપ અગ્નિ પણ અંતઃકરણ પાસે પહોંચીને ઓલવાઈ જાય છે આ રીતે જીવ ઔષધિ સમાન સમ્યક્ત્વને પ્રાપ્ત કરીને મદનકોદ્રવ સ્થાની બના જેવાં દર્શનમોહનીય કર્મને (જે અશુદ્ધ કર્મ હોય છે) ત્રણ પ્રકારનું કરે છે દર્શનમોહનીય કર્મના જે ત્રણ પુંજ હોય છે તેમાંથી એક પુંજ અશુદ્ધરૂપ હોય છે બીજો પુંજ અર્ધવિશુદ્ધરૂપ હોય છે અને ત્રીજો પુંજ વિશુદ્ધરૂપ હોય છે તે ત્રણે પુંજો પોતપોતાની જાતિના અલગ અલગ પુંજ રૂપે હોય છે આ ત્રણ પુંજમાંથી અર્ધવિશુદ્ધ પુંજનો જીવમાં જ્યારે ઉદય થાય છે, ત્યારે તે જીવ સમ્યગ્મિથ્યાદૃષ્ટિ બને છે આ અવસ્થામાં અર્હંત ભગવાન દ્વારા દૃષ્ટ તત્ત્વો પ્રત્યે તેને અર્ધવિશુદ્ધ શ્રદ્ધા રહે છે તેની આ પ્રકારની અવસ્થા અન્તર્મુહૂર્ત પર્યન્તજ રહે છે ત્યારબાદ તો તે જીવ

मिथ्यात्वपुञ्जं वा गच्छतीति। सम्यग्दृष्टिमिथ्यादृष्टिसम्यङ्मिथ्यादृष्टिविशेपितानां नारकादिस्तनितकुमारान्तानां चतुर्विंशति दण्डकस्थपदानामेकैकस्य वर्गणा एकैका भवतीति ।

इदं दर्शनत्रयं नारकादिस्तनितकुमारान्तानामेकादशानामेव भवति, न तु पृथिव्यादिवनस्पत्यन्तानाम्। तेपां तु मिथ्यादर्शनमेव भवति। अतएवाह सूत्रकारः-' एगा मिच्छादिट्ठियाणं ' इत्यादि। मिथ्यादृष्टिकानां पृथिव्यादि वनस्पत्यन्तानामेकैकस्य वर्गणा एकैका वोध्येति। तथा-सम्यग्दृष्टिविशेपितानां द्वीन्द्रियाणां त्रीन्द्रियाणां चतुरिन्द्रियाणां च एकैका वर्गणा वोध्या। द्वीन्द्रियादीनां

प्राप्त करता है या मिथ्यात्व पुंज को प्राप्त करता है सम्यग्दृष्टि मिथ्यादृष्टि और सम्यग् मिथ्यादृष्टि वाले नारक से लेकर स्तनितकुमार तक के २४ दण्डकस्थ पदों के जीवों के एक २ जीव के एक २ वर्गणा होती है।

ये दर्शन त्रय नारक से लेकर स्तनितकुमार तक के ११ पदों के ही होते हैं पृथिवी से लेकर वनस्पतिकायिक जीवों के नहीं होते हैं क्यों कि इनके केवल एक मिथ्यादर्शन ही होता है इसी कारण सूत्रकार ने " एगा मिच्छादिट्ठियाणं " इत्यादि सूत्रपाठ कहा है मिथ्यादृष्टिक पृथिवीकायिक से लेकर वनस्पतिकायिक तक के जीवों को एक २ वर्गणा होती है तथा-सम्यग्दृष्टि एवं मिथ्यादृष्टि वाले द्वीन्द्रिय जीवों के तेइन्द्रिय जीवों के और चौइन्द्रिय जीवों के एक २ वर्गणा होती है इन दो इन्द्रियादिक जीवों में सम्यग् मिथ्यादृष्टिरूप उभय अवस्था नहीं होती है क्यों कि यह अवस्था ऐसी पञ्चेन्द्रिय जीवों के ही होती है इसलिये

સમ્યક્ત્વ પુંજને પ્રાપ્ત કરે છે, અથવા મિથ્યાત્વ પુંજને પ્રાપ્ત કરે છે સમ્યગ્દૃષ્ટિ, મિથ્યાદૃષ્ટિ, અને સમ્યગ્મિથ્યાદૃષ્ટિવાળા નારકથી લઈને સ્તનિતકુમાર પર્યન્તના ૨૪ દંડકના જીવોમાં પ્રત્યેક દંડકના જીવની વર્ગણામાં એકત્વ સમજવું જોઈએ.

નારકથી લઈને સ્તનિતકુમાર પર્યન્તના ૧૧ દંડકોમાં જ આ દર્શનત્રયનો સદ્‌ભાવ હોય છે. પૃથ્વીકાયિકથી લઈને વનસ્પતિકાયિક પર્યન્તના પાંચ દંડકના જીવોમાં મિથ્યાદર્શનનો જ સદ્‌ભાવ હોય છે. તે કારણે સૂત્રકારે " एगा मिच्छादिट्ठियाण " ઇત્યાદિ સૂત્રપાઠનું કથન કર્યું છે મિથ્યાદૃષ્ટિક પૃથ્વીકાયિકથી લઈને વનસ્પતિકાયિક પર્યન્તના જીવોમાં એક એક વર્ગણા હોય છે તથા-સમ્યગ્દૃષ્ટિ અને મિથ્યાદૃષ્ટિવાળા દ્વીન્દ્રિય જીવોની વર્ગણામા પણ એકત્વ સમજવુ, ત્રીન્દ્રિયોની વર્ગણામા પણ એકત્વ સમજવું. તે દ્વીન્દ્રિયાદિક જીવોમાં સમ્યગ્મિથ્યાદૃષ્ટિ રૂપ ઉભય અવસ્થાનો સદ્‌ભાવ હોતો નથી, કારણ કે આ દૃષ્ટિનો સદ્‌-

सम्यग्मिथ्यादृष्टित्वं नास्ति । सम्यग् मिथ्यादृष्टिस्तु संज्ञिनामेव भवति । अतो द्वीन्द्रियादयः सम्यग्दृष्टिमिथ्यादृष्टिभ्यामेव विशेषिता भवन्तीति । तथा-पञ्चेन्द्रियतिर्यङ्मनुष्यादिवैमानिकान्तानां नारकादिवद् दर्शनत्रयं भवति । अतस्तेषां दर्शनत्रय विशेषितानामेकैकस्य वर्गणा एकैका भवति । अत एवाह सूत्रकार -" सेसा जहा नेरइया जाव एगा सम्मामिच्छद्दिट्ठियाणं वेमाणियाणं वग्गणा ॥"

इति तृतीयचतुर्विंशति दण्डकः ॥ ३ ॥

तथा-कृष्णपाक्षिकाणां-कृष्णपक्षोऽस्त्येषामिति कृष्णपाक्षिकाः=अर्धपुद्गलपरावर्ताधिकसंसारभाजः, तेषां वर्गणा एका । तथा-शुक्लपाक्षिकाणां-शुक्लानाम्=आस्तिकत्वेन विशुद्धानां पक्षः=वर्गः-शुक्लपक्षः, तत्र भवा शुक्लपाक्षिकाः, अर्धपु-

द्वीन्द्रियादिक जीव सम्यग्दृष्टि भी होते हैं और मिथ्यादृष्टि भी होते हैं मिश्रदृष्टिवाले नहीं होते हैं तथा पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च मनुष्य और वैमानिक तक के जीव नारकादि की तरह दर्शन त्रय वाले होते हैं अतः दर्शन त्रय विशेषित उन जीवों के एक २ जीव के एक २ वर्गणा होती है इसीलिये सूत्रकार ने " सेसा जहा नेरइया जाव एगा सम्मामिच्छादिट्ठियाणं वेमाणियाणं वग्गणा " ऐसा कहा है इस प्रकार से यह तीसरा चतुर्विंशति दण्डक है ।

कृष्णपक्ष जिनके होते हैं वे कृष्णपाक्षिक हैं अर्थात् ऐसे जीव कृष्णपाक्षिक हैं कि जिनका संसार एक पुद्गल परावर्त अधिकतर है अल्पतर नहीं है इनकी भी वर्गणा एक होती है तथा जो जीव शुक्ल पाक्षिक हैं अर्थात् जिनका संसार केवल अर्धपुद्गल परावर्तनमात्र रूप रह गया है ऐसे जीवों की भी वर्गणा एक ही होती है ये शुक्लपाक्षिक

જાવ પંચેન્દ્રિય જીવોમાં જ હોય છે તેથી જ દ્વીન્દ્રિયથી ચતુરિન્દ્રિય પર્યન્તના જીવો સમ્યગ્દષ્ટિ પણ હોય છે અને મિથ્યાદૃષ્ટિ પણ હોય છે પરન્તુ મિશ્ર દૃષ્ટિવાળા હોતાં નથી. તથા પંચેન્દ્રિય તિર્યંચ, મનુષ્ય અને વૈમાનિક પર્યન્તના દંડકના જીવમાં એક એક વર્ગણા હોય છે એમ સમજવુ તેથીજ સૂત્રકારે " સેસા જહા નેરઇયા જાવ એગા સમ્મમિચ્છાદિટ્ઠિયાણં વેમાણિયાણં વગ્ગણા " આ પ્રમાણે કહ્યું છે ત્રીજા ૨૪ દંડકોની પ્રરૂપણા અહીં પૂરી થાય છે

જે જીવોને એક પુદ્ગલ પરાવર્તન કાળ કરતાં પણ અધિક કાળ પર્યન્ત આ સંસારમાં ભ્રમણ કરવાનું હોય છે, એવાં જીવોને કૃષ્ણપાક્ષિક કહે છે એવાં જીવોનો સંસાર એક પુદ્ગલ પરાવર્ત કાળ કરતાં ઓછો હોતો નથી, પણ વધારે જ હોય છે તે કૃષ્ણપાક્ષિક જીવોની વર્ગણામાં પણ એકત્વ સમજવું તથા જે જીવો શુક્લપાક્ષિક હોય છે જેમનો સંસાર અર્ધ પુદ્ગલ પર

द्गलपरावर्त्तनसंसारभाजः, तेषां वर्गणा एका भवति। कृष्णपाक्षिकशुक्लपाक्षिकयोर्ल-क्षणमिदमुक्तम्—

" जेसिमवड्ढो पोग्गलपरियट्टो सेसओ उ संसारो।
ते सुक्कपक्खिया खलु अहिए पुण किण्णपक्खीया॥ १॥"

छाया–येषामपार्धः पुद्गलपरावर्त्तः शेषकस्तु संसारः।
ते शुक्लपाक्षिकाः खलु अधिके पुनः कृष्णपक्षीयाः॥ इति।

कृष्णपाक्षिक शुक्लपाक्षिकविशेषितानां चतुर्विंशतिदण्डकस्थानां नारकादि वैमानिकान्तानां पदानां वर्गणा एकैका बोध्या।

इति चतुर्थश्चतुर्विंशतिदण्डकः॥ ४॥

जीव आस्तिक भाव वाले होते हैं शुक्लपाक्षिक और कृष्णपाक्षिक जीवों का लक्षण ऐसा कहा गया है–

" जेसिमवड्ढो " इत्यादि। जिन जीवों का संसार अर्धपुद्गलपरावर्तनकाल रूप हो गया है अर्थात् अधिक से अधिक इतने काल तक ही संसार में जिन जीवों को रहना है इसके बाद नियमतः जिनकी मुक्ति हो जाती है ऐसे जीव शुक्लपाक्षिक हैं और जिन जीवों का संसार इससे विपरीत है अर्थात् दीर्घतर है अर्धपुद्गलपरावर्तन से अधिक है वे जीव कृष्णपाक्षिक हैं शुक्लपाक्षिक और कृष्णपाक्षिक जीव चतुर्विंशतिदण्डकस्थ नारक जीव से लेकर वैमानिक जीवों तक में होते हैं इनमें भी एक २ जीव को एक २ वर्गणा होती है इस प्रकार से यह चतुर्थ चतुर्विंशतिदण्डक है।

વર્તન કાળ રૂપ જ બાકી છે, એવાં જીવોની વર્ગણામાં પણ એકત્વ સમજવું. તે શુકલપાક્ષિક જીવો આસ્તિક ભાવવાળા હોય છે શુકલપાક્ષિક અને કૃષ્ણ-પાક્ષિક જીવોનાં લક્ષણ નીચે પ્રમાણે બતાવ્યાં છે—

" જેસિમવડ્ઢો " ઈત્યાદિ. જે જીવોનો સંસાર અર્ધપુદ્ગલ પરાવર્તનકાળ રૂપ થઈ ગયો છે–એટલે કે વધારેમાં વધારે એટલા કાળ સુધી જ જે જીવોને સંસારમાં રહેવાનું છે, ત્યારબાદ તો અવશ્ય જેની મુક્તિ થવાની છે, એવાં જીવોને શુકલપાક્ષિક કહે છે. જે જીવોનો સંસાર શુકલપાક્ષિક અને કૃષ્ણ-પાક્ષિક જીવો ચોવીસ દંડકસ્થ નારકોથી લઈને વૈમાનિક પર્યન્તના જીવોમા હોય છે. તેમા પણ પ્રત્યેક દંડકના જીવોની એક એક વર્ગણા જ હોય છે. ૨૪ દડકને અનુલક્ષીને આ ચોથા વિષયની વર્ગણામાં એકત્વ પ્રકટ કરવામાં આવ્યુ છે.

तथा-कृष्णलेश्यानां-लिश्यते=संश्लिष्यते प्राणी कर्मणा याभिस्ता लेश्याः, उक्तं च—

" श्लेष इव वर्णबन्धस्य कर्मबन्धस्थिति विधात्र्यः " इति ।

" कृष्णादिद्रव्यसाचिव्यात् , परिणामो य आत्मनः ।

स्फटिकस्येव तत्रायं लेश्याशब्दः प्रयुज्यते ॥ १ ॥ " इति च ।

इयं च शरीरनामकर्मपरिणतिरूपा, योगपरिणतिरूपत्वात् , योगस्य च शरीरनामकर्मपरिणतिविशेषत्वात् । उक्तं च—

" योगपरिणामो लेश्या " । कथं पुनर्योगपरिणामो लेश्या ? यस्मात् सयोगिकेवली शुक्ललेश्यापरिणामेन विहृत्यान्तर्मुहूर्ते, शेषे योगनिरोधं करोति, ततो-

---

तथा—कृष्णलेश्यावालों की भी एक वर्गणा है जिनके द्वारा प्राणी कर्मों से संश्लिष्ट होता है उनका नाम लेश्या है कहा भी है- 'श्लेष इव वर्णब धस्य० " इत्यादि ।

कृष्णादि द्रव्य साचिव्यात् परिणामो य आत्मनः " स्फटिकस्येव तत्राय लेश्या शब्दः प्रयुज्यते " ॥ १ ॥–तात्पर्य इसका यही है कि कषायों के उदय से अनुरंजित जो योग प्रवृत्ति है उसका नाम लेश्या है यह लेश्या योग परिणतिरूप होनेके कारण शरीर नाम कर्मकी परिणतिरूप होती है क्यों कि योग शरीर नामकर्म की परिणति विशेषरूप होता है।

उक्त च— ' योगपरिणामो लेश्या " लेश्या योगपरिणाम रूप इस तरह से है-सयोगि केवली शुक्ललेश्या के परिणाम से विहार करके जब अन्तर्मुहूर्त काल बाकी रहता है तब योगनिरोध करता है इससे

તથા કૃષ્ણલેશ્યાવાળાઓની પણ એક વર્ગણા છે. તેમના દ્વારા પ્રાણી (જીવ) કર્મોથી સ્પૃષ્ટ (સંશ્લિષ્ટ) થાય છે, તેમને લેશ્યા કહે છે કહ્યું પણ છે કે- શ્લેષ इव वर्णबन्धस्य " ઇત્યાદિ.

कृष्णादि द्रव्यसाचिव्यात् परिणामो य आत्मनः स्फटिकस्येव तत्रायं लेश्या शब्दः प्रयुज्यते ॥ १ ॥ તાત્પર્ય–કષાયોના ઉદયથી અનુરંજિત જે યોગપ્રવૃત્તિ છે, તેનું નામ લેશ્યા છે તે લેશ્યા યોગપરિણતિ રૂપ હોવાને લીધે શરીર નામકર્મની પરિણતિરૂપ હોય છે કારણ કે યોગ શરીર નામ કર્મની પરિણતિ વિશેષરૂપ હોય છે કહ્યું પણ છે કે–" योगपरिणामो लेश्या " લેશ્યા યોગ પરિણામરૂપ આ રીતે છે–સયોગી કેવલી શુક્લ લેશ્યાના પરિણામમાંથી વિહાર કરીને બહાર નીકળીને જ્યારે અન્તર્મુહૂર્તકાળ બાકી રહે છે ત્યારે યોગનિરોધ કરે છે તેમ કરવાથી તે અયોગી અવસ્થા અને અલેશ્યાવસ્થા પ્રાપ્ત કરે છે

ऽयोगित्वमलेश्यत्वं च प्राप्नोति, अतोऽवगम्यते–' योगपरिणामो लेश्या ' इति। स पुनर्योगः–शरीरनामकर्मपरिणतिविशेषः। उक्तं हि—

" कर्महि कार्मणस्य कारणमन्येषां च शरीराणाम् " इति। तस्मादौदारिकादिशरीरयुक्तस्यात्मनो वीर्यपरिणतिविशेषः काययोगः। तथा–औदारिकवैक्रियाहारकशरीरव्यापाराहृतवाग्द्रव्यसमूहसाचिव्याद् यो जीवव्यापारः स वाग्योगः। तथा औदारिकादि शरीरव्यापाराहृतमनोद्रव्यसमूहसाचिव्याद् यो जीवव्यापारः स मनोयोग इति। ततो यथैव कायादिकरणयुक्तस्यात्मनो वीर्यपरिणतिर्योग उच्यते तथैव लेश्यापीति। केचित्तु–' कर्मनिस्यन्दो लेश्या ' इति ब्रुवन्ति। सा च द्रव्य-

वह अयोगी अवस्था को और अलेश्यावस्था को प्राप्त करता है इससे जाना जाता है कि योगपरिणाम रूप लेश्या है तथा योग शरीर नाम कर्म की परिणति विशेष रूप इस प्रकार से है–" कर्म हि कार्मणस्य कारणमन्येषां च शरीराणाम् " कर्म कार्मणशरीर का और औदारिक आदि शरीरों का कारण है इस कथन से यही बात जानी जाती है कि औदारिकादि शरीर युक्त आत्मा का जो वीर्य परिणाम विशेष रूप योग होता है वह काययोग है तथा–औदारिक वैक्रिय एवं आहारक शरीर के व्यापार से आहृत वाग्यद्रव्यसमूह की सहायता से जो जीव का व्यापार होता है वह वाग्योग है तथा–औदारिकादि शरीर के व्यापार से आहृत मनोद्रव्यसमूह की सहायता से जो जीव का व्यापार होता है वह मनोयोग है तो जिस प्रकार से कायादि करणयुक्त आत्मा को वीर्य-परिणतिरूप योग होता है उसी प्रकार से योगपरिणतिरूप लेश्या भी होती है कितनेक जन " कर्मनिस्यन्दो लेश्या " इसके अनुसार ऐसा भी

તેથી એ વાત સિદ્ધ થાય છે કે લેશ્યા યોગપરિણામ રૂપ છે તથા યોગ શરીર નામ કર્મની પરિણુતિ વિશેષરૂપ આ રીતે છે–" कर्म हि कार्मणस्य कारणमन्येषां च शरीराणाम् " કર્મ જ કાર્મણ શરીરનું અને ઔદારિક આદિ શરીરોનું કારણુ છે આ કથનથી એ વાત જાણી શકાય છે કે ઔદારિકાદિ શરીરયુક્ત આત્માને જે વીર્યપરિણામ વિશેષરૂપ યોગ હોય છે, તે કાયયોગ છે તથા ઔદારિક, વૈક્રિય અને આહારક શરીરના વ્યાપારથી આહૃત (ખેંચવામાં આવેલ) વાગ્દ્રવ્યસમૂહની સહાયતાથી જીવની જે પ્રવૃત્તિ ચાલે છે તેને વાગ્યોગ કહે છે તથા ઔદારિકાદિ શરીરના વ્યાપારથી આહૃત મનોદ્રવ્ય સમૂહની સહાયતાથી જીવની જે પ્રવૃત્તિ ચાલે છે તેને મનોયોગ કહે છે જે પ્રકારે કાયાદિકરણયુક્ત આત્માની વીર્યપરિણુતિરૂપ યોગ હોય છે, એજ પ્રકારે યોગપરિણુતિરૂપ લેશ્યા પણ હોય છે કેટલાક લોકો " कर्मनिस्यन्दो लेश्या "

भावभेदाद् द्विधा । तत्र द्रव्यलेश्या कृष्णादिद्रव्याण्येव । भावलेश्या तु तज्जन्यो जीवपरिणाम इति । इयं लेश्या षड्विधा । षड्विधत्वं चास्याः जम्बूफलभक्षकपुरुषषट्कदृष्टान्तात् ग्रामघातकचौरपुरुषषट्कदृष्टान्तात् चाऽवसेयमिति । कृष्णद्रव्यसाचिव्याद् जायमानाऽशुभपरिणामरूपा लेश्या कृष्णा भवति । सा लेश्या येषां ते कृष्णलेश्यास्तेषां वर्गणा एका भवति । तथा–नीललेश्यानां–नीला=कृष्णापेक्षया किंचिच्छुभरूपा लेश्या येषां ते नीललेश्यास्तेषां वर्गणा एका भवति । तथा–कापोतलेश्यानां–कापोती–कपोतवर्णा=धूम्रवर्णा नीलापेक्षया किंचिदधिकशुभरूपा लेश्या

कहते हैं कि जो कर्म के आने में कारण होती है वह लेश्या है यह लेश्या द्रव्य और भाव के भेद से दो प्रकार की है कृष्णद्रव्यरूप द्रव्यलेश्या तथा कृष्णद्रव्य जन्य जो जीव का परिणाम है वह भावलेश्या है कृष्ण, नील, कापोत आदि के भेद से भी लेश्या ६ प्रकार की कही गई है जम्बूफल भक्षक पुरुषषट्क के दृष्टान्त से अथवा–ग्रामघातक चौर पुरुषषट्क के दृष्टान्त से लेश्या में षड्विधता शास्त्रों में कही गई है कृष्णद्रव्य की सहायता से जायमान अशुभ परिणामरूप लेश्या कृष्ण होती है यह कृष्णलेश्या जिनको होती है वे कृष्णलेश्य जीव हैं इन कृष्णलेश्य जीवों की वर्गणा एक होती है कृष्णलेश्याकी अपेक्षा किंचित् शुभरूप नीललेश्या होती है यह नीललेश्या जिनको होती है वे नीललेश्या वाले जीव हैं इनकी भी वर्गणा एक होती है धूमवर्ण जैसी कापोत लेश्या होती है यह नील लेश्या की अपेक्षा से कुछ अधिक शुभरूप होती है

આ માન્યતા અનુસાર એવું પણ કહે છે કે જે કર્મના આગમનના કારણભૂત છે એજ લેશ્યા છે તે લેશ્યા દ્રવ્ય અને ભાવના ભેદથી બે પ્રકારની છે કૃષ્ણ દ્રવ્યરૂપ દ્રવ્યલેશ્યા તથા કૃષ્ણદ્રવ્યજન્ય જે જીવનું પરિણામ છે તે ભાવલેશ્યા છે કૃષ્ણ નીલ કાપોત, તેજો, પદ્મ અને શુકલના ભેદથી લેશ્યાના છ પ્રકાર પણ કહ્યાં છે જાંબુનું ભક્ષણ કરતાં છ પુરુષોના દૃષ્ટાન્ત દ્વારા અથવા ગ્રામ ઘાતક છ ચોરોના દૃષ્ટાન્ત દ્વારા શાસ્ત્રકારોએ લેશ્યામાં ષડ્વિધતા (છ પ્રકાર યુક્તતા) બતાવી છે કૃષ્ણદ્રવ્યની સહાયતાથી જાયમાન (ઉત્પન્ન થયેલ) અશુભ પરિણામરૂપ જે લેશ્યા છે તેને કૃષ્ણલેશ્યા કહે છે તે લેશ્યાવાળા જીવોને કૃષ્ણલેશ્ય કહે છે તે કૃષ્ણલેશ્ય જીવોની વર્ગણામાં એકત્વ સમજવું જોઈએ કૃષ્ણલેશ્યા કરતાં કંઈક શુભરૂપ નીલલેશ્યા ગણાય છે જે જીવોમાં તે નીલ લેશ્યાનો સદ્ભાવ હોય છે, તે જીવોને નીલ લેશ્યાવાળાં કહે છે તેમની પણ વર્ગણા એક હોય છે ધૂમાડાના જેવાં વર્ણવાળી કાપોતલેશ્યા હોય છે તે નીલ લેશ્યા કરતાં કંઈક અધિક શુભરૂપ હોય છે તે ધૂમ્રવર્ણવાળાં દ્રવ્યની

"कापोती" इत्युच्यते। इयं धूम्रवर्णद्रव्यसाहाय्याज्जायते। सा लेश्याऽस्ति येषां ते कापोतलेश्याः, तेषां वर्गणा एका भवति। तथा-तेजोलेश्यानाम्-तेजः=अग्निज्वाला, तद्रूपालेश्या-तेजोलेश्या। लोहितवर्णद्रव्यसाहाय्याज्जायमाना लेश्या। इयं लेश्या शुभस्वभावा भवति। तेजो लेश्याऽस्ति येषां ते तथा तेषां वर्गणा एका भवति। तथा-पद्मलेश्यानां-पद्मं=कमलं तद्गर्भवर्णा पीतवर्णा लेश्या, पद्मलेश्या। पीतवर्णद्रव्यसाचिव्याज्जायमानालेश्या। इयं लेश्या शुभतरस्वभावा। सा लेश्या येषां ते तथाभूतास्तेषां वर्गणा एका भवति। कापोतलेश्य तेजोलेश्य पद्मलेश्यानां संग्रहो 'एवं जाव' इति पदाद् बोध्यः। तथा-शुक्ललेश्यानां शुक्ला-शुक्लवर्णा-अत्यन्तशुभेति यावत्, तद्रूपालेश्या-शुक्ललेश्या। इयं शुक्लवर्णद्रव्यसाचि-

---

यह लेश्या धूमवर्णवाले द्रव्य की सहायता से उत्पन्न होती है कापोत लेश्यावाले जीवों की वर्गणा भी एक होती है तेज नाम अग्नि ज्वाला का है इस अग्नि ज्वाला रूप जो लेश्या होती है वह तेजोलेश्या पीतलेश्या है यह तेजो लेश्या लोहित (लाल) वर्ण वाले द्रव्य की सहायता से उत्पन्न होती है और यह शुभस्वाभाववाली होती है तेजोलेश्या वाले जीवों की वर्गणा भी एक होती है कमल के गर्भ के वर्ण की तरह जो लेश्या होती है वह पद्मलेश्या है यह लेश्या पीतवर्णवाले द्रव्य की सहायता से उत्पन्न होती है और शुभतर स्वभाववाली होती है इस पद्मलेश्यावाले जीवों की वर्गणा भी एक होती है कापोतलेश्यावाले तेजोलेश्या वाले और पद्मलेश्यावाले जीवों का संग्रह "एवं जाव" इस पद से यहां हुआ है अत्यन्तशुभरूप जो लेश्या होती है वह शुक्ललेश्या है

સહાયતાથી ઉત્પન્ન થાય છે. કાપોત લેશ્યાવાળાં જીવોની વર્ગણા પણ હોય છે અગ્નિ જ્વાળાનુ નામ તેજ છે. આ અગ્નિજ્વાળા રૂપ જે લેશ્યા હોય છે, તે લેશ્યાનુ નામ તેજોલેશ્યા છે. તે તેજોલેશ્યા પીત (પીળા વર્ણની) લેશ્યા છે. તે લેશ્યા લાલ વર્ણવાળા દ્રવ્યની સહાયતાથી ઉત્પન્ન થાય છે અને તે શુભ સ્વભાવવાળી હોય છે આ તેજોલેશ્યાવાળા જીવોની વર્ગણા પણ એક હોય છે. કમલના ગર્ભના જેવા વર્ણવાળી જે લેશ્યા છે, તેને પદ્મલેશ્યા કહે છે તે લેશ્યા પીળા વર્ણવાળા દ્રવ્યની સહાયતાથી ઉત્પન્ન થાય છે અને તેજોલેશ્યા કરતા અધિક શુભ સ્વભાવવાળી હોય છે. આ પદ્મલેશ્યાવાળા જીવોની વર્ગણા પણ એક હોય છે કાપોતલેશ્યાવાળા, તેજોલેશ્યાવાળા અને પદ્મલેશ્યાવાળા જીવોનો સંગ્રહ 'एवं जाव" આ પદ દ્વારા અહીં થયો છે. અત્યન્ત શુભરૂપ જે લેશ્યા છે, તેનું નામ શુકલ લેશ્યા છે. તે લેશ્યા સફેદ વર્ણવાળા દ્રવ્યની

म्याज्ज्ञायते ।-शुक्ला लेश्या येषां ते तथा तेषां शुक्ललेश्यावतां वर्गणा एका भवतीति । आसु षट्सु लेश्यासु चतुर्विंशतिदण्डकस्थपदानां नारकादीनां मध्ये एकैकस्य यावत्यो लेश्या भवन्ति, तावतीभिर्लेश्याभिर्विशेषितानां तेषाम् एकैका वर्गणा भवति । अमुमर्थं स्वयमेवाह सूत्रकारः-" एगा कण्हलेसाणं नेरइयाणं वग्गणा जाव काउलेसाणं नेरइयाणं वग्गणा । एवं जस्स जइ लेस्साओ ॥ " अयं भावः -कृष्णलेश्यानां नैरयिकाणां वर्गणा एका । नीललेश्यानां नैरयिकाणां वर्गणा एका । कापोतलेश्यानां नैरयिकाणां वर्गणा एका । नैरयिकाः कृष्णादित्रिविधलेश्यावन्तो भवन्ति । अतस्त्रिविधानां प्रत्येकं वर्गणा एकैका भवति । एवम् = अनेन

यह लेश्या शुक्लवर्णवाले द्रव्य की सहायता से उत्पन्न होती है शुक्ल लेश्यावाले जीवों की वर्गणा भी एक होती है इन छह लेश्याओं में से चतुर्विंशतिदण्डकस्थ पदवाले नारक आदि जीवों में एक २ जीव के जितनी २ लेश्याएँ होती हैं उतनी लेश्याओं से विशेषित उन २ जीवों की वर्गणा भी सामान्यरूप से एक होती है यही बात " एगा कण्हलेस्साणं नेरइयाणं वग्गणा जाव काउलेस्साणं नेरइयाणं वग्गणा एवं जस्स जई लेस्साओ " इस सूत्र पाठ द्वारा सूत्रकार ने कही है इसका भाव ऐसा है कि कृष्णलेश्यावाले जीवों की नैरयिकों की वर्गणा एक है नील लेश्यावाले नैरयिकों की वर्गणा एक है कापोतलेश्यावाले नैरयिकों की वर्गणा एक है नैरयिक जीव कृष्णादि तीन लेश्याओं वाले होते हैं अतः इन तीन प्रकार की लेश्याओं वाले नैरयिक जीवों की प्रत्येक की एक २ वर्गणा होती है किस जीव के कितनी लेश्याएँ होती है-इसी बात को

સહાયતાથી ઉત્પન્ન થાય છે શુક્લ લેશ્યાવાળા જીવોની વર્ગણા પણ એક હોય છે આ છ લેશ્યાઓમાંથી ૨૪ દંડકસ્થ પદવાળા નારકાદિ જીવોમાંના પ્રત્યેક દંડકના જીવોમાં જેટલી લેશ્યાઓ હોય છે એટલી લેશ્યાઓથી યુક્ત તે પ્રત્યેક દંડકના જીવોની વર્ગણા પણ સામાન્યની અપેક્ષાએ એક હોય છે

એજ વાત "एगा कण्हलेसाणं नेरइयाणं वग्गणा जाव काउलेसाणं नेरइयाणं वग्गणा एवं जस्स जइ लेसाओ" આ સૂત્રપાઠ દ્વારા સૂત્રકારે કહી છે તેનો ભાવાર્થ આ પ્રમાણે છે-કૃષ્ણલેશ્યાવાળા નારકોની વર્ગણા એક છે, નીલ લેશ્યાવાળા નારકોની વર્ગણા એક છે કાપોત લેશ્યાવાળા નારકોની વર્ગણા એક છે નારક જીવો કૃષ્ણાદિ ત્રણ લેશ્યાઓવાળા હોય છે તેથી તે ત્રણ પ્રકારની લેશ્યાઓમાંની પ્રત્યેક લેશ્યાવાળા નારકોની એક એક વર્ગણા હોય

प्रकारेण यस्य असुरादेर्यावन्त्योलेश्या भवन्ति, तावतीषु लेश्यासु एकैकया लेश्यया विशेपितानां तेषां प्रत्येकं वर्गणा एकैका भवति। कस्य कियत्यो लेश्या भवन्ति ? इति स्वयमेवाह सूत्रकारः-'भवणवइ वाणमंतर०' इत्यादि-भवनपतिवानव्यन्तरपृथिव्यब्वनस्पतीनां चतस्रो लेश्याः=कृष्णनीलकापोततेजोलेश्या भवन्ति। तेजोवायु द्वीन्द्रियत्रीन्द्रियचतुरिन्द्रियाणां तिस्रो लेश्याः=कृष्णनीलकापोतलेश्या भवन्ति। पञ्चेन्द्रियतिर्यग्योनिकानां मनुष्याणां षड्लेश्याः=कृष्णादिशुक्लान्ताः भवन्ति। ज्योतिष्काणाम् एका तेजोलेश्या भवति। वैमानिकानाम् तिस्र उपरितनलेश्याः=तेजः पद्मशुक्ललेश्या भवन्ति। इति पञ्चमश्चतुर्विंशतिदण्डकः ॥५॥

तथा-कृष्णादिलेश्याविशेपितानां भवसिद्धिकानाम् अभवसिद्धिकानां च वर्गणा एकैका भवति। इममर्थं सूत्रकारः स्वयमाह-एगा कण्हलेसाणं भवसिद्धियाणं'

सूत्रकार ने "भवणवइ वाणमंतर०" इत्यादि सूत्र द्वारा प्रकट किया है इसमें भवनपति व्यन्तर पृथिवी अप् और वनस्पतिकायिक इन जीवों के कृष्ण, नील, कापोत और तेजोलेश्या ये चार लेश्याएं होती हैं तेजस्कायिक, वायुकायिक, द्वीन्द्रिय, तेइन्द्रिय और चार इन्द्रिय इनके कृष्ण, नील और कापोत ये तीन लेश्याएं होती है पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्चों के और मनुष्य के छह लेश्याएं होती है कृष्ण, नील, कापोत, पीत, पद्म और शुक्ल ये उन छह लेश्याओंके नाम हैं। ज्योतिष्क जीवोंको एक तेजोलेश्या होती है वैमानिकों को तेजोलेश्या पद्मलेश्या और शुक्ललेश्या ये तीन लेश्याएं होती हैं। इस प्रकार से यह पांचवां चतुर्विंशतिदण्डक है तथा कृष्णादिलेश्याओं से विशेषित भवसिद्धिक और अभवसिद्धिक जीवों की वर्गणा एक २ होती है यही बात सूत्रकार ने "एगा कण्हलेस्साणं

છે કયા જીવને કેટલી લેશ્યાઓ હોય છે તે સૂત્રકારે "भवणइ वाणमतर०" ઇત્યાદિ સૂત્રદ્વારા પ્રકટ કર્યું છે આ સૂત્રપાઠમાં એ વાત પ્રકટ કરી છે કે ભવનપતિ, વ્યન્તર, પૃથ્વીકાયિક, અપ્કાયિક અને વનસ્પતિકાયિકોમા કૃષ્ણ, નીલ, કાપોત અને તેજોલેશ્યા, આ ચાર લેશ્યાઓનો સદ્ભાવ હોય છે. તેજસ્કાયિક, વાયુકાયિક, દ્વીન્દ્રિય, ત્રીન્દ્રિય અને ચતુરિન્દ્રિય જીવોમાં કૃષ્ણ, નીલ અને કાપોત, એ ત્રણ લેશ્યાઓનો સદ્ભાવ હોય છે. પંચેન્દ્રિય તિર્યંચો અને મનુષ્યોમા કૃષ્ણ, નીલ, કાપોત, તેજોલેશ્યા, પદ્મલેશ્યા અને શુકલલેશ્યા, આ છએ લેશ્યાઓનો સદ્ભાવ હોય છે. જ્યોતિષ્ક જીવોમાં તેજોલેશ્યાનો અને વૈમાનિકોમા તેજોલેશ્યા, પદ્મલેશ્યા અને શુકલ લેશ્યાનો સદ્ભાવ હોય છે. આ રીતે આ પાચમા ચોવીસ દંડકો સમજવા.

તથા કૃષ્ણાદિ લેશ્યાઓથી યુક્ત ભવસિદ્ધિક અને અભવસિદ્ધિક જીવોની વર્ગણા એક એક હોય છે. એજ વાત સૂત્રકારે "एगा कण्हलेस्साणं भव-

इत्यादि । एका कृष्णलेश्यानां भवसिद्धिकानां वर्गणा । एवं षट्स्वपि लेश्यासु = कृष्णादिषट्लेश्या विशेषणत्वेनाश्रित्य द्वे द्वे पदे भणितव्ये । अथ मात्र,-कृष्णलेश्यानां भवसिद्धिकानां वर्गणा एका । कृष्णलेश्यानाम् अभवसिद्धिकानां वर्गणा एका । एवं नीलादिविशेषिता भवसिद्धिका अभवसिद्धिकाश्च वाच्या इति । सम्प्रति यथास्व कृष्णलेश्यादिविशेषितानां भवसिद्धिकानाम् अभवसिद्धिकानां च नारकादीनां प्रत्येक वर्गणाया एकत्व दर्शयति-" एगा कण्हलेसाणं भवसिद्धियाणणेरइयाणं वग्गणा ' इत्यादि । कृष्णलेश्यानां भवसिद्धिकानां नैरयिकाणां वर्गणा एका । तथा-कृष्णलेश्यानाम् अभवसिद्धिकानां वर्गणा एका एवम्=अमुना प्रकारेण यस्य यावत्यो लेश्या भवन्ति तस्य तावत्यो वर्गणा वक्तव्याः । कियदवधि वक्तव्याः ? इत्याह-यावद् वैमानिकानाम् । इति पञ्चचतुर्विंशति दण्डकः ॥ ६ ॥

तथा-कृष्णलेश्यादिविशेषितानां सम्यग्दृष्टिकानां मिथ्यादृष्टिकानां सम्यङ्मिथ्यादृष्टिकानां च प्रत्येक वर्गणा एकैका बोध्या । तथा-कृष्णादिषु षट्स्वपि

भवसिद्धियाणं " इत्यादि सूत्र द्वारा प्रकट की है इसका सारांश ऐसा है कि जो कृष्णलेश्यावाले भवसिद्धिक जीव हैं उनकी वर्गणा एक है तथा-जो कृष्णलेश्यावाले अभवसिद्धिक जीव हैं उनकी भी वर्गणा एक है इसी प्रकार से नीलादिलेश्याओं से विशेषित भवसिद्धिक और अभवसिद्धिक जीवों के सम्बन्ध में भी कथन जानना चाहिये इस तरह से छहों लेश्याओंमें ये दो दो पद कह लेना चाहिये जिस जीवके जितनी लेश्याएँ होती हैं उस जीव के उतनी वर्गणाएँ कही गई हैं ऐसा जानना चाहिये इस प्रकार का यह कथन नारक से लेकर वैमानिक तकके जीवों के सम्बन्ध में वक्तव्य कहा गया है यह छठा चतुर्विंशतिदण्डक है।

तथा—कृष्णलेश्यादि विशेषित सम्यग्दृष्टियों की मिथ्यादृष्टियों की और सम्यग्मिथ्यादृष्टियों की प्रत्येक की एक २ वर्गणा होती है तथा-

---

सिद्धियाणं " ઇત્યાદિ સૂત્રદ્વારા પ્રકટ કરી છે તેનો ભાવાર્થ નીચે પ્રમાણે છે- જે કૃષ્ણલેશ્યાવાળા ભવસિદ્ધિક જીવો છે તેમની વર્ગણા એક છે આ રીતે નીલાદિ લેશ્યાઓવાળા ભવસિદ્ધિક અને અભવસિદ્ધિક જીવોને વિષે પણ કથન સમજવું આ રીતે છએ લેશ્યાઓની સાથે આ બબ્બે પદનું કથન થવું જોઈએ. જે જીવને જેટલી લેશ્યાઓ હોય છે એટલી તેની વર્ગણાઓ કહી છે એમ સમજવું આ પ્રકારનું આ કથન નારકોથી લઈને વૈમાનિકો પર્યન્તના ૨૪ દંડકના જીવો વિષે સમજવું આ પ્રકારના આ છઠ્ઠા ચોવીસ દંડકો સમજવા.

તથા કૃષ્ણાદિ લેશ્યાવાળા સમ્યગ્દષ્ટિ જીવોની, મિથ્યાદષ્ટિ જીવોની અને સમ્યગ્મિથ્યાદષ્ટિ જીવોની-એ પ્રત્યેકની એક એક વર્ગણા હોય છે તથા

लेश्यासु मध्ये नारकादिवैमानिकान्तानां यावत्यो लेश्या भवन्ति, तावतीभिर्लेश्याभिर्विशेषितानां नारकादिवैमानिकान्तानां मध्ये यस्य यस्य या या दृष्टिर्भवति तां तां दृष्टिमाश्रित्य तस्य तस्य एकैका वर्गणा भवति। अमुमेवार्थमाह-सूत्रकारः-'एवं छसु वि लेसासु' इत्यादि। एवं षट्स्वपि लेश्यासु यावद् वैमानिकानां येषां यावत्यो दृष्टय.। इति सप्तमश्चतुर्विंशति दण्डकः॥ ७॥

•तथा-कृष्णलेश्यानां कृष्णपाक्षिकाणाम् एका वर्गणा। कृष्णलेश्यानां शुक्लपाक्षिकाणाम् एका वर्गणा। एवं नीलादिलेश्या विशेषितानां कृष्णपाक्षिकाणां शुक्लपाक्षिकाणां च एकैका वर्गणा बोध्या। तथा-कृष्णपाक्षिकाणां शुक्लपाक्षिकाणां च

कृष्णादि छ लेश्याओं के मध्य में नारक से लेकर वैमानिक तक के जीवों को जिस जीवके जोर दृष्टि होती है उसे उस दृष्टि को लेकर के उस २ जीव को एक वर्गणा होती है यही बात-"एवं छसु वि लेस्सासु" इत्यादि सूत्रपाठ द्वारा प्रकट की गई है यह सातवां चतुर्विंशतिदण्डक है।

आठवां चतुर्विंशति दण्डक इस प्रकार से है-

कृष्णलेश्यावाले कृष्णपाक्षिकोंकी एक वर्गणा तथा कृष्णलेश्यावाले शुक्लपाक्षिकों की एक वर्गणा होती है इसी प्रकारका कथन नीलादिलेश्याविशेषित कृष्णपाक्षिकों के और शुक्लपाक्षिकोंके सम्बन्धमें भी कर लेना चाहिये अर्थात् नीललेश्यावाले कृष्णपाक्षिकों की और नीललेश्या वाले शुक्लपाक्षिकों की एक २ वर्गणा होती है इसी तरह से यथा योग्य कृष्णादि लेश्यावाले नारक से लेकर वैमानिक तक के कृष्णपा-

---

નારકથી લઈને વૈમાનિક પર્યન્તના ૨૪ દંડકના જીવોમાં કૃષ્ણાદિ પ્રત્યેક લેશ્યા-વાળા જીવો આ ત્રણ પ્રકારની દૃષ્ટિઓમાંથી જે જે દૃષ્ટિવાળા હોય છે, તે તે પ્રત્યેક દૃષ્ટિ અને પ્રત્યેક લેશ્યાની અપેક્ષાએ પ્રત્યેક દંડકના જીવોની એક એક વર્ગણા હોય છે એજ વાત "एवं छसु वि लेस्सासु" ઈત્યાદિ સૂત્રપાઠ દ્વારા પ્રકટ કરવામા આવી છે આ પ્રકારના આ સાતમા ચોવીસ દંડકો સમજવા.

આઠમા ૨૪ દંડકો નીચે પ્રમાણે છે-કૃષ્ણલેશ્યાવાળા કૃષ્ણપાક્ષિકોની એક વર્ગણા અને કૃષ્ણલેશ્યાવાળા શુકલપાક્ષિકોની એક વર્ગણા હોય છે. એજ પ્રકારનુ કથન નીલાદિલેશ્યાયુક્ત કૃષ્ણપાક્ષિકો અને શુકલપાક્ષિકો વિષે પણ સમજવુ. એટલે કે નીલલેશ્યાવાળા કૃષ્ણપાક્ષિકોની એક અને નીલલેશ્યાવાળા શુકલપાક્ષિકોની એક વર્ગણા હોય છે. બાકીની ચારે લેશ્યાઓવાળા ઉપર્યુક્ત કૃષ્ણપાક્ષિકો અને શુકલપાક્ષિકોની વર્ગણાઓ વિષે પણ એવુંજ કથન ગ્રહણ કરવુ એજ પ્રમાણે યથાયોગ્ય (જે જીવોમા જે લેશ્યાઓ સંભવી શકતી હોય તે લેશ્યાઓની અપેક્ષાએ) કૃષ્ણાદિ લેશ્યાવાળા નારકથી લઈને વૈમાનિક

यथास्वं कृष्णादि लेश्यावतां नारकादिवैमानिकान्तानां प्रत्येकमेकैका वर्गणा बोध्या। इममर्थं सूत्रकारः माह-'जाव वेमाणियाण' इत्यादिना। यावद् वैमानिकानां, यस्य यावत्या लेश्या इति। इत्यमुपरिनिर्दिष्टप्रकारेण अष्टचतुर्विंशति दण्डका बोध्या॥८॥

एतेऽष्टौ चतुर्विंशतिदण्डका एवमुक्ता, तथाहि—

"ओहो १ भव्वाईहिं विसेसिओ २ दंसणेहिं ३ पक्खेहिं ४।

छेमाहिं ५ भव्व ६ दंसण ७ पक्खेहिं ८ मिसिट्ठलेसाहिं॥१॥

छाया—ओघो १ भव्यादिभिर्विशेषितो २ दर्शनैः ३ पक्षैः।

लेश्याभिः भव्यदर्शन पक्षैर्विशिष्टलेश्याभिः॥ इति॥

अथ सिद्धवर्गणा मरूप्यते—तत्र सिद्धा द्विविधाः-अनन्तरसिद्धाः परम्पर सिद्धाश्च। तत्र-अनन्तरसिद्धा -न विद्यतेऽन्तरं व्यवधानम् अर्थात् समयेन येषां ते

क्षिक और शुक्लपाक्षिक जीवों की भी प्रत्येक की एक २ वर्गणा होती है ऐसा जानना चाहिये इसी बात को "जाव वेमाणियाण" इत्यादि सूत्रपाठ द्वारा व्यक्त की गई है इस कथन में जिसके जितनी लेश्याएँ होती हैं उतनी उसके कह लेनी चाहिये और उन प्रत्येक जीवों की एक २ वर्गणा होती है ऐसा जानना चाहिये ये आठ २४ दण्डक इस प्रकार से कहे गये हैं-" ओहो १ भव्वाईहिं विसेसिओ०" इत्यादि।

अब सिद्धवर्गणाकी प्ररूपणा की जाती है-इसमें अनन्तरसिद्ध और परम्परसिद्धके भेदसे सिद्ध दो प्रकारके होते हैं-जिनकी सिद्धि होनेमें एक समय तकका भी अन्तर व्यवधान नहीं होता है वे अनन्तरसिद्ध हैं अर्थात् सिद्धत्व होने के प्रथम समय में जो विद्यमान होते हैं वे अनन्तरसिद्ध

પણ તના કૃષ્ણપાક્ષિક અને શુકલપાક્ષિક જીવોમાંના પ્રત્યેક પ્રકારના જીવોની પણ એક એક વર્ગણા હોય છે એજ વાત સૂત્રકારે "જાવ વેમાણિયાણં" ઇત્યાદિ સૂત્રપાઠ દ્વારા વ્યક્ત કરી છે આ કથનમાં જેની જેટલી લેશ્યાઓ હોય તે કહેવી જોઈએ અને તે પ્રત્યેક લેશ્યાવાળા કૃષ્ણપાક્ષિકની એક એક વર્ગણા કહેવી જોઈએ આ રીતે આઠમાં ૨૪ દંડકોનું પ્રતિપાદન અહીં પૂરું થાય છે તે આઠ ૨૪ દંડક આ પ્રમાણે કહ્યાં છે- ઓહો૧ ભવ્વાઈહિં વિસેસિઓ" ઇત્યાદિ

હવે સિદ્ધ વર્ગણાનું પ્રતિપાદન કરવામાં આવે છે—

અનન્તર સિદ્ધ અને પરમ્પર સિદ્ધના ભેદથી સિદ્ધ બે પ્રકારના હોય છે જેમની સિદ્ધિ થવામાં એક સમય પણ તનો પણ અંતર (વ્યવધાન) પડ્યો નથી એવા સિદ્ધોને અનન્તર સિદ્ધ કહે છે એટલે કે સિદ્ધત્વ થવાના પહેલા સમયમાં જેઓ વિદ્યમાન હોય છે, તેમને અનન્તર સિદ્ધ કહે છે

तथा-सिद्धत्वप्रथमसमयवर्त्तिन इत्यर्थः, ते पञ्चदशविधाः। तेषु एकैकस्य वर्गणाया एकत्वमाह—'एगा तित्थसिद्धाणं' इत्यादिना। तीर्थसिद्धानाम् तीर्यते संसार-सागरोऽनेनेति तीर्थम्=द्वादशाङ्गरूपं प्रवचनम्, तदाधारत्वेन सङ्घः, तस्मिन् प्रवृत्ते सति सिद्धाः-तीर्थसिद्धाः, वृषभसेनादयः-तीर्थसिद्धास्तेषां वर्गणा एका। तथा-अतीर्थसिद्धानाम्-अतीर्थे=तीर्थस्यानुत्पत्तौ सिद्धा-अतीर्थसिद्धा-मरुदेवीप्रभृतयः, तथा-तीर्थव्यवच्छेदे-चन्द्रप्रभस्वामि-सुविधिस्वाम्यपान्तराले जातिस्मरणादिना सिद्धास्तेषां वर्गणा एका। तथा तीर्थकरसिद्धानां-तीर्थं कुर्वन्ति आनुलोम्येन हेतुत्वेन ताच्छील्येन वा येते तीर्थकराः।

हैं ये अनन्तरसिद्ध १५ प्रकार के होते हैं इनमें एक२ की वर्गणामें एकत्व है यही बात "एगा तित्थसिद्धाणं" इत्यादि सूत्रपाठ द्वारा प्रकट की गई है संसाररूपी सागर जिसके प्रभाव से तिरा जाना है उसका नाम तीर्थ है ऐसा वह तीर्थ द्वादशाङ्गरूप प्रवचन ही है तथा इस द्वादशाङ्गीरूप प्रवचन का आधार भूत साधु, साध्वी, श्रावक, श्राविकारूप चतुर्विध श्रीसंघ भी तीर्थरूप है इस तीर्थ के प्रवृत्त होने पर जो सिद्ध हुए हैं वे तीर्थसिद्ध हैं। ऐसे वे तर्थसिद्ध वृषभसेन आदि हैं इन तीर्थसिद्धों की वर्गणा एक है तथा तीर्थकी अनुत्पत्तिमें जो सिद्ध हुए हैं वे अतीर्थसिद्ध हैं ये अतीर्थसिद्ध मरुदेवी आदि हैं तीर्थके व्यवच्छेदमें जो सिद्ध हुए हैं वे तीर्थ व्यवच्छेद सिद्ध हैं ऐसे तीर्थव्यवच्छेद सिद्ध जीव जातिस्मरण आदि से होते हैं जैसे चन्द्रप्रभस्वामी एवं सुविधिनाथस्वामीके अपान्तराल में हुए हैं इनकी वर्गणा एक है तथा तीर्थंकरसिद्धों की भी वर्गणा एक है

તેમના ૧૫ પ્રકાર છે તે પ્રત્યેક પ્રકારના અનન્તર સિદ્ધોની વર્ગણામાં એકત્વ છે એજ વાત "एगा तित्थसिद्धाणं" ઇત્યાદિ સૂત્રપાઠ દ્વારા પ્રકટ કરી છે. સંસાર રૂપી સાગર જેના પ્રભાવથી તરી જવાય છે તેને તીર્થ કહે છે દ્વાદશાંગ (બાર અંગ) રૂપ પ્રવચન જ એવું તીર્થ છે. તથા આ દ્વાદશાંગના આધારભૂત સાધુ, સાધ્વી, શ્રાવક અને શ્રાવિકારૂપ ચતુર્વિધ શ્રીસંઘ પણ તીર્થરૂપ જ છે. આ તીર્થની પ્રવર્તના થયા બાદ સિદ્ધ થયેલા જીવોને તીર્થ-સિદ્ધો કહે છે, પરન્તુ તીર્થની પ્રવર્તના વિના જે સિદ્ધો થયા છે, તેમને અતીર્થ સિદ્ધો કહે છે વૃષભસેન આદિ તીર્થસિદ્ધો અને મરુદેવી આદિ અતીર્થસિદ્ધો થઈ ગયા છે તીર્થનો વ્યવચ્છેદ (નાશ) થયા બાદ જે સિદ્ધો થયા છે, તેમને તીર્થવ્યવચ્છેદ સિદ્ધો કહે છે જાતિસ્મરણ આદિ દ્વારા આ પ્રકારના સિદ્ધો થાય છે જેમકે ચન્દ્રપ્રભુસ્વામી અને સુવિધિસ્વામીના અન્ત-રાલમા થયેલા સિદ્ધો. તે પ્રત્યેક પ્રકારના સિદ્ધોની એક એક વર્ગણા હોય છે.

उक्त च—" अणुलोमहेउतसीलयाए जे भावसित्थमेयं तु ।
कुब्वंति पगासंति य ते तीत्थगरा हियत्थकरा ॥ १ ॥

छाया—अनुलोमहेतु तच्छीलतया ये भावतीर्थमेतत्तु ।
कुर्वन्ति प्रकाशयन्ति तु ते तीर्थकरा हितार्थकरा ॥ १ ॥ इति ।

तीर्थकराः सन्तो य सिद्धास्ते तीर्थकरसिद्धाः=ऋषभादयस्तेषां वर्गणा एका। तथा-अतीर्थकरसिद्धानाम्=गौतमादीनां वर्गणा एका ।

तथा-स्वयंबुद्धसिद्धानां-स्वयम्=आत्मना बुद्धाः=तत्त्वं ज्ञातवन्तो ये ते स्वयं बुद्धाः, ते च सिद्धाश्चेति स्वयम्बुद्धसिद्धास्तेषां वर्गणा एका । तथा – प्रत्येकबुद्धानाम्-प्रतीत्य=समाश्रित्य एकं कमपि वृषभादिकमनित्यत्वादिभावनाकारणं पदार्थं बुद्धाः=ज्ञातवन्तः परमार्थं ये ते प्रत्येकबुद्धास्तेषां वर्गणा एका ।

अनुलोमता से या हेतुरूप से या उस प्रकार के स्वभाव होने से जो तीर्थ की प्रवृत्ति करते हैं वे तीर्थंकर कहलाते हैं

उक्त च—' अनुलोम हेउ " इत्यादि ।

तीर्थंकर होते हुए जो सिद्ध होते हैं वे तीर्थंकर सिद्ध हैं ऐसे तीर्थंकर सिद्ध ऋषभ आदि हैं इनकी वर्गणा सामान्य से एक होती है तथा अतीर्थंकर सिद्ध जो गौतम आदि हैं उनकी भी वर्गणा सामान्यतः एक है तथा-जो स्वयंबुद्ध सिद्ध हैं उनकी भी वर्गणा एक है, स्वतः ही जो तत्त्वोंको जान जाते हैं वे स्वयंबुद्ध कहलाते हैं, स्वयंबुद्ध होकर जो सिद्ध होते हैं वे स्वयंबुद्ध सिद्ध हैं अर्थात् जो किसी के उपदेश के विना स्वयं अपनी ही ज्ञानशक्ति के द्वारा बोध पाकर सिद्ध होते हैं वे स्वयं बुद्ध सिद्ध हैं तथा जो अन्यज्ञानी वृषभादि को देखकर अनित्यादि भा

તથા તીર્થંકર સિદ્ધોની પણ એક વગણા હોય છે અનુલોમતાથી અથવા હેતુ રૂપે અથવા તે પ્રકારનો સ્વભાવ હોવાથી જેઓ તીર્થની પ્રવૃત્તિ કરે છે, તેમને તીર્થંકર કહે છે કહ્યું પણ છે કે-' અનુલોમ હેઉ " ઇત્યાદિ. તીર્થંકર થઈને જેઓ સિદ્ધ થાય છે તેમને તીર્થંકર સિદ્ધ કહે છે ઋષભદેવ આદિ એવાં તીર્થંકર સિદ્ધ ગણાય છે. તેમની વગણા સામાન્યની અપેક્ષાએ એક હોય છે, તથા ગૌતમ આદિ જે તીર્થંકર સિદ્ધો છે તેમની વગણા પણ સામાન્યતઃ એક છે તથા જે સ્વયબુદ્ધ સિદ્ધો છે તેમની વગણા પણ એક છે જે જીવો સ્વતઃ (પોતાની જાતે જ) તત્ત્વોને જાણી લે છે, તેમને સ્વયબુદ્ધ કહે છે સ્વયબુદ્ધ થઈને સિદ્ધપદ પામનાર જીવોને સ્વયબુદ્ધ સિદ્ધો કહે છે એટલે કે અન્યના ઉપદેશ વિના, પોતાની જ જ્ઞાનશક્તિ દ્વારા બોધ પામીને સિદ્ધ બનનારા જીવોને સ્વયબુદ્ધ કહે છે તથા જે વૃષભાદિ જેવાં અન્ય જ્ઞાનીને જોઈને

ननु स्वयम्बुद्धप्रत्येकबुद्धानां को भेदः ? इति चेत्, अत्रोच्यते–स्वयम्बुद्ध-प्रत्येकबुद्धानां बोध्युपधिश्रुतलिङ्गकृतो भेदः। तथाहि–स्वयम्बुद्धानां बाह्यनिमित्तान-पेक्षो बोधिः। प्रत्येकबुद्धानां तु बाह्यनिमित्तापेक्षो बोधिः, एषामुपध्यादिवर्णनम-न्यतोऽवसेयम्। तथा–बुद्धबोधितसिद्धानाम्–बुद्धैः=आचार्यादिभिर्बोधिताः सन्तो ये सिद्धास्ते बुद्धबोधितसिद्धास्तेषां वर्गणा एका। तथा–एतेषामेव स्त्रीलिङ्गसि-द्धानां च प्रत्येकमेकैका वर्गणा भवति। तथा–स्वलिङ्गसिद्धानाम्–सदोरकमुखव-स्त्रिकारजोहरणादिधारित्वेन स्वलिङ्गे=साधुलिङ्गे सिद्धानां वर्गणा एका। तथा–

वना के कारणभूत पदार्थ को जानकर बोध को प्राप्त करते हैं वे प्रत्येक बुद्ध हैं इनकी भी सामान्यरूप से वर्गणा एक है।

शंका—स्वयंबुद्ध और प्रत्येक बुद्ध में क्या अन्तर है ?

उ०—स्वयंबुद्ध और प्रत्येकबुद्ध में बोधि, उपधि श्रुत और लिङ्ग इनकी अपेक्षासे भेद है, स्वयं बुद्धों को बाह्य निमित्तके बिना बोधि प्राप्त होती है प्रत्येकबुद्धों को बाह्यनिमित्तकी अपेक्षासे बोधिप्राप्त होती है इनकी उपधि आदि का वर्णन अन्य शास्त्रों से जान लेना चाहिये आचार्य आदिकोंसे बोधित होकर जो सिद्ध होते हैं वे बुद्ध बोधित हैं इनकी भी वर्गणा एक है तथा स्त्रीलिङ्ग से जो बुद्धबोधित हुए हैं या पुरुषलिङ्ग से जो बुद्धबोधित हुए हैं इन सब की प्रत्येककी वर्गणा एक है तथा जो स्वलिङ्ग में सदोरकमुखवस्त्रिका रजोह-रण आदि के धारक होने से साधुलिङ्ग में सिद्ध हुए हैं उनकी भी वर्ग-

અનિત્યાદિ ભાવનાના કારણભૂત પદાર્થને જાણીને બોધ પ્રાપ્ત કરે છે, તેમને પ્રત્યેક બુદ્ધ કહે છે તેમની પણ સામાન્યત એક વર્ગણા હોય છે

પ્રશ્ન—સ્વયંબુદ્ધ અને પ્રત્યેકબુદ્ધમાં શો તફાવત છે ?

ઉત્તર—સ્વયંબુદ્ધ અને પ્રત્યેકબુદ્ધમાં બોધિ, ઉપધિ, શ્રુત અને લિંગની અપેક્ષાએ ભેદ છે. સ્વયંબુદ્ધને બોધિ પ્રાપ્તિમાં બાહ્ય નિમિત્તોની આવશ્યકતા રહેતી નથી, પરન્તુ પ્રત્યક્ષ બુદ્ધોને બોધિપ્રાપ્તિમા બાહ્યનિમિત્તોની જરૂર રહે છે. તેમની ઉપધિ આદિનું વર્ણન અન્ય શાસ્ત્રોમાથી જાણી લેવુ જોઇએ

આચાર્ય વગેરે દ્વારા બોધિત થઇને સિદ્ધ થનારા જીવોને બુદ્ધબોધિત સિદ્ધો કહે છે. તેમની વર્ગણા પણ એક હોય છે. સ્ત્રીલિંગમાથી બુદ્ધબોધિત થયેલા સિદ્ધોની અને પુરુષ લિંગમાંથી બુદ્ધબોધિત થયેલા સિદ્ધોની પણ એક એક વર્ગણા હોય છે. સ્વલિંગમાંથી (સદોરકમુખવસ્ત્રિકા આદિના ધારક સાધુલિંગમાંથી) સિદ્ધ થયેલા જીવોની વર્ગણા પણ એક હોય છે. તથા

अन्यलिङ्गसिद्धानाम्=परिव्राजकादिलिङ्गसिद्धानां वर्गणा एका । तथा-गृहिलिङ्ग सिद्धानाम्-गृहिणां यल्लिङ्गं तत्र सिद्धानां मरुदेवीप्रभृतीनां वर्गणा एका । मतीर्थसिद्धानामित्यारभ्य गृहिलिङ्गसिद्धानामित्यन्त पाठ 'एवं जाव' इति पदेन ग्राह्यः । तथा-एकसिद्धानाम्=एकैकस्मिन् समये एकैकसिद्धानां वर्गणा एका। तथा-अनेकसिद्धानाम्-एकसमये द्विप्रभृत्यष्टोत्तरशतान्तानां सिद्धानां वर्गणा एका । अत्र-एक समयेऽनेके सिध्यन्ति । ते कियन्तः सिध्यन्ति ? इति प्रतिपादितमन्यत्र। तथाहि

"बत्तीसा अडयाला सट्ठी बावत्तरी य बोधव्वा ।
चुलसीई छन्नउई दुरहिय अट्ठोत्तरसयं च ॥ १ ॥
छाया—द्वात्रिंशत् अष्टचत्वारिंशत् षष्टि र्द्वासप्ततिश्च बोद्धव्याः ।
चतुरशीतिः षण्णवति' द्व्यधिकाष्टोत्तरशतं च ॥ १ ॥ इति ।

णा एक है तथा-परिव्राजक आदि अन्यलिङ्गोंसे सिद्ध हुए जीवोंकी भी वर्गणा एक है तथा-गृहिलिङ्ग में-गृहस्थों के लिङ्ग में जो सिद्ध हुए जैसे कि मरुदेवी आदि-ये गृहिलिङ्ग सिद्ध हैं इन गृहिलिङ्ग सिद्धों की भी वर्गणा एक है "अतीर्थसिद्धानाम्" से लेकर इन गृहिलिङ्ग सिद्धों तक का पाठ यहां "एवं जाव" इस पद से ग्रहण किया गया है तथा एक सिद्धों की भी वर्गणा एक है एक२ समय में जो एक२ सिद्ध होते हैं वे एक सिद्ध हैं एक२ समयमें सिद्ध हुए इन सिद्धों की वर्गणा सामान्यतः एक है तथा-अनेक सिद्धों की-एक समय में दो आदि से लेकर १०८ तक सिद्ध हुए जीवों की वर्गणा भी एक है एक समय में जो अनेकसिद्ध होते हैं वे कितने होते हैं-यह सब अन्यत्र इस प्रकार से प्रतिपादित हुआ है 'बत्तीसा अडयाला" इत्यादि इस गाथा का भाव

પરિવ્રાજક આદિ અન્ય લિંગોમાંથી સિદ્ધ થયેલા જીવોની પણ એક વર્ગણા હોય છે ગૃહસ્થોમાંથી સિદ્ધ થયેલા મરુદેવી આદિ જીવોને ગૃહિલિંગ સિદ્ધો કહે છે તે ગૃહિલિંગ સિદ્ધોની પણ વર્ગણા એક છે "અતીર્થસિદ્ધાનામ્" થી લઈને ગૃહિલિંગ સિદ્ધો પર્યન્તના સિદ્ધોનો પાઠ અહીં "जाव (યાવત્) પદથી ગ્રહણ થયો છે તથા એક એક સમયમાં જે એક એક સિદ્ધ થાય છે, તેમને એકસિદ્ધ કહે છે એવાં એકસિદ્ધોની વર્ગણામાં પણ સામાન્યની અપેક્ષાએ એકત્વ સમજવું એક સમયમાં બે થી લઈને ૧૦૮ પર્યન્તના જે સિદ્ધો થાય છે તેમની વર્ગણા પણ એક હોય છે એક સમયમાં જે અનેક સિદ્ધો થાય છે તે કેટલા થાય છે તેનું પ્રતિપાદન અન્ય સિદ્ધાન્ત ગ્રંથોમાં આ પ્રમાણે કરવામાં આવ્યું છે-"बत्तीसा अडयाला" ઈત્યાદિ આ ગાથાનો

अयं भावः-यदा एकसमयेन एकादय उत्कर्षेण द्वात्रिंशत् सिध्यन्ति, तदा द्वितीयेऽपि द्वात्रिंशत् सिध्यन्ति। एवमेवतृतीयसमयादारभ्याष्टौ समयान् यावत् प्रत्येकं द्वात्रिंशद् द्वात्रिंशत् सिध्यन्ति। ततोऽग्रेऽवश्यमेवान्तरं भवति। पुनर्यदा त्रयस्त्रिंशत आरभ्य अष्टचत्वारिंशत् एकसमयेन सिध्यन्ति, तदा निरन्तरं सप्तसमयान् यावत् सिध्यन्ति। ततोऽवश्यमेवान्तरं भवति। पुनर्यदा एकसमयेन एकोनपञ्चाशत आरभ्य यावत् षष्टिः सिध्यन्ति। तदा निरन्तरं षट् समयान् सिध्यन्ति। प्रत्येकसमये षष्टिः षष्टिः सिध्यन्ति। ततोऽन्तरं भवत्येव। ततो यदा पुनरेकसमयेन एकषष्टिमारभ्य द्विसप्ततिः सिध्यन्ति, तदाऽष्टमसमयावधि तावन्त एव सिध्यन्ति। ततः परमन्तरं

ऐसा है-कि जिस समय उत्कृष्टरूप में एक से लेकर ३२ तक सिद्ध एक समय में होते हैं तब द्वितीय समय में भी ३२ ही सिद्ध होते हैं इसी तरह से तृतीय समय तक से लेकर आठ समय तक प्रत्येक समय में ३२-३२ तक सिद्ध होते हैं इस के बाद अवश्य ही सिद्ध होने में अन्तर आजाता है बाद में जब में जब ३३ से लेकर ४८ तक सिद्ध होते हैं तब निरन्तर सात समय तक ३३ से लेकर ४८ तक ही सिद्ध होते हैं इसके बा अवश्य ही अन्तर व्यवधान हो जाता है फिर जब एक समय में ४९ से लेकर ६० तक सिद्ध होते हैं तब लगातार ६ समय तक ही इतने ही सिद्ध होते रहते हैं इसके बाद अवश्य ही अन्तर आ जाता है इसके बाद जब एक समय में सिद्ध होते हैं तब ६१ लेकर ७२ तक सिद्ध होते हैं तब अष्टम समय तक इतने ही सिद्ध होते हैं इसके बाद अवश्य ही अन्तर आ जाता है इस क्रम से वृद्धि होने से एक समय में

ભાવાર્થ નીચે પ્રમાણે છે-જે એક સમયમા વધારેમાં વધારે ૩૨ પર્યન્તના સિદ્ધો થાય છે, ત્યારપછીના બીજા સમયમાં પણ ૩૨ જ સિદ્ધો થાય છે, આ રીતે ત્રીજાથી આઠમાં સમય સુધીના પ્રત્યેક સમયમાં પણ ૩૨-૩૨ પર્યન્તના સિદ્ધો જ થાય છે. ત્યારબાદ સિદ્ધો થવામાં અવશ્ય આંતરો પડી જાય છે. ત્યારબાદ જ્યારે ૩૩ થી લઇને ૪૮ પર્યન્તના સિદ્ધો થાય છે, ત્યારે નિરન્તર સાત સમય સુધી ૩૩ થી લઇને ૪૮ પર્યન્તના જ સિદ્ધો થતાં રહે છે ત્યાર બાદ અવશ્ય આંતરો પડી જાય છે. ત્યારબાદ જ્યારે એક સમયમા ૪૯ થી થી લઇને ૬૦ સુધીના સિદ્ધો થવા માંડે છે, ત્યારે નિરન્તર છ સમય સુધી એટલા જ સિદ્ધો થયા કરે છે, ત્યારબાદ અવશ્ય આંતરો પડી જાય છે. ત્યાર બાદ જ્યારે એક સમયમાં ૬૧ થી લઇને ૭૨ સુધીના સિદ્ધો થવા માંડે છે, ત્યારે આઠમાં સમય સુધી એટલાં જ સિદ્ધ થયા કરે છે, અને ત્યારબાદ અવશ્ય આંતરો પડે છે. આ ક્રમે વૃદ્ધિ થતાં થતાં જ્યારે એક સમયમાં

भवत्यव एवं क्रमेण वृद्धया एकसमयेन यदा अष्टोत्तरं शतं सिध्यन्ति, तदा ततः परमवश्यमेवान्तरं भवतीति।

एवं पञ्चदशप्रकाराणामनन्तरसिद्धानां वर्गणैकत्वमुक्त्वा सम्प्रति त्रयोदशप्रकाराणां परम्परसिद्धानां परम्परे च ते सिद्धाश्च परम्परसिद्धाः सिद्धत्वसमयाद् द्वयादिसमयवर्तिनस्तेषां वर्गणेकत्वमाह—' एगा अपढमसमयसिद्धाणं ' इत्यादि। अप्रथमसमयसिद्धानाम्–अप्रथमसमयसिद्धाः सिद्धत्वद्वितीयसमयवर्तिनः तेषां वर्गणा एका। १। ' एवं जाव ' इति पदेन–" दुसमय सिद्धाणं २ तिसमयसिद्धाणं ३ चउसमयसिद्धाणं ४ पंचसमयसिद्धाण ५ छसमयसिद्धाणं ६ सत्तसमयसिद्धाणं ७ अट्ठसमयसिद्धाण ८ नवसमयसिद्धाण ९ दससमयसिद्धाण १० संखिज्जसमयसिद्धाण

जब १०८ सिद्ध होते हैं तब उसके बाद अवश्य ही अन्तर आ जाता है

इस प्रकार से १५ भेदवाले इन अनन्तरसिद्धों की वर्गणा में एकता का कथन करके अब १३ प्रकार के जो परम्परसिद्ध हैं उनकी वर्गणा में एकताका कथन करनेके लिये सूत्रकार "अपढमसमयसिद्धाण" ऐसा सूत्र पाठ कहते हैं–परम्परारूप से जो सिद्ध होते हैं वे परम्पर सिद्ध हैं सिद्ध होने के समय से लेकर द्वयादि समयवर्ती जो सिद्ध हैं वे सब परम्पर सिद्ध हैं इन्हीं का नाम अप्रथम समय सिद्ध हैं ये अप्रथम समयसिद्ध सिद्ध अवस्था के द्वितीय समयवर्ती होते हैं यहां " एव जाव " पद से "दुसमयसिद्धाण तिसमयसिद्धाण चउसमयसिद्धाण, पंचसमयसिद्धाण, छसमयसिद्धाण, सत्तसमयसिद्धाणं, अट्ठसमयसिद्धाण, नव सम

---

१०८ સિદ્ધો થાય છે ત્યારે અવશ્ય આંતરો પડી જાય છે

આ પ્રમાણે ૧૫ ભેદવાળા અનન્તર સિદ્ધોની વર્ગણામાં એકતાનું પ્રતિપાદન કરીને હવે ૧૩ પ્રકારના પરમ્પરસિદ્ધોની-અપેક્ષાની વર્ગણામાં એકત્વનું પ્રતિપાદન કરવામાં આવે છે–' અપઢમસમયસિદ્ધાણં " ઇત્યાદિ પરમ્પરા રૂપે જે સિદ્ધો થાય છે તેમને પરમ્પર સિદ્ધ કહે છે સિદ્ધ થવાના સમયથી લઈને દ્વયાદિ સમયવર્તી જે સિદ્ધો છે તેમને પરમ્પરસિદ્ધ કહે છે તેમનુ નામ જ અપ્રથમ સમયસિદ્ધ છે તે અપ્રથમસમયસિદ્ધ જે સિદ્ધો હોય છે, તેઓ સિદ્ધ અવસ્થાના દ્વિતીય સમયવર્તી હોય છે ' એવ જાવ ' આ પદથી " દુસમયસિદ્ધાણં, તિસમયસિદ્ધાણં ચઉસમયસિદ્ધાણં પંચસમયસિદ્ધાણં છસમયસિદ્ધાણં, સત્તસમયસિદ્ધાણં, અટ્ઠસમયસિદ્ધાણં, નવસમયસિદ્ધાણં, દસસમયસિદ્ધાણં સંખિજ્જ

११ असंखिज्जसमयसिद्धाणं १२" इति ग्राह्यम्। द्विसमयसिद्धानां, त्रिसमयसिद्धानां, चतुः समयसिद्धानां, पञ्चसमयसिद्धानां, षट्समयसिद्धानां, सप्तसमयसिद्धानां, अष्टसमयसिद्धानां, नवसमयसिद्धानां दशसमयसिद्धानाम्, संख्येयसमयसिद्धानाम्, असंख्येयसमयसिद्धानामितिच्छाया। द्विसमयसिद्धादयः सिद्धत्वतृतीयादिसमयवर्तिनः, तेषां प्रत्येकं वर्गणा एकैका भवति। तथा–अनन्तसमयसिद्धानां १२ वर्गणा एका भवति। अथवा–'अप्रथमसमयसिद्धानाम्' इति सामान्याभिधानम्। 'द्विसमयसिद्धानाम्' इत्यादि तु विशेषाभिधानम्। इति।

सम्प्रति द्रव्यक्षेत्रकालभावानाश्रित्य पुद्गलवर्गणैकत्वमाह–'एगा परमाणुपोग्गलाणं' इत्यादि। परमाणुपुद्गलानाम्–परमाणव =निष्प्रदेशाः, ये पुद्गलास्ते पर-

---

यसिद्धाणं, दस समयसिद्धाणं, संखिज्जसमयसिद्धाण, असंखिज्जसमयसिद्धाणं" इन पदोंका संग्रह हुआ है इस तरह सिद्ध अवस्थाके अप्रथम समयवर्ती सिद्धोंकी सिद्ध अवस्था के द्वितीय, तृतीय, चतुर्थ आदि समयवर्ती सिद्धोंकी प्रत्येक वर्गणा एक२ है इस प्रकारसे ये परम्पर सिद्ध यहां तक १२ प्रकारके कहे गये हैं १३ प्रकारके जो परम्पर सिद्ध हैं वे अनन्तसमयवर्ती सिद्ध हैं इन अनन्तसमयवर्ती सिद्धोंकी भी वर्गणा एक होती है अथवा–"अप्रथमसमयसिद्धानाम्" ऐसा जो कथन किया गया है वह सामान्य की अपेक्षा से कहा गया है और "द्विसमय सिद्धानाम्" इत्यादि रूप से जो कथन किया गया है वह विशेषरूप से किया गया है ऐसा जानना चाहिये।

अब द्रव्य क्षेत्र काल और भाव इनको लेकर पुद्गलवर्गणामें सूत्रकार एकता का कथन करते हैं–"एगा परमाणुपोग्गला" इत्यादि जिन के

સમયસિદ્ધાણં, અસ ખિજ્જસમયસિદ્ધાણ" આ પદોનો અહીં સંગ્રહ થયો છે. આ રીતે સિદ્ધ અવસ્થાના સમયવર્તી સિદ્ધોની વર્ગણામાં એકત્વ હોય છે. એજ પ્રમાણે સિદ્ધ અવસ્થાના દ્વિતીય, તૃતીય આદિ અસંખ્યાત પર્યન્તના સમયવર્તી સિદ્ધોની, પ્રત્યેકની વર્ગણામાં એકતા હોય છે. અહીં સુધીમાં બાર પ્રકારના પરમ્પર સિદ્ધો બતાવવામાં આવ્યા. હવે જે અનન્તસમયવર્તી સિદ્ધો નામનો ૧૩ મો પ્રકાર છે, તે પ્રકારના સિદ્ધોની વર્ગણામાં પણ એકત્વ સમજવું જોઈએ અથવા "अप्रथमसमयसिद्धनाम्" આવું જે કથન કરવામાં આવ્યું છે તે સામાન્યની અપેક્ષાએ થયેલું સમજવું અને "द्विसमयसिद्धनाम्" ઇત્યાદિ રૂપે જે કથન કરવામાં આવ્યું છે, તે વિશેષરૂપે થયું છે એમ સમજવું

હવે દ્રવ્યક્ષેત્રકાળ અને ભાવની અપેક્ષાએ પુદ્ગલવર્ગણામાં સૂત્રકાર એકતાનું પ્રતિપાદન કરે છે–"एगा परमाणुपोग्गला" ઇત્યાદિ,

माणुपुद्गलास्तथो वर्गणा एका भवति । स्कन्धा अपि पुद्गला भवन्तीति 'परमाणु' इति विशेषणमुपात्तम् । तथा-'एव जाव' इति पदेन-'दुपएसियाण' सखार्थ ति चउपएसतङ्गुनवदससखिज्जासखिज्जपएसियाण' इति ग्राह्यम् । द्विप्रदेशि-कानां त्रि चतु पञ्च षट् सप्ताष्टनवदशसङ्ख्येयासङ्ख्येयप्रदेशिकानां स्कन्धानाम्-इतिच्छाया । द्विप्रदेशिकाद्यसङ्ख्येयप्रदेशिकान्तानां प्रत्येकमेका वर्गणेति । इय द्रव्यत पुद्गलानां वर्गणा प्रोक्ता ।

अथ क्षेत्रतस्तेषां वर्गणैकत्वमाह-'एगा एगपएसोगाढाण' इत्यादि । एकप्रदेशावगाढानाम्-एकप्रदेशे-क्षेत्रस्यैकस्मिन्नवयवे अवगाढा =अवस्थिता, एकप्रदे

द्वितीय आदि प्रदेश नहीं होते हैं ऐसे निरंशपुद्गल का नाम परमाणु है ऐसे परमाणुरूप पुद्गलों की वर्गणा एक होती है, स्कन्धों के व्यवच्छेद के लिये यहां "परमाणु" ऐसा विशेषण रक्खा गया है तथा-"एव जाव" इस पद से "दुपएसियाण खेधाण तिचउपच छ सत्तह नव दस संखि ज्जा पएसियाणं" इस पाठ का संग्रह हुआ है इसका भाव ऐसा है कि दो प्रदेशों वाले स्कन्ध से लेकर के असख्यात प्रदेशवाले स्कन्धों तक के स्कन्धों की प्रत्येक की वर्गणा भी एक २ है यह द्रव्य की अपेक्षा लेकर पुद्गलों की वर्गणा कही गई है।

अथ क्षेत्र की अपेक्षा से इनकी वर्गणा की एकता "एगा एगपए सोगाढाण" इस पाठ द्वारा कही जा रही है-क्षेत्र के एक प्रदेश में

બે આદિ પ્રદેશ વિનાના નિરંશ પુદ્ગલને પરમાણુ કહે છે એવાં પર માણુરૂપ પુદ્ગલોની વર્ગણા એક હોય છે સ્કન્ધોના વ્યવચ્છેદને માટે અહીં "પરમાણુ" એવું વિશેષણ રાખવામાં આવ્યું છે "एव" जाव ના પદના પ્રયોગ દ્વારા 'दुपएसियाणं खधाणं ति चउपच छसत्तट्ठनवदस संखिज्जापए सियाणं' આ પાઠને ગ્રહણ કરવામાં આવ્યો છે તેનું તાત્પર્ય એવું છે કે બેથી લઈને અસખ્યાત પર્યન્તના પ્રદેશોવાળા જે સ્કન્ધો હોય છે તે પ્રત્યેકની વર્ગણા પણ એક એક હોય છે આ રીતે દ્રવ્યની અપેક્ષાએ પુદ્ગલોની વર્ગ ણાનું પ્રતિપાદન કરીને હવે સૂત્રકાર ક્ષેત્રની અપેક્ષાએ તેમની વર્ગણામાં એકત્વનું પ્રતિપાદન કરે છે—

'एगा एगपएसोगाढाणं' ઇત્યાદિ,

ક્ષેત્રના એક પ્રદેશમાં-અવયવમાં-જેમની અવગાહના થાય છે એવાં એક પ્રદેશમાં રહેલાં પુદ્ગલોને એકપ્રદેશાવગાઢ પુદ્ગલો કહે છે એવા એક પ્રદેશાવ

गाढास्तेषां तथाभूतानां पुद्गलानां वर्गणा एका । ' एवं जाव इत्यनेन द्वयादि-संख्येयप्रदेशावगाढान्तानां पुद्गलानां पाठः संग्राह्यः । तेषां प्रत्येकं वर्गणा एकैका बोध्या । तथा-असंख्येयप्रदेशावगाढानां पुद्गलानां वर्गणा एका बोध्या ।

ननु-अनन्तप्रदेशावगाढानां पुद्गलानां वर्गणाया एकत्वं कथं नोक्तम् ? इति चेत्, आह-लोकलक्षणस्य अवगाहक्षेत्रस्यासंख्येयप्रदेशत्वमेवास्ति नत्वनन्तप्रदेशत्वम्, अत एव-असंख्येयप्रदेशपर्यन्तानां पुद्गलानां वर्गणाया एकत्वम्, इति नास्ति दोषः । पुद्गलाश्चात्र एकप्रदेशिकाद्यनन्तप्रदेशिकान्ता बोध्याः, द्रव्यपरिणामस्या-

---

अवयव में जिनका अवस्थान होता है वे एक प्रदेशावगाढ पुद्गल हैं ऐसे एकप्रदेशावगाढ पुद्गलों की वर्गणा एक होती है " एवं जाव " इस पाठ से दो आदि प्रदेशों से लेकर संख्यात तक में अवगाढ हुए पुद्गलों का ग्रहण हुआ है इन दो आदि प्रदेशों में तथा संख्यातप्रदेशों में अवगाढ हुए पुद्गलोंकी प्रत्येककी वर्गणा एकर है तथा लोकके असंख्यात प्रदेशों में अवगाढ हुए पुद्गलो की भी वर्गणा सामान्यतः एक है ।

शंका—अनन्तप्रदेशावगाढ पुद्गलों की वर्गणा का एकत्व यहां सूत्रकार ने क्यों नहीं कहा है ?

उत्तर—यहां जो ऐसा नहीं कहा है उसका कारण यह है कि लोक-रूप जो अवगाह क्षेत्र है उसमें अनन्तप्रदेशता नहीं कही गई है उसमें तो केवल असंख्यातप्रदेशता तक ही कही गई है, इसीलिये क्षेत्र के असंख्यातप्रदेशों तक में अवगाही असंख्यातप्रदेशवाले पुद्गलों की वर्गणा में एकता का कथन किया जाता है पुद्गल एक प्रदेशवाले भी होते हैं

ગાઢ પુદ્ગલોની વર્ગણા એક હોય છે. " एवं जाव " આ સૂત્રપાઠ દ્વારા બે પ્રદેશોથી લઇને સંખ્યાત પર્યન્તના પ્રદેશોની અવગાહનાવાળાં પુદ્ગલો ગ્રહણ કરવામા આવેલ છે આ બેથી લઇને સખ્યાત પર્યન્તના પ્રદેશોની અવગાહ-નાવાળાં પુદ્ગલોમાંના પ્રત્યેક પ્રકારના પુદ્ગલોની વર્ગણા એક એક હોય છે તથા અસખ્યાત પ્રદેશોમા અવગાઢ થયેલા પુદ્ગલોની પણ સામાન્યની અપેક્ષાએ એક વર્ગણા હોય છે

શકા—અહી સૂત્રકારે અનન્તપ્રદેશાવગાઢ પુદ્ગલોની વર્ગણામા શા કારણે એકત્વ પ્રકટ કર્યું નથી ?

ઉત્તર—લોકરૂપ જે અવગાહ ક્ષેત્ર છે તેમા અનન્ત પ્રદેશતા હોતી જ નથી તેમા તો અસખ્યાત પ્રદેશતા પર્યન્તની પ્રદેશતા જ સંભવી શકે છે તેથી ક્ષેત્રના અસખ્યાત પર્યન્તના પ્રદેશોમાં અવગાહી અસખ્યાત પ્રદેશવાળા પુદ્ગલોની વર્ગણામા એકતાનુ કથન કરવામાં આવ્યું છે. પુદ્ગલ એક પ્રદેશવાળા

चिन्त्यत्वात् । तथा–सुवर्णस्य सप्तरूपा पारदस्यैकेन कर्पेण चारिता एकीभवन्ति, पुनस्ते प्रयोगेण पातिता सप्तैव भवन्ति, तद्वदत्रापि बोध्यमिति ।

अथ कालतः पुद्गलानां वर्गणैकत्वमाह–' एगा एगसमयठिइयाणं ' इत्यादि । एकसमयस्थितिकानाम्–एकं समयं यावत् स्थितिः=परमाणुत्वादिना एकप्रदेशावगाढादित्वेन एकगुणकालादित्वेन वाऽवस्थानं येषां ते–एकसमयस्थितिकाः , तेषां पुद्गलानां वर्गणा एका। 'जाव' शब्दात् द्विसमयस्थितिकादिसंख्येयसमयस्थितिकान्ताः पुद्गला सङ्ग्राह्याः, तेषां, प्रत्येकं वर्गणा एकैका बोध्या । तथा–असंख्येयसमयस्थि

असंख्यातप्रदेशोंवाले भी होते हैं और अनन्तप्रदेशोंवाले भी होते हैं क्यों कि द्रव्य का परिणाम अचिन्त्य होता है जैसे सात तोले सोने में बुभुक्षित पारा मिलाकर उसे घोंटा जावे तो वह उस में मिल जाता है और बाद में वह एक तोला बुभुक्षित पारा उससे जब अलग कर दिया जाता है तब भी वह सोना ७ तोला ही रहता है कमती नहीं होता है इसी तरह से यहां पर भी समझना चाहिये।

अब कालकी अपेक्षा से पुद्गलों की वर्गणा में एकता कही जाती है " एगा एगसमयठिइयाणं " इत्यादि–परमाणुरूप से या एक प्रदेश में अवगाढ होने रूप से या एकगुणकालादिरूप से जिन पुद्गलों का एक समय तक अवस्थान होता है वे एक समयस्थितिक पुद्गल हैं ऐसे पुद्गलों की वर्गणा एक होती है यहां "जाव" शब्द से द्विसमयस्थितिवाले पुद्गल आदि से लेकर संख्यात समय तक की स्थितिवाले पुद्गलों का ग्रहण

પણ હોય છે અસંખ્યાતવાળા પણ હોય છે અને અનન્ત પ્રદેશવાળાં પણ હોય છે, કારણ કે દ્રવ્યનું પરિણામ અચિન્ત્ય હોય છે જેમ સાત તોલા સોનામાં બુભુક્ષિત પારો મેળવીને તે મિશ્રણને ઘુંટવામાં આવે તો તે તેમાં મળી જાય છે, અને ત્યાર બાદ તે એક તોલા બુભુક્ષિત પારાને જ્યારે તે મિશ્રણમાંથી અલગ કરી નાખવામાં આવે છે, ત્યારે પણ સોનું તો સાત તોલા જ રહે છે–તેમાં ઘટ પડતી નથી, એવું જ અહીં પણ સમજવું

હવે કાળની અપેક્ષાએ પુદ્ગલોની વર્ગણામાં એકત્વ પ્રકટ કરવામાં આવે છે–" एगा एगसमयठिइयाणं " ઇત્યાદિ. પરમાણુ રૂપે અથવા એક પ્રદેશમાં અવગાઢ થવા રૂપે અથવા એકગુણ કાળાદિ રૂપે જે પુદ્ગલોનું એક સમય સુધીનું અવસ્થાન (અસ્તિત્વ) હોય છે તે પુદ્ગલોને એક સમયસ્થિતિક પુદ્ગલો કહે છે એવાં પુદ્ગલોની વર્ગણા એક હોય છે અહીં " जाव (યાવત્) " પદથી બે સમયસ્થિતિકથી લઈને સંખ્યાત પર્યન્તના સમયસ્થિતિક પુદ્ગલોને

तिकानां पुद्गलानां वर्गणा एका । अनन्तसमयस्थितिकानां पुद्गलानामभावात्, असख्येयसमयस्थितिकपर्यन्तपुद्गलानां वर्गणाया एकत्वमत्राभिहितमिति ।

अथ भावतः पुद्गलानां वर्गणाया एकत्वमाह-'एगा एगगुणकालगाणं' इत्यादि । एकगुणकालकानाम्-एकेन गुणोगुणनं यस्य स एकगुणः, एकगुणः कालोवर्णो येषां ते एकगुणकालकाः, तेषां यथाभूतानां पुद्गलानां वर्गणा एका । यत आरभ्य कृष्णतरकृष्णतमादिरूपा क्रमश उत्कर्षप्रवृत्तिर्भवति ते भावा एकगुणकालका उच्यन्ते । 'जाव' शब्देन द्विगुणकालकादिसंख्येयगुणकालकान्ताः पुद्गला

हुआ है इन सब पुद्गलों की प्रत्येक की वर्गणा एक २ होती है, अनन्त समय तक की स्थितिवाले पुद्गल होते नहीं है इसीलिये यहां पर पुद्गलों की वर्गणा नहीं कही गई है इसी प्रकार से असंख्यात समय तक की स्थितिवाले पुद्गलों की वर्गणा में भी एकत्व जानना जाहिये ।

अब भाव की अपेक्षा से पुद्गलों की वर्गणा में एकत्व "एगा एगगुण कालगाणं" इस सूत्र द्वारा प्रकट किया गया है-एक गुणा काला वर्ण जिनमें होता है वे एक कालक पुद्गल है इन पुद्गलों की वर्गणा एक है इसी तरह से कृष्णतर कृष्णतम आदि एक गुने कृष्णरूपवाले जो पुद्गल हैं वे सब भी एक गुणकालक पुद्गल है इन पुद्गलों में एक गुणे कृष्णरूप की कृष्णता कृष्णतम आदि रूप से प्रकर्ष वृत्ति होती है अतः ऐसे ये पुद्गल एक गुणकालक कहे गये हैं। यहां पर "जाव" शब्द से द्विगुने कालेरूप वाले तिगुने कालेरूप वाले चौगुने कालेरूप वाले आदि

ગ્રહણ કરવામા આવેલ છે તે પ્રત્યેક પ્રકારના પુદ્ગલોની એક એક વર્ગણા હોય છે. અનન્તસમય સુધીની સ્થિતિવાળા પુદ્ગલો હોતા નથી, અહીં તેમની વર્ગણામા એકત્વ પ્રકટ કરવામા આવ્યું નથી. એજ પ્રમાણે અસખ્યાત સમય સુધીની સ્થિતિવાળા પુદ્ગલોની વર્ગણામાં પણ એકત્વ સમજવું જોઇએ.

હવે "एगा एग गुणकालगाण" ઈત્યાદિ સૂત્ર દ્વારા સૂત્રકાર ભાવની અપેક્ષાએ પુદ્ગલોની વર્ગણામાં એકત્વનું પ્રતિપાદન કરે છે—

એક ગણો કાળો વર્ણ જે પુદ્ગલોમાં હોય છે તે પુદ્ગલોને "એકગુણકાલક પુદ્ગલો" કહે છે. આ પુદ્ગલોની વર્ગણા એક હોય છે એજ પ્રમાણે કૃષ્ણતર, કૃષ્ણતમ આદિ એક ગણા કૃષ્ણવર્ણવાળાં જે પુદ્ગલો છે, તેઓ બધા પણ એક ગુણકાલક પુદ્ગલો છે તે પુદ્ગલોમા એક ગણા કૃષ્ણરૂપની કૃષ્ણતા કૃષ્ણતમ આદિ રૂપે પ્રકર્ષવૃત્તિ વાળી હોય છે તેથી એવા તે પુદ્ગલોને એકગુણકાલક પુદ્ગલો" કહેવામા આવ્યા છે. અહીં "जाव (યાવત્) પદથી બેગણા કાળા રૂપવાળાથી લઇને સંખ્યાત ગણા પર્યન્તના કાળારૂપવાળા પુદ્ગલોને ગ્રહણ

पर्यन्ते, तेषां प्रत्येकं वर्गणा एका बोध्या । तथा–असंख्येयगुणकालकानां पुद्गलानां वर्गणा एका । तथा–अनन्तगुणकालकानां पुद्गलानां वर्गणा एका । एवम् एकगुण नीलादिप्रभृत्यनन्तगुणनीलादि पर्यन्तानां वर्णात्मकानां पुद्गलानाम्, एकगुणसुरभिगन्धाद्यनन्तगुणसुरभिगन्धपर्यन्तानाम्, एकगुणदुरभिगन्धाद्यनन्तगुणदुरभिगन्धपर्यन्तानां च गन्धात्मकानां पुद्गलानाम्, एकगुणतिक्तादिप्रभृत्यनन्तगुणतिक्तादिपर्यन्तानां रसात्मकानां पुद्गलानाम्, तथा–एकगुणकठिनादिप्रभृत्यनन्तगुणकठिनादि पर्यन्तानां स्पर्शात्मकानां पुद्गलानां च प्रत्येकम् एकैका वर्गणा । अमुमेवार्थमाह सूत्रकारः—

पुद्गल से लेकर संख्यातगुणे काले रूपवाले तकके पुद्गल ग्रहण किये गये हैं। सो इन पुद्गलों में से प्रत्येक द्विगुने त्रिगुने आदि संख्यातगुने कृष्ण वर्णवाले पुद्गलों की वर्गणा एक २ है तथा असंख्यातगुणित कृष्णवर्ण वाले पुद्गलों की भी वर्गणा एक है इसी तरह से अनन्तगुणित कृष्ण वर्णवाले पुद्गलों की वर्गणा एक है तथा इसी प्रकार से एक गुने नीलादि से लगाकर अनन्तगुने नीलादि तक के वर्णवाले पुद्गलों की प्रत्येक की वर्गणा एक २ है एक गुने सुरभिगन्ध से लेकर अनन्तगुने सुरभिगन्ध तकके गंधवाले पुद्गलोंकी वर्गणा भी प्रत्येक की एकर है एक गुने तिक्त रससे लेकर अनन्तगुने तिक्त (तीखा) रस तकके रसगुणवाले पुद्गलोंकी प्रत्येक की वर्गणा एक २ है तथा एक गुने कठिन आदि स्पर्श से लेकर अनन्तगुने कठिनादि स्पर्शवाले पुद्गलों की प्रत्येक की वर्गणा एक २ है

કરવામાં આવેલ છે તે પ્રત્યેક પ્રકારના કૃષ્ણવર્ણવાળાં પુદ્ગલોની તથા અસંખ્યાત ગણા કૃષ્ણવર્ણવાળા પુદ્ગલોની વર્ગણા એક એક જ હોય છે એમ સમજવું એજ પ્રમાણે અનન્તગુણિત કૃષ્ણતાવાળાં પુદ્ગલોની વર્ગણામાં પણ એકત્વ સમજવુ એકએ એજ પ્રમાણે એક ગુણિતથી લઈને અનન્ત ગુણિત પર્યન્તના નીલાદિ વર્ણવાળાં પ્રત્યેક પ્રકારના પુદ્ગલોની વર્ગણા એક એક હોય છે આ રીતે લોહિત પીત અને શુક્લવર્ણવાળાં પુદ્ગલોની વગણા વિષે પણ સમજવુ એક ગુણિત સુરભિગંધથી લઈને અનન્તગુણિત પર્યન્તની સુરભિ ગંધવાળાં પ્રત્યેક પ્રકારના પુદ્ગલોની વર્ગણા પણ એક એક હોય છે એક ગુણિત તિક્ત રસથી લઈને અનન્ત ગુણિત પર્યન્તના તિક્તરસવાળાં પુદ્ગલોમાં- પ્રત્યેક પ્રકારના પુદ્ગલોની એક એક વગણા હોય છે. એજ પ્રમાણે અન્ય રસોવાળા પુદ્ગલોની વગણા વિષે પણ સમજવુ એક ગુણિતથી લઈને અનન્ત ગુણિત પર્યન્તના કઠણ સ્પર્શવાળાં પુદ્ગલોની અપેક્ષાએ પ્રત્યેક પ્રકારના પુદ્ગલોની એક એક વગણા હોય છે બીજા સ્પર્શોની વર્ગણાના એકત્વ પણ એજ

"एवं वण्णा गंधा रसा फासा भाणियव्वा।
जाव अनंतगुणलुक्खाणं पोग्गलाणं वग्गणा ॥" इति।

एतानि सर्वाण्यपि भावसूत्राणि षष्ट्यधिकशतद्वयप्रमाणानि भवन्ति। तथाहि-वर्णाः पञ्च, गन्धौ द्वौ, रसाः पञ्च, स्पर्शा अष्टौ, इति मिलिता विंशतिर्भावा भवन्ति, तेषाम् एकगुणकालादितः समारभ्यदशगुणपर्यन्ताभिः, तथा-संख्याताऽसंख्याता-ऽनन्तगुणकालादिरूपाभिश्च, त्रयोदशसंख्याभिर्गुणनेन षष्ट्यधिकशतद्वय (२६०) परिमिता भावभेदा भवन्ति। सम्प्रति तानेव द्रव्यक्षेत्रकालभावानाश्रित्य जघन्यादिभेदभिन्नानां स्कन्धानां वर्गणाया एकत्वमाह-'एगा जहन्नपएसियाणं' इत्यादि। जघन्यप्रदेशिकानाम्-जघन्याः=सर्वस्तोकाश्च ते प्रदेशाः=परमाणवः

इसी बात को सूत्रकार ने "एव वण्णा, गंधा, रसा, फासा भाणियव्वा जाव अणंतगुण लुक्खाणं पोग्गाणं वग्गणा" इस सूत्र पाठ द्वारा प्रकट किया है इन सब भी भाव को लेकर भाव की अपेक्षा से पुद्गलों की वर्गणा के एकत्व का कथन वाले सूत्रों की संख्या २६० हैं वह इस प्रकार से है पांच वर्ण, दो गन्ध, पांच रस और ८ स्पर्श ये सब मिलकर २० भाव होते हैं इन २० भावों के एक गुने काले वर्ण आदि से लेकर दश-गुने काले वर्ण आदि तक १० स्थान और संख्यात, असंख्यात और अनन्त तक ३ स्थान मिलकर १३ स्थान होते हैं २० को १३ से गुणित करने पर २६० भाव सूत्रों की संख्या आ जाती है अब उन्हीं द्रव्य क्षेत्र काल और भाव को आश्रित करके जघन्यादि भेदों वाले स्कन्धों की वर्गणा में एकत्व का कथन किया जाता है "एगा जहन्न पएसियाणं"

પ્રમાણે કથન થવુ. જોઇએ. આ વાતને સૂત્રકારે "एव वण्णा, गधा, रसा, फासा भाणियव्वा जाव अणतगुणलुक्खाण पोग्गलाण वग्गणा" આ સૂત્રપાઠ દ્વારા વ્યક્ત કરી છે. આ બધાં ભાવોને ધ્યાનમાં લઇને ભાવની અપેક્ષાએ પુદ્ગલોની વર્ગણાના એકત્વના કથનવાળા ૨૬૦ સૂત્રો બને છે તે આ પ્રમાણે સમજવા-પાચ વર્ણ, બે ગંધ, પાંચ રસ, અને ૮ સ્પર્શ, એ બધા મળીને ૨૦ ભાવો થાય છે. તે ૨૦ ભાવોના એક ગુણિત કાળો વર્ણ આદિથી લઇને ૧૦ ગુણિત કાળાવર્ણ પર્યન્તના દસ સ્થાન થાય છે અને સખ્યાત, અસંખ્યાત અને અનન્ત સુધીના ત્રણ સ્થાનો તેમા ઉમેરવાથી કુલ ૧૩ સ્થાન થાય છે આ ૧૩ સ્થાનોને ૨૦ ભાવો વડે ગુણવાથી કુલ ૨૬૦ ભાવ સૂત્રો આવી જાય છે હવે એજ દ્રવ્ય, ક્ષેત્ર, કાળ અને ભાવને આધારે જઘન્યાદિ ભેદોવાળા સ્કન્ધોની વર્ગણામાં એકત્વનુ પ્રતિપાદન કરવામાં આવે છે-"एगा जहन्नपएसियाणं" ઇત્યાદિ. જઘન્ય પ્રદેશવાળા સ્કન્ધોની વર્ગણા એક છે.

पर्यन्ते, तेषां प्रत्येकं वर्गणा एका बोध्या। तथा–असंख्येयगुणकालकानां पुद्गलानां वर्गणा एका। तथा–अनन्तगुणकालकानां पुद्गलानां वर्गणा एका। एवम् एकगुण नीलादिप्रभृत्यनन्तगुणनीलादि पर्यन्तानां वर्णात्मकानां पुद्गलानाम्, एकगुणसुरभिगन्धाद्यनन्तगुणसुरभिगन्धपर्यन्तानाम्, एकगुणदुरभिगन्धाद्यनन्तगुणदुरभिगन्धपर्यन्तानां च गन्धात्मकानां पुद्गलानाम्, एकगुणतिक्तादिप्रभृत्यनन्तगुणतिक्तादिपर्यन्तानां रसात्मकानां पुद्गलानाम्, तथा–एकगुणकठिनादिप्रभृत्यनन्तगुणकठिनादि पर्यन्तानां स्पर्शात्मकानां पुद्गलानां च प्रत्येकम् एकैका वर्गणा। अनुयेवार्थमाह सूत्रकार —

पुद्गल से लेकर सङ्ख्यातगुणे काले रूपवाले तकके पुद्गल ग्रहण किये गये हैं। सो इन पुद्गलों में से प्रत्येक द्विगुने त्रिगुने आदि संख्यातगुने कृष्ण वर्णवाले पुद्गलों की वर्गणा एक २ है तथा असंख्यातगुणित कृष्णवर्ण वाले पुद्गलों की भी वर्गणा एक है इसी तरह से अनन्तगुणित कृष्ण वर्णवाले पुद्गलों की वर्गणा एक है तथा इसी प्रकार से एक गुने नीलादि से लगाकर अनन्तगुने नीलादि तक के वर्णवाले पुद्गलों की प्रत्येक की वर्गणा एक २ है एक गुने सुरभिगन्ध से लेकर अनन्तगुने सुरभिगन्ध तकके गंधवाले पुद्गलोंकी वर्गणा भी प्रत्येक की एकर है एक गुने तिक्त रससे लेकर अनन्तगुने तिक्त (तीखा) रस तकके रसगुणवाले पुद्गलोंकी प्रत्येक की वर्गणा एक २ है तथा एक गुने कठिन आदि स्पर्श से लेकर अनन्तगुने कठिनादि स्पर्शवाले पुद्गलों की प्रत्येक की वर्गणा एक २ है

કરવામાં આવેલ [illegible] તે પ્રત્યેક પ્રકારના કૃષ્ણવર્ણવાળાં પુદ્ગલોની તથા અસંખ્યાત ગણાં કૃષ્ણવર્ણવાળાં પુદ્ગલોની વર્ગણા એક એક જ હોય છે એમ સમજવું એજ પ્રમાણે અનન્તગુણિત કૃષ્ણવર્ણવાળાં પુદ્ગલોની વર્ગણામાં પણ એકત્વ સમજવું જોઇએ એજ પ્રમાણે એક ગુણિતથી લઇને અનન્ત ગુણિત પર્યન્તના નીલાદિ વર્ણવાળાં પ્રત્યેક પ્રકારના પુદ્ગલોની વર્ગણા એક એક હોય છે આ રીતે લોહિત પીત અને શુકલવર્ણવાળાં પુદ્ગલોની વર્ગણા વિષે પણ સમજવું એક ગુણિત સુરભિગંધથી લઇને અનન્તગુણિત પર્યન્તની સુરભિ ગંધવાળાં પ્રત્યેક પ્રકારના પુદ્ગલોની વર્ગણા પણ એક એક હોય છે એક ગુણિત તિક્ત રસથી લઇને અનન્ત ગુણિત પર્યન્તના તિક્તરસવાળાં પુદ્ગલોમાં– પ્રત્યેક પ્રકારના પુદ્ગલોની એક એક વર્ગણા હોય છે. એજ પ્રમાણે અન્ય રસોવાળાં પુદ્ગલોની વર્ગણા વિષે પણ સમજવું એક ગુણિતથી લઇને અનન્ત ગુણિત પર્યન્તના કઠણ સ્પર્શવાળાં પુદ્ગલોની અપેક્ષાએ પ્રત્યેક પ્રકારના પુદ્ગલોની એક એક વર્ગણા હોય છે બીજા સ્પર્શોની વર્ગણાના એકત્વનું પણ એજ

पर्यावगाहनकानाम्-असंख्येयप्रदेशावगाढानां पुद्गलानां वर्गणा एका। तथा-अजघन्योत्कर्षावगाहकानाम्=संख्येयासंख्येयप्रदेशावगाढानां पुद्गलानां वर्गणा एका। तथा-जघन्यस्थितिकानाम्-जघन्या=सर्वाल्पासमयमपेक्ष्य स्थितिर्येषां ते जघन्यस्थितिकाः=एकसमयस्थितिकास्तेषां पुद्गलानां वर्गणा एका। तथा-उत्कर्षस्थितिकानाम्=असंख्यातसमयस्थितिकानां पुद्गलानां वर्गणा एका। तथा अजघन्योत्कर्षस्थितिकानां=संख्येयस्थितिकानां पुद्गलानां वर्गणा एका। तथा-

---

होती है सब से कम जिनकी अवगाहना होती है वे जघन्य अवगाहनक हैं ऐसी जघन्य अवगाहनावाले पुद्गल स्कन्ध एकप्रदेश में अवगाढ अवस्थित होते हैं। तथा जो पुद्गल स्कन्ध उत्कृष्ट अवगाहनावाले होते हैं असंख्यातप्रदेशों में अवगाढ होते हैं ऐसे उन पुद्गलों की वर्गणा भी एक होती है तथा जो पुद्गलस्कन्ध अजघन्योत्कर्ष अवगाहना वाले होते हैं संख्यात असंख्यात प्रदेशों में अवगाढ होते हैं ऐसे पुद्गलों की वर्गणा भी एक होती है तथा समय की अपेक्षा लेकर जिनकी स्थिति सब से अल्प है वे जघन्यस्थितिक पुद्गल है ऐसे जघन्य स्थितिवाले पुद्गलों की भी वर्गणा एक है तथा उत्कृष्टस्थितिवाले जो पुद्गल हैं असंख्यात समय की स्थिति वाले जो पुद्गल हैं उन पुद्गलों की वर्गणा भी एक है तथा जो पुद्गल अजघन्योत्कर्ष स्थितिवाले हैं संख्यात समय और असंख्यात समय की स्थितिवाले हैं ऐसे पुद्गलों की भी वर्गणा एक है तथा जो पुद्गल

ગાહના સૌથી ઓછી હોય છે તેમને જઘન્ય અવગાહનક કહે છે એવી જઘન્ય અવગાહનાવાળા પુદ્ગલ સ્કંધ એક પ્રદેશમાં અવગાઢ થઈને રહેલા હોય છે તથા જે પુદ્ગલ સ્કધ ઉત્કૃષ્ટ અવગાહનાવાળા હોય છે, તેઓ અસંખ્યાત પ્રદેશોમા અવગાઢ (રહેલા) હોય છે એવા તે પુદ્ગલોની વર્ગણા પણ એક હોય છે. તથા જે પુદ્ગલ સ્કધ અજઘન્યોત્કર્ષ અવગાહનાવાળા હોય છે, સખ્યાત અસખ્યાત પ્રદેશોમા અવગાઢ હોય છે, એવા પુદ્ગલોની વર્ગણા પણ એક હોય છે તથા સમયની અપેક્ષાએ જેમની સ્થિતિ સૌથી અલ્પકાળની છે, એવાં જઘન્યસ્થિતિક પુદ્ગલોની વર્ગણા પણ એક હોય છે અસખ્યાત સમયની સ્થિતિવાળા જે પુદ્ગલો છે તેમને ઉત્કૃષ્ટસ્થિતિક પુદ્ગલો કહે છે તે ઉત્કૃષ્ટ સ્થિતિવાળા પુદ્ગલોની વર્ગણા પણ એક હોય છે તથા જે પુદ્ગલો અજઘન્યોત્કર્ષ સ્થિતિવાળા છે-એટલે કે સખ્યાત અને અસંખ્યાત સમયની સ્થિતિવાળા જે પુદ્ગલો છે, તેમની વર્ગણા પણ એક હોય છે. તથા જે પુદ્ગલો જઘન્ય

द्विप्रदेशादयः जघन्यप्रदेशाः, जघन्यप्रदेशाः सन्त्येषाम् इति जघन्यप्रदेशिनस्त एव जघन्यप्रदेशिकास्तेषां तथाभूतानां स्कन्धानां — द्व्यणुकादीनां वर्गणा एका। जघन्यप्रदेशिका इति सवभनादेराकृतिगणत्वादिन्प्रत्ययः। तथा—उत्कर्षप्रदेशिका नाम्—उत्कर्षाः=उत्कृष्टसंख्यकाः—परमानन्ता इति यावत् प्रदेशाः=अंशाः येषां ते उत्कर्षप्रदेशिकाः, तेषां तथाभूतानां स्कन्धानां वर्गणा एका। यद्यपि मध्यमानन्ता वर्गणा सन्ति, तथापि अजघन्योत्कर्ष शब्देन व्यवह्रियमाणत्वाद् वर्गणैकत्वं बोध्यमिति। एवम्=अनेन प्रकारेणैव जघन्यावगाहनकानाम् अवगाहन्ते=तिष्ठन्ति पुद्गला यस्यां सा—अवगाहना=क्षेत्रप्रदेशरूपा, जघन्या=सर्वस्तोका अवगाहना येषां ते जघन्यावगाहकाः=एकप्रदेशावगाढास्तेषां पुद्गलानां वर्गणा एका। तथा—उत्कृ

इत्यादि जघन्य प्रदेशवाले स्कन्धों की वर्गणा एक है सब से कम प्रदेशों का नाम जघन्य प्रदेश है ऐसे जघन्य प्रदेश द्विप्रदेश आदि रूप होते हैं ऐसे जघन्य प्रदेश जिन स्कन्धों में होते हैं वे जघन्य प्रदेशिक या जघन्यप्रदेशी स्कन्ध हैं ऐसे उन जघन्य प्रदेशी स्कन्धों की द्व्यणुकादिक स्कन्धों की वर्गणा एक होती है तथा जो उत्कृष्ट प्रदेशों अणुओं वाले स्कन्ध हैं उन स्कन्धों की वर्गणा भी एक है तथा जो स्कन्ध अजघन्योत्कृष्ट प्रदेशवाले हैं—मध्य स्कन्ध रूप हैं उन स्कन्धों की भी वर्गणा एक है यद्यपि इन मध्यम स्कन्धों की वर्गणाएँ अनन्त होती हैं फिर भी ये अजघन्योत्कर्षशब्द से व्यवह्रियमाण—वाच्य होती हैं इसलिये इनमें एकता कही गई है इसी तरह से जो पुद्गल स्कन्ध जघन्य अवगाहनावाले हैं अर्थात् एक प्रदेशावगाही हैं उनकी भी वर्गणा एक होती है जिसमें पुद्गल रहते हैं उसका नाम अवगाहना है यह अवगाहना क्षेत्र प्रदेशरूप

સૌથી ઓછાં પ્રદેશને જઘન્યપ્રદેશ કહે છે એવા જઘન્યપ્રદેશ દ્વિપ્રદેશ આદિ રૂપ હોય છે એવાં જઘન્ય પ્રદેશો જે સ્કન્ધોમાં હોય છે, તે સ્કંધોને જઘન્યપ્રદેશિક અથવા જઘન્યપ્રદેશી સ્કંધો કહે છે એવાં તે જઘન્યપ્રદેશી સ્કંધોની બે આદિ અણુવાળા સ્કંધોની વર્ગણા એક હોય છે તથા ઉત્કૃષ્ટ પ્રદેશોવાળા સ્કંધોની વર્ગણા પણ એક હોય છે તથા જે સ્કંધો અજઘન્યોત્કૃષ્ટ પ્રદેશવાળા હોય છે એટલે કે મધ્યમ સ્કંધરૂપ હોય છે, તે સ્કંધોની વર્ગણા પણ એક હોય છે જો કે તે મધ્યમ સ્કંધોની વર્ગણાઓ અનંત હોય છે છતાં પણ તે અજઘન્યોત્કર્ષ શબ્દથી વ્યવહ્રિયમાણ (વાચ્ય) થાય છે તેથી તેઓમાં એકતા કહેવામાં આવી છે એજ પ્રમાણે જે પુદ્ગલ સ્કંધ જઘન્ય અવગાહનાવાળા છે એટલે કે એક પ્રદેશાવગાહી છે તેમની પણ એક વર્ગણા હોય છે જેમાં પુદ્ગલો રહે તેનું નામ અવગાહના છે તે અવગાહના ક્ષેત્રપ્રદેશરૂપ હોય છે. જેમની અવ

पावगाहनकानाम्-असंख्येयप्रदेशावगाढानां पुद्गलानां वर्गणा एका। तथा-अजघन्योत्कर्षावगाहकानाम्=संख्येयासंख्येयप्रदेशावगाढानां पुद्गलानां वर्गणा एका। तथा-जघन्यस्थितिकानाम्-जघन्या=सर्वाल्पासमयमपेक्ष्य स्थितिर्येषां ते जघन्यस्थितिकाः=एकसमयस्थितिकास्तेषां पुद्गलानां वर्गणा एका। तथा-उत्कर्षस्थितिकानाम्=असंख्यातसमयस्थितिकानां पुद्गलानां वर्गणा एका। तथा अजघन्योत्कर्षस्थितिकानां=संख्येयस्थितिकानां पुद्गलानां वर्गणा एका। तथा-

---

होती है सब से कम जिनकी अवगाहना होती है वे जघन्य अवगाहनक हैं ऐसी जघन्य अवगाहनावाले पुद्गल स्कन्ध एकप्रदेश में अवगाढ अवस्थित होते हैं। तथा जो पुद्गल स्कन्ध उत्कृष्ट अवगाहनावाले होते हैं असंख्यातप्रदेशों में अवगाढ होते हैं ऐसे उन पुद्गलों की वर्गणा भी एक होती है तथा जो पुद्गलस्कन्ध अजघन्योत्कर्ष अवगाहना वाले होते हैं संख्यात असंख्यात प्रदेशों में अवगाढ होते हैं ऐसे पुद्गलों की वर्गणा भी एक होती है तथा समय की अपेक्षा लेकर जिनकी स्थिति सब से अल्प है वे जघन्यस्थितिक पुद्गल है ऐसे जघन्य स्थितिवाले पुद्गलों की भी वर्गणा एक है तथा उत्कृष्टस्थितिवाले जो पुद्गल हैं असंख्यात समय की स्थिति वाले जो पुद्गल हैं उन पुद्गलों की वर्गणा भी एक है तथा जो पुद्गल अजघन्योत्कर्ष स्थितिवाले हैं संख्यात समय और असंख्यात समय की स्थितिवाले हैं ऐसे पुद्गलों की भी वर्गणा एक है तथा जो पुद्गल

गाहना सौथी ओछी होय छे तेमने जघन्य अवगाहनक कहे छे एवी जघन्य अवगाहनावाळा पुद्गल स्कंध एक प्रदेशमां अवगाढ थईने रहेला होय छे तथा जे पुद्गल स्कंध उत्कृष्ट अवगाहनावाळा होय छे, तेओ असंख्यात प्रदेशोमा अवगाढ (रहेला) होय छे एवा ते पुद्गलोनी वर्गणा पण एक होय छे. तथा जे पुद्गल स्कंध अजघन्योत्कर्ष अवगाहनावाळा होय छे, संख्यात असंख्यात प्रदेशोमा अवगाढ होय छे, एवा पुद्गलोनी वर्गणा पण एक होय छे तथा समयनी अपेक्षाए जेमनी स्थिति सौथी अल्पकाळनी छे, एवां जघन्यस्थितिक पुद्गलोनी वर्गणा पण एक होय छे असंख्यात समयनी स्थितिवाळां जे पुद्गलो छे तेमने उत्कृष्टस्थितिक पुद्गलो कहे छे ते उत्कृष्ट स्थितिवाळा पुद्गलोनी वर्गणा पण एक होय छे तथा जे पुद्गलो अजघन्योत्कर्ष स्थितिवाळा छे-एटले के संख्यात अने असंख्यात समयनी स्थितिवाळा जे पुद्गलो छे, तेमनी वर्गणा पण एक होय छे तथा जे पुद्गलो जघन्य

द्विप्रदेशादयः जघन्यप्रदेशाः, जघन्यप्रदेशाः सन्त्येषाम् इति जघन्यप्रदेशिनस्त एव जघन्यप्रदेशिकास्तेषां तथाभूतानां स्कन्धानां – द्व्यणुकादीनां वर्गणा एका। जघन्यप्रदेशिका इति सर्वधनादेराकृतिगणत्वादिन्प्रत्ययः। तथा–उत्कर्षप्रदेशिकानाम्–उत्कर्षा=उत्कृष्टसंख्यकाः–परमानन्ता इति यावत् प्रदेशाः=अणवो येषां ते उत्कर्षप्रदेशिकाः, तेषां तथाभूतानां स्कन्धानां वर्गणा एका। एतेषां यद्यप्यनन्ता वर्गणाः सन्ति, तथापि अजघन्योत्कर्ष शब्देन व्यवह्रियमाणत्वाद् वर्गणैकत्वं बोध्यमिति। एवम्=अनेन प्रकारेणैव जघन्यावगाहनकानाम् अवगाहन्ते=तिष्ठन्ति पुद्गला यस्यां सा–अवगाहना=क्षेत्रप्रदेशरूपा, जघन्या=सर्वस्तोका अवगाहना येषां जघन्यावगाहकाः=एकप्रदेशावगाढास्तेषां पुद्गलानां वर्गणा एका। तथा–उत्क

इत्यादि जघन्य प्रदेशवाले स्कन्धों की वर्गणा एक है सब से कम प्रदेशों का नाम जघन्य प्रदेश है ऐसे जघन्य प्रदेश द्विप्रदेश आदि रूप होते हैं ऐसे जघन्य प्रदेश जिन स्कन्धों में होते हैं वे जघन्य प्रदेशिक या जघन्यप्रदेशी स्कन्ध हैं ऐसे उन जघन्य प्रदेशी स्कन्धों की द्व्यणुकादिक स्कन्धों की वर्गणा एक होती है तथा जो उत्कृष्ट प्रदेशों अणुओं वाले स्कन्ध हैं उन स्कन्धों की वर्गणा भी एक है तथा जो स्कन्ध अजघन्योत्कृष्ट प्रदेशवाले हैं–मध्य स्कन्ध रूप हैं उन स्कन्धों की भी वर्गणा एक है यद्यपि इन मध्यम स्कन्धों की वर्गणाएं अनन्त होती हैं फिर भी ये अजघन्योत्कर्ष शब्द से व्यवह्रियमाण–वाच्य होती हैं इसलिये इनमें एकता कही गई है इसी तरह से जो पुद्गल स्कन्ध जघन्य अवगाहनावाले हैं अर्थात् एक प्रदेशावगाही हैं उनकी भी वर्गणा एक होती है जिसमें पुद्गल रहते हैं उसका नाम अवगाहना है यह अवगाहना क्षेत्र प्रदेशरूप

સૌથી ઓછાં પ્રદેશને જઘન્યપ્રદેશ કહે છે એવા જઘન્યપ્રદેશ દ્વિપ્રદેશ આદિ રૂપ હોય છે એવા જઘન્ય પ્રદેશો જે સ્કન્ધોમાં હોય છે તે સ્કંધોને જઘન્યપ્રદેશિક અથવા જઘન્યપ્રદેશી સ્કંધો કહે છે એવાં તે જઘન્યપ્રદેશી સ્કંધોની બે આદિ અણુવાળા સ્કંધોની વર્ગણા એક હોય છે તથા ઉત્કૃષ્ટ પ્રદેશોવાળા સ્કંધોની વર્ગણા પણ એક હોય છે તથા જે સ્કંધો અજઘન્યોત્કૃષ્ટ પ્રદેશવાળા હોય છે એટલે કે મધ્યમ સ્કંધરૂપ હોય છે, તે સ્કંધોની વર્ગણા પણ એક હોય છે જો કે તે મધ્યમ સ્કંધોની વર્ગણાઓ અનંત હોય છે છતાં પણ તે અજઘન્યોત્કર્ષ શબ્દથી વ્યવહ્રિયમાણ (વાચ્ય) થાય છે તેથી તેમાં એકતા કહેવામાં આવી છે એજ પ્રમાણે જે પુદ્ગલ સ્કંધ જઘન્ય અવગાહનાવાળા છે–એટલે કે એક પ્રદેશાવગાહી છે તેમની પણ એક વર્ગણા હોય છે જેમાં પુદ્ગલો રહે તેનું નામ અવગાહના છે તે અવગાહના ક્ષેત્રપ્રદેશરૂપ હોય છે. એમની અવ

सामान्यस्कन्धवर्गणैकत्वाधिकारः प्रस्तुत, अत एव अजघन्योत्कर्षप्रदेशिकस्य अजघन्योत्कर्षप्रदेशावगाढस्य स्कन्धविशेषस्यैकत्वमाह—

मूलम्—एगे जंबुद्दीवे दीवे सव्वदीवसमुद्दाणं जाव अद्धंगुलं च किंचि विसेसाहिए परिक्खेवेणं ॥ सू० ५४ ॥

छाया—एको जम्बूद्वीपो द्वीपः सर्वद्वीपसमुद्राणां यावत् अर्द्धाङ्गुलं च किञ्चिद्विशेषाधिकं परिक्षेपेण ॥ सू० ५४ ॥

टीका—'एगे जंबुद्दीवे' इत्यादि—

जम्बूद्वीपः-जम्ब्वा=जम्बूवृक्षेण उपलक्षितो द्वीपः – जम्बूद्वीपनामको द्वीपः, कीदृशः सः ? इत्याह-सर्वद्वीपसमुद्राणां 'जाव' यावत्, अत्र-यावच्छब्देन-"सव्वब्भंतरए सव्वखुड्डाए वट्टे तेल्लापूयसंठाणसंठिए एगं जोयणसयसहस्सं आयामविक्खंभेणं, तिन्नि जोयणसयसहस्साइं सोलससहस्साइं दोन्नि सयाइं सत्तावीसाइं तिन्निकोसा अट्ठावीसं धणुसयं तेरसअंगुलाइं" इति पाठः संग्राह्यः । सर्वाभ्यन्तरकः=सर्वद्वीपसमुद्रमध्यस्थितः सर्वक्षुद्रकः=सकलद्वीपापेक्षया लघुः, वृत्तो=वर्तुलः, गोलाकारः, तैलापूपसंस्थानसंस्थितः-तैलापूपाकृतिकः, तथा-आयामविष्कम्भेण=

सामान्य स्कन्धवर्गणा की एकता प्रस्तुत है इसलिये जो स्कन्ध अजघन्योत्कर्ष प्रदेशोंवाला है-संख्यात असंख्यातप्रदेशोंवाला है और इसी से जो अजघन्योत्कर्ष प्रदेशावगाढ है लोक के संख्यात असंख्यात-प्रदेशों में अवस्थित है-ऐसे उस स्कन्ध विशेष की एकता का कथन किया जाता है—" एगे जंबुद्दीवे दीवे " इत्यादि ॥ ५४ ॥

टीकार्थ—जम्बू वृक्ष से उपलक्षित यह जम्बूद्वीप नाम का द्वीप जो कि समस्त द्वीप और समुद्रों के मध्यमें है तथा जिसका विस्तार एक लाख योजन का है और जो समस्तद्वीपों की अपेक्षा लघु है आकार जिसका गोल है इसी से जो पुए जैसी आकृतिवाला है परिधि

સામાન્ય સ્કંધવર્ગણાની એકતાનુ નિરૂપણ ચાલી રહ્યુ છે, તેથી જે સ્કંધ અજઘન્યોત્કર્ષ પ્રદેશોવાળો છે. સંખ્યાત અસંખ્યાત પ્રદેશોવાળો છે અને તેથી જ જે અજઘન્યોત્કર્ષ પ્રદેશાવગાઢ છે લોકના સંખ્યાત અસંખ્યાત પ્રદેશોમાં જે અવસ્થિત (રહેલો) છે, એવા તે સ્કંધવિશેષની એકતાનુ કથન કરવામાં આવે છે " एगे जंबुद्दीवे " ઈત્યાદિ ॥ ૫૪ ॥

ટીકાર્થ—જંબૂદ્વીપ એક છે જંબૂવૃક્ષથી ઉપલક્ષિત આ જંબૂ નામનો દ્વીપ કે જે સમસ્ત દ્વીપો અને સમુદ્રોની મધ્યમાં આવેલો છે તથા જેનો વિસ્તાર એક લાખ યોજનનો છે, જે બધા દ્વીપો કરતા નાનો છે, જે માલ-

जघन्यगुणकालकानाम्=जघन्येन=जघन्यसंख्याविशेषेण-एकसंख्यया गुणो-गुणने यस्य स एकगुणः, स कालः=कृष्णो वर्णो येषां ते जघन्यगुणकालकास्तेषां वर्गणा एका । तथा-उत्कर्षगुणकालकानाम् अजघन्योत्कर्षगुणकालकानां च वर्गणा एकैका बोध्या । एवम्-अनेन प्रकारेण जघन्योत्कर्षाजघन्योत्कर्षभेदे -नीलादिवर्णवतां सुरभ्यादिगन्धवतां तिक्तादिरसवतां कठिनादिरूक्षान्तस्पर्शवतां च पुद्गलानां मध्ये एकैका वर्गणा बोध्येति ॥ सू० ५३ ॥

जघन्यगुण कृष्णवर्णवाले हैं उनकी भी वर्गणा एक है अर्थात् जिन पुद्गलों में पुद्गलस्कन्धों में कृष्णवर्ण एक गुना ही है ऐसे उन पुद्गलस्कन्धों की भी वर्गणा एक ही है यद्यपि ऐसे पुद्गलस्कन्धों की वर्गणाएं अनन्त भी होती है परन्तु फिर भी वे जघन्यगुण कृष्णवर्ण " इस एक शब्द के द्वारा वाच्य होने के समय सामान्यतः एक कही गई है। तथा जो पुद्गलस्कन्ध उत्कृष्टरूप से कृष्णवर्ण वाले हैं और जो पुद्गलस्कन्ध संख्यातगुने असंख्यातगुने कृष्णवर्णवाले हैं-उनकी भी वर्गणा सामान्यतः एक २ है। इसी प्रकार से जो पुद्गलस्कन्ध जघन्य उत्कर्ष और अजघन्योत्कर्ष रूप से नीलादि वर्ण वाले हैं जघन्य सुरभि आदि गन्धगुणवाले हैं तिक्तादि रस वाले हैं और कठिनादिरूक्षान्तस्पर्शवाले हैं एसे उन पुद्गलस्कन्धों की प्रत्येक की एक २ वर्गणा है ऐसा जानना चाहिये ॥ सू०५३ ॥

जघन्यगुणित कृष्णवर्णवाळा छे-એટલે કે જે પુદ્ગલોમાં પુદ્ગલ સ્કંધોમાં કૃષ્ણવર્ણ એકગણો જ છે એવા પુદ્ગલ સ્કંધોની વર્ગણા પણ એક જ હોય છે જો કે તે પુદ્ગલ સ્કંધોની અનંત વર્ગણાઓ પણ હોઈ શકે છે છતાં પણ તેઓ 'જઘન્યગુણિત કૃષ્ણવર્ણ' આ એક શબ્દ દ્વારા વાચ્ય હોવાને લીધે તેમાં સામાન્યની અપેક્ષાએ એકત્વ પ્રકટ કરવામાં આવ્યું છે તથા જે પુદ્ગલ સ્કંધ ઉત્કૃષ્ટરૂપે કૃષ્ણવર્ણવાળા છે-એટલે કે જે પુદ્ગલ સ્કંધ સંખ્યાતગણા અને અસંખ્યાતગણા કૃષ્ણવર્ણવાળા હોય છે તેમની વર્ગણા પણ સામાન્યતઃ એક હોય છે એજ પ્રમાણે જે પુદ્ગલ સ્કંધ જઘન્ય, ઉત્કૃષ્ટ અને અજઘન્યોત્કર્ષ રૂપે નીલાદિ વર્ણવાળા હોય છે જઘન્ય સુરભિ આદિ ગંધવાળા હોય છે તિક્તાદિ રસવાળા હોય છે, અને કઠિનથી લઈને રૂક્ષ પર્યન્તના સ્પર્શવાળા હોય છે તે પુદ્ગલ સ્કંધોની પ્રત્યેકની એક એક વર્ગણા હોય છે એમ સમજવું ॥ સૂ૦૫૩ ॥

सामान्यस्कन्धवर्गणैकत्वाधिकारः प्रस्तुत', अत एव अजघन्योत्कर्षप्रदेशिकस्य अजघन्योत्कर्षप्रदेशावगाढस्य स्कन्धविशेषस्यैकत्वमाह—

मूलम्—एगे जंबुद्दीवे दीवे सव्वदीवसमुद्दाणं जाव अद्धंगुलं च किंचि विसेसाहिए परिक्खेवेणं ॥ सू० ५४ ॥

छाया—एको जम्बूद्वीपो द्वीपः सर्वद्वीपसमुद्राणां यावत् अर्द्धाङ्गुलं च किञ्चिद्विशेषाधिकं परिक्षेपेण ॥ सू० ५४ ॥

टीका—'एगे जंबुदीवे' इत्यादि—

जम्बूद्वीपः-जम्ब्वा=जम्बूवृक्षेण उपलक्षितो द्वीपः - जम्बूद्वीपनामको द्वीपः, कीदृशः सः ? इत्याह-सर्वद्वीपसमुद्राणां 'जाव' यावत्, अत्र-यावच्छब्देन-"सव्वब्भंतरए सव्वखुड्डाए वट्टे तेल्लापूयसंठाणसंठिए एगं जोयणसयसहस्सं आयामविक्खंभेणं, तिन्नि जोयणसयसहस्साइं सोलससहस्साइं दोन्नि सयाइं सत्तावीसाइं तिन्निकोसा अट्ठावीसं धणुसयं तेरसअंगुलाइं" इति पाठः संग्राह्यः। सर्वाभ्यन्तरकः=सर्वद्वीपसमुद्रमध्यस्थितः सर्वक्षुद्रकः=सकलद्वीपापेक्षया लघुः, वृत्तो=वर्तुलः, गोलाकारः, तैलापूपसंस्थानसंस्थितः-तैलापूपाकृतिकः, तथा-आयामविष्कम्भेण=

सामान्य स्कन्धवर्गणा की एकता प्रस्तुत है इसलिये जो स्कन्ध अजघन्योत्कर्ष प्रदेशोंवाला है-संख्यात असंख्यातप्रदेशोंवाला है और इसी से जो अजघन्योत्कर्ष प्रदेशावगाढ है लोक के संख्यात असंख्यातप्रदेशों में अवस्थित है-ऐसे उस स्कन्ध विशेष की एकता का कथन किया जाता है—"एगे जंबुद्दीवे दीवे" इत्यादि ॥ ५४ ॥

टीकार्थ—जम्बू वृक्ष से उपलक्षित यह जम्बूद्वीप नाम का द्वीप जो कि समस्त द्वीप और समुद्रों के मध्यमें है तथा जिसका विस्तार एक लाख योजन का है और जो समस्तद्वीपों की अपेक्षा लघु है आकार जिसका गोल है इसी से जो पुए जैसी आकृतिवाला है परिधि

સામાન્ય સ્કંધવર્ગણાની એકતાનુ નિરૂપણ ચાલી રહ્યુ છે, તેથી જે સ્કંધ અજઘન્યોત્કર્ષ પ્રદેશોવાળો છે સંખ્યાત અસંખ્યાત પ્રદેશોવાળો છે અને તેથી જ જે અજઘન્યોત્કર્ષ પ્રદેશાવગાઢ છે લોકના સંખ્યાત અસંખ્યાત પ્રદેશોમા જે અવસ્થિત (રહેલો) છે, એવા તે સ્કંધવિશેષની એકતાનુ કથન કરવામાં આવે છે "एगे जंबुद्दीवे" ઇત્યાદિ ॥ ૫૪ ॥

ટીકાર્થ—જંબૂદ્વીપ એક છે જંબૂવૃક્ષથી ઉપલક્ષિત આ જંબૂ નામનો દ્વીપ કે જે સમસ્ત દ્વીપો અને સમુદ્રોની મધ્યમા આવેલો છે તથા જેનો વિસ્તાર એક લાખ યોજનનો છે, જે બધા દ્વીપો કરતા નાનો છે, જે માલ-

दैर्घ्यविस्ताराभ्याम् एकं योजनशतसहस्रम्=एकलक्षयोजनप्रमितं, तथा-परिक्षेपेण=परिधिना त्रीणि योजनशतसहस्राणि=त्रीणि लक्षाणि षोडशसहस्राणि द्वे शते सप्तविंशतिश्च योजनानि, त्रीन् क्रोशान्, अष्टाविंशति धनुःशतम्=अष्टाविंशत्यधिकैकशतधनूंषि, त्रयोदशाङ्गुलानि, तथा-किंचिद्विशेषाधिकम् अर्द्धाङ्गुलं च यावत्प्रमितः, स एवंविधो जम्बूद्वीपः=मध्यजम्बूद्वीपः एकः=एकत्वसंख्याविशिष्टः । यद्यपि जम्बूद्वीपा अनेकेऽपि सन्ति, तथापि एतत्प्रमाणविशिष्टो जम्बूद्वीप एक एवेति॥५४॥

जम्बूद्वीप उक्तः । तस्य प्ररूपकश्च भगवान् महावीर इति तस्यैकत्वमाह—

मूलम्—एगे समणे भगवं महावीरे इमीसे ओसप्पिणीए चउव्वीसाए तित्थगराणं चरमतित्थयरे सिद्धे बुद्धे मुत्ते जाव सव्वदुक्खप्पहीणे ॥ सू० ५५ ॥

छाया—एकः श्रमणो भगवान् महावीरोऽस्यामवसर्पिण्यां चतुर्विंशतेस्तीर्थकराणां चरमतीर्थंकरः सिद्धो बुद्धो मुक्तो यावत् सर्वदुःखप्रहीणः ॥ ५५ ॥

टीका—'एगे समणे' इत्यादि—

अस्याम् अवसर्पिण्याम् चतुर्विंशतितीर्थंकराणां मध्ये चरमतीर्थंकरः कीदृशः स ? इत्याह-श्रमणः-श्राम्यति=तपस्यतीति श्रमणः, भगवान्-समग्रैश्वर्यादि

जिसकी ३१६२२७ योजन ३ कोश १२८ धनुष और १३॥ अंगुल की है एकत्व संख्याविशिष्ट है यद्यपि जम्बूद्वीप अनेक भी हैं परन्तु ऐसे प्रमाणवाला जम्बूद्वीप एक ही है ॥ सू० ५४ ॥

इस जम्बूद्वीपके प्ररूपक भगवान् महावीर हैं इनमें एकता का कथन किया जाता है–' एगे समणे भगवं महावीरे " इत्यादि ॥ ५५ ॥

टीकार्थ—इस अवसर्पिणीकाल में २४ तीर्थंकर हुए हैं उनमें ये महावीर अन्तिम तीर्थंकर हैं इन्होंने अन्यजनसे असाधारण उत्कृष्ट

पुवाना જેવા ગોળ આકારનો છે, જેનો પરિધિ ૩૧૬૨૨૭ યોજન ૩ કોશ ૧૨૮ ધનુષ અને ૧૩॥ આંગળ પ્રમાણ છે, તે જબૂદ્વીપમાં અહીં એકત્વ પ્રકટ કરવામાં આવ્યું છે જો કે જબૂદ્વીપ અનેક પણ છે, પરન્તુ આ પ્રમાણવાળો જબૂદ્વીપ તો એક જ છે ॥ સૂ૦ ૫૪ ॥

મહાવીર ભગવાને આ જબૂદ્વીપની પ્રરૂપણા કરી છે તે મહાવીર પ્રભુમાં એકત્વની પ્રરૂપણા કરવામાં આવે છે—

એગે સમણે ભગવ મહાવીરે " ઇત્યાદિ ॥ ૫૫ ॥

ટીકાર્થ—આ અવસર્પિણીકાળમાં ૨૪ તીર્થંકરો થઈ ગયા છે મહાવીર પ્રભુ તે ૨૪ તીર્થંકરોમાં અન્તિમ તીર્થંકર છે તેમણે ઉગ્ર તપસ્યાઓ કરી

मान्। तथा-महावीरः-विशेषेण ईरयति-मोक्षं प्रति गच्छति, गमयति वाऽन्यान् जावानिति, प्रेरयति-कर्माणि निराकरोति वा, पराक्रमयति वा रागादिशत्रून् प्रति यः स वीरः। यद्वा-विदारयति कर्माणि यः, तपसा वा विराजते यः, तपोवीर्येण वा युक्तश्च यः स निरुक्तिवशाद् वीरः। महांश्चासौ वीरश्च महावीरः। महत्त्वं चास्येतरवीरापेक्षया बोध्यम्।

एवम्भूतश्चरमतीर्थकरः एक एव। सिद्धः-कृतकृत्यो जातः, बुद्धः=केवलज्ञानालोकेन सर्वं बोध्यं वस्तु बुद्धवान्, मुक्तः=सकलकर्मभ्यो मुक्तिं प्राप्तः, यावत्करणात्-परिनिर्वृत =कर्मकृतविकारविरहात् स्वस्थीभूतः, अत एव-सर्वदुःखप्रहीणः-

---

तपों को तपा है इसलिये इन्हें श्रमण कहा है ये सम्पूर्ण प्रकारके ऐश्वर्य से सम्पन्न थे इसलिये इन्हें भगवान् कहा गया है इन्होंने समस्त कर्मों को नष्ट कर मोक्ष प्राप्त किया है अथवा अन्यजीवों को मोक्षप्राप्त करने के लिये प्रेरणा दी है या अपने उपदेशद्वारा अन्यजीवों को मुक्ति स्थान में पहुंचाया है या रागादिक शत्रुओं को इन्होने परास्त किया है इसलिये ये महावीरपद से विभूषित हुए हैं। उक्तं च—

विदारयति कर्माणि तपसा वा विराजते।
तपो वीर्येण युक्तश्च यः स वीर इत्युच्यते ॥

इन्हें जो महान् वीर कहा गया है वह अन्यवीरों की अपेक्षा इसी विशिष्टता को लेकर कहा गया है इस प्रकार से विशेषणों वाले चरमतीर्थंकर एक ही है ये चरमतीर्थकर सिद्ध कृतकृत्य हुए हैं बुद्ध केवलज्ञानरूप आलोक से इन्होंने सम्पूर्ण बोध्य वस्तु को जान लिया है

હતી, તેથી તેમને શ્રમણ કહ્યા છે. તેઓ બધા પ્રકારના ઐશ્વર્યથી સંપન્ન હતા, તેથી તેમને ભગવાન કહ્યા છે તેમણે સમસ્ત કર્મોનો સર્વથા ક્ષય કરીને મોક્ષ પ્રાપ્ત કર્યો છે, તથા અન્ય જીવોને મોક્ષપ્રાપ્તિનો માર્ગ બતાવ્યો છે, અથવા રાગાદિક શત્રુઓનો તેમણે પરાજય કર્યો છે, તેથી તેમને મહાવીર કહે છે કહ્યું પણ છે કે—" विदारयति कर्माणि तपसा वा विराजते। तपोवीर्येण युक्तश्च यः स वीर इत्युच्यते" અન્ય વીરો કરતાં આ પ્રકારની જે વિશિષ્ટતાઓથી તેઓ યુક્ત હતા, તે વિશિષ્ટતાઓને કારણે જ તેમને મહાવીર કહ્યા છે. આ પ્રકારના વિશેષણોવાળા ચરમ તીર્થંકર એક જ છે તેઓ સિદ્ધ, બુદ્ધ, મુક્ત, પરિનિવૃત અને સમસ્ત કર્મોનો અંત કરનારા બન્યા છે. સિદ્ધપદની પ્રાપ્તિ કરીને તેઓ કૃતકૃત્ય થઈ ગયેલા હોવાથી તેમને સિદ્ધ કહ્યા છે. કેવળજ્ઞાનરૂપ જ્ઞાનના પ્રભાવથી તેમણે બોધ્ય વસ્તુને સંપૂર્ણ રૂપે જાણેલી હોવાથી

दैर्घ्यविस्ताराभ्याम् एकं योजनशतसहस्रम्=एकलक्षयोजनप्रमितं, तथा-परिक्षेपेण=परिधिना त्रीणि योजनशतसहस्राणि=त्रीणि लक्षाणि षोडशसहस्राणि द्वे शते सप्तविंशतिश्च योजनानि, त्रीन् क्रोशान्, अष्टाविंशति धनुश्शतम्=अष्टाविंशत्यधिकैकशतधनूंषि, त्रयोदशाङ्गुलानि, तथा-किंचिद्विशेषाधिकम् अर्द्धाङ्गुलं च यावत्प्रमितः, स एवंविधो जम्बूद्वीपः=मध्यजम्बूद्वीपः एकः=एकत्वसंख्याविशिष्टः। यद्यपि जम्बूद्वीपा अनेकेऽपि सन्ति, तथापि एतत्प्रमाणविशिष्टो जम्बूद्वीप एक एवेति॥५४॥

जम्बूद्वीप उक्तः। तस्य प्ररूपकश्च भगवान् महावीर इति तस्यैकत्वमाह—

मूलम्—एगे समणे भगवं महावीरे इमीसे ओसप्पिणीए चउव्वीसाए तित्थगराणं चरमतित्थयरे सिद्धे बुद्धे मुत्ते जाव सव्वदुक्खप्पहीणे॥ सू० ५५॥

छाया—एकः श्रमणो भगवान् महावीरोऽस्यामवसर्पिण्यां चतुर्विंशतेस्तीर्थंकराणां चरमतीर्थंकरः सिद्धो बुद्धो मुक्तो यावत् सर्वदुःखप्रहीणः॥ ५५॥

टीका—'एगे समणे' इत्यादि—

अस्याम् अवसर्पिण्याम् चतुर्विंशतितीर्थंकराणां मध्ये चरमतीर्थंकरः कीदृशः सः? इत्याह-श्रमणः-श्राम्यति=तपस्यतीति श्रमणः, भगवान्-समग्रैश्वर्यादि

जिसकी ३१६२२७ योजन ३ कोश १२८ धनुष और १३॥ अंगुल की है एकत्व संख्याविशिष्ट है यद्यपि जम्बूद्वीप अनेक भी हैं परन्तु ऐसे प्रमाणवाला जम्बूद्वीप एक ही है॥ सू० ५४॥

इस जम्बूद्वीपके प्ररूपक भगवान महावीर हैं इनमें एकता का कथन किया जाता है—'एगे समणे भगवं महावीरे" इत्यादि॥ ५५॥

टीकार्थ—इस अवसर्पिणीकाल में २४ तीर्थंकर हुए हैं उनमें ये महावीर अन्तिम तीर्थंकर हैं इन्हों ने अन्यजनसे असाधारण उत्कृष्ट

पुवाना जेवा गोળ આકારનો છે, એનો પરિધિ ૩૧૬૨૨૭ યોજન ૩ કોશ ૧૨૮ ધનુષ અને ૧૩॥ આંગળ પ્રમાણ છે તે જબૂદ્વીપમાં અહીં એકત્વ પ્રકટ કરવામાં આવ્યુ છે જો કે જબૂદ્વીપ અનેક પણ છે, પરન્તુ આ પ્રમાણવાળો જબૂદ્વીપ તો એક જ છે॥ સૂ૦૫૪॥

મહાવીર ભગવાને આ જબૂદ્વીપની પ્રરૂપણા કરી છે તે મહાવીર પ્રભુમાં એકત્વની પ્રરૂપણા કરવામાં આવે છે—

એગે સમણે ભગવં મહાવીરે" ઇત્યાદિ॥ ૫૫॥

ટીકાર્થ—આ અવસર્પિણીકાળમાં ૨૪ તીર્થંકરો થઈ ગયા છે મહાવીર પ્રભુ તે ૨૪ તીર્થંકરોમાં અન્તિમ તીર્થંકર છે તેમણે દુષ્કર તપસ્યાઓ કરી

टीका—' अणुत्तरोववाइयाणं ' इत्यादि—

अनुत्तरोपपातिकानाम्—अनन्तरत्वात् अनुत्तराणि=विजयादिविमानानि तत्र उपपातः—अनुत्तरोपपातः, स विद्यते येषां ते अनुत्तरोपपातिकास्तेषां तथाभूतानां देवानाम् ऊर्ध्वमुच्चत्वेन प्रमाणम् एका रत्निः प्रज्ञप्ता ॥ सू० ५६ ॥

अनन्तरमनुत्तरोपपातिकदेवानामूर्ध्वोच्चत्वेनैकत्वमुक्तम् । तस्माद् देवाधिकारः प्रस्तुतः । अत एव—सम्प्रति नक्षत्रदेवानामेकत्वमाह—

मूलम्—अद्दाणक्खत्ते एगतारे पण्णत्ते, चित्ताणक्खत्ते एगतारे पण्णत्ते, सातीणक्खत्ते एगतारे पण्णत्ते ॥सू० ५७॥

छाया—आर्द्रानक्षत्रमेकतारं प्रज्ञप्तम्, चित्रानक्षत्रमेकतारं प्रज्ञप्तम्, स्वातीनक्षत्रमेकतारं प्रज्ञप्तम् ॥ सू० ५७ ॥

टीका—' अद्दाणक्खत्ते ' इत्यादि—

निवासी देवों के शरीर का प्रमाण कहते हैं—

" अणुत्तरोववाइयाणं देवाणं " इत्यादि ॥ ५६ ॥

टीकार्थ—अनुत्तर विमानवासी देवों के शरीर की ऊँचाई का प्रमाण एक रत्नि है विजयआदि विमानों का नाम अनुत्तर है इन अनुत्तरों में जिनका उपपात है वह अनुत्तरोपपात है यह अनुत्तरोपपात जिनको होता है वे अनुत्तरोपपातिक हैं ऐसे इन देवों का ऊँचाई की अपेक्षा से शारीरिक प्रमाण एक रत्नि का कहा गया है इस अपेक्षा से इन सब में एकता है ॥ सू० ५६ ॥

देवों का अधिकार प्रस्तुत होने के कारण अब सूत्रकार नक्षत्रदेवों में एकता प्रकट करते हैं—

સૂત્રકાર કથન કરે છે—" अणुत्तरोववाइयाण देवाण " ઇત્યાદિ ॥ ૫૬ ॥

ટીકાર્થ—અનુત્તર વિમાનવાસી દેવોનાં શરીરની ઊંચાઈ એક રત્નિપ્રમાણુ છે. વિજય આદિ પાંચ વિમાનોને અનુત્તર વિમાનો કહે છે. તેમાં જે ઉપપાત થાય છે તેને અનુત્તરોપપાત કહે છે આ અનુત્તર વિમાનોમાં જેમનો ઉપપાત થાય છે તે દેવોને અનુત્તરોપપાતિક દેવો કહે છે. તે પ્રત્યેક દેવની શારીરિક ઊંચાઈ એક એક રત્નિપ્રમાણુ કહી છે. આ દૃષ્ટિએ તેમનામાં એકત્વ છે. ॥સૂ૦૫૬ ॥

દેવોનો અધિકાર ચાલી રહ્યો હોવાથી સૂત્રકાર હવે નક્ષત્રદેવોની એકતાનું પ્રતિપાદન કરે છે—

सर्वाणि=शारीरमानसानि दुःखानि प्रहीणानि=यस्य स तथा-सकलशारीरमानस दुःखरहितो जातः। अस्यामवसर्पिण्यां चतुर्विंशतितीर्थकरेषु एकाकित्वेन एकश्चरमतीर्थकरो महावीर एव मोक्षं गतः। अत एव-महावीरस्यैकत्वमुक्तमिति॥ सू०५५॥

भगवान् महावीर एक एव निर्वाणं प्राप्तः। निर्वाणक्षेत्रस्यासन्नानि चानुत्तरविमानानि सन्ति। अतस्तन्निवासिनां देवानां देहमानमाह—

मूलम्—अणुत्तरोववाइयाणं देवाणं एगा रयणी उड्ढं उच्चत्तेणं पण्णत्ता॥ सू० ५६॥

छाया—अनुत्तरोपपातिकानां देवानाम् एका रत्निः ऊर्ध्वमुच्चत्वेन प्रज्ञप्ता॥ सू० ५६॥

मुक्त सम्पूर्णकर्मों से इनका छुटकारा हो चुका है यावत्-ये परिनिर्वृत कर्मकृतविकारों के विरह से स्वस्थीभूत हो गये हैं अतएव इनके समस्त शारीरिक एवं मानसिक दुःख अस्त हो गये हैं इस कारण ये शारीरिक एवं मानसिक दुःखोंसे सर्वथा रहित बन चुके हैं, इस अवसर्पिणीकाल में चौबीस तीर्थकरों में एकाकी अकेले ही होने के कारण एक चरम तीर्थंकर महावीर ही मोक्ष गये हैं इसीलिये महावीर को एक कहा गया है॥ सू० ५५॥

भगवान् महावीर एक ही निर्वाण को प्राप्त हुए हैं निर्वाण क्षेत्र के बिलकुल पास अनुत्तरविमान है इस कारण अब सूत्रकार वहां के

તેમને બુદ્ધ કહ્યા છે તેમના બધાં કર્મોનો નાશ થવાથી તેઓ કર્મબંધમાંથી છૂટી ગયા છે, તેથી તેમને મુક્ત કહ્યા છે કર્મકૃત વિકારોને અભાવે તેઓ સ્વસ્થ થઈ ગયા છે-તેથી તેમના સમસ્ત શારીરિક અને માનસિક દુઃખો અસ્ત પામી ગયા છે તે કારણે તેમને પરિનિવૃત કહ્યા છે તેમણે સમસ્ત કર્મોનો સર્વથા ક્ષય કરી નાખ્યો છે તેથી તેમને સમસ્ત દુઃખોના અંતકર કહ્યા છે આ અવસર્પિણીકાળમાં ચોવીસ તીર્થંકરોમાં એકાકી હોવાને કારણે એક ચરમ તીર્થંકર મહાવીર જ મોક્ષે ગયા છે તે કારણે મહાવીરમાં એકત્વ પ્રકટ કરવામાં આવ્યું છે ॥સૂ૦ ૫૫॥

ભગવાન મહાવીર નિર્વાણ પામ્યા છે. નિર્વાણમાં પણ એકત્વ હોવાનું પ્રતિપાદન આગળ થઈ ચૂક્યું છે નિર્વાણક્ષેત્રની બહુ જ નજીકમાં અનુત્તર વિમાનો છે તે અનુત્તર વિમાન નિવાસી દેવોના શરીરના પ્રમાણનું હવે

टीका—' अणुत्तरोववाइयाणं ' इत्यादि—

अनुत्तरोपपातिकानाम्—अनन्तरत्वात् अनुत्तराणि=विजयादिविमानानि, तत्र उपपातः—अनुत्तरोपपातः, स विद्यते येषां ते अनुत्तरोपपातिकास्तेषां तथाभूतानां देवानाम् ऊर्ध्वमुच्चत्वेन प्रमाणम् एका रत्निः प्रज्ञप्ता ॥ सू० ५६ ॥

अनन्तरमनुत्तरोपपातिकदेवानामूर्ध्वोच्चत्वेनैकत्वमुक्तम् । तस्माद् देवाधिकारः प्रस्तुतः । अत एव—सम्प्रति नक्षत्रदेवानामेकत्वमाह—

मूलम्—**अद्दाणक्खत्ते एगतारे पण्णत्ते, चित्ताणक्खत्ते एगतारे पण्णत्ते, सातीणक्खत्ते एगतारे पण्णत्ते ॥सू० ५७॥**

छाया—आर्द्रानक्षत्रमेकतारं प्रज्ञप्तम्, चित्रानक्षत्रमेकतारं प्रज्ञप्तम्, स्वातीनक्षत्रमेकतारं प्रज्ञप्तम् ॥ सू० ५७ ॥

टीका—' अद्दाणक्खत्ते ' इत्यादि—

निवासी देवों के शरीर का प्रमाण कहते हैं–

" अणुत्तरोववाइयाणं देवाणं " इत्यादि ॥ ५६ ॥

टीकार्थ—अनुत्तर विमानवासी देवों के शरीर की ऊँचाई का प्रमाण एक रत्नि है विजयआदि विमानों का नाम अनुत्तर है इन अनुत्तरों में जिनका उपपात है वह अनुत्तरोपपात है यह अनुत्तरोपपात जिनको होता है वे अनुत्तरोपपातिक हैं ऐसे इन देवों का ऊँचाई की अपेक्षा से शारीरिक प्रमाण एक रत्नि का कहा गया है इस अपेक्षा से इन सब में एकता है ॥ सू० ५६ ॥

देवों का अधिकार प्रस्तुत होने के कारण अब सूत्रकार नक्षत्रदेवों में एकता प्रकट करते हैं–

સૂત્રકાર કથન કરે છે—" अणुत्तरोववाइयाण देवाण " ઇત્યાદિ ॥ ૫૬ ॥

ટીકાર્થ—અનુત્તર વિમાનવાસી દેવોનાં શરીરની ઊંચાઈ એક રત્નિપ્રમાણુ છે વિજય આદિ પાંચ વિમાનોને અનુત્તર વિમાનો કહે છે. તેમા જે ઉપપાત થાય છે તેને અનુત્તરોપપાત કહે છે આ અનુત્તર વિમાનોમાં જેમનો ઉપપાત થાય છે તે દેવોને અનુત્તરોપપાતિક દેવો કહે છે તે પ્રત્યેક દેવની શારીરિક ઊંચાઈ એક એક રત્નિપ્રમાણુ કહી છે આ દૃષ્ટિએ તેમનામાં એકત્વ છે. ॥સૂ૦૫૬ ॥

દેવોનો અધિકાર ચાલી રહ્યો હોવાથી સૂત્રકાર હવે નક્ષત્રદેવોની એકતાનું પ્રતિપાદન કરે છે—

एकतारम्-एका तारा=ज्योतिर्विमानरूपा यस्य तत्-एकतारम्। आर्द्राचित्रा-स्वातीनां प्रत्येकमेकैकतारकत्वं बोध्यमिति। एतन्नक्षत्रत्रयमेव एकैकतारकम्। अत एतेषामेव एकतारकत्वेनोपादानं कृतम् ॥ सू० ५७ ॥

अनन्तरसूत्रे आर्द्रादिनक्षत्राणां ताराप्रमाणमुक्तम्, तारा च पुद्गलरूपेति पुद्गलस्वरूपमाह—

मूलम्—एगपएसोगाढा पोग्गला अणंता पण्णत्ता, एवमेगसमयट्ठिइया, एगगुणकालगा पोग्गला अणंता पण्णत्ता, जाव एगगुणलुक्खा पोग्गला अणंता पण्णत्ता ॥ सू० ५८ ॥

॥ एग ठाण समत्त ॥ १ ॥

छाया—एकप्रदेशावगाढाः पुद्गला अनन्ताः प्रज्ञप्ताः, एवमेकसमयस्थितिकाः एकगुणकालकाः पुद्गलाः अनन्ताः प्रज्ञप्ताः, यावत् एकगुणरूक्षाः पुद्गलाः अनन्ताः प्रज्ञप्ताः ॥ सू ५८ ॥

॥ एक स्थानं समाप्तम् ॥ १ ॥

टीका—' एगपएसोगाढा इत्यादि—

एकप्रदेशावगाढाः-एकस्मिन् प्रदेशे=क्षेत्रस्यांशविशेषे अवगाढाः=आश्रिताः

" अद्दाणक्खत्ते एगतारे पण्णत्ते " इत्यादि ॥ ५७ ॥

टीकार्थ—आर्द्रानक्षत्र, एक है तारा विमानरूप ज्योति जिसकी ऐसा है आर्द्रा, चित्रा, स्वाती ये तीन नक्षत्र प्रत्येक एक२ तारावाले कहे गये हैं इसीलिये इनका ही एक ताराररूपसे यहां ग्रहण हुआ है ॥सू०५७॥

तारा पुद्गल रूप होता है अतः पुद्गल के स्वरूप का कथन अब सूत्रकार कहते हैं। " एग पएसोगाढा पोग्गला " इत्यादि ॥ ५८ ॥

टीकार्थ—क्षेत्रांशविशेषरूप एकप्रदेश में आश्रित परमाणुरूप और स्कन्धरूप पुद्गल अनन्त कहे गये हैं इसी तरह से एक समय की स्थि

' अद्दाणक्खत्ते एगतारे पण्णत्ते' ઇત્યાદિ ॥ ५७ ॥

ટીકાર્થ—આર્દ્રા નક્ષત્ર એક છે તારા વિમાનરૂપ જ્યોતિષ જેનું એવું આર્દ્રા, ચિત્રા અને સ્વાતિ નક્ષત્રો એક એક તારાવાળાં કહ્યાં છે. તેથી તેમને જ અહીં એક તારારૂપે ગ્રહણ કરવામાં આવેલ છે ॥ ५७ ॥

તારા પુદ્ગલરૂપ હોય છે તેથી હવે સૂત્રકાર પુદ્ગલના સ્વરૂપનું નિરૂપણ કરે છે—" एगपएसोगाढा पोग्गला " ઇત્યાદિ ॥ ५८ ॥

ટીકાર્થ—ક્ષેત્રાંશ વિશેષરૂપ એક પ્રદેશમાં રહેલાં પરમાણુરૂપ અને સ્કંધ

पुद्गलाः=परमाणुरूपाः स्कन्धरूपाश्च अनन्ताः प्रज्ञप्ताः। एवम्=अनेन प्रकारेण एकसमयस्थितिका एकगुणकालकाश्च पुद्गला अनन्ता प्रज्ञप्ताः तथा-एकगुणनीलादिवर्णकाः, एकगुणसुरभ्यादिगन्धकाः, एकगुणतिक्तादिरसकाः, एकगुणकठिनादिस्पर्शकाश्च पुद्गलाः अनन्ताः प्रज्ञप्ताः। इममर्थं सूचयितुमाह सूत्रकारः—'जाव एगगुणलुक्खा' इत्यादि ॥ सू० ५८ ॥

इतिश्री-विश्वविख्यात-जगद्वल्लभ-प्रसिद्धवाचक-पञ्चदशभाषाकलित-
ललितकलापालापक-प्रविशुद्धगद्यपद्यनैकग्रन्थनिर्मापक-वादिमा-
नमर्दक श्रीशाहूछत्रपति कोल्हापुरराजप्रदत्त 'जैनशास्त्राचार्य'पद-
भूषित-कोल्हापुरराजगुरु बालब्रह्मचारि जैनाचार्य-जैनधर्म-
दिवाकर-पूज्यश्री-घासीलालव्रतिविरचितायां
स्थानाङ्गसूत्रस्य सुधाख्यायां व्याख्यायाम्
प्रथमं स्थानं संपूर्णम् ॥ १ ॥

तिवाले और एकगुने कृष्णवर्णवाले पुद्गल अनन्त कहे गये हैं। तथा एकगुने नीलादिवर्णवाले एकगुने सुरभि आदि गन्धवाले, एकगुने तिक्तादि रसवाले और एकगुने कठिनादि स्पर्शवाले पुद्गल भी अनन्त कहे गये हैं। इसी अर्थ को सूचित करने के लिये 'जाव एगगुणलुक्खा' इत्यादि रूप से सूत्रकारने कहा है ॥ सू० ५८ ॥

प्रथम स्थान समाप्त

રૂપ પુદ્ગલ અનંત કહ્યા છે એજ પ્રમાણે એક સમયની સ્થિતિવાળા અને એક ગણા કાળા વર્ણવાળાં પુદ્ગલો પણ અનંત કહ્યાં છે તથા એકગણા નીલાદિ વર્ણવાળા, એકગણી સુરભિ આદિ ગંધવાળા, એકગણા તિક્ત આદિ રસવાળા અને એકગણા કઠિનાદિ સ્પર્શવાળાં પુદ્ગલો પણ અનન્ત કહ્યાં છે. એજ અર્થને પ્રકટ કરવા નિમિત્તે સૂત્રકારે "जाव एगगुणलुक्खा" ઇત્યાદિ સૂત્રપાઠ કહ્યો છે ॥૫૮॥

द्वितीय स्थानकम्

प्रथमं स्थानं व्याख्यातम् । अधुना संख्याक्रमागतं चतुरुद्देशात्मकं द्वितीयं स्थानं व्याख्यायते । अस्य स्थानस्य पूर्वस्थानेन सहायमभिसम्बन्धः-स्याद्वाद सिद्धान्तानां जैनानां सर्वं वस्तु सामान्यविशेषात्मकमभिमतम् । तत्र सामान्यमा श्रित्य प्रथमे स्थाने एकत्वेनात्मादि वस्तु निरूपितम् । सम्प्रति विशेषमाश्रित्य तदेव वस्तु द्विप्रकारकत्वेन प्ररूप्यते, इत्यनेन सम्बन्धेनायातस्य चतुरुद्देशात्मकस्य द्वितीयस्थानस्य सूत्रानुगमे प्रथमोद्देशकस्येदमादिसूत्रम्—

सूत्रम्—जयत्थिणं लोगे तं सव्वं दुपओयारं, तं जहा—जीवा चेव अजीवा चेव । तसा चेव थावरा चेव १, सजोणिया चेव अजोणियाचेव २, साउयाचेव अणाउयाचेव ३, सइंदियाचेव अणिंदियाचेव ४, सवेयगाचेव अवेयगाचेव ५, सरूवीचेव अरूवीचेव ६, सप्पोग्गलाचेव अपोग्गलाचेव७, संसारसमावन्न गाचेव असंसारसमावन्नगाचेव८, सासयाचेव असासयाचेव९ ॥१॥

द्वितीय स्थानक प्रारम्भ

प्रथम स्थान व्याख्यात हो चुका अब संख्याक्रमागत चतुरुद्देशात्मक द्वितीय स्थान का व्याख्यान प्रारम्भ होता है इस स्थान का पूर्वस्थान के साथ ऐसा सम्बन्ध है कि स्याद्वादसिद्धान्त माननेवाले जैनों को सर्व वस्तुएँ सामान्यविशेष धर्मात्मक है यही बात इष्ट है अतः प्रथम स्थान में सामान्य धर्मको लेकर आत्मादि वस्तुओं में एकता का कथन किया गया है अब विशेष धर्म को लेकर उसी आत्मादिरूप वस्तु में द्विप्रका रताका कथन किया जाता है इसी सम्बन्ध को लेकर प्रारम्भ किये गये चतुरुद्देशात्मक द्वितीयस्थानके सूत्रानुगममें प्रथम उद्देशकका यह सब से पहिला सूत्र है—"जयत्थिणं लोगे तं सव्वं दुपओयारं" इत्यादि ॥१॥

બીજુ સ્થાનક પ્રારમ્ભ

પહેલા સ્થાનની પ્રરૂપણા પૂરી થઈ હવે સંખ્યાક્રમાનુસાર જે બીજુ સ્થાન આવે છે તેની પ્રરૂપણા કરવામાં આવે છે આ સ્થાનનો પૂર્વસ્થાન સાથે આ પ્રકારનો સંબંધ છે સ્યાદ્વાદમાં માનનારા જૈનો એ વાતને સ્વીકારે છે કે સર્વ વસ્તુઓ સામાન્ય વિશેષ ધર્માત્મક હોય છે તેથી પહેલા સ્થાનમાં સામાન્ય ધર્મની અપેક્ષાએ આત્માદિ પદાર્થોનું પ્રતિપાદન કરવામાં આવ્યું છે હવે વિશેષ ધર્મની અપેક્ષાએ એજ આત્માદિ રૂપ પદાર્થોમાં દ્વિપ્રકારતાનું (દ્વિવિધતાનું) કથન કરવામાં આવે છે આ સંબંધને અનુલક્ષીને શરૂ કરવામાં આવેલા ચાર ઉદ્દેશાત્મક દ્વિતીય સ્થાનના સૂત્રાનુગમમાં પહેલા ઉદ્દેશકનું આ સૌથી પહેલું સૂત્ર છે— "जयत्थिणं लोगे तं सव्वं दुपओयारं" इत्यादि ॥१॥

छाया—यदस्ति खलु लोके तत्सर्वं द्विप्रत्यवतारम्, तद्यथा-जीवाश्चैव अजीवाश्चैव । त्रसाश्चैव स्थावराश्चैव, १, सयोनिकाश्चैव अयोनिकाश्चैव २, सायुषश्चैव अनायुषश्चैव ३, सेन्द्रियाश्चैव अनिन्द्रियाश्चैव ४, सवेदकाश्चैव अवेदकाश्चैव ५, सरूपिणश्चैव अरूपिणश्चैव ६, सपुद्गलाश्चैव अपुद्गलाश्चैव ७, संसारसमापन्नकाश्चैव असंसारसमापन्नकाश्चैव ८, शाश्वताश्चैव अशाश्वताश्चैव ९ ॥ सू० १ ॥

टीका—' जदत्थि णं ' इत्यादि—

लोके-लोक्यते केवलालोकेन इति लोकस्तस्मिन्-पञ्चास्तिकायात्मके लोके खलु यत् किमपि जीवादिकं वस्तु विद्यते, तत्सर्वं द्विप्रत्यवतारम्-द्वयोः=विवक्षितवस्तुतद्विपरीतवस्तुलक्षणयोः स्थानयोः प्रत्यवतारः=समवतारः समावेशो यस्मिन् तत्तथाविधं-स्वरूपवत् प्रतिपक्षरूपवच्चेत्यर्थः । लोकान्तर्गतं सर्व वस्तु द्विविधमिति भावः, यद्वा-यत् अस्ति=' अस्ती ' ति शब्दव्यपदेश्यं सन्मात्रं तद् द्विप्रत्यवतारं बोध्यम् । वस्तुनो द्विप्रत्यवतारत्वमेवाह-' तं जहा ' इत्यादिना । तद्यथा-लोक-

केवलरूप आलोक (प्रकाश) के द्वारा जिनका अवलोकन किया जाता है उसका नाम लोक है ऐसा यह लोक पंचास्तिकायरूप है, इस पंचास्तिकाय रूप लोक में जो भी कोई जीवादिरूप वस्तु विद्यमान है वह सब दो का समावेश है जिसमें ऐसी है अर्थात् स्वरूपवाली और प्रतिपक्षरूपवाली है द्विप्रत्यवतार शब्द का यही अर्थ है तात्पर्य केवल यही है कि लोकान्तर्गत समस्त ही वस्तुएँ दो प्रकार की हैं प्रत्येक विवक्षित वस्तु अपने से विपरीत लक्षणवाली वस्तु के समावेशवाली है अथवा जो वस्तु " अस्ति " इस शब्द द्वारा वाच्य है ऐसी सन्मात्र रूप वह वस्तु द्विप्रत्यवतार (दो प्रकार) वाली है वस्तुमें द्विप्रत्यवतारता कैसे है इसी बातको

કેવળજ્ઞાન રૂપ આલોક (પ્રકાશ) દ્વારા જેનુ અવલોકન કરી શકાય છે, તેનુ નામ લોક છે. એવો આ લોક પચાસ્તિકાયરૂપ છે આ પચાસ્તિકાયરૂપ લોકમા જે કોઈ જીવાદિ વસ્તુઓ મોજુદ છે, તે બે પ્રકારવાળી છે. એટલે કે (૧) સ્વરૂપવાળી અને (૨) પ્રતિપક્ષ રૂપવાળી છે " द्विप्रत्यवतार " આ પદનો અર્થ એવો જ છે કહેવાનુ તાત્પર્ય એ છે કે આ લોકની સમસ્ત વસ્તુઓ બે પ્રકારની છે પ્રત્યેક વિવક્ષિત (અમુક) વસ્તુ પોતાના કરતાં વિપરીત લક્ષણવાળી વસ્તુના સમાવેશવાળી હોય છે અથવા જે વસ્તુ " अस्ति " શબ્દ દ્વારા વાચ્ય છે, તે પ્રત્યેક વસ્તુ દ્વિપ્રત્યવતાર (બે પ્રકાર) વાળી છે વસ્તુમાં

स्थितवस्तुनो यथा द्विमत्यमतारत्वमस्ति तदेव योच्यम्,–जीवाश्चैव अजीवाश्चैव। एव शब्दोऽवधारणे। तेन च ये विवक्षितस्वरूपार्थास्ते जीवा एव, तद्विपक्षभूता च पदार्थास्ते अजीवा एव। अनेन जीवाजीवेति राशिद्वयमेव स्वमतानुमोदित मिति सूचितम्।

ननु नो जीवाख्य राश्यन्तरमप्यस्ति, प्रत्यक्षेणोपलम्भे' ? इति चेत्, उच्यते– 'नो जीव' इत्यत्र नो शब्दस्य सर्वनिषेधकत्वेन अजीव एव प्रतीयते। यदि च नो शब्दोदेशनिषधे, तर्हि नो जीव शब्देन जीवदेश एव प्रतीयते, तत्र नवस्ति

"स जहा' पद द्वारा सूत्रकार यही स्पष्ट करते हैं–"जीवा चेव अजीवा चेव" जीव और अजीव, यहाँ एव शब्द अवधारण अर्थ में प्रयुक्त हुआ है इस तरह जो पदार्थ जीवरूप से विवक्षित होते हैं वे जीवरूप ही है और जो पदार्थ अजीवरूप से विवक्षित होते हैं वे अजीव रूप ही हैं जीव के विपक्ष भूत पदार्थ अजीव रूप होते हैं इससे जीव अजीव यह राशिद्वय ही स्वमतानुमोदित है यह सूचित किया गया है।

शंका—नो जीव नाम की भी एक तीसरी राशि है क्यों कि उसकी भी प्रत्यक्ष से उपलब्धि होती है ?

उ०—"नो जीव" में जो "नो" शब्द आया है वह क्या सर्व निषेधक के रूप में आया है या देशनिषेधक के रूप में आया है यदि सर्वनिषेधक के रूप में आया है तो "नो जीव" शब्द का जो जीव रूप

એ પ્રકારના કેવી રીતે રહેલી છે તે વાત સૂત્રકાર (तंजहा) નીચે બતાવેલાં દૃષ્ટાન્તો દ્વારા પુરવાર કરે છે–'जीवा चेव अजीवा चेव" આ લોકમાં જીવો પણ છે અને અજીવો પણ છે અહીં "અને" પદ અવધારણ અર્થમાં વપરાયું છે. આ રીતે જે પદાર્થોને જીવરૂપે ઓળખવામાં આવે છે તે જીવરૂપ જ હોય છે અને જે પદાર્થોને અજીવરૂપે ઓળખવામાં આવે છે તે અજીવરૂપ જ હોય છે જીવથી વિપરીત શબ્દ અજીવ છે આ રીતે અહીં એવું સૂચિત કરવામાં આવ્યું છે કે જીવ અજીવ આ રાશિદ્વય જ એમનો દ્વારા અનુમોદિત (સંમત) છે

શંકા—નોજીવ નામની પણ એક ત્રીજી રાશિ છે, કારણ કે તેની પણ પ્રત્યક્ષ ઉપલબ્ધિ થાય છે

ઉત્તર—'નો જીવ' આ પદમાં જે 'નો' શબ્દ આવ્યો છે તે સર્વ નિષેધકરૂપે વપરાયો છે કે દેશનિષેધકરૂપે વપરાયો છે એ વાત પહેલાં વિચારવી પડશે. જો તે સર્વનિષેધકરૂપે વપરાયો હોય તો 'નોજીવ" નો આ

नोऽत्यन्तव्यतिरिक्त इति जीवदेशोऽपि जीव एवेति न राशित्रयसम्भव इति। अस्य विस्तृतवर्णनम् उत्तराध्ययनसूत्रस्य प्रियदर्शिनीटीकायां तृतीयाध्ययनेऽस्माभिः कृतमिति तत्र विलोकनीयम्।

सम्प्रति जीवतत्त्वस्यैव भेदान् सप्रतिपक्षानाह–'तसा चेव' इत्यादि। त्रसाश्चैव स्थावराश्चैव–त्रस्यन्तीति त्रसाः=त्रसनामकर्मोदयाज्जाता द्वीन्द्रियादयो जीवाः, तत्प्रतिपक्षभूताः स्थावराः–स्थावरनामकर्मोदयात् तिष्ठन्तीत्येवं शीलाः स्थावराः–पृथिव्यादयः। तथा–सयोनिकाश्चैव अयोनिकाश्चैव। तत्र–सह योन्या=

नहीं है वह नोजीव है ऐसा अर्थ होने पर नोजीव शब्द से अजीव ही प्रतीत होता है और यदि वह देश निषेध रूप में आया है तो नोजीव शब्द से जीवदेश ही प्रतीत होना है जीवदेश अपने देशी जीव से अत्यन्त भिन्न होता नहीं है इसलिये जीवदेश भी जीव रूप ही है इस तरह राशित्रय का संभव कैसे हो सकता है इस विषय का विस्तार रूप से वर्णन उत्तराध्ययन सूत्र की प्रियदर्शिनी टीका में तृतीय अध्ययन में हमने किया है इसलिये वहीं से इसे देख लेना चाहिये।

अब सूत्रकार जीवतत्त्व के प्रतिपक्ष सहित भेदों का वर्णन करते हैं "तसा चेव" इत्यादि जीवतत्त्व दो विभागों में विभक्त हुआ है एक विभाग है त्रसरूप और दूसरा विभाग है स्थावररूप त्रस नामकर्म के उदय से जो अपनी इच्छा से चलते फिरते हैं ऐसे द्वीन्द्रिय जीव तेइन्द्रिय जीव चौइन्द्रिय जीव और पञ्चेन्द्रिय जीव त्रस हैं और स्थावर जीव

પ્રમાણે અર્થ થશે–"જે જીવ રૂપ નથી તેને અજીવ કહે છે." આ રીતે 'નોજીવ' પદ દ્વારા અજીવ જ પ્રતીત થાય છે જો તે દેશનિષેધરૂપે પ્રયુક્ત થયો હોય, તો "નોજીવ" શબ્દ દ્વારા 'જીવદેશ' જ પ્રતીત થાય છે. જીવદેશ પોતાના દેશીજીવથી અતિશય ભિન્ન હોતો નથી. તેથી જીવદેશ પણ જીવરૂપ જ છે. આ રીતે રાશિત્રય અહીં સંભવિત નથી. આ વિષયનું ઉત્તરાધ્યાયન સૂત્રની મારા દ્વારા લખાયેલી પ્રિયદર્શિની ટીકામાં ત્રીજા અધ્યયનમાં વિસ્તારપૂર્વક પ્રતિપાદન કરવામાં આવ્યું છે. તો જિજ્ઞાસુઓએ તે ટીકા વાંચી લેવી.

હવે સૂત્રકાર જીવતત્વના પ્રતિપક્ષ સહિતના ભેદોનું નિરૂપણ કરે છે– "तसा चेव" ઇત્યાદિ જીવતત્વ બે વિભાગમાં વહેંચાયેલું છે–એક વિભાગ ત્રસરૂપ છે અને બીજો વિભાગ સ્થાવરરૂપ છે ત્રસ નામકર્મના ઉદયથી જે જીવો પોતાની ઇચ્છા અનુસાર હલનચલન કરી શકે છે એવાં દ્વીન્દ્રિય, ત્રીન્દ્રિય ચતુરીન્દ્રિય અને પંચેન્દ્રિય જીવોને ત્રસજીવો કહે છે. ત્રસજીવોના પ્રતિપક્ષભૂત સ્થાવર જીવો છે. સ્થાવર નામકર્મના ઉદયથી જે જીવો પોતાની ઇચ્છાથી

उत्पत्तिस्थानेन वर्तन्ते ये ते सयोनिकाः=संसारिणो जीवाः, तत्प्रतिपक्षभूताश्च अयोनिकाः=सिद्धाः । तथा-सायुषश्चैव अनायुषश्च । सह आयुषा वर्तन्ते इति सायुषः=संसारिणो जीवाः, तद्भिन्ना अनायुषः=सिद्धा इत्यर्थः । तथा-सन्द्रिया

जो कि इनके प्रतिपक्षभूत हैं स्थावर नाम कर्म के उदय के वशवर्ती होते हैं स्थावर नामकर्म के वशवर्ती हुआ जीव एक से दूसरे स्थानपर अपनी इच्छा से जा आ नहीं सकता है प्रत्युत वहीं का वहीं स्थिर रहता है ऐसे ये स्थावर जीव पृथिवी कायिक अप्कायिक तेजः कायिक वायुकायिक और वनस्पतिकायिक है जीव सयोनिक और अयोनिक के भेद से भी दो प्रकार के होते हैं उत्पत्तिस्थान का नाम योनि है इस स्थानरूप योनि से जो सहित हैं वे सयोनिक हैं ऐसे ये सयोनिक जीव सब ही संसारी जीव होते हैं तथा इनके प्रतिपक्षीभूत जीव अयोनिक है, ये अयोनिक जीव सिद्ध हैं सायुष्क और अनायुष्क के भेद से भी जीव दो प्रकार के होते हैं आयु नामकर्म के उदय के वशवर्ती जो जीव हैं वे सायुष्क जीव हैं और ये सब आयु सहित जीव संसारी जीव हैं इनसे भिन्न जो जीव हैं वे निरायुष जीव हैं ऐसे निरायुष जीव सिद्ध है क्यों कि आयु कर्मका उदय संसारी जीवों को ही रहता है सिद्ध जीव के नहीं, सिद्ध जीव तो आयुकर्म को नाशकर ही बनते हैं इसी तरह

હલન ચલન કરી શકતા નથી, પરન્તુ જે જગ્યાએ પડેલાં હોય છે, ત્યાં જ પડયાં રહે છે, એવાં જીવોને સ્થાવર જીવો કહે છે પૃથ્વીકાયિક, અપ્કાયિક, તેજસ્કાયિક, વાયુકાયિક અને વનસ્પતિકાયિક જીવોને સ્થાવર જીવો કહે છે

સયોનિક અને અયોનિકના ભેદથી પણ જીવના બે પ્રકાર હોય છે ઉત્પત્તિ સ્થાનને યોનિ કહે છે આ ઉત્પત્તિસ્થાનરૂપ યોનિથી યુક્ત જે જીવો છે તેમને સયોનિક કહે છે બધાં સંસારી જીવો આ પ્રકારના હોય છે સયોનિકના પ્રતિપક્ષભૂત જીવોને અયોનિક કહે છે સિદ્ધ જીવો આ પ્રકારના હોય છે સાયુષ્ક અને અનાયુષ્કના ભેદથી પણ જીવો બે પ્રકારના હોય છે આયુનામ કર્મને અધીન હોય એવાં જીવોને સાયુષ્ક જીવો કહે છે બધાં સંસારી જીવો આયુથી યુક્ત હોય છે, માટે તેઓ સાયુષ્ક હોય છે સાયુષ્કથી ભિન્ન એવાં નિરાયુષ્ક જે જીવો છે તેમને અનાયુષ્ક કહે છે સિદ્ધગતિના જીવો આયુરહિત હોય છે, કારણ કે તેઓ આયુકર્મનો નાશ કરીને જ સિદ્ધ થયેલા હોય છે સંસારી જીવોની માફક તેમના આયુકર્મનો ઉદય હોતો નથી.

श्च अनिन्द्रियाश्च। तत्र-सेन्द्रियाः-संसारिणः, तत्प्रतिपक्षभूता अनिन्द्रियाः सिद्धाः सयोगिकेवल्यादयश्च। सयोगिकेवल्यादीनां क्षायोपशमिकभावाभावाद-निन्द्रियत्वम्। इन्द्रियाणि हि क्षायोपशमिकानि भवन्ति। तथा-सवेदकाश्चैव अवे-दकाश्चव। तत्रसवेदकाः-स्त्रीवेदाद्युदयवन्तः संसारिणः, तत्प्रतिपक्षभूता अवेदकाः= सिद्धादयः। तथा-सरूपिणश्चैव अरूपिणश्चैव। तत्र सरूपिणः-रूपेण=आकारेण सह वर्तन्ते इति सरूपिण -संस्थानवर्णादिमन्तः। सशरीरा इत्यर्थः। तथा-

से सेन्द्रिय और अनिन्द्रिय के भेद से भी जीव दो प्रकार के कहे गये हैं इनमें सेन्द्रिय जीव संसारी हैं और इनके प्रतिपक्षभूत जीव सिद्ध अनिन्द्रिय हैं तथा सयोग केवली आदि भी अनिन्द्रिय जीव हैं सयोग केवलियों को जो अनिन्द्रिय जीव कहा गया है वह क्षायोपशमिक भाव के अभाव से कहा गया है क्यों कि उनमें क्षायिक भाव और पारिणा-मिक भाव का भेद जो जीवत्व भाव है वही रहता है, इन्द्रियां क्षायोप-शमिक होती हैं अर्थात् इन्द्रिय जन्य ज्ञान क्षायोपशमिक होता है तथा सवेदक और अवेदकके भेद से भी दो प्रकार के होते हैं जिनको स्त्रीवेद नपुंसकवेद और पुरुषवेद का उदय होता है वे सवेदक जीव हैं और जिनको इन वेदों का उदय नहीं होता है वे अवेदक जीव हैं ये अवेदक सिद्ध आदि जीव हैं तथा रूपी और अरूपी के भेद से भी जीव दो प्रकार के हैं रूप शब्द का अर्थ आकार है इस आकार से सहित जो जीव हैं वे रूपी जीव हैं और इस आकार से रहित जो जीव हैं वे अरूपी

એજ પ્રમાણે સેન્દ્રિય અને અનિન્દ્રિયના ભેદથી પણ જીવો બે પ્રકારના હોય છે સંસારી જીવો ઇન્દ્રિયોથી યુક્ત હોય છે અને સિદ્ધો અનિન્દ્રિય હોય છે તથા સયોગીકેવલી આદિ પણ અનિન્દ્રિય જીવો છે સયોગીકેવલીઓને અનિન્દ્રિય કહેવાનુ કારણ એ છે કે તેમનામાં ક્ષાયિકભાવ અને પરિણામિક ભાવનો ભેદ કે જે જીવત્વ ભાવ છે એજ રહે છે તેમની ઇન્દ્રિયો ક્ષાયોપ-શમિક હોય છે એટલે કે ઇન્દ્રિયજન્ય જ્ઞાન ક્ષાયોપશમિક હોય છે

સવેદક અને અવેદકના ભેદથી પણ જીવો બે પ્રકારના હોય છે. જે જીવોમા સ્રીવેદ, પુરુષવેદ અથવા નપુંસકવેદનો ઉદય હોય છે, તે જીવોને સવેદક કહે છે જેમને તે વેદોનો ઉદય હોતો નથી એવા જીવોને અવેદક કહે છે સંસારી જીવો સવેદક હોય છે અને સિદ્ધ આદિ જીવો અવેદક હોય છે.

રૂપી અને અરૂપીના ભેદથી પણ જીવોના બે પ્રકાર પડે છે. રૂપ એટલે આકાર. જે જીવો આકારથી યુક્ત હોય છે તેમને રૂપી કહે છે અને જે જીવો

तत्प्रतिपक्षभूता अरूपिणः=न रूपिणः-अरूपिणः सिद्धाः। तथा-सपुद्गलाश्चैव अपुद्गलाश्चैव। तत्र-सपुद्गलाः=कर्मादिपुद्गलवन्तः संसारिणो जीवाः, तत्प्रतिपक्षभूताः अपुद्गलाः=सिद्धाः। तथा-संसारसमापन्नकाश्चैव असंसारसमापन्नकाश्चैव। तत्र-संसारसमापन्नकाः-संसारं=भवं=समापन्नकाः=प्रतिपन्नाः-संसारिणो जीवाः, तद्भिन्ना असंसारसमापन्नकाः-सिद्धाः। तथा-शाश्वताश्चैव अशाश्वताश्चैव।

जीव हैं जितने भी शरीर सहित जीव हैं वे सब सरूपी जीव हैं और इनके प्रतिपक्षभूत जीव अरूपी जीव हैं जीव के साथ जब तक शरीर का सम्बन्ध रहता है तब तक वह संसारी जीव माना गया है और इसी कारण वह संस्थान वर्णादि वाला कहा गया है सिद्ध जीव शरीर से रहित होकर ही सिद्ध बने हैं अतः वे संस्थान वर्णादिवाले नहीं अरूपी कहे गये हैं सपुद्गल और अपुद्गल के भेद से भी जीव दो प्रकार के कहे गये हैं कर्मादिपुद्गलों सहित जीव सपुद्गल संसारी जीव हैं और इनके प्रतिपक्ष भूत जीव अपुद्गल सिद्ध माने गये हैं संसारसमापन्नक और असंसार समापन्नक के भेद से भी जीव दो प्रकार के कहे गये हैं संसार का नाम भव है इस भवरूप संसार को जो प्राप्त होते रहते हैं वे संसार समापन्नक हैं ये संसार समापन्नक जीव संसारी जीव हैं और जो इन से भिन्न हैं भवग्रहण से रहित हैं वे असंसार समापन्नक हैं ऐसे भस

આકારથી રહિત હોય છે તેમને અરૂપી કહે છે એટલાં શરીરયુક્ત જીવો છે તે બધાં સરૂપી છે અને શરીરથી રહિત હોય એવાં જીવોને અરૂપી કહ્યાં છે જીવની સાથે જ્યાં સુધી શરીરનો બંધ રહે છે ત્યાં સુધી તે સંસારી જીવ મનાય છે અને તે કારણે તે સંસ્થાન (આકાર) વર્ણ આદિથી યુક્ત હોય છે સિદ્ધ જીવો અરૂપી હોય છે શરીરથી રહિત થઈને જ જીવ સિદ્ધ બને છે તેથી તેઓ સંસ્થાન, વર્ણ આદિથી રહિત હોય છે માટે જ તેમને અરૂપી માનવામાં આવે છે સપુદ્ગલ અને અપુદ્ગલના ભેદથી પણ જીવોના બે પ્રકાર પાડી શકાય છે કર્માદિ પુદ્ગલોથી યુક્ત જીવોને સપુદ્ગલ જીવો કહે છે સંસારી જીવો આ પ્રકારના હોય છે તેનાથી ભિન્ન એવાં અપુદ્ગલ જીવોમાં સિદ્ધોની ગણતરી થાય છે

સંસાર સમાપન્નક અને અસંસાર સમાપન્નકના ભેદથી પણ જીવો બે પ્રકારના હોય છે ભવરૂપ સંસારને જે જીવો પ્રાપ્ત કરતાં રહે છે તે જીવોને સંસાર સમાપન્નક કહે છે સંસારી જીવો આ પ્રકારના હોય છે જે જીવો ભવગ્રહણથી રહિત થઈ ગયાં છે તેમને અસંસાર સમાપન્નક કહે છે સિદ્ધોની

तत्र-शाश्वता=सिद्धाः=जन्ममरणादिरहितत्वात् । तद्भिन्ना अशाश्वताः=संसारिणो जीवा जन्ममरणादिसहितत्वादिति ॥ सू० १ ॥

एवं जीवतत्त्वस्य द्विप्रत्यवतारं प्रदर्श्य सम्प्रति अजीवतत्त्वस्य द्विप्रत्यवतारं प्रदर्शयितुमाह—

मूलम्—आगासे चेव नो आगासे चेव । धम्मे चेव अधम्मे चेव ॥ सू० २ ॥

छाया—आकाशश्चैव नो आकाशश्चैव । धर्मश्चैव अधर्मश्चैव ॥ २ ॥

संसारसमापन्नक सिद्ध हैं तथा शाश्वत और अशाश्वत के भेद से भी जीव दो प्रकार के हैं, सिद्ध जीव शाश्वत हैं क्यों कि जन्म और मरण आदि से रहित होने के कारण ये जिस स्थान पर पहुँच चुके हैं वहां से फिर जन्म मरण के स्थानभूत संसार में ये नहीं आते हैं अतः शाश्वत स्थान की प्राप्ति होने से ये स्वयं शाश्वत बन गये हैं अथवा जीव का स्वभाव ही शाश्वत है उस शाश्वत स्वभाव को सिद्ध जीव प्राप्त हो जाते हैं इसलिये वे शाश्वत हैं जन्म मरण के चक्कर से सहित होने से संसारी जीव अशाश्वत हैं ॥ सू०१ ॥

जीवतत्त्व को इस तरह से सप्रतिपक्ष भूत कह कर अब अजीव तत्त्व में सप्रतिपक्षता का कथन करने के लिये सूत्रकार कहते हैं–

"आगासे चेव नो आगासे चेव, धम्मे चेव अधम्मे चेव इत्यादि ॥ २ ॥

અસંસાર સમાપન્નકમાં ગણતરી થાય છે શાશ્વત અને અશાશ્વતના ભેદથી પણ જીવોના બે પ્રકાર પડે છે સિદ્ધ જીવો શાશ્વત ગણાય છે, કારણ કે તેઓ જન્મ, જરા અને મરણથી રહિત હોય છે અને તેઓ જે સ્થાને પહોંચ્યા છે ત્યાંથી જન્મ-મરણના સ્થાનભૂત સંસારમાં તેમને આવવુ પડતું નથી આ રીતે જેમને શાશ્વત સ્થાનની પ્રાપ્તિ થઇ છે એવાં તેઓ પોતે જ શાશ્વત બની ગયા છે અથવા જીવનો સ્વભાવ જ શાશ્વત છે તે શાશ્વત સ્વભાવને સિદ્ધ જીવો પ્રાપ્ત કરી લે છે, તેથી તેઓ શાશ્વત છે જન્મમરણના ફેરા કરતા સંસારી જીવો અશાશ્વત છે. ॥ સૂ ૧ ॥

જીવ તત્વને સપ્રતિપક્ષભૂત કહીને હવે સૂત્રકાર અજીવતત્વમાં સપ્રતિ પક્ષતાનુ પ્રતિપાદન કરવાને માટે કહે છે કે—

"आगासे चेव नो आगासे चेव, धम्मे चेव अधम्मे चेव" ઈત્યાદિ ॥૨॥

ટીકાર્થ—અજીવ તત્વ પાંચ પ્રકારનુ છે-પુદ્ગલ, ધર્મ, અધર્મ, આકાશ

टीका—'आगासे चेव' इत्यादि—

आकाशश्चैव नो आकाशश्चैव। तत्र-आकाशं प्रसिद्धं, तद्भिन्नः नो आकाशः= धर्मास्तिकायादिरूपम्। तथा-धर्मश्चैव अधर्मश्चैव। तत्र-धर्मः=धर्मास्तिकायः-गत्युपष्टम्भकः। तद्भिन्नोऽधर्मः=अधर्मास्तिकायः-स्थित्युपष्टम्भकः ॥ सू० २ ॥

अथ जीवानां बन्धादीनि भवन्तीति बन्धादीनां द्विप्रत्यवतारत्वमाह—

मूलम्—बंधेचेव मोक्खेचेव। पुन्नेचेव पावेचेव। आसवेचेव संवरेचेव। वेयणाचेव निज्जराचेव ॥ सू० ३॥

छाया-बन्धश्चैव मोक्षश्चैव। पुण्यं चैव पापं चैव। आस्रवश्च संवरश्च। वेदना चैव निर्जरा चैव ॥ सू० ३ ॥

टीका—'बंधे चेव' इत्यादि—

सप्रतिपक्षाणि बन्धादितत्त्वानि प्रथमस्थानवद् व्याख्येयानि ॥ सू० ३ ॥

टीकार्थ—अजीव तत्त्व पांच प्रकार का है पुद्गल धर्म अधर्म आकाश और काल इनमें आकाश तो प्रसिद्ध है और नो आकाश धर्मास्तिकायादि रूप है तथा गति में सहायक धर्म द्रव्य है और ठहरने में सहायक अधर्मद्रव्य है ॥ सू० २ ॥

जीवों को बन्ध आदि होते हैं इसलिये बन्ध आदिकों में द्विप्रत्यवतारता का कथन सूत्रकार करते हैं—"बंधे चेव मोक्खे चेव" इत्यादि॥३॥

टीकार्थ—बन्ध, मोक्ष, पुण्य, पाप, आस्रव, संवर वेदना और निर्जरा ये सब अपने २ प्रतिपक्ष सहित हैं प्रतिपक्ष सहित इन बन्धादि तत्त्वों का कथन प्रथम स्थानोक्त की तरह से कर लेना चाहिये ॥सू० ३ ॥

અને કાળ. તેમાંથી આકાશ તો પ્રસિદ્ધ છે આકાશ ધર્માસ્તિકાય આદિ રૂપ છે. ગતિમાં સહાયક ધર્મદ્રવ્ય છે અને સ્થિતિમાં (રોકાવામાં) સહાયક અધર્મદ્રવ્ય છે ॥ સૂ ૨ ॥

જીવો બંધ આદિથી યુક્ત હોય છે તેથી સૂત્રકાર હવે બંધ આદિમાં દ્વિપ્રકારતાનું પ્રતિપાદન કરે છે

બંધે ચેવ મોક્ખે ચેવ ઇત્યાદિ ॥ ૩ ॥

ટીકાર્થ—બંધ મોક્ષ પુણ્ય-પાપ, આસ્રવ-સંવર વેદના અને નિર્જરા એ બધા પોતપોતાના પ્રતિપક્ષથી યુક્ત હોય છે પ્રતિપક્ષસહિત આ બંધાદિ તત્ત્વોનું કથન પ્રથમ સ્થાનમાં કહ્યા અનુસાર કરી લેવું જોઈએ. ॥ સૂ ૩ ॥

क्रियायां सत्यामेव आत्मानो बन्धादयो भवन्तीति क्रियाया द्विप्रत्यवतारत्वमाह-

मूलम्—दो किरियाओ पन्नत्ताओ, तं जहा—जीवकिरिया-चेव अजीवकिरियाचेव। जीवकिरिया दुविहा पन्नत्ता, तं जहा—सम्मत्तकिरिया चेव मिच्छत्तकिरिया चेव । अजीवकिरिया दुविहा पण्णत्ता, तं जहा—इरियावहिया चेव संपराइगा चेव । दो किरियाओ पण्णत्ताओ, तं जहा—काइया चेव अहिगरणिया चेव। काइया किरिया दुविहा पण्णत्ता, तं जहा—अणुवरयकाय-किरिया चेव दुप्पउत्तकायकिरिया चेव । अहिगरणिया किरिया दुविहा पण्णत्ता, तं जहा—संजोयणाहिगरणिया चेव णिव्वत्तणा हिगरणिया। दो किरियाओ पण्णत्ताओ तं जहा—पाउसिया चेव पारियावणिया चेव। पाउसिया किरिया दुविहा पण्णत्ता, तं जहा—जीवपाउसिया चेव अजीवपाउसिया चेव। पारियावणिया किरिया दुविहा पण्णत्ता, तं जहा-सहत्थपारियावणिया चेव परहत्थपारियावणिया चेव । दो किरियाओ पण्णत्ताओ, तं जहा—पाणाइवाय-किरिया चेव अपच्चक्खाणकिरिया चेव । पाणाइवायकिरिया दुविहा पण्णत्ता, तं जहा—सहत्थपाणाइवायकिरिया चेव परहत्थपाणाइवायकिरिया चेव । अपच्चक्खाणकिरिया दुविहा पण्णत्ता, तं जहा—जीवअपच्चक्खाणकिरिया चेव अजीवअपच्चक्खाणकिरिया चेव। दो किरियाओ पण्णत्ताओ तं जहा-आरंभिया चेव परिग्गहिया चेव। आरंभिया किरिया दुविहा पण्णत्ता, तं जहा-जीव आरंभिया चेव अजीव आरंभिया चेव। एवं परिग्गहिया वि।

दो किरियाओ पण्णत्ताओ, त जहा–मायावत्तिया चेव मिच्छा दसणवत्तिया चेव । मायावत्तिया किरिया दुविहा पण्णत्ता, त जहा–आयभाववकणता चेव । परभाववकणता चेव । मिच्छा, दंसणवत्तिया किरिया दुविहा पण्णत्ता, त जहा–ऊणाइरित्तमि च्छादसणवत्तिया चेव, तव्वइरित्तमिच्छादसणवत्तिया चेव । दो किरियाओ पण्णत्ताओ, त जहा–दिट्ठिया चेव पुट्ठिया चेव । दिट्ठिया किरिया दुविहा पण्णत्ता, त जहा–जीवदिट्ठिया चेव अजीवदिट्ठिया चेव । एव पुट्ठियावि । दो किरियाओ पण्ण त्ताओ, त जहा–पाडुच्चिया चेव सामतोवणिवाइया चेव । पाडु च्चिया किरिया दुविहा पण्णत्ता, तं जहा–जीवपाडुच्चिया चेव । अजीवपाडुच्चिया चेव । एव सामतोवणिवाइयावि । दो किरि याओ पण्णत्ताओ, त जहा–साहत्थिया चेव णेसत्थिया चेव । साहत्थिया किरिया दुविहा पण्णत्ता, त जहा–जीवसाहत्थिया चेव अजीवसाहत्थिया चेव । एव णेसत्थियावि । दो किरियाओ पण्णत्ताओ, त जहा–आणवणिया चेव वेयारणिया चेव । जहेव णेसत्थियाओ । दो किरियाओ पण्णत्ताओ, तं जहा–अणाभो गवत्तिया चेव अणवकखवत्तिया चेव। अणाभोगवत्तिया किरिया दुविहा पण्णत्ता, त जहा–अणाउत्त आइयणता चेव अणाउत्त पमज्जणता चेव । अणवकखवत्तिया किरिया दुविहा पण्णत्ता, त जहा–आयसरीरअणवकखवत्तिया चेव परसरीरअणवक- खवत्तिया चेव । दो किरियाओ पण्णत्ताओ, त जहा–पेज्जव

त्तिया चेव दोसवत्तिया चेव। पेज्जवत्तिया किरिया दुविहा पण्णत्ता, तं जहा मायावत्तिया चेव लोभवत्तिया चेव। दोस-वत्तिया किरिया दुविहा पण्णत्ता, तं जहा–कोहे चेव माणे चेव ॥ सू० ४ ॥

छाया—द्वे क्रिये प्रज्ञप्ते, तद्यथा–जीवक्रिया चैव अजीवक्रिया चैव। जीव-क्रिया द्विविधा प्रज्ञप्ता, तद्यथा–सम्यक्त्वक्रिया चैव मिथ्यात्वक्रिया चैव। अजीव-क्रिया द्विविधा प्रज्ञप्ता, तद्यथा–ऐर्यापथिकी चैव, साम्परायिकी चैव। द्वे क्रिये प्रज्ञप्ते, तद्यथा–कायिकी चैव आधिकरणिकी चैव। कायिकी क्रिया द्विविधा प्रज्ञप्ता, तद्यथा–अनुपरतकायक्रिया चैव दुष्प्रयुक्तकायक्रिया चैव। आधिकरणिकी क्रिया द्विविधा प्रज्ञप्ता, तद्यथा–संयोजनाधिकरणिकी चैव निर्वर्त्तनाधिकरणिकी चैव। द्वे क्रिये प्रज्ञप्ते, तद्यथा–प्राद्वेषिकी चैव पारितापनिकी चैव। प्राद्वेषिकी क्रिया द्विविधा प्रज्ञप्ता, तद्यथा–जीवप्राद्वेषिकी चैव अजीवप्राद्वेषिनी चैव। पारि-तापानकी क्रिया द्विविधा प्रज्ञप्ता, तद्यथा–स्वहस्तपारितापनिकी चैव परहस्तपारि-तापनिकी चैव। द्वे क्रिये प्रज्ञप्ते, तद्यथा–प्राणातिपातक्रिया चैव अप्रत्याख्यान क्रिया चैव। प्राणातिपातक्रिया द्विविधा प्रज्ञप्ता, तद्यथा–स्वहस्तप्राणातिपातक्रिया चैव, परहस्तप्राणातिपातक्रिया चैव। अप्रत्याख्यानक्रिया द्विविधा प्रज्ञप्ता, तद्यथा–जीवाप्रत्याख्यानक्रिया चैव, अजीवाप्रत्याख्यानक्रिया चैव। द्वे क्रिये प्रज्ञप्ते, तद्यथा–आरम्भिकी चैव पारिग्रहिकी चैव। आरम्भिकी क्रिया द्विविधा प्रज्ञप्ता, तद्यथा–जीवारम्भिकी चैव अजीवारम्भिकी चैव। एवं पारिग्रहिकी अपि। द्वे क्रिये प्रज्ञप्ते, तद् यथा–मायाप्रत्यया चैव, मिथ्यादर्शनप्रत्यया चैव। माया-प्रत्यया क्रिया द्विविधा प्रज्ञप्ता, तद् यथा–आत्मभाववङ्कनता चैव परभाववङ्कनता चैव। मिथ्यादर्शनप्रत्यया क्रिया द्विविधा प्रज्ञप्ता। तद् यथा–ऊनातिरिक्तमिथ्या-दर्शनप्रत्यया चैव तद्व्यतिरिक्तमिथ्यादर्शनप्रत्यया चैव। द्वे क्रिये प्रज्ञप्ते, तद् यथा–दृष्टिका चैव, पृष्टिका चैव दृष्टिका क्रिया द्विविधा प्रज्ञप्ता, जीवदृष्टिका चैव, अजीवदृष्टिका चैव। एव पृष्टिकाऽपि। द्वे क्रिये प्रज्ञप्ते। तद् यथा–प्राती-तिकी चैव, सामन्तोपनिपातिकी चैव। प्रातीतिकी क्रिया द्विविधा प्रज्ञप्ता तद् यथा–जीवप्रातीतिकी चैव, अजीवप्रातीतिकी चैव। एवं सामन्तोपनिपातिकी अपि। द्वे क्रिये प्रज्ञप्ते, तद् यथा–स्वाहस्तिकी चैव, नैसृष्टिकी चैव। स्वाहस्तिकी क्रिया द्विविधा प्रज्ञप्ता, तद् यथा जीवस्वाहस्तिकी चैव, अजीवस्वाहस्तिकी चैव। एवं

नैसृष्टिकी अपि । द्वे क्रिये प्रज्ञप्ते । तद् यथा—आज्ञापनिका चैव, वैदारणिका चैव । यथैव नैसृष्टिका । द्वे क्रिये प्रज्ञप्ते, तद् यथा—अनाभोगप्रत्यया चैव, अनवकाङ्क्षाप्रत्यया चैव । अनाभोगप्रत्यया क्रिया द्विविधा प्रज्ञप्ता, तद् यथा—अनायुक्ताऽऽदानता चैव, अनायुक्तप्रमार्जनता चैव । अनवकाङ्क्षाप्रत्यया क्रिया द्विविधा प्रज्ञप्ता, तद् यथा—आत्मशरीरानवकाङ्क्षाप्रत्यया चैव, परशरीरानवकाङ्क्षाप्रत्यया चैव । द्वे क्रिये प्रज्ञप्ते, तद् यथा—प्रेमप्रत्यया चैव द्वेषप्रत्यया चैव । प्रेमप्रत्यया क्रिया द्विविधा प्रज्ञप्ता । तद् यथा—मायाप्रत्यया चैव, लोभप्रत्यया चैव । द्वेषप्रत्यया क्रिया द्विविधा प्रज्ञप्ता । तद् यथा—क्रोधश्चैव, मानश्चैव ॥ सू० ४ ॥

टीका—' दो किरियाओ ' इत्यादि—

द्वे क्रिये प्रज्ञप्ते—प्ररूपिते तीर्थकरैरित्यर्थः। करण—क्रिया यद्वा—क्रियते इति क्रिया। जीवक्रिया अजीवक्रिया चेति । इह ' चेव ' इति समुच्चय मात्र एव, अपि चेत्यादिवत् । तत्र जीवक्रिया—जीवस्य व्यापारः तथा—अजीवस्य—पुद्गलसमूहरूपस्य यत् कर्मत्वेन परिणमनं सा अजीवक्रिया । तत्र जीवक्रिया—द्विविधा प्रज्ञप्ता=प्ररूपिता । सम्यक्त्वक्रिया, मिथ्यात्वक्रिया च । तत्र सम्यक्त्वम् आगमोक्ततत्त्वविषये श्रद्धानं,

---

क्रिया के होने पर ही आत्मा में बन्ध आदि होते हैं अतः अब क्रिया में द्विप्रत्यवतारता का कथन किया जाता है—

" दो किरियाओ पन्नत्ताओ " इत्यादि ॥ ४ ॥

तीर्थंकरों ने दो क्रियाएँ कही हैं करने का नाम क्रिया है अथवा जो की जावे उसका नाम क्रिया है यह क्रिया जीवक्रिया और अजीव क्रियाके भेदसे दो प्रकारकी है जीवक्रिया जीवके व्यापाररूप होती है तथा अजीव क्रिया पुद्गल के कर्मरूप से परिणमन होने रूप होती है इनमें जीव क्रिया सम्यक्त्वक्रिया और मिथ्यात्वक्रिया के भेद से दो प्रकार की कही गई है आगमोक्ततत्त्वों का श्रद्धान करना यह जीव क्रिया है क्यों कि आग

ક્રિયાનો સદ્ભાવ હોય તો જ આત્મામાં બંધ આદિનો સદ્ભાવ રહે છે તેથી હવે સૂત્રકાર ક્રિયામાં દ્વિપ્રત્યવતારતા (બે પ્રકારતા) નું કથન કરે છે—

" दो किरियाओ पण्णत्ताओ " ઇત્યાદિ ॥ ૪ ॥

તીર્થંકરોએ બે ક્રિયાઓ કહી છે. કરવામાં આવે તેનું નામ ક્રિયા, અથવા જે કરાય તેનું નામ ક્રિયા છે. જીવક્રિયા અને અજીવક્રિયાના ભેદથી તે ક્રિયા બે પ્રકારની છે. જીવક્રિયા જીવના વ્યાપારરૂપ હોય છે અને અજીવક્રિયા પુદ્ગલોના કર્મરૂપે પરિણમન થવારૂપ હોય છે. તેમાંથી જીવક્રિયાના બે ભેદ કહ્યા છે—(૧) સમ્યક્ત્વક્રિયા અને (૨) મિથ્યાત્વક્રિયા. આગમોક્ત તત્ત્વોમાં

तदेव क्रिया, तस्य जीवव्यापाररूपत्वात् सम्यक्त्वरूपा क्रिया सम्यक्त्व क्रिया। एवं मिथ्यात्वक्रियाऽपि। एतावान् विशेषः-मिथ्यात्वम्-अतत्त्वश्रद्धानम् तस्यापि जीवव्यापाररूपत्वात्। यद्वा-सम्यक्त्वे सति या क्रिया भवति सा सम्यक्त्वक्रिया, तथा मिथ्यात्वे सति या क्रिया भवति सा मिथ्यात्वक्रिया इति। अजीवक्रिया द्विविधा प्रज्ञप्ता, ऐर्यापथिकी, सांपरायिकी चेति। ईरणम्-ईर्या-गमनं, तद्विशिष्टस्तत्प्रधानो वा पन्था ईर्यापथस्तत्र भवा ऐर्यापथिकी। व्युत्पत्तिमात्रमिदं प्रद-

---

मोक्ततत्वों को करने रूप जो क्रिया होती है वह जीव के व्यापार रूप ही होती है इसलिये सम्यक्त्वरूप क्रिया सम्यक्त्व क्रिया है ऐसा इसका निष्कर्ष जानना चाहिये आगमोक्ततत्वों का श्रद्धान नहीं होना इसका नाम मिथ्यात्व क्रिया है यह मिथ्यात्वरूप क्रिया भी जीव के व्यापाररूप ही होती है जिस क्रिया में जीव का तत्व श्रद्धान रूप व्यापार होता है वह सम्यक्त्व क्रिया है और जिसमें तत्वश्रद्धान रूप व्यापार नहीं होता है अतत्व श्रद्धान रूप व्यापार होता है वह अतत्व श्रद्धान व्यापार रूप क्रिया मिथ्यात्व क्रिया है अथवा सम्यक्त्व के होने पर जो क्रिया होती है वह सम्यक्त्व क्रिया है तथा मिथ्यात्व के होने पर जो क्रिया होती है वह मिथ्यात्व क्रिया है अजीव क्रिया भी दो प्रकार की कही गई है एक ऐर्यापथिकी क्रिया और दूसरी सांपरायिकी क्रिया ईर्या नाम गमन का है इस गमन विशिष्ट या इस गमन प्रधान जो पथ होता है वह ईर्यापथ है इस ईर्यापथ में जो क्रिया होती है वह ऐर्यापथिकी क्रिया है यह तो

શ્રદ્ધા રાખવી તેનુ નામ સમ્યકૃત્વક્રિયા છે, કારણ કે તે જીવનો તત્વશ્રદ્ધાન રૂપ વ્યાપાર (પ્રવૃત્તિ) ચાલે છે. આ રીતે સમ્યકત્વરૂપ ક્રિયાને સમ્યકત્વક્રિયા કહે છે, એમ સમજવુ. આગમોકત તત્વો પ્રત્યે શ્રદ્ધા નહીં રાખવી તેનું નામ મિથ્યાત્વ ક્રિયા છે. તે મિથ્યાત્વરૂપ ક્રિયા પણ જીવના વ્યાપાર રૂપ જ હોય છે. જે ક્રિયામાં જીવનો તત્વશ્રદ્ધાન રૂપ વ્યાપાર ચાલતો હોય છે, તે ક્રિયાને સમ્યકૃત્વ ક્રિયા કહે છે પરન્તુ જે ક્રિયામા તત્વશ્રદ્ધાન રૂપ વ્યાપાર ચાલતો નથી. અતત્વશ્રદ્ધાન રૂપ વ્યાપાર જ ચાલે છે, તે ક્રિયાને મિથ્યાત્વ ક્રિયા કહે છે. અથવા સમ્યકૃત્વના સદ્ભાવમા જે ક્રિયા થાય છે, તે ક્રિયાનુ નામ સમ્યકત્વ ક્રિયા છે અને મિથ્યાત્વના સદ્ભાવમાં જે ક્રિયા થાય છે, તે ક્રિયાનુ નામ મિથ્યાત્વ ક્રિયા છે. અજીવક્રિયા પણ બે પ્રકારની કહી છે—

(૧) ઐર્યાપથિકી ક્રિયા અને (૨) સાંપરાયિકી ક્રિયા.

ઈર્યા એટલે ગમન આ ગમનનો જે પથ હોય છે તેને ઈર્યાપથ કહે છે. તે ઈર્યાપથમાં જે ક્રિયા થાય છે તે ક્રિયાને ઐર્યાપથિકી ક્રિયા કહે છે.

त्तिवम्। प्रवृत्तिनिमित्तं तु यत् उपशान्तमोहस्य क्षीणमोहस्य, सयोगिकेवलिनश्च सातवेदनीयकर्मतया अजीवस्य पुद्गलराशेर्भवन, सा ऐर्यापथिकी क्रिया। द्विसमयस्थितिका प्रमादकषायवर्जिता, कायिकी वा, वाचिकी वा क्रिया 'ऐर्यापथिकी' इति तत्त्वम्। ऐर्यापथिकी क्रिया यद्यपि जीवव्यापाररूपा, तथाप्य जीवस्य पुद्गलराशेः प्राधान्यविवक्षया इयमजीवक्रियाऽभिहिता। तथा-सांपरायिकी-संपराया -कषायास्तत्र भवा सांपरायिकी। सा हि अजीवस्य-पुद्गलराशेः कर्मतापरिणतिरूपा, जीवव्यापारस्याविवक्षणादजीवक्रियोच्यते। सा च सूक्ष्मसंपरायान्तानां गुणस्थानवर्तां भवतीति।

केवल ऐर्यापथिकी क्रिया की व्युत्पत्ति दिखलाई है इस ऐर्यापथिकी क्रिया की प्रवृत्ति की निमित्त तो जो उपशान्तमोह वाले क्षीणमोहवाले और सयोग केवलीके सातावेदनीय रूपसे अजीव पुद्गलराशिका आदन होता है वह है तात्पर्य कहने का यह है कि द्वि समय की स्थितिवाली प्रमाद एव कषाय से वर्जित ऐसी जो कायिकी अथवा वाचिकी क्रिया होती है वह ऐर्यापथिकी क्रिया है यद्यपि यह ऐर्यापथिकी क्रिया जीव के व्यापार रूप होती है फिर भी इसे जो अजीव क्रिया रूप कहा गया है उसका कारण ऐसा है कि इसमें अजीव पुद्गलराशि की प्रधान रूप से विवक्षा हुई है अर्थात् अजीव पुद्गलराशि ही इसमें सातावेदनीयकर्म रूप से परिणत होती है सांपराय नाम कषाय का है इस कषाय में जो क्रिया होती है वह सपरायिकी क्रिया है इस क्रिया में अजीव पुद्गल राशिकी

આ તો કેવળ ઐર્યાપથિકી ક્રિયાની વ્યુત્પત્તિ જ બતાવવામાં આવી છે. ખરેખર તો પ્રમાદ અને કષાયથી રહિત એવી જે ક્રિયા છે તેનું નામ જ ઐર્યાપથિકી ક્રિયા છે ઉપશાન્ત મોહવાળા ક્ષીણમોહવાળા અને સયોગકેવલી દ્વારા સાતાવેદનીય રૂપે જીવ પુદ્ગલરાશિનું જે આદાન થાય છે, તેને ઐર્યાપથિકી ક્રિયાના નિમિત્તરૂપ માનવામાં આવે છે આ કથનનો ભાવાર્થ નીચે પ્રમાણે છે-બે સમયની સ્થિતિવાળી, પ્રમાદ અને કષાયથી રહિત જે કાયિકી અથવા વાચિકી ક્રિયા થાય છે તે ઐર્યાપથિકી ક્રિયા છે જો કે તે ઐર્યાપથિકી ક્રિયા જીવના વ્યાપારરૂપ હોય છે, તો પણ અહીં તેને જે અજીવક્રિયા રૂપે બતાવવામાં આવી છે તેનું કારણ એ છે કે તેમાં અજીવ પુદ્ગલ રાશિની જ પ્રધાન રૂપે (મુખ્યત્વે) વિવક્ષા થઈ હોય છે. એટલે કે અજીવ પુદ્ગલ રાશિ જ તેમાં સાતાવેદનીય રૂપે પરિણત થાય છે સાંપરાય એટલે કષાય. તે કષાયમાં જે ક્રિયા થાય છે તેને સાંપરાયિકી ક્રિયા કહે છે. આ ક્રિયામાં અજીવ પુદ્ગલ

पुनरन्यथा क्रियाया द्वैविध्यमाह–' दो किरियाओ ' इति ।

द्वे क्रिये प्रज्ञप्ते । तद् यथा–कायिकी चैव आधिकरणिकी चैव । कायेन निर्वृत्ता कायिकी–कायव्यापारः । तथा–अधिक्रियते आत्मा नरकादिषु येन, तदधिकरणम्, इह खड्गादिकं बाह्यं वस्तु विवक्षितम् । तत्र भवा आधिकरणिकी । तत्र कायिकी द्विविधा अनुपरतकायक्रिया, दुष्प्रयुक्तकायक्रिया चेति । तत्रानुपरत कायक्रिया=अनुपरतस्य सावद्यानुष्ठानादनिवृत्तस्य मिथ्यादृष्टेः सम्यग्दृष्टे र्वा या कायक्रिया–उत्क्षेपादिरूपा कर्मबन्धस्य कारणं भवति साऽनुपरतकायक्रिया । तथा–

कर्मरूप से परिणति होती है यहां जीवके व्यापार की विवक्षा नहीं हुई है अतः इसे अजीव क्रिया कहा है यह सांपरायिकी क्रिया सूक्ष्म सांपरायान्त तक के जीवों के होती है ।

अब दूसरी प्रकार से भी क्रिया में द्विविधता का प्रतिपादन किया जाता है–" दो किरियाओ " कायिकीक्रिया और आधिकरणिकी क्रिया के भेद से क्रिया दो प्रकार की कही गई है काय से जो क्रिया होती है वह कायिकी क्रिया है यह क्रिया कायव्यापाररूप होती है नरकादिकों में जिसके द्वारा आत्मा रखा जाता है पहुँचाया जाता है वह आधिकरणिकी क्रिया है जीव को नरकादि गतियों में पहुँचाने का कारण वाह्यरूप से खड्गादिवस्तुएँ हैं अनुपरतकाय क्रिया और दुष्प्रयुक्त कार्यक्रिया के भेद से कायिकीक्रिया दो प्रकार की है सावद्य अनुष्ठान से अनिवृत्त हुए मिथ्यादृष्टि को या सम्यग्दृष्टि की जो उत्क्षेपादिरूप

રાશિની કર્મરૂપે પરિણુતિ થાય છે અહીં જીવના વ્યાપારની વિવક્ષા થઈ નથી, તેથી તેને અજીવ ક્રિયા કહેવામાં આવી છે તે સાંપરાયિકી ક્રિયા સૂક્ષ્મ સાંપરાયાન્ત પર્યન્તના જીવોમાં હોય છે.

હવે બીજી રીતે ક્રિયામાં દ્વિવિધાતાનું પ્રતિપાદન કરવામાં આવે છે— " दो किरियाओ " ઇત્યાદિ કાયિકી અને આધિકરણિકીના ભેદથી પણ ક્રિયા બે પ્રકારની કહી છે. કાયા વડે જે ક્રિયા થાય છે, તેને કાયિકી ક્રિયા કહે છે. તે ક્રિયા કાયવ્યાપાર રૂપ હોય છે જે ક્રિયા દ્વારા જીવને (આત્માને) નરકાદિ ગતિમાં જવું પડે છે તે ક્રિયાને આધિકરણિકી ક્રિયા કહે છે જીવને નરકાદિ ગતિઓમા મોકલવામા ખડગ આદિ વસ્તુઓ જ બાહ્યકારણુ રૂપ બને છે. કાયિકી ક્રિયાના નીચે પ્રમાણે બે ભેદ પડે છે–(૧) અનુપરતકાય ક્રિયા અને (૨) દુષ્પ્રયુક્તકાય ક્રિયા. સાવદ્ય (દોષયુક્ત) અનુષ્ઠાનથી અનિવૃત્ત એવાં મિથ્યાદૃષ્ટિની અથવા સમ્યગ્દૃષ્ટિની જે ઉત્ક્ષેપાદિ રૂપ કાયક્રિયા થાય છે, તે

दुष्प्रयुक्तकायक्रिया=दुष्प्रयुक्तस्य-दुर्णयसम्पन्नस्य इन्द्रियाण्याश्रित्य मनोज्ञशब्दादिसंयोगे हर्षेण अमनोज्ञशब्दादिसंयोगे च उद्वेगेन, तथा-अनिन्द्रियमाश्रित्याऽशुभमनःसंकल्पेन, संवेगनिर्वेदापगमात् मोक्षमार्गे प्रति दुर्व्यवस्थितस्य-प्रमत्तसंयतस्येत्यर्थः, या कायक्रिया भवति, सा दुष्प्रयुक्तकायक्रिया । आधिकरणिकी क्रियाऽपि द्विविधा संयोजनाधिकरणिकी, निर्वर्तनाधिकरणिकी चेति । तत्र संयोजनाधिकरणिकी=यत् खलु पूर्वनिर्मितयोः खड्ग-तन्मुष्ट्यादिकयोः पदार्थयोः क्रियते, सा संयोजनाधिकरणिकी । तथा-यत् खलु खड्ग-तन्मुष्ट्यादिकयोः पदार्थयोर्निर्वर्तनं निर्माणं, सा निर्वर्तनाधिकरणिकी ।

पुनरन्यथा क्रियाया द्वैविध्यमाह-'दो किरियाओ' इत्यादि । द्वे क्रिये

काय क्रिया कर्मबन्ध का कारण होती है वह अनुपरतकायक्रिया है तथा इन्द्रियोंको आश्रित करके मनोज्ञशब्दादिके संयोग में हर्ष होने से और अमनोज्ञशब्दादिकों के संयोग में उद्वेग होने से तथा अनिन्द्रिय को आश्रित करके अशुभमन के संकल्प से संवेग निर्वेद के अपगम से मोक्षमार्ग के प्रति दुर्व्यवस्थित हुए दुर्णयसंपन्न प्रमत्त संयत के जो काय क्रिया होती है वह दुष्प्रयुक्त कायक्रिया है संयोजनाधिकरणिकी और निर्वर्तनाधिकरणिकीके भेदसे आधिकरणिकी क्रिया दो प्रकारकी होती है पूर्वनिर्मित खड्ग और उसकी मूठ आदि पदार्थों का आपस में संयोजन करना इसका नाम संयोजनाधिकरणिकी क्रिया है तथा खड्ग और उसकी मूठ आदिकी रचना करना बनाना यह निर्वर्तनाधिकरणिकी क्रिया है ।

ક્રિયાને અનુપરતકાય ક્રિયા કહે છે તે કર્મબંધના કારણભૂત બને છે તથા ઇન્દ્રિયોને આધારે મનોજ્ઞ શબ્દાદિના સંયોગમાં હર્ષ થવાથી અને અમનોજ્ઞ શબ્દાદિકોના સંયોગમાં ઉદ્વેગ થવાથી તથા અનિન્દ્રિયોની અપેક્ષાએ અશુભ મનના સંકલ્પથી સંવેગ નિર્વેદના અપગમથી મોક્ષમાર્ગ દુર્વ્યવસ્થિત થયેલા દુર્ણય સંપન્ન પ્રમત્ત સંયત દ્વારા જે કાયક્રિયા થાય છે તેને દુષ્પ્રયુક્ત કાય ક્રિયા કહે છે આધિકરણિકી ક્રિયાના પણ નીચે પ્રમાણે બે પ્રકાર પડે છે—
(૧) સંયોજનાધિકરણિકી અને (૨) નિર્વર્તનાધિકરણિકી. પૂર્વનિર્મિત ખડ્ગ અને તેની મૂઠ આદિનું સંયોજન કરવું તેનું નામ સંયોજનાધિકરણિકી ક્રિયા છે પરન્તુ ખડ્ગ, મૂઠ આદિની રચના કરવી તે નિર્વર્તનાધિકરણિકી ક્રિયા છે

प्रज्ञप्ते, तद् यथा-प्राद्वेपिकी, पारितापनिकी चेति। प्रद्वेषेण निर्वृत्ता प्राद्वेपिकी। तथा-परितापनं-ताडनादिदुःखविशेषरूपं, तेन निर्वृत्ता पारितापनिकी। तत्र प्राद्वेपिकी द्विविधा-जीव-प्राद्वेषिकी, अजीवप्राद्वेपिकी चेति। तत्र जीव-प्राद्वेपिकी क्रिया जीवे प्रद्वेपाज्जायते। अजीवे-पाषाणादौ स्खलनादिना प्रद्वेषाज्जायमानाऽजीवप्राद्वेपिकी पारितापनिकी। चापि क्रिया द्विविधा-स्वहस्तपारितापनिकी, परहस्तपारितापनिकी चेति। स्वहस्तेन स्वदेहस्य परदेहस्य वाऽऽर्त्तध्यानादिभिस्ताडनादिरूपं परितापनं कुर्वतो जीवस्य या क्रिया भवति, सा स्वहस्तपारितापनिकी। तथा-परहस्तेन परितोपनं कारयतो जीवस्य या क्रिया भवति, सा परहस्तपारितापनिकी।

इस प्रकार से भी क्रिया दो प्रकार की है एक प्राद्वेगिकी क्रिया और दूसरी पारितापनिकी क्रिया जो क्रिया प्रद्वेष से निष्पन्न होती है वह प्राद्वेपिकी क्रिया है तथा जो परितापन से ताडनादि दुःख विशेषरूप से उत्पन्न होती है वह पारितापनिकी क्रिया है इनमें प्राद्वेपिकीक्रिया जीव प्राद्वेपिकी और अजीव प्राद्वेषिकी के भेद से दो प्रकार की है जीव में जो क्रिया प्रद्वेप से उत्पन्न होती है वह जीव प्राद्वेपिकी क्रिया है पाषाण आदि पर स्खलित आदि होने से जन्य प्रद्वेष से जो क्रिया होती है वह अजीव प्राद्वेषिकी क्रिया है पारितापनिकी क्रिया भी दो प्रकार की है-१ स्वहस्तपारितापनिकी और २ परहस्तपारितापनिकी आर्त्तध्यान आदि के वशावर्ती होने से अपने ही हाथों द्वारा अपने शरीर का या पर के शरीर का ताडनादिरूप परितापन करनेवाले जीव को जो क्रिया होती है वह स्वहस्त पारितापनिकी क्रिया है तथा पर के

પ્રાદ્વેષિકી, અને પારિતાપનિકીના ભેદથી પણ ક્રિયાના બે પ્રકાર પડે છે. જે ક્રિયા પ્રદ્વેષના કારણે થાય છે, તે ક્રિયાને પ્રાદ્વેષિકી ક્રિયા કહે છે જે ક્રિયા પરિતાપના દ્વારા-માર મારવાની ક્રિયા આદિ દુઃખ વિશેષરૂપે ઉત્પન્ન થાય છે, તે ક્રિયાને પારિતાપનિકી ક્રિયા કહે છે પ્રાદ્વેષિકી ક્રિયાના નીચે પ્રમાણે બે ભેદ છે (૧) જીવ પ્રાદ્વેષિકી અને (૨) અજીવ પ્રાદ્વેષિકી જીવમાં જે ક્રિયા પ્રદ્વેષથી ઉત્પન્ન થાય છે તે ક્રિયાને જીવપ્રાદ્વેષિકી ક્રિયા કહે છે પાષાણુ આદિ પર સ્ખલિત આદિ થવાથી જન્ય પ્રદ્વેષ દ્વારા જે ક્રિયા થાય છે, તે ક્રિયાને અજીવપ્રાદ્વેષિકી ક્રિયા કહે છે. પારિતાપનિકી ક્રિયાના પણ બે ભેદ છે— (૧) સ્વહસ્ત પારિતાપનિકી (૨) પરહસ્ત પારિતાપનિકી આર્ત્તધ્યાન આદિને અધીન થઇને પોતાના હાથે જ પોતાના શરીરપર અથવા અન્યના શરીરપર માર મારવારૂપ જે ક્રિયા જીવદ્વારા કરાય છે, તે ક્રિયાને સ્વહસ્ત પારિતાપનિકી

दुष्प्रयुक्तकायक्रिया=दुष्प्रयुक्तस्य-दुर्भावसम्पन्नस्य इन्द्रियाण्याश्रित्य मनोज्ञशब्दादिसं योगे हर्षेण अमनोज्ञशब्दादिसंयोगे च उद्वेगेन, तथा-अनिन्द्रियमाश्रित्याऽशुभमन संकल्पेन, संवेगनिर्वेदापगमाद् मोक्षमार्गे प्रति दुर्व्यवस्थितस्य-प्रमत्तसंयतस्येत्यर्थः, या कायक्रिया भवति, सा दुष्प्रयुक्तकायक्रिया । आधिकरणिकी क्रियाऽपि द्विविधा संयोजनाधिकरणिकी, निर्वर्तनाधिकरणिकी चेति । तत्र संयोजनाधिकरणिकी=यत् खलु पूर्वनिर्मितयोः खड्ग-तन्मुष्ट्यादिकयोः पदार्थयोः क्रियते, सा संयोजनाधिकरणिकी । तथा-यत् खलु खड्ग-तन्मुष्ट्यादिकयोः पदार्थयोर्निर्वर्तनं निर्माणं, सा निर्वर्तनाधिकरणिकी ।

पुनरन्यथा क्रियाया द्वैविध्यमाह-'दो किरियाओ' इत्यादि । द्वे क्रिये

काय क्रिया कर्मबन्ध का कारण होती है वह अनुपरतकायक्रिया है तथा इन्द्रियोंको आश्रित करके मनोज्ञशब्दादिके संयोग में हर्ष होने से और अमनोज्ञशब्दादिकों के संयोग में उद्वेग होने से तथा अनिन्द्रिय को आश्रित करके अशुभमन के सकल्प से सवेग निर्वेद के अपगम से मोक्षमार्ग के प्रति दुर्व्यवस्थित हुए दुर्भावसपन्न प्रमत्त संयत के जो काय क्रिया होती है वह दुष्प्रयुक्त कायक्रिया है संयोजनाधिकरणिकी और निर्वर्तनाधिकरणिकीके भेदसे आधिकरणिकी क्रिया दो प्रकारकी होती है पूर्वनिर्मित खड्ग और उसकी मूठ आदि पदार्थों का आपस में संयोजन करना इसका नाम संयोजनाधिकरणिकी क्रिया है तथा खड्ग और उसकी मूठ आदिकी रचना करना बनाना यह निर्वर्तनाधिकरणिकी क्रिया है ।

ક્રિયાને અનુપરતકાય ક્રિયા કહે છે તે કર્મબંધના કારણભૂત બને છે તથા ઇન્દ્રિયોને આધારે મનોજ્ઞ શબ્દાદિના સંયોગમાં હર્ષ થવાથી અને અમનોજ્ઞ શબ્દાદિકોના સંયોગમાં ઉદ્વેગ થવાથી, તથા અનિન્દ્રિયોની અપેક્ષાએ અશુભ મનના સંકલ્પથી સંવેગ નિર્વેદના અપગમથી મોક્ષમાર્ગ દુર્વ્યવસ્થિત થયેલા દુર્ભાવ સંપન્ન પ્રમત્ત સંયત દ્વારા જે કાયક્રિયા થાય છે તેને દુષ્પ્રયુક્ત કાય ક્રિયા કહે છે આધિકરણિકી ક્રિયાના પણ નીચે પ્રમાણે બે પ્રકાર પડે છે—(૧) સંયોજનાધિકરણિકી અને (૨) નિર્વર્તનાધિકરણિકી પૂર્વનિર્મિત ખડ્ગ અને તેની મૂઠ આદિનું સંયોજન કરવું તેનું નામ સંયોજનાધિકરણિકી ક્રિયા છે પરન્તુ ખડ્ગ, મૂઠ આદિની રચના કરવી તે નિર્વર્તનાધિકરણિકી ક્રિયા છે

प्रज्ञप्ते, तद् यथा–प्राद्वेषिकी, पारितापनिकी चेति। प्रद्वेषेण निर्वृत्ता प्राद्वेषिकी। तथा–परितापनं–ताडनादिदुःखविशेषरूपं, तेन निर्वृत्ता पारितापनिकी। तत्र प्राद्वेपिकी द्विविधा-जीव-प्राद्वेषिकी, अजीवप्राद्वेपिकी चेति। तत्र जीव–प्राद्वेपिकी क्रिया जीवे प्रद्वेषाज्जायते। अजीवे–पाषाणादौ स्खलनादिना प्रद्वेषाज्जायमानाऽजीवप्राद्वेपिकी पारितापनिकी। चापि क्रिया द्विविधा–स्वहस्तपारितापनिकी, परहस्तपारितापनिकी चेति। स्वहस्तेन स्वदेहस्य परदेहस्य वाऽऽर्त्तध्यानादिभिस्ताडनादिरूपं परितापनं कुर्वतो जीवस्य या क्रिया भवति, सा स्वहस्तपारितापनिकी। तथा–परहस्तेन परितापनं कारयतो जीवस्य या क्रिया भवति, सा परहस्तपारितापनिकी।

इस प्रकार से भी क्रिया दो प्रकार की है एक प्राद्वेषिकी क्रिया और दूसरी पारितापनिकी क्रिया जो क्रिया प्रद्वेष से निष्पन्न होती है वह प्राद्वेपिकी क्रिया है तथा जो परितापन से ताडनादि दुःख विशेषरूप से उत्पन्न होती है वह पारितापनिकी क्रिया है इनमें प्राद्वेपिकीक्रिया जीव प्राद्वेपिकी और अजीव प्राद्वेषिकी के भेद से दो प्रकार की है जीव में जो क्रिया प्रद्वेष से उत्पन्न होती है वह जीव प्राद्वेपिकी क्रिया है पाषाण आदि पर स्खलित आदि होने से जन्य प्रद्वेष से जो क्रिया होती है वह अजीव प्राद्वेपिकी क्रिया है पारितापनिकी क्रिया भी दो प्रकार की है–१ स्वहस्तपारितापनिकी और २ परहस्तपारितापनिकी आर्त्तध्यान आदि के वशवर्ती होने से अपने ही हाथों द्वारा अपने शरीर का या पर के शरीर का ताडनादिरूप परितापन करनेवाले जीव को जो क्रिया होती है वह स्वहस्त पारितापनिकी क्रिया है तथा पर के

પ્રાદ્વેષિકી, અને પારિતાપનિકીના ભેદથી પણ ક્રિયાના બે પ્રકાર પડે છે. જે ક્રિયા પ્રદ્વેષના કારણે થાય છે, તે ક્રિયાને પ્રાદ્વેષિકી ક્રિયા કહે છે જે ક્રિયા પરિતાપના દ્વારા–માર મારવાની ક્રિયા આદિ દુઃખ વિશેષરૂપે ઉત્પન્ન થાય છે, તે ક્રિયાને પારિતાપનિકી ક્રિયા કહે છે. પ્રાદ્વેષિકી ક્રિયાના નીચે પ્રમાણે બે ભેદ છે (૧) જીવ પ્રાદ્વેષિકી અને (૨) અજીવ પ્રાદ્વેષિકી જીવમાં જે ક્રિયા પ્રદ્વેષથી ઉત્પન્ન થાય છે તે ક્રિયાને જીવપ્રાદ્વેષિકી ક્રિયા કહે છે પાષાણ આદિ પર સ્ખલિત આદિ થવાથી જન્ય પ્રદ્વેષ દ્વારા જે ક્રિયા થાય છે, તે ક્રિયાને અજીવપ્રાદ્વેષિકી ક્રિયા કહે છે પારિતાપનિકી ક્રિયાના પણ બે ભેદ છે— (૧) સ્વહસ્ત પારિતાપનિકી (૨) પરહસ્ત પારિતાપનિકી આર્ત્તધ્યાન આદિને અધીન થઈને પોતાના હાથે જ પોતાના શરીરપર અથવા અન્યના શરીરપર માર મારવારૂપ જે ક્રિયા જીવદ્વારા કરાય છે, તે ક્રિયાને સ્વહસ્ત પારિતાપનિકી

पुनरन्यथा क्रियाया द्वैविध्यमाह-'दो किरियाओ' इत्यादि। द्वे क्रिये प्रज्ञप्ते। तद् यथा-प्राणातिपातक्रिया, अप्रत्याख्यानक्रिया चेति। प्राणिप्राणवियोजन-प्राणातिपात, स एव क्रिया प्राणातिपातक्रिया। यद्वा-प्राणातिपातेन-प्राणातिपाताध्यवसायेन यः प्राणातिपातः क्रियते, सा प्राणातिपातक्रिया। प्राणातिपाताध्यवसायेन जायमाना ताडनादिरूपा क्रियाऽपि प्राणवियोजनाभावेऽप्युपचारत प्राणातिपातक्रियैव बोध्या। तथा-अप्रत्याख्यानक्रिया=अप्रत्याख्यानम्-अविरतिस्तन्निमित्तकर्मबन्धरूपा क्रिया भवति, सा अप्रत्याख्यानक्रिया। सा चाविरतानां-भवति। प्राणातिपातक्रिया द्विविधा प्रज्ञप्ता, तद् यथा-स्वहस्तप्राणातिपातक्रिया, परहस्तप्राणातिपातक्रिया चेति। तत्र-स्वहस्तप्राणातिपातक्रिया=आर्त्तावस्थायां विपत्नाशो च निर्वेदादिना य स्वहस्तेन स्वप्राणान् अतिपातयति, क्रोधादिना वा स्वहस्तेन परप्राणान् अतिपातयति, तस्य स्वहस्तप्राणातिपातक्रिया

हाथ से परितापन कराने वाले जीव के जो क्रिया होती है वह परहस्त पारितापनिकी क्रिया है इस प्रकार से भी क्रिया में द्विविधता है-एक प्राणातिपात क्रिया और दूसरी अप्रत्याख्यान क्रिया जिस क्रिया में प्राणियों के प्राणों का नाश किया जाता है वह प्राणातिपात क्रिया है अथवा प्राणातिपात के अध्यवसाय द्वारा जो प्राणातिपात किया जाता है वह प्राणातिपात क्रिया है प्राणातिपात करने के अभिप्राय से किया गया ताडनादिरूप कर्म भी प्राणवियोजन के अभाव में भी प्राणातिपात क्रिया रूप ही माना गया है। अविरति का नाम अप्रत्याख्यान है इस अविरतिनिमित्तक जो कर्म का बन्ध होता है वह अप्रत्याख्यान क्रिया है यह अप्रत्याख्यान क्रिया अविरत जीवों के होती है प्राणातिपात क्रिया दो प्रकारकी होती है एक स्वहस्त प्राणातिपात क्रिया और दूसरी परहस्त

ક્રિયા કહે છે તથા પારકાને હાથે પરિતાપના કરાવનાર જીવ દ્વારા જે ક્રિયા થાય છે તે ક્રિયાને પરહસ્ત પારિતાપનિકી ક્રિયા કહે છે

પ્રાણાતિપાત ક્રિયા અને અપ્રત્યાખ્યાન ક્રિયાના ભેદથી પણ ક્રિયાના બે પ્રકાર પાડી શકાય છે જે ક્રિયા દ્વારા જીવોના પ્રાણ હરી લેવામાં આવે છે તે ક્રિયાને-પ્રાણાતિપાત ક્રિયા કહે છે અથવા પ્રાણાતિપાતના અધ્યવસાય (વિચાર) દ્વારા જે પ્રાણાતિપાત કરાય છે તે પણ પ્રાણાતિપાત ક્રિયા જ છે પ્રાણાતિપાત કરવાના હેતુપૂર્વક જે તાડનાદિ કર્મ કરવામાં આવે છે, તેના દ્વારા પ્રાણવિયોજન થતું ન હોય તો પણ તેને પ્રાણાતિપાત ક્રિયા રૂપ જ માનવામાં આવે છે અવિરતિને અપ્રત્યાખ્યાન કહે છે આ અવિરતિને કારણે જે કર્મનો બંધ થાય છે, તે અપ્રત્યાખ્યાન ક્રિયા જ છે અવિરત જીવો દ્વારા આ અપ્રત્યાખ્યાન ક્રિયા થાય છે પ્રાણાતિપાત ક્રિયાના નીચે પ્રમાણે બે ભેદ છે-(૧) સ્વહસ્ત પ્રાણાતિપાત ક્રિયા અને (૨) પરહસ્ત પ્રાણાતિપાત ક્રિયા.

भवति। तथा-परहस्तेनापि प्राणातिपातक्रिया भवति, अप्रत्याख्यानक्रियाऽपि द्विविधा-जीवाऽप्रत्याख्यानक्रिया, अजीवाप्रत्याख्यानक्रिया चेति। जीवविषये प्रत्याख्यानाभावेन यः कर्मणां बन्धादिव्यापारः सा जीवाप्रत्याख्यानक्रिया। यत्तु अजीवेषु मद्यमांसादिषु प्रत्याख्यानाभावात् कर्मबन्धनं सा अजीवाप्रत्याख्यानक्रिया, इति।

पुनरन्यथा-क्रियाया द्वैविध्यमाह-'दो किरियाओ' इत्यादि। द्वे क्रिये

प्राणातिपात क्रिया स्वहस्त प्राणातिपात क्रिया उस समय होती है जब जीव आर्त्तावस्थामें विपत्तिके आजानेपर निर्वेदादिसे युक्त होकर अथवा क्रोधादि के वशवर्त्ती होकर अपने ही हाथों से अपने प्राणों को नष्टकर डालता है तथा इसी प्रकारसे जब जीव के प्राणोंका परके हस्तादि द्वारा अपहरण किया जाता है तब वहां परहस्त प्राणातिपात क्रिया होती है अप्रत्याख्यान क्रिया भी दो प्रकारकी होती है एक जीवाप्रत्याख्यानक्रिया दूसरी अजीवाप्रत्याख्यानक्रिया जीव में जो प्रत्याख्यान के अभाव से कर्मों का बन्धनादिरूप व्यापार होता है वह जीवाप्रत्याख्यान क्रिया है तथा मद्यमांस आदि अजीव पदार्थों के अप्रत्याख्यान को लेकर जो जीव के कर्मबन्ध होता है वह अजीवाप्रत्याख्यान क्रिया है।

इस प्रकार से भी क्रिया दो प्रकार की है-एक आरम्भिकी और

જીવ જ્યારે ક્રોધાદિને કારણે આર્તધ્યાન આદિને અધીન થઈને પોતાના હાથેજ પોતાનાં પ્રાણોને નષ્ટ કરી નાખે છે-આપઘાત કરે છે, અથવા અન્યના પ્રાણોનો નાશ કરે છે ત્યારે તેના દ્વારા સ્વહસ્ત પ્રાણાતિપાત ક્રિયા થતી હોય છે. એજ પ્રમાણે અન્યને હાથે જીવના પ્રાણોનો નાશ કરાવવા રૂપ જે ક્રિયા થાય છે તે ક્રિયાને પરહસ્ત પ્રાણાતિપાત ક્રિયા કહે છે. અપ્રત્યાખ્યાન ક્રિયાના પણ નીચે પ્રમાણે બે ભેદ છે-(૧) જીવાપ્રત્યાખ્યાન ક્રિયા અને (૨) અજીવા પ્રત્યાખ્યાન ક્રિયા. પ્રત્યાખ્યાનના અભાવે કરીને કર્મોના બંધનાદિ રૂપ જે વ્યાપાર (પ્રવૃત્તિ) જીવ દ્વારા થાય છે, તેને જીવાપ્રત્યાખ્યાન ક્રિયા કહે છે. તથા મદ્ય, માંસ આદિ અજીવ પદાર્થોના અપ્રત્યાખ્યાનની અપેક્ષાએ જીવ કર્મનો બંધક બને છે, આ પ્રકારની તેની ક્રિયાને અજીવાપ્રત્યાખ્યાન ક્રિયા કહે છે.

આરંભિકી અને પારિગ્રહિકીના ભેદથી પણ ક્રિયા બે પ્રકારની હોય છે.

पुनरन्यथा क्रियाया द्वैविध्यमाह-'दो किरियाओ' इत्यादि। द्वे क्रिये मज्ञप्ते। तद् यथा-प्राणातिपातक्रिया, अप्रत्याख्यानक्रिया चेति। प्राणिप्राणवियोजन-प्राणातिपात, स एव क्रिया प्राणातिपातक्रिया। यद्वा-प्राणातिपातेन-प्राणातिपाताध्यवसायेन यः प्राणातिपात क्रियते, सा प्राणातिपातक्रिया। प्राणातिपाताध्यवसायेन जायमाना ताडनादिरूपा क्रियाऽपि प्राणवियोजनाभावेऽप्युपचारत प्राणातिपातक्रियेव बोध्या। तथा-अप्रत्याख्यानक्रिया=अप्रत्याख्यानम्-अविरतिस्तन्निमित्ताकर्मबन्धरूपा क्रिया भवति, सा अप्रत्याख्यानक्रिया। सा चाविरतानां-भवति। प्राणातिपातक्रिया द्विविधा मज्ञप्ता, तद् यथा-स्वहस्तप्राणातिपातक्रिया, परहस्तप्राणातिपातक्रिया चेति। तत्र-स्वहस्तप्राणातिपातक्रिया=आर्तावस्थायां विपन्नार्तो च निर्वेदादिना य स्वहस्तेन स्वप्राणान् अतिपातयति, क्रोधादिना वा स्वहस्तेन परप्राणान् अतिपातयति, तस्य स्वहस्तप्राणातिपातक्रिया

हाथ से परितापन कराने वाले जीव के जो क्रिया होती है वह परहस्त पारितापनिकी क्रिया है इस प्रकार से भी क्रिया में द्विविधता है-एक प्राणातिपात क्रिया और दूसरी अप्रत्याख्यान क्रिया जिस क्रिया में प्राणियों के प्राणों का नाश किया जाता है वह प्राणातिपात क्रिया है अथवा प्राणातिपात के अध्यवसाय द्वारा जो प्राणातिपात किया जाता है वह प्राणातिपात क्रिया है प्राणातिपात करने के अभिप्राय से किया गया ताडनादिरूप कर्म भी प्राणवियोजन के अभाव में भी प्राणातिपात क्रिया रूप ही माना गया है। अविरति का नाम अप्रत्याख्यान है इस अविरतिनिमित्तक जो कर्म का बन्ध होता है वह अप्रत्याख्यान क्रिया है यह अप्रत्याख्यान क्रिया अविरत जीवों के होती है प्राणातिपात क्रिया दो प्रकारकी होती है एक स्वहस्त प्राणातिपात क्रिया और दूसरी परहस्त

ક્રિયા કહે છે તથા પારકાને હાથે પરિતાપના કરાવનાર જીવ દ્વારા જે ક્રિયા થાય છે તે ક્રિયાને પરહસ્ત પારિતાપનિકી ક્રિયા કહે છે

પ્રાણાતિપાત ક્રિયા અને અપ્રત્યાખ્યાન ક્રિયાના ભેદથી પણ ક્રિયાના બે પ્રકાર પાડી શકાય છે જે ક્રિયા દ્વારા જીવોનાં પ્રાણ હરી લેવામાં આવે છે તે ક્રિયાને-પ્રાણાતિપાત ક્રિયા કહે છે અથવા પ્રાણાતિપાતના અધ્યવસાય (વિચાર) દ્વારા જે પ્રાણાતિપાત કરાય છે તે પણ પ્રાણાતિપાત ક્રિયા જ છે પ્રાણાતિપાત કરવાના હેતુપૂર્વક જે તાડનાદિ કર્મ કરવામાં આવે છે તેના દ્વારા પ્રાણવિયોજન ભલે ન હોય તો પણ તેને પ્રાણાતિપાત ક્રિયા રૂપ જ માનવામાં આવે છે અવિરતિને અપ્રત્યાખ્યાન કહે છે આ અવિરતિને કારણે જે કર્મનો બંધ થાય છે તે અપ્રત્યાખ્યાન ક્રિયા જ છે અવિરત જીવો દ્વારા આ અપ્રત્યાખ્યાન ક્રિયા થાય છે પ્રાણાતિપાત ક્રિયાના નીચે પ્રમાણે બે ભેદ છે-(૧) સ્વહસ્ત પ્રાણાતિપાત ક્રિયા અને (૨) પરહસ્ત પ્રાણાતિપાત ક્રિયા.

भवति। तथा-परहस्तेनापि प्राणातिपातक्रिया भवति, अप्रत्याख्यानक्रियाऽपि द्विविधा-जीवाऽप्रत्याख्यानक्रिया, अजीवाप्रत्याख्यानक्रिया चेति। जीवविषये प्रत्याख्यानाभावेन यः कर्मणां बन्धादिव्यापारः सा जीवाप्रत्याख्यानक्रिया। यत्तु अजीवेषु मद्यमांसादिषु प्रत्याख्यानाभावात् कर्मबन्धनं सा अजीवाप्रत्याख्यानक्रिया, इति।

पुनरन्यथा-क्रियाया द्वैविध्यमाह-'दो किरियाओ' इत्यादि। द्वे क्रिये

प्राणातिपात क्रिया स्वहस्त प्राणातिपात क्रिया उस समय होती है जब जीव आर्त्तावस्थामें विपत्तिके आजानेपर निर्वेदादिसे युक्त होकर अथवा क्रोधादि के वशवर्त्ती होकर अपने ही हाथों से अपने प्राणों को नष्टकर डालता है तथा इसी प्रकारसे जब जीव के प्राणोंका परके हस्तादि द्वारा अपहरण किया जाता है तब वहां परहस्त प्राणातिपात क्रिया होती है अप्रत्याख्यान क्रिया भी दो प्रकारकी होती है एक जीवाप्रत्याख्यानक्रिया दूसरी अजीवाप्रत्याख्यानक्रिया जीव में जो प्रत्याख्यान के अभाव से कर्मों का बन्धनादिरूप व्यापार होता है वह जीवाप्रत्याख्यान क्रिया है तथा मद्यमांस आदि अजीव पदार्थो के अप्रत्याख्यान को लेकर जो जीव के कर्मबन्ध होता है वह अजीवाप्रत्याख्यान क्रिया है।

इस प्रकार से भी क्रिया दो प्रकार की है-एक आरम्भिकी और

જીવ જ્યારે ક્રોધાદિને કારણે આર્તધ્યાન આદિને અધીન થઈને પોતાના હાથેજ પોતાનાં પ્રાણોને નષ્ટ કરી નાખે છે-આપઘાત કરે છે, અથવા અન્યના પ્રાણોનો નાશ કરે છે ત્યારે તેના દ્વારા સ્વહસ્ત પ્રાણાતિપાત ક્રિયા થતી હોય છે. એજ પ્રમાણે અન્યને હાથે જીવના પ્રાણોનો નાશ કરાવવા રૂપ જે ક્રિયા થાય છે તે ક્રિયાને પરહસ્ત પ્રાણાતિપાત ક્રિયા કહે છે. અપ્રત્યાખ્યાન ક્રિયાના પણ નીચે પ્રમાણે બે ભેદ છે-(૧) જીવાપ્રત્યાખ્યાન ક્રિયા અને (૨) અજીવા પ્રત્યાખ્યાન ક્રિયા. પ્રત્યાખ્યાનના અભાવે કરીને કર્મોના બંધનાદિ રૂપ જે વ્યાપાર (પ્રવૃત્તિ) જીવ દ્વારા થાય છે, તેને જીવાપ્રત્યાખ્યાન ક્રિયા કહે છે. તથા મદ્ય, માંસ આદિ અજીવ પદાર્થોના અપ્રત્યાખ્યાનની અપેક્ષાએ જીવ કર્મનો બંધક બને છે, આ પ્રકારની તેની ક્રિયાને અજીવાપ્રત્યાખ્યાન ક્રિયા કહે છે.

આરંભિકી અને પારિગ્રહિકીના ભેદથી પણ ક્રિયા બે પ્રકારની હોય છે.

भवन्ते । तद् यथा-आरम्भिकी, पारिग्रहिकी चेति । तत्रारम्भिकी आरम्भे भवा आरम्भिकी । तथा-परिग्रहे भवा पारिग्रहिकी । आरम्भिकीक्रिया द्विविधा-जीवा रम्भिकी, अजीवारम्भिकी चेति । यत् खलु जीवान् आरममाणस्य उपमर्दयतः कर्मबन्धनं सा जीवारम्भिकी । तथा-यत् खलु अजीवान् जीवकलेवराणि, पिष्टादिमयान् जीवाकारान्, वस्त्रादीन् वा आरममाणस्य कर्मबन्धनं सा अजीवारम्भिकी। पारिग्रहिकी चापि द्विविधा तस्या जीवाजीवपरिग्रहजन्यत्वादिति भाव ।

दूसरी पारिग्रहीकी आरम्भ के होने पर या आरम्भ के करने में जो क्रिया होती है वह आरम्भिकी क्रिया है तथा परिग्रह के होने पर या परिग्रह के जुटाने में जो क्रिया होती है वह पारिग्रहिकी क्रिया है आरम्भिकी क्रिया दो प्रकार की होती है जीवारम्भिकी और अजीवारम्भिकी आरम करते हुए जीव को जीवों का उपमर्दन होने से जो कर्म का बन्धन होता है वह जीवारम्भिकी क्रिया है अजीवों के जीवकलेवरों के आरम्भ करने वाले अथवा पिष्टादिमय जीव कलेवरों या जीवाकार वस्त्रादिकों का उपमर्दन करने वाले जीव के जो कर्म का बन्धन होता है वह अजीवारम्भिकी क्रिया है तात्पर्य ऐसा है कि "नवारम्भो विना वधात्" आरम्भ बिना वध के नहीं होता है इस सिद्धान्त वाक्य के अनुसार जहां पर भी आरम्भ है वहां नियमतः जीव का वध है चाहे वह जीवों का आरम्भ हो चाहे अजीवों का आरम्भ हो इसी प्रकार से पारिग्रहिकी क्रिया भी जीव एव अजीव के परिग्रह से दो प्रकार की है

આરંભ થવાથી અથવા આરંભ કરવાથી જે ક્રિયા થાય છે તેને આરંભિકી ક્રિયા કહે છે પરિગ્રહ કરવાથી અથવા પરિગ્રહરૂપ સામગ્રીઓ એકત્ર કરવાથી જે ક્રિયા થાય છે તે ક્રિયાને પારિગ્રહિકી ક્રિયા કહે છે આરંભિકી ક્રિયાના બે ભેદ છે-(૧) જીવારંભિકી અને (૨) અજીવારંભિકી આરંભ કરતાં જીવ દ્વારા જીવોનું ઉપમર્દન થવાથી જે કર્મનો બંધ પડે છે તે જીવારંભિકી ક્રિયા ગણાય છે અજીવોનો-જીવકલેવરોનો આરંભ કરનારા અથવા પિષ્ટાદિમય જીવ કલેવરો અથવા જીવાકાર વસ્ત્રાદિકોનું ઉપમર્દન કરનાર જીવો દ્વારા જે કર્મનો બંધ કરવારૂપ ક્રિયા થાય છે તેને અજીવારંભિકી ક્રિયા કહે છે આ કથનનો ભાવાર્થ નીચે પ્રમાણે છે-"नवारम्भो विना वधात्" 'વધ વિના આરંભ થતો નથી' આ સિદ્ધાન્ત વાક્ય અનુસાર જ્યાં જ્યાં આરંભ થતો હોય છે ત્યાં ત્યાં જીવોનો વધ પણ અવશ્ય થતો જ હોય છે પછી ભલે તે જીવોના આરંભ હોય કે અજીવોનો આરંભ હોય પારિગ્રહિકી ક્રિયાના પણ બે ભેદ છે-(૧) જીવપારિગ્રહિકી અને (૨) અજીવપારિગ્રહિકી.

पुनरन्यथा क्रियाया द्वैविध्यमाह-' दो किरियाओ ' इत्यादि। द्वे क्रिये प्रज्ञप्ते। तद् यथा-मायाप्रत्यया, मिथ्यादर्शनप्रत्यया चेति। तत्र मायाप्रत्यया= मायाप्रत्ययो-यस्याः-क्रियायाः सा तथा। मायाहेतुककर्मबन्धक्रियेत्यर्थः। तथा-मिथ्यादर्शनं-मिथ्यात्व, प्रत्ययः-कारणं यस्याः सा मिथ्यादर्शनप्रत्यया। माया प्रत्यया क्रिया द्विविधा-आत्मभाववङ्कनता, परभाववङ्कनता चेति। अप्रशस्तस्यात्म-भावस्य वङ्कनता-वक्रीकरणं, अप्रशस्तात्मभावप्रच्छादनपूर्वकं प्रशस्तभावोपदर्शनमि-त्यर्थः सा आत्मभाववङ्कनता। सा च क्रिया, व्यापाररूपत्वात्। तथा-परभावस्य वङ्कनता-वञ्चनता या कूटलेखकरणादिभिः क्रियते, सा परभाववङ्कनता मिथ्या-

क्रिया की द्विविधता इस प्रकारसे भी है एक माया प्रत्यया और दूसरी मिथ्यादर्शन प्रत्यया जिस क्रिया का कारण माया होती है वह माया प्रत्यया क्रिया है इस माया प्रत्यया क्रिया में कर्म का बन्ध जीव के मायाहेतुक होता है तथा-जिस क्रिया का कारण मिथ्यादर्शन होता है वह मिथ्यादर्शन प्रत्यया क्रिया है इस क्रिया में जो कर्म का बन्ध होता है वह मिथ्यादर्शन हेतुक होता है माया प्रत्यया क्रिया आत्म भाववङ्क-नता और परभाववङ्कनता के भेद से दो प्रकार की होती है अप्रशस्त आत्मभाव को वक्र करना अर्थात् अप्रशस्त आत्मभाव का प्रच्छादन करते हुए अपने में प्रशस्तभाव का उपदर्शन करना इसका नाम आत्म भाववङ्कनता है यह क्रिया व्यापाररूप होता है जो क्रिया झूठे स्टाम्प वगैरह लिखाने आदि से होती है वह परभाववङ्कनता है इस क्रिया में परभावों की वंचनता कूटलेख आदिकों द्वारा की जाती है मिथ्यादर्शन

ક્રિયાના નીચે પ્રમાણે બે પ્રકાર પણ પાડી શકાય છે-(૧) માયાપ્રત્યયા અને (૨) મિથ્યાદર્શનપ્રત્યયા. જે ક્રિયાનુ નિમિત્ત માયા હોય છે તે ક્રિયાને માયાપ્રત્યયા ક્રિયા કહે છે આ ક્રિયામાં જીવ માયા નિમિત્તે કર્મનો બંધ કરતો હોય છે. જે ક્રિયાનુ કારણ મિથ્યાદર્શન છે તે ક્રિયાને મિથ્યાદર્શન પ્રત્યયા ક્રિયા કહે છે તે ક્રિયામાં જીવ મિથ્યાદર્શનને કારણે કર્મનો બંધ કરતો હોય છે. માયાપ્રત્યયા ક્રિયાના નીચે પ્રમાણે બે ભેદ પડે છે-(૧) આત્મ ભાવવંકનતા અને (૨) પરભાવવકનતા અપ્રશસ્ત આત્મભાવને છુપાવીને (વક્ર કરીને) પોતાની અંદર પ્રશસ્તભાવનુ ઉપદર્શન કરવુ તેનુ નામ આત્મભાવ વકનતા છે આ ક્રિયા વ્યાપારરૂપ હોય છે. જે ક્રિયા જુઠા દસ્તાવેજ આદિ લખાવવાને કારણે થાય છે તેને પરભાવવંકનતા કહે છે. તે ક્રિયામાં પર-ભાવોની વચના ખોટા લેખ આદિ દ્વારા કરાય છે. મિથ્યાદર્શન પ્રત્યયા ક્રિયાના

दर्शनप्रत्ययाऽपि क्रिया द्विविधा–ऊनातिरिक्तमिथ्यादर्शनप्रत्यया, तद्व्यतिरिक्त मिथ्यादर्शनप्रत्यया चेति। ऊनम्–स्वप्रमाणतो न्यूनम्, अतिरिक्त–ततोऽधिक यज्जीवादिवस्तु तद्विषयक मिथ्यादर्शन, तदेव प्रत्यय'–कारण यस्याः सा ऊना तिरिक्तमिथ्यादर्शनप्रत्यया। अथ भावः–शरीरपरिमाणमात्मान कोऽपि मिथ्या दृष्टिरङ्गुष्ठपर्वप्रमाण वा यवमात्र वा श्यामाकतण्डुलमात्र वा न्यूनत्वेन जानाति, तथा–कोऽप्यन्य सर्वव्यापक वाऽधिकतया जानातीति। तथा — तद्व्यतिरिक्तमिथ्यादर्शनप्रत्यया=तस्माद् – ऊनातिरिक्तमिथ्यादर्शनाद् व्यतिरिक्त मिथ्यादर्शन–' नास्त्येवात्मा ' इत्यादिप्रतरूप, प्रत्ययः–कारण यस्याः सा तथा।

प्रत्यया क्रिया भी दो प्रकार की होती है एक ऊनातिरिक्त मिथ्यादर्शन प्रत्यया और दूसरी तद्व्यतिरिक्त मिथ्यादर्शन प्रत्यया जो ऊन अपने प्रमाण से न्यून अथवा अतिरिक्त अधिक जीवाजीवादि वस्तु को विषय करने वाले मिथ्यादर्शनरूप कारण को लेकर क्रिया होती है वह क्रिया ऊनातिरिक्त मिथ्यादर्शन प्रत्यया है तात्पर्य कहने का यह है कि कोई मिथ्यादृष्टि जीव अपने को ऐसा जानता है कि मैं शरीररूप ही हूँ अथवा अङ्गुष्ठपर्व प्रमाणरूप हूँ अथवा यवमात्ररूप हूँ अथवाश्यामाक त न्दुलमात्ररूप हूँ इस प्रकार न्यूनरूपसे अपने को जानता है तथा कोई मि थ्यादृष्टि जीव अपनेको सर्वव्यापकरूप अधिकतासे जानता है मानता है उसके यह क्रिया होती है तथा इस क्रिया से अतिरिक्त मिथ्यादर्शन जिस क्रिया का कारण होता है वह तद्व्यतिरिक्त मिथ्यादर्शन प्रत्यया क्रिया है जैसे ऐसा मानना कि आत्मा है ही नहीं

પણ બે ભેદ છે (૧) ઊનાતિરિક્ત મિથ્યાદર્શન પ્રત્યયા અને (૨) તદ્વ્યતિરિક્ત મિથ્યાદર્શન પ્રત્યયા જે ક્રિયા જીવ અજીવાદિક વસ્તુઓને ન્યૂન અથવા અતિરિક્ત (અધિક) પ્રમાણમાં પ્રતિપાદિત કરનારા મિથ્યાદર્શનરૂપ કારણને લીધે થાય છે, તે ક્રિયાને ઊનાતિરિક્ત મિથ્યાદર્શન પ્રત્યયા ક્રિયા કહે છે જેમકે કોઇ મિથ્યાદૃષ્ટિ જીવ પોતાના આત્માને માટે એવું માને છે કે હું શરીરરૂપ જ છું અથવા અંગુષ્ઠપર્વ પ્રમાણરૂપ છું અથવા યવમાત્રરૂપ છું અથવા તન્દુલ માત્રરૂપ છું આ રીતે તે પોતાને ન્યૂન રૂપે જાણે છે ત્યારે કોઇ મિથ્યાદૃષ્ટિ જીવ પોતાને સર્વવ્યાપકરૂપ-અધિક રૂપે માને છે એવા જીવ દ્વારા આ ક્રિયા થાય છે તથા તે ક્રિયા સિવાયનું મિથ્યાદર્શન જે ક્રિયામાં કારણભૂત હોય છે, તે ક્રિયાને તદ્વ્યતિરિક્ત મિથ્યાદર્શન પ્રત્યયા ક્રિયા કહે છે જેમકે–એવું માનવું કે આત્મા છે જ નહીં ક્રિયામા આ રીતે પણ દ્વિવિ

पुनरन्यथा क्रियाया द्वैविध्यमाह—'दो किरियाओ' इत्यादि। द्वे क्रिये प्रज्ञप्ते। तद् यथा-दृष्टिका, पृष्टिका चेति। दृष्टं-दर्शनं, वस्तु वा कारणत्वेन यस्यामस्ति, सा दृष्टिका। दर्शनार्थं या गतिक्रिया सा दृष्टिका। यद्वा-'दिट्ठिया' इत्यस्य दृष्टिजा इतिच्छाया। दृष्टेर्जाता दृष्टिजा दर्शनाद् यः कर्मबन्धरूपो व्यापारः सा दृष्टिजेत्यर्थः। तथा-'पृष्टिका' इति। पृष्टं-प्रश्नः, वस्तु वा कारणत्वेन यस्यमस्ति सा पृष्टिका। यद्वा-'पुट्ठिया' इत्यस्य 'पृष्टिजा' इतिच्छाया। पृष्टिः-पृच्छा, ततो जाता पृष्टिजा-सावद्यप्रश्नजनितो व्यापारः। तत्र-दृष्टिका क्रिया द्विविधा-जीव दृष्टिका, अजीवदृष्टिका चेति। अश्वादिदर्शनार्थं गच्छतो

क्रिया में इस प्रकार से भी द्विविधता आती है—एक दृष्टि को लेकर और दूसरी दृष्टि को लेकर, जो क्रिया होती है वह दृष्टिका क्रिया है और पृष्टि को लेकर जो क्रिया होती है वह पृष्टि का क्रिया है दृष्ट दर्शन अथवा वस्तु जिस क्रिया में कारणरूप से है वह दृष्टिका क्रिया है दर्शन के लिये जो गति क्रिया होती है वह दृष्टिका है अथवा "दिट्ठिया" की छाया "दृष्टिजा" भी हो सकती है दर्शन से देखने से जो कर्मबन्धरूप व्यापार होता है वह दृष्टिजा क्रिया है पृष्टिका प्रश्न अथवा वस्तु कारण रूप से जिस क्रिया में होता है वह पृष्टिका क्रिया है अथवा-"पुट्ठिया" इसकी संस्कृत छाया "पृष्टिजा" ऐसी भी होती है पृष्टि का अर्थ पृच्छा है सावद्य प्रश्न से जनित व्यापार से जो कर्मबन्ध होता है वह पृष्टिजा क्रिया है दृष्टिका क्रिया दो प्रकार

धता सभवी शके छे-એક દૃષ્ટિની અપેક્ષાએ અને બીજી પૃષ્ટિથી અપેક્ષાએ. દૃષ્ટિની અપેક્ષાએ જે ક્રિયા થાય છે તેને દૃષ્ટિકા ક્રિયા કહે છે અને પૃષ્ટિની અપેક્ષાએ જે ક્રિયા થાય છે તેને પૃષ્ટિકા ક્રિયા કહે છે.

દૃષ્ટદર્શન અથવા વસ્તુના દર્શનરૂપ ક્રિયા જેમાં કારણરૂપ હોય છે, તે ક્રિયાને દૃષ્ટિકા ક્રિયા કહે છે દર્શનને માટે જે ગતિક્રિયા તે થાય છે તે દૃષ્ટિકા ક્રિયા છે અથવા "दिट्ठिया" ની છાયા "दृष्टिजा" પણ થઈ શકે છે દર્શનથી અથવા દેખવા રૂપ ક્રિયાથી જે કર્મબંધ રૂપ વ્યાપાર થાય છે તેને દૃષ્ટિજા ક્રિયા કહે છે પૃષ્ટિ એટલે પ્રશ્ન. પ્રશ્ન અથવા વસ્તુ જે ક્રિયામાં કારણરૂપ હોય છે, તે ક્રિયાને પૃષ્ટિકા ક્રિયા કહે છે અથવા "पुट्ठिया" આ પદની સંસ્કૃત છાયા "पृष्टिजा" પણ થઈ શકે છે. પૃષ્ટિ એટલે પ્રશ્ન સાવદ્ય પ્રશ્નથી જનિત વ્યાપાર દ્વારા જે કર્મબંધ રૂપ વ્યાપાર થાય છે તેને પૃષ્ટિજા ક્રિયા કહે છે દૃષ્ટિકા ક્રિયા બે પ્રકારની હોય છે (૧) જીવદૃષ્ટિકા અને (૨)

दर्शनप्रत्ययाऽपि क्रिया द्विविधा–ऊनातिरिक्तमिथ्यादर्शनप्रत्यया, तद्व्यतिरिक्तमिथ्यादर्शनप्रत्यया चेति। ऊनम्–स्वप्रमाणतो न्यूनम्, अतिरिक्त–ततोऽधिकं यज्जीवादिवस्तु तद्विषयकं मिथ्यादर्शनं, तदेव प्रत्ययः–कारणं यस्याः सा ऊनातिरिक्तमिथ्यादर्शनप्रत्यया। अय भावः–शरीरपरिमाणमात्मानं कोऽपि मिथ्यादृष्टिरङ्गुष्ठपर्वप्रमाणं वा यवमात्रं वा श्यामाकतण्डुलमात्रं वा न्यूनत्वेन जानाति, तथा–कोऽप्यन्यः सर्वव्यापकं वाऽधिकतया जानातीति। तथा — तद्व्यतिरिक्तमिथ्यादर्शनप्रत्ययाऽन्यस्माद् – ऊनातिरिक्तमिथ्यादर्शनाद् व्यतिरिक्तं मिथ्यादर्शनं–' नास्त्येवात्मा ' इत्यादिप्रतरूपं, प्रत्ययः–कारणं यस्याः सा तथा।

प्रत्यया क्रिया भी दो प्रकार की होती है एक ऊनातिरिक्त मिथ्यादर्शन प्रत्यया और दूसरी तद्व्यतिरिक्त मिथ्यादर्शन प्रत्यया जो ऊन अपने प्रमाण से न्यून अथवा अतिरिक्त अधिक जीवाजीवादि वस्तु को विषय करने वाले मिथ्यादर्शनरूप कारण को लेकर क्रिया होती है वह क्रिया ऊनातिरिक्त मिथ्यादर्शन प्रत्यया है तात्पर्य कहने का यह है कि कोई मिथ्यादृष्टि जीव अपने को ऐसा जानता है कि मैं शरीररूप ही हूँ अथवा अङ्गुष्ठ पर्व प्रमाणरूप हूँ अथवा यवमात्ररूप हूँ अथवाश्यामाक तन्दुलमात्ररूप हूँ इस प्रकार न्यूनरूपसे अपने को जानता है तथा कोई मिथ्यादृष्टि जीव अपनेको सर्वव्यापकरूप अधिकतासे जानता है मानता है उसके यह क्रिया होती है तथा इस क्रिया से अतिरिक्त मिथ्यादर्शन जिस क्रिया का कारण होता है वह तद्व्यतिरिक्त मिथ्यादर्शन प्रत्यया क्रिया है जैसे ऐसा मानना कि आत्मा है ही नहीं

પણ બે ભેદ છે (૧) ઊનાતિરિક્ત મિથ્યાદર્શન પ્રત્યયા અને (૨) તદ્‌વ્યતિરિક્ત મિથ્યાદર્શન પ્રત્યયા જે ક્રિયા જીવ અજીવાદિક વસ્તુઓને ન્યૂન અથવા અતિરિક્ત (અધિક) પ્રમાણમાં પ્રતિપાદિત કરનાર મિથ્યાદર્શનરૂપ કારણને લીધે થાય છે, તે ક્રિયાને ઊનાતિરિક્ત મિથ્યાદર્શન પ્રત્યયા ક્રિયા કહે છે જેમકે કોઇ મિથ્યાદૃષ્ટિ જીવ પોતાના આત્માને માટે એવું માને છે કે હું શરીરરૂપ જ છું અથવા અંગુષ્ઠ પ્રમાણરૂપ છું અથવા યવમાત્રરૂપ છું અથવા તંદુલ માત્રરૂપ છું આ રીતે તે પોતાને ન્યૂન રૂપે માને છે ત્યારે કોઇ મિથ્યાદૃષ્ટિ જીવ પોતાને સર્વવ્યાપકરૂપ-અધિક રૂપે માને છે એવા જીવ દ્વારા આ ક્રિયા થાય છે તથા તે ક્રિયા સિવાયનું મિથ્યાદર્શન જે ક્રિયામાં કારણભૂત હોય છે, તે ક્રિયાને તદ્‌વ્યતિરિક્ત મિથ્યાદર્શન પ્રત્યયા ક્રિયા કહે છે જેમકે–એવું માનવું કે આત્મા છે જ નહીં ક્રિયામાં આ રીતે પણ દ્વિવિ

पुनरन्यथा क्रियाया द्वैविध्यमाह—' दो किरियाओ ' इत्यादि । द्वे क्रिये प्रज्ञप्ते । तद् यथा-दृष्टिका, पृष्टिका चेति । दृष्टं-दर्शनं, वस्तु वा कारणत्वेन यस्यामस्ति, सा दृष्टिका । दर्शनार्थं या गतिक्रिया सा दृष्टिका । यद्वा-'दिट्ठिया' इत्यस्य दृष्टिजा इतिच्छाया । दृष्टेर्जाता दृष्टिजा दर्शनाद् यः कर्मबन्धरूपो व्यापारः सा दृष्टिजेत्यर्थः । तथा-' पृष्टिका ' इति । पृष्टं-प्रश्नः, वस्तु वा कारणत्वेन यस्यमस्ति सा पृष्टिका । यद्वा-' पुट्ठिया ' इत्यस्य ' पृष्टिजा ' इतिच्छाया । पृष्टिः-पृच्छा, ततो जाता पृष्टिजा-सावद्यप्रश्नजनितो व्यापारः । तत्र-दृष्टिका क्रिया द्विविधा-जीव दृष्टिका, अजीवदृष्टिका चेति । अश्वादिदर्शनार्थं गच्छतो

क्रिया में इस प्रकार से भी द्विविधता आती है—एक दृष्टि को लेकर और दूसरी दृष्टि को लेकर, जो क्रिया होती है वह दृष्टिका क्रिया है और पृष्टि को लेकर जो क्रिया होती है वह पृष्टि का क्रिया है दृष्ट दर्शन अथवा वस्तु जिस क्रिया में कारणरूप से है वह दृष्टिका क्रिया है दर्शन के लिये जो गति क्रिया होती है वह दृष्टिका है अथवा " दिट्ठिया " की छाया " दृष्टिजा " भी हो सकती है दर्शन से देखने से जो कर्मबन्धरूप व्यापार होता है वह दृष्टिजा क्रिया है पृष्टिका प्रश्न अथवा वस्तु कारण रूप से जिस क्रिया में होता है वह पृष्टिका क्रिया है अथवा-" पुट्ठिया " इसकी संस्कृत छाया "पृष्टिजा" ऐसी भी होती है पृष्टि का अर्थ पृच्छा है सावद्य प्रश्न से जनित व्यापार से जो कर्मबन्ध होता है वह पृष्टिजा क्रिया है दृष्टिका क्रिया दो प्रकार

धता स'भवी शके छे-એक દૃષ્ટિની અપેક્ષાએ અને બીજી પૃષ્ટિથી અપેક્ષાએ. દૃષ્ટિની અપેક્ષાએ જે ક્રિયા થાય છે તેને દૃષ્ટિકા ક્રિયા કહે છે અને પૃષ્ટિની અપેક્ષાએ જે ક્રિયા થાય છે તેને પૃષ્ટિકા ક્રિયા કહે છે

દૃષ્ટદર્શન અથવા વસ્તુના દર્શનરૂપ ક્રિયા જેમાં કારણરૂપ હોય છે, તે ક્રિયાને દૃષ્ટિકા ક્રિયા કહે છે દર્શનને માટે જે ગતિક્રિયા તે થાય છે તે દૃષ્ટિકા ક્રિયા છે અથવા " दिट्ठिया " ની છાયા " दृष्टिजा " પણ થઈ શકે છે દર્શનથી અથવા દેખવા રૂપ ક્રિયાથી જે કર્મબંધ રૂપ વ્યાપાર થાય છે તેને દૃષ્ટિજા ક્રિયા કહે છે પૃષ્ટિ એટલે પ્રશ્ન. પ્રશ્ન અથવા વસ્તુ જે ક્રિયામા કારણરૂપ હોય છે, તે ક્રિયાને પૃષ્ટિકા ક્રિયા કહે છે અથવા " पुट्ठिया " આ પદની સસ્કૃત છાયા " पृष्टिजा " પણ થઈ શકે છે. પૃષ્ટિ એટલે પ્રશ્ન સાવદ્ય પ્રશ્નથી જનિત વ્યાપાર દ્વારા જે કર્મબંધ રૂપ વ્યાપાર થાય છે તેને પૃષ્ટિજા ક્રિયા કહે છે દૃષ્ટિકા ક્રિયા બે પ્રકારની હોય છે. (૧) જીવદૃષ્ટિકા અને (૨)

दर्शनप्रत्ययाऽपि क्रिया द्विविधा-ऊनातिरिक्तमिथ्यादर्शनप्रत्यया, तद्व्यतिरिक्त मिथ्यादर्शनप्रत्यया चेति। ऊनम्-स्वप्रमाणतो न्यूनम्, अतिरिक्त-ततोऽधिक पञ्जीवादिवस्तु तद्विषयकं मिथ्यादर्शनं, तदेव प्रत्ययः-कारणं यस्याः सा ऊना तिरिक्तमिथ्यादर्शनप्रत्यया। अत्र भावः-शरीरपरिमाणमात्मानं कोऽपि मिथ्या दृष्टिरङ्गुष्ठपर्वप्रमाणं वा यवमात्रं वा श्यामाकतण्डुलमात्रं वा न्यूनत्वेन जानाति, तथा-कोऽप्यन्यः सर्वव्यापकं वाऽधिकतया जानातीति। तथा — तद्व्य तिरिक्तमिथ्यादर्शनप्रत्यया-तस्मात् - ऊनातिरिक्तमिथ्यादर्शनात् व्यतिरिक्त मिथ्यादर्शनं-'नास्त्येवात्मा' इत्यादिप्रतरूप, प्रत्ययः-कारणं यस्याः सा तथा।

प्रत्यया क्रिया भी दो प्रकार की होती है एक ऊनातिरिक्त मिथ्यादर्शन प्रत्यया और दूसरी तद्व्यतिरिक्त मिथ्यादर्शन प्रत्यया जो ऊन अपने प्रमाण से न्यून अथवा अतिरिक्त अधिक जीवाजीवादि वस्तु को विषय करने वाले मिथ्यादर्शनरूप कारण को लेकर क्रिया होती है वह क्रिया ऊनातिरिक्त मिथ्यादर्शन प्रत्यया है तात्पर्य कहने का यह है कि कोई मिथ्यादृष्टि जीव अपने को ऐसा जानता है कि मैं शरीररूप ही हूँ अथवा अङ्गुष्ठपर्व प्रमाणरूप हूँ अथवा यवमात्ररूप हूँ अथवाश्यामाक त न्दुलमात्ररूप हूँ इस प्रकार न्यूनरूपसे अपने को जानता है तथा कोई मि थ्यादृष्टि जीव अपनेको सर्वव्यापकरूप अधिकतासे जानता है मानता है उसके यह क्रिया होती है तथा इस क्रिया से अतिरिक्त मिथ्यादर्शन जिस क्रिया का कारण होता है वह तद्व्यतिरिक्त मिथ्यादर्शन प्रत्यया क्रिया है जैसे ऐसा मानना कि आत्मा है ही नहीं

પણ બે ભેદ છે (૧) ઊનાતિરિક્ત મિથ્યાદર્શન પ્રત્યયા અને (૨) તદ્વ્યતિરિક્ત મિથ્યાદર્શન પ્રત્યયા જે ક્રિયા જીવ અજીવાદિ વસ્તુઓને ન્યૂન અથવા અતિરિક્ત (અધિક) પ્રમાણમાં પ્રતિપાદિત કરનારા મિથ્યાદર્શનરૂપ કારણને લીધે થાય છે તે ક્રિયાને ઊનાતિરિક્ત મિથ્યાદર્શન પ્રત્યયા ક્રિયા કહે છે જેમકે કોઇ મિથ્યાદષ્ટિ જીવ પોતાના આત્માને માટે એવું માને છે કે હું શરીરરૂપ જ છું અથવા અંગુષ્ઠપર્વ પ્રમાણરૂપ છું અથવા યવમાત્રરૂપ છું અથવા તંદુલ માત્રરૂપ છું આ રીતે તે પોતાને ન્યૂન રૂપે જાણે છે ત્યારે કોઇ મિથ્યાદષ્ટિ જીવ પોતાને સર્વવ્યાપકરૂપ-અધિક રૂપે માને છે એવા જીવ દ્વારા આ ક્રિયા થાય છે તથા તે ક્રિયા સિવાયનું મિથ્યાદર્શન જે ક્રિયામાં કારણભૂત હોય છે તે ક્રિયાને તદ્વ્યતિરિક્ત મિથ્યાદર્શન પ્રત્યયા ક્રિયા કહે છે જેમકે-એવું માનવું કે આત્મા છે જ નહીં. ક્રિયામા આ રીતે પણ દ્વિવિ

पुनरन्यथा क्रियाया द्वैविध्यमाह—' दो किरियाओ ' इत्यादि । द्वे क्रिये प्रज्ञप्ते । तद् यथा-दृष्टिका, पृष्टिका चेति । दृष्टं-दर्शनं, वस्तु वा कारणत्वेन यस्यामस्ति, सा दृष्टिका । दर्शनार्थं या गतिक्रिया सा दृष्टिका । यद्वा-'दिट्ठिया' इत्यस्य दृष्टिजा इतिच्छाया । दृष्टेर्जाता दृष्टिजा दर्शनाद् यः कर्मबन्धरूपो व्यापारः सा दृष्टिजेत्यर्थः । तथा-' पृष्टिका ' इति । पृष्टं-प्रश्नः, वस्तु वा कारणत्वेन यस्यमस्ति सा पृष्टिका । यद्वा-' पुट्ठिया ' इत्यस्य ' पृष्टिजा ' इतिच्छाया । पृष्टिः-पृच्छा, ततो जाता पृष्टिजा-सावद्यप्रश्नजनितो व्यापारः । तत्र-दृष्टिका क्रिया द्विविधा-जीव दृष्टिका, अजीवदृष्टिका चेति । अश्वादिदर्शनार्थं गच्छतो

क्रिया में इस प्रकार से भी द्विविधता आती है—एक दृष्टि को लेकर और दूसरी दृष्टि को लेकर, जो क्रिया होती है वह दृष्टिका क्रिया है और पृष्टि को लेकर जो क्रिया होती है वह पृष्टिका क्रिया है दृष्ट दर्शन अथवा वस्तु जिस क्रिया में कारणरूप से है वह दृष्टिका क्रिया है दर्शन के लिये जो गति क्रिया होती है वह दृष्टिका है अथवा " दिट्ठिया " की छाया " दृष्टिजा " भी हो सकती है दर्शन से देखने से जो कर्मबन्धरूप व्यापार होता है वह दृष्टिजा क्रिया है पृष्टिका प्रश्न अथवा वस्तु कारण रूप से जिस क्रिया में होता है वह पृष्टिका क्रिया है अथवा-" पुट्ठिया " इसकी संस्कृत छाया "पृष्टिजा" ऐसी भी होती है पृष्टि का अर्थ पृच्छा है सावद्य प्रश्न से जनित व्यापार से जो कर्मबन्ध होता है वह पृष्टिजा क्रिया है दृष्टिका क्रिया दो प्रकार

धता संभवी शके छे-એક દૃષ્ટિની અપેક્ષાએ અને બીજી પૃષ્ટિથી અપેક્ષાએ. દૃષ્ટિની અપેક્ષાએ જે ક્રિયા થાય છે તેને દૃષ્ટિકા ક્રિયા કહે છે અને પૃષ્ટિની અપેક્ષાએ જે ક્રિયા થાય છે તેને પૃષ્ટિકા ક્રિયા કહે છે

દૃષ્ટદર્શન અથવા વસ્તુના દર્શનરૂપ ક્રિયા જેમાં કારણરૂપ હોય છે, તે ક્રિયાને દૃષ્ટિકા ક્રિયા કહે છે દર્શનને માટે જે ગતિક્રિયા તે થાય છે તે દૃષ્ટિકા ક્રિયા છે અથવા " दिट्ठिया " ની છાયા " दृष्टिजा " પણ થઈ શકે છે દર્શનથી અથવા દેખવા રૂપ ક્રિયાથી જે કર્મબંધ રૂપ વ્યાપાર થાય છે તેને દૃષ્ટિજા ક્રિયા કહે છે પૃષ્ટિ એટલે પ્રશ્ન. પ્રશ્ન અથવા વસ્તુ જે ક્રિયામાં કારણરૂપ હોય છે, તે ક્રિયાને પૃષ્ટિકા ક્રિયા કહે છે અથવા " पुट्ठिया " આ પદની સંસ્કૃત છાયા " पृष्टिजा " પણ થઈ શકે છે. પૃષ્ટિ એટલે પ્રશ્ન સાવદ્ય પ્રશ્નથી જનિત વ્યાપાર દ્વારા જે કર્મબંધ રૂપ વ્યાપાર થાય છે તેને પૃષ્ટિજા ક્રિયા કહે છે દૃષ્ટિકા ક્રિયા બે પ્રકારની હોય છે. (૧) જીવદૃષ્ટિકા અને (૨)

यः कर्मबन्धरूपो व्यापारः सा जीवदृष्टिका। तथा-अजीवानां चित्र कर्मादीनां, दर्शनार्थं गच्छतो यः कर्मबन्धरूपो व्यापारः साऽजीवदृष्टिका। एवं पृष्टिकाऽपि जीवाजीवभेदेन द्विविधा। रागद्वेषाभ्यां जीवविषये, अजीवविषये वा पृच्छतो यः कर्मबन्धरूपो व्यापारः, सा जीवपृष्टिका अजीवपृष्टिका चेति।

पुनरन्यया क्रियाया द्वैविध्यमाह-'दो किरियाओ' इत्यादि। द्वे क्रिये प्रज्ञप्ते। तद् यथा-प्रातीतिकी, सामन्तोपनिपातिकी। चेति। तत्र वस्तु प्रतीत्य-आश्रित्य या क्रिया भवति सा प्रातीतिकी। तथा-समन्तात्-सर्वतः, उपनिपातः-लोकानां समेलन, तत्र भवा सामन्तोपनिपातिकी। प्रातीतिकी क्रिया द्विविधा-

---

की होती है एक जीवदृष्टिका और दूसरी अजीवदृष्टिका अश्वादिकोंको देखने को जाते हुए जीव के जो कर्मबन्ध रूप व्यापार होता है वह जीव दृष्टिका क्रिया है तथा अजीव चित्र कर्मादिकों को देखने के लिये जाते हुए जीव के जो कर्मबन्धरूप व्यापार होता है वह अजीवदृष्टि का क्रिया है इसी प्रकारसे पृष्टिका क्रिया भी जीव और अजीव के भेद से दो प्रकार की है रागद्वेष के वशवर्ती होकर जीव के विषय में एवं अजीव के विषय में पूछने वाले को जो कर्मबन्ध रूप व्यापार होता है वह जीव पृष्टिका और अजीवपृष्टिका क्रिया है।

इस प्रकार से भी क्रिया में द्विप्रकारता है एक प्रातीतिकी और दूसरी सामन्तोपनिपातिकी बाह्यवस्तु की प्रतीति करके जो क्रिया होती है वह प्रातीतिकी क्रिया है लोकों के सब तरफ से मिलने पर जो उसमें कर्मबन्ध रूपव्यापार होता है वह सामन्तोपनिपातिकी क्रिया है प्रती

અજીવદૃષ્ટિકા. અશ્વાદિરૂપ સજીવ વસ્તુને જોવાને માટે જતાં જીવદ્વારા જે કર્મબંધરૂપ વ્યાપાર થાય છે તેને જીવદૃષ્ટિકા ક્રિયા કહે છે તથા ચિત્રાદિ અજીવ વસ્તુઓને જોવા જતાં જીવદ્વારા જે કર્મબંધરૂપ વ્યાપાર થાય છે, તેને અજીવદૃષ્ટિકા ક્રિયા કહે છે એજ પ્રમાણે પૃષ્ટિકા ક્રિયાના પણ બે ભેદ છે (૧) જીવપૃષ્ટિકા અને (૨) અજીવપૃષ્ટિકા. રાગદ્વેષથી યુક્ત થઈને જીવને વિષે પ્રશ્ન પૂછનાર દ્વારા જે કર્મબંધરૂપ વ્યાપાર થાય છે તેને જીવપૃષ્ટિકા ક્રિયા કહે છે અને એજ પ્રકારે અજીવ વિષે પ્રશ્ન પૂછનાર જીવો દ્વારા જે કર્મબંધ રૂપ વ્યાપાર થાય છે તેને અજીવપૃષ્ટિકા ક્રિયા કહે છે

પ્રાતીતિકી ક્રિયા અને સામન્તોપનિપાતિકી ક્રિયાના ભેદથી પણ ક્રિયાના બે પ્રકાર પડે છે બાહ્ય વસ્તુની પ્રતીતિ કરીને જે ક્રિયા થાય છે તેને પ્રાતી તિકી ક્રિયા કહે છે બધી તરફથી એકત્ર થવામાં લોકો દ્વારા જે કર્મબંધ

जीवप्रातीतिकी, अजीवप्रातीतिकी चेति। तत्र जीवं प्रतीत्य यः कर्मबन्धरूपो व्यापारः सा जीवप्रातीतिकी। अजीवं प्रतीत्य यो रागद्वेषजन्यः कर्मबन्धः सा अजीवप्रातीतिकी। सामन्तोपनिपातिकी चापि द्विविधा-जीवाजीवभेदात्। तथाहि-जीवसामन्तोपनिपातिकी अजीवसामन्तोपनिपातिकी चेति। कस्यचिद् बलीवर्दः सुन्दरस्तं च जनो यथा यथा प्रलोकयति-प्रशंसयति च, तथा, तत्स्वामी हृष्यतीति तस्य जीवसामन्तोपनिपातिकी क्रिया भवति। तथा-अजीवं-रथादिकं दृष्ट्वा हृष्यतोऽजीवसामन्तोपनिपातिकी' इति।

पुनरन्यथा क्रियाया द्वैविध्यमाह-' दो किरियाओ ' इत्यादि। द्वे क्रिये प्रज्ञप्ते। तद् यथा-स्वाहस्तिकी, नैसृष्टिकी चेति। स्वहस्तेन निर्वृत्ता स्वाहस्तिकी।

तिकी क्रिया दो प्रकार की है-जीवप्रातीति की और अजीवप्रातीति की जीव की प्रतीति करके जो कर्मबन्ध रूप व्यापार होता है वह जीव प्रातीतिकी क्रिया है तथा अजीव को प्रतीति करके जो रागद्वेष जन्य कर्मबन्ध होता है वह अजीव प्रातीतिकी क्रिया है सामान्तोपनिपातिकी क्रिया भी दो प्रकार की है-एक जीव सामान्तोपनिपाति की और दूसरी अजीव सामन्तोपनिपातिकी किसीका बेल आदि सुन्दर है उसे जैसे २ मनुष्य देखता है वैसे २ उसकी प्रशंसा करता है इस से उसका स्वामी अधिक हर्षित होता है इस तरह से उसके जीव सामन्तोपनिपातिकी क्रिया होती है तथा अजीव रथादिक रूप पदार्थ को देखकर हर्ष मानने वाले जीव के अजीव सामन्तोपनिपातिकी क्रिया होती है

રૂપ વ્યાપાર થાય છે તેને સામન્તોપનિપાતિકી ક્રિયા કહે છે. પ્રાતીતિકી ક્રિયા બે પ્રકારની છે-(૧) જીવપ્રાતીતિકી અને (૨) અજીવ પ્રાતીતિકી. જીવની પ્રતીતિ કરીને જે કર્મબંધ રૂપ વ્યાપાર થાય છે તેને જીવપ્રાતીતિકી ક્રિયા કહે છે તથા અજીવની પ્રતીતિ કરીને જે રાગદ્વેષજન્ય કર્મબંધ થાય છે તેને અજીવ પ્રાતીતિકી ક્રિયા કહે છે સામન્તોપનિપાતિકી ક્રિયાનાં પણ એવાં જ બે ભેદ છે-(૧) જીવ સામન્તોપનિપાતિકી અને (૨) અજીવ સામન્તોપનિ-પાતિકી જેમકે કોઈનો બળદ સુંદર છે જે જે મનુષ્યો તેને જોવે છે તે તે મનુષ્ય તેની પ્રશંસા કરે છે તેથી તે બળદનો માલિક ખુશ થાય છે આ રીતે તેના દ્વારા જીવસામન્તોપનિપાતિકી ક્રિયા થાય છે તથા અજીવ રથ આદિ વસ્તુને જોઈને હર્ષ પામનાર વ્યક્તિ દ્વારા અજીવ સામન્તોપનિપાતિકી ક્રિયા થાય છે.

स्वहस्तगृहीतमजीवादिना जीवं मारयतः क्रिया भवति । तथा-निसर्जन-निसृष्टि क्षेपणमित्यर्थः । तत्र भवा नैसृष्टिकी, निसृष्टिं कुर्वतो यः कर्मबन्धः सा नैसृष्टिकी निसर्ग एव वा नैसृष्टिकी । स्वाहस्तिकी क्रिया द्विविधा-जीवस्वाहस्तिकी, अजीवस्वाहस्तिकी चेति । यत् खलु स्वहस्तगृहीतेन जीवेन जीवं हन्ति, सा जीवस्वाहस्तिकी । यत् खलु स्वहस्तगृहीतेनैव अजीवेन-खड्गादिना जीवं मारयति, सा अजीवस्वाहस्तिकी । अथवा स्वहस्तेन जीवताडनं जीवस्वाहस्तिकी, अजीवताडनं

इस प्रकार से दो क्रियाएँ कही गई हैं एक स्वाहस्तिकी और दूसरी नैसृष्टिकी जीव को अपने हाथसे पकड़कर उसके द्वारा जीवको मरवाने वाले जीव को जो कर्मबन्ध रूप व्यापार होता है वह स्वाहस्तिकी क्रिया है इधर उधर वस्तु को अनाभोग पूर्वक रखने वाले जीव को जो कर्म बन्ध होता है, वह नैसृष्टिकी क्रिया है अथवा स्वभावतः प्रतिसमय जो कर्म का बन्ध होता है वह नैसृष्टिकी क्रिया है स्वहस्तिकी क्रिया दो प्रकार की है-एक जीव स्वाहस्तिकी और दूसरी अजीव स्वाहस्तिकी अपने हाथ द्वारा पकड़े हुए जीव से जो दूसरे जीव को मरवाता है वह जीव स्वाहस्तिकी क्रिया है अथवा-अपने हाथ से जीव को पकड़ कर दूसरे जीव को उससे मारता है वह स्वाहस्तिकी क्रिया है जैसे कोई एक जीव बैठा हो और उसके माथे से दूसरे जीव का माथा पकड़कर लोग मार देते हैं यही स्वाहस्तिकी क्रिया है अपने हाथ में गृहीत अजीव तलवार

સ્વાહસ્તિકી ક્રિયા અને નૈસૃષ્ટિકી ક્રિયાના ભેદથી પણ ક્રિયા બે પ્રકારની કહી છે જીવને પોતાના હાથથી પકડીને તેના દ્વારા જીવને મરાવનાર જીવનો જે કર્મબંધ રૂપ વ્યાપાર થાય છે, તેને સ્વાહસ્તિકી ક્રિયા કહે છે વસ્તુને અનાભોગપૂર્વક અહીં તહીં રાખનાર જીવ દ્વારા જે કર્મબંધ થાય છે, તેને નૈસૃષ્ટિકી ક્રિયા કહે છે અથવા સ્વભાવતઃ પ્રતિ સમય જે કર્મનો બંધ થાય છે તેને નૈસૃષ્ટિકી ક્રિયા કહે છે સ્વાહસ્તિકી ક્રિયાના નીચે પ્રમાણે બે ભેદ છે

(૧) જીવ સ્વાહસ્તિકી અને (૨) અજીવ સ્વાહસ્તિકી. પોતાના હાથથી પકડેલા જીવ વડે જે બીજા જીવોની હત્યા કરાવવામાં આવે છે તે ક્રિયાને જીવ સ્વાહસ્તિકી ક્રિયા કહે છે અથવા પોતાના હાથથી કોઈ જીવને પકડવામાં આવે અને તે જીવ વડે કોઈ બીજા જીવને મારવામાં આવે તો તે ક્રિયાને સ્વાહસ્તિકી ક્રિયા કહે છે જેમકે કોઈ એક જીવ બેઠેલો હોય તેના માથાને બીજા કોઈ જીવના માથા સાથે અફાળીને મારવામાં આવે તો તે ક્રિયાને જીવ સ્વાહસ્તિની ક્રિયા કહે છે પોતાના હાથમાં ગ્રહણ કરેલ અજીવ તલવાર આદિ

तु अजीवस्वाहस्तिकी। एवं नैसृष्टिक्यपि द्विविधा-जीवनैसृष्टिकी, अजीवनैसृष्टिकी चेति। राजादीनामाज्ञया जलस्य यन्त्रादिभिर्निसर्जनं जीवनैसृष्टिकी। यत्तु वाणादीनां धनुरादिभिर्निसर्जनं अजीवनैसृष्टिकी।

पुनरन्यथा क्रियाया द्वैविध्यमाह-'दो किरियाओ' इत्यादि। द्वे क्रिये प्रज्ञप्ते। तद् यथा-आज्ञापनिका, वैदारणिका चेति। आज्ञापनम्=आदेशस्तस्येयम् आज्ञापनी सैवाज्ञापनिका, तज्जनितः कर्मबन्ध इत्यर्थः। तथा-विदारणस्येयं वैदारणी, सैव वैदारणिका। तत्राज्ञापनी द्विविधा-जीवाऽऽज्ञापनिका, अजीवाऽऽज्ञाप-

---

आदि से जो जीव को मारता है वह अजीव स्वाहस्तिकी क्रिया है अथवा अपने हाथ से ही जीव का ताड़न करना यह स्वाहस्तिकी क्रिया है और अजीव का ताडन करना यह अजीव स्वाहस्तिकी क्रिया है नैसृष्टिकी क्रिया भी दो प्रकार की है एक जीवनैसृष्टिकी और दूसरी अजीवनैसृष्टिकी राजादिकों की आज्ञा से जल का यन्त्रादिकों द्वारा निकालना यह जीव नैसृष्टिकी क्रिया है तथा बाण आदिकों का धनुप आदि पर चढाकर छोड़ना इसका नाम अजीव नैसृष्टिकी क्रिया है इस प्रकार से भी क्रिया दो प्रकार की होती है एक आज्ञापनिका और दूसरी वैदारणिका आज्ञापन नाम आदेशका है इस आदेशजन्य क्रिया से जो कर्मबन्ध होता है वह आज्ञापनिकी क्रिया है तथा विदारणजन्य क्रिया से जो कर्मबन्ध होता है वह वैदारणिका क्रिया है इनमें आज्ञापनिका क्रिया दो प्रकारकी है जीव आज्ञापनिका और अजीवआज्ञाप-

---

વડે જીવોને મારવાની જે ક્રિયા થાય છે તેને અજીવસ્વાહસ્તિની ક્રિયા કહે છે અથવા પોતાના હાથથી જ જીવને મારવો તે જીવસ્વાહસ્તિની ક્રિયા છે અને કોઈ અજીવનુ તાડન કરવું તે અજીવસ્વાહસ્તિની ક્રિયા છે એજ પ્રમાણે નૈસૃષ્ટિકી ક્રિયાના પણ બે ભેદ પડે છે-(૧) જીવ નૈસૃષ્ટિકી અને (૨) અજીવ નૈસૃષ્ટિકી રાજાદિની આજ્ઞાથી યત્રાદિ દ્વારા જળને બહાર કાઢવુ તે જીવનૈસૃષ્ટિકી ક્રિયા છે તથા બાણ આદિને ધનુષપર ચડાવીને છોડવા તે અજીવનૈસૃષ્ટિકી ક્રિયા છે

ક્રિયાના નીચે પ્રમાણે બે પ્રકાર પણ પડે છે-(૧) આજ્ઞાપનિકા ક્રિયા, (૨) વૈદારણિકા ક્રિયા. આજ્ઞાપન એટલે આદેશ આ આદેશજન્ય ક્રિયા દ્વારા જે કર્મબંધ થાય છે તેને આજ્ઞાપનિકી ક્રિયા કહે છે તથા વિદારણજન્ય ક્રિયાથી જે કર્મબંધ થાય છે તેને વૈદારણિકા ક્રિયા કહે છે આજ્ઞાપનિકા ક્રિયા બે પ્રકારની હોય છે-(૧) જીવ આજ્ઞાપનિકા અને (૨) અજીવ આજ્ઞાપનિકા.

स्वहस्तगृहीतजीवादिना जीवं मारयतः क्रिया भवति । तथा-निसर्जनं-निसृष्टं क्षेपणमित्यर्थः । तत्र भवा नैसृष्टिकी, निसृष्टिं कुर्वतो यः कर्मबन्धः सा नैसृष्टिकी निसर्ग एव वा नैसृष्टिकी । स्वाहस्तिकी क्रिया द्विविधा-जीवस्वाहस्तिकी, अजीवस्वाहस्तिकी चेति । यत् खलु स्वहस्तगृहीतेन जीवेन जीवं हन्ति, सा जीवस्वाहस्तिकी । यत् खलु स्वहस्तगृहीतेनैव अजीवेन-खड्गादिना जीवं मारयति, सा अजीवस्वाहस्तिकी । अथवा स्वहस्तेन जीवताडनं जीवस्वाहस्तिकी, अजीवताडनं

इस प्रकार से दो क्रियाएँ कही गई हैं एक स्वाहस्तिकी और दूसरी नैसृष्टिकी जीव को अपने हाथसे पकड़कर उसके द्वारा जीवको मरवाने वाले जीव को जो कर्मबन्ध रूप व्यापार होता है वह स्वाहस्तिकी क्रिया है इधर उधर वस्तु को अनाभोग पूर्वक रखने वाले जीव को जो कर्म बन्ध होता है, वह नैसृष्टिकी क्रिया है अथवा स्वभावतः प्रतिसमय जो कर्म का बन्ध होता है वह नैसृष्टिकी क्रिया है स्वहस्तिकी क्रिया दो प्रकार की है-एक जीव स्वाहस्तिकी और दूसरी अजीव स्वाहस्तिकी अपने हाथ द्वारा पकड़े हुए जीव से जो दूसरे जीव को मरवाता है वह जीव स्वाहस्तिकी क्रिया है अथवा-अपने हाथ से जीव को पकड़ कर दूसरे जीव को उससे मारता है वह स्वाहस्तिकी क्रिया है जैसे कोई एक जीव बैठा हो और उसके माथे से दूसरे जीव का माथा पकड़कर लोग मार देते हैं यही स्वाहस्तिकी क्रिया है अपने हाथ में गृहीत अजीव तलवार

સ્વાહસ્તિકી ક્રિયા અને નૈસૃષ્ટિકી ક્રિયાના ભેદથી પણ ક્રિયા બે પ્રકારની કહી છે જીવને પોતાના હાથથી પકડીને તેના દ્વારા જીવને મરાવનાર જીવનો જે કર્મબંધ રૂપ વ્યાપાર થાય છે, તેને સ્વાહસ્તિકી ક્રિયા કહે છે વસ્તુને અનાભોગપૂર્વક અહીં તહીં રાખનાર જીવ દ્વારા જે કર્મબંધ થાય છે, તેને નૈસૃષ્ટિકી ક્રિયા કહે છે અથવા સ્વભાવતઃ પ્રતિ સમય જે કર્મનો બંધ થાય છે તેને નૈસૃષ્ટિકી ક્રિયા કહે છે સ્વાહસ્તિકી ક્રિયાના નીચે પ્રમાણે બે ભેદ છે

(૧) જીવ સ્વાહસ્તિકી અને (૨) અજીવ સ્વાહસ્તિકી. પોતાના હાથથી પકડેલા જીવ વડે જે બીજા જીવોની હત્યા કરાવવામાં આવે છે તે ક્રિયાને જીવ સ્વાહસ્તિકી ક્રિયા કહે છે અથવા પોતાના હાથથી કોઈ જીવને પકડવામાં આવે અને તે જીવ વડે કોઈ બીજા જીવને મારવામાં આવે તો તે ક્રિયાને સ્વાહસ્તિકી ક્રિયા કહે છે જેમકે કોઈ એક જીવ બેઠેલો હોય તેના માથાને બીજા કોઈ જીવના માથા સાથે અફાળીને મારવામાં આવે તો તે ક્રિયાને જીવ સ્વાહસ્તિકી ક્રિયા કહે છે પોતાના હાથમાં પકડેલ ગ્રહણ કરેલ અજીવ તલવાર આદિ

पात्रादिविषये ग्रहणता—अनायुक्ताऽऽदानता । तथा—अनायुक्तस्यैव वस्त्रपात्रादि-विषया प्रमार्जनता—अनायुक्तप्रमार्जनता । अनवकाङ्क्षाप्रत्यया=इहलोकपरलोका-पायभयरहितस्य या क्रिया भवति, साऽपि क्रिया द्विविधा—आत्मशरीरानवका-ङ्क्षाप्रत्यया, परशरीरानवकाङ्क्षाप्रत्यया चेति । यः खलु स्वशरीरापेक्षया अभावेन स्वशरीरस्याङ्गविशेषच्छेदनकारककर्माणि नपुंसकत्वादिजनकानि करोति, तस्य क्रिया आत्मशरीरानवकाङ्क्षाप्रत्यया भवति । यस्तु परशरीरस्य बलीवर्दादेरङ्गच्छेदनादि-कराणि कर्माणि करोति, तस्य क्रियापरशरीरानवकाङ्क्षाप्रत्यया भवति ।

अनायुक्तदानतारूप क्रिया है तथा उपयोग की अस्थिरता में ही जो वस्त्रपात्रादिकों की प्रमार्जना रूप क्रिया की जाती है वह अनायुक्त प्रमार्जना क्रिया है इहलोक एवं परलोक के अपाय एवं भय से वर्जित हुए जीव की जो क्रिया है वह अनवकांक्षा क्रिया है यह क्रिया भी दो प्रकार की होती है एक आत्मशरीरानवकांक्षाप्रत्यया और दूसरी पर-शरीरानवकांक्षाप्रत्यया अपने शरीर की अपेक्षा किये बिना ही अपने शरीर के ही अङ्गविशेषों का छेदनकारककर्म जो कि नपुंसकता आदि जनक होता है करता है उसकी क्रिया आत्मशरीरानवकांक्षाप्रत्यया है जो बलीवर्दादिरूप परशरीरके छेदनकारककर्मों—दाम लगानेरूप अर्थात् तपाई हुई लोह शलाका से अंकित करनेरूप आदि लगानेरूप कार्यों को करता है उसको परशरीरनवकांक्षाप्रत्यया क्रिया होती है इस प्रकार से भी क्रिया दो प्रकार की होती है एक प्रेम प्रत्यया और दूसरी द्वेष प्रत्यया मायालोभ रूप राग जिसका कारण होता है वह प्रेमप्रत्यया

પાત્ર આદિને ગ્રહણ કરવા રૂપ જે ક્રિયા થાય છે તેને અનાયુક્ત આદાનતા રૂપ ક્રિયા કહે છે. તથા ઉપયોગની અસ્થિરતામા જે વસ્ત્ર, પાત્રાદિકોની પ્રમા-ર્જના કરવા રૂપ ક્રિયા થાય છે તેને અનાયુક્ત પ્રમાર્જનતા ક્રિયા કહે છે. આલોક અને પરલોકના અપાય અને ભયથી રહિત જીવની જે ક્રિયા હોય છે તેને અનવકાક્ષા ક્રિયા કહે છે. તેના પણ બે પ્રકાર છે–(૧) આત્મશરીરા નવકાંક્ષા પ્રત્યયા, અને (૨) પરશરીરાનવકાક્ષા પ્રત્યયા પોતાના શરીરની અપેક્ષા (દરકાર) કર્યા વિના પોતાનાં જ અંગવિશેષોનુ છેદન કરવા રૂપ જે ક્રિયા થાય છે તેને આત્મશરીરાનવકાક્ષા પ્રત્યયા ક્રિયા કહે છે. જેમકે નપુસક બનવાની ક્રિયા.

બળદ આદિ પરશરીરોને છેદવાની–તેમને ડામ દેવાની ખસી કરવાની, નાથવાની આદિ ક્રિયા કરનાર વ્યક્તિ પરશરીરાનવકાંક્ષા પ્રત્યયા ક્રિયા કરે છે.

પ્રેમપ્રત્યયા અને દ્વેષપ્રત્યયાના ભેદથી પણ ક્રિયા બે પ્રકારની કહી છે. માયા લોભરૂપ રાગ જે ક્રિયાના કારણરૂપ હોય છે તે ક્રિયાને પ્રેમપ્રત્યયા ક્રિયા

निका चेति। जीवविषय आज्ञापयतः—क्रिया जीवाज्ञापनिका। एवमजीवविषया अजीवाज्ञापनिका। तथा—जीवमजीवं वा विदारयति—स्फोटयति यस्तस्य क्रिया जीववैदारिका, अजीववैदारणिका वा भवति। एतत् सर्वं नैसृष्टिकी वर्णनवद् बोध्यम्।

पुनरन्यथा—क्रियाया द्वैविध्यमाह—' दो किरियाओ ' इत्यादि। द्वे क्रिये प्रज्ञप्ते। तद् यथा—अनाभोगप्रत्यया, अनवकाङ्क्षाप्रत्यया चेति। अनाभोगः—अज्ञान, प्रत्ययः—कारण यस्याः सा अनाभोगप्रत्यया। तथा—अनवकाङ्क्षा स्वशरीराद्यनपेक्षत्व, सैव प्रत्ययो यस्याः साऽनवकांक्षाप्रत्यया। अनाभोगप्रत्ययाक्रिया द्विविधा — अनायुक्ताऽऽदानता, अनायुक्तप्रमार्जनता चेति। अनायुक्तः—अनाभोगवान्, अनुपयुक्त इत्यर्थः, तस्याऽऽदानता — पत्र

निका जीव के विषय में आज्ञा देनेवालेको जीवाज्ञापनिका क्रिया लगती है तथा अजीव के विषय में आज्ञा देनेवाले को अजीवाज्ञापनिका क्रिया लगती है जीव का एवं अजीव का विदारण करते हुए जो क्रिया होती है वह जीव वैदारणिकी और अजीववैदारिकी क्रिया है यह सब वर्णन नैसृष्टिकी क्रिया के वर्णन जैसा ही जानना चाहिये इस प्रकार से भी क्रिया दो प्रकार की होती है एक अनाभोगप्रत्यया और दूसरी अनवकांक्षाप्रत्यया जिस क्रिया का कारण अनाभोग अज्ञान होता है वह क्रिया अनाभोगप्रत्यया होती है तथा स्वशरीर आदि की अनपेक्षा जिस क्रिया का कारण होती है वह अनवकांक्षा क्रिया है इनमें अनाभोगप्रत्यया क्रिया दो प्रकार की होती है एक अनायुक्ताऽऽदानतारूप और दूसरी अनायुक्त मार्जनतारूप, जिसका उपयोग स्थिर न हो ऐसे व्यक्ति की वस्त्रपात्र आदि को ग्रहण करने रूप जो क्रिया होती है वह

જીવના વિષયમાં આજ્ઞા દેનારને જીવાજ્ઞાપનિકા ક્રિયાજન્ય દોષ લાગે છે, તથા અજીવના વિષયમા આજ્ઞા દેનાર જીવને અજીવાજ્ઞાપનિકા ક્રિયાજન્ય દોષ લાગે છે જીવનુ અને અજીવનું વિદારણ કરતી વખતે જે ક્રિયા થાય છે તેને અનુક્રમે જીવ વૈદારણિકી અને અજીવ વૈદારણિકી ક્રિયા કહે છે આ સઘળું વર્ણન નૈસૃષ્ટિકી ક્રિયાના વર્ણન પ્રમાણે સમજવું

ક્રિયાના નીચે મુજબના બે પ્રકારો પણ પડે છે – (૧) અનાભોગ પ્રત્યયા અને (૨) અનવકાંક્ષા પ્રત્યયા જે ક્રિયાનું કારણ અનાભોગ અજ્ઞાન હોય છે તે ક્રિયાને અનાભોગપ્રત્યયા ક્રિયા કહે છે, તથા સ્વશરીર આદિની અનપેક્ષા જે ક્રિયામાં કારણભૂત હોય છે તે ક્રિયાને અનવકાંક્ષા ક્રિયા કહે છે તેમાંની જે અનાભોગપ્રત્યયા ક્રિયા છે તે બે પ્રકારની છે–(૧) અનાયુક્ત આદાનતા રૂપ અને (૨) અનાયુક્ત માર્જનતા રૂપ. ઉપયોગની અસ્થિરતામાં વસ્ત્ર,

पात्रादिविषये ग्रहणता–अनायुक्ताऽऽदानता । तथा–अनायुक्तस्यैव वस्त्रपात्रादिविषया प्रमार्जनता–अनायुक्तप्रमार्जनता । अनवकाङ्क्षाप्रत्यया=इहलोकपरलोकापायभयरहितस्य या क्रिया भवति, साऽपि क्रिया द्विविधा–आत्मशरीरानवकाङ्क्षाप्रत्यया, परशरीरानवकाङ्क्षाप्रत्यया चेति । यः खलु स्वशरीरापेक्षया अभावेन स्वशरीरस्याङ्गविशेषच्छेदनकारककर्माणि नपुंसकत्वादिजनकानि करोति, तस्य क्रिया आत्मशरीरानवकाङ्क्षाप्रत्यया भवति । यस्तु परशरीरस्य बलीवर्दादेरङ्गच्छेदनादिकराणि कर्माणि करोति, तस्य क्रियापरशरीरानवकाङ्क्षाप्रत्यया भवति ।

अनायुक्तदानतारूप क्रिया है तथा उपयोग की अस्थिरता में ही जो वस्त्रपात्रादिकों की प्रमार्जना रूप क्रिया की जाती है वह अनायुक्त प्रमार्जना क्रिया है इहलोक एवं परलोक के अपाय एवं भय से वर्जित हुए जीव की जो क्रिया है वह अनवकांक्षा क्रिया है यह क्रिया भी दो प्रकार की होती है एक आत्मशरीरानवकांक्षाप्रत्यया और दूसरी परशरीरानवकांक्षाप्रत्यया अपने शरीर की अपेक्षा किये बिना ही अपने शरीर के ही अङ्गविशेषों का छेदनकारककर्म जो कि नपुंसकता आदि जनक होता है करता है उसकी क्रिया आत्मशरीरानवकांक्षाप्रत्यया है जो बलीवर्दादिरूप परशरीरके छेदनकारककर्मो–दाम लगानेरूप अर्थात् तपाई हुई लोह शलाका से अंकित करनेरूप आदि लगानेरूप कार्यों को करता है उसको परशरीरानवकांक्षाप्रत्यया क्रिया होती है इस प्रकार से भी क्रिया दो प्रकार की होती है एक प्रेम प्रत्यया और दूसरी द्वेष प्रत्यया मायालोभ रूप राग जिसका कारण होता है वह प्रेमप्रत्यया

પાત્ર આદિને ગ્રહણ કરવા રૂપ જે ક્રિયા થાય છે તેને અનાયુક્ત આદાનતા રૂપ ક્રિયા કહે છે. તથા ઉપયોગની અસ્થિરતામા જે વસ્ત્ર, પાત્રાદિકોની પ્રમાર્જના કરવા રૂપ ક્રિયા થાય છે તેને અનાયુક્ત પ્રમાર્જનતા ક્રિયા કહે છે. આલોક અને પરલોકના અવાય અને ભયથી રહિત જીવની જે ક્રિયા હોય છે તેને અનવકાક્ષા ક્રિયા કહે છે. તેના પણ બે પ્રકાર છે–(૧) આત્મશરીરા નવકાંક્ષા પ્રત્યયા, અને (૨) પરશરીરાનવકાક્ષા પ્રત્યયા પોતાના શરીરની અપેક્ષા (દરકાર) કર્યા વિના પોતાનાં જ અગવિશેષોનું છેદન કરવા રૂપ જે ક્રિયા થાય છે તેને આત્મશરીરાનવકાક્ષા પ્રત્યયા ક્રિયા કહે છે. જેમકે નપુસક બનવાની ક્રિયા.

બળદ આદિ પરશરીરોને છેદવાની–તેમને ડામ દેવાની ખસી કરવાંની, નાથવાની આદિ ક્રિયા કરનાર વ્યક્તિ પરશરીરાનવકાંક્ષા પ્રત્યયા ક્રિયા કરે છે.

પ્રેમપ્રત્યયા અને દ્વેષપ્રત્યયાના ભેદથી પણ ક્રિયા બે પ્રકારની કહી છે. માયા લોભરૂપ રાગ જે ક્રિયાના કારણરૂપ હોય છે તે ક્રિયાને પ્રેમપ્રત્યયા ક્રિયા

पुनः प्रकारान्तरेण क्रियाया द्वैविध्यमाह-'दो किरियाओ' इत्यादि। द्वे क्रिये प्रज्ञप्ते। तद् यथा-प्रेमप्रत्यया, द्वेषप्रत्यया चेति। प्रेमा:-रागः, मायालोभरूप स प्रत्यय -कारण यस्याः सा प्रेमप्रत्यया। द्वेषः-क्रोधमानरूप स प्रत्ययः कारण यस्या सा द्वेषप्रत्यया। प्रेमप्रत्यया क्रिया द्विविधा-मायाप्रत्यया लोभप्रत्यया चेति। तथा-द्वेषप्रत्ययाऽपि द्विविधा-क्रोधप्रत्यया मानप्रत्यया चेति। एतत् सुगमम् ॥सू०४॥

सूत्रम्-दुविहा गरिहा पन्नत्ता, तं जहा-मणसा वेगे गरिहइ। वयसा वेगे गरिहइ अहवा गरिहा दुविहा पन्नत्ता। तं जहा-दोहं वेगे अद्धं गरिहइ, रहस्सं वेगे गरिहइ ॥ सू० ५ ॥

छाया-द्विविधा गर्हा प्रज्ञप्ता। तद् यथा-मनसा वा एको गर्हते। वचसा वा एको गर्हते। अथवा गर्हा द्विविधा-प्रज्ञप्ता। तद् यथा-दीर्घां वा एकः अद्धां गर्हते। ह्रस्वां वा एकः अद्धां गर्हते ॥ सू० ५ ॥

टीका-'दुविहा गरिहा' इत्यादि-

गर्हा-गर्हणं, पापस्य प्रकाशनम्। सा च स्वविषयिका परविषयिका चेति द्विविधा। सा पुनर्द्रव्यभावभेदेन द्विविधा। तत्र द्रव्यगर्हा-मिथ्यादृष्टिकृता, उप

क्रिया है तथा क्रोधमान रूप द्वेष जिसका कारण होता है वह द्वेष प्रत्यया क्रिया है प्रेमप्रत्यया क्रिया दो प्रकारकी होती है एक मायाप्रत्यया और दूसरी लोभ प्रत्यया तथा द्वेषप्रत्यया क्रिया भी दो प्रकारकी होती है एक क्रोधप्रत्यया और दूसरी मानप्रत्यया यह सब सुगम है ॥सू०४॥

दुविहा गरिहा पन्नत्ता इत्यादि ॥५॥

टीकार्थ-गर्हा दो प्रकारकी कही गई है पापका प्रकाशन करना इसका नाम गर्हा है वह गर्हा स्वविषयिका और पर विषयिका के भेद से दो प्रकार की कही गई है तथा द्रव्य गर्हा और भावगर्हा के भेद से भी

કહે છે ક્રોધમાન રૂપ દ્વેષ જે ક્રિયામાં કારણભૂત હોય છે તે ક્રિયાને દ્વેષપ્રત્યયા ક્રિયા કહે છે પ્રેમપ્રત્યયા ક્રિયાના બે ભેદ કહ્યા છે-(૧) માયાપ્રત્યયા અને (૨) લોભપ્રત્યયા દ્વેષપ્રત્યયા ક્રિયાના પણ નીચે પ્રમાણે બે ભેદ પડે છે (૧) ક્રોધપ્રત્યયા અને (૨) માનપ્રત્યયા. તેમના અર્થ સરળ હોવાથી વધુ સ્પષ્ટતાની જરૂર નથી ॥ સૂ૦૪ ॥

"દુવિહા ગરિહા પણ્ણત્તા" ઇત્યાદિ ॥ ૫ ॥

ગર્હા બે પ્રકારની છે પાપનું પ્રકાશન કરવું તેનું નામ ગર્હા છે તે ગર્હાના સ્વવિષયિકા અને પરવિષયિકા નામના બે ભેદ પડે છે તથા દ્રવ્યગર્હા અને ભાવગર્હાના ભેદથી પણ તેના બે પ્રકાર પડે છે મિથ્યાદૃષ્ટિ જીવ દ્વારા જે

योगवर्जितसम्यग्दृष्टिकृता च भवति। सा चाप्रधानगर्हा, द्रव्यशब्दस्याप्रधानार्थत्वात्। उक्तं च—

अप्पाहन्नेऽवि इहं, कत्थइ दिट्ठो हु दव्वसद्दो त्ति।
अंगारमद्दओ जह, दव्वायरिओ सयाऽभव्वो ॥ १ ॥

छाया—अप्राधान्येऽपि इह, कथ्यते दृष्ट एव द्रव्यशब्द इति।
अङ्गारमर्दको यथा, द्रव्याचार्यः सदाऽभव्यः ॥ १ ॥

उपयोगयुक्तस्य सम्यग्दृष्टेस्तु भावगर्हा भवतीत्येवं चतुर्विधा गर्हा। यद्वा-गर्हणीय भेदाद् गर्हा बहुविधा भवति। परंत्वत्र करणापेक्षया गर्हा द्विविधा प्रोच्यते-' मणसा वेगे गरिहइ ' इति। एकः=कोऽपि साध्वादिः, मनसा वा गर्हते=गर्ह्यं जुगुप्सते। इह वा शब्दो विकल्पार्थः। अवधारणार्थो वा, मनसैव ननु वाचा गर्हते इत्यर्थः। यथा-प्रसन्नचन्द्रराजर्षिः।

वह दो तरहकी है मिथ्यादृष्टि जीव द्वारा कृत जो गर्हा है वह द्रव्यगर्हा है तथा उपयोग वर्जित सम्यग्दृष्टि जीव द्वारा कृत भी द्रव्यगर्हा है यह गर्हा अप्रधान गर्हा है क्यों कि द्रव्यशब्द अप्रधान अर्थ वाला है। कहा भी है-"अप्पाहन्ने" इत्यादि। उपयोगयुक्त सम्यग्दृष्टि जीवकी जो गुरू के समक्ष गर्हा है वह भावगर्हा है इस प्रकार से गर्हा चार प्रकार की है अथवा गर्हणीय के भेद से गर्हा यद्यपि बहुत प्रकार भी होती है परन्तु यहां करण की अपेक्षा से गर्हा दो प्रकार की कही गई है "मणसा वेगे गरिहई" कोइ एक साधु ऐसा भी होता है जो मन से ही गर्हा करता है इसका तात्पर्य ऐसा है कि प्रसन्न चन्द्र राज ऋषि की तरह कोई साधु मन से ही गर्हा करता है वचन से गर्हा नहीं करता है भावगर्हा में प्रसन्नचन्द्र राजऋषि का दृष्टान्त इस प्रकार से है-

---

ગર્હા કરાય છે તે ગર્હાને દ્રવ્યગર્હા કહે છે તથા ઉપયોગ રહિત સમ્યગ્દૃષ્ટિ જીવ દ્વારા કરાતી ગર્હા પણ દ્રવ્યગર્હા જ છે આ ગર્હા અપ્રધાન ગર્હા છે, કારણ કે દ્રવ્ય શબ્દ અપ્રધાન અર્થવાળો છે કહ્યુ પણ છે કે-" અપ્પાહન્ને " ઇત્યાદિ ઉપયોગ યુક્ત સમ્યગ્દૃષ્ટિ જીવ દ્વારા ગુરુની સમક્ષ જે પોતાની ગર્હા થાય છે તેને ભાવગર્હા કહે છે

આ રીતે ગર્હા ચાર પ્રકારની કહી છે અથવા ગર્હણીયના ભેદથી તો ગર્હા અનેક પ્રકારની હોઇ શકે છે, પરન્તુ અહીં કરણની અપેક્ષાએ ગર્હા બે પ્રકારની કહી છે. "मणसा वेगे गरहइ" કોઈ સાધુ એવો પણ હોય છે કે જે મનથી ગર્હા કરે છે તેનો ભાવાર્થ આ પ્રમાણે છે—

अथ भावगर्हायां प्रसन्नचन्द्रराजर्षिदृष्टान्तः प्रोच्यते—

आसीज्जम्बूद्वीपे दक्षिणभरते क्षितिप्रतिष्ठितपुरं सोमचन्द्रनामा नृपतिः। तस्य पुत्रः प्रसन्नचन्द्रो जातः। राजा सोमचन्द्रः प्रसन्नचन्द्रे पुत्रे राज्यभारं दत्त्वा प्रव्रजितो जातः।

एकदा प्रसन्नचन्द्रस्य राज्ञः शिरः केशान् राज्ञी परिशोधयितुं प्रवृत्ता। राजा प्रसन्नचन्द्रः स्वमुखं दर्पणे विलोकयति। तत्राऽसौ शिरः—केशान् विलोकमानस्त्वेकं शुक्लकेशमपश्यत्। ततस्तस्य वैराग्यं समजनि। राज्ञी तमुदासीनं विज्ञाय वदति—नाथ! किमधुना भवानुदासीनो जातः?। विविध सरसमशनं पानं भव-दीय—भवने वर्तते। ताम्बूलवीटिकाः पार्श्वे विद्यन्ते। नानाविधरत्नैर्भवदीयको-

जम्बूद्वीप नामके द्वीपमें दक्षिण भरतक्षेत्रमें क्षितिप्रतिष्ठित नामका पुर था उसमें सोमचन्द्र नामका राजा था उसके पुत्र का नाम प्रसन्नचन्द्र था राजा सोमचन्द्र प्रसन्नचन्द्र के ऊपर राज्य का भार रखकर दीक्षित हो गये एक दिन की बात है कि प्रसन्नचन्द्र राजा के शिर के बालों को रानी संभालने लगी उस समय राजा प्रसन्नचन्द्र ने दर्पण में अपना मुख देखा मुख देखते ही उनकी दृष्टि अपने एक मस्तक के सफेद केश पर जाकर पड़ी सफेद केश देखते ही उनके चित्त में वैराग्य ने स्थान ले लिया उदासीन हुए राजा को देखकर रानी ने कहा—नाथ! आप इस समय उदासीन क्यों प्रतीत हो रहे हो किस बात की आप को चिन्ता है आपके यहां विविध सरस अशन पान की कमी नहीं है ताम्बूल के बीड़े आपके सदा उपस्थित रहा करते हैं नाना प्रकार के रत्नों से आपका

પ્રસન્નચન્દ્ર રાજર્ષિની જેમ કોઈ સાધુ મનથી જ ગર્હા કરે છે, વચનથી કરતો નથી. ભાવગર્હાની અપેક્ષાએ પ્રસન્નચન્દ્ર રાજર્ષિનું દૃષ્ટાન્ત આ પ્રમાણે છે–જબૂદ્વીપ નામના દ્વીપના ભરતક્ષેત્રમાં ક્ષિતિપ્રતિષ્ઠિત નામનું નગર હતું ત્યાં સોમચન્દ્ર નામનો રાજા રાજ્ય કરતો હતો તેના પુત્રનું નામ પ્રસન્નચન્દ્ર હતું પ્રસન્નચન્દ્રને રાજ્ય સોંપીને સોમચન્દ્રે દીક્ષા અંગીકાર કરી ત્યારબાદ એક વખત એવું બન્યું કે પ્રસન્નચન્દ્ર રાજાની રાણી તેના (પ્રસન્નચન્દ્રના) કેશ ઓળી રહી હતી, ત્યારે પ્રસન્નચન્દ્રે દર્પણમાં પોતાનું મુખ જોવા માંડયું દર્પણમાં મુખનું પ્રતિબિંબ નિરખતા તે રાજાએ પોતાના મસ્તકપર એક સફેદ વાળ જોયો. સફેદ કેશને દેખતાંની સાથે જ તેના મનમાં વૈરાગ્યભાવ ઉત્પન્ન થયો. ઉદાસ થયેલા રાજાને જોઈને રાણીએ પૂછ્યું–" નાથ! આપ ઉદાસ કેમ લાગો છો? આપને શેની ચિંતા પજવી રહી છે? આપને ત્યાં સરસ અશન–પાનની કમીના નથી, તાંબૂલ (પાન) નાં બીડાં તો આપની સમક્ષ સદા ઉપસ્થિતજ

शागारं संभृतम् । धनधान्यप्रवृद्धेमरूद्धिसिद्धिसमृद्धे जनपदे तवाधिकारोऽस्ति । भवत्प्रतापानलसन्तप्ता भवदीयशत्रवो दिगन्तमाश्रिता इव न केऽपि लक्ष्यन्ते । सुरपतिसदृशं भवत्तेजः परिस्फुरति । राज्यलक्ष्मीरनुदिनं शुक्लपक्ष–शशिकलेव संवर्द्धमाना लीलायते । पुनः केन कारणेन भवदीयं मनः सखेदमिति विज्ञातुमि-

भंडार सदा भरपूर बना हुआ है धन धान्य से आप का देश परिपूर्ण है सम्पूर्ण प्रकार की ऋद्धि सिद्धियां इसे अपना निवास स्थान बनाये हुए हैं इस पर आप का अखण्ड साम्राज्य छाया हुआ है आपके प्रतापरूपी अनल (अग्नि) से सन्तप्त हुए शत्रु ऐसे ढूढने पर भी नहीं मिल रहे हैं ऐसा प्रतीत होता है कि मानो वे दिगन्तों का आश्रित करके ही छिप रहे हैं आप का तेज इन्द्र के तेज की तरह चारों ओर चमक रहा है प्रतिदिन राज्यलक्ष्मी राज्यमहल के प्राङ्गण में शुक्लपक्ष की शशिकला की तरह बढती हुई अखण्ड क्रीडा करती रहती है अतः इतना सब कुछ होने पर भी नाथ ! मैं यह जानने के लिये उत्कंठित हो रही हूं कि आप की इस उदासीनता का क्या कारण है ? रानी की इस प्रकार से जिज्ञासा जानकर राजा ने कहा–देवि ! मेरी उदासीनता का कारण यम (मृत्यु) के संदेशको लेकर यमदूतका आना है मालुम पड़ता है कि अब थोड़ेसे ही समय में शत्रु आनेवाला है अतः उसके साथ हमारा जाना अवश्य ही होगा राजा की इस बात को सुनकर रानी ने कहा–नाथ ! आप यह

રહે છે વિવિધ રત્નોથી આપને ભંડાર ભરપૂર છે. ધનધાન્યથી આપણો દેશ પરિપૂર્ણ છે આપને ત્યાં બધી પ્રકારની ઋદ્ધિસિદ્ધિ વિદ્યમાન છે. તેનાપર આપનું અખંડ સામ્રાજ્ય છે આપના પ્રતાપરૂપી અનલ (અગ્નિ)થી સંતપ્ત થઈને શત્રુઓ એવા તો નાસી ગયા છે કે ગોત્યાં જડતાં નથી. જાણે કે તેઓ દિગન્તોને આશ્રય લઈને છુપાઈ ગયા છે આપનુ તેજ ઇન્દ્રના તેજની જેમ ચારે બાજુ ચમકી રહ્યું છે પ્રતિદિન આપની રાજ્યલક્ષ્મી શુકલપક્ષના ચન્દ્રની જેમ વૃદ્ધિ પામતી જાય છે જાણે કે તે રાજ્યલક્ષ્મી આપણા રાજમહેલના પ્રાંગણમાં શુકલપક્ષના ચન્દ્રની કલાની જેમ વૃદ્ધિ પામતી અખંડ ક્રીડા કરી રહી છે. આટલી આટલી સુખ–સમૃદ્ધિ હોવા છતાં આપ શા કારણે ઉદાસ થઈ ગયા છો, તે જાણુવાને હુ ઘણી આતુર છુ.”

રાણીની આ પ્રકારની જિજ્ઞાસાને જાણીને પ્રસન્નચન્દ્ર રાજાએ તેને કહ્યું, “હે રાણી ! મૃત્યુનો પૈગામ લઇને યમનો દૂત આવી રહ્યો છે. થોડા જ સમયમા શત્રુ આવી પહોંચશે. તેની સાથે મારે જરૂર જવું પડશે તે કારણે આજ મારા મનમાં ઉદાસીનતા વ્યાપી ગઇ છે.”

च्यामि । राजा प्राह-देवि ! संदेशमादाय यमदूतः समागतः । स्वल्पेनैव कालेन प्रभु समागमिष्यति, विवसस्माक गमन भविष्यति । राज्ञी प्राह-भवन्तमितो नेतु कः समर्थोऽस्ति, अहमनुपमामिमां स्वकरमुद्रिकां प्रदाय सर्वस्वमपि वा तस्मै समर्प्य भवन्तं मोचयिष्यामि । राजा प्राह देवि ! त्वं भद्राऽसि सरलहृदयाऽसि, तस्मादीदृशं वचस्तवमुखात् सरति । यदि वस्तुप्रदानेन मृत्युर्निवार्यते, तदा नकोऽपि म्रियत, सर्वस्वसम्प्रदानेनापि मृत्युरनिवार्यः । राज्ञी वदति-नाथ ! कोऽसौ यमदूत समागतोऽस्ति ? । राजा प्राह-मम शिरसि पलितं केश एव यमदूतः।

क्या कहते हैं ? ऐसा कौन सामर्थ्यशाली है जो आप को यहां से ले जा सके यदि कोई आप को यहा से लेने के लिये आवेगा भी तो मैं अपनी इस अनुपम मुद्रिका को या अपने इस सर्वस्व को उसके लिये देकर आप को उससे छुड़ा लूंगी फिर आप चिन्ता किस बात की करते हैं ? रानी की इस भोलेपन की बात सुनकर राजा ने कहा-देवि ! तुम भोली और सरलहृदय वाली हो इसीलिये तुम्हारे मुख से ऐसी बात निकल रही है । सोचो तो सही-कहीं मृत्यु भी टाली जा सकती है यह तो सिर्फ तुम्हारी कोरी धारणा ही है जो तुम ऐसा कह रही हो कि हम अमूल्य वस्तु देकर उसे लौटा देंगे, यदि ऐसा ही होता तो फिर क्या था कोई भी नहीं मरता अतः सर्व सम्पदा दे देने पर भी मृत्यु अनिवार्य है यह तुम दृढ विश्वास करो राजा के इस प्रकार के सत्यार्थ कथन को सुनकर रानी ने उनसे पूछा-नाथ ! कौनसा वह यमदूत आया हुआ है

રાજાની આ પ્રકારની વાત સાંભળીને રાણીએ કહ્યું-" નાથ ! આ આપ શું કહો છો ! આપને અહીંથી લઈ જવાને કોણ સમર્થ છે ? જો આપને અહીંથી લઈ જવાને કોઈ આવશે તો હું તેને મારી અનુપમ મુદ્રિકા અથવા સર્વસ્વ આપીને પણ તેના હાથમાંથી આપને મુક્ત કરાવીશ. તો આપ ચિંતા શા માટે કરવી જોઈએ ! "

રાણીની આ ભોળપણયુક્ત વાતો સાંભળીને રાજાએ તેને કહ્યું-" દેવી ! તમે ભોળાં અને સરળ સ્વભાવવાળાં છો તેથી તમારા મુખમાંથી આ પ્રકારની વાત નીકળી રહી છે શું મોતને રોકવાની કોઈમાં શક્તિ છે ખરી ? શું અમૂલ્ય મુદ્રિકાદિની ભેટ દ્વારા મોતને રોકી શકાય છે ખરું ! જો એવી રીતે મોતથી બચી શકાતું હોત તો જગતમાં કોઇ પણ વ્યક્તિ મરત જ નહીં ! સર્વ સંપત્તિ અર્પણ કરવા છતાં તેને ટાળી શકાતું નથી તેને રોકવાને કોઈ સમર્થ નથી "

આ પ્રકારનું રાજાનું સત્યાર્થ કથન સાંભળીને રાણીએ કહ્યું-" નાથ ! " ક્યાં છે એ યમદૂત ? મને બતાવો તો ખરા ! "

शुक्लः केश एव सूचयति-मृत्यु समीपे समागत इति । धिङ्माम् धिङ्माम् । केशे शुक्लतामुपगतेऽपि मया संयमो न गृहीतः । इयं हि कुलरीतिरस्माकम्-यावत् केशः शुक्लो न भवति, ततः प्रागेवास्मत्कुलोत्पन्ना राज्यलक्ष्मीं विहाय संयमेन तपसा स्वात्मकल्याणं साधयन्ति । मम तातस्तु जराजनितकेशशौक्ल्यात् पूर्वमेव राज्य-समृद्धिं परित्यज्य दीक्षितो जातः ।

ततोऽसौ प्रसन्नचन्द्रो नरेन्द्रः प्रधानपञ्चशतकं समाहूय तैः सहानुमन्त्र्य, षण्मासवयस्कं पुत्रं राज्ये संस्थाप्य प्रव्रजितो जातः । स ग्रामानुग्राम विहरन् स्वरूपे-

---

मुझे भी उसे कहिये राजा ने कहा मुग्धे ! देखो वह यमदूत पलित (सफेद) केश के मिष से मेरे मस्तक पर ठहरा हुआ है अतः यह शुक्ल केश ही मुझे सूचित करता है कि राजन् ! तेरी मृत्यु अब निकट है मुझे बार २ धिक्कार है जो शुक्ल केश के हो जाने पर भी मैं संयम को अङ्गीकार नहीं कर रहा हूँ हमारे कुल की रीति ही ऐसी चली आ रही है कि जब तक केश सफेद न हो जावे इसके पहिले ही हमारे वंशजो ने आत्मकल्याण के लिये राजलक्ष्मी का परित्याग कर संयम और तप से अपना निजका शोधन किया है मेरे पिता ने भी ऐसा ही कार्य किया है वे वृद्ध होने से पहिले ही राज्यलक्ष्मी का परित्याग कर दीक्षित हुए हैं।

इस प्रकार विचार कर प्रसन्नचन्द्र नरेन्द्र ने पांचसौ प्रधान पुरुषों को बुलाया और उनके साथ विचार किया विचार विमर्श करके फिर वे छहमास के पुत्र को राज्य में स्थापित कर दीक्षित हो गये ग्रामानु-

---

ત્યારે પોતાના મસ્તકમાંથી સફેદ વાળને ખેચી કાઢી રાણીને તે બતાવીને કહ્યુ-" મુગ્ધે ! દેખો, આ યમદૂત સફેદ કેશનુ રૂપ લઇને મારા મસ્તક પર ચઢી બેઠો છે. તે સફેદ કેશ જ મને એવુ સૂચન કરે છે કે 'હે રાજન્ ! તારૂ મૃત્યુ નજીક છે, હવે તો ચેત ' ધિક્કાર છે કે માથામા સફેદ કેશ આવી જવાં છતા પણ હુ સંયમ અંગીકાર કરી શકયો નથી અમારા કુળમા તો એવો નિયમ ચાલ્યો આવે છે કે કેશ સફેદ થઇ જાય તે પહેલા આત્મકલ્યાણને નિમિત્તે રાજ્યલક્ષ્મીનો પરિત્યાગ કરીને સંયમ અને તપના નિભાવ દ્વારા આત્માની શુદ્ધિ કરવી મારા પિતાએ પણ એ રીતને નિભાવી હતી તેઓ પણ રાજ્યલક્ષ્મીનો પરિત્યાગ કરીને પ્રવજિત થઇ ગયા હતા "

આ પ્રમાણે વિચાર કરીને પ્રસન્નચંદ્ર રાજાએ ૫૦૦ પ્રધાનોને બોલાવ્યા. તેમની સાથે મંત્રણા કરીને પોતાના છ માસના રાજકુમારને ગાદીએ બેસાડયો અને પોતે પ્રવજ્યા અંગીકાર કરીને ગ્રામાનુગ્રામ વિહાર કરવા લાગ્યા. આ રીતે વિહાર કરતા કરતાં થોડા વખતમા તેઓ રાજગૃહ નગરની

नैव कालेन राजगृहीनगया बहिः प्रदेशे निर्जने वने समागत्य, एकेन चरणेनो त्थितः सूर्याभिमुखं सूर्याऽऽतापनां ग्रहीतुं बाहुद्वयमूर्ध्वमुत्थाप्य शुभध्यानसंलग्नोऽ भवत्। स च हृदयेऽर्हन्तं निधाय, सिद्धध्यानशिरस्त्राणं-'टोप' इति भाषाप्रसि द्धम्, आचार्यध्यानकवचम्, उपाध्यायध्यानरथ, साधुध्यानास्त्रं समादाय, कर्मशत्रुं विजेतुं सोत्साहमुद्यत आसीत्।

तदा श्रेणिकनृपस्य सुमुख-दुर्मुख नामको दूतौ तदासन्नमार्गेण समागतौ। तौ च तत्र ध्यानस्थं प्रसन्नचन्द्रराजर्षिं दृष्टवन्तौ। तदा सुमुखेनोक्तम्-धन्योऽयं महात्मा धन्या चाप्यस्य जननी जन्मभूमिश्च, योऽयं सुदुस्त्यजां सुरम्यितामपि राज्यलक्ष्मीं

ग्राम विहार करते हुए वे स्वल्पकाल में ही राजगृही नगरी के बाहर के निर्जन वन में आये और वहां आकर वे एक चरण से खड़े हो गये और सूर्य की तरफ मुंह करके सूर्य की आतापना लेने के लिये दोनों हाथों को ऊंचा करके वे शुभ ध्यान में सलग्न हो गये उस समय उन्हों ने हृदय में अर्हन्त को विराजमान करके कर्म शत्रुओं के साथ युद्ध करना प्रारम्भ कर दिया इस युद्ध में सिद्ध भगवान् के ध्यान को उन्हों ने टोप बनाया आचार्यके ध्यानको कवच उपाध्यायके ध्यानको रथ और साधुके ध्यानको अस्त्र बनाया इस प्रकार युद्ध की सामग्रीसे सजधज कर वे कर्म शत्रु के साथ बड़े ही उत्साह के साथ युद्ध करने के लिये प्रवृत्त हो गये।

इसी समय श्रेणिक राजा के सुमुख दुर्मुख नाम के दो दूत उनके पास के रास्ते से होकर निकले उन दोनों ने वहां ध्यान में तल्लीन हुए प्रसन्नचन्द्र राजऋषि को देखा देखकर सुमुख ने कहा-इन महात्मा को

બહારના નિર્જન વનમાં આવી પહોંચ્યા ત્યાં આવીને તેઓ એક પગને આધારે, સૂર્યની તરફ મુખ કરીને ઊભા રહ્યા. આ રીતે તેઓ બન્ને હાથ ઊંચા કરીને સૂર્યની આતાપના લેવા લાગ્યા, આ રીતે ઊભાં ઊભાં તેઓ શુભધ્યાનમાં લીન થઈ ગયા હૃદયમાં અર્હંત ભગવાનને વિરાજમાન કરીને તેમનું ધ્યાન ધરીને તેમણે કર્મરૂપી શત્રુઓની સાથે લડાઈ શરૂ કરી. ક્યાં ક્યાં શસ્ત્રોથી તેમણે તે શત્રુઓનો મુકાબલો કર્યો? અર્હંતના ધ્યાનને તેણે પોતાનો ટોપ બનાવ્યો, આચાર્યના ધ્યાનને બખ્તર બનાવ્યું, ઉપાધ્યાયના ધ્યાનને રથ અને સાધુના ધ્યાનને અસ્ત્ર બનાવ્યાં. આ પ્રકારની યુદ્ધની સામગ્રીથી સજ્જ થઈને તે કર્મશત્રુઓની સામે ઘણા જ ઉત્સાહપૂર્વક લડવા લાગ્યા.

આ પ્રમાણે જ્યારે તે ધ્યાનમાં મગ્ન હતા, ત્યારે શ્રેણિક રાજાના સુમુખ અને દુર્મુખ નામના બે દૂતો તે માર્ગે થઈને નીકળ્યા. તેમણે ત્યાં ધ્યાનમાં તલ્લીન થયેલા પ્રસન્નચન્દ્ર રાજર્ષિને જોયા. તેમને જોઈને સુમુખે દુર્મુખને

सर्वाधिकार सकलपरिवारं च परित्यज्य सुदुश्चरं तपस्तपति। तद्वचनं श्रुत्वा दुर्मुखः प्राह–नायं महात्मा, किंतु नराधमोऽयम्, यतोऽयं षण्मासवयस्के बाले राज्यभारं दत्त्वा मन्त्रिणामङ्के पुत्रं निक्षिप्य संयम गृहीतवान्। अनेन महदनुचितं कृतम्, यदयं पुत्रस्य बाल्यावस्थायामसंजातबले तस्मिन्–राज्यभारं न्यस्तवान् तदद्य मन्त्रि

धन्य है इनकी माताको धन्य है और इनकी जन्मभूमिको भी धन्य है जो देवदुर्लभ भी राज्यविभूति का परित्याग कर एवं अपने एक छत्र राज्य से मुह मोड़कर और सकल परिवार को छोड़कर सुदुश्चर तप तप रहे हैं सुमुख की इस बात को सुनकर दुर्मुख ने कहा–ये महात्मा नहीं है ये तो नराधम हैं जो छहमास के बच्चे को राज्य के भार को संभालने के लिये मन्त्रियों की गोद में रखकर संयम की आराधना में लग गये हैं। यह इन्हों ने बड़ा ही अनुचित कार्य किया है भला पुत्र को बाल्यावस्था में छोड़कर अपने हित की संभाल करना यह कौनसी बुद्धिमानी है ? इन्हों ने जिस प्रकार से अपने हित करने का विचार किया है उस प्रकार से यह विचार क्यों नहीं किया है कि अभी यह बच्चा बाल्यावस्था में रहने के कारण बलवाला भी नहीं हो पाया है मैं कैसे इसके ऊपर राज्य का भार स्थापित करूँ इस प्रकार दूसरे के जीवन से खिलवाड़ करना कहां की धर्मनीति है बालक की निर्बलता और उसके अबोधपने

આ પ્રમાણે કહ્યુ–" ધન્ય છે આ મહાત્માને ! ધન્ય છે તેમના માતાપિતાને ! ધન્ય છે તેમની માતૃભૂમિને ! પોતાના દેવદુર્લભ રાજ્યવૈભવનો પરિત્યાગ કરીને તથા પોતાની એક ચક્રી રાજ્યસત્તા તથા કુટુંબપરિવારનો ત્યાગ કરીને આવી દુષ્કર તપસ્યાનુ સેવન કરનાર આ રાજર્ષિને ધન્યવાદ ઘટે છે. " સુમુખની આ પ્રકારની વાત સાભળીને દુર્મુખે કહ્યું–" અરે ! આ મહાત્મા નથી પણ નરાધમ છે. પોતાના છ માસના બાળકને માથે રાજ્યનો ભાર મૂકીને અને પોતાના છ માસના બાળકને મત્રીઓને આશરે છોડીને સંયમ અને તપની આરાધના કરનાર આ રાજર્ષિ તો ધિક્કારને પાત્ર છે. છ માસના બાળકને માથે આવડી મોટી જવાબદારી નાખીને પોતાના જ હિતનો વિચાર કરીને સંસાર ત્યાગ કરવામાં શી બુદ્ધિમાની રહેલી છે ? તેણે રાજ્ય છોડતાં પહેલાં એવો વિચાર કેમ ન કર્યો કે આ રાજકુમાર હજી બાળક છે રાજ્યનો ભાર વહન કરવાને તે સમર્થ નથી, આવા સુકુમાર બાળકને મંત્રીઓના હાથમાં સોપવો તે યોગ્ય નથી. આ પ્રમાણે બીજાના જીવન સાથે ખેલ કરવા તેને ધર્મનીતિ કેમ કહી શકાય ! બાલકની નિર્બળતા અને તેની અબુધતાનો લાભ

नीति परिवर्तिता, यत् तस्य लघुवयस्कस्य बालस्योपघातं कृत्वा मन्त्रिणः स्वयं राज्यमपहरिष्यन्ति। दुर्मुखवचनादध्यानतः प्रस्खलितचित्तः प्रसन्नचन्द्रराजर्षिरार्त्तरौद्रध्याने मग्नः सन् मनःकल्पितान्यस्त्रशस्त्राणि गृहीत्वा तान् मन्त्रिजनान् मारयितुं भावसङ्ग्रामे प्रवृत्तः।

अत्रान्तरे राजा श्रेणिकस्तत्रागतः। स प्रसन्नचन्द्रराजर्षिं शुभध्याननिष्ठं मत्वा तं नमस्कृत्य भगवतः श्री महावीरस्य चरणोपान्ते समागतः। भगवन्तं वन्दित्वा नमस्कृत्य राजा श्रेणिकः पृच्छति–हे भगवन्! प्रसन्नचन्द्रराजर्षिरधुनाऽस्यां ध्यानावस्थायां यदि कालं कुर्यात्, तर्हि स कस्यां गतौ गमिष्यति?। भगवता प्रोक्तम्–

का लाभ पाकर आज मन्त्रियों की नीति में परिवर्तन हो गया है वे देखते २ नियम से इस लघुवयस्क बालक का उपघात करके स्वयं राज्य का अपहरण कर लेगें दुर्मुख के इस प्रकार के वचनसे ध्यान से प्रस्खलित चित्त हुए वे प्रसन्नचन्द्र राजऋषि आर्त्त रौद्र ध्यान में मग्न होकर मनः कल्पित अस्त्र शस्त्रों को ग्रहण करके उन मन्त्रिजनों को मारने के लिये भावसंग्राम करने में लग गये ठीक इसी समय राजा श्रेणिक वहा पर आये उन्हों ने प्रसन्नचन्द्र राजऋषि को शुभ ध्यान में तल्लीन हुआ मानकर उन्हे नमस्कार किया फिर वे भगवान् महावीर के पास पहुँचे वहां पहुँचकर उन्हों ने भगवान् महावीर की वन्दना की और नमस्कार किया वन्दना नमस्कार करके फिर प्रभु से इस प्रकार उन्हों ने पूछा भगवन्! प्रसन्नचन्द्र राजऋषि जो इस समय ध्यानावस्था में तल्लीन हैं यदि इसी अवस्था में काल धर्म को प्राप्त हो जावें तो वे

वधुवीने आजे मंत्रीओनी बुद्धि बगडी छे तेओ तेने मारी नाखीने राज्यने पचावी पाडवा मागे छे'

दुर्मुखना आ शब्दो सांभळी ध्यानमांथी स्खलित थयेला ते प्रसन्नचंद्र राजर्षि रौद्रध्यानथी युक्त थईने कल्पित हथियारोने ग्रहण करीने ते मंत्रीओने मारी नाखवाने माटे भावसंग्राम करवामां लीन थई गया बराबर ए ज समये श्रेणिक राजा त्यां आवी पहोंच्या तेमणे प्रसन्नचंद्र राजर्षिने शुभ ध्यानमां लीन थयेला मानीने तेमने वंदणा नमस्कार कर्या वंदणा नमस्कार करीने त्यांथी तेओ श्रमण भगवान महावीरनी पासे गया. त्यां जईने तेमणे महावीर प्रभुने वंदणा करी अने नमस्कार कर्या वंदणा नमस्कार करीने तेमणे तेमने आ प्रमाणे प्रश्न पूछयो–हे भगवन्! प्रसन्नचंद्र राजर्षि के जेओ अत्यारे ध्यानावस्थामां लीन छे तेओ जो आ अवस्थामां ज काळधर्म पामी जाय, तो कई गतिमां जाय?

सप्तमे नरके। एतद्वचनं श्रुत्वा राजा श्रेणिकश्चिन्तयति-अहो! मया किमिदं श्रुतम्, धर्मधुराणां क्रियापात्राणां विगतविकाराणां धृततपः संयमभाराणां शुभध्यानिनां महामुनीनामपि यदीदृशी गतिस्तर्हि का कथाऽस्माकं राज्यलोलुपानां कामभोगरतानां महारम्भमहापरिग्रहधारिणां विविधविषयचिन्तातुराणाम्? इति।

तदानीं प्रसन्नचन्द्रराजर्षिः संकल्पविकल्पसंग्रामे रौद्रध्यानसंलग्न आसीत्। तस्मिन् भावसमरे यदा तस्य संकल्पविकल्परूपाणि खड्ग-तोमर-धनुर्बाणादीनि सर्वाणि निष्ठितानि तदा प्रसन्नचन्द्रराजर्षिणा चिन्तितम्-मया सर्वे शत्रवः समूल-

---

किस गति में जावें? श्रेणिक के इस प्रश्न को सुनकर भगवान् ने कहा -श्रेणिक! यदि वे इस अवस्था में कालगत हो तो सप्तमपृथिवी में सातवें नरक में जावें प्रभु के इस कथन को सुनकर राजा श्रेणिक ने विचार किया-मैं यह क्या सुन रहा हूँ ओह! धर्म की धुरा रूप क्रिया के पात्र विषय विकार विहीत तपः संयम भार युक्त ध्यानावस्थित ऐसे महामुनिजनों की भी यदि ऐसी गति हो सकती है तो फिर हमारे जैसे राज्य लोलुप कामभोग रत, महारम्भ परिग्रह सम्पन्न एवं विविध विषय चिन्तातुरों की बात ही क्या है?

प्रसन्नचन्द्रराजऋषि जब संकल्प विकल्प मय संग्राम में रौद्र ध्यान के वशवर्त्ती बने हुए थे, उसी भाव संग्राममें जब उनके संकल्प विकल्प कल्पित खड्ग, तोमर, धनुष एवं बाण आदि सब शस्त्र काम आ चुके,

---

મહાવીર પ્રભુએ મહારાજા શ્રેણિકને આ પ્રમાણે જવાબ આપ્યો-"હે શ્રેણિક! આ અવસ્થામાં જ તેઓ કાળધર્મ પામી જાય, તો સાતમી પૃથ્વીમાં (નરકમા) નારક રૂપે ઉત્પન્ન થઈ જાય"

મહાવીર પ્રભુના આ પ્રકારના કથનને સાંભળીને શ્રેણિક રાજાના મનમાં આ પ્રકારનો વિચાર આવ્યો-"આ હુ શું સાભળી રહ્યો છું! ધર્મની ધુરા રૂપ ક્રિયાને પાત્ર, વિષય અને વિકારોથી વિહીન થઇને તપ અને સયમની આરાધના કરતાં, શુભ ધ્યાનમાં લીન એવા મહામુનિજનોની પણ આ પ્રકારની ગતિ થઈ શકતી હોય, તો અમારા જેવા રાજ્યલોલુપ, કામભોગરત, મહા આરંભ અને પરિગ્રહ સપન્ન અને વિવિધ વિષયોની ચિંતામા જ મગ્ન રહેનારની તો વાત જ શી કરવી!"

રૌદ્રધ્યાનને અધીન થઇને પ્રસન્નચંદ્ર રાજર્ષિએ કલ્પિત ખડગ, ભાલા, ધનુષ, તીર આદિની સહાયતાથી મંત્રીઓ સાથે ભાવસગ્રામ ખેલવા માડયો. આ ભાવસગ્રામમા જ્યારે તેના સંકલ્પ વિકલ્પ કલ્પિત ખડગ, ભાલા, ધનુષ,

नीतिः परिवर्तिता, यत् तस्य लघुवयस्कस्य बालस्योपघातं कृत्वा मन्त्रिण स्वयं राज्यमपहरिष्यन्ति। दुर्मुखवचनाद्ध्यानतः प्रस्खलितचित्तः प्रसन्नचन्द्रराजर्षिरार्तरौद्रध्याने मग्नः सन् मनः कल्पितानि शस्त्राणि गृहीत्वा तान् मन्त्रिजनान् मारयितु भावसंग्रामं मनुषः ।

अत्रान्तरे राजा श्रेणिकस्तत्रागतः। स प्रसन्नचन्द्रराजर्षिं शुभध्याननिष्ठं मत्वा तं नमस्कृत्य भगवतः श्री महावीरस्य चरणोपान्ते समागतः। भगवन्तं वन्दित्वा नमस्कृत्य राजा श्रेणिकः पृच्छति-हे भगवन्! प्रसन्नचन्द्रराजर्षिरधुनाऽस्यां ध्यानावस्थायां यदि कालं कुर्यात्, तर्हि स कस्यां गतौ गमिष्यति ?। भगवता मोक्तम्-

का लाभ पाकर आज मन्त्रियों की नीति में परिवर्तन हो गया है वे देखते २ नियम से इस लघुवयस्क बालक का उपघात करके स्वयं राज्य का अपहरण कर लेगें दुर्मुख के इस प्रकार के वचनसे ध्यान से प्रस्खलित चित्त हुए वे प्रसन्नचन्द्र राजऋषि आर्त रौद्र ध्यान में मग्न होकर मनः कल्पित अस्त्र शस्त्रों को ग्रहण करके उन मन्त्रिजनों को मारने के लिये भावसंग्राम करने में लग गये ठीक इसी समय राजा श्रेणिक वहां पर आये उन्हों ने प्रसन्नचन्द्र राजऋषि को शुभ ध्यान में तल्लीन हुआ मानकर उन्हें नमस्कार किया फिर वे भगवान् महावीर के पास पहुँचे वहां पहुँचकर उन्हों ने भगवान् महावीर के वन्दना की और नमस्कार किया वन्दना नमस्कार करके फिर प्रभु से इस प्रकार उन्हों ने पूछा भगवन्! प्रसन्नचन्द्र राजऋषि जो इस समय ध्यानावस्था में तल्लीन हैं यदि इसी अवस्था में काल धर्म के वशंगत हो जावें तो वे

ઉઠાવીને આજે મંત્રીઓની બુદ્ધિ બગડી છે તેઓ તેને મારી નાખીને રાજ્યને પચાવી પાડવા માગે છે.'

દુર્મુખના આ શબ્દો સાંભળી ધ્યાનમાંથી સ્ખલિત થયેલા તે પ્રસન્નચન્દ્ર રાજર્ષિ રૌદ્રધ્યાનથી યુક્ત થઈને કલ્પિત હથિયારોને ગ્રહણ કરીને તે મંત્રીઓને મારી નાખવાને માટે ભાવસંગ્રામ કરવામાં લીન થઈ ગયા. બરાબર એ જ સમયે શ્રેણિક રાજા ત્યાં આવી પહોંચ્યા તેમણે પ્રસન્નચન્દ્ર રાજર્ષિને શુભ ધ્યાનમાં લીન થયેલા માનીને તેમને વંદણા નમસ્કાર કર્યા વંદણા નમસ્કાર કરીને ત્યાંથી તેઓ શ્રમણ ભગવાન મહાવીરની પાસે ગયા. ત્યાં જઈને તેમણે મહાવીર પ્રભુને વંદણા કરી અને નમસ્કાર કર્યા વંદણા નમસ્કાર કરીને તેમણે તેમને આ પ્રમાણે પ્રશ્ન પૂછ્યો-હે ભગવન્! પ્રસન્નચન્દ્ર રાજર્ષિ કે જેઓ અત્યારે ધ્યાનાવસ્થામાં લીન છે, તેઓ જો આ અવસ્થામાં જ કાળધર્મ પામી જાય, તો કઈ ગતિમાં જાય ?

मानेन, रागद्वेषविषमविषधरभुजङ्गमग्रसितेन, ज्ञानावरणीयाद्यष्टविधकर्मरज्जुभिः प्रत्यात्मप्रदेशं प्रतिनिबद्धेन चतुर्गतिकसंसारभयभीतेन प्राणित्राणकारकं सकलकल्याणधारकं भवजलधितारकं सकलदुःखहारकं सिद्धिपददायकं शिवसुखविधायकं संयमशरणमुपगत्य चारित्रमोहनीयोदयेन चारित्रतः पराङ्मुखीभूयं, महाव्रतमुख्यं प्राणातिपातविरमणाख्यं प्रथमव्रत विराधितम्। एवं शुभाध्यवसायेन प्रसन्नचन्द्रराजर्षिर्दुरितकारिणं स्वात्मानं निन्दन् मनसैव पूर्वकर्माणि क्षपयति स्म।

द्वेष रूप उग्र जहरीले सर्पों के अभेद ज्ञान रूप जहर से प्रत्येक गति में मूर्च्छित हुआ हूँ मेरी आत्मा का कोई भी प्रदेश ऐसा नहीं बचा कि जो ज्ञानावरणीय आदि रूप कर्मरज्जु से कस कर न बंधा हो अब किसी भी तरह से यदि मैं भय से भीत बना हूँ और प्राणित्राण कारक सकलकल्याण धारक भवजलधितारक सकलदुःखहारक, सिद्धिपद दायक और शिवसुख विधायक संयम रूप महल की छत्रछाया में आ पहुँचा हूँ, तो ऐसी स्थिति में जो मैंने चारित्र मोहनीय कर्म के उदय से इस गृहीत चारित्र से इस प्रकार के दुर्विकल्पों के वशवर्ती होकर जो यह पराङ्मुखता अपनाई है वह मेरे द्वारा एक भयङ्कर अपराध हुआ है इससे मेरे आत्मशोधन को एक बहुत बड़ी ठेस पहुँची है उसकी सर्व प्रथम सीढी रूप प्राणातिपात विरमणव्रत इससे ढह गया है–ध्वस्त हो चुका है हां मुझ अज्ञानी ने यह क्या कर डाला इस प्रकार आत्म गर्हा रूप शुभध्यानाध्यवसाय से प्रसन्नचन्द्र राजऋषि ने पापके चक्कर में

ઝેરી સર્પોના અભેદ જ્ઞાનરૂપ વિષથી હુ પ્રત્યેક ગતિમા મૂર્છિત થયો છું મારા આત્માનો કોઈ પણ પ્રદેશ એવો નથી કે જે જ્ઞાનાવરણીય આદિ કર્મરજ્જૂ વડે કસીને બાદ્ગ્યો ન હોય હવે સંસારના ભયથી વ્યાકુળ થઈને હુ સકળ કલ્યાણધારક, ભવજલધિતારક, સકળ દુખહારક, સિદ્ધપદદાયક, અને શિવસુખ વિધાયક સયમરૂપ મહેલની છત્રછાયામાં આવી પહોંચ્યો છું. તો એવી સ્થિતિમાં, ચારિત્રમોહનીય કર્મના ઉદયથી આ દુર્વિકલ્પોને આધીન થઈને મેં જે ચારિત્રની આરાધનામાથી પરાગમુખ થવાની ક્રિયા કરી છે તે મારા દ્વારા એક ભયકર અપરાધ થઈ ગયો છે, તેને લીધે મારા આત્માની શુદ્ધિમાં મોટો અવરોધ ઊભો થયો છે તેના પ્રથમ પગથિયારૂપ પ્રાણાતિપાત વિરમણ વ્રતનું તેના દ્વારા ખડન (ધ્વંસ) થઈ ગયું છે મે અજ્ઞાનીએ આ કેવો મહા અનર્થ કરી નાખ્યો છે!" આ પ્રમાણે આત્મગર્હા રૂપ શુભ ધ્યાનાધ્યવસાય

पात हरा । इत्यादयश्चापि यानि मताानि नष्टानि, परम्ब पुन सुमनो दर्शी मम पुत्रमिच्छति, मर्मेर्ने मम्मरारप्यिनसुरत्यापामनेर इनिप्यानि, इत्यादि । तार्थी मुम्मदतात यदा जिति दत्त निश्चिनि, तदा सुमित्रेर्य मन्ते शिशप न रानति पथासारमुरागत मन्, स्वाम्ननत्तां स्वन निर्दमारफभिन्न पनि-भिद्नाम् मनत पुन पुनर्नमवाममगाधिशमिगमरात्म्परहितम्

पान में कुछ नहीं यथा मय प्रमन्नचन्द्र राजर्षि ने विचार किया मैंने सब शत्रुओं को नष्ट कर दिया है अन्य शत्रु भी सब समाप्त हो चुके हैं अब तो मेरा पराप मन्त्री रूप पर ही शत्रु अवशेष रह गया है वह इस समय मेरे समक्ष उपस्थित भी है अतः मैं इसे भी अब मार मस्तक पर रहे हुए शिरस्त्राण के द्वारा ही मार डालता हूं इस प्रकार की विचार धारा से ओतप्रोत हुए उन प्रसन्नचन्द्र राजर्षि ने मन्त्री को मारने के लिये उसी के मुकुट को प्राप्त करने के लिये अपने मस्तक पर हाथ रखा तो उन्हें ज्ञात हुआ कि मुण्डित मस्तक वाले अपनी इस अनुचित विचार धारा पर पश्चात्ताप होने लगा उन्होंने उसी समय आलोचना करना प्रारम्भ कर दिया उस में क्या । इस प्रकार पुनः पवित्र व भावना से युक्त हुए उनकी आत्मा को केवल- निर्वाण है मैं मनादि काल से ही जान, तथा उनका शाति पर्व स्वाधिकार वृद्धि की उत्तरोत्तरी में शुक्लता हुआ चला आ रहा है मन

भगवता प्रोक्तम्-शुक्लध्यानान्मनः समुदजानपश्चात्तापानलज्वालाकलाप-दन्दह्यमान-सकलकर्मेन्धनस्य प्रसन्नचन्द्रस्य केवलोत्पत्तौ सुरासुरास्तन्महिमानं कुर्वन्ति। इति भावगर्हायां प्रसन्नचन्द्रदृष्टान्तः।

तथा-'वयसा वेगे गरिहइ' इति। वचसा वा एकः कोऽपि गर्हते। इहापि वा शब्दो विकल्पार्थकोऽवधारणार्थको वा। ततश्च वचसैव नतु मनसा गर्हते इत्यर्थः। यथा-'अङ्गारमर्दनाचार्यः।

अथ द्रव्यगर्हायाम् अङ्गारमर्दनाचार्यदृष्टान्तः प्रोच्यते—

आसीद् वसन्तपुरे जितशत्रुनामको राजा। स च द्वादशव्रतारावकस्तीर्थंकर शासनप्रभावकः सदोरकमुखवस्त्रिकां धृत्वा उभयकाले आवश्यकं करोति। एकदा

और देवों का यह जय २ नाद किस कारण से सुनने में आ रहा है? तब भगवान् ने कहा-हे श्रेणिक! शुभध्यान वाले प्रसन्नचन्द्र राजऋषि को पश्चात्ताप की अग्निज्वाला में समस्त कर्म रूपी इन्धन के जल जाने के कारण केवलज्ञान की उत्पत्तिहुई है अतः सुरासुर सब मीलकर उसकी महिमा प्रकट कर रहे हैं इस प्रकार का यह दृष्टान्त भावगर्हा के ऊपर प्रसन्नचन्द्र राजऋषि का है

तथा—"वयसा वेगे गरिहइ" एक कोई मुनि केवल वचन से ही गर्हा करता है यहां पर भी "वा" शब्द विकल्पार्थक अथवा अवधारणार्थक है इस से कोई एक मुनि वचन से ही गर्हा करता है मन से नहीं करता है ऐसा इसका तात्पर्यार्थ है इसके ऊपर अंगारमर्दनाचार्य का दृष्टान्त इस प्रकार से है-वसन्तपुर में जितशत्रु नाम का राजा था

સિંહનાદ તથા દેવો દ્વારા જયનાદ કેમ થઇ રહ્યો છે?" ત્યારે મહાવીર પ્રભુએ તેમને આ પ્રમાણે જવાબ આપ્યો-"હે શ્રેણિક! શુભધ્યાનયુક્ત પ્રસન્નચન્દ્ર રાજર્ષિના પશ્ચાત્તાપની આગમા સમસ્ત કર્મરૂપી ઇંધન બળીને ખાખ થઇ જવાથી તેને કેવળજ્ઞાન ઉત્પન્ન થઇ ગયુ છે તેથી સુરાસુર મળીને તેનો મહિમા પ્રકટ કરી રહ્યા છે." આ પ્રકારનુ પ્રસન્નચન્દ્ર રાજર્ષિનું દૃષ્ટાન્ત ભાવગર્હાનું પ્રતિપાદન કરવાને માટે અહીં આપવામા આવ્યુ છે

તથા "વયસા વેગે ગરિહઇ" કોઇ કોઇ મુનિ કેવળ વચન દ્વારા જ ગર્હા કરે છે અહીં "વા" શબ્દ વિકલ્પાર્થક અથવા અવધારણાર્થક છે કહેવાનુ તાત્પર્ય એ છે કે કોઇ કોઇ મુનિ માત્ર વચનથી જ ગર્હા કરે છે, મનથી ગર્હા કરતા નથી. વચન દ્વારા ગર્હાનુ પ્રતિપાદન કરવા માટે અંગારમર્દનાચાર્યનું દૃષ્ટાન્ત અહીં આપવામા આવ્યુ છે—

વસંતપુર નામે નગર હતું, ત્યા જિતશત્રુ નામનો રાજા હતો. તે બાર

अथान्तर पुनर्भगवन्त श्रेणिकनृप पृच्छति–हे भगवन् ! सम्प्रति स राजर्षिर्यदि काल कुर्यात्, तर्हि कां गतिं गच्छेत्? भगवता प्रोक्तम्–सर्वार्थसिद्धम्। राजा प्राह–भगवन् ! पूर्वं केनाशयेनोपदिष्टम्, साम्प्रतं केनाशयेनोपदिश्यते, इति नावबुध्यत। ततो भगवता क्रमेण सच तद् सर्व तस्मै कथितम्। तस्मिन्नेव समये प्रसन्नचन्द्र राजर्षिसन्निधौ दुन्दुभिध्वनि समजनि, देवानां जयजयनादश्च जात । तदा श्रेणिकः प्राह–किं कारणम्, यदत्र दुन्दुभिध्वनिः श्रूयते, देवानां जयजयनादश्च।

पड़ी हुई अपने आत्मा की निन्दा करते हुए मन से ही पूर्व कर्मों का क्षय कर दिया।

इसके बाद फिर श्रेणिक ने भगवान् से पूछा हे भगवान् ! अब राज ऋषि यदि कालवशवर्ती हो जाते हैं तो वे किस गति के पात्र बन सकते हैं ? भगवान ने कहा श्रेणिक ! वे सर्वार्थसिद्ध के पात्र बन सकते हैं श्रेणिक ने पूछा हे भगवन् ! आपने पहिले किस आशय से सप्तम पृथिवी में जानेकी बात कही और अब किस आशय से आप को उन की बात सर्वार्थ सिद्धमें जानेको कह रहे हैं ! मुझे इसका कारण समझाइए, तब भगवान् ने पूर्व आशय का और वर्तमान आशय का समस्त भेद भाव उन्हें समझा दिया उसी समय प्रसन्नचन्द्र राजऋषि के समीप दुन्दुभियों की ध्वनि होने लगी देवों ने मिलकर जय २ शब्द का उच्चारण किया इसे सुनकर श्रेणिक ने प्रभु से पूछा हे भदन्त ! दुन्दुभिध्वनि

દ્વારા તે પ્રસન્નચંદ્ર રાજર્ષિએ પાપના પંકમાં પડેલા પોતાના આત્માની નિંદા કરતાં કરતાં મન દ્વારા જ પૂર્વકર્મોનો ક્ષય કરી નાખ્યો.

જ્યારે તે પ્રસન્નચંદ્ર રાજર્ષિ આ પ્રકારે આત્મગર્હા કરવામાં મગ્ન થયેલા હતા ત્યારે શ્રેણિક રાજાએ મહાવીર પ્રભુને ફરીથી એજ પ્રશ્ન કર્યો "હે ભગવન્ ! અત્યારે જ જો તે રાજર્ષિ કાળધર્મ પામી જાય, તો કઈ ગતિમાં જાય ?" મહાવીર પ્રભુએ કહ્યું–'હે રાજન્ ! જો તેઓ અત્યારે જ કાળધર્મ પામી જાય, તો સર્વાર્થસિદ્ધને પાત્ર બની શકે છે "

ત્યારે શ્રેણિક રાજાએ મહાવીર પ્રભુને આ પ્રમાણે પૂછ્યું–" હે ભગવન્ ! આપે પહેલાં તેને સાતમી નરકને પાત્ર કહ્યો હતો હવે આપ તેને સર્વાર્થ સિદ્ધને પાત્ર કહો છો, તો આપના આ જવાબનું કારણ શું છે ?' ત્યારે મહાવીર પ્રભુએ પૂર્વ આશયનો અને વર્તમાન આશયનો સમસ્ત ભેદભાવ તેને સમજાવ્યો. બરાબર એજ સમયે પ્રસન્નચંદ્ર રાજર્ષિ પાસે દુંદુભિનાદ થવા લાગ્યો. દેવોએ એકત્ર થઈને તેમનો જય પોકારવા માંડયો. તે દુંદુભિનાદ તથા જય નાદ સાંભળીને રાજા શ્રેણિકે મહાવીર પ્રભુને પૂછ્યું–' હે ભગવન્ ! આ દુંદુ

भगवता प्रोक्तम्-शुक्लध्यानात्मनः समुदजातपश्चात्तापानलज्वालाकलाप-दन्दह्यमान-सकलकर्मेन्धनस्य प्रसन्नचन्द्रस्य केवलोत्पत्तौ सुरासुरास्तन्महिमानं कुर्वन्ति। इति भावगर्हायां प्रसन्नचन्द्रदृष्टान्तः।

तथा-'वयसा वेगे गरिहइ' इति। वचसा वा एकः कोऽपि गर्हते। इहापि वा शब्दो विकल्पार्थकोऽवधारणार्थको वा। ततश्च वचसैव न तु मनसा गर्हते इत्यर्थः। यथा-'अङ्गारमर्दनाचार्यः।

अथ द्रव्यगर्हायाम् अङ्गारमर्दनाचार्यदृष्टान्तः प्रोच्यते—

आसीद् वसन्तपुरे जितशत्रुनामको राजा। स च द्वादशव्रताराधकस्तीर्थंकरशासनप्रभावकः मद्दोरकमुखवस्त्रिकां धृत्वा उभयकाले आवश्यकं करोति। एकदा

और देवों का यह जय २ नाद किस कारण से सुनने में आ रहा है? तब भगवान् ने कहा-हे श्रेणिक! शुभध्यान वाले प्रसन्नचन्द्र राजऋषि को पश्चात्ताप की अग्निज्वाला में समस्त कर्म रूपी इन्धन के जल जाने के कारण केवलज्ञान की उत्पत्तिहुई है अतः सुरासुर सब मीलकर उसकी महिमा प्रकट कर रहे हैं इस प्रकार का यह दृष्टान्त भावगर्हा के ऊपर प्रसन्नचन्द्र राजऋषि का है

तथा—"वयसा वेगे गरिहइ" एक कोई मुनि केवल वचन से ही गर्हा करता है यहां पर भी "वा" शब्द विकल्पार्थक अथवा अवधारणार्थक है इस से कोई एक मुनि वचन से ही गर्हा करता है मन से नहीं करता है ऐसा इसका तात्पर्यार्थ है इसके ऊपर अंगारमर्दनाचार्य का दृष्टान्त इस प्रकार से है-वसन्तपुर में जितशत्रु नाम का राजा था

सिंहनाद तथा देवो द्वारा जयनाद केम थई रह्यो छे?" त्यारे महावीर प्रभुए तेमने आ प्रमाणे जवाब आप्यो-"हे श्रेणिक! शुभध्यानयुक्त प्रसन्नचन्द्र राजर्षिना पश्चात्तापनी आगमा समस्त कर्मरूपी इंधन बळीने खाख थई जवाथी तेने केवळज्ञान उत्पन्न थई गयुं छे तेथी सुरासुर मळीने तेनो महिमा प्रकट करी रह्या छे" आ प्रकारनु प्रसन्नचंद्र राजर्षिनुं दृष्टान्त भावगर्हानु प्रतिपादन करवाने माटे अहीं आपवामा आव्यु छे

तथा "वयसा वेगे गरिहइ" कोई कोई मुनि केवळ वचन द्वारा ज गर्हा करे छे अहीं "वा" शब्द विकल्पार्थक अथवा अवधारणार्थक छे कहेवानु तात्पर्य ए छे के कोइ कोई मुनि मात्र वचनथी ज गर्हा करे छे, मनथी गर्हा करता नथी वचन द्वारा गर्हानु प्रतिपादन करवा माटे अंगारमर्दनाचार्यनुं दृष्टान्त अहीं आपवामा आव्यु छे—

वसंतपुर नामे नगर हतुं, त्या जितशत्रु नामनो राजा हतो. ते बार

प्रभाते तेन राज्ञा स्वप्नो दृष्ट—गजानां पञ्चभिः शतैः परिवृतः सूकरो मम नगरे समागत इति। निद्रापगमे सति राज्ञा चिन्तितम् किमेतन्मया स्वप्ने दृष्टम्, इति। तस्मिन्नेव समये शिष्याणां पञ्चभिः शतैः परिवृतो रुद्रदेवाचार्यस्तत्र समागतः। शुभग्रहैर्युक्तः शनिरिव, कल्पतरुभिः परिवेष्टित एरण्डवृक्ष इव, हंसैः परिवृतो बक इव रुद्रदेवाचार्यस्तेन राज्ञा दृष्टः स राजाऽभ्युत्थानवन्दनादिभिस्तस्य सत्कारं कृतवान्।

अथ रुद्रदेवाचार्यो वनपालाद् वसतेरवग्रहमवगृह्य सपरिवारोऽसौ समोद्याने ऽवस्थितः। राज्ञाऽस्मिन् मुनिसमाजे स्वप्नदृष्टसूकरसमः को मुनिरस्तीति परीक्षार्थं

वह १२ व्रतों का आराधक और तीर्थंकर के शासन का प्रभावक था सदोरक मुखवस्त्रिका को धारण कर वह दोनों समय में आवश्यककार्य किया करता था एक दिन उस राजा ने स्वप्न देखा कि एक सूअर पांच सौ हाथियों से घिरा हुआ होकर मेरे नगर में आया है इस स्वप्न को देखकर ज्यों ही उसकी निद्रा भंग हुई तो उसने विचार किया यह क्या मैंने स्वप्न में देखा है इसी समय पांच सौ शिष्यों से युक्त हुए रुद्रदेव आचार्य वहां पर विहार करते हुए आये शुभग्रहों से युक्त शनि की तरह कल्पवृक्षों से युक्त हुए एरण्ड वृक्ष की तरह तथा हंसो से घिरे हुए बगुला की तरह रुद्रदेवाचार्य को उस राजा ने देखा देखते ही राजाने अभ्युत्थान वन्दनादि क्रियाओं द्वारा उनका सत्कार किया।

वनपाल से वसतिका अवग्रह लेकर वे रुद्रदेवाचार्य परिवार सहित वहां के उद्यान में ठहर गये राजा ने "इस मुनि मण्डली में स्वप्नदृष्ट

व्रतोनो आराधक अने तीर्थंकरना शासननो प्रभावक हतो सदोरक मुहपत्ती धारण करीने ते बन्ने समयमां आवश्यक काम (प्रतिक्रमण) करतो हतो. ते राजाओ ओक रात्रे ओवुं स्वप्न देख्युं के पांचसो हाथीओना समूहथी वींट ळायेलो ओवो ओक भुंड मारा नगरमां आव्यो छे आ प्रकारनुं स्वप्न आव्या बाद ज्यारे तेनी निद्रानो भंग थयो त्यारे ते आ स्वप्न बाबत विचार करवा लाग्यो. हवे ओवुं बन्युं के ओक रुद्रदेव नामना आचार्य पोताना ५०० शिष्योना समूह साथे ओज दिवसे विहार करता करतां ओज नगरमां आवी पहोंच्या शुभ ग्रहोथी युक्त शनिनी जेम, कल्पवृक्षोथी युक्त ओक ओरंडानी जेम, अने हंसोना समूहथी घेरायेला बगलाने जे प्रकारनी दृष्टिथी जोवामां आवे छे ते प्रकारनी दृष्टिथी जितशत्रुओ रुद्रदेव आचार्यने जोया देखतां ज तेमणे अभ्युत्थान, वन्दनादि द्वारा तेमनो सत्कार कर्यो

माळीनी रजा लईने रुद्रदेवाचार्य पोताना ५०० शिष्यो साथे वसंतपुर नगरना ओक उद्यानमां पधार्या. राजाओ विचार कर्यो के आ मंडळीमां स्वप्नमां

रात्रौ वसति समीपे चतुर्दिक्षु चूर्णिताङ्गाराः स्वभृत्यैर्गुप्तरीत्या प्रसारिताः। राजा च प्रच्छन्नो भूत्वा पश्यति। तदनुकश्चिन्मुनिः कायिकीं परिष्ठापयितु रजोहरणेन भूमिं प्रमार्जयन् परिष्टापनभूमौ समागतः। परिष्ठापनभूमिं प्रमार्ज्य यावद् भूमौ पद निधत्ते, तावच्चरणस्पर्शजनितोऽङ्गारचूर्णानां मर्मरशब्दः संजातः। मुनिना ज्ञातम्-अत्र मत्कोटकादयस्त्रीन्द्रियजीवा अनेकराशिरूपेण वर्तन्ते अतो मच्चरण स्पर्शजनितपीडया शब्दो जातः इति। ततोऽसौ जीवोपमर्दनशङ्कया मिथ्यादुष्कृतं दत्त्वा कायिकीमपरिष्ठाप्यैव प्रतिनिवृत्तः। एवं क्रमेण प्रत्येको मुनिः परिष्टापनार्थं

सूकरके जैसा कौन मुनि है" इसकी परीक्षा करने के लिये रात्रि में वसति के समीप चारों दिशाओं में चूर्णितांगार अपने नोकरों द्वारा गुप्तरीति से फैलवा दिये और स्वयं वह वहीं कहीं पर छिप गया और देखने लगा इतने में कोई मुनि कायिकी क्रिया की परिष्ठापना करने के लिये रजोहरण से भूमिकी प्रमार्जना करते हुए परिष्टापन भूमि में आया परिष्ठापन भूमि की प्रमार्जना करके जितने में उसने उस भूमि में पैर रखा कि इतने में चरण के स्पर्श से उन अंगार चूर्णोंमें से मर्मर शब्द हुआ मुनिने जाना कि यहांपर मत्कोटक(मकोडे) आदि त्रीन्द्रिय जीव अनेक राशिरूप से हैं इसलिये मेरे चरण के स्पर्श की पीडा से यह उसका शब्द उत्पन्न हुआ है तब जीवोपमर्दनकी शंका मिथ्यादुष्कृत देकर कायिकी क्रिया की परिष्ठापना नहीं की और विना परिष्ठापना किये

ચોજાયેલ ભુંડ જેવા મુનિ કોણુ છે તે મારે શોધી કાઢવુ જોઇએ. આ કસોટી કરવા માટે રાજાએ તે આશ્રયસ્થાનરૂપ ઉદ્યાનની આસપાસ, છૂપી રીતે પોતાના અનુચરો દ્વારા ચૂર્ણિતાંગાર (ચણોઠીનો ભૂકો) ફેલાવી દીધો, અને પોતે એટ-લામાં જ કોઈ સ્થાને છુપાઈ ગયો. રાત્રે તેણે જોયુ કે કોઈ એક મુનિ લઘુશંકા કરવા માટે રજોહરણથી ભૂમિની પ્રમાર્જના કરતાં કરતાં પરિષ્ઠાપન ભૂમિમાં આવ્યા. પરિ-ષ્ઠાપન ભૂમિની પ્રમાર્જના કરીને તેમણે જેવો તે ભૂમિપર પગ મૂકયો કે તુરત જ ચરણના સ્પર્શથી તે અંગારચૂર્ણમાંથી મર્મર ધ્વનિ ઉઠયો. તેથી મુનિએ માન્યુ કે અહીં મકોડાઆદિ ત્રીન્દ્રિય જીવો અનેક રાશિરૂપે રહેલા છે, અને તે કારણે મારા ચરણના સ્પર્શથી તેમને પીડા પહોંચવાને કારણે આ મર્મર ધ્વની થયો છે. તેથી જીવોની વિરાધનાની શંકાથી મિથ્યાદુષ્કૃત દઈને (પોતાની આ દુષ્કૃત મિથ્યા હો એવુ કહીને-આ રીતે પોતાના પાપકૃત્યની ગર્હા કરીને) કાયિકી ક્રિયાની પરિ-ષ્ઠાપના કર્યા વિના જ તેઓ ત્યાંથી પાછા ફરી ગયા. એજ પ્રમાણે પ્રત્યેક

वहिर्मत्तुर्दिक्षु समागत्य प्रतिनिवृत्तः । तदनन्तरं रुद्रदेवाचार्यः परिष्ठापनार्थमुन्मुकं गृहीत्वा द्रुतद्रुतं बहिर्गच्छति । परिष्ठापनभूमौ चरणस्पर्शेन मर्मरशब्दं जातेऽप्यकृतपश्चात्तापः केवलं वचसा मिथ्यादुष्कृतं दत्त्वा कायिकीं परिष्ठाप्य प्रतिनिवृत्तः । राज्ञा सर्वं तत् विलोक्य विज्ञातम्—अयं रुद्रदेवाचार्य एव स्पष्टदृष्टसूकर इति । ततः प्रभृति तस्या भव्याचार्यस्य 'अङ्गारमर्दनाचार्य' इति नाम प्रसिद्धं जातम् ।

अथवा—'मणसाऽवगे' इति पाठः । इह-अपि शब्दः पठयते । स च संभावने तेनायमर्थः ।'मनसा एको गर्हते, एकोऽन्यो वचसा गर्हते इति संभाव्यते'

ही वह वहां से लौट आया इसी क्रम से प्रत्येक मुनिपरिष्ठानके लिये बाहर चारों ओर आ आकर पीछे चले आये, इसके बाद रुद्रदेवाचार्य परिष्ठापना के लिये उन्मुक को लेकर बहुत ही शीघ्रता के साथ बाहर ओर परिष्ठापन भूमि में गये वहां चरण के स्पर्श से मर्मर शब्द होने पर भी उन्होंने कोई पश्चात्ताप नहीं किया केवल वचन से ही मिथ्यादुष्कृत देकर वे कायिकी क्रियाकी परिष्ठापना करके वहां से लौट आये राजाने यह सब उनका काम अपनी आंखोंसे देखकर जान लिया कि ये रुद्रदेवाचार्य ही स्पष्टदृष्ट सूकर हैं उस दिनसे लेकर उस अभव्याचार्यका "अंगारमर्दनाचार्य" ऐसा नाम प्रसिद्ध हो गया।

अथवा—"मणसा अवेगे" जब ऐसा पाठ किया जाता है तब यहां संभावनार्थक "अपि" शब्द का पाठ करने पर ऐसा अर्थ होता

મુનિ કાયિકી ક્રિયાની પરિષ્ઠાપનાને માટે બહાર નીકળ્યા પણ પરિષ્ઠાપના ભૂમિમાં જતા જ ઉપયુક્ત અનુભવ થવાથી તેઓ પરિષ્ઠાપના (પરઠવાની ક્રિયા) કર્યા વિના જ પાછા ફરી ગયા. ત્યારબાદ રુદ્રદેવાચાર્ય પોતે કાયિકી ક્રિયાની પરિષ્ઠાપના કરવા બહાર આવ્યા તેઓ ઘણી શીઘ્રગતિથી પરિષ્ઠાપના ભૂમિમાં પહોંચ્યા ત્યાં ચરણનો સ્પર્શ થવાથી મમર ધ્વનિ થવા છતાં પણ તેમણે કોઈ પ્રાયશ્ચિત ન કર્યું કેવળ વચનથી "મારું દુષ્કૃત્ય મિથ્યા હો", એવું બોલીને કાયિકી ક્રિયાને વ્યુત્સર્ગ કરીને પરઠીને તેઓ ત્યાંથી પાછા ફર્યા રાજાએ તેમનું આ કાર્ય પોતાની નજરો નજર જોઈને જાણી લીધું કે રુદ્રદેવાચાર્ય જ સ્પષ્ટ સુઅર છે તે દિવસથી તે અભવ્યાચાર્યનું 'અંગારમર્દનાચાર્ય' નામ પડી ગયું

અથવા "મણસા અવેગે" આ પ્રકારનો સૂત્રપાઠ ગ્રહણ કરવામાં આવે, તો અહીં સંભાવનાર્થક "અપિ" શબ્દનો પાઠ કરવાથી એવો અર્થ થાય છે કે અર્થાત્ કોઈક મનથી ગર્હા કરનાર "કોઈક મુનિ મનથી ગર્હા કરે છે કોઈક મુનિ

इति। अथवा-मनसाऽपि, न वचो मात्रेण एको गर्हते, तथा-वचसाऽपि, न मनोमात्रेण एको गर्हते इति उभयथाऽप्येक एव गर्हते' इति भावः।

प्रकारान्तरेण गर्हाया द्वैविध्यमाह-'अहवा' इत्यादि। अथवा गर्हा द्विविधा प्रज्ञप्ता। तद् यथा-दीर्घां वा एकः अद्धां गर्हते, ह्रस्वां वा एकः, अद्धां गर्हते। अयमर्थः-एकः-कोऽपि, दीर्घां=बृहतीम्, अद्धां=काल यावत्, यावज्जीवमित्यर्थः, गर्हते-गर्हणीयम्, इति भावः। अन्यप्रकारेणापि विवक्षया दीर्घत्वं भावनीयम्। दीर्घह्रस्वयोरापेक्षिकत्वात्। यथा-एकमासापेक्षया द्विमासादिकः कालो दीर्घो भवति एवम् एकोऽन्यः ह्रस्वाम्=अल्पां वा अद्धां यावद् गर्हते-गर्हणीयम्।

है कि कोई एक मुनि मन से गर्हा करता है कोई एक मुनि वचन से गर्हा करता है ऐसा संभावित होता है।

अथवा—कोई एक मुनि केवल वचन मात्र से गर्हा नहीं करता है किन्तु मन से भी वह गर्हा करता है तथा कोई एक मुनि केवल मनो मात्र से गर्हा नहीं करता है किन्तु वचन से भी गर्हा करता है इस तरह दोनों प्रकार से भी कोई एक मुनि गर्हा करता है।

अब प्रकारान्तर से भी गर्हा के दो भेद प्रकट किये जाते हैं "अहवा" इत्यादि

अथवा गर्हा दो प्रकार की कही गई है जैसे-कोई एक दीर्घ अद्धा की गर्हा करता है और कोई एक ह्रस्व अद्धा की गर्हा करता है इसका अर्थ इस प्रकार से है कोई एक बहुत काल तक यावज्जीव गर्हणीय (पाप) की गर्हा करता है दीर्घता और ह्रस्वता ये दोनों आपेक्षिक हैं इसलिये अन्य प्रकार से भी विवक्षा दीर्घता समझी जा सकती है जैसे

વચનથી ગર્હા કરે છે, એવું સંભવિત હોઇ શકે છે" અથવા કોઇક મુનિ વચન માત્રથી જ ગર્હા કરતા નથી પણ મનથી પણ ગર્હા કરે છે તથા કોઇ મુનિ કેવળ મનથી જ ગર્હા કરતા નથી, પરન્તુ વચનથી પણ ગર્હા કરે છે. આ રીતે કોઇ કોઇ મુનિ બન્ને પ્રકારે ગર્હા કરે છે

હવે અન્ય રીતે પણ ગર્હાના બે ભેદ બતાવવામાં આવે છે-"अहवा" ઇત્યાદિ-અથવા ગર્હાના નીચે પ્રમાણે બે પ્રકાર છે-(૧) કોઇ દીર્ઘકાળ પર્યન્ત ગર્હા કરે છે (૨) કોઇ હ્રસ્વાદ્ધાની-ટૂંકા કાળની ગર્હા કરે છે કેટલાક સાધુઓ દીર્ઘકાળ સુધી-જીવન પર્યન્ત ગર્હણીયની (પાપની) ગર્હા કર્યા કરે છે દીર્ઘતા અને હ્રસ્વતા એ બન્ને આપેક્ષિક છે તેથી દીર્ઘતાનુ બીજી રીતે પણ પ્રતિપાદન કરી શકાય છે. જેમકે એક માસની અપેક્ષાએ બે માસ આદિ સમય

अथवा-दीर्घमेव अद्धा यावद् गर्हते गर्हणीयं नतु ह्रस्वां यावत् । तथा-ह्रस्वामेव यावद् गर्हते नतु दीर्घामित्यर्थः । एक एवना द्विधा कालभेदेन गर्हते गर्हणीयभावानामनेकत्वादिति । अथवा-दीर्घ ह्रस्वं वा कालमेव गर्हते । अयं भावः-विरहाकुलचक्रवाको रात्रिं गर्हते यत्-बहुदीर्घेयं रात्रिर्या न क्षीयते । संवरणादिप्रतिरुद्धो बुभुक्षापीडितउलूको दिवसं गर्हते यत्-अन्धकारमदर्शको बहुदीर्घोऽयं दिवसः, यो न क्षीयते । एवम्-आधिव्याध्याकुलः पुरुषो रात्रिन्दिवरूपं कालं दीर्घत्वेन गर्हते । ज्ञातार्थविच्छन्न ह्रस्वत्वेन रात्रिं दिवसं च गर्हते, इति ॥ सू० ५ ॥

एक मास की अपेक्षा से द्विमास आदि का समय दीर्घ होता है इसी तरह कोई एक अल्पकाल तक गर्हणीय की गर्हा करता है अथवा-दीर्घ काल तक ही गर्हणीय की गर्हा करता है थोडे काल तक गर्हणीय की गर्हा नहीं करता है तथा थोडे कालतक ही गर्हा करता है दीर्घकाल तक गर्हणीयकी गर्हा नहीं करता है अथवा कोई एक दो प्रकारके कालभेदसे गर्हणीय भावों में विविधता होने के कारण गर्हणीय की गर्हा करता है अथवा कोई दीर्घ और ह्रस्व काल मान कर उस की ही गर्हा करता है जैसे-विरह से आकुल हुआ चकवाक रात्रि की गर्हा करता है कि यह रात्रि बहुत दीर्घ बडी है जो अभी तक भी क्षीण नहीं हो रही है संवरणादि से प्रतिरुद्ध हुआ बुभुक्षित उल्लू दिवस की गर्हा करता है कि यह दिवस बहुत दीर्घ है जो अभी तक क्षीण नहीं हो रहा है इसी तरह से आधि व्याधि से विकल मना हुआ पुरुष रात्रि और दिन इन दोनों

દીર્ઘ ગણાય છે આ રીતે કોઇક સાધુ અલ્પકાળ સુધી ગર્હણીયની (પાપની) ગર્હા કરે છે અથવા-દીર્ઘકાળ પર્યંત પાપની ગર્હા કરે છે અલ્પકાળ પર્યન્ત પાપની ગર્હા કરતો નથી. ત્યારે કોઇ સાધુ એવા હોય છે કે અલ્પકાળ પર્યન્ત પાપની ગર્હા કરે છે, દીર્ઘકાળ પર્યન્ત કરતા નથી. અથવા કોઇક સાધુ એવો પણ હોય છે કે તે બે પ્રકારના કાળભેદોથી ગર્હણીય પદાર્થમાં વિવિધતા હોવાથી ગર્હણીયની ગર્હા કરે છે અથવાકોઇ હ્રસ્વકાળને દીર્ઘકાળ માનીને અને કોઇ દીર્ઘકાળને હ્રસ્વકાળ માનીને તેની જ ગર્હા કરે છે જેમકે વિરહથી આકુળ વ્યાકુળ થયેલ ચક્રવાક પક્ષિ રાત્રિની ગર્હા કરે છે તેને એવું લાગે છે કે 'આ રાત્રિ ઘણી લાંબી છે-તે હજી પૂરી જ થતી નથી' ઘુવડપક્ષી દિવસે દેખી શકતું નથી, તેથી દિવસે તે ખોરાકની શોધમાં નીકળી શકતું નથી દિવસે બુભુક્ષિત (ભૂખ્યું) ઘુવડ દિવસની ગર્હા કરે છે કે 'આ દિવસ ઘણો લાંબો છે હજી પૂરો જ થતો નથી!" એજ રીતે આધિ વ્યાધિથી વ્યાકુળ બનેલ

अतीते गर्हणीये कर्मणि गर्हा भवति, तु भविष्यति तु प्रत्यख्यानं भवति। उक्तं च-' अईयं निंदामि, पडुप्पन्न संवरेमि, अणागयं पच्चक्खामि "। छाया—अतीतं निन्दामि, प्रत्युत्पन्न संवृणोमि, अनागतं प्रत्याख्यामि। तत्र प्रत्याख्यानमाह—

मूलम्—दुविहे पच्चक्खाणे पन्नत्ते। तं जहा-मणसा वेगे पच्चक्खाइ, वयसा वेगे पच्चक्खाइ। अहवा पच्चक्खाणे दुविहे पन्नत्ते। तं जहा-दीहं वेगे अद्धं पच्चक्खाइ, रहस्सं वेगे अद्धं पच्चक्खाइ ॥ सू० ६ ॥

छाया—द्विविधं प्रत्याख्यानं प्रज्ञप्तम्। तद् यथा-मनसा वा एकः प्रत्याख्याति। वचसा वा एकः प्रत्याख्याति। अथवा-प्रत्याख्यानं द्विविधं प्रज्ञप्तम्। तद् यथा-दीर्घां वा एकः अद्धां प्रत्याख्याति, ह्रस्वां वा एकः अद्धां प्रत्याख्याति ॥ सू० ६ ॥

टीका—' दुविहे पच्चक्खाणे ' इत्यादि—

प्रत्याख्यानं-परिहरणीयं वस्तु प्रत्याख्यानम्=गुरुसाक्षिकं निवृत्तिकथनम्। यद्वा-प्रति-प्रमादप्रतिकूल्येन-प्रमादपरिहारेण स्वेच्छा प्रवृत्तिपरिवर्जनपूर्वकम् आ-

---

रूप कालकी दीर्घ होनेके कारण गर्हा करता है शातावेदनीय के उदयसे गर्विष्ठ हुआ जीव रात्रि दिनकी ह्रस्व होने के कारण गर्हा करता है।

जो गर्हणीय कर्म अतीत होता है उस पर गर्हा होती है तथा जो कर्म भविष्यत्कालापन्न होता है उसके विषय में प्रत्याख्यान होता है

उक्तं च—" अईयं निंदामि " इत्यादि सो अब इसी प्रत्याख्यान की द्विविधता का वर्णन सूत्रकार करते हैं ॥सू०५॥

" दुविहे पच्चक्खाणे पन्नत्ते " इत्यादि ॥ ६ ॥

પુરુષ રાત્રિ અને દિવસરૂપ બન્ને કાળની ગર્હા કરે છે, તેમને રાત્રિદિવસ લાંબા લાગે છે શાતાવેદનીયના ઉદયથી ગર્વિષ્ઠ થયેલા જીવને રાત્રિદિવસ ટૂંકા લાગે છે, તેથી તેઓ તેની ગર્હા કરે છે

જે ગર્હણીય કામ થઇ ગયુ હોય છે તેની ગર્હા થાય છે આ રીતે ભૂતકાલિન કાર્યને નિંદનીય અનુલક્ષીને ગર્હા થાય છે જે ગર્હણીય (પાપ) કર્મ ભવિષ્યકાલમા થવાનુ હોય છે, તેને રોકવાને નિમિત્તે પ્રત્યાખ્યાન થાય છે કહ્યું પણ છે કે " अईयं निंदामि " ઈત્યાદિ હવેના સૂત્રમા એ પ્રત્યાખ્યાનની દ્વિવિધતાનું સૂત્રકાર પ્રતિપાદન કરે છે ॥ સૂ ૫ ॥

मर्यादया विवक्षितकालादिमानया, त्यान-गुरोरग्रे प्रकथन प्रत्याख्यानम् । तच्च द्रव्यभावभेदाद् द्विविधम् । तत्र द्रव्यत -मिथ्यादृष्टे प्रत्याख्यानम्, अनुपयुक्तस्य सम्यग्दृष्टेश्च । यथा-राजपुत्र्याः प्रत्याख्यानम् । भावप्रत्याख्यानं तु उपयुक्तस्य सम्यग्दृष्टे र्भवति । तथानेकविधम्-देश-सर्व-मूलगुणोत्तरगुण-भेदात्, तथापि

टीकार्थ-प्रत्याख्यान दो प्रकारका कहा गया है इनमें कोई एक एस प्रत्याख्यानको मनसे करता है कोई एक वचन से करता है त्याग करने योग्य वस्तु के प्रति आख्यान करना गुरु साक्षी पूर्वक उसकी निवृत्ति का कथन करना इसका नाम प्रत्याख्यान है

अथवा—प्रमाद को छोड़कर अपनी इच्छा की प्रवृत्ति के परिवर्जन का (त्यागका) विवक्षित काल की मर्यादा तक गुरु के समक्ष प्रकाशित करना इसका नाम भी प्रत्याख्यान है जैसे अमुक वस्तु का अमुक काल तक मुझे त्याग है यह प्रत्याख्यान द्रव्य और भाव के भेद से दो प्रकार का है मिथ्यादृष्टि जीव का जो प्रत्याख्यान है वह द्रव्य प्रत्याख्यान है

अथवा—अनुपयुक्त सम्यग्दृष्टि का जो प्रत्याख्यान है वह भी द्रव्य प्रत्याख्यान है जैसे राजपुत्री का प्रत्याख्यान भावप्रत्याख्यान तो उप युक्त सम्यग्दृष्टि को होता है यद्यपि यह देश, सर्व मूलगुण और उत्तर

'दुविहे पच्चक्खाणे पण्णत्ते' ईत्यादि ॥ १ ॥

प्रत्याख्यान बे प्रकारना कह्यां छे कोई कोई जीवो मनथी प्रत्याख्यान करे छे अने कोई कोई जीवो वचनथी प्रत्याख्यान करे छे त्याग करवा योग्य वस्तुना पच्चखाण करवा-गुरुनी साक्षीपूर्वक तेनी निवृत्तिनु कथन करवु ते वस्तुना भक्षणु आदिनो त्याग करवो, तेनुं नाम प्रत्याख्यान छे.

अथवा—प्रमादनो त्याग करीने पोतानी ईच्छाथी प्रवृत्तिनो अमुक समय पर्यन्त गुरुनी समक्ष त्याग जाहेर करवो तेनु नाम पण प्रत्याख्यान छे जेमके कन्दमूळ शिवायनी वस्तु अमुक समय पर्यन्त त्याग करवानी जे प्रतिज्ञा करवी तेनु नाम प्रत्याख्यान छे आ प्रत्याख्यानना द्रव्य अने भावना भेदथी बे प्रकार कह्या छे मिथ्यादृष्टि जीवना जे प्रत्याख्यान होय छे ते द्रव्यप्रत्या ख्यान होय छे अथवा-अनुपयुक्त सम्यग्दृष्टिना जे प्रत्याख्यान होय छे ते पण द्रव्यप्रत्याख्यान होय छे जेमके नीचे जेवु दृष्टान्त आप्युं छे ते राज-कुमारीना प्रत्याख्यान, भावप्रत्याख्यान तो उपयुक्त सम्यग्दृष्टि जीवना ज होय छे जो के ते देश सर्व मूलगुण अने उत्तरगुणना भेदथी अनेक प्रका

कारणभेदाद् द्विविधम्, इत्याह–'मणसा वेगे पच्चक्खाइ' इत्यादि। मनसा वा एकः प्रत्याख्याति=प्राणातिपातादि परिहारार्थं प्रतिज्ञां करोति। शेषं प्राग्वद् व्याख्येयम्।

अथ द्रव्यप्रत्याख्याने राजपुत्र्या दृष्टान्तः प्रोच्यते—

केनचिद्राज्ञा राजपुत्री कस्मैचिद्राज्ञे प्रदत्ता। तस्याः पतिर्मृतः। ततः सा पित्रा स्वभवनमानीता, उक्ता च-पुत्रि! धर्मं समाचर। सा पाखण्डिभ्यो दानं ददाति। एकदा वर्षाकाले समागते 'धर्मसमयः' इति विदित्वा 'मांसं न खादामि' इति तया प्रत्याख्यानं कृतम्। ततो वर्षाकालपरिसमाप्तौ पारणके तदाज्ञया तद्-

गुण के भेद से अनेक प्रकार का होता है फिर भी कारण के भेद से यह दो प्रकार का कहा गया है कोई मन से प्राणातिपात का परिहार (त्याग) करनेकी प्रतिज्ञा करता है कोई वचनसे प्राणातिपातका परिहार (त्याग) करने की प्रतिज्ञा करता है बाकी का और सब कथन पहिले की तरह ही व्याख्या युक्त जानना चाहिये

द्रव्य प्रत्याख्यान में राजपुत्री का दृष्टान्त-

किसी राजा ने अपनी पुत्री का विवाह किसी दूसरे के साथ कर दिया कुछ समय बाद उसके पति का देहावसान हो गया सो इसका पिता इसे अपने घर पर लाया और उस से कहने लगा-पुत्रि! आनन्द से रहो और धर्माचरणपूर्वक अपना समय व्यतीत करो पिता की आज्ञानुसार वह घर पर शान्ति से रहने लगी और धर्माचरण करने लगी यह पाखण्डियों को दान देती थी एक दिन की बात है वर्षाकाल के आ जाने पर इसने ऐसा विचार किया कि यह धर्म करने का समय

રના હોય છે, છતાં પણ કારણના ભેદથી તેના બે પ્રકાર કહ્યાં છે કોઈ મનથી પ્રાણાતિપાતનો ત્યાગ કરવાની પ્રતિજ્ઞા કરે છે, કોઇ વચનથી પ્રાણાતિપાતનો ત્યાગ કરવાની પ્રતિજ્ઞા કરે છે બાકીનું સમસ્ત કથન પહેલાંની જેમ જ (ગર્હાની જેમ જ) પ્રતિપાદિત થવુ જોઈએ.

દ્રવ્યપ્રત્યાખ્યાનમા રાજપુત્રીનુ દૃષ્ટાન્ત—

કોઇ રાજાએ પોતાની કુંવરીના લગ્ન કર્યા. અમુક સમય પછી તેના પતિનુ અવસાન થયુ, તેથી તેનો પિતા તેને પોતાને ઘેર તેડી લાવ્યો. તેણે તેને આ પ્રમાણે શિખામણ આપી-"બેટી! આનંદપૂર્વક રહે અને ધર્માચરણમાં તું તારો સમય વ્યતીત કર" પિતાની સલાહ પ્રમાણે તે ધર્માચરણ પૂર્વક શાન્તિથી રહેવા લાગી તે પાખડીઓને દાન દેતી હતી. એક વખત વર્ષાકાળનો સમય આવી પહોંચતા તેને એવો વિચાર આવ્યો કે આ ચોમાસાનો કાળ તો ધર્મ કરવા માટેનો કાળ છે, મારે આ કાળ દરમિયાન માંસ

भृत्यै र्बहुजातीयजीवानां घातं कृत्वा विविधानि मांसानि, अन्यान्यपि नानाविधानि भोज्यानि च निष्पाद्य तत्समीपं समुपनीतानि । सा च यद् यस्मै रोचते तत्तस्मै ददाति । तदवसरे तत्र मासक्षपणपारणके भिक्षार्थमेकस्तपोधनोऽनगारः समागतः । मांसग्रहणार्थं सा प्रार्थितवती । मुनिना कथितं-मांसं न कल्पते मुनीनाम् । सा प्राह-वर्षाकालो व्यतीतस्तर्हि कथं न कल्पते ?। तेनोक्तम्-मांसनिवृत्त्यर्थं सदैव साधूनां वर्षाकाल एव । इत्युक्त्वा स तस्यै धर्मकथां कथयति, मांसदोषान् वर्णयति स्म । तथाहि—

है सो मैं मांस नहीं खाऊँगी अतः उसने मांस के प्रत्याख्यान कर दिया जब वर्षाकाल समाप्त हो गया तो पारणक के दिन उसकी आज्ञा के अनुसार उसके भृत्यों ने अनेक जातीय जीवों का घात करके विविध प्रकार के व्यञ्जनों के साथ २ मांस को पकाया और उसके समक्ष लाकर उस निष्पादित वस्तु को रख दिया जो जिसके लिये रुचता था वह उसके लिये देने लगी, ठीक इसी समय वहां मासक्षपण की पारणा के निमित्त भिक्षा करते हुए एक तपोधन अनगार आ गये मांस ग्रहण के लिये उसने उनसे प्रार्थना की मुनि ने कहा मुनिजनों को मांस कल्पित नहीं है फिर उसने कहा महाराज ! वर्षाकाल समाप्त हो गया है फिर यह क्यों कल्पित नहीं है मुनि ने कहा-मांस निवृत्ति के लिये तो सदा ही साधुओं का वर्षाकाल ही है ऐसा कहकर उसने उसके लिये धर्म कथा सुनाई जिसमें मांस के दोषों का उसने वर्णन किया " वर्षिविध

ખાવુ નહિ એ નહીં આવો વિચાર કરીને તેણે માંસાહારના પ્રત્યાખ્યાન કર્યા. જ્યારે વર્ષાકાળ સમાપ્ત થઇ ગયો ત્યારે પ્રત્યાખ્યાનનો સમય પણ પૂરો થઇ જવાથી તેણે પોતાના સેવકો પાસે અનેક જાતના જીવોની હત્યા કરાવીને વિવિધ પ્રકારની વાનગીઓની સાથે સાથે માંસ પણ રંધાવ્યુ નોકરોએ આ વિવિધ પ્રકારનું ભોજન તેની પાસે લાવીને મૂકી દીધુ જે કોઈ અભ્યાગત ત્યાં આવતો, તેને તે મનપસંદ વસ્તુ આપતી હતી હવે એવુ બન્યું કે માસ ખમણના પારણા નિમિત્તે કોઇ એક તપોધન અણગાર ગોચરી કરવા નીકળ્યા હતા તેઓ તે રાજકુમારી પાસે આવી પહોચ્યા રાજકુમારીએ તેમને વિનંતિ કરી કે આ માંસને આપ ગ્રહણ કરો સાધુએ જવાબ આપ્યો-" મુનિજનોને માંસ કલ્પતુ નથી, અમારે માટે માંસાહારનો નિષેધ છે ' રાજકુંવરીએ કહ્યું ' મુનિરાજ ચોમાસુ પૂરું થઇ ગયુ છે, હવે તો તે આપને જરૂર કલ્પી શકે " મુનિએ જવાબ આપ્યો- માંસ નિવૃત્તિને માટે તો અમારે સદા વર્ષાકાળ જ છે " આ પ્રમાણે કહીને તેમણે તેને ધમકથા સંભળાવી, જેમાં તેમણે માંસના

"पंचिदियवहभूयं, मंसं दुग्गंधमसुइ वीभच्छं।"

छाया—पञ्चेन्द्रियवधभूतं, मांसं दुर्गन्धमशुचि बीभत्सम् " इत्यादि।

उक्तञ्चान्यत्रापि—

अनुमन्ता विशसिता निहन्ता क्रय विक्रयी।

संस्कर्ता चोपहर्ता च खादकश्चेति घातकाः ॥ १ ॥

एवं मुनिना प्रतिबोधिता सती सा राजदुहिता प्रव्रजिता। इत्येवं तस्याः पूर्वं द्रव्यप्रत्याख्यानं, पश्चाद् भावप्रत्याख्यानं जातम्।

प्रकारान्तरेणापि द्वैविध्यमाह–'अहवा पच्चक्खाणे' इत्यादि। दीर्घाद्धा ह्रस्वाद्धापदयोर्व्याख्यानं गर्हासूत्रवद् बोध्यम् ॥ सू० ६ ॥

प्रत्याख्यानादिकं ज्ञानपूर्वकमेव क्रियमाणं मोक्षसाधकं भवतीत्यत आह—

मूलम्–दोहिं ठाणेहिं अणगारे संपन्ने अणादीयं अणवयग्गं दीहमद्धं चाउरंतसंसारकंतारं वीइवइज्जा, तं जहा-विज्जाए चेव, चरणेण चेव ॥ सू० ७ ॥

वह भूय मंसं दुग्गधमसुइ्वीभच्छ" उसने कहा मांस पञ्चेन्द्रिय जीव के वध से उत्पन्न होता है यह दुरभिगन्ध वाला होता है अपवित्र होता है और वीभत्स होता है इत्यादि अन्यत्र भी ऐसा ही कहा है–

"अनुमन्ता" इत्यादि' इस प्रकार से मुनि के द्वारा प्रतिबोधित हुई वह राजपुत्री दीक्षित हो गई इस तरह उस राजपुत्रीका पहिले द्रव्य प्रत्याख्यान हुआ और बाद में भावप्रत्याख्यान हुआ

प्रकारान्तर से भी प्रत्याख्यान में द्विप्रकारता है जो "अहवा पच्चक्खाणे" इन पदों द्वारा प्रकट की गई है इनमें दीर्घाद्धा और ह्रस्वाद्धा पदों का व्याख्यान गर्हा सूत्र की तरह से जानना चाहिये ॥सू०६॥

દોષોનું વર્ણન કર્યું. "पचिंदियवहभूय मंस दुग्गधमसुइवीभच्छ" તેમણે બતાવ્યું કે માંસ પચેન્દ્રિય જીવના વધથી ઉત્પન્ન થાય છે, તે દુર્ગંધયુક્ત હોય છે, અપવિત્ર હોય છે અને બીભત્સ હોય છે" ઇત્યાદિ. અન્યત્ર પણ એવું જ કહ્યુ છે કે "अनुमन्ता" ઇત્યાદિ મુનિનો આ પ્રકારનો ઉપદેશ સાંભળી પ્રતિબોધિત થયેલી તે રાજકુંવરીએ દીક્ષા ગ્રહણ કરી તે રાજકુંવરી દ્વારા પહેલાં દ્રવ્યપ્રત્યાખ્યાન અને પાછળથી ભાવપ્રત્યાખ્યાન થયા

બીજી રીતે પણ પ્રત્યાખ્યાનમાં દ્વિવિધતા છે, જે "अहवा पचक्खाणे" ઇત્યાદિ સૂત્રપાઠ દ્વારા તે પ્રકટ કરવામા આવી છે. તેમા કાળની અપેક્ષાએ દીર્ઘતા અને હ્રસ્વતાનુ કથન ગર્હા સૂત્રમાં કહ્યા અનુસાર સમજવું. ॥ સૂ. ૬ ॥

छाया—द्वाभ्यां स्थानाभ्यामनगारः संपन्नः । अनादिकम् अनवदग्रं दीर्घाद्ध चातुरन्तसंसारकान्तारं व्यतिव्रजति । तद् यथा-विद्यया चैव, चरणेन चैव॥सू०७॥

टीका—' दोहिं ठाणेहिं ' इत्यादि—

द्वाभ्यां स्थानाभ्यां=गुणाभ्यां संपन्न=युक्त अनगारः-नास्त्यगारं गृहं यस्य स तथा साधुरित्यर्थः, अनादिकम्=आदिरहितम्, अनवदग्रम्=अवदग्रम्-पर्यन्तस्तन्नास्ति यस्य सामान्यजीवापेक्षया तद् अनवदग्रम् अन्तरहितमित्यर्थः, तद्, दीर्घाद्धम्-दीर्घा-अद्धा=कालो यस्य तत्तथा तद्-दीर्घकालिकमित्यर्थः, यद्वा-'दीर्घाध्वम्' इतिच्छाया, दीर्घ अध्वा=मार्गो यस्मिंस्तद् दीर्घाध्वम् तद्,

प्रत्याख्यान आदि ज्ञानपूर्वक ही किये जाने पर मोक्ष के साधक होते हैं अतः अब इसी बात को पुष्ट करने के लिये सूत्रकार कहते हैं-

" दोहिं ठाणेहिं अणगारे संपन्ने " इत्यादि ॥७॥

टीकार्थ-दो स्थानोंसे सम्पन्न अनगार-साधु आदि रहित एव सामान्य जीव की अपेक्षा अन्तरहित तथा दीर्घाद्धावाले-दीर्घकालिक अथवा लम्बेमार्गवाले ऐसे इस चातुरन्त संसारकान्तार को विद्या ज्ञान और चरण चारित्र से ही उल्लंघित करता है

साधु घर रहित होता है इसलिये उसका नाम अनगार है संसार की कोई प्रारम्भावस्था नहीं है इसलिये इसे अनादि कहा गया है अव दग्र नाम पर्यन्त का है यह पयन्त जिसका नहीं है उसका नाम अनव दग्र है सामान्य जीव की अपेक्षा से ही संसार को अन्तरहित कहा गया है अद्धा नाम कालका है इस संसार का काल दीर्घ है इसलिये

પ્રત્યાખ્યાન આદિ જ્ઞાનપૂર્વક કરવામાં આવે તો જ મોક્ષના સાધક બને છે એજ વાતને પુષ્ટ કરવાને માટે સૂત્રકાર કહે છે કે—

" दोहिं ठाणेहिं अणगारे संपन्न " ઇત્યાદિ ॥ ૭ ॥

ટીકાર્થ—બે સ્થાનોથી યુક્ત અણગાર જ અનાદિ (આદિ રહિત), અનન્ત, (સામાન્ય જીવની અપેક્ષાએ અન્ત રહિત) દીર્ઘકાલિન (સામાન્ય જીવની અપેક્ષાએ) અથવા લાંબા પંથવાળા આ ચાતુરન્તસંસાર કાન્તારને (૧) વિદ્યા-જ્ઞાન અને (૨) ચરણ-ચારિત્ર વડે ઓળંગી શકે છે આ બે સ્થાનની આરાધનાથી જ સંસારને તરી શકાય છે

સાધુ ઘરરહિત હોય છે તેથી તેને અણગાર કહ્યો છે સંસારની કોઈ પ્રારંભાવસ્થા નથી તેથી તેને અનાદિ કહ્યો છે 'અવદગ્ર" એટલે પર્યન્ત આ પર્યન્તનો-અન્તનો જેમાં અભાવ છે તેને અનવદગ્ર કહે છે સામાન્ય જીવની અપેક્ષાએ જ સંસારને અન્તરહિત કહ્યો છે. 'અદ્ધા' એટલે કાળ.

तादृशं चातुरन्तसंसारकान्तारम्—चत्वार· अन्ताः=नरकादिविभागा यस्य तत् चतुरन्तम्, तदेव चातुरन्तम्, तच्च ससारकान्तारं=भवकाननं, तद् व्यतिव्रजति=अतिक्रामति—स्थानद्वयेन सम्पन्नो मुनिः संसारकान्तारमुल्लङ्घयतीत्युक्तम्। तत्र किं तत् स्थानद्वयम्? इति जिज्ञासायामाह—'तं जहा' इत्यादि। तद्यथा—विद्यया=ज्ञानेन चैव तथा चरणेन=चारित्रेण चैवेति।

इह संसारकान्तारातिक्रमणं प्रति ज्ञानं चारित्रं चेतिद्वयं कारणमित्युक्तं तत्र ज्ञानचारित्रयोर्द्वयोः कारणत्वमस्ति, प्रत्येकं तयोरैहिकार्थेष्वप्यकारणत्वादिति बोध्यम्।

इसे दीर्घाद्धा वाला कहा गया है अथवा "अद्धा की छाया" अध्वा" ऐसी भी हो सकती है सो इस पक्ष में जिसमें लम्बा मार्ग है उसका नाम दीर्घाध्व है संसार का मार्ग भी ऐसा ही है अतः यह भी इस विशेषणवाला प्रकट किया गया है इस संसार का नरकादिरूप चार विभाग है इस कारण इसे चातुरन्त कहा गया है अन्त नाम विभाग का है चतुरन्त ही यहां ज्ञान और चारित्र इन दोनों में संसारकान्तार के अतिक्रमण करने के प्रति जो कारणता कही गई है सो भिन्न २ में यह कारणता नहीं है किन्तु दोनों के मेल में ही यह कारणता है ऐसा जानना चाहिये क्यों कि इनमें से प्रत्येक में भी ऐहिककार्यों के प्रति भी कारणता नहीं है

આ સંસારનો કાળ દીર્ઘ (લાંબો) હોવાથી તેને દીર્ઘાદ્ધાવાળો (દીર્ઘકાલિન) કહ્યો છે અથવા "અદ્ધા" ની છાયા "અધ્વા" પણ થાય છે આ રીતેનિચ રવામા આવે તો જેમાં લાબો માર્ગ છે તેનું નામ દીર્ઘાધ્વ (લાબા માર્ગવાળો) છે, સસારનો માર્ગ પણ એવો જ હોવાથી તેને માટે આ વિશેષણ વપરાયું છે

આ સંસારના નરકાદિરૂપ ચાર વિભાગ છે "અન્ત" એટલે 'વિભાગ'. જેના ચાર વિભાગ છે એવા સસારને ચતુરન્ત સંસાર કહ્યો છે અહીં એવું બતાવવામા આવ્યું છે કે જ્ઞાન અને ચારિત્ર, એ બન્નેની આરાધના દ્વારા જ આ સસાર રૂપી કાનનને પાર કરી શકાય છે એકલા જ્ઞાનની આરાધનાથી અથવા એકલા ચારિત્રની આરાધનાથી એ વાત સભવી શકતી નથી. બન્ને સ્થાનોના મેળમાં જ એ વાત સભવી શકે છે-બન્નેનો મેળ જ સંસાર કાન્તારને તરાવવામાં કારણભૂત બને છે, એમ સમજવું, કારણ કે આ બેમાના પ્રત્યેકમા પણ ઐહિકકાર્યોના પ્રત્યે પણ કારણતા નથી.

ननु मोक्षप्राप्तौ ज्ञानचारित्रयो सामान्येन कारणत्वमुक्तम् अतस्तत्र ज्ञानमेव प्रधानं भवतु न तु चारित्रम् (क्रिया) १, अथवा-ज्ञानमेवैकं कारणं भवतु न तु क्रिया, क्रियाया ज्ञानमन्यत्वात् २। किञ्च-यथा ज्ञानस्य फलं क्रियाऽस्ति तथा क्रियानन्तरं यत् प्राप्यते मोक्षरूपं फलं तदपि ज्ञानस्यैव फलम्, अतो ज्ञानमेव तत्कारणत्वेन वाच्यम्। किञ्च-बोधकालेऽपि यत् ज्ञेयपरिच्छेदात्मकं ज्ञानं भवति तस्यापि कारणं ज्ञानमेव। किञ्च-ज्ञेयपरिच्छेदानन्तरं रागादि निग्रहो भवति तस्यापि ज्ञानमेव कारणम्। यथा-मृत्तिका घटस्य कारणं भवति सा तदन्तराळ-वर्तिनो पिण्ड-शिवक-स्थास-कोश-कुशूलादीनामपि कारणं भवत्येव, तथा-इह

शंका—मोक्ष प्राप्ति में सामान्यरूप से ही ज्ञानचारित्र में कारणता कही गई है इसलिये मोक्षप्राप्ति में प्रधान कारण ज्ञान को ही मानना चाहिये चारित्र को नहीं? अथवा एक ज्ञान को ही कारण मानना चाहिये चारित्ररूप क्रिया को नहीं क्यों कि क्रिया ज्ञान अन्य होती है २ किञ्च-जिस प्रकार से ज्ञान का फल क्रिया है वैसे ही क्रिया के अनन्तर जो प्राप्त होता है मोक्षरूप फल वह भी ज्ञान का ही फल है इसलिये ज्ञान ही मोक्ष का कारण कहना चाहिये किञ्च-बोधकाल में भी जो ज्ञेयपरिच्छेदात्मक ज्ञान होता है उसका भी कारण ज्ञान ही है तथा ज्ञेयपरिच्छेद के अनन्त जो रागादिकों का निग्रह (जीतना) होता है उसका भी कारण ज्ञान ही है जैसे मृत्तिका घट का कारण होता है

શંકા—જ્ઞાનચારિત્રને સામાન્યતઃ મોક્ષપ્રાપ્તિના કારણરૂપ બતાવ્યાં છે, તેથી મોક્ષપ્રાપ્તિમાં પ્રધાન કારણ તો જ્ઞાનને જ માનવુ જોઈએ, ચારિત્રરૂપ ક્રિયાને પ્રાધાન્ય મળવુ જોઈએ નહીં. (૨) અથવા એકલા જ્ઞાનને જ મોક્ષ પ્રાપ્તિના કારણભૂત ગણવુ જોઈએ-ચારિત્રરૂપ ક્રિયાને કારણભૂત ગણવા જોઈએ નહીં.

જેમ જ્ઞાનનું ફળ ક્રિયા છે એજ પ્રમાણે ક્રિયા બાદ જે મોક્ષરૂપ ફળની પ્રાપ્તિ થાય છે તે પણ જ્ઞાનના ફળરૂપ જ હોય છે તેથી જ્ઞાનને જ મોક્ષનું કારણ માનવુ જોઈએ.

વળી બોધકાળમાં પણ જે જ્ઞેયપરિચ્છેદાત્મક પદાર્થ જ્ઞાન થાય છે તેનું કારણ પણ જ્ઞાન જ હોય છે જ્ઞેયપરિચ્છેદના અનન્તર (પશ્ચાત્) જે રાગાદિકોનો નિગ્રહ (જીતવાનું) થાય છે તેનું કારણ પણ જ્ઞાન જ છે જેવી રીતે માટી ઘડાની રચનામાં કારણભૂત બને છે, એજ માટી તે ઘડાની રચના પહેલાં જે પિંડ, શિવિર, (માટીમાંથી બનાવવામાં આવતો વાસણના જેવો આકાર વિશેષ),

ज्ञानमपि मोक्षस्य, तथा तदन्तरालवर्तिनां च ज्ञेयपरिच्छेदरागादिनिग्रहादीनां कारणं भविष्यति ?। किञ्च-यत् खलु मन्त्रानुस्मरणमात्रेण विषभक्षणं, तथा नभोगमनादिकं चानेकविधं कार्यं दृश्यते तदपि ज्ञानमात्रस्यैव फलम्। यथा चैतद् लौकिकं दृष्टफलं ज्ञानस्य दृश्यते तथैव लोकोत्तरं मोक्षरूपमदृष्टमपि फलमनुमीयते ? इति।

अत्रोच्यते-'ज्ञानमेव प्रधानं, ज्ञानमेव चैकं कारणं, न तु क्रिया' इति यदुक्तं तन्न युक्तम्, ज्ञानाद्धि क्रिया भवति, ततश्चेष्टफलप्राप्ति, अतो द्वयमपि कारणं मन्तव्यम्। ज्ञानमात्रस्य कारणत्वे क्रियायाः ज्ञानफलत्वेन कल्पनं व्यर्थम्, भव-

---

वही मृत्ति का तदनन्तरालवर्ती पिण्ड, शिविर, स्थास, कोश और कुशूलादिकों का भी कारण होता ही है इसी प्रकार से ज्ञान जब मोक्ष का कारण होता है तब वह तदन्तरालवर्ती ज्ञेयपरिच्छेदों का और रागादि निग्रहों का भी कारण हो जायगा किञ्च—मन्त्र के अनुस्मरण मात्र से विष का उतरना रूप फल तथा आकाश गमनादिरूप अनेकविध कार्य जैसे देखे जाते हैं तो वे ज्ञानमात्र के ही फल होते हैं तो जैसा यह ज्ञान का लौकिक दृष्ट फल प्रतीत होता है उसी तरह से लोकोत्तर जो मोक्षरूप अदृष्ट फल है वह भी ज्ञान का ही फल है ऐसा अनुमान से प्रतीत हो जाता है।

उ०—"ज्ञान ही प्रधान है ज्ञान ही एक कारण है क्रिया कारण नहीं है" ऐसा जो कहा गया है वह युक्ति युक्त नहीं कहा गया है क्यों कि ज्ञान से क्रिया होती है क्रिया से इष्टफल की प्राप्ति होती है इसलिये दोनों में कारणता माननी चाहिये यदि ज्ञानमात्र को कारण

કોશ અને કુશૂલાદિકોની રચનામાં પણ કારણભૂત હોય છે, એજ પ્રમાણે જ્ઞાન-મોક્ષને માટે કારણભૂત હોય તો વચગાળાના જ્ઞેય પરિચ્છેદોનુ અને રાગાદિ-કોના નિગ્રહનું કારણ હોવું જ જોઈએ. વળી મંત્રના અનુસ્મરણ માત્રથી વિષ ઉતરી જવારૂપ ફળ તથા આકાશગમન આદિ રૂપ અનેક પ્રકારના કાર્ય જે જોવામા આવે છે, તે જ્ઞાનમાત્રના ફલસ્વરૂપ જ હોય છે તો એ જ્ઞાનનુ જેવું લૌકિક ફળ પ્રતીત થાય છે એવું જ લોકોત્તર–મોક્ષ પ્રાપ્તિરૂપ અદૃષ્ટ ફળ પણ હોવું જ જોઈએ, તેને પણ જ્ઞાનના ફળસ્વરૂપ માનવામાં શો વાંધો છે ?

ઉત્તર—"જ્ઞાન જ પ્રધાન છે, જ્ઞાન જ એક કારણ છે-ક્રિયા કારણ નથી," આ પ્રકારનુ કથન યુક્તિયુક્ત નથી, કારણ કે જ્ઞાનથી ક્રિયા થાય છે અને ક્રિયાથી ઈષ્ટફળની પ્રાપ્તિ થાય છે, તેથી બન્નેમાં કારણતા માનવી જોઈએ. જો જ્ઞાનમાત્રને કારણ માનવામા આવે, તો જ્ઞાનના ફલરૂપ ક્રિયા છે એવું

न्मते-क्रियारहितमपि ज्ञानमात्रं स्वकार्यं साधयेत्, परन्तु तथा न साधयति, कार णत्वेन क्रियाया स्वीकारात्। मोक्षप्राप्तौ हि चारित्रोत्पादनेन ज्ञानमुपकारकं भवति ज्ञानाच्चारित्रं प्राप्नोति, चारित्रतश्च मोक्षं, तथा च मोक्षं प्रति क्रियैव साक्षात्कारणम्, क्रियां प्रति ज्ञानं कारणम्। तस्मात् मोक्षं प्रति ज्ञानं परंपरा कारणम्। साक्षात्कारणत्वेन क्रियैव प्रधानतरं कारणं भवतीतिक्रियाया अप्राधान्य-मकारणत्वं च नोपपद्यते ।

यदि ज्ञानं क्रिया चेतिद्वयं मोक्षप्राप्तौ युगपदुपकारकं मन्यते, तदाऽपि प्राधान्यं कारणत्वं चेतिद्वयं क्रियायामुक्तम्, नतु अप्राधान्यमकारणत्वं च क्रियायाः संभवति।

माना जावेगा तो ज्ञान की फलरूप क्रिया है ऐसा मानना व्यर्थ है आपके मतानुसार क्रिया रहित भी ज्ञानमात्र अपने कार्य को सिद्ध कर देगा परन्तु ऐसा वह करता नहीं है क्यों कि कारणरूप क्रिया को स्वीकार किया गया है मोक्षप्राप्ति में चारित्रोत्पादन से ज्ञान उपकारक होता है ज्ञान से चारित्र की प्राप्ति होती है और चारित्र से मोक्ष प्राप्त होता है इसलिये मोक्ष प्राप्ति में साक्षात्कारण क्रिया ही है क्रिया के प्रति ज्ञान कारण है अतः मोक्ष प्राप्ति के प्रति ज्ञान परम्परारूप से कारण पड़ता है साक्षात्रूप से कारणतो क्रिया ही पड़ती है इसलिये वही प्रधानतर कारण है इस तरह क्रिया में अप्रधानता और अकारणता घटित नहीं होती है ।

यदि ज्ञान और क्रिया ये दो मोक्षप्राप्ति में एक साथ उपकारक माने जाते हैं तब भी क्रिया में प्रधानता और कारणता ये दोनों सध जाते हैं इस तरह अप्रधानता और अकारणता क्रिया में संभावित नहीं होती है

માનવુ વ્યર્થ બની જશે. આપના મત પ્રમાણે તો ક્રિયા રહિત જ્ઞાનમાત્ર જ પોતાના કાર્યને સિદ્ધ કરી દેશે પરંતુ એવું બનતું નથી. કારણ કે કારણરૂપે ક્રિયાનો સ્વીકાર કરવામાં આવ્યો છે મોક્ષપ્રાપ્તિમાં ચારિત્રોત્પાદન દ્વારા જ્ઞાન ઉપકાર હોય છે જ્ઞાનથી ચારિત્રની પ્રાપ્તિ થાય છે અને ચારિત્ર વડે મોક્ષની પ્રાપ્તિ થાય છે તેથી મોક્ષપ્રાપ્તિમાં સાક્ષાત્ કારણભૂત તો ક્રિયા જ છે અને ક્રિયામાં જ્ઞાન કારણભૂત છે તેથી મોક્ષપ્રાપ્તિમાં જ્ઞાન પરમ્પરારૂપે કારણભૂત બને છે, સાક્ષાત્ રૂપે તો ક્રિયા જ કારણભૂત બને છે આ રીતે ક્રિયા જ પ્રધાનતર કારણસિદ્ધ થાય છે તેથી ક્રિયામાં અપ્રધાનતા અને અકારણતા ઘટાવી શકાતાં નથી.

જો જ્ઞાન અને ક્રિયા, એ બન્નેને મોક્ષપ્રાપ્તિમાં એક સાથે ઉપકારક માનવામાં આવે તો પણ ક્રિયામાં પ્રધાનતા અને કારણતાનું પ્રતિપાદન કરી શકાય છે આ રીતે ક્રિયામાં અપ્રધાનતા અને અકારણતા સંભવિત હોતાં નથી.

यस्तु क्रियायाः कारणत्वं न मन्यते, तं प्रति विशेषेणोच्यते क्रिया हि मोक्षं प्रति साक्षात्कारणत्वादन्त्यं कारणम्, ज्ञानं तु परम्पराकारणत्वादनन्त्य कारणम्। तत्रान्त्यं कारणं विहाय यदनन्त्यस्यैव कारणत्वेन कल्पन तन्निर्मूलं शास्त्रविरुद्धं च, सूत्रे इहैव "विज्जाए चेव करणेण चेव' इति चरणस्यैवान्त्यकारणत्वेन स्वीकृतत्वात्। एतेन क्रियायाः ज्ञानफलत्वमुपपाद्य ज्ञानमात्रस्य यत्कारणत्वमुक्तं तदपि निराकृतम्।

यदुक्तं–बोधकालेऽपि यो ज्ञेयपरिच्छेदो भवति, तस्य कारणं ज्ञानमेवेति तस्माद् ज्ञानमेव कारणं नतु क्रियेति, तदप्ययुक्तम्। यतः–ज्ञेयपरिच्छेदोऽपि ज्ञान-

---

जो क्रिया में कारणता नहीं मानता है उसके प्रति ऐसा कहा जाता है कि क्रिया मोक्ष के प्रति साक्षात्कारण होने से अन्त्यकारण है तथा ज्ञान परम्पराकारण होने से अनन्त्यकारण है इसलिये अनन्त्यकारण को छोड़कर जो अन्त्य को कारणरूप से मानता है वह निर्मूल और शास्त्रविरुद्ध है इसी से सूत्रमें "विज्जाए चेव चरणेण चेव" इस कथन से चरणमें अन्त्यकारणता स्वीकृत हुई है इसी कथनसे यह भी निराकृत हो जाता है कि ज्ञानका फल क्रिया है इसलिये ज्ञानमात्रमें कारणता है।

तथा ऐसा जो कहा गया है कि बोधकाल में भी जो ज्ञेय (पदार्थ) का परिच्छेद (ज्ञान) होता है उसका कारण ज्ञान ही है तथा रागादि निग्रहात्मक जो ज्ञान होता है उसका भी कारण ज्ञान ही है इसलिये ज्ञान ही कारण है मोक्षप्राप्ति में क्रिया नहीं है सो ऐसा भी कहना ठीक नहीं है क्यों कि ज्ञेय का जो परिच्छेद (ज्ञान) है वह स्वयं ज्ञानरूप ही

જે લોકો ક્રિયામા કારણુતાને સ્વીકાર કરતા નથી, તેઓ એવી દલીલ કરે છે કે "ક્રિયા મોક્ષપ્રાપ્તિમાં સાક્ષાત્ કારણભૂત હોવાથી અન્ત્યકારણરૂપ છે, તથા જ્ઞાન પરમ્પરા કારણરૂપ હોવાથી અનન્ત્ય કારણરૂપ છે" પરંતુ આ રીતે અન્ત્યને કારણરૂપ ન માનતા અનન્ત્યને કારણરૂપ માનવું તે નિર્મૂળ અને શાસ્ત્રવિરૂદ્ધનુ છે. તેથી જ સૂત્રમા "विज्जाए चेव चरणेण चेव" આ કથન દ્વારા ચરણમાં (ક્રિયામાં) અન્ત્યકારણુતાને સ્વીકાર થયો છે આ કથનથી તે વાતનુ પ્રતિપાદન થઈ જાય છે કે જ્ઞાનનુ ફલ જે ક્રિયા છે, તેથી જ્ઞાનમાત્રમા કરણુતા છે

વળી એવું જે કહેવામાં આવ્યું છે કે "બોધકાળમા પણ જે જ્ઞેય (પદાર્થ) નો પરિચ્છેદ (જ્ઞાન) થાય છે, તેનું કારણ જ્ઞાન જ છે તેથી જ્ઞાન જ મોક્ષપ્રાપ્તિમા કારણભૂત છે, ક્રિયા કારણભૂત નથી.", આ વાત પણ બરાબર નથી. કારણ કે જ્ઞેય (પદાર્થ) નો જે પરિચ્છેદ (જ્ઞાન) થાય છે તે

न्मते-क्रियारहितमपि ज्ञानमात्र स्वकार्यं साधयत्, परंतु तथा न साधयति, कार-णत्वेन क्रियायाः स्वीकारात्। मोक्षप्राप्तौ हि चारित्रोत्पादनेन ज्ञानमुपकारकं भवति ज्ञानाच्चारित्रं प्राप्नोति, चारित्रतश्च मोक्ष, तथा च मोक्ष प्रति क्रियैव साक्षात्कारणम्, क्रियां प्रति ज्ञान कारणम्। तस्मात् मोक्षं प्रति ज्ञान परंपरा कारणम्। सक्षात्कारणत्वेन क्रियैव प्रधानतरं कारण भवतीतिक्रियाया अप्राधा-न्यमकारणत्वं च नोपपद्यते।

यदि ज्ञान क्रिया चेतिद्वय मोक्षप्राप्तौ युगपदुपकारक मन्यते, तदाऽपि प्राधान्य कारणत्व चेतिद्वय क्रियायायुक्तम्, ननु अप्राधान्यमकारणत्व च क्रियायाः सम्भवति।

माना जावेगा तो ज्ञान की फलरूप क्रिया है ऐसा मानना व्यर्थ है आपके मतानुसार क्रिया रहित भी ज्ञानमात्र अपने कार्य को सिद्ध कर देगा परन्तु ऐसा वह करता नहीं है क्यों कि कारणरूप क्रिया को स्वीकार किया गया है मोक्षप्राप्ति में चारित्रोत्पादन से ज्ञान उपकारक होता है ज्ञान से चारित्र की प्राप्ति होती है और चारित्र से मोक्ष प्राप्त होता है इसलिये मोक्ष प्राप्ति में साक्षात्कारण क्रिया ही है क्रिया के प्रति ज्ञान कारण है अतः मोक्ष प्राप्ति के प्रति ज्ञान परम्परारूप से कारण पड़ता है साक्षातरूप से कारणतो क्रिया ही पड़ती है इसलिये वही प्रधानतर कारण है इस तरह क्रिया में अप्रधानता और अकारणता घटित नहीं होती है।

यदि ज्ञान और क्रिया ये दो मोक्षप्राप्ति में एक साथ उपकारक माने जाते हैं तब भी क्रिया में प्रधानता और कारणता ये दोनों सध जाते हैं इस तरह अप्रधानता और अकारणता क्रिया में सम्भवित नहीं होती है

માનવું વ્યર્થ બની જશે. આપના મત પ્રમાણે તો ક્રિયા રહિત જ્ઞાનમાત્ર જ પોતાના કાર્યને સિદ્ધ કરી દેશે, પરંતુ એવું બનતું નથી. કારણ કે કારણરૂપે ક્રિયાનો સ્વીકાર કરવામાં આવ્યો છે. મોક્ષપ્રાપ્તિમાં ચારિત્રોત્પાદન દ્વારા જ્ઞાન ઉપકાર હોય છે. જ્ઞાનથી ચારિત્રની પ્રાપ્તિ થાય છે અને ચારિત્ર વડે મોક્ષની પ્રાપ્તિ થાય છે. તેથી મોક્ષપ્રાપ્તિમાં સાક્ષાત્ કારણભૂત તો ક્રિયા જ છે અને ક્રિયામાં જ્ઞાન કારણભૂત છે તેથી મોક્ષપ્રાપ્તિમાં જ્ઞાન પરંપરારૂપે કારણભૂત બને છે સાક્ષાત્ રૂપે તો ક્રિયા જ કારણભૂત બને છે. આ રીતે ક્રિયા જ પ્રધાનતર કારણસિદ્ધ થાય છે. તેથી ક્રિયામાં અપ્રધાનતા અને અકારણતા બતાવી શકાતાં નથી.

જો જ્ઞાન અને ક્રિયા, એ બન્નેને મોક્ષપ્રાપ્તિમાં એક સાથે ઉપકારક માનવામાં આવે તો પણ ક્રિયામાં પ્રધાનતા અને કારણતાનું પ્રતિપાદન કરી શકાય છે. આ રીતે ક્રિયામાં અપ્રધાનતા અને અકારણતા સંભવિત હોતાં નથી.

मात्रं, तदुन्मत्तक्रियावद् व्यर्थं स्यात् २। ततः परिशेष्यात्तृतीयः पक्ष एव ग्राह्यः-ज्ञानसहितक्रियायास्तत् फलमिति ३। क्रियाज्ञानेन सह युगपद्भवतु ज्ञानानन्तरं वा भवतु, सा ज्ञानसहभाविनी, ज्ञानपूर्विका संयमक्रिया मोक्षस्य कारणं नतु क्रियामात्रं, न चापि ज्ञानमात्रमिति बोध्यम्।

ननु भवदुक्तरीत्या ज्ञानक्रिययोः प्रत्येकं मोक्षसाधनत्वाभावात् समुदिताभ्यामपि ज्ञानक्रियाभ्यां मोक्षो भवतीति वक्तुं न युक्तम्, सिकतासमुदाये तैलवदिति

क्रिया की तरह व्यर्थ हो सकती है इसलिये यही मानना चाहिये कि ज्ञानसहित क्रिया का वह फल है क्रिया ज्ञान के साथ युगपद् होवे या चाहे ज्ञान के बाद होवे वह ज्ञानसहभाविनी या ज्ञानपूर्विका संयम क्रिया मोक्ष का कारण होती है क्रियामात्र मोक्ष का कारण नहीं होता है और न ज्ञानमात्र मोक्ष का कारण होता है ऐसा जानना चाहिये।

शंका—आपके कहे अनुसार ज्ञान और क्रिया में प्रत्येक में मोक्ष के प्रति साधनता का अभाव है एव ज्ञान क्रिया दोनों के मेल में साधनता का सद्भाव है सो यह बात बन भी कैसे सकती है क्यों कि हम देखते हैं कि जब बालुका के एक कन में तेल नहीं तो उनके समुदाय में भी तैल नहीं होता है इसी तरह जब स्वतन्त्र ज्ञान और क्रियामें मोक्षके प्रति कारणता नहीं है तो फिर इन दोनोंके समुदायमें भी वहकैसे होगी?

उ०—ऐसी बात एकान्तरूप से नहीं मानी गई है देखो घटादि पदार्थ मृत्तिका, दण्ड, चक्र एवं चीवर इनमें से एक २ के द्वारा निष्पन्न

એ વાત જ સ્વીકારવી પડશે કે તે જ્ઞાનસહિત ક્રિયાનું તે ફલ છે ભલે ક્રિયા જ્ઞાનની સાથે સાથે જ રહેતી હોય અથવા ભલે જ્ઞાનની અનુગામી હોય, પરંતુ એ વાત તો નિશ્ચિત છે કે જ્ઞાનસહભાવિની અથવા જ્ઞાનપૂર્વિકા સંયમક્રિયા જ મોક્ષપ્રાપ્તિમાં કારણભૂત બને છે. માત્ર ક્રિયા જ મોક્ષનું કારણ બનતી નથી, અને માત્ર જ્ઞાન જ મોક્ષનું કારણ બનતું નથી, એમ સમજવું જોઇએ.

શંકા—આપના કહ્યા પ્રમાણે તો જ્ઞાન અને ક્રિયામાં-તે પ્રત્યેકમાં મોક્ષ પ્રાપ્તિના સાધનરૂપ બનવાનો અભાવ છે-તે બન્નેના મેળમાં જ સાધનતાનો સદ્ભાવ છે. તો એ વાત કેવી રીતે સંભવિત છે? જેમ રેતીના કણમાં તેલ હોતું નથી, તો તેના સમુદાયમાં પણ તેલ સંભવી શકતું નથી એજ પ્રમાણે જો સ્વતંત્ર જ્ઞાનમાં અથવા સ્વતંત્ર ક્રિયામાં મોક્ષ પ્રાપ્તિ કરાવવાની કારણતા નથી, તો બન્નેના સમુદાયમાં તે કારણતા કેવી રીતે સંભવી શકે છે?

ઉત્તર—એવી વાતને એકાન્તરૂપે સ્વીકારવામાં આવતી નથી ઘડાદિ પદાર્થો માટી, દંડ, ચક્ર અને ચીવર આ ચાર સાધનોમાંના પ્રત્યેક સાધનો

मेव, रागादिनिग्रहश्च संयमरूपा क्रियैव, सा ज्ञेयपरिच्छेदजन्या भवतीति मन्यामहे। ततश्च ज्ञेयपरिच्छेदरूपाद् ज्ञानात् संयमरूपा क्रिया भवति, सा च मोक्ष प्रतिकारणम्। तत्रेत्थं विचारः समुत्पद्यते-मोक्षरूपं फलं किं ज्ञानस्य १, किं वा क्रियायाः २, किं वा तदुभयस्य ३ ?, तत्र प्रथमपक्षे न ज्ञानस्यैव, क्रियाफलत्वान्मोक्षस्य, यदि तत् संयमरूपायाः क्रियायाः फलं न भवेत्, तदा ज्ञानस्यैव फलमिति वक्तुं युक्तम्। यत्तु मोक्षः क्रियाया अपि फलं भवति, तत् कथं ज्ञानस्यैव फलमिति वक्तुं युज्यते। १। द्वितीयपक्षे नापि केवलक्रियायाः फलं तत् यदि स्यात् क्रिया-

होता है तथा रागादिकों का जो निग्रह होता है वह संयमरूप क्रिया स्वरूप ही होता है वह क्रिया ज्ञेय परिच्छेद जन्य होती है ऐसा हम मानते हैं इससे यह बात माननी चाहिये कि ज्ञेय परिच्छेदरूप ज्ञान से संयमरूप क्रिया होती है यह संयमरूप क्रिया मोक्ष के प्रति कारण है इस पर ऐसा विचार उत्पन्न होता है कि मोक्षरूप फल क्या ज्ञानका है ? या क्रियाका है ? या इन दोनों का है ? यदि कहा जावे कि मोक्षरूपफल ज्ञानका ही है सो ऐसा कहना इसलिये ठीक नहीं है कि वह मोक्षरूप फल क्रिया का फल है यदि वह संयमरूप क्रिया का फल न होता केवल ज्ञान का ही फल होता है ऐसा कहा जा सकता था कि यह ज्ञान का ही फल है जो मोक्ष क्रिया का भी फल होता है वह एक ज्ञान को ही फल है ऐसा कैसे कहा जा सकता है तथा वह मोक्ष केवल क्रिया का ही फल है सो ऐसा पक्ष भी समत नहीं हो सकता है क्यों कि क्रियामात्र उन्मत्त

સ્વય જ્ઞાનરૂપ જ હોય છે તથા રાગાદિકોનો જે નિગ્રહ થાય છે તે સંયમ રૂપ ક્રિયા સ્વરૂપ જ હોય છે તે ક્રિયા જ્ઞેયપરિચ્છેદજન્ય હોય છે એવું અમે માનીએ છીએ. તેથી એ માનવું જ જોઈએ કે જ્ઞેયપરિચ્છેદરૂપ જ્ઞાનથી સંયમ રૂપ ક્રિયા થાય છે આ સંયમરૂપ ક્રિયા મોક્ષપ્રાપ્તિમાં કારણરૂપ છે ત્યારે એવો વિચાર ઉત્પન્ન થાય છે કે શું મોક્ષ જ્ઞાનના ફલરૂપ છે ? કે ક્રિયાના ફલરૂપ છે ? કે તે બન્નેના ફલરૂપ છે ? જો એમ માનવામાં આવે કે મોક્ષ જ્ઞાનના ફલરૂપ જ છે તો એ વાત બરાબર લાગતી નથી કારણ કે મોક્ષ ક્રિયાના ફલરૂપ હોય છે જો તે સંયમરૂપ ક્રિયના ફલરૂપ ન હોય અને માત્ર જ્ઞાનના જ ફલરૂપ હોય તો એ વાત પણ સંગત લાગતી નથી, કારણ કે જે મોક્ષ ક્રિયાના પણ ફલરૂપ છે તેને માત્ર જ્ઞાનના જ ફલરૂપ કેવી રીતે માની શકાય ? વળી મોક્ષ કેવળ ક્રિયાના ફલરૂપ જ છે એ વાત પણ સંગત લાગતી નથી કારણ કે ક્રિયામાત્ર ઉન્મત્ત ક્રિયાની જેમ બંધ નીવડી શકે છે તેથી

मात्रं, तदुन्मत्तक्रियावद् व्यर्थं स्यात् २। ततः परिशेष्यात्तृतीयः पक्ष एव ग्राह्यः-ज्ञानसहितक्रियायास्तत् फलमिति ३। क्रियाज्ञानेन सह युगपद्भवतु ज्ञानानन्तरं वा भवतु, सा ज्ञानसहभाविनी, ज्ञानपूर्विका संयमक्रिया मोक्षस्य कारणं नतु क्रिया-मात्रं, न चापि ज्ञानमात्रमिति बोध्यम्।

ननु सदुक्तरीत्या ज्ञानक्रिययोः प्रत्येकं मोक्षसाधनताभावात् समुदिताभ्या-मपि ज्ञानक्रियाभ्यां मोक्षो भवतीति वक्तुं न युक्तम्, सिकतासमुदाये तैलवदिति

क्रिया की तरह व्यर्थ हो सकती है इसलिये यही मानना चाहिये कि ज्ञानसहित क्रिया का वह फल है क्रिया ज्ञान के साथ युगपद होवे या चाहे ज्ञान के बाद होवे वह ज्ञानसहभाविनी या ज्ञानपूर्विका संयम क्रिया मोक्ष का कारण होती है क्रियामात्र मोक्ष का कारण नहीं होता है और न ज्ञानमात्र मोक्ष का कारण होता है ऐसा जानना चाहिये।

शंका—आपके कहे अनुसार ज्ञान और क्रिया में प्रत्येक में मोक्ष के प्रति साधनता का अभाव है एवं ज्ञान क्रिया दोनों के मेल में साध नता का सद्भाव है सो यह बात बन भी कैसे सकती है क्यों कि हम देखते हैं कि जब वालुका के एक कन में तेल नहीं तो उनके समुदाय में भी तेल नहीं होता है इसी तरह जब स्वतन्त्र ज्ञान और क्रियामें मोक्षके प्रति कारणता नहीं है तो फिर इन दोनोंके समुदायमें भी वहकैसे होगी?

उ०—ऐसी बात एकान्तरूप से नहीं मानी गई है देखो घटादि पदार्थ मृत्तिका, दण्ड, चक्र एवं चीवर इनमें से एक २ के द्वारा निष्पन्न

એ વાત જ સ્વીકારવી પડશે કે તે જ્ઞાનસહિત ક્રિયાનું તે ફલ છે ભલે ક્રિયા જ્ઞાનની સાથે સાથે જ રહેતી હોય અથવા ભલે જ્ઞાનની અનુગામી હોય, પરંતુ એ વાત તો નિશ્ચિત છે કે જ્ઞાનસહભાવિની અથવા જ્ઞાનપૂર્વિકા સંયમક્રિયા જ મોક્ષપ્રાપ્તિમા કારણભૂત બને છે. માત્ર ક્રિયા જ મોક્ષનું કારણ બનતી નથી, અને માત્ર જ્ઞાન જ મોક્ષનુ કારણ બનતું નથી, એમ સમજવું જોઇએ.

શંકા—આપના કહ્યા પ્રમાણે તો જ્ઞાન અને ક્રિયામા–તે પ્રત્યેકમાં મોક્ષ પ્રાપ્તિના સાધનરૂપ બનવાનો અભાવ છે–તે બન્નેના મેળમાં જ સાધનતાનો સદ્ભાવ છે, તો એ વાત કેવી રીતે સંભવિત છે? જેમ રેતીના કણમાં તેલ હોતુ નથી, તો તેના સમુદાયમા પણ તેલ સંભવી શકતું નથી એજ પ્રમાણે જો સ્વતંત્ર જ્ઞાનમાં અથવા સ્વતંત્ર ક્રિયામા મોક્ષ પ્રાપ્તિ કરાવવાની કારણતા નથી, તો બન્નેના સમુદાયમાં તે કારણતા કેવી રીતે સંભવી શકે છે?

ઉત્તર—એવી વાતને એકાન્તરૂપે સ્વીકારવામા આવતી નથી ઘડાદિ પદાર્થો માટી, દંડ, ચક્ર અને ચીવર આ ચાર સાધનોમાના પ્રત્યેક સાધનો

चेद्, अत्रोच्यते–घटादिपदार्थाः मृदण्डचक्रचीवरादिभ्यः प्रत्येकं न भवन्ति, परसमुदायात् तु ते प्रादुर्भवन्तो दृश्यन्ते । एवमदृष्टस्य मोक्षस्यापि ज्ञानक्रियासमुदायात् प्रादुर्भावो मन्तव्यः, अपरोऽपि दृष्टान्तः–यः कोऽपि तरीतुं जानन्नपि काय व्यापारं न करोति, स पुरुषो नद्यां जलप्रवाहेण प्रवहति, एवं ज्ञानवानपि चारित्रहीनः संसारनद्यां प्रमादस्रोतसि प्रवहति । जन्ममरणान्तं न प्राप्नोति ।

यच्च निगदितम्–अनुस्मरणरूपज्ञानमात्रात् मन्त्रादीनां फलं दृश्यते, तद्वन्मोक्षरूपमदृष्टफलमपि ज्ञानस्य भवतीत्यनुमीयते इति, तत्रोच्यते–न चारित्रफलप्राप्तौ

नहीं होते हैं तो क्या वे इनके समुदाय से भी निष्पन्न नहीं होते हैं ! यदि कहो होते हैं तो इसी तरह से यहां पर भी आपको मानकर संतोष करना चाहिये अर्थात् अदृष्ट मोक्ष की प्राप्ति ज्ञानक्रिया के समुदाय में जीव को प्राप्त हो जाती है दूसरा दृष्टान्त भी इस पर ऐसा है कि कोई पुरुष तैरना तो जानता है परन्तु यदि वह जलप्रवाह में पड़ जाता है और हाथ पैर नहीं चलाता है तो वह पुरुष अवश्य ही नदी के प्रवाह में बह जाता है इसी तरह ज्ञानवान् जीव भी यदि चारित्ररूप क्रिया नहीं करता है उससे विहीन बना रहता है तो वह अवश्य ही प्रमाद स्रोतवाली इस संसाररूप नदी में बहता जाता है अर्थात् जन्ममरण के अन्त को प्राप्त नहीं कर पाता है

तथा—ऐसा जो कहा है कि मन्त्रादिकों का अनुस्मरण रूप ज्ञान मात्र से फल देखने में आता है इसी तरह से मोक्षरूप अदृष्ट फल भी ज्ञान का होता है ऐसा हम अनुमान लगा लेते हैं सो इस पर हमारा

દ્વારા બની શકતા નથી. એટલે શું તેમના સમુદાય દ્વારા પણ બની શકતા નથી ? આપણે તેમને તે સાધનોના સમુદાય દ્વારા તો અવશ્ય નિર્માણ થતાં જોઈએ છીએ. એજ પ્રમાણે આપે અહીં પણ એ વાત સ્વીકારવી જ જોઈએ કે અદૃષ્ટ મોક્ષની પ્રાપ્તિ જીવને જ્ઞાનક્રિયાના સમુદાયથી થઈ શકે છે આ વાતનું પ્રતિપાદન કરવા માટે બીજું દૃષ્ટાન્ત આપ્યું. કોઈ માણસને તરતાં આવડે છે, પરન્તુ તે પાણીના પ્રવાહમાં પડીને હાથપગ હલાવવાનું જ બંધ કરે તો તે જેમ પાણીમાં તણાઈ જાય છે, એજ પ્રમાણે જ્ઞાની જીવ પણ જો ચારિત્રરૂપ ક્રિયા કરતો નથી–સંયમથી વિહીન જ રહે છે–તો તે પણ પ્રમાદ સ્રોતવાળી આ સંસારરૂપ નદીના પ્રવાહમાં તણાયા જ કરે છે, એટલે કે જન્મ મરણના ફેરા ફર્યા જ કરે છે

તથા એવું જે કહેવામાં આવ્યું છે કે ‘મન્ત્રાદિના અનુસ્મરણરૂપ જ્ઞાન માત્રનું ફળ જોવામાં આવે છે, તો જ્ઞાનને પ્રતાપે મોક્ષરૂપી અદૃષ્ટ ફળની પ્રાપ્તિ

न मन्त्रज्ञानमात्रं कारणम्, किन्तु मन्त्रस्य सविधि जपनादि क्रियाऽपि स्वाभिलपित फलप्राप्ति साधनत्वेन कारणं भवतीति । ननु दृश्यते-मन्त्रानुस्मरणरूपज्ञानमात्रा-दपि क्वचिदिष्टफलं भवतीति, तस्मात् क्रियासहितस्यैव ज्ञानस्य कारणता कल्पनं प्रत्यक्षविरुद्धम्, इति चेत्, अत्रोच्यते-मन्त्रज्ञानमात्रेण तत्फलं न सभवति, मन्त्र-ज्ञानस्याऽक्रियत्वात्, इह यत् क्रियारहितम्, तत् खलु कार्यस्य जनकं न भवति, यथा-औषधज्ञानम्, औषधं हि आसेवनं विना व्याधिनाशकं न भवति । यत्तु कस्यचित् कार्यस्य जनकं, तत् क्रियारहितं न भवति, यथा कुम्भकारः, न चैतत् प्रत्य-

ऐसा कहना है कि मन्त्र से इष्टफल की प्राप्ति में मन्त्र का ज्ञानमात्र कारण नहीं है किन्तु मंत्र आदि की सविधि जपनादि क्रिया भी कारण है तभी स्वाभिलषित फल प्राप्ति होती देखी जाती है यदि इस पर यों कहा जावे कि "मन्त्रानुस्मरण रूप ज्ञानमात्र से भी कहीं २ इष्टफल प्राप्ति होती देखी जाती है फिर आप ऐसी प्रत्यक्षविरुद्ध बात क्यों कहते हो कि क्रिया सहित ही ज्ञान कारण होता है" सो इस पर हमारा ऐसा कहना है कि मन्त्र के ज्ञानमात्र से उस मन्त्र का फल प्राप्त नहीं हो सकता है क्यों कि वह मन्त्रज्ञान तो क्रिया शून्य होता है जो ज्ञान क्रिया शून्य होता है वह अपने कार्य का जनक नहीं होता है जैसे औषधके ज्ञानमात्रसे व्याधिका शमन नहीं होता है व्याधिका शमन तो उसके सेवन से होता है इसलिये यही मानना चाहिये कि जो किसी

થાય છે એવું અનુમાન અમે કરીએ છીએ" તો તેની સામે અમારી એવી દલીલ છે કે મંત્ર દ્વારા ઇષ્ટફળની પ્રાપ્તિમાં મંત્રનું જ્ઞાન માત્ર જ કારણભૂત હોતું નથી, પરન્તુ મંત્રાદિનો વિધિપૂર્વક જાપ કરવા રૂપ ક્રિયા પણ કારણભૂત હોય છે, તે પ્રકારની ક્રિયા વિના ઇચ્છિત ફળની પ્રાપ્તિ થતી નથી.

જો આ કથનની સામે એવી દલીલ કરવામાં આવે કે "મંત્રોના સ્મરણ રૂપ જ્ઞાનમાત્રથી પણ કોઇ કોઈ વાર ઇષ્ટફળની પ્રાપ્તિ થતી જોવામાં આવે છે, છતાં પણ આપ આવી પ્રત્યક્ષ વિરૂદ્ધની વાત કેમ કરો છો કે ક્રિયાસહિત જ્ઞાન જ મોક્ષપ્રાપ્તિમાં કારણભૂત બને છે?

તો આ બાબતનું સમાધાન આ રીતે થઇ શકે-મંત્રના જ્ઞાનમાત્રથી જ તે મંત્રનુ ફલ પ્રાપ્ત થઇ શકતું નથી, કારણ કે મંત્રજ્ઞાન તો ક્રિયાશૂન્ય હોય છે જે જ્ઞાન ક્રિયાવિહીન હોય છે તે પોતાના કાર્યનું જનક હોતું નથી જેમ ઔષધના જ્ઞાનમાત્રથી રોગ દૂર થતો નથી, પરન્તુ તેનુ સેવન કરવાથી જ રોગ દૂર થાય છે, એમ માત્ર જ્ઞાન દ્વારા જ મોક્ષપ્રાપ્ત થતો નથી પણ સંયમ રૂપ ક્રિયાની પણ તેમાં આવશ્યકતા રહે છે. તેથી એ વાત માનવી જ પડશે કે જે

सविरुद्धम्, तथा लोके दर्शनात्। एवं ज्ञानमात्रेण साक्षात् फलं जायमानं न दृश्यते।

ननु यत्र तु काचित् परिजपनादिक्रिया नोपलभ्यते किन्तु मन्त्रानुस्मरण मात्राज्जायमानं फलमुपलभ्यते तत्र यदि ज्ञानमात्रस्य कारणता नाङ्गीक्रियते तर्हि तत् फलं कस्मात् कारणादुत्पद्यते ? इति चेत्—

अत्रोच्यते—तत्समयनिबद्धदेवताविशेषेभ्य इति तेषां देवताविशेषाणां हि सक्रियत्वेन क्रियासाध्यं तत् फलं न तु मन्त्रज्ञानमात्रसाध्यमिति।

कार्य का जनक होता है वह क्रिया रहित नहीं होता है जैसे कुम्भकार इस प्रकार का यह कथन प्रत्यक्ष से विरुद्ध नहीं होता है क्यों कि लोक में ऐसा ही देखा जाता है अतः यही मानना चाहिये कि केवल ज्ञानमात्र से क्रिया शून्यज्ञान से-साक्षात् फल उत्पन्न होता हुआ नहीं देखा जाता है यदि यहां पर ऐसा पूछा जावे कि जहां पर परिजपनादि क्रिया तो नहीं देखी जाती है किन्तु मंत्रानुस्मरणमात्र से जायमानफल देखा जाता है तो ऐसी स्थिति में ज्ञानमात्र में उस फल के प्रति कारणता न मानी जावे तो फिर वह फल किस कारण से उत्पन्न हुआ माना जायेगा ? तो इसका समाधान ऐसा है कि वह फल उस समय से मंत्र से निबद्ध देवता विशेष का माना जावेगा देवता विशेष सक्रिय होते हैं अतः क्रिया साध्य वह फल है मन्त्र ज्ञानमात्र साध्य वह फल नहीं है।

વસ્તુ (જ્ઞાન) કોઈ કાર્યની જનક હોય છે તે ક્રિયારહિત હોતી નથી. જેમકે કુંભકાર, તેને ઘડાદિ પાત્ર બનાવવાનું જ્ઞાન હોવું જોઈએ, ત્યારે જ તે ઘડાદિ પાત્ર બનાવી શકે છે આ પ્રકારનું આ કથન પ્રત્યક્ષ અનુભવની વિરૂદ્ધ જતું નથી કારણ કે લોકમાં એવું જ જોવામાં આવે છે તેથી જ એ વાત માનવી પડે છે કે જ્ઞાનમાત્રથી-ક્રિયાશૂન્ય જ્ઞાનથી-સાક્ષાત્ ફળ ઉત્પન્ન થતું જોવામાં આવતું નથી. કદાચ એવી દલીલ કરવામાં આવે કે મંત્રાનુસ્મરણમાં પરિજપનાદિ ક્રિયા તો જોવામાં આવતી નથી પરંતુ મંત્રાનુસ્મરણ માત્રથી જનિત ફળ તો જોવામાં આવે છે તો એવી સ્થિતિમાં જ્ઞાનમાત્રને તે ફળની પ્રતિ કારણભૂત ન માનવામાં આવે, તો તે ફળ કયા કારણે ઉત્પન્ન થયેલું માનવું ? તો તેનું સમાધાન આ પ્રમાણે સમજવું-એવી પરિસ્થિતિમાં જે ફળ મળે છે તે મંત્રદ્વારા નિબદ્ધ દેવતા વિશેષને કારણે પ્રાપ્ત થયેલું ગણવું જોઈએ. તે દેવતા સક્રિય હોય છે તે કારણે એવું માનવું જોઈએ કે ક્રિયાસાધ્ય તે ફળ છે માત્ર મંત્રજ્ઞાન સાધ્ય તે ફળ નથી

ननु सम्यग्दर्शनज्ञानचारित्रतपांसि मोक्षमार्ग इति सिद्धान्तः, अत्रतु ज्ञानक्रियाभ्यां मोक्षइत्युच्यते, तर्हि कथंन विरुध्यते, न च द्विस्थानकानुरोधादेवं निर्देश इह कृत इति वाच्यम्, 'विज्जाए चेव चरणेण चेव' इति निर्देशस्यावधारणपरत्वात्, इति चेत्, अत्रोच्यते-इह विद्याग्रहणेन दर्शनमपि ग्राह्यम्, सम्यग्दर्शनस्य ज्ञानभेदत्वात्। यथाऽवबोधात्मिकामति र्यदाऽनाकारा सामान्यज्ञानरूपा तदाऽवग्रहः, ईहा' इत्युच्यते। एतदुभयं दर्शनमित्युच्यते। यदा तु साऽवबोधात्मिका मतिः साकारा तदा-'अवायो, धारणा' इत्युच्यते, एतदुभयं ज्ञानमित्युच्यते।

शंका—"सम्यग्दर्शनज्ञानचारित्रतपांसि मोक्षमार्गः" ऐसा सिद्धान्त है फिर यहां "ज्ञानक्रियाभ्यां मोक्षः" ऐसा जो कथन किया गया है वह विरुद्ध कैसे नहीं पड़ता है? अवश्य ही पड़ता है। यदि कहा जावे कि द्विस्थान के अनुरोध से ऐसा कहा गया है सो यह भी समझ में नहीं आता है क्यों कि-"विज्जाए चेव चरणेण चेव" यहां यह निर्देश अवधारण परक है

उ०—यहां विद्यापद के ग्रहण से दर्शन का भी ग्रहण हो गया है क्यों कि सम्यग्दर्शन ज्ञान का भेद है जैसे-अवबोधात्मक मति जब अनाकाररूप-सामान्यज्ञानरूप होती है तब वह अवग्रह ईहा इस प्रकार से कही जाती है इन दोनों को दर्शन कहा गया है और जब वह अवबोधात्मक मति साकार होती है तब वह अवाय धारणा ऐसी कही जाती है ये दोनों ज्ञान कहे गये हैं एवं जब निश्चयात्मकमति होती है

શંકા—" सम्यग्दर्शनज्ञानचारित्रतपांसि मोक्षमार्ग " આ સિદ્ધાન્ત અનુસાર તો સમ્યગ્દર્શનને પણ મોક્ષપ્રાપ્તિમાં કારણભૂત કહ્યુ છે. છતાં અહીં આપ કહો છો કે " ज्ञानक्रियाभ्यां मोक्ष: " જ્ઞાન અને ક્રિયાથી મોક્ષ પ્રાપ્તિ થાય છે, આ સિદ્ધાન્ત કથનથી વિરૂદ્ધ પડતું નથી ? જો એમ કહેવામાં આવે કે બે સ્થાનના અનુરોધથી એવું કહેવામાં આવ્યું છે, તો એ પણ ગળે ઉતરતું નથી, કારણ કે " विज्जाए चेव चरणेण चेव " આ નિર્દેશ અહીં અવધારણુપરક છે.

ઉત્તર-અહીં વિદ્યાપદ દ્વારા દર્શન પણ ગ્રહણ થઈ ગયું છે, કારણ કે સમ્યગ્દર્શન જ્ઞાનના ભેદરૂપ છે. 'અવબોધાત્મક મતિ જ્યારે અનાકારરૂપ સામાન્ય જ્ઞાનરૂપ હોય છે, ત્યારે તેને અવગ્રહ અને ઇહા રૂપે ઓળખવામાં આવે છે, તે બન્નેને દર્શન જ કહેવાય છે અને જ્યારે તે અવબોધાત્મક મતિ જ્યારે સાકાર થાય છે, ત્યારે તેને અવાય, ધારણા કહેવાય છે એ બન્નેને પણ જ્ઞાનરૂપ કહ્યા છે. અને જ્યારે નિશ્ચયાત્મક મતિ થાય છે, ત્યારે અવાય એ

सविरुद्धम्, तथा लोके दर्शनात्। एवं ज्ञानमात्रेण साक्षात् फलं जायमानं न दृश्यते।

ननु यत्र तु कापित् परिजपनादिक्रिया नोपलभ्यते किन्तु मन्त्रानुस्मरणमात्राज्जायमानं फलमुपलभ्यते तत्र यदि ज्ञानमात्रस्य कारणता नाङ्गीक्रियते तर्हि तत् फलं कस्मात् कारणादुत्पद्यते ? इति चेत्—

अत्रोच्यते—तत्समयनिबद्धदेवताविशेषेभ्य इति तेषां देवताविशेषाणां हि सक्रियत्वेन क्रियासाध्यं तत् फलं न तु मन्त्रज्ञानमात्रसाध्यमिति।

कार्य का जनक होता है वह क्रिया रहित नहीं होता है जैसे कुंभकार इस प्रकार का यह कथन प्रत्यक्ष से विरुद्ध नहीं होता है क्यों कि लोक में ऐसा ही देखा जाता है अतः यही मानना चाहिये कि केवल ज्ञानमात्र से क्रिया शून्यज्ञान से-साक्षात् फल उत्पन्न होता हुआ नहीं देखा जाता है यदि यहां पर ऐसा पूछा जावे कि जहां पर परिजपनादि क्रिया तो नहीं देखी जाती है किन्तु मंत्रानुस्मरणमात्र से जायमानफल देखा जाता है तो ऐसी स्थिति में ज्ञानमात्र में उस फल के प्रति कारणता न मानी जावे तो फिर वह फल किस कारण से उत्पन्न हुआ माना जायेगा ? तो इसका समाधान ऐसा है कि वह फल उस समय से मंत्र से निबद्ध देवता विशेष का माना जावेगा देवता विशेष सक्रिय होते हैं अतः क्रिया साध्य वह फल है मन्त्र ज्ञानमात्र साध्य वह फल नहीं है।

વસ્તુ (જ્ઞાન) કોઈ અર્થની જનક હોય છે, તે ક્રિયારહિત હોતી નથી. જેમકે કુંભકાર, તેને ઘડાદિ પાત્ર બનાવવાનું જ્ઞાન હોવું જોઈએ, ત્યારે જ તે ઘડાદિ પાત્ર બનાવી શકે છે આ પ્રકારનું આ કથન પ્રત્યક્ષ અનુભવની વિરૂદ્ધ નથી, કારણ કે લોકમાં એવું જ જોવામાં આવે છે તેથી જ એ વાત માનવી પડશે કે જ્ઞાનમાત્રથી-ક્રિયાશૂન્ય જ્ઞાનથી-સાક્ષાત્ ફલ ઉત્પન્ન થતું જોવામાં આવતું નથી. કદાચ એવી દલીલ કરવામાં આવે કે મંત્રાનુસ્મરણમાં પરિજપનાદિ ક્રિયા તો જોવામાં આવતી નથી પરન્તુ મંત્રાનુસ્મરણ માત્રથી જનિત ફલ તો જોવામાં આવે છે તો એવી સ્થિતિમાં જ્ઞાનમાત્રને તે ફળની પ્રાપ્તિમાં કારણભૂત ન માનવામાં આવે, તો તે ફળ કયા કારણે ઉત્પન્ન થયેલું માનવું ? તો તેનું સમાધાન આ પ્રમાણે સમજવું-એવી પરિસ્થિતિમાં જે ફલ મળે છે તે મંત્રદ્વારા નિબદ્ધ દેવતા વિશેષને કારણે જાયમાન ગણવું જોઈએ. દેવતા સક્રિય હોય છે તે કારણે એવું માનવું જોઈએ કે ક્રિયાસાધ્ય તે ફલ છે, માત્ર મંત્રજ્ઞાન સાધ્ય તે ફલ નથી.

छाया–द्वे स्थाने अपरिज्ञाय आत्मा नो केवलिप्रज्ञप्तं धर्मं लभते श्रवणतायै। तद् यथा–आरम्भश्चैव, परिग्रहश्चैव। द्वे स्थाने अपरिज्ञाय आत्मा नो केवलां बोधिं बुध्यते। तद् यथा–आरम्भश्चैव परिग्रहश्चैव। द्वे स्थाने अपरिज्ञाय आत्मा नो केवलां मुण्डो भूत्वा अगाराद् अनगारितां प्रव्रजति। तद् यथा–आरम्भश्चैव परिग्रहश्चैव। एवं नो केवलं ब्रह्मचर्यवासमावसति। नो केवलेन संयमेन संयमयति। नो केवलेन संवरेण संवृणोति। नो केवलमाभिनिबोधिकज्ञानमुत्पादयति। एव श्रुतज्ञानम्, अवधिज्ञानम्, मनः पर्यवज्ञानम् केवलज्ञानम् ॥ सू० ८ ॥

टीका—'दो ठाणाइ अपरियाणित्ता' इत्यादि—

द्वे स्थाने=द्वे वस्तुनी, अपरिज्ञाय = ज्ञपरिज्ञया विज्ञाय प्रत्याख्यानपरिज्ञया चाप्रत्याख्याय आत्मा नो=नैव, केवलिप्रज्ञप्त–जिनोक्तं धर्मं–श्रुतचारित्रलक्षणं धर्मं, श्रवणतायै–श्रोतुम्, नो=नैव लभते। ये द्वे स्थाने अपरिज्ञाय जिनोक्तधर्मस्य श्रवणं दुर्लभं, ते के उभे? इत्याशङ्क्याह–तं जहा–'आरंभे चेव, परिग्गहे चेव' इति। आरम्भश्चैव परिग्रहश्चैव। तत्र–आरम्भ'–कृष्यादिना पृथिव्यादिषड्कायोपमर्द-

---

आत्मा ज्ञान और चारित्र को किस कारण से प्राप्त नहीं कर पाता है? इस विषयको स्पष्ट करने के अभिप्रायसे सूत्रकार कहते हैं—

"दो ठाणाइं अपरियाणित्ता आया णो केवलि पन्नत्तं" इत्यादि। ८।

टीकार्थ–दो स्थानोंको दो वस्तुओं को ज्ञपरिज्ञासे जाने विना और प्रत्याख्यान परिज्ञासे त्यागे विना आत्मा केवलि प्रज्ञप्त जिनोक्त धर्म को श्रुतचारित्र रूप धर्म को सुनने के लिये प्राप्त नहीं करता है अर्थात् ऐसे व्यक्ति को जिनोक्त धर्म का श्रवण दुर्लभ होता है वे ही दो स्थान– "आरंभे चेव परिग्गहे चेव" इस पाठ द्वारा प्रकट किये गये हैं खेती आदि क्रिया द्वारा षट्कायके जीवोंका उपमर्दन करनेरूप जो व्यापार है,

---

કયા કારણોને લઈને આત્મા, જ્ઞાન અને ચારિત્રને પ્રાપ્ત કરી શકતો નથી, એ વાતનુ હવે સૂત્રકાર નિરૂપણ કરે છે—

"दो ठाणाइ अपरियाणित्ता आया णो केवलिपन्नत्तं" ઈત્યાદિ ॥૮॥

બે સ્થાનોને :(બે વસ્તુઓને) જ્ઞપરિજ્ઞાથી જાણ્યા વિના અને પ્રત્યાખ્યાન પરિજ્ઞાથી ત્યાગ કર્યાવિના આત્મા કેવલિપ્રજ્ઞપ્ત જિનોક્ત ધર્મનુ–શ્રુતચારિત્ર રૂપ ધર્મનુ શ્રવણ કરી શકતો નથી એટલે કે એવી વ્યક્તિને માટે જિનોક્ત ધર્મનુ શ્રવણ દુર્લભ બની જાય છે એ બે સ્થાન નીચેના સૂત્રપાઠ દ્વારા પ્રકટ કરવામાં આવ્યા છે–"आरंभे चेव परिग्गहे चेव" (૧) આરંભ અને (૨) પરિગ્રહ. ખેતી આદિ ક્રિયા દ્વારા છકાયના જીવોનુ ઉપમર્દન કરવારૂપ જે

एव यदा निश्चयात्मिका मतिस्तदाऽवायो द्विविधो भवति, रुचि , अवगमश्चेति । तत्र यो रुचिरूपोंऽशः स सम्यग्दर्शनम् यस्तु अवगमरूपोंऽशः सोऽवाय एवेति न विरोध', तथा च– अवायरूपे ज्ञाने सम्यग्दर्शनस्य समावेश इति भाव । 'चेव' इत्यवधारणे तु ज्ञानचारित्रव्यतिरेकेण ना य उपायो मोक्षस्येति दर्शनार्थमिति ॥सू०७॥

आत्मा, ज्ञान चारित्र च कुतो न लभते इत्याशङ्क्याह—

मूलम्—दो ठाणाइ अपरियाणित्ता आया णो केवलिपन्नत्त धम्म लभेज्ज सवणयाए। त जहा आरभे चेव परिग्गहे चेव। दो ठाणाइ अपरियाणित्ता आया णो केवल बोधि बुज्झेज्जा, त जहा आरभे चेव परिग्गहे चेव । दो ठाणाइ अपरियाणित्ता आया नो केवल मुडे भवित्ता अगाराओ अणगारिय पव्वइज्जा, त जहा आरभे चेव परिग्गहे चेव । एव णो केवल वभचेर वासमावसेज्जा । णो केवलेण सजमेण सजमेज्जा नो केवलेण सवरेण सवरेज्जा । नो केवलमाभिणिवोहियणाण उप्पाडेज्जा । एव सुयणाणं, ओहिनाणं, मणपज्जवनाणं, केवलनाणं ॥सू०८॥

तब अवाय दो प्रकार का होता है एक रुचि रूप और दूसरा अवगम (सामान्यज्ञान) रूप इनमें जो रुचिरूप अश है वह सम्यग्दर्शन है और जो अवगमरूप अश है वह अवाय है इस तरह से यहां कोई विरोध नहीं है तथा च अवायरूप ज्ञान में सम्यग्दर्शन का समावेश है ऐसा भाव है "चेव" पद अवधारण में आया है इससे यह कहा गया है कि ज्ञान और चारित्र इन दोनों के मेल के अतिरिक्त और कोई दूसरा उपाय मोक्ष का नहीं है ॥ सू०७॥

પ્રકારનુ થાય છે (૧) રુચિરૂપ અને (૨) અવગમ (સામાન્ય જ્ઞાન) રૂપ. તેમા જે રુચિરૂપ અશ છે તે સમ્યગ્દર્શન છે અને જે અવગમરૂપ અશ છે તે અવાય છે આ રીતે અહીં કોઈ વિરોધ સભવતો નથી. વળી અવાયરૂપ જ્ઞાનમાં સમ્યગ્દર્શનનો સમાવેશ થઈ જાય છે "ચેવ" શબ્દ અવધારણ અર્થે વપરાયો છે તેના દ્વારા એ બતાવવામાં આવ્યુ છે કે જ્ઞાન અને ચારિત્રના અર્થાત્ આ બન્નેના મેળ સિવાયનો બીજો કોઈ પણ ઉપાય નથી કે જેના દ્વારા મોક્ષ પ્રાપ્તિ કરી શકાય ॥ સૂ. ૭ ॥

छाया–द्वे स्थाने अपरिज्ञाय आत्मा नो केवलिप्रज्ञप्तं धर्मं लभते श्रवणतायै । तद् यथा–आरम्भश्चैव, परिग्रहश्चैव। द्वे स्थाने अपरिज्ञाय आत्मा नो केवलां बोधिं बुध्यते। तद् यथा–आरम्भश्चैव परिग्रहश्चैव । द्वे स्थाने अपरिज्ञाय आत्मा नो केवलां मुण्डो भूत्वा अगाराद् अनगारितां प्रव्रजति । तद् यथा–आरम्भश्चैव परिग्रहश्चैव । एवं नो केवलं ब्रह्मचर्यवासमावसति । नो केवलेन संयमेन संयमयति । नो केवलेन संवरेण संवृणोति । नो केवलमाभिनिबोधिकज्ञानमुत्पादयति । एवं श्रुतज्ञानम् , अवधिज्ञानम् , मनः पर्यवज्ञानम् केवलज्ञानम् ॥ सू० ८ ॥

टीका—'दो ठाणाइं अपरियाणित्ता' इत्यादि—

द्वे स्थाने=द्वे वस्तुनी, अपरिज्ञाय = ज्ञपरिज्ञया विज्ञाय प्रत्याख्यानपरिज्ञया चाप्रत्याख्याय आत्मा नो=नैव, केवलिप्रज्ञप्त–जिनोक्तं धर्मं–श्रुतचारित्रलक्षणं धर्मं, श्रवणतायै–श्रोतुम् , नो=नैव लभते । ये द्वे स्थाने अपरिज्ञाय जिनोक्तधर्मस्य श्रवणं दुर्लभं, ते के उभे? इत्याशङ्क्याह–तं जहा–'आरंभे चेव, परिग्गहे चेव' इति । आरम्भश्चैव परिग्रहश्चैव । तत्र–आरम्भ'–कृष्यादिना पृथिव्यादिषड्कायोपमर्द-

आत्मा ज्ञान और चारित्र को किस कारण से प्राप्त नहीं कर पाता है ? इस विषयको स्पष्ट करने के अभिप्रायसे सूत्रकार कहते हैं—

"दो ठाणाइं अपरियाणित्ता आया णो केवलि पन्नत्तं" इत्यादि । ८।

टीकार्थ–दो स्थानोंको दो वस्तुओं को ज्ञपरिज्ञासे जाने विना और प्रत्याख्यान परिज्ञासे त्यागे विना आत्मा केवलि प्रज्ञप्त जिनोक्त धर्म को श्रुतचारित्र रूप धर्म को सुनने के लिये प्राप्त नहीं करता है अर्थात् ऐसे व्यक्ति को जिनोक्त धर्म का श्रवण दुर्लभ होता है वे ही दो स्थान– "आरंभे चेव परिग्गहे चेव" इस पाठ द्वारा प्रकट किये गये हैं खेती आदि क्रिया द्वारा षट्कायके जीवोंका उपमर्दन करनेरूप जो व्यापार है,

કયા કારણોને લઈને આત્મા, જ્ઞાન અને ચારિત્રને પ્રાપ્ત કરી શકતો નથી, એ વાતનુ હવે સૂત્રકાર નિરૂપણ કરે છે—

" दो ठाणाइं अपरियाणित्ता आया णो केवलिपन्नत्तं " ઇત્યાદિ ॥૮॥

બે સ્થાનોને (બે વસ્તુઓને) જ્ઞપરિજ્ઞાથી જાણ્યા વિના અને પ્રત્યાખ્યાન પરિજ્ઞાથી ત્યાગ કર્યાવિના આત્મા કેવલિપ્રજ્ઞપ્ત જિનોક્ત ધર્મનુ–શ્રુતચારિત્ર રૂપ ધર્મનુ શ્રવણ કરી શકતો નથી એટલે કે એવી વ્યક્તિને માટે જિનોક્ત ધર્મનુ શ્રવણ દુર્લભ બની જાય છે એ બે સ્થાન નીચેના સૂત્રપાઠ દ્વારા પ્રકટ કરવામાં આવ્યા છે–" आरंभे चेव परिग्गहे चेव " (૧) આરભ અને (૨) પરિગ્રહ. ખેતી આદિ ક્રિયા દ્વારા છકાયના જીવોનુ ઉપમર્દન કરવારૂપ જે



नलमयम्', तथा–परिग्रह'–परिगृह्यते, इति परिग्रहः धनधान्यादिरूपः। स चैवम्– धनम् १, धान्यम् २, क्षेत्रम् ३, वास्तु ४, रूप्यम् ५, सुवर्णम् ६, कुप्यम् ७, द्विपदः ८, चतुष्पदम् ९, इति नवविध । यावद् आरम्भं परिग्रहं चानर्थमूलं न जानाति नापि प्रत्याख्याति तावत् केवलिप्ररूपितं धर्मं श्रोतुमपि न शक्नोतीति भावः।

द्वे स्थाने अपरिज्ञाय आत्मा केवलां–शुद्धां बोधि–दर्शनं सम्यक्त्वमित्यर्थः, नो–नैव बुध्यते – अनुभवति। ते द्वे स्थाने के इत्याशङ्क्याह–'त जहा'

उसका नाम आरम्भ है तथा जो सब ओर से ग्रहण किया जाता है वह परिग्रह है ऐसा यह परिग्रह धनधान्यरूप कहा गया है।

जैसे—धन १ घृतगुडादि, धान्य २, क्षेत्र ३, वास्तु ४, रूप्य ५, सुवर्ण ६, कुप्य ७, द्विपद ८ और चतुष्पद ९ यह नौ प्रकार का बाह्य परिग्रह है जब तक आत्मा आरम्भ और परिग्रह को अर्थ का मूल नहीं जानता है और जब तक उसका प्रत्याख्यान नहीं करता है तब तक वह केवलि प्रज्ञप्त धर्म को सुनने के योग्य नहीं हो सकता है

इसी तरहसे आत्मा जब तक ज्ञपरिज्ञासे इन दोनों स्थानोंको नहीं जान लेता है और प्रत्याख्यानपरिज्ञासे इनका परित्याग नहीं कर देता है तब तक वह शुद्ध बोधिका सम्यक्त्वका अनुभव नहीं कर सकता है।

इसी तरह से इन आरम्भ परिग्रहरूप दो स्थानों को आत्मा ज्ञ परिज्ञा से जबतक नहीं जान लेता है और प्रत्याख्यान परिज्ञा से जब

પ્રવૃત્તિ થાય છે તેને આરંભ કહે છે ચારે તરફથી જે કોઇ વસ્તુ ગ્રહણ કરીને તેનો સંગ્રહ કરવાની પ્રવૃત્તિને પરિગ્રહ કહે છે આ પરિગ્રહ ધનધાન્યાદિના સંગ્રહરૂપ હોય છે પરિગ્રહ નવ પ્રકારનો કહ્યો છે–(૧) ધન, (૨) ઘી, ગોળ, અનાજ આદિ ધાન્ય (૩) ક્ષેત્ર, (૪) વાસ્તુ, ઘર(૫) ચાંદી, (૬) સુવર્ણ, (૭) કુપ્ય (તાંબુ) (૮) દ્વિપદ અને (૯) ચતુષ્પદ. આ નવ પ્રકારના બાહ્યપરિગ્રહો છે જ્યાં સુધી આત્મા આરંભ અને પરિગ્રહને અનર્થના મૂળ રૂપ માનતો નથી, અને જ્યાં સુધી તે કેવલિ પ્રજ્ઞપ્ત ધર્મનું શ્રવણ કરવાને યોગ્ય બનતો નથી. ત્યાં સુધી તે કેવલિ પ્રજ્ઞપ્ત ધર્મનું શ્રવણ કરવાને યોગ્ય બનતોનથી

આ રીતે આત્મા જ્યાં સુધી જ્ઞ પરિજ્ઞાથી આ બન્ને સ્થાનોને જાણી લેતો નથી અને પ્રત્યાખ્યાન પરિજ્ઞાથી તેમનો ત્યાગ કરતો નથી ત્યાં સુધી તે શુદ્ધ બોધિનો (સમ્યક્ત્વનો) અનુભવ કરી શકતો નથી.

એજ પ્રમાણે તે આરંભ અને પરિગ્રહરૂપ બે સ્થાનોને આત્મા જ્ઞ પરિજ્ઞાથી જ્યાં સુધી જાણી લેતો નથી અને પ્રત્યાખ્યાન પરિજ્ઞાથી જ્યાં સુધી

इत्यादि। आरम्भश्चैव, परिग्रहश्चैव। व्याख्यापूर्ववत्। आरम्भ-परिग्रहावपरिज्ञया-परित्यज्य च कोऽपि सम्यक्त्वानुभवं कर्तुं न शक्नोतीति भावः।

द्वे स्थाने अपरिज्ञाय आत्मा मुण्डः, द्रव्यतो-मुण्डः शिरोलोचेन, भावतस्तु मुण्डः-कषायाद्यपनयनेन भूत्वा, अगाराद्=गृहात्, निष्क्रम्य, केवलां=परिपूर्णां, विशुद्धां वा, अनगारितां=प्रव्रज्यां, नो=नैव प्रव्रजति=नैव प्राप्नोति।

एवम्=अनेन प्रकारेण, यथा पूर्ववाक्ये-'दो ठाणाइं अपरिणाइत्ता आया' इति पाठस्तथा इत समारम्भोत्तरवाक्ये योजयित्वा पठनीयम्। तथा चायमर्थः-द्वे स्थाने-आरम्भ-परिग्रहरूपे, अपरिज्ञाय आत्मा केवलं विशुद्धं परिपूर्णं नववाटसहितं ब्रह्मचर्यवासं=ब्रह्मचर्येण-अब्रह्मविरमणेन, वासः=निवासः-ब्रह्मचर्यवासस्तम्, नो=नैव आवसति=आचरति पालयितुं न समर्थो भवतीत्यर्थः।

तक उसका परित्याग नहीं कर देता है तब तक वह आत्मा द्रव्य और भावरूप से मुण्डित होकर आगारावस्था से अनगारावस्था को पूर्णरूप से या विशुद्धरूप से नहीं प्राप्त कर पाता है। शिर के केशों का लुञ्चन करना इसका नाम द्रव्य से मुण्डित होना है, और कषाय आदि का परित्याग करना इसका नाम भाव से मुण्डित होना होता है केवल शब्द का अर्थ परिपूर्ण अथवा विशुद्ध है, अनगारिता शब्द का अर्थ प्रव्रज्या मुनिदीक्षा है और "नो प्रव्रजति" क्रियापद का अर्थ नहीं प्राप्त करता है ऐसा है

इसी प्रकार से "णो केवलं बंभचेरवासमावसेज्जा" आत्मा जब तक आरम्भ परिग्रहरूप इन दो स्थानों को ज्ञ परिज्ञा से नहीं जान लेता है और प्रत्याख्यान परिज्ञा से उनका परित्याग नहीं कर देता है

તેમનો પરિત્યાગ કરી દેતો નથી, ત્યાં સુધી તે આત્મા દ્રવ્ય અને ભાવરૂપે મુંડિત થઈને આગારાવસ્થાનો ત્યાગ કરીને અણગારાવસ્થાને પૂર્ણરૂપે અથવા વિશુદ્ધરૂપે પ્રાપ્ત કરી શકતો નથી મસ્તકના કેશોનું લુંચન કરવું તેનું નામ દ્રવ્યની અપેક્ષાએ મુંડિત થવું સમજવું અને કષાય આદિનો પરિત્યાગ કરવો એટલે ભાવની અપેક્ષાએ મુંડિત થવું કેવલ શબ્દ પરિપૂર્ણ અથવા વિશુદ્ધના અર્થમાં અહીં વપરાયો છે પ્રવ્રજ્યા લઈને મુનિ પર્યાયને ધારણ કરવી તેનું નામ અનગારિતા છે. "नो प्रव्रजति" આ સૂત્રાંશનો અર્થ "પ્રવ્રજ્યા પ્રાપ્ત કરતો નથી," એવો થાય છે

એજ પ્રમાણે "णो केवलं बंभचेरवासमावसेज्जा" જ્યાં સુધી આત્મા આરંભ અને પરિગ્રહરૂપ બન્ને સ્થાનોને જ્ઞ પરિજ્ઞાથી જાણતો નથી અને

तथा-द्वे स्थाने-आरम्भ-परिग्रहरूपे अपरिज्ञाय, आत्मा केवलेन=विशुद्धेन परिपूर्णेन संयमेन-पृथिव्यादिरक्षणलक्षणेन नो संयमयति आत्मानमिति।

तथा-द्वे स्थाने-आरम्भ परिग्रहरूपे वस्तुनी अपरिज्ञाय-अप्रत्याख्याय च आत्मा केवलेन=विशुद्धेन, संवरेण=आस्रवनिरोधरूपेण, नो=नैव संवृणोति आस्रव द्वाराणि, इति भावः।

तथा द्वे स्थाने-आरम्भपरिग्रहरूपे वस्तुनी अपरिज्ञायाप्रत्याख्याय च आत्मा केवलं-परिपूर्णं सर्व-स्वविषयग्राहकम्, आभिनिबोधिकज्ञानम्=अभि-अर्थाभिमुखं, अविपर्ययरूपत्वात् नियतं, संशयाभावात्, बोधः-बवनम्, अभिनिबोधः। अ

तब तक वह नौवाडसहित ब्रह्मचर्यविरमणव्रत को पालन करने के लिये समर्थ नहीं होता है

इसी प्रकार से-"णो केवलेण संजमेण संजमेज्जा, नो केवलेण संवरेण संवरेज्जा" आत्मा जब तक ज्ञपरिज्ञा से इन आरम्भ परिग्रहरूप दो स्थानों को नहीं जान लेता है और प्रत्याख्यानपरिज्ञा से जब तक इनका परित्याग नहीं कर देता है तब तक वह परिपूर्ण संयम से पृथिव्यादि संरक्षण रूप सत्तरह प्रकार के संयम से अपने आप को संयमित नहीं कर पाता है इसी प्रकार से वह आत्मा ज्ञ परिज्ञा से और प्रत्याख्यानपरिज्ञा से इन दोनों स्थानोंको जाने बिना और इनका त्याग किये बिना आस्रव द्वारा निरोधरूप विशुद्ध संवरको प्राप्त नहीं कर सकता है अर्थात् ऐसा आत्मा आस्रवद्वारको नहीं रोक सकता है।

પ્રત્યાખ્યાન પરિજ્ઞાથી તેમનો ત્યાગ કરતો નથી, ત્યાં સુધી તે નવ વાડ સહિત બ્રહ્મચર્યવિરમણ વ્રતનું (બ્રહ્મચર્ય વ્રતનું) પાલન કરવાને સમર્થ થઈ શકતો નથી.

એજ પ્રમાણે "णो केवलेणं संजमेणं संजमेज्जा नो केवलेणं संवरेणं संवरेज्जा" જ્યાં સુધી આત્મા જ્ઞ પરિજ્ઞાથી આ આરંભ અને પરિગ્રહરૂપ બે સ્થાનોને જાણતો નથી અને પ્રત્યાખ્યાન પરિજ્ઞાથી જ્યાં સુધી તેમનો પરિત્યાગ કરતો નથી, ત્યાં સુધી તે પરિપૂર્ણ (વિશુદ્ધ) સંયમથી પોતાના આત્માને સંયમિત કરી શકતો નથી. પૃથ્વીકાય આદિના સંરક્ષણરૂપ ૧૭ પ્રકારનો સંયમ કહ્યો છે. આરંભ અને પરિગ્રહના ત્યાગપૂર્વક જ આ સંયમની આરાધના થઈ શકે છે. એજ પ્રમાણે જ્યાં સુધી આત્મા જ્ઞ પરિજ્ઞાથી આરંભ અને પરિગ્રહના સ્વરૂપને જાણતો નથી અને પ્રત્યાખ્યાન દ્વારા તેમનો પરિત્યાગ કરતો નથી, ત્યાં સુધી તે આસ્રવદ્વાર નિરોધરૂપ વિશુદ્ધ સંવરને પ્રાપ્ત કરી શકતો નથી, એટલે કે એવો આત્મા આસ્રવદ્વારને રોકી શકતો નથી.

एवाभिनिबोधिकं, तच्च तज्ज्ञानं चेत्याभिनिबोधिकज्ञानम् इन्द्रियपञ्चकमनोनिमित्तको बोधस्तत्, नो=नैव उत्पादयति ।

एवम्-अनेन प्रकारेण, " नो केवलं उप्पाडेज्जा " इति पाठो योजनीय इति भावः । तथा चायमर्थः-द्वे स्थाने अपरिज्ञाय, आत्मा केवल=परिपूर्णं विशुद्धं वा

" णो केवलमाभिणिबोहियनाणं उप्पाडेज्जा " इसी प्रकार से आत्मा ज्ञ परिज्ञ द्वारा और प्रत्याख्यान परिज्ञा द्वारा इन आरम्भ परिग्रह रूप दोनों स्थानों को विना जाने और विना त्यागे परिपूर्ण ऐसे स्वविषयग्राहक आभिनिबोधिक ज्ञान को उत्पन्न नहीं कर पाता है यहां केवल शब्द का अर्थ " परिपूर्ण " है " आभि " उपसर्ग इन्द्रियपञ्चक और मनोनिमित्तक बोध में संशय विपर्यय ज्ञान के अभाव को प्रकट करने के लिये दिया गया है अर्थात पांच इन्द्रियों और मन से जो प्रतिनियत संबद्ध वर्तमान वस्तु का बोध होता है वह आभिनिबोध मतिज्ञान है यह आभिनिबोध ज्ञान यदि संशय और विपर्यय से विहीन है तभी वह केवल परिपूर्ण शुद्ध कहा गया है वह अभिनिबोध ही आभिनिबोधिक है " एवं सुयनाणं ओहिनाणं, मणपज्जवनाणं, केवलनाणं " इसी तरह से इसी प्रकार से आत्मा पूर्वोक्तरूप से अपने आप को किये विना ज्ञपरिज्ञा और प्रत्याख्यानपरिज्ञा से आरम्भ परिग्रह रूप दो स्थानों को जाने त्यागे विना परिपूर्ण अथवा विशुद्ध श्रुत

" णो केवलमाभिणिबोहियणाणं उप्पाडेज्जा " એજ પ્રકારે આત્મા જ્યાં સુધી જ્ઞ પરિજ્ઞા દ્વારા આરંભ અને પરિગ્રહરૂપ બન્ને સ્થાનોને જાણતો નથી અને પ્રત્યાખ્યાન દ્વારા તેમનો પરિત્યાગ કરતો નથી, ત્યાં સુધી તે પરિપૂર્ણ એવાં સ્વવિષયક ગ્રાહક આભિનિબોધિક જ્ઞાનને ઉત્પન્ન કરી શકતો નથી અહીં 'કેવલ' શબ્દનો અર્થ 'પરિપૂર્ણ' છે " अभि " ઉપસર્ગ પાંચ ઇન્દ્રિયો અને મનોનિમિત્તક બોધમાં સંશય વિપર્યય જ્ઞાનનો અભાવ પ્રકટ કરવા માટે વપરાયો છે એટલે કે પાંચ ઇન્દ્રિયો અને મનદ્વારા જે પ્રતિનિયત સંબદ્ધ વર્તમાન વસ્તુનો બોધ થાય છે, એનું નામ જ આભિનિબોધ મતિજ્ઞાન છે તે આભિનિબોધ જ્ઞાન જો સંશય અને વિપર્યયથી રહિત હોય તો જ તેને કેવલ (પરિપૂર્ણ-વિશુદ્ધ) આભિનિબોધિક મતિજ્ઞાન કહેવાય છે તે અભિનિબોધજ આભિનિબોધિક રૂપ છે. " एवं सुयनाण ओहिनाण, मणपज्जवनाणं, केवलनाण " એજ પ્રમાણે આત્મા જ્યાં સુધી આરંભ અને પરિગ્રહરૂપ બે સ્થાનોને જ્ઞ પરિજ્ઞાથી જાણતો નથી અને પ્રત્યાખ્યાન પરિજ્ઞા દ્વારા જ્યાં સુધી તેમનો પરિત્યાગ કરતો નથી, ત્યાં સુધી તે વિશુદ્ધ શ્રુતજ્ઞાનને (શ્રુતશાસ્ત્રાનુસારી

तथा-द्वे स्थाने-आरम्भ-परिग्रहरूप अपरिज्ञाय, आत्मा केवलेन=विशुद्धेन परिपूर्णेन संयमेन-पृथिव्यादिरक्षणलक्षणेन नो संयमयति आत्मानमिति।

तथा-द्वे स्थाने-आरम्भ परिग्रहरूपे वस्तुनी अपरिज्ञाय-अप्रत्याख्याय च आत्मा केवलेन=विशुद्धेन, संवरेण=आस्रवनिरोधरूपेण, नोऽन्नैव संवृणोति आस्रवद्वाराणि, इति भावः।

तथा द्वे स्थाने-आरम्भपरिग्रहरूपे वस्तुनी अपरिज्ञायअप्रत्याख्याय च आत्मा केवल-परिपूर्णं सर्व-स्वविषयग्राहकम्, आभिनिबोधिकज्ञानम्=अभि-अर्थाभिमुख्यो, अविपर्ययरूपत्वात् नियत, संशयमिश्रत्वात्, बोधः-वेदनम्, अभिनिबोध। स

तब तक वह नौवाडसहित ब्रह्मचर्यविरमणव्रत को पालन करने के लिये समर्थ नहीं होता है

इसी प्रकार से-" णो केवलेण सजमेण संजमेज्जा, नो केवलेण संवरेग संवरेज्जा " आत्मा जब तक ज्ञपरिज्ञा से इन आरम्भ परिग्रहरूप दो स्थानों को नहीं जान लेता है और प्रत्याख्यानपरिज्ञा से जब तक इनका परित्याग नहीं कर देता है तब तक वह परिपूर्ण संयम से पृथिव्यादि संरक्षण रूप सतरह प्रकार के संयम से अपने आप को संयमित नहीं कर पाता है इसी प्रकार से वह आत्मा ज्ञ परिज्ञा से और प्रत्याख्यानपरिज्ञा से इन दोनों स्थानोंको जाने बिना और इनका त्याग किये बिना आस्रव द्वारा निरोधरूप विशुद्ध संवरको प्राप्त नहीं कर सकता है अर्थात् ऐसा आत्मा आस्रवद्वारको नहीं रोक सकता है।

પ્રત્યાખ્યાન પરિજ્ઞાથી તેમનો ત્યાગ કરતો નથી, ત્યાં સુધી તે નવ વાડ સહિત બ્રહ્મચર્યવિરમણ વ્રતનું (બ્રહ્મચર્ય વ્રતનું) પાલન કરવાને સમર્થ થઈ શકતો નથી.

એજ પ્રમાણે " णो केवलेण सजमेणं संजमेज्जा णो केवलणं संवरेणं संवरेज्जा " જ્યાં સુધી આત્મા જ્ઞ પરિજ્ઞાથી આ આરંભ અને પરિગ્રહરૂપ બે સ્થાનોને જાણતો નથી અને પ્રત્યાખ્યાન પરિજ્ઞાથી જ્યાં સુધી તેમનો પરિત્યાગ કરતો નથી, ત્યાં સુધી તે પરિપૂર્ણ (વિશુદ્ધ) સંયમથી પોતાના આત્માને સંયમિત કરી શકતો નથી. પૃથ્વીકાય આદિના સંરક્ષણરૂપ ૧૭ પ્રકારનો સંયમ કહ્યો છે આરંભ અને પરિગ્રહના ત્યાગપૂર્વક જ આ સંયમની આરાધના થઈ શકે છે એજ પ્રમાણે જ્યાં સુધી આત્મા જ્ઞ પરિજ્ઞાથી આરંભ અને પરિગ્રહના સ્વરૂપને જાણતો નથી અને પ્રત્યાખ્યાન દ્વારા તેમનો પરિત્યાગ કરતો નથી, ત્યાં સુધી તે આસ્રવદ્વાર નિરોધરૂપ વિશુદ્ધ સંવરને પ્રાપ્ત કરી શકતો નથી, એટલે કે એવો આત્મા આસ્રવદ્વારને રોકી શકતો નથી.

'केवलनाणं' इति । द्वे स्थाने अपरिज्ञाय आत्मा केवलं परिपूर्णं, विशुद्धं वा केवलज्ञानं=केवलं-मत्यादिनिरपेक्षत्वादसहाय, यद्वा-केवलं-आवरणमलाभावाद् विशुद्धम्, यद्वा-केवलं सकलं संपूर्णम्, यद्वा-केवलम्-सजातीयद्वितीयरहितत्वा-

यहां "नो केवल उप्पाडेज्जा" ऐसा पाठ भी योजित कर लेना चाहिये इसका ऐसा वाच्यार्थ होता है कि आत्मा जबतक ज्ञपरिज्ञा से आरम्भ परिग्रह रूप दो स्थानों को नहीं जानकर प्रत्याख्यान परिज्ञा से उनका परित्याग नहीं कर देता है, तबतक वह परिपूर्ण अथवा विशुद्ध केवल-ज्ञान को-विना मर्यादा के रूपी और अरूपी द्रव्यों को हस्तामलकवत् साक्षात् जानने वाले ज्ञान को नहीं उत्पन्न कर सकता है "केवलनाणं" में जो ज्ञान का विशेषण यह केवल पद रखा है उससे यह प्रकट किया गया है कि वह ज्ञान ऐसा होता है कि जिसमें मति आदि ज्ञानों की निरपेक्षता होने के कारण सहायता की चाहना नहीं रहती है। अथवा इस केवलज्ञान का निरोधक जो सर्वघाति प्रकृतिरूप केवलज्ञानावरण है उसका इसमें सर्वथा क्षय रहता है इसीलिये इसे विशुद्ध कहा गया है अथवा अवधिज्ञान और मनःपर्यवज्ञान जिस प्रकार द्रव्यक्षेत्रादि की मर्यादा लेकर रूपी पदार्थ को जानते हैं उस प्रकार से यह मर्यादा लेकर पदार्थों को नहीं जानता है किन्तु मर्यादा रहित होकर ही यह

તે પૂર્ણરૂપે અથવા વિશુદ્ધરૂપે મનઃપર્યવજ્ઞાનને (મનની પર્યાયોને સાક્ષાત્ જાણુનારા જ્ઞાનને) ઉત્પન્ન કરી શકતો નથી

અહીં "नो केवल उप्पाडेज्जा" આ પાઠ પણુ યોજવો જોઇએ. તેના દ્વારા એવો વાગ્યાર્થ થાય છે કે જ્યાં સુધી આત્મા જ્ઞ પરિજ્ઞાથી આરંભ પરિગ્રહરૂપ બે સ્થાનોને જાણીને પ્રત્યાખ્યાન પરિજ્ઞાથી તેમનો પરિત્યાગ કરતો નથી, ત્યાં સુધી તે પરિપૂર્ણ અથવા વિશુદ્ધ કેવળજ્ઞાનને ઉત્પન્ન કરી શકતો નથી કોઇ પણુ જાતની મર્યાદા વિના રૂપી અને અરૂપી દ્રવ્યોને હસ્તામલક-વત્ (હાથમાં રહેલા આમળાની જેમ) સાક્ષાત્ જાણુનારા જ્ઞાનને કેવળજ્ઞાન કહે છે. "केवलनाण" આ પદમાં જે કેવલ વિશેષણુ છે તેના દ્વારા એ પ્રકટ કરવામાં આવ્યુ છે કે આ જ્ઞાન એવું હોય છે કે તેમાં મતિજ્ઞાન આદિ જ્ઞાનોની અપેક્ષા રહેતી નથી-એટલે કે તે જ્ઞાનોથી સહાયતાની આવશ્યકતા રહેતી નથી કેવળજ્ઞાનનુ નિરોધક સર્વઘાતિ પ્રકૃતિરૂપ જે કેવળ જ્ઞાનાવરણુ કર્મ છે, તેનો તેમાં સર્વથા ક્ષય થયેલો રહે છે, તેથી તેને વિશુદ્ધ કહ્યુ છે. અવધિજ્ઞાન અને મન પર્યવજ્ઞાન તો દ્રવ્ય, ક્ષેત્ર, કાળ અને ભાવની મર્યાદામાં રહીને રૂપી પદાર્થોને જાણી શકે છે, પરન્તુ કેવળજ્ઞાનમા આવી કોઇ મર્યાદા

श्रुतज्ञानं=श्रूयते, इति श्रुतम् शब्द एव । स च भावश्रुत प्रतिकारणमिति तत्र ज्ञानत्वोपचारेण स ज्ञानरूपः । श्रुत च तज्ज्ञानं च श्रुतज्ञानम्-श्रुतशास्त्रानुसारिज्ञानं नोत्पादयतीति ।

' ओहिनाण ' इति द्वे स्थाने अपरिज्ञाय आत्मा केवल परिपूर्णं विशुद्ध वा अवधिज्ञानम्-इन्द्रियमनोनिरपेक्षम् आत्मनो रूपिद्रव्यसाक्षात्करण नोत्पादयतीति ।

' मणपज्जवनाणं ' इति । द्वे स्थाने अपरिज्ञाय आत्मा केवल=परिपूर्णं, विशुद्ध वा मन पर्यवज्ञान-मनस' पयवा -पर्यायास्तेषां ज्ञान नोत्पादयतीति ।

ज्ञान को श्रुतशास्त्रानुसारी ज्ञान को उत्पन्न नहीं कर सकता है श्रुत शब्द का अर्थ "श्रूयते इति श्रुतम्" शब्द है यह शब्द भावश्रुत के प्रति कारण होता है इसलिये शब्द में ज्ञान का उपचार कर दिया गया है और इसीमें उसे ज्ञानरूप कहा है इसी प्रकार से आत्मा परिग्रहरूप दो स्थानों का ज्ञ परिज्ञा से जानकर जबतक प्रत्याख्यान परिज्ञा से उनका परित्याग नहीं कर देता है तब तक वह पूर्ण विशुद्ध अवधिज्ञान को इन्द्रियमनो निरपेक्ष होकर रूपि द्रव्यमात्र को द्रव्यक्षेत्र काल और भाव की मर्यादा लेकर साक्षात् जानने वाले ज्ञान को उत्पन्न नहीं कर सकता है। इसी प्रकार से आत्मा आरम्भ परिग्रहरूप दो स्थानों का ज्ञ परिज्ञा से जानकर जबतक प्रत्याख्यान परिज्ञा द्वारा परित्याग नहीं कर देता है तब तक वह पूर्णरूप से या विशुद्धरूप से मन पर्यवज्ञान को-मन की पर्यायों को साक्षात् जाननेवाले ज्ञान को उत्पन्न नहीं कर सकता है

જ્ઞાનને) ઉત્પન્ન કરી શકતો નથી શ્રૂયતે इति श्रुतम् ' આ વ્યુત્પત્તિ અનુસાર ' જે સંભળાય છે તે શ્રુત છે " એટલે કે શબ્દને શ્રુત કહે છે તે શબ્દ ભાવશ્રુતમાં કારણરૂપ બને છે તેથી શબ્દમાં જ્ઞાનનો ઉપચાર કરાયો છે, અને તેથી જ તેને જ્ઞાનરૂપ કહેવામા આવેલ છે

એજ પ્રમાણે જ્યાં સુધી આત્મા આરંભ અને પરિગ્રહરૂપ બે સ્થાનોને જ્ઞ પરિજ્ઞાથી જાણતો નથી અને પ્રત્યાખ્યાન દ્વારા તેમનો પરિત્યાગ કરતો નથી ત્યા સુધી તે પૂર્ણ વિશુદ્ધ અવધિજ્ઞાનને ઉત્પન્ન કરી શકતો નથી. ઇન્દ્રિયો અને મનની અપેક્ષા રાખ્યા વિના રૂપિ દ્રવ્યમાત્રને દ્રવ્ય, ક્ષેત્ર, કાળ અને ભાવ ની મર્યાદાની અપેક્ષાએ સાક્ષાત્ જાણનાર જ્ઞાનને અવધિજ્ઞાન કહે છે આરંભ અને પરિગ્રહના સ્વરૂપને જાણીને તેમના પરિત્યાગ પૂર્વક જ આત્મા આ જ્ઞાનની પ્રાપ્તિ કરી શકે છે

એ જ પ્રમાણે જ્યાં સુધી આત્મા જ્ઞ પરિજ્ઞાથી આરંભ અને પરિગ્રહને જાણતો નથી અને પ્રત્યાખ્યાન દ્વારા તે બન્નેનો ત્યાગ કરતો નથી, ત્યાં સુધી

'केवलनाणं' इति । द्वे स्थाने अपरिज्ञाय आत्मा केवलं परिपूर्णं, विशुद्धं वा केवलज्ञानं=केवलं-मत्यादिनिरपेक्षत्वादसहायं, यद्वा-केवलं-आवरणमलाभावाद् विशुद्धम्, यद्वा-केवलं सकलं संपूर्णम्, यद्वा-केवलम्-सजातीयद्वितीयरहितत्वा-

यहां "नो केवल उप्पाडेज्जा" ऐसा पाठ भी योजित कर लेना चाहिये इसका ऐसा वाच्यार्थ होना है कि आत्मा जबतक ज्ञपरिज्ञा से आरम्भ परिग्रह रूप दो स्थानों को नहीं जानकर प्रत्याख्यान परिज्ञा से उनका परित्याग नहीं कर देता है, तबतक वह परिपूर्ण अथवा विशुद्ध केवल-ज्ञान को-विना मर्यादा के रूपी और अरूपी द्रव्यों को हस्तामलकवत् साक्षात् जानने वाले ज्ञान को नहीं उत्पन्न कर सकता है "केवलनाणं" में जो ज्ञान का विशेषण यह केवल पद रखा है उससे यह प्रकट किया गया है कि वह ज्ञान ऐसा होना है कि जिसमें मति आदि ज्ञानों की निरपेक्षता होने के कारण सहायता की चाहना नहीं रहती है। अथवा इस केवलज्ञान का निरोधक जो सर्वघाति प्रकृतिरूप केवलज्ञानावरण है उसका इसमें सर्वथा क्षय रहता है इसीलिये इसे विशुद्ध कहा गया है अथवा अवधिज्ञान और मनःपर्यवज्ञान जिस प्रकार द्रव्यक्षेत्रादि की मर्यादा लेकर रूपी पदार्थ को जानते हैं उस प्रकार से यह मर्यादा लेकर पदार्थों को नहीं जानता है किन्तु मर्यादा रहित होकर ही यह

તે પૂર્ણરૂપે અથવા વિશુદ્ધરૂપે મનઃપર્યવજ્ઞાનને (મનની પર્યાયોને સાક્ષાત્ જાણનારા જ્ઞાનને) ઉત્પન્ન કરી શકતો નથી

અહીં "नो केवल उप्पाडेज्जा" આ પાઠ પણ યોજવો જોઇએ. તેના દ્વારા એવો વાચ્યાર્થ થાય છે કે જ્યાં સુધી આત્મા જ્ઞ પરિજ્ઞાથી આરંભ પરિગ્રહરૂપ બે સ્થાનોને જાણીને પ્રત્યાખ્યાન પરિજ્ઞાથી તેમનો પરિત્યાગ કરતો નથી, ત્યાં સુધી તે પરિપૂર્ણ અથવા વિશુદ્ધ કેવળજ્ઞાનને ઉત્પન્ન કરી શકતો નથી. કોઇ પણ જાતની મર્યાદા વિના રૂપી અને અરૂપી દ્રવ્યોને હસ્તામલક-વત્ (હાથમાં રહેલા આમળાની જેમ) સાક્ષાત્ જાણનારા જ્ઞાનને કેવળજ્ઞાન કહે છે. "केवलनाण" આ પદમાં જે કેવલ વિશેષણ છે તેના દ્વારા એ પ્રકટ કરવામાં આવ્યુ છે કે આ જ્ઞાન એવું હોય છે કે તેમાં મતિજ્ઞાન આદિ જ્ઞાનોની અપેક્ષા રહેતી નથી-એટલે કે તે જ્ઞાનોથી સહાયતાની આવશ્યકતા રહેતી નથી કેવળજ્ઞાનનું નિરોધક સર્વઘાતિ પ્રકૃતિરૂપ જે કેવળ જ્ઞાનાવરણ કર્મ છે, તેનો તેમા સર્વથા ક્ષય થયેલો રહે છે, તેથી તેને વિશુદ્ધ કહ્યુ છે. અવધિજ્ઞાન અને મન પર્યવજ્ઞાન તો દ્રવ્ય, ક્ષેત્ર, કાળ અને ભાવની મર્યાદામાં રહીને રૂપી પદાર્થોને જાણી શકે છે, પરન્તુ કેવળજ્ઞાનમાં આવી કોઇ મર્યાદા

दसाधारणम् , अनन्तम्-यद्वा-केवल-ज्ञेयानन्तत्वादनन्तम् , सच्च तज्ज्ञानं च केवलज्ञानं नोत्पादयतीति ।

इह 'केवलम्' इति विशेषणेन, केवलज्ञानस्य स्वरूपमात्रं प्रदर्शितम् ॥सू०८॥

कथं पुनः केवलिप्रज्ञप्तधर्मश्रवणादिलाभो भवेदित्याशङ्क्याह—

मूलम्—दो ठाणाइ परियाणित्ता आया केवलिपन्नत्तं धम्मं लभेज्ज सवणयाए, तं जहा आरंभे चेव, परिग्गहे चेव । एवं जाव केवलनाणमुप्पाडेज्जा ॥ सू० ९ ॥

द्वे स्थाने परिज्ञाय आत्मा केवलिप्रज्ञप्तं धर्मं लभते श्रवणतायै । तद् यथा-आरम्भश्चैव परिग्रहश्चैव । एवं यावत् केवलज्ञानमुत्पादयति ॥ सू० ९ ॥

टीका—'दो ठाणाइं परियाणित्ता' इत्यादि ।

द्वे स्थाने-वस्तुनी, परिज्ञाय=ज्ञपरिज्ञयाऽनर्थमूलमिति विदित्वा, प्रत्याख्यान-

रूपी अरूपी समस्त त्रिकालवर्ती पदार्थों को और उनकी पर्यायों को युगपत् जानता है इसीलिये इसे सकलप्रत्यक्ष कहा गया है अथवा केवलज्ञान जैसा और कोई दूसरा ज्ञान नहीं है, अतः यह असाधारण ज्ञान है अनन्तज्ञानरूप है अथवा-ज्ञेय अनन्त है इसलिये यह अनन्त है इस प्रकार से यहां केवल विशेषणसे केवलज्ञानका स्वरूपमात्र दिखलाया गया है॥

जीव केवलिप्रज्ञप्त धर्म का श्रवणादिरूप लाभ कैसे हो सकता है इसके लिये सूत्रकार कहते हैं-

"दो ठाणाइ परियाणित्ता आया" इत्यादि ॥ ९ ॥

टीकार्थ-आत्मा दो स्थानोंको जानकर केवलिप्रज्ञप्त धर्मको श्रवणादि

હોતી નથી. તે તો અપરિમિત (મર્યાદા વિહીન) રૂપી, અરૂપી સમસ્ત ત્રિકાળવર્તી પદાર્થોને અને તેમની પર્યાયોને એક સાથે જાણી શકે છે, તેથી તેને સકલપ્રત્યક્ષ કહેવામાં આવ્યું છે અથવા કેવળજ્ઞાન જેવું બીજું કોઈ જ્ઞાન નથી, તેથી તે અસાધારણ જ્ઞાન છે અને અનન્ત જ્ઞાનરૂપ છે અથવા જ્ઞેય (પદાર્થો) અનન્ત છે તેથી તે જ્ઞાન પણ અનન્ત છે આ રીતે અહીં કેવલ વિશેષણથી કેવળજ્ઞાનનું સ્વરૂપમાત્ર બતાવવામાં આવ્યું છે ॥ સૂ ૮ ॥

જીવ કેવલિ પ્રજ્ઞપ્ત ધર્મના શ્રવણાદિ રૂપ લાભ કેવી રીતે પ્રાપ્ત કરી શકે છે તે સૂત્રકાર હવે પ્રકટ કરે છે—

દો ઠાણાઇ પરિયાણિત્તા આયા ઇત્યાદિ ॥ ૯ ॥

આત્મા બે સ્થાનોને જાણીને કેવલિપ્રજ્ઞપ્ત ધર્મને શ્રવણાદિ રૂપે પ્રાપ્ત

परिज्ञया प्रत्याख्याय, आत्मा केवलिप्रज्ञप्तं धर्मं श्रवणतायै-श्रवणार्थं, लभते । ते द्वे स्थाने प्रदर्शयति-'तं जहा-इत्यादि । तद् यथा-आरम्भश्चैव, परिग्रहश्चैव । अयं भावः-आरम्भश्च परिग्रहश्चेत्युभे स्थाने परित्यज्य जिनोक्तो धर्मः श्रोतुं सुलभो भवतीति । 'एवं जाव' इत्यादि । एवं यावत् केवलज्ञानमुत्पादयति । इह यावच्छब्देन-पूर्वसूत्रात् पाठोऽनुसन्धेयः ॥ सू० ९ ॥

धर्मादिप्राप्तौ पुनर्द्वयं कारणान्तरमाह—

मूलम्--दोहिं ठाणेहिं आया केवलिपन्नत्तं धम्मं लभेज्ज सवणयाए । तं जहा-सोच्चा चेव, अभिसमेच्च चेव, जाव केवलनाणं उप्पाडेज्जा ॥ सू० १० ॥

छाया—द्वाभ्यां स्थानाभ्यां आत्मा केवलिप्रज्ञप्तं धर्मं लभते श्रवणतायै । तं जहा-श्रुत्वा चैव, यावत् केवलज्ञानमुत्पादयति ॥ सू० १० ॥

रूपसे प्राप्तकर लेता है अर्थात् दो स्थानोंको जाननेवाला आत्मा ही केवलि प्रज्ञप्त धर्म को सुनने के योग्य बन सकता है वे दो स्थान हैं आरम्भ और परिग्रह इसी तरह से वह यावत् केवलज्ञान को उत्पन्न कर सकता है तात्पर्य इस कथन का ऐसा है कि आत्मा ज्ञपरिज्ञा से आरम्भ एवं परिग्रह को अनर्थ का मूल जानकर और प्रत्याख्यान परिज्ञा से जब उनका त्याग कर देता है तभी उसे जिनोक्त धर्म सुनने के लिये सुलभ होता है इसी प्रकार से ऐसा ही आत्मा यावत् केवलज्ञान को सुलभ शान्ति उत्पन्न कर लेता है यहां यावत्पद से पूर्व सूत्र का समस्त पाठ गृहीत हुआ है ॥ सू०९ ॥

કરી લે છે. એટલે કે આરભ અને પરિગ્રહરૂપ બે સ્થાનોને જ્ઞ પરિજ્ઞાથી જાણીને પ્રત્યાખ્યાન દ્વારા તેમનો પરિત્યાગ કરનાર આત્મા જ કેવલિ પ્રજ્ઞપ્ત ધર્મને શ્રવણ કરવાને પાત્ર બને છે. એજ પ્રમાણે તે કેવળજ્ઞાન પર્યન્તના પૂર્વ સૂત્રોક્ત પદાર્થોને પ્રાપ્ત કરી શકે છે એટલે કે જ્યારે આત્મા જ્ઞ પરિજ્ઞાથી આરભ અને પરિગ્રહને અનર્થના મૂળ રૂપ જાણીને પ્રત્યાખ્યાન પરિજ્ઞાથી તેમનો પરિત્યાગ કરી દે છે, ત્યારે જ તે જિનોક્ત ધર્મનું સરળતાથી શ્રવણ કરી શકે છે, અને એવો જ આત્મા પૂર્વ સૂત્રોક્ત અણુગારિતા, સંયમ આદિ કેવળજ્ઞાન પર્યન્તના લાભોને પ્રાપ્ત કરી શકે છે અહીં "जाव" (યાવત્) પદથી પૂર્વસૂત્રનો સમસ્ત પાઠ ગ્રહણ કરવો જોઇએ. ॥ સૂ ૯ ॥

टीका—' दोहिं ठाणेहिं ' इत्यादि ।

श्रुत्वा—केवलिप्रज्ञप्तस्य धर्मस्योपादेयतामाकर्ण्य अभिसमेत्य-सां इदिसपार्य। अथ मातः-धर्मोपादेयतायाः श्रवण, हृदि धारण चेति द्वे स्थाने धर्मश्रवणस्य कारणमिति ।

उक्तं च-" सद्धर्मश्रवणादेव, नरो विगतकल्मषः ।

ज्ञाततत्त्वो महासत्त्व', पर संवेगमागतः ॥ १ ॥

धर्मोपादेयतां ज्ञात्वा, सजातेच्छोऽम भावतः ।

दृढं स्वशक्तिमालोच्य, ग्रहणे सम्प्रवर्तते ॥ २ ॥ "

धर्मादि प्राप्ति में कारणान्तर द्वय का कथन–

" दोहिं ठाणेहिं आया केवलिपन्नत्त धम्म लमेज्ज सवणयाए " इत्यादि ॥ १० ॥

टीकार्थ–आत्मा दो स्थानोंके द्वारा केवलिप्रज्ञप्त धर्मको पा लेता है, वे दो स्थानरूप कारण है एक श्रवण और दूसरा हृदय में उसका अवधारण इसका तात्पर्य ऐसा है कि आत्मा केवलि प्रज्ञप्त धर्म उपादेय है " ऐसा जब सुनता है तो इस श्रवणमात्रसे वह केवलिप्रज्ञप्त धर्मको ग्रहण नहीं कर लेता है, अतः इसके लिये आवश्यकता है उसे हृदयमें अवधारण करने की इसीलिये यहां केवलि प्रज्ञप्त धर्म को प्राप्त करने के लिये इन दो कारणोंका निर्देश किया गया है उक्तं च–" सद्धर्मश्रवणादेव " इत्यादि

जिनोक्त सच्चे धर्म सुननेसे (धर्म का श्रवण करने से) मनुष्य कल्मष (पाप) विहीन हो जाता है क्यों कि वह उसके द्वारा हेय

ધર્માદિની પ્રાપ્તિના નિમિત્તરૂપ અન્ય બે સ્થાનોનું નિરૂપણ—

' दो हिं ठाणेहिं आया केवलिपण्णत्त धम्म लभेज्ज सवणयाए " ઇત્યાદિ ૧૦

આત્મા બે સ્થાનો દ્વારા કેવલિ પ્રજ્ઞપ્ત ધર્મને પ્રાપ્ત કરે છે તે બે સ્થાન રૂપ કારણ નીચે પ્રમાણે છે–(૧) શ્રવણ અને (૨) તેને હૃદયમાં અવધારણ કરીને. આ કથનનું તાત્પર્ય નીચે પ્રમાણે છે—

' કેવલિ પ્રજ્ઞપ્ત ધર્મ ઉપાદેય છે ", એવું કથન જ્યારે આત્મા સાંભળે છે, ત્યારે એટલા કથનના શ્રવણ માત્રથી જ તે કેવલિપ્રજ્ઞપ્ત ધર્મને ગ્રહણ કરી લેતો નથી, તેને માટે તો આવશ્યક વસ્તુ તો એ છે કે તેને હૃદયમાં અવધારણ કરવો જોઇએ. તેથી જ સૂત્રકારે કેવલિપ્રજ્ઞપ્ત ધર્મને પ્રાપ્ત કરવા માટે અહીં આ બે કારણોનો નિર્દેશ કર્યો છે. કહ્યું પણ છે કે—' सद्धर्मश्रवणादेव' ઇત્યાદિ

જિનોક્ત ધર્મનું શ્રવણ કરવાથી મનુષ્ય કલ્મષ (પાપ રૂપ મલિનતા) થી વિહીન બની જાય છે, કારણ કે તેના દ્વારા તે હેય અને ઉપાદેયના તત્ત્વજ્ઞાનથી

'जाव' इति इह यावच्छब्देन-'दोहिं ठाणेहिं आया केवलं बोहिं बुज्झेज्जा' इत्यादि । 'जाव केवलनाणं उप्पाडेज्जा' इति पर्यन्तं बोध्यम् ॥ सू० १० ॥

केवलज्ञानं च कालविशेषे भवतीति तमाह—

मूलम्--दो समाओ पन्नत्ताओ । तं जहा-ओसप्पिणी समा चेव, उस्सप्पिणी समा चेव ॥ सू० ११ ॥

छाया—द्वे समे प्रज्ञप्ते । तद् यथा-अवसर्पिणी समा चैव, उत्सर्पिणी समा चैव ॥ सू० ११ ॥

टीका—'दो समाओ' इति ।

समा—कालविशेषः । अन्यत् सुगमम् ॥ सू० ११ ॥

और उपादेय के तत्त्वज्ञान से संपन्न बन जाता है जब आत्मा में हेयोपादेय का तात्त्विक ज्ञान जागृत हो जाता है तब आत्मा में एक प्रकार का ऐसा आत्मिक बल प्रकट होता है कि जिससे इसे परम संवेग उत्पन्न होता है "संसारात् भीतिसंवेगः" संवेग उत्पन्न होने से फिर यह धर्म को जीवन में उतारने की ऐसी दृढ इच्छा वाला बन जाता है कि जिससे वह अपनी शक्ति के अनुसार धर्म को ग्रहण ही कर लेता है यहां यावत्शब्द से "दोहिं ठाणेहिं आया केवलं बोहिं बुज्झेज्जा" इस पाठ से लेकर "जाव केवलनाणं उप्पाडेज्जा" इस पाठ तक का ग्रहण हुआ है ॥ सू० १० ॥

केवलज्ञान कालविशेष में होता है इसलिये अब उसी कालविशेष को सूत्रकार कहते हैं-"दो समाओ पन्नत्ताओ" इत्यादि ॥११॥

समा नाम कालविशेष का है और यह कालविशेष उत्सर्पिणी

યુક્ત બની જાય છે જ્યારે આત્મામા હેયોપાદેયનુ તાત્વિક જ્ઞાન જાગૃત થઈ જાય છે ત્યારે આત્માની અંદર એક જાતનુ આત્મબળ પ્રકટ થાય છે અને તેના દ્વારા તેના આત્મામા પરમ સવેગ ઉત્પન્ન થાય છે "ससारात् भीति सवेग" સવેગ ઉત્પન્ન થવાથી તે ધર્મને જીવનમાં ઉતારવાને દૃઢ નિશ્ચયી બને છે તેથી તે પોતાની શક્તિ અનુસાર ધર્મને ગ્રહણ કરી લે છે અહીં "जाव (यावत्" પદથી "दोहिं ठाणेहिं आया केवला बोहिं बुज्झेज्जा" આ પાઠથી શરૂ કરીને "जाव केवलनाणं उप्पाडेज्जा" આ સૂત્રપાઠ પર્યન્તનો પાઠ ગ્રહણ કરવામાં આવ્યો છે ॥ સૂ० ૧૦ ॥

કેવળજ્ઞાન કાળવિશેષમાં જ થાય છે, તેથી હવે સૂત્રકાર તે કાળવિશેષની પ્રરૂપણા કરે છે—"दो समाओ पण्णत्ताओ" ઇત્યાદિ ॥ ૧૧ ॥

કાળવિશેષનુ નામ "સમા" (સમય) છે. તે કાળવિશેષના બે ભેદ છે.

टीका—' दोहिं ठाणेहिं ' इत्यादि ।

श्रुत्वा—केवेलिप्रज्ञप्तस्य धर्मस्योपादेयतामाकर्ण्य अभिसमेत्य—चांहृदिसधार्य। अय भावः–धर्मोपादेयतायाः श्रवणं, हृदि धारणं चेति द्वे स्थाने धर्मश्रवणस्य कारणमिति ।

उक्त च–" सद्धर्मश्रवणादेव, नरो विगतकल्मषः ।
ज्ञाततत्त्वो महासत्त्वः, परं संवेगमागतः ॥ १ ॥
धर्मोपादेयता ज्ञात्वा, समातेच्छोत्र भावतः ।
हढं स्वशक्तिमासोव्य, ग्रहणे संप्रवर्तते ॥ २ ॥ "

धर्मादि प्राप्ति में कारणान्तर द्वय का कथन–

" दोहिं ठाणेहिं आया केवलिपन्नत्त धम्मं लभेज्जा सवणयाए " इत्यादि ॥ १० ॥

टीकार्थ–आत्मा दो स्थानोंकि द्वारा केवलिप्रज्ञप्त धर्मको पा लेता है, वे दो स्थानरूप कारण है एक श्रवण और दूसरा हृदय में उसका अवधारण इसका तात्पर्य ऐसा है कि आत्मा केवलि प्रज्ञप्त धर्म उपादेय है " ऐसा जब सुनता है तो इस श्रवणमात्रसे वह केवलिप्रज्ञप्त धर्मको ग्रहण नहीं कर लेता है, अतः इसके लिये आवश्यकता है उसे हृदयमें अवधारण करने की इसीलिये यहां केवलि प्रज्ञप्त धर्म को प्राप्त करने के लिये इन दो कारणोंका निर्देश किया गया है उक्त च–" सद्धर्मश्रवणादेव " इत्यादि

जिनोक्त सच्चे धर्म सुननेसे (धर्म का श्रवण करने से) मनुष्य कल्मष (पाप) विहीन हो जाता है क्यों कि वह उसके द्वारा हेय

धर्मादिनी प्राप्तिना निमित्तरूप अन्य બે સ્થાનોનું નિરૂપણ—

" दो हिं ठाणेहिं आया केवलिपण्णत्त धम्मं लभेज्ज सवणयाए " ઇત્યાદિ ૧૦

આત્મા બે સ્થાનો દ્વારા કેવલિ પ્રજ્ઞપ્ત ધર્મ ને પ્રાપ્ત કરે છે તે બે સ્થાન રૂપ કારણ નીચે પ્રમાણે છે–(૧) શ્રવણ અને (૨) તેને હૃદયમાં અવધારણ કરીને. આ કથનનું તાત્પર્ય નીચે પ્રમાણે છે—

" કેવલિ પ્રજ્ઞપ્ત ધર્મ ઉપાદેય છે ", એવું કથન જ્યારે આત્મા સાંભળે છે, ત્યારે એટલા કથનના શ્રવણ માત્રથી જ તે કેવલિપ્રજ્ઞપ્ત ધર્મને ગ્રહણ કરી લેતો નથી, તેને માટે તો આવશ્યક વસ્તુ તો એ છે કે તેને હૃદયમાં અવધારણ કરવો જોઇએ તેથી જ સૂત્રકારે કેવલિપ્રજ્ઞપ્ત ધર્મને પ્રાપ્ત કરવા માટે અહીં આ બે કારણોનો નિર્દેશ કર્યો છે. કહ્યું પણ છે કે—" सद्धर्मश्रवणादेव " ઇત્યાદિ

જિનોક્ત ધર્મનું શ્રવણ કરવાથી મનુષ્ય કલ્મષ (પાપ રૂપ મલિનતા) થી વિહીન બની જાય છે, કારણ કે તેના દ્વારા તે હેય અને ઉપાદેયના તત્ત્વજ્ઞાનથી

तयोर्मध्ये योऽसौ यक्षावेशेन भवति, स सुखवेदनतरक एव-अतिसुखेन मोहजन्योन्मादापेक्षया अक्लेशेन वेदनम्-अनुभवनं यस्यासौ सुखवेदनतरः स एव सुखवेदनतरकः। तथा-अतिशयेन सुखेन विमोचनं-वियोजनं, यस्याऽसौ सुखविमोचनतरः। स एव सुखविमोचनतरकः विद्यामन्त्रतंत्रादिमात्रसाध्यत्वात् इत्येवं द्विविधो भवति। तत्र खलु यः उन्मादो मोहनीयस्य कर्मण उदयेन जायते, स खलु दुःखवेदनतरो भवति, ऐकान्तिकातिशयितभ्रमस्वभावतयाऽत्यन्तविपरीतप्रवृत्तिनिमित्तत्वेनाऽनन्तभवभ्रमणकारणत्वात्, तथाऽऽभ्यन्तरकारणोत्पन्नत्वेन मन्त्राद्यसाध्यत्वात्

हो जाता है और उससे चित्त में जो असावधानी आ जाती है, वही यक्षावेशजन्य उन्माद है तथा दर्शनमोहनीयादि कर्म के उदय से जो उन्माद विपरीत परिणाम होता है वह दर्शनमोहनीय कर्म जन्य उन्माद है इनमें जो उन्माद यक्षावेश से जन्य होता है वह " सुह वेयणतराए चेव " सुखवेदनतरक ही होता है अर्थात् मोहजन्य उन्माद की अपेक्षा वह यक्षावेशजन्य उन्माद अक्लेशसे है अनुभव जिनका ऐसा होता है तथा- सुखविमोचनतरक विद्यामन्त्रादि से साध्य होने के कारण अच्छी तरह से छुड़ाने के योग्य होता है अर्थात् यक्षावेश जन्य जो उन्माद होता है वह विद्यामन्त्र आदि के प्रभाव से छूट जाता है परन्तु जो मोहजन्य उन्माद होता है वह यक्षावेशजन्य उन्माद की अपेक्षा दुःखवेदनतरक होता है क्यों कि दर्शनमोहनीय जन्य उन्माद आत्मा में विपरीत परिणतिरूप होता है इससे आत्मा अनात्मभूत पदार्थों में लु-

---

ચિત્તમાં જે અસાવધાની આવી જાય છે, તેને યક્ષાવેશજન્ય ઉન્માદ કહે છે પરન્તુ દર્શનમોહનીય કર્મના ઉદયથી ચિત્તમાં વિપરીત પરિણામ રૂપ જે ઉન્માદ પેદા થાય છે તેને દર્શનમોહનીય કર્મજન્ય ઉન્માદ કહે છે આ બન્ને ઉન્માદોમાં જે પહેલા પ્રકારનો યક્ષાવેશજન્ય ઉન્માદ છે તે " सुहवेयणतराएचेव " સુખવેદન તરક જ હોય છે. એટલે કે મોહજન્ય ઉન્માદ કરતા યક્ષાવેશજન્ય ઉન્માદનો અનુભવ વધારે અકલેશજનક હોય છે વળી યક્ષાવેશજન્ય ઉન્માદ સુખવિમોચન તરક હોય છે, સરળતાથી દૂર કરી શકાય એવો હોય છે કારણ કે યક્ષાવેશ જન્ય જે ઉન્માદ હોય છે તે વિદ્યા, મંત્ર આદિ દ્વારા સરળતાથી દૂર કરી શકાય એવો હોય છે, પરન્તુ જે મોહજન્ય ઉન્માદ છે તે યક્ષાવેશ જન્ય ઉન્માદ કરતા દુખવેદનતરક-વધારે દુખપૂર્વક વેદન કરવા યોગ્ય હોય છે, કારણ કે દર્શનમોહનીય જન્ય ઉન્માદ આત્મામા વિપરીત પરિણતિરૂપ હોય છે. તેથી આત્મા અનાત્મભૂત પદાર્થોમા લોભાઇને ઇષ્ટ-અનિષ્ટની કલ્પના-

केवलज्ञानमुन्मादक्षये सत्येव भवति, अतः सामान्येन उन्मादं प्ररूपयितुमाह-

मूलम्--दुविहे उम्माए पन्नत्ते । तं जहा जक्खावेसेण चेव, मोहणिज्जस्स चेव कम्मस्स उदएणं । तत्थ णं जे से जक्खावेसेण, से सुहवेयणतराए चेव, सुहविमोयणतराए चेव । तत्थ णं जे से मोहणिज्जस्स कम्मस्स उदएणं से णं दुहवेयणतराए चेव, दुहविमोयणतराए चेव ॥ सू० १२ ॥

छाया—द्विविध उन्मादः प्रज्ञप्तः । तद्यथा-यक्षावेशेन चैव, मोहनीयस्य चैव कर्मण उदयेन तत्र खलु योऽसौ यक्षावेशेन, स खलु सुखवेदनतरकश्चैव, सुखविमोचनतरकश्चैव । तत्र खलु योऽसौ मोहनीयस्य कर्मण उदयेन, स खलु दुःखवेदनतरकश्चैव, दुःखविमोचनतरकश्चैव ॥ सू० १२ ॥

टीका—' दुविहे उम्माए ' इत्यादि—

उन्मादः-चित्तविक्षेपः, स द्विविधः प्रज्ञप्तः । तद् यथा-यक्षावेशेन-यक्षो देवस्तस्याऽऽवेशः-मनुष्यादिशरीरेऽधिष्ठानं तेन, य उन्मादः, स इत्येकः । तथा-मोहनीयस्य-दर्शनमोहनीयाद कर्मण उदयेन, य उन्मादः, सोऽन्य इति । तत्र-

और अवसर्पिणी के भेद से दो प्रकार का है काल का इस विषय का कथन पहिले किया जा चुका है ॥ सू०११॥

केवलज्ञान उन्माद के क्षय होने पर ही होता है अतः अब सूत्रकार सामान्यरूप से उन्माद की प्ररूपणा करते हैं-

" दुविहे उम्माए पन्नत्ते " इत्यादि ॥१२॥

चित्तविक्षेप का नाम उन्माद है यह उन्माद दो प्रकार का कहा गया है एक यक्षावेशसे हुआ उन्माद और दूसरा दर्शनमोहनीय कर्म के उदय से हुआ उन्माद, मनुष्यादि शरीर में जो देव का अधिष्ठान

(१) उत्सर्पिणीકાળ અને (२) અવસર્પિણીકાળ. આ વિષયનું વિશેષ કથન પહેલાં કરવામાં આવી ગયું છે ॥ સૂ० ૧૧ ॥

ઉન્માદનો ક્ષય થવાથી જ કેવળજ્ઞાન ઉત્પન્ન થાય છે તેથી સૂત્રકાર હવે સામાન્યરૂપે ઉન્માદની પ્રરૂપણા કરે છે "દુવિહે ઉમ્માએ પણ્ણત્તે" ઇત્યાદિ ॥૧૨॥

ચિત્તવિક્ષેપને ઉન્માદ કહે છે તે ઉન્માદના બે પ્રકાર કહ્યા છે-(૧) યક્ષાવેશ દ્વારા ઉત્પન્ન થયેલો ઉન્માદ અને (૨) દર્શન મોહનીય કર્મના ઉદયથી ઉત્પન્ન થયેલો ઉન્માદ. મનુષ્યાદિના શરીરમાં કોઇ દેવાદિનો પ્રવેશ થાય છે અને તેને લીધે તેના

उन्मादे सति प्राणी प्राणातिपातादिरूपे दण्डे प्रवर्तते, दण्डभाजनं वा भवतीतिदण्डं निरूपयति—

मूलम्--दो दंडा पन्नत्ता । तं जहा-अट्ठादंडे चेव, अणट्ठादंडे चेव । नेरइयाणं दो दंडा पन्नत्ता, तं जहा-अट्ठादंडे य, अणट्ठादंडे य। एवं चउवीसादंडओ, जाव विमाणियाणं ॥ सू० १३ ॥

छाया-द्वौ दण्डौ प्रज्ञप्तौ । तद् यथा-अर्थदण्डश्चैव, अनर्थदण्डश्चैव । नैरयिकाणां द्वौ दण्डौ प्रज्ञप्तौ, तं जहा-अर्थदण्डश्च अनर्थदण्डश्च । एवं चतुर्विंशतिदण्डकः, यावद् वैमानिकानाम् ॥ सू० १३ ॥

टीका' दो दंडा पन्नत्ता ' इत्यादि—

द्वौ दण्डौ प्रज्ञप्तौ-प्ररूपितौ भगवता । दण्डः प्राणातिपातादिः, स द्विविध इत्यर्थः । दण्डशब्दार्थः आवश्यकसूत्रस्य मत्कृतायां मुनितोषिणी टीकाया-

---

संसार दुःखरूप ही है इसलिये भी यह दुःखवेदनतर है तथा यह उन्माद जीव के साथ भव २ में जाता है अतः एक भविक यक्षजन्य उन्माद की अपेक्षा यह दुःख वेदनतरक है और यक्षजनित उन्माद इस की अपेक्षा सुखवेदनतरक है ॥सू० १२॥

उन्माद के होने पर प्राणी प्राणातिपातादिरूप दण्ड में प्रवृत्ति करता है अथवा दण्डका पात्र होता है-इसी विषय की अब सूत्रकार प्ररूपणा करते हैं-" दो दंडा पन्नत्ता " इत्यादि ॥१३॥

दण्ड शब्द से यहां प्राणातिपात आदिकों का ग्रहण हुआ है यह दण्ड दो प्रकार का है दण्डशब्द का अर्थ आवश्यक सूत्र पर जो मेरी की हुई मुनितोषिणी टीका है, उसमें विवेचित हुआ है अतः वहां से

બને છે સંસાર તો દુઃખરૂપ જ છે, તેથી પણ તેને દુઃખવેદનતરક કહ્યો છે આ ઉન્માદનો સંબંધ જીવની સાથે ભવ ભવમાં રહે છે તેથી એક ભવિક યક્ષજન્ય ઉન્માદ કરતા મોહનીયજન્ય ઉન્માદને દુઃખવેદનતરક કહ્યો છે યક્ષ જન્ય ઉન્માદ મોહનીયજન્ય ઉન્માદ કરતા સુખવેદનતરક હોય છે ॥ સૂ૦ ૧૨॥

ઉન્માદયુક્ત અવસ્થામા જ જીવ પ્રાણાતિપાત આદિ રૂપ દંડમા પ્રવૃત્ત થાય છે અથવા દંડને પાત્ર બને છે. તેથી સૂત્રકાર હવે દંડની પ્રરૂપણા કરે છે.

" दो दंडा पण्णत्ता " ઇત્યાદિ ॥ ૧૩ ॥

દંડ શબ્દ દ્વારા અહીં પ્રાણાતિપાત આદિને ગ્રહણ કરવામા આવેલ છે. આ દંડના બે પ્રકાર છે દંડ શબ્દનો અર્થ, મારા દ્વારા આવશ્યક સૂત્રની

कर्मक्षयोपशमादिभिरेवनिवार्यत्वात् । संसारस्य च दुःखवेदनस्वभावत्वात् । मोहमोन्मादादन्यो यक्षजनितोन्मादः सुखवेदनतर एव एकभविकत्वादिति ॥ सू० १२

माता हुआ इष्टानिष्ट की कल्पना से आप को सुखी दुःखी मानने लगता है जो पदार्थ अपने नहीं है इन्हें अपना मानता है और जो अपने हैं उन्हें अपने नहीं मानता है रागादिक जो प्रकट में दुःखों देनेवाले हैं उनकी ही सेवा करता हुआ अपने को सुखी मानता है शुभ और अशुभ कर्म के फल में रति और अरति करता हुआ अपने निजके पद को भूल जाता है इस तरह से इस जीव की दर्शन मोहनीयकर्म के उदय से विपरीत परिणति बन जाती है तात्पर्य यही है कि यह इसके सद्भाव से सम्यग्दृष्टि नहीं बन पाता है इस कारण इस प्रकार की प्रवृत्ति इस के लिये अनन्त भवभ्रमण का कारण बनती है क्यों कि जबतक इस प्रकार की विपरीत परिणति रूप दर्शनमोहनीय जन्य उन्माद का उदय जीव को रहता है तबतक यह जीव चारों गतियों में जन्ममरण के दुःखो को उठाता रहता है-यही इस उन्माद में दुःखवेदनतरकता है तथा यह उन्माद दर्शनमोहनीय कर्मके क्षय क्षयोपशमादिसे ही हटाया जा सकता है विद्यामन्त्रादि के प्रभाव से नहीं इसलिये भी यह दुःख वेदनतरक है तथा-यह उन्माद संसार का ही कारण होता है और

જીવ પોતાને સુખીદુઃખી માનવા લાગે છે જે પદાર્થો પોતાના નથી તેમને તે પોતાના માને છે અને જે પદાર્થો પોતાના છે તેમને તે પારકાં માને છે દુઃખના કારણભૂત રાગાદિકોની સેવા કરવામાં જ તે સુખ માને છે એવો માણસ શુભ અને અશુભ કર્મના ફળમાં રતિ અને અરતિ કરતો થકો પોતાના નિજના પદને ભૂલી જાય છે. આ રીતે દર્શનમોહનીય કર્મના ઉદયથી તે જીવ વિપરીત પરિણતિવાળો બની જાય છે કહેવાનું તાત્પર્ય એ છે કે આ પ્રકારના ઉન્માદવાળો જીવ સમ્યગ્દષ્ટિ બની શકતો નથી તે કારણે તેની આ પ્રકારની પ્રવૃત્તિ તેને માટે અનન્ત ભવભ્રમણનું કારણ બને છે કારણ કે જ્યાં સુધી તે જીવમાં દર્શનમોહનીય જન્ય આ પ્રકારની વિપરીત પરિણતિનો સદ્ભાવ રહે છે ત્યાં સુધી તે ચારે ગતિઓમાં જન્મમરણ રૂપ દુઃખોને સહન કરતો રહે છે એજ આ ઉન્માદમાં દુઃખવેદન તરકતા છે આ ઉન્માદને દર્શનમોહનીયના ક્ષય અને ક્ષયોપશમાદિ દ્વારા જ દૂર કરી શકાય છે વિદ્યામન્ત્રાદિના પ્રભાવથી આ પ્રકારનો ઉન્માદ દૂર કરી શકાતો નથી, તેથી પણ તેને દુઃખ વેદનતરક કહેવામાં આવેલ છે તથા આ ઉન્માદ સંસારની વૃદ્ધિના કારણરૂપ

भवति। स एव तेषामर्थदण्डः, अन्यथात्वनर्थदण्डः। अथवा—भवान्तरीयो योऽर्थदण्डादिपरिणामस्तदपेक्षया दण्डद्वयं पृथिव्यादीनां बोध्यम् ॥ सू० १३ ॥

स चायं दण्ड· सम्यग्दर्शनादित्रयवतां न भवतीत्यतस्तत्त्रितयनिरूपणं कर्तुमिच्छन् पूर्वं सामान्येन दर्शनस्वरूपं निरूपयति—

मूलम्—दुविहे दंसणे पन्नत्ते। तं जहा,सम्मदंसणे चेव, मिच्छादंसणे चेव। सम्मदंसणे दुविहे पन्नत्ते। तं जहा-णिसग्गसम्मदंसणे चेव, अभिगमसम्मदंसणे चेव। णिसग्गसम्मदंसणे दुविहे पन्नत्ते। तं जहा-पडिवाई चेव, अपडिवाई चेव। अभिगमसम्मदंसणे दुविहे पन्नत्ते। तं जहा पडिवाई चेव, अप्पडिवाई चेव। मिच्छादंसणे दुविहे पन्नत्ते। तं जहा-अभिग्गहियमिच्छादंसणे चेव, अणभिगहियमिच्छादंसणे चेव। अभिग्गहियमिच्छादंसणे दुविहे पन्नत्ते तं जहा-सपज्जवसिए चेव, अपज्जवसिए चेव। एवमणभिगहियमिच्छादंणेऽवि ॥ सू० १४ ॥

छाया—द्विविधं दर्शनं प्रज्ञप्तम्। तद् यथा—सम्यग्दर्शनं चैव, मिथ्यादर्शनं चैव। सम्यग्दर्शनं द्विविधं प्रज्ञप्तम्। तद् यथा—निसर्गसम्यग्दर्शनं चैव, अभिगमसम्यग्दर्शनं चैव। निसर्गसम्यग्दर्शनं द्विविधं प्रज्ञप्तम्। तं जहा—प्रतिपातिचैव, अप्रतिपाति चैव। अभिगमसम्यग्दर्शनं द्विविधं प्रज्ञप्तम्। तद् यथा—प्रतिपाति चैव, अप्रतिपाति चैव। मिथ्यादर्शनं द्विविधं प्रज्ञप्तम्। तद् यथा—अभिग्रहिकमिथ्यादर्शनं चैव, अनभिग्रहिकमिथ्यादर्शनं चैव। अभिग्रहिकमिथ्यादर्शनं द्विविधं प्रज्ञप्तम्। तद् यथा—सपर्यवसितं चैव, अपर्यवसितं चैव। एवमनभिग्रहिकामिथ्यादर्शनमपि॥ १४॥

पर जीवों का उपघात होता है तद्रूप अर्थ दण्ड होता है इससे अतिरिक्त वहां अनर्थ दण्ड होता है अथवा भवान्तरीय जो अर्थदण्डादिरूप उनका परिणाम है उस अपेक्षा से दण्डद्वय पृथिव्यादिकों के होते हैं ऐसा जान लेना चाहिये ॥ सू० १३ ॥

ગ્રહણ કરવામા જીવોનો જે ઉપઘાત થાય છે, તે ઉપઘાત રૂપ અર્થ દંડનો સદ્‌ભાવ હોય છે તદુપરાંત તેઓમાં અનર્થ દંડનો પણ સદ્‌ભાવ હોય છે. અથવા ભવાન્તરીય જે અર્થ દંડાદિ રૂપ તેમનું પરિણામ છે, તે દૃષ્ટિએ એમ સમજવુ જોઇએ કે પૃથ્વીકાય આદિમા પણ બન્ને પ્રકારના દંડનો સદ્‌ભાવ હોય છે. ॥ સૂ૦ ૧૩ ॥

मयलोकनीय । केन प्रकारेण द्वौ दण्डौ प्ररूपितौ ? त प्रदर्शयति–'तं जहा' इत्यादि । अर्थदण्डः=अर्थाय इन्द्रियादिप्रयोजनाय दण्डः, यस्तु निष्प्रयोजनो दण्डः, स अनर्थदण्ड इति । उक्तरूपमेव दण्डं सर्वजीवेषु चतुर्विंशतिदण्डकेन निरूपयति–'नेरइयाण' इत्यादि । नैरयिकाणामर्थदण्डोऽनर्थदण्डश्चेति द्वौ दण्डौ भवतः । एवम्=नैरयिकवत् अर्थदण्डानर्थदण्डाभिलापेन चतुर्विंशतिदण्डको बोद्धव्य । एवमेतावान् विशेषः–नैरयिकाणामर्थदण्डः स्वशरीररक्षार्थमन्यस्योपहननम्, अनर्थदण्डस्तु प्रद्वेषकरणादेव भवति । पृथिव्यादीनां तु अनाभोगेनाप्याहारकग्रहणे जीवोपघातो

इसे जान लेना चाहिये दण्ड के ये दो प्रकार इस तरह से हैं–" अट्ठा दंडे चेव अणट्ठादंडे चेव " एक अर्थ दण्ड और दूसरा अनर्थ दण्ड इनमें इन्द्रियादि प्रयोजन के निमित्त जो दण्ड है वह अर्थ दण्ड है। तथा निष्प्रयोजन जो दण्ड है वह अनर्थ दण्ड है इसी दण्ड का सर्व जीवों में चतुर्विंशतिदण्ड द्वारा अब सूत्रकार प्ररूपण करते हैं " नेरइयाण " इत्यादि–

नैरयिक जीवों में दो दण्ड होते हैं एक अर्थदण्ड और दूसरा अनर्थदण्ड नैरयिक की तरह ही अर्थदण्ड और अनर्थ के अभिलाप से चतुर्विंशतिदण्डक जानना चाहिये विशेषता इसमें केवल ऐसी ही है कि नैरयिकों में जो अर्थदण्ड है वह अपने शरीर की रक्षा के लिये अन्य नारकियों का उपहननरूप है तथा अनर्थदण्ड, व्यर्थ के प्रद्वेष करने रूप है तथा पृथिव्यादिक जीवों में अनाभोग से भी जो आहारग्रहण करने

જે મુનિતોષિણી ટીકા લખવામાં આવી છે, તેમાં આપેલ છે તેથી જિજ્ઞાસુ પાઠકોએ ત્યાંથી તે વાંચી લેવો દંડના પ્રકાર નીચે પ્રમાણે છે—

" अट्ठा दंडे चेव अणट्ठा दंडे चेव " (૧) અર્થ દંડ અને (૨) અનર્થ દંડ. ઇન્દ્રિયાદિ પ્રયોજનને નિમિત્તે જે પ્રાણાતિપાતાદિ રૂપ દંડ થાય છે, તેને અર્થ દંડ કહે છે પણ નિ પ્રયોજનયુક્ત જે દંડ હોય છે તેને અનર્થ દંડ કહે છે હવે આ દંડનું સમસ્ત જીવોમાં ૨૪ દંડક દ્વારા સૂત્રકાર નિરૂપણ કરે છે– નેરइयाणं ' ઇત્યાદિ નારકોમાં બે દંડ હોય છે (૧) અર્થ દંડ અને (૨) અનર્થ દંડ. એજ અભિલાપ ક્રમથી ચોવીસે દંડકોના જીવોમાં–વૈમાનિકો પર્યન્તના જીવોમાં અર્થ દંડ અને અનર્થ દંડના સદ્ભાવનું કથન થવું જોઈએ. અર્થ દંડ અને અનર્થ દંડની અપેક્ષાએ નારકોમાં આ પ્રમાણે વિશેષતા છે. નારકોમાં પોતાના શરીરની રક્ષાને માટે અર્થ દંડ થતો હોય છે અને તે અન્ય નારકોના ઉપહનન રૂપ હોય છે અને ત્યાં વ્યર્થ પ્રદ્વેષ કરવા રૂપ અનર્થ દંડનો સદ્ભાવ હોય છે પૃથ્વીકાય આદિ જીવોમાં અનાભોગ રૂપે આહાર

भवति । स एव तेषामर्थदण्डः, अन्यथाऽनर्थदण्डः । अथवा–भवान्तरीयो योऽर्थ-दण्डादिपरिणामस्तदपेक्षया दण्डद्वयं पृथिव्यादीनां बोध्यम् ॥ सू० १३ ॥

स चायं दण्ड. सम्यग्दर्शनादित्रयवतां न भवतीत्यतस्तत्त्रितयनिरूपणं कर्तुमिच्छन् पूर्वं सामान्येन दर्शनस्वरूपं निरूपयति—

मूलम्—दुविहे दंसणे पन्नत्ते । तं जहा,सम्मद्दंसणे चेव, मिच्छादंसणे चेव । सम्मद्दंसणे दुविहे पन्नत्ते । तं जहा-णिसग्गसम्मद्दंसणे चेव, अभिगमसम्मद्दंसणे चेव । णिसग्गसम्मद्दंसणे दुविहे पन्नत्ते । तं जहा-पाडिवाई चेव, अपडिवाई चेव । अभिगमसम्मद्दंसणे दुविहे पन्नत्ते । तं जहा पाडिवाई चेव, अप्पडिवाई चेव । मिच्छादंसणे दुविहे पन्नत्ते । तं जहा-अभिग्गहियमिच्छादंसणे चेव, अणभिगहियमिच्छादंसणे चेव । अभिग्गहियमिच्छादंसणे दुविहे पन्नत्ते तं जहा-सपज्जवसिए चेव, अपज्जवसिए चेव । एवमणभिगहियमिच्छादंणेऽवि ॥ सू० १४ ॥

छाया—द्विविधं दर्शनं प्रज्ञप्तम् । तद् यथा–सम्यग्दर्शनं चैव, मिथ्यादर्शनं चैव । सम्यग्दर्शनं द्विविधं प्रज्ञप्तम् । तद् यथा–निसर्गसम्यग्दर्शनं चैव, अभिगमसम्यग्दर्शनं चैव । निसर्गसम्यग्दर्शनं द्विविधं प्रज्ञप्तम् । तं जहा–प्रतिपातिचैव, अप्रतिपाति चैव । अभिगमसम्यग्दर्शनं द्विविधं प्रज्ञप्तम् । तद् यथा–प्रतिपाति चैव, अप्रतिपाति चैव । मिथ्यादर्शनं द्विविध प्रज्ञप्तम् । तद् यथा–अभिग्रहिकमिथ्यादर्शनं चैव, अनभिग्रहिकमिथ्यादर्शनं चैव । अभिग्रहिकमिथ्यादर्शनं द्विविधं प्रज्ञप्तम् । तद् यथा–सपर्यवसितं चैव, अपर्यवसितं चैव । एवमनभिग्रहिकमिथ्यादर्शनमपि॥ १४॥

पर जीवों का उपघात होता है तद्रूप अर्थ दण्ड होता है इससे अतिरिक्त वहां अनर्थ दण्ड होता है अथवा भवान्तरीय जो अर्थदण्डादिरूप उनका परिणाम है उस अपेक्षा से दण्डद्वय पृथिव्यादिकों के होते हैं ऐसा जान लेना चाहिये ॥ सू० १३ ॥

ग्रहणु करवामा जीवोनो जे उपघात थाय छे, ते उपघात रूप अर्थ दंडनो सद्भाव होय छे तदुपरांत तेओमा अनर्थ दंडनो पण सद्भाव होय छे. अथवा भवान्तरीय जे अर्थ दंडादि रूप तेमनुं परिणाम छे, ते दृष्टिए एम समजवु जोइए के पृथ्वीकाय आदिमां पण बन्ने प्रकारना दंडनो सद्भाव होय छे ॥ सू० १३ ॥

टीका—' दुविहे दसणे पन्नत्ते ' इत्यादि—

दर्शनं-श्रद्धानम्, अभिरुचिरित्यर्थः। तद् द्विविधम्-सम्यग्दर्शनम्, मिथ्यादर्शनं चेति। तत्र-सर्वज्ञोपदिष्टपारमार्थिकजीवादिपदार्थानां श्रद्धानं सम्यग्दर्शनम्, तद्विपरीतं मिथ्यादर्शनम्। सम्यग्दर्शनं द्विविधम्-निसर्गसम्यग्दर्शनम्, अभिगमसम्यग्दर्शनं च। तत्र-निसर्गः, स्वभावः, अनुपदेशः, इत्येकार्थाः। निसर्गेण= स्वभावेन गुर्वाद्युपदेशमन्तरेण कर्मोपशमादिभ्यो जीवस्य यद्दर्शनं समुत्पद्यते तद्

यह कुछ सम्यग्दर्शनादित्रय वाले जीवों को नहीं होता है इसी अभिप्राय से उन तीनों का निरूपण करने की इच्छावाले सूत्रकार पहिले सामान्य रूप से दर्शन के स्वरूप का निरूपण करते हैं-

" दुविहे दसणे पन्नत्ते " इत्यादि ॥ १४ ॥

दर्शन-श्रद्धान अभिरुचि-दो प्रकार का कहा गया है जैसे सम्यग्दर्शन और मिथ्यादर्शन इनमें सर्वज्ञ उपदिष्ट जीवादिक पदार्थों का जो श्रद्धान है वह सम्यग्दर्शन है इस सम्यग्दर्शन से जो विपरीत दर्शन है वह मिथ्यादर्शन है इनमें भी जो सम्यग्दर्शन है वह निसर्गसम्यग्दर्शन और अभिगम सम्यग्दर्शन के भेद से दो प्रकार का है जो सम्यग्दर्शन जीव को गुर्वादिक के उपदेश के बिना उत्पन्न होता है वह सम्यग्दर्शन निसर्ग है निसर्गशब्द का अर्थ स्वभाव है इस स्वभाव से हुए सम्यग्दर्शन में उपदेश आदि परनिमित्त की अपेक्षा नहीं रहती है इसमें दर्शनमोहनीय कर्म का क्षयोपशमादि रूप परिणाम स्वतः होता है

સમ્યગ્દર્શનાદિ ત્રયના સદ્ભાવવાળા જીવો આ કઢથી રહિત હોય છે તેથી હવે સૂત્રકાર તે ત્રણેનું નિરૂપણ કરે છે પહેલાં તેઓ સામાન્ય રૂપે દર્શનનું નિરૂપણ કરે છે—' દુવિહે દસણે પણ્ણત્તે ' ઇત્યાદિ ॥ ૧૪ ॥

જિનોક્ત કથનમાં શ્રદ્ધા અથવા અભિરુચિનું નામ દર્શન છે તેના બે પ્રકાર છે–(૧) સમ્યગ્દર્શન અને (૨) મિથ્યાદર્શન. સર્વજ્ઞ દ્વારા ઉપદિષ્ટ જીવાદિક પદાર્થોમાં શ્રદ્ધા રાખવી તેનું નામ સમ્યગ્દર્શન છે આ સમ્યગ્દર્શન કરતાં વિપરીત જે દર્શન છે તેને મિથ્યાદર્શન કહે છે સમ્યગ્દર્શનના બે ભેદ છે (૧) નિસર્ગ સમ્યગ્દર્શન, (૨) અભિગમ સમ્યગ્દર્શન જે સમ્યગ્દર્શન જીવમાં ગુરુ આદિના ઉપદેશ વિના ઉત્પન્ન થાય છે તે સમ્યગ્દર્શનને નિસર્ગ સમ્યગ્દર્શન કહે છે નિસર્ગ એટલે સ્વભાવ આવી રીતે ઉત્પન્ન થયેલા સમ્યગ્દર્શનમાં ઉપદેશ આદિ પરનિમિત્તોની આવશ્યકતા રહેતી નથી તેમાં દર્શનમોહનીય કર્મના ક્ષયોપશમાદિ રૂપ પરિણામ સ્વતઃ થાય છે, તેથી જ

निसर्गसम्यग्दर्शनम् । यथा श्रावकपुत्रपौत्राणां कुलपरम्परागतं यद् दर्शनम् । यथा वा स्वयम्भूरमणसमुद्रस्थितानां श्रावकश्राविकादि संस्थानवतां मत्स्यानां विलोकनेन तदावरणीयक्षयोपशमतो जीवस्य यद् दर्शन जायते तत् निसर्गसम्यग्दर्शनम् । अभिगमः-उपदेशः, तज्जनितं सम्यग्दर्शनम्, अभिगमसम्यग्दर्शनम्, इदं गुर्वाद्युपदेशे सति जायते । तत्र निसर्गसम्यग्दर्शनं द्विविधम्-प्रतिपाति, अप्रतिपाति च । तत्र यत् दर्शनमोहनीयोदयात् प्रतिपतति, तत् प्रतिपतनशीलं प्रतिपाति, औपशमिकं क्षायोपशमिकं चेत्यर्थः । अप्रतिपाति-क्षायिकम्। तथा-अभिगमसम्यग्दर्शन द्विवि-

---

इसीलिये इसका नाम निसर्ग सम्यग्दर्शन हुआ है श्रावक के पुत्रों और पौत्रादिकों में जो कुलपरम्परागत दर्शन होता है वह निसर्ग सम्यग्दर्शन है तथा स्वयंभूरमणसमुद्र में स्थित जो श्रावक श्राविका आदि के आकार वाले मत्स्य हैं उन मत्स्यों के विलोकन से जो जीव को तदावरणीय कर्म का दर्शनमोहनीय कर्म का क्षयोपशम होता है और इस क्षयोपशम से जो उसका दर्शन होता है, वह निसर्ग सम्यग्दर्शन है अभिगम नाम उपदेशका है इस उपदेशसे जो जीवको दर्शन प्राप्त होता है वह अभिगम सम्यग्दर्शन है यह सम्यग्दर्शन गुर्वादिक का उपदेश प्राप्त होने पर ही होता है निसर्गसम्यग्दर्शन भी दो प्रकार का होता है -एक प्रतिपाति और दूसरा अप्रतिपाति इनमें दर्शक मोहनीय कर्म के उदय से जो सम्यग्दर्शन होकरके छूट जाता है वह सम्यग्दर्शन प्रतिपाति है औपशमिक सम्यग्दर्शन और क्षयोपशमिक सम्यग्दर्शन दो

તેનુ નામ નિસર્ગ સમ્યગ્દર્શન પડયુ છે શ્રાવકોના પુત્ર પુત્રીઓમાં જે કુલપરમ્પરાગત દર્શન હોય છે, તે નિસર્ગ સમ્યગ્દર્શન જ છે તથા સ્વયંભૂરમણ સમુદ્રમાં રહેલાં જે શ્રાવક શ્રાવકાદિના આકારવાળા મત્સ્યો છે, તે મત્સ્યોને દેખવાથી જે જીવોના દર્શન મોહનીય કર્મનો ક્ષયોપશમ થાય છે, અને તે ક્ષયોપશમને કારણે તેને જે દર્શનની પ્રાપ્તિ થાય છે, તે દર્શન પણ નિસર્ગ સમ્યગ્દર્શન જ છે. અભિગમ એટલે ઉપદેશ. તે ઉપદેશ દ્વારા જીવને જે દર્શનની પ્રાપ્તિ થાય છે, તે દર્શનને અભિગમ સમ્યગ્દર્શન કહે છે. આ પ્રકારનુ સમ્યગ્દર્શન ગુરુ આદિના ઉપદેશથી જ પ્રાપ્ત થાય છે નિસર્ગ સમ્યગ્દર્શનના પણ બે ભેદ પડે છે-(૧) પ્રતિપાતિ અને (૨) અપ્રતિપાતિ.

દર્શન મોહનીય કર્મના ઉદયથી જે સમ્યગ્દર્શન છૂટી જાય છે (નષ્ટ થઈ જાય છે) એવાં સમ્યગ્દર્શનને પ્રતિપાતિ સમ્યગ્દર્શન કહે છે. ઔપશમિક સમ્યગ્દર્શન અને ક્ષાયોપશમિક સમ્યગ્દર્શન, આ બે સમ્યગ્દર્શનો પ્રતિપાતિ

धम्-प्रतिपाति, अप्रतिपाति च। सम्यक्त्वस्य विशेषवर्णनम् आचाराङ्गसूत्रस्य प्रथम श्रुतस्कन्धे चतुर्थाध्ययने मत्कृताचारचिन्तामणिटीकायां विलोकनीयम्। मिथ्यादर्शनं द्विविधम्-अभिग्रहिकमिथ्यादर्शनम् अनभिग्रहिकमिथ्यादर्शनं चेति। मिथ्या-विपरीत, दर्शनं मिथ्यादर्शनम्, अतत्त्वे तत्त्वाभिनिवेशः, तत्त्वेचातत्त्वाभिनिवेशः। एतच्च मोहनीयकर्मोदयादुत्पद्यते। सत्ये तत्त्वे अश्रद्धानं मिथ्यादर्शनमित्यर्थः। तद् द्विविधम्-अभिग्रहिकमिथ्यादर्शनम्-अनभिग्रहिकमिथ्यादर्शनं च। तत्र-अभि

सम्यग्दर्शन प्रतिपाति हैं क्यों कि इनका स्वभाव प्रतिपतनशील होता है क्षायिक सम्यग्दर्शन अप्रतिपाति होता है क्यों कि यह अपने आवारक (रोकनेवाले) कर्म दर्शनमोहनीयादि कर्म के बिलकुल क्षय से उत्पन्न होता है इसी तरह से अभिगमसम्यग्दर्शन भी दो प्रकार का होता है एक प्रतिपाति और दूसरा अप्रतिपाति सम्यक्त्व का विशेष वर्णन देखना हो तो आचाराङ्ग के प्रथम श्रुतस्कन्ध में चतुर्थ अध्ययन की आचारचिन्तामणि टीका में देख लेना चाहिये मिथ्यादर्शन भी दो प्रकार का होता है-एक अभिग्रहिकमिथ्यादर्शन और दूसरा अनभिग्रहिक मिथ्यादर्शन विपरीतदर्शन का नाम मिथ्यादर्शन है यह मिथ्यादर्शन अतत्त्व में तत्त्वाभिनिवेश रूप होता है अथवा तत्त्व में अतत्त्वाभिनिवेशरूप होता है जीव का यह मिथ्यादर्शन दर्शनमोहनीय कर्म के उदय से उत्पन्न होता है, सत्य तत्त्व में अश्रद्धान का नाम मिथ्यादर्शन है इसमें जो अभिग्रहिक मिथ्यादर्शन है वह कदाग्रह जहां होता है वहां होता

હોય છે, કારણ કે તેમનો સ્વભાવ પતનશીલ-નષ્ટ થઈ જાય એવો હોય છે ક્ષાયિક સમ્યગ્દર્શન અપ્રતિપાતિ હોય છે, કારણ કે તે પોતાના આવારક (આવરણ કરનારા-રોકનારા) કર્મનો (દર્શન મોહનીય કર્મના) સર્વથા ક્ષય થવાથી ઉત્પન્ન થાય છે એજ પ્રમાણે અભિગમ સમ્યગ્દર્શન પણ બે પ્રકારનું હોય છે-(૧) પ્રતિપાતિ અને (૨) અપ્રતિપાતિ

સમ્યકત્વનું વિશેષ વર્ણન આચારાંગના પ્રથમ શ્રુતસ્કન્ધના ચોથા અધ્યયનની આચાર ચિન્તામણિ ટીકામાં કરવામાં આવ્યું છે તો જિજ્ઞાસુઓએ તે વાંચી લેવું મિથ્યાદર્શનના પણ બે પ્રકાર છે-(૧) અભિગ્રહિક મિથ્યાદર્શન અને (૨) અનભિગ્રહિક મિથ્યાદર્શન. વિપરીત દર્શનને મિથ્યાદર્શન કહે છે આ મિથ્યાદર્શન અતત્ત્વમાં તત્ત્વાભિનિવેશ રૂપ હોય છે અથવા તત્ત્વમાં અતત્ત્વાભિનિવેશ રૂપ હોય છે મિથ્યાદર્શન મોહનીયના ઉદયથી જીવમાં આ મિથ્યાદર્શન ઉત્પન્ન થાય છે સત્ય તત્ત્વમાં અશ્રદ્ધા રાખવી તેનું નામ મિથ્યાદર્શન છે જ્યાં કદાગ્રહનો સદ્ભાવ હોય છે ત્યાં અભિગ્રહિક મિથ્યાદર્શન

ग्रहः–कदाग्रहः, स यत्रास्ति तदभिग्रहिकं, तद्विपरीतम्–अनभिग्रहिकम् इति। अभिग्रहिकमिथ्यादर्शनं द्विविधम्–सपर्यवसितम्–पर्यवसानसहितम्, सम्यक्त्वप्राप्तौ मिथ्यादर्शनस्य नाशात् सान्तमित्यर्थः, अपर्यवसितम्–पर्यवसानरहितम् अभव्यस्य सम्यक्त्वाप्राप्तौ पर्यवसानासंभवात् अन्तरहितमित्यर्थः। एवमनभिग्रहिकमिथ्यादर्शनेऽपि सपर्यवसितापर्यवसितभेदेन द्वैविध्यम्। तत्रापि भव्यापेक्षया सपर्यवसितम्, अभव्यापेक्षया अपर्यवसितमिति ॥ सू० १४ ॥

उक्तं दर्शनम्। अधुना ज्ञानं वर्णयति—

मूलम्--दुविहे नाणे पन्नत्ते। तं जहा-पच्चक्खे चेव परोक्खे चेव। पच्चक्खे नाणे दुविहे पन्नत्ते। तं जहा-केवलनाणे चेव, नोकेवलनाणे चेव।

है इससे भिन्न अनभिग्रहिक मिथ्यादर्शन होता है अभिग्रहिक मिथ्यादर्शन भी दो प्रकार का होता है–एक सपर्यवसित और दूसरा अपर्यवसित जो मिथ्यादर्शन सम्यक्त्व की प्राप्ति होने पर नष्ट हो जाता है वह सपर्यवसित मिथ्यादर्शन है अभव्य जीवको जो मिथ्यादर्शन होता है वह अपर्यवसित मिथ्यादर्शन है क्यों कि अभव्य जीवको सम्यक्त्व की प्राप्ति होती नहीं है, इसलिये उसका मिथ्यादर्शन पर्यवसानसे रहित होता है इसी प्रकार से अनभिग्रहिक मिथ्यादर्शन भी सपर्यवसित और अपर्यवसित के भेद से दो प्रकार का होता है भव्य की अपेक्षा अनभिग्रहिक मिथ्यात्व सपर्यवसित होता है और अभव्य की अपेक्षा वही अपर्यवसित होता है ॥ सू० १४ ॥

હોય છે. તેનાથી ભિન્ન એવું જે મિથ્યાદર્શન છે તેને અનભિગ્રહિક મિથ્યાદર્શન કહે છે અભિગ્રહિક મિથ્યાદર્શનના પણ નીચે પ્રમાણે બે ભેદ પડે છે–(૧) સપર્યવસિત અને (૨) અપર્યવસિત. જે મિથ્યાદર્શન સમ્યકત્વની પ્રાપ્તિ થતાં નષ્ટ થઈ જાય છે, તે મિથ્યાદર્શનને સપર્યવસિત મિથ્યાદર્શન કહે છે. અભવ્ય જીવને જે મિથ્યાદર્શન પ્રાપ્ત થાય છે તે અપર્યવસિત (અનન્ત) હોય છે, કારણ કે અભવ્ય જીવને સમ્યકત્વની પ્રાપ્તિ જ થતી નથી, તેથી તેનું મિથ્યાદર્શન પર્યવસાન (અન્ત) થી રહિત હોય છે એજ પ્રમાણે અનાભિગ્રહિક મિથ્યાદર્શનના પણ બે ભેદ છે–(૧) સપર્યવસિત અને (૨) અપર્યવસિત ભવ્ય જીવોની અપેક્ષાએ અનભિગ્રહિક મિથ્યાત્વ સપર્યવસિત (અન્ત યુક્ત) હોય છે પણ અભવ્ય જીવોનુ અનભિગ્રહિક મિથ્યાત્વ અપર્યવસિત (અન્ત રહિત) હોય છે. ॥ સૂ૦ ૧૪ ॥

केवलनाणे दुविहे पन्नत्ते । तं जहा भवत्थकेवलनाणे चेव, सिद्धकेवलनाणे चेव । भवत्थकेवलनाणे दुविहे पन्नत्ते । तं जहा सजोगिभवत्थकेवलनाणे चेव, अजोगिभवत्थकेवलनाणे चेव । सजोगिभवत्थकेवलनाणे दुविहे पन्नत्ते । तं जहा पढमसमय सजोगिभवत्थकेवलनाणे चेव, अपढमसमयसजोगिभवत्थकेव लनाणे चेव । अहवा चरिमसमयसजोगिभवत्थकेवलनाणे चेव, अचरिमसमयसजोगिभवत्थकेवलनाणे चेव । एवं अजोगिभव त्थकेवलनाणेऽवि । सिद्धकेवलनाणे दुविहे पन्नत्ते । तं जहा अणंतरसिद्धकेवलनाणे चेव, परंपरासिद्धकेवलनाणे चेव । अणं तरसिद्धकेवलनाणे दुविहे पन्नत्ते । तं जहा एक्काणंतरसिद्ध केवलनाणे चेव, अणेक्काणंतरसिद्धकेवलनाणे चेव । परंपरसिद्ध केवलनाणे दुविहे पन्नत्ते । तं जहा एक्कपरंपरसिद्धकेवलनाणे चेव, अणेक्कपरंपरसिद्धकेवलनाणे चेव ।

नो केवलनाणे दुविहे पन्नत्ते । तं जहा ओहिनाणे चेव, मणपज्जवनाणे चेव । ओहिनाणे दुविहे पन्नत्ते । तं जहा भवपच्चइए चेव, खओवसमिए चेव । दोण्हं भवपच्चइए पन्नत्ते, तं जहा-देवाणं चेव, नेरइयाणं चेव । दोण्हं खओव समिए पन्नत्ते । तं जहा मणुस्साणं चेव, पंचिंदियतिरिक्खजो णियाणं चेव । मणपज्जवनाणे दुविहे पन्नत्ते । तं जहा उज्जु मई चेव, विउलमई चेव ।

परोक्खेनाणे दुविहे पन्नत्ते । तं जहा-आभिणिवोहियनाणे चेव, सुयनाणे चेव । आभिणिवोहियनाणे दुविहे पन्नत्ते । तं जहा सुयनिस्सिए चेव, असुयनिस्सिए चेव । सुयनिस्सिए दुविहे पन्नत्ते तं जहा--अत्थेग्गहे चेव वंजणोग्गहे चेव । असुयनिस्सिएऽवि एमेवे। सुयनाणे दुविहे पन्नत्ते । तं जहा--अंगपविट्ठे चेव, अंगवाहिरे चेव । अंगवाहिरे दुविहे पन्नत्ते । तं जहा-आवस्सए चेव, आवस्सयवइरित्ते चेव । आवस्सयवइरित्ते दुविहे पन्नत्ते । तं जहा कालिए चेव, उक्कालिय चेव ॥ सू० १५ ॥

छाया—द्विविधं ज्ञानं प्रज्ञप्तम् । तद् यथा—प्रत्यक्षं चैव, परोक्षं चैव । प्रत्यक्षं ज्ञानं द्विविधम् । तद् यथा—केवलज्ञानं चैव, नो केवलज्ञानं चैव ।

केवलज्ञानं द्विविधं प्रज्ञप्तम् । तद् यथा—भवस्थकेवलज्ञान चैव, सिद्धकेवलज्ञानं चैव । भवस्थकेवलज्ञानं द्विविधं प्रज्ञप्तम् । तद् यथा—सयोगिभवस्थकेवलज्ञानं चैव,

---

दर्शन के विषय का कथन समाप्त हुआ अब ज्ञान का वर्णन सूत्र कार करते हैं-" दुविहे नाणे पण्णत्ते " इत्यादि ॥ १५ ॥

टीकार्थ-ज्ञान दो प्रकारका कहा गया है जैसे एक प्रत्यक्षज्ञान और दूसरा परोक्षज्ञान इनमें प्रत्यक्षज्ञान दो प्रकारका होता है, एक केवलज्ञान सकल-प्रत्यक्षज्ञान और दूसरा नो केवलज्ञान विकल(देश) प्रत्यक्षज्ञान केवलज्ञान भी दो प्रकार का कहा गया है एक भवस्थकेवली का केवलज्ञान और दूसरा सिद्ध का केवलज्ञान । भवस्थ केवलीका केवलज्ञान भी दो प्रकार का है, एक सयोगी भवस्थकेवली का केवलज्ञान, और दूसरा अयोगी

દર્શનની પ્રરૂપણા પૂરી કરીને હવે સૂત્રકાર જ્ઞાનની પ્રરૂપણા કરે છે—
" दुविहे नाणे पण्णत्ते " ઇત્યાદિ ॥ ૧૫ ॥

જ્ઞાનના નીચે પ્રમાણે બે પ્રકાર કહ્યાં છે-(૧) પ્રત્યક્ષજ્ઞાન (૨) પરોક્ષજ્ઞાન. તેમાંના પ્રત્યક્ષ જ્ઞાનના બે પ્રકાર છે-(૧) કેવળજ્ઞાન સકલ પ્રત્યક્ષજ્ઞાન અને (૨) ના કેવળજ્ઞાન વિકલ પ્રત્યક્ષજ્ઞાન. કેવળજ્ઞાન પણ બે પ્રકારનું કહ્યું છે—(૧) ભવસ્થ કેવલીનુ કેવળજ્ઞાન અને (૨) સિદ્ધનુ કેવળજ્ઞાન ભવસ્થ કેવળીનું કેવળજ્ઞાન પણ બે પ્રકારનુ હોય છે (૧) સયોગી ભવસ્થ કેવલીનું કેવળજ્ઞાન

अयोगिभवस्थकेवलज्ञान चैव। सयोगिभवस्थकेवलज्ञान द्विविधं प्रज्ञप्तम्। तद् यथा–प्रथमसमयसयोगिभवस्थकेवलज्ञान चैव, अप्रथमसमयसयोगिभवस्थकेवलज्ञानं चैव। अथवा–चरमसमयसयोगिभवस्थकेवलज्ञान चैव, अचरमसमयसयोगिभवस्थ केवलज्ञान चैव। एवम् अयोगिभवस्थकेवलज्ञानमपि। सिद्धकेवलज्ञान द्विविधं प्रज्ञप्तम्। तद् यथा–अनन्तरसिद्धकेवलज्ञान चैव, परंपरसिद्धकेवलज्ञानं चैव। अनन्तरसिद्धकेवलज्ञान द्विविधं प्रज्ञप्तम्। तद् यथा–एकानन्तरसिद्धकेवलज्ञान चैव, अनेकानन्तरसिद्धकेवलज्ञान चैव। परपरसिद्धकेवलज्ञान द्विविध प्रज्ञप्तम्। तद् यथा–एकपरंपरसिद्धकेवलज्ञान चैव, अनेकपरपरसिद्धकेवलज्ञान चैव।

भवस्थकेवली का केवलज्ञान, इनमें सयोगी भवस्थकेवली का केवलज्ञान भी दो प्रकार का कहा गया है – १ प्रथमसमय के सयोगी भवस्थ का केवलज्ञान और २ अप्रथम समयवर्ती सयोगी भवस्थ का केवलज्ञान अथवा चरमसमय के सयोगी भवस्थ का केवलज्ञान और अचरमसमय के सयोगी भवस्थ का केवलज्ञान इसी प्रकार से अयोगी भवस्थ केवली का जो केवलज्ञान है वह भी दो प्रकार का होता है, सिद्ध जीव का जो केवलज्ञान है वह भी दो प्रकार का है जैसे अनन्तरसिद्ध का केवलज्ञान और परम्परसिद्ध का केवलज्ञान अनन्तरसिद्ध का केवलज्ञान भी दो प्रकार का है–एकसमयानन्तरसिद्ध का केवलज्ञान और अनेकसमया नन्तरसिद्धका केवलज्ञान परम्परसिद्धका केवलज्ञान भी दो प्रकारका है एक परम्परसिद्ध का केवलज्ञान और अनेक परम्परसिद्धका केवलज्ञान।

અને (૨) અયોગી ભવસ્થ કેવળીનું કેવળજ્ઞાન તેમાંના સયોગી ભવસ્થ કેવળીનું કેવળજ્ઞાન પણ બે પ્રકારનું હોય છે (૧) પ્રથમ સમયના સયોગી ભવસ્થનું કેવળજ્ઞાન અને (૨) અપ્રથમ સમયવર્તી સયોગી ભવસ્થનું કેવળજ્ઞાન અથવા (૧) ચરમસમયના સયોગી ભવસ્થનું કેવળજ્ઞાન.

એજ પ્રમાણે અયોગી ભવસ્થ કેવળીનું કેવળજ્ઞાન પણ બે પ્રકારનું છે. સિદ્ધ જીવનું જે કેવળજ્ઞાન છે તે પણ બે પ્રકારનું હોય છે–(૧) અનન્તર સિદ્ધનું કેવળજ્ઞાન અને પરમ્પર સિદ્ધનું કેવળજ્ઞાન. અનન્તર સિદ્ધનું કેવળજ્ઞાન પણ બે પ્રકારનું છે–(૧) એકાન્તર સિદ્ધનું કેવળજ્ઞાન અને (૨) અનેકાન્તર સિદ્ધનું કેવળજ્ઞાન. પરમ્પર સિદ્ધનું કેવળજ્ઞાન પણ બે પ્રકારનું છે–(૧) એક પરમ્પર સિદ્ધનું કેવળજ્ઞાન અને (૨) અનેક પરમ્પર સિદ્ધનું કેવળજ્ઞાન.

नोकेवलज्ञानं द्विविधं प्रज्ञप्तम् । तद् यथा-अवधिज्ञानं चैव, मनः पर्यवज्ञानं चैव । अवधिज्ञानं द्विविध प्रज्ञप्तम् । तद् यथा-भवप्रत्ययिकं चैव, क्षायोपशमिकं

इस पूर्वोक्त कथन का सारांश ऐसा है कि इन्द्रिय और मन की सहायता के विना जो केवल आत्मामात्र की सहायता से निर्मल ज्ञान होता है वह प्रत्यक्षज्ञान है, ऐसा वह प्रत्यक्षज्ञान सकल प्रत्यक्ष और देशप्रत्यक्ष के भेद से दो प्रकार का कहा गया है प्रत्यक्ष में यह सकलता और विकलता का जो कथन है वह केवल विषय की अपेक्षा से ही कहा गया है त्रयोदश गुणस्थानवर्ती सयोगी केवली जीवन्मुक्त जीव का जो केवलज्ञान है, वह सयोगी भवस्थ केवलीका केवलज्ञान है और जो चौदहवे गुणस्थानवर्ती जीव का केवलज्ञान है वह अयोगी भवस्थ का केवलज्ञान है केवलज्ञान प्राप्तकर के भी जो अभी तक परमोदारिक शरीर में वर्तमान हैं वे भवस्थकेवली हैं ऐसे भवस्थकेवली १३ वें और १४ वें गुणस्थानवर्ती जीव ही होते हैं, योग जिनको वर्तमान होता है वे सयोगी भवस्थकेवली और योग जिनको नहीं है वे अयोगी भवस्थकेवली हैं इन्हीं दो के केवलज्ञान को लेकर पूर्वोक्तरूप से यह विचार किया गया है "नोकेवलनाणे दुविहे पण्णत्ते" नो केवलज्ञान से यहां देशप्रत्यक्ष लिया गया है वह विकलप्रत्यक्ष रूप नोकेवलज्ञान दो प्रकार

આ સમસ્ત પૂર્વોક્ત કથનનો ભાવાર્થ નીચે પ્રમાણે છે-ઇન્દ્રિયો અને મનની સહાયતા વિના, માત્ર આત્માની સહાયતાથી જે નિર્મળ જ્ઞાન પ્રાપ્ત થાય છે તેને પ્રત્યક્ષ જ્ઞાન કહે છે. તે જ્ઞાનને સકલ પ્રત્યક્ષ અને વિકલ પ્રત્યક્ષના ભેદથી બે પ્રકારનું કહ્યું છે પ્રત્યક્ષમા આ સકલતા અને વિકલતાનુ જે કથન થયું છે તે કેવળ વિષયની અપેક્ષાએ જ થયુ છે તેરમાં ગુણુસ્થાનવર્તી સયોગી કેવલી જીવનમુક્ત જીવનું જે કેવળજ્ઞાન છે તેને સયોગી ભવસ્થ કેવળીનુ કેવળજ્ઞાન કહે છે અને ચૌદમા ગુણુસ્થાનવર્તી જીવનું જે કેવળજ્ઞાન છે તેને અયોગી ભવસ્થનુ કેવળજ્ઞાન કહે છે કેવળજ્ઞાન પ્રાપ્ત કર્યા બાદ પણુ જે જીવ પરમોદારિક શરીરમા વિદ્યમાન રહે છે, એવા જીવને ભવસ્થ કેવલી કહે છે. ૧૩ મા અને ૧૪ મા ગુણુસ્થાનવર્તી જીવો જ એવા ભવસ્થ કેવલી હોઈ શકે છે જેમના યોગ મોજુદ હોય છે એવાં કેવલીને સયોગી ભવસ્થ કેવલી કહે છે અને જેમના યોગ મોજુદ નથી એવાં કેવલીને-અયોગી ભવસ્થ કેવલી-કહે છે એ બન્નેના કેવળજ્ઞાનની અપેક્ષાએ પૂર્વોક્ત રૂપે આ વિચાર કરવામાં આવ્યો છે. " नो केवलनाणे दुविहे पण्णत्ते " " નો કેવળજ્ઞાન " એટલે અહીં

चैव। द्वयो र्भवप्रत्ययिकं प्रज्ञप्तम्, तद्यथा-देवानां चैव नैरयिकाणां चैव। द्वयोः क्षायोपशमिकं प्रज्ञप्तम्, तद् यथा-मनुष्याणां चैव, पञ्चेन्द्रियतिर्यग्योनिकानां चैव। मनःपर्यवज्ञानं द्विविधं प्रज्ञप्तम्, तद्यथा-ऋजुमतिश्चैव, विपुलमतिश्चैव।

परोक्षज्ञानं द्विविधं प्रज्ञप्तम्। तद् यथा-आभिनिबोधिकज्ञानं चैव, श्रुतज्ञानं चैव। आभिनिबोधिकज्ञानं द्विविधं प्रज्ञप्तम्। तद् यथा-श्रुतनिश्रितं चैव, अश्रुतनिश्रितं

का कहा गया है एक अवधिज्ञान और दूसरा मन पर्ययज्ञान अवधिज्ञानावरणीय कर्म के क्षयोपशम से जो ज्ञान जीव को प्राप्त होता है वह अवधिज्ञान है और मन पर्यवज्ञानावरणीय कर्म के क्षयोपशम से जो ज्ञान उत्पन्न होता है वह मनःपर्यवज्ञान है, अवधिज्ञान भी दो प्रकार का है एक भवप्रत्ययिक अवधिज्ञान और दूसरा क्षायोपशमिक अवधिज्ञान देव और नारक जीवोंको भवप्रत्ययिक अवधिज्ञान होता है, तात्पर्य इस का ऐसा है कि देवपर्याय और नारकपर्याय में उत्पन्न होने पर अवधिज्ञानावरणीय कर्म के क्षयोपशम से जायमान ज्ञान अवधिज्ञान है तथा मनुष्य और पञ्चेन्द्रिय तिर्यंचों के जो तपस्यादि के प्रभाव से जायमान अवधिज्ञानावरणीय कर्म के क्षयोपशम से अवधिज्ञान उत्पन्न होता है वह क्षायोपशमिक अवधिज्ञान है मनःपर्यवज्ञान दो प्रकार का होता है एक ऋजुमति और दूसरा विपुलमति

વિકલ પ્રત્યક્ષનુ પ્રતિપાદન કરવામાં આવ્યુ છે તે વિકલ પ્રત્યક્ષ રૂપ નો કેવળ જ્ઞાન બે પ્રકારનું કહ્યું છે-(૧) અવધિજ્ઞાન અને (૨) મનઃપર્યવજ્ઞાન. અવધિજ્ઞાનાવરણીય કર્મના ક્ષયોપશમથી જે જ્ઞાન જીવમાં ઉત્પન્ન થાય છે, તે જ્ઞાનને અવધિજ્ઞાન કહે છે અને મનઃપર્યવજ્ઞાનાવરણીય કર્મના ક્ષયોપશમથી જે જ્ઞાન ઉત્પન્ન થાય છે તે જ્ઞાનને મનઃપર્યવજ્ઞાન કહે છે અવધિજ્ઞાનના પણ બે પ્રકાર કહ્યા છે-(૧) ભવપ્રત્યયિક અવધિજ્ઞાન અને (૨) ક્ષયોપશમિક અવધિજ્ઞાન. દેવ અને નારક જીવોને ભવપ્રત્યયિક અવધિજ્ઞાન થાય છે આ કથનનું તાત્પર્ય એ છે કે દેવપર્યાય અને નારક પર્યાયમાં ઉત્પન્ન થતાં અવધિજ્ઞાનાવરણીય કર્મના ક્ષયોપશમથી ઉત્પન્ન થતું જે જ્ઞાન તે ભવપ્રત્યયિક અવધિજ્ઞાન છે, અને મનુષ્યો અને પંચેન્દ્રિય તિર્યંચોમાં તપસ્યા આદિના પ્રભાવથી અવધિજ્ઞાનાવરણીય કર્મના ક્ષયોપશમ થવાથી જે અવધિજ્ઞાન ઉત્પન્ન થાય છે તેને ક્ષયોપશમિક અવધિજ્ઞાન કહે છે મનઃપર્યવજ્ઞાન પણ બે પ્રકારનું હોય છે. (૧)ઋજુમતિ અને (૨) વિપુલમતિ,

चेव । श्रुतनिश्रितं द्विविधं प्रज्ञप्तम् । तद्यथा–अर्थावग्रहश्चैव, व्यञ्जनावग्रहश्चैव । अश्रुतनिश्रितमप्येवमेव । श्रुतज्ञान द्विविधं प्रज्ञप्तम् । तद् यथा–अङ्गप्रविष्टं चैव, अङ्गबाह्यं चैव । अङ्गबाह्यं द्विविधं प्रज्ञप्तम् । तद् यथा–आवश्यकं चैव, आवश्यकव्यतिरिक्तं चैव । आवश्यकव्यतिरिक्तं द्विविध प्रज्ञप्तम् । तद् यथा–कालिकं चैव उत्कालिकं चैव ॥ सू० १५ ॥

टीका–'दुविहे नाणे पन्नत्ते' इत्यादि–

सूत्रमेतत् सुगमम् । संस्कृतच्छायातोऽवगन्तव्यम् । नन्दीसूत्रस्य ज्ञानचन्द्रिका-टीकायां ज्ञानं सविस्तरं वर्णितमस्माभिरिति तत्र जिज्ञासुभिर्द्रष्टव्यम् ॥ सू०१५ ॥

परोक्षज्ञान दो प्रकार का कहा गया है–एक आभिनिवोधिक और दूसरा श्रुतज्ञान आभिनिवोधिकज्ञान भी श्रुतनिश्रित और अश्रुतनिश्रित के भेद से दो प्रकार का है श्रुतानिश्रित आभिनिवोधिक ज्ञान भी दो प्रकार का है एक अर्थावग्रहरूप और दूसरा व्यञ्जनावग्रहरूप अश्रुतनिश्रित आभिनिवोधिकज्ञान भी अर्थावग्रह और व्यञ्जनावग्रह के भेद से दो प्रकार का है श्रुतज्ञान भी दो प्रकार का है एक अङ्गप्रविष्ट और दूसरा अङ्गबाह्य अङ्गबाह्य भी आवश्यक और आवश्यकव्यतिरिक्त के भेद से दो प्रकार का है, इनमें आवश्यकव्यतिरिक्त भी दो प्रकार का है एक कालिक और दूसरा उत्कालिक नन्दी सूत्र की ज्ञानचन्द्रिका नाम की टीका में ज्ञान का विस्तारपूर्वक वर्णन किया गया है अतः वहीं से यह सब विषय अच्छी तरहसे जाना जा सकता है ॥ सू०१५ ॥

પરોક્ષજ્ઞાન પણ બે પ્રકારનુ કહ્યુ છે–(૧) આભિનિબોધિક અને (૨) શ્રુતજ્ઞાન. આભિનિબોધિક જ્ઞાનના પણ નીચે પ્રમાણે બે ભેદ છે–(૧) શ્રુતનિશ્રિત અને (૨) અશ્રુતનિશ્રિત. શ્રુતનિશ્રિત આભિનિબોધિક જ્ઞાન પણ બે પ્રકારનું કહ્યુ છે–(૧) અર્થાવગ્રહ રૂપ અને (૨) વ્યંજનાવગ્રહ રૂપ. અશ્રુતનિશ્રિત આભિનિબોધિક જ્ઞાનના પણ નીચે પ્રમાણે બે પ્રકાર છે–(૧) અર્થાવગ્રહરૂપ અને (૨) વ્યંજનાવગ્રહરૂપ.

શ્રુતજ્ઞાનના પણ બે પ્રકાર કહ્યા છે–(૧) અંગપ્રવિષ્ટ અને (૨) અંગબાહ્ય અંગબાહ્ય શ્રુતજ્ઞાનના પણ બે ભેદ છે–(૧) આવશ્યક અને આવશ્યક વ્યતિરિક્ત. આવશ્યકવ્યતિરિક્ત અંગબાહ્ય શ્રુતજ્ઞાનના પણ નીચે પ્રમાણે બે ભેદ કહ્યા છે. (૧) કાલિક અને ઉત્કાલિક.

નન્દીસૂત્રની જ્ઞાનચન્દ્રિકા નામની ટીકામા જ્ઞાનનુ વિસ્તારપૂર્વક વર્ણન કરવામાં આવ્યુ છે. તો જિજ્ઞાસુઓએ આ વિષયની વધુ માહિતી ત્યાંથી મેળવી લેવી. ॥ સૂ૦ ૧૫ ॥

चैव । द्वयो भवप्रत्ययिकं प्रज्ञप्तम्, तद्यथा–देवानां चैव नैरयिकाणां चैव । द्वयोः क्षायोपशमिकं प्रज्ञप्तम्, तद् यथा–मनुष्याणां चैव, पञ्चेन्द्रियतिर्यग्योनिकानां चैव। मनःपर्यवज्ञानं द्विविधं प्रज्ञप्तम्, तद्यथा–ऋजुमतिश्चैव, विपुलमतिश्चैव ।

परोक्षज्ञानं द्विविधं प्रज्ञप्तम् । तद् यथा–आभिनिबोधिकज्ञानं चैव, श्रुतज्ञानं चैव। आभिनिबोधिकज्ञानं द्विविधं प्रज्ञप्तम् । तद् यथा–श्रुतनिश्रितं चैव, अश्रुतनिश्रितं

का कहा गया है एक अवधिज्ञान और दूसरा मनःपर्यवज्ञान अवधि ज्ञानावरणीय कर्म के क्षयोपशम से जो ज्ञान जीव को प्राप्त होता है वह अवधिज्ञान है और मनःपर्यवज्ञानावरणीय कर्म के क्षयोपशम से जो ज्ञान उत्पन्न होता है वह मनःपर्यवज्ञान है, अवधिज्ञान भी दो प्रकार का है एक भवप्रत्ययिक अवधिज्ञान और दूसरा क्षायोपशमिक अवधि ज्ञान देव और नारक जीवोंको भवप्रत्ययिक अवधिज्ञान होता है, तात्पर्य इस का ऐसा है कि देवपर्याय और नारकपर्याय में उत्पन्न होने पर अवधिज्ञानावरणीय कर्म के क्षयोपशम से जायमान ज्ञान अवधिज्ञान है तथा मनुष्य और पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्चों के जो तपस्यादि के प्रभाव से जायमान अवधिज्ञानावरणीय कर्म के क्षयोपशम से अवधिज्ञान उत्पन्न होता है वह क्षायोपशमिक अवधिज्ञान है मनःपर्यवज्ञान दो प्रकार का होता है एक ऋजुमति और दूसरा विपुलमति

વિકલ પ્રત્યક્ષનું પ્રતિપાદન કરવામાં આવ્યું છે તે વિકલ્પ પ્રત્યક્ષ રૂપ નો કેવળ જ્ઞાન બે પ્રકારનું કહ્યું છે–(૧) અવધિજ્ઞાન અને (૨) મનઃપર્યવજ્ઞાન. અવધિજ્ઞાનાવરણીય કર્મના ક્ષયોપશમથી જે જ્ઞાન જીવમાં ઉત્પન્ન થાય છે, તે જ્ઞાનને અવધિજ્ઞાન કહે છે અને મનઃપર્યવજ્ઞાનાવરણીય કર્મના ક્ષયોપશમથી જે જ્ઞાન ઉત્પન્ન થાય છે, તે જ્ઞાનને મનઃપર્યવજ્ઞાન કહે છે અવધિજ્ઞાનના પણ બે પ્રકાર કહ્યા છે–(૧) ભવપ્રત્યયિક અવધિજ્ઞાન અને (૨) ક્ષાયોપશમિક અવધિજ્ઞાન. દેવ અને નારક જીવોને ભવપ્રત્યયિક અવધિજ્ઞાન થાય છે આ કથનનું તાત્પર્ય એ છે કે દેવપર્યાય અને નારક પર્યાયમાં ઉત્પન્ન થતાં, અવધિજ્ઞાનાવરણીય કર્મના ક્ષયોપશમથી ઉત્પન્ન થતું જે જ્ઞાન તે ભવપ્રત્યયિક અવધિજ્ઞાન છે, અને મનુષ્યો અને પંચેન્દ્રિય તિર્યંચોમાં તપસ્યા આદિના પ્રભાવથી અવધિજ્ઞાનાવરણીય કર્મનો ક્ષયોપશમ થવાથી જે અવધિજ્ઞાન ઉત્પન્ન થાય છે તેને ક્ષાયોપશમિક અવધિજ્ઞાન કહે છે મનઃપર્યવજ્ઞાન પણ બે પ્રકારનું હોય છે. (૧) ઋજુમતિ અને (૨) વિપુલમતિ,

चरिमसमयउवसंतकसायवीयरागसंजमे चेव,अचरिमसमय उव-
संतकसायवीयरागसंजमे चेव। खीणकसायवीयरागसंजमे दुविहे
पन्नत्ते तं जहा-छउमत्थखीणकसायवीयरागसंजमे चेव, केवलि-
खीणकसायवीयरागसंजमे चेव। छउमत्थखीणकसायवीयरागसं-
जमे दुविहे पन्नत्ते-तं जहा-सयंबुद्धछउमत्थ-खीणकसायवीयराग-
संजमे चेव, बुद्धबोहियछउमत्थखीणकसायवीयरागसंजमे चेव।
सयंबुद्धछउमत्थखीणकसायवीयरागसंजमे दुविहे पन्नत्ते। तं जहा-
पढमसमयसयंबुद्धछउमत्थखीणकसायवीयरागसंजमे चेव, अप-
ढमसमयसयंबुद्धछउमत्थखीणकसायवीयरागसंजमे चेव। अहवा-
चरिमसमयसयंबुद्धछउमत्थखीणकसायवीयरागसंजमे चेव,अचरि-
मसमयसयंबुद्धछउमत्थखीणकसायवीयरागसंजमे चेव। बुद्धबोहि-
यछउमत्थखीणकसायवीयरागसंजमे दुविहे पन्नत्ते, तं जहा—पढम-
समयबुद्धबोहिय छउमत्थखीणकसायवीयरायसंजमे चेव, अपढम-
समयबुद्धबोहियछउमत्थखीणकसायवीयरायसंजमे चेव। अहवा-
चरिमसमयबुद्धबोहियछउमत्थखीणकसायवीयरायसंजमे चेव,
अचरिमसमयबुद्धबोहिय छउमत्थखीणकसायवीयरागसंजमे चेव।
केवलि खीणकसायवीयरागसंजमे दुविहे पन्नत्ते, तं जहा—सजोगि
केवलिखीणकसायवीयरागसंजमे चेव,अजोगि केवलिखीणकसाय-
वीयरागसंजमे चेव। सजोगी केवलिखीणकसाय वीयराग-
संजमे दुविहे पन्नत्ते, तं जहा — पढमसमयसजोगिकेवलि-
खीणकसायवीयरायसंजमे चेव, अपढमसमयसजोगिकेवलिखी-
णकसायवीयराय संजमे चेव। अहवा – चरिमसमयसजोगिकेव-

ज्ञान परिवम् । अथ चारित्र वर्णयति—

मूलम्—दुविहे धम्मे पन्नत्ते । तं जहा सुयधम्मे चेव, चरित्तधम्मे चेव । सुयधम्मे दुविहे पन्नत्ते । त जहा-सुत्तसुयधम्मे चेव, अत्थसुयधम्मे चेव । चरित्तधम्मे दुविहे पन्नत्ते त जहा-अगारचरित्तधम्मे चेव, अणगारचरित्तधम्मे चेव । दुविहे सजमे पन्नत्ते, त जहा सरागसजमे चेव, वीयरागसजमे चेव । सराग सजमे दुविहे पन्नत्ते । त जहा सुहुमसपरायसरागसजमे चेव, बादरसपरायसरागसजमे चेव । सुहुमसपरायसरागसजमे दुविहे पन्नत्ते त जहा पढमसमयसुहुमसपरायसरागसजमे चेव, अपढमसमयसुहुमसपरायसरागसजमे चेव। अहवा चरमसमयसुहुमसपरायसरागसजमे चेव, अचरमसमयसुहुमसपरायसरागसजमे चेव । अहवा-सुहुमसपरायसरागसजमे दुविहे पन्नत्ते । तं जहा सकिलेसमाणए चेव, विसुज्झमाणए चेव । बादरसपरायसराग सजमे दुविहे पन्नत्ते । त जहा-पढमसमयबादरसपरायसरागसजमे चेव, अपढमसमयबादरसपरायसरागसजमे चेव । अहवा-चरिमसमयबादरसपरायसरागसजमे चेव, अचरिमसमयबादर सपरायसरागसजमे चेव। अहवा—बायरसपरायसरागसजमे दुविहे पन्नत्ते । त जहा-पडिवाई चेव, अपडिवाई चेव । वीयरागसजमे दुविहे पन्नत्ते । त जहा उवसत-कसाय-वीयरागसजमे चेव, खीणकसायवीयरागसजमे चेव । उवसंत-कसायवीयरागसजमे दुविहे पन्नत्ते, त जहा-पढमसमय उवसतकसायवीयरागसजमे चेव, अपढमसमयउवसतकसायवीयरागसजमे चेव । अहवा

कषायवीतरागसंयमो द्विविधःप्रज्ञप्तस्तद् यथा–स्वयंबुद्धछद्मस्थक्षीणकषायवीतराग-संयमश्चैव, बुद्धबोधितछद्मस्थक्षीणकषायवीतरागसंयमश्चैव । स्वयंबुद्धछद्मस्थक्षीण-कषायवीतरागसंयमो द्विविधः प्रज्ञप्तस्तद् यथा–प्रथमसमयस्वयंबुद्धछद्मस्थक्षीण-कषायवीतरागसंयमश्चैव, अप्रथमसमयस्वयंबुद्धछद्मस्थक्षीणकषायवीतरागसंयमश्चैव । अथवा–चरमसमयस्वयंबुद्धछद्मस्थक्षीणकषायवीतरागसंयमश्चैव, अचरमसमयस्वयं-बुद्धछद्मस्थक्षीणकषायवीतरागसंयमश्चैव । बुद्धबोधितछद्मस्थक्षीणकषायवीतराग-संयमो द्विविधः प्रज्ञप्तस्तद् यथा–प्रथमसमयबुद्धबोधितछद्मस्थक्षीणकषायवीतराग-संयमश्चैव, अप्रथमसमयबुद्धबोधितछद्मछस्थक्षीणकषायवीतरागसंयमश्चैव, अथवा–चरमसमयबुद्धबोधितछद्मस्थक्षीणकषायवीतरागसंयमश्चैव, अचरमसमयबुद्धबोधित-छद्मस्थक्षीणकषायवीतरागसंयमश्चैव । केवलिक्षीणकषायवीतरागसंयमो द्विविधः–प्रज्ञप्तस्तद् यथा–सयोगिकेवलिक्षीणकषायवीतरागसंयमश्चैव, अयोगिकेवलिक्षीण-कषायवीतरागसंयमश्चैव. सयोगिकेवलिक्षीणकषायवीतरागसंयमो द्विविधः प्रज्ञ-प्तस्तद् यथा–प्रथमसमयसयोगिकेवलिक्षीणकषायवीतरागसंयमश्चैव, अप्रथमसमय-सयोगिकेवलिक्षीणकषायवीतरागसंयमश्चैव । अथवा–चरमसमयसयोगिकेवलिक्षीण-कषायवीतरागसंयमश्चैव, अचरमसमयसयोगिकेवलिक्षीणकषायवीतरागसंयमश्चैव, अयोगिकेवलिक्षीणकषायवीतरागसंयमो द्विविधः प्रज्ञप्तस्तद् यथा–प्रथमसमयायोगि-केवलिक्षीणकषायवीतरागसंयमश्चैव, अप्रथमसमयायोगिकेवलिक्षीणकषायवीतरा-गसंयमश्चैव । अथवा–चरमसमयायोगिकेवलिक्षीणकषायवीतरागसंयमश्चैव, अच-रमसमयायोगिकेवलिक्षीणकषायवीतरागसंयमश्चैव ॥ सू० १६ ॥

टीका—'दुविहे धम्मे' इत्यादि ।

धर्मः–धरति=रक्षति दुर्गतौ पतनात् प्राणिनः, शुभे स्थाने च स्थापयति यः स तथोक्तः ।

ज्ञान का वर्णन हो चुका–अब चारित्र का वर्णन होता है–

"दुविहे धम्मे पन्नत्ते" इत्यादि ॥१६॥

दुर्गति में पतन होने से जीव की जो रक्षा करता है और शुभ-स्थानमें उसे पहुँचा देता है उसका नाम धर्म है उक्तं च—

જ્ઞાનનું નિરૂપણ કરીને હવે સૂત્રકાર ચારિત્રનું નિરૂપણ કરે છે—

"दुविहे धम्मे पण्णत्ते" ઇત્યાદિ ॥ १६ ॥

જે જીવને દુર્ગતિમાં પડતા બચાવે છે અને શુભ સ્થાનમાં તેને પહોંચાડે છે, તેનું નામ ધર્મ છે. "संसार दुःखतः" ઇત્યાદિ.

लिखीणकसायवीयरायसजमे चेव अचरिमसमयसजोगिकेवलि
खीणकसायवीयरायसजमे चेव । अजोगिकेवलिखीणकसायवीय
रागसजमे दुविहे पन्नत्ते, त जहा — पढमसमयअजोगिकेवलि
खीणकसाय वीयरायसजमे चेव, अपढमसमयअजोगिकेवलि
खीणकसायवीयरायसजमे चेव, अहवा—चरिमसमय अजोगिके
वलिखीणकसायवीयरागसजमे चेव, अचरिमसमय अजोगिके
वलिखीणकसायवीयरागसजमे चेव ॥ सू०१६ ॥

छाया—द्विविधो धर्मः प्रज्ञप्तः तद् यथा—श्रुतधर्मश्चैव, चारित्रधर्मश्चैव । श्रुतधर्मो द्विविधः प्रज्ञप्तः, तद् यथा—सूत्रश्रुतधर्मश्चैव, अर्थश्रुतधर्मश्चैव ।

चारित्रधर्मो द्विविधः, तद् यथा—अगारचारित्रधर्मश्चैव, अनगारचारित्रधर्मश्चैव,। द्विविधः संयमः प्रज्ञप्तः, तद् यथा—सरागसंयमश्चैव, वीतरागसंयमश्चैव । सराग संयमो द्विविधः प्रज्ञप्तस्तद्यथा—सूक्ष्मसंपरायसरागसंयमश्चैव, बादरसंपरायसराग संयमश्चैव । सूक्ष्मसंपरायसरागसंयमो द्विविधः प्रज्ञप्तस्तद् यथा—प्रथमसमयसूक्ष्म संपरायसरागसंयमश्चैव, अप्रथमसमयसूक्ष्मसंपरायसरागसंयमश्चैव । अथवा—चरमस मयसूक्ष्मसंपरायसरागसंयमश्चैव अचरमसमयसूक्ष्मसंपरायसरागसंयमश्चैव। सूक्ष्मसंप रायसरागसंयमो द्विविधः प्रज्ञप्तस्तद् यथा—संक्लिश्यमानश्चैव, विशुध्यमानश्चैव। बाद रसंपरायसरागसंयमो द्विविधः — प्रज्ञप्तस्तद् यथा — प्रथमसमयबादरसंपरायसरागसं यमश्चैव, अप्रथमसमयबादरसंपरायसरागसंयमश्चैव। अथवा—चरमसमयबादरसंपराय सरागसंयमश्चैव,अचरमसमयबादरसंपरायसराग यमश्चैव। अथवा—बादरसंपरायसरा गसंयमो द्विविधः प्रज्ञप्तस्तद् यथा—प्रतिपाती चैव, अप्रतिपाती चैव । वीतराग संयमो द्विविधः प्रज्ञप्तस्तद् यथा—उपशान्तकषायवीतरागसंयमश्चैव क्षीणकषायवी तरागसंयमश्चैव । उपशान्तकषायवीतरागसंयमो द्विविधः प्रज्ञप्तस्तद् यथा—प्रथम समयोपशान्तकषायवीतरागसंयमश्चैव, अप्रथमसमयोपशान्तकषायवीतरागसंयम श्चैव । अथवा—चरमसमयोपशान्तकषायवीतरागसंयमश्चैव अचरमसमयोपशान्तकषा यवीतरागसंयमश्चैव । क्षीणकषायवीतरागसंयमो द्विविधः प्रज्ञप्तस्तद् यथा छद्मस्थ क्षीणकषायवीतरागसंयमश्चैव केवलिक्षीणकषायवीतरागसंयमश्चैव । छद्मस्थक्षीण

कषायवीतरागसंयमो द्विविधःप्रज्ञप्तस्तद् यथा-स्वयंबुद्धछद्मस्थक्षीणकषायवीतराग-संयमश्चैव, बुद्धबोधितछद्मस्थक्षीणकषायवीतरागसंयमश्चैव । स्वयंबुद्धछद्मस्थक्षीण-कषायवीतरागसंयमो द्विविधः प्रज्ञप्तस्तद् यथा-प्रथमसमयस्वयंबुद्धछद्मस्थक्षीण-कषायवीतरागसंयमश्चैव, अप्रथमसमयस्वयंबुद्धछद्मस्थक्षीणकषायवीतरागसंयमश्चैव । अथवा-चरमसमयस्वयंबुद्धछद्मस्थक्षीणकषायवीतरागसंयमश्चैव, अचरमसमयस्वयं-बुद्धछद्मस्थक्षीणकषायवीतरागसंयमश्चैव । बुद्धबोधितछद्मस्थक्षीणकषायवीतराग-संयमो द्विविधः प्रज्ञप्तस्तद् यथा-प्रथमसमयबुद्धबोधितछद्मस्थक्षीणकषायवीतराग-संयमश्चैव, अप्रथमसमयबुद्धबोधितछद्मछस्थक्षीणकषायवीतरागसंयमश्चैव, अथवा-चरमसमयबुद्धबोधितछद्मस्थक्षीणकषायवीतरागसंयमश्चैव, अचरमसमयबुद्धबोधित-छद्मस्थक्षीणकषायवीतरागसंयमश्चैव । केवलिक्षीणकषायवीतरागसंयमो द्विविधः-प्रज्ञप्तस्तद् यथा-सयोगिकेवलिक्षीणकषायवीतरागसंयमश्चैव, अयोगिकेवलिक्षीण-कषायवीतरागसंयमश्चैव सयोगिकेवलिक्षीणकषायवीतरागसंयमो द्विविधः प्रज्ञ-प्तस्तद् यथा-प्रथमसमयसयोगिकेवलिक्षीणकषायवीतरागसंयमश्चैव, अप्रथमसमय-सयोगिकेवलिक्षीणकषायवीतरागसंयमश्चैव । अथवा-चरमसमयसयोगिकेवलिक्षीण-कषायवीतरागसंयमश्चैव, अचरमसमयसयोगिकेवलिक्षीणकषायवीतरागसंयमश्चैव, अयोगिकेवलिक्षीणकषायवीतरागसंयमो द्विविधः प्रज्ञप्तस्तद् यथा-प्रथमसमयायोगि-केवलिक्षीणकषायवीतरागसंयमश्चैव, अप्रथमसमयायोगिकेवलिक्षीणकषायवीतरा-गसंयमश्चैव । अथवा-चरमसमयायोगिकेवलिक्षीणकषायवीतरागसंयमश्चैव, अच-रमसमयायोगिकेवलिक्षीणकषायवीतरागसंयमश्चैव ॥ सू० १६ ॥

टीका—' दुविहे धम्मे ' इत्यादि ।

धर्मः-धरति=रक्षति दुर्गतौ पतनात् प्राणिनः, शुभे स्थाने च स्थापयति यः स तथोक्तः ।

ज्ञान का वर्णन हो चुका-अब चारित्र का वर्णन होता है-

" दुविहे धम्मे पन्नत्ते " इत्यादि ॥१६॥

दुर्गति में पतन होने से जीव की जो रक्षा करता है और शुभ-स्थानमें उसे पहुँचा देता है उसका नाम धर्म है उक्तं च—

જ્ઞાનનું નિરૂપણ કરીને હવે સૂત્રકાર ચારિત્રનુ નિરૂપણ કરે છે—

" दुविहे धम्मे पण्णत्ते " ઇત્યાદિ ॥ ૧૬ ॥

જે જીવને દુર્ગતિમાં પડતો બચાવે છે અને શુભ સ્થાનમાં તેને પહોંચાડે છે, તેનું નામ ધર્મ છે. " संसार दुःखतः " ઇત્યાદિ.

उक्तं च—" दुर्गतिप्रसृतान् जन्तून्, यस्माद्धारयते पुनः ।
धत्ते चैव शुभे स्थाने, तस्माद्धर्म इति स्मृतः ॥ १ ॥ "

असौ द्विविधः प्रज्ञप्तः, तद्यथा—श्रुतधर्मश्चैव, चारित्रधर्मश्चैव। तत्र—श्रुतं=द्वादशाङ्गम् —तदेव धर्मः श्रुतधर्मः॥ तथा—चारित्रं=मूलोत्तरगुणात्मकम्, तदेव धर्मः चारित्रधर्मः॥ ' सुयधम्मे दुविहे ' इत्यादि । श्रुतधर्मो द्विविधः—सूत्रश्रुतधर्मः, अर्थश्रुतधर्मश्चेति। तत्र—सूच्य ते=ग्रथ्यन्ते, धातूनामनेकार्थत्वात् सूच्यन्ते वाऽर्था अनेन—अस्मिन् चेति सूत्रम्, मूलागमः । तद्रूपः श्रुतधर्मः सूत्रश्रुतधर्मः । अर्यते=अभिगम्यते, यद्वा—अर्थ्यते=याच्यते मोक्षाभिलाषिभिर्यः स अर्थः=व्याख्यानम्, तद्रूपः श्रुतधर्म

" संसार दुःखतः सत्त्वान् यो धरत्युत्तमे सुखे " तथा ' दुर्गति प्रसृतान् जन्तून् " इत्यादि ।

यह धर्म दो प्रकार का कहा गया है, एक श्रुत–धर्म और दूसरा चारित्र धर्म द्वादशाङ्गरूप श्रुतधर्म है तथा मूलगुण और उत्तर गुणरूप चारित्रधर्म है " सुयधम्मे दुविहे " श्रुतधर्म और अश्रुतधर्मके भेदसे श्रुतधर्म भी दो प्रकारका है धातुओं के अनेक अर्थ होते हैं इस कारण यहां–" सूच्य ते–सूच्यन्ते वा अनेके अर्थाः अनेन अस्मिन् वा सूत्रम् " इस व्युत्पत्ति के अनुसार जिसके द्वारा अथवा जिसमें अर्थ गूथे गये हैं या सूचित किये गये हैं वह सूत्र है ऐसा वह सूत्र मूलागम है इस रूप जो श्रुतधर्म है वही श्रुतधर्म है " अर्यते–अभिगम्यते यद्वा अर्थ्यते–याच्यते मोक्षाभिलाषिभिः यः सः अर्थः व्याख्यानम् " इस व्युत्पत्ति के अनुसार मोक्षाभिलाषी व्यक्तियों के द्वारा जो प्राप्त किया जाता है या प्रार्थित किया जाता है वह अर्थ है ऐसा वह अर्थ

આ ધર્મ બે પ્રકારનો કહ્યો છે—(૧) શ્રુતધર્મ અને ચારિત્રધર્મ શ્રુત દ્વાદશાંગ (બાર અંગ) રૂપ છે તથા મૂલગુણ અને ઉત્તરગુણરૂપ ચારિત્રધર્મ છે

" सुयधम्मे दुविहे " શ્રુતધર્મના અને અશ્રુતધર્મના ભેદથી શ્રુતધર્મ પણ બે પ્રકારનો કહ્યો છે ધાતુઓના અનેક અર્થ થાય છે, તે કારણે અહીં " सूच्यन्ते–सूच्यन्ते वा अनेके अर्थाः अनेन अस्मिन् वा सूत्रम् " આ વ્યુત્પત્તિ અનુસાર " જેના દ્વારા અથવા જેના અર્થ ગૂંથવામાં આવ્યા છે અથવા સૂચિત કરાયા છે, તેનું નામ જ સૂત્ર છે, એવું તે સૂત્ર મૂલાગમ છે મૂલાગમ રૂપ જે શ્રુતધર્મ છે એજ શ્રુતધર્મ રૂપ છે अर्यते–अभिगम्यते यद्वा अर्थ्यते–याच्यते मोक्षाभिलाषिभिः यः सः अर्थः व्याख्यानम् " આ વ્યુત્પત્તિ અનુસાર જે મોક્ષાભિલાષી વ્યક્તિઓ દ્વારા પ્રાપ્ત કરાય છે અથવા પ્રાર્થિત કરાય છે, તેનું નામ

अर्थश्रुतधर्मः । सूत्रार्थं योर्विस्तरव्याख्या उत्तराध्ययनसूत्रस्य प्रथमाध्ययने त्रयोविंतिगाथायां मत्कृतप्रियदर्शिनीटीकायामवलोकनीया। 'चरित्तधम्मे दुविहे' इत्यादि । चारित्रधर्मो द्विविध प्रज्ञप्तः, तद्यथा अगारचारित्रधर्मः, अनगार चारित्रधर्मश्चेति । तत्र–अगारं=गृहं, तद् योगाद् अगाराः=गृहस्थाः तेषां यश्चारित्रधर्मः= सम्यक्त्वमूलाणुव्रतादिपालनरूपः सोऽगारचारित्रधर्मः । न विद्यते अगारं = गृहं येषां ते–अनगाराः=संयताः, तेषां यश्चारित्रधर्मः=महाव्रतादिपालनरूपः सोऽनगारचारित्रधर्मः । चारित्रधर्मश्च संयम इति संयममाह–'दुविहे संजमे' इत्यादि । संयमो द्विविधः—सरागसंयमः, वीतरागसंयमश्चेति । तत्र यो रागेण = माया-

---

व्याख्यान है इस रूप जो श्रुतधर्म है वह अर्थ श्रुतधर्म है सूत्र और अर्थ की विस्तृत व्याख्या उत्तराध्ययन सूत्र के प्रथम अध्ययन में २३ वीं गाथा की प्रियदर्शिनी टीका में की गई है सो वहीं से इसे देख लेनी चाहिये "चारित्तधम्मे दुविहे पण्णत्ते" चारित्रधर्म दो प्रकार का कहा गया है एक अगारका चारित्रधर्म और दूसरा अनगार का चारित्र धर्म अगार नाम गृह का है इस गृह योग से यहां अगार शब्द से गृहस्थ जन गृहीत हुए हैं इन गृहस्थजनों का जो सम्यक्त्व सहित मूलगुण अणुव्रत आदि का पालन रूप धर्म है, वह अगार चारित्र धर्म है तथा जिनको गृह का प्रतिबन्ध नहीं होता है वे अनगार हैं ऐसे अनगार संयत होते हैं इन संयतजनोंका जो महाव्रतादि पालन रूप चारित्र धर्म है वह अनगार चारित्रधर्म है चारित्रधर्मका नाम ही संयम है अतः यह संयम "दुविहे संजमे" इत्यादि कथन के अनुसार

અર્થ છે, એવો તે અર્થ વ્યાખ્યાન છે. આ વ્યાખ્યાન રૂપ જે શ્રુતધર્મ છે તે અર્થશ્રુતધર્મ છે સૂત્ર અને અર્થની વ્યાખ્યા ઉત્તરાધ્યયન સૂત્રના પહેલા અધ્યયનની ૨૩ મી ગાથાની પ્રિયદર્શિની ટીકામા વિસ્તારપૂર્વક આપવામાં આવેલ છે, તો જિજ્ઞાસુઓએ તે વાચી લેવી

"ચારિત્તધમ્મે દુવિહે પણ્ણત્તે" ચારિત્રધર્મ બે પ્રકારનો કહ્યો છે–(૧) અગારનો ચારિત્રધર્મ અને (૨) અણુગારનો ચારિત્રધર્મ અગાર એટલે ગૃહ. અહીં અગાર શબ્દથી ગૃહસ્થજનને ગ્રહણ કરવા જોઇએ. તે ગૃહસ્થોએ સમ્યક્ત્વ સહિત મૂલગુણ અણુવ્રત આદિને પાળવા બંધનથી રહિત હોય છે તેમને અણુગાર કહે છે. એવાં અણુગારો સંયત હોય છે, તે સંયત અણુગારોનો જે મહાવ્રતાદિ પાલનરૂપ ધર્મ છે તેને અણુગાર ચારિત્રધર્મ કહે છે ચારિત્રધર્મનું નામ જ સંયમ છે. "દુવિહે સંજમે" ઈત્યાદિ કથન અનુસાર તે સંયમ બે

उक्त च—" दुर्गतिप्रसृतान् जन्तून्, यस्माद्धारयते पुनः ।
धत्ते चैव शुभे स्थाने, तस्माद्धर्म इति स्मृत ॥ १ ॥ "

असौ द्विविधः प्रज्ञप्तः, तद्यथा—श्रुतधर्मश्चैव, चारित्रधर्मश्चैव । तत्र-श्रुतम्=द्वादशाङ्गम् —तदेव धर्म श्रुतधर्मः। तथा—चारित्रं=मूलोत्तरगुणात्मकम्, तदेव धर्मः चारित्रधर्मः। ' सुयधम्मे दुविहे ' इत्यादि । श्रुतधर्मो द्विविधः—सूत्रश्रुतधर्मः, अर्थश्रुतधर्मश्चेति । तत्र—सूच्य ते=ग्रथ्यन्ते, धातूनामनेकार्थत्वात् सूच्य ते वाऽर्था अनेन—अस्मिन् चेति सूत्रम्, मूलागमः । तद्रूप श्रुतधर्मः सूत्रश्रुतधर्मः । अर्यते=अभिगम्यते, यद्वा-अर्थ्यते=याच्यते मोक्षाभिलाषिभिर्यः स अर्थः=व्याख्यानम्, तद्रूपः श्रुतधर्मः

" संसार दुःखतः सत्त्वान् यो धरत्युत्तमे सुखे " तथा ' दुर्गति प्रसृतान् जन्तून् " इत्यादि ।

यह धर्म दो प्रकार का कहा गया है, एक श्रुत-धर्म और दूसरा चारित्र धर्म द्वादशाङ्गरूप श्रुतधर्म है तथा मूलगुण और उत्तर गुणरूप चारित्रधर्म है " सुयधम्मे दुविहे " श्रुतधर्म और अश्रुतधर्मके भेदसे श्रुतधर्म भी दो प्रकारका है धातुओं के अनेक अर्थ होते हैं इस कारण यहां—" सूच्य ते-सूच्यन्ते वा अनेके अर्थाः अनेन अस्मिन् वा सूत्रम् " इस व्युत्पत्ति के अनुसार जिसके द्वारा अथवा जिसमें अर्थ गूथे गये हैं या सूचित किये गये हैं वह सूत्र है ऐसा यह सूत्र मूला गम है इस रूप जो श्रुतधर्म है वही श्रुतधर्म है " अर्यते-अभिगम्यते यद्वा अर्थ्यते-याच्यते मोक्षाभिलाषिभि' यः स' अर्थ' व्याख्यानम् " इस व्युत्पत्ति के अनुसार मोक्षाभिलाषी व्यक्तियों के द्वारा जो प्राप्त किया जाता है या प्रार्थित किया जाता है वह अर्थ है ऐसा वह अर्थ

આ ધર્મ બે પ્રકારનો કહ્યો છે—(૧) શ્રુતધર્મ અને ચારિત્રધર્મ અંગ દ્વાદશાંગ (બાર અંગ) રૂપ છે, તથા મૂલગુણ અને ઉત્તરગુણરૂપ ચારિત્રધર્મ છે

" સુયધમ્મે દુવિહે " શ્રુતધર્મના અને અશ્રુતધર્મના ભેદથી શ્રુતધર્મ પણ બે પ્રકારનો કહ્યો છે ધાતુઓના અનેક અર્થ થાય છે તે કારણે અહીં " સૂચ્યન્તે-સૂચ્યન્તે વા અનેકે અર્થાઃ અનેન અસ્મિન્ વા સૂત્રમ્ " આ વ્યુત્પત્તિ અનુસાર " જેના દ્વારા અથવા જેના અર્થ ગૂંથવામાં આવ્યા છે અથવા સૂચિત કરાયા છે, તેનું નામ જ સૂત્ર છે, એવું તે સૂત્ર મૂલાગમ છે મૂલાગમ રૂપ જે શ્રુતધર્મ છે એજ શ્રુતધર્મ રૂપ છે ' અર્થ્યતે-અભિગમ્યતે યદ્વા અર્થ્યતે-યાચ્યતે મોક્ષાભિલાષિભિઃ યઃ સઃ અર્થઃ વ્યાખ્યાનમ્" આ વ્યુત્પત્તિ અનુસાર જે મોક્ષા ભિલાષી વ્યક્તિઓ દ્વારા પ્રાપ્ત કરાય છે અથવા પ્રાર્થિત કરાય છે, તેનું નામ

अर्थश्रुतधर्मः। सूत्रार्थं योर्विस्तरव्याख्याउत्तराध्ययनसूत्रस्य प्रथमाध्ययने त्रयोविंशतिगाथायां मत्कृतप्रियदर्शिनीटीकायामवलोकनीया। 'चरित्तधम्मे दुविहे' इत्यादि। चारित्रधर्मो द्विविध प्रज्ञप्तः, तद्यथा अगारचारित्रधर्मः, अनगार चारित्रधर्मश्चेति। तत्र-अगारं=गृहं, तद् योगाद् अगाराः=गृहस्थाः तेषां यश्चारित्रधर्मः=सम्यक्त्वमूलाणुव्रतादिपालनरूपःसोऽगारचारित्रधर्मः। न विद्यते अगारं = गृहं येषां ते-अनगाराः=संयताः, तेषां यश्चारित्रधर्मः=महाव्रतादिपालनरूपः सोऽनगारचारित्रधर्मः। चारित्रधर्मश्च संयम इति संयममाह-'दुविहे संजमे' इत्यादि। संयमो द्विविधः—सरागसंयमः, वीतरागसंयमश्चेति। तत्र यो रागेण = माया-

---

व्याख्यान है इस रूप जो श्रुतधर्म है वह अर्थ श्रुतधर्म है सूत्र और अर्थ की विस्तृत व्याख्या उत्तराध्ययन सूत्र के प्रथम अध्ययन में २३ वीं गाथा की प्रियदर्शिनी टीका में की गई है सो वहीं से इसे देख लेनी चाहिये "चारित्तधम्मे दुविहे पण्णत्ते" चारित्रधर्म दो प्रकार का कहा गया है एक अगारका चारित्रधर्म और दूसरा अनगार का चारित्र धर्म अगार नाम गृह का है इस गृह योग से यहां अगार शब्द से गृहस्थ जन गृहीत हुए हैं इन गृहस्थजनों का जो सम्यक्त्व सहित मूलगुण अणुव्रत आदि का पालन रूप धर्म है, वह अगार चारित्र धर्म है तथा जिनको गृह का प्रतिबन्ध नहीं होता है वे अनगार हैं ऐसे अनगार संयत होते हैं इन संयतजनोंका जो महाव्रतादि पालन रूप चारित्र धर्म है वह अनगार चारित्रधर्म है चारित्रधर्मका नाम ही संयम है अतः यह संयम "दुविहे संजमे" इत्यादि कथन के अनुसार

અર્થ છે, એવો તે અર્થ વ્યાખ્યાન છે. આ વ્યાખ્યાન રૂપ જે શ્રુતધર્મ છે તે અર્થશ્રુતધર્મ છે સૂત્ર અને અર્થની વ્યાખ્યા ઉત્તરાધ્યયન સૂત્રના પહેલા અધ્યયનની ૨૩ મી ગાથાની પ્રિયદર્શિની ટીકામાં વિસ્તારપૂર્વક આપવામાં આવેલ છે, તો જિજ્ઞાસુઓએ તે વાંચી લેવી

"ચારિત્તધમ્મે દુવિહે પણ્ણત્તે" ચારિત્રધર્મ બે પ્રકારનો કહ્યો છે-(૧) અગારનો ચારિત્રધર્મ અને (૨) અણુગારનો ચારિત્રધર્મ. અગાર એટલે ગૃહ. અહીં અગાર શબ્દથી ગૃહસ્થજનને ગ્રહણ કરવા જોઈએ. તે ગૃહસ્થોએ સમ્યક્ત્વ સહિત મૂલગુણ અણુવ્રત આદિને પાળવા બંધનથી રહિત હોય છે તેમને અણુગાર કહે છે એવાં અણુગારો સંયત હોય છે, તે સંયત અણુગારોનો જે મહાવ્રતાદિ પાલનરૂપ ધર્મ છે તેને અણુગાર ચારિત્રધર્મ કહે છે. ચારિત્રધર્મનું નામ જ સંયમ છે. "દુવિહે સંજમે" ઇત્યાદિ કથન અનુસાર તે સંયમ બે

विकल्पेन सह वर्तते स सरागः, स चासौ संयमश्च सरागस्य वा संयमः सरागसंयमः= सकषायचारित्रमित्यर्थः । वीतः=विगतो नष्टो रागो यस्मात् स वीतरागः, स चासौ संयमश्च वीतरागसंयमः-कषायवर्जितचारित्रमित्यर्थः । 'दुविहे' इत्यादि-सरागसंयमो द्विविधः-सूक्ष्मसंपरायसरागसंयमः, बादरसंपरायसरागसंयमश्चेति । तत्र-संपरायेति-संसरति संसारं येन स सम्परायः क्रोधादिलक्षणः कषायः, स सूक्ष्मः-स्वल्पः लोभकषायरूपो यस्य उपशमकस्य क्षपकस्य चेति सूक्ष्मसंपरायः=संयतः, स चासौ सरागसंयमश्चेति तस्य वा सरागसंयमः सूक्ष्मसंपरायसरागसंयमः ।

दो प्रकारका कहा गया है एक सरागसंयम और दूसरा वीतराग संयम इनमें जो संयम मायादिरूप रागके साथ पालित होता है वह सराग संयम है अथवा सराग का जो संयम है वह सराग संयम है इसका दूसरा नाम कषायसहित चारित्र है जिससे राग विनष्ट हो जाता है वह वीतराग है इस वीतरागरूप संयमका नाम वीतराग संयम है यह कषायवर्जित चारित्ररूप होता है "दुविहे" इत्यादि ।

सरागसंयम दो प्रकारका कहा गया है-एक सूक्ष्मसंपराय सरागसंयम दूसरा बादरसंपराय सरागसंयम जीव जिसके द्वारा संसार में भटकता फिरता है उसका नाम संपराय है, ऐसा यह संपराय क्रोधादि कषाय रूप होता है जिस क्षपक के या उपशमक के यह लोभ कषायरूप संपराय स्वल्प होता है ऐसा वह स्वल्प लोभ कषाय सूक्ष्म संपराय है यह स्वल्प लोभकषाय रूप सूक्ष्म संपराय ही सराग संयम है अथवा

પ્રકારનો કહ્યો છે– (१) સરાગ સંયમ અને (२) વીતરાગસંયમ જે સંયમનું માયાદિરૂપ રાગસહિત પાલન થાય છે, તે સંયમને સરાગસંયમ કહે છે અથવા સરાગ જીવનો જે સંયમ છે તેને સરાગ સંયમ કહે છે તેને કષાય સહિત ચારિત્ર પણ કહે છે જે જીવમાંથી રાગ નાશ પામી ગયો હોય છે તે જીવને વીતરાગ કહે છે તે વીતરાગરૂપ સંયમને વીતરાગ સંયમ કહે છે, તે કષાયરહિત ચારિત્રરૂપ હોય છે

"दुविहे" ઇત્યાદિ. સરાગ સંયમના પણ નીચે પ્રમાણે બે પ્રકાર કહ્યા છે-(१) સૂક્ષ્મ સંપરાય સરાગ સંયમ અને (२) બાદર સંપરાય સરાગ સંયમ. જીવ જેના દ્વારા સંસારમાં ભટકતો રહે છે, તે સંપરાય કહેવાય છે તે સંપરાય ક્રોધાદિ કષાયરૂપ હોય છે જે ક્ષપકમાં કે ઉપશમકમાં આ લોભકષાયરૂપ સંપરાય સ્વલ્પ (ઘણાં ઓછા પ્રમાણમાં) હોય છે, તે ક્ષપક અથવા ઉપશમકના તે સ્વલ્પ લોભકષાયને સૂક્ષ્મ-સંપરાય કહે છે આ સ્વલ્પ લોભકષાય રૂપ સૂક્ષ્મ સંપરાય જ સરાગ સંયમ ગણાય છે અથવા સૂક્ષ્મ સંપરાયવાળા

वादराः=स्थूलाः संपरायाः कपायाः यस्य यस्मिन् वा संयमे स वादरसंपरायसराग-संयमः । ' सुहुमे ' त्यादि–सूत्रद्वयम् । सूक्ष्मसंपरायसरागसंयमः द्विविधः प्रज्ञप्तः, तद्यथा–प्रथमसमयसूक्ष्मसंपरायसरागसंयमः, अप्रथमसमयसूक्ष्मसपरायसरागसंयम-श्चेति । तत्र प्रथम'=एकएव समयो यस्योत्पत्तौ स प्रथमसमयः, स चासौ सूक्ष्म-संपरायसरागसंयमश्चेति तस्य वा तथोक्तः तथा – अप्रथमः द्व्यादिरूपः समयो यस्य स तयोक्तः, स चासौ सूक्ष्मसंपरायसरागसंयमश्चेति तथा । प्रकार-न्तरेणाह—' - अहवे ' त्यादि – अथवा – चरम. – अन्तिमः समयः चारित्र-प्राप्त्यपेक्षया यस्य स तथा, स चासौ तस्य वा सूक्ष्मसंपरायसरागसंयमश्चेति

सूक्ष्म संपरायवाले संयत का १० वें गुणस्थानवर्ती जीव का जो सराग-संयम है वह सूक्ष्मसंपराय सरागसंयम है जिस संयमी जीवको या जिस संयम में स्थूलरूप कषायें रहती हैं वह बादरसंपराय है इस बादर संपरायवाले जीव का जो रागसहित संयम है वह वादरसंपरायसंयम है अथवा इस वादरसंपराय के होने पर जो राग सहित संयम होता है वह वादरसंपरायसंयम है, सूक्ष्म संपराय सराग संयम भी दो प्रकार का होता है एक प्रथम समय सूक्ष्मसंपराय सरागसंयम और दूसरा–अप्रथम समय सूक्ष्मसंपराय सरागसंयम जिस सूक्ष्मसंपराय सराग संयम की उत्पत्ति में एक ही समय होता है वह प्रथम समय सूक्ष्मसंपराय सराग संयम है तथा जिस सूक्ष्मसंपरायसंयम की उत्पत्ति में द्व्यादि समय का काल लगता है वह अप्रथम समय सूक्ष्मसंपराय सरागसंयम है अथवा इस तरह से भी इनके दो भेद हैं–एक चरमसमय सूक्ष्मसंप-

સંયતનો–દસમાં ગુણસ્થાનવર્તી જીવનો જે સરાગ સંયમ છે તેને સૂક્ષ્મ સંપરાય સરાગ સંયમ કહે છે. જે સયમયુક્ત જીવમાં અથવા જે સંયમમાં સ્થૂલરૂપ કષાયોનો સદ્ભાવ રહે છે, તે બાદર સંપરાય રૂપ છે. તે બાદર સંપ. રાયયુક્ત જીવનો જે રાગસહિત સંયમ છે તેને બાદર સંપરાય સયમ કહે છે.

સૂક્ષ્મ સપરાય સરાગ સંયમ પણ બે પ્રકારનો હોય છે–(૧) પ્રથમ સમય સૂક્ષ્મ સંપરાય સરાગ સંયમ અને (૨) અપ્રથમ સમય સૂક્ષ્મ સંપરાય સરાગ સંયમ. જે સૂક્ષ્મ સંપરાય સરાગ સયમની ઉત્પત્તિમાં એક જ સમય થાય છે, તેને પ્રથમ સમય સૂક્ષ્મ સંપરાય સરાગ સંયમ કહે છે. જે સૂક્ષ્મ સપરાયની ઉત્પત્તિમાં બે આદિ સમયનો કાળ લાગે છે, તેને અપ્રથમ સમય સૂક્ષ્મ સંપરાય સરાગ સંયમ કહે છે અથવા આ રીતે પણ તેના બે ભેદ છે (૧) ચરમ સમય સૂક્ષ્મ સંપરાય સરાગ સંયમ અને (૨) અચરમ સમય સૂક્ષ્મ સપરાય સરાગ સંયમ ચારિત્રપ્રાપ્તિની અપેક્ષાએ જેનો સમય અન્તિમ હોય

तथा । न चरमः अचरम , शैलेश्यवस्थातः पूर्वभागवर्त्ती समयः चारित्राप्राप्त्यपेक्षया यस्य स तथा, स चासौ तस्य वा सूक्ष्मसंपरायसरागसंयमश्चेति तथोक्तः । पुन प्रकारान्तरेणाह–'अहव' त्यादि । अथवा–अन्यप्रकारेण सूक्ष्मसंपरायसरागसंयमो द्विविधः प्रज्ञप्त , तद्यथा–संक्लिश्यमान विशुध्यमानश्चेति । तत्र–संक्लिश्यमानसूक्ष्म संपरायसंयम उपशमश्रेण्या प्रतिपततः, विशुध्यमानसूक्ष्मसंपरायसरागसंयम उपशमश्रेणीं वा समारोहतो जीवस्य भवति । 'बादरे' त्यादिसूत्रद्वयम्–बादरसंपरायसराग संयमो द्विविध प्रथमसमयबादरसंपरायसरागसंयमः, अप्रथमसमयबादरसंपरायसरागसंयमः। अत्र प्रथमाप्रथमसमयता संयमप्रतिपत्तिकालापेक्षया बोध्या। अथवा–चर

राय सराग संयम और दूसरा अचरमसमय सूक्ष्मसंपराय सराग संयम चारित्र प्राप्ति की अपेक्षा से जिसका समय अन्तिम होता है ऐसा जो सूक्ष्मसंपराय सराग संयम है वह चरम समय सूक्ष्मसंपराय स रागसंयम है तथा शैलेशी अवस्था से पूर्वभागवर्ती समय चारित्र प्राप्ति की अपेक्षा से जिसका होता है वह अचरम समय सूक्ष्म संपराय सराग संयम है अथवा सूक्ष्म संपराय सराग संयम इस तरह से भी दो भेदों से दो प्रकार का कहा गया है–एक संक्लिश्य मान दूसरा विशुध्यमान इनमें संक्लिश्यमान सूक्ष्मसंपराय सराग संयम उपशमश्रेणि से गिरते हुए जीव के होता है और विशुद्ध्यमान सूक्ष्मसंपराय सराग संयम उपशम श्रेणी पर आरोहण करते हुए जीव के होता है बादर संपराय सरागसंयम दो प्रकार का है, प्रथमसमय बादरसंपरायसरागसंयम और अप्रथमसमयबादरसंपरायसरागसंयम यहां संयम प्रतिपत्ति काल की अपेक्षासे प्रथम अप्रथम समयता जाननी चाहिये।

છે એવો જે સૂક્ષ્મ સંપરાય સરાગ સંયમ છે તેને ચરમ સમય સૂક્ષ્મ સંપરાય સરાગ સંયમ કહે છે તથા શૈલેશી અવસ્થા કરતાં પૂર્વભાગવર્તી જેનો ચારિત્ર પ્રાપ્તિની અપેક્ષાએ સમય હોય છે તેને અચરમ સમય સૂક્ષ્મ સંપરાય સરાગ સંયમ કહે છે અથવા સૂક્ષ્મ સંપરાય સરાગ સંયમના નીચે પ્રમાણે બે ભેદ કહ્યા છે–(૧) સંક્લિશ્યમાન અને (૨) વિશુધ્યમાન.

ઉપશમ શ્રેણીથી પતન પામતા જીવમાં સંક્લિશ્યમાન સૂક્ષ્મ સંપરાય સરાગસંયમ હોય છે, અને ઉપશમ શ્રેણિપર આરોહણ કરતા જીવમાં વિશુધ્યમાન સૂક્ષ્મ સંપરાય સરાગ સંયમનો સદ્ભાવ હોય છે

બાદર સંપરાય સરાગ સંયમના પણ બે પ્રકાર છે–(૧) પ્રથમ સમય બાદર સંપરાય સરાગ સંયમ અને (૨) અપ્રથમ સમય બાદર સંપરાય સરાગ સંયમ. અહીં સંયમ પ્રતિપત્તિ કાળની અપેક્ષાએ પ્રથમ સમયતા અને અપ્રથમ સમયતા સમજવી.

माचरमसमयमाश्रित्य सूत्रं वाच्यम् । अत्र-चरमाचरमसमयता तु यदनन्तरं सूक्ष्मसंपरायता असंयतत्वं वा भविष्यति, तदपेक्षया वाच्या । शेषव्याख्या पूर्ववदेव । अथ प्रकारान्तरेणाप्याह-'अहवे' त्यादि-अथवा-अन्यप्रकारेण बादरसंपरायसरागसंयमो द्विविधः प्रज्ञप्तः, तद्यथा-प्रतिपाती चेति अप्रतीपाती चेति । अयं सयमउपशमकस्यान्यस्य वा प्रतिपाति भवती । अप्रतिपाती तु क्षपकस्येति बोध्यम् ।

उक्तः सरागसंयमः । संप्रति वीतरागसंयममाह-'वीयरागे' इत्यादि । वीतरागसंयमो द्विविधः प्रज्ञप्तस्तद्यथा-उपशान्तकषायवीतरागसंयमः क्षीणकषायवीतरागसंयमश्चेति । उपशान्ताः उपशमिता विद्यमाना एव संक्रमणोद्वर्त्तनाऽपवर्त्तनादिकरणोदयायोग्यत्वेन व्यवस्थापिताः प्रदेशतोऽप्यवेद्यमाना वा कषायाः

अथवा—चरम समय बादरसंपरायसरागसंयम और अचरम समय बादरसंपरायसरागसंयम इस प्रकार से भी इनके दो भेद है यहां चरम समयता और अचरम समयता जिसके अनन्तर सूक्ष्म संपरायता अथवा असंयतता होगी उसकी अपेक्षा से कह लेनी चाहिये अवशिष्ट व्याख्या पूर्ववत् ही है अथवा इस प्रकारसे भी बादरसंपरायसराग संयम दो प्रकार का है-एक प्रतिपाती और दूसरी अप्रतिपाती उपशमक के अथवा अन्य के यह संयम प्रतिपाती होता है तथा क्षपक के अप्रतिपाती होता है-

"वीयराग संजमे" इत्यादि-वीतरागसंयम दो प्रकार का होता है एक उपशान्तकषायवीतरागसंयम दूसरा क्षीणकषायवीतरागसंयम जो जीव विद्यमान कषायों को माया लोभ कषायों को उपशान्त कर

અથવા આ પ્રકારે પણ તેના બે ભેદ કહ્યા છે-(૧) ચરમ સમય બાદર સંપરાય સરાગ સયમ અને (૨) અચરમ બાદર સંપરાય સરાગ સંયમ. અહીં ચરમ સમયતા અને અચરમ સમયતાનુ કથન જેના અનન્તર (ત્યારબાદ) સૂક્ષ્મ સપરાયતા અથવા અસયતતા થશે, તેની અપેક્ષાએ કહેવુ જોઇએ. બાકીની વ્યાખ્યા આગળ મુજબ સમજવી અથવા બાદર સંપરાય સરાગ સયમના નીચે પ્રમાણે પણ બે ભેદ છે-(૧) પ્રતિપાતિ અને (૨) અપ્રતિપાતિ. ઉપશમકને અથવા અન્યને આ સંયમ પ્રતિપાતિ હોય છે તથા ક્ષપકને અપ્રતિપાતિ હોય છે.

"વીયરાગસંજમે" ઇત્યાદિ. વીતરાગ સંયમના નીચે પ્રમાણે બે પ્રકાર છે—(૧) ઉપશાન્ત કષાય વીતરાગ સંયમ અને (૨) ક્ષીણ કષાય વીતરાગ સંયમ. જે જીવ વિદ્યમાન કષાયોને-માયા લોભ કષાયોને ઉપશાન્ત કરી નાંખે છે,

यथा। न चरम अचरम, शैलेश्यवस्थातः पूर्वभागवर्ती समयः चारित्रप्राप्त्यपेक्षया यस्य स तथा, स चासौ समयश्च तथा सूक्ष्मसंपरायसरागसंयमश्चेति तथोक्तः। पुन प्रकारान्तरेणाह-'अहवा' इत्यादि। अथवा-अन्यप्रकारेण सूक्ष्मसंपरायसरागसंयमो द्विविधः प्रज्ञप्तः, तद्यथा-संक्लिश्यमानः विशुध्यमानश्चेति। तत्र-संक्लिश्यमानसूक्ष्मसंपरायसंयमः उपशमश्रेण्याः प्रतिपततः, विशुध्यमानसूक्ष्मसंपरायसरागसंयमः उपशमश्रेणौ वा समारोहतो जीवस्य भवति। 'बादरे' त्यादिसूत्रद्वयम्-बादरसंपरायसरागसंयमो द्विविधः प्रथमसमयबादरसंपरायसरागसंयमः, अप्रथमसमयबादरसंपरायसरागसंयमः। अत्र प्रथमाप्रथमसमयता संयमप्रतिपत्तिकालापेक्षया बोध्या। अथवा-चर

राय सराग संयम और दूसरा अचरमसमय सूक्ष्मसंपराय सराग संयम चारित्र प्राप्ति की अपेक्षा से जिसका समय अन्तिम होता है ऐसा जो सूक्ष्मसंपराय सराग संयम है वह चरम समय सूक्ष्मसंपराय स रागसंयम है तथा शैलेशी अवस्था से पूर्वभागवर्ती समय चारित्र प्राप्ति की अपेक्षा से जिसका होता है वह अचरम समय सूक्ष्म संपराय सराग संयम है अथवा सूक्ष्म संपराय सराग संयम इस तरह के भी दो भेदों से दो प्रकार का कहा गया है-एक संक्लिश्यमान दूसरा विशुध्यमान इनमें संक्लिश्यमान सूक्ष्मसंपराय सराग संयम उपशमश्रेणि से गिरते हुए जीव के होता है और विशुद्ध्यमान सूक्ष्मसंपराय सराग संयम उपशम श्रेणी पर आरोहण करते हुए जीव के होता है बादर संपराय सरागसंयम दो प्रकार का है, प्रथमसमय बादरसंपरायसरागसंयम और अप्रथमसमयबादरसंपरायसरागसंयम यहाँ संयम प्रतिपत्ति काल की अपेक्षासे प्रथम अप्रथम समयता जाननी चाहिये।

છે એવો જે સૂક્ષ્મ સંપરાય સરાગ સંયમ છે તેને ચરમ સમય સૂક્ષ્મ સંપરાય સરાગ સંયમ કહે છે તથા શૈલેશી અવસ્થા કરતાં પૂર્વભાગવર્તી જેનો ચારિત્ર પ્રાપ્તિની અપેક્ષાએ સમય હોય છે તેને અચરમ સમય સૂક્ષ્મ સંપરાય સરાગ સંયમ કહે છે અથવા સૂક્ષ્મ સંપરાય સરાગ સંયમના નીચે પ્રમાણે બે ભેદ કહ્યા છે-(૧) સંક્લિશ્યમાન અને (૨) વિશુધ્યમાન.

ઉપશમ શ્રેણિથી પતન પામતા જીવમાં સંક્લિશ્યમાન સૂક્ષ્મ સંપરાય સરાગસંયમ હોય છે, અને ઉપશમ શ્રેણિપર આરોહણ કરતા જીવમાં વિશુધ્યમાન સૂક્ષ્મ સંપરાય સરાગ સંયમનો સદ્ભાવ હોય છે

બાદર સંપરાય સરાગ સંયમના પણ બે પ્રકાર છે-(૧) પ્રથમ સમય બાદર સંપરાય સરાગ સંયમ અને (૨) અપ્રથમ સમય બાદર સંપરાય સરાગ સંયમ. અહીં સંયમ પ્રતિપત્તિ કાળની અપેક્ષાએ પ્રથમ સમયતા અને અપ્રથમ સમયતા સમજવી.

छादयतिज्ञानादिगुणान् आत्मनः स्वरूपं वेति छद्म, यद्वा छाद्यते केवलज्ञान केवलदर्शनं चात्मनोऽनेनेति छद्म', तत्र तिष्ठतीति छद्मस्थः, स चासौ क्षीणकषायवीतरागसंयमश्च, तथा छद्मस्थस्य वा क्षीणकषायवीतरागसंयम इति। तथा—केवलं=अनन्तज्ञानदर्शनमस्यास्तीतिकेवली, स चासौ क्षीणकषायवीतरागसंयमश्चेति। यद्वा—केवलिनः क्षीणकषायवीतरागसंयम इति तथा। 'छउमत्थे'—त्यादि—छद्म-

क्षीणकषाय वीतराग संयम के भेद से भी दो प्रकार का है आत्मा के ज्ञानादि गुणों को अथवा स्वरूप को जो ढक देता है उस का नाम छद्म है अथवा – आत्मा के केवलज्ञान और केवलदर्शन जिस के द्वारा आच्छादित हो जाते हैं वह छद्म है, इस छद्म अवस्था में जो वर्तमान रहता है उसका नाम छद्मस्थ है इस छद्मस्थक्षीणकषाय वीतरागी का जो संयम है वह छद्मस्थक्षीणकषाय वीतराग संयम है तथा केवल ज्ञानविशिष्ट क्षीण कपायवाले वीतरागी आत्मा का जो संयम है वह केवलि क्षीणकषाय वीतराग संयम है अनन्तदर्शन और अनन्तज्ञान का नाम केवल है यह केवल जिसके होता है उसका नाम केवली है यह केवली नियमतः क्षीणकषाय वाला होता है क्यों कि केवली अवस्था १३ वे गुणस्थान में ही होती है और कषाय का सद्भाव १० वे गुण तक रहता है इसलिये १३वे गुणस्थानवाला आत्मा क्षीण कषायवाला केवली कहा गया है इस केवली का जो संयम होता है वही

બે ભેદ છે–(૧) છદ્મસ્થ ક્ષીણકષાયવીતરાગ સયમ અને (૨) કેવલી ક્ષીણ કષાય વીતરાગ સંયમ. આત્માના જ્ઞાનાદિ ગુણોને અથવા સ્વરૂપને જે ઢાંકી દે છે તેનું નામ છદ્મ છે અથવા કેવળજ્ઞાન અને કેવળદર્શન જેના દ્વારા આચ્છાદિત થઈ જાય છે, તે છદ્મ છે. આ છદ્મ અવસ્થામાં રહેલા જીવને છદ્મસ્થ કહે છે. આ છદ્મસ્થનો–છદ્મસ્થ ક્ષીણ કષાય વીતરાગનો–જે સંયમ છે તેને છદ્મસ્થ ક્ષીણકષાય વીતરાગ સંયમ કહે છે કેવળજ્ઞાન સંપન્ન ક્ષીણ કષાયવાળા વીતરાગી આત્માનો જે સયમ છે તેને કેવલી ક્ષીણ કષાય વીતરાગ સંયમ કહે છે અનંત દર્શન અને અનંત જ્ઞાનનું નામ કેવળ છે. આ કેવળજ્ઞાન જેને થાય છે તે જીવને કેવલી કહે છે તે કેવલી નિયમથી જ ક્ષીણ કષાયવાળા હોય છે, કારણ કે કેવલી અવસ્થા ૧૩ માં ગુણસ્થાને પહોંચેલો જીવ જ પ્રાપ્ત કરે છે, અને કષાયનો સદ્‌ભાવ ૧૦ માં ગુણસ્થાન પર્યન્ત જ રહે છે તેથી ૧૩ મા ગુણસ્થાનવર્તી આત્માને ક્ષીણ કષાયવાળો કહ્યો છે. તે કેવલીનો જે સંયમ હોય છે તેને જ કેવલી ક્ષીણ કષાય વીતરાગ સંયમ કહે છે. "છઉમત્થે" ઇત્યાદિ—

मायालोभरूपा येन स उपशान्तकषायः, स चासौ तस्य वा वीतरागसंयमश्चेति तथा, एकादशगुणस्थानवर्तीत्यर्थः। क्षीणाः=अभावमापन्ना कषाया यस्य स क्षीण कषायः, स चासौ वीतरागसंयमश्च तथा क्षीणकषायस्य वा वीतरागसंयम इति, तथा, द्वादशगुणस्थानवर्तीत्यर्थः । 'उवसंते' त्यादि–उपशान्तकषायवीतराग संयमः प्रथमाप्रथमसमयमाश्रित्य द्विविधः । 'अहवे'–त्यादि–प्रथमा–चरमाचर मसमयमाश्रित्य उपशान्तकषायवीतरागसंयमस्य द्वैविध्यं बोध्यम् । अन्यत् पूर्ववत् । 'खीणकसाये'–त्यादि—क्षीणकषायवीतरागसंयमो द्विविधः प्रज्ञप्तः तद्यथा– छद्मस्थक्षीणकषायवीतरागसंयमः, केवलिक्षीणकषायवीतरागसंयमश्चेति । तत्र–

देता है अर्थात् संक्रमण उद्वर्तना अपवर्तना आदि करणों द्वारा उन्हें उदय में आने के अयोग्य बना देता है अथवा प्रदेश से भी उन्हें अवेद्य कर देता है ऐसा वह जीव उपशान्त कषाय कहा गया है, सो इस जीव का जो संयम है वह उपशान्त कषाय वीतराग संयम है तात्पर्य यही है कि ग्यारह वें गुणस्थान में जो संयम होता है वही उपशान्त कषाय वीतराग संयम है तथा जिस जीव को कषाय माया लोभ रूप कषाय–अभाव को प्राप्त हो चुकी है ऐसा वह जीव क्षीणकषाय है इस क्षीण कषाय का जो संयम है वह क्षीणकषाय वीतरागसंयम है यह संयम १२ वें गुणस्थान में होता है उपशान्त कषाय वीतराग संयम प्रथम और अप्रथम समय की अपेक्षा से दो तरह का होता है अथवा चरम समय और अचरम समय की अपेक्षा से भी वह दो प्रकार का है। क्षीणक पाय वीतराग संयम छद्मस्थ क्षीणकषाय वीतराग संयम और केवलि

એટલે કે સંક્રમણ, ઉદ્વર્તના, અપવર્તના આદિ કરણો દ્વારા તેમને ઉદયમાં ન આવી શકે એવાં બનાવી દે છે અથવા પ્રદેશની અપેક્ષાએ પણ તેમને અવેદ્ય કરી નાખે છે, એવાં તે જીવને ઉપશાન્ત કષાય કહે છે તેથી તે જીવના સંયમને ઉપશાન્ત કષાય વીતરાગ સંયમ કહે છે આ કથનનો ભાવાર્થ એ છે કે ૧૧ માં ગુણસ્થાનમાં જે સંયમ હોય છે, તે સંયમને જ ઉપશાન્ત કષાય વીતરાગ સંયમ કહે છે જે જીવના કષાય–માયા લોભરૂપ કષાય ક્ષીણ થઈ ગયા હોય છે–નષ્ટ થઈ ગયા હોય છે એવા જીવને ક્ષીણ કષાય વીતરાગ સંયમવાળો જીવ કહે છે આ સંયમની પ્રાપ્તિ ૧૨ માં ગુણસ્થાનવર્તી જીવને થાય છે ઉપશાન્ત કષાય વીતરાગ સંયમ પ્રથમ અને અપ્રથમ સમયની અપે ક્ષાએ બે પ્રકારનો હોય છે અથવા ચરમ સમય અને અચરમ સમયની અપેક્ષાએ પણ તે બે પ્રકારનો હોય છે ક્ષીણ કષાય વીતરાગ સંયમના પણ

छादयतिज्ञानादिगुणान् आत्मनः स्वरूपं वेति छद्म, यद्वा छाद्यते केवलज्ञानं केवलदर्शनं चात्मनोऽनेनेति छद्म, तत्र तिष्ठतीति छद्मस्थः, स चासौ क्षीणकषायवीतरागसंयमश्च, तथा छद्मस्थस्य वा क्षीणकषायवीतरागसंयम इति। तथा-केवलं= अनन्तज्ञानदर्शनमस्यास्तीतिकेवली, स चासौ क्षीणकषायवीतरागसंयमश्चेति। यद्वा-केवलिनः क्षीणकषायवीतरागसंयम इति तथा। 'छउमत्थे'-त्यादि-छद्म-

---

क्षीणकषाय वीतराग संयम के भेद से भी दो प्रकार का है आत्मा के ज्ञानादि गुणों को अथवा स्वरूप को जो ढक देता है उस का नाम छद्म है अथवा - आत्मा के केवलज्ञान और केवलदर्शन जिस के द्वारा आच्छादित हो जाते हैं वह छद्म है, इस छद्म अवस्था में जो वर्तमान रहता है उसका नाम छद्मस्थ है इस छद्मस्थक्षीणकषाय वीतरागी का जो संयम है वह छद्मस्थक्षीगकषाय वीतराग संयम है तथा केवल ज्ञानविशिष्ट क्षीण कषायवाले वीतरागी आत्मा का जो संयम है वह केवलि क्षीणकषाय वीतराग संयम है अनन्तदर्शन और अनन्तज्ञान का नाम केवल है यह केवल जिसके होता है उसका नाम केवली है यह केवली नियमतः क्षीणकषाय वाला होता है क्यों कि केवली अवस्था १३ वे गुणस्थान में ही होती है और कषाय का सद्भाव १० वें गुण तक रहता है इसलिये १३वे गुणस्थानवाला आत्मा क्षीण कषायवाला केवली कहा गया है इस केवली का जो संयम होता है वही

બે ભેદ છે-(૧) છદ્મસ્થ ક્ષીણુકષાયવીતરાગ સયમ અને (૨) કેવલી ક્ષીણુ કષાય વીતરાગ સંયમ આત્માના જ્ઞાનાદિ ગુણોને અથવા સ્વરૂપને જે ઢાંકી દે છે તેનું નામ છદ્મ છે અથવા કેવળજ્ઞાન અને કેવળદર્શન જેના દ્વારા આચ્છાદિત થઈ જાય છે, તે છદ્મ છે. આ છદ્મ અવસ્થામાં રહેલા જીવને છદ્મસ્થ કહે છે. આ છદ્મસ્થનો-છદ્મસ્થ ક્ષીણુ કષાય વીતરાગનો-જે સંયમ છે તેને છદ્મસ્થ ક્ષીણુકષાય વીતરાગ સયમ કહે છે કેવળજ્ઞાન સંપન્ન ક્ષીણુ કષાયવાળા વીતરાગી આત્માનો જે સયમ છે તેને કેવલી ક્ષીણુ કષાય વીતરાગ સંયમ કહે છે. અનંત દર્શન અને અનંત જ્ઞાનનું નામ કેવળ છે. આ કેવળજ્ઞાન જેને થાય છે તે જીવને કેવલી કહે છે તે કેવલી નિયમથી જ ક્ષીણુ કષાયવાળા હોય છે, કારણુ કે કેવલી અવસ્થા ૧૩ માં ગુણુસ્થાને પહોંચેલો જીવ જ પ્રાપ્ત કરે છે, અને કષાયનો સદ્ભાવ ૧૦ માં ગુણુસ્થાન પર્યન્ત જ રહે છે. તેથી ૧૩ મા ગુણુસ્થાનવર્તી આત્માને ક્ષીણુ કષાયવાળો કહ્યો છે. તે કેવલીનો જે સંયમ હોય છે તેને જ કેવલી ક્ષીણુ કષાય વીતરાગ સંયમ કહે છે "છउमत्थे" ઇત્યાદિ—

मायालोभरूपा यन स उपशान्तकषायः, स चासौ तस्य वा वीतरागसंयमश्चेति तथा, एकादशगुणस्थानवर्तीत्यर्थः। क्षीणाः-अभावमापन्ना कषाया यस्य स क्षीण कषायः, स चासौ वीतरागसंयमश्च तथा क्षीणकषायस्य वा वीतरागसंयम इति, तथा, द्वादशगुणस्थानवर्तीत्यर्थः। 'उवसंते' इत्यादि-उपशान्तकषायवीतराग संयमः प्रथमाप्रथमसमयमाश्रित्य द्विविधः। 'अहवे'-त्यादि-अथवा-चरमाचर मसमयमाश्रित्य उपशान्तकषायवीतरागसंयमस्य द्वैविध्य बोध्यम्। अन्यत् पूर्ववत्। 'खीणकसाये'-त्यादि-क्षीणकषायवीतरागसंयमो द्विविधः प्रज्ञप्तः तद्यथा-छद्मस्थक्षीणकषायवीतरागसंयमः, केवलिक्षीणकषायवीतरागसंयमश्चेति। तत्र-

---

देता है अर्थात् संक्रमण उद्वर्तना अपवर्तना आदि करणों द्वारा उन्हें उदय में आने के अयोग्य बना देता है अथवा प्रदेश से भी उन्हें अवेद्य कर देता है ऐसा वह जीव उपशान्त कषाय कहा गया है, सो इस जीव का जो संयम है वह उपशान्त कषाय वीतराग संयम है तात्पर्य यही है कि ग्यारह वें गुणस्थान में जो सयम होता है वही उपशान्त कषाय वीतराग सयम है तथा जिस जीव को कषाय माया लोभ रूप कषाय-अभाव को प्राप्त हो चुकी है ऐसा वह जीव क्षीणकषाय है इस क्षीण कषाय का जो संयम है वह क्षीणकषाय वीतरागसंयम है यह सयम १२ वें गुणस्थान में होता है उपशान्त कषाय वीतराग सयम प्रथम और अप्रथम समय की अपेक्षा से दो तरह का होता है अथवा चरम समय और अचरम समय की अपेक्षा से भी वह दो प्रकार का है। क्षीणक पाय वीतराग सयम छद्मस्थ क्षीणकषाय वीतराग संयम और केवलि

છોડદે છે સંક્રમણ, ઉદ્વર્તના, અપવર્તના આદિ કરણો દ્વારા તેમને ઉદયમાં ન આવી શકે એવાં બનાવી દે છે અથવા પ્રદેશની અપેક્ષાએ પણ તેમને અવેદ્ય કરી નાખે છે, એવાં તે જીવને ઉપશાન્ત કષાય કહે છે તેથી તે જીવના સંયમને ઉપશાન્ત કષાય વીતરાગ સંયમ કહે છે આ કથનનો ભાવાર્થ એ છે કે ૧૧ માં ગુણસ્થાનમાં જે સંયમ હોય છે તે સંયમને જ ઉપશાન્ત કષાય વીતરાગ સંયમ કહે છે જે જીવના કષાય-માયા લોભરૂપ કષાય ક્ષીણ થઈ ગયા હોય છે-નષ્ટ થઈ ગયા હોય છે, એવા જીવને ક્ષીણ કષાય વીતરાગ સંયમવાળો જીવ કહે છે આ સંયમની પ્રાપ્તિ ૧૨ માં ગુણસ્થાનવર્તી જીવને થાય છે ઉપશાન્ત કષાય વીતરાગ સંયમ પ્રથમ અને અપ્રથમ સમયની અપેક્ષાએ બે પ્રકારનો હોય છે અથવા ચરમ સમય અને અચરમ સમયની અપેક્ષાએ પણ તે બે પ્રકારનો હોય છે ક્ષીણ કષાય વીતરાગ સંયમના પણ

छादयतिज्ञानादिगुणान् आत्मनः स्वरूपं वेति छद्म, यद्वा छाद्यते केवलज्ञान केवलदर्शनं चात्मनोऽनेनेति छद्म', तत्र तिष्ठतीति छद्मस्थः, स चासौ क्षीणकषायवीतरागसंयमश्च, तथा छद्मस्थस्य वा क्षीणकषायवीतरागसंयम इति । तथा-केवलं= अनन्तज्ञानदर्शनमस्यास्तीतिकेवली, स चासौ क्षीणकषायवीतरागसंयमश्चेति । यद्वा-केवलिनः क्षीणकषायवीतरागसंयम इति तथा । 'छउमत्थे'-त्यादि-छद्म-

क्षीणकषाय वीतराग संयम के भेद से भी दो प्रकार का है आत्मा के ज्ञानादि गुणों को अथवा स्वरूप को जो ढक देता है उस का नाम छद्म है अथवा – आत्मा के केवलज्ञान और केवलदर्शन जिस के द्वारा आच्छादित हो जाते हैं वह छद्म है, इस छद्म अवस्था में जो वर्तमान रहता है उसका नाम छद्मस्थ है इस छद्मस्थक्षीणकषाय वीतरागी का जो संयम है वह छद्मस्थक्षीणकषाय वीतराग संयम है तथा केवल ज्ञानविशिष्ट क्षीण कषायवाले वीतरागी आत्मा का जो संयम है वह केवलि क्षीणकषाय वीतराग संयम है अनन्तदर्शन और अनन्तज्ञान का नाम केवल है यह केवल जिसके होता है उसका नाम केवली है यह केवली नियमतः क्षीणकषाय वाला होता है क्यों कि केवली अवस्था १३ वे गुणस्थान में ही होती है और कषाय का सद्भाव १० वे गुण तक रहता है इसलिये १३वे गुणस्थानवाला आत्मा क्षीण कषायवाला केवली कहा गया है इस केवली का जो संयम होता है वही

બે ભેદ છે-(૧) છદ્મસ્થ ક્ષીણકષાયવીતરાગ સંયમ અને (૨) કેવલી ક્ષીણ કષાય વીતરાગ સંયમ. આત્માના જ્ઞાનાદિ ગુણોને અથવા સ્વરૂપને જે ઢાંકી દે છે તેનુ નામ છદ્મ છે અથવા કેવળજ્ઞાન અને કેવળદર્શન જેના દ્વારા આચ્છાદિત થઈ જાય છે, તે છદ્મ છે. આ છદ્મ અવસ્થામાં રહેલા જીવને છદ્મસ્થ કહે છે. આ છદ્મસ્થનો-છદ્મસ્થ ક્ષીણ કષાય વીતરાગનો-જે સંયમ છે તેને છદ્મસ્થ ક્ષીણકષાય વીતરાગ સંયમ કહે છે કેવળજ્ઞાન સંપન્ન ક્ષીણ કષાયવાળા વીતરાગી આત્માનો જે સંયમ છે તેને કેવલી ક્ષીણ કષાય વીતરાગ સંયમ કહે છે અનંત દર્શન અને અનંત જ્ઞાનનું નામ કેવળ છે. આ કેવળજ્ઞાન જેને થાય છે તે જીવને કેવલી કહે છે તે કેવલી નિયમથી જ ક્ષીણ કષાયવાળા હોય છે, કારણ કે કેવલી અવસ્થા ૧૩ માં ગુણસ્થાને પહોંચેલો જીવ જ પ્રાપ્ત કરે છે, અને કષાયનો સદ્ભાવ ૧૦ માં ગુણસ્થાન પર્યન્ત જ રહે છે તેથી ૧૩ મા ગુણસ્થાનવર્તી આત્માને ક્ષીણ કષાયવાળો કહ્યો છે. તે કેવલીનો જે સંયમ હોય છે તેને જ કેવલી ક્ષીણ કષાય વીતરાગ સંયમ કહે છે. "છઉમત્થે" ઇત્યાદિ—

मायालोभरूपा येन स उपशान्तकषायः, स चासौ तस्य वा वीतरागसंयमश्चेति तथा, एकादशगुणस्थानवर्तीत्यर्थः । क्षीणाः=अभावमापन्ना कषाया यस्य स क्षीण कषायः, स चासौ वीतरागसंयमश्च तथा क्षीणकषायस्य वा वीतरागसंयम इति, तथा, द्वादशगुणस्थानवर्तीत्यर्थः । 'उवसंते' त्यादि–उपशान्तकषायवीतराग संयमः प्रथमाप्रथमसमयमाश्रित्य द्विविधः । 'अहवे'–त्यादि–अथवा–चरमाचर मसमयमाश्रित्य उपशान्तकषायवीतरागसंयमस्य द्वैविध्यं बोध्यम् । अन्यत् पूर्ववत् । 'खीणकसाये'–त्यादि—क्षीणकषायवीतरागसंयमो द्विविधः प्रज्ञप्तः तद्यथा–छद्मस्थक्षीणकषायवीतरागसंयमः, केवलिक्षीणकषायवीतरागसंयमश्चेति । तत्र–

देता है अर्थात् संक्रमण उद्वर्तना अपवर्तना आदि करणों द्वारा उन्हें उदय में आने के अयोग्य बना देता है अथवा प्रदेश से भी उन्हें अवेद्य कर देता है ऐसा वह जीव उपशान्त कषाय कहा गया है, सो इस जीव का जो संयम है वह उपशान्त कषाय वीतराग संयम है तात्पर्य यही है कि ग्यारह वें गुणस्थान में जो संयम होता है वही उपशान्त कषाय वीतराग संयम है तथा जिस जीव को कषाय माया लोभ रूप कषाय–अभाव को प्राप्त हो चुकी है ऐसा वह जीव क्षीणकषाय है इस क्षीण कषाय का जो संयम है वह क्षीणकषाय वीतरागसंयम है यह संयम १२ वें गुणस्थान में होता है उपशान्त कषाय वीतराग संयम प्रथम और अप्रथम समय की अपेक्षा से दो तरह का होता है अथवा चरम समय और अचरम समय की अपेक्षा से भी वह दो प्रकार का है। क्षीणक पाय वीतराग संयम छद्मस्थ क्षीणकषाय वीतराग संयम और केवलि

એટલે કે સંક્રમણ, ઉદ્વર્તના, અપવર્ત્તના આદિ કારણો દ્વારા તેમને ઉદયમાં ન આવી શકે એવાં બનાવી દે છે અથવા પ્રદેશની અપેક્ષાએ પણ તેમને અવેદ્ય કરી નાખે છે એવાં તે જીવને ઉપશાન્ત કષાય કહે છે તેથી તે જીવના સંયમને ઉપશાન્ત કષાય વીતરાગ સંયમ કહે છે આ કથનનો ભાવાર્થ એ છે કે ૧૧ માં ગુણસ્થાનમાં જે સંયમ હોય છે તે સંયમને જ ઉપશાન્ત કષાય વીતરાગ સંયમ કહે છે જે જીવના કષાય–માયા લોભરૂપ કષાય ક્ષીણ થઈ ગયા હોય છે–નષ્ટ થઈ ગયા હોય છે એવા જીવને ક્ષીણ કષાય વીતરાગ સંયમવાળો જીવ કહે છે આ સંયમની પ્રાપ્તિ ૧૨ માં ગુણસ્થાનવર્તી જીવને થાય છે ઉપશાન્ત કષાય વીતરાગ સંયમ પ્રથમ અને અપ્રથમ સમયની અપેક્ષાએ બે પ્રકારનો હોય છે અથવા ચરમ સમય અને અચરમ સમયની અપેક્ષાએ પણ તે બે પ્રકારનો હોય છે ક્ષીણ કષાય વીતરાગ સંયમના પણ

वीतरागसंयमोऽपि प्रथमाप्रथमसमयमाश्रित्य सूत्रं पठनीयम्। 'अहवे' त्यादि-अथवा-प्रकारान्तरेणाप्ययं चरमसमयाचरमसमयमाश्रित्य सूत्रं वाच्यम्। उक्तश्छद्मस्थक्षीणकषायवीतरागसंयमः, संप्रति केवलिक्षीणकषायवीतरागसंयमः प्रोच्यते-'केवलि' इत्यादि-केवलक्षीणकषायवीतरागसंयमो द्विविधः-सयोगिकेवलिक्षीणकषायवीतरागसंयमः, अयोगिकेवलिक्षीणकषायवीतरागसंयमश्चेति। तत्र सह योगेन व्यापारेण वर्त्तन्त इति सयोगाः=मनोवाक्कायाः, ते विद्यन्ते यस्येति सयोगी स चासौ, तस्य वा केवलिक्षीणकषायवीतरागसंयमश्चेति तथोक्तः। न सन्ति योगा यस्येति अयोगी, स चासौ तस्य वा केवलिक्षीणकषायवीतरागसयमश्चेति तथोक्तः। 'सजोगी'-त्यादि-सयोगिकेवलिक्षीणकषायवीतरागसंयमः प्रथमसम-

---

संयम भी प्रथम अप्रथम समय की अपेक्षा लेकर अथवा चरम समय अचरम समय की अपेक्षा लेकर के दो प्रकार का कहा गया है इसी तरहसे बुद्धबोधित छद्मस्थ क्षीणकषाय वीतराग संयम भी प्रथम अप्रथम समय की अपेक्षा लेकर अथवा चरमसमय अचरम समयकी अपेक्षा लेकर दो प्रकार का कहा गया है--

केवलि क्षीणकषाय वीतराग संयम भी दो प्रकारका कहा गया है-इनमें जो १३ वे गुणस्थानवर्ती आत्मा का संयम है वह सयोगि केवलि क्षीणकषाय वीतराग संयम है सयोगी इसे इसलिये कहा गया है कि यहां योगों का सद्भाव रहता है तथा १४ वे गुणस्थानवर्ती आत्मा का जो संयम है वह अयोगी केवलि क्षीणकषायवीतराग संयम है अयोगी इसे इसलिये कहा है कि यहां मन, वचन, कायरूप योग

બુદ્ધબોધિત છદ્મસ્થ ક્ષીણ કષાય વીતરાગના પણ પ્રથમ સમય અને અપ્રથમ સમયની અપેક્ષાએ બે ભેદ કહ્યા છે અથવા ચરમ સમય અને અચરમ સમયની અપેક્ષાએ પણ બે ભેદ કહ્યા છે

કેવલી ક્ષીણ કષાય વીતરાગ સંયમના પણ બે પ્રકાર કહ્યા છે-તેમાં જે ૧૩ માં ગુણસ્થાનવર્તી આત્માનો સંયમ છે તેને સયોગિ કેવલિ ક્ષીણ કષાય વીતરાગ સંયમ કહે છે તેને સયોગી કહેવાનું કારણ એ છે કે ત્યાં યોગોનો સદ્ભાવ રહે છે પરન્તુ ૧૪ મા ગુણસ્થાનવર્તી આત્માનો જે સંયમ છે તેને અયોગી કેવલિ ક્ષીણ કષાય વીતરાગ સંયમ કહે છે. તેને અયોગી કહેવાનું કારણ એ છે કે ત્યાં મન, વચન અને કાયારૂપ યોગોનો અભાવ રહે છે. સયોગી કેવલિ ક્ષીણ કષાય વીતરાગ સંયમ પ્રથમ સમય અને અપ્ર-

च्छद्मस्थक्षीणकषायवीतरागसंयमो द्विविधः प्रज्ञप्तः तद्यथा-स्वयंबुद्धछद्मस्थक्षीणकषाय वीतरागसंयम', बुद्धबोधितछद्मस्थक्षीणकषायवीतरागसंयमश्चेति। तत्र स्वयम्= आत्मनैव बुद्धः=तत्त्वं ज्ञातवान्-इति स्वयं बुद्धः-स चासौ, तस्य वा छद्मस्थक्षीण कषायवीतरागसंयमश्चेति, तथोक्त। बुद्धेन=आचार्यादिनाबोधितः=बोधं प्राप्त' बुद्धबोधित, स चासौ, तस्य वा छद्मस्थक्षीणकषायवीतरागसंयमश्चेति तथोक्तः। 'सयंबुद्धे' इत्यादि-स्वयम्बुद्धछद्मस्थक्षीणकषायवीतरागसंयम प्रथमाप्रथमसमय माश्रित्य बोध्य। 'अहवे' इत्यादि-अथवा=प्रकारान्तरेण चरमसमयाचरमसमय माश्रित्य च सूत्रं वाच्यम्। 'बुद्ध बोहिय' इत्यादि-बुद्धबोधितछद्मस्थक्षीणकषाय-

---

केवली क्षीणकषाय वीतराग संयम है "छउमत्थे" इत्यादि - छद्मस्थ क्षीणकषाय वीतराग संयम-छद्मस्थ क्षीणकषायवाले वीतराग का संयम भी दो प्रकार का होता है, एक स्वयंबुद्ध छद्मस्थ क्षीणकषाय वीतराग संयम और दूसरा बुद्धबोधित छद्मस्थ क्षीण कषाय संयम इनमें जो अपने आप ही तत्त्वों को जान कर १२ वे गुणस्थानवाला वीतराग बना है ऐसे जीव का जो संयम है वह स्वयं बुद्ध छद्मस्थ क्षीणकषाय वीत राग संयम है तथा जो आचार्य आदि के द्वारा बोध को प्राप्त करके १२ वे गुणस्थानवाला वीतराग बना है उसका जो संयम है वह बुद्धबोधित छद्मस्थ क्षीणकषाय वीतराग संयम है "स्वयंबुद्ध" इत्यादि। स्वयंबुद्ध छद्मस्थ क्षीणकषाय वीतराग संयम प्रथम अप्रथम समय की अपेक्षा लेकर अथवा चरम समय अचरम समयकी अपेक्षा लेकर के दो प्रकार का कहा गया है इसी तरह से बुद्धबोधित छद्मस्थ क्षीणकषाय वीतराग

છદ્મસ્થ ક્ષીણુ કષાય વીતરાગ સંયમ-છદ્મસ્થ ક્ષીણુ કષાયવાળા વીતરાગનો સંયમ-પણુ બે પ્રકારનો કહ્યો છે-(૧) સ્વયંબુદ્ધ છદ્મસ્થ ક્ષીણુ કષાય વીતરાગ સંયમ અને (૨) બુદ્ધ બોધિત છદ્મસ્થ ક્ષીણુ કષાય વીતરાગ સંયમ.

પોતાની જાતે જ તત્ત્વોને જાણીને૧૨ માં ગુણુસ્થાનવર્તી વીતરાગ બનેલા જીવનો જે સંયમ છે તેને સ્વયંબુદ્ધ છદ્મસ્થ ક્ષીણુ કષાય વીતરાગ સંયમ કહે છે તથા આચાર્ય આદિના ઉપદેશ દ્વારા બોધ પ્રાપ્ત કરીને જે જીવ ૧૨ માં ગુણુસ્થાનવર્તી વીતરાગ બન્યો છે, તેનો જે સંયમ છે તેને બુદ્ધબોધિત છદ્મસ્થ ક્ષીણુ કષાય વીતરાગ સંયમ કહે છે

'સયંબુદ્ધ' ઇત્યાદિ. સ્વયંબુદ્ધ છદ્મસ્થ ક્ષીણુ કષાય વીતરાગ સંયમના પ્રથમ અને અપ્રથમ સમયની અપેક્ષાએ બે ભેદ કહ્યા છે અથવા ચરમ સમય અને અચરમ સમયની અપેક્ષાએ પણુ તેના બે ભેદ કહ્યા છે એજ પ્રમાણે

वीतरागसंयमोऽपि प्रथमाप्रथमसमयमाश्रित्य सूत्रं पठनीयम् । 'अहवे' त्यादि-अथवा-प्रकारान्तरेणाप्ययं चरमसमयाचरमसमयमाश्रित्य सूत्रं वाच्यम् । उक्तश्छद्मस्थक्षीणकषायवीतरागसंयमः, संप्रति केवलिक्षीणकषायवीतरागसंयमः प्रोच्यते-'केवलि' इत्यादि-केवलक्षीणकषायवीतरागसंयमो द्विविधः-सयोगिकेवलिक्षीणकषायवीतरागसंयमः, अयोगिकेवलिक्षीणकषायवीतरागसंयमश्चेति । तत्र सह योगेन व्यापारेण वर्त्तन्त इति सयोगाः=मनोवाकायाः, ते विद्यन्ते यस्येति सयोगी स चासौ, तस्य वा केवलिक्षीणकषायवीतरागसंयमश्चेति तथोक्तः । न सन्ति योगा यस्येति अयोगी, स चासौ तस्य वा केवलिक्षीणकषायवीतरागसंयमश्चेति तथोक्तः । 'सजोगी'-त्यादि-सयोगिकेवलिक्षीणकषायवीतरागसंयमः प्रथमसम-

---

संयम भी प्रथम अप्रथम समय की अपेक्षा लेकर अथवा चरम समय अचरम समय की अपेक्षा लेकर के दो प्रकार का कहा गया है इसी तरहसे बुद्धबोधित छद्मस्थ क्षीणकषाय वीतराग संयम भी प्रथम :अप्रथम समय की अपेक्षा लेकर अथवा चरमसमय अचरम समयकी अपेक्षा लेकर दो प्रकार का कहा गया है--

केवलि क्षीणकषाय वीतराग संयम भी दो प्रकारका कहा गया है-इनमें जो १३ वे गुणस्थानवर्ती आत्मा का संयम है वह सयोगि केवलि क्षीणकषाय वीतराग संयम है सयोगी इसे इसलिये कहा गया है कि यहां योगों का सद्भाव रहता है तथा १४ वे गुणस्थानवर्ती आत्मा का जो संयम है वह अयोगी केवलि क्षीणकषायवीतराग संयम है अयोगी इसे इसलिये कहा है कि यहां मन, वचन, कायरूप योग

બુદ્ધબોધિત છદ્મસ્થ ક્ષીણ કષાય વીતરાગના પણ પ્રથમ સમય અને અપ્રથમ સમયની અપેક્ષાએ બે ભેદ કહ્યા છે અથવા ચરમ સમય અને અચરમ સમયની અપેક્ષાએ પણ બે ભેદ કહ્યા છે.

કેવલી ક્ષીણ કષાય વીતરાગ સયમના પણ બે પ્રકાર કહ્યા છે-તેમાં જે ૧૩ મા ગુણસ્થાનવર્તી આત્માનો સયમ છે તેને સયોગિ કેવલિ ક્ષીણ કષાય વીતરાગ સયમ કહે છે તેને સયોગી કહેવાનુ કારણ એ છે કે ત્યાં યોગોનો સદ્‌ભાવ રહે છે પરન્તુ ૧૪ મા ગુણસ્થાનવર્તી આત્માનો જે સંયમ છે તેને અયોગી કેવલિ ક્ષીણ કષાય વીતરાગ સયમ કહે છે. તેને અયોગી કહેવાનું કારણ એ છે કે ત્યાં મન, વચન અને કાયારૂપ યોગોનો અભાવ રહે છે. સયોગી કેવલિ ક્ષીણ કષાય વીતરાગ સયમ પ્રથમ સમય અને અપ્ર-

याप्रथमसमयमाश्रित्य, सूत्रं बोध्यम् । 'अहवे' त्यादि-अथवा-प्रकारान्तरेण चर मसमयाचरमसमयमाश्रित्यापि सूत्रं वाच्यम् । 'अजोगी '-त्यादि-एवम्-अयोगि केवलिक्षीणकषायवीतरागसंयमोऽपि प्रथमाप्रथमसमयमाश्रित्य, अथवेति प्रकारान्तरेण चरमाचरमसमयमाश्रित्य च सूत्रद्वयं बोध्यम् ॥ सू० १६ ॥

संयमो वर्णित । स च जीवाजीवविषय इति पृथिव्यादिजीवस्वरूपं वर्णयति-

मूलम्—दुविहा पुढविकाइया पन्नत्ता, त जहा – सुहुमा चेव, बायराचेव१। एव जाव दुविहा वणस्सइकाइया पन्नत्ता, त जहा—सुहुमाचेव बायराचेव५। दुविहा पुढविक्काइया पन्नत्ता, त जहा-पज्जत्तगा चेव अपज्जत्तगा चेव६ । एव जाव वणस्सइकाइया १० । दुविहा पुढविक्काइया पन्नत्ता, त जहा-परिणया चेव अपरिणया चेव११ ।एव जाव वणस्सइकाइया १५। दुविहा दव्वा पण्णत्ता, त जहा—परिणया चेव, अपरिणया चेव १६ । दुविहा पुढविकाइया पण्णत्ता, त जहा-गइसमावन्नगा चेव, अगइसमावन्नगा चेव १७। एव जाव वणस्सइकाइया २१ । दुविहा दव्वा पण्णत्ता, त जहा-गइसमावन्नगा चेव, अगइसमावन्नगा चेव २२। दुविहा

नहीं रहता है सयोगि केवलि क्षीणकषाय वीतराग संयम प्रथम समय और अप्रथम समय की प्रतिपत्ति की अपेक्षा लेकर तथा चरम समय और अचरम समयकी अपेक्षा ले कर दो प्रकार का कहा है इसी प्रकार से अयोगि केवलि क्षीणकषाय वीतराग सयम भी प्रथम समय और अप्रथम समयकी प्रतिपत्ति की अपेक्षा लेकर के तथा चरम समय और अचरम समय की अपेक्षा ले करके दो प्रकारका कहा,गया है। सू०१६॥

થમ સમયની પ્રતિપત્તિની અપેક્ષાએ તથા ચરમ સમય અને અચરમ સમયની પ્રતિપત્તિની અપેક્ષાએ બે પ્રકારનો કહ્યો છે એજ પ્રમાણે અયોગી કેવલિ ક્ષીણ કષાય વીતરાગ સયમ પણ પ્રથમ સમય અને અપ્રથમ સમયની પ્રતિ પત્તિની અપેક્ષાએ તથા ચરમ સમય અને અચરમ સમયની અપેક્ષાએ બે પ્રકારનો કહ્યો છે ॥ સૂ૰ ૧૬ ॥

पुढविक्काइया पण्णत्ता, तं जहा–अणंतरोगाढा चेव, परंपरोगाढा चेव २३, जाव दव्वा २८ ॥ सू० १७ ॥

छाया—द्विविधाः पृथिवीकायिकाः प्रज्ञप्ता, तद्यथा–सूक्ष्माश्चैव बादराश्चैव १। एवं यावद् द्विविधाः वनस्पतिकायिकाः प्रज्ञप्ताः, तद्यथा–सूक्ष्माश्चैव बादराश्चैव५। द्विविधाः पृथिवीकायिकाः प्रज्ञप्ताः, तद्यथा–पर्याप्तकाश्चैव, अपर्याप्तकाश्चैव ६। एवं यावद् वनस्पतिकायिकाः १०। द्विविधाः पृथिवीकायिकाः प्रज्ञप्ताः, तद्यथा–परिणताश्चैव, अपरिणताश्चैव ११। एवं यावद् वनस्पतिकायिकाः १५। द्विविधानि द्रव्याणि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा–परिणतानि चैव अपरिणतानि चैव १६। द्विविधाः पृथिवीकायिकाः प्रज्ञप्ताः, यद्यथा–गतिसमापन्नकाश्चैव, अगतिसमापन्नकाश्चैव १७। एवं यावद् वनस्पतिकायिकाः २१। द्विविधानि द्रव्याणि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा–गतिसमापन्नकानि चैव, अगतिसमापन्नकानि चैव २२। द्विविधाः पृथिवीकायिकाः प्रज्ञप्ताः, तद्यथा–अनन्तरावगाढाश्चैव, परम्परावगाढाश्चैव २३। यावद् द्रव्याणि २८ ॥ सू० १७ ॥

टीका—'दुविहा पुढविक्काइया' इत्यादि।

पृथिव्येव कायः=शरीरं येषां ते पृथिवीकायिकाः, ते द्विविधाः=द्विप्रकाराः प्रज्ञप्ताः, तद्यथा–सूक्ष्मनामकर्मोदयात् सूक्ष्माः सर्वलोकव्यापिनः। बादरनामकर्मोदयाद् बादराः, ये लोकैकदेशे पृथिवीपर्वतादिष्वेव वर्त्तन्ते १। एवं=पृथिवीकाय सूत्रवत् शेषाणि अप्तेजोवायुसूत्राणि वाच्यानि यावत् वनस्पतिकायसूत्रम्–वनस-

---

संयम का वर्णन करके अब सूत्रकार पृथिव्यादि जीव स्वरूप का वर्णन करते हैं क्योंकि जीव और अजीव के विषय में ही संयम होता है

"दुविहा पुढवी काइया पण्णत्ता" इत्यादि ॥ १७ ॥

टीकार्थ–पृथिवीकायिक जीव दो प्रकारके कहे गये हैं एक तैजसकायिक सूक्ष्मपृथिवीकायिक और दूसरे बादर पृथिवीकायिक इसी प्रकार से अप्कायिक वायुकायिक और वनस्पतिकायिक भी सूक्ष्म और बादर के भेद

સયમનું વર્ણન પૂરું થયું, હવે સૂત્રકાર પૃથ્વીકાય આદિ જીવોના સ્વરૂપનું વર્ણન કરે છે, કારણ કે જીવ અને અજીવના વિષયમા જ સંયમ થાય છે.

"दुविहा पुढवीकाइया पण्णत्ता" ઈત્યાદિ ॥ ૧૭ ॥

ટીકાર્થ–પૃથ્વીકાયિક જીવ બે પ્રકારના કહ્યાં છે–(૧) તૈજસ્કાયિક સૂક્ષ્મ પૃથ્વીકાયિક અને (૨) બાદર પૃથ્વીકાયિક એજ પ્રમાણે અપ્કાયિક, વાયુકાયિક અને વનસ્પતિકાયિક જીવો પણ સૂક્ષ્મ અને બાદરના ભેદથી બબ્બે પ્રકારનાં કહ્યા

तिकायिका द्विविधाः प्रज्ञप्ताः-सूक्ष्मा बादराश्चेति ५। 'दुविहा' इत्यादि-पर्याप्तकापर्याप्तकमाश्रित्य पृथिवीकायिकादि वनस्पतिकायपर्यन्त सूत्रपञ्चक व्याख्येयम्। तत्र पर्याप्तिनामकर्मोदयात् पर्याप्तकाः, तद्विपरीता अपर्याप्तकाः। पर्याप्ति = आहारादिपुद्गलग्रहणपरिणमनहेतुरात्मन शक्तिविशेषः। सा-आहारशरीरेन्द्रियाऽऽनप्राणभाषामनः-पर्याप्तिभेदात् षड्विधा। पृथिव्यादिवनस्पतिपर्यन्तानां पञ्चानामपि स्थावराणां भाषामनोवर्जिताश्चतस्रः पर्याप्तयो भवन्ति।

से दो दो प्रकार के कहे गये हैं पृथिवी ही जिन जीवों का शरीर होता है वे पृथिवी कायिक जीव हैं इन पृथिवीकायिक जीवों में जिनके सूक्ष्म नामकर्म का उदय होता है वे सूक्ष्म पृथिवीकायिक जीव हैं ये सूक्ष्म पृथिवीकायिक जीव सर्वलोक में व्यापक हैं बादर नाम कर्म के उदय वशवर्ती जो जीव हैं वे बादर पृथिवीकायिक जीव हैं ये लोक के एकदेश पृथिवी पर्वत आदिकों में ही रहते हैं। इसी तरह से अप्कायिक-अप् ही जिनका शरीर होता है ऐसे जीव भी तेज ही जिनका शरीर होता है ऐसे तैजस्कायिक जीव भी वायु ही जिनका शरीर होता है ऐसे वायु कायिक जीव भी और वनस्पति ही जिनका शरीर होता है ऐसे वनस्पतिकायिक जीव भी होते हैं इसलिये इनके भी सूत्र इसी प्रकार से कह लेना चाहिये यही बात "वनस्पतिकायिका द्विविधाः प्रज्ञप्ताः सूक्ष्मा बादराश्च" इस सूत्रांश द्वारा प्रकट की गई है इस प्रकार से इन एकेन्द्रिय जीवों में द्विविधता प्रकट करके अब अन्य प्रकार से भी इनमें

છે પૃથ્વી જ જે જીવોનું શરીર હોય છે તે જીવોને પૃથ્વીકાયિક કહે છે તે પૃથ્વીકાયિકોમાં જેમને સૂક્ષ્મ નામકર્મનો ઉદય હોય છે તે જીવો સૂક્ષ્મ પૃથ્વીકાયિક હોય છે તે સૂક્ષ્મ પૃથ્વીકાયિક જીવો સર્વ લોકમાં વ્યાપેલા છે જે પૃથ્વીકાયિકોમાં બાદર નામકર્મનો ઉદય હોય છે તે પૃથ્વીકાયિકોને બાદર પૃથ્વીકાયિક જીવો કહે છે તેઓ લોકના એક દેશ-પૃથ્વી, પર્વત આદિકોમાં રહે છે.

અપ્ (પાણી) જ જેમનું શરીર છે, એવાં જીવોને અપ્કાયિક કહે છે તેજ જ જેમનું શરીર છે, એવા જીવોને તેજસ્કાયિક કહે છે વાયુ જ જેમનું શરીર છે, એવા જીવોને વાયુકાયિક કહે છે અને વનસ્પતિ જ જેમનું શરીર છે એવાં જીવોને વનસ્પતિકાયિક કહે છે પૃથ્વીકાયિકની જેમ અપ્કાયિક, તેજસ્કાયિક, વાયુકાયિક અને વનસ્પતિકાયિક જીવોમાં પણ સૂક્ષ્મ અને બાદરના ભેદથી દ્વિવિધતા સમજવી. એજ વાત સૂત્રકારે "વનસ્પતિકાયિકા દ્વિવિધા પ્રજ્ઞપ્તાઃ સૂક્ષ્મા બાદરાશ્ચ" આ સૂત્રાંશ દ્વારા પ્રકટ કરી છે

विकलेन्द्रियाणामसञ्ज्ञिपञ्चेन्द्रियाणां च मनोवर्जिता पञ्च पर्याप्तयो भवन्ति। सञ्ज्ञिपञ्चेन्द्रियाणां च षट्पि पर्याप्तयो जायन्ते।

उक्तं च-" आहार १ सरीरिं २ दियपज्जत्ती ३ आणापाण ४ भास ५ मणे ६।
चत्तारि पंचछप्पिय, एगिंदिय-विगल-सन्नीणं ॥ १ ॥ इति।"

छाया—आहार १ शरीरे २ न्द्रियपर्याप्तिः ३ आनप्राण ३ भाषा ५ मनांसि ६।
चतस्रः पञ्च षडपि च, एकेन्द्रिय-विकल-सञ्ज्ञिनाम् ॥ इति।

सर्वा अपि पर्याप्तयः अन्तर्मुहूर्त्तेन निर्वर्त्यन्ते, तत्राहारपर्याप्तिकाल एक एव

द्विविधता प्रकट करने के निमित्त सूत्रकार कहते हैं-पृथिवीकायिक से लेकर वनस्पति कायिक तक के जीव पर्याप्त और अपर्याप्तक के भेद से भी दो दो प्रकार के कहे गये हैं-जिन जीवों को पर्याप्त नामकर्म का उदय होता है वे पर्याप्तक और जिनको पर्याप्त नामकर्म का उदय नहीं होता है वे अपर्याप्तक हैं आहारादि पुद्गलों को ग्रहण करने की और उन्हें परिणमाने की हेतुभूत जो आत्मा की शक्ति होती है उसका नाम पर्याप्त है यह पर्याप्ति आहार, शरीर, इन्द्रिय, आनप्राण, भाषा और मन इनके भेद से ६ प्रकार की है पृथिवी कायिक से लेकर वनस्पतिकायिक तक के पांच स्थावर जीवों के ४ पर्याप्तियां होती हैं भाषा पर्याप्ति और मनः पर्याप्ति के विना पांच पर्याप्तियां होती हैं संज्ञी पञ्चेन्द्रिय जीवों के ६ पर्याप्तियां होती हैं-उक्तं च-" आहार सरीरिंदिय " इत्यादि।

હવે સૂત્રકાર પૃથ્વીકાયિકથી લઇને વનસ્પતિકાયિક પર્યન્તના જીવોમાં બીજી રીતે પણ દ્વિવિધતાનું કથન કરે છે—

પૃથ્વીકાયિકથી લઇને વનસ્પતિકાયિક પર્યન્તના જીવો પર્યાપ્તક અને અપર્યાપ્તકના ભેદથી પણ બબ્બે પ્રકારનાં કહ્યાં છે જે જીવોમાં પર્યાપ્ત નામ કર્મનો ઉદય હોય છે તેમને પર્યાપ્તક અને જેમને પર્યાપ્ત નામકર્મનો ઉદય હોતો નથી તેમને અપર્યાપ્તક કહે છે આહારાદિ પુદ્ગલોને ગ્રહણ કરવાની અને તેમને પરિણમાવવાના હેતુભૂત આત્માની જે શક્તિ હોય છે, તેનુ નામ પર્યાપ્તિ છે તે પર્યાપ્તિ આહાર, શરીર, ઇન્દ્રિય, આનપ્રાણ, ભાષા અને મનના ભેદથી છ પ્રકારની હોય છે પૃથ્વીકાયિકથી લઇને વનસ્પતિકાયિક પર્યન્તના પાંચ સ્થાવર જીવોમાં ચાર પર્યાપ્તિઓનો સદ્ભાવ હોય છે ભાષા પર્યાપ્તિ અને મન પર્યાપ્તિનો તે જીવમાં અભાવ હોય છે સંજ્ઞી પંચેન્દ્રિય જીવોમા ૬ પર્યાપ્તિઓ હોય છે. કહ્યુ પણ છે કે—" आहार सरीरिंदिय " ઇત્યાદિ.

विकायिका द्विविधा प्रज्ञप्ताः–सूक्ष्मा बादराश्चेति ७। 'दुविहा' इत्यादि–पर्या प्तकापर्याप्तकमाश्रित्य पृथिवीकायिकादि वनस्पतिकायपर्यन्त सूत्रपञ्चक व्याख्ये यम्। तत्र पर्याप्तिनामकर्मोदयात् पर्याप्तकाः, तद्विपरीता अपर्याप्तकाः। पर्याप्ति = आहारादिपुद्गलग्रहणपरिणमनहेतुरात्मन शक्तिविशेष। सा–आहार शरीरेन्द्रियाऽऽनप्राणभाषामन –पर्याप्तिभेदात् षड्‌विधा। पृथिव्यादिवनस्पतिपर्य न्ताना पञ्चानामपि स्थावराणां भाषामनोवर्जिताश्चतस्रः पर्याप्तयो भवन्ति।

से दो दो प्रकार के कहे गये हैं पृथिवी ही जिन जीवों का शरीर होता है वे पृथिवी कायिक जीव हैं इन पृथिवीकायिक जीवों में जिनके सूक्ष्म नामकर्म का उदय होता है, वे सूक्ष्म पृथिवीकायिक जीव हैं वे सूक्ष्म पृथिवीकायिक जीव सर्वलोक में व्यापक हैं बादर नाम कर्म के उदय वशवर्ती जो जीव हैं वे बादर पृथिवीकायिक जीव हैं वे लोक के एकदेश पृथिवी पर्वत आदिकों में ही रहते हैं! इसी तरह से अप्कायिक–अप् ही जिनका शरीर होता है ऐसे जीव भी तेज ही जिनका शरीर होता है ऐसे तेजस्कायिक जीव भी वायु ही जिनका शरीर होता है ऐसे वायु कायिक जीव भी और वनस्पति ही जिनका शरीर होता है ऐसे वन स्पतिकायिक जीव भी होते हैं इसलिये इनके भी सूत्र इसी प्रकार से कह लेना चाहिये यही बात " वनस्पतिकायिका द्विविधाः प्रज्ञप्ता सूक्ष्मा बादराश्च " इस सूत्रांश द्वारा प्रकट की गई है इस प्रकार से इन एके न्द्रिय जीवों में द्विविधता प्रकट करके अब अन्य प्रकार से भी इनमें

પૃથ્વી જ જે જીવોનું શરીર હોય છે તે જીવોને પૃથ્વીકાયિક કહે છે તે પૃથ્વીકાયિકોમાં જેમને સૂક્ષ્મ નામકર્મનો ઉદય હોય છે તે જીવો સૂક્ષ્મ પૃથ્વી કાયિક હોય છે તે સૂક્ષ્મ પૃથ્વીકાયિક જીવો સર્વ લોકમાં વ્યાપેલા છે જે પૃથ્વીકાયિકોમાં બાદર નામકર્મનો ઉદય હોય છે, તે પૃથ્વીકાયિકોને બાદર પૃથ્વીકાયિક જીવો કહે છે તેઓ લોકના એક દેશ–પૃથ્વી, પર્વત આદિકોમાં રહે છે.

અપ્ (પાણી) જ જેમનું શરીર છે, એવાં જીવોને અપ્કાયિક કહે છે તેજ જ જેમનું શરીર છે, એવા જીવોને તેજસ્કાયિક કહે છે વાયુ જ જેમનું શરીર છે, એવા જીવોને વાયુકાયિક કહે છે અને વનસ્પતિ જ જેમનું શરીર છે એવાં જીવોને વનસ્પતિકાયિક કહે છે પૃથ્વીકાયિકની જેમ અપ્કાયિક તેજસ્કાયિક, વાયુકાયિક અને વનસ્પતિકાયિક જીવોમાં પણ સૂક્ષ્મ અને બાદરના ભેદથી દ્વિવિધતા સમજવી. એજ વાત સૂત્રકારે "वनस्पतिकायिका द्विविधा प्रज्ञप्ता सूक्ष्मा बादराश्च" આ સૂત્રાંશ દ્વારા પ્રકટ કરી છે

अपरिणतानि चेति। तत्र परिणतानि–अवस्थान्तरप्राप्तानि–अचित्तीभूतानीत्यर्थः। अपरिणतानि=पूर्वावस्थासंपन्नान्येव सचित्तानीत्यर्थः। १६। 'दुविहापुढवीकाइया' इत्यारभ्य 'दुविहा दव्वा' इति पर्यन्ता पट् सूत्री। तत्र — पृथिव्यादयो वनस्पतिपर्यन्ताः पञ्चस्थावराः गतिसमापन्नकाः अगतिसमापन्नकाश्चेति द्विविधाः प्रज्ञप्ताः तत्र–गतिसमापन्नकास्ते भवन्ति ये पृथिव्यादितत्तदायुष्कोदयात् पृथिव्यादितत्तद्व्यपदेशभाजो विग्रहगत्या स्वोत्पत्तिस्थानं गच्छन्ति। ये स्थितिमन्तस्ते चागतिसमापन्नकाः २१। षष्ठे द्रव्यसूत्रे गतिर्गमनमात्ररोर। शेषं तथैवेति २२। 'दुविहा' इत्यारभ्य द्रव्यसूत्रं यावत् पट्सूत्री। द्विविधाः पृथिवीका-

जीव और पुद्गलरूप हैं। ये जीव और पुद्गलरूप द्रव्य परिणत और अपरिणत के भेद से दो प्रकार के हैं। जो द्रव्य अवस्थान्तर को प्राप्त है वह परिणत द्रव्य है और जो पूर्वावस्था संपन्न ही बना रहता है वह अपरिणत द्रव्य है। तात्पर्य यह है कि जो द्रव्य सचित्त है वह अपरिणत और जो अचित्त है वह परिणत द्रव्य है "दुविहा पुढवीकाइया" यहां से लेकर "दुविहा दव्वा" तक पट् सूत्री है इसमें पृथिवीकायिक आदि वनस्पति पर्यन्त तक के पांच स्थावर जीव गति समापन्नक वे जीव होते हैं जो पृथिव्यादि तत्तत् आयु के उदय से पृथिवी आदि तत्तत् नाम युक्त हुए विग्रहगति से अपने उत्पत्ति स्थान को प्राप्त होते हैं और जो स्थिति वाले हैं वे अगति समापन्नक हैं। छठे द्रव्य सूत्र में गति शब्द से गमन मात्र ही गृहीत हुआ है बाकी का और सब कथन वैसा ही है २२ "दुविहा" से प्रारम्भ कर द्रव्य सूत्र तक पट् सूत्री है पृथिवी

તે જીવ અને પુદ્ગલરૂપ દ્રવ્ય પરિણુત અને અપરિણુતના ભેદથી બે પ્રકારનું છે. જે દ્રવ્ય અવસ્થાન્તર (અન્ય અવસ્થા) પામેલુ છે તે દ્રવ્યને પરિણુત દ્રવ્ય કહે છે, અને જે દ્રવ્ય પૂર્વાવસ્થા યુક્ત જ રહે છે તે અપરિણુત દ્રવ્ય કહેવાય છે. આ કથનનું તાત્પર્ય એ છે કે જે દ્રવ્ય સચિત્ત છે તે અપરિણુત અને જે અચિત્ત છે તે પરિણુત દ્રવ્ય છે. "दुविहा पुढवीकाइया" અહીંથી લઇને "दुविहा दव्वा" પર્યન્તના છ સૂત્રોમાં એ વાતનું પ્રતિપાદન કરવામાં આવ્યું છે કે પૃથ્વીકાયિકથી લઇને વનસ્પતિકાયિક પર્યન્તના પાંચ સ્થાવર જીવો ગતિ સમાપન્નક છે ગતિ સમાપન્નક તે જીવો હોય છે કે જેઓ પૃથ્વીકાય આદિ તે તે આયુના ઉદયથી પૃથ્વીકાય આદિ તે તે નામયુક્ત થઇને વિગ્રહગતિ દ્વારા પોતાના ઉત્પત્તિ સ્થાનને પ્રાપ્ત કરે છે, અને જે સ્થિતિવાળાં છે તેઓ અગતિ સમાપન્નક ગણાય છે છ દ્રવ્ય સૂત્રોમાં ગતિ શબ્દ દ્વારા ગમન માત્ર જ ગૃહીત થયું છે, બાકીનું બધુ કથન એવું જ છે.

समयः १० । 'दुविहा पुढवी०' इत्यारभ्य 'दुविहा दव्वा' इति पर्यन्तं पट् सूत्री । तत्र पृथिव्यादयः पञ्चस्थावराः परिणता अपरिणता, इति द्विविधा सन्ति । तत्र परिणताः=स्वपरोभयकायशस्त्रैः परिणामान्तरमापादिताः अचित्तीभूता इत्यर्थः । अपरिणताः=तद्विपरीताः सचित्ताः इत्यर्थः । परिणतापरिणतयोर्विशेषव्याख्या दशवैकालिकसूत्रे चतुर्थाध्ययनस्य मत्कृताचारमणिमञ्जूषायां टीकायां विलोकनीया १५ । 'दुविहा दव्वा' इत्यादि षष्ठ सूत्रम् । तत्र द्रवन्ति=नानाविधपर्यायान् माप्नुवन्तीति द्रव्याणि जीवपुद्गलस्वरूपाणि । तानि द्विविधानि भवन्ति-परिणतानि,

---

इन छहों पर्याप्तियों की रचना का काल एक अन्तर्मुहूर्त का है इनमें आहारपर्याप्ति का काल एक ही समय का है "दुविहा पुढवी०" यहां से लेकर "दुविहा दव्वा" तक षट्सूत्री है ये पृथिवी आदिक पांच स्थावर परिणत और अपरिणत के भेद से भी दो प्रकार के हैं स्वकाय, परकाय और उभयकाय रूप शस्त्रों के द्वारा ये पांचों पृथिवीकायिक जीव जब परिणामान्तर को प्राप्त हो रहे हैं अर्थात् अचित्त हैं वे परिणत कहे गये हैं और जो ऐसे नहीं हैं वे अपरिणत सचित्त हैं परिणत और अपरिणत की विशेष व्याख्या दशवैकालिक सूत्र के ऊपर जो आचार चिन्तामणि मंजूषा नाम की टीका है उस में देख लेना चाहिये यह विषय वहां चतुर्थ अध्ययन में वर्णित हुआ है "दुविहा दव्वा" इत्यादि-अनेक प्रकार की उन २ पर्यायों को जो प्राप्त करते हैं वे द्रव्य हैं ऐसे वे द्रव्य

આ છએ પર્યાપ્તિઓની રચનાકાળ એક અન્તર્મુહૂર્તનો હોય છે તેમાંની આહાર પર્યાપ્તિનો કાળ એક જ સમયનો છે "દુવિહા પુઢવી" અહીંથી શરૂ કરીને "દુવિહા દવ્વા" પર્યન્તની ષટ્સૂત્રી છે તે પૃથ્વીકાય આદિ પાંચ પ્રકારના સ્થાવર જીવોના પરિણત અને અપરિણતના ભેદથી પણ બે પ્રકાર પડે છે સ્વકાય પરકાય અને ઉભયકાય રૂપ શસ્ત્રો દ્વારા તે પાંચે પૃથ્વીકાયિક જીવ જ્યારે પરિણામાન્તરને (અન્ય પરિણામને) પ્રાપ્ત કરી રહ્યા હોય છે, એટલે કે જ્યારે તેઓ અચિત્ત હોય છે ત્યારે તેમને પરિણત કહે છે જે જીવો આ પ્રકારના નથી, તેમને અપરિણત-સચિત્ત કહે છે પરિણત અને અપરિણતની વિશેષ વ્યાખ્યા દશવૈકાલિક સૂત્રની ઉપર જે આચાર ચિંતામણી મંજૂષા નામની ટીકા મારા દ્વારા લખવામાં આવી છે તેમાંથી વાંચી લેવી. ત્યાં ચોથા અધ્યયનમાં આ વિષયનું વર્ણન કરવામાં આવ્યું છે

"દુવિહા દવ્વા" ઈત્યાદિ. અનેક પ્રકારની તે તે પર્યાયોને જે પ્રાપ્ત કરતાં રહે છે, તે દ્રવ્ય છે એવાં તે દ્રવ્યો દ્રવ્યજીવ અને પુદ્ગલરૂપ હોય છે

अपरिणतानि चेति । तत्र परिणतानि–अवस्थान्तरप्राप्तानि–अचित्तीभूतानीत्यर्थः । अपरिणतानि=पूर्वावस्थासंपन्नान्येव सचित्तानीत्यर्थः । १६ । 'दुविहापुढवीकाइया' इत्यारभ्य 'दुविहा दव्वा' इति पर्यन्ता पट् सूत्री । तत्र — पृथिव्यादयो वनस्पतिपर्यन्ताः पञ्चस्थावराः गतिसमापन्नकाः अगतिसमापन्नकाश्चेति द्विविधाः प्रज्ञप्ताः तत्र–गतिसमापन्नकास्ते भवन्ति ये पृथिव्यादितत्तदायुष्कोदयात् पृथिव्यादितत्तद्व्यपदेशभाजो विग्रहगत्या स्वोत्पत्तिस्थानं गच्छन्ति । ये स्थितिमन्तस्ते चागतिसमापन्नकाः २१ । षष्ठे द्रव्यसूत्रे गतिर्गमनमात्रमेव । शेषं तथैवेति २२ । 'दुविहा' इत्यारभ्य द्रव्यसूत्रं यावत् पट्सूत्री । द्विविधाः पृथिवीका-

---

जीव और पुद्गलरूप हैं। ये जीव और पुद्गलरूप द्रव्य परिणत और अपरिणत के भेद से दो प्रकार के हैं। जो द्रव्य अवस्थान्तर को प्राप्त है वह परिणत द्रव्य है और जो पूर्वावस्था संपन्न ही बना रहता है वह अपरिणत द्रव्य है। तात्पर्य यह है कि जो द्रव्य सचित्त है वह अपरिणत और जो अचित्त है वह परिणत द्रव्य है "दुविहा पुढवीकाइया" यहां से लेकर "दुविहा दव्वा" तक पट्र सूत्री है इसमें पृथिवीकायिक आदि वनस्पति पर्यन्त तक के पांच स्थावर जीव गति समापन्नक वे जीव होते हैं जो पृथिव्यादि तत्तत् आयु के उदय से पृथिवी आदि तत्तत् नाम युक्त हुए विग्रहगति से अपने उत्पत्ति स्थान को प्राप्त होते हैं और जो स्थिति वाले हैं वे अगति समापन्नक हैं। छठे द्रव्य सूत्र में गति शब्द से गमन मात्र ही गृहीत हुआ है बाकी का और सब कथन वैसा ही है २२ "दुविहा" से प्रारम्भ कर द्रव्य सूत्र तक षट्र सूत्री है पृथिवी

તે જીવ અને પુદ્ગલરૂપ દ્રવ્ય પરિણત અને અપરિણતના ભેદથી બે પ્રકારનુ છે. જે દ્રવ્ય અવસ્થાન્તર (અન્ય અવસ્થા) પામેલુ છે તે દ્રવ્યને પરિણત દ્રવ્ય કહે છે, અને જે દ્રવ્ય પૂર્વાવસ્થા યુક્ત જ રહે છે તે અપરિણત દ્રવ્ય કહેવાય છે આ કથનનું તાત્પર્ય એ છે કે જે દ્રવ્ય સચિત્ત છે તે અપરિણત અને જે અચિત્ત છે તે પરિણત દ્રવ્ય છે "दुविहा पुढवीकाइया" અહીંથી લઇને "दुविहा दव्वा" પર્યન્તના છ સૂત્રોમાં એ વાતનું પ્રતિપાદન કરવામાં આવ્યું છે કે પૃથ્વીકાયિકથી લઇને વનસ્પતિકાયિક પર્યન્તના પાંચ સ્થાવર જીવો ગતિ સમાપન્નક છે ગતિ સમાપન્નક તે જીવો હોય છે કે જેઓ પૃથ્વીકાય આદિ તે તે આયુના ઉદયથી પૃથ્વીકાય આદિ તે તે નામયુક્ત થઇને વિગ્રહગતિ દ્વારા પોતાના ઉત્પત્તિ સ્થાનને પ્રાપ્ત કરે છે, અને જે સ્થિતિવાળાં છે તેઓ અગતિ સમાપન્નક ગણાય છે છ દ્રવ્ય સૂત્રોમાં ગતિ શબ્દ દ્વારા ગમન માત્ર જ ગૃહીત થયું છે, બાકીનુ બધુ કથન એવું જ છે.

यिकाः सम्प्राप्ताः तथया–अनन्तरावगाढाः, परम्परावगाढाश्च। तत्र अनन्तरं–समत्येव समये क्वचिदाकाशदेशे अवगाढाः=आश्रिता अनन्तरावगाढा, परम्परया=द्वयादि समयेषु येऽवगाढास्ते परम्परावगाढाः। अथवा–विवक्षित क्षेत्रं द्रव्य वाऽपेक्ष्य अनन्तरम्=अव्यवधानेन अवगाढा अनन्तरावगाढाः, तदितर तु परम्परावगाढा इति २३। एवं यावत् यावच्छब्देन अप्कायिका २४ तेजस्कायिकाः २५, वायुकायिका २६ वनस्पतिकायिका २७–द्रव्याणि वा विज्ञेयानीति २८ ॥सू०१७॥

उक्त द्रव्यस्वरूपम्, सम्प्रति तद्विकारादेव द्रव्यविशेषयोः कालाकाशयो प्ररूपणामाह—

मूलम्—दुविहे काले पण्णत्ते तं जहा ओसप्पिणीकाले चेव, उस्सप्पिणीकाले चेव। दुविहे आगासे पण्णत्ते तं जहा–लोगागासे चेव अलोगागासे चेव ॥ सू० १८॥

कायिक जीव इस तरह से भी दो प्रकार के कहे गये हैं–इनमें एक अनन्तरावगाढ और दूसरे परम्परावगाढ हैं, जो अभी ही कचित् आकाश प्रदेश में अवगाढ आश्रित हुए हैं वे अनन्तरावगाढ पृथिवीकायिक जीव हैं तथा द्वयादि समय हो गये हैं जिनको वे परम्परावगाढ पृथिवी कायिक जीव हैं। अथवा विवक्षित क्षेत्र की या द्रव्य की अपेक्षा करके जो बिना किसी व्यवधान के अवगाढ हैं वे अनन्तरावगाढ हैं इनसे भिन्न परम्परावगाढ हैं इसी तरह से यावत् द्रव्यों को जानना चाहिये, यहां यावत्पद से अप्कायिक तैजस्कायिक वायुकायिक और वनस्पति कायिकों का ग्रहण हुआ है ॥ सू० १७ ॥

"दुविहा" थी शरू करीने द्रव्य सूत्र पर्यन्त पद सूत्र छे तेमां पृथ्वीकायिक જીવોને આ રીતે પણ બે પ્રકારના કહ્યા છે–(૧) અનન્તરાવગાઢ અને (૨) પરમ્પરાવગાઢ. જેઓ હમણાં જ કોઈક આકાશ પ્રદેશમાં અવગાઢ થઈને આશ્રય લઈ રહેલાં છે, તેમને અનન્તરાવગાઢ પૃથ્વીકાયિક જીવો કહે છે તથા જેઓ બે આદિ સમયોમાં અવગાઢ થયા છે તેમને પરમ્પરાવગાઢ પૃથ્વીકાયિક જીવો કહે છે અથવા અમુક ક્ષેત્ર અથવા દ્રવ્યની અપેક્ષાએ જે કોઈ પણ જાતના વ્યવધાન વિના અવગાઢ છે એવાં પૃથ્વીકાયિકોને અનન્તરાવગાઢ કહે છે અને તેમનાથી ભિન્ન પૃથ્વીકાયિકોને પરમ્પરાવગાઢ કહે છે એજ પ્રમાણે અપ્કાયિક તૈજસ્કાયિક વાયુકાયિક અને વનસ્પતિકાયિક પર્યન્તના જીવદ્રવ્યો વિષે પણ સમજવું ॥ સૂ૦ ૧૭ ॥

छाया-द्विविधः काल प्रज्ञप्त', तद्यथा-अवसर्पिणीकालश्चैव, उत्सर्पिणीकालश्चैव द्विविध आकाशः प्रज्ञप्तः, तद्यथा-लोकाकाशश्चैव अलोकाकाशश्चैव ॥सू०१८॥

टीका—' दुविहे काले इत्यादि ।

कल्यते=परिच्छिद्यते ज्ञायते वस्त्वनेनेति कालः, कलनं वा कालानां समयादि रूपाणां समूहो वा कालः-वर्त्तनादिरूपः 'वट्टणा लक्खणो कालो' इति वचनात् । स चावसर्पिण्युत्सर्पिणीभेदेन द्विविध । जगति महाविदेहादिभोगभूमिषु सदाऽवस्थित-लक्षणस्तृतीयोऽपि कालो वर्त्तते तथाऽप्यत्र द्विस्थानकानुरोधाद् द्विविध एव कालः

द्रव्य का स्वरूप कहा जा चुका है अब द्रव्याधिकार को लेकर के ही द्रव्यविशेषरूप काल और आकाश की प्ररूपणा सूत्रकार करते हैं-

" दुविहे काले पण्णत्ते " इत्यादि ।

वस्तु जिसके द्वारा नवीन पुरानी होती हुई जानी जाती है उस का नाम काल है अथवा कलन का नाम काल है या समयादिरूप कलाओं का नाम काल है यह काल वर्तनादिरूप होता है तात्पर्य इसका ऐसा है कि काल निश्चय और व्यवहार की अपेक्षा से दो प्रकार का है वर्त्तनादिरूप काल निश्चयकाल और घडी घंटा आदि रूप काल व्यवहार काल है । उक्तं च—" दव्व परिवट्टरूवो " इत्यादि ।

यह काल उत्सर्पिणी और अवसर्पिणीके भेदसे दो प्रकारका कहा गया है महाविदेह क्षेत्रमें सदा चतुर्थकाल अवस्थित रहता है तथा भोगभूमियों में-अकर्मभूमिमे तृतीय आदि काल अवस्थित रहता है इस तरह से दो कालों के अतिरिक्त एक सदा अवस्थितरूप काल भी होता है फिर

દ્રવ્યના સ્વરૂપનુ કથન સમાપ્ત થયું, હવે સૂત્રકાર અહીં દ્રવ્ય વિશેષ રૂપ કાળની અને આકાશની પ્રરૂપણા કરે છે—

" दुविहे काले पण्णत्ते " ઈત્યાદિ ॥ ૧૮ ॥

વસ્તુ જેના દ્વારા નવીજુની થતી લાગે છે, તેનુ નામ કાળ છે. અથવા કલનનુ (જાણવુ) નામ કાળ છે અથવા સમયાદિ રૂપ કલાઓનું નામ કાળ છે. તેકાળ વર્તનાદિ રૂપ હોય છે આ કથનનો ભાવાર્થ એ છે કે કાળ નિશ્ચય અને વ્યવહારની અપેક્ષાએ બે પ્રકારનો છે વર્તનાદિ રૂપ કાળને નિશ્ચયકાળ, અને ઘંટાદિ રૂપ કાળને વ્યવહાર કાળ કહે છે. કહ્યુ પણ છે કે—

" दव्व परिवट्टरूवो " ઈત્યાદિ. આ કાળ ઉત્સર્પિણી અને અવસર્પિણીના ભેદથી બે પ્રકારનો કહ્યો છે મહાવિદેહ ક્ષેત્રમાં સદા ચતુર્થ કાળ જ અવસ્થિત (વિદ્યમાન) રહે છે, તથા ભોગભૂમિઓમાં તૃતીયાદિ કાળ અવસ્થિત રહે છે.

यिकाः प्रज्ञप्ताः तद्यथा–अनन्तरावगाढाः, परम्परावगाढाश्च । तत्र अनन्तर–समस्येव समये क्वचिदाकाशदेशे अवगाढाः=आश्रिता अनन्तरावगाढाः, परम्परया=द्व्यादि समयेषु येऽवगाढास्ते परम्परावगाढाः । अथवा–विवक्षित क्षेत्रं द्रव्यं वाऽपेक्ष्य अनन्तरम्=अव्यवधानेन अवगाढा अनन्तरावगाढाः, तद्वितरे तु परम्परावगाढा इति २३ । एवं यावत् यावच्छब्देन अप्कायिका २४ तेजस्कायिकाः २५, वायुकायिका २६ वनस्पतिकायिकाः २७–द्रव्याणि वा विज्ञेयानीति २८ ॥सू०१७॥

उक्त द्रव्यस्वरूपम्, सम्प्रति तदधिकारादेव द्रव्यविशेषयोः कालाकाशयोः प्ररूपणामाह—

मूलम्—दुविहे काले पण्णत्ते त जहा-ओसप्पिणी-काले चेव, उसप्पिणीकाले चेव । दुविहे आगासे पण्णत्ते त जहा–लोगागासे चेव अलोगागासे चेव ॥ सू० १८ ॥

कायिक जीव इस तरह से भी दो प्रकार के कहे गये हैं–इनमें एक अनन्तरावगाढ और दूसरे परम्परावगाढ हैं, जो अभी ही क्वचित् आकाश प्रदेश में अवगाढ आश्रित हुए हैं वे अनन्तरावगाढ पृथिवीकायिक जीव हैं तथा द्व्यादि समय हो गये हैं जिनको वे परम्परावगाढ पृथिवी कायिक जीव हैं । अथवा विवक्षित क्षेत्र की या द्रव्य की अपेक्षा करके जो विना किसी व्यवधान के अवगाढ हैं वे अनन्तरावगाढ हैं इनसे भिन्न परम्परावगाढ हैं इसी तरह से यावत् द्रव्यों को जानना चाहिये यहां यावत्पद से अप्कायिक तैजस्कायिक वायुकायिक और वनस्पति कायिकों का ग्रहण हुआ है ॥ सू० १७ ॥

"दुविहा" थी शरु करीने द्रव्य सूत्र पर्यन्त पट् सूत्र छे तेमां पृथ्वीकायिक जीवोने आ रीते पण बे प्रकारना कह्या छे-(१) अनन्तरावगाढ अने (२) परम्परावगाढ. जेओ हमणां ज कोईक आकाश प्रदेशमां अवगाढ थईने आश्रय लई रहेलां छे, तेमने अनन्तरावगाढ पृथ्वीकायिक जीवो कहे छे तथा जेओ बे आदि समयोमां अवगाढ थयां छे, तेमने परम्परावगाढ पृथ्वीकायिक जीवो कहे छे अथवा अमुक क्षेत्र अथवा द्रव्यनी अपेक्षाए जे कोई पण जातना व्यवधान विना अवगाढ छे एवां पृथ्वीकायिकोने अनन्त रावगाढ कहे छे अने तेमनाथी भिन्न पृथ्वीकायिकोने परम्परावगाढ कहे छे एज प्रमाणे अप्कायिक तेजस्कायिक वायुकायिक अने वनस्पतिकायिक पर्यन्तना जीवद्रव्यो विषे पण समजवुं ॥ सू० १७ ॥

छाया—द्विविधः काल प्रज्ञप्तः, तद्यथा—अवसर्पिणीकालश्चैव, उत्सर्पिणीकालश्चैव द्विविध आकाशः प्रज्ञप्तः, तद्यथा—लोकाकाशश्चैव अलोकाकाशश्चैव ॥सू० १८॥

टीका—' दुविहे काले इत्यादि ।

कल्यते=परिच्छिद्यते ज्ञायते वस्त्वनेनेति कालः, कलनं वा कालानां समयादि रूपाणां समूहो वा कालः—वर्तनादिरूपः 'वट्टणा लक्खणो कालो' इति वचनात् । स चावसर्पिण्युत्सर्पिणीभेदेन द्विविध । जगति महाविदेहादिभोगभूमिषु सदाऽवस्थित-लक्षणस्तृतीयोऽपि कालो वर्त्तते तथाऽप्यत्र द्विस्थानकानुरोधाद् द्विविध एव कालः

द्रव्य का स्वरूप कहा जा चुका है अब द्रव्याधिकार को लेकर के ही द्रव्यविशेषरूप काल और आकाश की प्ररूपणा सूत्रकार करते हैं—

" दुविहे काले पण्णत्ते " इत्यादि ।

वस्तु जिसके द्वारा नवीन पुरानी होती हुई जानी जाती है उस का नाम काल है अथवा कलन का नाम काल है या समयादिरूप कलाओं का नाम काल है यह काल वर्तनादिरूप होता है तात्पर्य इसका ऐसा है कि काल निश्चय और व्यवहार की अपेक्षा से दो प्रकार का है वर्त्तनादिरूप काल निश्चयकाल और घडी घंटा आदि रूप काल व्यवहार काल है । उक्तं च—" दव्व परिवट्टरूवो " इत्यादि ।

यह काल उत्सर्पिणी और अवसर्पिणीके भेदसे दो प्रकारका कहा गया है महाविदेह क्षेत्रमें सदा चतुर्थकाल अवस्थित रहता है तथा भोगभूमियों में–अकर्मभूमिमे तृतीय आदि काल अवस्थित रहता है इस तरह से दो कालों के अतिरिक्त एक सदा अवस्थितरूप काल भी होता है फिर

દ્રવ્યના સ્વરૂપનું કથન સમાપ્ત થયુ, હવે સૂત્રકાર અહીં દ્રવ્ય વિશેષ રૂપ કાળની અને આકાશની પ્રરૂપણા કરે છે—

" दुविहे काले पण्णत्ते " ઈત્યાદિ ॥ ૧૮ ॥

વસ્તુ જેના દ્વારા નવીજુની થતી લાગે છે, તેનુ નામ કાળ છે. અથવા કલનનુ (જાણવુ) નામ કાળ છે અથવા સમયાદિ રૂપ કલાઓનુ નામ કાળ છે. તેકાળ વર્તનાદિ રૂપ હોય છે આ કથનનો ભાવાર્થ એ છે કે કાળ નિશ્ચય અને વ્યવહારની અપેક્ષાએ બે પ્રકારનો છે વર્તનાદિ રૂપ કાળને નિશ્ચયકાળ, અને ઘંટાદિ રૂપ કાળને વ્યવહાર કાળ કહે છે કહ્યુ પણ છે કે—

" दव्व परिवट्टरूवो " ઈત્યાદિ આ કાળ ઉત્સર્પિણી અને અવસર્પિણીના ભેદથી બે પ્રકારનો કહ્યો છે. મહાવિદેહ ક્ષેત્રમાં સદા ચતુર્થ કાળ જ અવસ્થિત (વિદ્યમાન) રહે છે, તથા ભોગભૂમિઓમાં તૃતીયાદિ કાળ અવસ્થિત રહે છે.

मोक्तः। 'दुविहे आगासे' इत्यादि–आकाशन्ते–दीप्यन्ते स्व स्वधर्मोपेता जीवा दय पदार्था यत्र तद् आकाशम्। यद्वा–आसमन्तात् काशन्ते–दीप्यन्ते सर्वाण्यपि द्रव्याणि व्यवस्थिततया यत्रेति–आकाशम्। अथवा–आ–मर्यादयान्तरस योगेऽपि स्वकीयस्वकीयरूपेऽवस्थानतः सर्वथा तत्स्वरूपत्वाप्राप्तिलक्षणया काशन्ते= स्वभावलाभेनावस्थितिकारणेन च दीप्यन्ते पदार्थसार्था यत्र तद् आकाशम्। अव गाहदानाद्वा आकाशम् 'नहं ओगाहलक्खणं' इति वचनात्, लोकालोकव्याप्य

भी यहां त्रिस्थान के अनुरोध से दो प्रकार का ही काल कहा गया है।

"दुविहे आगासे" इत्यादि।

अपने २ गुणपर्यायरूप धर्म से युक्त जीवादिक पदार्थ जहां प्रकाशित होते रहते हैं वह आकाश है अथवा–समस्त द्रव्य व्यवस्थितरूपसे जहां पर विद्यमान रहते हैं एक द्रव्य जहां दूसरे द्रव्यरूप नहीं होता है इसका नाम आकाश है अथवा–जहां अपने २ स्वरूप में प्रत्येक पदार्थ रहता है एक दूसरे के साथ संयोग होने पर भी जो एक दूसरे के स्वरूप में नहीं बदलता है–ऐसे स्थान का नाम आकाश है अथवा–जो समस्त जीवादिक द्रव्यों को रहने के लिये स्थान देता है वह आकाश है।

उक्त च–"अवगासदाण जोगं" इत्यादि।

"नहं आगाह लक्खणं" यह आकाश वह द्रव्य है जो लोक और अलोकमें व्याप्त होकर है तथा जिसके अनन्तप्रदेश हैं और जो अमूर्त है यह लोकाकाश और अलोकाकाश के भेद से दो प्रकार का है आकाश के

આ રીતે બે કાળો સિવાય એક સદા અવસ્થિતરૂપ કાળ પણ હોય છે, છતાં પણ અહીં બે સ્થાનના અનુરોધની અપેક્ષાએ કાળના બે પ્રકાર જ કહેવામાં આવ્યા છે

"दुविहे आगासे" ઇત્યાદિ. પોતપોતાના ગુણપર્યાય રૂપ ધર્મથી યુક્ત જીવાદિક પદાર્થ જ્યાં પ્રકાશિત રહે છે તે સ્થાનનું નામ આકાશ છે અથવા સમસ્ત દ્રવ્ય વ્યવસ્થિત રૂપે જ્યાં મોજૂદ રહે છે, એક દ્રવ્ય જ્યાં અન્ય દ્રવ્યરૂપ હોતું નથી તે સ્થાનને આકાશ કહે છે અથવા જ્યાં પ્રત્યેક પદાર્થ પોતપોતાના સ્વરૂપે રહે છે એક બીજાની સાથે સંયોગ થવા છતાં પણ જે એક બીજાના સ્વરૂપમાં બદલાતા નથી, એવા સ્થાનનું નામ આકાશ છે અથવા જે સમસ્ત જીવોને રહેવાને માટે સ્થાન દે છે તેને આકાશ કહે છે. કહ્યું પણ છે કે–' अवगासदाण जोगं" ઇત્યાદિ.

"नहं ओगाह लक्खणं" આ આકાશ એવું દ્રવ્ય છે કે જે લોક અને અલોકમાં વ્યાપ્ત છે તેના અનન્ત પ્રદેશ છે અને તે અમૂર્ત છે તેના બે ભેદ છે–(૧)

नन्तप्रदेशात्मकोऽमूर्त्तद्रव्यविशेष इत्यर्थः। तद् द्विविधम्–लोकाकाशम्, अलोकाकाशं चेति। तत्र लोकाकाशम् = धर्माधर्मकालपुद्गलजन्तूनामाधारभूतम्। तद्विपरीतम्–अलोकाकाशमिति ॥ सू० १८ ॥

लोकालोकभेदेनाकाशद्वैविध्यं प्रोक्तम्। लोकस्तु शरीरशरीरिणां सर्वथाऽऽधारभूत इति नारकादिशरीरिदण्डकेन तच्छरीरप्ररूपणामाह—

मूलम्—णेरइयाणं दो सरीरगा पण्णत्ता, तं जहा--अब्भंतरगे चेव बाहिरगे चेव। अब्भंतरए कम्मए, बाहिरए वेउव्विए। एवं देवाणं भाणियव्वं। पुढविक्काइयाणं दो सरीरगा पण्णत्ता, तं जहा--अब्भंतरगे चेव बाहिरगे चेव। अब्भंतरगे कम्मए बाहिरगे ओरालियगे, जाव वणस्सइकाइयाणं। बेइंदियाणं दो सरीरा पण्णत्ता, तं जहा--अब्भंतरए चेव, बाहिरए चेव। अब्भंतरगे कम्मए, अट्ठिमंससोणियबद्धे बाहिरए ओरालिए जाव चउरिंदियाणं। पंचिंदियतिरिक्खजोणियाणं दो सरीरगा पण्णत्ता, तं जहा–अब्भंतरगे चेव बाहिरगे चेव, अब्भंतरगे कम्मए, अट्ठिमंससोणियण्हारुछिराबद्धे बाहिरए ओरालिए। मणुस्साणवि एवं चेव। विग्गहगइसमावन्नगाणं नेरइयाणं दो सरीरगा पण्णत्ता, तं जहा—तेयए चेव कम्मए चेव, निरंतरं जाव वेमाणियाणं। नेरइयाणं दोहिं ठाणेहिं सरीरुप्पत्ती सिया, तं जहा--रागेण चेव दोसेण चेव जाव वेमाणियाणं। नेरइयाणं दुट्ठाणनिव्वत्तिए सरीरगे पण्णत्ते तं जहा--रागनिव्वत्तिए चेव,

---

जितने भाग में धर्म, अधर्म, काल, पुद्गल और जीव रहते हैं–इन द्रव्यों का जो आधारभूत है–वह लोकाकाश है और इस लोकाकाश से भिन्न जो आकाश है वह अलोकाकाश है ॥सू० १८॥

લોકાકાશ અને (૨) અલોકાકાશ. આકાશના જેટલા ભાગમાં ધર્મ, અધર્મ, કાળ, પુદ્ગલ અને જીવ રહે છે–જેટલુ આકાશ આ દ્રવ્યોનું આશ્રયસ્થાન છે, એટલા આકાશને લોકાકાશ કહે છે. લોકાકાશથી ભિન્ન એવું જે આકાશ છે તેને અલોકાકાશ કહે છે. ॥ સૂ૦ ૧૮ ॥

दोसनिव्वत्तिए चेव, जाव वेमाणियाणं । दो काया पण्णत्ता तं जहा-तसकाए चेव थावरकाए चेव । तसकाए दुविहे पण्णत्ते तं जहा भवसिद्धिए चेव अभवसिद्धिए चेव। एवं थावरकाए वि ॥१९॥

छाया-नैरयिकाणां द्वे शरीरे प्रज्ञप्ते, तद्यथा आभ्यन्तरकं चैव बाह्यकं चैव । आभ्यन्तरकं कार्मकम्, बाह्यकं वैक्रियम्। एवं देवानामपि भणितव्यम्। पृथिवीकायिकानां द्वे शरीरे प्रज्ञप्ते, तद्यथा-आभ्यन्तरकं चैव बाह्यकं चैव। आभ्यन्तरकं कार्मकं, बाह्यमौदारिकम्, यावत् वनस्पतिकायिकानाम् । द्वीन्द्रियाणां द्वे शरीरे प्रज्ञप्ते, तद्यथा-आभ्यन्तरकं चैव बाह्यकं चैव । आभ्यन्तरकं कार्मकम्, अस्थिमांसशोणितबद्धं बाह्यकमौदारिकम्, यावत् चतुरिन्द्रियाणाम् । पञ्चेन्द्रियतिर्यग्योनिकानां द्वे शरीरे प्रज्ञप्ते, तद्यथा-आभ्यन्तरकं चैव बाह्यकं चैव । आभ्यन्तरकं कार्मकम्, अस्थिमांसशोणितस्नायुशिराबद्धं बाह्यकमौदारिकम् । मनुष्याणामप्येवमेव । विग्रहगतिसमापन्नकानां नैरयिकाणां द्वे शरीरे प्रज्ञप्ते, तद्यथा-तैजसकं चैव कार्मकं चैव, निरन्तरं यावत् वैमानिकानाम् । नैरयिकाणां द्वाभ्यां स्थानाभ्यां शरीरोत्पत्तिः स्यात्, तद्यथा-रागेण चैव द्वेषेण चैव यावत् वैमानिकानाम् । नैरयिकाणां द्विस्थाननिर्वर्तितं शरीरकं प्रज्ञप्तं, तद्यथा-रागनिर्वर्तितं चैव, द्वेषनिर्वर्तितं चैव । यावत् वैमानिकानाम् । द्वौ कायौ प्रज्ञप्तौ तद्यथा त्रसकायश्चैव स्थावरकायश्चैव, त्रसकायः द्विविधः प्रज्ञप्तः तद्यथा — भवसिद्धिकश्चैव, अभवसिद्धिकश्चैव । एवं स्थावरकायोऽपि ॥ सू० १९ ॥

टीका—' नेरइयाणं ' इत्यादि ।

नैरयिकाणां द्वे शरीरे भवतः-आभ्यन्तरं बाह्यं च । शीर्यते-प्रतिक्षणं विनश्य

लोक और अलोक के भेद से आकाश में द्विविधता का कथन करके अब सूत्रकार शरीर और शरीर वालों का आधारभूत क्षेत्र लोक है इस प्रसङ्ग को लेकर नारकादि शरीरिदण्डक द्वारा उनके शरीरों की प्ररूपणा करते हैं-" नेरइयाणं दो सरीरगा पण्णत्ता " इत्यादि ॥१८॥

टीकार्थ-नैरयिक जीवोंके दो शरीर होते हैं एक आभ्यन्तर शरीर और

લોક અને અલોકના ભેદથી આકાશમાં દ્વિવિધતાનું કથન કરીને હવે શરીર અને શરીરવાળાના આધારભૂત જે લોકક્ષેત્ર છે, તેનું હવે સૂત્રકાર નારકાદિ શરીર દંડકો દ્વારા નિરૂપણ કરે છે

" नेरइयाणं दो सरीरगा पण्णत्ता " ઇત્યાદિ ॥ ૧૯ ॥

ટીકાર્થ—નારક જીવોનાં બે શરીર હોય છે (૧) આભ્યન્તર શરીર અને

तीतिशरीरं शटनपतनादिधर्मवत्त्वात् । आभ्यन्तरे=अन्तराले भवम् आभ्यन्तरम् । आभ्यन्तरत्वं चास्यात्मप्रदेशैः सह क्षीरनीरन्यायेन लोलीभूतत्वात्, भवान्तरगमनेऽपि च जीवस्यानुगतिप्राधान्येनापवरकाद्यन्तः प्रविष्टपुरुषवच्छद्मस्थाऽप्रत्यक्षत्वाच्चेति । तथा-बहिर्भवं बाह्यम् । बाह्यत्वं चास्य जीवप्रदेशैः सह कस्यापि केषुचिदवयवेषु व्याप्त्यभावात्, भवान्तराननुगामितया छद्मस्थस्यापि प्रायः प्रत्यक्षत्वाच्चेति । तत्राभ्यन्तरं कार्मकम् कार्मणशरीरनामकर्मोदयनिर्वर्त्यं कर्मवर्गणास्वरूपं, संसारिजीवानां गत्यन्तरसंक्रमणे साधकतमं, सकलकर्मणामङ्कुरभूमिरूपम्, अशे-

---

दूसरा बाह्य शरीर " शीर्यते प्रतिक्षणं इति शरीरम् " इस व्युत्पत्ति के अनुसार प्रतिक्षण जिसका विनाश होता रहता है उसका नाम शरीर है यह शरीर शटनादि धर्मवाला है अन्तराल में भी जो शरीर जीव के साथ रहता है उसका नाम आभ्यन्तर शरीर है ऐसा वह आभ्यन्तर शरीर तैजस कार्मणरूप होता है तैजस कार्मण शरीर को आभ्यान्तर शरीर कहने का यह प्रयोजन है कि ये दोनों शरीर आत्म प्रदेशों के साथ क्षीरनीर की तरह लोलीभूत (मिले हुए) बने हुए रहते हैं तथा जीव जब भवान्तर में गमन करता है तब भी ये उसके साथ जाते हैं जब तक जीव को मुक्ति की प्राप्ति नहीं होती है तब तक ये उस का साथ नहीं छोड़ते हैं तथा अपवरक (छोटा घर) आदि के भीतर प्रविष्ट हुए पुरुष की तरह ये छद्मस्थजनोंको अप्रत्यक्ष रहते हैं बाह्य जो शरीर है वह जीव प्रदेशों के साथ कितनेक अवयवों में व्याप्त होकर नहीं रहता है तथा भवान्तर में जीव के साथ नहीं जाता है और छद्मस्थ जनोंको वह प्रत्यक्ष दिखलाइ पड़ता है ।

બાહ્યશરીર. "શીર્યતે પ્રતિક્ષણં ઇતિ શરીરમ્" આ વ્યુત્પત્તિ અનુસાર જેનો પ્રતિ ક્ષણ વિનાશ થતો રહે છે તે શરીર કહેવાય છે. તે શરીર શટનાદિ (સડવું, ગળવું વગેરે) ધર્મોથી યુક્ત છે અન્તરાલમાં પણ જે શરીર જીવની સાથે રહે છે તે શરીરનુ નામ આભ્યન્તર શરીર છે એવું તે આભ્યન્તર શરીર તૈજસ અને કાર્મણરૂપ હોય છે તૈજસ અને કાર્મણ શરીરને આભ્યન્તર શરીર કહેવાનું એ કારણ છે કે તે બન્ને શરીર આત્મપ્રદેશોની સાથે ક્ષીરનીરની જેમ ઓતપ્રોત થઇને રહે છે તથા જીવ જ્યારે અન્ય ભવમાં ગમન કરે છે, ત્યારે પણ તેઓ તેની સાથે જાય છે. જ્યાં સુધી જીવને મુક્તિ મળતી નથી ત્યાં સુધી આ શરીરો તેનો સાથ છોડતાં નથી, તથા અપવરક (નાનું ઘર) આદિની અંદર પ્રવિષ્ટ થયેલા પુરુષની જેમ તેઓ છદ્મસ્થજનોને દેખાતા નથી જે બાહ્ય શરીર છે તે જીવપ્રદેશોની સાથે કેટલાંક અવયવોમાં વ્યાપ્ત થઇને રહેતું નથી, તથા અન્ય ભવમાં જીવની સાથે જતું નથી અને છદ્મસ્થ જીવોને તે પ્રત્યક્ષ દેખાય છે.

दोसनिव्वत्तिए चेव, जाव वेमाणियाणं । दो काया पण्णत्ता त जहा-तसकाए चेव थावरकाए चेव । तसकाए दुविहे पण्णत्ते त जहा भवसिद्धिए चेव अभवसिद्धिए चेव। एवं थावरकाए वि ॥१९॥

छाया—नैरयिकाणां द्वे शरीरे प्रज्ञप्ते, तद्यथा आभ्यन्तरकं चैव बाह्यकं चैव । आभ्यन्तरकं कार्मकम्, बाह्यकं वैक्रियम्। एवं देवानामपि भणितव्यम्। पृथिवीकायिकानां द्वे शरीरे प्रज्ञप्ते, तद्यथा—आभ्यन्तरकं चैव बाह्यकं चैव। आभ्यन्तरकं कार्मकं, बाह्यमौदारिकम्, यावत् वनस्पतिकायिकानाम् । द्वीन्द्रियाणां द्वे शरीरे प्रज्ञप्ते, तद्यथा—आभ्यन्तरकं चैव बाह्यकं चैव । आभ्यन्तरकं कार्मकम्, अस्थिमांसशोणितबद्धं बाह्यकमौदारिकम्, यावद् चतुरिन्द्रियाणाम् । पञ्चेन्द्रियतिर्यग्योनिकानां द्वे शरीरे प्रज्ञप्ते, तद्यथा—आभ्यन्तरकं चैव बाह्यकं चैव । आभ्यन्तरकं कार्मकम्, अस्थिमांसशोणितस्नायुशिराबद्धं बाह्यकमौदारिकम् । मनुष्याणामप्येवमेव । विग्रहगतिसमापन्नकानां नैरयिकाणां द्वे शरीरे प्रज्ञप्ते, तद्यथा—तैजसकं चैव कार्मकं चैव, निरन्तरं यावद् वैमानिकानाम् । नैरयिकाणां द्वाभ्यां स्थानाभ्यां शरीरोत्पत्तिः स्यात्, तद्यथा—रागेण चैव द्वेषेण चैव यावद् वैमानिकानाम् । नैरयिकाणां द्विस्थाननिर्वर्तितं शरीरकं प्रज्ञप्तम्, तद्यथा—रागनिर्वर्तितं चैव, द्वेषनिर्वर्तितं चैव । यावद् वैमानिकानाम् । द्वौ कायौ प्रज्ञप्तौ तद्यथा त्रसकायश्चैव स्थावरकायश्चैव, त्रसकायः द्विविधः प्रज्ञप्तः तद्यथा — भवसिद्धिकश्चैव, अभवसिद्धिकश्चैव । एवं स्थावरकायोऽपि ॥ सू० १९ ॥

टीका—'नेरइयाणं' इत्यादि ।

नैरयिकाणां द्वे शरीरे भवतः—आभ्यन्तरं बाह्यं च । शरीरते—प्रतिक्षणं विनश्य

लोक और अलोक के भेद से आकाश में द्विविधता का कथन करके अब सूत्रकार शरीर और शरीर वालों का आधारभूत क्षेत्र लोक है इस प्रसङ्ग को लेकर नारकादि शरीरिदण्डक द्वारा उनके शरीरों की प्ररूपणा करते हैं-" नेरइयाणं दो सरीरगा पण्णत्ता " इत्यादि ॥१८॥

टीकार्थ—नैरयिक जीवोंके दो शरीर होते हैं एक आभ्यन्तर शरीर और

લોક અને અલોકના ભેદથી આકાશમાં દ્વિવિધતાનું કથન કરીને હવે શરીર અને શરીરવાળાના આધારભૂત જે ક્ષેત્રલોક છે તેનું હવે સૂત્રકાર નારકાદિ શરીર દંડક દ્વારા નિરૂપણ કરે છે

" નેરઇયાણં દો સરીરગા પણ્ણત્તા " ઇત્યાદિ ॥ ૧૯ ॥

ટીકાર્થ—નારક જીવોને બે શરીર હોય છે (૧) આભ્યન્તર શરીર અને

तीतिशरीरं शटनपतनादिधर्मवत्त्वात् । आभ्यन्तरे=अन्तराले भवम् आभ्यन्तरम् । आभ्यन्तरत्वं चास्यात्मप्रदेशैः सह क्षीरनीरन्यायेन लोलीभूतत्वात्, भवान्तरगमनेऽपि च जीवस्यानुगतिभावान्येनापवरकाधन्तः प्रविष्टपुरुषवच्छद्मस्थाऽप्रत्यक्षत्वाच्चेति । तथा–बहिर्भवं बाह्यम् । बाह्यत्वं चास्य जीवप्रदेशैः सह कस्यापि केषुचिदवयवेषु व्याप्त्यभावात्, भवान्तराननुगामितया छद्मस्थस्यापि प्रायः प्रत्यक्षत्वाच्चेति । तत्राभ्यन्तरं कार्मकम् कार्मणशरीरनामकर्मोदयनिर्वर्त्यं कर्मवर्गणास्वरूपं, संसारिजीवानां गत्यन्तरसंक्रमणे साधकतमं, सकलकर्मणामङ्कुरभूमिरूपम्, अशे-

---

दूसरा बाह्य शरीर "शीर्यते प्रतिक्षणं इति शरीरम्" इस व्युत्पत्ति के अनुसार प्रतिक्षण जिसका विनाश होता रहता है उसका नाम शरीर है यह शरीर शटनादि धर्मवाला है अन्तराल में भी जो शरीर जीव के साथ रहता है उसका नाम आभ्यन्तर शरीर है ऐसा वह आभ्यन्तर शरीर तैजस कार्मणरूप होता है तैजस कार्मण शरीर को आभ्यान्तर शरीर कहने का यह प्रयोजन है कि ये दोनों शरीर आत्म प्रदेशों के साथ क्षीरनीर की तरह लोलीभूत (मिले हुए) बने हुए रहते हैं तथा जीव जब भवान्तर में गमन करता है तब भी ये उसके साथ जाते हैं जब तक जीव को मुक्ति की प्राप्ति नहीं होती है तब तक ये उस का साथ नहीं छोड़ते हैं तथा अपवरक (छोटा घर) आदि के भीतर प्रविष्ट हुए पुरुष की तरह ये छद्मस्थजनोंको अप्रत्यक्ष रहते हैं बाह्य जो शरीर है वह जीव प्रदेशों के साथ कितनेक अवयवों में व्याप्त होकर नहीं रहता है तथा भवान्तर में जीव के साथ नहीं जाता है और छद्मस्थ जनोंको वह प्रत्यक्ष दिखलाइ पड़ता है ।

બાહ્યશરીર. "शीर्यते प्रतिक्षणं इति शरीरम्" આ વ્યુત્પત્તિ અનુસાર જેનો પ્રતિક્ષણ વિનાશ થતો રહે છે તે શરીર કહેવાય છે. તે શરીર શટનાદિ (સડવું, ગળવું વગેરે) ધર્મોથી યુક્ત છે અન્તરાલમાં પણ જે શરીર જીવની સાથે રહે છે તે શરીરનુ નામ આભ્યન્તર શરીર છે. એવું તે આભ્યન્તર શરીર તૈજસ અને કાર્મણરૂપ હોય છે તૈજસ અને કાર્મણ શરીરને આભ્યન્તર શરીર કહેવાનુ એ કારણ છે કે તે બન્ને શરીર આત્મપ્રદેશોની સાથે ક્ષીરનીરની જેમ ઓતપ્રોત થઇને રહે છે તથા જીવ જ્યારે અન્ય ભવમાં ગમન કરે છે, ત્યારે પણ તેઓ તેની સાથે જાય છે. જ્યાં સુધી જીવને મુક્તિ મળતી નથી ત્યાં સુધી આ શરીરો તેનો સાથ છોડતાં નથી, તથા અપવરક (નાનું ઘર) આદિની અંદર પ્રવિષ્ટ થયેલા પુરુષની જેમ તેઓ છદ્મસ્થજનોને દેખાતા નથી જે બાહ્ય શરીર છે તે જીવપ્રદેશોની સાથે કેટલાંક અવયવોમાં વ્યાપ્ત થઇને રહેતું નથી, તથા અન્ય ભવમાં જીવની સાથે જતું નથી અને છદ્મસ્થ જીવોને તે પ્રત્યક્ષ દેખાય છે.

षकर्माधारभूत चेति । ननु तैजसमपि शरीरमाभ्यन्तरमस्तीति तत्कथ मोक्तम् ? इति चेदाह-कार्मणग्रहणे तैजसमपि गृहीतमेव तयोः सदैव सहचारित्वात् । तथा बाह्य च वैक्रियरूपम् । एवम्-भवनपत्यादि वैमानिकान्तानां देवानामपि भणितव्यम् । 'पुढवी' इत्यादि-पृथिवीकायिकादारभ्य वनस्पतिपर्यन्तानां पञ्चस्थावरा

शंका—यहां सूत्र में आभ्यन्तर शरीरकार्मण शरीर ही गृहीत हुआ फिर आपने तैजस शरीरको आभ्यन्तरशरीररूप से कैसे ग्रहण किया है?

उ०—तैजस और कार्मण शरीर का सम्बन्ध प्रत्येक ससारी जीव के साथ अनादिकाल से चला आरहा है अत ये सदा से ही सहचारी हैं। इसलिये यहां कार्मण के ग्रहण होनेसे तैजस का भी ग्रहण हो गया है यह आभ्यन्तररूप कार्मण शरीर नाम कर्म के उदय से जीव को प्राप्त होता है अतः यह कर्म वर्गणा रूप है अर्थात् ज्ञानावरणीय आदि कर्मों का जो समूह है वही कार्मण शरीर है यह शरीर संसारी जीवों का जब एक गति से दूसरी गति में गमन होता है उसमें साधकतम होता है तथा—सकलकर्मों को उत्पन्न होने के लिये यह भूमिरूप है और अशेषकर्मों का यह आधारभूत है नैरयिक जीवों के बाह्यशरीर वैक्रिय शरीर है इसी तरह का कथन भवनपति से लेकर वैमानिक तक के जीवों में भी कर लेना चाहिये "पुढवीकाइयाणं" इत्यादि-पृथिवीकायिक से लेकर वनस्पति कायिक तक के जीवों के-पांच स्थावर

શંકા—અહીં સૂત્રમાં કાર્મણ શરીરને જ આભ્યન્તર શરીર રૂપે ગ્રહણ કરવામાં આવ્યું છે છતાં આપે તૈજસ શરીરને આભ્યન્તર શરીર રૂપે કેમ ગ્રહણ કર્યું છે?

ઉત્તર—તૈજસ અને કાર્મણ શરીરનો સંબંધ પ્રત્યેક સંસારી જીવની સાથે અનાદિ કાળથી ચાલ્યો આવે છે, તે કારણે તેઓ કાયમના સહચારી છે તે કારણે અહીં કાર્મણની સાથે તૈજસ શરીરને પણ ગ્રહણ કરવામાં આવ્યું છે આભ્યન્તર રૂપ કર્મણ શરીર નામ કર્મના ઉદયથી જીવને તેની પ્રાપ્તિ થાય છે તેથી કર્મવર્ગણા રૂપ છે કારણ કે જ્ઞાનાવરણીય આદિ કર્મોનો જે સમૂહ છે, એજ કાર્મણ શરીર છે આ શરીર જ્યારે સંસારી જીવોનું એક ગતિમાંથી બીજી ગતિમાં ગમન થાય છે ત્યારે તેમાં સાધકતમ હોય છે તથા—સકલ કર્મોના ઉત્પન્ન થવામાં તે ભૂમિરૂપ રહે છે અને અશેષ કર્મોના આધારરૂપ હોય છે નૈરયિક જીવોનું બાહ્ય શરીર વૈક્રિય શરીર હોય છે આ પ્રકારનું કથન ભવનપતિથી લઈને વૈમાનિક પર્યન્તના જીવોમાં પણ ગ્રહણ કરવું જોઈએ. "પુઢવીકાઇયાણં" ઇત્યાદિ—

णाम् आभ्यन्तरबाह्यभेदेन शरीरद्वयं भवति। तदेवाह – आभ्यन्तरं कार्मकम्, बाह्यं चौदारिकं शरीरं भवति, औदारिकं नाम–औदारिकशरीरनामकर्मोदयादुदार-पुद्गलनिर्वृत्तम्। एकेन्द्रियाणामौदारिकशरीरं केवलमस्थ्यादिविरहितं भवति। वायूनां वैक्रियशरीरमपि भवति किन्त्वत्र न विवक्षितं प्रायिकत्वात्। 'वेइंदियाणं' इत्यादि–द्वीन्द्रियाणां तदेव शरीरद्वयं भवति आभ्यन्तरं–कार्मकम्, बाह्यमौदारिकं चेति। एवमौदारिकशरीरम्–अस्थिमांसशोणितबद्धम्। एव त्रीन्द्रिय चतुरिन्द्रियाणामपि बोध्यम्। 'पंचिंदिये' त्यादि–पञ्चेन्द्रियतिर्यग्योनिकानां शरीरद्वयम् आभ्य-

---

जीवों के–आभ्यन्तर और बाह्यशरीर के भेद से दो शरीर होते हैं आभ्यन्तर शरीर तो तैजसकार्मण होते हैं तथा बाह्यशरीर औदारिक-शरीर होता है। यह औदारिक शरीर औदारिकशरीरनामकर्म के उदय से होता है इस शरीर को उत्पन्न करने वाले जो औदारिक पुद्गल हैं वे स्थूलाकार से परिणत होते हैं। एकेन्द्रिय जीवों का यह औदारिक शरीर केवल अस्थि आदि से रहित होता है वायुकायिक जीवों के वैक्रिय शरीर भी होता है फिर भी वह यहां प्रायिक होने से विवक्षित नहीं हुआ है "वेइंदिया णं" इत्यादि–दो इन्द्रिय जीवों के भी शरीरद्वय होते हैं–एक आभ्यन्तर शरीर और दूसरा बाह्यशरीर आभ्यन्तर शरीरसे कार्मणशरीर होता है और बाह्य शरीर में औदारिक शरीर होता है यहां जो औदारिक शरीर होता है वह अस्थि मांस और शोणित से बद्ध-युक्त होता है इसी तरह से तेइन्द्रिय और चौइन्द्रिय जीवों के भी

પૃથ્વીકાયથી લઈને વનસ્પતિકાય પર્યન્તના જીવોને–પાંચ સ્થાવર જીવોને આભ્યન્તર અને બાહ્યશરીરના ભેદથી બે શરીરો હોય છે આભ્યન્તર શરીર તો તૈજસ અને કાર્મણ શરીર રૂપ હોય છે અને બાહ્યશરીર ઔદારિક શરીર રૂપ હોય છે. આ ઔદારિક શરીર ઔદારિક 'શરીરનામકર્મ'ના ઉદયથી પ્રાપ્ત થાય છે. આ શરીરને ઉત્પન્ન કરનારા જે ઔદારિક પુદ્ગલો હોય છે, તેઓ સ્થૂલાકારે પરિણત થાય છે. એકેન્દ્રિય જીવોનું આ ઔદારિક શરીર કેવળ અસ્થિ આદિથી રહિત હોય છે. વાયુકાયિક જીવોને વૈક્રિય શરીર પણ હોય છે, છતાં પણ તે ત્યાં પ્રાયિક (ક્યારેક) હોય છે, તેથી અહીં તેનો ઉલ્લેખ થયો નથી.

"वेइंदियाणं" ઇત્યાદિ—દ્વીન્દ્રિય જીવોને પણ બે શરીર હોય છે–(૧) આભ્યન્તર અને (૨) બાહ્ય આભ્યન્તર શરીર કાર્મણ શરીર રૂપ અને બાહ્ય શરીર ઔદારિક શરીર રૂપ હોય છે અહીં જે ઔદારિક શરીર હોય છે તે અસ્થિ, માંસ અને શોણિતથી બદ્ધ (યુક્ત) હોય છે. એજ પ્રમાણે તેઇન્દ્રિય

चकर्माधारभूत चेति। ननु तैजसमपि शरीरमाभ्यन्तरमस्तीति तत्कथं नोक्तम्? इति चेदाह–कार्मणग्रहणे तैजसमपि गृहीतमेव तयो सदैव सहचारित्वात्। तथा बाह्य च वैक्रियकम्। एवम्–भवनपत्यादि वैमानिकान्तानां देवानामपि भणितव्यम्। 'पुढवी' इत्यादि–पृथिवीकायिकादारभ्य वनस्पतिपर्यन्तानां पञ्चस्थावरा

शंका—यहां सूत्र में आभ्यन्तर शरीरकार्मण शरीर ही गृहीत हुआ फिर अपने तैजस शरीरको आभ्यन्तरशरीररूप से कैसे ग्रहण किया है?

उ०—तैजस और कार्मण शरीर का सम्बन्ध प्रत्येक संसारी जीव के साथ अनादिकाल से चला आरहा है अतः ये सदा से ही सहचारी हैं। इसलिये यहां कार्मण के ग्रहण होनेसे तैजस का भी ग्रहण हो गया है यह आभ्यन्तररूप कार्मण शरीर नाम कर्म के उदय से जीव को प्राप्त होता है अतः यह कर्म वर्गणा रूप है अर्थात् ज्ञानावरणीय आदि कर्मों का जो समूह है वही कार्मण शरीर है यह शरीर संसारी जीवों का जब एक गति से दूसरी गति में गमन होता है उसमें साधकतम होता है तथा—सकलकर्मों को उत्पन्न होने के लिये यह भूमिरूप है और अशेषकर्मों का यह आधारभूत है नैरयिक जीवों के बाह्यशरीर वैक्रिय शरीर है इसी तरह का कथन भवनपति से लेकर वैमानिक तक के जीवों में भी कर लेना चाहिये, "पुढवीकाइयाणं" इत्यादि–पृथिवीकायिक से लेकर वनस्पति कायिक तक के जीवों के–पांच स्थावर

શંકા—અહીં સૂત્રમાં કાર્મણ શરીરને જ આભ્યન્તર શરીર રૂપે ગ્રહણ કરવામાં આવ્યું છે છતાં આપે તૈજસ શરીરને આભ્યન્તર શરીર રૂપે કેમ ગ્રહણ કર્યું છે?

ઉત્તર—તૈજસ અને કાર્મણ શરીરનો સબંધ પ્રત્યેક સંસારી જીવની સાથે અનાદિ કાળથી ચાલ્યો આવે છે, તે કારણે તેઓ કાયમના સહચારી છે તે કારણે અહીં કાર્મણની સાથે તૈજસ શરીરને પણ ગ્રહણ કરવામાં આવ્યું છે આભ્યન્તર રૂપ કાર્મણ શરીર નામ કર્મના ઉદયથી જીવને તેની પ્રાપ્તિ થાય છે તેથી કર્મવર્ગણા રૂપ છે એટલે કે જ્ઞાનાવરણીય આદિ કર્મોનો જે સમૂહ છે એજ કાર્મણ શરીર છે આ શરીર જ્યારે સંસારી જીવોનું એક ગતિમાંથી બીજી ગતિમાં ગમન થાય છે, ત્યારે તેમાં સાધકતમ હોય છે તથા—સકલ કર્મોના ઉત્પન્ન થવામાં તે ભૂમિરૂપ રહે છે અને અશેષ કર્મોના આધારરૂપ હોય છે નૈરયિક જીવોનું બાહ્ય શરીર વૈક્રિય શરીર હોય છે આ પ્રમાણનું કથન ભવનપતિથી લઈને વૈમાનિક પર્યન્તના જીવોમાં પણ ગ્રહણ કરવું જોઈએ. "પુઢવીકાઇયાણં" ઇત્યાદિ—

असुरकुमारेभ्य आरभ्य यावद् वैमानिकानां तैजसं कार्मकं चेति शरीरद्वयं भवति। 'नेरइयाणं' इत्यादि–नैरयिकाणां द्वाभ्यां स्थानाभ्यां शरीरोत्पत्तिर्भवति–रागेण द्वेषेण चेति। एवं यावद् वैमानिकानाम्। 'नेरइयाणं' इत्यादि–नैरयिकाणां द्विस्थाननिर्वर्त्तितं शरीरं भवति–रागनिर्वर्त्तितं द्वेषनिर्वर्त्तितं चेति। एवं यावद् वैमानिकानाम्। 'दो काया' इत्यादि–द्वौ कायौ प्रज्ञप्तौ–त्रसकायः स्थावरकायश्चेति। तत्र त्रसनामकर्मोदयात् त्रस्यन्तीति त्रसाः, तेषां कायः=राशिस्त्रसकायः। स्थावरनामकर्मोदयात् तिष्ठन्तीत्येवं शीलाः स्थावराः, तेषां कायः=समूहः स्थावरकायः। 'तसकाए' इत्यादि–त्रसकायो द्विविधः–भवसिद्धिकः अभवसिद्धिकश्चेति। एवं स्थावरकायोऽपि ॥ सू० १९ ॥

और दूसरा कार्मणशरीर इसी तरह से विग्रहगति समापन्नक भवनपति से लेकर वैमानिक तक के जीवों को भी ये दो ही–तैजस और कार्मण शरीर ही होते हैं "नेरइयाणं दोहिं ठाणेहिं" इत्यादि–नैरयिक जीवों के शरीर की उत्पत्ति दो स्थानों द्वारा होती है एक राग के द्वारा और दूसरे द्वेष के द्वारा इसी तरह से शरीरोत्पत्ति के विषय का कथन वैमानिक तक के जीवों का भी कर लेना चाहिये काय दो प्रकार कहा गया है एक त्रसकाय और दूसरा स्थावरकाय त्रसनामकर्म के उदय से जो अपनी इच्छा से चलते फिरते हैं डरते हैं भागते हैं वे सब त्रसजीव हैं इनकी जो राशि है वह त्रसकाय है स्थावर नामकर्म के उदय से जो एक स्थान से दूसरे स्थान पर आ जा नहीं सकते हैं एक ही जगह स्थिर रहते हैं वे स्थावर हैं इन स्थावरों का जो समूह है वह स्थावरकाय है

કાર્મણ એજ પ્રમાણે વિગ્રહગતિ સમાપન્નક ભવનપતિથી લઇને વૈમાનિક પર્યન્તના જીવોમાં પણ એ બે શરીરનો જ (તૈજસ અને કાર્મણ શરીરનો જ) સદ્ભાવ હોય છે.

"नेरइयाण दोहिं ठाणेहिं" ઇત્યાદિ—નારક જીવોના શરીરની ઉત્પત્તિ બે સ્થાનો (કારણો) દ્વારા થાય છે–(૧) રાગદ્વારા અને (૨) દ્વેષદ્વારા. શરીરોત્પત્તિને અનુલક્ષીને વૈમાનિક પર્યન્તના જીવો વિષે પણ આ પ્રકારનું કથન થવું જોઇએ. કાયના બે પ્રકાર છે–(૧) ત્રસકાય અને (૨) સ્થાવરકાય. ત્રસ નામકર્મના ઉદયથી જે પોતાની ઇચ્છાથી હરે ફરે છે, ડરે છે અને ભાગે છે, તે જીવોને ત્રસ જીવો કહે છે. એવાં જીવોની રાશિ (સમૂહ) ને ત્રસકાય કહે છે. સ્થાવર નામકર્મના ઉદયથી જે જીવો એક જગ્યાએથી બીજી જગ્યા જઈ શકતા નથી, પણ એક જ જગ્યાએ સ્થિર રહે છે, એવાં જીવોને સ્થાવર

न्तर कार्मकम् , याह्य औदारिकम् । यत्-अस्थिमांसशोणितस्नायुशिराबद्ध भवति । तत्र स्नायु -अस्थिबन्धनी नाडी । शिरा तु सामान्या । एवं मनुष्याणामपि । ' विग्गहगइ० ' इत्यादि-विग्रहोपक, समापन्नागति'-विग्रहगतिः, तत्समापन्नानां नैरयिकाणा शरीरद्वयं भवति-तैजस कार्मक चेति । एवं निरन्तरम्=अव्यवहितम्।

आभ्यन्तर और बाह्य ये दो शरीर होते हैं आभ्यन्तर में कार्मण शरीर होता है और बाह्य में औदारिक शरीर होता है यहा पर भी औदारिक शरीर अस्थि मांस और शोणित से बद्ध होता है " पंचिंदिय " इत्यादि -जो पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च हैं उनके भी आभ्यन्तर और बाह्य शरीर होते हैं आभ्यन्तर में कार्मण शरीर और बाह्य में औदारिक शरीर होता है यहां पर भी औदारिक शरीर अस्थि, मांस, शोणित, स्नायु और शिराओं से बद्ध होता है अस्थियों को बांधने वाली जो नाडी है वह स्नायु कहलाती है तथा सामान्य जो पीली २ नसें होती हैं वे शिरा कहलाती हैं " मणुस्सा वि एव चेव " मनुष्य के भी इसी तरह से दो शरीर होते हैं " विग्गह० " विग्रहगति मोडे सहित जो परभव के लिये जीव की गति होती है उसका नाम विग्रहगति है अथवा नवीन शरीर धारण करने के लिये जो गति होती है वह विग्रहगति है-इस विग्रह गति समापन्नक नैरयिकों के दो ही शरीर होते हैं एक तैजस शरीर

અને ચતુરિન્દ્રિય જીવોમાં પણ આભ્યન્તર અને બાહ્ય શરીરનો સદ્ભાવ હોય છે ત્યાં આભ્યન્તર શરીર કાર્મણ શરીર રૂપ અને બાહ્ય શરીર ઔદારિક શરીરરૂપ હોય છે તેમનુ ઔદારિક શરીર પણ અસ્થિ, માંસ અને શોણિતથી બદ્ધ (યુક્ત) હોય છે "પંચિંદિય" ઇત્યાદિ-પંચેન્દ્રિય તિર્યંચોને પણ આભ્યન્તર અને બાહ્યશરીર હોય છે આભ્યન્તર શરીર કાર્મણશરીરરૂપ અને બાહ્ય શરીર ઔદારિક શરીર રૂપ હોય છે અહીં પણ ઔદારિક શરીર અસ્થિ, માંસ, શોણિત, સ્નાયુઓ અને શિરાઓથી બદ્ધ હોય છે અસ્થિઓને બાંધનારી જે નાડી હોય છે તેને સ્નાયુ કહે છે તથા સામાન્ય જે પીળી પીળી નસો હોય છે તેને શિરાઓ કહે છે " મણુસ્સા વિ एवं चेव " મનુષ્યોમાં પણ એજ પ્રકારના બે શરીરો હોય છે

' विग्गह " ઇત્યાદિ—પરભવમાં ગમન કરતી વખતે જીવની જે મોડા સહિતની (વળાંક યુક્ત) ગતિ થાય છે તેને વિગ્રહગતિ કહે છે અથવા નવીન શરીર ધારણ કરવાને માટે જે ગતિ થાય છે તેને વિગ્રહગતિ કહે છે આ વિગ્રહગતિ સમાપન્નક નૈરયિકોને બે જ શરીર હોય છે-(૧) તૈજસ અને (૨)

असुरकुमारेभ्य आरभ्य यावद् वैमानिकानां तैजसं कार्मकं चेति शरीरद्वयं भवति। 'नेरइयाणं' इत्यादि–नैरयिकाणां द्वाभ्यां स्थानाभ्यां शरीरोत्पत्तिर्भवति–रागेण द्वेषेण चेति। एवं यावद् वैमानिकानाम्। 'नेरइयाणं' इत्यादि–नैरयिकाणां द्विस्थाननिर्वर्त्तितं शरीरं भवति–रागनिर्वर्त्तितं द्वेषनिर्वर्त्तितं चेति। एवं यावद् वैमानिकानाम्। 'दो काया' इत्यादि–द्वौ कायौ प्रज्ञप्तौ–त्रसकायः स्थावरकायश्चेति। तत्र त्रसनामकर्मोदयात् त्रस्यन्तीति त्रसाः, तेषां कायः=राशिस्त्रसकायः। स्थावरनामकर्मोदयात् तिष्ठन्तीत्येवं शीलाः स्थावराः, तेषां कायः=समूहः स्थावरकायः। 'तसकाए' इत्यादि–त्रसकायो द्विविधः–भवसिद्धिकः अभवसिद्धिकश्चेति। एवं स्थावरकायोऽपि ॥ सू० १९ ॥

और दूसरा कार्मणशरीर इसी तरह से विग्रहगति समापन्नक भवनपति से लेकर वैमानिक तक के जीवों को भी ये दो ही–तैजस और कार्मण शरीर ही होते हैं "नेरइयाणं दोहिं ठाणेहिं" इत्यादि–नैरयिक जीवों के शरीर की उत्पत्ति दो स्थानों द्वारा होती है एक राग के द्वारा और दूसरे द्वेष के द्वारा इसी तरह से शरीरोत्पत्ति के विषय का कथन वैमानिक तक के जीवों का भी कर लेना चाहिये काय दो प्रकार कहा गया है एक त्रसकाय और दूसरा स्थावरकाय त्रसनामकर्म के उदय से जो अपनी इच्छा से चलते फिरते हैं डरते हैं भागते हैं वे सब त्रसजीव हैं इनकी जो राशि है वह त्रसकाय है स्थावर नामकर्म के उदय से जो एक स्थान से दूसरे स्थान पर आ जा नहीं सकते हैं एक ही जगह स्थिर रहते हैं वे स्थावर हैं इन स्थावरों का जो समूह है वह स्थावरकाय है

કાર્મણ. એજ પ્રમાણે વિગ્રહગતિ સમાપન્નક ભવનપતિથી લઈને વૈમાનિક પર્યન્તના જીવોમાં પણ એ બે શરીરનો જ (તૈજસ અને કાર્મણ શરીરનો જ) સદ્ભાવ હોય છે.

"नेरइयाण दोहिं ठाणेहिं" ઈત્યાદિ—નારક જીવોના શરીરની ઉત્પત્તિ બે સ્થાનો (કારણો) દ્વારા થાય છે–(૧) રાગદ્વારા અને (૨) દ્વેષદ્વારા. શરીરોત્પત્તિને અનુલક્ષીને વૈમાનિક પર્યન્તના જીવો વિષે પણ આ પ્રકારનુ કથન થવું જોઈએ. કાયના બે પ્રકાર છે–(૧) ત્રસકાય અને (૨) સ્થાવરકાય ત્રસ નામકર્મના ઉદયથી જે પોતાની ઈચ્છાથી હરે ફરે છે, ડરે છે અને ભાગે છે, તે જીવોને ત્રસ જીવો કહે છે. એવા જીવોની રાશિ (સમૂહ) ને ત્રસકાય કહે છે. સ્થાવર નામકર્મના ઉદયથી જે જીવો એક જગ્યાએથી બીજી જગ્યા જઈ શકતા નથી, પણ એક જ જગ્યાએ સ્થિર રહે છે, એવાં જીવોને સ્થાવર

उक्ता भव्यशरीरिण , अथ भव्यविशेषाणां यद् यथा कर्तुमुचितं तथा मोच्यते–

मूलम्–दो दिसाओ अभिगिज्झ कप्पइ णिग्गंथाणं वा णिग्गंथीणं वा पव्वावित्तए, त जहा पाईणं चेव उदीणं चेव। एव मुंडावित्तए, सिक्खावित्तए, उवट्ठावित्तए, संभुंजित्तए, संवसित्तए, सज्झायमुद्दिसित्तए सज्झाय समुद्दिसित्तए, सज्झायमणुजाणित्तए, आलोइत्तए, पडिक्कमित्तए, निंदित्तए, गरहित्तए, विउट्टित्तए, विसोहित्तए, अकरणयाए अब्भुट्ठित्तए, अहारिहं पायच्छित्त तवोकम्म पडिवज्जित्तए। दो दिसाओ अभिगिज्झ कप्पइ णिग्गंथाणं वा णिग्गंथीणं वा अपच्छिममारणंतियसंलेहणाझूसणाझूसियाण भत्तपाणपडियाइक्खियाण पाओवगयाण काल अणवकंखमाणाणं विहरित्तए, त जहा–पाईणं चेव उदीणं चेव ॥ सू० २० ॥

॥ विट्ठाणस्स पढमो उद्देसओ समत्तो ॥ २१ ॥

छाया–द्वे दिशे अभिगृह्य कल्पते निर्ग्रन्थानां वा निर्ग्रन्थीनां वा प्रव्राजयितुं–तद्यथा–प्राचीनां चेव, उदीचीनां चेव, । एवं मुण्डयितुं शिक्षयितुम्, उपस्थापयितुं, संभोजयितुं, संवासयितुं, स्वाध्यायमुद्देष्टुं स्वाध्याय समुद्देष्टुं, स्वाध्यायमनुज्ञातुम्, आलोचयितुं, प्रतिक्रमितुं निन्दितुं गर्हितुं, विवर्तयितुं (वित्रोटयितुं, विकुट्टयितुं वा) विशोधयितुं, अकरणतयाऽभ्युत्थातुं, यथार्हं प्रायश्चित्तं तपः कर्मप्रतिपत्तुम्। द्वे दिशे अभिगृह्य कल्पते निर्ग्रन्थानां वा निर्ग्रन्थीनां वा अपश्चिममारणान्तिकसंलेखनाजोषणाजूषितानां भक्तपानप्रत्याख्यातानां पादपोपगतानां कालमनवकाङ्क्षतां विहर्तुं, तद्यथा–प्राचीनां चेव उदीचीनां चेव ॥ सू० २० ॥

॥ द्विस्थानस्य प्रथम उद्देशकः समाप्तः ॥

इनमें त्रसकाय दो प्रकार का कहा गया है–एक भवसिद्धिक और दूसरा अभवसिद्धिक स्थावरकाय को भी इसी तरह से जानना चाहिये॥ १९ ॥

જીવોના સમૂહને સ્થાવરકાય કહે છે ત્રસકાયના બે પ્રકાર કહ્યા છે–(૧) ભવસિદ્ધિક અને (૨) અભવસિદ્ધિક સ્થાવરકાયના પણ એવાં જ બે ભેદ સમજવા. સૂ. ૧૯

टीका—'दो दिसाओ' इत्यादि—

द्वे दिशे अभिगृह्य=अङ्गीकृत्य तदभिमुखी भूयेत्यर्थः, निर्ग्रन्थानां निर्ग्रन्थीनां वा द्रव्यभावपरिग्रहरहितानां कल्पते प्रव्राजयितु–सदोरकमुखवस्त्रिकारजोहरणादि-दानेन प्रव्रज्यां सावद्य–विरतिरूपां दातुं, ग्रहीतुं वा। के ते द्वे दिशे ? इत्याह–तद्यथा–प्राचीनां–प्राचीं पूर्वांदिशमित्यर्थः, तथा उदीचीनाम्–उदीचीम् उत्तरां दिश-मित्यर्थः। एवम्–अमुना प्रकारेण मुण्डयितुम्, मुण्डनं द्रव्यभावभेदेन द्विविधम्, तत्र–द्रव्यतः केशाद्यपनयनेन, भावतः कषायापनयनेन। शिक्षयितुं=ग्रहणशिक्षापेक्षया सूत्रार्थौ ग्राहयितुम्, आसेवनशिक्षापेक्षया प्रतिलेखनादिक्रियामासेवयितुं=

भव्य जीवों का कथन करके अब भव्यविशेषों को जो कर्तव्य उचित है उसका सूत्रकार कथन करते हैं–

"दो दिसाओ अभिगिज्झ" इत्यादि ॥ २० ॥

टीकार्थ–दो दिशाओंकी तरफ मुँह करके द्रव्यपरिग्रह और भावपरिग्रहसे रहित निर्ग्रन्थों को तथा निर्ग्रन्थिनियों को सदोरक मुखवस्त्रिका रजोहरण आदि चिह्नवाली सावद्यविरतिरूप प्रव्रज्या लेना अथवा देना योग्य है वे दो दिशाएँ हैं–एक पूर्वदिशा और दूसरी उदीची दिशा इसी प्रकार इन्हीं दो दिशाओं की ओर मुँह करके द्रव्यभावरूप से मुंडित होना योग्य है केशादिकों का लुञ्चन करना यह द्रव्यमुंडन है और कषायों का अप-नयन (दूर) करना यह भावमुंडन है इसी प्रकार पूर्व और उत्तरदिशाकी ओर मुँह करके शिष्यजनों को ग्रहण शिक्षा की अपेक्षा सूत्र और अर्थ को सिखलाना योग्य है तथा आसेवनशिक्षा की अपेक्षा प्रतिलेखनादि

ભવ્યજીવોનુ કથન કરીને હવે સૂત્રકાર ભવ્યવિશેષોના ઉચિત કર્તવ્યની પ્રરૂપણા કરે છે—"दो दिसाओ अभिगिज्झ" ઈત્યાદિ ॥ २० ॥

ટીકાર્થ–બે દિશાઓની તરફ મુખ કરીને, દ્રવ્યપરિગ્રહ અને ભાવપરિગ્રહથી રહિત એવા નિર્ગ્રંથો (સાધુઓ) અને નિર્ગ્રંથિનિઓએ (સાધ્વીઓએ) સદોરક મુહ-પત્તી, રજોહરણ આદિ ચિહ્નવાળી સાવદ્ય વિરતિ રૂપ પ્રવ્રજ્યા લેવી અથવા દેવી તે યોગ્ય છે. તે બે દિશાઓ આ પ્રમાણે છે–(૧) પ્રાચી (પૂર્વ) અને (૨) ઉદીચી (ઉત્તર). એજ બે દિશા તરફ મુખ કરીને દ્રવ્યભાવ રૂપે મુડિત થવું યોગ્ય છે. કેશાદિકોના લુચનને દ્રવ્યમુંડન કહે છે. અને કષાયોને દૂર કરવા તેનું નામ ભાવમુંડન છે. એજ પ્રમાણે પૂર્વ અને ઉત્તર દિશા તરફ મુખ કરીને શિષ્યોને ગ્રહણશિક્ષાની અપેક્ષાએ સૂત્ર અને અર્થ શિખવવા એ પણ યોગ્ય છે, અને આસેવનશિક્ષાની અપેક્ષાએ પ્રતિલેખનાદિ ક્રિયાઓ કરવી,

उक्ता भव्यशरीरिण, अथ भव्यविशेषाणां यद् यथा कर्तुमुचितं तथा मोच्यते-

मूलम्-दो दिसाओ अभिगिज्झ कप्पइ णिग्गंथाणं वा णिग्गंथीणं वा पव्वावित्तए, तं जहा पाईणं चेव उदीणं चेव । एवं मुंडावित्तए, सिक्खावित्तए, उवट्ठावित्तए, संभुंजित्तए, संव सित्तए, सज्झायमुद्दिसित्तए सज्झायं समुद्दिसित्तए, सज्झायम णुजाणित्तए, आलोइत्तए, पडिक्कमित्तए, निंदित्तए, गरहित्तए, विउट्टित्तए, विसोहित्तए, अकरणयाए अब्भुट्ठित्तए, अहारिहं पायच्छित्तं तवोकम्मं पडिवज्जित्तए । दो दिसाओ अभिगिज्झ कप्पइ णिग्गंथाणं वा णिग्गंथीणं वा अपच्छिममारणंतियसले हणाझूसणाझूसियाणं भत्तपाणपडियाइक्खियाणं पाओवगयाणं कालं अणवकंखमाणाणं विहरित्तए, तं जहा-पाईणं चेव उदीणं चेव ॥ सू० २० ॥

॥ बिट्ठाणस्स पढमो उद्देसओ समत्तो ॥ २१ ॥

छाया-द्वे दिशे अभिगृह्य कल्पते निर्ग्रन्थानां वा निर्ग्रन्थीनां वा प्रव्राजयितुं-तद्यथा-प्राचीनां चैव, उदीचीनां चैव, । एवं मुण्डयितुं शिक्षयितुम्, उपस्थापयितुं, संभोजयितुं, संवासयितुं, स्वाध्यायमुद्देष्टुं स्वाध्यायं समुद्देष्टुं, स्वाध्यायमनुज्ञातुम्, आलोचयितुं, प्रतिक्रमितुं निन्दितुं गर्हितुं, विवर्तयितुं (विमोटयितुं, विकुट्टयितुं वा) विशोधयितुं, अकरणतयाऽभ्युत्थातुं, यथार्हं प्रायश्चित्तं तपः कर्मप्रतिपत्तुम् । द्वे दिशे अभिगृह्य कल्पते निर्ग्रन्थानां वा निर्ग्रन्थीनां वा अपश्चिममारणान्तिकसंले खनाजोषणाजुषितानां भक्तपानप्रत्याख्यातानां पादपोपगतानां कालमनवकाङ्क्षतां विहर्तुं, तद्यथा-प्राचीनां चैव उदीचीनां चैव ॥ सू० २० ॥

॥ द्विस्थानस्य प्रथम उद्देशकः समाप्तः ॥

इनमें त्रसकाय दो प्रकार का कहा गया है-एक भवसिद्धिक और दूसरा अभवसिद्धिक स्थावरकाय को भी इसी तरह से जानना चाहिये ॥ १९ ॥

જીવોના સમૂહને સ્થાવરકાય કહે છે ત્રસકાયના બે પ્રકાર કહ્યા છે-(૧) ભવ સિદ્ધિક અને (૨) અભવસિદ્ધિક સ્થાવરકાયના પણ એવાં જ બે ભેદ સમજવા. સૂ. ૧૯

पाठयितुमित्यर्थ । उपस्थापयितु=महाव्रतादिषु समारोपयितुम् । स मोजयितु= समोगिमुनिमण्डलीषु निवेशयितुम् । स वासयितु=स स्तारकमण्डलपार्श्वमुपवेशयितुम् । तथा–स्वाध्याय–सु=सुष्ठु आ=मर्यादया अधीयते इति स्वाध्याय=आचाराङ्गादि रागमः तम् उद्देष्टुम्=उपदेष्टु पाठयितुमित्यर्थ । स्वाध्याय समुद्देष्टु–' पूर्वपठित स्थिरपरिचित कुरु ' इत्यादिरूपेण कथयितुम् । स्वाध्यायम् अनुज्ञातु–' स्वयमव धारय, अन्यमप्यध्यापय ' इत्यादि कथयितुम् । आलोचयितुं–गुरुसमीपे स्वातिचार मकाशयितुम् । मतिक्रमितु –पापान्निवर्तयितु–शुभयोगादशुभयोगे सक्रमणे सति पुनः शुभयोगे समागन्तुमित्यर्थः । निन्दितु–स्वसमक्षमतिचारान् जुगुप्सितुम् । गर्हितु=गुरुसमक्ष तानेव जुगुप्सितुम् । विनर्तयितुम्–अतिचारान् विच्छेदयितुम् । विशोधयितुम्–अतिचारमलिनमात्मान निर्मलीकर्तुम् । अकरणतयाऽभ्युत्थातु– ' पुनरेवं न करिष्यामि ' इत्यकरणमाश्रित्याभ्युपगन्तुम् । यथार्ह=यथायोग्य

क्रियाओं का करना महाव्रतादिकों में आत्मा को समारोपित करना समोगिमुनिमण्डली में अपने आपको प्रविष्ट कराना आचाराङ्गादि आगमों का उपदेश करना पढाना " पहिले पढे हुए को अच्छी तरह से समझ लो " इत्यादि रूप से कहना " इसका स्वय निश्चय करलो दूसरों को इसे पढाओ इत्यादि रूप से कहना गुरु के समीप अपने अतिचारों को प्रकाशित करना, पाप से अपने को हटाना अर्थात् शुभयोग से अशुभयोग में संक्रमण होने पर पुन शुभयोग में आना, अपने समक्ष ही अपने अतिचारों की निन्दा करना उनसे ग्लानि करना, गुरु के समक्ष उनकी निन्दा करना उनसे ग्लानि करना, अतिचारों का विच्छेद करना अतिचारों से मलिन हुई आत्मा को निर्मल करना अब पुनः मैं ऐसा नहीं करूँगा इस तरह अकरण रूप से स्वीकार करना तथा यथायोग्य

મહાવ્રતાદિકોમાં આત્માને સમારોપિત કરવો, સંભોગિ મુનિમંડળીમાં પોતાનો પ્રવેશ કરાવવો, આચારાંગ આદિ આગમોનો ઉપદેશ દેવો, ભણાવવું–" પહેલાં શીખેલા તત્વોને સારી રીતે સમજી લો " ઈત્યાદિ રૂપે કહેવું " આ વાતનો જાતે જ નિશ્ચય કરી લો બીજાને આ ભણાવો " ઈત્યાદિ રૂપે કહેવું, ગુરુની પાસે પોતાના અતિચારોને પ્રકટ કરવા પાપથી પોતાના આત્માને દૂર રાખવો એટલે કે શુભ યોગમાંથી અશુભ યોગમાં સંક્રમણ થાય ત્યારે ફરીથી શુભ યોગમાં આવી જવું, પોતાની સમક્ષ જ પોતાના અતિચારોની નિંદા કરવી, તેને કારણે મનમાં ગ્લાનિ થવી, ગુરુની સમક્ષ તે અતિચારોની નિંદા કરવી, તેને માટે ગ્લાનિ કરવી અતિચારોનો વિચ્છેદ કરવો, અતિચારોથી મલિન થયેલા આત્માને નિર્મળ કરવો, હવે ફરીથી હું એવું નહીં કરું, આ પ્રકારના

प्रायश्चित्तं=पापविशुद्धिरूपं तपः कर्म=अनशनादिकं प्रतिपत्तुं=स्वीकर्तुम्। 'दो दिसाओ' इत्यादि–द्वे दिशे अभिगृह्य कल्पते निर्ग्रन्थानां वा निर्ग्रन्थीनां वा। कीदृशानाम् ? इत्याह–'अपच्छिमे' त्यादि–अपश्चिममारणान्तिकसंलेखनाजोषणाजोषितानाम्, तत्र न विद्यते पश्चिमा अस्या इत्यपश्चिमा=अन्तिमा, सा चासौ–मारणान्तिकी=मरणकालभाविनी संलेखना–संलिख्यते=कृशीक्रियते शरीरकषायादि यया सा तथोक्ता तपोविशेषलक्षणा चेति अपश्चिममारणान्तिकसंलेखना, तस्या जोषणा=सेवना, तया जोषितानां=सेवितानां युक्तानामित्यर्थः। यद्वा–झोषितानां=क्षपितानां क्षपितदेहानामित्यर्थः। पुनः–भक्तपानप्रत्याख्यातानाम्–भक्तपाने प्रत्याख्याते यैस्ते तथा, क्तान्तस्य परनिपात आर्षत्वात्, भक्तपानप्रत्याख्यानवतामित्यर्थः। पादपोपगतानां=पादपोपगमनमरणमाश्रितानां–स्वीकृतसर्वथापरिस्प-

---

प्रायश्चित्त–पाप की विशुद्धिरूप अनशनादि तपकर्म ग्रहण करना–ये सब कार्य भी इन्हीं दो दिशाओं की ओर मुँह करके करना श्रमण निर्ग्रन्थियों को कल्पित कहा गया है

"दो दिसाओ" इत्यादि–शरीर और कषाय आदि जिस से कृश किये जाते हैं उसका नाम संलेखना है यह संलेखना मरणकाल के समय में ही धारण की जाती है इसीलिये इसे अपश्चिम कहा है यह तपविशेषरूप होती है, इस संलेखना से जो मुनिजन युक्त है अथवा–इन्होंने इस संलेखना को धारण करने द्वारा अपने शरीर को क्षपित किया है भक्तपान का जिन्होंने प्रत्याख्यान कर दिया है पादपोपगमन संथारा को जिस संथारा में पतित पादपवृक्ष की तरह शरीर की सेवा संभाल हिलना डुलना आदिरूप क्रिया सर्वथा वर्जित हो जाती है ऐसे

અતિચારો નહી કરવાને દૃઢનિશ્ચયી થવું, તથા તેને માટે યોગ્ય પ્રાયશ્ચિત્તને પાપની વિશુદ્ધિરૂપ અનશનાદિને–ગ્રહણ કરવા, આ બધાં કાર્યો પણ તે બે દિશા તરફ મુખ કરીને કરવાનું સાધુઓને કલ્પે છે.

"दो दिसाओ" ઈત્યાદિ–શરીર અને કષાયાદિ જેના દ્વારા કૃશ કરાય છે તે ક્રિયાને સલેખના (સથારો) કહે છે તે સંથારો મરણકાળ નજીક હોય ત્યારે જ ધારણ કરવામાં આવે છે, તે કારણે તેને 'અપશ્ચિમ' કહે છે. તે સંથારો તપવિશેષ રૂપ હોય છે આ સંથારાથી જે મુનિ યુક્ત હોય અથવા જેણે આ સથારો ધારણ કરીને પોતાના શરીરને ક્ષપિત કર્યું છે, ભક્તપાનના જેણે પ્રત્યાખ્યાન કર્યા છે, પાદપોપગમન સંથારાને જેમણે ગ્રહણ કરેલો છે (જે સંથારામાં પતિત પાદપ–વૃક્ષની જેમ શરીરની સેવા–સભાળ, હલનચલન આદિ રૂપ ક્રિયા બિલકુલ બંધ કરી દેવામાં આવે છે એવા સંથારાને પાદપો-

पालयितुमित्यर्थः । उपस्थापयितु=महाव्रतादिषु समारोपयितुम् । सम्भोजयितुं= सम्भोगिमुनिमण्डलीषु निवेशयितुम् । संवासयितुं=संस्तारकमण्डल्यामुपवेशयितुम् । तथा—स्वाध्याय-सु=सुष्ठु आ=मर्यादया अधीयते इति स्वाध्यायः=आचाराङ्गादि रागम तम् उद्देष्टुम्=उपदेष्टुं पाठयितुमित्यर्थः । स्वाध्याय समुद्देष्टुं—' पूर्वपठित स्थिरपरिचितं कुरु ' इत्यादिरूपेण कथयितुम् । स्वाध्यायम् अनुज्ञातु—' स्वयमव धारय, अन्यमप्यध्यापय ' इत्यादि कथयितुम् । आलोचयितुं—गुरुसमीपे स्वातिचार प्रकाशयितुम् । प्रतिक्रमितु—पापान्निवर्तयितु—शुभयोगादशुभयोगे संक्रमणे सति पुनः शुभयोगे समागन्तुमित्यर्थः । निन्दितु—स्वसमक्षमतिचारान् जुगुप्सितुम् । गर्हितु=गुरुसमक्ष तानेव जुगुप्सितुम् । विवर्तयितुम्—अतिचारान् विच्छेदयितुम् । विशोधयितुम्—अतिचारमलिनमात्मानं निर्मलीकर्तुम् । अकरणतयाऽभ्युत्थातु— ' पुनरेव न करिष्यामि ' इत्यकरणमाश्रित्याभ्युपगन्तुम् । यथार्ह=यथायोग्यं

क्रियाओं का करना महाव्रतादिकों में आत्मा को समारोपित करना सम्भोगिमुनिमण्डली में अपने आपको प्रविष्ट कराना आचाराङ्गादि आगमों का उपदेश करना पढ़ाना " पहिले पढ़े हुए को अच्छी तरह से समझ लो " इत्यादि रूप से कहना " इसका स्वयं निश्चय करलो दूसरों को इसे पढ़ाओ इत्यादि रूप से कहना गुरु के समीप अपने अतिचारों को प्रकाशित करना, पाप से अपने को हटाना अर्थात् शुभयोग से अशुभयोग में संक्रमण होने पर पुनः शुभयोग में आना, अपने समक्ष ही अपने अतिचारों की निन्दा करना उनसे ग्लानि करना, गुरु के समक्ष उनकी निन्दा करना उनसे ग्लानि करना, अतिचारों का विच्छेद करना अतिचारों से मलिन हुई आत्मा को निर्मल करना अब पुनः मैं ऐसा नहीं करूंगा इस तरह अकरण रूप से स्वीकार करना तथा यथायोग्य

મહાવ્રતાદિકોમાં આત્માને સમારોપિત કરવો, સંભોગિ મુનિમંડળીમાં પોતાનો પ્રવેશ કરાવવો, આચારાંગ આદિ આગમોનો ઉપદેશ દેવો, પઢાવવું—" પહેલાં શીખેલા તત્ત્વોને સારી રીતે સમજી લો " ઈત્યાદિ રૂપે કહેવું ' આ વાતનો તમે જ નિશ્ચય કરી લો બીજાને આ ભણાવો ' ઈત્યાદિ રૂપે કહેવું, ગુરુની પાસે પોતાના અતિચારોને પ્રકટ કરવા, પાપથી પોતાના આત્માને દૂર રાખવો એટલે કે શુભ યોગમાંથી અશુભ યોગમાં સંક્રમણ થાય ત્યારે ફરીથી શુભ યોગમાં આવી જવું પોતાની સમક્ષ જ પોતાના અતિચારોની નિંદા કરવી, તેને કારણે મનમાં ગ્લાનિ થવી, ગુરુની સમક્ષ તે અતિચારોની નિંદા કરવી, તેને માટે ગ્લાનિ કરવી અતિચારોનો વિચ્છેદ કરવો અતિચારોથી મલિન થયેલા આત્માને નિર્મળ કરવો, હવે ફરીથી હું એવું નહીં કરું, આ પ્રકારના

प्रायश्चित्तं=पापविशुद्धिरूप तपः कर्म=अनशनादिकं प्रतिपत्तुं=स्वीकर्तुम्। 'दो दिसाओ' इत्यादि-द्वे दिशे अभिगृह्य कल्पते निर्ग्रन्थानां वा निर्ग्रन्थीनां वा। कीदृशानाम् ? इत्याह-' अपच्छिमे ' त्यादि-अपश्चिममारणान्तिकसंलेखनाजोषणाजोषितानाम्, तत्र न विद्यते पश्चिमा अस्या इत्यपश्चिमा=अन्तिमा, सा चासौ-मारणान्तिकी=मरणकालभाविनी संलेखना-संलिख्यते=कृशीक्रियते शरीरकषायादि यया सा तथोक्ता तपोविशेषलक्षणा चेति अपश्चिममारणान्तिकसंलेखना, तस्या जोषणा=सेवना, तया जोषितानां=सेवितानां युक्तानामित्यर्थः। यद्वा-झोषितानां= क्षपितानां क्षपितदेहानामित्यर्थः। पुनः-भक्तपानप्रत्याख्यातानाम्-भक्तपाने प्रत्याख्याते यैस्ते तथा, क्तान्तस्य परनिपात आर्षत्वात्, भक्तपानप्रत्याख्यानवतामित्यर्थः। पादपोपगतानां=पादपोपगमनमरणमाश्रितानां-स्वीकृतसर्वथापरिस्प-

प्रायश्चित्त-पाप की विशुद्धिरूप अनशनादि तपकर्म ग्रहण करना-ये सब कार्य भी इन्हीं दो दिशाओं की ओर मुंह करके करना श्रमण निर्ग्रन्थियों को कल्पित कहा गया है

"दो दिसाओं" इत्यादि-शरीर और कषाय आदि जिस से कृश किये जाते हैं उसका नाम संलेखना है यह संलेखना मरणकाल के समय में ही धारण की जाती है इसीलिये इसे अपश्चिम कहा है यह तपविशेषरूप होती है, इस संलेखना से जो मुनिजन युक्त है अथवा-इन्होंने इस संलेखना को धारण करने द्वारा अपने शरीर को क्षपित किया है भक्तपान का जिन्होंने प्रत्याख्यान कर दिया है पादपोपगमन संथारा को जिस संथारा में पतित पादपवृक्ष की तरह शरीर की सेवा संभाल हिलना डुलना आदिरूप क्रिया सर्वथा वर्जित हो जाती है ऐसे

અતિચારો નહી કરવાને દૃઢનિશ્ચયી થવું, તથા તેને માટે યોગ્ય પ્રાયશ્ચિત્તને પાપની વિશુદ્ધિરૂપ અનશનાદિને-ગ્રહણ કરવા, આ બધાં કાર્યો પણ તે બે દિશા તરફ મુખ કરીને કરવાનું સાધુઓને કલ્પે છે.

"दो दिसाओ" ઈત્યાદિ-શરીર અને કષાયાદિ જેના દ્વારા કૃશ કરાય છે તે ક્રિયાને સલેખના (સંથારો) કહે છે તે સંથારો મરણકાળ નજીક હોય ત્યારે જ ધારણ કરવામાં આવે છે, તે કારણે તેને 'અપશ્ચિમ' કહે છે. તે સંથારો તપવિશેષ રૂપ હોય છે આ સંથારાથી જે મુનિ યુક્ત હોય અથવા જેણે આ સંથારો ધારણ કરીને પોતાના શરીરને ક્ષપિત કર્યું છે, ભક્તપાનના જેણે પ્રત્યાખ્યાન કર્યા છે, પાદપોપગમન સંથારાને જેમણે ગ્રહણ કરેલો છે (જે સંથારામાં પતિત પાદપ-વૃક્ષની જેમ શરીરની સેવા-સંભાળ, હલનચલન આદિ રૂપ ક્રિયા બિલકુલ બંધ કરી દેવામાં આવે છે એવા સંથારાને પાદપો-

अथ द्वितीयस्थानस्य द्वितीयोद्देशकः ॥

अनन्तरोद्देशके द्वित्वविशिष्टा जीवाजीवधर्माः प्रोक्ताः, द्वितीयोद्देशके तु द्वित्वविशिष्टा एव जीवधर्माः प्रोच्यन्ते, इत्यनेन सम्बन्धेनायातस्यास्योद्देशकस्येदमादिसूत्रम्–प्रथमोद्देशकान्तिमसूत्रेणास्यायमभिसम्बन्धः–प्रथमोद्देशकान्त्यसूत्रे पादपोपगमनमभिहित, तेन च केषाञ्चिद् देवत्व भवतीति देवविशेषप्रतिपादनेन तेषां कर्मबन्धं तद्वेदनं च प्रतिपादयन्नाह—

मूलम्–जे देवा उड्ढोववन्नगा कप्पोववन्नगा विमाणोववन्नगा चारोववन्नगा चारट्ठिइया गइरइया गइसमावन्नगा, तेसिणं देवाणं सया समियं जे पावे कम्मे कज्जइ तत्थगयावि एगइया वेयणं वेयेंति, अन्नत्थगयावि एगइया वेयणं वेयेंति ।

द्वितीयस्थानका द्वितीय उद्देशक

अनन्तर उद्देशकमें द्वित्वविशिष्ट जीव धर्मों और अजीव धर्मों के विषय में कथन किया गया है, अब इस द्वितीय उद्देशकमें केवल द्वित्व विशिष्ट ही जीव धर्मों का कथन किया जाता है, इसी सम्बन्ध को लेकर इस द्वितीय उद्देशक को प्रारंभ किया गया है प्रथम उद्देशक के अन्तिम सूत्रमें पादपोपगमन संथारोंका कथन आया है सो इस संथारे को धारण करके मरने वाले कितनेक मुनिजनों कोदेवत्वपद प्राप्त होता है अतः देव विशेषों का प्रतिपादन और उनके कर्मबन्ध एवं उनके वेदन का प्रतिपादन यहां सर्वप्रथम किया जाता है

"जे देवा उड्ढोववन्नगा कप्पोववन्नगा" इत्यादि ॥२१॥

દ્વિતીયસ્થાનનો દ્વિતીય ઉદ્દેશક

પહેલા ઉદ્દેશકમાં દ્વિવિધતા યુક્ત જીવધર્મો અને અજીવધર્મોનું કથન કરવામાં આવ્યું છે આ બીજા ઉદ્દેશકમાં માત્ર દ્વિવિધતા યુક્ત જ જીવધર્મોનું કથન કરવામાં આવે છે આ સબંધને અનુલક્ષીને આ બીજા ઉદ્દેશકનો પ્રારંભ કરવામાં આવ્યો છે—

પહેલા ઉદ્દેશકના અંતિમ સૂત્રમા પાદપોપગમન સંથારાનો ઉલ્લેખ થયો છે. તે સંથારાને ધારણ કરીને કાળધર્મ પામનાર કેટલાક મુનિજનોને દેવત્વની પ્રાપ્તિ થાય છે. આ સબધને અનુલક્ષીને અહીં દેવવિશેષોનુ પ્રતિપાદન કરવામાં આવે છે અને તેમના કર્મબધ અને તેમના વેદનનુ અહી સર્વ પ્રથમ પ્રતિપાદન કરવામા આવે છે—"जे देवा उड्ढोववन्नगा कप्पोववन्नगा" ઇત્યાદિ

न्वर्जितमरणविशेषाणामित्यर्थः । पुनः-काङ्क्षं=मृत्युम् अनवकाङ्क्षताम्=अनभिलषतां मरणेऽनुत्सुकानामित्यर्थः, विहर्तुं=स्थातु 'कल्पते' इति पूर्वेण सम्बन्धः । एतदेव दिग्द्वयमाह-'त जहे' त्यादि, तद्यथा-प्राचीनां वा उदीचीनां वेति ॥सू०२०॥

इतिश्री विश्वविख्यात-जगद्वल्लभ-प्रसिद्धवाचक-पञ्चदशभाषाकलित-ललितकलापालापक-प्रविशुद्धगद्यपद्यनैकग्रन्थनिर्मापक-वादिमानमर्दक श्रीशाहूछत्रपति कोल्हापुरराजप्रदत्त 'जैनशास्त्राचार्य' पदभूषित-कोल्हापुरराजगुरु बालब्रह्मचारि जैनाचार्य-जैनधर्म-दिवाकर-पूज्यश्री-घासीलालव्रतिविरचितायां स्थानाङ्गसूत्रस्य सुधाख्यायां व्याख्यायाम् द्वितीयस्थानस्य प्रथमोद्देशकः समाप्तः ॥२-१॥

मरणविशेष को जिन्होंने धारण किया है और जो मृत्यु के अनभिलाषी बने हुए हैं ऐसे मुनिजनों को दिशाओं की-पूर्व और उत्तर दिशा की ओर मुंह करके रहना उचित है, अर्थात् इन संथारों को धारण किये हुए मुनिजनों को इन दो दिशाओं में ही मुंह करके बैठना उचित है ॥२०॥

श्री जैनाचार्य-जैनधर्मदिवाकर-पूज्यश्री घासीलालव्रतिविरचित स्थानाङ्ग सूत्र की सुधानामक टीकार्थ का दूसरे स्थानक का प्रथम उद्देशक समाप्त ॥ २-१ ॥

પાદપોપગમન સંથારો કહે છે), અને જે મૃત્યુના અનભિલાષી બનેલ છે, એવા મુનિજનોને બે દિશાઓ તરફ-પૂર્વ અથવા ઉત્તર દિશા તરફ મુખ રાખીને બેસવું જોઇએ. કહેવાનું તાત્પર્ય એ છે કે સંથારો ધારણ કરનાર મુનિજનોએ પૂર્વ અથવા ઉત્તર દિશા તરફ મુખ રાખીને બેસવું જોઇએ. ॥ સૂ૦ ૨૦ ॥

શ્રી જૈનાચાર્ય-જૈનધર્મદિવાકર-પૂજ્ય શ્રી ઘાસીલાલ મુનિવિરચિત સ્થાનાંગસૂત્રની સુધા નામની ટીકાના બીજા સ્થાનકનો પહેલો ઉદ્દેશક સમાપ્ત ॥ ૨-૧ ॥

अथ द्वितीयस्थानस्य द्वितीयोद्देशकः ॥

अनन्तरोद्देशके द्वित्वविशिष्टा जीवाजीवधर्माः प्रोक्ताः, द्वितीयोद्देशके तु द्वित्वविशिष्टा एव जीवधर्माः प्रोच्यन्ते, इत्यनेन सम्बन्धेनायातस्यास्योद्देशकस्येद-मादिसूत्रम्—प्रथमोद्देशकान्तिमसूत्रेणास्यायमभिसम्बन्धः—प्रथमोद्देशकान्त्यसूत्रे पाद पोपगमनमभिहित, तेन च केषाञ्चिद् देवत्वं भवतीति देवविशेषप्रतिपादनेन तेषां कर्मबन्धं तद्वेदनं च प्रतिपादयन्नाह—

मूलम्—जे देवा उड्ढोववन्नगा कप्पोववन्नगा विमाणोवव-न्नगा चारोववन्नगा चारट्ठिइया गइरइया गइसमावन्नगा, तेसिणं देवाणं सया समियं जे पावे कम्मे कज्जइ तत्थगयावि एगइया वेयणं वेयेंति, अन्नत्थगयावि एगइया वेयणं वेयेंति ।

द्वितीयस्थानका द्वितीय उद्देशक

अनन्तर उद्देशकमें द्वित्वविशिष्ट जीव धर्मों और अजीव धर्मों के विषय में कथन किया गया है, अब इस द्वितीय उद्देशकमें केवल द्वित्व विशिष्ट ही जीव धर्मों का कथन किया जाता है, इसी सम्बन्ध को लेकर इस द्वितीय उद्देशक को प्रारंभ किया गया है प्रथम उद्देशक के अन्तिम सूत्रमें पादपोपगमन संथारोंका कथन आया है सो इस संथारे को धारण करके मरने वाले कितनेक मुनिजनों कोदेवत्वपद प्राप्त होता है अतः देव विशेषों का प्रतिपादन और उनके कर्मबन्ध एवं उनके वेदन का प्रतिपादन यहाँ सर्वप्रथम किया जाता है

"जे देवा उड्ढोववन्नगा कप्पोववन्नगा" इत्यादि ॥२१॥

દ્વિતીયસ્થાનનો દ્વિતીય ઉદ્દેશક

પહેલા ઉદ્દેશકમાં દ્વિવિધતા યુક્ત જીવધર્મો અને અજીવધર્મોનું કથન કરવામાં આવ્યુ છે આ બીજા ઉદ્દેશકમાં માત્ર દ્વિવિધતા યુક્ત જ જીવધર્મોનું કથન કરવામાં આવે છે આ સબંધને અનુલક્ષીને આ બીજા ઉદ્દેશકનો પ્રારંભ કરવામા આવ્યો છે—

પહેલા ઉદ્દેશકના અતિમ સૂત્રમા પાદપોપગમન સથારાનો ઉલ્લેખ થયો છે તે સથારાને ધારણ કરીને કાળધર્મ પામનાર કેટલાક મુનિજનોને દેવત્વની પ્રાપ્તિ થાય છે આ સબંધને અનુલક્ષીને અહીં દેવવિશેષોનુ પ્રતિપાદન કરવામા આવે છે અને તેમના કર્મબંધ અને તેમના વેદનનુ અહી સર્વ પ્રથમ પ્રતિ પાદન કરવામા આવે છે—"જે દેવા ઉડ્ઢોવવન્નગા કપ્પોવવન્નગા" ઇત્યાદિ

णेरइयाणं सयासमियं जे पावे कम्मे कज्जइ तत्थगयावि एग इया वेयणं वेयेंति, अन्नत्थगयावि एगइया वेयणं वेयेंति एवं एगिंदियाणं जाव पंचिंदियतिरिक्खजोणियाणं । मणुस्साणं सया समियं जे पावे कम्मे कज्जइ, इहगयावि एगइया वेयणं वेयेंति, अन्नत्थगयावि एगइया वेयणं वेयेंति । मणुस्सवज्जा सेसा एक्कगमा ॥ सू० २१ ॥

छाया—ये देवा ऊर्ध्वोपपन्नकाः, कल्पोपपन्नकाः, विमानोपपन्नकाः चारोपपन्नकाः, चारस्थितिकाः, गतिरतिकाः, गतिसमापन्नकाः, तेषां खलु देवानां सदा समितं यत् पापं कर्म क्रियते तत्र-गता अपि एके वेदनां वेदयन्ति, अन्यत्रगता अपि एके वेदनां वेदयन्ति, नैरयिकाणां सदा समितं यत् पापं कर्म क्रियते तत्र गता अपि एके वेदनां वेदयन्ति, अन्यत्र गता-अपि एके वेदनां वेदयन्ति । एवमेकेन्द्रियाणां यावत् पञ्चेन्द्रियतिर्यग्योनिकानाम् । मनुष्याणां सदा समितं यत् पापं कर्म क्रियते इहगता अपि एके वेदनां वेदयन्ति, अन्यत्रगता अपि एके वेदनां वेदयन्ति । मनुष्यवर्जाः शेषा एकगमाः ॥ सू० २१ ॥

टीका—'जे देवा' इत्यादि—

ये बध्यमाया अनशनादिना देवत्वमापन्ना देवाः, ऊर्ध्वोपपन्नकाः-ऊर्ध्वलोकोत्पन्ना द्विविधाः-कल्पोपपन्नकाः, विमानोपपन्नकाश्चेति । तत्र-कल्पोपपन्नकाः-सौधर्मादिद्वादशदेवलोकोत्पन्नाः । विमानोपपन्नकाः-ग्रैवेयकानुत्तरसमविमानोत्पन्नाः कल्पातीता इत्यर्थः । तथा-चये-चारोपपन्नकाः-ज्योतिष्कक्षेत्रोत्पन्नाः

टीकार्थ—ऊर्ध्वलोक में उत्पन्न हुए देव दो प्रकार के होते हैं एक कल्पोपपन्न और दूसरे कल्पातीत इन्हीं का दूसरा नाम कल्पोपपन्नक और विमानोपपन्नक भी है सौधर्म आदि १२ देवलोकों में जो उत्पन्न होते हैं वे कल्पोपपन्नक देव हैं और जो ग्रैवेयक, अनुत्तर विमानों में उत्पन्न

ટીકાર્થ—ઊર્ધ્વલોકમાં ઉત્પન્ન થતાં દેવોના બે પ્રકાર છે-(૧) કલ્પોપપન્નક અને (૨) કલ્પાતીત તેમના બીજાં નામ આ પ્રમાણે છે-(૧) કલ્પોપપન્નક અને (૨) વિમાનોપપન્નક સૌધર્મ આદિ બાર દેવલોકોમાં ઉત્પન્ન થનારા દેવોને કલ્પોપપન્નક દેવો કહે છે નવ ગ્રૈવેયક અને પાંચ અનુત્તર વિમાનોમાં ઉત્પન્ન થનારા દેવોને વિમનોપપન્નક અથવા કલ્પાતીત દેવો કહે છે

ज्योतिष्का इत्यर्थः, तेऽपि द्विधा—चारस्थितिकाः, गतिरतिकाश्चेति। तत्र—चारस्थितिकाः—चारे=ज्योतिश्चक्रक्षेत्रे स्थितिः=अवस्थानं येषां ते तथोक्ताः स्थिरा—समयक्षेत्रबहिर्वर्त्तिन इत्यर्थः। गतिरतिकाः—गतौ—गमने रति येषां ते तथोक्ताः समयक्षेत्रवर्त्तिनइत्यर्थः। गतिसमापन्नकाः—गतिमन्तः भवनपतिवानव्यन्तरा इत्यर्थः, तेषां

होते हैं वे विमनोपपन्नक देव हैं, ज्योतिष्क देव भी दो प्रकारके होते हैं एक चारस्थितिक और दूसरे गतिरतिक ज्योतिष्कचक्रक्षेत्र में जिनकी स्थिति होती है वे चारस्थितिक है अर्थात् समय क्षेत्र बहिर्वर्ती देव चारस्थितिक ज्योतिष्कदेव हैं और जो ११२१ हजार योजन सुमेरु की चोटीको छोड़कर इस ढाईद्वीप की नित्य प्रदक्षिणा करने रूप गति क्रिया में रत रहते हैं वे गतिरतिक ज्योतिष्कदेव हैं अनशन आदि तपस्या के प्रभाव से जो देवत्व पद को प्राप्त हो चुके हैं ऐसे देव उर्ध्वोपपन्नक होते हैं ये उर्ध्वोपपन्नकदेव कल्पोपपन्नक और विमानोपपन्नक इस प्रकार से दो प्रकार के होते हैं चारोपपन्नकदेव ज्योतिश्चक्रक्षेत्र में उत्पन्न होकर वहीं पर स्थिति करने वाले ज्योतिष्कदेव हैं ये गमनशील नहीं होते हैं किन्तु अपने अपने स्थानपर ही स्थिर होकर रहते हैं। ऐसे ये चारस्थितिक देव ढाई द्वीप से बाहर के क्षेत्रों में ही रहते हैं। ढाई द्वीप के भीतर जो ज्योतिष्क देव रहते हैं वे गतिरतिक ज्योतिष्क देव हैं। तथा भवनपति एवं वानव्यन्तरदेव गति समापन्नक पद से गृहीत हुए

જ્યોતિષ્ક દેવો પણ બે પ્રકારના હોય છે-(૧) ચારસ્થિતિક અને (૨) ગતિરતિક જ્યોતિષ્કચક્ર ક્ષેત્રમા જેમની સ્થિતિ હોય છે, તે દેવોને ચારસ્થિતિક દેવો કહે છે, એટલે કે સમય ક્ષેત્ર બહિર્વર્તી (સમય ક્ષેત્રની બહાર રહેલા) દેવોને ચારસ્થિતિક જ્યોતિષ્ક દેવો કહે છે અને જે જ્યોતિષ્ક દેવો ૧૧૨૧ હજાર યોજનપ્રમાણુ સુમેરુની ચોટીને (શિખરને) છોડીને આ અઢી દ્વીપની નિત્ય પ્રદક્ષિણા કરવારૂપ ગતિ ક્રિયામા પ્રવૃત્ત રહે છે, તેમને ગતિરતિક જ્યોતિષ્ક દેવો કહે છે અનશન આદિ તપસ્યાના પ્રભાવથી જે જીવો દેવત્વને પ્રાપ્ત કરી ચુકયા છે, એવા દેવો ઉર્ધ્વોપપન્નક હોય છે તે ઉર્ધ્વોપપન્નક દેવો કલ્પોપપન્નક અને વિમાનોપપન્નકના ભેદથી બે પ્રકારના હોય છે. ચારોપપન્નક દેવો જ્યોતિશ્ચક્ર ક્ષેત્રમાં ઉત્પન્ન થઇને ત્યા જ સ્થિતિ કરનારા જ્યોતિષ્ક દેવો રૂપ હોય છે તેઓ ગમનશીલ હોતા નથી, પરન્તુ પોતપોતાના સ્થાનમાં જ સ્થિર થઇને રહેતા હોય છે એવા તે ચારસ્થિતિક દેવો અઢી દ્વીપની બહારનાં ક્ષેત્રોમા જ રહે છે અઢી દ્વીપની અંદર જે જ્યોતિષ્ક દેવો રહે છે, તેઓ ગતિરતિક જ્યોતિષ્કો જ હોય છે.

देवाना सदा=नित्य ममित-सन्यत निरन्तरमित्यर्थः यत् पाप कर्म-ज्ञानावरणादि सततबन्धकत्वान्जीवानाम् , क्रियते=बध्यते कर्मकर्तृप्रयोगोऽय, भवति संपद्यत इत्यर्थः । ते पूर्वोक्ता देवास्तस्य=स्वकृतकर्मणोऽबाधाकालातिक्रमे सति 'तत्थ गयावि' त्ति-अत्र 'अपि' शब्द एवकारार्थे तेन तत्रगता एव-तत्र देवभवे गता अपि-वर्तमाना एव कल्पातीतानां क्षेत्रान्तरादिगमनासम्भवादिह-'तत्र-अन्यत्र' इति शब्दार्थो भव एव विवक्षितोऽस्ति नत्वन्यक्षेत्रादीति । एके=केचन देवा वेदनाम्=उदयं विपाक वेदयन्ति=अनुभवन्ति । तथा-अन्यत्रगता अपि-देवभवादन्यत्र गताः-उत्पन्ना एव वेदनामनुभवन्ति । 'केचित्तु-उभयत्रापि, केचित् विपाकोदयापेक्षया नोभयत्रापि ' इति विकल्पद्वयमत्रसूत्रे द्वित्वाधिकारान्नाङ्गीकृत

हैं। इस तरह कल्पोपपन्न देवों को विमानोपपन्न देवों को चारोपपन्नक देवों में के भेदरूप चार स्थितिक देवों को गतिरतिक देवों को और गतिसमापन्नक रूप भवनपति एवं व्यन्तरदेवों को जो निरन्तर सदा ज्ञानावरणीयादि पापकर्म बंधता रहता है वह उनके द्वारा बांधा गया पापकर्म अपने अबाधाकाल के बाद ही वेदित- अनुभवित होता है इन में जो कल्पातीत देव हैं वे अपने स्थान को छोड़कर अन्यक्षेत्रादि में जाते नहीं हैं इसलिये वे उसी भव में वर्तमान रह कर ही उस पापकर्म को उदय में भोगते हैं तथा कितनेक देव देवभव से अन्यत्र भव में उत्पन्न होकर ही उस बद्धकर्म के उदय को भोगते हैं कितनेक देव देवभवमें और अन्य भवमें भी कर्मोदयको भोगते हैं तथा कितनेक देव विपाकोदय की अपेक्षा उभयत्र भी उदय को नहीं भोगते हैं " ऐसे

तथा भवनपति अने वान व्यन्तर देवोने गतिसमापन्नक पद द्वारा ग्रहण करवामा आव्या छे आ रीते कल्पोपपन्नक देवो, विमानोपपन्नक देवो चारोपपन्नक देवोना भेदरूप चारस्थितिक देवो, गतिरतिक देवो अने गतिसमापन्नक रूप भवनपति तथा वानव्यन्तर देवो जे निरन्तर ज्ञानावरणीयादि पापकर्मो बांधता रहे छे ते तेमना द्वारा बांधवामां आवेलां पापकर्मो पोताना अबाधाकाळ बाद ज वेदित (अनुभवित) थाय छे तेमांना जे कल्पातीत देवो छे तेओ पोताना स्थानने छोडीने अन्य क्षेत्रादिमां जतां नथी तेथी तेओ एज भवमां वर्तमान रहीने ज ते पापकर्मना उदयने भोगवे छे तथा केटलाक देवो देवभवमांथी अन्य भवमां उत्पन्न थईने ज ते बद्ध कर्मना उदयने भोगवे छे. केटलाक देवो देवभवमां अने अन्यभवमां पण कर्मोदयने भोगवे छे. तथा केटलाक देवो विपाकोदयनी अपेक्षाए उभयत्र (आ भवमां अने अन्य भवमां) पण उदयने भोगवता नथी एवां जे आ बे विकल्पो छे तेमने आ सूत्रमां

मिति। इदं सूत्रोक्तमेव विकल्पद्वयं सर्वजीवेषु चतुर्विंशतिदण्डकेन प्ररूपयति—'नेरइयाणं' इत्यादि—सुगमम्। एवम्=अमुना प्रकारेण एकेन्द्रियाणां यावत् पञ्चेन्द्रियतिर्यग्योनिकानां विषयेऽपि बोध्यम्। 'मणुस्साणं' इत्यादि—मनुष्याणां सदा समितं यत् पापं कर्म क्रियते=बध्यते ते मनुष्या 'इहगयावि' इह मनुष्यभवे गता अपि=वर्त्तमाना एव एके=केचन वेदना वेदयन्ति, एके केचिद् अन्यत्र=भवान्तरे गताः—वर्त्तमाना एव वेदनां वेदयन्ति। देवभवादारभ्य यावत् पञ्चेन्द्रि-

---

जो ये दो विकल्प हैं वे इस सूत्रमें द्वित्वाधिकार होने से अङ्गीकृत नहीं हैं। अब सूत्रकार इस सूत्रोक्त ही विकल्पद्वय को समस्त जीवों में चतुर्विंशतिदण्डक द्वारा प्ररूपित करते हैं—

"नेरइयाणं" इत्यादि—इसी प्रकार नैरयिक जीवों के द्वारा बद्ध पापकर्म अपने अबाधाकाल के बाद ही वेदित होता है सो वह बद्ध पापकर्म उनमें से कितनेक नारकियों द्वारा उसीभव में रहकर ही वेदित होता है तथा कितनेक नारकियों द्वारा अन्यत्र भव में ही जाकर वेदित होता है इसी तरह से अपने द्वारा बद्ध पापकर्म को भोगनेरूप कार्य एकेन्द्रिय जीवों से लेकर यावत् पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च जीवों तक के भी जानना चाहिये मनुष्यों को निरन्तर जो सदा ज्ञानावरणादि रूप पाप कर्म का बन्ध होता रहता है सो उनमें से कितनेक मनुष्य उस बद्ध पापकर्म को मनुष्य भव में ही रहकर भोगते हैं तथा कितनेक मनुष्य अन्य भवान्तर में ही जाकर भोगते हैं देवभव से लेकर यावत् पञ्चे-

---

ગ્રહણ કરવામાં આવ્યા નથી કારણ કે અહીં તો દ્વિવિધતા યુક્ત અધિકારનું જ પ્રતિપાદન ચાલી રહ્યું છે હવે સૂત્રકાર આ સૂત્રોક્ત બે વિકલ્પોનું ૨૪ દંડક દ્વારા સમસ્ત જીવોમાં પ્રતિપાદન કરે છે "नेरइयाण" ઇત્યાદિ—

એજ પ્રમાણે નારકો બદ્ધ પાપકર્મો તેના અબાધાકાળ બાદ જ વેદિત થાય છે. તેથી તે બદ્ધ પાપકર્મ કેટલાક નારકો તે ભવમાં રહીને જ વેદન કરે છે અને કેટલાક નારકો અન્ય ભવમાં જઇને તેનુ વેદન કરે છે. એકેન્દ્રિયોથી પંચેન્દ્રિય તિર્યંચ પર્યન્તના જીવો પણ પોતાના દ્વારા બદ્ધ પાપકર્મોને ભોગવવાનું કાર્ય નારકોની જેમ જ કરે છે, એટલે કે કેટલાક તે ભવમાં તેનું વેદન કરે છે અને કેટલાક અન્ય ભવમા તેનું વેદન કરે છે.

મનુષ્યો દ્વારા પણ નિરન્તર જ્ઞાનાવરણીય આદિ કર્મોનો બંધ થતો રહે છે. તેમાથી કેટલાક મનુષ્યો તે પાપકર્મને મનુષ્ય ભવમા રહીને જ ભોગવે છે અને કેટલાક મનુષ્યો અન્ય ભવમા ગયા બાદ તેમનું વેદન કરે છે. દેવભવથી

देवाना सदा=नित्य समितं-सन्ततं निरन्तरमित्यर्थः यत् पापं कर्म-ज्ञानावरणादि सततबन्धकत्वाज्जीवानाम् , क्रियते=बध्यते कर्मकर्तृप्रयोगोऽयं, भवति संपद्यत इत्यर्थः । ते पूर्वोक्ता देवास्तस्य=स्वकृतकर्मणोऽबाधाकालातिक्रमे सति ' तत्र गयावि ' त्ति-अत्र ' अपि ' शब्द एवकारार्थे तेन तत्रगता एव-तत्र देवभवे गता अपि-वर्तमाना एव कल्पातीतानां क्षेत्रान्तरादिगमनासम्भवादिह-' तत्र-अन्यत्र ' इति शब्दाभ्यां भव एव विवक्षितोऽस्ति नत्वन्यक्षेत्रादीति । एके=केचन देवा वेदनाम्=उदयं विपाकं वेदयन्ति=अनुभवन्ति । तथा-अन्यत्रगता अपि-देवभवाद् न्यत्र गताः-उत्पन्ना एव वेदनामनुभवन्ति । ' केचित्तु-उभयत्रापि, केचिद् विपाकोदयापेक्षया नोभयत्रापि ' इति विकल्पद्वयमत्रसूत्रे द्विस्थानाधिकारान्नाङ्गीकृत

हैं । इस तरह कल्पोपपन्न देवों को विमानोपपन्न देवों को चारोपपन्नक देवों में के भेदरूप चार स्थितिक देवों को गतिरतिक देवों को और गतिसमापन्नक रूप भवनपति एवं व्यन्तरदेवों को जो निरन्तर सदा ज्ञानावरणीयादि पापकर्म बंधता रहता है वह उनके द्वारा बांधा गया पापकर्म अपने अबाधाकाल के बाद ही वेदित- अनुभवित होता है इन में जो कल्पातीत देव हैं वे अपने स्थान को छोड़कर अन्यक्षेत्रादि में जाते नहीं हैं इसलिये वे उसी भव में वर्तमान रह कर ही उस पापकर्म को उदय में भोगते हैं तथा कितनेक देव देवभव से अन्यत्र भव में उत्पन्न होकर ही उस बद्धकर्म के उदय को भोगते हैं कितनेक देव देवभवमें और अन्य भवमें भी कर्मोदयको भोगते हैं तथा कितनेक देव विपाकोदय की अपेक्षा उभयत्र भी उदय को नहीं भोगते हैं " ऐसे

તથા ભવનપતિ અને વાન વ્યન્તર દેવોને ગતિસમાપન્નક પદ દ્વારા ગ્રહણ કરવામાં આવ્યા છે આ રીતે કલ્પોપપન્નક દેવો. વિમાનોપપન્નક દેવો ચારોપપન્નક દેવોના ભેદરૂપ ચારસ્થિતિક દેવો, ગતિરતિક દેવો, અને ગતિસમાપન્નક રૂપ ભવનપતિ તથા વાનવ્યન્તર દેવો જે નિરન્તર જ્ઞાનાવરણીયાદિ પાપકર્મો બાંધતા રહે છે તે તેમના દ્વારા બાંધવામાં આવેલા પાપકર્મો પોતાના અબાધાકાળ બાદ જ વેદિત (અનુભવિત) થાય છે તેમાંના જે કલ્પાતીત દેવો છે તેઓ પોતાના સ્થાનને છોડીને અન્ય ક્ષેત્રાદિમાં જતાં નથી તેથી તેઓ એજ ભવમાં વર્તમાન રહીને જ તે પાપકર્મના ઉદયને ભોગવે છે તથા કેટલાક દેવો દેવભવમાંથી અન્ય ભવમાં ઉત્પન્ન થઈને જ તે બદ્ધ કર્મના ઉદયને ભોગવે છે. કેટલાક દેવો દેવભવમાં અને અન્યભવમાં પણ કર્મોદયને ભોગવે છે તથા કેટલાક દેવો વિપાકોદયની અપેક્ષાએ ઉભયત્ર (આ ભવમાં અને અન્ય ભવમાં) પણ ઉદયને ભોગવતા નથી. એવાં જે આ બે વિકલ્પો છે તેમને આ સૂત્રમાં

मिति। इदं सूत्रोक्तमेव विकल्पद्वयं सर्वजीवेषु चतुर्विंशतिदण्डकेन प्ररूपयति— 'नेरइयाणं' इत्यादि—सुगमम्। एवम्=अमुना प्रकारेण एकेन्द्रियाणां यावत् पञ्चेन्द्रियतिर्यग्योनिकानां विषयेऽपि बोध्यम्। 'मनुस्साणं' इत्यादि—मनुष्याणां सदा समितं यत् पापं कर्म क्रियते=बध्यते ते मनुष्या 'इहगयावि' इह मनुष्यभवे गता अपि=वर्त्तमाना एव एके=केचन वेदनां वेदयन्ति, एके केचिद् अन्यत्र= भवान्तरे गताः—वर्त्तमाना एव वेदनां वेदयन्ति। देवभवादारभ्य यावत् पञ्चेन्द्रि-

---

जो ये दो विकल्प हैं वे इस सूत्रमें द्वित्वाधिकार होने से अङ्गीकृत नहीं हैं। अब सूत्रकार इस सूत्रोक्त ही विकल्पद्वय को समस्त जीवों में चतुर्विंशतिदण्डक द्वारा प्ररूपित करते हैं—

"नेरइयाणं" इत्यादि—इसी प्रकार नैरयिक जीवों के द्वारा बद्ध पापकर्म अपने अबाधाकाल के बाद ही वेदित होता है सो वह बद्ध पापकर्म उनमें से कितनेक नारकियों द्वारा उसीभव में रहकर ही वेदित होता है तथा कितनेक नारकियों द्वारा अन्यत्र भव में ही जाकर वेदित होता है इसी तरह से अपने द्वारा बद्ध पापकर्म को भोगनेरूप कार्य एकेन्द्रिय जीवों से लेकर यावत् पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च जीवों तक के भी जानना चाहिये मनुष्यों को निरन्तर जो सदा ज्ञानावरणादि रूप पाप कर्म का बन्ध होता रहता है सो उनमें से कितनेक मनुष्य उस बद्ध पापकर्म को मनुष्य भव में ही रहकर भोगते हैं तथा कितनेक मनुष्य अन्य भवान्तर में ही जाकर भोगते हैं देवभव से लेकर यावत् पञ्चे-

---

ग्रहण करवामा आव्या नथी कारण के अहीं तो द्विविधता युक्त अधिकारनुं ज प्रतिपादन चाली रह्युं छे हवे सूत्रकार आ सूत्रोक्त बे विकल्पोनुं २४ दंडक द्वारा समस्त जीवोमा प्रतिपादन करे छे "नेरइयाणं" इत्यादि—

એજ પ્રમાણે નારકો બદ્ધ પાપકર્મો તેના અબાધાકાળ બાદ જ વેદિત થાય છે. તેથી તે બદ્ધ પાપકર્મ કેટલાક નારકો તે ભવમાં રહીને જ વેદન કરે છે અને કેટલાક નારકો અન્ય ભવમાં જઇને તેનુ વેદન કરે છે. એકેન્દ્રિયોથી પચેન્દ્રિય તિર્યંચ પર્યન્તના જીવો પણ પોતાના દ્વારા બદ્ધ પાપકર્મોને ભોગ-વવાનું કાર્ય નારકોની જેમ જ કરે છે, એટલે કે કેટલાક તે ભવમાં તેનું વેદન કરે છે અને કેટલાક અન્ય ભવમા તેનું વેદન કરે છે.

મનુષ્યો દ્વારા પણ નિરન્તર જ્ઞાનાવરણીય આદિ કર્મોનો બંધ થતો રહે છે. તેમાથી કેટલાક મનુષ્યો તે પાપકર્મને મનુષ્ય ભવમા રહીને જ ભોગવે છે અને કેટલાક મનુષ્યો અન્ય ભવમા ગયા બાદ તેમનું વેદન કરે છે. દેવભવથી

पतिर्यग्योनिकानां विषये " सत्यगयावि, असत्यगयावि " इत्यभिलापो वाच्य, मनुष्यदण्डके तु " इहगयावि असत्यगयावि " इत्यभिलापो वाच्य', मनुष्यम वस्य स्वीकारेण प्रत्यक्षासन्नवाचिन इदं शब्दस्य विषयत्वात्, अत एवाह-' मणु स्सवज्जा सेसा एक्कगमा ' इति, मनुष्यवर्जिताः शेषा:-अन्य त्रयोविंशतिदण्डका: एकगमा =सदृशालापकाः सन्ति, मनुष्यालापके 'इहगयावि' इत्युक्तत्वात् ॥सू०२१॥

पूर्वं चतुर्विंशतिदण्डके ' समगता वेदनां वेदयन्ति ' इति प्रोक्तमतो नार कादीनां गतिमागतिं च निरूपयन्नाह—

मूलम्—नेरइया दुगइया दुआगइया पण्णत्ता त जहा नेरइए नेरइएसु उववज्जमाणे मणुस्सेहिंतो वा पर्चिदियतिरिक्खजोणि एहिंतो वा उववज्जेज्जा । से चेव णं से नेरइए णेरइयत्त विप्प

न्द्रिय तिर्यञ्चयोनियों के विषय में " सत्यगया वि असत्य गया वि," ऐसा अभिलाप कहना चाहिये और मनुष्य दण्डक में " इह गया वि असत्यगया वि " ऐसा अभिलाप कहना चाहिये मनुष्यालापक में जो " इह " पद का प्रयोग किया गया है उसका कारण ऐसा है कि मनु ष्यभव प्रत्यक्ष और आसन्न है प्रत्यक्ष और आसन्न अर्थ के विषय में ही इदं शब्द का प्रयोग होता है, क्यों कि प्रत्यक्ष और आसन्न अर्थ का वाचक ही इदं शब्द होता है इसीलिये " मणुस्सवज्जा सेसा एक्कगमा " ऐसा कहा है कि मनुष्य वर्जित शेष २१ दण्डक सदृश आलापवाले हैं और मनुष्यालापक " इह गया वि " इस आलापक वाला है ॥ सू २१ ॥

सुधीने पंचेन्द्रिय तिर्यञ्च योनिके पर्यन्तना दण्डकोमां " सत्यगया वि असत्य गया वि " आ अभिलापनुं कथन थवुं जोईए. अने मनुष्य दंडकमां " इह गया वि असत्यगया वि " आ आलापकनुं कथन थवुं जोईए मनुष्य विषयक आलापकमां जे ' इह ' पदनो प्रयोग करवामां आव्यो छे तेनुं कारण ए छे के मनुष्य भव प्रत्यक्ष अने आसन्न छे प्रत्यक्ष अने आसन्न (समीप)अर्थना विषयमां ज इह (आ) पदनो प्रयोग थाय छे कारण के इह शब्द प्रत्यक्ष अने आसन्न अर्थनो वाचक छे तेथी ज मणुस्सवज्जा सेसा एक्कगमा एवुं कहे वामां आव्युं छे के मनुष्य सिवायना २३ दंडक एक सरखा आलापवाळा छे अने मनुष्य दंडक इह गया वि आ भवमां वेदन करे छे ' आ प्रकारना आलापवाळु छे ॥ सू० २१ ॥

जहमाणो मणुस्सत्ताए वा पंचिंदियतिरिक्खजोणियत्ताए वा गच्छेज्जा । एवं असुरकुमारावि, णवरं-से चेव णं से असुरकुमारे असुरकुमारत्तं विप्पजहमाणे मणुस्सत्ताए वा तिरिक्खजोणियत्ताए वा गच्छिज्जा । एवं सव्वदेवा । पुढविक्काइया दुगइया दुआगइया पण्णत्ता तं जहा-पुढविक्काइए पुढविक्काइएसु उववज्जमाणे पुढविक्काइएहिंतो वा णोपुढविक्काइएहिंतो वा उववज्जेज्जा । से चेव णं से पुढविक्काइए पुढविक्काइयत्तं विप्पजहमाणे पुढविक्काइयत्ताए वा णोपुढविक्काइयत्ताए वा गच्छेज्जा एवं जाव मणुस्सा ॥ सू० २२ ॥

छाया—नैरयिका द्विगतिका द्व्यागतिकाः प्रज्ञप्तास्तद्यथा—नैरयिको नैरयिकेषु उपपद्यमानो मनुष्येभ्यो वा पञ्चेन्द्रियतिर्यग्योनिकेभ्यो वा उपपद्यते । स एव खलु नैरयिको नैरयिकत्वं विप्रजहत् मनुष्यतया वा पञ्चेन्द्रियतिर्यग्योनिकतया वा गच्छति । एवमसुरकुमारा अपि, नवरं स एव खलु असौ असुरकुमारः असुरकुमारत्वं विप्रजहत् मनुष्यतया वा तिर्यग्योनिकतया वा गच्छति । एवं सर्वदेवाः । पृथिवीकायिका द्विगतिका द्व्यागतिकाः प्रज्ञप्तास्तथा—पृथिवीकायिकः पृथिवीकायिकेषु उपपद्यमानः पृथिवीकायिकेभ्यो वा उपपद्यते । स एव खलु असौ पृथिवीकायिकः पृथिवीकायिकत्वं विप्रजहत् पृथिवीकायिकतया वा नोपृथिवीकायिकतया वा गच्छति । एवं यावत् मनुष्याः ॥ सू० २२ ॥

टीका—' नेरइया दुगइया ' इत्यादि—

नैरयिकाः—नरकजीवाः द्विगतिकाः—द्वयोः मनुष्यतिर्यग्गतिलक्षणयोर्गत्योरधिकरणभूतयोर्गतिर्गमनं येषां ते तथा । द्विगतिकाः—द्वाभ्यामेताभ्यामेवाधिभूता-

पहिले २४ दण्डक में " तत्रगता वेदनां वेदयन्ति " ऐसा कहा गया है सो सूत्रकार अब नारक आदिकों की गति और आगति का निरूपण करते हैं—" नेरइया दुगइया दुआगइया पण्णत्ता " इत्यादि ॥ २२ ॥

પહેલા ૨૪ દંડકોમા " तत्रगता वेदनां वेदयन्ति " એવુ કથન કરવામા આવ્યુ છે તેથી સૂત્રકાર હવે નારકાદિકોની ગતિ અને આગતિનુ નિરૂપણુ કરે છે. " नेरइया दुगइया दुआगइया पण्णत्ता " ઇત્યાદિ ॥ ૨૨ ॥

पतिर्यग्योनिकानां विषये " सत्यगयावि, अन्नत्यगयावि " इत्यभिलापो वाच्यः, मनुष्यदण्डके तु " इहगयावि अन्नत्यगयावि " इत्यभिलापो वाच्यः, मनुष्यम वस्य स्वीकारेण प्रत्यक्षासन्नवाचिन इद शब्दस्य विषयत्वात्, अत एवाह-' मणु स्सवज्जा सेसा एक्कगमा ' इति, मनुष्यवर्जिताः शेषाः-अन्ये त्रयोविंशतिदण्डकाः एकगमाः=सदृशालापकाः सन्ति, मनुष्यालापके 'इहगयावि' इत्युक्तत्वात् ॥सू०२१॥

पूर्वं चतुर्विंशतिदण्डके ' समगता वेदणां वेदयन्ति ' इति प्रोक्तमतो नार कादीनां गतिमागतिं च निरूपयन्नाह—

मूलम्—नेरइया दुगइया दुआगइया पण्णत्ता तं जहा नेरइए नेरइएसु उववज्जमाणे मणुस्सेहिंतो वा पंचिंदियतिरिक्खजोणि एहिंतो वा उववज्जेज्जा । से चेव णं से नेरइए णेरइयत्त विप्प

न्द्रिय तिर्यञ्चयोनियों के विषय में " तत्यगया वि अन्नत्थ गया वि " ऐसा अभिलाप कहना चाहिये और मनुष्य दण्डक में " इह गया वि अन्नत्थगया वि " ऐसा अभिलाप कहना चाहिये मनुष्यालापक में जो " इह " पद का प्रयोग किया गया है उसका कारण ऐसा है कि मनु ष्यभव प्रत्यक्ष और आसन्न है प्रत्यक्ष और आसन्न अर्थ के विषय में ही इदं शब्द का प्रयोग होता है, क्यों कि प्रत्यक्ष और आसन्न अर्थ का वाचक ही इदं शब्द होता है इसीलिये " मणुस्सवज्जा सेसा एक्कगमा " ऐसा कहा है कि मनुष्य वर्जित शेष २३ दण्डक सदृश आलापवाले हैं और मनुष्यालापक " इह गया वि " इस आलापक वाला है ॥ सू २१ ॥

તઇને પંચેન્દ્રિય તિર્યંચ યોનિકો પર્યન્તના સબંધમાં " तत्थगया वि अन्नत्थ गया वि " આ અભિલાપનું કથન થવું જોઇએ. અને મનુષ્ય દંડકમાં " इह गया वि अन्नत्थगया वि " આ આલાપકનું કથન થવું જોઇએ મનુષ્ય વિષયક આલાપકમાં જે " इह " પદનો પ્રયોગ કરવામાં આવ્યો છે તેનું કારણ એ છે કે મનુષ્ય ભવ પ્રત્યક્ષ અને આસન્ન છે પ્રત્યક્ષ અને આસન્ન (સમીપ)અર્થના વિષયમાજ ઇદં (આ) પદનો પ્રયોગ થાય છે, કારણ કે ઇદં શબ્દ પ્રત્યક્ષ અને આસન્ન અર્થનો વાચક છે તેથી જ " मणुस्सवज्जा सेसा एक्कगमा " એવું કહે વામાં આવ્યું છે કે મનુષ્ય સિવાયના ૨૩ દંડક એક સરખા આલાપવાળાં છે અને મનુષ્ય દંડક ' इह गया वि ' આ સબંધમાં વેદન કરે છે " આ પ્રકારના આલાપવાળું છે ॥ સૂ૦ ૨૧ ॥

वा=अथवा तिर्यग्योनिकतया गच्छति। असुरकुमारा न केवलं पञ्चेन्द्रियेषु तिर्यग्योनिकेष्वेवोत्पद्यन्ते पृथिव्यब्वनस्पतिष्वपि तेषामुत्पत्तिसद्भावात्। एवं सर्वे देवा अपि-एवम्=असुरकुमारवत् द्वादशापि देवदण्डकपदानि वाच्यानि। अयं भावः-असुरादिदशदेवनिकाय-व्यन्तर-ज्योतिष्कप्रथमद्वितीयस्वर्गेषु देवानामागति र्द्वाभ्यां मनुष्यतिर्यग्भ्याम्। व्यन्तरे तु-असञ्ज्ञिपञ्चेन्द्रियतिर्यग्गतितोऽप्यागति र्भवति। गतिस्तु तेषां संज्ञिमनुष्यसञ्ज्ञिपञ्चेन्द्रियतिर्यक् पृथिव्यब्वनस्पतिषु भवति। तृतीयदेवलोकादारभ्याष्टमदेवलोकपर्यन्तदेवानामागतिर्द्वाभ्यां संज्ञिमनुष्यतिर्यग्भ्याम्, गतिरपि तेषां द्वयोरेव सञ्ज्ञिमनुष्यतिरश्चो र्भवति। नवमदेवलोकादार-

---

वनस्पतिकायिक इन एकेन्द्रिय जीवों में भी उत्पन्न हो जाते हैं, असुरकुमार के इस कथन की तरह से ही १२ देवलोक का भी कथन कर लेना चाहिये तात्पर्य इसका ऐसा है-असुरकुमार आदि दश भवनपति देव निकाय में व्यन्तर देवनिकाय में, ज्योतिष्क देवनिकाय में और प्रथम द्वितीय स्वर्गों में देवों की आगति मनुष्यगति और तिर्यञ्चगति से होती है व्यन्तर देवों में असंज्ञि पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च गति से भी जीव आता है तथा इनकी व्यन्तरदेवों की गति संज्ञी मनुष्य संज्ञी पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च, पृथिवीकाय, अप्काय और वनस्पतिकाय में होती है, तृतीय देवलोक से लेकर अष्टमदेवलोक तक के देवों की आगति संज्ञी मनुष्य और संज्ञी पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च इन दो जगहों से होती है इनकी गति

ચોમાં ઉત્પન્ન થાય છે અહીં એટલી જ વિશેષતા સમજવી કે અસુરકુમાર પૃથ્વીકાય, અપ્કાય અને વનસ્પતિકાયરૂપ ત્રણ એકેન્દ્રિય જીવોમાં પણ ઉત્પન્ન થાય છે અસુરકુમારના જેવુ જ કથન ૧૨ દેવદંડક પદોના વિષયમા પણ સમજવુ આ કથનનો ભાવાર્થ નીચે પ્રમાણે છે-અસુરકુમાર આદિ દશ ભવનપતિ દેવનિકાયમાં, વ્યન્તર દેવનિકાયમા જ્યોતિષ્ક દેવનિકાયમાં, અને પહેલા તથા બીજા દેવલોકમા દેવોની આગતિ (અન્ય ગતિમાથી આગમન) મનુષ્ય ગતિ અને તિર્યંચ ગતિમાંથી થાય છે વ્યન્તર દેવોમા અસંજ્ઞી પંચેન્દ્રિય તિર્યંચ ગતિમાથી પણ જીવો આવે છે તથા વ્યન્તર દેવો પોતાનુ દેવસંબંધી આયુષ્ય પૂરૂ કરીને સંજ્ઞી મનુષ્ય, સંજ્ઞી પંચેન્દ્રિય તિર્યંચ, પૃથ્વીનીકાય, અપ્કાય અને વનસ્પતિકાયિકોમા ઉત્પન્ન થાય છે ત્રીજાથી લઈને આઠમાં દેવલોક પર્યન્તના દેવો દેવભવ સંબંધી આયુષ્ય પૂરૂ કરીને સંજ્ઞી મનુષ્ય અને સંજ્ઞી પંચેન્દ્રિય તિર્યંચોમા જ ઉત્પન્ન થાય છે, અને એ બે ગતિના જીવો જ

स्याम् मागति=आगमन येषां ते तथा, मवान्ताः, तद्यथा-नैरयिकाः=नारकजीवाः नैरयिकेषु=नरकभवमनुप्राप्तेषु जीवेषु उपपद्यमानाः=समुत्पद्यमान् मनुष्येभ्यः, वा=अथवा पञ्चेन्द्रियतिर्यग्योनिकेभ्य आगत्य उपपद्यते । ननु मनुष्यतिर्यग्गतौ विद्यमानो जीवः कथं 'नैरयिकः' इत्युच्यते? इति चेदाह-उदितनारकायुष्कत्वात् स नैरयिकत्वेन व्यपदिश्यते इति न कश्चिद्दोष । 'से चेव णं' इत्यादि-स एवासौ नारकजीवो नैरयिकत्वं विप्रजहत्=परित्यजन् मनुष्यतया वा=अथवा पञ्चेन्द्रियतिर्यग्योनिकतया गच्छति । एवम्=अमुना कारेण असुरकुमारा अपि बोध्याः, नवर-विशेषस्त्वयम्-स एवासौ असुरकुमारः असुरकुमारत्वं विप्रजहत् मनुष्यतया

टीकार्थ-नारक जीव द्विगतिक होते हैं अर्थात् वे नारक पर्याय को जब छोड़ते हैं तब वहां से वे या तो मनुष्यगति में जाते हैं या पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च गति में जाते हैं इसी तरह नारक जीव जब नरकों में जन्म धारण करते हैं तो या तो वे मनुष्यगति से आते हैं या पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च गति से आते हैं

शंका—मनुष्य एव तिर्यञ्चगति में विद्यमान जीव "नैरयिक" इस शब्द द्वारा कैसे कहा गया है?

उत्तर—मनुष्यगति से या तिर्यञ्चगति से जीव जब नरकगति में जाने लगता है तब उसको नरकायु का उदय हो जाता है इसलिये उस आयु क उदय हो जाने से वह नारक कहा गया है इसी तरह का कथन असुरकुमारों में भी जानना चाहिये अर्थात् असुरकुमार मरकर या तो पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्चों में उत्पन्न होते हैं या मनुष्यों में उत्पन्न होते हैं यहां इतनी विशेषता है कि असुरकुमार पृथिवीकायिक अप्कायिक और

ટીકાર્થ—નારક જીવો દ્વિગતિક હોય છે એટલે કે જ્યારે તેઓ નારક પર્યાયને છોડે છે ત્યારે કાં તો મનુષ્યગતિમાં જાય છે અને કાં તો પંચેન્દ્રિય તિર્યંચ ગતિમાં જાય છે એજ પ્રમાણે નારક ગતિમાં આવતો જીવ કાં તો મનુષ્ય ગતિમાંથી અને કાં તો પંચેન્દ્રિય ગતિમાંથી આવીને નરકોમાં જન્મ ધારણ કરે છે

શંકા—મનુષ્ય અને તિર્યંચ ગતિમાં રહેલા જીવને માટે 'નારક ગતિનો જીવ' આવો શબ્દપ્રયોગ શા માટે કરવામાં આવ્યો છે?

ઉત્તર—મનુષ્ય ગતિમાંથી અથવા તિર્યંચ ગતિમાંથી જીવ જ્યારે નરક ગતિમાં જવા લાગે છે, ત્યારે તેને નરકાયુનો ઉદય થઈ જાય છે, તે આયુનો ઉદય થઈ જવાથી તેને નારક કહેવાય છે

નારકો જેવું જ કથન અસુરકુમારોમાં પણ સમજવું એટલે કે અસુર કુમાર મરીને કાં તો પંચેન્દ્રિય તિર્યંચોમાં ઉત્પન્ન થાય છે અને કાં તો મનુ

वा=अथवा तिर्यग्योनिकतया गच्छति। असुरकुमारा न केवलं पञ्चेन्द्रियेषु तिर्यग्योनिकेष्वेवोत्पद्यन्ते पृथिव्यब्वनस्पतिष्वपि तेषामुत्पत्तिसद्भावात्। एवं सर्वे देवा अपि-एवम्=असुरकुमारवत् द्वादशापि देवदण्डकपदानि वाच्यानि। अयं भावः-असुरादिदशदेवनिकाय-व्यन्तर-ज्योतिष्कप्रथमद्वितीयस्वर्गेषु देवानामागति द्वाभ्यां मनुष्यतिर्यग्भ्याम्। व्यन्तरे तु-असञ्ज्ञिपञ्चेन्द्रियतिर्यग्गतितोऽप्यागति भवति। गतिस्तु तेषां संज्ञिमनुष्यसञ्ज्ञिपञ्चेन्द्रियतिर्यक् पृथिव्यब्वनस्पतिषु भवति। तृतीयदेवलोकादारभ्याष्टमदेवलोकपर्यन्तदेवानामागतिर्द्वाभ्यां संज्ञिमनुष्यतिर्यग्भ्याम्, गतिरपि तेषां द्वयोरेव सञ्ज्ञिमनुष्यतिरश्चो भवति। नवमदेवलोकादार-

वनस्पतिकायिक इन एकेन्द्रिय जीवों में भी उत्पन्न हो जाते हैं, असुरकुमार के इस कथन की तरह से ही १२ देवलोक का भी कथन कर लेना चाहिये तात्पर्य इसका ऐसा है-असुरकुमार आदि दश भवनपति देव निकाय में व्यन्तर देवनिकाय में, ज्योतिष्क देवनिकाय में और प्रथम द्वितीय स्वर्गों में देवों की आगति मनुष्यगति और तिर्यञ्चगति से होती है व्यन्तर देवों में असंज्ञि पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च गति से भी जीव आता है तथा इनकी व्यन्तरदेवों की गति संज्ञी मनुष्य संज्ञी पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च, पृथिवीकाय, अप्काय और वनस्पतिकाय में होती है, तृतीय देवलोक से लेकर अष्टमदेवलोक तक के देवों की आगति संज्ञी मनुष्य और संज्ञी पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च इन दो जगहों से होती है इनकी गति

યોમાં ઉત્પન્ન થાય છે અહીં એટલી જ વિશેષતા સમજવી કે અસુરકુમાર પૃથ્વીકાય, અપ્કાય અને વનસ્પતિકાયરૂપ ત્રણ એકેન્દ્રિય જીવોમા પણ ઉત્પન્ન થાય છે અસુરકુમારના જેવુ જ કથન ૧૨ દેવદંડક પદોના વિષયમા પણ સમજવુ. આ કથનનો ભાવાર્થ નીચે પ્રમાણે છે-અસુરકુમાર આદિ દશ ભવનપતિ દેવનિકાયમાં, વ્યન્તર દેવનિકાયમા, જ્યોતિષ્ક દેવનિકાયમાં, અને પહેલા તથા બીજા દેવલોકમા દેવોની આગતિ (અન્ય ગતિમાથી આગમન) મનુષ્ય ગતિ અને તિર્યંચ ગતિમાંથી થાય છે વ્યન્તર દેવોમા અસંજ્ઞી પચેન્દ્રિય તિર્યંચ ગતિમાથી પણ જીવો આવે છે તથા વ્યન્તર દેવો પોતાનુ દેવસબધી આયુષ્ય પૂરૂ કરીને સજ્ઞી મનુષ્ય, સજ્ઞી પચેન્દ્રિય તિર્યંચ, પૃથ્વીનીકાય, અપ્કાય અને વનસ્પતિકાયિકોમા ઉત્પન્ન થાય છે ત્રીજાથી લઈને આઠમા દેવલોક પર્યન્તના દેવો દેવભવ સબધી આયુષ્ય પૂરૂ કરીને સજ્ઞી મનુષ્ય અને સજ્ઞી પચેન્દ્રિય તિર્યંચોમા જ ઉત્પન્ન થાય છે, અને એ બે ગતિના જીવો જ

नुत्तरविमानपर्यन्तदेवेषु गतिरागतिश्चैकैव संज्ञिमनुष्यविषया विज्ञेया । ' पुढ विकाइया ' इत्यादि—पृथिवीकायिका द्विगतिका द्व्यागतिकाः प्रज्ञप्तास्तथा- पृथिवीकायिक पृथिवीकायिकेषु उपपद्यमानः पृथिवीकायिकेभ्यो वा=अथवा नो पृथिवीकायिकेभ्य आगत्योपपद्यते । नो पृथिवीकायिकेभ्यः =पृथिवीकायिकवर्जि तोऽप्कायादिसर्वेभ्यः, तेभ्यो वा नारकवर्जेभ्य आगत्य समुत्पद्यते । स एव खलु असौ पृथिवीकायिकः पृथिवीकायत्वं विप्रजहत् पृथिवीकायतया वा=अथवा नो पृथिवीकायतया=देवनारकवर्जाप्कायादितया गच्छतीति । एवम्=अमुना प्रकारेण

भी इन्ही दो में होती है नवमदेवलोक से लेकर अनुत्तर विमान तक के देवों में गति और आगति एक सज्ञी मनुष्यविषयक ही है " पुढवि काइया " इत्यादि–पृथिवीकायिक जीव द्विगतिक और द्व्यागतिक होते हैं अर्थात् पृथिवीकायिकों में उपपद्यमान जीव पृथिवीकायिकों से अथवा नो पृथिवीकायिकों में से आकर के उत्पन्न होता है नो पृथिवीकायिक से यहां पृथिवीकायिकों को छोड़कर बाकी के अप्कायिकों का ग्रहण किया गया है नारकों को छोड़कर नारकों से आकर जीव पृथिवीकायिक रूप से उत्पन्न नहीं होता है तथा पृथिवीकायिक को छोड़कर यह जीव पृथि वीकायिक रूप से या नोपृथिवीकायिक रूप से उत्पन्न होता है " नो पृथिवीकायिकरूप से उत्पन्न होता है " ऐसे इस कथन में देव और नारकों को छोड़ दिया गया है इसलिये अप्कायिकरूप से उत्पन्न होता है ऐसा समझना चाहिये इसी प्रकार से यावत् मनुष्य भी पृथिवीकायिक

પોતાની ગતિ સંબંધી આયુષ્ય પૂરૂં કરીને તે દેવલોકોમાં ઉત્પન્ન થાય છે નવમાં દેવલોકથી લઈને અનુત્તર વિમાન પર્યન્તના દેવો ત્યાંથી ચ્યવીને સંજ્ઞી મનુષ્યની ગતિમાં જ જાય છે અને સંજ્ઞી મનુષ્યો જ મરીને એ દેવલોકમાં જાય છે ' પુઢવિકાઇયા " ઇત્યાદિ—

પૃથ્વીકાયિકો દ્વિગતિક અને દ્વ્યાગતિક હોય છે એટલે કે પૃથ્વીકાયિકોમાં ઉત્પન્ન થતાં જીવો પૃથ્વીકાયિકોમાંથી અથવા નોપૃથ્વીકાયિકોમાંથી આવીને ઉત્પન્ન થાય છે ' નોપૃથ્વીકાયિક " પદ દ્વારા અહીં પૃથ્વીકાયિકો સિવાયના બાકીના અપ્કાયિકોને ગ્રહણ કરવામાં આવ્યા છે નારકોમાંથી આવીને–નરક ગતિને છોડીને જીવો પૃથ્વીકાયિક રૂપે ઉત્પન્ન થતાં નથી. તથા પૃથ્વીકાયને

यावत् मनुष्याः=पृथिवीकायिकवत् 'द्विगतिकाः' इत्याद्यभिलापैरेवाप्कायादयो मनुष्यपर्यन्ताः पृथिवीकायिकशब्दस्थानेऽप्कायादिशब्दव्यपदेशं कुर्वद्भिरभिधातव्या इति। व्यन्तरादीनां तु पूर्वमतिदेशः कृत एवेति ॥ सू० २२ ॥

जीवाधिकारादेव भव्यादिषोडशविशेषणैर्दण्डकमरूपणामाह—

मूलम्—दुविहा णेरइया पण्णत्ता तं जहा-भवसिद्धिया चेव अभवसिद्धिया चेव, जाव वेमाणिया १। दुविहा णेरइया पण्णत्ता तं जहा-अणंतरोववन्नगा चेव परंपरोववन्नगा चेव जाव वेमाणिया २। दुविहा णेरइया पण्णत्ता तं जहा-गतिसमावन्नगा चेव अगतिसमावन्नगा चेव। जाव वेमाणिया ३। दुविहा णेरइया पन्नत्ता तं जहा-पढमसमयोववन्नगा चेव अपढमसमयोववन्नगा चेव, जाव वेमाणिया ४। दुविहा णेरइया पण्णत्ता तं जहा-आहारगा चेव अणाहारगा चेव जाव वेमाणिया ५। दुविहा णेरइया पण्णत्ता तं जहा-उस्सासगा चेव णो उस्सासगा

की तरह द्विगतिक और द्व्यागतिक जानना चाहिये अर्थात् अप्काय से लेकर मनुष्य तक के दो गति से आना जाना आदि सम्बन्धी अभिलाप पृथिवीकायिक शब्द के स्थान में अप्कायादि शब्दों को जोड़कर कह लेना चाहिये व्यन्तरादि के विषय का कथन पहिले ही कह दिया गया है॥सू०२२॥

છોડીને જીવ પૃથ્વીકાય રૂપે અથવા નોપૃથ્વીકાય રૂપે ઉત્પન્ન થાય છે "નોપૃથ્વીકાયિકોમાં ઉત્પન્ન થાય છે," આ કથનમાં દેવ અને નારકોને ગ્રહણ કરવામા આવેલ નથી–તેમને છોડી દેવામા આવેલ છે, તેથી અપ્કાયિક રૂપે ઉત્પન્ન થાય છે, એમ સમજવુ જોઇએ

એજ પ્રમાણે મનુષ્ય પર્યન્તના જીવોને પણ દ્વિગતિક અને દ્વયાગતિક સમજવા જોઇએ એટલે કે અપ્કાયિકથી લઇને મનુષ્ય પર્યન્તના દ્વિગતિક આદિ સંબંધી અભિલાપમા પૃથ્વીકાયિક શબ્દને બદલે અપ્કાયાદિ શબ્દોનો પ્રયોગ કરીને અભિલાપ કહેવા જોઇએ વ્યન્તરાદિ વિષેનું કથન તો પહેલાં આવી ગયુ છે. ॥ સૂ૦ ૨૨ ॥

चेव, जाव वेमाणिया ६। दुविहा णेरइया पण्णत्ता तं जहा सइंदिया चेव अणिंदिया चेव, जाव वेमाणिया ७। दुविहा णेरइया पण्णत्ता तं जहा पज्जत्तगा चेव, अपज्जत्तगा चेव, जाव वेमाणिया ८। दुविहा णेरइया पण्णत्ता तं जहा-सन्नी चेव असन्नी चेव, एवं पंचिंदिया सव्वे विगलिंदियवज्जा जाव वाणमंतरा ९। दुविहा णेरइया पण्णत्ता तं जहा भासगा चेव अभासगा चेव, एवमेगिंदियवज्जा सव्वे जाव वेमाणिया १०। दुविहा नेरइया पण्णत्ता तं जहा सम्मदिट्ठिया चेव मिच्छदिट्ठिया चेव, एवं एगिंदियवज्जा सव्वे जाव वेमाणिया ११। दुविहा णेरइया पण्णत्ता तं जहा-परित्तसंसारिया चेव अणंतसंसारिया चेव, जाव वेमाणिया १२। दुविहा णेरइया पण्णत्ता तं जहा-संखेज्जकालसमयट्ठिइया चेव असंखेज्जकालसमयट्ठिइया चेव, एवं पंचिंदिया एगिंदियविगलिंदियवज्जा जाव वाणमंतरा १३। दुविहा णेरइया पण्णत्ता तं जहा—सुलभबोहिया चेव, दुलहबोहिया चेव। जाव वेमाणिया १४। दुविहा णेरइया पण्णत्ता तं जहा—कण्हपक्खिया चेव सुक्कपक्खिया चेव, जाव वेमाणिया १५। दुविहा णेरइया पण्णत्ता तं जहा—चरिमा चेव अचरिमा चेव, जाव वेमाणिया १६ ॥ सू० २३ ॥

छाया—द्विविधा नैरयिकाः प्रज्ञप्तास्तद्यथा—भवसिद्धिकाश्चैव अभवसिद्धिकाश्चैव, परम्परोपपन्नकाश्चैव यावद् वैमानिकाः १। द्विविधा नैरयिका प्रज्ञप्तास्तद्यथा अनन्तरोपपन्नकाश्चैव यावद् वैमानिकाः २। द्विविधा नैरयिका प्रज्ञप्तास्तद्यथा गतिसमापन्नकाश्च अगतिसमापन्नकाश्चैव, यावद् वैमानिकाः ३। द्विविधा नैरयिकाः प्रज्ञप्तास्तद्यथा

प्रथमसमयोपपन्नकाश्चैव, अप्रथमसमयोपपन्नकाश्चैव, यावद् वैमानिकाः ४। द्विविधा नैरयिकाः प्रज्ञप्तास्तद्यथा—आहारकाश्चैव अनाहारकाश्चैव, यावद् वैमानिकाः ५। द्विविधा नैरयिकाः प्रज्ञप्तास्तद्यथा—उच्छ्वासकाश्चैव नोउच्छ्वासकाश्चैव, यावद् वैमानिकाः ६। द्विविधा नैरयिकाः प्रज्ञप्तास्तद्यथा—सेन्द्रियाश्चैव अनिन्द्रियाश्चैव, यावद् वैमानिकाः ७। द्विविधा नैरयिकाः प्रज्ञप्तास्तद्यथा—पर्याप्तकाश्चैव अपर्याप्तकाश्चैव, यावद् वैमानिकाः ८। द्विविधा नैरयिकाः प्रज्ञप्तास्तद्यथा—सञ्ज्ञिनश्चैव, असञ्ज्ञिनश्चैव, एवं पंचेन्द्रियाः सर्वे विकलेन्द्रियवर्जा यावद् वानव्यन्तराः ९। द्विविधा—नैरयिकाः प्रज्ञप्तास्तद्यथा—भाषकाश्चैव अभाषकाश्चैव, एवमेकेन्द्रियवर्जाः सर्वे यावद् वैमानिकाः १०। द्विविधा नैरयिकाः प्रज्ञप्तास्तद्यथा—सम्यग्दृष्टिकाश्चैव मिथ्यादृष्टिकाश्चैव, एवमेकेन्द्रियवर्जाः सर्वे यावद् वैमानिकाः ११। द्विविधा नैरयिका प्रज्ञप्तास्तद्यथा—परीतसांसारिकाश्चैव अनन्तसांसारिकाश्चैव, यावद् वैमानिकाः १२। द्विविधा नैरयिकाः प्रज्ञप्तास्तद्यथा—संख्येयकालसमयस्थितिकाश्चैव असंख्येयकालसमयस्थितिकाश्चैव, एवं पंचेन्द्रिया एकेन्द्रियविकलेन्द्रियवर्जा यावद् वानव्यन्तराः १३। द्विविधा नैरयिकाः प्रज्ञप्तास्तद्यथा—सुलभबोधिकाश्चैव दुर्लभबोधिकाश्चैव यावद् वैमानिकाः १४। द्विविधा नैरयिकाः प्रज्ञप्तास्तद्यथा—कृष्णपाक्षिकाश्चैव शुक्लपाक्षिकाश्चैव, यावद् वैमानिकाः १५। द्विविधा नैरयिकाः प्रज्ञप्तास्तद्यथा—चरमाश्चैव, अचरमाश्चैव, यावद् वैमानिकाः १६॥ सू० २३॥

टीका—'दुविहा णेरइया' इत्यादि—

भविकदण्डके द्विविधा नैरयिकाः भवन्ति—भवसिद्धिका अभवसिद्धिकाश्चेति। तत्र भवसिद्धिकाः—भवेन भवाभ्यां भवै र्वा, भाविनी वा सिद्धिर्येषां ते तथा। तद्विपरीता

जीवाधिकार होने से ही अब सूत्रकार भव्यादि सोलह विशेषणों द्वारा दण्डककी प्ररूपणा करते हैं—"दुविहा नेरइया पण्णत्ता" इत्यादि ॥२३॥

भविक दण्डक में नैरयिक दो प्रकार के कहे गये हैं एक भवसिद्धिक और दूसरे अभवसिद्धिक जिन्हें एकभव से या दो भवों से या अनेक भवों से सिद्धि प्राप्त होती है वे भवसिद्धिक नैरयिक हैं और जो इनसे विपरीत हैं अभव्य हैं—वे अभवसिद्धिक हैं। "यावद् वैमानिकाः" १

જીવાધિકાર ચાલી રહ્યો છે, તેથી સૂત્રકાર હવે ભવ્યાદિ ૧૬ વિશેષણો દ્વારા દંડકની પ્રરૂપણા કરે છે–"दुविहा नेरइया पण्णत्ता" ઈત્યાદિ ॥ ૨૩ ॥

ભવિક દંડકમા નારકો બે પ્રકારના કહ્યા છે–(૧) ભવસિદ્ધિક અને (૨) અભવસિદ્ધિક જેમને એક ભવ, બે ભવ કે અનેક ભવો કરીને સિદ્ધિ પ્રાપ્ત થાય છે, એવા નારક જીવોને ભવસિદ્ધિક નારકો કહે છે તેમનાથી વિપરીત

चेव, जाव वेमाणिया ६। दुविहा णेरइया पण्णत्ता तं जहा सइंदिया चेव अणिंदिया चेव, जाव वेमाणिया ७ । दुविहा णेरइया पण्णत्ता तं जहा पज्जत्तगा एव, अपज्जत्तगा एव, जाव वेमाणिया ८। दुविहा णेरइया पण्णत्ता तं जहा-सन्नी चेव असन्नी चेव, एवं पंचिंदिया सव्वे विगलिंदियवज्जा जाव वाण मंतरा ९ । दुविहा णेरइया पण्णत्ता तं जहा भासगा चेव अभासगा चेव, एवमेगिंदियवज्जा सव्वे जाव वेमाणिया १०। दुविहा नेरइया पण्णत्ता तं जहा सम्मदिट्ठिया चेव मिच्छदिट्ठिया चेव, एवं एगिंदियवज्जा सव्वे जाव वेमाणिया ११। दुविहा णेरइया पण्णत्ता तं जहा-परित्तसंसारिया चेव अणंत संसारिया चेव, जाव वेमाणिया १२। दुविहा णेरइया पण्णत्ता तं जहा संखेज्जकालसमयट्ठिइया चेव असंखेज्जकालसमयट्ठिइया चेव, एवं पंचिंदिया एगिंदियविगलिंदियवज्जा जाव वाणमंतरा १३ । दुविहा णेरइया पण्णत्ता तं जहा--सुलभबोहिया चेव, दुलहबोहिया चेव। जाव वेमाणिया १४ । दुविहा णेरइया पण्णत्ता तं जहा--कण्हपक्खिया चेव सुक्कपक्खिया चेव, जाव वेमाणिया१५ । दुविहा णेरइया पण्णत्ता तं जहा--चरिमा चेव अचरिमा चेव, जाव वेमाणिया १६ ॥ सू० २३ ॥

छाया--द्विविधा नैरयिकाः प्रज्ञप्तास्तद्यथा--भवसिद्धिकाश्चैव अभवसिद्धिकाश्चैव, परम्परोपपन्नकाश्चैव यावद् वैमानिकाः १। द्विविधा नैरयिकाः प्रज्ञप्तास्तद्यथा-अनन्तरोपपन्नकाश्चैव यावद् वैमानिकाः २। द्विविधा नैरयिकाः प्रज्ञप्तास्तद्यथा-गतिसमापन्नकाश्चैव अगतिसमापन्नकाश्चैव, यावद् वैमानिकाः ३। द्विविधा नैरयिकाः प्रज्ञप्तास्तद्यथा

प्रथमसमयोपपन्नकाश्चैव, अप्रथमसमयोपपन्नकाश्चैव, यावद् वैमानिकाः ४। द्विविधा नैरयिकाः प्रज्ञप्तास्तद्यथा—आहारकाश्चैव अनाहारकाश्चैव, यावद् वैमानिकाः ५। द्विविधा नैरयिकाः प्रज्ञप्तास्तद्यथा—उच्छ्वासकाश्चैव नोउच्छ्वासकाश्चैव, यावद् वैमानिकाः ६। द्विविधा नैरयिकाः प्रज्ञप्तास्तद्यथा—सेन्द्रियाश्चैव अनिन्द्रियाश्चैव, यावद् वैमानिकाः ७। द्विविधा नैरयिकाः प्रज्ञप्तास्तद्यथा—पर्याप्तकाश्चैव अपर्याप्तकाश्चैव, यावद् वैमानिकाः ८। द्विविधा नैरयिकाः प्रज्ञप्तास्तद्यथा—संज्ञिनश्चैव, असंज्ञिनश्चैव, एवं पंचेन्द्रियाः सर्वे विकलेन्द्रियवर्जा यावद् वानव्यन्तराः ९। द्विविधा—नैरयिकाः प्रज्ञप्तास्तद्यथा—भाषकाश्चैव अभाषकाश्चैव, एवमेकेन्द्रियवर्जाः सर्वे यावद् वैमानिकाः १०। द्विविधा नैरयिकाः प्रज्ञप्तास्तद्यथा—सम्यग्दृष्टिकाश्चैव मिथ्यादृष्टिकाश्चैव, एवमेकेन्द्रियवर्जाः सर्वे यावद् वैमानिकाः ११। द्विविधा नैरयिका प्रज्ञप्तास्तद्यथा—परीतसांसारिकाश्चैव अनन्तसांसारिकाश्चैव, यावद् वैमानिकाः १२। द्विविधा नैरयिकाः प्रज्ञप्तास्तद्यथा—संख्येयकालसमयस्थितिकाश्चैव असंख्येयकालसमयस्थितिकाश्चैव, एवं पंचेन्द्रिया एकेन्द्रियविकलेन्द्रियवर्जा यावद् वानव्यन्तराः १३। द्विविधा नैरयिकाः प्रज्ञप्तास्तद्यथा—सुलभबोधिकाश्चैव दुर्लभबोधिकाश्चैव यावद् वैमानिकाः १४। द्विविधा नैरयिकाः प्रज्ञप्तास्तद्यथा—कृष्णपाक्षिकाश्चैव शुक्लपाक्षिकाश्चैव, यावद् वैमानिकाः १५। द्विविधा नैरयिकाः प्रज्ञप्तास्तद्यथा—चरमाश्चैव, अचरमाश्चैव, यावद् वैमानिकाः १६॥ सू० २३ ॥

टीका—'दुविहा णेरइया' इत्यादि—

भविकदण्डके द्विविधा नैरयिकाः भवन्ति—भवसिद्धिका अभवसिद्धिकाश्चेति। तत्र भवसिद्धिकाः—भवेन भवाभ्यां भवै र्वा, भाविनी वा सिद्धिर्येषां ते तथा। तद्विपरीता

जीवाधिकार होने से ही अब सूत्रकार भव्यादि सोलह विशेषणों द्वारा दण्डककी प्ररूपणा करते हैं—"दुविहा नेरइया पण्णत्ता" इत्यादि ॥२३॥

भविक दण्डक में नैरयिक दो प्रकार के कहे गये हैं एक भवसिद्धिक और दूसरे अभवसिद्धिक जिन्हें एकभव से या दो भवों से या अनेक भवों से सिद्धि प्राप्त होती है वे भवसिद्धिक नैरयिक हैं और जो इनसे विपरीत हैं अभव्य हैं—वे अभवसिद्धिक हैं। "यावद् वैमानिकाः" १

જીવાધિકાર ચાલી રહ્યો છે, તેથી સૂત્રકાર હવે ભવ્યાદિ ૧૬ વિશેષણો દ્વારા દંડકની પ્રરૂપણા કરે છે—"दुविहा नेरइया पण्णत्ता" ઈત્યાદિ ॥ ૨૩ ॥

ભવિક દંડકમાં નારકો બે પ્રકારના કહ્યા છે—(૧) ભવસિદ્ધિક અને (૨) અભવસિદ્ધિક જેમને એક ભવ, બે ભવ કે અનેક ભવો કરીને સિદ્ધિ પ્રાપ્ત થાય છે, એવા નારક જીવોને ભવસિદ્ધિક નારકો કહે છે. તેમનાથી વિપરીત

भवसिद्धिका अभव्या इत्यर्थः, यावत् वैमानिकाः । इतिपदं पर्याप्तापर्याप्तकनैरयि कसूत्राष्टमसूत्रपर्यन्तं वाच्यम् । अनन्तरदण्डके-अनन्तरोपपन्नकाः-न विद्यते अन्तरं= समयादि व्यवधान उपपाते येषां ते तथा एकस्मादनन्तरमुत्पन्ना यद्वा विवक्षित देशापेक्षया येऽनन्तरतयोत्पन्नास्ते-नारका इत्यर्थः, परम्परोपपन्नाः परम्परोप पन्ना २। गतिदण्डके गतिसमापन्नकाः-नरकं गच्छन्तः, इतरे तु नारकत्वं प्राप्ताः नरके

इसी तरह का कथन यावत् वैमानिक देवों तक कर लेना चाहिये १ "यावद् वैमानिकाः" यह पद पर्याप्त अपर्याप्तक नैरयिक रूप ८ वें सूत्र तक कहना चाहिये-अनन्तरदण्डक में नैरयिक दो प्रकार के कहे गये हैं -एक अनन्तरोपपन्नक नैरयिक और दूसरे परम्परोपपन्नक नैरयिक जिनकी उत्पत्ति में समयादिका व्यवधान नहीं होता है-वे अनन्तर उपपन्नक हैं एक नारक की उत्पत्ति के अनन्तर जिनकी उत्पत्ति हो जाती है वे अनन्तर उपपन्नक है । अथवा-विवक्षितदेश की अपेक्षा से जो अनन्तररूप से उत्पन्न हुए हैं वे अनन्तर उपपन्नक हैं । जो परम्प रारूप से उत्पन्न होते हैं वे परम्परोपपन्नक नैरयिक हैं । इसी तरह का कथन यावत् वैमानिक तक जानना चाहिये २ गति दण्डक में गतिस मापन्नक और अगतिसमापन्नक के भेद से नारक दो प्रकार के हैं जो जीव नारकगति में आने वाले हैं वे नारकगति समापन्नक और जो नारक

જે નારકો છે-અભવ્ય જે નારકો છે-તેમને અભવસિદ્ધિક કહે છે "યાવત્ વૈમાનિકાઃ" આ પ્રકારનું કથન વૈમાનિક દેવો પર્યન્તના જીવો વિષે પણ સમજવું ' યાવદ્ વૈમાનિકાઃ ' આ પદનું કથન પર્યાપ્તક અપર્યાપ્તક નૈરયિકરૂપ ૮ માં સૂત્ર સુધી થવું જોઈએ અનન્તર દંડકમાં નારકો બે પ્રકારના કહ્યા છે-(૧) અનન્તરોપપન્નક નારકો અને (૨) પરમ્પરોપપન્નક નારકો જેમની ઉત્પત્તિમાં સમયાદિનું વ્યવધાન (આંતરો) પડતું નથી, એવાં નારકોને અનન્તર ઉપપન્નક નારકો કહે છે એક નારકની ઉત્પત્તિના અનન્તર (ઉત્પત્તિ બાદ) જેમની ઉત્પત્તિ થઈ જાય છે એવાં નારકોને અનન્તર ઉપપન્નક કહે છે અથવા વિવ ક્ષિત (અમુક) દેશની અપેક્ષાએ જે અનન્તર રૂપે ઉત્પન્ન થયાં છે તે નાર કોને અનન્તરોપપન્નક કહે છે જે નારકો પરમ્પરા રૂપે ઉત્પન્ન થાય છે તેમને પરમ્પરોપપન્નક નારકો કહે છે આ પ્રકારના ભેદોનું કથન વૈમાનિકો પર્યન્તના જીવો વિષે પણ સમજવું ॥ ૨ ॥

ગતિદંડકમાં ગતિ સમાપન્નક અને અગતિ સમાપન્નકના ભેદથી નારકોના બે પ્રકાર કહ્યા છે જે જીવો નરકગતિમાં જનારા હોય છે તે જીવોને નરકગતિ

वर्तमाना इत्यर्थः३ । समयदण्डके-प्रथमसमयोपपन्नकाः-प्रथमः समय उपपन्नानां येषां ते तथोक्ताः, तद्भिन्ना अप्रथमसमयोपपन्नकाः४। आहारकदण्डके-आहारकाः= आहारपर्याप्तिसम्पन्नाः, तद्भिन्ना अनाहारकाः-विग्रहगतौ त्रसनाडीमपेक्ष्य एकं द्वौ वा समयौ, नाडी वहिर्गत त्रसापेक्षया तु त्रीन् समयानिति भावः५। उच्छ्वासदण्डके=

अवस्था को प्राप्त हो चुके हैं-नारक में वर्तमान हैं-वे अगति समापन्नक हैं ३ इसी तरह का कथन यावत् वैमानिक देवों तक जानना चाहिये समयदण्डक में-प्रथमसमयोपपन्नक और अप्रथमसमयोपपन्नक के भेद से नारक दो प्रकार के हैं जिन उपपन्ननारकों का प्रथम समय होता है वे प्रथम समय उपपन्नक नारक हैं तथा इनसे भिन्न जो नारक हैं वे अप्रथम समय उपपन्नक नारक हैं इसी तरह का कथन यावत् वैमानिक देवों तक जानना चाहिये ४, आहारकदण्डक में-आहारक और अनाहारक के भेद से नैरयिक दो प्रकार के हैं-आहारपर्याप्ति से जो सम्पन्न हैं वे आहारक और जो इनसे भिन्न हैं वे अनाहारक हैं इसी तरह से आहारक और अनाहारकके भेदोंका कथन वैमानिक देवों तक कर लेना चाहिये ५ विग्रहगति में त्रसनाडी की अपेक्षा लेकर एक समय तक दो समय तक और तीन समय तक जीव अनाहारक रहता है तथा त्रस

સમાપન્નક નારકો કહે છે જે જીવો નારક અવસ્થાને પ્રાપ્ત કરી ચુકયા છે, નરકોમા વિદ્યમાન છે-તેમને અગતિ સમાપન્નક કહે છે આ પ્રકારનુ કથન વૈમાનિક પર્યન્તના જીવો વિષે પણ સમજવુ ॥ ૩ ॥

સમય દંડકમા પ્રથમ સમયોપપન્નક અને અપ્રથમ સમયોપપન્નકના ભેદથી બે પ્રકારના નારકો કહ્યા છે જે ઉપપન્ન (ઉત્પન્ન થયેલા) નારકોનો પ્રથમ સમય હોય છે, તે નારકોને પ્રથમ સમય ઉપપન્નક નારકો કહે છે તે નારકોથી ભિન્ન એવા જે નારકો હોય છે તેમને અપ્રથમ ઉપપન્નક નારકો કહે છે એજ પ્રકારનુ કથન વૈમાનિક દેવો પર્યન્તના જીવો વિષે પણ સમજવુ ॥૪॥

આહારક દંડકમાં આહારક અને અનાહારકના ભેદથી નારકોના બે પ્રકાર કહ્યા છે. આહાર પર્યાપ્તિથી યુક્ત જે નારકો હોય છે તેમને આહારક નારકો કહે છે અને તેમનાથી ભિન્ન જે નારકો છે તેમને અનાહારક નારકો કહે છે એજ પ્રમાણે આહારક અને અનાહારકના ભેદોનું કથન વૈમાનિક દેવો પર્યન્તના જીવો વિષે પણ સમજવું. વિગ્રહ ગતિમાં (મોડાવાળી, વળાંકવાળી ગતિમાં) ત્રસનાડીની અપેક્ષાએ એક સમય સુધી, બે સમય સુધી અને ત્રણ સમય સુધી જીવ આહારક રહે છે તથા ત્રસનાડીમાથી બહિર્ગતત્રસની અપેક્ષાએ ત્રણ સમય સુધી અનાહારક રહે છે ॥ ૫ ॥

भभवसिद्धिका अभव्या इत्यर्थं, यावद् वैमानिका । इतिपदं पर्याप्तापर्याप्तकनैरयि करूपाष्टमसूत्रपर्यन्तं वाच्यम् । अनन्तरदण्डके–अनन्तरोपपन्नका"–न विद्यत अन्तरं= समयादि व्यवधान उपपाते येषा ते तथा एकस्मादनन्तरमुत्पन्ना यद्वा विविक्षि तदेशापेक्षया येऽनन्तरतयोत्पन्नास्ते–भाद्या इत्यर्थ, परम्परयोपपन्नाः परम्परोप पन्ना २। गतिदण्डकेगतिसमापन्नका"–नरकं गच्छन्त,इतरे तु नारकत्व माप्ताः नरके

इसी तरह का कथन यावत् वैमानिक देवों तक कर लेना चाहिये १ "यावद् वैमानिकाः" यह पद पर्याप्त अपर्याप्तक नैरयिक रूप ८ वें सूत्र तक कहना चाहिये–अनन्तरदण्डक में नैरयिक दो प्रकार के कहे गये हैं –एक अनन्तरोपपन्नक नैरयिक और दूसरे परम्परोपपन्नक नैरयिक जिनकी उत्पत्ति में समयादिका व्यवधान नहीं होता है–वे अनन्तर उपपन्नक हैं एक नारक की उत्पत्ति के अनन्तर जिनकी उत्पत्ति हो जाती है वे अनन्तर उपपन्नक है । अथवा–विवक्षितदेश की अपेक्षा से जो अनन्तररूप से उत्पन्न हुए हैं वे अनन्तर उपपन्नक हैं । जो परम्परारूप से उत्पन्न होते हैं वे परम्परोपपन्नक नैरयिक हैं । इसी तरह का कथन यावत् वैमानिक तक जानना चाहिये २ गति दण्डक में गतिसमापन्नक और अगतिसमापन्नक के भेद से नारक दो प्रकार के हैं जो जीव नारकगति में जाने वाले हैं वे नारकगति समापन्नकऔर जो नारक

જે નારકો છે–અભવ્ય જે નારકો છે–તેમને અભવસિદ્ધિક કહે છે "યાવદ્ વૈમાનિકાઃ" આ પ્રકારનું કથન વૈમાનિક દેવો પર્યન્તના જીવો વિષે પણ સમજવું "યાવદ્ વૈમાનિકાઃ" આ પદનું કથન પર્યાપ્તક અપર્યાપ્તક નૈરયિકરૂપ ૮ માં સૂત્ર સુધી થવું જોઈએ અનન્તર દંડકમાં નારકો બે પ્રકારના કહ્યા છે–(૧) અનન્તરોપપન્નક નારકો અને (૨) પરમ્પરોપપન્નક નારકો જેમની ઉત્પત્તિમાં સમયાદિનું વ્યવધાન (આંતરો) પડતું નથી, એવાં નારકોને અનન્તર ઉપપન્નક નારકો કહે છે એક નારકની ઉત્પત્તિના અનન્તર (ઉત્પત્તિ બાદ) જેમની ઉત્પત્તિ થઈ જાય છે એવાં નારકોને અનન્તર ઉપપન્નક કહે છે અથવા વિવક્ષિત (અમુક) દેશની અપેક્ષાએ જે અનન્તર રૂપે ઉત્પન્ન થયાં છે તે નારકોને અનન્તરોપપન્નક કહે છે જે નારકો પરમ્પરા રૂપે ઉત્પન્ન થાય છે તેમને પરમ્પરોપપન્નક નારકો કહે છે આ પ્રકારના ભેદોનું કથન વૈમાનિકો પર્યન્તના જીવો વિષે પણ સમજવું ॥ ૨ ॥

ગતિદંડકમાં ગતિ સમાપન્નક અને અગતિ સમાપન્નકના ભેદથી નારકોના બે પ્રકાર કહ્યા છે જે જીવો નરકગતિમાં જનારા હોય છે તે જીવોને નરકગતિ

सञ्ज्ञिनः=मनःपर्याप्तिसंपन्ना ,तद्भिन्ना असञ्ज्ञिनः। 'एवं पंचिंदिया' इत्यादि–एवम् =अमुना प्रकारेण यथा नारका सञ्ज्यसञ्ज्ञिभेदेन द्विविधाः प्रोक्तास्तथा विकलेन्द्रिय-वर्जाः-विकलानि=अपरिपूर्णानि संख्यामाश्रित्य इन्द्रियाणि येषां ते विकलेन्द्रियाः– पृथिव्यादयः पञ्चस्थावराः, द्वित्रि चतुरिन्द्रियाश्च, तान् वर्जयित्वा येऽन्ये चतुर्विं-शतिदण्डके पञ्चेन्द्रियाः असुरादयस्ते सर्वेऽपि सञ्ज्ञिनोऽसञ्ज्ञिनश्च भवन्ति कियद्वधि ? इत्याह–' जाव वाणमंतरा ' इति–यावद् वानव्यन्तरपर्यन्ता इति। नारकादयो वानव्यन्तरावसाना असञ्ज्ञिनो न भवन्ति किन्तु–असञ्ज्ञिभ्य आगत्य नारकादितयोत्पद्यन्ते तदपेक्षया तेषामसञ्ज्ञित्वं विज्ञेयम्। असञ्ज्ञिनश्च मृत्वा

दो प्रकार के कहे गये हैं–एक संज्ञी और दूसरे असंज्ञी इनमें मनः पर्याप्ति से जो सम्पन्न हैं वे संज्ञी और जो मनः पर्याप्ति से युक्त नहीं हैं वे असंज्ञी हैं इसी तरह से इन दो भेदों का कथन यावत् वैमानिक-देवों तक में कर लेना चाहिये " एवं पंचिंदिया " इत्यादि

जिस प्रकार सज्ञी और असंज्ञी के भेद से नारक दो प्रकार के कहे गये हैं उसी प्रकार से विकलेन्द्रियों को–संख्या की अपेक्षा तेइन्द्रिय और चतुरिन्द्रियों को छोड़कर जो चतुर्विंशति दण्डक में और असुर आदि हैं वे सब भी संज्ञी और असंज्ञी होते हैं–सज्ञी असंज्ञी होने का यह कथन वानव्यन्तरदेवों तक जानना चाहिये यद्यपि नारक से लेकर वानव्यन्तर तक सब जीव असंज्ञी नहीं होते हैं किन्तु असंज्ञियों से आकर वे नारकादि रूप से उत्पन्न होते हैं इस अपेक्षा इनमें

સંજ્ઞી દંડકમાં નારકોના બે પ્રકાર કહ્યા છે–(૧) સંજ્ઞી અને (૨) અસંજ્ઞી. જે નારકો મનઃપર્યાપ્તિથી યુક્ત હોય છે તેમને સંજ્ઞી નારકો કહે છે. જે નારકો મનપર્યાપ્તિથી યુક્ત હોતા નથી તેમને અસંજ્ઞી નારકો કહે છે આ પ્રમાણે જ આ બે ભેદોનુ કથન વૈમાનિક દેવો પર્યન્તના જીવો વિષે પણ સમજવું. " एवं पंचिंदिया " ઇત્યાદિ

જેમ સંજ્ઞી અને અસંજ્ઞીના ભેદથી નારકો બે પ્રકારના કહ્યા છે, તેમ વિકલેન્દ્રિયોને છોડીને (દ્વીન્દ્રિયો, તેઇન્દ્રિયો અને ચતુરિન્દ્રિયોને છોડીને) ૨૪ દંડકના જે અસુરકુમાર આદિ બાકીના જીવો છે, તેમના પણ સંજ્ઞી અને અસંજ્ઞીના ભેદથી બે પ્રકાર પડે છે સંજ્ઞી, અસંજ્ઞી રૂપ હોવાનું આ કથન વાનવ્યન્તર દેવો પર્યન્તના બધા જીવો વિષે પણ સમજવુ જોઇએ જો કે નારકથી લઇને વાનવ્યન્તર પર્યન્તના સમસ્ત જીવો અસંજ્ઞી હોતાં નથી, પરન્તુ અસંજ્ઞીઓમાથી આવીને તેઓ નારકાદિ રૂપે ઉત્પન્ન થય છે, તે અપેક્ષાએ

उच्छ्वासका:-उच्छ्वासपर्याप्तिमपन्ना, तदितरे तु नोउच्छ्वासका: ६। इन्द्रियदण्डके सेन्द्रिया:=इन्द्रियपर्याप्तिमन्त:, इतरे इन्द्रियपर्याप्तिविकला:७। पर्याप्तदण्डके-पर्याप्तका: पर्याप्तनामकर्मोदयात्, तद्भिन्ना अपर्याप्तका: ८। संज्ञिदण्डके-

नाड़ी से परिगत त्रस की अपेक्षा लेकर तीन समय तक जीव अनाहारक रहता है उच्छ्वासदण्डकमें नारक दो प्रकार के कहे गये हैं-एक उच्छ्वासक और दूसरे नो उच्छ्वासक जो नारक उच्छ्वासपर्याप्ति से युक्त हैं वे उच्छ्वासक और जो इनसे भिन्न हैं वे नो उच्छ्वासक है इसी प्रकार से इन भेदों का कथन यावत् वैमानिक देवों तक में करना चाहिये ६ इन्द्रियदण्डक में-नारक दो प्रकार के कहे गये हैं-एक सेन्द्रिय और दूसरे अनिन्द्रिय जिनकी इन्द्रिय पर्याप्ति पूर्ण हो चुकी वे सेन्द्रिय हैं और जो इन्द्रिय पर्याप्ति से विकल हैं वे अनिन्द्रिय हैं ७ इसी तरह से इन भेदों का कथन यावत् वैमानिक देवों तक में कर लेना चाहिये पर्याप्तकदण्डक में नैरयिक दो प्रकार के कहे गये हैं-एक पर्याप्तक और दूसरे अपर्याप्तक जिनको पर्याप्तनामकर्मका उदय है वे पर्याप्तक हैं और इनसे भिन्न जो हैं वे अपर्याप्तक हैं ८ इसी तरह से इन दो भेदों का कथन यावत् वैमानिक देवों तक में कर लेना चाहिये संज्ञिदण्डक में-नारक

ઉચ્છ્વાસક દંડકમાં નારક બે પ્રકારના કહ્યા છે-(૧) ઉચ્છ્વાસક અને (૨) નોઉચ્છ્વાસક જે ઉચ્છ્વાસ પર્યાપ્તિથી યુક્ત છે તેમને ઉચ્છ્વાસક કહે છે અને તેમનાથી ભિન્ન જે નારકો છે તેમને નોઉચ્છ્વાસક કહે છે આ પ્રકારના ભેદોનું કથન વૈમાનિક દેવો પર્યન્તના જીવો વિષે પણ સમજવું ૬

ઇન્દ્રિય દંડકમા નારક બે પ્રકારના કહ્યા છે (૧) સેન્દ્રિય અને (૨) અનિન્દ્રિય જે નારકોની ઇન્દ્રિય પર્યાપ્તિ થઈ ચુકી છે તે નારકોને સેન્દ્રિય નારકો કહે છે પરન્તુ જે નારકો ઇન્દ્રિય પર્યાપ્તિથી વિકલ (રહિત) છે તેમને અનિન્દ્રિય કહે છે આ પ્રકારના ભેદોનું કથન વૈમાનિક દેવો પર્યન્તના જીવો વિષે પણ થવુ જોઈએ ॥ ૭ ॥

પર્યાપ્તક દંડકમાં નારકોના બે પ્રકાર કહ્યા છે-(૧) પર્યાપ્તક અને (૨) અપર્યાપ્તક જે નારકોના પર્યાપ્ત નામ કર્મનો ઉદય છે તે નારકોને પર્યાપ્તક નારકો કહે છે અને તેમનાથી જુદા જે નારકો છે તેમને અપર્યાપ્તક નારકો કહે છે એજ પ્રમાણે આ બે ભેદોનું કથન વૈમાનિક દેવો પર્યન્તના જીવો વિષે પણ થવુ જોઈએ ॥ ૮ ॥

सञ्ज्ञिनः=मनःपर्याप्तिसम्पन्नाः,तद्भिन्ना असञ्ज्ञिनः। 'एवं पंचिंदिया' इत्यादि–एवम् =अमुना प्रकारेण यथा नारका सञ्ज्ञ्यसञ्ज्ञिभेदेन द्विविधाः प्रोक्तास्तथा विकलेन्द्रिय-वर्जाः–विकलानि=अपरिपूर्णानि संख्यामाश्रित्य इन्द्रियाणि येषां ते विकलेन्द्रियाः– पृथिव्यादयः पञ्चस्थावराः, द्वित्रि चतुरिन्द्रियाश्च, तान वर्जयित्वा येऽन्ये चतुर्विं-शतिदण्डके पञ्चेन्द्रियाः असुरादयस्ते सर्वेऽपि सञ्ज्ञिनोऽसञ्ज्ञिनश्च भवन्ति कियदवधि ? इत्याह–'जाव वाणमंतरा' इति–यावद् वानव्यन्तरपर्यन्ता इति। नारकादयो वानव्यन्तरावसाना असञ्ज्ञिनो न भवन्ति किन्तु–असञ्ज्ञिभ्य आगत्य नारकादितयोत्पद्यन्ते तदपेक्षया तेषामसञ्ज्ञित्वं विज्ञेयम्। असञ्ज्ञिनश्च मृत्वा

दो प्रकार के कहे गये हैं–एक संज्ञी और दूसरे असंज्ञी इनमें मनः पर्याप्ति से जो सम्पन्न हैं वे संज्ञी और जो मनः पर्याप्ति से युक्त नहीं हैं वे असंज्ञी हैं इसी तरह से इन दो भेदों का कथन यावत् वैमानिक-देवों तक में कर लेना चाहिये "एवं पंचिंदिया" इत्यादि

जिस प्रकार सञ्ज्ञी और असंज्ञी के भेद से नारक दो प्रकार के कहे गये हैं उसी प्रकार से विकलेन्द्रियों को–संख्या की अपेक्षा तेइ-न्द्रिय और चतुरिन्द्रियों को छोड़कर जो चतुर्विंशति दण्डक में और असुर आदि हैं वे सब भी संज्ञी और असंज्ञी होते हैं–सञ्ज्ञी असंज्ञी होने का यह कथन वानव्यन्तरदेवों तक जानना चाहिये यद्यपि नारक से लेकर वानव्यन्तर तक सब जीव असंज्ञी नहीं होते हैं किन्तु असं-ज्ञियों से आकर वे नारकादि रूप से उत्पन्न होते हैं इस अपेक्षा इनमें

સંજ્ઞી દંડકમા નારકોના બે પ્રકાર કહ્યા છે–(૧) સંજ્ઞી અને (૨) અસંજ્ઞી. જે નારકો મન પર્યાપ્તિથી યુક્ત હોય છે તેમને સંજ્ઞી નારકો કહે છે જે નારકો મન પર્યાપ્તિથી યુક્ત હોતા નથી તેમને અસંજ્ઞી નારકો કહે છે આ પ્રમાણે જ આ બે ભેદોનુ કથન વૈમાનિક દેવો પર્યન્તના જીવો વિષે પણ સમજવુ "एव पंचिंदिया" ઇત્યાદિ

જેમ સંજ્ઞી અને અસંજ્ઞીના ભેદથી નારકો બે પ્રકારના કહ્યા છે, તેમ વિકલેન્દ્રિયોને છોડીને (દ્વીન્દ્રિયો, તેઇન્દ્રિયો અને ચતુરિન્દ્રિયોને છોડીને) ૨૪ દંડકના જે અસુરકુમાર આદિ બાકીના જીવો છે, તેમના પણ સંજ્ઞી અને અસંજ્ઞીના ભેદથી બે પ્રકાર પડે છે સંજ્ઞી, અસંજ્ઞી રૂપ હોવાનું આ કથન વાનવ્યન્તર દેવો પર્યન્તના બધા જીવો વિષે પણ સમજવુ જોઇએ જો કે નારકથી લઇને વાનવ્યન્તર પર્યન્તના સમસ્ત જીવો અસંજ્ઞી હોતા નથી, પરન્તુ અસંજ્ઞીઓમાથી આવીને તેઓ નારકાદિ રૂપે ઉત્પન્ન થય છે, તે અપેક્ષાએ

नारकादिषु व्यन्तरावसानेष्वेवोत्पद्यन्ते न तु ज्योतिष्कवैमानिकेषु मतः 'जाव वाणमंतरा' इति प्रोक्तम् ९। भाषकदण्डके—भाषकाः=भाषापर्याप्तिमन्तः, तद्विपरीता अभाषकाः अपर्याप्तावस्थापन्ना इति भाव। एवम्=अमुना प्रकारेण एकेन्द्रियवर्जाः—एकेन्द्रियान् विहाय सर्वे यावत् वैमानिका—वैमानिकपर्यन्ता बोध्या १०। दृष्टिदण्डके सम्यग्दृष्टिका मिथ्यादृष्टिकाश्चेति। एवमेकेन्द्रियवर्जाः सर्वे

असंज्ञिता कही गई जानना चाहिये असंज्ञी जीव मरकर नारक से लेकर व्यन्तरान्त तक के जीवों में ही उत्पन्न होते हैं। ज्योतिष्क वैमानिक देवों में वे उत्पन्न नहीं होते हैं। इसीलिये "जाव वाणमंतरा" ऐसा पाठ कहा गया है भाषादण्डक में नैरयिक दो प्रकार के होते हैं एक भाषक और दूसरे अभाषक भाषापर्याप्तिवाले भाषक और इनसे विपरीत अभाषक हैं अर्थात् अपर्याप्तावस्थावाले हैं वे अभाषक हैं "एवमेकेन्द्रिय वर्जाः सर्वे यावत् वैमानिका १०" इसी तरह का कथन इन दोनों का एकेन्द्रिय जीवों को छोड़कर वैमानिकदेवों तक कर लेना चाहिये दृष्टि दण्डक में नैरयिक दो प्रकार के होते हैं एक सम्यग्दृष्टिक और दूसरे मिथ्यादृष्टिक एकेन्द्रिय जीवों को छोड़कर यावत् वैमानिक देवों तक सब में सम्यग्दृष्टित्व का और मिथ्यादृष्टित्व का कथन कर लेना चाहिये यहां एकेन्द्रियों को छोड़ा गया है उसका कारण उनमें सम्यग्द

તે જીવોમાં અસંજ્ઞીતા કહેવામાં આવી છે, એમ સમજવું અસંજ્ઞી જીવો મરીને નારકથી લઇને વ્યન્તર પર્યન્તના જીવોમાં જ ઉત્પન્ન થાય છે જ્યોતિષ્ક અને વૈમાનિક દેવોમાં તેઓ ઉત્પન્ન થતાં નથી તેથી "जाव वाणमंतरा" "વાનવ્યન્તરો પર્યન્તના જીવો" એવો પૂર્વોક્ત સૂત્રપાઠ આપવામાં આવ્યો છે ૯ ભાષા દંડકમાં નારકોના બે પ્રકાર કહ્યા છે–(૧) ભાષક અને (૨) અભાષક ભાષા પર્યાપ્તિવાળાને ભાષક કહે છે અને ભાષા પર્યાપ્તિ વિનાના નારકોને અભાષક કહે છે એટલે કે અપર્યાપ્તાવસ્થાવાળા નારકો અભાષક હોય છે 'एवमेकेन्द्रियवर्जाः सर्वे यावत् वैमानिकाः" આ પ્રકારના બે ભેદોનું કથન એકેન્દ્રિયો સિવાયના બાકીના વૈમાનિકો પર્યન્તના સમસ્ત જીવો વિષે પણ સમજવું જોઇએ ॥ ૧૦ ॥

દૃષ્ટિ દંડકમાં નારકો બે પ્રકારના કહ્યાં છે–(૧) સમ્યગ્દૃષ્ટિ અને (૨) મિથ્યાદૃષ્ટિ આ પ્રકારના બે ભેદોનું કથન એકેન્દ્રિયો સિવાયના બાકીના સમસ્ત વૈમાનિકો પર્યન્તના જીવો વિષે ગ્રહણ કરવું એકેન્દ્રિયોમાં સમ્યગ્દૃષ્ટિ

यावद् वैमानिकाः, एकेन्द्रियाणां सम्यक्त्वं नास्ति। द्वीन्द्रियादीनां तु सास्वादन-सम्यक्त्वं भवेदपीति-' एगिंदियवज्जा ' इत्युक्तम् ११। संसारिदण्डके-परीतसंसारिकाः-परीतः=परिमितः संसारो येषां ते तथोक्ताः संक्षिप्तभवा इत्यर्थः। अनन्तसांसारिकाः-अनन्तः=अन्तरहितः अभव्यापेक्षया संसारो येषां ते तथा, यावद् वैमानिकाः१२। स्थितिदण्डके-संख्येयकालसमयस्थितिकाः-कालः-मृत्युरपिस्यात्, समयः-आचारोऽपि स्यादित्यत कालश्चासौ समयश्चेति कालसमयः, संख्येयः वर्षप्रमाणतः कालसमयो यस्यां सा संख्येयकालसमया, सा स्थितिः=अवस्थानं येषां ते तथोक्ताः दशसहस्रवर्षादिस्थितिमन्त इत्यर्थः, तद्भिन्नास्तु-असंख्येयकाल-

ष्टित्व का अभाव है तथा जो द्वीन्द्रियादिक जीव हैं उनमें सास्वादन सम्यक्त्व हो भी सकता है इसीलिये इस प्रकरण में " एगिंदिय वज्जा " ऐसा कहा गया है संसारदण्डक में नैरयिक दो प्रकार के कहे गये हैं-एक परीतसांसारिक और दूसरे अनन्तसांसारिक जिनका संसार परिमित रह गया हैं वे परीतसांसारिक हैं, अर्थात् संक्षिप्त रूपवाले नैरयिक परीतसांसारिक हैं अभव्यापेक्षा से जिनका संसार अन्तरहित है वे अनन्तसांसारिक नैरयिक हैं, इसी तरह का कथन यावत् वैमानिक जीवों तक में जानना चाहिये १२ स्थितिदण्डक में नैरयिक दो प्रकार के कहे गये हैं-एक संख्यातकाल समय स्थितिक दूसरे असंख्यातकाल समय स्थितिक काल नाम मृत्यु का भी है और समय नाम आचार का भी है अतः ऐसा काल समय यहां विवक्षित नहीं हुआ है किन्तु कालरूप

त्वनो अभाव होय छे तेथी तेमने अहीं ग्रहण करवानो निषेध कर्यो छे. तथा जे द्वीन्द्रियादिक जीवो छे, तेमनामां सास्वादन सम्यक्त्व पण होई शके छे तेथी अहीं " एगिंदिय वज्जा " " एकेन्द्रियो सिवायना " जीवोमा ज आ भेदो ग्रहण करवानु सूचन थयुं छे ॥ ११ ॥

संसारी दंडकमा नारकोना बे प्रकार कह्या छे-(१) परीत सांसारिक अने (२) अनन्त सांसारिक जेमनो संसार परिमित रही गयो छे एवां नारकोने परीत सांसारिक कहे छे अने अभव्यत्वनी अपेक्षाए जे नारकोनो संसार अन्तरहित छे, एवा नारकोने अनन्त सांसारिक कहे छे आ प्रकारना भेदोनुं कथन वैमानिको पर्यन्तना जीवो विषे ग्रहण करवु जोईए. ॥ १२ ॥

स्थिति दंडकमा नारको बे प्रकारना कह्यां छे-(१) संख्यातकाल समय स्थितिक (२) असंख्यातकाल समय स्थितिक " काळ " शब्द मृत्युना अर्थमां पण वपराय छे ' समय ' शब्द आचारना अर्थमां पण वपराय छे. परन्तु अहीं एवा काळसमयनी वात करी नथी, परन्तु काळरूप समय द्वारा वर्ष

समयस्थितिकाः पल्योपमासङ्ख्येयभागादिस्थितिमन्त इत्यर्थः । एवं नारकवत् एकेन्द्रियविकलेन्द्रियवर्जा पञ्चेन्द्रियाः=असुरादयो विज्ञेया यावद् वानव्यन्तराः । एते सङ्ख्यातासङ्ख्यातकालसमयस्थितिकोभयस्वभावा भवन्ति, ज्योतिष्क वैमानिकास्तु न तथा, तेषां नियमाद्-असङ्ख्यातकालसमयस्थितिकत्वात् १३ । बोधिदण्डके-सुलभबोधिकाः-सुलभा = सुप्रापा बोधिः=जिनधर्मप्राप्तिर्येषां ते तथा, तद्भिन्ना दुर्लभबोधिकाः, यावत् वैमानिकाः १४ । पाक्षिकदण्डके-शुक्लो विशुद्ध

समय से वर्षप्रमाण की अपेक्षा लेकर जिस स्थिति में अवस्थान में संख्यात काल का समय है ऐसी स्थिति जिनकी है वे नारक संख्यात काल समयस्थितिक हैं अर्थात् दश हजारवर्ष आदि की स्थितिवाले नारक संख्यातकाल समय स्थितिक कहे गये हैं और जिनकी स्थिति पल्योपम असंख्येय भागादि रूप है वे असंख्यातकालसमयस्थितिक नारक हैं। एकेन्द्रिय एवं विकलेन्द्रियों को छोड़कर पञ्चेन्द्रिय असुरादिकों में यावत् वानव्यन्तरों में भी इसी प्रकार का कथन जानना चाहिये क्यों कि ये संख्यात और असंख्यात काल की दोनों प्रकार की स्थितिवाले होते हैं। तथा ज्योतिष्क और वैमानिकदेव संख्यातकाल की स्थितिवाले नहीं होते हैं ये तो नियम से असंख्यात काल की ही स्थितिवाले होते हैं१३। बोधिदण्डकमें-नैरयिकजीव सुलभबोधिक और दुर्लभबोधिक दोनों प्रकार के होते हैं १४। जिन्हें जिनधर्म प्राप्तिरूप बोधि सुलभ है वे सुलभबोधिक हैं और जो इनसे भिन्न हैं वे दुर्लभ बोधिक हैं। सुलभबोधिक

પ્રમાણુની અપેક્ષાએ જે સ્થિતિમાં-અવસ્થાનમાં સંખ્યાતકાળના સમય વ્યતીત થાય છે એવી સ્થિતિવાળા નારકોને સંખ્યાતકાળ સમય સ્થિતિક કહે છે એટલે કે દશ હજાર વર્ષ આદિની સ્થિતિવાળાં નારકોને સંખ્યાતકાળ સ્થિતિક કહેવામાં આવ્યાં છે, અને જેમની સ્થિતિ પલ્યોપમ અસંખ્યેય ભાગાદિ રૂપ છે તેમને અસંખ્યાતકાળ સમય સ્થિતિક નારકો કહ્યા છે એકેન્દ્રિયો અને વિકલેન્દ્રિયો સિવાયના અસુરકુમારોથી લઈને વાનવ્યન્તર પર્યન્તના જીવોમાં આ બે ભેદોનું કથન થવું જોઈએ, કારણ કે તેઓ સંખ્યાત અને અસંખ્યાત એ બન્ને પ્રકારની સ્થિતિવાળા હોય છે જ્યોતિષ્ક અને વૈમાનિક દેવો સંખ્યાત કાળની સ્થિતિવાળા હોતા નથી, તેઓ તો નિયમથી જ અસંખ્યાત કાળની સ્થિતિવાળા હોય છે ॥ ૧૩ ॥

બોધિ દંડકમાં નારકોના બે પ્રકાર કહ્યા છે-(૧) સુલભ બોધિક અને (૨) દુર્લભ બોધિક જેમને જિનધર્મ પ્રાપ્તિરૂપ બોધિ સુલભ છે તે નારકોને સુલભ બોધિક કહે છે, જેમને તે દુર્લભ છે તેમને દુર્લભ બોધિક કહે છે આ

स्वात् पक्षः=अभ्युपगमो येषां ते तथा, यद्वा-शुक्लानाम्=अस्तिकत्वेन विशुद्धानां पक्षो=वर्गः शुक्लपक्ष'. तत्र भवाः शुक्लपाक्षिकाः-अपार्द्धपुद्गलपरावर्त्ताभ्यन्तरीभूत-संसारा इत्यर्थः । तद्विपरीताः कृष्णपाक्षिकाः, यावद् वैमानिकाः १५ । चरम-दण्डके-चरमाः-येषां नारकादिभवश्चरमस्ते तथा, ते पुनर्नरकादि भवे नोत्प-त्स्यन्ते सिद्धिगमनात् । तदितरे त्वचरमा इति १६ । एवमेते षोडश दण्डकाः ॥ सू० २२ ॥

और दुर्लभबोधिक का यह कथन यावत् वैमानिकदेवों तक में भी इसी प्रकार से जानना चाहिये पाक्षिकदण्डक में नैरयिक जीव शुक्लपाक्षिक और कृष्णपाक्षिक के भेद से दो प्रकार के होते हैं विशुद्ध होने से शुक्ल जिनका पक्ष अभ्युगम मान्यता है वे शुक्लपाक्षिक हैं अथवा-आस्तिक होने से विशुद्धों का जो पक्ष वर्ग है इस वर्ग में जो हों वे शुक्लपाक्षिक हैं इन शुक्लपाक्षिक जीवों का संसार अर्धपुद्गल परावर्तन के भीतर वाला हो जाता है इनसे भिन्न जो होते हैं वे कृष्णपाक्षिक नारक हैं इसी प्रकार के शुक्लपाक्षिक और कृष्णपाक्षिक यावत् वैमानिक तक होते हैं १५ चरमदण्डक में-चरम और अचरम के भेद से नैरयिक दो प्रकार के होते हैं नारकादि रूप भव जिन का चरम होता है-फिर से नारकादि भव में जो उत्पन्न नहीं होते हैं वे चरमनैरयिक हैं ये चर-मनैरयिक नारकपर्याय को छोड़कर मनुष्यपर्याय लेकर सिद्धि में गमन करने वाले होने के कारण पुनः नारकादि भव को ग्रहण नहीं करते हैं।

બન્ને ભેદોનું કથન વૈમાનિક દેવો પર્યન્તના જીવોમા પણ ગ્રહણ કરવુ જોઈએ ૧૪

પાક્ષિક દડકમા નારકો બે પ્રકારના કહ્યા છે-(૧) શુકલપાક્ષિક અને (૨) કૃષ્ણપાક્ષિક. વિશુદ્ધ હોવાથી શુકલ જેમનો પક્ષ (અભ્યુગમ, માન્યતા) છે, તેમને શુકલપાક્ષિક કહે છે. અથવા આસ્તિક હોવાથી જેઓ વિશુદ્ધોના સમૂહમા ગણી શકાય એવા છે તેમને શુકલ પાક્ષિક કહે છે. તેમનો સસાર વધારેમાં વધારે અર્ધપુદ્ગલ પરાવર્તન કાળ પ્રમાણ હોય છે તેમનાથી ભિન્ન જે નારકો છે તેમને કૃષ્ણપાક્ષિક કહે છે આ બન્ને ભેદોવાળા જીવો વૈમાનિક દેવો પર્યન્તના જીવોમાં હોય છે ॥ ૧૫ ॥

ચરમ દડકમા નારકો બે પ્રકારના કહ્યા છે-(૧) ચરમ નારક અને (૨) અચરમ નારક. નારકાદિ રૂપ ભવ જેમનો ચરમ (અન્તિમ) હોય છે, જે જીવો ફરીથી નારકાદિ ભવમાં ઉત્પન્ન થવાના નથી, તે જીવોને ચરમ નારક કહે છે. જેમ ચરમ નારકો નરક ગતિમાથી મનુષ્ય ગતિમા જઈને સિદ્ધિ પ્રાપ્ત

समयस्थितिकाः पल्योपमासंख्येयभागादिस्थितिमन्त इत्यर्थः । एवं नारकवत् एकेन्द्रियविकलेन्द्रियवर्जाः पञ्चेन्द्रियाः=असुरादयो विज्ञेया यावद् वानव्यन्तराः। एते संख्यातासंख्यातकालसमयस्थितिकपोभयस्वभावा भवन्ति, ज्योतिष्क वैमानिकास्तु न तथा, तेषां नियमाद्-असंख्यातकालसमयस्थितिकत्वात् १३ । बोधिदण्डके-सुलभबोधिकाः-सुलभा = सुप्रापा बोधिः=जिनधर्मप्राप्तिर्येषां ते तथा, तद्भिन्ना दुर्लभबोधिका , यावत् वैमानिकाः १४ । पाक्षिकदण्डके-शुक्लो विशुद्ध

समय से वर्षप्रमाण की अपेक्षा लेकर जिस स्थिति में अवस्थान में संख्यात काल का समय है ऐसी स्थिति जिनकी है वे नारक संख्यात काल समयस्थितिक हैं अर्थात् दश हजारवर्ष आदि की स्थितिवाले नारक संख्यातकाल समय स्थितिक कहे गये हैं और जिनकी स्थिति पल्योपम असंख्येय भागादि रूप है वे असंख्यातकालसमयस्थितिक नारक हैं। एकेन्द्रिय एवं विकलेन्द्रियों को छोड़कर पञ्चेन्द्रिय असुरादिकों में यावत् वानव्यन्तरों में भी इसी प्रकार का कथन जानना चाहिये क्यों कि ये संख्यात और असंख्यात काल की दोनों प्रकार की स्थितिवाले होते हैं। तथा ज्योतिष्क और वैमानिकदेव संख्यातकाल की स्थितिवाले नहीं होते हैं ये तो नियम से असंख्यात काल की ही स्थितिवाले होते हैं१३। बोधिदण्डकमें-नैरयिकजीव सुलभबोधिक और दुर्लभबोधिक दोनों प्रकार के होते हैं १४। जिन्हें जिनधर्म प्राप्तिरूप बोधि सुलभ है वे सुलभबोधिक हैं और जो इनसे भिन्न हैं वे दुर्लभ बोधिक हैं। सुलभबोधिक

પ્રમાણની અપેક્ષાએ જે સ્થિતિમાં-અવસ્થાનમાં સંખ્યાતકાળનો સમય વ્યતીત થયા છે એવી સ્થિતિવાળા નારકોને સંખ્યાતકાળ સમય સ્થિતિક કહે છે એટલે કે દશ હજાર વર્ષ આદિની સ્થિતિવાળાં નારકોને સંખ્યાતકાળ સ્થિતિક કહેવામાં આવ્યાં છે અને જેમની સ્થિતિ પલ્યોપમ અસંખ્યેય ભાગાદિ રૂપ છે તેમને અસંખ્યાતકાળ સમય સ્થિતિક નારકો કહ્યા છે એકેન્દ્રિયો અને વિકલેન્દ્રિયો સિવાયના અસુરકુમારોથી લઈને વાનવ્યન્તર પર્યન્તના જીવોમાં આ બે ભેદોનું કથન થવું જોઈએ, કારણ કે તેઓ સંખ્યાત અને અસંખ્યાત એ બન્ને પ્રકારની સ્થિતિવાળા હોય છે જ્યોતિષ્ક અને વૈમાનિક દેવો સંખ્યાત કાળની સ્થિતિવાળા હોતા નથી, તેઓ તો નિયમથી જ અસંખ્યાત કાળની સ્થિતિવાળા હોય છે ॥ ૧૩ ॥

બોધિ દંડકમાં નારકોના બે પ્રકાર કહ્યા છે-(૧) સુલભ બોધિક અને (૨) દુર્લભ બોધિક જેમને જિનધર્મ પ્રાપ્તિરૂપ બોધિ સુલભ છે તે નારકોને સુલભ બોધિક કહે છે, જેમને તે દુર્લભ છે તેમને દુર્લભ બોધિક કહે છે આ

एवं पभासइ, विकुव्वइ, परियारेइ, भासं भासइ, आहारेइ, परिणामइ, वेदेइ, निज्जरेइ ९। दोहिं ठाणेहिं देवे सद्दाइं सुणेइ, सव्वेण वि देवे सद्दाइं सुणेइ जाव निज्जरेइ १४। मरुया देवा दुविहा पण्णत्ता तंजहा–एगसरीरा चेव विसरीरा चेव, एवं किन्नरा, किंपुरिसा, गंधव्वा, णागकुमारा, सुवन्नकुमारा, अग्गिकुमारा, वाउकुमारा, ८। देवा दुविहा पण्णत्ता तंजहा–एगसरीरा चेव विसरीरा चेव ॥सू० २४ ॥

वीयट्ठाणस्स वीओ उद्देसओ समत्तो ॥ २–२ ॥

छाया—द्वाभ्यां स्थानाभ्यामात्मा अधोलोकं जानाति पश्यति, तद्यथा–समवहतेन चैव आत्मना आत्मा अधोलोकं जानाति पश्यति, असमवहतेन चैव आत्मना आत्मा अधोलोकं जानाति पश्यति। यथावधिः समवहतासमवहतेन चैव आत्मना आत्मा अधोलोकं जानाति पश्यति १। एवं तिर्यग्लोकम् २ ऊर्ध्वलोकम्३ केवलकल्पलोकम् ४। द्वाभ्यां स्थानाभ्यामात्माऽधोलोकं जानाति पश्यति, तद्यथा–विकुर्वितेन चैव आत्मनाआत्मा अधोलोकं जानाति पश्यति, अविकुर्वितेन चैव आत्मना आत्मा अधोलोकं जानाति पश्यति। यथावधिः विकुर्विताविकुर्वितेन चैव आत्मनाआत्मा अधोलोकं जानाति पश्यति। १। एवं तिर्यग्लोकम्२ ऊर्ध्वलोकम् ३, केवलकल्प लोकम्४। द्वाभ्यां स्थानाभ्यामात्मा शब्दान् शृणोति, तद्यथा–देशेनापि आत्मा शब्दान् शृणोति, सर्वेणापि आत्मा शब्दान् शृणोति १, एवं रूपाणि पश्यति २, गन्धान्–आजिघ्रति ३, रसान् आस्वादयति ४, स्पर्शान् प्रतिसंवेदयति ५। द्वाभ्यां स्थानाभ्यामात्माऽवभासते, तद्यथा–देशेनापि आत्मा अवभासते सर्वेणापि आत्मा अवभासते १, एवं प्रभासते २, विकुर्वति ३, परिचारयति ४, भाषां भाषते ५, आहारयति ६, परिणमयति ७, वेदयति ८, निर्जरयति ९। द्वाभ्यां स्थानाभ्यां देवः शब्दान् शृणोति – देशेनापि देवः शब्दान् शृणोति सर्वेणापि देवः शब्दान् शृणोति यावत् निर्जरयति १४। मरुतो देवा द्विविधाः प्रज्ञप्तास्तद्यथा–एकशरीरा द्विश्चैवशरीराश्चैव। १। एवं किन्नराः २, किंपुरुषाः३, गन्धर्वाः४, नागकुमाराः५, सुवर्णकुमाराः६, अग्निकुमारा ७, वायुकुमारा ८। देवाद्विविधाः प्रज्ञप्तास्तद्यथा–एकशरीराश्चैव द्विशरीराश्चैव ॥ सू० २४ ॥

॥ द्वितीयस्थानस्य द्वितीय उद्देशकः समाप्तः ॥ २–२ ॥

प्राग् वैमानिकाश्चरमाचरमत्वेनोक्ताः, तेषाञ्चविनाऽधोलोकादीन् यानपि पश्यन्तीति सद्वेदने जीवस्य प्रकारद्वयमाह—

सूत्रम्—दोहिं ठाणेहिं आया अहोलोगं जाणइ, पासइ, तं जहा समोहएणं चेव अप्पाणेणं आया अहोलोगं जाणइ, पासइ । असमोहएणं चेव अप्पाणेणं आया अहोलोगं जाणइ, पासइ, आहोही समोहया समोहएणं चेव अप्पाणेणं आया अहोलोगं जाणइ, पासइ, १ । एव तिरियलोगं २ उड्ढलोगं ३ केवलकप्पलोगं ४ । दोहिं ठाणेहिं आया अहोलोग जाणइ, पासइ, त जहा विउव्विएणं चेव अप्पाणेणं आया अहोलोगं जाणइ, पासइ, अविउव्विएणं चेव अप्पाणेणं आया अहोलोग जाणइ, पासइ । अहोही विउव्विया विउव्विएणं चेव अप्पाणेणं आया अहोलोग जाणइ, पासइ १ एव तिरियलोग २। उड्ढ लोग ३, केवलकप्प लोग४ । दोहिं ठाणेहिं आया सद्दाइ सुणेइ तं जहा-देसेणवि आया सद्दाइ सुणेइ, सव्वेण वि आया सद्दाइ सुणेइ, एव रूवाइ पासइ, गंधाइ अग्घाइ, रसाइ आसाएइ, फासाइ पडिसंवेदेइ ५ । दोहिं ठाणेहिं आया ओभासइ, तं जहा—देसेण वि आया ओभासइ, सव्वेणवि आया ओभासइ,

---

इन से भिन्न जो नारक हैं वे अचरम हैं। इस प्रकार से ये १६ दण्डक हैं इसी तरह का कथन यावत् वैमानिकों तक में जानना चाहिये।सू०२३।

કરનારા હોય છે તે કારણે તેઓ નારકાદિ ભવ ફરી ગ્રહણ કરતા નથી તેમનાથી ભિન્ન જે નારકો હોય છે તેમને અચરમ નારકો કહે છે આ પ્રકારના કથને સેરોનું કથન વૈમાનિક દેવો પર્યન્તના જીવો વિષે પણ ગ્રહણ કરવું જોઈએ. ૧૬ આ પ્રકારના ૧૬ દંડકોનું કથન અહીં પૂરૂ થાય છે ॥ ૨૩ ॥

एवं पभासइ, विकुव्वइ, परियारेइ, भासं भासइ, आहारेइ, परिणामइ, वेदेइ, निज्जरेइ ९। दोहिं ठाणेहिं देवे सद्दाइं सुणेइ, सव्वेण वि देवे सद्दाइं सुणेइ जाव निज्जरेइ १४। मरुया देवा दुविहा पण्णत्ता तंजहा–एगसरीरा चेव बिसरीरा चेव, एवं किन्नरा, किंपुरिसा, गंधव्वा, णागकुमारा, सुवन्नकुमारा, अग्गिकुमारा, वाउकुमारा, ८। देवा दुविहा पण्णत्ता तंजहा–एगसरीरा चेव बिसरीरा चेव ॥सू० २४॥

बीयट्ठाणस्स बीओ उद्देसओ समत्तो ॥ २–२ ॥

छाया—द्वाभ्यां स्थानाभ्यामात्मा अधोलोकं जानाति पश्यति, तद्यथा–समवहतेन चैव आत्मना आत्मा अधोलोकं जानाति पश्यति, असमवहतेन चैव आत्मना आत्मा अधोलोकं जानाति पश्यति। यथावधिः समवहतासमवहतेन चैव आत्मना आत्मा अधोलोकं जानाति पश्यति।१। एवं तिर्यग्लोकम् २ ऊर्ध्वलोकम् ३ केवलकल्पलोकम् ४। द्वाभ्यां स्थानाभ्यामात्माऽधोलोकं जानाति पश्यति, तद्यथा–विकुर्वितेन चैव आत्मनाऽऽत्मा अधोलोकं जानाति पश्यति, अविकुर्वितेन चैव आत्मना आत्मा अधोलोकं जानाति पश्यति। यथावधिः विकुर्विताविकुर्वितेन चैव आत्मनाऽऽत्मा अधोलोकं जानाति पश्यति। १। एवं तिर्यग्लोकम् २ ऊर्ध्वलोकम् ३, केवलकल्प लोकम् ४। द्वाभ्यां स्थानाभ्यामात्मा शब्दान् शृणोति, तद्यथा–देशेनापि आत्मा शब्दान् शृणोति, सर्वेणापि आत्मा शब्दान् शृणोति १, एवं रूपाणि पश्यति २, गन्धान्–आजिघ्रति ३, रसान् आस्वादयति ४, स्पर्शान् प्रतिसंवेदयति ५। द्वाभ्यां स्थानाभ्यामात्माऽवभासते, तद्यथा–देशेनापि आत्मा अवभासते सर्वेणापि आत्मा अवभासते १, एवं प्रभासते २, विकुर्वति ३, परिचारयति ४, भाषां भाषते ५, आहारयति ६, परिणमयति ७, वेदयति ८, निर्जरयति ९। द्वाभ्यां स्थानाभ्यां देवः शब्दान् शृणोति – देशेनापि देवः शब्दान् शृणोति सर्वेणापि देवः शब्दान् शृणोति यावत निर्जरयति १४। मरुतो देवा द्विविधाः प्रज्ञप्तास्तद्यथा–एकशरीरा द्विश्चैवशरीराश्च। १। एवं किन्नराः २, किंपुरुषाः३, गन्धर्वाः४, नागकुमाराः५, सुवर्णकुमाराः६, अग्निकुमारा ७, वायुकुमारा ८। देवाद्विविधाः प्रज्ञप्तास्तद्यथा–एकशरीराश्चैव द्विशरीराश्चैव ॥ सू० २४ ॥

॥ द्वितीयस्थानस्य द्वितीय उद्देशकः समाप्तः ॥ २–२ ॥

टीका–' दोहिं ठाणेहिं ' इत्यादि ।

सूत्रचतुष्टयम् द्वाभ्यां स्थानाभ्यां प्रकाराभ्यामात्मगताभ्याम् आत्मा=अवधिधारी जीवः अधोलोकं जानाति–अवधिज्ञानेन, पश्यति–अवधिदर्शनेन तयथा–समवहतेन= कृतवैक्रियसमुद्घातेन आत्मना, आत्मा=जीवः अधोलोकं जानाति पश्यति, असमवहतेन=वैक्रियसमुद्घातरहितेन आत्मना आत्मा अधोलोकं जानाति पश्यतीत्याह–' आहोही '–त्यादि–' आहोही ' यथावधिः–यथा=यत्प्रकारोऽवधिर्यस्य स तथा, यद्वा–'अधोऽवधि ' इतिच्छाया, तत्र अधः=परमावधेरधोवर्ती–अव-

वैमानिक चरम और अचरम होते हैं ऐसा कहा गया है ये वैमानिक अवधिज्ञान से अधोलोक आदि को जानते हैं और देखते हैं सो वेद (जान ने) में जीव के दो प्रकार होते हैं वही अब प्रकट किया जाता है–" दोहिं ठाणेहिं आया अहोलोग जाणइ पासइ "

" दोहिं ठाणेहिं) इत्यादि चार सूत्र हैं आत्मगत दो प्रकारों से आत्मा अवधिज्ञानधारी जीव अपने को अविधिज्ञान द्वारा जानता है और अवधिदर्शन द्वारा उसे देखता है वह अवधिज्ञानी जीव समव हत और असमवहतके भेद से दो प्रकार का होता है वैक्रियसमुद्घात जब वह करता है तब वह समवहत और वैक्रियसमुद्घात से रहित असमवहत कहलाता है दोनों ही अवस्थाओं में वर्तमान वह अवधि धारी आत्मा अधोलोक को जानता और देखता है अवधिज्ञान अनेक प्रकार का होता है अत " आहोही " इत्यादि सूत्रपाठ द्वारा सूत्रकार

પહેલાં એવો ઉલ્લેખ થયો છે કે વૈમાનિકો ચરમ પણ હોય છે અને અચરમ પણ હોય છે તે વૈમાનિકો પોતાના અવધિજ્ઞાનથી અધોલોક આદિને જાણે છે અને દેખે છે આ વેદ (જાણવા) ની અપેક્ષાએ જીવના બે પ્રકાર હોય છે સૂત્રકાર હવે એજ વાતને પ્રકટ કરે છે—

' दोहिं ठाणेहिं आया अहोलोग जाणइ पासइ

" दोहिं ठाणेहिं ' ઇત્યાદિ ચાર સૂત્ર છે આત્મગત બે પ્રકારે આત્મા (અવધિજ્ઞાનધારી જીવ) પોતાના અવધિજ્ઞાન દ્વારા અધોલોકને જાણે છે અને અવધિદર્શન દ્વારા તેને દેખે છે તે અવધિજ્ઞાની જીવ બે પ્રકારના હોય છે (૧) સમવહત અને અસમવહત. જ્યારે તે વૈક્રિય સમુદ્ઘાત કરે છે ત્યારે તેને સમવહત કહે છે, અને જ્યારે તે વૈક્રિય સમુદ્ઘાતથી રહિત હોય છે ત્યારે તેને અસમવહત કહે છે આ બન્ને પ્રકારની અવસ્થાવાળો અવધિજ્ઞાની આત્મા અધોલોકને જાણે છે અને દેખે છે

धिर्यस्य स तथा। नियतक्षेत्रविषयावधिज्ञानीत्यर्थः। स समवहतासमवहतेन=कदाचित् समवहतेन कदाचिद् असमवहतेनेत्यर्थः,आत्मना जीवोऽधो लोकं जानाति पश्यति। एवम्=अधोलोकवत् स तिर्यग्लोकम् ऊर्ध्वलोकम् , तथा-केवलकल्पं-समय भाषया परि-पूर्ण-चतुर्दशरज्ज्वात्मकं लोकमपि च जानाति पश्यति ४। वैक्रियसमुद्घातान-न्तरं वैक्रियशरीरं भवतीति वैक्रियशरीरमाश्रित्याधोलोकादिज्ञाने प्रकारद्वयमाह- ' दोहिं ठाणेहिं ' इत्यादि-सूत्रचतुष्टयं कण्ठ्यम् , नवरम्-विकुर्वितेन=कृतवैक्रिय-शरीरेण आत्मनेत्यर्थः, अविकुर्वितेन-तद्भिन्नेन अकृतवैक्रियशरीरेणेत्यर्थः। उक्तं

यह प्रकट कर रहे हैं कि-जैसे अवधिज्ञानधारी जीव का अवधिज्ञान जिस प्रकार का होता है अथवा परमावधि से अधोवर्ती अवधिज्ञान जिसको होता है ऐसा वह जब नियतक्षेत्र और नियतविषय को अव-धिज्ञान द्वारा जानता है और देखता है इस प्रकार नियतक्षेत्र विषया-वधिज्ञानी आत्मा कदाचित् समवहत होकर और कदाचित् असमवहत होकर अधोलोक को जानता है, और देखता है इसी तरह से वह तिर्यग्लोक को और केवलकल्प सम्पूर्ण लोक को भी कि जो १४ राजू का है जानता है और देखता है४ वैक्रियसमुद्घात के अनन्तर ही वैक्रि-यशरीर होता है इसलिये अब सूत्रकार वैक्रियशरीर को लेकर अधो-लोकादिके ज्ञान में दो प्रकारका कथन करते हैं "दोहिं ठाणेहिं" इत्यादि ४ चार सूत्र हैं-इन सब का अर्थ स्पष्ट है परन्तु जो विशेषता है आत्मा जब कृत वैक्रियशरीर से युक्त होता है तब और जब आत्मा

અવધિજ્ઞાન અનેક પ્રકારનું હોય છે હવે સૂત્રકાર "आहोही" ઈત્યાદિ સૂત્રો દ્વારા એ પ્રકટ કરે છે કે-અવધિજ્ઞાનધારી જીવનું અવધિજ્ઞાન જે પ્રકા-રનું હોય છે અથવા પરમાવધિથી અધોવર્તી (ઉતરતી કોટિનુ) અવધિજ્ઞાન જેનું હોય છે એવો જીવ નિયતક્ષેત્ર અને નિયત વિષયને અવધિજ્ઞાન દ્વારા જાણે છે અને દેખે છે આ પ્રકારનો નિયતક્ષેત્ર અને નિયત-વિષયાવધિજ્ઞાની આત્મા ક્યારેક સમવહત થઈને અને ક્યારેક સમવહત થયા વિના અધોલોકને જાણે છે અને દેખે છે એજ પ્રમાણે તે તિર્યગ્લોકને, ઉર્ધ્વલોકને અને ૧૪ રાજૂપ્રમાણ કેવલકલ્પ (સંપૂર્ણ) લોકને પણ જાણે છે અને દેખે છે સૂ ૪

વૈક્રિય સમુદ્ઘાતની પછી જ વૈક્રિય શરીર થાય છે. તેથી સૂત્રકારે હવે વૈક્રિય શરીરની અપેક્ષાએ અધોલોકાદિના જ્ઞાનમાં દ્વિવિધતાનું કથન કરે છે—

"दोहिं ठाणेहिं" આ વિષયને અનુલક્ષીને પણ ચાર સૂત્ર આપવામાં આવ્યા છે તે બધાનો અર્થ સ્પષ્ટ છે, પરન્તુ જે વિશેષતા છે તે નીચે પ્રમાણે છે-આત્મા જ્યારે કૃત ક્રિય શરીરથી યુક્ત નથી હોતો ત્યારે પણ પોતાના

नोइन्द्रियप्रत्यक्षमवधिज्ञानम् , सांप्रतमिन्द्रियप्रत्यक्षज्ञानमाह–' दोहिं ठाणेहिं ' इत्यादि पञ्चसूत्री–द्वाभ्यां स्थानाभ्यामात्मा शब्दान् शृणोति । तदेव स्थानद्वयमाह देशेनापि–सर्वेणापि चेति । तत्र देशेन–एकश्रोत्रेण–द्वितीयस्योपघातात् शब्दान् शृणोति, तथा–सर्वेण–श्रोत्रद्वयेन चेति । यद्वा–देशेन–श्रोत्रेन्द्रियमात्रेण, तथा सर्वेण–संभिन्नश्रोतोलब्ध्यपेक्षया सर्वैरपीन्द्रियैः शब्दान् शृणोति १ । एवं चक्षुरिन्द्रियादिष्वपि विज्ञेयम् । नवरं जिह्वादेशस्य पक्षाघातादि रोगणोपघाताद्देशेनास्वा

फ्रेन वैक्रियशरीर से युक्त नहीं होता है तब भी वह अपने अवधिज्ञान से अलोक आदि को जानता है और देखता है इस तरह नोइन्द्रियप्रत्यक्ष रूप जो अवधिज्ञान है उसके विषय में यह कहा है अब इन्द्रिय जन्य जो प्रत्यक्षज्ञान है उस के विषय में सूत्रकार कहते हैं–" दोहिं ठाणेहिं " इत्यादि–यह पञ्चसूत्री है दो स्थानों द्वारा आत्मा शब्दादिको सुनता है वे दो स्थान इस प्रकार से हैं–एक देशरूप स्थान और दूसरा सर्वरूप स्थान एक कान के उपघात होने से शब्द को एक कान से सुनना यह देशरूप स्थान है तथा श्रोत्रद्वय से सुनना यह सर्वदेशरूप स्थान है अथवा श्रोत्रेन्द्रिय मात्र के द्वारा जो आत्मा शब्दों को सुनता है वह एक देशरूप स्थान है तथा संभिन्नश्रोतोपलब्धि की अपेक्षा से सब ही इन्द्रियों से शब्दादिकों को जो सुनता है वह सर्वदेशरूप स्थान है इसी तरह का कथन चक्षु आदि इन्द्रियों के विषय में भी जानना चाहिये तथा जब पक्षाघात से जिह्वा का एक देश आघातित हो जाता

અવધિજ્ઞાનથી અલોક આદિને જાણે છે અને દેખે છે આ રીતે ઇન્દ્રિય પ્રત્યક્ષરૂપ જે અવધિજ્ઞાન છે તેના વિષયમાં આ કથન કરવામાં આવ્યું છે હવે સૂત્રકાર ઇન્દ્રિયજન્ય જે પ્રત્યક્ષજ્ઞાન છે તેને વિષે નીચે પ્રમાણે કહે છે—

" દોહિં ઠાણેહિં " ઇત્યાદિ પાંચ સૂત્રો અહીં આપવામાં આવ્યાં છે બે સ્થાનો દ્વારા આત્મા શબ્દાદિકોને સાંભળે છે તે બે સ્થાન નીચે પ્રમાણે છે

(૧) દેશરૂપ (અંશરૂપ) સ્થાન–અને (૨) સર્વરૂપ સ્થાન શબ્દ એક કાને અથડાય અને એક જ કાને સંભળાય તેને દેશરૂપ સ્થાનથી શ્રવણ કર્યું ગણાય છે બન્ને કાનથી શ્રવણ કરવું તેનું નામ સર્વદેશરૂપ સ્થાનથી શ્રવણ ગણાય છે અથવા માત્ર શ્રોત્રેન્દ્રિય દ્વારા જ આત્મા જે શબ્દોને સાંભળે છે તેને એક દેશરૂપ સ્થાન કહે છે તથા સંભિન્ન શ્રોતોપલબ્ધિની અપેક્ષાએ બધી જ ઇન્દ્રિયોથી આત્મા શબ્દાદિકોનું જે શ્રવણ કરે છે તેનું નામ સર્વ દેશરૂપ સ્થાન છે આ પ્રકારનું કથન ચક્ષુ આદિ ઇન્દ્રિયોના વિષયમાં પણ સમજવું તથા જ્યારે જીભનો એક ભાગ પક્ષઘાતથી નકામો થઈ જાય છે,

दयतीति ५। शब्दश्रवणादयो जीवपरिणामा उक्ताः, संप्रति तत्प्रस्तावात्तत्परिणामान्तराण्याह–' दोहिं ठाणेहिं ' इत्यादि–द्वाभ्यां स्थानाभ्याम् आत्मा=जीवः अवभासते=द्योतते, देशेन सर्वेण चेति। तत्र देशेन खद्योतवत् , सर्वेण प्रदीपवत् । यद्वा –अवभासते=जानाति देशतोऽवध्यादिना, सर्वतः केवलज्ञानेन १। एवं–प्रभासते =प्रकर्षेण द्योतते २। विकरोति–देशतो हस्तादिवैक्रियकरणेन, सर्वतः सर्वदेहस्य

है–तब वह अपने एकदेश से ही इस का आस्वाद लेती है–सर्वदेश से नहीं शब्दश्रवण आदि जीव के परिणाम हैं–सो इनके विषय में तो कह दिया गया है–अब इसी सम्बन्ध को लेकर सूत्रकार उनके परिणामान्तरों का कथन करते हैं–" दोहिं ठाणेहिं " इत्यादि–दो स्थानों द्वारा आत्मा एक देश से और सर्वदेश से चमकता है प्रकाशित होता है वह खद्योत की तरह एक देश से और दीपक की तरह सर्वदेश से प्रकाशित होता है अथवा–" अवभासते " क्रियापद का अर्थ " जानता है " ऐसा भी होता है–सो इस पक्ष में वह अवधि आदि ज्ञान द्वारा जो जानता है उसका वह जानना देश से जानना है तथा केवलज्ञान द्वारा जो जानता है वह जानना उसका सर्वदेश से जानना है इसी तरह से आत्मा दो तरह से प्रकर्षरूप से द्योतित होता है २ इसी तरह आत्मा देश और सर्वरूप से विक्रिया करता है हस्तादिकों की विक्रिया करना यह देश से विक्रिया करना है और समस्तदेह की विक्रिया

ત્યારે તે જીભના એક ભાગથી (પક્ષઘાત રહિત ભાગથી) જ રસાસ્વાદ લે છે. ત્યારે જીભ પોતાના સર્વ ભાગોથી રસાસ્વાદ કરી શકતી નથી

શબ્દશ્રવણ આદિ જીવનાં પરિણામો છે, તેમના વિષે તો કહી દેવામાં આવ્યુ છે. હવે સૂત્રકાર આ સબધને જ અનુલક્ષીને તેમના પરિણામાન્તરોને પ્રકટ કરે છે–" दोहिं ठाणेहिं " ઇત્યાદિ. બે સ્થાનો દ્વારા આત્મા એક દેશથી (અંશત) અથવા સર્વદેશથી (સપૂર્ણત) ચમકે છે–પ્રકાશિત થાય છે તે પતગિયાની જેમ એક દેશથી અથવા દીપકની જેમ સર્વ દેશથી પ્રકાશિત થાય છે અથવા–" अवभासते " ક્રિયાપદનો " જાણે છે " એવો પણ અર્થ થાય છે આ પ્રકારનો અર્થ ગ્રહણ કરવામાં આવે તો અહીં નીચે પ્રમાણે અર્થ સમજવો–આત્મા અવધિજ્ઞાન આદિ દ્વારા જે જાણે છે તે દેશત જાણે છે, પરતુ કેવળજ્ઞાન દ્વારા જે જાણે છે તે સર્વ દેશથી (સપૂર્ણ રૂપે) જાણે છે. એજ પ્રમાણે આત્મા બે રીતે પ્રકર્ષરૂપે દ્યોતિત (પ્રકાશિત) થાય છે એજ પ્રમાણે આત્મા દેશરૂપે અને સર્વરૂપે વિક્રિયા કરે છે. હસ્ત આદિની વિક્રિયા

वैक्रियकरणेन ३। परिचारयति-मैथुनं सेवते देशेन मनोयोगादीनामन्यतमेन, सर्वेण-योगत्रयेणेति ४। भाषां भाषते-देशेन जिह्वाग्रादिना, सर्वेण-समस्तैस्ता ल्वादिस्थानैः५। आहारयति-देशेन मुखमात्रेण, सर्वेण-ओज आहारापेक्षया ६। परिणमयति-परिणामं मापयति आहारमेव खलरसभागेन, तत्र देशेन भक्ताश्रय

करना यह सर्वदेशसे विक्रिया करना है इसी प्रकार जीव-" परिचा रयति " एक देश से और सर्वदेश से मैथुन सेवन करता है-मनोयोगादि तीन में से किसी एक के द्वारा मैथुन सेवन करना यह एकदेश से मैथुन सेवन करना है और तीनों योगों द्वारा मैथुन सेवन करना यह सर्वदेश से मैथुन सेवन करना है ४ इसी तरह आत्मा जीव एकदेश से और सर्वदेश से भाषा बोलता है जिह्वाग्रादि द्वारा भाषा बोलना यह एक देश से भाषा का बोलना है, और समस्त तात्वादि स्थानों द्वारा भाषा बोलना यह सर्वदेश से भाषा का बोलना है ५ इसी तरह जीव देशरूप से और सर्वरूप से आहारग्रहण करता है मुखमात्र से आहारग्रहण करना इसका नाम देश से आहारग्रहण करना है और ओज आहार की अपेक्षा से सर्वशरीर से आहारग्रहण करना यह सर्वदेश से आहारग्रहण करना है इसी तरह से जीव गृहीत आहार को खलरस भाग रूप में एक देश से और

કરવી તેનું નામ દેશતા વિક્રિયા છે અને સમસ્ત શરીરની વિક્રિયા કરવી તેનું નામ સર્વદેશતઃ વિક્રિયા છે "परिचारयति" આ ક્રિયાપદ દ્વારા એ પ્રકટ કરવામાં આવ્યું છે કે આત્મા એક દેશથી અથવા સર્વદેશથી મૈથુનનું સેવન કરે છે મનોયોગ આદિ ત્રણ યોગમાંથી કોઈ પણ એક દ્વારા મૈથુનનું સેવન કરવું તેનું નામ એક દેશથી મૈથુન સેવન છે અને ત્રણે યોગો દ્વારા મૈથુનનું સેવન કરવું તેનું નામ સર્વ દેશથી મૈથુન સેવન છે (૪) એજ પ્રમાણે આત્મા (જીવ) એક દેશથી અને સર્વ દેશથી ભાષા બોલે છે એક દેશથી ભાષા બોલવી એટલે જિહ્વાગ્ર આદિ એક સ્થાનથી ભાષા બોલવી, સર્વ દેશથી ભાષા બોલવી એટલે તાળવા આદિ સમસ્ત સ્થાનો દ્વારા ભાષા બોલવી. (૫) એજ રીતે જીવ દેશરૂપે અને સર્વરૂપે આહાર ગ્રહણ કરે છે માત્ર મુખ દ્વારાજ આહાર ગ્રહણ કરવો તેનું નામ દેશરૂપે આહાર ગ્રહણ કર્યો કહેવાય છે એજ આહારની અપેક્ષાએ આત્મા સમસ્ત શરીર દ્વારા જે આહાર ગ્રહણ કરે છે તેને સર્વરૂપે આહાર ગ્રહણ કર્યો કહેવાય છે (૬) એજ પ્રમાણે જીવ પોતાના દ્વારા ગ્રહણ કરાયેલા આહારને ખલરસ ભાગ રૂપે

देशस्य प्लीहादिना रुद्धत्वात्, अन्यथा सर्वेणेति ७। वेदयति-अनुभवति देशेन=हस्ताद्यवयवविशेषेण, सर्वेण-सर्वावयवैः परिणमितान् आहारपुद्गलान् इष्टानिष्टपरिणामतः ८। निर्जरयति-त्यजति-आहारितान् परिणमितान् वेदितान् आहारपुद्गलान् देशेन-अपानादिना, सर्वेण-सर्वशरीरेणैव प्रस्वेदवदिति ९। (१४) अथ वैतानि शब्दादि स्पर्शपर्यन्तानि पञ्च, तथा 'अवभासते' इत्यारभ्य निर्जरयति,-

सर्वदेश से परिणमाता है भक्ताशय जब प्लीहा लीवर रोग आदि से रुद्ध होता है तब गृहीत आहारको जीव एकदेश से खलरसभागरूप में परिणमाता है और जब ऐसा नहीं होना है तब वह गृहीत आहार को सर्वदेश से खलरसभागरूप में परिणमाता है ७ इसी तरह जीव परिणमित आहार पुद्गलों को इष्टानिष्ट परिणाम के रूप में एकदेश से और सर्वदेश से अनुभव करता है हस्तादि अवयवविशेष द्वारा अनुभव करना एकदेश से अनुभव करना है और सर्वावयवों द्वारा जो अनुभव करना है वह सर्वदेश से अनुभव करना है इसी तरह जीव आहारित परिणमित, वेदित आहारपुद्गलों को अपान आदिरूप एकदेश द्वारा और प्रस्वेदादि की तरह सर्वशरीर द्वारा छोड़ना है अथवा शब्द से लेकर स्पर्शान्त तक के सूत्र तथा "अवभासते" से लेकर निर्जरयति तक के ९ सूत्र ये सब १४ सूत्र विवक्षित वस्तु की अपेक्षा

(લોહીમાં ભળે એવા તત્ત્વો) એક દેશથી પણ પરિણમાવે છે અને સર્વ દેશથી પણ પરિણમાવે છે જ્યારે પાચનક્રિયા કરનારા જઠર, કાળજું, આંતરડા આદિ અંગોમાના કોઈ પણ અંગો કોઈ રોગને કારણે કામ કરી શકતાં નથી, ત્યારે ગૃહીત આહારને જીવ એક દેશથી ખલરસભાગ રૂપે પરિણમાવે છે, પણ જ્યારે એવું બનતું નથી ત્યારે જીવ ગૃહીત આહારને સર્વ દેશોથી ખલરસ ભાગરૂપે પરિણમાવે છે (૭) એજ પ્રમાણે પરિણમિત આહાર પુદ્ગલોને જીવ ઇષ્ટાનિષ્ટ પરિણામ રૂપે એક દેશથી પણ અનુભવે છે અને સર્વ દેશોથી પણ અનુભવે છે હાથ આદિ અવયવ વિશેષ દ્વારા અનુભવ કરવો તેનું નામ "એક દેશથી અનુભવ કરવો", અને બધાં અવયવો દ્વારા જે અનુભવ કરાય છે તેનું નામ "સર્વ દેશથી અનુભવ કરવો" ગણાય છે. (૮) એજ પ્રમાણે જીવ આહારિત, પરિણમિત, અને વેદિત આહાર પુદ્ગલોને અપાન આદિરૂપ એક દેશથી અથવા પ્રસ્વેદ આદિ રૂપે સર્વ શરીર દ્વારા છોડે છે (૯).

અથવા શબ્દથી લઈને સ્પર્શાન્ત સુધીના પાંચ સૂત્ર તથા "અવભાસતે" થી લઈને નિર્જરયતિ" સુધીના નવ સૂત્ર મળીને ૧૪ સૂત્ર બને છે. આ ૧૪ સૂત્રો

इत्यन्तानि नव एवमेतयो सङ्कलनेन चतुर्दशापि सूत्राणि विवक्षितविषयवस्त्वपेक्षया विज्ञेयानि । अयमत्र विवेक- देशेनापि-देशतोऽपि शृणोति-बहुषु शब्देषु कांश्चित् शब्दान् शृणोति, सर्वेणापि-सर्वतोऽपि सामस्त्येन सर्वान् शब्दान् शृणोतीति १ । एवं रूपादिष्वपि भावनीयम् १४ ।

उक्तं सामान्यतः श्रवणादिकम्, विशेषविवक्षायां देवानां भाषा प्राधान्यमित्याह-' दोहिं ठाणेहिं ' इत्यादि-चतुर्दशसूत्री द्वाभ्यां स्थानाभ्यां देवः शब्दान् शृणोति-देशेनापि सर्वेणापि, विवक्षितशब्दादिविषयवस्त्वपेक्षया देशतः सर्वतो

से जानना चाहिये इसका अभिप्राय ऐसा है-अनेक शब्दों में से यह जीव जो कि कितनेक शब्दों को सुनता है वह उसका सुनना देश से सुनना है और जब समस्त शब्दों को सुनता है सो वह सुनना उसका सर्वदेश से सुनना है इसी तरह का कथन रूपादिकों के विषय में भी कर लेना चाहिये १४

सामान्यरूप से यह श्रवणादिक का कथन किया है अब सूत्रकार विशेषविवक्षा को आश्रित करके देवों की प्रधानता से इनका कथन करते हैं-" दोहिं ठाणेहिं " इत्यादि-चतुर्दश सूत्री है-दो स्थानों को लेकर देव शब्दों को सुनता है ये दो स्थान एकदेश और सर्वदेशरूप हैं देव एकदेशरूप से भी शब्दों को सुनता है और सर्वदेशरूप से भी शब्दों को सुनता है अर्थात् विवक्षित शब्दादि विषयरूप वस्तु की

વિવક્ષિત (અમુક) વસ્તુની અપેક્ષાએ સમજવા જોઈએ. આ કથનનું તાત્પર્ય એવું છે કે-અનેક શબ્દોમાંથી આ જીવ જે કેટલાક શબ્દોને સાંભળે છે, તે (તેમને સાંભળવાની) ક્રિયાને દેશરૂપ શ્રવણ કહે છે, અને જ્યારે તે સમસ્ત શબ્દોને સાંભળે છે ત્યારે તેના દ્વારા તેમનું જે શ્રવણ થાય છે તેને સર્વદેશથી થયેલું શ્રવણ કહેવાય છે એજ પ્રકારનું કથન રૂપાદિકોના વિષયમાં પણ સમજી લેવું ॥ ૧૪ ॥

સામાન્ય રૂપે આ શ્રવણાદિકનું કથન અહીં કરવામાં આવ્યું છે હવે સૂત્રકાર દેવોની પ્રધાનતાની અપેક્ષાએ તેમનું વિશેષ કથન કરે છે—

' દોહિં ઠાણેહિં ' ઇત્યાદિ ૧૪ સૂત્રો અહીં આપવામાં આવ્યાં છે— બે સ્થાનો દ્વારા દેવ શબ્દોને શ્રવણ કરે છે-(૧) એક દેશથી અને (૨) સર્વદેશથી એટલે કે એક દેશરૂપે પણ દેવ શબ્દોને સાંભળે છે અને સર્વદેશરૂપે પણ શબ્દોને સાંભળે છે આ કથનનું તાત્પર્ય એ છે કે....શબ્દાદિ વિષયરૂપ વસ્તુની અપેક્ષાએ તે દેવ દેશની અપેક્ષાએ શબ્દોને શ્રવણ કરે છે અને સમસ્ત

वा श्रृणोति यावत् निर्जरयति । व्याख्या सुगमा १४ । पूर्वोक्ता भावाः शरीरे सत्येव संभवन्तीति देवानां प्रधानत्वात्तेषामेव व्यक्तित शरीरप्ररूपणामाह ' मरुया ' इत्याद्यष्टसूत्री । मरुतोदेवाः द्विविधाः-एकशरीरा द्वि शरीराश्चेति । तत्र मरुतो देवा लोकान्तिकदेवविशेषाः सन्ति, ते चैकशरीरिणः-विग्रहगतौ कार्मणशरीरत्वात् । उपपातानन्तरं वैक्रियशरीरसद्भावाद् द्विशरीरिणो भवन्ति । यद्वा-भवधारणीयापेक्षयैकशरीरिणः, उत्तरवैक्रियापेक्षया तु द्विशरीरिणः १ । एवं किन्नरादयः सप्तापि देवाः बोध्याः, । तत्र किन्नरा किंपुरुषा गन्धर्वाश्चेते त्रयो व्यन्तराः, शेषाः नागकुमाराः, सुपर्णकुमाराः, अग्निकुमाराः, वायुकुमाराश्चेति चत्वारो

अपेक्षा वह देव देश से और सर्व समस्त शब्दों को सुनने की अपेक्षा सर्वदेश से शब्दों को सुनता है इसी तरह का कथन यावत् " निर्जरयति " तक देव के सम्बन्ध को लेकर जान लेना चाहिये इन १४ सूत्रों की व्याख्या सुगम है ये सब सुनने आदिरूप भाव शरीर के होने पर ही हो सकते हैं अतः व्यक्तिरूप से कौन से देव कितने शरीरवाले होते हैं यह बात अब सूत्रकार प्रकट करते हैं-मरुत-देव-दो प्रकार के होते हैं एक एकशरीरवाले और दूसरे दो शरीरवाले मरुदेव लोकान्तिक देवविशेष हैं ये एक शरीरधारी होते हैं अर्थात् विग्रहगति में एक ही कार्मण शरीर रहता है इस अपेक्षा ये एकशरीरवाले होते हैं तथा उपपात के बाद वैक्रियशरीर का सद्भाव हो जाने से ये दो शरीरवाले होते हैं। अथवा भवधारणीय शरीर की अपेक्षा ये एक शरीरवाले होते हैं और उत्तर वैक्रिय शरीर की अपेक्षा ये दो शरीरवाले होते हैं। इसी

શબ્દોને શ્રવણ કરવાની અપેક્ષાએ તે દેવ સર્વદેશથી શબ્દોનું શ્રવણ કરે છે એજ પ્રકારનું કથન ' निर्जरयति " પર્યન્તના પદોને અનુલક્ષીને, દેવોના વિષયમાં અહીં સમજી લેવું આ ૧૪ સૂત્રોની વ્યાખ્યા સરળ છે

શ્રવણ આદિ રૂપ ભાવોનુ અસ્તિત્વ વિના શરીર સભવી શકતું નથી. આ ભાવોનુ અસ્તિત્વ શરીરયુક્ત જીવોમા જ સભવી શકે છે તેથી સૂત્રકાર હવે એ વાત પ્રકટ કરે છે કે કયા કયા દેવો કેટલા શરીરવાળા હોય છે—

મરૂતદેવ બે પ્રકારના હોય છે-(૧) એક શરીરવાળા અને (૨) બે શરીરવાળા. મરૂતદેવ લોકાન્તિક દેવવિશેષ છે તેઓ એક શરીરધારી પણ હોય છે, એટલે કે વિગ્રહગતિમાં એક કાર્મણ શરીરનો જ સદ્‌ભાવ રહે છે તે કારણે વિગ્રહગતિ દરમિયાન તેઓ એક જ શરીરવાળા હોય છે પણ ઉપપાત બાદ વૈક્રિય શરીરનો પણ સદ્‌ભાવ રહે છે, તેથી ઉપપાત બાદ તેમનામા બે શરીરોનો સદ્‌ભાવ રહે છે. અથવા ભવધારણીય શરીરની અપેક્ષાએ તેઓ એક શરીરવાળા હોય છે અને ઉત્તર વૈક્રિય શરીરની અપેક્ષાએ બે શરીરવાળા

भवनपतय ८। परिगणितभेदग्रहणं भेदान्तरोपलक्षणं, न तु व्यवच्छेदार्थम्, सर्वे जीवानां विग्रहगतावेकशरीरत्वात् अन्यदा-उत्पत्तौ-द्वि शरीरत्वादिति। सामान्यत आह-' देवा दुविहा ' इत्यादि। व्याख्या सुगमा ॥ सू० २४ ॥

इति श्री विश्वविख्यात-जगद्वल्लभ-प्रसिद्धवाचक-पञ्चदशभाषाकलित
ललितकलापालापक-प्रविशुद्धगद्यपद्यनैकग्रन्थनिर्मापक-वादिमा-
नमर्दक श्रीशाहूछत्रपति कोल्हापुरराजप्रदत्त जैनशास्त्राचार्य'पद
भूषित कोल्हापुरराजगुरु बालब्रह्मचारि जैनाचार्य-जैनधर्म-
दिवाकर-पूज्यश्री-घासीलालव्रतिविरचितायां
स्थानाङ्गसूत्रस्य सुधाख्यायां व्याख्यायाम्
द्वितीयस्थानस्य द्वितीयोद्देशकः समाप्तः ॥२-२॥

तरह से किन्नर आदि सात देवोंके सम्बन्धमें भी जानना चाहिये इनमें किन्नर, किम्पुरुष और गन्धर्व ये तीन व्यन्तरदेव हैं नागकुमार, सुवर्ण कुमार अग्निकुमार और वायुकुमार ये चार भवनपति देव हैं। इन परि गणित भेदोंका जो यहां ग्रहण हुआ है वह अन्य भेदोंको ग्रहण करनेके लिये ही हुआ है उनके व्यवच्छेदके लिये नहीं हुआ है जितने भी जीव होते हैं उन सबको विग्रहगति में एक ही शरीर होता है और उपपातके समय उनके दो शरीर होते हैं। "देवा द्विविधाः प्रज्ञप्ताः" ऐसा जो कहा गया है कि देव दो प्रकार के होते हैं एक एकशरीरवाले और दूसरे दो शरीरवाले सो यह कथन सामान्यरूप से कहा गया है ॥ सू०२४ ॥

श्री जैनाचार्य-जैनधर्मदिवाकर-पूज्यश्री घासीलालव्रतिविरचित स्थानाङ्ग सूत्रकी सुधानामक टीकार्थका दूसरेस्थानकका द्वितीय उद्देशक समाप्त॥२ २॥

હોય છે આ પ્રકારનું કથન કિન્નર આદિ સાત પ્રકારના દેવો વિષે પણ સમજવું તેમાંના કિન્નર, કિંપુરુષ અને ગંધર્વ આ ત્રણ વ્યન્તર દેવો છે અને બાકીના નાગકુમાર સુવર્ણકુમાર અગ્નિકુમાર અને વાયુકુમાર, એ ચાર ભવનપતિ દેવો છે અહીં ગણાવવામાં આવેલા જે ભેદોને ગ્રહણ કરાયા છે, તે અન્ય ભેદોને ગ્રહણ કરવા માટે જ ગણાવ્યા છે, તેમનો વ્યવચ્છેદ કરવાને માટે અહીં તેમને ગણાવવામાં આવેલ નથી. જેટલા જીવો હોય છે તે બધાંને વિગ્રહગતિમાં એક જ શરીર હોય છે અને ઉપપાતને સમયે તેમને બે શરીર હોય છે " દેવા દ્વિવિધા પ્રજ્ઞપ્તા " દેવ બે પ્રકારના હોય છે (૧) એક શરીરવાળા અને (૨) શરીરવાળા. " આ પ્રકારનું જે કથન અહીં કરવામાં આવ્યું છે તે સામાન્યરૂપે કરવામાં આવ્યું છે એમ સમજવું જોઇએ સૂ ૨૪

શ્રી જૈનાચાર્ય-જૈનધર્મદિવાકર-પૂજ્ય શ્રી ઘાસીલાલ મુનિવિરચિત સ્થાનાંગસૂત્રની સુધા નામની ટીકાના બીજા સ્થાનકનો બીજો ઉદ્દેશક સમાપ્ત. ॥ ૨-૨ ॥

अथ तृतीयोद्देशकः प्रारभ्यते—

उक्तो द्वितीयोद्देशकः, सम्प्रति तृतीयः प्रारभ्यते, अस्य द्वितीयेन सहायमभिसम्बन्धः—अनन्तरोद्देशके जीवपदार्थोऽनेकविधः प्रोक्त', अत्र तु तदुपग्राहकपुद्गलजीवधर्मक्षेत्रद्रव्यलक्षणपदार्थप्ररूपणा प्रोच्यते, इत्येवं सम्बन्धेनायातस्यास्येदमादिमं सूत्राष्टकम्, तत्राऽन्तिमसूत्रेणास्यायं सम्बन्धः—इह द्वितीयोद्देशकस्यान्त्यसूत्रे देवानां शरीरप्ररूपणाकृता, शरीरवांश्च शब्दादिग्राहको भवतीत्यत्र शब्दस्तावन्निरूप्यते—

दूसरे स्थानकका तीसरा उद्देशा

द्वितीय उद्देशक का कथन किया जा चुका है अब तृतीय उद्देशक का कथन प्रारम्भ होता है इसका द्वितीय उद्देशक के साथ सम्बन्ध ऐसा है कि अनन्तर द्वितीय उद्देशक में जीव पदार्थ अनेक प्रकार का कहा गया है सो अब इस तृतीय उद्देशक में तदुपग्राहक पुद्गल धर्म जीवधर्म क्षेत्र और द्रव्य इन पदार्थों की प्ररूपणा की जाती है इस उद्देशक का जो आदिम सूत्राष्टक है उसका द्वितीय उद्देशक के अन्तिम सूत्र के साथ ऐसा सम्बन्ध है कि वहां देवों के शरीर की प्ररूपणा की गई है सो यहां अब ऐसा प्रकट करना है कि जो शरीरवाला होता है वही शब्दादिकों का ग्राहक होता है इसी कारण यहां शब्दों का सर्व प्रथम प्ररूपण सूत्रकार कर रहे हैं—" दुविहे सद्दे पन्नत्ते " इत्यादि ॥ सू० २५ ॥

બીજા સ્થાનકનો ત્રીજો ઉદ્દેશક—

બીજો ઉદ્દેશક પૂરો થયો. હવે ત્રીજા ઉદ્દેશકનો પ્રારંભ થાય છે આ ઉદ્દેશકનો બીજા ઉદ્દેશક સાથે આ-પ્રકારનો સંબંધ છે—

બીજા ઉદ્દેશકમાં જીવ પદાર્થ અનેક પ્રકારના કહ્યાં છે. હવે આ ત્રીજા ઉદ્દેશકમાં તદુપગ્રાહક પુદ્ગલ ધર્મ, જીવધર્મ, ક્ષેત્ર અને દ્રવ્ય, આ પદાર્થોની પ્રરૂપણા કરવામાં આવી છે. આ ઉદ્દેશાની શરૂઆતમાં જે સૂત્રાષ્ટક છે તેનો બીજા ઉદ્દેશાના અન્તિમ સૂત્રની સાથે આ પ્રકારનો સંબંધ છે-પહેલા ઉદ્દેશકના છેલ્લા સૂત્રમાં દેવોના શરીરની રૂપણા કરવામા આવી છે. જેઓ શરીરવાળા હોય છે, તેઓ જ શબ્દાદિકોને ગ્રહણ કરનારા હોય છે. આ સંબંધને અનુલક્ષીને સૂત્રકારે અહી સૌથી પહેલા શબ્દોની પ્રરૂપણા કરી છે.

" दुविहे स पन्नत्ते " ઇત્યાદિ ॥ સૂ. ૨૫ ॥

मूलम्—दुविहे सद्दे पण्णत्ते तं जहा भासासद्दे चेव णो भासासद्दे चेव। १। भासासद्दे दुविहे पण्णत्ते तं जहा अक्खर सबद्धे चेव नोअक्खरसबद्धे चेव। २। णोभासासद्दे दुविहे पण्णत्ते, तं जहा आउज्जसद्दे चेव, णोआउज्जसद्दे चेव। ३। आउज्जसद्दे दुविहे पण्णत्ते, तं जहा तते चेव वितते चेव। ४। तते दुविहे पण्णत्ते, तं जहा घणे चेव झुसिरे चेव। एवं वितते वि। ६। णोआउज्जसद्दे दुविहे पण्णत्ते, तं जहा-भूसणसद्दे चेव नोभूसणसद्दे चेव। ७। णोभूसणसद्दे दुविहे पण्णत्ते, तं जहा तालसद्दे चेव, लत्तियासद्दे चेव। ८। दोहिं ठाणेहिं सद्दुप्पाए सिया, तं जहा साहन्नताणं चेव पुग्गलाणं सद्दुप्पाए सिया। भिज्जताणं चेव पोग्गलाणं सद्दुप्पाए सिया ॥सू०२५॥

छाया—द्विविधः शब्दः प्रज्ञप्तस्तद्यथा-भाषाशब्दश्चैव नोभाषाशब्दश्चैव। भाषाशब्दो द्विविधः प्रज्ञप्तस्तद्यथा – अक्षरसबद्धश्चैव नोअक्षरसबद्धश्चैव। नो भाषाशब्दो द्विविधः प्रज्ञप्तस्तद्यथा–आतोद्यशब्दश्चैव नोआतोद्यशब्दश्चैव। आतोद्यशब्दो द्विविधः प्रज्ञप्तस्तद्यथा–ततश्चैव विततश्चैव। ततो द्विविधः प्रज्ञप्तस्तद्यथा घनश्चैव शुषिरश्चैव। एवं विततोऽपि। नोआतोद्यशब्दो द्विविधः प्रज्ञप्तस्तद्यथा-भूषणशब्दश्चैव नोभूषणशब्दश्चैव। नोभूषणशब्दो द्विविधः प्रज्ञप्तस्तद्यथा–ताल-शब्दश्चैव लत्तिकाशब्दश्चैव। द्वाभ्यां स्थानाभ्यां शब्दोत्पादः स्यात्, तद्यथा-संहन्यमानानां चैव पुद्गलानां शब्दोत्पादः स्यात्, भिद्यमानानां चैव पुद्गलानां शब्दो त्पादः स्यात् ॥ सू० २५ ॥

टीका—'दुविहे सद्दे' इत्यादि सूत्रार्थः सुगमम्। नवरम्-भाषाशब्दः= भाषापर्याप्तिनामकर्मोदयापादितो जीवशब्दः, तदन्यस्तु नोभाषाशब्दः १।

टीकार्थ–शब्द दो प्रकारका कहा गया है–एक भाषाशब्द और दूसरा नो भाषाशब्द भाषाशब्द भी दो प्रकारका कहा गया है एक अक्षर सम्बद्ध दूसरा

શબ્દના નીચે પ્રમાણે બે પ્રકાર કહ્યા છે–(૧) ભાષાશબ્દ અને (૨) નો ભાષાશબ્દ ભાષાશબ્દના પણ નીચે પ્રમાણે બે પ્રકાર કહ્યા છે–(૧) અક્ષર સબદ્ધ

भाषाशब्दोऽपि द्विविधः-अक्षरसम्बद्धः=वर्णव्यक्तियुक्तः, इतरो नोअक्षरसम्बद्ध २। आतोद्यं=दुन्दुभ्यादि, तस्य यः शब्दः स आतोद्यशब्दः, अन्यो वंशस्फोटादिजन्यः शब्दो नोआतोद्यशब्दः ३। ततः-वीणादिजनितः शब्दः, विततः=पटहादिजनितः

नो अक्षर सम्बद्ध इनमें जो नो भाषाशब्द है वह भी दो प्रकारका कहा गया है-एक आतोद्यशब्द और दूसरा नोआतोद्यशब्द आतोद्यशब्द भी दो प्रकार का कहा गया है-एक तत और दूसरा वितत तत भी घन और शुषिर के भेद से दो प्रकार का कहा गया है इसी प्रकार से वितत भी दो प्रकार का कहा गया है नोआतोद्य शब्द भी दो प्रकार का कहा गया है एक भूषण का शब्द और दूसरा नोभूषण का शब्द, नो भूषणशब्द भी दो प्रकार का कहा गया है एक तालशब्द और दूसरा लतिका शब्द दो स्थानोंसे शब्दोत्पाद होता है एक तो जब पुद्गल संहन्यमान (टकराना) होते हैं तब शब्दोत्पाद होता है और दूसरे जब वे भिद्यमान (भेदन) होते हैं तब शब्दोत्पाद होता है, पुद्गलके अनु और स्कन्धभेदों की अवान्तर जातियां २३ हैं इन में एक भाषा वर्गणा भी है ये भाषा वर्गणाएँ लोक में सर्वत्र व्याप्त हैं जिस वस्तु से ध्वनि निकलती है उस वस्तु में कंपन होनेके कारण इन भाषा पुद्गलवर्गणाओंमें भी कंपन होता है, जिससे तरंगे उत्पन्न होती हैं ये तरगे ही उत्तरोत्तर पुद्गलवर्गणाओं में कम्पन पैदा

અને (૨) નોઅક્ષર સંબદ્ધ વળી નો ભાષ શબ્દના પણ આ બે પ્રકાર કહ્યા છે-(૧) આતોદ્ય શબ્દ અને (૨) નોઆતોદ્ય શબ્દ આતોદ્ય શબ્દના પણ બે પ્રકાર કહ્યા છે-(૧) તત અને (૨) વિતત તતના પણ બે ભેદ છે-(૧) ઘન અને (૨) શુષિર. એજ પ્રમાણે વિતતના પણ બે ભેદ કહ્યા છે નોઆતોદ્ય શબ્દના પણ બે પ્રકાર કહ્યા છે-(૧) ભૂષણ શબ્દ અને (૨) નો ભૂષણ શબ્દ. નો ભૂષણ શબ્દના પણ બે ભેદ કહ્યા છે-(૧) તાલ શબ્દ અને (૨) લતિકા શબ્દ.

બે સ્થાનો દ્વારા શબ્દોત્પાદ થાય છે (૧) જ્યારે પુદ્ગલ સંહન્યમાન અથડાવુ થાય છે ત્યારે શબ્દોત્પાદ થાય છે, અને (૨) જ્યારે તેઓ ભિદ્યમાન થાય છે (ભેદાય છે) ત્યારે શબ્દોત્પાદ થાય છે. પુદ્ગલના અણુ અને સ્કન્ધ ભેદોની આવાન્તર જાતિઓ ૨૩ છે, તેમાની એક ભાષાવર્ગણા પણ છે તે ભાષાવર્ગણાઓ લોકમાં સર્વત્ર વ્યાપ્ત થયેલી છે. જે વસ્તુમાંથી ધ્વનિ નીકળે છે તે વસ્તુમાં કંપન થવાને લીધે તે ભાષા પુદ્ગલ વર્ગણાઓમાં પણ કંપન થાય છે તેને લીધે તરંગો (અવાજનાં મોજાંઓ) ઉત્પન્ન થાય છે તે તરંગો જ ઉત્તરોઉત્તર પુદ્ગલ વર્ગણાઓમાં કંપન પેદા કરે છે, અને તેને લીધે એક

करती है जिस से शब्द एक स्थान से उद्भूत होकर भी दूसरे स्थान पर सुनाइ पड़ता है, विज्ञान वाले भी शब्दका वहन भी इसी प्रकार की प्रक्रिया द्वारा मानते हैं यद्यपि नैयायिक और वैशेषिक शब्द को आकाश का गुण मानते हैं किन्तु जैन सिद्धान्तमें इसे पुद्गलद्रव्य को व्यञ्जनपर्याय माना है और युक्ति से विचार करने पर भी यही सिद्ध होता है इस शब्द के भाषात्मक और अभाषात्मक ऐसे दो भेद हैं भाषा पर्याप्ति नामकर्म के उदय से उत्पादित (उत्पन्न किये हुए) जो जीव के द्वारा शब्द किया जाता है वह भाषा शब्द है और इससे भिन्न नोभाषा शब्द है १ भाषा शब्द भी अक्षर सम्बद्ध और नोअक्षरसम्बद्ध के भेद से दो प्रकार का है इन्हें भी साक्षर और अनक्षर रूप से कहा गया है जो विविध प्रकार की भाषाएँ बोलचाल में आती हैं जिनमें शास्त्र लिखे जाते हैं वे अक्षर सम्बन्ध साक्षर शब्द हैं यही बात "वर्णव्यक्तियुक्तः" पद से प्रकट की गई है इस से भिन्न जो शब्द है वह नोअक्षर सम्बद्ध शब्द है वह द्वीन्द्रियादि प्राणियों की ध्वनि रूप होता है दुन्दुभि आदि का जो शब्द है वह आतोद्य (बाजे का) शब्द है तथा वंश (वंश आदि

સ્થાનમાં ઉત્પન્ન થયેલો શબ્દ બીજા સ્થાનપર પણ સાંભળી શકાય છે શબ્દ (અવાજ) નું આ પ્રકારે પ્રસરણ થવાની વાત વૈજ્ઞાનિકો પણ સ્વીકારે છે જો કે નૈયાયિક અને વૈશેષિક મતવાદીઓ શબ્દને આકાશનો ગુણ માને છે, પરન્તુ જૈન સિદ્ધાન્તમાં તો તેને પુદ્ગલ દ્રવ્યની વ્યંજન-પર્યાય રૂપ માનવામાં આવેલ છે, અને યુક્તિપૂર્વક વિચાર કરતાં એજ વાત સિદ્ધ થાય છે

આ શબ્દના ભાષાત્મક અને અભાષાત્મક એવા બે ભેદ છે ભાષાપર્યાપ્તિ નામકર્મના ઉદયથી ઉત્પાદિત (ઉત્પન્ન કરાયેલ) જે શબ્દજીવના દ્વારા કરવામાં આવે છે તેને ભાષાશબ્દ કહે છે તેનાથી ભિન્ન જે શબ્દ છે તેને નો ભાષાશબ્દ કહે છે (૧) ભાષાશબ્દ પણ અક્ષર સંબદ્ધ અને નોઅક્ષર સંબદ્ધના ભેદથી બે પ્રકારનો કહ્યો છે તેમને પણ સાક્ષર અને અનક્ષરરૂપ બે ભેદ યુક્ત કહેવામાં આવેલ છે જે વિવિધ પ્રકારની ભાષાઓ બોલચાલમાં આવે છે, જે ભાષાઓમાં શાસ્ત્રો લખાય છે તેમને 'અક્ષર સંબદ્ધ સાક્ષર શબ્દ' ના પ્રકારમાં ગણાવી શકાય છે એજ વાત "વર્ણવ્યક્તિયુક્તઃ" આ પદ દ્વારા પ્રકટ કરવામાં આવી છે તેનાથી ભિન્ન જે શબ્દ છે તેને નોઅક્ષર સંબદ્ધ શબ્દ કહે છે તે દ્વીન્દ્રિય વગેરે પ્રાણીઓના ધ્વનિરૂપ હોય છે દુંદુભિ (નગારા) આદિના અવાજને આતોદ્ય (વાજિંત્રોનો) શબ્દ કહે છે, તથા

४। ततशब्दो घनः शुषिरश्चेति द्विविधः। तत्र घनः-कांस्यतालादिजनितः, शुषिरः-वंशादिजनितः ५। एवं विततोऽपि घनशुषिरभेदेन द्विविधः।

उक्तञ्च-" तत वीणादिकं ज्ञेयं, विततं पटहादिकम्।

घनं तु कांस्यतालादि, वंशादि शुषिरं मतम् ॥१॥" इति ६।

भूषणशब्दः-नूपुरादिजनितः, तद्भिन्नो नोभूषणशब्दः ७। तालशब्दः= हस्ततालादिजनितः, लत्तिकाशब्दः-पार्ष्णिप्रहारजनितः ८। अनयाऽष्टसूत्र्या

के परस्पर टकराने से जो शब्द होता है) है वह नोआतोद्य शब्द है वीणा आदि से जो शब्द उत्पन्न होता है वह तत शब्द है तथा पटह (ढोल) आदि से जो शब्द उत्पन्न होता है वह वितत शब्द है ४ घन और शुषिर के भेद से तत शब्द दो प्रकार का है-कांस्य ताल आदि से जनित जो शब्द है वह घनशब्द है वंश शंख आदि से जनित जो शब्द है वह शुषिर शब्द है इसी तरह से वितत शब्द भी घन और शुषिर के भेद से दो प्रकार का है उक्तं च-" ततं वीणादिकं " इत्यादि।

नूपुर आदि से जनित शब्द भूषण शब्द है तथा इससेभिन्न जो शब्द है वह नोभूषण शब्द है हाथों की ताली बजाने आदि से जो शब्द होता है वह तालशब्द है तथा एंडी आदि के प्रहार से जो शब्द होता है वह लत्तिका शब्द है इस अष्ट सूत्रों द्वारा शब्दों के भेद कहे गये हैं अब शब्दोत्पत्ति के विषय में सूत्रकार कहते हैं-शब्द दो कारणों से उत्पन्न होता है एक तो संघातरूप

વાંસ આદિ પરસ્પર અથડાવાથી જે અવાજ થાય છે તેને નોઆતોદ્ય શબ્દ કહે છે. વીણા આદિમાંથી જે અવાજ નીકળે છે તેને તતશબ્દ કહે છે, તથા ઢોલ આદિમાથી જે અવાજ નીકળે છે તેને વિતતશબ્દ કહે છે (૪) ઘન અને શુષિરના ભેદથી તતશબ્દ બે પ્રકારના કહ્યા છે-કરતાલ, મંજિરા આદિથી જનિત જે અવાજ છે તેને ઘનશબ્દ કહે છે અને વાંસળી, શંખ આદિથી જનિત શબ્દને શુષિર શબ્દ કહે છે. વિતત શબ્દ પણ ઘન અને શુષિરના ભેદથી બે પ્રકારના છે. કહ્યુ પણ છે કે—" ततं वीणादिकं " ઇત્યાદિ

નૂપુર (ઝાંઝર) આદિ દ્વારા જનિત શબ્દને ભૂષણ શબ્દ કહે છે અને તેના કરતાં ભિન્ન એવાં શબ્દને નોભૂષણ શબ્દ કહે છે. હાથોથી તાળી પાડવા આદિ વડે જે શબ્દ થાય છે તેને તાલ શબ્દ કહે છે. પગની એડી વગેરેના પ્રહારથી જે શબ્દ થાય છે તેને લતિકા શબ્દ કહે છે આ અષ્ટસૂત્રી દ્વારા સૂત્રકારે શબ્દના ભેદોનુ નિરૂપણ કર્યું છે. હવે સૂત્રકાર શબ્દોત્પત્તિનાં કારણોનુ નિરૂપણ કરે છે-શબ્દ બે રીતે ઉત્પન્ન થાય છે-સંઘાતરૂપ અવસ્થાને

सम्भेदाः प्रोक्ताः, साम्प्रतं शब्दोत्पत्तिमाह–'दोहिं ठाणेहिं' इत्यादि–द्वाभ्यां स्थानाभ्यां=कारणाभ्यां शब्दोत्पादः=शब्दोत्पत्तिः स्यात्, तथाहि–'साहन्नताण' इत्यादौ पञ्चम्यर्थे षष्ठी तेन संहन्यमानेभ्यः=सङ्घातं समापद्यमानेभ्यः पुद्गलेभ्यः शब्दोत्पादः स्यात्। यथा–अभ्रपवनादिसंयोगे गर्जनशब्दोत्पत्तिः तथा–भिद्यमानेभ्यः=वियोज्यमानेभ्यः पुद्गलेभ्यश्च शब्दोत्पादः स्यात् यथा वृक्ष पत्रादीनामिति ॥ सू० २५ ॥

पुद्गलानां सङ्घातभेदयोः कारणप्ररूपणमाह—

मूलम्–दोहिं ठाणेहिं पोग्गला साहण्णंति तं जहा–सइं वा पोग्गला साहन्नति, परेण वा पोग्गला साहन्नति १। दोहिं ठाणेहिं पोग्गला भिज्जंति तं जहा सइं वा पोग्गला भिज्जंति परेण वा पोग्गला भिज्जंति २। दोहिं ठाणेहिं पोग्गला परिसडंति, तं जहा–सइं वा पोग्गला परिसडंति परेण वा पोग्गला परिसाडिज्जंति ३। एवं परिवडंति ४, विद्धंसंति ५।

दुविहा पोग्गला पण्णत्ता, तं जहा भिन्ना चेव अभिन्ना चेव १। दुविहा पोग्गला पण्णत्ता तं जहा भिउरधम्मा चेव नोभिउरधम्मा चेव २। दुविहा पोग्गला पण्णत्ता, तं जहा

अवस्था को प्राप्त होते हुए पुद्गलों से शब्दोत्पाद होता है जैसे अभ्र (मेघ का शब्द) और पवन आदि के शब्द होने पर गर्जन रूप शब्द की उत्पत्ति होती है दूसरे जब पुद्गल स्कन्ध वियुक्त होते हैं तब उनसे शब्दोत्पाद होता है जैसे वृक्ष पत्र आदिकों का शब्द होता है अर्थात् जब वस्तु अलग २ हो जाती है तब उसका जो शब्द होता है वह वियुक्त शब्द है ॥ सू० २५ ॥

પ્રાપ્ત કરતાં પુદ્ગલો દ્વારા શબ્દોત્પાદ થાય છે એટલે કે પુદ્ગલોની અવસ્થા-પર સ્પર્શમાં સંઘાત (સંયોગ) થવાથી એવું બને છે જેમકે મેઘની ગર્જના અને પવન આદિનો શબ્દ (સુસવાટ) થવાથી ગર્જનારૂપ શબ્દની ઉત્પત્તિ થાય છે (૨) જ્યારે પુદ્ગલ સ્કન્ધ વિયુક્ત (અલગ) થાય છે, ત્યારે તેમના દ્વારા શબ્દની ઉત્પત્તિ થાય છે જેમકે વૃક્ષ, પત્ર આદિકોનો શબ્દ સંભળાય છે કહેવાનું તાત્પર્ય એ છે કે જ્યારે વસ્તુ અલગ થાય છે ત્યારે પણ શબ્દની ઉત્પત્તિ થાય છે ॥ સૂ. ૨૫ ॥

परमाणुपोग्गला चेव नोपरमाणुपोग्गला चेव ३। दुविहा पोग्गला पण्णत्ता; तं जहा-सुहुमा चेव बायरा चेव ४। दुविहा पोग्गला पण्णत्ता तं जहा-बद्धपासपुट्ठा चेव नोबद्धपासपुट्ठा चेव ५। दुविहा पोग्गला पण्णत्ता, तं जहा-परियाइय च्चेव अपरियाइयच्चेव ६। दुविहा पोग्गला पण्णत्ता, तं जहा-अत्ता चेव अणत्ता चेव ७। दुविहा पोग्गला पण्णत्ता तं जहा-इट्ठा चेव अणिट्ठा चेव ८। एवं कंता ९, पिया १०, मणुन्ना ११, मणामा १२ ॥ सू० २६ ॥

छाया—द्वाभ्यां स्थानाभ्यां पुद्गलाः संहन्यन्ते, तद्यथा-स्वयं वा पुद्गलाः संहन्यन्ते, परेण वा पुद्गलाः संहन्यन्ते १। द्वाभ्यां स्थानाभ्यां पुद्गला भिद्यन्ते तद्यथा-स्वयं वा पुद्गला भिद्यन्ते परेण वा पुद्गला भिद्यन्ते २। द्वाभ्यां स्थानाभ्यां पुद्गलाः परिशटन्ति, तद्यथा-स्वयं वा पुद्गलाः परिशटन्ति, परेण वा पुद्गलाः परिशाटयन्ते ३। एवं परिपतन्ति ४ विध्वंसन्ते ५।

द्विविधाः पुद्गलाः प्रज्ञप्ताः, तद्यथा-भिन्नाश्चैव अभिन्नाश्चैव १। द्विविधाः पुद्गलाः प्रज्ञप्तास्तद्यथा-भिदुरधर्माणश्चैव नो भिदुरधर्माणश्चैव २। द्विविधाः पुद्गलाः प्रज्ञप्तास्तद्यथा-परमाणुपुद्गलाश्चैव नो परमाणुपुद्गलाश्चैव ३। द्विविधाः पुद्गलाः प्रज्ञप्ताद्यथा-सूक्ष्माश्चैव बादराश्चैव ४। द्विविधाः पुद्गलाः प्रज्ञप्तास्तद्यथा-बद्धपार्श्वस्पृष्टाश्चैव नो बद्धपार्श्वस्पृष्टाश्चैव५। द्विविधाः पुद्गलाः प्रज्ञप्तास्तद्यथा-पर्यात्ताश्चैव अपर्यात्ताश्चैव६। द्विविधाः पुद्गलाः प्रज्ञप्तास्तद्यथा-आत्ताश्चैव अनात्ताश्चैव ७। द्विविधाः पुद्गलाः प्रज्ञप्तास्तद्यथा-इष्टाश्चैव, अनिष्टाश्चैव ८। एवं कान्ताः९, प्रियाः १०, मनोज्ञाः ११, मन आमाः १२ ॥ सू० २६ ॥

पुद्गलों के संघात और भेद के कारण की प्ररूपणा—

'दोहिं ठाणेहिं पोग्गला साहण्णंति' इत्यादि।

टीकार्थ—यह पंचसूत्री है-इसका अर्थ सुगम है, स्वभावसे ही जो पुद्गल परस्पर में मिल जाते हैं-जैसे वे अभ्रादिकों (मेघों) में मिल

પુદ્ગલોના સઘાત (સયોગ) ની તથા વિઘટનના કારણોની પ્રરૂપણા—

"दोहिं ठाणेहिं पोग्गला साहण्णंति" ઇત્યાદિ—

ટીકાર્થ—આ પંચસૂત્રી છે, તેનો અર્થ સરળ છે. અભ્રાદિકોમાં (મેઘોમાં) પુદ્ગલો જે રીતે એક બીજા સાથે મળી જાય છે-પિંડરૂપ બની જાય છે, તે

टीका—'दोहिं ठाणेहिं' इत्यादि–पदचतुष्टयी सुगमा। नवरम्–विशेषस्त्वयम् स्वय वा=स्वभावेनैव अभ्रादिष्विव पुद्गला संहन्यन्ते=संबध्यन्ते, पिण्डीभवन्ती त्यर्थः, कर्मकर्तृप्रयोगोऽयम्। वा=अथवा परेण–अन्येन पुद्गला संहन्यन्ते १। स्वय परेण वा भिद्यन्ते विघटन्ते २। स्वयं वा पुद्गलाः परिशटन्ति, भवशीर्यन्ति कुत्सितावस्थां माप्नुवन्ति–कुष्ठादिनाङ्गुल्यादिवत्, परेण वा पुद्गलाः परिशाटयन्ते मद्यद्रव्यादि वत् ३। परिपतन्ति पर्वतादेरिव ४। विध्वंसन्ते=विनश्यन्ति घनपटलवत् ५।

जाते हैं संघटित हो जाते हैं–पिण्डीभाव को प्राप्त हो जाते हैं यह उनके मिलने में प्रथम कारण है। तथा–पर के द्वारा कृत उपाय से जो पुद्गल आपस में मिल जाते हैं यह उनके मिलने में दूसरा कारण है इसी तरह जो पुद्गल अपने आप विघटित (अलग) हो जाते हैं यह उनके विघटित होने का प्रथम कारण है तथा जब वे दूसरे कारणों से विघटित (अलग) कर दिये जाते हैं तो यह उनके विघटित होने का दूसरा कारण है। २। इसी तरह से उनके परिशाटित (सड़ना) होने के भी दो कारण हैं–एक कारण यह है जिस कारण से वे स्वयं ही कुष्ठ (कोढ) रोगादि से अंगुली की तरह परिशाटित हो जाते हैं–कुत्सितावस्था को प्राप्त हो जाते हैं। अर्थात् सड़ जाते हैं, दूसरा कारण यह है कि जिसके द्वारा मद्यादि द्रव्य की तरह (परिशाटित) सड़ाये जाते हैं ३ इसी प्रकार से पुद्गलों के परिपतन (पड़ने) में भी दो कारण हैं–एक कारण यह है कि जिससे वे पर्वतादि की तरह अपने आप पतित (पड़ना)

રીતને સ્વાભાવિક સંઘાત (સંયોગીકરણ) કહે છે આ સિવાય પુદ્ગલોના સંઘાતનું બીજું કારણ આ પ્રમાણે છે–પરના દ્વારા કૃત ઉપાય દ્વારા પણ પુદ્ગલો એક બીજા સાથે મળી જાય છે. ॥ ૧ ॥

પુદ્ગલોના વિઘટનામાં (જુદા થવામાં) પણ એવાંજ બે કારણો રહેલાં છે (૧) પુદ્ગલો પોતાની જાતે જ વિઘટિત (અલગ) થઈ જાય છે (૨) અથવા તેઓ બીજા કારણોથી પણ વિઘટન પામે છે ॥ ૨ ॥

એજ પ્રમાણે તેમના પરિશટનમાં (સડવામાં) પણ બે કારણો કામ કરે છે–(૧) જેમ કોઢાદિ રોગ દ્વારા આંગળી આદિ અંગો સડી જાય છે તેમ સ્વાભાવિક રીતે જ પુદ્ગલોમાં પરિશટન થાય છે (૨) મદ્યાદિ દ્રવ્યની જેમ અન્ય ઉપાયો દ્વારા પણ પરિશટન થાય છે ॥ ૩ ॥

એજ પ્રમાણે પુદ્ગલોનુ પરિપતન (પડવાની ક્રિયા) પણ બે કારણે થાય છે (૧) પર્વતાદિની જેમ આપોઆપ પરિપતન થાય છે (૨) અન્યના દ્વારા પણ તેમનું પરિપતન કરાય છે ॥ ૪ ॥

पुनः पुद्गलानेव निरूपयति-' दुविहा पोग्गला ' इत्यादि—

द्वादशसूत्री कण्ठ्या, नवरम्-भिन्नाः = विघटिताः अभिन्नाः = संघातमापन्नाः १। स्वयमेव भिद्यते इति भिदुरं = भिदुरत्वमित्यर्थः तदेव धर्मः= स्वभावो येषां ते भिदुरधर्माणः - प्रतिक्षणविनश्वरशीला इत्यर्थः, अन्तर्भूतभावप्रत्ययोऽयम्। तद्भिन्ना नो भिदुरधर्माणः २। परमाणुपुद्गलाः-परमाश्च ते

हो जाते हैं और दूसरा कारण यह है कि जिसके द्वारा वे परिणमित किये जाते हैं इसी तरह से पुद्गलों के विनाश होने में भी दो कारण होते हैं-एक कारण यह है कि जिस कारण से वे घनपटल (मेघ) की तरह स्वतः ही नष्ट हो जाते हैं और दूसरा कारण यह है कि जिससे वे विनष्ट (नाश) कर दिये जाते हैं जैसे पुराना घर आदि ५।

यह द्वादश सूत्री है-इसमें भी पुद्गल दो प्रकार के ही प्रकट किये गये हैं-एक विघटित और दूसरे संघातप्राप्त जो पुद्गल भिन्न २ रूप में विघटित हैं वे भिन्न विघटित (अलग २) पुद्गल हैं तथा जो पुद्गल संघात (एक दूसरे के साथ मिल जाना) को प्राप्त हैं वे अभिन्न-संघात प्राप्त पुद्गल हैं १ इस प्रकार से भी पुद्गल दो प्रकार के हैं-एक भिदुरधर्मा और दूसरे नोभिदुरधर्मा जिनका स्वभाव अपने आप ही प्रतिक्षण विनश्वर (नाश) होने का है वे भिदुरधर्मा पुद्गल हैं और जिनका स्वभाव ऐसा नहीं है-भिदुरधर्मासे जो विपरीत हैं वे नोभिदुरधर्मा परमाणु पुद्गल हैं २ इसी प्रकार से पुद्गल दो प्रकार के हैं-एक परमाणु रूप पुद्गल और

એજ પ્રમાણે પુદ્ગલોના વિનાશમાં પણ બે કારણો કામ કરે છે-(૧) મેઘોની જેમ તેઓ સ્વત વિનષ્ટ થઈ જાય છે (૨) અથવા પુરાણા ઘરની જેમ અન્ય ઉપાયો દ્વારા પણ તેનો વિનાશ કરાય છે ॥ ૫ ॥

હવે જે દ્વાદશ સૂત્રી (બાર સૂત્રો) કહી છે તેનો અર્થ સમજાવવામાં આવે છે-તેમાં પણ પુદ્ગલોના બે પ્રકાર બતાવ્યા છે-(૧) વિઘટિત અને (૨) સઘાતપ્રાપ્ત. જે પુદ્ગલો જુદે જુદે રૂપે વિઘટિત છે, તેઓ ભિન્ન વિઘટિત (અલગ અલગ) પુદ્ગલ ગણાય છે, તથા જે પુદ્ગલો સંઘાતપ્રાપ્ત (એક બીજા સાથે સંયોગ પામેલાં) છે, તેમને અભિન્ન સઘાપ્રતાપ્ત પુદ્ગલો કહે છે ॥૧॥

પુદ્ગલોના આ પ્રમાણે બે પ્રકાર છે-(૧) ભિદુર ધર્મા અને (૨) નો ભિદુર ધર્મા પોતાની જાતે જ પ્રતિક્ષણ નષ્ટ થવાના સ્વભાવવાળાં પુદ્ગલોને ભિદુર ધર્મા પુદ્ગલો કહે છે તેના કરતાં વિપરીત સ્વભાવવાળા પુદ્ગલોને નો ભિદુર ધર્મા પરમાણુ પુદ્ગલ કહે છે. ॥ ૨ ॥

भणवश्च परमाणवः=निर्विभागद्रव्यरूपाः, ते चैते पुद्गलाश्च ते तथा=स्कन्धत्वमा-पन्नापन्नाः केवलाः परमाणव एवेत्यथ । तद्भिन्ना नो परमाणुपुद्गलाः=स्कन्ध भूता इत्यर्थः ३। सूक्ष्माः–सूक्ष्मपरिणामाः शीतोष्णस्निग्धरूक्षलक्षणचतु स्पर्श-न्तश्च, एते च भाषादयःसन्ति, बादराः=बादरपरिणामा अष्टस्पर्शवन्तश्चौदारिका दयः ४। बद्धपार्श्वस्पृष्टाः=पार्श्वेन=देहत्वचा स्पृष्टाः–रजोवत् पार्श्वस्पृष्टाः, ततो

दूसरा नो परमाणुरूप पुद्गल जो पुद्गल निर्विभाग द्रव्यरूप होते हैं वे परमाणु रूप पुद्गल हैं और जो इनसे भिन्न पुद्गल हैं वे स्कन्धरूप पुद्गल नो परमाणुरूप हैं इसी प्रकार से सूक्ष्म और बादर के भेद से पुद्गल दो प्रकार के होते हैं जो पुद्गल सूक्ष्मपरिणाम से परिणत हो रहे हैं वे सूक्ष्म पुद्गल हैं–इनमें शीत, उष्ण, स्निग्ध और रूक्ष इन चार स्पर्शों में से कोई से दो अविरोधी स्पर्श रहते हैं अथवा भिन्न २ देशों की अपेक्षा से उनमें ये चार स्पर्श रहते हैं ऐसे पुद्गल भाषादिरूप होते हैं जो बादर परिणाम से परिणत हैं वे बादरपुद्गल हैं इन बादरपुद्गलों में आठों प्रकार के स्पर्श रहते हैं ऐसे ये बादर परिणत पुद्गल औदारिक आदि रूप हैं इसी प्रकार से पुद्गल बद्धपार्श्व स्पृष्ट और नो बद्धपार्श्वस्पृष्टके भेदसे दो प्रकार के भी होते हैं–बद्धपार्श्वस्पृष्टपुद्गल वे हैं जो देह की त्वचा (चमड़ी) के साथ रज की तरह पहिले स्पृष्ट होते हैं बाद में बद्ध गाढतररूप में

પુદ્ગલના આ પ્રમાણે બે પ્રકાર પણ પડે છે–(૧) પરમાણુ રૂપ પુદ્ગલ અને (૨) નો પરમાણુ રૂપ પુદ્ગલ જે પુદ્ગલો નિર્વિભાગ દ્રવ્યરૂપ હોય છે તેમને પરમાણુ રૂપ પુદ્ગલ કહે છે પણ તેના કરતાં ભિન્ન જે સ્કન્ધરૂપ પુદ્ગલો છે, તેમને નો પરમાણુરૂપ કહે છે

એજ પ્રમાણે સૂક્ષ્મ અને બાદરના ભેદથી પણ પુદ્ગલ બે પ્રકારના હોય છે સૂક્ષ્મ પરિણામથી પરિણત જે પુદ્ગલો છે તેમને સૂક્ષ્મ પુદ્ગલ કહે છે તે પ્રકારનાં પુદ્ગલોમાં શીત, ઉષ્ણ, સ્નિગ્ધ અને રૂક્ષ આ ચાર સ્પર્શોમાંથી કોઈ પણ બે અવિરાધી સ્પર્શોના સદ્ભાવ હોય છે અથવા ભિન્ન ભિન્ન દેશો (અંશો) ની અપેક્ષાએ તેમનામાં તે ચારે સ્પર્શોના સદ્ભાવ રહે છે એવાં પુદ્ગલો ભાષાદિ રૂપ હોય છે બાદર પરિણામથી પરિણત પુદ્ગલોને બાદર પુદ્ગલો કહે છે તે બાદર પુદ્ગલોમાં આઠે પ્રકારના સ્પર્શોના સદ્ભાવ રહે છે એવાં તે બાદર પરિણત પુદ્ગલો ઔદારિક આદિ રૂપ હોય છે

એજ પ્રમાણે બદ્ધપાર્શ્વસ્પૃષ્ટ અને નો બદ્ધપાર્શ્વસ્પૃષ્ટના ભેદથી પણ પુદ્ગલ બે પ્રકારના હોય છે જે પુદ્ગલો શરીરની ત્વચાની સાથે રજની જેમ

बद्धाः-गाढतरं श्लिष्टाः तनौ तोयवत् पार्श्वस्पृष्टाश्च ते बद्धाश्च=प्रदेशैरात्मसात्कृताः राजदन्तादिवद् बद्धपार्श्वस्पृष्टाः।

उक्तञ्च—"पुट्ठंरेणु व तणुम्मि, बद्धमप्पी कयं पएसेहिं" इति।

छाया—स्पृष्टं रेणुवत्तनौ, बद्धमात्मीकृतं प्रदेशैः" इति॥ घ्राणरसनस्पर्शनेन्द्रियग्रहणगोचरा इत्यर्थः। एते पुद्गला यदा घ्राणरसनस्पर्शनेन्द्रियैः सह स्पृष्टा बद्धाश्च भवन्ति तदा-गन्धः-सुरभ्यादित्वेन आघ्रायते, रसः-मधुरादित्वेनास्वाद्यते स्पर्शः-कर्कशादित्वेन स्पृश्यते नान्यथा। नो बद्धपार्श्वस्पृष्टाः पुद्गला द्वि प्रकारा

प्रदेशों के साथ श्लिष्ट हो जाते ये हैं कहा भी है-'पुट्ठं रेणुं व' इत्यादि रेणु (रज) की तरह शरीर में जो पुद्गल पहिले स्पृष्ट होते हैं और बाद में चिपक जाते हैं वे बद्ध पार्श्व स्पृष्ट पुद्गल हैं। अर्थात् पार्श्व स्पृष्ट होकर जो बद्ध होते हैं ऐसे पुद्गल बद्धपार्श्वस्पृष्ट हैं ये पुद्गल घ्राण, रसना और स्पर्शन इन्द्रियों द्वारा अपने २ विषयरूप से गृहीत होते हैं ये पुद्गल जब घ्राण इन्द्रिय के साथ स्पृष्ट होकर बद्ध होते हैं तब उनका सुगन्ध आदि गंध उसके द्वारा सूंघने में आता है और जब ये पुद्गल रसना इन्द्रिय के साथ स्पृष्ट होकर बद्ध होते है तब उनका मधुर (मीठा) रस आदि उसके द्वारा गृहीत होता है-आस्वादित होता है। तथा जब ये पुद्गल स्पर्शन इन्द्रिय के साथ स्पृष्ट होकर बद्ध होते है-तब उनका कर्कश-(कठोर) आदि स्पर्श उसके द्वारा छूआ जाता है।

પહેલાં સ્પૃષ્ટ રહે છે અને ત્યારબાદ ગાઢતર રૂપે પ્રદેશોની સાથે શ્લિષ્ટ થઇ જાય છે તે પુદ્ગલોને બદ્ધપાર્શ્વસ્પૃષ્ટ પુદ્ગલો કહે છે. કહ્યુંપણ છે કે—

"પુટ્ઠં રેણુવ" ઇત્યાદિ રેણુ (રજ) ની જેમ જે પુદ્ગલો પહેલાં શરીરની સાથે સ્પૃષ્ટ થાય છે અને પછી શરીરની સાથે ચોંટી જાય છે, એવા પુદ્ગલોને બદ્ધપાર્શ્વસ્પૃષ્ટ કહે છે. એટલે કે પાર્શ્વસ્પૃષ્ટ (પહેલાં સ્પૃષ્ટ) થઇને પછીથી બદ્ધ થનારાં પુદ્ગલોને બદ્ધપાર્શ્વસ્પૃષ્ટ પુદ્ગલો કહે છે તે પુદ્ગલોને ઘ્રાણેન્દ્રિય, રસનેન્દ્રિય અને સ્પર્શેન્દ્રિય દ્વારા પોતપોતાના વિષય રૂપે ગ્રહણ કરવામાં આવે છે. તે પુદ્ગલો જ્યારે ઘ્રાણેન્દ્રિયની સાથે સ્પૃષ્ટ થઇને બદ્ધ થાય છે ત્યારે તેમની સુગન્ધ આદિ ગંધ તેના દ્વારા સૂંઘવામાં આવે છે. જ્યારે તે પુદ્ગલો રસના ઇન્દ્રિય સાથે સ્પૃષ્ટ થઇને બદ્ધ થાય છે ત્યારે તેના દ્વારા તેમના મધુર આદિ રસ (સ્વાદ) નો આસ્વાદ કરાય છે જ્યારે તે પુદ્ગલો સ્પર્શેન્દ્રિયની સાથે સ્પૃષ્ટ થઇને બદ્ધ થાય છે, ત્યારે તેના દ્વારા તેમનો કર્કશ આદિ સ્પર્શ અનુભવી શકાય છે.

भवन्ति, तत्र केचित् श्रोत्रेन्द्रियग्रहणगोचरा भवन्ति केचित्तु चक्षुर्मात्र विषया इति । तत्र ये- बद्धा नैव किन्तु पार्श्वस्पृष्टा, इति पदरूपैकपदप्रतिषेधेन श्रोत्रेन्द्रियमात्रग्रहणगोचरा भवन्ति । अन्ये तु-नो बद्धाः, नो पार्श्वस्पृष्टाः, इत्युभयपद निषेधेन श्रोत्राद्यविषयाश्चक्षुर्विषयाश्च पुद्गला भवन्तीति ।

यहां ऐसी शंका हो सकती है कि रूपादि गुण तो अमूर्त हैं फिर इन्द्रियों द्वारा इनका ग्रहण कैसे हो सकता है ? तो इसका समाधान ऐसा है कि गुण गुणी-द्रव्य से भिन्न नहीं हैं-अतः द्रव्य का ग्रहण होने पर उससे कथंचित् अभिन्न हुए गुणों का भी ग्रहण हो जाता है जैसे घ्राण इन्द्रिय से गंध का संयोग न होकर सुगंध या दुर्गंध वाले परमाणुओं का ही संयोग होता है-किन्तु घ्राण इन्द्रिय में गंध को अभिव्यक्त करने की योग्यता होने से इसका विषय गंध कहा गया है।

इसी प्रकार से अन्य इन्द्रियों के विषय में भी जानना चाहिये जो बद्धपार्श्वस्पृष्ट पुद्गल दो प्रकार के होते हैं-इनमें कितनेक श्रोत्रेन्द्रिय के विषय होते हैं और कितनेक चक्षु इन्द्रिय के विषय होते हैं तथा जो पुद्गल बद्ध नहीं है, किन्तु पार्श्वस्पृष्ट है वे केवल श्रोत्रेन्द्रिय के ही विषय होते है तथा जो पुद्गल न बद्ध है और न स्पृष्ट हैं वे पुद्गल सिर्फ एक चक्षु इन्द्रिय के ही विषय होते है क्यों कि चक्षु इन्द्रिय अप्राप्यकारी

શંકા—રૂપાદિ ગુણ તો અમૂર્ત છે તો ઇન્દ્રિયો દ્વારા તેમને કેવી રીતે ગ્રહણ કરી શકાય છે ?

સમાધાન—ગુણ ગુણી-દ્રવ્યથી ભિન્ન નથી, તેથી દ્રવ્યનું ગ્રહણ થાય ત્યારે તેનાથી કંઈક અભિન્ન એવાં ગુણોનું પણ ગ્રહણ થઈ જાય છે જેમકે ઘ્રાણેન્દ્રિયથી ગંધનો સંયોગ ન થવા છતાં પણ સુગંધ અને દુર્ગંધવાળા પરમાણુઓનો જ સંયોગ થાય છે પરન્તુ ઘ્રાણેન્દ્રિયમાં ગંધને અભિવ્યક્ત કરવાની યોગ્યતા હોવાથી તેના વિષય તરીકે ગંધને ગણવામાં આવે છે

એજ પ્રમાણે અન્ય ઇન્દ્રિયોના વિષયમાં પણ સમજવું જે બદ્ધપાર્શ્વસ્પૃષ્ટ પુદ્ગલ બે પ્રકારના હોય છે તેમાંથી કેટલાંક શ્રોત્રેન્દ્રિયનો વિષય બને છે. તેના દ્વારા અનુભવી શકાય છે અને કેટલાક ચક્ષુ ઇન્દ્રિયનો વિષય બને છે તથા જે પુદ્ગલો બદ્ધ નથી હોતાં પણ માત્ર પાર્શ્વસ્પૃષ્ટ જ હોય છે, તે માત્ર શ્રોત્રેન્દ્રિયનો જ વિષય બને છે તથા જે પુદ્ગલ બદ્ધ પણ હોતાં નથી અને સ્પૃષ્ટ પણ હોતાં નથી તેઓ માત્ર ચક્ષુ ઇન્દ્રિયનો જ વિષય બને છે કારણ કે ચક્ષુ ઇન્દ્રિયને અપ્રાપ્યકારી માનવામાં આવી છે કહ્યું પણ છે કે-" પુટ્ઠં

उक्तञ्च —" पुट्ठं सुणेइ सद्दं, रूवं पुण पासई अपुट्ठं तु।
गंधं रसं च फासं च, बद्धपुट्ठं वियागरे ॥ "

छाया—स्पृष्टं शृणोति शब्दं, रूपं पुनः पश्यति अस्पृष्टं तु।
गन्धं रसं च स्पर्शं च, बद्धं स्पृष्टं व्यागृणीयात् ॥ इति।

उक्तेयमिन्द्रियाण्यपेक्ष्य पुद्गलानां बद्धपार्श्वस्पृष्टता, एवं जीवप्रदेशापेक्षया परम्परापेक्षया च बोध्येति ५। 'परियाइय' त्ति–पर्यात्ताः=सामस्त्येन गृहीताः कर्मपुद्गलवत्, तद्भिन्ना अपर्यात्ताः। यद्वा–' पर्यायातीताः ' इतिच्छाया तत्र

मानी गई है। कहा भी है–" पुट्ठं सुणेइ सद्दं इत्यादि।

कर्ण इन्द्रिय स्पृष्ट हुए शब्द को ग्रहण करती है चक्षु इन्द्रिय अस्पृष्ट हुए रूप को ग्रहण करती है और घ्राण, रसना और स्पर्शन ये तीन इन्द्रियां बद्धस्पृष्ट हुए पुद्गल को ग्रहण करती है। इस प्रकार इन्द्रियों की अपेक्षा लेकर यह पुद्गलोंकी बद्धपार्श्व स्पृष्टता कही है जीवप्रदेशापेक्षासे और परम्परापेक्षासे भी इसी तरह यह बद्धपार्श्वस्पृष्टता जानना चाहिये।

इस प्रकार से भी पुद्गल दो प्रकार के कहे गये है एक पर्यात्तपुद्गल और दूसरे अपर्यात्त पुद्गल, कर्मपुद्गल की तरह जो पुद्गल सामस्त्येन (सब ओर से) गृहीत होते है वे पर्यात्तपुद्गल हैं और इनसे भिन्न जो पुद्गल है वे अपर्यात्तपुद्गल है अथवा " परियाइच्चेव अपरियाइच्चेव " की संस्कृत छाया " पर्यायातीताः " और " अपर्यातीताः " ऐसी भी

સુણેઇ સદ્દં " ઈત્યાદિ—

કર્ણેન્દ્રિય સ્પૃષ્ટ થયેલા શબ્દને જ ગ્રહણ કરે છે, ચક્ષુ ઇન્દ્રિય અસ્પૃષ્ટ થયેલા રૂપને ગ્રહણ કરે છે, અને ઘ્રાણેન્દ્રિય, રસનાઇન્દ્રિય અને સ્પર્શેન્દ્રિય બદ્ધ અને સ્પૃષ્ટ થયેલાં પુદ્ગલોને જ ગ્રહણ કરે છે. આ પ્રમાણે ઇન્દ્રિયોની અપેક્ષાએ પુદ્ગલોની બદ્ધપાર્શ્વસ્પૃષ્ટતાનુ અહીં પ્રતિપાદન કરવામાં આવ્યું છે. જીવપ્રદેશાપેક્ષાએ તથા પરંપરાપેક્ષાએ પણ એજ પ્રમાણે તે બદ્ધપાર્શ્વસ્પૃષ્ટતા સમજવી જોઇએ.

પુદ્ગલના નીચે પ્રમાણે બે પ્રકાર પડે છે-(૧) પર્યાત્ત પુદ્ગલ અને (૨) અપર્યાત્ત પુદ્ગલ કર્મપુદ્ગલોની જેમ જે પુદ્ગલો બધી તરફથી ગૃહીત થાય છે, તે પુદ્ગલોને પર્યાત્ત પુદ્ગલો કહે છે અને તેમના કરતાં ભિન્ન પુદ્ગલોને અપર્યાત્ત પુદ્ગલો કહે છે. અથવા " परियाइचेव अपरियाइचेव " ની સંસ્કૃત છાયા " पर्यायातीता. " અને " अपर्यायातीता. " પણ થઈ શકે છે. જે પુદ્ગલો

भवन्ति, यत्र कश्चित् श्रोत्रेन्द्रियग्रहणगोचरा भवन्ति केचित्तु चक्षुर्मात्र विषया इति । तत्र ये- बद्धा नैव किन्तु पार्श्वस्पृष्टा , इति पदद्वये रूपदगतिषेधेन श्रोत्रे न्द्रियमात्रग्रहणगोचरा भवन्ति । अन्ये तु-नो बद्धाः, नो पार्श्वस्पृष्टाः, इत्युभयपद निषेधेन श्रोत्राद्यविषयाश्चक्षुर्विषयाश्च पुद्गला भवन्तीति ।

यहां ऐसी शंका हो सकती है कि रूपादि गुण तो अमूर्त हैं फिर इन्द्रियों द्वारा इनका ग्रहण कैसे हो सकता है ? तो इसका समाधान ऐसा है कि गुण गुणी-द्रव्य से भिन्न नहीं हैं-अतः अर्थ का ग्रहण होने पर उससे कथंचित् अभिन्न हुए गुणों का भी ग्रहण हो जाता है जैसे घ्राण इन्द्रिय से गंध का संयोग न होकर सुगंध या दुर्गंध वाले परमाणुओं का ही संयोग होता है-किन्तु घ्राण इन्द्रिय में गंध को अभिव्यक्त करने की योग्यता होने से इसका विषय गंध कहा गया है।

इसी प्रकार से अन्य इन्द्रियों के विषय में भी जानना चाहिये जो बद्धपार्श्वस्पृष्ट पुद्गल दो प्रकार के होते हैं-इनमें कितनेक श्रोत्रेन्द्रिय के विषय होते हैं और कितनेक चक्षु इन्द्रिय के विषय होते हैं तथा जो पुद्गल बद्ध नहीं है, किन्तु पार्श्वस्पृष्ट हैं वे केवल श्रोत्रेन्द्रिय के ही विषय होते है तथा जो पुद्गल न बद्ध है और न स्पृष्ट है वे पुद्गल सिर्फ एक चक्षु इन्द्रिय के ही विषय होते है क्यों कि चक्षु इन्द्रिय अप्राप्यकारी

શંકા—રૂપાદિ ગુણ તો અમૂર્ત છે તો ઇન્દ્રિયો દ્વારા તેમને કેવી રીતે ગ્રહણ કરી શકાય છે ?

સમાધાન—ગુણ ગુણી-દ્રવ્યથી ભિન્ન નથી તેથી અર્થનું ગ્રહણ થાય ત્યારે તેનાથી કથંચિત્ અભિન્ન એવાં ગુણોનું પણ ગ્રહણ થઈ જાય છે જેમકે ઘ્રાણેન્દ્રિયથી ગંધનો સંયોગ ન થવા છતાં પણ સુગંધ અને દુર્ગંધવાળાં પરમાણુઓનો જ સંયોગ થાય છે પરન્તુ ઘ્રાણેન્દ્રિયમાં ગંધને અભિવ્યક્ત કરવાની યોગ્યતા હોવાથી તેના વિષય તરીકે ગંધને માનવામાં આવે છે

એજ પ્રમાણે અન્ય ઇન્દ્રિયોના વિષયમાં પણ સમજવું જો બદ્ધપાર્શ્વસ્પૃષ્ટ પુદ્ગલ બે પ્રકારના કહ્યા છે તેમાંથી કેટલાક શ્રોત્રેન્દ્રિયનો વિષય બને છે. તેના દ્વારા અનુભવી શકાય છે અને કેટલાક ચક્ષુ ઇન્દ્રિયનો વિષય બને છે તથા જે પુદ્ગલો બદ્ધ નથી હોતાં પણ માત્ર પાર્શ્વસ્પૃષ્ટ જ હોય છે, તે માત્ર શ્રોત્રેન્દ્રિયનો જ વિષય બને છે તથા જે પુદ્ગલ બદ્ધ પણ હોતાં નથી અને સ્પૃષ્ટ પણ હોતાં નથી તેઓ માત્ર ચક્ષુ ઇન્દ્રિયનો જ વિષય બને છે, કારણ કે ચક્ષુ ઇન્દ્રિયને અપ્રાપ્યકારી માનવામાં આવી છે કહ્યું પણ છે કે-' पुट्ठं

प्रीत्युत्पादका इन्द्रियाह्लादका इत्यर्थः । १० । मनोज्ञाः—मनसा ज्ञायन्ते शोभनत्वेन हितकारित्वेन च ये ते तथा । ११ । मन आमाः=मनः प्रियाः । यद्वा—मनोऽमाः मनसा अम्यन्ते=गम्यन्ते वल्लभत्वेनानुस्मर्यन्ते ये ते तथा। विपक्षे 'तद्भिन्नाः' इति व्याख्येयम् ११ ॥ सू० १६ ॥

पुद्गलाधिकारादेव तद्धर्मान् शब्दादीन् आत्तादिविशेषणविशिष्टान् निरूपयन्नाह

मूलम्—दुविहा सद्दा पण्णत्ता तं जहा-अत्ता चेव अणत्ता चेव१। एवं इट्ठा जाव मणामा६ । दुविहा रूवा पण्णत्ता तं जहा-अत्ता चेव अणत्ता चेव, जाव मणामा १२ । एवं गंधा १७, रसा २४, फासा, एवमिक्किक्के छ छ आलावगा भाणियव्वा ३२ ॥ सू० २७ ॥

छाया—द्विविधाः शब्दाः प्रज्ञप्तास्तद्यथा—आत्ताश्चैव अनात्ताश्चैव १ । एवम् इष्टा यावत् मन आमाः ६ । द्विविधाः रूपाः प्रज्ञप्तास्तद्यथा—आत्ताश्चैव अनात्ताश्चैव, यावत् मन आमाः १२ । एवं गंधाः १८, रसाः २४, स्पर्शाः, एवमेकैके षड् षड् आलापका भणितव्याः ३२ ॥ सू० २७ ॥

संपन्न होते हैं वे कमनीय पुद्गल हैं और इनसे जो भिन्न पुद्गल हैं वे अकमनीय पुद्गल हैं जो पुद्गल इन्द्रियों के आह्लादक होते हैं वे पुद्गल प्रिय पुद्गल हैं और जो इनसे भिन्न पुद्गल हैं वे अप्रियपुद्गल हैं मन के द्वारा जो पुद्गल शोभनरूप से और हितकारीरूप से जाने जाते हैं वे मनोज्ञ पुद्गल हैं और जो इनसे भिन्न पुद्गल हैं वे अमनोज्ञ पुद्गल हैं जिन पुद्गलों को मन वल्लभ (प्रिय) रूप से बारं बार याद करता है वे पुद्गल मनोऽम हैं अथवा मन को जो पुद्गल प्रिय होते हैं वे पुद्गल मन आम हैं इनसे भिन्न पुद्गल मनः अनाम हैं ॥ सू० २६ ॥

તેમને કમનીય પુદ્ગલો કહે છે અને તેમનાથી ભિન્ન પુદ્ગલોને અકમનીય પુદ્ગલો કહે છે. જે પુદ્ગલો ઇન્દ્રિયોને માટે આહ્લાદજનક હોય છે તે પુદ્ગલોને પ્રિય પુદ્ગલો કહે છે અને તેમના કરતાં ભિન્ન પુદ્ગલોને અપ્રિય પુદ્ગલો કહે છે. જે પુદ્ગલો મનને શોભિતા અને હિતકારી લાગે છે, તે પુદ્ગલોને મનોજ્ઞ પુદ્ગલો કહે છે અને તેમના કરતાં ભિન્ન પુદ્ગલોને અમનોજ્ઞ પુદ્ગલો કહે છે જે પુદ્ગલોને મન વલ્લભ (પ્રિય) પુદ્ગલોરૂપે વારંવાર યાદ કરે છે, તે પુદ્ગલોને મનોમ અથવા મનઆમ પુદ્ગલો કહે છે. એવાં પુદ્ગલો મનને પ્રિય લાગે છે. તેમનાથી ભિન્ન પુદ્ગલોને અમનોમ (મનઃ અનામ) પુદ્ગલો કહે છે. સૂ. ૨૬

विवक्षित पर्यायमतीताः पर्यायातीताः, इतरे तद्भिन्नाः ६। आत्ताः=गृहीताः जीवेन शरीरादितया परिग्रहमात्रतया वा स्वीकृताः, तदितरेऽनात्ताः ७। इष्टाः-इष्यन्ते प्रयोजनवशाद् अर्थक्रियार्थिभिर्मनोरथपूरकत्वादिति तथोक्ताः, तद्भिन्ना अनिष्टाः ८। एवं कान्ताः=कमनीयाः विशिष्टवर्णादिसम्पन्नाः।९। प्रियाः=

हो सकती है इसमें जो विवक्षित पर्याय से अतीत-रहित पुद्गल हैं वे पर्यायातीत पुद्गल है और इनसे भिन्न जो पुद्गल हैं वे "अपर्यायातीत" पुद्गल है। ६।

आत्त और अनात्त के भेद से भी पुद्गल दो प्रकार के हैं- इन में जो पुद्गल जीव के द्वारा शरीर आदि रूप से गृहीत किये गये हैं वे आत्त पुद्गल है अथवा जो परिग्रहमात्र रूप से गृहीत किये गये है वे आत्त पुद्गल हैं इनसे भिन्न अनात्त पुद्गल हैं इष्ट और अनिष्टरूपसे भी पुद्गल दो प्रकार के है, अर्थक्रियार्थियों द्वारा मनोरथपूरक होने से जो प्रयोजनवश अभिलषित होते हैं वे पुद्गल इष्ट पुद्गल हैं और इनसे भिन्न जो पुद्गल है वे अनिष्ट पुद्गल है। ८।

इसी प्रकार कान्त, प्रिय, मनोज्ञ और मन आम पुद्गल भी अपने २ विपक्ष सहित समझना चाहिये अर्थात् कान्त और अकान्त के भेद से भी पुद्गल दो प्रकार के होते है इनमें जो पुद्गल विशिष्ट वर्णादिकों

વિવક્ષિત પર્યાયથી અતીત (રહિત) હોય છે તેમને 'પર્યાયાતીત પુદ્ગલો' કહે છે અને તેમનાથી ભિન્ન એવાં જે પુદ્ગલો હોય છે, તેમને "અપર્યાયાતીત પુદ્ગલો" કહે છે ॥ ૬ ॥

આત્ત અને અનાત્તના ભેદથી પણ પુદ્ગલોના બે પ્રકાર પડે છે જે પુદ્ગલોને જીવ દ્વારા શરીર આદિ રૂપે ગ્રહણ કરવામાં આવેલાં હોય છે, તે પુદ્ગલોને આત્તપુદ્ગલો કહે છે અથવા જે પુદ્ગલોને પરિગ્રહમાત્ર રૂપે ગૃહીત કરાયેલ છે, તેમને આત્તપુદ્ગલો કહે છે, તેમનાથી ભિન્ન પુદ્ગલોને અનાત્ત પુદ્ગલો કહે છે ॥ ૭ ॥

ઇષ્ટ અને અનિષ્ટના ભેદથી પણ પુદ્ગલોના બે પ્રકાર કહ્યા છે. અર્થ ક્રિયાર્થીઓને માટે જે પુદ્ગલો મનોરથપૂર્ણ કરનાર અને અભિલષિત હોય છે તે પુદ્ગલોને ઇષ્ટ પુદ્ગલો કહે છે, તેના કરતાં ભિન્ન પુદ્ગલોને અનિષ્ટ પુદ્ગલો કહે છે ॥ ૮ ॥

એજ પ્રમાણે કાન્ત, પ્રિય, મનોજ્ઞ અને મન આમ પુદ્ગલો પણ પોત પોતાના વિપક્ષથી યુક્ત હોય છે જેમકે કાન્ત અને અકાન્તના ભેદથી પણ પુદ્ગલોના બે પ્રકાર પડે છે જે પુદ્ગલો વિશિષ્ટ વર્ણાદિકોથી યુક્ત હોય છે,

चरित्तायारे दुविहे पण्णत्ते तं जहा—तवायारे चेव वीरियायारे चेव ४। दो पडिमाओ पण्णत्ताओ तं जहा—समाहिपडिमा चेव उवहाणपडिमा चेव ५। दो पडिमाओ पण्णत्ताओ तं जहा—विवेगपडिमा चेव विउसग्गपडिमा चेव ६। दो पडिमाओ पण्णत्ताओ, तं जहा—भद्दा चेव सुभद्दा चेव ७। दो पडिमाओ पण्णत्ताओ तं जहा—महाभद्दा चेव सव्वओ भद्दा चेव ८। दो पडिमाओ पण्णत्ताओ तं जहा—खुड्डा चेव मोयपडिमा महल्लिया चेव मोयपडिमा ९। दो पडिमाओ पण्णत्ताओ तं जहा—जवमज्झा चेव चंदपडिमा वइरमज्झा चेव चंद पडिमा१०। दुविहे सामाइए पण्णत्ते, तं जहा – अगारसमाइए चेव अणगार सामाइए चेव ॥ सू० २८ ॥

छाया—द्विविध आचारः प्रज्ञप्तस्तद्यथा—ज्ञानाचारश्चैव नोज्ञानाचारश्चैव १। नोज्ञानाचारो द्विविधः प्रज्ञप्तस्तद्यथा—दर्शनाचारश्चैव नोदर्शनाचारश्चैव२। नोदर्शनाचारो द्विविधः प्रज्ञप्तस्तद्यथा चारित्राचारश्चैव नोचारित्राचारश्चैव३। नोचारित्राचारो द्विविधः प्रज्ञप्तस्तद्यथा—तप आचारश्चैव वीर्याचारश्चैव४। द्वे प्रतिमे प्रज्ञप्ते तद्यथा—समाधिप्रतिमा चैव उपधानप्रतिमा चैव५। द्वे प्रतिमे प्रज्ञप्ते तद्यथा—विवेकप्रतिमा चैव व्युत्सर्गप्रतिमा चैव ६। द्वे प्रतिमे प्रज्ञप्ते तद्यथा भद्रा चैव सुभद्रा चैव ७। द्वे प्रतिमे प्रज्ञप्ते तद्यथा—महाभद्रा चैव सर्वतोभद्रा चैव ८। द्वे प्रतिमे प्रज्ञप्ते तद्यथा—क्षुद्रा चैव मोकप्रतिमा महती चैव मोकप्रतिमा९। द्वे प्रतिमे प्रज्ञप्ते तद्यथा—यवमध्या चैव चन्द्रप्रतिमा वज्रमध्या चैव चन्द्रप्रतिमा १०। द्विविधः सामायिकः प्रज्ञप्तस्तद्यथा—आगारसामायिकश्चैव अणगार सामायिकश्चैव ॥सू०२८

टीका—'दुविहे आयारे' इत्यादि सूत्रचतुष्टयं कण्ठचम्, नवरम्—आचर्यते गुणवृद्धय इति—आचारः शास्त्रविहितो व्यवहार इत्यर्थः ज्ञानं=श्रुतज्ञानं, तद्वि-

---

पुद्गलों के धर्म कहे जा चुके हैं अब धर्माधिकार को लेकर ही सूत्रकार जीवधर्मों का कथन करते हैं—'दुविहे आयारे पण्णत्ते इत्यादि।

પુદ્ગલોના ધર્મનું નિરૂપણ પૂરૂ થયુ હવે ધર્માધિકારની અપેક્ષાએ સૂત્રકાર જીવધર્મોનુ કથન કરે છે " दुविहे आयारे पण्णत्ते " ઇત્યાદિ—

टीका—'दुविहा सद्दा' इत्यादि।

अस्य व्याख्या-अन्यत्रकृतपूर्वसूत्र गता ॥ सू० २७॥

उक्ता पुद्गलधर्माः, सम्प्रति धर्माधिकाराज्जीवधर्मानाह—

मूलम्—दुविहे आयारे पण्णत्ते, तं जहा नाणायारे चेव नोनाणायारे चेव १। नोनाणायारे दुविहे पण्णत्ते तं जहा दंसणायारे चेव नोदंसणायारे चेव २। नोदंसणायारे दुविहे पण्णत्ते, तं जहा चरित्तायारे चेव नोचरित्तायारे चेव ३। नो

पुद्गलाधिकार होने से ही अब सूत्रकार उनके धर्मरूप शब्दादिकों का आत्तादि विशेषण सहित वर्णन करते हैं—

'दुविहा सद्दा पण्णत्ता' इत्यादि।

टीकार्थ—शब्द दो प्रकार के कहे गये हैं एक आत्तशब्द और दूसरे अनात्तशब्द इसी प्रकार से ये इष्ट से लेकर यावत् मन आम तक दो दो प्रकार के होते हैं ऐसा जानना चाहिये।

इसी प्रकार से रूप आत्त और अनात्त के भेद से दो प्रकार के होते हैं इनके शेष प्रकार जो इष्ट से लगाकर मन आम तक हैं उनका भी कथन करना चाहिये इसी प्रकार से गंध, रस और स्पर्शों का भी कथन करना चाहिये अर्थात् एक एक में आत्तादिक १-१ आलापक कहना चाहिये इस सूत्र की व्याख्या स्पष्ट है ॥सू०२७॥

પુદ્ગલોનું વક્તવ્ય ચાલી રહ્યું છે તેથી હવે સૂત્રકાર તેમના ધર્મરૂપ શબ્દાદિકોનું આત્તાદિ વિશેષણો સહિત વર્ણન કરે છે—

દુવિહા સદ્દા પણ્ણત્તા ' ઇત્યાદિ

ટીકાર્થ—શબ્દ બે પ્રકારના કહ્યા છે-(૧) આત્ત શબ્દ અને (૨) અનાત્ત શબ્દ એજ પ્રમાણે ઇષ્ટ અનિષ્ટથી લઈને મન આમ, મનો અનામ પર્યન્તના તેના બબ્બે પ્રકારો પણ ઉપર મુજબ જ સમજવા

એજ પ્રમાણે રૂપના પણ આત્ત, અનાત્તથી લઈને મન આમ, મના અનામ પર્યન્તના બબ્બે પ્રકારોનું કથન પણ સમજી લેવું એજ પ્રમાણે ગંધ, રસ અને સ્પર્શોના ભેદોનું કથન પણ સમજવું એટલે કે પ્રત્યેકના વિષયમાં આત્તાદિક ૧-૧ આલાપક કહેવા જોઈએ આ સૂત્રની વ્યાખ્યા સ્પષ્ટ હોવાથી વધુ વિવેચન કર્યું નથી. ॥ સૂ. ૨૭ ॥

चरित्तायारे दुविहे पण्णत्ते तं जहा–तवायारे चेव वीरियायारे चेव ४। दो पडिमाओ पण्णत्ताओ तं जहा–समाहिपडिमा चेव उवहाणपडिमा चेव ५। दो पडिमाओ पण्णत्ताओ तं जहा–विवेगपडिमा चेव विउसग्गपडिमा चेव ६। दो पडिमाओ पण्णत्ताओ, तं जहा–भद्दा चेव सुभद्दा चेव ७। दो पडिमाओ पण्णत्ताओ तं जहा–महाभद्दा चेव सव्वओ भद्दा चेव ८। दो पडिमाओ पण्णत्ताओ तं जहा–खुड्डा चेव मोयपडिमा महल्लिया चेव मोयपडिमा ९। दो पडिमाओ पण्णत्ताओ तं जहा–जवमज्झा चेव चंदपडिमा वइरमज्झा चेव चंद पडिमा१०। दुविहे सामाइए पण्णत्ते, तं जहा – अगारसमाइए चेव अणगार सामाइए चेव ॥ सू० २८ ॥

छाया—द्विविध आचारः प्रज्ञप्तस्तद्यथा–ज्ञानाचारश्चैव नोज्ञानाचारश्चैव १। नोज्ञानाचारो द्विविध प्रज्ञप्तस्तद्यथा–दर्शनाचारश्चैव नोदर्शनाचारश्चैव२। नोदर्शनाचारो द्विविधः प्रज्ञप्तस्तद्यथा-चारित्राचारश्चैव नोचारित्राचारश्चैव३। नोचारित्राचारो द्विविधः प्रज्ञप्तस्तद्यथा–तप आचारश्चैव वीर्याचारश्चैव४। द्वे प्रतिमे प्रज्ञप्ते तद्यथा –समाधिप्रतिमा चैव उपधानप्रतिमा चैव५। द्वे प्रतिमे प्रज्ञप्ते तद्यथा–विवेकप्रतिमा चैव व्युत्सर्गप्रतिमा चैव ६। द्वे प्रतिमे प्रज्ञप्ते तद्यथा भद्रा चैव सुभद्रा चैव ७। द्वे प्रतिमे प्रज्ञप्ते तद्यथा–महाभद्रा चैव सर्वतोभद्रा चैव ८। द्वे प्रतिमे प्रज्ञप्ते तद्यथा–क्षुद्रा चैव मोकप्रतिमा महती चैव मोकप्रतिमा९। द्वे प्रतिमे प्रज्ञप्ते तद्यथा–यवमध्या चैव चन्द्रप्रतिमा वज्रमध्या चैव चन्द्रप्रतिमा १०। द्विविधः सामायिकः प्रज्ञप्तस्तद्यथा–आगारसामायिकश्चैव अणगार सामायिकश्चैव ॥सू०२८

टीका—'दुविहे आयारे' इत्यादि सूत्रचतुष्टयं कण्ठ्यम्, नवरम्–आचर्यतेगुणवृद्धय इति–आचारः शास्त्रविहितो व्यवहार इत्यर्थः ज्ञानं=श्रुतज्ञानं, तद्वि-

---

पुद्गलों के धर्म कहे जा चुके हैं अब धर्माधिकार को लेकर ही सूत्रकार जीवधर्मों का कथन करते हैं–'दुविहे आयारे पण्णत्ते इत्यादि।

પુદ્ગલોના ધર્મનું નિરૂપણ પૂરૂં થયું હવે ધર્માધિકારની અપેક્ષાએ સૂત્રકાર જીવધર્મોનું કથન કરે છે "दुविहे आयारे पण्णत्ते" ઈત્યાદિ—

टीका—' दुविहा सद्दा ' इत्यादि।

अस्य व्याख्या-अनन्तरोदितपूर्वसूत्रवत् गता ॥ सू० २७॥

उक्ताः पुद्गलधर्माः, सम्प्रति धर्माधिकाराज्जीवधर्मानाह—

मूलम्—दुविहे आयारे पण्णत्ते, तं जहा नाणायारे चेव नोनाणायारे चेव १। नोनाणायारे दुविहे पण्णत्ते तं जहा दंसणायारे चेव नोदंसणायारे चेव २। नोदंसणायारे दुविहे पण्णत्ते, तं जहा चरित्तायारे चेव नोचरित्तायारे चेव ३। नो

पुद्गलाधिकार होने से ही अब सूत्रकार उनके धर्मरूप शब्दादिकों का आत्तादि विशेषण सहित वर्णन करते हैं—

' दुविहा सद्दा पण्णत्ता ' इत्यादि।

टीकार्थ—शब्द दो प्रकार के कहे गये हैं एक आत्तशब्द और दूसरे अनात्तशब्द इसी प्रकार से ये इष्ट से लेकर यावत् मन आम तक दो दो प्रकार के होते हैं ऐसा जानना चाहिये।

इसी प्रकार से रूप आत्त और अनात्त के भेद से दो प्रकार के होते हैं इनके शेष प्रकार जो इष्ट से लगाकर मन आम तक हैं उनका भी कथन करना चाहिये इसी प्रकार से गंध, रस और स्पर्शों का भी कथन करना चाहिये अर्थात् एक एक में आत्तादिक ६-६ आलापक कहना चाहिये इस सूत्र की व्याख्या स्पष्ट है ॥सू०२७॥

પુદ્ગલોનું કથન ચાલી રહ્યું છે તેથી હવે સૂત્રકાર તેમના ધર્મરૂપ શબ્દાદિકોનું આત્તાદિ વિશેષણો સહિત વર્ણન કરે છે—

' दुविहा सद्दा पण्णत्ता " ઇત્યાદિ

ટીકાર્થ—શબ્દ બે પ્રકારના કહ્યા છે-(૧) આત્ત શબ્દ અને (૨) અનાત્ત શબ્દ. એજ પ્રમાણે ઇષ્ટ, અનિષ્ટથી લઈને મન આમ, મનઃ અનામ પર્યન્તના તેના બબ્બે પ્રકારો પણ ઉપર મુજબ જ સમજવા

એજ પ્રમાણે રૂપના પણ આત્ત અનાત્તથી લઈને મન આમ, મનઃ અનામ પર્યન્તના બબ્બે પ્રકારોનું કથન પણ સમજી લેવું એજ પ્રમાણે ગંધ, રસ અને સ્પર્શોના ભેદોનું કથન પણ સમજવું એટલે કે પ્રત્યેકના વિષયમાં આત્તાદિક ૬-૬ આલાપક કહેવા જોઈએ. આ સૂત્રની વ્યાખ્યા સ્પષ્ટ હોવાથી વધુ વિવેચન કર્યું નથી. ॥ સૂ. ૨૭ ॥

चरित्तायारे दुविहे पण्णत्ते तं जहा—तवायारे चेव वीरियायारे चेव ४। दो पडिमाओ पण्णत्ताओ तं जहा—समाहिपडिमा चेव उवहाणपडिमा चेव ५। दो पडिमाओ पण्णत्ताओ तं जहा—विवेगपडिमा चेव विउसग्गपडिमा चेव ६। दो पडिमाओ पण्णत्ताओ, तं जहा—भद्दा चेव सुभद्दा चेव ७। दो पडिमाओ पण्णत्ताओ तं जहा—महाभद्दा चेव सव्वओ भद्दा चेव ८। दो पडिमाओ पण्णत्ताओ तं जहा—खुड्डा चेव मोयपडिमा महल्लिया चेव मोयपडिमा ९। दो पडिमाओ पण्णत्ताओ तं जहा—जवमज्झा चेव चंदपडिमा वइरमज्झा चेव चंद पडिमा१०। दुविहे सामाइए पण्णत्ते, तं जहा – अगारसमाइए चेव अणगार सामाइए चेव ॥ सू० २८॥

छाया—द्विविध आचारः प्रज्ञप्तस्तद्यथा—ज्ञानाचारश्चैव नोज्ञानाचारश्चैव १। नोज्ञानाचारो द्विविधः प्रज्ञप्तस्तद्यथा—दर्शनाचारश्चैव नोदर्शनाचारश्चैव२। नोदर्शनाचारो द्विविधः प्रज्ञप्तस्तद्यथा चारित्राचारश्चैव नोचारित्राचारश्चैव३। नोचारित्राचारो द्विविधः प्रज्ञप्तस्तद्यथा—तप आचारश्चैव वीर्याचारश्चैव४। द्वे प्रतिमे प्रज्ञप्ते तद्यथा—समाधिप्रतिमा चैव उपधानप्रतिमा चैव५। द्वे प्रतिमे प्रज्ञप्ते तद्यथा—विवेकप्रतिमा चैव व्युत्सर्गप्रतिमा चैव ६। द्वे प्रतिमे प्रज्ञप्ते तद्यथा भद्रा चैव सुभद्रा चैव ७। द्वे प्रतिमे प्रज्ञप्ते तद्यथा—महाभद्रा चैव सर्वतोभद्रा चैव ८। द्वे प्रतिमे प्रज्ञप्ते तद्यथा—क्षुद्रा चैव मोकप्रतिमा महती चैव मोकप्रतिमा९। द्वे प्रतिमे प्रज्ञप्ते तद्यथा—यवमध्या चैव चन्द्रप्रतिमा वज्रमध्या चैव चन्द्रप्रतिमा १०। द्विविधः सामायिकः प्रज्ञप्तस्तद्यथा—आगारसामायिकश्चैव अणगार सामायिकश्चैव ॥सू.२८

टीका—'दुविहे आयारे' इत्यादि सूत्रचतुष्टयं कण्ठ्यम्, नवरम्—आचर्यतेगुणविवृद्धय इति—आचारः शास्त्रविहितो व्यवहार इत्यर्थः ज्ञानं=श्रुतज्ञानं, तद्वि-

---

पुद्गलों के धर्म कहे जा चुके हैं अब धर्माधिकार को लेकर ही सूत्रकार जीवधर्मों का कथन करते हैं—'दुविहे आयारे पण्णत्ते इत्यादि।

પુદ્ગલોના ધર્મનું નિરૂપણ પૂરૂ થયું હવે ધર્માધિકારની અપેક્ષાએ સૂત્રકાર જીવધર્મોનું કથન કરે છે "दुविहे आयारे पण्णत्ते" ઈત્યાદિ—

पय आचारो ज्ञानाचारः, स कालादिरष्टधा,

उक्तञ्च—" काले १ विणए २ बहुमाणे ३ उवहाणे ४ चेव तह अनिण्हवणे५।
वंजण ६ अत्थ ७ तदुभए ८, अट्ठविहो नाणमायारो १॥ " इति।
छाया—कालो विनयो बहुमानः, उपधान चैव तथाऽनिह्नवनम्।
व्यञ्जनम् (सूत्रम्) अर्थस्तदुभयम्, अष्टविधो ज्ञानाचारः॥ इति।

टीकार्थ—आचार दो प्रकार का कहा गया है एक ज्ञानाचार और दूसरा नो ज्ञानाचार, इनमें नो ज्ञानाचार दो प्रकार का है-एक दर्शना चार और दूसरा नोदर्शनाचार, नो दर्शनाचार के भी दो भेद हैं-एक चारित्राचार और दूसरा नो चारित्राचार, नो चारित्राचार भी दो भेद वाला कहा गया है-एक तप आचार और दूसरा वीर्याचार, प्रतिमा दो प्रकार की कही गई है-एक समाधि प्रतिमा और दूसरी उपधानप्रतिमा इस प्रकार से भी प्रतिमा के दो भेद कहे गये हैं-एक विवेक प्रतिमा और दूसरी व्युत्सर्गप्रतिमा भद्रा और सुभद्रा के भेद से भी प्रतिमा के दो भेद होते हैं, तथा महाभद्रा और सर्वतोभद्रा इस प्रकार से भी प्रतिमाके दो भेद हैं, क्षुद्रा मोकप्रतिमा और महती मोक प्रतिमाके भेदसे भी प्रतिमा दो प्रकार की है यवमध्या चन्द्रप्रतिमा और वज्रमध्या चन्द्रप्र तिमा इस तरहसे भी प्रतिमा दो प्रकारकी है सामायिक भी दो प्रकारका कहा गया है-एक अगार सामायिक और दूसरा अनगार सामायिक।

ટીકાર્થ—આચાર બે પ્રકારના કહ્યા છે—(૧) જ્ઞાનાચાર, (૨) નોજ્ઞાના ચાર નોજ્ઞાનાચારના નીચે પ્રમાણે બે પ્રકાર છે-(૧) દર્શનાચાર અને (૨) નોદર્શનાચાર. નોદર્શનાચારના પણ નીચે પ્રમાણે બે ભેદ છે-(૧) ચારિત્રા ચાર અને (૨) નોચારિત્રાચાર. નોચારિત્રાચારના પણ બે ભેદ કહ્યા છે—(૧) તપ આચાર અને (૨) વીર્યાચાર પ્રતિમા (સાધુના અભિગ્રહરૂપ નિયમને પ્રતિમા કહે છે.) બે પ્રકારની કહી છે-(૧) સમાધિ પ્રતિમા અને ઉપધાન પ્રતિમા પ્રતિમાના આ પ્રમાણે બે ભેદ પણ કહ્યા છે (૧) વિવેક પ્રતિમા અને (૨) વ્યુત્સર્ગ પ્રતિમા. ભદ્રા અને સુભદ્રાના ભેદથીપણ પ્રતિમા બે પ્રકા રની કહી છે તથા મહાભદ્રા અને સર્વતોભદ્રા નામનાપણ પ્રતિમાના બે ભેદ કહ્યા છે તેના ક્ષુદ્રામોક પ્રતિમા અને મહતીમોક પ્રતિમા, આ બે ભેદ પણ કહ્યા છે આ સિવાય પ્રતિમાના નીચે પ્રમાણે બેભેદ પણ કહ્યા છે-(૧) યવ મધ્યાચન્દ્ર પ્રતિમા અને (૨) વજ્રમધ્યાચન્દ્ર પ્રતિમા સામાયિકના પણ બે પ્રકાર કહ્યા છે-(૧) અગાર સામાયિક અને અનગાર સામાયિક અહીં ચાર સૂત્ર સરળ છે શ્રુતોની વૃદ્ધિ માટે જે આચરવામાં આવે છે તેને આચાર કહે

नो ज्ञानाचारः-तद्भिन्नो दर्शनाद्याचार इति १। दर्शनं=सम्यक्त्वं, तदाचारो दर्शनाचारः स निश्शङ्कितादिरष्टविध एव,

उक्तञ्च—"णिस्संकिय १ निक्कंखिय २, निव्वितिगिच्छा ३ अमूढदिट्ठी४य। उववूह ५ थिरीकरणे ६, वच्छल्ल ७पभावणे ८ अट्ठ" ॥१॥ इति।

छाया—निश्शङ्कितो १ निष्काङ्क्षितो २ निर्विचिकित्सा३ऽमूढ दृष्टिश्च ४। उपबृंहा५ (वृद्धिकरणं प्रशंसाच) स्थिरीकरणं६,वात्सल्यं७ प्रभावना८ अष्ट।'इति

इसमें चार सूत्र सुगम है जो गुणों की वृद्धि के लिये आचरित किया जाता है उसका नाम आचार है अर्थात् शास्त्रविहित जो मार्ग है-व्यवहार है वह आचार है, श्रुतज्ञान का नाम ज्ञान है इस श्रुतज्ञानविषयक जो आचार है वह ज्ञानाचार है यह ज्ञानाचार काल आदि के भेद से आठ प्रकार का है।-कहा भी है-' काले विणए' इत्यादि।

कालाचार, विनयाचार, बहुमानाचार, उपधानाचार, अनिह्नवाचार, व्यञ्जचार, अर्थाचार और तदुभयाचार ज्ञानाचार से भिन्न जो आचार है वह नोज्ञानाचार है यह नोज्ञानाचार दर्शनाचार और नोदर्शनाचार के भेद से दो प्रकार का कहा गया है। दर्शन शब्द का अर्थ सम्यक्त्व है सम्यक्त्व विषयक जो आचार है वह दर्शनाचार है यह दर्शनाचार निःशंकित आदि के भेद से आठ प्रकार का है।

कहा भी है-' निस्संकिय निक्कंखिय' इत्यादि।

છે. એટલે કે શાસ્ત્રવિહિત જે માર્ગ (વ્યવહાર) છે, તેનું નામ આચાર છે. શ્રુતજ્ઞાનનું નામ જ્ઞાન છે. તે શ્રુતજ્ઞાન વિષયક જે આચાર છે તે આચારને જ્ઞાનાચાર કહે છે. તે જ્ઞાનાચાર કાળ આદિના ભેદથી આઠ પ્રકારના છે. કહ્યું પણ છે કે—

"काले विणए" ઇત્યાદિ-તે પ્રકારો નીચે પ્રમાણે છે-(૧) કાલાચાર, (૨) વિનયાચાર, (૩) બહુમાનાચાર, (૪) ઉપધાનાચાર, (૫) અનિહ્નવાચાર, (૬) વ્યંજનાચાર, (૭) અર્થાચાર અને (૮) તદુભયાચાર.

જ્ઞાનાચારથી ભિન્ન જે આચાર છે તેને નોજ્ઞાનાચાર કહે છે. તે નોજ્ઞાનાચારના બે ભેદ કહ્યા છે-(૧) દર્શનાચાર અને (૨) નોદર્શનાચાર. દર્શન એટલે સમ્યક્ત્વ. સમ્યકત્વ વિષયક જે આચાર છે, તે આચારને દર્શનાચાર કહે છે. તે દર્શનાચાર નિશકિત આદિના ભેદથી આઠ પ્રકારના છે. કહ્યું પણ છે કે—

"निस्संखिय निक्कंखिय" ઇત્યાદિ—તે આઠ ભેદો નીચે પ્રમાણે છે—

पय आचारो ज्ञानाचारः, स कालादिरष्टधा,

उक्तञ्च—"काले १ विणए २ बहुमाणे ३ उवहाणे ४ चेव तह अनिण्हवणे५।
वंजण ६ अत्थ ७ तदुभए ८, अट्ठविहो नाणमायारो १॥" इति।
छाया—कालो विनयो बहुमानः, उपधान चैव तथाऽनिह्नवनम्।
व्यञ्जनम् (सूत्रम्) अर्थस्तदुभयम्। अष्टविधो ज्ञानाचारः॥ इति।

टीकार्थ—आचार दो प्रकार का कहा गया है एक ज्ञानाचार और दूसरा नो ज्ञानाचार, इनमें नो ज्ञानाचार दो प्रकार का है—एक दर्शनाचार और दूसरा नोदर्शनाचार, नो दर्शनाचार के भी दो भेद हैं—एक चारित्राचार और दूसरा नो चारित्राचार, नो चारित्राचार भी दो भेद वाला कहा गया है—एक तप आचार और दूसरा वीर्याचार, प्रतिमा दो प्रकार की कही गई है—एक समाधि प्रतिमा और दूसरी उपधानप्रतिमा इस प्रकार से भी प्रतिमा के दो भेद कहे गये हैं—एक विवेक प्रतिमा और दूसरी व्युत्सर्गप्रतिमा भद्रा और सुभद्रा के भेद से भी प्रतिमा के दो भेद होते हैं, तथा महाभद्रा और सर्वतोभद्रा इस प्रकार से भी प्रतिमाके दो भेद हैं, क्षुद्रा मोकप्रतिमा और महती मोक प्रतिमाके भेदसे भी प्रतिमा दो प्रकार की है यवमध्या चन्द्रप्रतिमा और वज्रमध्या चन्द्रप्रतिमा इस तरहसे भी प्रतिमा दो प्रकारकी है सामायिक भी दो प्रकारका कहा गया है—एक अगार सामायिक और दूसरा अनगार सामायिक।

ટીકાર્થ—આચાર બે પ્રકારના કહ્યા છે—(૧) જ્ઞાનાચાર, (૨) નોજ્ઞાનાચાર. નોજ્ઞાનાચારના નીચે પ્રમાણે બે પ્રકાર છે-(૧) દર્શનાચાર અને (૨) નોદર્શનાચાર. નોદર્શનાચારના પણ નીચે પ્રમાણે બે ભેદ છે—(૧) ચારિત્રાચાર અને (૨) નોચારિત્રાચાર. નોચારિત્રાચારના પણ બે ભેદ કહ્યા છે—(૧) તપ આચાર અને (૨) વીર્યાચાર. પ્રતિમા (સાધુના અભિગ્રહરૂપ નિયમને પ્રતિમા કહે છે.) બે પ્રકારની કહી છે-(૧) સમાધિ પ્રતિમા અને ઉપધાન પ્રતિમા. પ્રતિમાના આ પ્રમાણે બે ભેદ પણ કહ્યા છે (૧) વિવેક પ્રતિમા અને (૨) વ્યુત્સર્ગ પ્રતિમા ભદ્રા અને સુભદ્રાના ભેદથીપણ પ્રતિમા બે પ્રકારની કહી છે તથા મહાભદ્રા અને સર્વતોભદ્રા નામનાપણ પ્રતિમાના બે ભેદ કહ્યા છે. તેના ક્ષુદ્રામોક પ્રતિમા અને મહતીમોક પ્રતિમા, આ બે ભેદ પણ કહ્યા છે આ સિવાય પ્રતિમાના નીચે પ્રમાણે બેભેદ પણ કહ્યા છે-(૧) યવમધ્યાચન્દ્ર પ્રતિમા અને (૨) વજ્રમધ્યાચન્દ્ર પ્રતિમા. સામાયિકના પણ બે પ્રકાર કહ્યા છે-(૧) અગાર સામાયિક અને અનગાર સામાયિક અહીં ચાર સૂત્ર સરળ છે બુધોની વૃદ્ધિ માટે જે આચરવામાં આવે છે તેને આચાર કહે

नो ज्ञानाचारः-तद्भिन्नो दर्शनाद्याचार इति १। दर्शनं=सम्यक्त्वं, तदाचारो दर्शनाचारः स निश्शङ्कितादिरष्टविध एव,

उक्तञ्च—" णिस्संकिय १ निक्कंखिय २, निव्वितिगिच्छा ३ अमूढदिट्ठी४य। उववूह ५ थिरीकरणे ६, वच्छल्ल ७पभावणे ८ अट्ठ" ॥१॥ इति।

छाया—निश्शङ्कितो १ निष्काङ्क्षितो २ निर्विचिकित्सा३ऽमूढ दृष्टिश्च ४। उपबृंहा५ (वृद्धिकरणं प्रशंसाच) स्थिरीकरणं६,वात्सल्यं७ प्रभावना८ अष्ट।'इति

इसमें चार सूत्र सुगम है जो गुणों की वृद्धि के लिये आचरित किया जाता है उसका नाम आचार है अर्थात् शास्त्रविहित जो मार्ग है-व्यवहार है वह आचार है, श्रुतज्ञान का नाम ज्ञान है इस श्रुतज्ञानविषयक जो आचार है वह ज्ञानाचार है यह ज्ञानाचार काल आदि के भेद से आठ प्रकार का है।-कहा भी है-' काले विणए ' इत्यादि।

कालाचार, विनयाचार, बहुमानाचार, उपधानाचार, अनिह्ववाचार, व्यञ्जचार, अर्थाचार और तदुभयाचार ज्ञानाचार से भिन्न जो आचार है वह नोज्ञानाचार है यह नोज्ञानाचार दर्शनाचार और नोदर्शनाचार के भेद से दो प्रकार का कहा गया है। दर्शन शब्द का अर्थ सम्यक्त्व है सम्यक्त्व विषयक जो आचार है वह दर्शनाचार है यह दर्शनाचार निःशंकित आदि के भेद से आठ प्रकार का है।

कहा भी है-' निस्संकिय निक्कंखिय ' इत्यादि।

છે. એટલે કે શાસ્ત્રવિહિત જે માર્ગ (વ્યવહાર) છે, તેનું નામ આચાર છે શ્રુતજ્ઞાનનું નામ જ્ઞાન છે. તે શ્રુતજ્ઞાન વિષયક જે આચાર છે તે આચારને જ્ઞાનાચાર કહે છે. તે જ્ઞાનાચાર કાળ આદિના ભેદથી આઠ પ્રકારના છે. કહ્યું પણ છે કે—

" काले विणए " ઇત્યાદિ–તે પ્રકારો નીચે પ્રમાણે છે-(૧) કાલાચાર, (૨) વિનયાચાર, (૩) બહુમાનાચાર, (૪) ઉપધાનાચાર, (૫) અનિહ્નવાચાર, (૬) વ્યંજનાચાર, (૭) અર્થાચાર અને (૮) તદુભયાચાર.

જ્ઞાનાચારથી ભિન્ન જે આચાર છે તેને નોજ્ઞાનાચાર કહે છે. તે નોજ્ઞાનાચારના બે ભેદ કહ્યા છે-(૧) દર્શનાચાર અને (૨) નોદર્શનાચાર. દર્શન એટલે સમ્યકત્વ. સમ્યકત્વ વિષયક જે આચાર છે, તે આચારને દર્શનાચાર કહે છે તે દર્શનાચાર નિશકિત આદિના ભેદથી આઠ પ્રકારના છે. કહ્યું પણ છે કે—

" निस्संखिय निक्कंखिय " ઇત્યાદિ—તે આઠ ભેદો નીચે પ્રમાણે છે—

नो दर्शनाचार'=चारित्राचार –समितिपञ्चकगुप्तित्रयरूपोऽष्टधा, उक्तञ्च—
" पणिहाणजोगजुत्तो पचहिं समिईहिं तीहिं गुत्तीहिं।
एसचरित्तायारो, अट्ठविहो होइ नायव्वो ॥ १ ॥" इति।
छाया—प्रणिधानयोगयुक्तः (मनःस्वस्थमनोवाक्कायसंपन्नः) पञ्चभिः
समितिभिस्तिसृभिर्गुप्तिभिः। एष चारित्राचार,
अष्टविधो भवति ज्ञातव्य ॥१॥ इति।
नो चारित्राचार –तप आचारादि ९। तत्र आचारो द्वादशविधः,
आह च—" बारसविहंमि वि तवे, सब्भतर बाहिरे कुसलदिट्ठे
अगिलाइ अणाजीवी, नायव्वो सो तवायारो ॥" इति।

निःशंकित, निः कांक्षित, निर्विचिकित्सा, अमूढदृष्टि, उपबृंहा, स्थिरीकरण, वात्सल्य और प्रभावना

नो दर्शनाचार से चारित्रादि का ग्रहण हुआ है चारित्राचार पांच समिति, तीनगुप्ति, रूप होता है अतः यह आठ प्रकार का है।

कहा भी है–' पणिहाणजोगजुत्तो ' इत्यादि।

प्रशस्त मन, वचन और काय से सपन्न रहना इसका नाम चारित्र है इस चारित्र का आचरण पांच समितियों से और तीन गुप्तियों से युक्त हुए सयमी जीव क होता है नो चारित्र से तप आचार आदि गृहीत हुए हैं–यह तप आचार बारह प्रकार का होता है–६ बाह्य तपरूप और ६ आभ्यन्तर तपरूप।

कहा भी है–' बारसविहंमि वि तवे ' इत्यादि।

जिनोपदिष्ट बारह प्रकार के तप में बाह्य आभ्यन्तर तप में–जो

(૧) નિઃશંકિત (૨) નિઃકાંક્ષિત (૩) નિર્વિચિકિત્સા, (૪) અમૂઢ દૃષ્ટિ (૫) ઉપબૃંહ, (૬) સ્થિરીકરણ, વાત્સલ્ય અને (૮) પ્રભાવના

નો દર્શનાચાર દ્વારા ચારિત્રાદિને ગ્રહણ કરાયા છે ચારિત્રાચાર પાંચ સમિતિ અને ત્રણ ગુપ્તિરૂપ હોય છે તેથી તેના આઠ પ્રકાર કહ્યા છે કહ્યું પણ છે કે—

' પણિહાણ જોગજુત્તો ' ઇત્યાદિ-પ્રશસ્ત મન વચન અને કાયથી સંપન્ન રહેવું તેનું નામ ચારિત્ર છે પાંચ સમિતિઓ અને ત્રણ ગુપ્તિઓથી યુક્ત સયમી જીવ દ્વારા આ ચારિત્રનું આચરણ (પાલન) કરાય છે

' નો ચારિત્ર ' પદ દ્વારા તપ આચાર આદિ ગૃહીત થયેલ છે તે તપ આચાર ૧૨ પ્રકારના છે તેમાંથી ૬ બાહ્ય તપરૂપ અને ૬ આભ્યન્તર તપરૂપ છે કહ્યું પણ છે કે—

બારસવિહંમિ વિ તવે ઇત્યાદિ જિનોપદિષ્ટ બાર પ્રકારના (બાહ્ય અને આભ્યન્તર) તપમાં આ લોક આદિની આશા સાથી (અભિલાષાથી)

छाया—द्वादशविधेऽपि तपसि, साभ्यन्तर बाह्ये कुशलदृष्टे, (जिनोपदिष्टे)। अग्लानी अनाजीवी (इहलोकाद्याशंसावर्जितः) ज्ञातव्यः स तप आचारः ॥ इति।

वीर्याचारस्तु-ज्ञानादौ स्वशक्तेरगोपनं नातिक्रमणं चेति, तदाह—

"अणिगूहिय बलवीरिओ परक्कमइ जो जहुत्तमाउत्तो।
जुंजइ य जहाथामं, नायव्वो विरियायारो" ॥१॥ इति।

छाया—अनिगूहित बलवीर्यः, पराक्रमते यो यथोक्तमायुक्तः।
युनक्ति च यथास्थामं, ज्ञातव्यो वीर्याचारः ॥१॥ इति।

वीर्याचारमेव विशेषतयाऽभिधातुं षट्सूत्रीमाह—

'दो पडिमाओ' इत्यादि। प्रतिमा-प्रतिपत्तिः विशिष्टनियमस्वीकरणमित्यर्थः। समाधानं समाधिः श्रुतचारित्ररूपः, तस्य प्रतिमा। उपधानम्-उग्रतपः, तत्प्रतिमा-उपधानप्रतिमा द्वादशभिक्षुप्रतिमा एकादशोपासकप्रतिमाश्चेत्येवं

इह लोक आदि की आशंसा से वर्जित होना है वही तप आचार है ज्ञानादिक के आचरण करने में अपनी शक्ति को छुपाना नहीं इसका नाम वीर्याचार है। कहा भी है-'अणिगूहियबलवीरियो' इत्यादि।

इस वीर्याचार को ही विशेष रूप से कहने के लिये सूत्रकार ने इस षट्सूत्री का कथन किया है-'दो पडिमाओ' इत्यादि-विशिष्ट नियम रूप अभिग्रह को स्वीकार करना इसका नाम प्रतिमा है-समाधान का नाम समाधि है यह समाधि श्रुतचारित्र रूप होती है इस समाधि को स्वीकार करना यह समाधि प्रतिमा है उग्रतप का नाम उपधान है इसे आचरित करना इसका नाम उपधानप्रतिमा है यह उपधानप्रतिमा द्वादश

રહિત હોવું તેનુ નામ જ તપ ચાર છે જ્ઞાનાદિકનું આચરણ કરવામાં પોતાની શક્તિને છુપાવવી નહીં અને શક્તિ પ્રમાણે કામ કરવું તેનું નામ વીર્યાચાર છે કહ્યું પણ છે કે—

"अणिगूहिय बलवीरिओ" ઇત્યાદિ આ વીર્યાચારનું જ ખાસ નિરૂપણ કરવાને માટે સૂત્રકારે આ ષટ્સૂત્રીનું (છ સૂત્રોના સમૂહનુ) અહીં કથન કર્યું છે-"दो पडिमाओ" ઇત્યાદિ.

વિશિષ્ટ નિયમરૂપ અભિગ્રહનો સ્વીકાર કરવો તેનું નામ પ્રતિમા છે. સમાધાનનુ નામ સમાધિ છે તે સમાધિ શ્રુતચારિત્રરૂપ હોય છે. આ સમાધિને અંગીકાર કરવી તેનું નામ સમાધિ પ્રતિમા છે. ઉગ્ર તપને ઉપધાન કહે છે. ઉગ્ર તપ આચરવું તેનુ નામ ઉપધાન પ્રતિમા છે તે ઉપધાન પ્રતિમા ૧૨ ભિક્ષુપ્રતિમારૂપ અને શ્રાવકની ૧૧ પ્રતિમારૂપ હોય છે.

नो दर्शनाचारः=चारित्राचार —समितिपञ्चकगुप्तित्रयरूपोऽष्टधा, उक्तञ्च—

" पणिहाणजोगजुत्तो पंचहिं समिईहिं तीहिं गुत्तीहिं।
एसचरित्तायारो, अट्ठविहो होइ नायव्वो ॥ १ ॥" इति।

छाया—प्रणिधानयोगयुक्तः (प्रशस्तमनोवाक्कायसंपन्न) पञ्चभिः समितिभिस्तिसृभिर्गुप्तिभिः। एष चारित्राचारः, अष्टविधो भवति ज्ञातव्यः ॥१॥ इति।

नो चारित्राचार —तप आचारादि १। तप आचारो द्वादशविध,

आह च—" बारसविहंमि वि तवे, सब्भतर बाहिरे कुसलदिट्ठे।
अगिलाइ अणाजीवी, नायव्वो सो तवायारो ॥" इति।

निःशंकित, निःकांक्षित, निर्विचिकित्सा, अमूढदृष्टि, उपबृंहा, स्थिरीकरण, वात्सल्य और प्रभावना

नो दर्शनाचार से चारित्रादि का ग्रहण हुआ है चारित्राचार पांच समिति, तीनगुप्ति, रूप होता है अतः यह आठ प्रकार का है।

कहा भी है–' पणिहाणजोगजुत्तो ' इत्यादि।

प्रशस्त मन, वचन और काय से सपन्न रहना इसका नाम चारित्र है इस चारित्र का आचरण पांच समितियों से और तीन गुप्तियों से युक्त हुए सयमी जीव के होता है नो चारित्र से तप आचार आदि गृहीत हुए हैं–यह तप आचार बारह प्रकार का होता है–६ बाह्य तपरूप और ६ आभ्यन्तर तपरूप।

कहा भी है–' बारसविहमि वि तवे ' इत्यादि।

जिनोपदिष्ट बारह प्रकार के तप में बाह्य आभ्यन्तर तप में–जो

---

(१) निःशक्ति (२) निःकांक्षित (३) निर्विचिकित्सा (४) अमूढ दृष्टि, (५) उपबृंह, (६) स्थिरीकरण, वात्सल्य अने (८) प्रभावना

नो दर्शनाचार द्वारा चारित्रादिने ग्रहण कराया छे चारित्राचार पांच समिति अने त्रण गुप्तिरूप होय छे तेथी तेना आठ प्रकार कहा छे कह्युं पण छे के—

" पणिहाण जोगजुत्तो " इत्यादि-प्रशस्त मन वचन अने कायथी संपन्न रहेवुं तेनुं नाम चारित्र छे पांच समितिओ अने त्रण गुप्तिओथी युक्त संयमी जीव द्वारा आ चारित्रनुं आचरण (पालन) कराय छे

' नोचारित्र ' पद द्वारा तप आचार आदि गृहीत थयेल छे ते तप आचार १२ प्रकारना छे तेमांथी ६ बाह्य तपरूप अने ६ आभ्यन्तर तपरूप छे कह्युं पण छे के—

बारसविहंमि वि तवे " इत्यादि. जिनोपदिष्ट बार प्रकारना (बाह्य अने आभ्यन्तर) तपमां आ लोक आदिनी आशा साथी (अग्लानाथी)

ऽत्रसेया ५। ' जवमज्झा ' इत्यादि–यवस्येव मध्यं यस्या सा यवमध्या, या यववत् कवलैराद्यन्तयोर्हीना मध्ये च स्थूला, कलावृद्धिहानिभ्यां चन्द्र इव या प्रतिमा। सा चन्द्रप्रतिमा। इयं चैकमासेन पूर्णा भवति, तथाहि–एतत्प्रतिमाप्रतिपन्नः शुक्लप्रतिपत्तः एकं कवलमभ्यवहृत्य ततः प्रतिदिनमेकैककवलवृद्धया पौर्णमास्यां पञ्चदशकवलान् भुंक्ते, पुनश्च कृष्णप्रतिपदि पञ्चदशैव कवलान् भुक्त्वा प्रतिदिनमेकैकहान्या यावदमावास्यायामेकमेव कवलं यस्यां भुङ्क्ते सा यवमध्या

की होती है४ इनके विषय का कथन अन्यत्रसे जानना चाहिये५ " जवमज्झा " इत्यादि–जिस प्रतिमा में मध्य यव के मध्य जैसा होता है वह यवमध्यप्रतिमा है तात्पर्य इसका ऐसा है कि यह प्रतिमा यव की तरह आदि अन्त में ग्रासों से हीन होती है और मध्य में स्थूल होती है इस प्रतिमा का दूसरा नाम चन्द्रप्रतिमा भी है चन्द्रमा की तरह यह प्रतिमा होती है यह प्रतिमा एक महीने में पूर्ण होती है इस प्रतिमा को धारण करने वाला जीव शुक्लपक्ष की प्रतिपदा में एक ग्रास आहार का लेता है और फिर वह द्वितीयादि दिनों में पूर्णमासी तक एक २ ग्रास की वृद्धि करता जाता है और पूनम के दिन १५ ग्रास तक आहार लेता है फिर कृष्णपक्ष में वह पुनः १५ ग्रासप्रमाण आहार लेता है और फिर अमावस्यातक एक एक ग्रास की हानि करता हुआ आहार लेता रहता है इस तरह अमावास्या को वह एक ग्रास ही आहारमें लेता है इस प्रकार करने से इस प्रतिमा का नाम यवमध्या या चन्द्रप्रतिमा हुआ

" जवमज्झा " ઇત્યાદિ જે પ્રતિમામાં યવના મધ્યભાગ જેવો મધ્ય હોય છે, તે પ્રતિમાને યવમધ્ય પ્રતિમા કહે છે. આ કથનનું તાત્પર્ય આ પ્રમાણે છે–જેમ યવનો મધ્યભાગ સ્થૂલ અને અન્તભાગ પાતળો હોય છે તેમ આ પ્રતિમાના આરંભમાં અને અન્તે ગ્રાસો (કોળીયા) નું પ્રમાણ ન્યૂન હોય છે અને મધ્યકાળે સ્થૂલ પ્રમાણ હોય છે આ પ્રતિમાનું બીજું નામ ચન્દ્રપ્રતિમા પણ છે જેમ ચન્દ્રમાની કળામાં વૃદ્ધિ હાની થાય છે તેમ આ પ્રતિમામાં પણ ગ્રાસોના પ્રમાણમાં વધઘટ થાય છે આ પ્રતિમા એક માસમા પૂર્ણ થાય છે આ પ્રતિમા ધારણ કરનાર જીવ શુક્લ પક્ષની એકમે એક ગ્રાસનો આહાર લે છે, ત્યારબાદ દરરોજ એક એક ગ્રાસની વૃદ્ધિ કરતાં કરતાં પૂનમને દિવસે ૧૫ ગ્રાસનો આહાર કરે છે ત્યારબાદ કૃષ્ણપક્ષની એકમે પણ તે ૧૫ ગ્રાસ પ્રમાણ આહાર લે છે. ત્યારબાદ દરરોજ એક એક ગ્રાસ ઘટાડતાં ઘટાડતા અમાવાસ્યાને દિવસે તે એક ગ્રાસનો જ આહાર કરે છે આ પ્રકારની આ પ્રતિમા હોવાથી તેનુ નામ યવમધ્યમા અથવા ચન્દ્રપ્રતિમા પડ્યુ છે.

रूपेति १। विवेकप्रतिमा-विवेचनं विवेकः-त्यागः, स च आन्तराणां कषायादीनां बाह्यानां गणशरीरभक्तपानादीनामनुचितानां, तत्प्रतिपत्तिस्तथा। व्युत्सर्गप्रतिमा कायोत्सर्गं करणमेवेति २। भद्रापूर्वादिदिक्चतुष्टये प्रत्येकं प्रहरचतुष्टयकायोत्सर्गकरणरूपा अहोरात्रद्वयपरिमितेति। सुभद्राऽप्येवंविधैव सम्भाव्यते ३। महाभद्राऽप्येवंरूपैव, नवरम् - अहोरात्रकायोत्सर्गरूपा अहोरात्रचतुष्टयप्रमाणा। सर्वतोभद्रा तु दशसु पूर्वादिदिक्षु प्रत्येकमहोरात्रकायोत्सर्गरूपा अहोरात्र दशक प्रमाणेति ४। मोकप्रतिमाक्षुद्रिका महती चेति द्विविधा। अनयोर्व्याख्याऽन्यतो

भिक्षु प्रतिमा और श्रावक की ११ प्रतिमारूप है विवेक प्रतिमा-त्याग का नाम विवेक है इस विवेकमें आन्तर कषायोंका और अनुचित गण का शरीर का और भक्तपान आदि का त्याग किया जाता है-इस विवेक की जो प्रतिपत्ति होती है उस का नाम विवेक प्रतिमा है १, कायोत्सर्ग करने का नाम व्युत्सर्ग प्रतिमा है २, पूर्वादि चार दिशाओं में प्रत्येक में दो दिन और दो दिनतक चारप्रहर तक कायोत्सर्ग करना यह भद्रा प्रतिमा है सुभद्राप्रतिमा भी ऐसी ही प्रतीत होती है ३ महाभद्राप्रतिमा भी ऐसी ही है परन्तु इसमें चार दिन चार रात तक कायोत्सर्ग किया जाता है सर्वतो भद्र जो प्रतिमा है उसमें दश दिशाओं में से प्रत्येक दिशा में एक २ दिन रात का कायोत्सर्ग धारण किया जाता है इस प्रकार इस प्रतिमा में दशदिन और दश रात तक कायोत्सर्ग धारण करना होता है क्षुद्रिका और महती के भेद से मोकप्रतिमा दो प्रकार

વિવેક પ્રતિમા—ત્યાગનું નામ વિવેક છે તે વિવેકમાં આન્તર કષાયોનો અનુચિત ગણનો, શરીરનો, અને ભક્તપાન આદિનો ત્યાગ કરવામાં આવે છે આ પ્રકારના વિવેક (ત્યાગ) થી યુક્ત જે પ્રતિમા છે તેને 'વિવેક પ્રતિમા' કહે છે ॥ ૧ ॥ કાયોત્સર્ગ કરવો તેનું નામ વ્યુત્સર્ગ પ્રતિમા છે ॥ ૨ ॥ પૂર્વાદિ ચાર દિશાઓમાંની પ્રત્યેક દિશામાં બે દિવસ સુધી ચાર પ્રહર પર્યન્ત કાયોત્સર્ગ કરવો તેનું નામ ભદ્રા પ્રતિમા છે સુભદ્રા પ્રતિમા પણ એવી જ છે ॥ ૩ ॥ મહાભદ્રા પ્રતિમા પણ એવી જ છે, પરન્તુ તેમાં ચાર દિન અને ચાર રાત સુધી કાયોત્સર્ગ કરાય છે. સર્વતોભદ્ર નામની જે પ્રતિમા છે તેમાં દશ દિશાઓમાંની પ્રત્યેક દિશામાં એક એક દિનરાતનો કાયોત્સર્ગ ધારણ કરવામાં આવે છે આ રીતે આ પ્રતિમાની આરાધનામાં દશ દિન અને દશ રાત સુધી કાયોત્સર્ગ ધારણ કરવો પડે છે ॥ ૪ ॥ ક્ષુદ્રિકા અને મહતીના ભેદથી મોકપ્રતિમા બે પ્રકારની કહી છે. તેમના વિશેનું [illegible] ॥ ૫ ॥

'दुविहे सामाइए' इत्यादि। समः-समत्वं रागद्वेषरहितत्वेन सर्वेषु जीवेषु स्वात्मसारूप्यवत्त्वम्, सम शब्दस्यात्र भावप्रधाननिर्दिष्टत्वात्, तस्य आयः-प्राप्तिः समायः प्रवर्धमानशारदचन्द्रकलावत् प्रतिक्षणविलक्षणज्ञानादिलाभः, स प्रयोजनमस्येति सामायिकम्। यद्वा-समानां ज्ञानादीनाम् आयः-लाभः समायः, स एव सामायिकम् तद् द्विविधम्-आगारसामायिकम्, अनगारसामायिकं चेति। तत्र-आगारसामाकिम् गृहस्थानाम्, अनगारसामायिकं च सर्वविरतिमतां मुनीनां भवतीति ॥ सू० २८ ॥

सूत्रकार सामायिक सूत्र का कथन करते हैं-'दुविहे सामाइए' इत्यादि -रागद्वेष की रहितता से जो समस्त जीवों के ऊपर अपने आत्मा के जैसी समता होती है उसका नाम सम है इस सम की जो आय-प्राप्ति -लाभ है उसका नाम समाय है यह समाय प्रवर्धमान शारद चन्द्रकला की तरह प्रतिक्षण विलक्षण ज्ञानादिक जो लाभ है उस लाभरूप होना है यह लाभ जिसका प्रयोजन है वह सामायिक है अथवा-ज्ञानादि रूप सम का लाभ समाय है और यह समाय ही सामायिक है वह दो प्रकार का है एक अगार सामायिक और दूसरा अनगार सामायिक अनगार सामायिक गृहस्थों के होता है और अनगार सामायिक सर्व विरति मुनिजनों के होता है ॥ सू० २८ ॥

સામાયિકવાળા જીવો વડે જ પ્રતિમાઓ ધારણ કરી શકાય છે, તેથી હવે સૂત્રકાર સામાયિક સૂત્રનું કથન કરે છે—

"દુવિહે સામાઇવ" ઈત્યાદિ. રાગદ્વેષથી રહિત થઈને સમસ્ત જીવો પ્રત્યે પોતાના આત્માના જેવી સમતાને જે ભાવ રાખવામાં આવે છે તેનું નામ 'સમ' છે. તે સમની જે આય (પ્રાપ્તિ, લાભ) છે, તેનું નામ સમાય છે. તે સમાય પ્રવર્ધમાન શરદ ચન્દ્રની કલાની જેમ પ્રતિક્ષણ વિલક્ષણ જ્ઞાનાદિક જે લાભ છે તે લાભરૂપ હોય છે. તે લાભ જેનું પ્રયોજન છે, એવી વસ્તુને સામાયિક કહે છે. અથવા જ્ઞાનાદિ રૂપ સમના લાભનું નામ જ સમાય છે, અને તે સમાય જ સામાયિક છે તેના બે પ્રકાર છે-(૧) અગાર સામાયિક અને (૨) અનગાર સામાયિક અગાર સામાયિક ગૃહસ્થો દ્વારા કરાય છે અને અનગાર સામાયિક સર્વવિરતિ દ્વારા થાય છે. ॥ સૂ૦ ૨૮ ॥

चन्द्रप्रतिमेति । तथा वज्रस्येव मध्यं यस्याः सा वज्रमध्या, वज्रवत् कवलैरायन्तयोः स्थूला मध्ये च तन्वी कलाहानिवृद्धिभ्यां चन्द्र इव प्रतिमा सा चन्द्रप्रतिमा । इय मपि चैकेन मासेन पूर्णा भवति, तथाहि–तत्र कृष्णप्रतिपदि पञ्चदशकवलान् भुक्त्वा ततः प्रतिदिनमेकैकहान्या यावदमावास्यायामेकं कवलं भुङ्क्ते, पुनः शुक्लप्रतिपद्येकमेव कवलं भुक्त्वा तत प्रतिदिनमेकैकवृद्ध्या यावत्पूर्णिमायां पञ्चदशकवलान् भुङ्क्ते सा वज्रमध्या चन्द्रप्रतिमेति ।

प्रतिमाश्च सामायिकवतामेव भवन्तीति सामायिकमाह—

है चन्द्रमा एक पक्ष में अपनी कलाओं से बढता है और कृष्णपक्ष में क्रमशः वह घटता जाता है इसी प्रकार इस प्रतिमा में भी शुक्लपक्ष में एक २ ग्रास की अधिकता होती जाती है और फिर क्रमशः आहार की घटती होती जाती है तथा वज्र के मध्य के जैसा मध्य प्रतिमा में रहता है वह वज्रमध्या प्रतिमा है यह प्रतिमा भी एक मास के कालवाली है इसमें कृष्णपक्ष की प्रतिपदा में इस प्रतिमा का धारी १५ ग्रास प्रमाण आहार ग्रहण करता है फिर वह प्रतिदिन एक एक ग्रास की हानि से अमावास्या के दिन केवल एक ग्रास प्रमाण आहार लेता है बाद में शुक्लपक्ष की एकम तिथि में भी वह एक ग्रास प्रमाण ही आहार लेता है इसके बाद वह प्रतिदिन एक एक ग्रास की वृद्धि से पूर्णिमा के दिन १५ ग्रासप्रमाण आहार लेता है इस प्रकार यह वज्रमध्या चन्द्रप्रतिमा है ये प्रतिमाएँ सामायिक वाले जीवों के ही होती हैं अत अब

ચન્દ્રમાની કલાઓ શુક્લપક્ષમાં વધતી જાય છે અને કૃષ્ણપક્ષમાં ક્રમશઃ ઘટતી જાય છે એજ પ્રમાણે આ પ્રતિમાની આરાધના કરનારના આહારમાં શુક્લ પક્ષમાં એક એક ગ્રાસની વૃદ્ધિ થતી જાય છે અને કૃષ્ણપક્ષમાં ક્રમશઃ એક એક ગ્રાસની ન્યૂનતા થતી રહે છે

જે પ્રતિમામાં વજ્રના મધ્યભાગ જેવો મધ્યકાળ રહે છે, તે પ્રતિમાને વજ્રમધ્યા પ્રતિમા કહે છે તે પ્રતિમાની આરાધના પણ એક માસ પર્યન્ત કરવામાં આવે છે આ પ્રતિમા ધારણ કરનાર જીવ કૃષ્ણપક્ષની એકમને દિવસે ૧૫ ગ્રાસ પ્રમાણ આહાર ગ્રહણ કરે છે ત્યારબાદ દરરોજ ક્રમશઃ તે એક એક ગ્રાસ ઓછો કરતો જાય છે, આ રીતે અમાવાસ્યાએ તે માત્ર એક ગ્રાસ પ્રમાણ આહાર ગ્રહણ કરે છે ત્યારબાદ તે શુક્લ પક્ષની એકમે પણ એક ગ્રાસ પ્રમાણ આહાર જ લે છે ત્યારબાદ તે પ્રતિદિન એક એક ગ્રાસની વૃદ્ધિ કરતાં કરતાં પૂર્ણિમાને દિવસે ૧૫ ગ્રાસ પ્રમાણ આહાર લે છે વજ્રમધ્યમા

'दुविहे सामाइए' इत्यादि । समः-समत्वं रागद्वेषरहितत्वेन सर्वेषु जीवेषु स्वात्मसारूप्यकरणम्, सम शब्दस्यात्र भावप्रधाननिर्दिष्टत्वात्, तस्य आयः-प्राप्तिः समायः प्रवर्धमानशारदचन्द्रकलावत् प्रतिक्षणविलक्षणज्ञानादिलाभः, स प्रयोजनमस्येति सामायिकम् । यद्वा-समानां ज्ञानादीनाम् आयः-लाभः समायः, स एव सामायिकम् तद् द्विविधम्-आगारसामायिकम्, अनगारसामायिकं चेति । तत्र-आगारसामायिकम् गृहस्थानाम्, अनगारसामायिकं च सर्वविरतिमतां मुनीनां भवतीति ॥ सू० २८ ॥

सूत्रकार सामायिक सूत्र का कथन करते हैं-'दुविहे सामाइए' इत्यादि -रागद्वेष की रहितता से जो समस्त जीवों के ऊपर अपने आत्मा के जैसी समता होती है उसका नाम सम है इस सम की जो आय-प्राप्ति -लाभ है उसका नाम समाय है यह समाय प्रवर्धमान शारद चन्द्रकला की तरह प्रतिक्षण विलक्षण ज्ञानादिक जो लाभ है उस लाभरूप होता है यह लाभ जिसका प्रयोजन है वह सामायिक है अथवा-ज्ञानादि रूप सम का लाभ समाय है और यह समाय ही सामायिक है वह दो प्रकार का है एक अगार सामायिक और दूसरा अनगार सामायिक अनगार सामायिक गृहस्थों के होता है और अनगार सामायिक सर्व विरति मुनिजनों के होता है ॥ सू० २८ ॥

સામાયિકવાળા જીવો વડે જ પ્રતિમાઓ ધારણ કરી શકાય છે, તેથી હવે સૂત્રકાર સામાયિક સૂત્રનું કથન કરે છે—

"દુવિહે સામાઇએ" ઇત્યાદિ. રાગદ્વેષથી રહિત થઇને સમસ્ત જીવો પ્રત્યે પોતાના આત્માના જેવી સમતાનો જે ભાવ રાખવામાં આવે છે તેનુ નામ 'સમ' છે. તે સમની જે આય (પ્રાપ્તિ, લાભ) છે, તેનુ નામ સમાય છે. તે સમાય પ્રવર્ધમાન શરદ ચન્દ્રની કલાની જેમ પ્રતિક્ષણ વિલક્ષણ જ્ઞાનાદિક જે લાભ છે તે લાભરૂપ હોય છે. તે લાભ જેનુ પ્રયોજન છે, એવી વસ્તુને સામાયિક કહે છે. અથવા જ્ઞાનાદિ રૂપ સમના લાભનુ નામ જ સમાય છે, અને તે સમાય જ સામાયિક છે. તેના બે પ્રકાર છે-(૧) અગાર સામાયિક અને (૨) અનગાર સામાયિક અગાર સામાયિક ગૃહસ્થો દ્વારા કરાય છે અને અનગાર સામાયિક સર્વવિરતિ દ્વારા થાય છે. ॥ સૂ૦ ૨૮ ॥

जीवधर्माधिकार एव तद्धर्मान्तराणि प्ररूपयन्नाह—

मूलम्—दोण्ह उववाए पण्णत्ते त जहा—देवाण चेव नेरइ याण चेव१। दोण्ह उव्वट्टणा प० त्ता त जहा—नेरइयाण चेव भवणवासीण चेव २। दोण्ह चयणे पण्णत्ते त जहा—जोइसि याण चेव वेमाणियाण चेव ३। दोण्ह गब्भवक्कती पण्णत्ता तं जहा—मणुस्साण चेव पर्चिदियतिरिक्खजोणियाण चेव ४। दोण्ह गब्भत्थाण आहारे पण्णत्ते त जहा—मणुस्साण चेव पर्चिदियतिरिक्खजोणियाण चेव ५। दोण्ह गब्भत्थाण वुड्ढी पण्णत्ता त जहा मणुस्साण चेव पर्चिदियतिरिक्खजोणियाण चेव ६। एव निव्वुड्ढी ७, विगुव्वणा८, गइपरियाए९, समुग्घाए १०, कालसंजोगे ११, आयाई १२, मरणे १३। दोण्ह छविपव्वा पण्णत्ता तं जहा—मणुस्साण चेव पर्चिदियतिरिक्खजोणियाण चेव १४। दो सुक्कसोणिय समवा पण्णत्ता त जहा—मणुस्सा चेव पर्चिदियतिरिक्खजोणिया चेव १५। दुविहा ठिई पण्णत्ता त जहा—कायट्ठिई चेव भवट्ठिई चेव १६। दोण्ह कायट्ठिई पण्णत्ता त जहा—मणुस्साण चेव पर्चिदियतिरिक्खजोणियाण चेव १७। दोण्ह भवट्ठिई पण्णत्ता त जहा—देवाण चेव नेरइ याण चेव १८। दुविहे आउए पण्णत्ते त जहा अद्धाउए चेव भवाउए चेव १९। दोण्ह अद्धाउए पण्णत्ते त जहा -मणुस्साण चेव पर्चिदियतिरिक्खजोणियाण चेव २०। दोण्ह भवाउए पण्णत्ते त जहा देवाण चेव नेरइयाण चेव २१। दुविहे कम्मे पण्णत्ते त जहा—पएसकम्मे चेव अणुभावकम्मे चेव २२। दो

अहाउयं पालेंति तं जहा--देवा चेव नेरइया चेव २३ । दोण्हं आउय संवट्टए पण्णत्ते तं जहा--मणुस्साण चेव पंचिंदिय तिरिक्खजोणियाण चेव २४ ॥ सू० २९ ॥

छाया—द्वयोरुपपातः प्रज्ञप्तस्तद्यथा—देवानां चैव नैरयिकाणां चैव १। द्वयोरुद्वर्तना प्रज्ञप्तातद्यथा—नैरयिकाणां चैव भवनवासिनां चैव २। द्वयोश्च्यवनं प्रज्ञप्तं तद्यथा—ज्योतिष्काणां चव वैमानिकानां चैव३। द्वयोर्गर्भव्युत्क्रान्तिः प्रज्ञप्ता तद्यथा मनुष्याणां चैव पञ्चेन्द्रियतिर्यग्योनिकानां चैव ४। द्वयोर्गर्भस्थयोराहारः प्रज्ञप्तस्तद्यथा—मनुष्याणां चव पञ्चेन्द्रियतिर्यग्योनिकानां चैव ५। द्वयोर्गर्भस्थयोर्वृद्धिः प्रज्ञप्ता तद्यथा—मनुष्याणां व पञ्चेन्द्रियतिर्यग्योनिकाना चैव६। एवं निर्वृद्धिः ७ विकुर्वणा८, गतिपर्यायः९, समुद्घातः १०, कालसंयोगः ११, आयातिः १२, मरणम् १३। द्वयोश्छविपर्वाणि प्रज्ञप्तानि तद्यथा—मनुष्याणां चैव पञ्चेन्द्रियतिर्यग्योनिकानां चैव१४। द्वौ शुक्रशोणितसम्भवौ प्रज्ञप्तौ तद्यथा—मनुष्याश्चैव पञ्चेन्द्रियतिर्यग्योनिकाश्चैव१५। द्विविधा स्थितिः प्रज्ञप्ता तद्यथा—कायस्थितिश्चैव भवस्थितिश्चैव१६।द्वयोः कायस्थितिः प्रज्ञप्ता तद्यथा—मनुष्याणां चैव पञ्चेन्द्रिय तिर्यग्योनिकानां चैव १७। द्वयोर्भवस्थितिः प्रज्ञप्ता तद्यथा—देवानां चैव नैरयिकाणां चव १८। द्विविधमायुष्कं प्रज्ञप्तं तद्यथा—अद्धायुष्कं चैव भवायुष्कं चैव १९। द्वयोरद्धायुष्कं प्रज्ञप्तं तद्यथा—मनुष्याणां चैव पञ्चेन्द्रियतिर्यग्योनिकानां चैव २०। द्वयोर्भवायु ं प्रज्ञप्तं तद्यथा देवनां चैव नैरयिकाणां चैव२१। द्विविधं कर्म प्रज्ञप्तं तद्यथा—प्रदे कर्म चैव अनुभावकर्म चैव२२।द्वौ यथायुष्कं पालयतस्तद्यथा—देवाश्चैव नैरयिकाश्चैव२३। द्वयोरायुष्कसंवर्त्तकः प्रज्ञप्तद्यथा—मनुष्याणां चैव पञ्चेन्द्रियतिर्यग्योनिकानां चैव२४॥सू०२९॥

टीका—' दोण्हं उववाए ' इत्यादि चतुर्विंशतिसूत्री सुगमा। नवरम्—उपपतनम् उपपातः—गर्भसंमूर्छनं विलक्षणो जन्मविशेषः—देवनारकाणां जन्मेत्यर्थः १।

अब सूत्रकार जीवधर्माधिकार में जीव के अन्य धर्मो की प्ररूपणा करते हैं–' दोण्हं उववाए पण्णत्ते ' इत्यादि।

टीकार्थ—दो का उपपात कहा गया है–एक देवों का उपपात और दूसरा नैरयिकों का उपपात, उद्वर्त्तना दो की कही गई है–नैरयिकों की

જીવધર્માધિકાર ચાલી રહ્યો છે, તેથી સૂત્રકાર હવે જીવના અન્ય ધર્મોની પ્રરૂપણા કરે છે—" दोण्ह उववाए पण्णत्ते " ઇત્યાદિ—

ટીકાર્થ—ઉપપાત બેનો કહ્યો છે-(૧) દેવોના ઉપપાત અને (૨) નારકોના ઉપપાત. ઉદ્વર્ત્તના બેની કહી છે-(૧) નારકોની ઉદ્વર્ત્તના અને (૨)

उद्वर्तनम्-उद्वर्तना तत्तत्कायाभिर्गमनं मरणमित्यर्थः । एषा नैरयिकाणां भवनवासिनामेव व्यपदिश्यते । व्यन्तरास्तु भवनवासिष्वन्तर्भूताः २ । च्युतिश्च्यवनं मरणमित्यर्थः, ज्योतिष्कवैमानिकानां मरणं च्यवनशब्देन व्यपदिश्यते ३ । गर्भव्युत्क्रान्ति -गर्भे-गर्भाशये व्युत्क्रान्तिः-उत्पत्तिः, तथा । इयं मनुष्याणां पञ्चेन्द्रियतिर्यग्योनिकानां च भवति ४ । आहरणम् आहारः, स च द्वयानां गर्भस्थानां भवति, तथाहि-मनुष्याणां पञ्चेन्द्रियतिर्यग्योनिकानां च ५ । वर्धनं वृद्धिः शरीरोपचय इत्यर्थः । इयमपि गर्भस्थमनुष्याणां गर्भस्थपञ्चेन्द्रियतिरश्चां च भवति ६ । एवम्-अनेनैव प्रकारेण गर्भस्थानां मनुष्याणां पञ्चेन्द्रियतिरश्चां च निर्वृद्धिर्हानिर्वातपित्तादिभिः नि शब्दोऽभावावबोधकः - यथा निर्धनेत्यादिवत् ७ विकुर्वणा, इयं वैक्रियलब्धिमतां मनुष्य-पञ्चेन्द्रियतिरश्चां भवति ८, गति

उद्वर्त्तना और भवनवासियों की उद्वर्त्तना, च्यवन दो का कहा गया है-ज्योतिष्कों का च्यवन और वैमानिकों का च्यवन दो की गर्भव्युत्क्रान्ति कही गई है-मनुष्यों की और पंचेन्द्रिय तिर्यञ्चों की गर्भस्थ दो जीवों के आहार कहा गया है-मनुष्यों के और पंचेन्द्रियतिर्यञ्चों के गर्भस्थ दो जीवों के वृद्धि कही गई है-मनुष्यों के और पंचेन्द्रियतिर्यञ्चों के ६, इसी तरह से निर्वृद्धि भी कही गई जाननी चाहिये, इसी तरह से विकुर्वणा, गतिपर्याय, समुद्घात, कालसंयोग, आयाति और मरण के सम्बन्ध में भी जानना चाहिये दो जीवों के छविपर्व कहे गये हैं-मनुष्यों के और पञ्चेन्द्रियतिर्यञ्चों के १४ दो जीव शुक्र शोणित से उत्पन्न हुए कहे गये हैं-मनुष्य और पंचेन्द्रिय तिर्यञ्च १५ दो प्रकार की स्थिति कही गई है कायस्थिति और भवस्थिति दो जीवों के कायस्थिति कही गई है-मनुष्यों

ભવનવાસી દેવોની ઉદ્વર્તના ચ્યવન બે કહ્યું છે-(૧) જ્યોતિષ્કોનું ચ્યવન અને વૈમાનિકોનું ચ્યવન ગર્ભવ્યુત્ક્રાન્તિ બેની કહી છે-(૧) મનુષ્યોની અને (૨) પંચેન્દ્રિય તિર્યંચોની. ગર્ભસ્થ જીવોમાંના બે પ્રકારના જીવોનો આહાર કહ્યો છે (૧) મનુષ્યોનો અને (૨) પંચેન્દ્રિય તિર્યંચોનો ગર્ભસ્થ બે પ્રકારના જીવોની વૃદ્ધિ કહી છે-(૧) મનુષ્યોની અને (૨) પંચેન્દ્રિય તિર્યંચોની એજ પ્રમાણે નિર્વૃદ્ધિનું કથન પણ સમજવું એજ પ્રમાણે વિકુર્વણા ગતિપર્યાય, સમુદ્ઘાત કાલસંયોગ આયાતિ અને મરણ વિષે પણ સમજવું બે જીવો માંજ ત્વચા અને સંધિબંધનનો સદ્ભાવ કહેવામાં આવ્યો છે (૧) મનુષ્યોમાં અને (૨) પંચેન્દ્રિય તિર્યંચોમાં. બે જીવોને શુક્ર શોણિત ઉત્પન્ન થયેલા કહ્યા છે-(૧) મનુષ્ય અને (૨) પંચેન્દ્રિય તિર્યંચની બે પ્રકારની સ્થિતિ કહી છે-(૧) કાયસ્થિતિ અને (૨) ભવસ્થિતિ બે જીવોની કાયસ્થિતિ કહી છે,

पर्यायः-चलनं, मृत्वा वा गत्यन्तरगमनरूपः, यच्च वैक्रियलब्धिधरो गर्भान्निर्गत्य प्रदेशतो बहिः संग्रामयति स वा गतिपर्यायः ९, यथास्वभावस्थितानामात्मप्रदेशानां वेदनादिभिः सप्तभिः कारणैः समन्ताद् उद्घातनं-स्वभावादन्यभावेन परिणमन समुद्घातः१०, कालसंयोगः-कालकृतावस्थानुभवः ११, आयातिः-गर्भान्निर्गमः १२, मरणं-प्राणत्यागः गर्भस्थानां मनुष्यतिरश्चामिति सर्वत्र योज्यम् १३। 'दोण्हं छविपव्वा' इत्यादि, छविः-त्वचा, तद्युक्तानि पर्वाणि-सन्धिबन्धनानि छविपर्वाणि। इमानि गर्भस्थमनुष्यपञ्चेन्द्रियतिरश्चां भवन्ति १४। शुक्रशोणिताभ्यां संभवः-उत्पत्तिर्येषां ते शुक्रशोणितसम्भवाः, ते के? इत्याह-मनुष्याः पञ्चेन्द्रियतिर्यञ्चश्च१५। 'दुविहा ठिई' इत्यादि-स्थितिः-अवस्थानम्, सा द्विविधा-कायस्थितिः भवस्थितिश्चेति१६। तत्र कायस्थितिः-सप्ताष्टभवग्रहणरूपा। सा च मनुष्यपञ्चेन्द्रियतिरश्चां भवति। एषा पृथिव्यादीनामपि भवति किन्त्वत्र द्विस्थानानुरोधाद् द्वयोरेव ग्रहणम् १७। भवे भवरूपा वा स्थितिर्भवस्थितिः-भवकाल इत्यर्थः। सा च देवानां नैरयिकाणां च भवति, तेषां पुनर्देवादित्वेनानुत्पत्तेः १८। अद्धा-काल', तत्प्रधानम् आयुः-पञ्चममायुष्कर्म-अद्धायुः, तदेव-अद्धायुष्कम्-कालान्तरानुगाम्यायुरित्यर्थः। भवप्रधानमायुर्भवायुः, तदेव भवायुष्कं, यद् भवात्यये नियमादपगच्छत्येव न कालान्तरमनुयाति १९। अद्धायुष्कं मनुष्याणां पञ्चेन्द्रियतिरश्चां च भवति, कस्यचित् तद् भवनाशेऽपि नापगच्छति, उत्कृष्टतः सप्ताष्टभवकालं यावदनुगच्छति २०। भवायुष्कं देवानां च भवति, यद् भवात्यये नियमादपगच्छत्येव, न कालान्तरमनुयाति। अयं भावः-देवा देवभवाच्च्युत्वा न पुनर्देवत्वेनोत्पद्यन्ते, एवं नारका नारका दुद्वृत्य न पुनर्नारकत्वेन समुत्पद्यन्त इति२१।

के और पंचेन्द्रियतिर्यञ्चों के १७ दो जीवों के भवस्थिति कही गई है-देवों के और नैरयिकों के आयुष्क दो प्रकार का कहा गया है-एक अद्धा आयुष्क और दूसरा भवायुष्क दो के अद्धायुष्क कहा गया है-एक मनुष्यों के और दूसरे पंचेन्द्रियतिर्यञ्चों के २० दो जीवों के भवायुष्क कहा गया है-एक देवों के और दूसरे नैरयिकों के २१ कर्म दो प्रकार

---

(૧) મનુષ્યોની અને (૨) પંચેન્દ્રિય તિર્યંચોની. એ જીવોની ભવસ્થિતિ કહી છે-(૧) દેવોની અને (૨) નારકોની આયુષ્ક બે પ્રકારના કહ્યા છે-(૧) અદ્ધાયુષ્ક અને (૨) ભવાયુષ્ક. બે જીવોના અદ્ધાયુષ્ક કહ્યા છે. (૧) મનુષ્યોનું અને (૧) પંચેન્દ્રિય તિર્યંચોનું બે જીવોનું ભવાયુષ્ક કહ્યું છે-(૧) દેવોનુ અને

का कहा गया है एक प्रदेशकर्म और दूसरा अनुभाव कर्म दो जीव यथायुष्क का पालन करते हैं– एक देव और दूसरे नैरयिक दो जीवों के आयुष्क सवर्तक कहा गया है–मनुष्यों के और पंचेन्द्रियतिर्यञ्चों के २४, "दोण्ह उववाए" आदि यह चतुर्विंशतिसूत्री है–इसका अर्थ सुगम है गर्भजन्म और सम्मूर्च्छनजन्म से जो जन्म भिन्न होता–विलक्षण प्रकार का होता है वह उपपात जन्म है यह जन्म देव और नैरयिकों के होता है क्यों कि उत्पत्ति स्थान में स्थित वैक्रियिक पुद्गलों को शरीररूप से परिणमाते हुए वे उत्पन्न होते हैं उत्पत्तिस्थान में स्थित वैक्रियिक पुद्गलों को शरीररूप से परिणमाते हुए उत्पन्न होना इसी का नाम उपपात जन्म है उस उस काय से जीव का निर्गमन होना–मरण होना इसी का नाम उद्वर्त्तना है इस उद्वर्त्तना का व्यपदेश नैरयिक एवं भवनवासियों के ही होता है व्यन्तरदेवों के भी उद्वर्त्तना का प्रयोग होता है परन्तु यहां जो उन्हें स्वतन्त्ररूप से नहीं दिखाया गया है उसका कारण भवनवासियों में उनका अन्तर्भूत होना है च्यवन नाम भी मरण का ही है परन्तु ज्योतिष्क और वैमानिक जीवों में मरण के स्थान पर च्यवन शब्द का ही प्रयोग होता है मरण शब्द का नहीं १ गर्भ में उत्पत्ति

(१)નારકોનું કર્મ બે પ્રકારના કહ્યા છે પ્રદેશકર્મ અને (૨) અનુભાવ કર્મ બે જીવો યથાયુષ્કનું પાલન કરે છે (૧) દેવ અને (૨) નારકો બે જીવોના આયુષ્કને સંવર્તક કહ્યા છે–(૧) મનુષ્યોના અને (૨) પંચેન્દ્રિય તિર્યચોના ૨૪

"दोण्हं उववाए" આદિ ૨૪ સૂત્રો અહીં આપવામાં આવ્યા છે તેમનો અર્થ સરળ છે ગર્ભજન્મ અને સમ્મૂર્છન જન્મથી જે જન્મ ભિન્ન હોય છે–વિલક્ષણ પ્રકારનો હોય છે તે જ મનુ નામ "ઉપપાત જન્મ" છે દેવ અને નારકોમાં ઉપપાત જન્મ થાય છે કારણ કે ઉત્પત્તિસ્થાનમાં રહેલાં વૈક્રિયિક પુદ્‌ગલોને શરીરરૂપે પરિણમાવીને તેઓ ઉત્પન્ન થાય છે. ઉત્પત્તિ સ્થાનમાં વૈક્રિયિક પુદ્‌ગલોને શરીરરૂપે પરિણમાવીને ઉત્પન્ન થવું તેનું નામ જ ઉપપાત જન્મ છે ૧ પોતપોતાની કાયમાંથી (ગતિમાંથી) જીવનું નિર્ગમન થવું (મરણ થવું) તેનું નામ ઉદ્વર્તના કહે છે આ ઉદ્વર્તના પદનો પ્રયોગ નારકો ભવનવાસીઓમાં જ થાય છે વ્યન્તરોમાં પણ ઉદ્વર્તના પદનો પ્રયોગ થાય છે, પરન્તુ અહીં તેમને સ્વતંત્રરૂપે પ્રકટ ન કરવાનું કારણ એ છે કે ભવન વાસીઓમાં તેમનો સમાવેશ થઈ જાય છે ૨ ચ્યવ પદનો પ્રયોગ પણ મરણના અર્થમાં જ થાય છે જ્યોતિષ્કો અને વૈમાનિકો સાથે મરણ પદનો પ્રયોગ થતો નથી, પણ ચ્યવન પદનો જ પ્રયોગ થાય છે ॥ ૩ ॥

होना इसका नाम गर्भव्युत्क्रान्ति है यह गर्भव्युत्क्रान्तिरूप गर्भ में उत्पत्ति दो जीवों की ही होती है एक पंचेन्द्रियतिर्यञ्च जीवों की और दूसरी मनुष्यों की क्यों कि जन्म के तीन प्रकारों में से जो गर्भजन्म है वह पंचेन्द्रियतिर्यञ्चों के और मनुष्योंको ही कहा गया है अन्यको नहीं ४, तीनशरीर और ६ पर्याप्तियों के योग्य पुद्गल परमाणुओं का ग्रहण करना इसका नाम आहार है यह आहार गर्भस्थ मनुष्योंको और पंचेन्द्रियतिर्यञ्चों को ही होता है५ शरीरोपचय का नाम वृद्धि है यह वृद्धि भी गर्भस्थ मनुष्यों और गर्भस्थ पंचेन्द्रिय तिर्यञ्चोंको ही होती है६ इसी प्रकार से गर्भस्थ मनुष्यों के और गर्भस्थतिर्यञ्चों के निर्वृद्धि–वात–पित्त आदिद्वारा हानि होती है यहां निःशब्द "निर्लज्ज मनुष्य" इत्यादि की तरह अभाव वाचक है७ विकुर्वणा भी–वैक्रियलब्धिसंपन्न मनुष्य और पंचेन्द्रिय तिर्यञ्चों को होती है, चलना अथवा मरकर गत्यन्तर में गमन करना इसका नाम गति पर्याय है अथवा–लब्धिधर जीव गर्भ से निकलकर प्रदेश की अपेक्षा जो बाहर संग्राम करता है वह गतिपर्याय है ९ यथा स्वभावस्थित आत्मप्रदेशों का वेदना आदि सात कारणों को लेकर अपने भाव से अन्य भावरूप में परिणमन करना इसका नाम

ગર્ભમાં ઉત્પત્તિ થવી તેનું નામ ગર્ભવ્યુત્ક્રાન્તિ છે. મનુષ્ય અને પંચેન્દ્રિય તિર્યંચોની ઉત્પત્તિ જ ગર્ભમાં થાય છે. જન્મના ત્રણ પ્રકારોમાંથી જે ગર્ભજન્મ નામનો પ્રકાર છે, તે પ્રકારે તો મનુષ્યો અને પંચેન્દ્રિય તિર્યંચોનો જ જન્મ થાય છે–અન્ય જીવોમાં તે પ્રકારે જન્મ થતો નથી ॥ ૪ ॥

ત્રણ શરીર અને છ પર્યાપ્તિઓને યોગ્ય પુદ્ગલ પરમાણુઓને ગ્રહણ કરવા તેનું નામ આહાર છે. તે આહાર ગર્ભસ્થ મનુષ્યો અને પંચેન્દ્રિય તિર્યંચોમાં સંભવી શકે છે. ॥ ૫ ॥ શરીરોપચયનું નામ વૃદ્ધિ છે. ગર્ભસ્થ મનુષ્યો અને પંચેન્દ્રિય તિર્યંચોમાં જ તે વૃદ્ધિ થતી હોય છે ૬ એજ પ્રમાણે ગર્ભસ્થ મનુષ્યોની અને ગર્ભસ્થ તિર્યંચોની જ વાત, પિત્ત આદિ દ્વારા નિવૃદ્ધિ (હાનિ) થાય છે "નિ" ઉપસર્ગ "નિર્લજ્જ પુરુષ" ઇત્યાદિની જેમ અભાવ વાચક છે ૭ વૈક્રિય લબ્ધિસંપન્ન મનુષ્ય અને પંચેન્દ્રિય તિર્યંચોમાં જ વિકુર્વણા સંભવી શકે છે ૮ ચાલવું અથવા મરીને અન્ય ગતિમાં જવું તેનું નામ ગતિપર્યાય છે અથવા લબ્ધિધર જીવ ગર્ભમાંથી નીકળીને પ્રદેશની અપેક્ષાએ જે બહાર સંગ્રામ કરે છે, તે ગતિપર્યાય છે. ॥ ૯ ॥ યથા સ્વભાવસ્થિત આત્મપ્રદેશોનું વેદના આદિ સાત કારણોને લઈને પોતાના ભાવમાંથી અન્ય ભાવરૂપે પરિણમન

का कहा गया है एक प्रदेशकर्म और दूसरा अनुभाव कर्म दो जीव यथायुष्क का पालन करते हैं– एक देव और दूसरे नैरयिक दो जीवों के आयुष्क संवर्तक कहा गया है–मनुष्यों के और पंचेन्द्रियतिर्यञ्चों के २४, "दोण्हं उववाए" आदि यह चतुर्विंशतिसूत्री है–इसका अर्थ सुगम है गर्भजन्म और सम्मूर्च्छनजन्म से जो जन्म भिन्न होता–विलक्षण प्रकार का होता है वह उपपात जन्म है यह जन्म देव और नैरयिकों के होता है क्यों कि उत्पत्ति स्थान में स्थित वैक्रियिक पुद्गलों को शरीररूप से परिणमाते हुए वे उत्पन्न होते हैं उत्पत्तिस्थान में स्थित वैक्रियिक पुद्गलों को शरीररूप से परिणमाते हुए उत्पन्न होना इसी का नाम उपपात जन्म है उस उस काय से जीव का निर्गमन होना–मरण होना इसी का नाम उद्वर्तना है इस उद्वर्तना का व्यपदेश नैरयिक एवं भवनवासियों के ही होता है व्यन्तरदेवों के भी उद्वर्तना का प्रयोग होता है परन्तु यहां जो उन्हें स्वतन्त्ररूप से नहीं दिखाया गया है उसका कारण भवनवासियों में उनका अन्तर्भूत होना है च्यवन नाम भी मरण का ही है परन्तु ज्योतिष्क और वैमानिक जीवों में मरण के स्थान पर च्यवन शब्द का ही प्रयोग होता है मरण शब्द का नहीं १ गर्भ में उत्पत्ति

---

(२)નારકોનું કર્મ બે પ્રકારના કહ્યા છે પ્રદેશકર્મ અને (૨) અનુભાવ કર્મ બે જીવો યથાયુષ્કનું પાલન કરે છે-(૧) દેવ અને (૨) નારકો. બે જીવોના આયુકને સંવર્તક કહ્યા છે-(૧) મનુષ્યોના અને (૨) પંચેન્દ્રિય તિર્યંચોના. ૨૪

"દોણ્હં ઉવવાએ" આદિ ૨૪ સૂત્રો અહીં આપવામાં આવ્યા છે તેમનો અર્થ સરળ છે ગર્ભજન્મ અને સમૂર્ચ્છન જન્મથી જે જન્મ ભિન્ન હોય છે-વિલક્ષણ પ્રકારનો હોય છે તે જન્મનું નામ 'ઉપપાત જન્મ' છે દેવ અને નારકોમાં ઉપપાત જન્મ થાય છે, કારણ કે ઉત્પત્તિસ્થાનમાં રહેલાં વૈક્રિયિક પુદ્ગલોને શરીરરૂપે પરિણમાવીને તેઓ ઉત્પન્ન થાય છે ઉત્પત્તિ સ્થાનમાં વૈક્રિયિક પુદ્ગલોને શરીરરૂપે પરિણમાવીને ઉત્પન્ન થવું તેનું નામ જ ઉપપાત જન્મ છે ૧ પોતપોતાની કાયમાંથી (ગતિમાંથી) જીવનું નિર્ગમન થવું (મરણ થવું) તેનું નામ ઉદ્વર્તના કહે છે આ ઉદ્વર્તના પદનો પ્રયોગ નારકો ભવનવાસીઓમાં જ થાય છે વ્યન્તરોમાં પણ ઉદ્વર્તના પદનો પ્રયોગ થાય છે, પરન્તુ અહીં તેમને સ્વતંત્રરૂપે પ્રકટ ન કરવાનું કારણ એ છે કે ભવન વાસીઓમાં તેમનો સમાવેશ થઈ જાય છે. ૨ ચ્યવ પદનો પ્રયોગ પણ મરણના અર્થમાં જ થાય છે જ્યોતિષ્કો અને વૈમાનિકો સાથે મરણ પદનો પ્રયોગ થતો નથી, પણ ચ્યવન પદનો જ પ્રયોગ થાય છે ॥ ૭ ॥

स्थिति का नाम भवकाल भी है यह भवस्थितिरूप भवकाल देव और नैरयिक जीवों को होता है क्यों कि देवादिपर्याय छोड़ने के अनन्तर पुनः देवादिपर्याय की प्राप्ति नहीं होती है १८, आयु दो प्रकारका होता है अद्धायु और भवायु १९ अद्धा नाम काल का है इस कालप्रधान जो पांचवां आयुष्कर्म है वह अद्धायुष्क है यह अद्धायुष्क जीव के साथ कालान्तरानुगामी होता है अतः कालान्तरानुगामी आयु का नाम ही अद्धायुष्क है भवप्रधान आयु का नाम भवायु है और इस भवायु का नाम ही भवायुष्क है भवायुष्क भव के नाश हो जाने पर नियम से छूट जाता है-जीव के साथ परलोक में नहीं जाता है २०, अद्धायुष्क मनुष्यों और पंचेन्द्रियतिर्यञ्चों को होता है यह किसी २ जीव का तद्भवनाश हो जाने पर भी नष्ट नहीं होता है उत्कृष्ट रूप से यह सात आठ भवकाल तक जीव के साथ चला जाता है भवायुष्क देव और नारकियों को होता है यह नियम से उस भव के नाश हो जाने पर छूट जाता है, कालान्तर में उन जीवों के साथ नहीं जाता है क्यों कि देवभव से च्यव कर देव पुनः देव नहीं होता है और नारक नारकभव से मर कर पुनः नारक नहीं होता है

સ્થિતિ છે તેને ભવસ્થિતિ કહે છે, તેને ભવકાળ પણ કહે છે આ ભવસ્થિતિ રૂપ ભવકાળનો સદ્ભાવ દેવો અને નારકોમાં હોય છે, કારણ કે દેવાદિ પર્યાય છોડયા બાદ ફરીથી દેવાદિ પર્યાયની પ્રાપ્તિ થતી નથી ॥ ૧૮ ॥ આયુ બે પ્રકારનું થાય છે, અદ્ધાયુ અને ભવાયુ ॥ ૧૯ ॥ અદ્ધા એટલે કાળ તે કાળપ્રધાન જે પાંચમુ આયુષ્કર્મ છે તેને અદ્ધાયુષ્ક કહે છે તે અદ્ધાયુષ્ક જીવની સાથે કાલાન્તરાનુગામી હોય છે, તેથી કાલાન્તરાનુગામી આયુનું નામ જ અદ્ધાયુષ્ક છે ૨૦ ભવપ્રધાન આયુનું નામ ભવાયુ છે અને તે ભવાયુને જ ભવાયુષ્ક કહે છે. ભવનો નાશ થતા ભવાયુષ્ક નિયમથી જ છૂટી જાય છે-જીવની સાથે પરલોકમાં જતું નથી ॥ ૨૧ ॥ અદ્ધાયુષ્કનો સદ્ભાવ મનુષ્યો અને પંચેન્દ્રિય તિર્યંચોમા હોય છે કોઈ કોઈ જીવનો તે ભવ નાશ પામવા છતાં તેનો નાશ થતો નથી વધારેમાં વધારે સાત આઠ ભવ સુધી તે અદ્ધાયુષ્કનો જીવની સાથે સંબંધ ચાલુ રહે છે. ભવાયુષ્કનો સદ્ભાવ દેવો અને નારકોમાં જ હોય છે તે ભવનો નાશ થતા તેનો (ભવાયુષ્કનો) પણ અવશ્ય નાશ થઇ જાય છે કાલાન્તરે તે આયુષ્ક તે જીવોની સાથે જતું નથી, કારણ કે દેવભવથી ચવેલો દેવ ફરીથી દેવગતિમાં જતો

समुद्घात है १० कालकृत अवस्थाका अनुभवन करना इसका नाम काल-संयोग है ११, गर्भसे बाहर निकलना इसका नाम निर्गम है १२ प्राणों का त्याग करना इसका नाम मरण है ये सब अवस्थाएँ गर्भस्थ मनुष्यों और गर्भस्थतिर्यञ्चोंको ही होती हैं इसलिये "गर्भस्थानां मनुष्यतिरश्चां" ऐसा पद सवत्र योजित करना चाहिये १३ " दोण्ह छविपव्वा " इत्यादि। छवि नाम त्वचा चमड़ी का है और पर्व नाम सन्धि बन्धनों का है ये सन्धि पर्व गर्भस्थ और पंचेन्द्रियतिर्यञ्चों के होते हैं १४, शुक्र और शोणित इन दोनों से जिनकी उत्पत्ति होती है वे शुक्र शोणितसंभव जीव हैं ऐसे वे जीव मनुष्य और पंचेन्द्रिय तिर्यञ्च हैं१५ अवस्थानका नाम स्थिति है यह स्थिति कायस्थिति और भवस्थिति के भेद से दो प्रकार की होती है सात आठ भव ग्रहणरूप कायस्थिति है यह कायस्थिति मनुष्य और पचेन्द्रिय तिर्यञ्चों के होती है यद्यपि पृथिवी आदिकों को भी यह होती है परन्तु यहां द्विस्थानों के अनुरोध से इन दो का ही ग्रहण हुआ है १७ भव में या भवरूप जो स्थिति है वह भवस्थिति है भव

કરવું તેનું નામ સમુદ્‌ઘાત છે ॥ ૧૦ ॥ કાલકૃત અવસ્થાનો અનુભવ કરવો તેનું નામ કાલસંયોગ છે ॥ ૧૧ ॥ ગર્ભમાંથી બહાર નીકળવું તેનું નામ નિર્ગમ છે પ્રાણોનો ત્યાગ કરવો તેનું નામ મરણ છે આ બધી અવસ્થાઓનો અનુભવ ગર્ભસ્થ મનુષ્યો અને ગર્ભસ્થ તિર્યંચોને જ થાય છે તેથી જ " गर्भस्थानां मनुष्यतिरश्चां " આ પદનો (ગર્ભસ્થ મનુષ્યોનો અને તિર્યંચોનો) સર્વત્ર પ્રયોગ કરવાનું કહ્યું છે ॥ ૧૩ ॥

" दोण्हं छवि पव्वा " " છવિ એટલે ત્વચા અને ' પર્વ ' " એટલે સંધિબન્ધનો તે ત્વચા અને સંધિબંધનો સદ્‌ભાવ ગર્ભસ્થ મનુષ્યોમાં અને પંચેન્દ્રિય તિર્યંચોમાં જ હોય છે ॥ ૧૪ ॥ શુક્ર અને શોણિતથી જેમની ઉત્પત્તિ થાય છે એવાં જીવોને શુક્રશોણિત સંભવ જીવો કહે છે મનુષ્યો અને પંચેન્દ્રિય તિર્યંચોની આ પ્રકારના જીવોમાં ગણતરી થાય છે ॥ ૧૫ ॥

સ્થિતિ એટલે અવસ્થાન. તે સ્થિતિના કાયસ્થિતિ અને ભવસ્થિતિ નામના બે ભેદ પડે છે ૧૬ સાત આઠ ભવગ્રહણુ રૂપ કાયસ્થિતિ છે તે કાયસ્થિતિ મનુષ્યો અને પંચેન્દ્રિય તિર્યંચોમાં જ સંભવી શકે છે જો કે પૃથ્વીકાય આદિમાં પણ તે સંભવી શકે છે, પણ અહીં બે સ્થાનોના અનુરોધની અપેક્ષાએ ઉપયુક્ત બેને જ ગ્રહણ કરવામાં આવેલ છે ॥ ૧૭ ॥ ભવમાં અથવા ભવરૂપ જે

स्थिति का नाम भवकाल भी है यह भवस्थितिरूप भवकाल देव और नैरयिक जीवों को होता है क्यों कि देवादिपर्याय छोड़ने के अनन्तर पुनः देवादिपर्याय की प्राप्ति नहीं होती है १८, आयु दो प्रकारका होता है अद्धायु और भवायु १९ अद्धा नाम काल का है इस कालप्रधान जो पांचवां आयुष्कर्म है वह अद्धायुष्क है यह अद्धायुष्क जीव के साथ कालान्तरानुगामी होता है अतः कालान्तरानुगामी आयु का नाम ही अद्धायुष्क है भवप्रधान आयु का नाम भवायु है और इस भवायु का नाम ही भवायुष्क है भवायुष्क भव के नाश हो जाने पर नियम से छूट जाता है-जीव के साथ परलोक में नहीं जाता है २०, अद्धायुष्क मनुष्यों और पंचेन्द्रियतिर्यञ्चों को होता है यह किसी २ जीव का तद्भवनाश हो जाने पर भी नष्ट नहीं होता है उत्कृष्ट रूप से यह सात आठ भवकाल तक जीव के साथ चला जाता है भवायुष्क देव और नारकियों को होता है यह नियम से उस भव के नाश हो जाने पर छूट जाता है, कालान्तर में उन जीवों के साथ नहीं जाता है क्यों कि देवभव से च्यव कर देव पुनः देव नहीं होता है और नारक नारकभव से मर कर पुनः नारक नहीं होता है

સ્થિતિ છે તેને ભવસ્થિતિ કહે છે, તેને ભવકાળ પણ કહે છે આ ભવસ્થિતિ રૂપ ભવકાળને સદ્ભાવ દેવો અને નારકોમાં હોય છે, કારણ કે દેવાદિ પર્યાય છોડયા બાદ ફરીથી દેવાદિ પર્યાયની પ્રાપ્તિ થતી નથી ॥ ૧૮ ॥ આયુ બે પ્રકારનુ થાય છે, અદ્ધાયુ અને ભવાયુ ॥ ૧૯ ॥ અદ્ધા એટલે કાળ તે કાળપ્રધાન જે પાંચમું આયુષ્કર્મ છે તેને અદ્ધાયુષ્ક કહે છે તે અદ્ધાયુષ્ક જીવની સાથે કાલાન્તરાનુગામી હોય છે, તેથી કાલાન્તરાનુગામી આયુનુ નામ જ અદ્ધાયુષ્ક છે ૨૦ ભવપ્રધાન આયુનું નામ ભવાયુ છે અને તે ભવાયુને જ ભવાયુષ્ક કહે છે ભવનો નાશ થતા ભવાયુષ્ક નિયમથી જ છૂટી જાય છે-જીવની સાથે પરલોકમાં જતું નથી ॥ ૨૧ ॥ અદ્ધાયુષ્કનો સદ્ભાવ મનુષ્યો અને પંચેન્દ્રિય તિર્યંચોમા હોય છે કોઈ કોઈ જીવનો તે ભવ નાશ પામવા છતાં તેનો નાશ થતો નથી વધારેમા વધારે સાત આઠ ભવ સુધી તે અદ્ધાયુષ્કનો જીવની સાથે સંબંધ ચાલુ રહે છે. ભવાયુષ્કનો સદ્ભાવ દેવો અને નારકોમાં જ હોય છે તે ભવનો નાશ થતા તેનો (ભવાયુષ્કનો) પણ અવશ્ય નાશ થઇ જાય છે કાલાન્તરે તે આયુષ્ક તે જીવોની સાથે જતું નથી, કારણ કે દેવભવથી ચવેલો દેવ ફરીથી દેવગતિમાં જતો

'दुविहे कम्मे' इत्यादि–द्विविधं कर्म–प्रदेशकर्म, अनुभाव कर्म चेति। तत्र प्रदेशतया वेद्यते यत्, तस्य प्रदेशा एव–पुद्गला एव वेद्यन्ते न यथाबद्धो रस इति। अनुभावतो वेद्यते यत्, यस्यानुभावो यथाबद्धरसो वेद्यत इति २१। 'दो' इत्यादि–यथा बद्धमायुर्यथायुष्कम्, यावत्परिमितं बद्धं तावत्परिमितमायुरित्यर्थः, एतदायुर्द्वये नारकाश्च पालयन्ति–अनुभवन्ति, तेषां निरुपक्रमायुष्कत्वात्। अयं विवेकः असंख्यातवर्षायुष्कास्तिर्यञ्चो मनुष्याश्च, तथा उत्तमपुरुषाश्चरमशरीराश्च, एते नियमान्निरुपक्रमायुष्मन्तो भवन्ति, अन्ये संख्यातवर्षायुष्कास्तिर्यञ्चो मनुष्याश्च, अनुत्तमपुरुषा अचरमशरीराश्च सोपक्रमायुष्का निरुपक्रमायुष्काश्चेत्यु-भयस्वभावा भवन्ति, उक्तञ्च —

"दुविहे कम्मे" इत्यादि। प्रदेश कर्म और अनुभव कर्म के भेद से कर्म दो प्रकार का कहा गया है–जिस कर्म के केवल प्रदेशरूप पुद्गल ही वेदने में आते हैं यथाबद्धरस वेदने में नहीं आता है वह प्रदेश कर्म है तथा जिस कर्म का अनुभावरूप से वेदन होता है वह अनुभाव कर्म है २१, इस अनुभाव कर्म का यथा बद्धरस वेदने में आता है यथा बद्धायुष्ककर्म जितने काल का आयु बांधा है उतने काल के आयु का भोगना यह बात देव और नारकियों में ही होता है क्यों कि ये अनपवर्त्यायुष्क होते हैं। असंख्यातवर्ष की आयु वाले भोगभूमि के तिर्यञ्च और मनुष्य एवं उत्तमपुरुष और चरमशरीरी जीव के सब नियम से निरुपक्रम आयुवाले होते हैं और संख्यातवर्ष की आयु वाले तिर्यञ्च, मनुष्य,

નથી અને નારક ગતિમાંથી ઉદ્વર્તના (મરણ) પામીને કોઈપણ નારક ફરી નરકગતિમાં જતો નથી.

"દુવિહે કમ્મે" ઇત્યાદિ. પ્રદેશકર્મ અને અનુભાવકર્મના ભેદથી કર્મના બે પ્રકાર કહ્યા છે. જે કર્મના પ્રદેશરૂપ પુદ્ગલનું જ માત્ર વેદન કરવામાં આવે છે–યથાબદ્ધ રસનું વેદન કરવામાં આવતું નથી તે કર્મને પ્રદેશકર્મ કહે છે. જે કર્મનું અનુભાવ રૂપે વેદન થાય છે તે કર્મને અનુભાવકર્મ કહે છે. ॥ ૨૧ ॥ આ અનુભાવ કર્મનો યથાબદ્ધ રસ વેદવામાં આવે છે યથાબદ્ધાયુષ્કકર્મ એટલે જેટલા કાળનું આયુ બાંધ્યુ હોય એટલા કાળના આયુને ભોગવવું એ વાત દેવો અને નારકોમાં સંભવી શકે છે કારણ કે તેઓ અનપવર્ત્યાયુષ્ક હોય છે અસંખ્યાત વર્ષના આયુવાળા ભોગભૂમિના મનુષ્ય તિર્યંચ અને ઉત્તમ પુરુષ તથા ચરમ શરીરી જીવો નિયમથી જ નિરુપક્રમ આયુવાળા હોય છે પરન્તુ સંખ્યાત વર્ષના આયુવાળા તિર્યંચ મનુષ્ય, અનુત્તમ પુરુષ અને અચરમ

"देवा नेरइया वि य, असंखवासाउया य तिरिमणुया।
उत्तमपुरिसा य तहा, चरमसरीरा य निरुवक्कमा ॥ १ ॥
सेसा संसारत्था, भइया सोवक्कमा व इयरे वा।
सोवक्कम निरुवक्कम,-भेओ भणिओ समासेण" ॥ २ ॥ इति।
छाया-देवा नैरयिका अपि च, असंख्यवर्षायुष्काश्च तिर्यङ् मनुष्याः।
उत्तमपुरुषाश्च तथा, चरमशरीराश्च निरुपक्रमाः ॥ १ ॥
शेषाः संसारस्थाः, भाज्याः सोपक्रमा वा इतरे वा।
सोपक्रमनिरुपक्रम,-भेदो भणितः समासेन ॥ २ ॥" इति २२।

अनुत्तम पुरुष और अचरम शरीरी ये सोपक्रम एवं निरुपक्रम दोनों प्रकार की आयुवाले होते हैं।

कहा भी है-"देवा नेरइया वि" इत्यादि। "सेसा संसारत्था" इत्यादि।

अधिकतर प्राणियों का विष, श्वासोच्छ्वास का अवरोध, हवाई जहाज से पतन, और राग आदि के निमित्त से अकाल में मरण देख-कर यह प्रश्न होता है कि क्या अकालमरण होता है? यदि अकाल मरण होता है ऐसा मान लिया जाय तो दूसरा यह भी प्रश्न होता है कि जितने भी संसारी जीव हैं उन सब का अकालमरण होता है या सब का न होकर कुछ का ही होता है? इन्हीं दो प्रश्नों का उत्तर हमें यहां इस अभववर्त्यायुष्क निरुपक्रमायुष्क की विचार धारा से प्राप्त होता है कर्म शास्त्र के अनुसार भुज्यमान आयु का उत्कर्षण नहीं हो सकता क्यों कि उत्कर्षण बन्धकाल में ही होता है उदाहरणार्थ-किसी

શરીરી જીવો સોપક્રમ અને નિરુપક્રમ, એ બન્ને પ્રકારના આયુવાળા હોય છે. કહ્યુ પણ છે કે-" देवा नेरइया वि " ઇત્યાદિ। " सेसा संसारत्था " ઇત્યાદિ—

ઘણાં જીવોનું વિષ, શ્વાસોચ્છ્વાસના અવરોધ, વિમાની અકસ્માત અને રોગ આદિ કારણોથી અકાળે મરણ થાય છે આ અકાળ મરણ જોઇને એવો પ્રશ્ન ઉદ્‌ભવે છે કે શું અકાલ મરણ સંભવી શકે છે ખરૂં? જો અકાલ મરણ થવાની વાત સ્વીકારવામા આવે, તો બીજો પ્રશ્ન એ ઉદ્‌ભવે છે કે શું સમસ્ત સંસારી જીવોના અકાલ મરણ થાય છે, કે કોઈ કોઈ સંસારી જીવના અકાલ મરણ થાય છે? આ બન્ને પ્રશ્નોના ઉત્તર આપણુને આ અભવવર્ત્યાયુષ્ક અને નિરુપક્રમાયુષ્કની વિચારધારામાંથી મળી આવે છે. કર્મશાસ્ત્ર અનુસાર ભુજ્યમાન આયુનું ઉત્કર્ષણ થઇ શકતું નથી, કારણ કે ઉત્કર્ષણ બન્ધકાળમાં જ

'दुविहे कम्मे' इत्यादि-द्विविधं कर्म-प्रदेशकर्म, अनुभाग कर्म चेति। तत्र यद् प्रमात्रतया वेद्यते तत्, तस्य प्रदेशा एव-पुद्गला एव वेद्यन्ते न यथाबद्धो रस इति। अनुभावतो वेद्यते तत्, यस्यानुभावो यथाबद्धरसो वेद्यत इति २९। 'दो' इत्यादि-यथा बद्धमायुर्यथायुष्कम्, यावत्परिमितं यद् तावत्परिमितमायुरित्यर्थः, एतदायुर्द्वा नारकाश्च पालयन्ति-अनुभवन्ति, नेषां निरूपक्रमायुष्कत्वात्। अथ विवेकः असंख्यातवर्षायुष्कास्तिर्यञ्चो मनुष्याश्च, तथा उत्तमपुरुषाश्चरमशरीराश्च, एते नियमान्निरुपक्रमायुष्मन्तो भवन्ति, अन्ये संख्यातवर्षायुष्कास्तिर्यञ्चो मनुष्याश्च अनुत्तमपुरुषा अचरमशरीराश्च सोपक्रमायुष्का निरुपक्रमायुष्काश्चेत्युभयस्वभावा भवन्ति, उक्तञ्च —

"दुविहे कम्मे" इत्यादि। प्रदेश कर्म और अनुभव कर्म के भेद से कर्म दो प्रकार का कहा गया है-जिसकर्म के केवल प्रदेशरूप पुद्गल ही वेदने में आते हैं यथाबद्धरस वेदने में नहीं आता है वह प्रदेश कर्म है तथा जिस कर्म का अनुभावरूप से वेदन होता है वह अनुभाव कर्म है २९, इस अनुभाव कर्म का यथा बद्धरस वेदने में आता है यथा बद्धायुष्ककर्म जितने काल का आयु बांधा है उतने काल के आयु का भोगना यह बात देव और नारकियों में ही होता है क्यों कि ये अनपवर्त्यायुष्क होते हैं। असंख्यातवर्ष की आयु वाले भोगभूमि के तिर्यञ्च और मनुष्य एवं उत्तमपुरुष और चरमशरीरी जीव के सब नियम से निरुपक्रम आयुवाले होते हैं और संख्यातवर्ष की आयु वाले तिर्यञ्च, मनुष्य,

---

नथी अने नारक गतिमांथी उद्वर्तना (मरण) पामीने देवपणु नारक फरी नरकगतिमां जतो नथी.

"दुविहे कम्मे" इत्यादि. प्रदेशकर्म अने अनुभावकर्मना भेदथी कर्मना बे प्रकार कह्या छे. जे कर्मना प्रदेशरूप पुद्गलनुं ज मात्र वेदन करवामां आवे छे-यथाबद्ध रसनुं वेदन करवामां आवतुं नथी, ते कर्मने प्रदेशकर्म कहे छे. जे कर्मनु अनुभाव रूपे वेदन थाय छे ते कर्मने अनुभावकर्म कहे छे ॥ २९ ॥ आ अनुभाव कर्मनो यथाबद्ध रस वेदवामां आवे छे. यथाबद्धायुष्कर्म एटले जेटला काळनुं आयु बांध्युं होय एटला काळना आयुने भोगववुं ए वात देवो अने नारकोमां संभवी शके छे कारण के तेओ अनपवर्त्यायुष्क होय छे. असंख्यात वर्षना आयुवाळा भोगभूमिना मनुष्य तिर्यंच अने उत्तम पुरुष तथा चरम शरीरी जीवो नियमथी ज निरुपक्रम आयुवाळा होय छे परन्तु संख्यात वर्षना आयुवाळा तिर्यंच, मनुष्य, अनुत्तम पुरुष अने अचरम

'दोण्हं' इत्यादि—संवर्त्तनं सवर्त्तः, स एव संवर्त्तकः—उपक्रमः इत्यर्थः, आयुष्कस्य संवर्त्तकः—आयुष्कसंवर्त्तकः सोपक्रमायुरित्यर्थः, स च मनुष्याणां पञ्चेन्द्रियतिरश्चां च भवति, सोपक्रमायुष्कत्वात्तेषाम् २४ ॥ सू० २९ ॥

तिघात के अनुकूल सामग्री मिलती है तो उस पर्याय में आयु कर्म का स्थितिघात कर सकता है। स्थिति घात होने से आयु कम हो जाती है।

अपकर्षण के इस नियम के अनुसार सब जीवों की भुज्यमान आयु कम हो सकती है यह सामान्य नियम है–इस नियम के अनुसार देवादिकों की भी भुज्यमान आयु कम होनी चाहिये–परन्तु इस नियम में जो अपवाद है वह यहां कहा गया है कि उपपाद जन्म से पैदा होने वाले देव और नारकी, भोगभूमिया जीव, उत्तमपुरुष और चरमशरीरी इन जीवों की भुज्यमान आयु कम नहीं होती है जितने काल की आयु का बन्ध इन्हों ने किया है उतनी ही पूरी आयु का ये भोग करते हैं अर्थात् इनकी भुज्यमान आयुका स्थितिघात नहीं होता है२३ इसी से यह निष्कर्ष निकल आता है कि इनके सिवाय और सब जीवों की आयु कम हो सकती है यही बात इस सूत्र पाठ द्वारा कहते हुए सूत्रकार कहते हैं "दोण्हं" इत्यादि। उपक्रम का नाम संवर्त है आयुष्क

જો તેને સ્થિતિઘાતને અનુકૂળ સામગ્રી મળી જાય છે, તો તે પર્યાયમાં આયુ કર્મનો સ્થિતિઘાત તે કરી શકે છે, સ્થિતિઘાત થવાથી આયુ ઘટી જાય છે

અપકર્ષણના આ નિયમ અનુસાર બધાં જીવોનું ભુજ્યમાન આયુ ન્યૂન થઇ શકે છે, આ સામાન્ય નિયમ છે આ નિયમાનુસાર તો દેવાદિકોનું ભુજ્યમાન આયુ પણ ન્યૂન થવુ જોઇએ. પરન્તુ તે નિયમમાં જે અપવાદ છે તેનું અહીં નીચે પ્રમાણે કથન કરવામા આવ્યું છે–ઉપપાદ જન્મથી પેદા થનારા દેવ અને નારકી, ભોગભૂમિના જીવો, ઉત્તમ પુરુષો અને ચરમ–શરીરી જીવોનું ભુજ્યમાન આયુ ઓછુ થઈ શકતુ નથી જેટલા કાળના આયુનો બંધ તેમણે કર્યો હોય છે એટલા પૂરેપૂરા આયુને તેઓ ભોગવે છે, એટલે કે તેમના ભુજ્યમાન આયુનો સ્થિતિઘાત થતો નથી ૨૩ આ કથનપરથી આપણે એવા નિશ્ચયપર આવી શકીએ છીએ કે તેમના સિવાયના બધા જીવોના આયુમાં ઘટાડો થઈ શકે છે. એજ વાત સૂત્રકારે "दोण्हं" ઈત્યાદિ સૂત્રો દ્વારા પ્રકટ કરી છે. ઉપક્રમનું નામ સંવર્ત છે. આયુષ્કનો જે ઉપક્રમ છે તે આયુષ્ક

मनुष्य व तिर्यञ्च ने प्रथमत्रिभाग में नरकायु का एक लाख वर्ष प्रमाण स्थिति बंध किया अब यदि वह दूसरे त्रिभाग में नरकायु का दस लाख वर्षप्रमाण स्थितिबंध करता है तो उस समय वह प्रथमत्रिभाग में बांधी हुई स्थिति का उत्कर्षण कर सकता है—उत्कर्षण का यह सामान्य नियम सब कर्मों पर लागू होता है।

भुज्यमान आयु का बंध उसी पर्याय में होता नहीं, अतः उसका उत्कर्षण नहीं होता यह व्यवस्था तो निरपवाद बन जाती है किन्तु अपकर्षण के लिये बंधकाल का ऐसा कोई प्रतिबंध नहीं है वह कुछ अपवादों को छोड़कर कभी भी हो सकता है जिस पर्याय में आयु का बंध किया है उस पर्याय में भी हो सकता है और जिस पर्याय में उसे भोग रहे हैं उस पर्याय में भी हो सकता है उदाहरणार्थ–किसी मनुष्य ने तिर्यं आयु का पूर्वकोटिप्रमाण स्थितिबंध किया। अब यदि उसे स्थितिघात के अनुकूल सामग्री जिस पर्याय में आयु का बंध किया है उसी पर्याय में ही मिल जाती है तो उसी पर्याय में वह आयुकर्म का स्थितिघात कर सकता है और यदि जिस पर्याय में आयु को भोग रहा है उसमें स्थि

આય છે ધારો કે કોઈ મનુષ્ય અથવા તિર્યંચે પ્રથમ ત્રિભાગમાં નરકાયુનો એક લાખ વર્ષપ્રમાણ બંધ કર્યો હવે જો તે બીજા ત્રિભાગ દરમિયાન દસ લાખ વર્ષપ્રમાણ નરકાયુનો સ્થિતિબંધ કરે તો તે સમયે તે પ્રથમ ત્રિભાગમાં બાંધેલી સ્થિતિનું ઉત્કર્ષણ કરી શકે છે ઉત્કર્ષણનો આ સામાન્ય નિયમ બધા કર્મોને લાગુ પડે છે

ભુજ્યમાન આયુનો બંધ એજ પર્યાયમાં બનતો નથી, તેથી તેનું ઉત્કર્ષણ થતું નથી. આ વ્યવસ્થા તો નિરપવાદ (અપવાદ વિના નિયમથી જ) બની જાય છે પરન્તુ અપકર્ષણને માટે બંધકાળનો એવો કોઈ પ્રતિબંધ નથી તે કેટલાક અપવાદોને બાદ કરતાં ગમે ત્યારે થઈ શકે છે જે પર્યાયમાં આયુનો બંધ કર્યો છે તે પર્યાયમાં પણ થઈ શકે છે અને જે પર્યાયમાં તેને ભોગવી રહ્યા હોઈએ તે પર્યાયમાં પણ થઈ શકે છે દાખલા તરીકે કોઈ મનુષ્યે તિર્યંચ આયુનો પૂર્વ કોટિ પ્રમાણ સ્થિતિબંધ કર્યો હવે જો તેને સ્થિતિઘાતને માટે અનુકૂળ સામગ્રી (જે પર્યાયમાં આયુનો બંધ કર્યો હોય એજ પર્યાયમાં) મળી જાય તો એજ પર્યાયમાં તે આયુકર્મનો સ્થિતિઘાત કરી શકે છે, અને જે પર્યાયના આયુને તે ભોગવી રહ્યો છે તે પર્યાયમાં જ

'दोण्हं' इत्यादि—संवर्त्तनं सवर्त्तः, स एव संवर्त्तकः-उपक्रमः इत्यर्थः, आयुष्कस्य संवर्त्तकः-आयुष्कसवर्त्तकः सोपक्रमायुरित्यर्थः, स च मनुष्याणां पञ्चेन्द्रियतिरश्चां च भवति, सोपक्रमायुष्कत्वात्तेषाम् २४ ॥ सू० २९ ॥

तिघात के अनुकूल सामग्री मिलती है तो उस पर्याय में आयु कर्म का स्थितिघात कर सकता है। स्थिति घात होने से आयु कम हो जाती है।

अपकर्षण के इस नियम के अनुसार सब जीवों की भुज्यमान आयु कम हो सकती है यह सामान्य नियम है-इस नियम के अनुसार देवादिकों की भी भुज्यमान आयु कम होनी चाहिये-परन्तु इस नियम में जो अपवाद है वह यहां कहा गया है कि उपपाद जन्म से पैदा होने वाले देव और नारकी, भोगभूमिया जीव, उत्तमपुरुष और चरमशरीरी इन जीवों की भुज्यमान आयु कम नहीं होती है जितने काल की आयु का बन्ध इन्हों ने किया है उतनी ही पूरी आयु का ये भोग करते हैं अर्थात् इनकी भुज्यमान आयुका स्थितिघात नहीं होता है२३ इसी से यह निष्कर्ष निकल आता है कि इनके सिवाय और सब जीवों की आयु कम हो सकती है यही बात इस सूत्र पाठ द्वारा कहते हुए सूत्रकार कहते हैं "दोण्हं" इत्यादि। उपक्रम का नाम संवर्त है आयुष्क

જો તેને સ્થિતિઘાતને અનુકૂળ સામગ્રી મળી જાય છે, તો તે પર્યાયમાં આયુ કર્મના સ્થિતિઘાત તે કરી શકે છે, સ્થિતિઘાત થવાથી આયુ ઘટી જાય છે

અપકર્ષણના આ નિયમ અનુસાર બધાં જીવાનું ભુજ્યમાન આયુ ન્યૂન થઈ શકે છે, આ સામાન્ય નિયમ છે આ નિયમાનુસાર તો દેવાદિકોનું ભુજ્યમાન આયુ પણ ન્યૂન થવુ જોઈએ. પરન્તુ તે નિયમમાં જે અપવાદ છે તેનું અહીં નીચે પ્રમાણે કથન કરવામાં આવ્યુ છે-ઉપપાદ જન્મથી પેદા થનારા દેવ અને નારકી, ભોગભૂમિના જીવો, ઉત્તમ પુરુષો અને ચરમ-શરીરી જીવોનું ભુજ્યમાન આયુ ઓછુ થઈ શકતું નથી જેટલા કાળના આયુને બંધ તેમણે કર્યો હોય છે એટલા પૂરેપૂરા આયુને તેઓ ભોગવે છે, એટલે કે તેમના ભુજ્યમાન આયુને સ્થિતિઘાત થતો નથી ૨૩ આ કથનપરથી આપણે એવા નિશ્ચયપર આવી શકીએ છીએ કે તેમના સિવાયના બધા જીવોના આયુમાં ઘટાડો થઈ શકે છે. એજ વાત સૂત્રકારે "दोण्हं" ઈત્યાદિ સૂત્રો દ્વારા પ્રકટ કરી છે. ઉપક્રમનું નામ સવર્ત છે. આયુષ્કનો જે ઉપક્રમ છે તે આયુષ્ક

पर्यायाधिकारादेव नियतक्षेत्राश्रितत्वेन क्षेत्रव्यपदेश्यान् पुद्गलपर्यायान् प्रतिपिपादयिषुः क्षेत्रप्रकरणमाह—

मूलम्—जंबुद्दीवे दीवे मंदरस्स पव्वयस्स उत्तरदाहिणेणं दो वासा पण्णत्ता बहुसमतुल्ला अविसेसमणाणत्ता अन्नमन्नं नाइवट्टंति आयामविक्खंभसंठाणपरिणाहेणं तं जहा भरहे चेव एरवए चेव। एवं एएणं अभिलावेणं हेमवए चेव, हेरन्नवए चेव, हरिवासे चेव रम्मयवासे चेव। जंबुद्दीवे दीवे मंदरस्स पव्वयस्स पुरत्थिमपच्चत्थिमेणं दो खित्ता पण्णत्ता बहुसमतुल्ला अविसेस० जाव—तं जहा—पुव्वविदेहे चेव अवरविदेहे चेव। जंबूमंदरस्स पव्वयस्स उत्तरदाहिणेणं दो कुराओ पण्णत्ताओ बहुसमतुल्लाओ जाव तं जहा—देवकुरा चेव उत्तरकुरा चेव तत्थ णं दो महइमहालया महादुमा पण्णत्ता बहुसमतुल्ला अविसेसमणाणत्ता अन्नमन्नं णाइवट्टंति आयामविक्खंभुच्चत्तोव्वेहसंठाणपरिणाहेणं, तं जहा—कूडसामली चेव जंबू चेव सुदंसणा। तत्थ णं दो देवा महिड्ढिया जाव महासोक्खा पलिओवमट्ठिइया परिवसंति, तं जहा—गरुले चेव वेणुदेवे अणाढिए चेव जंबुद्दीवाहिवई ॥ सू० ३० ॥

का जो उपक्रम है वह आयुष्क संवर्तक है—यह सोपक्रमायुरूप आयुष्क संवर्तक मनुष्य और पंचेन्द्रिय तिर्यंचोंको होता है क्यों कि ये सोपक्रम आयुवाले भी होते हैं। २४ ॥ सू० २९ ॥

पर्यायाधिकार को लेकर ही अब सूत्रकार नियतक्षेत्राश्रित होने के कारण क्षेत्र व्यपदेश्य पुद्गल पर्यायों को प्रतिपादन करने की इच्छा से

સંવર્તક છે. તે સોપક્રમાયુરૂપ આયુષ્ક સંવર્તક મનુષ્ય અને પંચેન્દ્રિય તિર્યંચોમાં હોઈ શકે છે, કારણ કે તેઓ સોપક્રમ આયુવાળા પણ હોય છે ॥ ૨૪ ॥ ॥ સૂ. ૨૯ ॥

પર્યાયાધિકાર ચાલી રહ્યો છે, હવે સૂત્રકાર-નિયત ક્ષેત્રાશ્રિત હોવાને કારણે - ક્ષેત્રવ્યપદેશ્ય પુદ્ગલ પર્યાયોનું પ્રતિપાદન કરવાના હેતુથી સૂત્ર

छाया—जम्बूद्वीपे द्वीपे मन्दरस्य पर्वतस्य उत्तरदक्षिणेन द्वे वर्षे प्रज्ञप्ते बहुसमतुल्ये अविशेषे अनानात्वे अन्योन्यं नातिवर्तेते आयामविष्कम्भोच्चत्वोद्वेधसंस्थानपरिणाहेन, तद्यथा-भरतं चैव ऐरवतं चैव। एवमेतेनाभिलापेन हैमवतं चैव हैरण्यवतं चैव, हरिवर्षं चैव, रम्यकवर्षं चैव। जम्बूद्वीपे द्वीपे मन्दरस्य पर्वतस्य पूर्वपश्चिमेन द्वे क्षेत्रे प्रज्ञप्ते बहुसमतुल्ये अविशेषे यावत् तद्यथा-पूर्वविदेहश्चैव अपरविदेहश्चैव। जम्बू मन्दरस्य पर्वतस्य उत्तरदक्षिणेन द्वौ कुरू प्रज्ञप्तौ बहुसमतुल्यौ यावत् तद्यथा-देवकुरवश्चैव उत्तरकुरवश्चैव। तत्र खलु द्वौ महातिमहालयौ महाद्रुमौ प्रज्ञप्तौ बहुसमतुल्यौ अविशेषौ अनानात्वौ अन्योन्यं नातिवर्तेते आयामविष्कम्भोच्चत्वोद्वेधसंस्थानपरिणाहेन, तद्यथा-कूटशाल्मलिश्चैव जम्बूश्चैव सुदर्शना। तत्र खलु द्वौ देवौ महर्द्धिकौ यावत् महासौख्यौ पल्योपमस्थितिकौ परिवसतः, तद्यथा—गरुडश्चैव वेणुदेवः अनादृतश्चैव जम्बूद्वीपाधिपतिः ॥ सू० ३० ॥

टीका—' जंबुदीवे ' इत्यादि।

मध्यजम्बुद्वीपे मेरुपर्वतस्य उत्तरदक्षिणेन उत्तरदिशि दक्षिणदिशि चेत्यर्थः, द्वे वर्षे क्षेत्रे प्रज्ञप्ते। कीदृशे ? इत्याह—बहुसमतुल्ये-अत्यन्तसदृशे, अविशेषे-वैलक्षण्यरहिते नगनगरनद्यादिकृतविशेषरहिते इत्यर्थः, अनानात्वे-नानात्वरहिते-अवसर्पिण्यादिकृतायुरादिभावभेदवर्जिते इत्यर्थः। ते द्वे अन्योन्यं-परस्परं नातिवर्तेते

क्षेत्रप्रकरण कहते हैं-' जंबुदीवे दीवे मंदरस्स पव्वयस्स ' इत्यादि।

टीकार्थ—मध्यजंबूद्वीप में मेरुपर्वत की उत्तर और दक्षिणदिशा में क्रमशः दो क्षेत्र कहे गये हैं ये दोनों परस्पर में रचना में तुल्य हैं, विलक्षणता रहित हैं-नग, नगर, और नदी आदिकों की जैसी रचना प्रमाण आकार आदि भरतक्षेत्र में है वैसी ही इन सब की रचना ऐरवत क्षेत्र में है ये दोनों नानात्व से रहित हैं-अवसर्पिणी उत्सर्पिणी कालकृत जो आयु आदि की वृद्धि ह्रास रूप परिवर्तन है वह भी इन दोनों क्षेत्रों में

પ્રકરણનું નિરૂપણ કરે છે—" जंबुद्दीवे दीवे मंदरस्स पव्वयस्स " ઇત્યાદિ

ટીકાર્થ—મધ્ય જંબૂદ્વીપમા મેરુ પર્વતની ઉત્તર અને દક્ષિણ દિશામાં ક્રમશ બે ક્ષેત્ર (ભરત ક્ષેત્ર અને ઐરવત ક્ષેત્ર) આવેલા છે, તે બન્નેની રચના એકસરખી છે. એકબીજાની રચનામા કોઈ વિલક્ષણતા નથી ભરતક્ષેત્રમાં પર્વત, નગર, નદી વગેરેની જેવી રચના, પ્રમાણ, આકાર આદિ છે, એવી જ એ સૌની રચના વગેરે ઐરવત ક્ષેત્રમાં પણ છે, તે બન્નેમાં કોઈ તફાવત નથી. અવસર્પિણી ઉત્સર્પિણી કાળકૃત આયુ આદિની વૃદ્ધિ અને હ્રાસરૂપ પરિવર્તન

पर्यायाधिकारादेव नियतक्षेत्राश्रितत्वेन क्षेत्रव्यपदेश्यान् पुद्गलपर्यायान् प्रतिपिपादयिषुः क्षेत्रप्रकरणमाह—

सूत्रम्—जंबुद्दीवे दीवे मंदरस्स पव्वयस्स उत्तरदाहिणेणं दो वासा पण्णत्ता बहुसमतुल्ला अविसेसमणाणत्ता अन्नमन्नं नाइवट्टंति आयामविक्खंभुच्चत्तोव्वेहसंठाणपरिणाहेणं तं जहा भरहे चेव एरवए चेव। एवं एएणं अभिलावेणं हेमवए चेव, हेरन्नवए चेव, हरिवासे चेव रम्मयवासे चेव। जंबुद्दीवे दीवे मंदरस्स पव्वयस्स पुरत्थिमपच्चत्थिमेणं दो खित्ता पण्णत्ता बहुसमतुल्ला अविसेस० जाव—तं जहा—पुव्वविदेहे चेव अवरविदेहे चेव। जंबूमंदरस्स पव्वयस्स उत्तरदाहिणेणं दो कुराओ पण्णत्ताओ बहुसमतुल्लाओ जाव तं जहा—देवकुरा चेव उत्तरकुरा चेव तत्थ णं दो महइमहालया महादुमा पण्णत्ता बहुसमतुल्ला अविसेसमणाणत्ता अन्नमन्नं णाइवट्टंति आयामविक्खंभुच्चत्तोव्वेहसंठाणपरिणाहेणं, तं जहा—कूडसामली चेव जंबू चेव सुदंसणा। तत्थ णं दो देवा महिड्ढिया जाव महासोक्खा पलिओवमट्ठिइया परिवसंति, तं जहा—गरुले चेव वेणुदेवे अणाढिए चेव जंबुद्दीवाहिवई ॥ सू० ३० ॥

का जो उपक्रम है वह आयुष्क संवर्तक है—यह सोपक्रमायुष्क आयुष्क संवर्तक मनुष्य और पंचेन्द्रिय तिर्यंचोंको होता है क्यों कि ये सोपक्रम आयुवाले भी होते हैं। २४ ॥ सू० २९ ॥

पर्यायाधिकार को लेकर ही अब सूत्रकार नियतक्षेत्राश्रित होने के कारण क्षेत्र व्यपदेश्य पुद्गल पर्यायों को प्रतिपादन करने की इच्छा से

સંવર્તક છે તે સોપક્રમાયુષ્ય આયુષ્ક સંવર્તક મનુષ્ય અને પંચેન્દ્રિય તિર્યંચોમાં હોઈ શકે છે, કારણ કે તેઓ સોપક્રમ આયુવાળા પણ હોય છે ॥ ૨૪ ॥ ॥ સૂ ૨૯ ॥

પર્યાયાધિકાર ચાલી રહ્યો છે, હવે સૂત્રકાર-નિયત ક્ષેત્રાશ્રિત હોવાને કારણે – ક્ષેત્રવ્યપદેશ્ય પુદ્ગલ પર્યાયોનું પ્રતિપાદન કરવાના હેતુથી સૂત્ર

छाया—जम्बूद्वीपे द्वीपे मन्दरस्य पर्वतस्य उत्तरदक्षिणेन द्वे वर्षे प्रज्ञप्ते बहुसमतुल्ये अविशेषे अनानात्वे अन्योन्यं नातिवर्त्तेते आयामविष्कम्भोच्चत्वोद्वेधसंस्थानपरिणाहेन, तद्यथा—भरतं चैव ऐरवतं चैव। एवमेतेनाभिलापेन हैमवतं चैव हैरण्यवतं चैव, हरिवर्षं चैव, रम्यकवर्षं चैव। जम्बूद्वीपे द्वीपे मन्दरस्य पर्वतस्य पूर्वपश्चिमेन द्वे क्षेत्रे प्रज्ञप्ते बहुसमतुल्ये अविशेषे यावत् तद्यथा—पूर्वविदेहश्चैव अपरविदेहश्चैव। जम्बू मन्दरस्य पर्वतस्य उत्तरदक्षिणेन द्वौ कुरू प्रज्ञप्तौ बहुसमतुल्यौ यावत् तद्यथा—देवकुरवश्चैव उत्तरकुरवश्चैव। तत्र खलु द्वौ महातिमहालयौ महाद्रुमौ प्रज्ञप्तौ बहुसमतुल्यौ अविशेषौ अनानात्वौ अन्योन्यं नातिवर्त्तेते आयामविष्कम्भोच्चत्वोद्वेधसंस्थानपरिणाहेन, तद्यथा—कूटशाल्मलिश्चैव जम्बूश्चैव सुदर्शना। तत्र खलु द्वौ देवौ महर्द्धिकौ यावत् महासौख्यौ पल्योपमस्थितिकौ परिवसतः, तद्यथा—गरुडश्चैव वेणुदेवः अनादृतश्चैव जम्बूद्वीपाधिपतिः॥ सू० ३०॥

टीका—'जंबुद्दीवे' इत्यादि।

मध्यजम्बूद्वीपे मेरुपर्वतस्य उत्तरदक्षिणेन उत्तरदिशि दक्षिणदिशि चेत्यर्थः, द्वे वर्षे क्षेत्रे प्रज्ञप्ते। कीदृशे? इत्याह—बहुसमतुल्ये—अत्यन्तसदृशे, अविशेषे—वैलक्षण्यरहिते नगनगरनद्यादिकृतविशेषरहिते इत्यर्थः, अनानात्वे—नानात्वरहिते—अवसर्पिण्यादिकृतायुरादिभारभेदवर्जिते इत्यर्थः। ते द्वे अन्योन्यं—परस्परं नातिवर्त्तेते

क्षेत्रप्रकरण कहते हैं—'जंबुद्दीवे दीवे मंदरस्स पव्वयस्स' इत्यादि।

टीकार्थ—मध्यजंबूद्वीप में मेरुपर्वत की उत्तर और दक्षिणदिशा में क्रमशः दो क्षेत्र कहे गये हैं ये दोनों परस्पर में रचना में तुल्य हैं, विलक्षणता रहित हैं—नग, नगर, और नदी आदिकों की जैसी रचना प्रमाण आकार आदि भरतक्षेत्र में है वैसी ही इन सब की रचना ऐरवत क्षेत्र में है ये दोनों नानात्व से रहित हैं—अवसर्पिणी उत्सर्पिणी कालकृत जो आयु आदि की वृद्धि ह्रास रूप परिवर्तन है वह भी इन दोनों क्षेत्रों में

પ્રકરણનું નિરૂપણ કરે છે—"जंबुद्दीवे दीवे मंदरस्स पव्वयस्स" ઇત્યાદિ

ટીકાર્થ—મધ્ય જમ્બૂદ્વીપમાં મેરુ પર્વતની ઉત્તર અને દક્ષિણ દિશામાં ક્રમશઃ બે ક્ષેત્ર (ભરત ક્ષેત્ર અને ઐરવત ક્ષેત્ર) આવેલાં છે, તે બન્નેની રચના એકસરખી છે. એકબીજાની રચનામાં કોઇ વિલક્ષણતા નથી ભરતક્ષેત્રમાં પર્વત, નગર, નદી વગેરેની જેવી રચના, પ્રમાણ, આકાર આદિ છે, એવી જ એ સૌની રચના વગેરે ઐરવત ક્ષેત્રમાં પણ છે, તે બન્નેમાં કોઈ તફાવત નથી. અવસર્પિણી ઉત્સર્પિણી કાળકૃત આયુ આદિની વૃદ્ધિ અને હ્રાસરૂપ પરિપવર્તન

इतरेतरं नातिक्रामत इत्यर्थः । केनेत्याह-आयामेन-दैर्घ्येण विष्कम्भेण-पृथुत्वेन, उच्चत्वेन-ऊर्ध्वत्वेन, उद्वेधेन-गाम्भीर्येण, संस्थानेन – आरोपितज्याधनुराकाररूपेण, परिणाहेन-परिधिनेति । अत्रैतेषां द्वन्द्वसमासः । तद्यथा-नाम्ना ते वर्षे यथा-भरतं-भारतक्षेत्रम्, ऐरवतं च-ऐरवतक्षेत्रम् । एवमनेन अभिलापेन-उच्चारणेन-हैमवतं हैरण्यवतं च क्षेत्रम्, तथा हरिवर्षं रम्यकवर्षं च क्षेत्रं विज्ञेयम् । देवकुरुषु कूटशाल्मलीनामावृक्षः, उत्तरकुरुषु च जम्बूनामावृक्षः, अस्यापरनाम सुदर्शनेति । तत्र-तस्मिन्वृक्षे द्वौ देवौ परिवसतः । तौ देवौ कीदृशौ ? इत्याह-महर्द्धिको यावत् महासौख्यौ । अत्र-यावच्छब्देन ' महाद्युतिकौ महानुभागौ महा

आपस में एकसा है उसमें कोई भेद नहीं है । लम्बाई में और चौड़ाई में दोनों क्षेत्र बराबर हैं । हीनाधिक नहीं हैं । इसी प्रकार से ऊंचाई में, गांभीर्य में, संस्थान में-आरोपितज्या धनुषाकार जैसी आकृति में और परिधि में भी ये दोनों क्षेत्र परस्पर में समान हैं । " भारहे चेव एरवए चेव " इस पाठ से इन्हीं दोनों परस्पर में समानता वाले क्षेत्रों के नाम प्रकट किये गये हैं । " एवं एएणं अभिलावेणं हेमवए चेव हेरन्नवए चेव " इत्यादि इसी प्रकार के इस कथन से हैमवत और हैरण्यवतक्षेत्र, हरि वर्ष और रम्यकवर्ष क्षेत्र के सम्बन्ध में भी कथन समझना चाहिये देवकुरु में कूट शाल्मली नामका वृक्ष है और उत्तरकुरुमें जम्बू नामका वृक्ष है इसका दूसरा नाम सुदर्शना भी है इन वृक्षों पर दो देव रहते हैं ये देव महा ऋद्धि वाले और महासुखवाले हैं यहां यावत् शब्द से " महाद्युतिकौ, महानुभागौ महाबलौ, महायशसौ " इन पदों का ग्रहण

પણ તે બન્ને ક્ષેત્રોમાં સમાનતા છે બન્ને ક્ષેત્રોની લંબાઈ અને પહોળાઈ પણ સરખી છે-તેમાં કોઈ ભેદ નથી. એજ પ્રમાણે ઉંચાઈમાં, ગાંભીર્યમાં સંસ્થાનમાં (આરોપિત જ્યા ધનુષાકાર આકૃતિમાં) અને પરિધિમાં પણ તે બન્ને ક્ષેત્રો સમાન છે ' भारहे चेव एरवए चेव " આ સૂત્રપાઠ દ્વારા સૂત્રકારે પરસ્પરમાં સમાનતાવાળા તે બન્ને ક્ષેત્રોનાં નામ " ભરતક્ષેત્ર અને ઐરવત ક્ષેત્ર પ્રકટ કર્યાં છે " एवं एएणं अभिलावेणं हेमवए चेव हेरण्णवए चेव " ઇત્યાદિ—

આ પ્રકારના કથન દ્વારા હૈમવત અને હૈરણ્યવત ક્ષેત્રમાં પણ સમાનતા સમજવી. હરિવર્ષ અને રમ્યકવર્ષ ક્ષેત્રમાં પણ સમાનતા સમજવી. દેવકુરુમાં ' કૂટ શાલ્મલિ " નામનું વૃક્ષ છે અને ઉત્તરકુરુમાં જમ્બૂ નામનું વૃક્ષ છે તેનું બીજું નામ સુદર્શના પણ છે તે વૃક્ષોમાં બે દેવ રહે છે તે બન્ને દેવો મહા ઋદ્ધિવાળા, મહા દ્યુતિવાળા મહાનુભાગવાળા, મહા બળસંપન્ન, મહા

वलौ महायशसौ' इति संग्राह्यम्। तत्र महर्द्धिकौ–प्रभूतविमानादिसम्पत्तिशालिनौ महाद्युतिकौ प्रकृष्टशरीराभरणादि कान्तियुक्तौ, महानुभागौ–वैक्रियकरणाद्यचिन्त्यशक्तिमन्तौ, महाबलौ–विशिष्टशरीरसामर्थ्यवन्तौ, महायशसौ–विस्तीर्णश्लाघासंपन्नौ, महासौख्यौ–प्रभूतशातवेदनीयजनितानन्दभाजौ, इति। तयोर्नामाह— गरुडः सुपर्णकुमारजातीयो वेणुदेवः–वेणुदेवनामा देवः कूटशाल्मलिवृक्षनिवासी। तथा अनादृतः–अनादृतनामादेवः जम्बूसुदर्शनावृक्षनिवासी जम्बूद्वीपाधिपतिः। शेषपदव्याख्या सुगमा ॥ सू० ३० ॥

हुआ है महर्द्धिक पद से यह प्रकट किया गया है कि ये दोनों देव प्रभूत विमानादि रूप सम्पत्तिशाली हैं महाद्युतिक पद से यह प्रकट किया गया है कि ये दोनों देव प्रकृष्ट शरीराभरणादि की कान्ति से युक्त हैं महानुभाग शब्द से यह प्रकट किया गया है कि ये दोनों देव वैक्रिय करने आदि की अचिन्त्य शक्ति वाले हैं महाबल शब्द से यह कहा गया है कि ये दोनों देव विशिष्ट शरीर सामर्थ्य वाले हैं और महायश शब्दसे यह प्रकट किया गया है कि ये दोनों देव विस्तीर्ण श्लाघा प्रशंसा से संपन्न हैं तथा महासौख्य शब्दसे यह प्रकट किया गया है कि दोनों देव प्रभूत शातावेदनीय जन्य आनन्दसे युक्त हैं इनके नाम हैं गरुडवेणुदेव और अनादृतदेव गरुडवेणुदेव सुपर्णकुमार जातिका देव है और यह कूट शाल्मलि वृक्ष पर रहता है तथा अनादृत देव 'जम्बूसुदर्शना वृक्ष पर रहता है और जम्बूद्वीपका अधिपति है शेषपदोंकीव्याख्या सुगम है॥३०॥

યશ સંપન્નઅને મહા સુખસંપન્ન છે. મહર્દ્ધિક (મહા ઋદ્ધિવાળા) પદના પ્રયોગ દ્વારા એ વાત પ્રકટ કરવામાં આવી છે કે તે બન્ને દેવો વિમાનાદિરૂપ વિપુલ સંપત્તિવાળા છે મહાદ્યુતિક પદના પ્રયોગ દ્વારા એ વાત પ્રકટ કરવામાં આવી છે કે તે બન્ને દેવ અધિક શરીરાભરણ આદિની કાન્તિથી યુક્ત છે મહાનુભાગ શબ્દ દ્વારા એ વાત પ્રકટ કરવામાં આવી છે કે તે બન્ને દેવો વિકુર્વણા આદિ કરવાની અચિન્ત્ય શક્તિવાળા છે મહાબલ શબ્દ દ્વારા એ વાત પ્રકટ કરવામાં આવી છે કે તે બન્ને દેવો વિશિષ્ટ શરીર સામર્થ્યવાળા છે. મહાયશ શબ્દ દ્વારા એ વાત પ્રકટ કરવામા આવી છે કે તેઓ વિસ્તીર્ણ શ્લાઘા (પ્રશંસા) થી સંપન્ન છે તથા મહાસૌખ્ય શબ્દ દ્વારા એ વાત પ્રકટ કરવામાં આવી છે કે તે બન્ને દેવો શાતાવેદનીય જન્ય પ્રભૂત આનંદથી યુક્ત છે તેમના નામ નીચે પ્રમાણે છે–ગરુડ વેણુદેવ અને અનાદૃત દેવ. ગરુડ વેણુદેવ સુપર્ણકુમાર જાતિના દેવ છે અને તે આ કૂટ શાલ્મલિ વૃક્ષપર રહે છે તથા અનાદૃત દેવ જમ્બૂ સુદર્શના વૃક્ષપર રહે છે અને જમ્બૂદ્વીપના અધિપતિ છે, બાકીના પદોની વ્યાખ્યા સરળ છે ॥ સૂ. ૩૦ ॥

सूत्रम्—जंबू मंदरस्स पव्वयस्स य उत्तरदाहिणेण दो वास हरपव्वया पण्णत्ता, बहुसमतुल्ला अविसेसमणाणत्ता अन्नमन्न नाइवट्टंति आयामविक्खंभुच्चत्तोऽवेह संठाणपरिणाहेण, तं जहा चुल्लहिमवंते चेव सिहरी चेव। एवं महाहिमवंते चेव रुप्पी चेव। एवं णिसढे चेव णीलवंते चेव। जंबू मंदरस्स पव्वयस्स उत्तरदाहिणेणं हेमवयएरण्णवएसु वासेसु दो वट्टवेयड्ढपव्वया पण्णत्ता बहुसमतुल्ला अविसेसमणाणत्ता जाव तं जहा—सद्दा वाई चेव वियडावाई चेव। तत्थ णं दो देवा महिड्ढिया जाव पलिओवमट्ठिइया परिवसंति तं जहा—साई चेव पभासे चेव। जंबूमंदरस्स पव्वयस्स उत्तरदाहिणेणं हरिवासरम्मएसु वासेसु दो वट्टवेयड्ढपव्वया पण्णत्ता बहुसम० जाव तं जहा—गंधावाई चेव मालवंतपरियाए चेव। तत्थ णं दो देवा महिड्ढिया जाव पलिओव मट्ठिइया परिवसंति, तं जहा-अरुणे चेव पउमे चेव। जंबू मंदरस्स पव्वयस्स दाहिणेणं देवकुराए पुव्वावरे पासे एत्थ णं आसक्खंधग सरिसा अद्धचंदसंठाणसंठिया दोवक्खारपव्वया पण्णत्ता बहुसम जाव तं जहा—सोमणसे चेव विज्जुप्पभे चेव। जंबूमंदरस्स पव्वय स्स उत्तरेणं उत्तरकुराए पुव्वावरे पासे एत्थ णं आसक्खंधगसरिसा अद्धचंदसंठाणसंठिया दो वक्खारपव्वया पण्णत्ता बहुसमतुल्ला जाव तं जहा—गंधमायणे चेव मालवंते चेव। जंबूमंदरस्स पव्व यस्स उत्तरदाहिणेणं दो दीहवेयड्ढपव्वया पण्णत्ता बहुसमतुल्ला जाव तं जहा—भारहे चेव दीहवेयड्ढे चेव। एरवए चेव दीह

वेयड्ढे चेव। भारहेणं दीहवेयड्ढे दो गुहाओ पण्णत्ताओ बहुसमतुल्लाओ अविसेसमणाणत्ताओ अन्नमन्नं णाइवट्टंति आयामविक्खंभुच्चत्तोव्वेह संठाणपरिणाहेणं तं जहा--तिमिसगुहा चेव खंडगप्पवायगुहा चेव। तत्थ णं दो देवा महिड्ढिया जाव पलिओवमट्ठिइया परिवसंति, तं जहा—कयमालए चेव नट्टमालए चेव। एरावएणं दीहवेयड्ढे दो गुहाओ पण्णत्ताओ जाव तं जहा—कयमालए चेव नट्टमालए चेव। जंबूमंदरस्स पव्वयस्स दाहिणेणं चुल्लहिमवंतवासहरपव्वए दो कूडा पण्णत्ता बहुसमतुल्ला जाव विक्खंभुच्चत्तोव्वेहसंठाणपरिणाहेणं, तं जहा—चुल्लहिमवंतकूडे चेव, वेसमणकूडे चेव। जंबूमंदरस्स दाहिणेणं महाहिमवंते वासहरपव्वए दो कूडा पण्णत्ता बहुसम० जाव तं जहा-महाहिमवंतकूडे चेव वेरुलियकूडे चेव। एवं निसढे वासहरपव्वए दो कूडा पण्णत्ता बहुसम० जाव तं जहा--निसढकूडे चेव रुयगप्पभे चेव। जंबूमंदरस्स पव्वयस्स उत्तरेणं नीलवंते वासहरपव्वए दो कूडा पण्णत्ता बहुसम० जाव तं जहा--नीलवंतकूडे चेव उवदंसणकूडे चेव। एवं रुप्पिम्मि वासहरपव्वए दो कूडा पण्णत्ता बहुसम० जाव तं जहा--रुप्पिकूडे चेव मणिकंचणकूडे चेव। एवं सिहरंमि वासहरपव्वए दो कूडा पण्णत्ता बहुसम० जाव तं जहा--सिहरिकूडे चेव तिगिंछकूडे चेव ॥सू०३१॥

छाया—जम्बूमन्दरस्य पर्वतस्य च उत्तरदक्षिणेन द्वौ वर्षधरपर्वतौ प्रज्ञप्तौ बहुसमतुल्यौ अविशेषौ अनानात्वौ अन्योन्यं नातिवर्त्तेते आयामविष्कम्भोच्चत्वोद्वेधसंस्थानपरिणाहेन, तद्यथा—चुल्लहिमवान् चैव शिखरी चैव। एवं महाहिमवान्

चैव रुक्मी चैव। एवं निषधश्चैव। जम्बूमन्दरस्य पर्वतस्य उत्तरदक्षिणेन हैमवतैरण्यवतयोर्वर्षयो द्वौ वृत्तवैताढ्यपर्वतौ प्रज्ञप्तौ बहुसमतुल्यौ अविशेषौ अनानात्वौ यावत् तद्यथा-शब्दापाती चैव विकटापाती चैव। तत्र खलु द्वौ देवौ महर्द्धिकौ

'जंबू मदरस्स पव्वयस्स' इत्यादि।

छायार्थ—मध्य जंबूद्वीप में जो मन्दर-सुमेरु नाम का पर्वत है उसकी उत्तर दिशा की ओर और दक्षिण दिशा की ओर क्रमशः दो वर्षधर पर्वत कहे गये हैं। ये दोनों पर्वत बहुसमतुल्य हैं। विलक्षणतासे रहित हैं। नानात्वसे भेदसे रहित हैं। लंबाई और चौडाईमें, उंचाई और उद्वेध (गेहराइ)से संस्थान एवं परिणाह (विशालता)-परिधिसे ये दोनों परस्पर में एक दूसरेसे भिन्न नहीं हैं। इन दोनों पर्वतोंका नाम है-क्षुल्लहिमवान् और शिखरी इनमें दक्षिणदिशाकी ओर क्षुल्ल हिमवान् पर्वत है और उत्तरदिशा की ओर शिखरी पर्वत है इसी प्रकार से दक्षिणदिशा की ओर महा हिमवान् पर्वत और उत्तरदिशा की ओर रुक्मी पर्वत है इसी प्रकार से निषध और नील हैं। इसी प्रकार से मध्य जम्बूद्वीप के सुमेरु पर्वत की उत्तरदक्षिण दिशा की ओर हैमवत और हैरण्यवत क्षेत्रों के दो वृत्त वैताढ्य पर्वत कहे गये हैं। ये दोनों वृत्तवैताढ्यपर्वत भी बहुसमतुल्य, अविशेष और भेदरहित हैं यावत् आयाम विष्कंभ की अपेक्षा, उंचाई

"जंबूमंदरस्स पव्वयस्स" इत्यादि—

टीकार्थ—મધ્ય જંબૂદ્વીપમાં જે મન્દર (સુમેરુ) નામનો પર્વત છે તેની ઉત્તર દિશા તરફ ક્રમશઃ બે વર્ષધર પર્વતો આવેલાં છે તે બન્ને પર્વતો બહુ જ સમતુલ્ય છે તેઓ વિલક્ષણતાથી રહિત છે તેમની વચ્ચે કોઈપણ પ્રકારનો તફાવત નથી. લંબાઈ, પહોળાઈ ઉંચાઈ, ઉદ્વેધ, સંસ્થાન અને પરિધિની અપેક્ષાએ તે બન્નેમાં કોઈ ભિન્નતા નથી તેમનાં નામ આ પ્રમાણે છે-(૧) ક્ષુલ્લ હિમવાન્ અને શિખરી. ક્ષુલ્લ હિમવાન્ પર્વત મન્દર પર્વતની દક્ષિણમાં છે અને શિખરી પર્વત મન્દર પર્વતની ઉત્તરે છે એજ પ્રમાણે દક્ષિણ દિશા તરફ મહા હિમવાન્ પર્વત અને ઉત્તર દિશા તરફ રુક્મી પર્વત છે એજ પ્રમાણે નિષધ અને નીલ પર્વત પણ આવેલાં છે એજ પ્રમાણે મધ્ય જંબૂદ્વીપના સુમેરુ પર્વતની ઉત્તર દક્ષિણ દિશામાં હૈમવત અને હૈરણ્યવત ક્ષેત્રોના બે વૃત્તવૈતાઢ્ય (વૃત્ત એટલે ગોળ આકાર) પર્વતો પણ આવેલા છે તે બન્ને વૃત્તવૈતાઢ્ય પર્વતો પણ બહુ સમતુલ્ય અવિશેષ (વિશેષતા રહિત) અને ભેદરહિત છે તેમની લંબાઈ, પહોળાઈ, ઉદ્વેધ, (ઉંડાઈ) સંસ્થાન

यावत् पल्योपमस्थितिकौ परिवसतः, तद्यथा–स्वाती चैव प्रभासश्चैव । जम्बूमन्दरस्य पर्वतस्य उत्तरदक्षिणेन हरिवर्षरम्यकवर्षयोर्द्वौ वृत्तवैताढ्यपर्वतौ प्रज्ञप्तौ बहुसम० यावत् तद्यथा–गन्धापाती चैव माल्यवत्पर्यायश्चैव । तत्र खलु द्वौ देवौ महर्द्धिकौ यावत् पल्योपमस्थितिकौ परिवसतः, तद्यथा–अरुणश्चैव पद्मश्चैव । जम्बूमन्दरस्य पर्वतस्य दक्षिणेन देवकुरूणां पूर्वापरस्मिन् पार्श्वे, अत्र खलु अश्वस्कन्धकसदृशौ अर्द्धचन्द्र संस्थानसंस्थितौ द्वौ वक्षस्कारपर्वतौ प्रज्ञप्तौ बहुसमतुल्यौ

की अपेक्षा, उद्वेध की अपेक्षा, संस्थान और परिणाह की अपेक्षा ये दोनों परस्पर में एक दूसरे से बढ कर नहीं हैं भिन्न नहीं हैं। किन्तु एक जैसे ही है। इनका नाम शब्दापाती और विकटापाती है। इनमें दो देव रहते हैं। ये दोनों देव महती ऋद्धि वाले यावत् पल्योपम की स्थितिवाले हैं। इन देवों के नाम स्वाती और प्रभास हैं। इसी प्रकार मध्य जंबूद्वीप के सुमेरु पर्वत की उत्तर और दक्षिणदिशा में क्रमशः वर्तमान हरिवर्ष एवं रम्यकवर्ष में दो वृत्तवैताढ्य पर्वत है ये भी बहुसम आदि विशेषणों वाले हैं। इनके नाम हैं गन्धापाती और माल्यवत्पर्याय इनमें भी दो देव रहते हैं ये भी परस्पर में महर्द्धिक आदि विशेषणों वाले हैं इनकी भी स्थिति एक पल्योपम की है इनके नाम अरुण और पद्म हैं। जंबूद्वीप के सुमेरु पर्वत की दक्षिणदिशा मे देवकुरु के पूर्व और पश्चिम पार्श्व भाग में अश्वस्कन्ध के जैसे अर्द्धचन्द्राकार दो वक्षस्कार पर्वत कहे गये हैं ये दोनों पर्वत बहुसमतुल्य आदि विशेषणों वाले हैं इनके नाम

અને પરિધિની અપેક્ષાએ તેમની વચ્ચે કોઇ ભેદ નથી, તે બાબતોમા તે બન્ને સમાનજ છે તેમના નામ શબ્દાપાતી અને વિકટાપાતી છે, તેમા બે દેવ રહે છે. તે બન્ને દેવો મહાઋદ્ધિ આદિથી યુકત છે અને પલ્યોપમની સ્થિતિવાળા છે. તે દેવોના નામ અનુક્રમે સ્વાતી અને પ્રભાસ છે

એજ પ્રમાણે મધ્ય જબૂદ્રીપના સુમેરુ પર્વતની ઉત્તર અને દક્ષિણ દિશામાં આવેલા હરિવર્ષ અને રમ્યકવર્ષમા પણ બે વૃત્તવૈતાઢ્ય પર્વતો છે તેઓ પણ બહુસમ આદિ પૂર્વોક્ત વિશેષણોવાળા છે. તેમના નામ ગન્ધાપાતી અને માલ્યવત્પર્યાય છે તેમા બે દેવ રહે છે તે બન્ને દેવો પણ મહર્દ્ધિક આદિ પૂર્વોકત વિશેષણોવાળા છે તેમની સ્થિતિ પણ એક પલ્યોપમની છે તેમના નામ નામ આ પ્રમાણે છે-(૧) અરુણ અને (૨) પદ્મ

જંબૂદ્રીપના સુમેરુ પર્વતની દક્ષિણ દિશામાં દેવકુરુના પૂર્વ અને પશ્ચિમ તરફના ભાગોમા અશ્વસ્કન્ધના જેવા અર્ધચન્દ્રાકાર બે વૃક્ષસ્કાર પર્વતો આવેલાં

यावत् तद्यथा–सौमनसश्चैव विद्युत्प्रभश्चैव । जम्बूमन्दरस्य पर्वतस्य उत्तरेण उत्तर कुरूणां पूर्वापरस्मिन् पार्श्वे, अत्र खलु अश्वस्कन्धकसदृशौ अर्द्धचन्द्रसंस्थानसंस्थितौ द्वौ वक्षस्कारपर्वतौ प्रज्ञप्तौ बहुसमतुल्यौ यावत्–तद्यथा–गन्धमादनश्चैव माल्यवान् चैव । जम्बूमन्दरस्य पर्वतस्य उत्तरदक्षिणेन द्वौ दीर्घवैताढ्यपर्वतौ प्रज्ञप्तौ बहुसमतुल्यौ यावत् तद्यथा–भारतश्चैव दीर्घवैताढ्यः, ऐरवतश्चैव दीर्घवैताढ्यश्चैव । भारते खलु दीर्घवैताढ्ये द्वे गुहे प्रज्ञप्ते बहुसमतुल्ये अविशेषे अनानात्वे अन्योन्यं नातिवर्तेते आयामविष्कम्भोच्चत्वोद्वेधसंस्थानपरिणाहेन, तद्यथा–तमिस्रगुहा

सौमनस और विद्युत्प्रभ हैं । जंबू । मन्दर–सुमेरुकी उत्तरदिशामें उत्तर कुरु के पूर्व और पश्चिम पार्श्वभाग में अश्वस्कन्ध के जैसे अर्द्धचन्द्राकार दो वक्षस्कार पर्वत हैं, ये दोनों पर्वत बहुसम आदि विशेषणों वाले हैं । इनके नाम गंधमादन और माल्यवान हैं । इसी प्रकार से जंबू मन्दर–सुमेरु की उत्तरदक्षिण दिशा की ओर दो दीर्घ वैताढ्य पर्वत कहे गये हैं ये दोनों पर्वत भी बहुसम आदि विशेषणों वाले हैं । आदि पद से यहां " अविशेष, अनानात्व, आयाम, विष्कंभ की अपेक्षा समानता, और उच्चता, उद्वेध, संस्थान और परिणाह की अपेक्षा भी समानता ग्रहण की गई है इन दो दीर्घ वैताढ्यपर्वतों के नाम भरतदीर्घ वैताढ्य और ऐरवतदीर्घवैताढ्य हैं । भरतदीर्घवैताढ्य पर्वत में दो गुफाएँ हैं जो बहुसम आदि विशेषणों वाली हैं इनके नाम तमिस्रागुफा और

છે તેમનાં નામ સૌમનસ અને વિદ્યુત્પ્રભ છે તે બન્ને પર્વતો પણ બહુ સમ આદિ પૂર્વોક્ત વિશેષણોથી સંપન્ન છે જમ્બૂદ્વીપના સુમેરુ પર્વતની ઉત્તર દિશામાં ઉત્તર કુરુના પૂર્વ અને પશ્ચિમ તરફના ભાગોમાં અશ્વસ્કન્ધના જેવાં અર્ધચન્દ્રાકારના બે વક્ષસ્કાર પર્વતો આવેલાં છે, તેઓ પણ બહુસમ આદિ પૂર્વોક્ત વિશેષણોવાળા છે તેમનાં નામ ગંધમાદન અને માલ્યવાન છે

એજ પ્રમાણે જમ્બૂદ્વીપના સુમેરુની ઉત્તર-દક્ષિણ દિશા તરફ બે દીર્ઘ વૈતાઢ્ય પર્વત કહ્યાં છે તે બન્ને પર્વતો પણ બહુ સમ આદિ વિશેષણોવાળાં છે આદિ પદથી અહીં એ પ્રકટ કરવામાં આવ્યું છે કે તેઓમાં એક બીજા કરતાં કોઇ વિશેષતા અથવા વિવિધતા નથી. લંબાઇ, પહોળાઇ ઉંચાઇ ઉદ્વેધ, સંસ્થાન અને પરિધિની અપેક્ષાએ પણ તે બન્નેમાં સમાનતા રહેલી છે તેમનાં નામ નીચે પ્રમાણે છે–(૧) ભરત દીર્ઘ વૈતાઢ્ય અને (૨) ઐરવત દીર્ઘ વૈતાઢ્ય. ભરત દીર્ઘ વૈતાઢ્યમાં બે ગુફાઓ છે તે બન્ને ગુફાઓ બહુસમ આદિ વિશેષણોવાળી છે તેમનાં નામ આ પ્રમાણે છે–તમિસ્રા ગુફા અને

खण्डकप्रपातागुहा चैव । तत्र खलु द्वौ देवौ महर्द्धिकौ यावत् पल्योपमस्थितिकौ
विसतः, तद्यथा–कृतमाल्यकश्चैव नृत्यमाल्यकश्चैव । ऐरवते खलु दीर्घवैताढ्ये
गुहे प्रज्ञप्ते यावत्–तद्यथा–कृतमालयकश्चैव नृत्यमालयकश्चैव । जम्बूमंदरस्य
तस्य दक्षिणेन चुल्लहिमवति वर्षधरपर्वते द्वौ कूटौ प्रज्ञप्तौ बहुसमतुल्यौ यावत्
ष्कम्भोच्चत्वोद्वेधसंस्थानपरिणाहेन, तद्यथा चुल्लहिमवत्कूटश्चैव वैश्रवणकूटश्चैव ।
म्बूमन्दरस्य पर्वतस्य दक्षिणेन महाहिमवति वर्षधरपर्वते द्वौ कूटौ प्रज्ञप्तौ बहु-
म० यावत्–तद्यथा–महाहिमवत्कूटश्चैव वैडूर्यकूटश्चैव । एव निषधे वर्षधरपर्वते
कूटौ प्रज्ञप्तौ बहुसम० यावत्–तद्यथा–निषधकूटश्चैव रुचकप्रभश्चैव । जम्बू

खण्डकप्रपातगुफा है । इन में दो महाऋद्धि आदि विशेषणों वाले देव
हते हैं । इनकी स्थिति भी एक पल्योपम की है इन देवों के नाम कृत-
गल्यक और नृत्यमाल्यक हैं । जंबू मंदर–सुमेरु की दक्षिण दिशामें जो
क्षुल्लहिमवान् पर्वत है उस पर दो कूट कहे गये हैं ये दोनों कूट भी
बहुसम आदि पूर्वोक्त विशेषणों वाले हैं विष्कंभ, उच्चता आदि में ये
दोनों कूट समान हैं । इनके नाम क्षुल्लहिमवत्कूट और वैश्रवणकूट
है । जम्बू मन्दर की दक्षिणदिशा में जो महाहिमवान् पर्वत है उस पर
भी दो कूट कहे गये हैं इन पर्वतों को जो वर्षधर कहा गया है उसका
कारण यह है कि ये क्षेत्रों का विभाग करते हैं महाहिमवान् पर्वत के
दोनों कूट भी बहुसम आदि विशेषणों वाले हैं इन कूटों के नाम महा-
हिमवत्कूट और वैडूर्यकूट है इसी प्रकार निषध पर्वत पर भी दो कूट

ખંડકપ્રપાત ગુફા. તે ગુફાઓમાં મહર્દ્ધિક આદિ વિશેષણોવાળા બે દેવ રહે
છે. તેમની સ્થિતિ પણ એક પલ્યોપમની છે. તેમના નામ કૃતમાલ્યક
અને નૃત્યમાલ્યક છે.

જંબૂદ્વીપના મંદર (સુમેરુ) ની દક્ષિણ દિશામાં જે ક્ષુલ્લ હિમવાન્
પર્વત છે, તેના ઉપર બે કૂટ આવેલાં છે તે બન્ને કૂટ પણ બહુસમ આદિ
વિશેષણોથી યુક્ત છે. લંબાઈ, પહોળાઈ, ઉંચાઇ આદિમાં પણ તેઓ સરખાં
છે. તેમના નામ આ પ્રમાણે છે–(૧) ક્ષુલ્લ હિમવત્કૂટ અને (૨) વૈશ્રવણકૂટ.

જંબૂદ્વીપના મંદર પર્વતની દક્ષિણ દિશામાં જે મહાહિમવાન્ પર્વત છે,
તેની ઉપર પણ બે કૂટ કહ્યા છે. તે પર્વતોને વર્ષધર કહેવાનું કારણ એ છે
કે તેઓ ક્ષેત્રોની મર્યાદા કરે છે મહાહિમવાન્ પર્વતના બન્ને કૂટ પણ બહુ
સમ આદિ વિશેષણોવાળા છે તે બન્ને કૂટોનાં નામ મહાહિમવત્કૂટ અને વૈડૂર્યકૂટ છે.
એજ પ્રમાણે નિષધ પર્વતપર પણ બે કૂટ છે તે બન્ને કૂટો પણ બહુસમ
આદિ વિશેષણોથી યુક્ત છે તેમના નામ [illegible]

यावत् तद्यथा-सौमनसश्चैव विद्युत्प्रभश्चैव । जम्बूमन्दरस्य पर्वतस्य उत्तरेण उत्तर कुरूणां पूर्वापरस्मिन् पार्श्वे, अत्र खलु अश्वस्कन्धकसदृशौ अर्द्धचन्द्रसंस्थानसंस्थितौ द्वौ वक्षस्कारपर्वतौ प्रज्ञप्तौ बहुसमतुल्यौ यावत्-तद्यथा-गन्धमादनश्चैव माल्यवान् चैव । जम्बूमन्दरस्य पर्वतस्य उत्तरदक्षिणेन द्वौ दीर्घवैताढ्यपर्वतौ प्रज्ञप्तौ बहुसमतुल्यौ यावत् तद्यथा-भारतश्चैव दीर्घवैताढ्यः, ऐरवतश्चैव दीर्घवैताढ्यश्चैव । भारते खलु दीर्घवैताढ्ये द्वे गुहे प्रज्ञप्ते बहुसमतुल्ये अविशेषे अनानात्वे अन्योन्यं नातिवर्तेते आयामविष्कम्भोच्चत्वोद्वेधसंस्थानपरिणाहेन, तद्यथा-तमिस्रगुहा

सौमनस और विद्युत्प्रभ हैं। जम्बू। मन्दर-सुमेरुकी उत्तरदिशामें उत्तर कुरु के पूर्व और पश्चिम पार्श्वभाग में अश्वस्कन्ध के जैसे अर्द्धचन्द्राकार दो वक्षस्कार पर्वत हैं, ये दोनों पर्वत बहुसम आदि विशेषणों वाले हैं। इनके नाम गन्धमादन और माल्यवान हैं। इसी प्रकार से जम्बू मन्दर-सुमेरु को उत्तरदक्षिण दिशा की ओर दो दीर्घ वैताढ्य पर्वत कहे गये हैं ये दोनों पर्वत भी बहुसम आदि विशेषणों वाले हैं। आदि पद से यहां "अविशेष, अनानात्व, आयाम, विष्कंभ की अपेक्षा समानता, और उच्चता, उद्वेध, संस्थान और परिणाह की अपेक्षा भी समानता ग्रहण की गई है इन दो दीर्घ वैताढ्यपर्वतों के नाम भरतदीर्घ वैताढ्य और ऐरवतदीर्घवैताढ्य हैं। भरतदीर्घवैताढ्य पर्वत में दो गुफाएँ हैं जो बहुसम आदि विशेषणों वाली हैं इनके नाम तमिस्रागुफा और

છે તેમના નામ સૌમનસ અને વિદ્યુત્પ્રભ છે તે બન્ને પર્વતો પણ બહુ સમ આદિ પૂર્વોક્ત વિશેષણોથી સંપન્ન છે જમ્બૂદ્વીપના સુમેરુ પર્વતની ઉત્તર દિશામાં ઉત્તર કુરુના પૂર્વ અને પશ્ચિમ તરફના ભાગોમાં અશ્વસ્કન્ધના જેવાં અર્ધચન્દ્રાકારના બે વક્ષસ્કાર પર્વતો આવેલાં છે તેઓ પણ બહુસમ આદિ પૂર્વોક્ત વિશેષણોવાળા છે તેમનાં નામ ગન્ધમાદન અને માલ્યવાન છે

એજ પ્રમાણે જમ્બૂદ્વીપના સુમેરુની ઉત્તર-દક્ષિણ દિશા તરફ બે દીર્ઘ વૈતાઢ્ય પર્વત કહ્યાં છે તે બન્ને પર્વતો પણ બહુ સમ આદિ વિશેષણોવાળા છે આદિ પદથી અહીં એ પ્રકટ કરવામાં આવ્યું છે કે તેઓમાં એક બીજા કરતાં કોઇ વિશેષતા અથવા વિવિધતા નથી લંબાઇ, પહોળાઈ, ઉંચાઇ, ઉદ્વેધ, સંસ્થાન અને પરિધિની અપેક્ષાએ પણ તે બન્નેમાં સમાનતા રહેલી છે તેમનાં નામ નીચે પ્રમાણે છે-(૧) ભરત દીર્ઘ વૈતાઢ્ય અને (૨) ઐરવત દીર્ઘ વૈતાઢ્ય. ભરત દીર્ઘ વૈતાઢ્યમાં બે ગુફાઓ છે તે બન્ને ગુફાઓ બહુસમ આદિ વિશેષણોવાળી છે તેમનાં નામ આ પ્રમાણે છે-તમિસ્રા ગુફા અને

तथा, तौ। कीदृशौ? इत्याह-' बहुसमतुल्यौ अविशेषौ अनानात्वौ अन्योन्यं नातिवर्त्तेते, आयामविष्कम्भोच्चत्वोद्वेधसंस्थानपरिणाहेन ' इति पदानां व्याख्याऽनुपदं त्रिंशत्तमसूत्रे कृता ततोऽवसेया। तत्राह-क्षुल्लहिमवान्-लघुहिमवान् भरतानन्तरम्, तथा शिखरी यत्परमैरवतक्षेत्रं वर्त्तते सः। इमौ द्वावपि पूर्वापरतो लवणसमुद्रस्पृष्टौ योजन शतोच्छ्रायौ पञ्चविंशतियोजनावगाढौ आयतचतुरस्रसंस्थान संस्थितौ स्तः। अनयोर्विशेषवर्णनमन्यतोऽवसेयम्। एवं यथा ' जंबू दीवे दीवे '

के बीच क्षुद्रहिमवान् पर्वत है इसी प्रकार हैमवत क्षेत्र और हरिवर्ष क्षेत्र के बीच में सीमा पर महाहिमवान् पर्वत है हरिवास और महाविदेहक्षेत्र के बीच में निषधपर्वत है विदेह और रम्यक क्षेत्र के बीच में नीलवान् पर्वत है रम्यक और हैरण्यवतक्षेत्रके बीचमें रुक्मी पर्वत है हैरण्यवत और ऐरवतक्षेत्र के बीच में शिखरी पर्वत है इस तरह से ये पर्वत दो दो क्षेत्रों का विभाग करते हैं। सुमेरु पर्वत की दक्षिणदिशा में भरत, हैमवत और हरिवर्ष क्षेत्र हैं और उत्तरदिशा में रम्यक हैरण्यवत और ऐरवत क्षेत्र है विदेहक्षेत्र में देवकुरु दक्षिणदिशा में और उत्तरकुरु उत्तरदिशा में है कालचक्र का परिवर्तन भरतक्षेत्र और ऐरवत क्षेत्र इन दो क्षेत्रों में ही होता है शेषक्षेत्रों में नहीं इन शेष क्षेत्रों में निवास करने वाले जीवों के उपभोग आयु शरीर का परिमाण आदि सदा एक से रहते हैं हैमवत क्षेत्र में जीवों की आयु एक पल्य प्रमाण होती है-यहां निरन्तर उत्सर्पिणी का चौथा या अवसर्पिणी का

પાડે છે. જેમકે દક્ષિણ દિશામાં આવેલા ભરતક્ષેત્ર અને હૈમવત ક્ષેત્રની વચ્ચે ક્ષુદ્ર હિમવાન્ પર્વત છે. એજ પ્રમાણે હૈમવત અને હરિવર્ષ ક્ષેત્રની વચ્ચે, સીમાપર મહાહિમવાન્ પર્વત છે. હરિવાસ અને મહાવિદેહ ક્ષેત્રની વચ્ચે નિષધ પર્વત છે, વિદેહ અને રમ્યક ક્ષેત્રની વચ્ચે નીલવાન્ પર્વત છે, રમ્યક અને હૈરણ્યવત ક્ષેત્રની વચ્ચે રુકિમ પર્વત છે અને હૈરણ્યવત અને ઐરવત ક્ષેત્રની વચ્ચે શિખરી પર્વત છે. આ રીતે આ પર્વતો બબ્બે ક્ષેત્રોની મર્યાદા કરે છે.

સુમેરુ પર્વતની દક્ષિણ દિશામાં ભરત, હૈમવત અને હરિવર્ષ ક્ષેત્રો છે, અને ઉત્તર દિશામાં રમ્યક, હૈરણ્યવત અને ઐરવત ક્ષેત્રો છે. વિદેહ ક્ષેત્રમાં દેવકુરુ દક્ષિણ દિશામાં અને ઉત્તર કુરુ ઉત્તર દિશામાં છે. કાલચક્રનું પરિવર્તન માત્ર ભરતક્ષેત્ર અને ઐરવત ક્ષેત્રોમાં જ થાય છે, બાકીના ક્ષેત્રોમાં થતું નથી. તે બાકીનાં ક્ષેત્રોમાં નિવાસ કરનારા જીવોના ઉપભોગ, આયુ, શરીરનું પ્રમાણ આદિ સદા એકસરખું જ રહે છે. હૈમવત ક્ષેત્રમાં જીવોનું આયુષ્ય એક પલ્ય

मन्दरस्य पर्वतस्य उत्तरेण नीलवति वर्षधरपर्वते द्वौ कूटौ प्रज्ञप्तौ बहुसम० यावत् तद्यथा–नीलवत्कूटश्चैव, उपदर्शनकूटश्चैव। एवं रुक्मिणि वर्षधरपर्वते द्वौ कूटौ प्रज्ञप्तौ बहुसम० यावत्–तद्यथा–रुक्मिकूटश्चैव मणिकाञ्चनकूटश्चैव। एवं शिखरिणि वर्षधरपर्वते द्वौ कूटौ प्रज्ञप्तौ बहुसम० यावत्–तद्यथा–शिखरिकूटश्चैव तिगिच्छिकूटश्चैव ॥ सू० ३१ ॥

टीका—'जम्बूद्वीपे' इत्यादि। सुगमम्। नवरम्–वर्षे–उभयपार्श्वस्थिते क्षेत्रे धरतो–व्यवस्थापयतइति वर्षधरौ क्षेत्र द्वयसीमाकारिणौ, तौ च तौ पर्वतौ चेति

कहे गये हैं ये दोनों कूट भी बहुसम आदि पूर्वोक्त विशेषणों वाले हैं। इन कूटों के नाम निषधकूट और रुचकप्रभ कूट हैं। जम्बू मन्दर पर्वत की उत्तरदिशा में जो नील वर्षधर पर्वत है–उसमें भी दो कूट हैं ये दो कूट भी बहुसम आदि पूर्वोक्त विशेषणों वाले हैं इनमें एक का नाम नीलवत्कूट और दूसरे का नाम उपदर्शनकूट है इसी प्रकार से रुक्मि वर्षधर पर्वत पर भी दो कूट हैं ये भी पूर्वोक्त बहुसम आदि विशेषणों वाले हैं इनमें एक का नाम रुक्मिकूट और दूसरे का नाम मणिकंचनकूट है इसी प्रकार से शिखरि वर्षधर पर्वत पर जो दो कूट पूर्वोक्त बहुसम आदि विशेषणों से युक्त कहे गये हैं उनके नाम शिखरिकूट और तिगिच्छकूट हैं।

टीकार्थ—इस सूत्र की व्याख्या सुगम है हिमवान् आदि पर्वतों को जो वर्षधर कहा गया है उसका कारण यह है कि ये हिमवान् आदि पर्वत अपनी दोनों ओर स्थित दो क्षेत्रों को धारण करते हैं अर्थात् उनकी सीमा बताते हैं जैसे दक्षिण दिशा में स्थित भरतक्षेत्र और क्षेत्र

જમ્બૂદ્વીપના મંદર પર્વતની ઉત્તર દિશામાં જે નીલ વર્ષધર પર્વત છે, તેમાં પણ નિલવત્કૂટ અને ઉપદર્શનકૂટ નામના બે કૂટો છે તે બન્ને કૂટ પણ બહુસમ આદિ વિશેષણોવાળા છે એજ પ્રમાણે રુકિમ વર્ષધર પર્વતપર પણ રુકિમકૂટ અને મણિકંચનકૂટ નામના બે કૂટો છે તે બન્ને કૂટ પણ બહુસમ આદિ વિશેષણોવાળા છે એજ પ્રમાણે શિખરી વર્ષધર પર્વતપર પણ શિખરી કૂટ અને તિગિચ્છકૂટ નામના બે કૂટ છે તેઓ પણ બહુસમ આદિ પૂર્વોક્ત વિશેષણોથી યુક્ત છે

ટીકાર્થ—આ સૂત્રની વ્યાખ્યા સરળ છે હિમવાન્ આદિ પર્વતોને વર્ષધર કહેવાનું કારણ એ છે કે હિમવાન્ આદિ પર્વત પોતાની બન્ને બાજુએ આવેલાં ક્ષેત્રોને ધારણ કરે છે-એટલે કે તેમની સીમા બતાવે છે અને તેમને અલગ

तथा, तौ। कीदृशौ? इत्याह-'बहुसमतुल्यौ अविशेषौ अनानात्वौ अन्योन्यं नातिवर्त्तेते, आयामविष्कम्भोच्चत्वोद्वेधसंस्थानपरिणाहेन' इति पदानां व्याख्याऽनुपदं त्रिंशत्तमसूत्रे कृता ततोऽवसेया। तत्राह-क्षुल्लहिमवान्-लघुहिमवान् भरतानन्तरम्, तथा शिखरी यत्परमैरवतक्षेत्रं वर्त्तते सः। इमौ द्वावपि पूर्वापरतो लवणसमुद्रस्पृष्टौ योजन शतोच्छ्रायौ पञ्चविंशतियोजनावगाढौ आयतचतुरस्रसंस्थान संस्थितौ स्तः। अनयोर्विशेषवर्णनमन्यतोऽवसेयम्। एवं यथा 'जंबू दीवे दीवे'

के बीच क्षुद्रहिमवान् पर्वत है इसी प्रकार हैमवत क्षेत्र और हरिवर्ष क्षेत्र के बीच में सीमा पर महाहिमवान् पर्वत है हरिवास और महाविदेहक्षेत्र के बीच में निषधपर्वत है विदेह और रम्यक क्षेत्र के बीच में नीलवान् पर्वत है रम्यक और हैरण्यवतक्षेत्रके बीचमें रुक्मी पर्वत है हैरण्यवत और ऐरवतक्षेत्र के बीच में शिखरी पर्वत है इस तरह से ये पर्वत दो दो क्षेत्रों का विभाग करते हैं। सुमेरु पर्वत की दक्षिणदिशा में भरत, हैमवत और हरिवर्ष क्षेत्र हैं और उत्तरदिशा में रम्यक हैरण्यवत और ऐरवत क्षेत्र है विदेहक्षेत्र में देवकुरु दक्षिणदिशा में और उत्तरकुरु उत्तरदिशा में है कालचक्र का परिवर्तन भरतक्षेत्र और ऐरवत क्षेत्र इन दो क्षेत्रों में ही होता है शेषक्षेत्रों में नहीं इन शेष क्षेत्रों में निवास करने वाले जीवों के उपभोग आयु शरीर का परिमाण आदि सदा एक से रहते हैं हैमवत क्षेत्र में जीवों की आयु एक पल्य प्रमाण होती है-यहां निरन्तर उत्सर्पिणी का चौथा या अवसर्पिणी का

પાડે છે. જેમકે દક્ષિણુ દિશામાં આવેલા ભરતક્ષેત્ર અને હૈમવત ક્ષેત્રની વચ્ચે ક્ષુદ્ર હિમવાન્ પર્વત છે. એજ પ્રમાણે હૈમવત અને હરિવર્ષ ક્ષેત્રની વચ્ચે, સીમાપર મહાહિમવાન્ પર્વત છે. હરિવાસ અને મહાવિદેહ ક્ષેત્રની વચ્ચે નિષધ પર્વત છે, વિદેહ અને રમ્યક ક્ષેત્રની વચ્ચે નીલવાન્ પર્વત છે, રમ્યક અને હૈરણ્યવત ક્ષેત્રની વચ્ચે રુકિમ પર્વત છે અને હૈરણ્યવત અને ઐરવત ક્ષેત્રની વચ્ચે શિખરી પર્વત છે આ રીતે આ પર્વતો બબ્બે ક્ષેત્રોની મર્યાદા કરે છે.

સુમેરુ પર્વતની દક્ષિણુ દિશામાં ભરત, હૈમવત અને હરિવર્ષ ક્ષેત્રો છે, અને ઉત્તર દિશામાં રમ્યક, હૈરણ્યવત અને ઐરવત ક્ષેત્રો છે. વિદેહ ક્ષેત્રમાં દેવકુરુ દક્ષિણુ દિશામા અને ઉત્તર કુરુ ઉત્તર દિશામાં છે. કાલચક્રનું પરિવર્તન માત્ર ભરતક્ષેત્ર અને ઐરવત ક્ષેત્રોમાં જ થાય છે, બાકીના ક્ષેત્રોમાં થતું નથી. તે બાકીના ક્ષેત્રોમાં નિવાસ કરનારા જીવોના ઉપભોગ, આયુ, શરીરનું પ્રમાણુ આદિ સદા એકસરખું જ રહે છે. હૈમવત ક્ષેત્રમાં જીવોનું આયુષ્ય એક પલ્ય

मन्दरस्य पर्वतस्य उत्तरेण नीलवति वर्षधरपर्वते द्वौ कूटौ प्रज्ञप्तौ बहुसम० यावत् तद्यथा–नीलवत्कूटश्चैव, उपदर्शनकूटश्चैव। एवं रुक्मिणिवर्षधरपर्वते द्वौ कूटौ प्रज्ञप्तौ बहुसम० यावत्–तद्यथा–रुक्मिकूटश्चैव मणिकाञ्चनकूटश्चैव। एवं शिखरिणि वर्षधरपर्वते द्वौ कूटौ प्रज्ञप्तौ बहुसम० यावत्–तद्यथा–शिखरिकूटश्चैव तिगिञ्छिकूटश्चैव ॥ सू० ३१ ॥

टीका—'जम्बूदीवे' इत्यादि। सुगमम्। नवरम्–वर्षे–उभयपार्श्वस्थिते क्षेत्रे धरतो–व्यवस्थापयतइति वर्षधरौ क्षेत्र द्वयसीमाकारिणौ, तौ चतौ पर्वतौ चेति

कहे गये हैं ये दोनों कूट भी बहुसम आदि पूर्वोक्त विशेषणों वाले हैं। इन कूटों के नाम निषधकूट और रुचकप्रभ कूट है। तथा मन्दर पर्वत की उत्तरदिशा में जो नील वर्षधर पर्वत है–उसमें भी दो कूट हैं ये दो कूट भी बहुसम आदि पूर्वोक्त विशेषणों वाले हैं इनमें एक का नाम नीलवत्कूट और दूसरे का नाम उपदर्शनकूट है इसी प्रकार से रुक्मि-वर्षधर पर्वत पर भी दो कूट हैं ये भी पूर्वोक्त बहुसम आदि विशेषणों वाले हैं इनमें एक का नाम रुक्मिकूट और दूसरे का नाम मणिकाञ्चनकूट है इसी प्रकार से शिखरि वर्षधर पर्वत पर जो दो कूट पूर्वोक्त बहुसम आदि विशेषणों से युक्त कहे गये हैं उनके नाम शिखरिकूट और तिगिच्छकूट हैं।

टीकार्थ—इस सूत्र की व्याख्या सुगम है हिमवान् आदि पर्वतों को जो वर्षधर कहा गया है उसका कारण यह है कि ये हिमवान् आदि पर्वत अपनी दोनों ओर स्थित दो क्षेत्रों को धारण करते हैं अर्थात् उनकी सीमा बताते हैं जैसे दक्षिण दिशा में स्थित भरतक्षेत्र और क्षेत्र

જમ્બૂદીપના મંદર પર્વતની ઉત્તર દિશામાં જે નીલ વર્ષધર પર્વત છે, તેમાં પણ નિલવત્કૂટ અને ઉપદર્શનકૂટ નામના બે કૂટો છે. તે બન્ને કૂટ પણ બહુસમ આદિ વિશેષણોવાળાં છે એજ પ્રમાણે રુક્મિ વર્ષધર પર્વતપર પણ રુક્મિકૂટ અને મણિકાંચનકૂટ નામના બે કૂટો છે તે બન્ને કૂટ પણ બહુસમ આદિ વિશેષણોવાળાં છે એજ પ્રમાણે શિખરી વર્ષધર પર્વતપર પણ શિખરી કૂટ અને તિગિચ્છકૂટ નામના બે કૂટ છે તેઓ પણ બહુસમ આદિ પૂર્વોક્ત વિશેષણોથી યુક્ત છે

ટીકાર્થ—આ સૂત્રની વ્યાખ્યા સરળ છે હિમવાન્ આદિ પર્વતોને વર્ષધર કહેવાનું કારણ એ છે કે હિમવાન્ આદિ પર્વત પોતાની બન્ને બાજુએ આવેલાં ક્ષેત્રોની મર્યાદા કરે છે–એટલે કે તેમની સીમા બતાવે છે અને તેમને અલગ

इत्यादि, सूत्राभिलापेन हिमवच्छिखरिणौ प्रोक्तौ तथा महाहिमवद्रुक्मिपर्वतावपि विज्ञेयौ । तत्र महाहिमवानिति लघुहिमवदपेक्षया । 'उत्तरदाहिणेणं' इति पाठस्य यथासंख्यन्यायमनाश्रित्य यथासत्तिन्यायाद्दक्षिणतो महाहिमवान्, रुक्मीचोत्त-

---

में बिलकुल समान हैं इनमें किसी भी प्रकार की एक दूसरे से विशेषता नहीं है अनानात्व है किसी भी प्रकार का इनमे भेद नहीं है आयाम, विष्कंभ, उच्चत्व, उद्वेध, संस्थान और परिणाह इन दोनों का बराबर बराबर है। लघुहिमवान् भरतक्षेत्रकी सीमा जहां समाप्त होती है वहां पर है और शिखरी पर्वत हैरण्यवत की सीमा जहां समाप्त होती है वहां पर है इसके बाद ऐरवत क्षेत्र है ये दोनों पर्वत पूर्व से पश्चिम तक लम्बे हैं अर्थात् पूर्वपश्चिम और लवण समुद्र तक फैले हुए हैं ये दोनों एक सौ योजन के ऊँचे हैं और २५ पच्चीस योजन नीचे जमीन में अवगाह युक्त है तथा इनका संस्थान आयतचतुरस्र है इनका विशेष वर्णन अन्य शास्त्रों से जानना चाहिये। इस तरह "जंबुदीवे दीवे" इत्यादि सूत्राभिलाप के द्वारा क्षुल्लहिमवान् और शिखरी पर्वत के सम्बन्ध में जैसे यह कहा गया है, इसी प्रकार का कथन महाहिमवान् और रुक्मी पर्वत के विषय में भी करना चाहिये, ये दोनों पर्वत भी क्रमशः दक्षिण

અને હૈરણ્યવત ક્ષેત્રની જ્યાં સીમા સમાપ્ત થાય છે, ત્યાં આવેલે છે. તે બંને પર્વતો પરસ્પરમાં બિલકુલ સમાન છે તે બન્નેમાં કોઈપણ પ્રકારની વિશેષતા નથી. તેમની વચ્ચે અનાનાત્વ (વિવિધતા અથવા અસમાનતાનો અભાવ) છે, તેમની વચ્ચે બિલકુલ તફાવત નથી. તે બન્ને લંબાઈ, પહોળાઈ, ઉંચાઈ, ઉદ્વેધ, સંસ્થાન (આકાર) અને પરિધિની અપેક્ષાએ એકસરખાં છે.

લઘુહિમવાન્ જ્યાં ભરતક્ષેત્રની સીમા સમાપ્ત થાય છે, ત્યાં આવેલો છે. અને હૈરણ્યવતની સીમા જ્યાં સમાપ્ત થાય છે ત્યાં શિખરી પર્વત આવેલો છે. ત્યારબાદ એરવત ક્ષેત્ર છે. તે બન્ને પર્વતો પૂર્વપશ્ચિમ તરફ લવણ સમુદ્ર સુધી ફેલાયેલા છે તે બન્ને એકસો યોજન ઉંચા છે અને ૨૫ યોજન નીચે જમીનમા અવગાહયુક્ત છે. તેમના સંસ્થાનની અપેક્ષાએ–આકારની દૃષ્ટિએ તેઓ આયતચતુસ્રસસ્થાનવાળા છે, તેમનું વિશેષ વર્ણન જિજ્ઞાસુ પાઠકોએ અન્ય શાસ્ત્રોમાંથી વાચી લેવું આ રીતે "જંબુદીવે દીવે" ઈત્યાદિ સૂત્રો દ્વારા જેવું કથન ક્ષુલ્લ (ક્ષુદ્ર) હિમવાન્ અને શિખરી પર્વતના વિષયમાં કરવામાં આવ્યુ છે, એવું જ કથન મહાહિમવાન્ અને રુકિમ પર્વતના વિષયમાં પણ ગ્રહણ કરવું જોઈએ. સુમેરુ પર્વતની દક્ષિણ દિશા તરફ મહાહિમવાન્ પર્વત

तीसरा काल बना रहता है हरिवर्ष क्षेत्र में प्राणियों की आयु दो पल्य प्रमाण होती है यहां निरन्तर उत्सर्पिणी का पांचवां या अवसर्पिणी का दूसरा काल प्रवर्तता है विदेह क्षेत्र में सदा अवसर्पिणी का चतुर्थकाल ही रहता है यहां के प्राणियों की स्थिति १ कोटिपूर्व की होती है देवकुरु क्षेत्र के प्राणियों की स्थिति तीन पल्यप्रमाण होती है यहां निरन्तर उत्सर्पिणी का छठा और अवसर्पिणी का पहिला काल होता है हैमवत, हरिवर्ष और देवकुरु में काल का जो यह क्रम प्रकट किया गया है यही क्रम उत्तरदिशा के उत्तरकुरु रम्यक और हैरण्यवत इन तीन क्षेत्रों में जानना चाहिये उत्तरकुरु में देवकुरु के समान, रम्यक में हरिवर्ष के समान और हैरण्यवत में हैमवत के समान काल की प्रवृत्ति है भरत क्षेत्र और ऐरवत क्षेत्र की सीमा पर जो दो पर्वत हैं उनके नाम है क्षुद्रहिमवान् और शिखरी। इनमें क्षुद्र हिमवान् सुमेरु की दक्षिणदिशा तरफ है। तथा शिखरी पर्वत सुमेरु की उत्तर दिशा तरफ है क्षुद्रहिमवान् पर्वत भरतक्षेत्र की समाप्ति जहां होती है उस सीमापर है और शिखरी पर्वत ऐरवत क्षेत्र का जहां से प्रारंभ होता है और हैरण्यवत क्षेत्र की जहां सीमा समाप्त होती है वहां पर है ये दोनों पर्वत परस्पर

પ્રમાણ હોય છે ત્યાં નિરન્તર ઉત્સર્પિણીનો ચોથો અથવા અવસર્પિણીનો ત્રીજો કાળ જ પ્રવર્તતો હોય છે હરિવર્ષ ક્ષેત્રમાં પ્રાણીઓનું આયુષ્ય બે પલ્યપ્રમાણ હોય છે ત્યાં નિરન્તર ઉત્સર્પિણીનો પાંચમો અથવા અવસર્પિણીનો બીજો કાળ પ્રવર્તતો હોય છે વિદેહ ક્ષેત્રમાં સદા અવસર્પિણીનો ચોથો કાળ જ પ્રવર્તતો હોય છે અને ત્યાંના પ્રાણીઓની સ્થિતિ એક કોટિપૂર્વની હોય છે દેવકુરુ ક્ષેત્રના પ્રાણીઓની સ્થિતિ ત્રણ પલ્યપ્રમાણ હોય છે. ત્યાં નિરન્તર ઉત્સર્પિણીનો છઠ્ઠો અથવા અવસર્પિણીનો પહેલો કાળ પ્રવર્તતો હોય છે. હૈમવત, હરિવર્ષ અને દેવકુરુમાં કાળનો જે આ ક્રમ પ્રકટ કરવામાં આવ્યો છે, એજ ક્રમ ઉત્તર દિશાના ઉત્તરકુરુ, રમ્યક અને હૈરણ્યવત, આ ત્રણ ક્ષેત્રોમાં પણ સમજવો. ઉત્તરકુરુમાં દેવકુરુના સમાન, રમ્યકમાં હરિવર્ષ સમાન, અને હૈરણ્યવતમાં હૈમવત સમાન કાળની પ્રવૃત્તિ સમજવી. ભરતક્ષેત્ર અને ઐરવત ક્ષેત્રની સીમાપર જે બે પર્વતો છે તેમનાં નામ ક્ષુદ્રહિમવાન્ અને શિખરી છે તેમાંથી ક્ષુદ્રહિમવાન્ સુમેરુની દક્ષિણ દિશા તરફ છે અને શિખરી પર્વત સુમેરુની ઉત્તર દિશા તરફ છે ભરતક્ષેત્રની જ્યાં સમાપ્તિ થાય છે તે સીમાપર ક્ષુદ્રહિમવાન્ પર્વત છે અને શિખરી પર્વત ઐરવત ક્ષેત્રનો જ્યાંથી આરંભ થાય છે

'जंबू' इत्यादि सुगमं, नवरं–द्वौ वृत्तवैताढयपर्वतौ, वृत्तौ पल्याकारत्वाद् वैताढयौ –वैताढयनामकौ पर्वतौ। तौ च सर्वतः सहस्रयोजनपरिमितौ रजतमयौ स्तः। तत्र यथासत्तिन्यायाश्रयणाद्दक्षिणतो हैमवते शब्दपाती, उत्तरत ऐरण्यवते विकटापातीति। 'तत्थ णं' इति तत्र–तयोर्वृत्तवैताढयपर्वतयोः क्रमेण स्वातिः प्रभासश्चेति द्वौ देवौ महर्द्धिकौ यावत्पल्योपमस्थितिकौ वसतः, तत्र तद्भवनसद्भावादिति। 'जंबू' इत्यादि, हरिवर्षे गन्धापाती, रम्यकवर्षे माल्यवत्पर्यायः पर्वतः। तयोः पूर्वोक्तरूपौ अरुणाभिधः पद्माभिधश्चेति द्वौ देवौ क्रमेणैव वसत इति। 'जंबू' इत्यादि, जम्बूद्वीपे मन्दरपर्वतस्य दक्षिणतो देवकुरुषु पूर्वापरयोः पार्श्वयोः पूर्वपार्श्वे अपरपार्श्वे चेत्यर्थः कथम्भूतयोः पूर्वापरपार्श्वयोः ? इत्याह–

रजतमय हैं। दक्षिणदिशा तरफ जो हैमवत क्षेत्र है उसमें शब्दापाती वृत्तवैताढयपर्वत है और उत्तरदिशा तरफ जो ऐरण्यवतक्षेत्र है उसमें विकटापाती वृत्तवैताढय है इन वैताढयों में क्रमशः स्वाति और प्रभास ये दो महर्द्धिक आदि विशेषणों वाले देव रहते हैं। इनकी स्थिति एक पल्योपम की है ये वहां इसलिये रहते हैं कि इनके वहां भवन बने हुए हैं। हरिवर्ष क्षेत्र में गन्धापाती और रम्यकवर्ष में माल्यवत्पर्याय नामके वैताढयपर्वत हैं। इनमें पूर्वोक्त रूप संपन्न दो देव जिन के नाम अरुणाभिध और पद्माभिध हैं क्रमशः रहते हैं। इसी प्रकार से जम्बूद्वीप में स्थित जो मन्दरपर्वत है उसकी दक्षिणदिशा में जो विदेहक्षेत्रस्थ देवकुरु हैं उनके पूर्वपार्श्व में और अपरपार्श्व में क्रमशः सौमनस और

દરેકની પરિધિ આયામ વિષ્કંભ (લંબાઇ, પહોળાઇ) કરતા ત્રમણી છે. વૃત્તવૈતાઢય પર્વતો પલ્યાકાર છે. વૃત્તવૈતાઢય પર્વતો સર્વત્ર એક હજાર યોજનના છે અને રજતમય છે દક્ષિણ દિશા તરફ જે હૈમવત ક્ષેત્ર છે તેમાં શબ્દાપાતી નામનો વૃત્તવૈતાઢય પર્વત છે અને ઉત્તર દિશા તરફ જે ઐરણ્યવત ક્ષેત્ર છે તેમાં વિકટાપાતિ નામનો વૃત્તવૈતાઢય પર્વત છે તે વૃત્તવૈતાઢયોમાં અનુક્રમે સ્વાતિ અને પ્રભાસ નામના મહર્દ્ધિક આદિ વિશેષણોવાળા બે દેવ વસે છે, તેમની સ્થિતિ એક પલ્યોપમની છે. તેઓ ત્યાં શા કારણે રહે છે? ત્યાં તેમનાં ભવનો બનેલાં હોવાથી તેઓ ત્યાં રહે છે હરિવર્ષ ક્ષેત્રમાં ગંધાપાતી, અને રમ્યક વર્ષમાં માલ્યવત્પર્યાય નામના વૃત્તવૈતાઢયો ક્રમશ. આવેલા છે. તે બન્નેમાં પૂર્વોક્ત વિશેષણોવાળા બે દેવ રહે છે, જેમનાં નામ અનુક્રમે અરુણ અને પદ્મ છે.

એજ પ્રમાણે જંબૂદ્વીપમાં આવેલા મન્દર પર્વતની દક્ષિણ દિશામાં જે વિદેહ ક્ષેત્રસ્થ દેવકુરુ છે તેની પૂર્વ તરફ અને પશ્ચિમ તરફ અનુક્રમે સૌમનસ

रत इति। एवं सर्वत्र वाच्यम्। एवमेव निषधनीलवन्तौ विज्ञेयौ, नवरमेषामाया-मविष्कम्भादयोऽन्यतोऽवसेया। चतुरस्रपरिधिस्तु आयामविष्कम्भद्विगुण इति।

और उत्तर की ओर हैं–अर्थात् सुमेरु पर्वत की दक्षिण दिशा तरफ महाहिमवान् पर्वत है और उत्तरदिशा तरफ रुक्मी पर्वत है। इसी प्रकार का कथन निषध और नीलवन्त पर्वतों के विषय में भी करना चाहिये इनके आयाम विस्तार आदि का कथन अन्य सिद्धान्त ग्रन्थों से जानना चाहिये तात्पर्य इसका "तद्विगुणद्विगुणविस्तारा वर्षधर विदेहान्ताः" इस सिद्धान्त सूत्र के अनुसार ऐसा है कि विदेह क्षेत्रपर्यन्त पर्वत और क्षेत्र भरतक्षेत्र से दूने दूने विस्तार वाले हैं जम्बूद्वीप में भरतक्षेत्र का विस्तार ५२६ योजन ६ कला का है इससे दूना विस्तार हिमवान् पर्वत का है हिमवान् पर्वत के विस्तार से दूना विस्तार हैमवत क्षेत्र का है हैमवत क्षेत्र के विस्तार से दूना विस्तार महाहिमवान् पर्वत का है इस तरह यह दूना २ विस्तार क्रम विदेह क्षेत्रतक है इसके बाद के उत्तर दिशा के क्षेत्रों का और पर्वतों का विस्तार दक्षिण के क्षेत्र और पर्वतों के जैसा ही है इस तरह ऐरवत क्षेत्र का विस्तार ५२६ योजन ६ कला का हो जाता है जो भरत क्षेत्र के बराबर ही बैठता है।

चतुरस्रपरिधि तो आयामविष्कम्भ से दूनी है वृत्तवैताढ्यपर्वत पल्याकार हैं। ये वृत्तवैताढ्यपर्वत सर्वतः एक हजार योजन के हैं और

છે અને ઉત્તર દિશા તરફ રુક્મિ પર્વત છે આ પ્રમાણેનું કથન નિષધ અને નીલવન્ત પર્વતોના વિષયમાં પણ સમજી લેવું તેમની લંબાઈ, પહોળાઈ આદિનું વર્ણન અન્ય શાસ્ત્રોમાંથી જાણી લેવું

"तद्द्विगुणद्विगुणविस्तारा वर्षधरविदेहान्ताः" આ સૂત્રનું તાત્પર્ય એ છે કે વિદેહક્ષેત્ર પર્યન્તમાં પર્વત અને ક્ષેત્ર ભરતક્ષેત્ર કરતાં બમણાં બમણાં વિસ્તારવાળાં છે જમ્બૂદ્વીપના ભરતક્ષેત્રનો વિસ્તાર ૫૨૬ યોજન અને ૬ કલા પ્રમાણ છે તેનાથી બમણો વિસ્તાર હિમવાન્ પર્વતનો છે હિમવાન્ પર્વત કરતાં હૈમવત ક્ષેત્રનો વિસ્તાર બમણો છે હૈમવત ક્ષેત્ર કરતાં મહાહિમવાન્ પર્વતનો વિસ્તાર બમણો છે આ રીતે બમણાં બમણાંનો વિસ્તારક્રમ વિદેહ ક્ષેત્ર સુધી સમજી લેવો. મન્દર પર્વતની ઉત્તર દિશામાં આવેલા ક્ષેત્રોનો અને પર્વતોનો વિસ્તાર દક્ષિણ દિશાના ક્ષેત્રો અને પર્વતોના વિસ્તાર જેટલો જ છે જેમકે ઐરવત ક્ષેત્રનો વિસ્તાર ભરતક્ષેત્રના વિસ્તાર જેટલો જ (૫૨૬ યોજન ૬ કલાનો) છે.

'जंबू' इत्यादि सुगमं, नवरं—द्वौ वृत्तवैताढयपर्वतौ, वृत्तौ पल्याकारत्वाद् वैताढयौ —वैताढयनामकौ पर्वतौ। तौ च सर्वतः सहस्रयोजनपरिमितौ रजतमयौ स्तः। तत्र यथासत्तिन्यायाश्रयणाद्दक्षिणतो हैमवते शब्दपाती, उत्तरत ऐरण्यवते विकटापातीति। 'तत्थ णं' इति तत्र—तयोर्वृत्तवैताढयपर्वतयोः क्रमेण स्वातिः प्रभासश्चेति द्वौ देवौ महर्द्धिकौ यावत्पल्योपमस्थितिकौ वसतः, तत्र तद्भवनसद्भावादिति। 'जंबू' इत्यादि, हरिवर्षे गन्धापाती, रम्यकवर्षे माल्यवत्पर्यायः पर्वतः। तयोः पूर्वोक्तरूपौ अरुणाभिधः पद्माभिधश्चेति द्वौ देवौ क्रमेणैव वसत इति। 'जंबू' इत्यादि, जम्बूद्वीपे मन्दरपर्वतस्य दक्षिणतो देवकुरुषु पूर्वापरयोः पार्श्वयोः पूर्वपार्श्वे अपरपार्श्वे चेत्यर्थः कथम्भूतयोः पूर्वापरपार्श्वयोः ? इत्याह—

रजतमय हैं। दक्षिणदिशा तरफ जो हैमवत क्षेत्र है उसमें शब्दापाती वृत्तवैताढयपर्वत है और उत्तरदिशा तरफ जो ऐरण्यवतक्षेत्र है उसमें विकटापाती वृत्तवैताढय है इन वैताढयों में क्रमशः स्वाति और प्रभास ये दो महर्द्धिक आदि विशेषणों वाले देव रहते हैं। इनकी स्थिति एक पल्योपम की है ये वहां इसलिये रहते हैं कि इनके वहां भवन बने हुए हैं। हरिवर्ष क्षेत्र में गन्धापाती और रम्यकवर्ष में माल्यवत्पर्याय नामके वैताढयपर्वत हैं। इनमें पूर्वोक्त रूप संपन्न दो देव जिन के नाम अरुणाभिध और पद्माभिध हैं क्रमशः रहते हैं। इसी प्रकार से जम्बूद्वीप में स्थित जो मन्दरपर्वत है उसकी दक्षिणदिशा में जो विदेहक्षेत्रस्थ देवकुरु हैं उनके पूर्वपार्श्व में और अपरपार्श्व में क्रमशः सौमनस और

દરેકની પરિધિ આયામ વિષ્કંભ (લંબાઇ, પહોળાઇ) કરતા ત્રમણી છે. વૃત્તવૈતાઢય પર્વતો પલ્યાકાર છે. વૃત્તવૈતાઢય પર્વતો સર્વત્ર એક હજાર યોજનના છે અને રજતમય છે દક્ષિણ દિશા તરફ જે હૈમવત ક્ષેત્ર છે તેમા શબ્દાપાતી નામનો વૃત્તવૈતાઢય પર્વત છે અને ઉત્તર દિશા તરફ જે ઐરણ્યવત ક્ષેત્ર છે તેમાં વિકટાપાતિ નામનો વૃત્તવૈતાઢય પર્વત છે તે વૃત્તવૈતાઢયોમાં અનુક્રમે સ્વાતિ અને પ્રભાસ નામના મહર્દ્ધિક આદિ વિશેષણોવાળા બે દેવ વસે છે, તેમની સ્થિતિ એક પલ્યોપમની છે. તેઓ ત્યાં શા કારણે રહે છે ? ત્યાં તેમનાં ભવનો બનેલાં હોવાથી તેઓ ત્યાં રહે છે હરિવર્ષ ક્ષેત્રમાં ગંધાપાતી, અને રમ્યક વર્ષમાં માલ્યવત્પર્યાય નામના વૃત્તવૈતાઢયો ક્રમશ. આવેલા છે તે બન્નેમાં પૂર્વોક્ત વિશેષણોવાળા બે દેવ રહે છે, જેમનાં નામ અનુક્રમે અરુણ અને પદ્મ છે.

એજ પ્રમાણે જંબૂદ્વીપમાં આવેલા મન્દર પર્વતની દક્ષિણ દિશામાં જે વિદેહ ક્ષેત્રસ્થ દેવકુરુ છે તેની પૂર્વ તરફ અને પશ્ચિમ તરફ અનુક્રમે સૌમનસ

'एत्थ' इति, अत्र-प्रज्ञापकेनोपदर्श्यमानयोः अश्वस्कन्धसदृशौ आदौ निम्नौ पर्यवसाने चोन्नतौ, तयोर्निषधसमीपे चतुःशत योजनोच्छ्रितत्वात्, मेरुसमीपे तु पञ्चशत योजनोच्छ्रितत्वादिति, अर्धचन्द्रसंस्थानसंस्थितौ अर्धचन्द्राकारौ अत्रार्धशब्देन विभागमात्रं विवक्ष्यते, न तु समप्रविभागतेति ताभ्यां सार्द्धचन्द्राकारा देवकुरवः कृता। तौ द्वौ पूर्वोक्तविशेषणविशिष्टौ परस्परसमानरूपौ क्रमेण सौमनस-विद्युत्प्रभनामानौ वक्षस्कारपर्वतौ। तत्र-वक्षसि-मध्ये गोप्य क्षेत्रं द्वौ समूप कुरुत इति वक्षस्कारौ, तौ च तौ पर्वतौ चेति तथा, 'जंबू' इत्यादि। एवमेवोत्तरकुरुष्वपि द्वौ गन्धमादन-माल्यवन्नामानौ वक्षस्कारपर्वतौ स्तः। नवरं पश्चिमविन्यापराभिन्यापरपार्श्वे गन्धमादनः, पूर्वपार्श्वमाल्यवानिति। 'जम्बू'

विद्युत्प्रभ नामके दो वक्षस्कारपर्वत हैं ये वक्षस्कार आदिमें निम्न-नीचा हैं और अन्त में उन्नत-ऊंचा हैं अतः इनका आकार अश्वस्कन्धके जैसा है निषध के पास ये चारसो योजन ऊंचे हैं, और मेरु के पास पांचसौ योजन ऊंचे हैं अर्द्धचन्द्र के जैसे ये संस्थान वाले हैं यहां अर्ध शब्द से केवल विभागमात्र विवक्षित हुआ है समप्रविभागता नहीं इन्हीं दो वक्षस्कारपर्वतों ने देवकुरुओं को अर्द्धचन्द्र के आकार जैसा कर दिया है ये वक्षस्कार परस्पर में समानरूप वाले हैं वक्षस्कार ऐसा नाम इनके होने का यह कारण है कि ये दोनों अपने मध्यगत क्षेत्र को गोप्य कर रखते हैं इसी प्रकार उत्तरकुरुओं में भी दो वक्षस्कारपर्वत गन्धमादन और माल्यवान् नाम के हैं अपरपार्श्व में गन्धमादन और पूर्वपार्श्व में माल्यवान् वक्षस्कार पर्वत है। इसी तरह से जम्बूद्वीप में मन्दरपर्वत-

---

અને વિદ્યુત્પ્રભ નામના બે વક્ષસ્કાર પર્વતો છે તે વક્ષસ્કાર પર્વતો આદિમાં નીચા છે અને અન્ત ભાગમાં ઊંચા છે તેથી તેમનો આકાર અશ્વસ્કંધના જેવો લાગે છે નિષધની પાસે તેઓ ૪૦૦ યોજન ઊંચા છે અને મેરુની પાસે ૫૦૦ યોજન ઊંચા છે તેઓ અર્ધચન્દ્રના જેવાં સંસ્થાન (આકાર) વાળા છે અહીં અર્ધ શબ્દથી માત્ર વિભાગ જ દર્શાવવામાં આવ્યો છે-સમપ્રવિભાગતા દર્શાવવામાં આવેલ નથી આ બન્ને વક્ષસ્કાર પર્વતોએ દેવકુરુઓને અર્ધચન્દ્રના આકાર જેવાં કરી દીધાં છે તેઓ એકસરખાં સ્વરૂપવાળા છે તેમને વક્ષસ્કાર કહેવાનું કારણ એ છે કે તેઓ પોતાની વચ્ચે રહેલા ક્ષેત્રને ગોપ્ય (નજરે ન પડે એવું) કરી નાખે છે એજ પ્રમાણે ઉત્તર કુરુઓમાં પણ બે વક્ષસ્કાર પર્વત છે તેમનાં નામ ગંધમાદન અને માલ્યવાન્ છે પશ્ચિમ તરફ ગંધમાદન અને પૂર્વ તરફ માલ્યવાન્ વક્ષસ્કાર પર્વતો આવેલા છે એજ

इत्यादि, जम्बूद्वीपे मन्दरपर्वतस्य उत्तरदक्षिणयोः—पूर्वोक्तन्यायाद्दक्षिणोत्तरयोः भरतैरवतनमानौ द्वौ दीर्घवैताढ्यपर्वतौ स्तः । अत्र—वृत्तवैताढ्यव्यवच्छेदार्थं दीर्घग्रहणम् । इमौ च भरतैरवतक्षेत्रयोर्मध्यभागे पूर्वापरतो लवणोदधिं स्पृष्टवन्तौ पञ्चविंशतियोजनोच्छ्रितौ तत्पादावगाढौ पञ्चाशद् योजनविस्तृतौ आयतसंस्थितौ सर्वरजतमयावुभयतो बहिः काञ्चनमण्डनाङ्काविति । 'भारहेणं' इत्यादि, भारते—भारताभिधे खलु दीर्घवैताढ्ये द्वे गुहे स्तः—तमिस्रगुहा, खण्डप्रपातगुहाचेति । तत्र तस्याऽपरभागतस्तमिस्रा गुहा वर्त्तते, सा च गिरिविस्तारायामा द्वादशयोजनविस्ताराऽष्टयोजनोच्छ्रया, आयतचतुरस्रसंस्थाना विजयद्वारपरिमितद्वारा

सुमेरु की उत्तरदिशा में और दक्षिणदिशा में भरत और ऐरवत नामके दो दीर्घ वैताढ्यपर्वत हैं यहां दीर्घपद का ग्रहण वृत्तवैताढ्य पर्वतों के व्यवच्छेदके लिये किया गया है ये दोनों दीर्घ वैताढ्य पर्वत भरत और ऐरवत क्षेत्र के मध्यभाग में पूर्व से पश्चिम तक लवणसमुद्र को छूते हैं २५ योजन के ये ऊँचे हैं चौथाई भाग इनका जमीन नीचे अवगाढ है ५० योजन का इनका विस्तार है आयत–लम्बा–दण्ड के समान इनका संस्थान है सर्व प्रकारसे ये रजतमय हैं ये दोनों बाहरमें काञ्चनकेमण्डन के अङ्क–चिह्नवाले हैं अर्थात् बाह्यका भाग स्वर्णमय है भरतनामके दीर्घ वैताढ्यपर्वतपर दो गुफाएँ हैं एकका नाम है तमिस्रागुफा और दूसरी का नाम है खण्डप्रपातगुफा तमिस्रागुफा उसके पीछेके भागमें है यह गुफा गिरि के जितनी विस्तार और आयामवाली है १२ योजनका इसका विस्तार है और आठ योजन की यह ऊँची है इसका संस्थान आयातचतुरस्र है

પ્રમાણે જંબૂદ્વીપના મન્દર (સુમેરુ) પર્વતની ઉત્તરમાં ભરત અને દક્ષિણમાં ઐરવત નામના દીર્ઘ વૈતાઢ્ય પર્વતો આવેલા છે અહીં વૃત્તવૈતાઢ્ય પર્વતોના વ્યવચ્છેદને માટે દીર્ઘપદનો પ્રયોગ કરવામાં આવ્યો છે તે બન્ને દીર્ઘવૈતાઢ્ય પર્વતો ભરત અને ઐરવત ક્ષેત્રની મધ્યમાં પૂર્વથી પશ્ચિમ દિશામાં લવણ સમુદ્ર સુધી ફેલાયેલા છે. તેમની ઉંચાઈ ૨૫ યોજનની છે તેમનો ૧/૪ ભાગ જમીનની નીચે અવગાઢ છે. ૫૦ યોજનનો તેમનો વિસ્તાર છે. આયત (લાંબા) દંડના જેવું તેમનું સંસ્થાન (આકાર) છે. તેઓ સંપૂર્ણતઃ રજતમય છે. તે બન્નેનો બહારનો દેખાવ સોનાના મંડનના ચિહ્નવાળો હોય છે અર્થાત્ બહારનો ભાગ સુવર્ણમય હોય એવો લાગે છે. ભરત નામના દીર્ઘ વૈતાઢ્ય પર્વતપર બે ગુફાઓ છે, તેમનાં નામ તમિસ્રા ગુફા અને ખંડપ્રપાત ગુફા છે, તમિસ્રા ગુફા તેમના પાછલા ભાગમા છે તે ગુફાનો વિસ્તાર અને આયામ (લંબાઇ) ગિરિના જેવો છે. ૧૨ યોજનનો તેનો વિસ્તારછે અને તે આઠ યોજન ઊંચી છે. તે આયત-

'एत्थ' इति, अत्र-महापक्ष्मोपवर्ण्यमानयोः अश्वस्कन्धसदृशौ आदौ निम्नौ पर्यवसाने चोन्नतौ, तयोर्निषधसमीपे चतुःशत योजनोच्छ्रितत्वात्, मेरुसमीपे तु पञ्चशत योजनोच्छ्रितत्वादिति, अर्धचन्द्रसंस्थानसंस्थितौ अर्धचन्द्राकारौ अत्रा र्धशब्देन विभागमात्रं विवक्ष्यते, न तु समप्रविभागतेति आभ्यां सार्द्धचन्द्राकारा देवकुरव कृता। तौ द्वौ पूर्वोक्तविशेषणविशिष्टौ परस्परसमानरूपौ क्रमेण सौमनस-विद्युत्प्रभनामानौ वक्षस्कारपर्वतौ। तत्र-वक्षसि-मध्ये गोप्य क्षेत्र द्वौ समूह कुरुत इति वक्षस्कारौ, तौ च तौ पर्वतौ चेति तथा, 'जंबू' इत्यादि। एवमेवोत्तरकुरुष्वपि द्वौ गन्धमादन-माल्यवन्नामानौ वक्षस्कारपर्वतौ स्तः। नवरं यथासन्निन्यायमाश्रित्यापरपार्श्वे गन्धमादनः, पूर्वपार्श्वे माल्यवानिति। 'जम्बू'

विद्युत्प्रभ नामके दो वक्षस्कारपर्वत हैं ये वक्षस्कार आदिमें निम्न-नीचा हैं और अन्त में उन्नत-ऊँचा हैं अतः इनका आकार अश्वस्कंधके जैसा है निषध के पास ये चारसौ योजन ऊँचे हैं, और मेरु के पास पांचसौ योजन ऊँचे हैं अर्द्धचन्द्र के जैसे ये संस्थान वाले हैं यहां अर्ध शब्द से केवल विभागमात्र विवक्षित हुआ है समप्रविभागता नहीं इन्हीं दो वक्षस्कारपर्वतों ने देवकुरुओं को अर्द्धचन्द्र के आकार जैसा कर दिया है ये वक्षस्कार परस्पर में समानरूप वाले हैं वक्षस्कार ऐसा नाम इनके होने का यह कारण है कि ये दोनों अपने मध्यगत क्षेत्र को गोप्य कर रखते हैं इसी प्रकार उत्तरकुरुओं में भी दो वक्षस्कारपर्वत गन्धमादन और माल्यवान् नाम के हैं अपरपार्श्व में गन्धमादन और पूर्वपार्श्व में माल्यवान् वक्षस्कार पर्वत है। इसी तरह से जम्बूद्वीप में मन्दरपर्वत-

---

અને વિદ્યુત્પ્રભ નામના બે વક્ષસ્કાર પર્વતો છે તે વક્ષસ્કાર પર્વતો આદિમાં નીચા છે અને અન્ત ભાગમાં ઊંચા છે તેથી તેમનો આકાર અશ્વસ્કંધના જેવો લાગે છે નિષધની પાસે તેઓ ૪૦૦ યોજન ઊંચા છે અને મેરુની પાસે ૫૦૦ યોજન ઊંચા છે તેઓ અર્ધચન્દ્રના જેવાં સંસ્થાન (આકાર) વાળા છે અહીં અર્ધ શબ્દથી માત્ર વિભાગ જ દર્શાવવામાં આવ્યો છે-સમપ્ર વિભાગતા દર્શાવવામાં આવેલ નથી આ બન્ને વક્ષસ્કાર પર્વતોએ દેવકુરુઓને અર્ધચન્દ્રના આકાર જેવાં કરી દીધાં છે તેઓ એકસરખાં સ્વરૂપવાળા છે તેમને વક્ષસ્કાર કહેવાનુ કારણ એ છે કે તેઓ પોતાની વચ્ચે રહેલા ક્ષેત્રને ગોપ્ય (નજરે ન પડે એવું) કરી નાખે છે એજ પ્રમાણે ઉત્તર કુરુઓમાં પણ બે વક્ષસ્કાર પર્વત છે તેમનાં નામ ગંધમાદન અને માલ્યવાન્ છે પશ્ચિમ તરફ ગંધમાદન અને પૂર્વ તરફ માલ્યવાન્ વક્ષસ્કાર પર્વતો આવેલા છે એજ

उक्तञ्च—" कत्थइ देसग्गहणं, कत्थइ घेप्पंति निरवसेसाइं ।
उक्कमकमजुत्ताइं, कारणवसओ निउत्ताइं ॥१॥ " इति ।

छाया—कुत्रापि देशग्रहणं, कुत्रापि गृह्णन्ति निरवशेषाणि ।
उत्क्रमक्रमयुक्तानि, कारणवशतो नियुक्तानि ॥ १ ॥

'जंबू' इत्यादि, महाहिमवति वर्षधरपर्वते महाहिमवत्कूट', वैडूर्यकूटश्चेति द्वौ कूटौस्तः। अत्र सिद्धादि वैडूर्यपर्यन्तान्यष्टकूटानि सन्ति,, अत्र तेषु द्वितीयस्यान्त्यस्य च ग्रहणं द्विस्थानकानुरोधादिति। एवमग्रेऽपि सर्वत्र बोध्यम्। 'एवं' इत्यादि, एवं निषधपर्वते निषधकूटः, रुचकप्रभकूटश्चेति द्वौ कूटौ । 'जंबू' इत्यादि, जम्बूद्वीपस्थमन्दरस्योत्तरतो नीलवतिपर्वते नीलवत्कूटः । उपदर्शनकूटश्चेति द्वौ कूटौ । 'एवं' इत्यादि, एवं-पूर्वोक्तप्रकारेण रुक्मिपर्वते रुक्मिकूटः, मणिकाञ्चनकूटश्चेति द्वौ कूटौ । 'एव' इत्यादि, एवं शिखरिपर्वते शिखरिकूटः, तिगिछिकूटश्चेति द्वौ कूटौ स्तः इति ॥ सू० ३१ ॥

अतः यहां पर आदि और अन्त के ही दो कूटों का ग्रहण कर उनका कथन वक्ता ने किया है महाहिमवान् नामके वर्षधर पर्वत पर एक महाहिमवत्कूट और दूसरा वैडूर्यकूट ऐसे ये दो कूट हैं । यहां सिद्ध आदि कूटों से लेकर वैडूर्यकूट तक आठ कूट हैं परन्तु यहां द्विस्थानक के अनुरोध से सूत्रकार ने आदि और अन्त के दो कूटों का ही ग्रहण किया है इसी प्रकार का कथन आगे भी समझना चाहिये निषधपर्वत पर निषधकूट और रुचकप्रभकूट ये दो कूट हैं जम्बूद्वीप के मन्दर की उत्तरदिशा में नीलवान् पर्वत पर नीलवत्कूट और उपदर्शनकूट ऐसे ये दो कूट हैं रुक्मिपर्वतपर रुक्मिकूट और मणिकांचन दो कूट हैं शिखरिपर्वत पर शिखरिकूट और तिगिच्छकूट ये दो कूट हैं ॥ ३१ ॥

હોવાથી પહેલા અને છેલ્લા કૂટને જ ગ્રહણ કરવામાં આવેલ છે, કારણ કે જે વર્ણન થાય છે તે વક્તાની વિવક્ષાને આધીન હોય છે કહ્યુ પણ છે કે—

"कत्थइ देसग्गहण" ઇત્યાદિ તેથી જ વક્તાએ (સૂત્રકારે) આદિ અને અન્તના બે કૂટોને ગ્રહણ કરીને અહીં તેમનુ વર્ણન કર્યું છે મહાહિમવાન્ નામના વર્ષધર પર્વતપર મહાહિમવત્કૂટ અને વૈડૂર્યકૂટ નામના બે કૂટ છે અહીં સિદ્ધ આદિથી લઈને વૈડૂર્ય પર્યન્તના આઠ કૂટ છે, પરન્તુ દ્વિસ્થાનકનો અધિકાર ચાલતો હોવાથી અહીં પણ પ્રથમ અને છેલ્લા કૂટની જ વાત કરવામાં આવી છે આ પ્રકારનુ કથન આગળ પણ સમજી લેવુ નિષધ પર્વતપર નિષધકૂટ અને રુચકપ્રભકૂટ નામના બે કૂટ છે જમ્બૂદ્વીપના મન્દર પર્વતની ઉત્તર દિશામા નીલવાન્ પર્વતપર નીલવત્કૂટ અને ઉપદર્શનકૂટ નામના બે કૂટ છે રુકિમ પર્વતપર શિખરિકૂટ અને તિગિચ્છકૂટ નામના બે કૂટ છે સૂ. ૩૧

वज्रकपाटपिहिता मध्ये द्वियोजनान्तराभ्यां त्रियोजनविस्ताराभ्यामुन्मग्नजला निमग्नजलाभिधानाभ्यां नदीभ्यां युक्ताऽस्ति । तस्यैव पूर्वभागत एवमेव पूर्वोक्त विशेषणविशिष्टा खण्डप्रपातगुहा वर्तत इति । 'तत्थण' इत्यादि, तत्र-तयोर्गुहयो द्वौ देवौ परिवसत । तत्र तमिस्रगुहायां कृतमाल्यकः, खण्डप्रपातगुहायां च नृत्य माल्यक इति । 'एरावए' इत्यादि, ऐरवताख्ये दीर्घवैताढ्यपर्वतेऽप्येवमेव गुहावक्तव्यता देववक्तव्यता च वाच्येति । 'जंबू' इत्यादि, जम्बूद्वीपे मन्दरपर्व तस्य दक्षिणतः क्षुल्लहिमवतिपर्वते क्षुल्लहिमवत्कूट, वैश्रवणकूटश्चेति द्वौ कूटौस्तः । तत्र बहव कूटाः सन्ति, तेषां मध्ये आद्यन्तयोरेव ग्रहण द्विस्थानकानुरोधात्, वक्तुर्विवक्षाधीनत्वाच ।

इसका द्वार विजयद्वार के जितनाप्रमाण वाला है इसमें वज्र के कपाट लगे हुए हैं बीच में यह द्वियोजन के अन्तर से तीन योजन विस्तार वाली उन्मग्नजला और निमग्नजला नामकी दो नदियों से युक्त है। खण्डप्रपातगुफा उसके पूर्वभाग में है इसका खण्डप्रपातगुफा का वर्णन भी तमिस्रागुफा के जैसा ही है इन दोनों गुफाओं में दो देव रहते हैं तमिस्रागुफा में कृतमाल्यक और खण्डप्रपातगुफा में नृत्तमाल्यक देव रहता है ऐरवत नामके दीर्घ वैताढ्य पर्वत के संबन्धमें भी इसी प्रकार से गुहा की वक्तव्यता और देव की वक्तव्यता कहनी चाहिये इसी तरह जम्बूद्वीप में मन्दरपर्वत की दक्षिणदिशा क्षुल्लहिमवान् पर्वत पर क्षुल्लहिमवत्कूट और वैश्रवणकूट ये दो कूट हैं। यद्यपि वहां पर अनेक कूट हैं परन्तु यहां पर आदि और अन्त के कूटों का ही ग्रहण हुआ है क्यों कि यहां पर द्विस्थानकका प्रकरण चल रहा है। तथा वर्णन जो होता है वह वक्ता की विवक्षाके अधीन होता है कहा भी है—"कत्थइ देसग्गहणं" इत्यादि।

ચતુરસ્ર સંસ્થાનવાળી છે તેના દ્વારનું પ્રમાણ વિજયદ્વારના જેટલું જ છે તેને વજ્રના કમાડ લગાડેલાં છે તેની વચ્ચે બે યોજનથી ત્રણ યોજનના વિસ્તારવાળી ઉન્મગ્નજલા અને નિમગ્નજલા નામની નદીઓ વહે છે. તે દીર્ઘ વૈતાઢ્યના પૂર્વ ભાગમાં ખંડપ્રપાત નામની ગુફા છે, તે ગુફાનું વર્ણન તમિસ્રા ગુફાના વર્ણન પ્રમાણે સમજવું તે બન્ને ગુફામાં બે દેવ રહે છે, તમિસ્રા ગુફામાં કૃતમાલ્યક અને ખંડપ્રપાત ગુફામાં નૃત્યમાલ્યક નામના દેવો રહે છે ઐરવત નામના દીર્ઘ વૈતાઢ્ય પર્વતની ગુફાઓનું વર્ણન અને દેવોનું વર્ણન પણ ઉપરના વર્ણન પ્રમાણે જ સમજવું એજ પ્રમાણે જમ્બૂદ્વીપની મન્દર પર્વતની દક્ષિણ દિશામાં આવેલા ક્ષુદ્રહિમવાન્ પર્વત પર હિમવત્કૂટ અને વૈશ્રવણકૂટ નામના બે કૂટ છે. જો કે ત્યાં અનેક કૂટ છે છતાં પણ અહીં દ્વિસ્થાનકનું પ્રકરણ ચાલતું

उक्तञ्च—" कत्थइ देसग्गहणं, कत्थइ घेप्पंति निरवसेसाइं।
उक्कमकमजुत्ताइं, कारणवसओ निउत्ताइं ॥१॥" इति।

छाया—कुत्रापि देशग्रहणं, कुत्रापि गृह्णन्ति निरवशेषाणि।
उत्क्रमक्रमयुक्तानि, कारणवशतो नियुक्तानि ॥ १ ॥

'जंबू' इत्यादि, महाहिमवति वर्षधरपर्वते महाहिमवत्कूट', वैडूर्यकूटश्चेति द्वौ कूटौस्तः। अत्र सिद्धादि वैडूर्यपर्यन्तान्यष्टकूटानि सन्ति,, अत्र तेषु द्वितीयस्यान्त्यस्य च ग्रहणं द्विस्थानकानुरोधादिति। एवमग्रेऽपि सर्वत्र बोध्यम्। 'एवं' इत्यादि, एवं निपधपर्वते निपधकूटः, रुचकप्रभकूटश्चेति द्वौ कूटौ। 'जंबू' इत्यादि, जम्बूद्वीपस्थमन्दरस्योत्तरतो नीलवतिपर्वते नीलवत्कूटः। उपदर्शनकूटश्चेति द्वौ कूटौ। 'एवं' इत्यादि, एवं-पूर्वोक्तप्रकारेण रुक्मिपर्वते रुक्मिकूटः, मणिकाञ्चनकूटश्चेति द्वौ कूटौ। 'एव' इत्यादि, एवं शिखरिपर्वते शिखरिकूटः, तिगिछिकूटश्चेति द्वौ कूटौ स्तः इति ॥ सू० ३१ ॥

अतः यहां पर आदि और अन्त के ही दो कूटों का ग्रहण कर उनका कथन वक्ता ने किया है महाहिमवान् नामके वर्षधर पर्वत पर एक महाहिमवत्कूट और दूसरा वैडूर्यकूट ऐसे ये दो कूट हैं। यहां सिद्ध आदि कूटों से लेकर वैडूर्यकूट तक आठ कूट हैं परन्तु यहां द्विस्थानक के अनुरोध से सूत्रकार ने आदि और अन्त के दो कूटों का ही ग्रहण किया है इसी प्रकार का कथन आगे भी समझना चाहिये निषधपर्वत पर निषधकूट और रुचकप्रभकूट ये दो कूट हैं जम्बूद्वीप के मन्दर की उत्तरदिशा में नीलवान् पर्वत पर नीलवत्कूट और उपदर्शनकूट ऐसे ये दो कूट हैं रुक्मिपर्वतपर रुक्मिकूट और मणिकांचन दो कूट हैं शिखरिपर्वत पर शिखरिकूट और तिगिच्छकूट ये दो कूट हैं ॥ ३१ ॥

હોવાથી પહેલા અને છેલ્લા કૂટને જ ગ્રહણ કરવામાં આવેલ છે, કારણ કે જે વર્ણન થાય છે તે વક્તાની વિવક્ષાને આધીન હોય છે કહ્યું પણ છે કે—

" कत्थइ देसग्गहण " ઇત્યાદિ તેથી જ વક્તાએ (સૂત્રકારે) આદિ અને અન્તના બે કૂટોને ગ્રહણ કરીને અહીં તેમનુ વર્ણન કર્યું છે મહાહિમવાન્ નામના વર્ષધર પર્વતપર મહાહિમવત્કૂટ અને વૈડૂર્યકૂટ નામના બે કૂટ છે અહીં સિદ્ધ આદિથી લઇને વૈડૂર્ય પર્યન્તના આઠ કૂટ છે, પરન્તુ દ્વિસ્થાનકનો અધિકાર ચાલતો હોવાથી અહીં પણ પ્રથમ અને છેલ્લા કૂટની જ વાત કરવામાં આવી છે આ પ્રકારનુ કથન આગળ પણ સમજી લેવું નિષધ પર્વતપર નિષધકૂટ અને રુચકપ્રભકૂટ નામના બે કૂટ છે જંબૂદ્વીપના મન્દર પર્વતની ઉત્તર દિશામા નીલવાન્ પર્વતપર નીલવત્કૂટ અને ઉપદર્શનકૂટ નામના બે કૂટ છે. રુકિમ પર્વતપર શિખરિકૂટ અને તિગિચ્છકૂટ નામના બે કૂટ છે સૂ. ૩૧

मूलम्-जम्बूमंदरस्स पव्वयस्स उत्तरदाहिणेणं चुल्लहिमवत सिहरीसु वासहरपव्वएसु दो महद्दहा पण्णत्ता बहुसमतुल्ला अविसेसमणाणत्ता अण्णमण्णं णाइवट्टंति आयामविक्खंभोच्चत्तोव्वेहसंठाणपरिणाहेणं, तं जहा – पउमद्दहे चेव पुंडरीयद्दहे चेव । तत्थणं दो देवयाओ महिड्डियाओ जाव पलिओवमट्ठिइयाओ परिवसंति, तं जहा–सिरी चेव लच्छी चेव । एवं महा महाहिमवंतरुप्पीसु वासहरपव्वएसु दो महद्दहा पण्णत्ता, बहुसम० जाव तं जहा-महापउमद्दहे चेव महापोंडरीयद्दहे चेव । देवयाओ हिरी चेव बुद्धी चेव । एवं निसढनीलवंतेसु वासहर पव्वएसु तिगिंछिद्दहे चेव केसरिद्दहे चेव । देवयाओ धिई चेव कित्ती चेव । जंबूमंदरस्स पव्वयस्स दाहिणेणं महाहिमवंताओ वासहरपव्वयाओ महापउमद्दहाओ दो महाणईओ पवहंति, तं जहा–रोहिया चेव हरिकंता चेव । एवं निसढाओ वासहरपव्वयाओ तिगिंछिद्दहाओ दो महाणईओ पवहंति, तं जहा हरिच्चेव सीओआ चेव । जंबूमंदरस्स पव्वयस्स उत्तरेणं नीलवंताओ वासहरपव्वयाओ केसरीद्दहाओ दो महाणईओ पवहंति, तं जहा–सीया चेव नारिकंता चेव । एवं रुप्पीओ वासहरपव्वयाओ महापोंडरीयद्दहाओ दो महाणईओ पवहंति, तं जहा-णरकंता चेव रुप्पकूला चेव । जम्बूमंदरस्स पव्वयस्स दाहिणेणं भारहेवासे दो पवायद्दहा पण्णत्ता बहुसम० जाव तं जहा गंगप्पवायद्दहे चेव सिंधुप्पवायद्दहे चेव । एवं हेमवयवासे दो पवायद्दहा पण्णत्ता,

बहुसम० जाव तं जहा--रोहियप्पवायद्दहे चेव रोहियंसप्पवायद्दहे चेव। जंबूमंदरस्स पव्वयस्स दाहिणेणं हरिवासे वासे दो पवायद्दहा पण्णत्ता बहुसम० जाव तं जहा--हरिप्पवायद्दहे चेव हरिकंतप्पवायद्दहे चेव। जंबूमंदरस्स पव्वयस्स उत्तरदाहिणेणं महाविदेहवासे दो पवायद्दहा पण्णत्ता बहुसम० जाव तं जहा--सीयप्पवायद्दहे चेव सीतोदप्पवायद्दहे चेव। जंबू मंदरस्स पव्वयस्स उत्तरेणं रम्मए वासे दो पवायद्दहा पण्णत्ता बहुसम० जाव तं जहा --णरकंतप्पवायद्दहे चेव णारीकंतप्पवायद्दहे चेव। एवं हेरण्णवए वासे दो पवायद्दहा पण्णत्ता- बहुसम० जाव तं जहा--सुवन्नकूलप्पवायद्दहे चेव रुप्पकूलप्पवायद्दहे चेव। जंबू मंदरस्स पव्वयस्स उत्तरेणं एरवएवासे दो पवायद्दहा पण्णत्ता बहुसम० जाव तं जहा रत्तप्पवायद्दहे चेव रत्तवइप्पवायद्दहे चेव। जंबू मंदरस्स पव्वयस्स दाहिणेणं भारहेवासे दो महाणईओ पण्णत्ताओ बहुसम० जाव तं जहा—गंगा चेव सिंधू चेव। एवं जहा पवायद्दहा तहा णईओ भाणियव्वाओ जाव एरवए वासे दो महाणईओ पण्णत्ताओ बहुसमतुल्लाओ जाव तं जहा—रत्ता चेव रत्तवई चेव ॥सू०३२॥

छाया—जम्बू मन्दरस्य पर्वतस्य उत्तरदक्षिणेन चुल्ल (क्षुद्र) हिमवच्छिखरिणोर्वर्षधरपर्वतयो द्वौ महाह्रदौ प्रज्ञप्तौ बहुसमतुल्यौ अविशेषौ अनानात्वौ अन्योन्यं नातिवर्त्तेते, आयामविष्कम्भोच्चत्वोद्वेधसंस्थानपरिणाहेन, तद्यथा – पद्मह्रदश्चैव

'जंबू मंदरस्स पव्वयस्स' इत्यादि।

टीकार्थ—जम्बूद्वीपस्थ सुमेरुपर्वतकी उत्तरदिशामें और दक्षिण दिशामें क्षुद्रहिमवान् पर्वत एवं शिखरी पर्वतके ऊपर दो महाह्रद द्रह कहे गये हैं

" जंबूमंदरस्स पव्वयस्स " ઈત્યાદિ—

ટીકાર્થ—જંબૂદ્વીપમા આવેલા સુમેરુ પર્વતની ઉત્તર દિશામાં અને દક્ષિણ દિશામાં આવેલા ક્ષુદ્રહિમવાન્ અને શિખરી પર્વતપર બે મહા હ્રદ (સરોવર)

पौण्डरीकहृदश्चैव । तत्र खलु द्वे देवते महर्द्धिके यावत् पल्योपमस्थितिके परिवसतः, तद्यथा–श्रीश्चैव लक्ष्मीश्चैव । एवं महाहिमवद्रुक्मिणोर्वर्षधरपर्वतयो र्द्वौ महाहृदौ प्रज्ञप्तौ, बहुसम० यावत्–तद्यथा–महापद्महृदश्चैव महापौण्डरीकहृदश्चैव। देवते–ह्रीश्चैव बुद्धिश्चैव । एवं निषधनीलवतोर्वर्षधरपर्वतयोस्तिगिच्छिहृदश्चैव केसरिहृदश्चैव । देवते–धृतिश्चैव कीर्तिश्चैव । जम्बूमन्दरस्य पर्वतस्य दक्षिणेन महाहिमवतो वर्षधरपर्वतात् महापद्महृदात् द्वे महानद्यौ प्रवहतः, तद्यथा–रोहिता

ये दोनों महाहृद परस्परमें पहिलेके कथनके अनुसार–बहुसमतुल्य आदि विशेषणोंवाले हैं आयाम, विष्कम्भ, उच्चता, उद्वेध, (गहराई) संस्थान और परिणाह विशालताकी अपेक्षा ये दोनों बराबर हैं। इन दो महाहृदोंके नाम हैं पद्महृद और पौण्डरीहृद, इनमें महाऋद्धि आदि विशेषणोंसे सपन्न दो देवियां निवास करती हैं इनकी स्थिति एक पल्योपम की है ये देवियां श्री और लक्ष्मी इस नामवाली हैं। इसी तरह महाहिमवान् पर्वत और रुक्मी पर्वत इन दो पर्वतों पर दो महाहृद हैं ये भी परस्पर में बहुसम आदि पूर्वोक्त विशेषणों वाले हैं इन दो महाहृदों के नाम हैं महापद्म और महापुण्डरीक इनमे दो देवियां रहती हैं इनके नाम हैं ह्री देवी और बुद्धिदेवी इसी तरह से निषधपर्वत और नीलपर्वत इन दो पर्वतों पर भी तिगिच्छहृद और केशरिहृद ये दो हृद हैं इनमे भी दो देवियां रहती हैं इनके नाम है धृतिदेवी और कीर्ति देवी।

जंबूद्वीपस्थ सुमेरुपर्वत की दक्षिण दिशा तरफ महाहिमवान् वर्षधरपर्वत पर जो महापद्महृद है उससे दो महानदियां निकली हैं इनके

છે તે બન્ને હદ બહુ સમતુલ્ય આદિ પૂર્વોક્ત વિશેષણોવાળાં છે–લંબાઈ, પહોળાઈ ઉંચાઈ, ઉદ્વેધ સંસ્થાન અને પરિધિની અપેક્ષાએ તેઓ સમાન છે તેમનાં નામ નીચે પ્રમાણે છે–(૧) પદ્મ હદ અને (૨) પુંડરીક હદ તેમાં શ્રી અને લક્ષ્મી નામની બે દેવીઓ નિવાસ કરે છે તે બન્ને દેવીઓ મહર્દ્ધિક આદિ વિશેષણોથી યુક્ત છે અને તેમની સ્થિતિ એક પલ્યોપમની છે એજ પ્રમાણે મહાહિમવાન્ અને રુકિમ પર્વતોપર બે મહાહદ છે તેમનાં નામ મહા પદ્મ અને મહા પુંડરીક છે તે બન્ને હદો પણ બહુસમ આદિ વિશેષણોથી યુક્ત હોવાથી એકસરખાં લાગે છે તેમાં અનુક્રમે હ્રી અને બુદ્ધિ નામની બે દેવીઓ નિવાસ કરે છે એજ પ્રમાણે નિષધ પર્વત અને નીલ પર્વતપર તિગિચ્છહદ અને કેશરીહદ નામના બે હદ છે તેમાં ધૃતિદેવી અને કીર્તિદેવી નામની બે દેવીઓ નિવાસ કરે છે

જંબૂદ્વીપમાં આવેલા સુમેરુ પર્વતની દક્ષિણ દિશા તરફ આવેલા મહા

चैव हरिकान्ता चैव। एवं निषधात् वर्षधरपर्वतात् तिगिंछिहृदात् द्वे महानद्यौ प्रवहतः, तद्यथा–हरित् चैव सीतोदा चैव। जम्बू मन्दरस्य पर्वतस्य उत्तरेण नीलवतो वर्षधरपर्वतात् केशरिहृदात् द्वे महानद्यौ प्रवहतः, तद्यथा–सीता चैव नारीकान्ता चैव। एवं रुक्मितो वर्षधरपर्वतात् महापुण्डरीकहृदात् द्वे महानद्यौ प्रवहतः, तद्यथा–नरकान्ता चैव रूप्यकूला चैव। जम्बू मन्दरस्य पर्वतस्य दक्षिणेन भारते वर्षे द्वौ प्रपातहृदौ प्रज्ञप्तौ, बहुसम० यावत् तद्यथा–गङ्गाप्रपातहृदश्चैव, सिन्धुप्रपातहृदश्चैव। एवं हैमवते वर्षे द्वौ प्रपातहृदौ प्रज्ञप्तौ, बहुसम० यावत् तद्यथा–रोहितप्रपातहृदश्चैव रोहितांशप्रपातहृदश्चैव। जम्बूमन्दरस्य पर्वतस्य दक्षिणेन हरिवर्षे द्वौ प्रपातहृदौ प्रज्ञप्तौ बहुसम० यावत् तद्यथा–हरितप्रपातहृदश्चैव हरित्का-

---

नाम हैं रोहिता और हरिकान्ता इसी प्रकार निषध वर्षधर पर्वत पर जो तिगिच्छहृद है उससे दो महानदियां निकली हैं इनके नाम हैं हरित् और सीतोदा, इसी तरह जम्बूद्वीपस्थ मंदरपर्वत की उत्तर की ओर जो नीलवन्त वर्षधर पर्वत है और उस पर जो केशरीद्रह है उससे दो महानदियां निकली हैं इनके नाम हैं सीता और नारीकान्ता इसी तरह रुक्मी वर्षधर पर्वत पर महापुण्डरीक जो हृद है उससे नरकान्ता और रूप्यकूला ये दो महानदियां निकली हैं। इसी तरह जंबूद्वीपस्थ मन्दर पर्वत की दाहिनी ओर जो भरतवर्ष है उसमें दो प्रपात हृद कहे गये हैं ये प्रपातहृद बहुसम आदि विशेषणोंवाले हैं इनके नाम गंगाप्रपातहृद-द्रह और सिन्धुप्रपातहृद हैं। इसी तरहसे हैमवत क्षेत्रमें दो प्रपातहृद हैं ये दोनों प्रपातहृद भी बहुसम आदि पूर्वोक्त विशेषणों वाले हैं। इनके

હિમવાન્ વર્ષધર પર્વતપર જે મહાપદ્મ હ્રદ દ્રહ–(સરોવર) છે, તેમાથી બે મહા નદીઓ નીકળે છે, તેમનાં નામ રોહિતા અને હરિકાન્તા છે એજ પ્રમાણે નિષધ વર્ષધર પર્વતપર જે તિગિચ્છહ્રદ છે તેમાથી હરિત્ અને સીતોદા નામની બે મહાનદીઓ નીકળે છે. એજ પ્રમાણે જમ્બૂદ્વીપના સુમેરુ પર્વતની ઉત્તર દિશામાં આવેલા નીલવન્ત વર્ષધર પર્વતપર આવેલા કેશરી નામના હ્રદમાંથી સીતા અને નારીકાન્તા નામની બે મહાનદીઓ નીકળે છે એજ પ્રમાણે રુક્મિ નામના વર્ષધર પર્વતપર આવેલા મહાપુંડરીક હ્રદમાંથી નરકાન્તા અને રુપ્યકૂલા નામની બે નદીઓ નીકળે છે. એજ પ્રમાણે જંબૂદ્વીપના મન્દર પર્વતની જમણી બાજુએ જે ભરતવર્ષ છે તેમાં બે પ્રપાતહ્રદ આવેલાં છે, તે બન્ને પ્રપાતહ્રદ બહુસમ આદિ વિશેષણોવાળા છે, તેમના નામ ગંગાપ્રપાતહ્રદ અને સિંધુપ્રપાતહ્રત છે એજ પ્રમાણે હૈમવત ક્ષેત્રમાં પણ બે પ્રપાતહ્રદ છે, તેઓ પણ બહુસમ આદિ પૂર્વોક્ત વિશેષણોથી યુક્ત છે. તેમનાં નામ આ પ્રમાણે

न्तप्रपातह्रदश्चैव । जम्बू मन्दरस्य पर्वतस्य उत्तरदक्षिणेन महाविदेहवर्षे द्वौ प्रपातह्रदौ महान्तौ, बहुसम० यावत् तद्यथा–सीताप्रपातह्रदश्चैव सीतोदाप्रपातह्रदश्चैव । जम्बूमन्दरस्य पर्वतस्य उत्तरेण रम्यके वर्षे द्वौ प्रपातह्रदौ महान्तौ, बहुसम० यावत् तद्यथा–नरकान्तप्रपातह्रदश्चैव, नारीकान्तप्रपातह्रदश्चैव । एवं हैरण्यवते वर्षे द्वौ प्रपातह्रदौ महान्तौ बहुसम० यावत् तद्यथा–सुवर्णकूलप्रपातह्रदश्चैव रूप्यकूलप्रपातह्रदश्चैव । जम्बूमन्दरस्य पर्वतस्य उत्तरेण ऐरवते वर्षे द्वौ प्रपातह्रदौ महान्तौ बहुसम० यावत् तद्यथा–रक्तप्रपातह्रदश्चैव रक्तवतीप्रपातह्रदश्चैव । जम्बू मन्दरस्य पर्वतस्य दक्षिणेन भारते वर्षे द्वे महानद्यौ महत्यौ, बहुसम० यावत् तद्यथा–गङ्गा

नाम ये हैं हरित्प्रपातह्रद और हरिकान्तप्रपातह्रद जम्बूद्वीपस्थ जो मन्दर पर्वत है उसकी उत्तरदक्षिण तरफ जो महाविदेहक्षेत्र है उसमें दो प्रपातह्रद हैं ये दोनों प्रपातह्रद पूर्वोक्त बहुसम आदि विशेषणों वाले हैं इनके नाम हैं सीताप्रपातह्रद और सीतोदप्रपात ह्रद जम्बूमन्दरपर्वत की उत्तर दिशा तरफ रम्यकवर्ष क्षेत्र मे दो प्रपातह्रद हैं ये दोनों ह्रद पूर्वोक्त बहुसम आदि विशेषणों वाले हैं इनके नाम हैं नरकान्तप्रपातह्रद और नारीकान्तप्रपातह्रद इसी तरह हैरण्यवतवर्ष मे दो प्रपातह्रद हैं ये भी पूर्वोक्त बहुसम आदि विशेषणों वाले हैं इनके नाम हैं–सुवर्णकूलप्रपातह्रद और रूप्यकूलप्रपात ह्रद इसी प्रकार जम्बूद्वीपस्थ मन्दर पर्वत की उत्तरदिशा तरफ जो ऐरवत क्षेत्र है उसमे भी दो प्रपातह्रद हैं ये दोनों ह्रद भी परस्पर मे बहुसम आदि पूर्वोक्त विशेषणों वाले हैं इनके नाम हैं–रक्तप्रपातह्रद और रक्तवतप्रपात ह्रद इसी प्रकार जम्बू मन्दरपर्वत की

છે–(૧) હરિત્પ્રપાતહ્રદ અને (૨) હરિકાન્તપ્રપાતહ્રદ જમ્બૂદ્વીપમાં આવેલા મન્દર (સુમેરુ) પર્વતની ઉત્તર-દક્ષિણ દિશામાં જે મહાવિદેહ ક્ષેત્ર છે તેમાં બે પ્રપાતહ્રદ છે તેઓ પણ બહુસમ આદિ પૂર્વોક્ત વિશેષણોથી યુક્ત છે. તેમનાં નામ સીતાપ્રપાતહ્રદ અને સીતોદપ્રપાતહ્રદ છે જમ્બૂદ્વીપસ્થ મન્દર પર્વતની ઉત્તર દિશા તરફ રમ્યકવર્ષ ક્ષેત્રમાં પણ પૂર્વોક્ત બહુસમ આદિ વિશેષણોવાળાં બે પ્રપાતહ્રદ છે તેમનાં નામ નરકાન્તપ્રપાતહ્રદ અને નારીકાન્તપ્રપાતહ્રદ છે એજ પ્રમાણે હૈરણ્યવત વર્ષમાં પણ પૂર્વોક્ત બહુસમ આદિ વિશેષણોવાળાં બે હ્રદ છે તેમનાં નામ સુવર્ણકૂલપ્રપાતહ્રદ અને રૂપ્યકૂલપ્રપાત છે એજ પ્રમાણે જમ્બૂદ્વીપના સુમેરુ પર્વતની ઉત્તર દિશા તરફ જે ઐરવતક્ષેત્ર છે તેમાં પણ પૂર્વોક્ત બહુસમ આદિ વિશેષણોવાળા બે પ્રપાતહ્રદ છે તેમનાં નામ રક્તપ્રપાતહ્રદ અને રક્તવતપ્રપાતહ્રદ છે એજ પ્રમાણે જમ્બૂદ્વીપના મન્દર

चैव सिन्धु श्चैव । एवं यथा प्रपातह्रदास्तथा नद्यो भणितव्याः यावत् ऐरवते वर्षे द्वे महानद्यौ प्रज्ञप्ते बहुसमतुल्ये यावत् तद्यथा-रक्ता चैव रक्तवतीचैव ॥सू० ३२॥

'जंबू मंदरस्स' इत्यादि

टीका-व्याख्या सुगमा। नवरम्-जम्बू। मन्दरस्य पर्वतस्य उत्तरदिशि हिमवति वर्षधरपर्वते पद्महृदः, दक्षिणदिशि पौण्डरीकह्रदः। तत्र पद्महृदे श्रीदेवी, पौण्डरीकह्रदे च लक्ष्मीदेवी ते पल्योपमस्थितिके परिवसति। एते द्वे देव्यौ भवनपतिनिकायाभ्यन्तरभूते, पल्योपमस्थितिकत्वात्तेपाम् । इदमुक्तं भवति-व्यन्तरदेवीनामुत्कर्पतोऽप्यर्ध-

दक्षिणदिशा तरफ जो भरतक्षेत्र है उसमें दो महानदियां कही गई हैं इन दोनों महानदियों का विस्तार आदि सब एकसा कहा गया है इन दोनों नदियों के नाम है-गंगा और सिन्धु इसी तरह से आगे के क्षेत्रों में भी प्रपातहृद और नदियों का कथन करना चाहिये-यावत् ऐरवत क्षेत्र में दो महानदियां कही गई हैं ये दोनों महानदियां भी पूर्वोक्त बहुसम आदि विशेषणों वाली हैं इनके नाम हैं-रक्ता और रक्तवती।

इस सूत्र की व्याख्या सुगम है जम्बूमन्दर पर्वत की उत्तर दिशा में स्थित हिमवान् वर्षधर पर्वत पर पद्महृद है दक्षिण दिशा में पौण्डरीक हृद है पद्महृद में श्री देवी निवास करती है पौण्डरीक हृद में लक्ष्मीदेवी निवास करती है। इन देवियों की स्थिति एक पल्योपम की है ये दोनों देवियां भवनपति निकाय के भीतर की हैं। क्यों कि इन की भी स्थिति एक पल्योपम की होती है। तात्पर्य इस कथन का ऐसा है कि व्यन्तर

પર્વતની દક્ષિણ દિશા તરફ જે ભરતક્ષેત્ર છે, તેમાં મહાનદીઓ આવેલી છે, તે બન્ને મહાનદીઓનો વિસ્તાર વગેરે એકસરખાં છે, તેમનાં નામ ગંગા અને સિંધુ છે. એજ પ્રમાણે પછીનાં ક્ષેત્રોમાં પણ પ્રપાતહ્રદ અને નદીઓનું કથન કરવું જોઇએ. " ઐરવત ક્ષેત્રમાં પણ રકતા અને રકત.વતી નામની બે મહાનદીઓ છે, તેઓ પણ વિસ્તાર આદિની અપેક્ષાએ એકસરખી છે, " આ કથન પર્યન્તનું સમસ્ત કથન અહીં ગ્રહણ કરવું જોઇએ

આ સૂત્રની વ્યાખ્યા સરળ છે, જંબૂદ્રીપના મન્દર પર્વતની ઉત્તર દિશામાં આવેલા હિમવાન્ વર્ષધર પર્વતપર ઉત્તરે પદ્મહ્રદ છે અને દક્ષિણમાં પુંડરીકહ્રદ છે પદ્મહ્રદમાં શ્રીદેવી નિવાસ કરે છે અને પુંડરીકહ્રદમાં લક્ષ્મીદેવી નિવાસ કરે છે તે દેવીઓની સ્થિતિ એક પલ્યોપમની કહી છે. તે બન્ને ભવનપતિ નિકાયની દેવીઓ છે, કારણ કે તે દેવોની સ્થિતિ એક પલ્યોપમની હોય છે. આ કથનનું તાત્પર્ય નીચે પ્રમાણે છે—

पल्योपमपरिमितमेवायुर्भवति । भवनपतिदेवीनां तूत्कर्षतः सार्धचतुष्पल्योप मान्यायुरिति। एवमग्रे सर्वत्र व्याख्येयम् । एवं यथा–यन्नामानः प्रपातह्रदास्तया –तन्नामान्यो नद्यो विज्ञेयाः । यावत् ऐरवते वर्षे रक्ता रक्तवती चेति द्वे नद्यौ॥

देवियों की उत्कृष्टस्थिति आधे पल्योपम की ही होती है और भवनप तिदेवियों की उत्कर्ष से स्थिति साढे चार पल्योपम की होती है इसी प्रकार से आगे सर्वत्र व्याख्या करना चाहिये जिसनामवाले प्रपात ह्रद हैं उसी नामवाली नदियां हैं। यावत् ऐरवत क्षेत्र में रक्ता और रक्तवती ये दो नदियां हैं। इसे संक्षेपतः इस प्रकार से समझना चाहिये–

जम्बूद्वीप में भरत, हैमवत, हरि, विदेह, रम्यक, हैरण्यवत और ऐरवत ये ७ क्षेत्र हैं। इन का विभाग करने वाले पूर्व से पश्चिमतक लम्बे चौड़े हिमवन्, महाहिमवन्, निषध, नील, रुक्मी और शिखरी ये ६ वर्षधर पर्वत हैं। इन ६ वर्षधर पर्वतों के ऊपर प्रत्येक में क्रमशः पद्म, महापद्म, तिगिच्छ, केशरी, पुण्डरीक और महापुण्डरीक नाम के ६ महाह्रद हैं इनमें प्रत्येक में श्री, ह्री, धृति, कीर्ति, बुद्धि और लक्ष्मी ये देवियां क्रमशः निवास करती हैं। इन सब की स्थिति एक पल्योपम की है। इन महाह्रदों से गंगा, १ सिन्धु २, रोहित ३, रोहितांसा ४, हरित् ५ हरिकान्ता ६, सीता ७, सीतोदा ८, नारी ९ नरकान्ता १०,

વ્યન્તર દેવીઓની ઉત્કૃષ્ટ સ્થિતિ અર્ધા પલ્યોપમની કહી છે, પરન્તુ ભવનપતિ દેવીઓની ઉત્કૃષ્ટ સ્થિતિ સાડા ચાર પલ્યોપમની કહી છે તેથી આ બન્ને દેવીઓને ભવનપતિ નિકાયની દેવીઓ કહેવામાં આવેલ છે આ પ્રમાણે જ આગળ સર્વત્ર વ્યાખ્યા કરવી જોઇએ. પ્રપાતહ્રદમાં જેજે પ્રપાતહ્રદના નામવાળી જ નદીઓ છે " ઐરવત ક્ષેત્રમાં રક્તા અને રક્તવતી નામની બે મહાનદીઓ છે આ કથન પર્યન્તનું સમસ્ત કથન અહીં ગ્રહણ કરવું જોઇએ આ કથનનો સંક્ષિપ્ત સારાંશ નીચે પ્રમાણે સમજવો—

જમ્બૂદ્વીપમાં ભરત હૈમવત હરિ વિદેહ, રમ્યક હૈરણ્યવત અને ઐરવત નામનાં ૭ ક્ષેત્રો છે તેમને જુદા પાડનારા પૂર્વથી પશ્ચિમ તરફ ફેલાયેલા ક્ષુદ્રહિમવાન્ મહાહિમવાન્ નિષધ નીલ રુક્મિ અને શિખરી નામના ૬ વર્ષધર પર્વતો છે તે ૭ વર્ષધર પર્વતોપર અનુક્રમે પદ્મ, મહાપદ્મ, તિગિચ્છ કેશરી પુંડરીક અને મહાપુંડરીક નામના ૬ મહાદ્રહ આવેલાં છે તેમાં અનુક્રમે શ્રી હ્રી, ધૃતિ, કીર્તિ બુદ્ધિ અને લક્ષ્મી નામની ૬ દેવીઓ નિવાસ કરે છે તેમની એક પલ્યોપમની સ્થિતિ છે આ મહાહ્રદોમાંથી (૧) ગંગા (૨) સિંધુ (૩) રોહિત, (૪) રોહિતાંશા (૫) હરિત્, (૬) હરિકાન્તા, (૭)

जम्बूद्वीपाधिकारात् क्षेत्रव्यपदेश्यपुद्गलधर्माधिकाराच्च जम्बूद्वीपसम्बन्धि भरतादि सम्बन्धिकाललक्षणपर्यायधर्माननेकान् प्ररूपयन्नाह—

मूलम्—जंबुद्दीवे दीवे भरहेरवएसु वासेसु तीयाए उस्सप्पिणीए सुसमदूसमाए समाए दो सागरोवमकोडाकोडीओ काले होत्था१।

सुवर्णकूला ११, रूप्यकूला १२, और रक्ता १३, रक्तोदा १४, नामकी ये १४ महानदियां निकली हैं, जो इन सात क्षेत्रोंमें बहती है भरतक्षेत्र में गंगा सिन्धु, हैमवतक्षेत्र से रोहित और रोहितांसा, हरि वर्ष में हरित् हरिकान्ता, विदेहक्षेत्र मे सीता और सीतोदा, रम्यकवर्षमे नारी और नरकान्ता, हैरण्यवत् वर्ष मे सुवर्णकूला और रूप्यकूला, तथा ऐरवत क्षेत्रमे रक्ता और रक्तवती–रक्तोदा ये २ दो नदियां बहती हैं। इनमें प्रथम नदी, द्वितीय नदी और चौथी नदी ये तीन नदियां पद्महद से निकली हैं। तीसरी और छठी नदी रोहित हरिकान्ता–महापद्महद से निकली हैं। पांचवी और आठवीं महानदियां हरित् सीतोदा–तिगिच्छ हद से निकली हैं–सातवीं और दशवीं महानदिया सीता नरकान्ता–केशरी हृद से निकली हैं। ९ वीं और १२ वीं महानदियां–नारी और रूप्यकूला–माहपुण्डरीकहृद से निकली हैं–तथा ग्यारहवीं और चौदहवीं ये ३ महानदियां–सुवर्णकूला, रक्ता और रक्तोदा–पुण्डरीकहृद से निकली हैं ॥ सू० ३२ ॥

સીતા, (૮) સીતોદા, (૯, નારી, (૧૦) નરકાન્તા, (૧૧) સુવર્ણકૂલા, (૧૨) રુપ્યકલા, (૧૩) રકતા, અને (૧૪) રકતોદા નામની ૧૪ મહાનદીઓ નીકળે છે, જે નદીઓ તે સાત ક્ષેત્રોમાં વહે છે. ભરત ક્ષેત્રમાં ગંગા અને સિંધુ હૈમવત ક્ષેત્રમાં રોહિત અને રોહિતાંસા, હરિવર્ષમાં હરિત્ અને હરિકાન્તા, વિદેહ ક્ષેત્રમા સીતા અને સીતોદા, રમ્યક વર્ષમા નારી અને નરકાન્તા, હૈરણ્યવત વર્ષમાં સુવર્ણકૂલા અને રુપ્યકૂલા, તથા ઐરવત ક્ષેત્રમા રકતા અને રકતવતી (રકતોદા), આ બબ્બે મહાનદીઓ વહે છે તેમાથી પહેલી, બીજી અને ચોથી નદી પદ્મહ્રદમાંથી નીકળે છે, ત્રીજી અને છઠ્ઠી નદી (રોહિત અને હરિકાન્તા) મહાપદ્મહ્રદમાથી નીકળે છે, પાચમી અને આઠમી (હરિત્ અને સીતોદા) મહાનદીઓ તિગિચ્છહ્રદમાથી નીકળે છે, સાતમી અને દશમી (નારી અને રુપ્યકૂલા) મહાપુંડરીક હ્રદમાથી નીકળે છે, તથા અગિયારમી, તેરમી અને ચૌદમી (સુવર્ણકૂલા, રકતા, રકતોદા) મહાનદીઓ પુંડરીક હ્રદમાથી નીકળે છે ॥ ૨ ॥

एव इमीसे ओसप्पिणीए जाव हव्वइ २। एव आगमिस्सीए उस्सप्पिणोए जाव भविस्सइ ३। जबुद्दीवे दीवे भरहेरवएसु वासेसु तीताए उस्सप्पिणीए सुसमाए समाए मणुया दो गाउयाइ उड्ढ उच्चत्तेण होत्था ४। दोन्नि य पलिओवमाइ पर माउ पालइत्था५। एव इमीसे ओसप्पिणीए जाव पालइत्था६। एव आगमेस्साए उस्सप्पिणीए जाव पालिस्सति ७। जबुद्दीवे दीवे भरहेरवएसु वासेसु एगजुगे एगसमए दो अरिहतवसा उप ज्जिसु वा उपज्जति वा, उप्पज्जिस्सति वा ८। एव चक्कवट्टिवंसा ९, दसारवसा १०। जबुद्दीवे दीवे भरहेरवएसु वासेसु एगजुगे एगसमए दो अरिहता उप्पज्जिंसु वा, उप्पज्जति वा, उप्पज्जि स्सति वा ११। एव चक्कवट्टिणो १२। एव बलदेवा (दसारवसा) जाव उप्पज्जिंसु वा उप्पज्जति वा उप्पज्जिस्सति वा १३। जबु द्दीवे दीवे दोसु कुरासु मणुया सया सुसमसुसम उत्तमामिड्ढिं पत्तणुब्भवमाणा विहरति, त जहा—देवकुराए चेव उत्तरकुराए चेव १४। जबुद्दीवे दीवे दोसु वासेसु मणुया सया सुसमसुत्तम इड्ढिं पत्तणुब्भवमाणा विहरति, त जहा—हरिवासे चेव रम्म गवासे चेव १५। जबुद्दीवे दीवे दोसु वासेसु मणुया सया सुसमदूसम उत्तमामिड्ढिं पत्तणुब्भवमाणा विहरति, त जहा— हेमवए चेव एरण्णवए चेव १६। जबुद्दीवे दीवे दोसु खित्तेसु मणुया सया दूसमसुसम उत्तमामिड्ढिं पत्तणुब्भवमाणा विहरति, त जहा -पुव्वविदेहे चेव अवरविदेहे चेव १७। जबुद्दीवे दीवे

'दोसु वासेसु मणुया छव्विहंपि कालं पच्चणुब्भवमाणा विहरंति, तं जहा--भरहे चेव एरवए चेव १८ ॥ सू० ३३ ॥

छाया—जम्बूद्वीपे द्वीपे भरतैरवतयोर्वर्षयोरतीतायामुत्सर्पिण्यां सुषमदुष्षमायाः समाया द्वे सागरोपमकोटिकोटयौ कालोऽभवत् १ । एवमस्यामवसर्पिण्यां यावत् भवति २ । एवम् आगमिष्यन्त्यामुत्सर्पिण्यां यावत् भविष्यति ३ । जम्बूद्वीपे द्वीपे भरतैरवतयोर्वर्षयोरतीतायामुत्सर्पिण्यां सुषमाया समाया मनुजा द्वे गव्यूती ऊर्ध्व-

जम्बूद्वीप के अधिकार को लेकर एवं क्षेत्रव्यपदेश्यपुद्गलधर्म के अधिकार को लेकर अब सूत्रकार जम्बूद्वीपसंबंधी भरतादिक्षेत्र के अनेक कालरूप पर्यायधर्मों की प्ररूपणा करते हैं–' जबूदीवे दीवे ' इत्यादि।

जंबूद्वीप नामके द्वीप में स्थित जो भरतक्षेत्र और ऐरवतक्षेत्र हैं इनमें उत्सर्पिणीकाल और अवसर्पिणीकाल ये दो काल होते हैं। जिसमें जीवोंके उपभोग आयु और शरीर आदि उत्तरोत्तर उत्सर्पण शील (वर्णादि वर्धनशील) होतेहैं वह उत्सर्पिणीकालहै और जिसमें ये सब अवसर्पणशील होते हैं वह अवसर्पिणीकाल है-इनमेंसे प्रत्येक कालके ६ ६ भेद हैं–जो पीछे कहे जा चुके है। अतीत उत्सर्पिणी काल में सुषमदुष्षमा नाम का जो तीसराकाल है वह दो कोडाकोडी सागरोपम का था इसी तरह इस वर्तमान अवसर्पिणी मे भी वह दो कोडाकोडी सागरोपम का है तथा आगामी काल में जो उत्सर्पिणी आवेगी उसमें भी वह इतने ही

જંબૂદ્વીપનો અધિકાર ચાલી રહ્યો છે અને ક્ષેત્રવ્યપદેશ્ય પુદ્ગલ ધર્મનો અધિકાર ચાલુ છે તે સંબંધને અનુલક્ષીને હવે સૂત્રકાર જંબૂદ્વીપમા આવેલાં ભરતાદિ ક્ષેત્રના અનેક કાળરૂપ પર્યાયધર્મોની પ્રરૂપણા કરે છે—

" જંબુદીવે દીવે " ઇત્યાદિ—

જંબૂદ્વીપ નામના દ્વીપના ભરતક્ષેત્ર અને ઐરવત ક્ષેત્રમાં ઉત્સર્પિણીકાળ અને અવસર્પિણીકાળ, આ બે કાળ હોય છે જે કાળમાં જીવોનો ઉપભોગ, આયુ અને શરીર આદિ ઉત્તરોત્તર ઉત્સર્પણશીલ (વૃદ્ધિ પામતાં) હોય છે તે કાળને ઉત્સર્પિણીકાળ કહે છે, જેમાં તે બધાં અવસર્પણશીલ હોય છે તે કાળને અવસર્પિણીકાળ કહે છે. તે પ્રત્યેક કાળના ૬–૬ ભેદ છે, તે પ્રત્યેક ભેદનું વર્ણન આગળ કરવામાં આવ્યુ છે અતીત ઉત્સર્પિણીકાળનો જે સુષમ દુષ્ષમા નામનો ત્રીજો ભેદ છે તે બે કોડાકોડી–સાગરોપમ કાળપ્રમાણનો હતો. એજ પ્રમાણે આ વર્તમાન અવસર્પિણીમા પણ બે કોડાકોડી–સાગરોપમનો જ છે. તથા ભવિષ્યમાં જે ઉત્સર્પિણી આવશે તેમાં પણ તે એટલા જ પ્રમાણનો

सुषमत्वेन अभवन् ४। द्वे च पल्योपमे परमायुरपालयन् ५, एवमस्यामुत्सर्पिण्यां यावत् पालयन्ति ६, एवमागमिष्यन्त्यामुत्सर्पिण्यां यावत् पालयिष्यन्ति ७। जम्बूद्वीपे द्वीपे भरतैरवतयोर्वर्षयोरेकसमये एकयुगे द्वौ अर्हन्तौ उदपद्येतां वा उत्पद्येते वा उत्पत्स्येते वा ८, एवं चक्रवर्तिवंशौ ९, दशारवंशौ १०। जम्बूद्वीपे द्वीपे भरतैरवतयोरेकसमये एकयुगे द्वौ अर्हन्तौ उदपद्येतां वा उत्पद्येते वा उत्प

प्रमाण का होगा जम्बूद्वीप नामके इस द्वीप में भरतक्षेत्र और ऐरवत क्षेत्र में अतीत उत्सर्पिणी के द्वितीय सुषमाकाल में उत्पन्न हुए मनुष्य के शरीर की ऊँचाई दो गव्यूति की अर्थात् दो कोष की थी उनकी उत्कृष्ट आयु दो पल्योपम की थी-इसी तरहसे इस अवसर्पिणी के भी सुषमाकाल में ऐसा ही होता है-इसी तरह से आगामी कालमें जो उत्सर्पिणी आवेगी उसमें भी सुषमाकाल में ऐसा ही होगा-अर्थात् दो पल्य की आयु होगी, दो कोश का शरीर होगा-जम्बूद्वीप नामके द्वीप में भरत और ऐरवत क्षेत्र में एक समय में एक युग में दो अर्हन्त उत्पन्न हुए उत्पन्न होते हैं और उत्पन्न होंगे ८, इसी प्रकार से चक्रवर्ती वंश और दो दशारवंशों के संबंध में भी जानना चाहिये।

इसी तरह से इस जम्बूद्वीप नामके द्वीपमें भरत और ऐरवत क्षेत्र में एक युग में एक समयमें दो अर्हन्त उत्पन्न हुए, उत्पन्न होते हैं और

હશે. જમ્બૂદ્વીપ નામના આ દ્વીપમાં આવેલા ભરતક્ષેત્ર અને ઐરવત ક્ષેત્રમાં અતીત ઉત્સર્પિણીના બીજા સુષમાકાળમાં ઉત્પન્ન થયેલા મનુષ્યોની ઊંચાઈ બે ગવ્યૂતિની એટલે કે ૨૦૦૦ ધનુષની હતી તેમનું ઉત્કૃષ્ટ આયુ બે પલ્યોપમનું હતું આ અવસર્પિણીના સુષમાકાળમાં પણ એવું જ બને છે અને ભવિષ્યમાં પણ ઉત્સર્પિણીના સુષમાકાળમાં એવું જ બનશે-એટલે કે બે પલ્યોપમનું આયુ અને બે કોશનું શરીર હશે. જમ્બૂદ્વીપ નામના દ્વીપના ભરતક્ષેત્રમાં અને ઐરવત ક્ષેત્રમા એક સમયમાં એક યુગમાં બે અર્હન્ત ઉત્પન્ન થયા હતા, ઉત્પન્ન થાય છે અને ઉત્પન્ન થશે. એજ પ્રમાણે ચક્રવર્તી વંશ અને બે દશાર વંશોના (વાસુદેવો) વિષયમાં પણ સમજવું

આ રીતે આ જમ્બૂદ્વીપના ભરત અને ઐરવત ક્ષેત્રમાં એક યુગમાં એક સમયમાં બે અર્હન્ત ઉત્પન્ન થયા હતા, ઉત્પન્ન થાય છે અને ભવિષ્યમાં પણ ઉત્પન્ન થશે. એજ પ્રમાણે બે ચક્રવર્તી, બે બલદેવ અને બે

स्यते वा ११। एवं चक्रवर्त्तिनौ १२, एवं बलदेवौ, (दशारवंशौ) यावत् उदपद्येतां वा, उत्पद्येते वा, उत्पत्स्येते वा १३। जम्बूद्वीपे द्वीपे द्विकेषु कुरुषु मनुजाः सदा सुषमसुषमामुत्तमामृद्धिं प्राप्ताः (तां) प्रत्यनुभवन्तो विरहन्ति तद्यथा—देवकुरुषु चैव उत्तरकुरुषु चैव १४। जम्बूद्वीपे द्वीपे द्वयोर्वर्षयोर्मनुजाः सदा सुषमामुत्तमामृद्धिं प्रत्यनुभवन्तो विरहन्ति, तद्यथा—हरिवर्षं चैव रम्यकवर्षं चैव १५। जम्बूद्वीपे द्वीपे द्वयोर्वर्षयोर्मनुजाः सदा सुषमदुष्षमामुत्तमामृद्धिं प्रत्यनुभवन्तो विहरन्ति,

आगे भी उत्पन्न होंगे ११, इसी प्रकार दो चक्रवर्ती, दो बलदेव और दो वासुदेव (दशारवंश) उत्पन्न हुए, उत्पन्न होते हैं और आगे भी उत्पन्न होंगे। इसी प्रकार से जम्बूद्वीप में कुरुक्षेत्रों में मनुष्य सदा सुषमसुषमा काल में उत्तम ऋद्धि को प्राप्त करने वाले हुए हैं, होते हैं, और आगे भी वे होंगे। वे कुरु–देवकुरु और उत्तरकुरु ऐसे ये दो हैं। इसी तरह से जम्बूद्वीपस्थ दो क्षेत्रों में उत्तम ऋद्धि को प्राप्त किये हैं, वर्तमान में वे प्राप्त कर रहे हैं और आगे भी वे प्राप्त करेंगे वे दो क्षेत्र हरिवर्ष और रम्यकवर्ष ये हैं। जम्बूद्वीप नामके इस द्वीप में दो क्षेत्रों में मनुष्यों ने सुषमदुष्षमा काल में उत्तम ऋद्धि का अनुभव किया है–वर्तमान में वे वहां इसका अनुभव कर रहे हैं और आगे भी वे इसका अनुभव करेंगे वे दो क्षेत्र हैं हैमवत और हैरण्यवत–इसी प्रकार से जम्बूद्वीप नामके इस द्वीप में दो क्षेत्रों के मनुष्यों ने सदा दुष्षमसुषमा काल में उत्तम ऋद्धि को प्राप्त किया है, अब भी वे

વાસુદેવ (દશારવંશ) ભૂતકાળમા ઉત્પન્ન થયા હતા, વર્તમાનમા ઉત્પન્ન થાય છે અને ભવિષ્યમાં પણ ઉત્પન્ન થશે. એજ પ્રમાણે જબૂદ્વીપના કુરુક્ષેત્રોમા મનુષ્ય સદા સુષમસુષમા કાળમાં ઉત્પન્ન ઋદ્ધિને પ્રાપ્ત કરનારા રહ્યા હતા, રહે છે અને રહેશે. ઉત્તરકુરુ અને દેવકુરુ નામના બે કુરુ છે આ રીતે જબૂદ્વીપમાં આવેલાં બે ક્ષેત્રોમાં મનુષ્યોએ સદા સુષમકાળમાં ઉત્તમ ઋદ્ધિ પ્રાપ્ત કરી હતી, વર્તમાનમાં પણ પ્રાપ્ત કરે છે અને ભવિષ્યમાં પણ પ્રાપ્ત કરશે, એવા ક્ષેત્રો હરિવર્ષ અને રમ્યકવર્ષ છે જંબૂદ્વીપ નામના આ દ્વીપના બે ક્ષેત્રોમાં મનુષ્યોએ સદા સુષમાદુષમા કાળમાં ઉત્તમ ઋદ્ધિનો અનુભવ કર્યો છે, વર્તમાનમાં પણ ઉત્તમ ઋદ્ધિનો અનુભવ કરે છે અને ભવિષ્યમાં પણ ઉત્તમ ઋદ્ધિનો અનુભવ કરશે તે બે ક્ષેત્રો હૈમવત અને હૈરણ્યવત છે એજ પ્રમાણે જબૂદ્વીપમાં આવેલાં બે ક્ષેત્રોના મનુષ્યોએ સદા દુષમસુષમાં કાળમા ઉત્તમ ઋદ્ધિનો અનુભવ કર્યો છે, વર્તમાનમાં પણ કરે છે અને ભવિષ્યમાં પણ કરશે, તે બે ક્ષેત્રોનાં નામ પૂર્વવિદેહ અને પશ્ચિમવિદેહ છે.

तद्यथा-हैमवते चैव ऐरण्यवते चैव १६। जम्बूद्वीपे द्वीपे द्वयोः क्षेत्रयोर्मनुजाः सदा दुष्पमसुषमामृद्धिं मत्यनुभवन्तो विहरंति, तद्यथा-पूर्वविदेहे चैव, अपरविदेहे चैव १७। जम्बूद्वीपे द्वीपे द्वयोर्वर्षयोर्मनुजाः षड्विधमपि कालं मत्यनुभवन्तो विहरन्ति, तद्यथा-भरतचैव, ऐरवतचैव १८॥ सू० ३१॥

वहां उसे प्राप्त कर रहे हैं, और आगे भी वे उसे प्राप्त करेंगे वे दो क्षेत्र हैं पूर्वमहाविदेह और पश्चिम महाविदेह।

इसी तरह से इस जम्बूद्वीप नामके द्वीप में दो क्षेत्रों में मनुष्यों ने छह प्रकारके काल का अनुभव किया है-वे दो क्षेत्र हैं भरतक्षेत्र और ऐरवतक्षेत्र।

यह अष्टादश सूत्र है-इसका भाव सुगम है-परमायु का तात्पर्य उत्कृष्ट आयु है-पांच वर्ष का एक युग होता है-अर्हद्वंशसे दो अर्हन्तों का एक साथ होना लिया गया है-ये दो एक साथ एकसमय में भरतक्षेत्र में और ऐरवतक्षेत्र में होते हैं।

तात्पर्य इस सूत्र का ऐसा है-यह पहिले प्रकट कर दिया गया है कि भरतक्षेत्र और ऐरवत क्षेत्र में काल का परिवर्तन होता रहता है शेष क्षेत्रों में नहीं भरतक्षेत्र और ऐरवत क्षेत्र में वर्तमान में पंचम काल प्रवर्त रहा है इसकी स्थिति २१ हजार वर्ष की है इसके बाद जो छठा आरा आवेगा इसकी भी स्थिति २१ हजार वर्ष की है इस तरह से जब यह अवसर्पिणी काल समाप्त हो जावेगा तब उत्सर्पिणी काल का प्रथम

એજ પ્રમાણે આ જબૂદ્વીપમાં આવેલાં બે ક્ષેત્રોના મનુષ્યોએ છએ પ્રકારના કાળનો અનુભવ કર્યો છે તે ક્ષેત્રોનાં નામ ભરતક્ષેત્ર અને ઐરવત ક્ષેત્ર છે

આ પ્રકારના ૧૮ સૂત્રો આપ્યાં છે, તે સૂત્રોનો ભાવાર્થ સરળ છે 'પરમાયુ' એટલે ઉત્કૃષ્ટ આયુ ૫ વર્ષનો એક યુગ થાય છે 'અર્હદ્વંશ' આ પદના પ્રયોગ દ્વારા એક સાથે બે અર્હંતોના અસ્તિત્વની વાત કહી છે તે બન્નેનું અસ્તિત્વ એક સાથે એક જ સમયે ભરતક્ષેત્ર અને ઐરવત ક્ષેત્રમાં હોઈ શકે છે

આ સૂત્રનું તાત્પર્ય નીચે પ્રમાણે છે-એ વાત તો આગળ પ્રકટ કરવામાં આવી ચુકી છે કે ભરતક્ષેત્ર અને ઐરવત ક્ષેત્રમાં કાળનું પરિવર્તન થતું રહે છે બાકીના ક્ષેત્રોમાં થતું નથી. ભરતક્ષેત્ર અને ઐરવત ક્ષેત્રમાં અત્યારે અવસર્પિણીનો પાંચમો કાળ (આરો) ચાલે છે તે આરાનો ૨૧ હજાર વર્ષનો સમય કહ્યો છે ત્યારબાદ જે છઠ્ઠો આરો આવશે તેની સ્થિતિ પણ ૨૧ હજાર

भेद जो अवसर्पिणी का ६ ट्ठा काल है प्रारंभ होगा इसकी भी स्थिति २१००० वर्ष की है इसकी समाप्ति के बाद उत्सर्पिणी का द्वितीय काल जो अवसर्पिणी का पांचवां काल है प्रारंभ होगा इसकी स्थिति भी २१००० हजार वर्ष प्रमाण है जब यह भी समाप्त हो जावेगा तब उत्सर्पिणी का तृतीय काल जो अवसर्पिणी का ४ चौथा काल है प्रारंभ होगा इसका प्रमाण ४२ हजार वर्ष कम एक कोडा कोडी सागरोपम का है जब यह काल भी समाप्त हो जावेगा तब उत्सर्पिणी का चतुर्थ काल जो अवसर्पिणी का तृतीयकाल है प्रारंभ होगा इसका प्रमाण दो कोडाकोडी सागरोपम का है इसमें मनुष्यों के शरीर की ऊँचाई एक कोसकी होती है एक पल्यप्रमाण स्थिति होती है जब यह उत्सर्पिणी काल का चतुर्थ आरक समाप्त हो जावेगा तब उत्सर्पिणी का पांचवां आरा जो अवसर्पिणी का द्वितीयकाल है प्रारंभ होगा इसका प्रमाण तीन कोडा कोडी सागरोपम का है यहां के मनुष्यों के शरीर की ऊँचाई दो कोस की होती है आयु दो पल्योपम की होती है जब उत्सर्पिणी का यह पांचवां आरा समाप्त हो जाता है तब उत्सर्पिणी का ६ ट्ठा आरा

वर्षनी જ કહી છે. આ પ્રકારનો આ અવસર્પિણીકાળ જ્યારે પૂરો થશે, ત્યારે ઉત્સર્પિણીના પહેલા ભેદરૂપ પહેલો આરો શરૂ થશે તે પહેલો આરો અવસર્પિણીના છઠ્ઠા આરા જેવો હશે અને તેની સ્થિતિ ૨૧૦૦૦ વર્ષની હશે, ત્યારબાદ ઉત્સર્પિણીનો બીજો આરો શરૂ થશે. તે અવસર્પિણીના પાંચમા આરા જેવો હશે અને તેની સ્થિતિ પણ ૨૧૦૦૦ વર્ષની હશે ત્યારબાદ ઉત્સર્પિણીનો ત્રીજો આરો શરૂ થશે, જે અવસર્પિણીના ચોથા આરાના જેવો હશે. તે આરો એક કોડાકોડી સાગરોપમ કરતાં ૪૨૦૦૦ વર્ષ પ્રમાણ ન્યૂન હશે, જ્યારે તે કાળ પણ સમાપ્ત થશે ત્યારે ઉત્સર્પિણીનો ચોથો આરો શરૂ થશે, જે અવસર્પિણીના ત્રીજા આરા જેવો હશે, તેની સ્થિતિ બે કોડાકોડી સાગરોપમની કહી છે તે આરામાં મનુષ્યોના શરીરની ઉંચાઈ એક ગાઉ જેટલી પ્રમાણ હોય છે અને આયુ એક પલ્યોપમનુ હોય છે જ્યારે ઉત્સર્પિણીનો ચોથો આરો પૂરો થશે ત્યારે ઉત્સર્પિણીના પાંચમાં આરાનો પ્રારંભ થશે, જે અવસર્પિણીના બીજા આરા જેવો હશે તે આરો ત્રણ કોડાકોડી સાગરોપમની સ્થિતિવાળો છે, તે આરામાં મનુષ્યોના શરીરની ઉંચાઈ બે ગાઉ જેટલી હોય છે અને આયુષ્ય બે પલ્યોપમનુ હોય છે જ્યારે ઉત્સર્પિણીનો તે પાંચમો આરો પૂરો થશે, ત્યારે ઉત્સર્પિણીનો છઠ્ઠો આરો શરૂ થશે તે આરો અવસર્પિણીના છઠ્ઠા આરા જેવો હશે, તે આરો ચાર કોડાકોડી સાગરોપમનો કહ્યો

टीका—'जम्बूद्वीपे द्वीपे' इत्याद्यष्टादशसूत्री सुगमा। नवरम्—परमायुः—उत्कृष्टमायुः अपालयन्—अनुभवन्तिस्म। एकयुगे पञ्चसंवत्सरात्मके एकसमये—तस्याप्येकस्मिन् समये। भरतौ च=भरताः भरतपुत्राः, तौ द्वौ भरत, तत्रैको भरत, द्वितीयऐरवते ॥ सू० २३ ॥

जो अवसर्पिणी काल का प्रथम भेद है प्रारंभ होता है इसका प्रमाण चार कोडाकोडी सागरोपम का है इसमें मनुष्यों के शरीर की ऊंचाई तीन कोस होती है आयु तीन पल्योपम की होती है महाविदेहक्षेत्र में सदा अवसर्पिणी का चौथा काल ही रहता है जिसका नाम दुष्षम सुषमा है इस विदेहक्षेत्रके पूर्वमहाविदेह और अपरमहाविदेह ऐसे दो भेद हैं। हैमवत, हरि, और देवकुरु ये जम्बूद्वीपस्थ मन्दरकी दक्षिणदिशा तरफ के क्षेत्र हैं। यहां हैमवत्क्षेत्र में निरन्तर उत्सर्पिणी का चौथा और अवसर्पिणी का तीसरा काल दुष्षमसुषमा प्रवर्तता है—हरिवर्षक्षेत्र मे निरन्तर उत्सर्पिणी का पांचवां काल और अवसर्पिणी का दूसरा काल सुषमाप्रवर्तता है देवकुरु में निरन्तर उत्सर्पिणी का छ ला काल और अवसर्पिणी का छट्ठा काल प्रवर्तता है। हैरण्यवत, की व्यवस्था बिलकुल हैमवत क्षेत्र के तुल्य है रम्यक वर्ष की व्यवस्था बिलकुल हरिवर्ष क्षेत्र के तुल्य है और उत्तरकुरु की व्यवस्था देवकुरु के जैसी है भरतक्षेत्र और ऐरवत क्षेत्र मे ही तीर्थंकर, चक्रवर्ती, बलदेव वासुदेव ये सब

છે, તે આરાના મનુષ્યોના શરીરની ઊંચાઇ ત્રણ ગાઉ જેટલી હોય છે અને આયુ ત્રણ પલ્યોપમનું હોય છે

મહાવિદેહ ક્ષેત્રમાં સદા અવસર્પિણીનો ચોથો આરો જ પ્રવર્તતો હોય છે તે આરાને દુષમ સુષમાકાળ કહે છે તે વિદેહક્ષેત્રના પૂર્વવિદેહ અને પશ્ચિમ વિદેહ નામના બે ભાગ છે હૈમવત, હરિ અને દેવકુરુ, એ જમ્બૂદ્વીપના મન્દર પર્વતની દક્ષિણ દિશા તરફ આવેલાં ક્ષેત્રો છે આ હૈમવત ક્ષેત્રમાં સદા ઉત્સર્પિણીનો ચોથો અને અવસર્પિણીનો ત્રીજો કાળ જ પ્રવર્તે છે, તે કાળને દુષમ સુષમાકાળ કહે છે હરિવર્ષ ક્ષેત્રમાં સદા ઉત્સર્પિણીનો પાંચમો અને અવસર્પિણીનો બીજો કાળ—સુષમા પ્રવર્તે છે દેવકુરુમાં નિરંતર ઉત્સર્પિણીનો પ્રથમકાળ અને અવસર્પિણીનો છઠ્ઠો કાળ પ્રવર્તે છે હૈરણ્યવતમાં હૈમવત ક્ષેત્રનો કાળ સદા પ્રવર્તે છે રમ્યક વર્ષમાં હરિવર્ષ ક્ષેત્રના જેવો કાળ, અને ઉત્તર દેવકુરુના જેવો કાળ સદા પ્રવર્તે છે ભરતક્ષેત્ર અને ઐરવત ક્ષેત્રમાં જ તીર્થંકર, ચક્રવર્તી બળદેવ અને વાસુદેવ વગેરે ૬૩ શલાકાના પુરુષો ઉત્પન્ન

पूर्वं जम्बूद्वीपे काललक्षणद्रव्यपर्यायविशेषा उक्ताः, साम्प्रतं तत्रैव कालपदार्थव्यञ्जकानां ज्योतिष्काणां द्विसंख्यानानुपातेन प्ररूपणामाह—

मूलम्–जंबुद्दीवे दीवे दो चंदा पभासिंसु वा पभासंति वा पभासिस्संति वा, दो सूरिया तविंसु वा तवंति वा तविस्संति वा। दो कत्तियाओ, दो रोहणिओ, दो मिगसिराओ, दो अद्दाओ एवं भाणियव्वं जाव दो भरणीओ।

"कत्तिय रोहिणि मगसिर, अद्दा य पुणव्वसू य पूसो य।
तत्तो वि अस्सलेसा, महा य दो फग्गुणीओ य॥ १॥
हत्थो चित्ता साई, विसाहा तह य होइ अणुराहा।
जेट्ठा मूलो पुव्वा य असाढा उत्तरा चेव॥ २॥
अभिई सवण धणिट्ठा, सयभिसया दो य होंति भद्दवया।
रेवइ अस्सिणि भरणी, णेयव्वा आणुपुव्वीए॥ ३॥"

एवं गाहाणुसारेणं णेयव्वं।

दो अग्गी, दो पयावई, दो सोमा, दो रुद्दा, दो अदिई, दो वहस्सई, दो सप्पा, दो पियरी, दो भगा, दो अज्जमा, दो सविया, दो तट्ठा, दो वाऊ, दो इंदग्गी, दो मित्ता, दो इंदा,

---

तिरसठ शलाका के पुरुष उत्पन्न होते हैं अवसर्पिणी के चतुर्थकाल दुष्षमसुषमा में और किसी काल में अन्य क्षेत्रों में नहीं होते हैं तथा भरतक्षेत्र और ऐरवत क्षेत्र में भी अन्यकाल में नहीं होते हैं–विदेहक्षेत्र में निषेध नहीं है। इस सब विषय को हृदय में धारण करके यह सूत्र गम्य है॥ सू० ३३॥

થાય છે તેઓ ત્યા અવસર્પિણીના ચોથા કાળમાં (દુષ્ષમ સુષમામાં) જ ઉત્પન્ન થાય છે, બીજાં કોઇ પણ કાળમાં ઉત્પન્ન થતા નથી અને અન્ય ક્ષેત્રોમાં પણ ઉત્પન્ન થતા નથી ભરત અને ઐરવત ક્ષેત્રમાં પણ તેઓ અન્ય કોઇ પણ કાળમાં ઉત્પન્ન થતા નથી વિદેહ ક્ષેત્રમા નિષેધ નથી. આ સમસ્ત વિષયને હૃદયમાં ઉતારવામાં આવે તો [illegible] ॥ સૂ. ૩૩ ॥

दो निरंई, दो आऊ, दो विस्सा दो धम्हा, दो विण्हू, दो वसू, दो वरुणा, दो अया, दो विवद्धी, दो पुस्सा, दो अस्सा दो जमा। दो इगालगा, दो वियालगा, दो लोहियक्खा, दा सणिच्चरा, दो आहुणिया, दो पाहुणिया, दो कणा, दो कणगा, दो कण कणगा, दो कणगवियाणगा, दो कणगसंताणगा, दो सोमा, दो सहिया, दो आसासणा, दो कज्जोवगा, दो कब्बडगा, दो अय करंगा, दो दुदुभगा, दो सखा, दो सखवन्ना, दो सखवन्नाभा, दो कसा, दो कसवन्ना, दो कसवन्नाभा, दो रुप्पी, दो रुप्पा भासा, दो णीला दो णीलाभासा, दो भासा, दो भासरासी, दो तिला, दो तिलपुप्फवण्णा, दो दगा, दो दगपचवन्ना, दो कोका, दो कक्कधी, दो इदग्गीवी, दो धूमकेऊ, दो हरी, दो पिंगला, दो बुधा, दो सुक्का, दो वहस्सइ, दो राहू, दो अगत्थी, दो माणवगा, दो कासा, दो फासा, दो धुरा, दो पमुहा, दो वियडा, दो विसधी, दो नियल्ला, दो पइल्ला, दो जडि याइलगा, दो अरुणा, दो अग्गिल्ला, दो कालगा, दो महाका लगा, दो सोत्थिया, दो सोवत्थिया, दो वद्धमाणगा, (दो+ पुसमाणगा६१, दो अकुसा ६२) दो पलंवा, दो निच्चा लोगा, दो णिच्चुज्जोया, दो सयपभा, दो ओभासा, दो सेयकरा, दो खेमकरा, दो आभकरा, दो पभकरा, दो अपराजिया, दो अरया, दो असोगा, दो विगयसोगा, दो विमला, दो

+ इम द्वे नामान्तररूपेणस्त, अतो न गणनीय।

वितलाँ, दो वितत्थाँ, दो विसालाँ, दो सालाँ, दो सुव्वया, दो अणियट्टी, दो एगजडी, दो दुजडी, दो करकरिगा, दो रायग्गला, दो पुप्फकेऊ, दो भावकेऊ ॥ सू० ३४ ॥

छाया—जम्बूद्वीपे द्वीपे द्वौ चन्द्रौ प्रभासेतां वा प्रभासेते वा प्रभासिष्येते वा, द्वौ सूर्यौ अतपतां वा, तपतो वा, तपिष्यंतो वा । द्वे कृत्तिके, द्वे रोहिण्यौ, द्वे मृगशीर्षे, द्वे आर्द्रे, एवं भणितव्यं यावत् द्वे भरण्यौ ।

"कृत्तिका रोहिणी मृगशिरः, आर्द्रा च पुनर्वसुश्च पुष्यश्च ।
ततोऽपि अश्लेषा मघा च द्वे फाल्गुन्यौ च ॥ १ ॥
हस्तश्चित्रा स्वाती विशाखा तथा च भवति अनुराधा ।
ज्येष्ठा मूलं पूर्वा च आषाढा उत्तरा चैव ॥ २ ॥
अभिजित् श्रवणं धनिष्ठा शतभिषग् द्वे च भवतः भाद्रपदे ।
रेवती अश्विनी भरणी ज्ञातव्यानि (नक्षत्राणि) आनुपूर्व्या ॥३॥"

एव गाथानुसारेण ज्ञातव्यम् ।

द्वौ अग्नी, द्वौ प्रजापती, द्वौ सोमौ, द्वौ रुद्रौ, द्वे अदिती, द्वौ बृहस्पती, द्वौ सर्पौ, द्वौ पितरौ, द्वौ भगौ, द्वौ अर्यमणौ, द्वौ सवितारौ, द्वौ त्वष्टारौ, द्वौ वायू, द्वौ इन्द्राग्नी, द्वौ मित्रौ, द्वौ इन्द्रौ, द्वौ निर्ऋती, द्विके आपः, द्वौ विश्वौ, द्वौ ब्रह्माणौ, द्वौ विष्णू, द्वौ वसू, द्वौ वरुणौ, द्वौ अजौ, द्वे विवृद्धी, द्वौ पूषणौ, द्वौ अश्विनौ, द्वौ यमौ । द्वौ अङ्गारकौ, द्वौ विकालकौ, द्वौ लोहिताक्षौ, द्वौ शनैश्चरौ, द्वौ आधुनिकौ (आघूर्णिकौ) द्वौ प्राघूर्णिकौ, द्वौ कणौ, द्वौ कनकौ, द्वौ कनकनकौ, द्वौ कनकवितानकौ, द्वौ कनकसन्तानकौ, द्वौ सोमौ, द्वौ सहितौ, द्वौ आश्वासनौ, द्वौ कार्योपकौ, द्वौ कर्बटकौ, द्वौ अजकरकौ, द्वौ दुन्दुभकौ, द्वा शङ्खौ, द्वौ शङ्खवर्णौ, द्वौ शङ्खवर्णाभौ, द्वौ कांस्यौ, द्वौ कांस्यवर्णौ, द्वौ कांस्यवर्णाभौ, द्वौ रुक्मिणौ, द्वौ रुक्माभासौ, द्वौ नीलौ, द्वौ नीलाभासौ, द्वौ भस्मनौ, द्वौ भस्मराशी, द्वौ तिलौ, द्वौ तिलपुष्पवर्णौ, द्वौ दकौ, द्वौ दकपञ्चवर्णौ, द्वौ काकौ, द्वौ कर्कन्धू, द्वौ इन्द्रग्रीवौ, द्वौ धूमकेतू, द्वौ हरितौ द्वौ पिङ्गलौ, द्वौ बुधौ, द्वौ शुक्रौ, द्वौ बृहस्पती, द्वौ राहू, द्वौ अगस्त्यौ, द्वौ माणवकौ, द्वौ कासौ, द्वौ स्पर्शौ, द्वौ धुरौ, द्वौ प्रमुखौ, द्वौ विकटौ, द्वौ विसन्धी, द्वौ नियल्लौ, द्वौ पादिकौ, द्वौ जटिलादिलकौ, द्वौ अरुणौ, द्वौ अग्निलौ, द्वौ कालकौ, द्वौ महाकालकौ, द्वौ स्वस्तिकौ, द्वौ सौवस्तिकौ द्वौ वर्धमानकौ, (द्वौ पुष्यमानकौ ६१, द्वौ अङ्कुशौ ६२,) द्वौ प्रलम्बौ, द्वौ नित्यालोकौ, द्वौ नित्योद्द्योतौ,

+'द्वौ पुष्पमानकौ द्वौ अङ्कुशौ' इमे द्वे नामान्तररूपेणस्तः, अतो न गणनीये ।

द्वौ स्वयंप्रभौ, द्वौ अवभासौ द्वौ श्रेयस्करौ, द्वौ क्षेमङ्करौ, द्वौ आभङ्करौ, द्वौ प्रभङ्करौ, द्वौ अपराजितौ, द्वौ अरजसौ, द्वौ अशोकौ, द्वौ विगतशोकौ, द्वौ विमलौ, द्वौ वितप्तौ द्वौ वितस्तौ, द्वौ विशालौ द्वौ शालौ, द्वौ सुव्रतौ, द्वौ अनिवर्तिनौ, द्वौ एकजटिनौ, द्वौ द्विजटिनौ, द्वौ करकरिकौ, द्वौ राजार्गलौ, द्वौ पुष्पकेतू, द्वौ भावकेतू ॥सू०१४॥

टीका—'जंबुदीवे दीवे' इत्यादि' दो भावकेऊ' इत्यन्तं सर्वं निगदसिद्धम्। नवरम्—जम्बूद्वीपे द्वीपे द्वौ चन्द्रौ 'पभासिंसु वा' इति प्राभासेतां प्रकाशितवन्तौ भूतकाले, एवं प्रभासेते—वर्तमानकाले, प्रभासिष्यतेऽनागतकालेऽपीति त्रिकालविषयमिदं सूत्रम्। अनेन चन्द्रयोः शाश्वतत्वं सूचितम्। एवमग्रेऽपि सूर्य—नक्षत्र—तदवताऽष्टाशीतिग्रहाणां विषयेऽपि भावनीयम्। एवं द्वौ सूर्यौ 'तविंसु वा' इति अतपतां वा, एवं तपतः, तप्स्यतो वा। अत्र चन्द्रयो सौम्यदीप्तिकत्वात् प्रभास

पहिले जम्बूद्वीप में काल के द्वारा होने वाले द्रव्यपर्यायों का कथन किया गया है अब वहीं पर उस काल के व्यञ्जक जो ज्योतिष्क हैं उनकी द्विस्थान के अनुरोध से प्ररूपणा की जाती है–(जंबुद्दीवे दीवे) इत्यादि।

टीकार्थ–"जंबुद्दीवे दीवे" यहांसे लेकर "दो भावकेऊ" इस अन्तिम पाठ तक का सब कथन इस सूत्र में जैसा कहा गया है वैसा ही है और वह सुस्पष्ट है विशेष–जम्बूद्वीप नामके इस द्वीप में दो चन्द्रमा हैं भूत काल में इन दोनोंने यहां प्रकाश किया है, वर्तमान में ये दोनों प्रकाश दे रहे हैं और आगामीकाल में भी ये दोनों प्रकाश देंगे इस प्रकार से यह सूत्र त्रिकाल विषयक है इस कथन से जम्बूद्वीप में दो चन्द्रमा शाश्वत

જમ્બૂદ્વીપમાં કાળના દ્વારા બનારા દ્રવ્યપર્યાયોનું કથન પહેલાના સૂત્રમાં કરવામાં આવ્યું છે હવે તે કાળના વ્યંજક જે જ્યોતિષ્કો છે તેમની અહીં દ્વિસ્થાનના અનુરોધને લઈને પ્રરૂપણા કરવામાં આવે છે—

"जंबुद्दीवे दीवे" ઇત્યાદિ—

ટીકાર્થ—આ સૂત્રપાઠથી લઈને 'दो भावकेऊ" પર્યન્તના અન્તિમ સૂત્રનો ભાવાર્થ સરળ છે વિશેષ કથન નીચે પ્રમાણે સમજવું—

જમ્બૂદ્વીપ નામના આ દ્વીપમાં બે ચન્દ્રમા છે ભૂતકાળમાં તે બન્ને ચન્દ્ર અહીં પ્રકાશતા હતા, વર્તમાનમાં પણ તેઓ અહીં પ્રકાશે છે અને ભવિષ્યમાં પણ પ્રકાશતા રહેશે. આ રીતે ત્રણે કાળને અનુલક્ષીને આ સૂત્રનું કથન કરાયું છે, આ કથન દ્વારા એ વાત પ્રકટ કરવામાં આવી છે કે જમ્બૂદ્વીપમાં

नमात्रमुक्तम् । आदित्ययोश्च खररश्मिकत्वात्तपनमुक्तम् । 'दोकत्तिए' इत्यादि । जम्बूद्वीपे द्वीपे द्वे कृत्तिके-कृत्तिकानक्षत्रे । कृत्तिकाया द्वित्वं नक्षत्रापेक्षया, न तु तारकापेक्षयेति सर्वत्र बोध्यम् । एवं कृत्तिकात आरभ्य भरणीपर्यन्तान्यष्टाविंशतिर्नक्षत्राणि प्रत्येकं द्विसंख्यकानि विज्ञेयानि । तथैतेष कृत्तिकाद्यष्टाविंशतिनक्षत्रयुग्मानामग्नित आरभ्य यमपर्यन्ताः क्रमेणाष्टाविंशतिदेवताः (युग्मानि) सन्तीति सूत्रतोऽवसेयम् । तथा—अङ्गारकादारभ्य भावकेतुपर्यन्तान्यष्टाशीतिर्ग्रहयुग्मानि सन्ति, तान्यपि सूत्रतो बोध्यानि ॥ ३४ ॥ सू० ३४ ॥

हैं ऐसा कहा गया है इसी तरह से आगे भी सूर्य, नक्षत्र, इनके देवता और ८८ ग्रहों के संबंध में भी जानना चाहिये

इस जम्बूद्वीप में दो सूर्य हैं भूतकाल में ये यहां तपे हैं, अब भी ये यहां तपते हैं और आगामीकाल में भी ये यहां तपेंगे चन्द्र का प्रकाश शीतल होता है इसलिये इसका प्रभासन कहा है और सूर्य तीक्ष्ण किरणों वाला होता है इस कारण इसका तपन कहा है जम्बूद्वीप में दो कृत्तिका नक्षत्र होते हैं नक्षत्र की अपेक्षा से ही कृत्तिका में द्वित्व कहा गया है तारक की अपेक्षा से नहीं ऐसा ही सर्वत्र समझना चाहिये इस तरह कृत्तिका से लेकर भरणि तक २८ नक्षत्र हैं वे प्रत्येक दो दो हैं, तथा कृत्तिका आदि २८ नक्षत्र युग्मों के अग्नि से लेकर यम तक क्रमशः २८ देवतायुग्म हैं-यह बात सूत्रसे ही जाननी चाहिये तथा अङ्गारक से लेकर भाव केतुतक ८८ ग्रहयुग्म हैं ये भी सूत्रसे ही जाननीचाहिये॥३४॥

બન્ને ચન્દ્રમા શાશ્વત છે, એ જ પ્રમાણે સૂર્ય, નક્ષત્ર, તેમના દેવતા અને ૮૮ ગ્રહોના સંબંધમાં પણ સમજવું જોઇએ.

આ જંબૂદ્વીપમાં બે સૂર્ય છે ભૂતકાળમાં તેઓ અહીં તપતા હતા, વર્તમાનમાં પણ તપે છે અને ભવિષ્યમાં પણ તપશે ચન્દ્રનો પ્રકાશ શીતલ હોય છે, તેથી તેની સાથે પ્રભાસન શબ્દનો પ્રયોગ કરાયો છે સૂર્ય તીક્ષ્ણ કિરણોવાળો હોય છે, તેની સાથે 'તપન' પદનો પ્રયોગ કરાયો છે. જંબૂદ્વીપમાં બે કૃત્તિકા નક્ષત્ર હોય છે નક્ષત્રની અપેક્ષાએ જ કૃત્તિકામાં દ્વિત્વ પ્રકટ કરવામાં આવ્યુ છે-તારાની અપેક્ષાએ દ્વિત્વ પ્રકટ કરાયુ નથી, એવું જ કથન સર્વત્ર સમજી લેવું આ રીતે કૃત્તિકાથી લઇને ભરણિ પર્યન્તના ૨૮ નક્ષત્રો છે. તે પ્રત્યેકમાં દ્વિત્વ ગ્રહણ કરવું જોઇએ તથા કૃત્તિકા આદિ ૨૮ નક્ષત્રયુગ્મોના અગ્નિથી લઇને યમ પર્યન્તના ક્રમશ. ૨૮ દેવતાયુગ્મો છે, એ વાત સૂત્રને આધારે સમજી લેવી જોઇએ તથા અંગારક (મંગળ) થી લઇને ભાવકેતુ પર્યન્તના ૮૮ ગ્રહયુગ્મો છે, તેમને વિષે પણ સૂત્રમાંથી માહિતી મેળવી લેવી. ॥ સૂ. ૩૪ ॥

जम्बूद्वीपाधिकारादेवेदमपरं वेदिकादिस्वरूपमाह—

मूलम्—जंबुद्दीवस्स णं दीवस्स वेइया दो गाउयाइं उड्ढं उच्चत्तेणं पण्णत्ता। लवणे णं समुद्दे दो जोयणसयसहस्साइं चक्कवालविक्खंभेणं पण्णत्ते। लवणस्स णं समुद्दस्स वेइया दो गाउयाइं उड्ढं उच्चत्तेणं पण्णत्ता। धायईसंडदीवे पुरत्थिमद्धेणं मंदरस्स पव्वयस्स उत्तरदाहिणेणं दो वासा पण्णत्ता बहुसमतुल्ला जाव तं जहा—भरहे चेव एरवए चेव। एवं जहा जंबुद्दीवे तहा एत्थवि भाणियव्वं जाव दोसु वासेसु मणुया छव्विहंपि कालं पच्चणुब्भवमाणा विहरंति तं जहा—भरहे चेव एरवए चेव, णवरं कूडसामली चेव धायइरुक्खे चेव, देवा गरुले चेव वेणुदेवे, सुदंसणे चेव। धायईसंडदीवपच्चत्थिमद्धेणं मंदरस्स पव्वयस्स उत्तरदाहिणेणं दो वासा पण्णत्ता बहुसम० जाव तं जहा—भरहे चेव एरवए चेव, जाव छव्विहंपि कालं पच्चणुभवमाणा विहरंति, तं जहा — भरहे चेव एरवए चेव, णवरं कूडसामली चेव महाधायईरुक्खे चेव, देवा गरुले चेव वेणुदेवे पियदंसणे चेव। धायईसंडे णं दीवे दो भरहाइं, दो एरवयाइं, दो हेमवयाइं, दो हेरन्नवयाइं, दो हरिवासाइं दो रम्मगवासाइं, दो पुव्वविदेहाइं, दो अवरविदेहाइं, दो देवकुराओ, दो देवकुरुमहद्दुमा, दो देवकुरुमहद्दुमवासी देवा। दो उत्तरकुराओ, दो उत्तरकुरुमहद्दुमवासी देवा। दो चुल्लहि

मवंता दो महाहिमवंता, दो निसढा, दो नीलवंता, दो रुप्पी, दो सिहरी, दो सद्दावाई, दो सद्दावायवासी साती देवा, दो वियडावाई, दो वियडावाइवासी पभासा देवा, दो गंधावाई, दो गंधावाईवासी अरुणा देवा, दो मालवंत-परियागवासी पउमा देवा । दो मालवंता, दो चित्तकूडा, दो पम्हकूडा, दो नलिणकूडा, दो एगसेला, दो तिकूडा, दो वेसमणकूडा, दो अंजणा, दो मायंजणा, दो सोमणसा, दो विज्जुप्पभा, दो अंकावाइ, दो पम्हावाई, दो आसीविसा, दो सुहावहा, दो चंदपव्वया, दो सूरपव्वया, दो णागपव्वया, दो देवपव्वया, दो गंधमायणा, दो उसुगारपव्वया, दो चुल्ल-हिमवंतकूडा, दो वेसमणकूडा, दो महाहिमवंतकूडा, दो वेरुलियकूडा, दो निसढकूडा, दो रुयगकूडा, दो नीलवंत-कूडा, दो उवदंसणकूडा, दो रुप्पिकूडा, दो मणिकंचनकूडा, दो सिहरिकूडा, दो तिगिच्छिकूडा, दो पउमद्दहा, दो पउ-मद्दहवासिणीओ सिरिदेवीओ, दो महापउमद्दहवासिणीओ हिरीदेवीओ । एवं जाव पुंडरीयद्दहा दो पुंडरीयद्दहवासिणीओ, लच्छीदेवीओ, दो गंगप्पवायद्दहा जाव दो रत्तवइप्पवायद्दहा, दो रोहियाओ जाव दो रुप्पकूलाओ, दो गाहावईओ, दो पंकव-ईओ, दो तत्तजलाओ, दो मत्तजलाओ, दो उम्मत्तजलाओ, दो खीरोयाओ, सीहसोयाओ, दो अंतोवाहिणीओ, दो उम्मि-मालिणीओ, दो फेणमालिणीओ, दो गंभीरमालिणीओ, दो कच्छा १, दो सुकच्छा २, दो महाकच्छा ३, दो कच्छागावई ४

जम्बूद्वीपाधिकारादेवेदमपरं वेदिकास्वरूपमाह—

मूलम्—जम्बुद्दीवस्स णं दीवस्स वेइया दो गाउयाइं उड्ढं उच्चत्तेणं पण्णत्ता। लवणे णं समुद्दे दो जोयणसयसहस्साइं चक्कवालविक्खंभेणं पण्णत्ते। लवणस्स णं समुद्दस्स वेइया दो गाउयाइं उड्ढं उच्चत्तेणं पण्णत्ता। धायईसंडदीवे पुरत्थिमद्धेणं मंदरस्स पव्वयस्स उत्तरदाहिणेणं दो वासा पण्णत्ता बहुसमतुल्ला जाव तं जहा—भरहे चेव एरवए चेव। एवं जहा जंबुद्दीवे तहा एत्थवि भाणियव्वं जाव दोसु वासेसु मणुया छव्विहंपि कालं पच्चणुभवमाणा विहरंति तं जहा—भरहे चेव एरवए चेव, णवरं कूडसामली चेव धायइरुक्खे चेव, देवा गरुले चेव वेणुदेवे, सुदंसणे चेव। धायईसंडदीवपच्चत्थिमद्धेणं मंदरस्स पव्वयस्स उत्तरदाहिणेणं दो वासा पण्णत्ता बहुसम० जाव तं जहा—भरहे चेव एरवए चेव, जाव छव्विहंपि कालं पच्चणुभवमाणा विहरंति, तं जहा — भरहे चेव एरवए चेव, णवरं कूडसामली चेव महाधायईरुक्खे चेव, देवा गरुले चेव वेणुदेवे पियदंसणे चेव। धायईसंडे णं दीवे दो भरहाइं, दो एरवयाइं, दो हेमवयाइं, दो हेरन्नवयाइं, दो हरिवासाइं दो रम्मगवासाइं, दो पुव्वविदेहाइं, दो अवरविदेहाइं, दो देवकुराओ, दो देवकुरुमहद्दुमा, दो देवकुरुमहद्दुमवासी देवा। दो उत्तरकुराओ, दो उत्तरकुरुमहद्दुमवासी देवा। दो चुल्लहि

धायईसंडस्स णं दीवस्स वेइया दो गाउयाइं उड्ढं उच्चत्तेणं पण्णत्ता। कालोदस्स णं समुद्दस्स वेइया दो गाउयाइं उच्चत्तेणं पण्णत्ता। पुक्खरवरदीवड्ढपुरत्थिमद्धेणं मंदरस्स पव्वयस्स उत्तरदाहिणेणं दो वासा पण्णत्ता, बहुसमतुल्ला जाव तं जहा–भरहे चेव एरवए चेव। तहेव जाव दो कुराओ पण्णत्ताओ तं जहा–देवकुरा चेव उत्तरकुरा चेव। तत्थ णं दो महईमहालया महद्दुमा पण्णत्ता तं जहा–कूडसामली चेव पउमरुक्खे चेव। देवा गरुले चेव वेणुदेवे, पउमे चेव, जाव छव्विहंपि कालं पच्चणुभवमाणा विहरंति। पुक्खरवरदीवड्ढपच्चत्थिमद्धेणं मंदरस्स पव्वयस्स उत्तरदाहिणेणं दो वासा पण्णत्ता तं जहा–तहेव णाणत्तं कूडसामली चेव महापउमरुक्खे चेव, देवा गरुले चेव वेणुदेवे पुंडरीए चेव। पुक्खरवरदीवड्ढेणं दीवे दो भरहाइं, दो एरवयाइं जाव दो मंदरा, दो मंदरचूलियाओ। पुक्खरवरस्स णं दीवस्स वेइया दो गाउयाइं उड्ढं उच्चत्तेणं पण्णत्ता। सव्वेसिं पि णं दीवसमुद्दाणं वेइयाओ दो दो गाउयाइं उड्ढं उच्चत्तेणं पण्णत्ताओ॥ सू० ३५॥

छाया—जम्बूद्वीपस्य खलु द्वीपस्य वेदिका द्वे गव्यूती ऊर्ध्वमुच्चत्वेन

जम्बूद्वीप के संबंध को लेकर ही अब सूत्रकार इसकी वेदिका आदि के स्वरूप के संबंध में कथन करते हैं–'जंबुद्दीवस्स णं दीवस्स' इत्यादि।

सूत्रार्थ–जंबूद्वीप नाम के द्वीप की जो कि सब से पहिला और सब द्वीप समुद्रों के बीच में है अर्थात् जिसके द्वारा कोई द्वीप या समुद्र वेष्टित

જમ્બૂદ્વીપનું કથન ચાલતું હોવાથી સૂત્રકાર તેની વેદિકા આદિના સ્વરૂપનું નિરૂપણ કરે છે–" जंबुद्दीवस्स णं दीवस्स " ઈત્યાદિ—

સૂત્રાર્થ–જંબૂદ્વીપ નામનો દ્વીપ કે જે સૌથી પહેલો છે અને સઘળા દ્વીપસમુદ્રોની વચ્ચે છે–એટલે કે તેના દ્વારા કોઈ દ્વીપ અથવા સમુદ્ર પરિવેષ્ટિત

दो आवत्ता५, दो मगलावत्ता६, दो पुक्खला७, दो पुक्खला वइ८, दो वच्छा९, दो सुवच्छा१० दो महावच्छा११, दो वच्छ गावइ१२, दो रम्मा१३, दो रम्मगा१४, दो रमणिज्जा १५, दो मगलावई१६, दो पम्हा१७, दो सुपम्हा१८, दो महापम्हा१९, दो पम्हगावई२०, दो सखा२१, दो णलिणा२२, दो कुमुया२३, दो सलिलावई२४, दो वप्पा२५, दो सुवप्पा२६, दो महावप्पा २७, दो वप्पगावई२८, दो वग्गू२९, दो सुवग्गू३०, दो गंधिला ३१, दो गंधिलावई३२, दो खेमाओ१, दो खेमपुरीओ२, दो रिट्ठओ३, दो रिट्ठपुरीओ४, दो खग्गीओ५, दो मजुसाओ६, दो ओसहीओ, दो पुडरिगिणीओ, दो सुसीमाओ९, दो कुड लाओ१०, दो अपराजियाओ ११, दो पभकराओ१२, दो अकावईओ १३, दो पम्हावईओ१४, दो सुभाओ १५, दो रयणसचयाओ १६, दो आसपुराओ १७, दो सीहपुराओ१८ दो महापुराओ १९, दो विजयपुराओ २०, दो अपराजि याओ२१, दो अवराओ२२, दो ओसायाओ२३, दो विगय सोगाओ २४, दो विजयाओ २५, दो वेजयतीओ २६, दो जयतीओ२७, दो अपराजियाओ२८, दो चक्कपुराओ२९ दो खग्गपुराओ३०, दो अवज्झाओ३१, दो अउज्झाओ ३२, दो भद्दसालवणा, दो णंदणवणा, दो सोमणसवणा, दो पडगवणा । दो पडुकवलसिलाओ दो अतिपडुकवल सिलाओ, दो रत्तकवलसिलाओ, दो अइरत्तकवलसिलाओ, दो मदरा, दो मदरचूलियाओ ।

धायईसंडस्स णं दीवस्स वेइया दो गाउयाइं उड्ढं उच्चत्तेणं पण्णत्ता। कालोदस्स णं समुद्दस्स वेइया दो गाउयाइं उच्चत्तेणं पण्णत्ता। पुक्खरवरदीवड्ढपुरत्थिमद्धेणं मंदरस्स पव्वयस्स उत्तरदाहिणेणं दो वासा पण्णत्ता, बहुसमतुल्ला जाव तं जहा-भरहे चेव एरवए चेव। तहेव जाव दो कुराओ पण्णत्ताओ तं जहा-देवकुरा चेव उत्तरकुरा चेव। तत्थ णं दो महईमहालया महद्दुमा पण्णत्ता तं जहा-कूडसामली चेव पउमरुक्खे चेव। देवा गरुले चेव वेणुदेवे, पउमे चेव, जाव छव्विहंपि कालं पच्चणुभवमाणा विहरंति। पुक्खरवरदीवड्ढपच्चत्थिमद्धेणं मंदरस्स पव्वयस्स उत्तरदाहिणेणं दो वासा पण्णत्ता तं जहा-तहेव णाणत्तं कूडसामली चेव महापउमरुक्खे चेव, देवागरुले चेव वेणुदेवे पुंडरीए चेव। पुक्खरवरदीवड्ढेणं दीवे दो भरहाइं, दो एरवयाइं जाव दो मंदरा, दो मंदरचूलियाओ। पुक्खरवरस्स णं दीवस्स वेइया दो गाउयाइं उड्ढं उच्चत्तेणं पण्णत्ता। सव्वेसिं पि णं दीवसमुद्दाणं वेइयाओ दो दो गाउयाइं उड्ढं उच्चत्तेणं पण्णत्ताओ ॥ सू० ३५ ॥

छाया—जम्बूद्वीपस्य खलु द्वीपस्य वेदिका द्वे गव्यूती ऊर्ध्वमुच्चत्वेन

जम्बूद्वीप के संबंध को लेकर ही अब सूत्रकार इसकी वेदिका आदि के स्वरूप के संबंध में कथन करते हैं-'जंबुदीवस्स णं दीवस्स' इत्यादि।

सूत्रार्थ-जंबूद्वीप नाम के द्वीप की जो कि सब से पहिला और सब द्वीप समुद्रों के बीच में है अर्थात् जिसके द्वारा कोई द्वीप या समुद्र वेष्टित

જંબૂદ્વીપનુ કથન ચાલતુ હોવાથી સૂત્રકાર તેની વેદિકા આદિના સ્વરૂપનું નિરૂપણ કરે છે-" જંબુદીવસ્સ ણ દીવસ્સ " ઇત્યાદિ—

સૂત્રાર્થ-જંબૂદ્વીપ નામનો દ્વીપ કે જે સૌથી પહેલો છે અને સઘળા દ્વીપસમુદ્રોની વચ્ચે છે-એટલે કે તેના દ્વારા કોઇ દ્વીપ અથવા સમુદ્ર પરિવેષ્ટિત

मज्ञप्ता । लवण खलु समुद्रो द्वियोजनशतसहस्राणि चक्रवालविष्कम्भेण प्रज्ञप्तः। लवणस्य खलु समुद्रस्य वेदिका द्वे गव्यूती ऊर्ध्वमुच्चत्वेन प्रज्ञप्ता । धातकी खण्डे द्वीपे पूर्वार्धे न मन्दरस्य पर्वतस्य उत्तरदक्षिणेन द्वे वर्षे प्रज्ञप्ते बहुसमतुल्ये यावत् तद्यथा–भरतं चैव ऐरवतं चैव । एवं यथा जम्बूद्वीपे तथाऽत्रापि भणितव्यं यावत् द्वयोर्वर्षयोर्मनुजाः षड्विधमपि कालं प्रत्यनुभवन्तो विहरन्ति, तद्यथा–भरते चैव

नहीं हुआ है वेदिका दो गव्यूति (दो कोस) प्रमाण ऊँची है इस द्वीपको चारों ओर से वेष्ठित करने वाला लवण समुद्र है जम्बूद्वीप का विष्कंभ एक लाख योजन प्रमाण है इसलिये लवण समुद्र का विष्कम्भ दो लाख योजन का है लवण समुद्र की वेदिका दो कोसप्रमाण ऊँची है धातकी खण्डद्वीप के दो विभाग हैं एक पूर्वार्ध और दूसरा पश्चिमार्ध इस विभाग को इष्वाकार नाम वाले दो पर्वतो ने किया है पूर्वार्ध में मन्दर पर्वत की उत्तर दक्षिण दिशा में भरत और ऐरवत क्षेत्र हैं ये दोनों क्षेत्र बहुसम आदि विशेषणों वाले है । इस धातकीखण्डद्वीप में इन भरतक्षेत्र और ऐरवत क्षेत्र का वर्णन जम्बूद्वीपान्तर्गत भरतक्षेत्र और ऐरवत के ही तुल्य है । अतः इस तरह के कथन से इन दोनों क्षेत्रों के मनुष्य छहों प्रकार के आरे काल का अनुभव करते हैं । तात्पर्य ऐसा है कि जम्बूद्वीप की अपेक्षा धातकीखण्ड में मेरु वर्ष और वर्षधर तथा नदी और द्रह आदि की संख्या दूनी २ है अर्थात् उसमें दो मेरु, चौदह

(वींटળાયેલ) નથી તેની વેદિકા બે ગવ્યૂતિ (કોશ) પ્રમાણ ઊંચી છે આ દ્વીપ ચારે તરફ લવણસમુદ્રથી ઘેરાયેલો છે તેનો (જબૂદ્વીપનો) વિષ્કંભ (વિસ્તાર) એક લાખ યોજનપ્રમાણ છે તેથી લવણ સમુદ્રનો વિસ્તાર બે લાખ યોજનનો છે લવણ સમુદ્રની વેદિકા બે ગવ્યૂતિ (કોશ) પ્રમાણ ઊંચી છે ધાતકીખંડ દ્વીપના બે વિભાગ છે–(૧) પૂર્વાર્ધ અને (૨) પશ્ચિમાર્ધ ઈષ્વાકાર નામના બે પર્વતોએ આ વિભાગ કર્યા છે પૂર્વાર્ધમાં મન્દર પર્વતની ઉત્તર-દક્ષિણ દિશા તરફ ભરત અને ઐરવત ક્ષેત્ર છે તે બન્ને ક્ષેત્રો બહુસમ આદિ વિશેષણોવાળાં છે ધાતકીખંડમાં આવેલાં ભરત અને ઐરવત ક્ષેત્રોનાં વર્ણન જબૂદ્વીપમાં આવેલાં ભરત અને ઐરવત ક્ષેત્રોના જેવાં જ સમજવાં. આ કથનને આધારે એ વાત ગ્રહણ કરવી જોઈએ કે આ બન્ને ક્ષેત્રોના મનુષ્યો છએ પ્રકારના કાળનો (આરાનો) અનુભવ કરે છે જબૂદ્વીપ કરતાં ધાતકીખંડમાં મેરુ ક્ષેત્રો, વર્ષધરો, નદીઓ અને દ્રહ આદિની સંખ્યા બમણી બમણી છે એટલે કે તેમાં બે મેરુ ૧૪ ક્ષેત્રો, ૧૨ વર્ષધર પર્વતો ૨૮

ऐरवते चैव। नवरं कूटशाल्मलिश्चैव धातकीवृक्षश्चैव। देवौ गरुडश्चैव वेणुदेवः, सुदर्शनश्चैव। धातकीखण्डद्वीपपश्चिमार्धे खलु मन्दरस्य पर्वतस्य उत्तरदक्षिणेन द्वे वर्षे प्रज्ञप्ते, बहुसम० यावत् तद्यथा–भरतं चैव ऐरवतं चैव, यावत् षड्विधमपि कालं प्रत्यनुभवन्तो विहरन्ति, तद्यथा–भरते चैव ऐरवते चैव। नवरं कूटशाल्मलिश्चैव धातकीवृक्ष महाश्चैव, देवौ गरुडश्चैव वेणुदेव., प्रियदर्शनश्चैव। धातकीखण्डे खलु द्वीपे द्वे भरते, द्वे ऐरवते, द्वे हैमवते, द्वे हैरण्यवते द्वे हरिवर्षे, द्वे रम्यकवर्षे, द्वौ

वर्ष (क्षेत्र) और बाहर वर्षधर हैं, अट्ठाईस नदी और बारह ह्रद, पूर्वार्ध में एक मेरु, सातक्षेत्र, ६ वर्षधर आदि हैं और पश्चिमार्ध में भी ऐसे ही हैं इसीलिये यहां उनके दो मेरु, चउदहवर्ष आदि रूप से कथन किया गया है इस द्वीप में पर्वत पहिये के आरे के समान हैं और क्षेत्र आरों के बीच में स्थित विवर के समान हैं। यहां कूटशाल्मलि और धातकीवृक्ष हैं। दो देव हैं–गरुडवेणुदेव और सुदर्शन।

धातकी खण्ड के पश्चिमार्ध मे मन्दर पर्वत की उत्तर और दक्षिण-दिशा में क्रमशः दो क्षेत्र हैं ये दोनों बहुसम आदि पूर्वोक्त विशेषणों वाले हैं। इनका भी नाम भरतक्षेत्र और ऐरवत क्षेत्र है। यहां के मनुष्य उत्सर्पिणी और अवसर्पिणी के ६ आरों का अनुभव करते रहते हैं। यहां कूटशाल्मलि और महाधातकीवृक्ष हैं। देव गरुडवेणुदेव और प्रियदर्शन हैं धातकी खण्डद्वीप मे दो भरत, दो ऐरवत, दो हैमवत, दो

નદીઓ અને ૧૨ હ્રદ આદિ આવેલા છે, તેમનાં નામ જંબૂદ્વીપના પ્રકરણમાં બતાવ્યા અનુસાર જ છે ધાતકી ખંડના પૂર્વાર્ધમાં એક મેરુ, ૭ ક્ષેત્રો ૬ વર્ષધર પર્વતો, ૧૪ નદીઓ અને ૬ હ્રદ (દ્રહ) છે, અને પશ્ચિમમાં પણ મેરુ આદિની સંખ્યા એટલી જ છે. તેથી જ ત્યાં બે મેરુ, ૧૪ ક્ષેત્રો આદિ હોવાનું કથન કરવામાં આવ્યુ છે–આ દ્વીપમા પૈડાના આરાના સમાન પર્વતો છે અને આરાની વચ્ચે આવેલા વિવરના (આરા વચ્ચેના ખાલી ભાગ) સમાન ક્ષેત્રો છે, ત્યાં પણ કૂટશાલ્મલિ અને ધાતકીવૃક્ષ છે, તેમાં ગરુડવેણુદેવ અને સુદર્શનદેવ નિવાસ કરે છે

ધાતકીખંડના પશ્ચિમાર્ધમાં મન્દર (મેરુ) પર્વતની ઉત્તર અને દક્ષિણ દિશા તરફ પણ અનુક્રમે ભરતક્ષેત્ર અને ઐરવત ક્ષેત્ર નામનાં બે ક્ષેત્રો આવેલાં છે તે બન્ને ક્ષેત્રો પણ બહુસમ આદિ વિશેષણોવાળાં છે. ત્યાંના મનુષ્યો પણ ઉત્સર્પિણી અને અવસર્પિણી કાળના છએ આરાનો અનુભવ કરે છે ત્યાં કૂટ શાલ્મલિ અને મહાધાતકી વૃક્ષ છે તેમા ગરુડવેણુદેવ અને પ્રિયદર્શન દેવ રહે છે. ધાતકીખંડ દ્વીપમા બે ભરતક્ષેત્ર, બે ઐરવત ક્ષેત્ર, બે

प्रज्ञप्ताः । लवणः खलु समुद्रो द्वियोजनशतसहस्राणि चक्रवालविष्कम्भेण प्रज्ञप्तः । लवणस्य खलु समुद्रस्य वेदिका द्वे गव्यूती ऊर्ध्वमुच्चत्वेन प्रज्ञप्ता । धातकी खण्डे द्वीपे पूर्वार्धे न मन्दरस्य पर्वतस्य उत्तरदक्षिणेन द्वे वर्षे प्रज्ञप्ते बहुसमतुल्ये यावत् तद्यथा-भरतं चैव ऐरवतं चैव । एवं यथा जम्बूद्वीपे तथाऽत्रापि भणितव्यं यावत् द्वयोर्वर्षयोर्मनुजाः षड्विधमपि कालं प्रत्यनुभवन्तो विहरन्ति, तद्यथा-भरते चैव

नहीं हुआ है वेदिका दो गव्यूति (दो कोस) प्रमाण ऊँची है इस द्वीपको चारों ओर से वेष्टित करने वाला लवण समुद्र है जम्बूद्वीप का विष्कम्भ एक लाख योजन प्रमाण है इसलिये लवण समुद्र का विष्कम्भ दो लाख योजन का है लवण समुद्र की वेदिका दो कोसप्रमाण ऊँची है धातकी खण्डद्वीप के दो विभाग हैं एक पूर्वार्ध और दूसरा पश्चिमार्ध इस विभाग को इष्वाकार नाम वाले दो पर्वतों ने किया है पूर्वार्ध में मन्दर पर्वत की उत्तर दक्षिण दिशा में भरत और ऐरवत क्षेत्र हैं ये दोनों क्षेत्र बहुसम आदि विशेषणों वाले है । इस धातकीखण्डद्वीप में इन भरतक्षेत्र और ऐरवत क्षेत्र का वर्णन जम्बूद्वीपान्तर्गत भरतक्षेत्र और ऐरवत के ही तुल्य है । अतः इस तरह के कथन से इन दोनों क्षेत्रों के मनुष्य छहों प्रकार के आर काल का अनुभव करते हैं । तात्पर्य ऐसा है कि जम्बूद्वीप की अपेक्षा धातकीखण्ड में मेरु वर्ष और वर्षधर तथा नदी और ह्रद आदि की संख्या दूनी २ है अर्थात् उसमें दो मेरु, चौदह

(वींटळायेल) नथी तेनी वेदिका बे गव्यूति (कोश) प्रमाण ऊंची छे आ द्वीप चारे तरफ लवणसमुद्रथी घेरायेलो छे तेनो (जंबूद्वीपनो) विष्कंभ (विस्तार) एक लाख योजनप्रमाण छे तेथी लवण समुद्रनो विस्तार बे लाख योजननो छे लवण समुद्रनी वेदिका बे गव्यूति (कोश) प्रमाण ऊंची छे धातकीखंड द्वीपना बे विभाग छे-(१) पूर्वार्ध अने (२) पश्चिमार्ध इष्वाकार नामना बे पर्वतोए आ विभाग कर्या छे पूर्वार्धमां मन्दर पर्वतनी उत्तर-दक्षिण दिशा तरफ भरत अने ऐरवत क्षेत्र छे ते बन्ने क्षेत्रो बहुसम आदि विशेषणोवाळां छे धातकीखंडमां आवेला भरत अने ऐरवत क्षेत्रोनां वर्णन जंबूद्वीपमां आवेलां भरत अने ऐरवत क्षेत्रोना जेवां ज समजवां. आ कथनने आधारे ए वात ग्रहण करवी जोईए के आ बन्ने क्षेत्रोना मनुष्यो छए प्रकारना काळनो (आरानो) अनुभव करे छे जंबूद्वीप करतां धातकीखंडमां मेरु क्षेत्रो, वर्षधरो, नदीओ अने द्रह आदिनी संख्या बमणी बमणी छे एटले के तेमां बे मेरु १४ क्षेत्रो, १२ वर्षधर पर्वतो २८

ऐरवते चैव । नवरं कूटशाल्मलिश्चैव धातकीवृक्षश्चैव । देवौ गरुडश्चैव वेणुदेवः, सुदर्शनश्चैव । धातकीखण्डद्वीपपश्चिमार्धे खलु मन्दरस्य पर्वतस्य उत्तरदक्षिणेन द्वे वर्षे प्रज्ञप्ते, बहुसम० यावत् तद्यथा–भरतं चैव ऐरवतं चैव, यावत् षड्विधमपि कालं प्रत्यनुभवन्तो विहरन्ति, तद्यथा–भरते चैव ऐरवते चैव। नवरं कूटशाल्मलिश्चैव धातकीवृक्ष महाश्चैव, देवौ गरुडश्चैव वेणुदेवः, प्रियदर्शनश्चैव। धातकीखण्डे खलु द्वीपे द्वे भरते, द्वे ऐरवते, द्वे हैमवते, द्वे हैरण्यवते द्वे हरिवर्षे, द्वे रम्यकवर्षे, द्वौ

वर्ष (क्षेत्र) और बारह वर्षधर हैं, अट्ठाईस नदी और बारह ह्रद, पूर्वार्ध में एक मेरु, सातक्षेत्र, ६ वर्षधर आदि हैं और पश्चिमार्ध में भी ऐसे ही हैं इसीलिये यहां उनके दो मेरु, चउद्दहवर्ष आदि रूप से कथन किया गया है इस द्वीप में पर्वत पहिये के आरे के समान हैं और क्षेत्र आरों के बीच में स्थित विवर के समान हैं। यहां कूटशाल्मलि और धातकीवृक्ष हैं। दो देव हैं–गरुडवेणुदेव और सुदर्शन।

धातकी खण्ड के पश्चिमार्ध मे मन्दर पर्वत की उत्तर और दक्षिण-दिशा में क्रमशः दो क्षेत्र हैं ये दोनों बहुसम आदि पूर्वोक्त विशेषणों वाले हैं। इनका भी नाम भरतक्षेत्र और ऐरवत क्षेत्र हैं। यहां के मनुष्य उत्सर्पिणी और अवसर्पिणी के ६ आरों का अनुभव करते रहते हैं। यहां कूटशाल्मलि और महाधातकीवृक्ष हैं। देव गरुडवेणुदेव और प्रियदर्शन हैं धातकी खण्डद्वीप मे दो भरत, दो ऐरवत, दो हैमवत, दो

નદીઓ અને ૧૨ હ્રદ આદિ આવેલા છે, તેમનાં નામ જંબૂદ્વીપના પ્રકરણમાં બતાવ્યા અનુસાર જ છે ધાતકી ખંડના પૂર્વાર્ધમાં એક મેરુ, ૭ ક્ષેત્રો ૬ વર્ષધર પર્વતો, ૧૪ નદીઓ અને ૬ હ્રદ (દ્રહ) છે, અને પશ્ચિમમાં પણ મેરુ આદિની સંખ્યા એટલી જ છે. તેથી જ ત્યાં બે મેરુ, ૧૪ ક્ષેત્રો આદિ હોવાનું કથન કરવામાં આવ્યુ છે–આ દ્વીપમા પૈડાના આરાના સમાન પર્વતો છે અને આરાની વચ્ચે આવેલા વિવરના (આરા વચ્ચેના ખાલી ભાગ) સમાન ક્ષેત્રો છે, ત્યા પણ કૂટશાલ્મલિ અને ધાતકીવૃક્ષ છે, તેમાં ગરુડવેણુદેવ અને સુદર્શનદેવ નિવાસ કરે છે

ધાતકીખંડના પશ્ચિમાર્ધમા મન્દર (મેરુ) પર્વતની ઉત્તર અને દક્ષિણ દિશા તરફ પણ અનુક્રમે ભરતક્ષેત્ર અને ઐરવત ક્ષેત્ર નામનાં બે ક્ષેત્રો આવેલા છે તે બન્ને ક્ષેત્રો પણ બહુસમ આદિ વિશેષણોવાળાં છે. ત્યાંના મનુષ્યો પણ ઉત્સર્પિણી અને અવસર્પિણી કાળના છએ આરાનો અનુભવ કરે છે ત્યાં કૂટ શાલ્મલિ અને મહાધાતકી વૃક્ષ છે તેમા ગરુડવેણુદેવ અને પ્રિયદર્શન દેવ રહે છે. ધાતકીખંડ દ્વીપમા બે ભરતક્ષેત્ર, બે ઐરવત ક્ષેત્ર, બે

पूर्वविदेहौ, द्वौ अपरविदेहौ, द्विके देवकुरवः, द्वौ देवकुरुमहाद्रुमौ, द्वौ देवकुरुमहाद्रुमवासिनौ देवौ । द्विके उत्तरकुरवः, द्वौ उत्तरकुरुमहाद्रुमौ, द्वौ उत्तरकुरुमहाद्रुमवासिनौ देवौ । द्वौ क्षुल्लहिमवन्तौ, द्वौ महाहिमवन्तौ, द्वौ निषधौ, द्वौ नीलवन्तौ, द्वौ रुक्मिणौ द्वौ शिखरिणौ, द्वौ शब्दापातिनौ द्वौ शब्दापातवासिनौ स्वाती देवौ । द्वौ विकटापातिनौ, द्वौ विकटापातवासिनौ प्रभासौ देवौ । द्वौ गन्धापातिनौ द्वौ गन्धापातिवासिनौ अरुणौ देवौ । द्वौ माल्यवत्पर्यायौ, द्वौ माल्यवत्पर्यायवासिनौ पद्मौ देवौ । द्वौ माल्यवन्तौ, द्वौ चित्रकूटौ, द्वौ पद्मकूटौ, द्वौ नलिनकूटौ, द्वौ एकशैलौ, द्वौ त्रिकूटौ, द्वौ वैश्रवणकूटौ द्वौ अञ्जनौ, द्वौ मातञ्जनौ, द्वौ सौमनसौ, द्वौ विद्युत्प्रभौ, द्वे अङ्कावत्यौ, द्वे पद्मावत्यौ द्वौ आशीविषौ, द्वौ सुखावहौ, द्वौ चन्द्रपर्वतौ, द्वौ सूर्यपर्वतौ, द्वौ नागपर्वतौ, द्वौ देवपर्वतौ द्वौ गन्धमादनौ, द्वौ इषुकारपर्वतौ, द्वौ क्षुल्लहिमवत्कूटौ, द्वौ

हैरण्यवत, दो हरिवर्ष दो रम्यकवर्ष, दो पूर्वविदेह, दो अपरविदेह, दो देवकुरु दो देवकुरुमहाद्रुम, दो देवकुरुमहाद्रुमवासीदेव, दो उत्तरकुरु, दो उत्तरकुरुमहाद्रुम, दो उत्तरकुरुमहाद्रुमवासीदेव, दो क्षुल्लकहिमवान्, दो महाहिमवान्, दो निषध, दो नीलवन्त, दो रुक्मी, दो शिखरी, दो शब्दापाती, दो शब्दापातिनिवासीस्वातिदेव, दो विकटापाती, दो विकटापातिवासी प्रभासदेव, दो गन्धापाती, दो गन्धापातीनिवासी अरुणदेव, दो माल्यवत्पर्याय, दो माल्यवत्पर्यायवासी पद्मदेव, दो माल्यवन्त दो चित्रकूट, पद्मकूट, दो नलिनकूट, दो एकशैल, दो त्रिकूट, दो वैश्रवणकूट, दो अञ्जन, दो मातञ्जन, दो सौमनस, दो विद्युत्प्रभ, दो अङ्कवती, दो पद्मावती, दो आशीविष, दो सुखावह, दो चन्द्रपर्वत, दो सूर्यपर्वत, दो नागपर्वत, दो देवपर्वत, दो गन्धमादन, दो इषुकारपर्वत,

હૈમવત, બે હૈરણ્યવત, બે હરિવર્ષ, બે રમ્યકવર્ષ, બે પૂર્વ વિદેહ, બે પશ્ચિમ વિદેહ, બે દેવકુરુ મહાદ્રુમ, બે દેવકુરુ મહા દ્રુમવાસી દેવ, બે લઘુ હિમવાન્, બે મહાહિમવાન્, બે નિષધ, બે નીલવન્ત બે રુક્મી, બે શિખરી, બે શબ્દાપાતી બે શબ્દાપાતીનિવાસી સ્વાતિદેવ, બે વિકટાપાતી બે વિકટાપાતી પ્રભાસ દેવ, બે ગન્ધાપાતી, બે ગન્ધાપાતિનિવાસી અરુણદેવ, બે માલ્યવત્પર્યાય બે માલ્યવત્પર્યાયવાસી પદ્મદેવ, બે માલ્યવન્ત બે ચિત્રકૂટ, બે પદ્મકૂટ, બે નલિનકૂટ, બે એકશૈલ, બે ત્રિકૂટ, બે વૈશ્રવણકૂટ બે અંજન બે માતંજન, બે સૌમનસ બે વિદ્યુત્પ્રભ, બે અંક વતી બે પદ્માવતી બે આશીવિષ બે સુખાવહ, બે ચન્દ્રપર્વત, બે સૂર્યપર્વત, બે નાગપર્વત બે દેવપર્વત, બે ગન્ધમાદન, બે ઇષુકાર પર્વત, બે ક્ષુદ્રહિમ

वैश्रवणकूटौ, द्वौ महाहिमवत्कूटौ, द्वौ वैडूर्यकूटौ, द्वौ निषधकूटौ, द्वौ रुचककूटौ द्वौ नीलवत्कूटौ, द्वौ उपदर्शनकूटौ, द्वौ रुक्मिकूटौ, द्वौ मणिकञ्चनकूटौ, द्वौ शिखरिकूटौ, द्वौ तिगिच्छिकूटौ, द्वौ पद्महृदौ, द्वे पद्महृदवासिन्यौ श्री देव्यौ, द्वौ महापद्महृदौ, द्वे महापद्महृदवासिन्यौ ह्री देव्यौ । एवं यावत् द्वौ पुण्डरीक-हृदौ, द्वे पुण्डरीकहृदवासिन्यौ, लक्ष्मीदेव्यौ, द्वौ गङ्गाप्रपातहृदौ, यावत् द्वौ रक्तवत्प्रपातहृदौ । द्वे रोहिते यावत् द्वे रूप्यकूले, द्वे ग्राहावत्यौ, द्वे पङ्कवत्यौ, द्वे तप्तजले, द्वे मत्तजले, द्वे उन्मत्तजले, द्वे क्षीरोदे, द्वे सिंहस्रोतस्यौ, द्वे अन्तर्वाहिन्यौ द्वे ऊर्मिमालिन्यौ, द्वे फेनमालिन्यौ द्वे गम्भीरमालिन्यौ, द्वे कच्छे१, द्वे सुकच्छे२, द्वे महाकच्छे ३, द्वे कच्छकावत्यौ४, द्वे आवर्त्ते५, द्वे मंगलावर्त्ते६, द्वे पुष्कले७, द्वे पुष्कलावत्यौ८, द्वे वत्से९, द्वे सुवत्से१०, द्वे महावत्से११, द्वे वत्सकावत्यौ१२, द्वे रम्ये १३, द्वे

दो क्षुल्लहिमवत्कूट, दो वैश्रवणकूट, दो महाहिमवत्कूट, दो वैडूर्यकूट, दो निषधकूट, दो रुचककूट, दो नीलवत्कूट, दो उपदर्शनकूट, दो रुक्मिकूट, दो मणि कंचनकूट, दो शिखरिकूट, दो तिगिच्छकूट, दो पद्महृद, दो पद्महृदवासिनी श्री देवियां, दो महापद्महृद, दो महापद्महृदवासिनी ह्री देवियां इसी तरह से यावत् दो पुण्डरीकहृद, दो पुण्डरीकहृदनिवासिनी लक्ष्मी देवियां, दो गंगाप्रपातहृद, यावत् दो रक्तवत्प्रपातहृद, दो रोहितनदियां, यावत् दो रूप्यकूला, नदियां, दो ग्राहावती, दो पङ्कवती, दो तप्तजला, दो मत्तजला, दो उन्मत्तजला, दो क्षीरोदा, दो सिंहस्रोतसी, दो अंतवाहिनी, दो उर्मिमालिनी, दो फेनमालिनी, दो गंभीरमालिनी, दो कच्छा, दो सुकच्छा, दो महाकच्छा, दो कच्छकावती, दो आवर्त्ता, दो मङ्गलावर्त्ता, दो पुष्कला, दो पुष्कलावती, दो वत्सा, दो सुवत्सा, दो महावत्सा, दो वत्सकावती, दो रम्य दो रम्यक दो रमणीय दो मंगलवती, दो पद्मा, दो सुपद्मा, दो महापद्मा, दो पद्मकावती, दो शंखा, दो नलिना,

---

વત્કૂટ, બે વૈશ્રવણકૂટ, બે મહાહિમવત્કૂટ, બે વૈડૂર્યકૂટ, બે નિષધકૂટ, બે રુચક કૂટ, બે નીલવત્કૂટ, બે ઉપદર્શનકૂટ, બે રુકમીકૂટ, બે મણિકંચનકૂટ, બે શિખરીકૂટ, બે તિગિચ્છકૂટ, બે પદ્મહૃદ, બે પદ્મહૃદવાસિની શ્રીદેવીઓ, બે મહાપદ્મહૃદ, બે મહાપદ્મહૃદવાસિની હ્રીદેવીઓ, બે પુંડરીકહૃદ, બે પુંડરીક હૃદનિવાસિની લક્ષ્મીદેવીઓ, બે ગંગાપ્રપાતહૃદ, બે રક્તાપાતહૃદ, બે રોહિત નદીઓ, યાવત્ બે રુપ્યકૂલા નદીઓ, બે ગ્રાહાવતી બે પદ્મવતી, બે તપ્તજલા, બે મત્તજલા, બે ઉન્મત્તજલા, બે ક્ષીરોદા, બે સિંહસ્રોતસી, બે અંતવાહિની બે ઉર્મિમાલિની, બે ફેનમાલિની, બે ગંભીરમાલિની, બે કચ્છા, બે સુકચ્છા, બે મહાકચ્છા, બે કચ્છકાવતી, બે આવર્તા, બે મંગલાવર્તા, બે પુષ્કલાવતી, બે વત્સા બે સુવત્સા, બે મહાવત્સા, બે વત્સકાવતી બે રમ્ય, બે રમ્યક, બે

रम्यके१४, द्वे रमणीये १५, द्वे मङ्गलावत्यौ१६, द्वे पद्मे१७, द्वे सुपद्मे १८, द्वे महापद्मे१९, द्वे पद्मकावत्यौ२०, द्वे शङ्खे२१, द्वे नलिने२२, द्वे कुमुदे२३, द्वे सलिलावत्यौ२४, द्वे वप्रे२५, द्वे सुवप्रे२६, द्वे महावप्रे २७, द्वे वप्रकावत्यौ २८, द्वे वल्गू२९, द्वे सुवल्गू ३० द्वे गन्धिले३१, द्वे गन्धिलावत्यौ ३२, द्वे क्षेमे १, द्वे क्षेमपुर्यौ२, द्वे रिष्टे३, द्वे रिष्टपुर्यौ४, द्वे खड्ग्यौ५, द्वे मंजूषे६, द्वे औषध्यौ७, द्वे पुण्डरिकिण्यौ ८, द्वे सुसीमे ९, द्वे कुण्डले १०, द्वे अपराजिते ११, द्वे प्रभङ्करे१२, द्वे अङ्कावत्यौ१३, द्वे पद्मावत्यौ१४, द्वे शुभे१५, द्वे रत्नसञ्चये१६ द्वे अश्वपुरे१७, द्वे सिंहपुरे१८, द्वे महापुरे१९, द्वे विजयपुरे२०, द्वे अपराजिते२१ द्वे अपरे२२, द्वे अशोके२३, द्वे विगतशोके२४, द्वे विजये२५, द्वे वैजयन्त्यौ२६, द्वे जयन्त्यौ२७, द्वे अपराजिते२८, द्वे चक्रपुरे२९, द्वे खड्गपुरे३०, द्वे अवध्ये३१ द्वे अयोध्ये ३२, द्वे भद्रशालवने, द्वे नन्दनवने, द्वे सौमनसवने, द्वे पण्डकवने, द्वे पाण्डुकम्बलशिले, द्वे अतिपाण्डुकम्बलशिले, द्वे रक्तकम्बलशिले, द्वे अतिरक्तकम्बलशिले,

---

दो कुमुदा, दो सलिलावती, दो वप्रा, दो सुवप्रा, दो महावप्रा, दो वप्रकावती, दो वल्गु दो सुवल्गु दो गंधिला, दो गंधिलावती, दो क्षेमा, दो क्षेमपुरी, दो रिष्टा, दो रिष्टापुरी, दो खड्गी, दो मजूषा, दो औषधि, दो पुण्डरीकिणी, दो सुसीमा, दो कुण्डला, दो अपराजिता, दो प्रभङ्करा, दो अङ्कवती, दो पद्मावती, दो शुभा दो रत्नसञ्चया दो अश्वपुरा, दो सिंह पुरा, दो महापुरा, दो विजयपुरा, दो अपराजिता, दो अपरा, दो अशोका, दो विगतशोका, दो विजया, दो वैजयन्ती, दो जयन्ती, दो अपराजिता दो चक्रपुरा, दो खड्गपुरा, दो अवध्या, दो अयोध्या, दो भद्रशालवन, दो नन्दनवन दो सौमनसवन, दो पण्डकवन, दो पाण्डुकम्बलशिला, दो अतिपाण्डुकम्बलशिला, दो रक्तकम्बलशिला, दो अतिरक्तकम्बलशिला,

---

રમણીય બે મંગલાવતી, બે પદ્મા, બે સુપદ્મા, બે મહાપદ્મા, બે પદ્મકાવતી, બે શંખા, બે નલિના બે કુમુદા, બે સલિલાવતી, બે વપ્રા, બે સુવપ્રા, બે મહાવપ્રા, બે વપ્રકાવતી બે વલ્ગુ બે સુવલ્ગુ બે ગંધિલા, બે ગંધિલાવતી, બે ક્ષેમા બે ક્ષેમપુરી, બે રિષ્ટા, બે રિષ્ટપુરી, બે ખડ્ગી બે મંજૂષા, બે ઔષધિ બે પુંડરીકિણી, બે સુસીમા બે કુંડલા, બે અપરાજિતા, બે પ્રભંકરા, બે અંકાવતી, બે પદ્માવતી, બે શુભા, બે રત્નસંચયા, બે અશ્વપુરા બે સિંહ પુરા બે મહાપુરા, બે વિજયપુરા બે અપરાજિતા બે અપરા બે અશોકા, બે વિગતશોકા બે વિજયા, બે વૈજયન્તી બે જયન્તી, બે અપરાજિતા, બે ચક્રપુરા બે ખડ્ગપુરા બે અવધ્યા, બે અયોધ્યા બે ભદ્રશાલવન બે નન્દનવન,

द्वे मन्दरे, द्वे मन्दरचूलिके। धातकीखण्डस्य खलु द्वीपस्य वेदिका द्वे गव्यूती ऊर्ध्वमुच्चत्वेन प्रज्ञप्ता।

कालोदस्य खलु समुद्रस्य वेदिका द्वे गव्यूती ऊर्ध्वमुच्चत्वेन प्रज्ञप्ता। पुष्करवरद्वीपार्धपूर्वार्धे खलु मन्दरस्य पर्वतस्य उत्तरदक्षिणेन द्वे वर्षे प्रज्ञप्ते बहुसमतुल्ये यावत् तद्यथा भरतं चैव ऐरवतं चैव, तथैव यावत् द्विके कुरवः प्रज्ञप्तास्तद्यथा देवकुरवश्चैव उत्तरकुरवश्चैव। तत्र खलु द्वौ महाति महालयौ महाद्रुमौ प्रज्ञप्तौ तद्यथा कूटशाल्मलिश्चैव, पद्मवृक्षश्चैव। देवौ गरुडश्चैव वेणुदेवःपद्मश्चैव, यावत् षड्विधमपि कालं प्रत्यनुभवन्तो विहरन्ति। पुष्करवरद्वीपार्धपश्चिमार्द्धे खलु मन्दरस्य

दो मन्दर, दो मन्दरचूलिका इस प्रकार से ये सब दो दो हैं। धातकीखण्डद्वीप की वेदिका दो गव्यूतिप्रमाण ऊंची है।

कालोद समुद्र की वेदिका दो गव्यूतिप्रमाण ऊंची है। पुष्करवरद्वीपार्ध के पूर्वार्ध में मन्दर पर्वत की उत्तर दक्षिण दिशा में दो वर्ष कहे गये हैं। ये दोनों वर्ष बहुसम आदि पूर्वोक्त विशेषणोंवाले हैं। ये दो क्षेत्र हैं भरत और ऐरवत इसी तरह से यहां यावत् दो कुरु कहे गये हैं दो देवकुरु और दो उत्तरकुरु दो बहुत बड़े महाद्रुम हैं–कूटशाल्मलि और पद्मवृक्ष गरुडवेणुदेव और पद्मदेव ये दो देव हैं यावत् यहां छहों प्रकार के काल का अनुभव होता है अर्थात् यहां जो भरतक्षेत्र और ऐरवत क्षेत्र हैं उनके निवासी छहों प्रकार के काल का अनुभव करते हैं। इसी तरह से पुष्करवरद्वीपार्ध के पश्चिमार्ध में भी मन्दरपर्वत की उत्तरदक्षि-

બે સૌમનસ્યવન, બે પંડકવન, બે પાંડુકમ્બલશિલા, બે અતિપાંડુકમ્બલશિલા, બે રક્તકંબલશિલા, બે અતિરક્ત કંબલશિલા, બે મન્દર અને બે મન્દર ચૂલિકા છે આ રીતે અહીં તે બધાં બબ્બેના હિસાબે છે ધાતકીખંડ દ્વીપની વેદિકા બે ગવ્યૂતિ (કોશ) પ્રમાણુ ઊંચી છે

કાલોદ સમુદ્રની વેદિકા બે ગવ્યૂતિપ્રમાણુ ઊંચી છે. પુષ્કરવર દ્વીપાર્ધના પૂર્વાર્ધમાં મન્દર પર્વતની ઉત્તર–દક્ષિણુ દિશામાં બે વર્ષ (ક્ષેત્ર) આવેલા છે તે બન્ને બહુસમ આદિ પૂર્વોક્ત વિશેષણોવાળાં છે તે બન્ને ક્ષેત્રોનાં નામ પણુ ભરત અને ઐરવત છે એજ પ્રમાણે તે પુષ્કરવર દ્વીપાર્ધમાં પણુ બે કુરુ પર્યન્તના પૂર્વોક્ત ક્ષેત્રો આવેલા છે, એટલે કે ત્યાં બે દેવકુરુ અને બે ઉત્તરકુરુ પર્યન્તના ક્ષેત્રો છે ત્યાં કૂટશાલ્મલિ અને પદ્મવૃક્ષ નામના બે મહાદ્રુમ (મહાવૃક્ષ) છે તે મહાદ્રુમોમા ગરુડ વેણુદેવ અને પદ્મદેવ નામના બે દેવો નિવાસ કરે છે ત્યાં જે ભરતક્ષેત્ર અને ઐરવત ક્ષેત્ર આવેલા છે, તેના મનુષ્યો છએ પ્રકારના કાળનો અનુભવ કરે છે એજ પ્રમાણે પુષ્કરવર દ્વીપાર્ધના પશ્ચિમાર્ધમાં પણુ મન્દર પર્વતની ઉત્તર–દક્ષિણુ દિશામા બે વર્ષ (ક્ષેત્રો)

पर्वतस्य उत्तरदक्षिणेन द्वे वर्षे प्रज्ञप्ते तद्यथा-तथैव, नानात्वम् कूटशाल्मलिश्चैव महापद्मवृक्षश्चैव देवौ गरुडश्चैव, वेणुदेवः पुण्डरीकश्चैव। पुष्करवरद्वीपार्द्धे खलु द्वीपे द्वे भरते द्वे ऐरवते यावत् द्वौ मन्दरौ, द्वे मन्दरचूलिके। पुष्करवरस्य खलु द्वीपस्य वेदिका द्वे गव्यूती ऊर्ध्वमुच्चत्वेन प्रज्ञप्ता। सर्वेषामपि खलु द्वीपसमुद्राणां वेदिका। द्वे द्वे गव्यूती ऊर्ध्वमुच्चत्वेन प्रज्ञप्ता ॥ सू० ३५ ॥

टीका—' जम्बुद्दीवस्स ' इत्यादि, सुगमम्।

नवरं-वेदिका-पद्मवरवेदिका, सा च-पञ्चशतधनुर्विस्तीर्णा जम्बूद्वीपजगत्या बहुमध्यदेशभागं परिक्षेपेण जगतिपरिमिता, उभयतो वनखण्डपरिवृता गवाक्ष

पादिशा में दो वर्ष कहे गये हैं ये भी बहुसम आदि पूर्वोक्त विशेषणों वाले हैं यहां कूटशाल्मलि और महापद्मवृक्ष हैं देव-गरुडवेणुदेव और पुण्डरीक हैं पुष्करवरद्वीपार्ध द्वीप में दो भरत है, दो ऐरवतक्षेत्र है यावत् दो मन्दर है, दो मन्दरचूलिकाएँ हैं पुष्करवर द्वीप की वेदिका दो गव्यूति प्रमाण ऊँची है। जितने भी द्वीप और समुद्र हैं उन सब की वेदिका ऊँचाई में दो दो गव्यूतिप्रमाण है।

टीकार्थ—यह ३५ वां सूत्र यद्यपि सुगम है फिर भी जो विशेषता है वह इस प्रकार से है-वेदिका से यहां पद्मवर वेदिका गृहीत हुई है यह पद्मवरवेदिका पांचसौ धनुषविस्तीर्ण-चौडाई वाली है जम्बूद्वीप की जगती के बहुमध्यदेशभाग में यह स्थित है अतः परिक्षेप की अपेक्षा

આવેલાં છે તે બન્ને ક્ષેત્રો પણ બહુસમ આદિ પૂર્વોક્ત વિશેષણોવાળાં છે ત્યાં પણ કૂટશાલ્મલિ અને મહાપદ્મવૃક્ષ છે અને તેમાં નિવાસ કરનારા ગરુડ વેણુદેવ અને પુંડરીક નામના દેવો છે તે ક્ષેત્રોનાં નામ પણ ભરત અને ઐરવત ક્ષેત્ર જ છે પુષ્કરવર દ્વીપાર્ધમાં આ રીતે બે ભરતક્ષેત્ર બે ઐરવત ક્ષેત્ર આદિ છે અહીં આદિ પદ દ્વારા એ પ્રકટ કરવામાં આવ્યું છે કે ત્યાં "બે મન્દર છે અને બે મન્દરચૂલિકા" પર્યન્તનું કથન ઉપયુક્ત બધું છે પુષ્કરવર દ્વીપની વેદિકા બે ગવ્યૂતિ (કોશ) પ્રમાણ ઊંચી છે જેટલાં દ્વીપો અને સમુદ્રો છે તે બધાની વેદિકાની ઊંચાઈ બબ્બે ગવ્યૂતિપ્રમાણ સમજવી.

ટીકાર્થ—આ ૩૫ મું સૂત્ર જો કે સુગમ છે, તો પણ તેમાં જે વિશેષતા છે તે આ પ્રમાણે છે-વેદિકા પદના પ્રયોગ દ્વારા અહીં પદ્મવર વેદિકા ગૃહીત કરવામાં આવેલ છે તે પદ્મવર વેદિકા ૫૦૦ ધનુષના વિસ્તારવાળી (પહોળાઈવાળી) છે

જમ્બૂદ્વીપની જગતીના (કોટના) બહુમધ્ય દેશભાગમાં તે આવેલી છે તેથી પરિક્ષેપ (પરિધિ) ની અપેક્ષાએ તે જગતીપ્રમાણ છે તેની બન્ને તરફ

हेमकिङ्किणी घण्टापरिमण्डिता देवानामासनशयनादिविविधक्रीडास्थानभूता द्वि गव्यूतोच्छ्रिताऽस्ति। जम्बूद्वीपानन्तरं लवणसमुद्रस्य सद्भावात्तद्वक्तव्यतामाह 'लवणेणं' इत्यादि कण्ठ्यम्। चक्रवालविष्कम्भेण द्विलक्षयोजनपरिमितस्य लवणसमुद्रस्य वेदिकाऽप्येवमेव। लवणसमुद्रवक्तव्यतानन्तरं धातकीखण्ड-वक्तव्यतामाह--'धायइसंडे' इत्यादि। वेदिकासूत्रपर्यवसानं सर्वं सुगमम्। नवरम्-धातकीनां-वृक्षविशेषाणां खण्डो-वनसमूहो यस्मिन् स धातकीखण्डः, एत-न्नामा द्विपः। धातकीखण्डप्रकरणमपि वलयाकृति धातकीखण्डमालिख्य हिम-वदादि वर्षधरान् पर्वतान् जम्बूद्वीपानुसारेणैवोभयपार्श्वतः पूर्वापरविभागेन भरत हैमवतादि वर्षाणि च व्यवस्थाप्य पूर्वापरदिशोर्वलयविष्कम्भमध्ये मेरुंच कल्प-

यह जगती प्रमाण है इसके दोनों तरफ वनषण्ड है। गवाक्षों, हेम की क्षुद्रघंटिकाओं एव घंटाओं से यह परिमण्डित है, देवों की आसनशयन आदिरूप विविध प्रकार की क्रीडाओं का यह स्थानरूप है. दो कोश की इसकी ऊँचाई है जम्बूद्वीप को घेरे हुए लवण समुद्र है अतः अब सूत्र-कार इसके संबंध में वक्तव्यता का कथन करते हैं-चक्रवालविष्कंभ की अपेक्षा लवणसमुद्र जम्बूद्वीप के विस्तार से दूना है अर्थात् लवणसमुद्र का विस्तार दो लाख योजन का है इसकी वेदिका भी जम्बूद्वीप की वेदिका के जैसा ही विस्तारवाली है धातकी खण्ड में अनेक प्रकार के धातकी नामके वृक्षविशेषों का समुदाय है अतः इसका नाम धातकी-खण्ड है धातकी खण्ड नामका वह द्वीप है यह द्वीप भी वलयाकृति है हिमवदादि वर्षधरपर्वतों को जम्बूद्वीप के अनुसार ही दोनों ओर पूर्व से

વનષંડ (વનખંડ) છે ગવાક્ષો, સુવર્ણની નાની નાની ઘંટડીઓ, અને ઘંટોથી તે પરિમંડિત (વીંટળાયેલી) છે. દેવોના આસન, શયન આદિરૂપ વિવિધ પ્રકારની ક્રીડાઓ માટે તે સ્થાનરૂપ છે, તેની ઊંચાઈ બે કોશની છે જંબૂદ્વીપને વીંટળાયેલો લવણસમુદ્ર છે તેથી હવે સૂત્રકાર તે લવણસમુદ્રની વક્તવ્યતાનુ કથન કરે છે, ચક્રવાલ વિષ્કંભની અપેક્ષાએ લવણસમુદ્રનો વિસ્તાર જંબૂદ્વીપના વિસ્તાર કરતા બમણો છે, એટલે કે લવણસમુદ્રનો વિસ્તાર બે લાખ યોજનનો છે તેની વેદિકા પણ જંબૂદ્વીપની વેદિકાના જેટલા જ વિસ્તારવાળી છે ધાતકીખંડમા અનેક પ્રકારના ધાતકી નામના વૃક્ષોનો સમુદાય છે, તેથી તેનુ નામ ધાતકીખંડ પડયુ છે. ધાતકીખંડ નામના તે દ્વીપનો આકાર વલયના જેવો છે, તે ધાતકીખંડ દ્વીપમા હિમવન્ આદિ વર્ષધર પર્વતો જંબૂદ્વીપની જેમ જ પૂર્વથી પશ્ચિમ તરફ આવેલા છે. ત્યાં પણ ભરત આદિ

विस्ताऽयमोद्धव्यम् । अनेनैव क्रमेण पुष्करवरद्वीपार्द्धप्रकरणमपीति । धातकीखण्डस्य पूर्वापरार्धताम लवणसमुद्रवेदिकातो दक्षिणत उत्तरतश्च धातकीखण्डवेदिकां यावद्दत्ताभ्यामिषुकारपर्वताभ्यां धातकीखण्डस्य विभक्तत्वात् विज्ञेया। 'एवं जहा जंबुद्दीवे तहा' इत्यादि। एवं धातकीखण्डपूर्वार्धपश्चिमार्धप्रकरणद्वयमपि प्रत्येकमेकोनसप्ततिसूत्र यावत् जम्बूद्वीपप्रकरणवद्वक्तव्यम्।

पश्चिम तक प्रकट किया गया है भरत आदि क्षेत्रों की रचना की गई है पूर्वदिशा और पश्चिमदिशा की ओर मेरु की रचना की गई है तात्पर्य इसका यह है कि जम्बूद्वीप की रचना के अनुसार ही धातकी खण्डद्वीप में हिमवदादि पर्वतों की और भरत आदि क्षेत्रों की रचना हुई है यहां दो मेरु हैं इसलिये एक एक मेरु सम्बंधी सात २ क्षेत्र आदि की रचना होने से यहां इन सब की पूर्वार्ध और अपरार्ध को लेकर दूनी रचना प्रकट की गई है धातकी खण्ड द्वीप के समान पुष्करार्ध में भी मेरु, वर्ष, वर्षधर नदी आदिकों की संख्या दूनी है क्यों कि इस द्वीप के भी इष्वाकार पर्वतों के निमित्त पूर्वार्ध और पश्चिमार्ध ऐसे दो विभाग कहे गये हैं इस तरह ढाई द्वीप में पांच मेरु पैंतीसवर्ष, तीस वर्षधर, सत्तर महानदियां और तीस हृद हैं।

जम्बूद्वीप में विदेहक्षेत्र का विस्तार ३३६८४–४/१० योजन है और मध्य में लम्बाई एक योजन है ठीक बीच में मेरु पर्वत है इसके पास से दो गजदन्त पर्वत निकलकर निषध में आ मिले हैं। इसी प्रकार उत्तर

ક્ષેત્રોની રચના પ્રકટ કરવામાં આવી છે આ કથનનો ભાવાર્થ એ છે કે જંબૂદ્વીપની જેમ જ ધાતકીખંડ દ્વીપમાં પણ હિમવન્ આદિ પર્વતોની, અને ભરતાદિ ક્ષેત્રોની રચના સમજવી જોઈએ ત્યાં બે મેરુ છે, તેથી એક એક મેરુ સંબંધી સાત સાત ક્ષેત્ર આદિની રચના હોવાથી ત્યાં સૌની પૂર્વાર્ધ અને પશ્ચિમાર્ધની અપેક્ષાએ બમણી રચના પ્રકટ કરવામાં આવેલ છે ધાતકીખંડ દ્વીપની જેમ પુષ્કરાર્ધમાં પણ મેરુ, ક્ષેત્રો વર્ષધરો અને નદીઓ આદિની સંખ્યા બમણી બતાવવામાં આવી છે કારણ કે–આ દ્વીપમાં પણ ઇષ્વાકાર પ્રવતોને લીધે પૂર્વાધ અને પશ્ચિમાર્ધ એવા બે વિભાગ થઈ જાય છે. આ રીતે અઢી દ્વીપમાં પાંચ મેરુ ૩૫ ક્ષેત્રો, ત્રીસ વર્ષધર પર્વતો, ૧૭ મહા નદીઓ અને ૩૦ હ્રદ આવેલાં છે

જંબૂદ્વીપમાં આવેલા વિદેહ ક્ષેત્રનો વિસ્તાર ૩૩૬૮૪–૪/૧૯ તેત્રીસ હજાર છસો ચોરાશી હજાર ચાર ઓગણીશાંશ યોજનનો છે અને મધ્યમાં લંબાઈ એક યોજનની છે તેમાં વચ્ચે બરાબર મેરુ પર્વત છે તેની પાસેથી બે ગજદન્ત પર્વત નીકળીને નિષધમાં જઈ મળ્યા છે એજ

में दो गजदन्त पर्वत नील में जा मिले हैं। इससे विदेहक्षेत्र चार विभागों में विभक्त हो जाता है दक्षिणदिशा में गजदंतों के मध्य का क्षेत्र देव-कुरु और उत्तरदिशा में गजदन्तों के मध्य का क्षेत्र उत्तरकुरु कहाते हैं। तथा पूर्वदिशा का सब क्षेत्र पूर्वविदेह और पश्चिमदिशा का सब क्षेत्र पश्चिमविदेह कहा गया है इससे देवकुरु और उत्तरकुरु में उत्त-मभोगभूमि है पूर्वविदेह और पश्चिमविदेह में कर्मभूमि है। इन दोनों अन्तिम भागों के सीता और सीतोदा नदियों के कारण दो दो भाग हो जाते हैं इस प्रकार कुल चार भाग होते हैं जो चारों भाग नदी और पर्वतों के कारण आठ-आठ भागों में बटे हुए है जिससे जम्बूद्वीप के महाविजय क्षेत्र में कुल (३२) बत्तीस विजय हो जाते हैं। इनमें भरत और ऐरवत के समान आर्यखण्ड और म्लेच्छखण्डस्थित हैं, पदवीधर महापुरुष, व तिर्थंकर आर्यखण्डों में ही उत्पन्न होते हैं जम्बूद्वीप में कुल ३४ और ढाई द्वीप में एक सौ सत्तर आर्यखण्ड हैं एक साथ होने वाले कुल तीर्थंकरों की संख्या एकसौ सत्तर कही गई है वह इन्हीं क्षेत्रों की अपेक्षा से कही गई है विदेहों में जो इस समय सीमंधर आदि बीस तीर्थंकर कहे जाते हैं सो वे ढाई द्वीप के बीस विजय की अपेक्षा से कहे

પ્રમાણે ઉત્તરમાં બે ગજદન્ત પર્વત નીલ પર્વતમાં જઇ મળ્યા છે, તેને લીધે વિદેહક્ષેત્ર ચાર વિભાગોમાં વહેંચાઇ ગયુ છે. દક્ષિણ દિશામા ગજદન્તોની મધ્યનું ક્ષેત્ર દેવકુરુ નામે ઓળખાય છે અને ઉત્તર દિશામાં ગજદન્તોની મધ્યનુ ક્ષેત્ર ઉત્તરકુરુ નામે ઓળખાય છે, તથા પૂર્વ દિશાનું આખુ ક્ષેત્ર પશ્ચિમ વિદેહને નામે ઓળખાય છે. તેને લીધે દેવકુરુ અને ઉત્તરકુરુમાં ઉત્તમ ભોગભૂમિ છે અને પૂર્વવિદેહ અને પશ્ચિમ વિદેહમાં કર્મભૂમિ છે. આ બન્ને અન્તિમ ભાગોને સીતા અને સીતોદા નદીઓ બબ્બે વિભાગોમાં વિભકત કરે છે, આ રીતે કુલ ચાર ભાગ પડે છે. તે ચારે ભાગો નદી અને પર્વતોને કારણે આઠ આઠ ભાગોમા વિભકત થયેલા છે, તે કારણે જંબૂદ્વીપમાં કુલ ૩૨ મહાવિદેહ થઇ જાય છે. તેમાં ભરતખંડ અને ઐરવત ક્ષેત્રના જેવાં આર્યખંડ અને મ્લેચ્છખંડો આવેલા છે પદવીધર મહાપુરુષો અને તિર્થંકરો આર્યખંડોમા જ ઉત્પન્ન થાય છે જંબૂદ્વીપમાં કુલ ૩૪ અને અઢી દ્વીપમાં કુલ ૧૧૭ આર્યખંડ છે એક સાથે ઉત્પન્ન થનારા તીર્થંકરોની જે ૧૧૭ ની સંખ્યા કહી છે તે આ ક્ષેત્રોની અપેક્ષાએ જ કહેવામાં આવેલ છે વિદેહોમાં જે આ સમયે સીમંધર આદિ ૨૦ તીર્થંકરો કહેવામાં આવે છે તે અઢી

व्याख्यापि तथैव । कियद्दूरम् ? इत्याह–' जाव दोसु वासेसु मणुया ' इत्यादि, तदग्रे धातकीखण्डादौ चन्द्रादि ज्योतिषां बहुत्वान्न साम्यम् । अत्र तु द्विस्थानकत्वाद् द्विकस्यैव ग्रहणम् । शेषं सुगमम् । विशेषमाह–' नवरं ' इत्यादि । कूटशाल्मलिः, धातकी वृक्षश्चेति द्वौ वृक्षौ स्तः । तत्र–गरुड –सुपर्णजातीयो वेणुदेवः सुदर्शनश्चेति द्वौ देवौ परिवसतः । 'धायइसंडदीवपच्चत्थिमद्धेणं ' इत्यादि, पश्चिमार्द्ध प्रकरणं पूर्वार्धवद् विज्ञेयं यावत्–'छव्विहं पि कालं ' इत्यादि । विशेषमाह–'णवरं ' इत्यादि, नवरं–विशेषस्त्वयम्–कूटशाल्मलि', महाधातकीवृक्ष , एतौ द्वौ वृक्षौ।

गये जानना चाहिये–क्यों कि पूर्वोक्त विभागानुसार जम्बूद्वीप के चार और ढाईद्वीप के बीस विजय होते हैं । धातकीखण्डादिक में चन्द्रादि ज्योतिष्कों की बहुता होने से इनमें समानता नहीं है। यहां द्विस्थानक का प्रकरण है इसलिये दो ही का ही ग्रहण हुआ है। बाकी का पाठ सुगम है। यहां कूटशाल्मली और धातकीवृक्ष ये दो वृक्ष हैं । गरुडशब्द से सुपर्णजाति के वेणुदेव और सुदर्शन देव ये दो देव गृहीत हुए हैं ये दो देव यहां रहते हैं । पश्चिमार्द्ध का प्रकरण पूर्वार्धप्रकरण की तरह से ही है ऐसा जानना चाहिये कूटशाल्मलि और महाधातकी वृक्ष ये दो वृक्ष यहां पर हैं सुपर्णजातीय वेणुदेव और प्रियदर्शनदेव ये दो देव यहां रहते हैं । धातकीखण्डमें दो भरत आदि का वर्णन सुगम है । यावत् यहां दो अपरविदेह हैं । देवकुरु में दो कूट शाल्मली वृक्ष हैं । दो इन वृक्षों पर रहनेवाले वेणुदेव हैं । उत्तरकुरुमें

દ્વીપના ૨૦ મહાવિદેહોની અપેક્ષાએ કહેવામાં આવે છે એમ સમજવું કારણ કે પૂર્વોક્ત વિભાગ અનુસાર જંબૂદ્વીપના ચાર અને અઢી દ્વીપના વીસ મહાવિદેહ થાય છે ધાતકી ખંડાદિકોમાં જ્યોતિષિકોની વિપુલતા હોવાથી તેમની વચ્ચે સમાનતા નથી અહીં દ્વિસ્થાનકનો અધિકાર ચાલતો હોવાથી અહીં બેને જ ગ્રહણ કરાયા છે બાકીનો પાઠ સરળ છે અહીં કૂટશાલ્મલી અને ધાતકીવૃક્ષ નામના બે વૃક્ષ છે ગરુડ શબ્દના પ્રયોગ દ્વારા સુપર્ણ જાતિના વેણુદેવ અને સુદર્શનદેવ, એ બે દેવ ગૃહીત થયા છે તે બન્ને દેવો ત્યાં નિવાસ કરે છે પશ્ચિમાર્ધનું વર્ણન પૂર્વાર્ધના વર્ણન અનુસાર જ સમજવું ત્યાં કૂટશાલ્મલી અને મહાધાતકી વૃક્ષ નામનાં બે વૃક્ષો છે. સુપર્ણ જાતિના વેણુદેવ અને પ્રિયદર્શનદેવ ત્યાં નિવાસ કરે છે ધાતકીખંડમાં આવેલા બે ભરત આદિનું વર્ણન સુગમ છે ત્યાં બે અપરવિદેહ પર્યન્તના ક્ષેત્રો છે દેવકુરુમાં બે કૂટશાલ્મલી વૃક્ષો છે અને તે વૃક્ષોપર નિવાસ કરનારા બે વેણુદેવ

तत्र-सुवर्णजातीयौ वेणुदेव-प्रियदर्शनौ द्वौ देवौ परिवसतः। 'धायइ संडेणं' इत्यादि, धातकी खण्डस्य भरतादि क्षेत्रयुगलवर्णन सुगमं यावत् द्वौ अपरविदेहौ इति। 'दो देवकुराओ' इत्यादि, देवकुरुषु द्वौ कूटशाल्मलिवृक्षौ, द्वौ तद्वासिनौ देवौ वेणुदेवौ उत्तरकुरुषु धातकी महा धातकी नामानौ द्वौ वृक्षौ तद्वासिनौ सुदर्शन-प्रियदर्शनौ द्वौ देवौ। 'दो चुल्लहिमवंता' इत्यादि, क्षुल्लहिमवदादीनि शिखरिपर्यन्तानि पद्धर्षधरपर्वतयुगलानि। वृत्तवैताढ्य-पर्वतचतुष्टययुगलप्ररूपणामाह--'दो सद्दावाई' इत्यादि। द्वौ शब्दापातिनौ वृत्तवैताढ्यपर्वतौ, तन्निवासिनौ स्वातिनामानौ द्वौ देवौ १, एवं विकटापातिनौ, तन्निवासिनौ, प्रभासाख्यौ देवौ २, गन्धापातिनौ, तन्निवासिनौ अरुणाभिधानौ

धातकी और महाधातकी नाम के दो वृक्ष हैं। इन पर सुदर्शन और प्रियदर्शन दो देव रहते हैं। क्षुल्ल हिमवन्त से लेकर शिखरी वर्षधर तक वर्षधर पर्वतों के ६ युगल है अर्थात् दो क्षुल्लक हिमवन्त दो महा हिमवन आदि वर्षधर पर्वत दो दो है। अब सूत्रकार चार वृत्त वैताढ्य पर्वत के युगलों की प्ररूपणा करने के निमित्त कहते है-"दो सद्दावाई" इत्यादि। यहां दो शब्दापाती वृत्तवैताढ्य पर्वत है। इन पर निवास करनेवाले स्वाति नामके दो देव है। विकटापाती नाम के भी दो वृत्त वैताढ्य पर्वत है। इन पर निवास करनेवाले प्रभास नामके दो देव है। गन्धापति नामके भी दो वृत्त वैताढ्य पर्वत है इन पर निवास करनेवाले अरुण नामके दो देव हैं। माल्यवत्पर्याय नामके भी दो वृत्तवैताढ्य पर्वत हैं-इन पर निवास करने वाले पद्मनाभ नामके दो देव हैं। इस तरह से ये चारवृत्तवैताढ्ययुगलों के नाम हैं। "दो मालवंता" दो माल्य-

છે. ઉત્તરકુરુમાં ધાતકી અને મહાધાતકી નામના બે વૃક્ષો છે, તે વૃક્ષોપર સુદર્શન અને પ્રિયદર્શન નામના બે દેવો રહે છે. ક્ષુદ્ર હિમવાન્‌થી લઇને શિખરી વર્ષધર પર્વત પર્યન્તના વર્ષધર પર્વતોના ૬ યુગલ છે. એટલે કે બે ક્ષુદ્ર હિમવન્, બે મહાહિમવન્, આદિ વર્ષધર પર્વતો બબ્બે છે.

હવે સૂત્રકાર ચાર વૃત્તવૈતાઢ્ય પર્વતના યુગલોની પ્રરૂપણા "दो सद्दावाई" ઈત્યાદિ સૂત્રો દ્વારા કરે છે અહીં બે શબ્દાપાતી વૃત્તવૈતાઢ્ય પર્વતો છે. તે પર્વતોપર સ્વાતી નામના બે દેવો નિવાસ કરે છે. વિકટાપાતી નામના પણ બે વૃત્તવૈતાઢ્ય પર્વતો છે, તે પર્વતપર પ્રભાસ નામના બે દેવ રહે છે. ગંધાપાતિ નામના પણ બે વૃત્તવૈતાઢ્ય પર્વતો છે, તે પર્વતોપર નિવાસ કરનારા અરુણ નામના બે દેવો છે. માલ્યવત્પર્યાય નામના પણ બે વૃત્તવૈતાઢ્ય

वेर्यो । 'दो मालवंता' इत्यादि, माल्यवन्तौ–उत्तरकुरुतः पूर्वदिग्वर्तिनौ गजदन्तापरनामानौ गजदन्ताकारौ पर्वतौ स्तः । तथा भद्रशालवनतद्वेदिका विजयेभ्यः परौ शीतोत्तरकूलवर्तिनौ दक्षिणोत्तरायतौ चित्रकूटौ वक्षस्कारपर्वतौ । ततो विजयेनान्तर–नद्या विजयेन चान्तरितौ विजयानन्तरं पद्मकूटः, ततोऽन्तरनदी, ततःपुनः पद्मकूटः ततो विजयः, एवमन्तरितौ द्वौ पद्मकूटौ, तथैवान्यौ नलिनकूटौ, पुनस्तथैवान्यौ एक शैलाविति । पुनः पूर्ववनमुखवेदिका विजयाभ्यामर्वाक् शीतादक्षिणकूलवर्तीनि चत्वारि पर्वतयुगलानि सन्ति, तथाहि–त्रिकूटौ १, वैश्रवणकूटौ २, अञ्जनौ ३,

---

वन्तपर्वत उत्तरकुरु से पूर्वदिशा में हैं इनका दूसरा नाम गजदन्त पर्वत भी है क्यों कि ये गजदन्त के जैसे आकार वाले हैं। यहां से भद्रशालवन और उसकी वेदिका और विजय इनसे आगे उत्तर दक्षिण तक चौड़े–लम्बे सीता के उत्तरकूलवर्ती चित्रकूट नामके दो वक्षस्कार पर्वत हैं। दो पद्मकूट हैं। ये पद्मकूट विजय और अन्तर नदी से अन्तरित हैं। अर्थात् पहिले विजय है बाद में पद्मकूट है उसके बाद अन्तर नदी है फिर पद्मकूट है, उसके बाद विजय है इस तरह से अन्तरित दो पद्मकूट हैं इसी प्रकार से दो नलिनकूट हैं दो दूसरे एक शैल हैं । पूर्ववनमुखवेदिका और विजय इनके साम्हने सीतानदी की दक्षिणदिशा के तट पर चार पर्वत युगल हैं जैसे दो त्रिकूट, दो वैश्रवणकूट, दो अंजनकूट और दो मातंजन इनके बाद दो सौमनस पर्वत हैं ये दो सौमनस

પર્વતો છે અને તે પર્વતોપર પદ્મનાભ નામના બે દેવો રહે છે આ પ્રકારના તે ચાર વૃત્તવૈતાઢયોના મુખ્યોનાં નામ છે

"દો માલવંતા" ઉત્તરકુરુની પૂર્વદિશામાં બે માલ્યવન્ત પર્વતો છે તેમનું બીજું નામ ગજદન્ત પર્વતો પણ છે, કારણ કે તેમનો આકાર હાથીના દાંત જેવો છે ત્યાંથી આગળ જતા ભદ્રશાલવન અને તેની વેદિકા અને વિજય ત્યાંથી આગળ જતાં સીતા નદીના ઉત્તર કિનારા તરફ ચિત્રકૂટ નામના બે વક્ષસ્કાર પર્વતો છે તે બન્ને પર્વતો ઉત્તર દક્ષિણ તરફ વિસ્તરેલા છે બે પદ્મકૂટ છે તે બન્ને પદ્મકૂટ વિજય અને અન્તર નદીથી અન્તરિત છે એટલે કે પહેલાં વિજયક્ષેત્ર આવે છે ત્યારબાદ પદ્મકૂટ છે, ત્યારબાદ અન્તર નદી છે અને ત્યારબાદ પદ્મકૂટ છે, અને ત્યારબાદ વિજય છે આ પ્રકારે અન્તરિત બે પદ્મકૂટ છે એજ પ્રમાણે બે નલીનકૂટ છે અને બે બીજા એક શૈલ છે પૂર્વવન મુખવેદિકા અને વિજયની સામે, સીતા નદીના દક્ષિણ કિનારા તરફ નીચે પ્રમાણે ચાર પર્વતયુગલ છે–બે ત્રિકૂટ, બે વૈશ્રમણકૂટ, બે અંજનકૂટ, અને બે માતંજન. ત્યારબાદ બે સૌમનસ પર્વત આવેલા છે તે બન્ને સૌમ

मातङ्गनौ ४ चेति । ततः सौमनसौ देवकुरुपूर्वदिग्वर्त्तिनौ गजदन्तकौ—गजदन्ताकारौ पर्वतौ । ततो गजदन्तकावेव देवकुरुपश्चिमभागवर्त्तिनौ विद्युत्प्रभौ । ततो भद्रशालवनतद्वेदिकाविजयेभ्यः परतस्तथैवाङ्कावत्यादीनां पर्वतानां चत्वारि युगलानि शीतोदादक्षिणकूलवर्त्तीनि सन्ति, तथाहि—अङ्कावतीद्विकम् १, पक्ष्मावतीद्विकम् २, आशीविषद्विकम् ३, सुखावहद्विकं ४ चेति । पुनरन्यानि पश्चिमवनमुखवेदिकान्त्यविजयाभ्यां पूर्वतः क्रमेण तथैव चन्द्रपर्वतादीनां चत्वारि युगलानि सन्ति, तथाहि—चन्द्रपर्वतौ १, सूरपर्वतौ २, नागपर्वतौ ३, देवपर्वतौ ४ चेति । ततो द्वौ गन्धमादनौ उत्तरकुरुपश्चिमभागवर्त्तिनौ गजदन्तकाविति । एते धातकीखण्डस्य पूर्वार्द्धे पश्चिमार्द्धे च भवन्तीति द्वौ द्वावुक्ताविति । इषुकारपर्वतौ तु

पर्वत देवकुरु की पूर्वदिशा में है और इनका आकार गजदन्तों के जैसा है। इसी तरह से देवकुरु की पश्चिमदिशा में विद्युत्प्रभ नामके दो गजदन्ताकार पर्वत हैं। बाद में भद्रशालवन, इसकी वेदिका और विजय इनसे आगे अङ्कावती आदि पर्वतों के चार युगल हैं ये चार युगल शीतोदानदी की दक्षिण दिशा के तट पर स्थित हैं। इन युगलों के नाम इस प्रकार से हैं–दो अङ्कावतीपर्वत, दो पक्ष्मावतीपर्वत, दो आशीविषपर्वत, और दो सुखावहपर्वत पश्चिमवनमुखवेदिका और अन्त्यविजय इनकी पूर्वदिशा में क्रम से चन्द्रपर्वत आदिकों के चार युगल हैं–ये युगल इस प्रकार के नामवाले हैं–दो चन्द्रपर्वत, दो सूरपर्वत, दो नागपर्वत और दो देवपर्वत इनके पश्चात् दो गन्धमादन नामके गजदन्ताकार पर्वत हैं ये दो गन्धमादन पर्वत उत्तरकूरु के पश्चिम भाग में है। ये दो दो धातकीखण्ड के पूर्वार्ध में और पश्चिमार्ध में कहे गये है। दो २ कहने

નમ પર્વતો દેવકુરુની પૂર્વદિશામા છે, અને તેમનો આકાર ગજદન્તોના જેવો છે એજ પ્રમાણે દેવકુરુની પશ્ચિમ દિશામા વિદ્યુત્પ્રભ નામના બે ગજદન્તાકાર પર્વતો છે ત્યારબાદ ભદ્રશાલવન, તેની વેદિકા અને વિજય, ત્યાથી આગળ જતા અંકાવતી આદિ પર્વતોના ચાર યુગલ આવે છે તે ચાર પર્વતયુગલો શીતોદા નદીની દક્ષિણ દિશાના તટપર આવેલા છે, તેમના નામ નીચે પ્રમાણે છે—બે અંકાવતી પર્વત, બે પક્ષ્માવતી પર્વત, બે આશીવિષ પર્વત અને બે સુખાવહ પર્વત. પશ્ચિમવન મુખવેદિકા અને અન્ત્ય વિજયની પૂર્વ દિશામાં અનુક્રમે નીચે પ્રમાણે ચાર પર્વતોના યુગલ છે-બે ચન્દ્રપર્વત, બે સૂરપર્વત, બે નાગપર્વત અને બે દેવપર્વત ત્યારબાદ ગન્ધમાદન નામના બે ગજદન્તાકાર પર્વતો આવેલા છે. તે બન્ને ગન્ધમાદન પર્વતો ઉત્તરકુરુના પશ્ચિમ ભાગમા છે. ધાતકીખંડના પૂર્વાર્ધમાં અને પશ્ચિમાર્ધમા એવા બબ્બે ગન્ધમાદન પર્વતો

वेदी। 'दो मालवंता' इत्यादि, माल्यवन्तौ-उत्तरकुरुतः पूर्वदिग्वर्तिनौ गजदन्तकौ गजदन्ताकारौ पर्वतौ स्त । ततो भद्रशालवनं तद्वेदिका विजयेभ्यः परौ शीतोत्तर कूलवर्तिनौ दक्षिणोत्तरायतौ चित्रकूटौ वक्षस्कारपर्वतौ । ततो विजयेनान्तर-नद्या विजयश्च व्यवहितौ विजयानन्तरं पद्मकूटः, ततोऽन्तरनदी, ततःपुनः पद्मकूटः, ततो विजयः, एवम् व्यवहितौ द्वौ पद्मकूटौ, तथैवान्यौ नलिनकूटौ, पुनस्तथैवान्यौ एक शैलाविति। पुनः पूर्ववनमुखवेदिका विजयाभ्यामर्वाक् शीतादक्षिणकूलवर्तीनि चत्वारि पर्वतयुगलानि सन्ति, तथाहि-त्रिकूटौ १, वैश्रवणकूटौ २, अञ्जनौ ३,

---

वन्तपर्वत उत्तरकुरु से पूर्वदिशा में हैं इनका दूसरा नाम गजदन्त पर्वत भी है क्यों कि ये गजदन्त के जैसे आकार वाले हैं। यहां से भद्रशाल वन और उसकी वेदिका और विजय इनसे आगे उत्तर दक्षिण तक चौड़े-लम्बे सीता के उत्तरकूलवर्ती चित्रकूट नामके दो वक्षस्कार पर्वत हैं। दो पद्मकूट हैं। ये पद्मकूट विजय और अन्तर नदी से अन्तरित हैं। अर्थात् पहिले विजय है बाद में पद्मकूट है उसके बाद अन्तर नदी है फिर पद्मकूट है, उसके बाद विजय है इस तरह से अन्तरित दो पद्म कूट है इसी प्रकार से दो नलिनकूट हैं दो दूसरे एक शैल है । पूर्ववन मुखवेदिका और विजय इनके साम्हने सीतानदी की दक्षिणदिशा के तट पर चार पर्वत युगल हैं जैसे दो त्रिकूट, दो वैश्रवणकूट, दो अंजन कूट और दो मातंजन इनके बाद दो सौमनस पर्वत हैं ये दो सौमनस

પર્વતો છે અને તે પર્વતોપર પદ્મનાભ નામના બે દેવો રહે છે આ પ્રકરના તે ચાર વૃત્તવૈતાઢ્યોના મુખ્યોના નામ છે

"દો માલવંતા" ઉત્તરકુરુની પૂર્વદિશામાં બે માલ્યવન્ત પર્વતો છે તેમનું બીજું નામ ગજદન્ત પર્વતો પણ છે, કારણ કે તેમનો આકાર હાથીના દાંત જેવો છે ત્યાંથી આગળ જતાં ભદ્રશાલવન અને તેની વેદિકા અને વિજય ત્યાંથી આગળ જતાં સીતા નદીના ઉત્તર કિનારા તરફ ચિત્રકૂટ નામના બે વક્ષસ્કાર પર્વતો છે તે બન્ને પર્વતો ઉત્તર દક્ષિણ તરફ વિસ્તરેલા છે બે પદ્મકૂટ છે તે બન્ને પદ્મકૂટ વિજય અને અન્તર નદીથી અન્તરિત છે એટલે કે પહેલાં વિજયક્ષેત્ર આવે છે ત્યારબાદ પદ્મકૂટ છે, ત્યારબાદ અન્તર નદી છે અને ત્યારબાદ પદ્મકૂટ છે, અને ત્યારબાદ વિજય છે આ પ્રકારે અન્તરિત બે પદ્મકૂટ છે એજ પ્રમાણે બે નલિનકૂટ છે અને બે બીજા એક શૈલ છે પૂર્વવન મુખવેદિકા અને વિજયની સામે સીતા નદીના દક્ષિણ કિનારા તરફ નીચે પ્રમાણે ચાર પર્વતયુગલ છે-બે ત્રિકૂટ બે વૈશ્રવણકૂટ, બે અંજનકૂટ, અને બે માતંજન. ત્યારબાદ બે સૌમનસ પર્વત આવેલા છે તે બન્ને સૌમ

तद्देव्योऽप्येवं द्वादशेति। चतुर्दशानां गङ्गादिमहानदीनां पूर्वार्द्धपश्चिमार्द्धापेक्षया द्विगुणत्वात्तत्प्रपातह्रदा अपि द्वौ द्वौ स्युरतएवाह–'दो गंगप्पवायदहा' इत्यारभ्य 'दो रत्तवइप्पवायदहा' इत्यन्तानि पूर्वोक्तद्वात्रिंशत्तमसूत्रोक्तानि चतुर्दश प्रपातह्रदयुगलानि भवन्ति। 'दो रोहियाओ' इत्यादि, रोहिदादयो रूप्यकूलापर्यन्ता अत्रस्थद्वात्रिंशत्तमसूत्रोक्ता अष्टौ नद्यो युगलत्वेन सन्ति, तथाहि-रोहिता १, हरिकान्ता २, हरित् ३, शीतोदा ४, शीता ५, नारीकान्ता ६, नरकान्ता ७, रूप्यकूला ८। 'दो गाहावईओ' इत्यादि, चित्रकूट–पद्मकूट–वक्षस्कारपर्वतयोरन्तरे नीलवद्वर्षधरवपर्वतैकभागव्यवस्थिताद् ग्राहवतीकुण्डाद्दक्षिणतोरण-

---

इन ह्रदों में निवास करनेवाली देवियों की भी संख्या १२ हो जाती है। इसी तरह से गंगा सिन्धु आदि महानदियों के पूर्वार्द्ध और पश्चिमार्ध की अपेक्षा द्विगुण होने से प्रपातह्रद भी दो दो हैं। इसीलिये "दो गंगप्पवायदहा" से लेकर "दो रत्तवइप्पवायदहा" तक के ३२वें सूत्र में १४ प्रपातह्रद युगल प्रकट किये गये हैं। "दो रोहियाओ" इत्यादि रोहिता से रूप्यकूला तक नदियों के दो दो युगल हैं। "दो गाहावईओ" इत्यादि दो ग्राहवती नदियां हैं। ये नदियां चित्रकूट और पद्मकूट नामके दो वक्षस्कार पर्वतों के अन्तर में नीलवद्वर्षधर पर्वत के एकभाग में व्यवस्थित ग्राहवतीकुण्ड से दक्षिणतोरण से विनिर्गत है इनकी परिवार नदियां २८–२८ हजार हैं। ये दोनों ग्राहवती नदियां सीतानदी में जाकर मिली हैं। सुकच्छ और महाकच्छ नामक दो विजयों का इनसे

તે હ્રદોમાં નિવાસ કરનારી દેવીઓની સંખ્યા પણ ૧૨ ની છે. એજ પ્રમાણે ગંગા, સિન્ધુ આદિ નદીઓની સંખ્યા પણ પૂર્વાર્દ્ધ અને પશ્ચિમાર્ધની અપેક્ષાએ બમણી થતી હોવાથી પ્રપાતહ્રદ પણ બબ્બે છે તેથી "दो गगप्पवाह दहा" થી લઈને "दो रत्तवइप्पवायदहा" પર્યન્તના ૩૨ માં સૂત્રમા ૧૪ પ્રપાતહ્રદ યુગલો પ્રકટ કરવામાં આવ્યા છે.

"दो रोहियाओ" ઈત્યાદિ. રોહિતાથી લઈને રુપ્યકૂલા પર્યન્તના નદીઓના બબ્બે યુગલ છે "दो गाहावईओ" ઈત્યાદિ. બે ગ્રાહવતી નદીઓ છે તે નદીઓ ચિત્રકૂટ અને પદ્મકૂટ નામના બે વક્ષસ્કાર પર્વતોની વચ્ચે નીલવત્ વર્ષધર પર્વતના એક ભાગમાં આવેલા ગ્રાહવતીકુંડના દક્ષિણ તોરણમાંથી નીકળે છે, તેમની પરિવાર નદીઓ ૨૮–૨૮ છે. તે બન્ને ગ્રાહવતી નદીઓ સીતા નદીને મળે છે. સુકચ્છ અને મહાકચ્છ નામના બે વિજયોનુ

दक्षिणोत्तरयोर्दिशोर्धातकीखण्डविभागकारिणौ स्तः इति। 'दोचुल्लहिमवंतकूडा' इ०

हिमवदादयः षड् वर्षधरपर्वताः सन्ति तेषु यौ द्वौ द्वौ कूटौ जम्बूद्वीपप्रकरणेऽभिहितौ तौ पर्वतानां द्विगुणत्वाद् एकैकस्मिन् द्वौ द्वौ स्यातामिति तिगिञ्छिकूटपर्यन्तानि द्वादशकूटयुगलानि भवन्ति। अथ हृदानां हृदवासिदेवीनां च वक्तव्यतामाह–' दो पउमदहा इत्यादि,

पद्महृदादारभ्य पुण्डरीकहृदपर्यन्ताः षड् हृदा अपि द्विगुणिता द्वादश भवन्ति, उक्तं च—" पउमे १ य महापउमे २, तिगिच्छी ३ केसरी ४ दहे चेव।

हरए महापुंडरीए ५ पुंडरीए ६ चेव य दहाओ ॥ १ ॥"

छाया—पद्मः १ महापद्म २, तिगिञ्छी ३ केशरी ४ ह्रदश्चैव।

ह्रदो महा पुण्डरीकः ५ पुण्डरीक ६ श्चैव च ह्रदाः ॥ १ ॥

का तात्पर्य यह है कि जम्बूद्वीप की अपेक्षा यहां पर्वतादिकों की संख्या द्विगुणित कही गई है। इषुकार जो दो पर्वत हैं वे दक्षिण और उत्तर दिशा में हैं और धातकीखण्ड दो विभागों में विभक्त है। (दो चुल्लहिमवंतकूडा) इत्यादि हिमवत आदि जो ६ वर्षधर पर्वत हैं इनमें दो दो कूट जो कि जम्बूद्वीप के प्रकरण में कहे गये हैं वे पर्वतों के द्विगुण होने से एक २ वर्षधरपर्वत में दो दो हैं इस तरह तिगिञ्छकूट तक १२ कूट युगल हो जाते हैं। "दो पउमदहा" इत्यादि पद्महृद से लेकर पुण्डरीक ह्रद पर्यन्त छह ह्रद भी दो दो होने से १२ हो जाते हैं। कहा भी है

" पउमे य महापउमे " इत्यादि।

કહ્યા છે અહીં બબ્બે ગણાવવામાં પર્વતો કહેવાનું કારણ એ છે કે જમ્બૂદ્વીપ કરતા અહીં પર્વતાદિકોની સંખ્યા બમણી બતાવવામાં આવેલ છે જે બે ઇષુકાર પર્વતો છે તેઓ દક્ષિણ અને ઉત્તર દિશામાં છે, અને તેમના દ્વારા ધાતકીખંડના બે વિભાગો થઈ જાય છે

દો ચુલ્લહિમવંતકૂડા ઇત્યાદિ હિમવંત આદિ જે ૬ વર્ષધર પર્વતો છે તેમાં બબ્બે કૂટ આવેલા છે જમ્બૂદ્વીપના પ્રકરણમાં તેમનાં નામ બતાવવામાં આવ્યાં છે અહીં પર્વતોની સંખ્યા બમણી હોવાથી એક એક વર્ષધર પર્વતમાં બબ્બે કૂટ છે આ રીતે તિગિચ્છકૂટ પર્યન્તના ૧૨ કૂટયુગલ થઈ જાય છે

દો પઉમદહા' ઇત્યાદિ પદ્મદ્રહથી લઈને પુંડરીકદ્રહ પર્યન્તના ૬ દ્રહયુગલો હોવાથી કુલ બાર દ્રહ અહીં આવેલા છે કહ્યું પણ છે કે- પઉમેય મહાપઉમે " ઇત્યાદિ

मन्दरौ-मेरुपर्वतौ द्वौ, द्वे च मन्दरचूलिके। चूलिका-शिखरविशेष इति। 'धायइसंडस्स णं' इत्यादि, धातकीखण्डद्वीपस्य वेदिका जम्बूद्वीपवद् द्वे गव्यूती ऊर्ध्वमुच्चत्वेन प्रज्ञप्ता भगवतेति।

धातकीखण्डानन्तरं कालोदः समुद्रोऽस्तीति तत्प्ररूपणामाह-'कालोदस्स-णं' इत्यादि। कालोद समुद्रवेदिका सूत्रमिदं सुगमम्।

कालोदसमुद्रानन्तरमव्यवहितत्वादेव पुष्करवरद्वीपवक्तव्यतामाह-'पुक्खर-वर दीवड्ढपुरत्थिमेणं' इत्यादि।

पुष्करवरद्वीपस्य पूर्वार्द्ध-पश्चिमार्द्ध-तदुभयरूपाणि त्रीण्यपि प्रकरणानि सुग-मानि प्रसिद्धानि च। अर्थोऽपि सुगम एव। अस्य पूर्वार्द्धता च धातकीखण्डवदि-षुकारपर्वताभ्यामवगन्तव्या। अस्य वेदिकाऽपि पूर्ववद् ऊर्ध्वोच्चत्वेन गव्यूतद्वय-

का नाम चूलिका है। "धाइयसंडस्स णं" इत्यादि-धातकी खण्डद्वीपकी वेदिका जम्बूद्वीप की वेदिका की तरह दो गव्यूतिप्रमाण ऊँची है। धातकी खण्ड के पीछे कालोदसमुद्र है इसलिये अब सूत्रकार इसकी प्ररूपणा के विषय में कहते हैं-"कालोदस्स णं" इत्यादि। यह कालो-दसमुद्र की वेदिका का सूत्र सुगम है-कालोदसमुद्र के अनन्तर अव्य-वहित होने से ही पुष्करवरद्वीप की वक्तव्यता के विषय में सूत्रकार ने "पुक्खरवरदीवड्ढपुरत्थिमेणं" इत्यादि यह सूत्र कहा है-पुष्करवरद्वीप के पूर्वार्ध, पश्चिमार्द्ध और तदुभयरूप तीनों ही प्रकरण सुगम और प्रसिद्ध है। अर्थ भी सुगम ही है। पुष्करवरद्वीप की पूर्वार्द्धता और परार्धता धातकी खण्ड की तरह दो इषुकारपर्वतों से ही हुई है ऐसा जानना चाहिये-इसकी वेदिका भी ऊँचाई में पूर्वकी तरह ही दो गव्यूति

"धाइयसंडस्सणं" ઇત્યાદિ-ધાતકીખંડની વેદિકા જમ્બૂદ્વીપની વેદિકાની જેમ બે ગવ્યૂતિ (કોશ) પ્રમાણુ ઊંચી છે. ધાતકીખંડ દ્વીપ પછી કાલોદ સમુદ્ર આવેલો છે, તેથી સૂત્રકાર હવે કાલોદ સમુદ્રની પ્રરૂપણા કરે છે—

"कालोदस्स णं" ઇત્યાદિ-આ કાલોદ સમુદ્રની વેદિકાનુ સૂત્ર સુગમ છે. કાલોદ સમુદ્રની પછી તુરત જ આવતો હોવાથી જ પુષ્કરવર દ્વીપની વક્તવ્ય-તાના વિષયમાં સૂત્રકારે "पुक्खरवरदीवड्ढपुरत्थिमेणं" ઇત્યાદિ સૂત્ર કહેલ છે. પુષ્કરવરદ્વીપના પૂર્વાર્ધ, પશ્ચિમાર્દ્ધ અને તદુભય (બન્ને) રૂપ ત્રણેનુ વર્ણન તો સુગમ અને પ્રસિદ્ધ છે તેથી તેનુ અહીં વધુ વર્ણન કર્યું નથી. પુષ્કરવર દ્વીપના પૂર્વાર્દ્ધતા અને પરાર્ધતા (પશ્ચિમાર્ધતા) ધાતકીખંડની જેમ બે ઇષુકાર પર્વતોથી જ થઈ છે એમ સમજવું તેની વેદિકા પણ ધાતકીખંડની વેદિકાની જેમ બે ગવ્યૂતિપ્રમાણુ છે, તથા તેમા બીજાં પણ દ્વીપ અને

विनिर्गताऽष्टाविंशतिनदी सहस्रपरिवारा शीतामिगामिनी सुकच्छमहाकच्छविम योर्विभागकारिणी ग्राहवती नदी वर्तते। एव यथायोग्य द्वयोर्द्वयोः वक्षस्कार पर्वतयोर्विजययोरन्तरे क्रमेण प्रदक्षिणया ग्राहवतीत आरम्य गम्भीरमालिनी पर्यन्तानि द्वादशाप्यन्तरनदी युगलानि योज्यानि।

'दो कच्छा' इत्यादि, माल्यवद्भजदन्तक-भद्रशालवनाभ्यामारम्य कच्छादीनि गन्धिलावतीपर्यन्तानि द्वात्रिंशद् विजयक्षेत्रयुगलानि (३२) प्रदक्षिणतोऽवगन्तव्या-नीति 'दो खेमाओ' इत्यादि। पूर्वोक्तेषु कच्छादिद्वात्रिंश द्विजयक्षेत्रयुगलेषु क्रमेण क्षेमादीनि अयोध्यापर्यन्तानि द्वात्रिंशदेव पुरीयुगलानि (३२) बोध्यानि। 'दो भद्दसालवणा' इत्यादि, मेरुद्वये भद्रशालादीनि पण्डकान्तानि चत्वारि वनयुगलानि सन्ति। 'दो पंडुकंबलसिलाओ' इत्यादि, पाण्डुकम्बलशिलात आरम्यातिरिक्त कम्बलशिलापर्यन्ता युगलत्वेन चतस्र शिलाः सन्ति। 'दो मंदरा' इत्यादि,

विभाग हुआ है। इसी तरह यथायोग्य दो दो वक्षस्कार पर्वत और विजयों के अन्तर में क्रमशः दक्षिणदिशा में ग्राहवती नदी से लेकर गंभीरमालिनी तक १२ अन्तर नदी युगलों की योजना करनी चाहिये।

"दो कच्छा" इत्यादि–माल्यवद्गजदन्तक और भद्रशालवन से लगाकर दक्षिणदिशा तरफ गन्धिलावती तक कच्छादिक ३२ विजय क्षेत्र युगल हैं। "दो खेमाओ" इत्यादि–इन ३२ कच्छादिक विजय क्षेत्रयुगलों में क्रम से अयोध्यापर्यन्त क्षेमादिक ३२ ही पुरी युगल हैं। "दो भद्दसालवणा" इत्यादि दो मेरुपर्वतों में पण्डकवनतक भद्रशाल आदि वन दो दो हैं। "दो पंडुकंबलसिलाओ" इत्यादि–पाण्डुकम्बल शिला से लेकर अतिरिक्तकम्बलशिलातक चार शिलायुगल हैं। "दो मंदरा" इत्यादि मेरुपर्वत दो हैं और दो मेरुचूलिका हैं। शिखरविशेष

તેમના દ્વારા વિભાજન થયુ છે એજ પ્રમાણે યથાયોગ્ય બબ્બે વક્ષસ્કાર પર્વતો અને વિજયોની વચ્ચે ક્રમશઃ દક્ષિણ દિશામાં ગ્રાહવતી નદીથી લઈને ગંભીર માલિની પર્યન્તમાં ૧૨ અન્તરનદી યુગલોની યોજના સમજી લેવી

'દો કચ્છા' ઈત્યાદિ. માલ્યવત્ ગજદન્ત અને ભદ્રશાલવનથી લઈને દક્ષિણ દિશા તરફ ગન્ધિલાવતી પર્યન્તમાં કચ્છાદિક ૩૨ વિજયક્ષેત્ર યુગલ છે "દો ખેમાઓ" ઈત્યાદિ. આ ૩૨ કચ્છાદિક વિજયક્ષેત્ર યુગલોમાં ક્રમશઃ અયોધ્યા પર્યન્તના ક્ષેમા આદિ ૩૨ પુરીયુગલો છે "દો ભદ્દસાલવણા" ઈત્યાદિ–બે મેરુ પર્વતોમાં પંડકવન પર્યન્તના ભદ્રશાલ આદિ બબ્બે વન છે "દો પંડુકંબલસિલાઓ" ઈત્યાદિ–પાંડુકમ્બલ શિલાથી લઈને અતિરિક્ત કમ્બલશિલા પર્યન્તના ચાર શિલાયુગલો છે "દો મંદરા" ઈત્યાદિ–બે મેરુ પર્વત છે અને બે મેરુચૂલિકા છે શિખર વિશેષને ચૂલિકા કહે છે

मन्दरौ-मेरुपर्वतौ द्वौ, द्वे च मन्दरचूलिके। चूलिका-शिखरविशेष इति। 'धायइसंडस्स णं' इत्यादि, धातकीखण्डद्वीपस्य वेदिका जम्बूद्वीपवद् द्वे गव्यूती ऊर्ध्वमुच्चत्वेन प्रज्ञप्ता भगवतेति।

धातकीखण्डानन्तरं कालोदः समुद्रोऽस्तीति तत्प्ररूपणामाह-'कालोदस्स णं' इत्यादि। कालोद समुद्रवेदिका सूत्रमिदं सुगमम्।

कालोदसमुद्रानन्तरमव्यवहितत्वादेव पुष्करवरद्वीपवक्तव्यतामाह-'पुक्खरवर दीवड्ढपुरत्थिमेणं' इत्यादि।

पुष्करवरद्वीपस्य पूर्वार्द्ध-पश्चिमार्द्ध-तदुभयरूपाणि त्रीण्यपि प्रकरणानि सुगमानि प्रसिद्धानि च। अर्थोऽपि सुगम एव। अस्य पूर्वार्द्धता च धातकीखण्डवदिषुकारपर्वताभ्यामवगन्तव्या। अस्य वेदिकाऽपि पूर्ववद् ऊर्ध्वोच्चत्वेन गव्यूतद्वय-

का नाम चूलिका है। "धाइयसंडस्सणं" इत्यादि-धातकी खण्डद्वीपकी वेदिका जम्बूद्वीप की वेदिका की तरह दो गव्यूतिप्रमाण ऊंची है। धातकी खण्ड के पीछे कालोदसमुद्र है इसलिये अब सूत्रकार इसकी प्ररूपणा के विषय में कहते है-"कालोदस्स णं" इत्यादि। यह कालोदसमुद्र की वेदिका का सूत्र सुगम है-कालोदसमुद्र के अनन्तर अव्यवहित होने से ही पुष्करवरद्वीप की वक्तव्यता के विषय में सूत्रकार ने "पुक्खरवरदीवड्ढपुरत्थिमेणं" इत्यादि यह सूत्र कहा है-पुष्करवरद्वीप के पूर्वार्ध, पश्चिमार्द्ध और तदुभयरूप तीनों ही प्रकरण सुगम और प्रसिद्ध है। अर्थ भी सुगम ही है। पुष्करवरद्वीप की पूर्वार्द्धता और परार्धता धातकी खण्ड की तरह दो इषुकारपर्वतों से ही हुई है ऐसा जानना चाहिये-इसकी वेदिका भी ऊँचाई में पूर्वकी तरह ही दो गव्यूति

"धाइयसंडस्सणं" ઇત્યાદિ-ધાતકીખંડની વેદિકા જબૂદ્વીપની વેદિકાની જેમ બે ગવ્યૂતિ (કોશ) પ્રમાણુ ઊંચી છે. ધાતકીખંડ દ્વીપ પછી કાલોદ સમુદ્ર આવેલો છે, તેથી સૂત્રકાર હવે કાલોદ સમુદ્રની પ્રરૂપણા કરે છે—

"कालोदस्स णं" ઈત્યાદિ-આ કાલોદ સમુદ્રની વેદિકાનું સૂત્ર સુગમ છે. કાલોદ સમુદ્રની પછી તુરત જ આવતો હોવાથી જ પુષ્કરવર દ્વીપની વક્તવ્યતાના વિષયમા સૂત્રકારે "पुक्खरवरदीवड्ढपुरत्थिमेणं" ઇત્યાદિ સૂત્ર કહેલ છે. પુષ્કરવરદ્વીપના પૂર્વાર્ધ, પશ્ચિમાર્દ્ધ અને તદુભય (બન્ને) રૂપ ત્રણેનુ વર્ણન તો સુગમ અને પ્રસિદ્ધ છે તેથી તેનુ અહીં વધુ વર્ણન કર્યું નથી. પુષ્કરવર દ્વીપના પૂર્વાર્દ્ધતા અને પરાર્ધતા (પશ્ચિમાર્ધતા) ધાતકીખંડની જેમ બે ઇષુકાર પર્વતોથી જ થઈ છે એમ સમજવું તેની વેદિકા પણ ધાતકીખંડની વેદિકાની જેમ બે ગવ્યૂતિપ્રમાણુ છે, તથા તેમાં બીજાં પણ દ્વીપ અને

परिमितैव बोद्धव्या । इतरेषां द्वीपसमुद्राणां वेदिका किं प्रमाणा ? इत्यत्राह— 'सव्वेसिंपि' इत्यादि, सर्वेषामपि पूर्वोक्तेभ्य इतरेषां समस्तानामपि द्वीपसमुद्राणां वेदिका ऊर्ध्वोच्चत्वेन गव्यूतद्वयपरिमिता एव प्रज्ञप्ताः—भगवता कथिताः, न न्यूना नाधिका इत्यर्थः ॥ सू० ३५ ॥

एते च द्वीपसमुद्रा इन्द्राणामुत्पातपर्वताश्रया इतीन्द्रवक्तव्यतामाह—

मूलम्—दो असुरकुमारिंदा पन्नत्ता, तं जहा—चमरे चेव बली चेव ।१। दो णागकुमारिंदा पण्णत्ता, तं जहा धरणे चेव भूयाणंदे चेव ।२। दो सुवण्णकुमारिंदा पण्णत्ता, तं जहा—वेणुदेवे चेव वेणुदाली चेव ।३। दो विज्जुकुमारिंदा पण्णत्ता, तं जहा-हरिच्चेव हरिस्सहे चेव ।४। दो अग्गिकुमारिंदा पण्णत्ता, तं जहा अग्गिसिहे चेव अग्गिमाणवे चेव ।५। दो दीवकुमारिंदा पण्णत्ता, तं जहा पुन्ने चेव विसट्ठे चेव । ६ । दो उदहिकुमारिंदा पण्णत्ता, तं जहा—जलकंते चेव जलप्पभे चेव । ७ । दो दिसाकुमारिंदा पण्णत्ता, तं जहा-अमियगई चेव अमियवाहणे चेव । ८ । दो वायुकुमारिंदा पण्णत्ता, तं जहा-वेलंबे चेव पभंजणे चेव ।९। दो थणियकुमारिंदा पण्णत्ता, तं जहा घोसे चेव महाघोसे चेव ।१०। दो पिसाइंदा पण्णत्ता, तं जहा—काले चेव महाकाले चेव ।१। दो भूइंदा पण्णत्ता, तं जहा सुरूवे चेव पडिरूवे चेव ।२। दो जक्खिंदा पण्णत्ता, तं जहा पुन्नभद्दे चेव माणिभद्दे चेव

प्रमाण है । तथा इससे और भी द्वीप एवं समुद्र हैं उनकी वेदिका भी दो गव्यूतिप्रमाण ही ऊंची है । कमती बढ़ती नहीं है ॥ सू० ३५ ॥

સમુદ્રો છે તેમની વેદિકા પણ બે ગવ્યૂતિપ્રમાણ ઊંચી છે—ન્યૂન અથવા અધિક નથી. ॥ સૂ. ૩૫ ॥

। ३ । दो रक्खसिंदा पण्णत्ता, तं जहा भीमे चेव महाभीमे चेव ।४। दो किन्नरिंदा पण्णत्ता, तं जहा-किन्नरे चेव किंपुरिसे चेव ।५। दो पुरिसिंदा पण्णत्ता, तं जहा-सप्पुरिसे चेव महापुरिसे चेव ।६। दो महोरगिंदा पण्णत्ता, तं जहा-अइकाए चेव महाकाए चेव । ७। दो गंधव्विंदा पण्णत्ता, तं जहा-गीयरई चेव गीयजसे चेव । ८। दो अणपन्निंदा पण्णत्ता, तं जहा--संनिहिए चेव सामण्णे चेव । १ । दो पणपन्निंदा पण्णत्ता, तं जहा-धाए चेव विधाए चेव । २ । दो इसिवाइंदा पण्णत्ता, तं जहा-इसी चेव इसिवालए चेव ।३। दो भूयवाइंदा पण्णत्ता, तं जहा--इसरे चेव महिस्सरे चेव ।४। दो कंदिइंदा पण्णत्ता, तं जहा-सुवच्छे चेव विसाले चेव ।५। दो महाकंदि इंदा पण्णत्ता, तं जहा-हस्से चेव हस्सरई चेव । ६ । दो कुहंडिंदा पण्णत्ता, तं जहा-सेए चेव महासेसे चेव ।७। दो पयंगिंदा पण्णत्ता, तं जहा-पतए चेव पतयवई चेव ।८।

जोइसियाणं देवाणं दो इंदा पन्नत्ता, तं जहा-चंदे चेव सूरे चेव, सोहम्मीसाणेसु णं कप्पेसु दो इंदा पन्नत्ता, तं जहा-सक्के चेव इसाणे चेव। एवं सणंकुमारमाहिंदेसु णं कप्पेसु दो इंदा पन्नत्ता, तं जहा-सणंकुमारे चेव माहिंदे चेव । बंभलोग-लंतएसु णं कप्पेसु दो इंदा पन्नत्ता, तं जहा-बंभे चेव लंतए चेव । महासुक्कसहस्सारेसु णं कप्पेसु दो इंदा पन्नत्ता, तं जहा-महासुक्के चेव सहस्सारे चेव । आणयपाणयारणच्चुएसु णं कप्पेसु दो इंदा पन्नत्ता, तं जहा-पाणए चेव अच्चुए चेव ।

महासुक्कसहस्सारेसु ण कप्पेसु विमाणा दुवन्ना पण्णत्ता, त जहा–हालिद्दा चेव सुक्किल्ला चेव। गेविज्जगाण देवाणं (ओगाहणा) दो रयणीयो उड्ढ उच्चत्तेण पण्णत्ता ॥सू०३६॥

॥ बीयट्ठाणे तइओ उद्देसो समत्तो ॥ २-३ ॥

छाया—द्वौ असुरकुमारेन्द्रौ प्रज्ञप्तौ तद्यथा–चमरश्चैव बलिश्चैव१। द्वौ नागकुमारेन्द्रौ प्रज्ञप्तौ, तद्यथा–धरणश्चैव भूतानन्दश्चैव२। द्वौ सुपर्णकुमारेन्द्रौ प्रज्ञप्तौ, तद्यथा–वेणुदेवश्चैव वेणुदालिश्चैव ३। द्वौ विद्युत्कुमारेन्द्रौ प्रज्ञप्तौ, तद्यथा–हरिश्चैव हरिसहश्चैव ४। द्वौ अग्निकुमारेन्द्रौ प्रज्ञप्तौ, तद्यथा–अग्निशिखश्चैव, अग्निमाणवश्चैव ५। द्वौ द्वीपकुमारेन्द्रौ प्रज्ञप्तौ, तद्यथा–पुण्यश्चैव, विशिष्टश्चैव ६। द्वौ उदधिकुमारेन्द्रौ प्रज्ञप्तौ, तद्यथा–जलकान्तश्चैव, जलप्रभश्चैव ७। द्वौ दिक्कु-

ये द्वीप और समुद्र इन्द्रों के उत्पातपर्वत के आश्रयभूत होते हैं अत अब सूत्रकार इन्द्र सबंधी वक्तव्यता का कथन करते हैं–

'दो असुरकुमारिंदा पण्णत्ता' इत्यादि।

सूत्रार्थ–चमर और बलि ये दो इन्द्र असुरकुमारों के कहे गये हैं–धरण और भूतानन्द ये दो इन्द्र नागकुमारों के कहे गये हैं। वेणुदेव और वेणुदालि ये दो इन्द्र सुवर्णकुमार के कहे गये हैं। हरि और हरिसह ये दो इन्द्र विद्युत्कुमार के कहे गये हैं ॥ ४ ॥ अग्निशिख और अग्निमाणव ये दो इन्द्र अग्निकुमारके कहे गये हैं ५। पुण्य और विशिष्ट ये दो इन्द्र द्वीपकुमार के कहे गये हैं ६। जलकान्त और जलप्रभ ये दो इन्द्र उदधिकुमार के कहे गये हैं ७। अमितगति और अमितवाहन ये

તે દ્વીપો અને સમુદ્રો ઇન્દ્રોના ઉત્પાત પર્વતના આશ્રયભૂત હોય છે, તેથી હવે સૂત્રકાર તે ઇન્દ્રોની વક્તવ્યતાનું કથન કરે છે—

"दो असुरकुमारिंदा पण्णत्ता" ઇત્યાદિ—

સૂત્રાર્થ–અસુરકુમારોના બે ઇન્દ્રોનાં નામ ચમર અને બલિ છે નાગકુમારોના બે ઇન્દ્રોનાં નામ ધરણ અને ભૂતાનંદ છે સુવર્ણકુમારોના બે ઇન્દ્રોનાં નામ વેણુદેવ અને વેણુદાલિ છે વિદ્યુત્કુમારોના બે ઇન્દ્રોનાં નામ હરિ અને હરિસહ છે અગ્નિકુમારોના બે ઇન્દ્રોનાં નામ અગ્નિશિખ અને અગ્નિમાણવ છે દ્વીપકુમારોના બે ઇન્દ્રોનાં નામ પુણ્ય અને વિશિષ્ટ છે ઉદધિકુમારોનાં બે ઇન્દ્રોના નામ જલકાન્ત અને જલપ્રભ છે દિક્કુમારોનાં બે ઇન્દ્રોનાં નામ અમિતગતિ

मारेन्द्रौ प्रज्ञप्तौ, तद्यथा–अमितगतिश्चैव अमितवाहनश्चैव ८। द्वौ वायुकुमारेन्द्रौ प्रज्ञप्तौ, तद्यथा–वेलम्बश्चैव, प्रभञ्जनश्चैव ९। द्वौ स्तनितकुमारेन्द्रौ प्रज्ञप्तौ, तद्यथा–घोषश्चैव महाघोषश्चैव १०। द्वौ पिशाचेन्द्रौ प्रज्ञप्तौ, तद्यथा–कालश्चैव महाकालश्चैव १। द्वौ भूतेन्द्रौ प्रज्ञप्तौ, तद्यथा–सुरूपश्चैव प्रतिरूपश्चैव २। द्वौ यक्षेन्द्रौ प्रज्ञप्तौ, तद्यथा–पूर्णभद्रश्चैव माणिभद्रश्चैव ३। द्वौ राक्षसेन्द्रौ प्रज्ञप्तौ, तद्यथा–भीमश्चैव महाभीमश्चैव ४। द्वौ किन्नरेन्द्रौ प्रज्ञप्तौ, तद्यथा–किन्नरश्चैव किंपुरुषश्चैव ५। द्वौ किंपुरुषेन्द्रौ प्रज्ञप्तौ, तद्यथा–सत्पुरुषश्चैव महापुरुषश्चैव ६। द्वौ महोरगेन्द्रौ प्रज्ञप्तौ, तद्यथा–अतिकायश्चैव महाकायश्चैव ७। द्वौ गन्धर्वेन्द्रौ प्रज्ञप्तौ, तद्यथा–गीतरतिश्चैव गीतयशाश्चैव ८। द्वौ अप्रज्ञप्तिकेन्द्रौ प्रज्ञप्तौ तद्यथा–संनिहितश्चैव सामान्यश्चैव १। द्वौ पञ्चप्रज्ञप्तिकेन्द्रौ प्रज्ञप्तौ, तद्यथा–धाताचैव विधा-

दो इन्द्र दिक्कुमार के कहे गये हैं ८। वेलम्ब और प्रभञ्जन ये दो इन्द्र वायुकुमार के कहे गये हैं ९। घोष और महाघोष ये दो इन्द्र स्तनितकुमार के कहे गये हैं १०। काल और महाकाल ये दो इन्द्र पिशाच के कहे गये हैं १। सुरूप एवं प्रतिरूप ये दो इन्द्र भूतों के कहे गये हैं २। पूर्णभद्र और माणिभद्र ये दो इन्द्र यक्ष के कहे गये हैं ३। भीम और महाभीम ये दो इन्द्र राक्षसों के कहे गये हैं। किन्नर और किंपुरुष ये दो इन्द्र किन्नरों के कहे गये हैं ५। सत्पुरुष और महापुरुष ये दो इन्द्र किं पुरुषों के कहे गये हैं ६। अतिकाय और महाकाय ये दो इन्द्र महोरगों के कहे गये हैं ७। गीतरति और गीतयश ये दो इन्द्र गन्धर्वों के कहे गये हैं ८। सन्निहित और सामान्य ये दो इन्द्र अप्रज्ञप्तिक के कहे गये हैं १ धाता और विधाता ये दो इन्द्र पञ्चप्रज्ञप्तिक के कहे गये हैं २

અને અમિતવાહન છે વાયુકુમારોના બે ઈન્દ્રોના નામ વેલમ્બ અને પ્રભજન છે. સ્તનિતકુમારોના બે ઈન્દ્રોના નામ ઘોષ અને મહાઘોષ છે. ॥ ૧૦ ॥

પિશાચોના બે ઈન્દ્રોના નામ કાળ અને મહાકાળ છે ભૂતોનાં ઇન્દ્રોનાં નામ સુરૂપ અને પ્રતિરૂપ છે યક્ષોના બે ઈન્દ્રોનાં નામ પૂર્ણભદ્ર અને મણિભદ્ર છે. રાક્ષસોના બે ઇન્દ્રોના નામ ભીમ અને મહાભીમ છે કિન્નરોના બે ઈન્દ્રોનાં નામ કિન્નર અને કિંપુરુષ છે. કિંપુરુષોના બે ઇન્દ્રોનાં નામ સત્પુરુષ અને મહાપુરુષ છે મહોરગોના બે ઈન્દ્રોનાં નામ અતિકાય અને મહાકાય છે ગંધર્વોના બે ઇન્દ્રોનાં નામ ગીતરતિ અને ગીતયશ છે ॥ ૮ ॥

અપ્રજ્ઞપ્તિકના બે ઇન્દ્રોનાં નામ સન્નિહિત અને સામાન્ય છે. પંચપ્રજ્ઞપ્તિકના બે ઈન્દ્રોના નામ ધાતા અને વિધાતા છે ઋષિવાદના બે ઈન્દ્રોના નામ ઋષિ-

त्पाते २। द्वौ ऋषिवादीन्द्रौ प्रज्ञप्तौ, तद्यथा–ऋषिश्चैव, ऋषिपालकश्चैव ३। द्वौ भूतवादीन्द्रौ प्रज्ञप्तौ, तद्यथा–ईश्वरश्चैव, महेश्वरश्चैव ४। द्वौ क्रन्दितेन्द्रौ प्रज्ञप्तौ तद्यथा–सुवत्सश्चैव विशालश्चैव ५। द्वौ महाक्रन्दितेन्द्रौ प्रज्ञप्तौ, तद्यथा–हास्यश्चैव हास्यरतिश्चैव ६। द्वौ कूष्माण्डेन्द्रौ प्रज्ञप्तौ, तद्यथा–श्वेतश्चैव, महाश्वेतश्चैव ७। द्वौ पतङ्गेन्द्रौ प्रज्ञप्तौ, तद्यथा–पतङ्गश्चैव पतङ्गपतिश्चैव ८।

ज्योतिष्काणां देवानां द्वौ इन्द्रौ प्रज्ञप्तौ, तद्यथा–चन्द्रश्चैव सूरश्चैव। सौधर्मेशानयोः खलु कल्पयोः द्वौ इन्द्रौ प्रज्ञप्तौ, तद्यथा–शक्रश्चैव, ईशानश्चैव। एवं सनत्कुमारमाहेन्द्रयोः खलु कल्पयोः द्वौ इन्द्रौ प्रज्ञप्तौ, तद्यथा – सनत्कुमारश्चैव, माहेन्द्रश्चैव। ब्रह्मलोकलान्तकयोः खलु कल्पयोः द्वौ इन्द्रौ प्रज्ञप्तौ, तद्यथा–ब्रह्मा चैव, लान्तकश्चैव। महाशुक्रसहस्रारयोः खलु कल्पयोः द्वौ इन्द्रौ प्रज्ञप्तौ, तद्यथा–महाशुक्रश्चैव, सहस्रारश्चैव। आनतप्राणतारणाच्युतेषु खलु कल्पेषु द्वौ इन्द्रौ

ऋषि और ऋषिपालक ये दो इन्द्र ऋषिवादी के कहे गये हैं ३ ईश्वर और महेश्वर ये दो इन्द्र भूतवादी के कहे गये हैं ४ सुवत्स और विशाल ये दो इन्द्र क्रन्दित के कहे गये हैं ५ हास्य और हास्यरति ये दो इन्द्र महाक्रन्दितों के कहे गये हैं ६ श्वेत और महाश्वेत ये दो इन्द्र कूष्माण्ड के कहे गये हैं ७ पतग और पतंगपति ये दो इन्द्र पतग के कहे गये हैं ज्योतिष्क देवों के दो इन्द्र इस प्रकार से कहे गये हैं–एक चन्द्र और दूसरा सूर्य सौधर्म और ईशान इन दो कल्पों के शक्र और ईशान ये दो इन्द्र कहे गये हैं। इसी तरह सनत्कुमार और माहेन्द्र कल्प के सनत्कुमार और माहेन्द्र ये दो इन्द्र कहे गये हैं। ब्रह्मलोक और लान्तक इन दो कल्पों के ब्रह्म और लान्तक ये दो इन्द्र कहे गये हैं। महाशुक्र और सहस्रार इन दो कल्पों के महाशुक्र और सहस्रार

અને ઋષિ પાલક છે ભૂતવાદીના બે ઈન્દ્રોનાં નામ ઈશ્વર અને મહેશ્વર છે ક્રંદિતના બે ઈન્દ્રોનાં નામ સુવત્સ અને વિશાલ છે મહાક્રન્દિતોનાં નામ હાસ્ય અને હાસ્યરતિ કહ્યાં છે કૂષ્માંડના બે ઈન્દ્રોનાં નામ શ્વેત અને મહાશ્વેત કહ્યાં છે ॥ ૭ ॥ પતગ અને પતગપતિ એ બે પતગના ઈન્દ્રો કહ્યાં છે ॥ ૮॥

જ્યોતિષ્ક દેવોના બે ઈન્દ્રોનાં નામ નીચે પ્રમાણે છે–(૧) ચન્દ્ર અને (૨) સૂર્ય સૌધર્મ અને ઈશાન ઈન્દ્રોનાં નામ શક્ર અને ઈશાન કહ્યાં છે એજ પ્રમાણે સનત્કુમાર અને માહેન્દ્ર કલ્પના ઈન્દ્રોનાં નામ સનત્કુમાર અને માહેન્દ્ર કહ્યાં છે બ્રહ્મલોક અને લાન્તક કલ્પના ઈન્દ્રોનાં નામ બ્રહ્મ અને લાન્તક છે મહાશુક્ર અને સહસ્રાર કલ્પના ઈન્દ્રોનાં નામ મહાશુક્ર અને સહસ્રાર છે

प्रज्ञप्तौ, तद्यथा-प्राणतश्चैव अच्युतश्चैव । महाशुक्रसहस्रारयोः खलु कल्पयोर्विमानानि द्विवर्णानि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा-हारिद्राणि चैव शुक्लानि चैव । ग्रैवेयकानां देवानां-(अवगाहना) द्वे रत्नी ऊर्ध्वमुच्चत्वेन प्रज्ञप्ता ॥ सू० ३६ ॥

॥ द्वितीयस्थाने तृतीयोद्देशकः समाप्तः ॥ २-३ ॥

टीका—' दो असुरकुमारिंदा ' इत्यादि ।

असुरकुमारादि स्तनितकुमारपर्यन्तानां दशानां भवनपतिनिकायानां मेरुमाश्रित्य दक्षिणोत्तरदिग्द्वयाश्रितत्वेन द्विविधत्वात् विंशतिरिन्द्राः। तत्र चमरो दक्षिणदिग्वर्तिनाम् इन्द्रः, वली तूत्तरदिग्वर्तिनामित्येवं सर्वत्र विज्ञेयम्२० । एवं पिशा-

---

ये दो इन्द्र कहे गये हैं। आनत प्राणत आरण अच्युत इन कल्पों के प्राणत और अच्युत ये दो इन्द्र कहेगये है तथा महाशुक्र और सहस्रार कल्पों के विमान हारिद्रवर्ण (पीला) और शुक्लवर्ण वाले कहे गये हैं। ग्रैवेयक देवों के शरीर की अवगाहना द्वि रत्निप्रमाण है।

असुरकुमार से लेकर स्तनितकुमार तक दश भवनपतिनिकायों के २० इन्द्र हैं मेरु की दक्षिण और उत्तरदिशा को लेकर भवनपतिनिकाय दो प्रकार के हो जाते हैं इनमें जो दक्षिणदिग्वर्ती भवनपतिनिकाय है उसका इन्द्र चमर है और जो उत्तरदिग्वर्तीनिकाय है उसका इन्द्र वली है, इस तरह से नागकुमार आदि के विषय में भी दक्षिण और उत्तर दिशा में रहने की अपेक्षा से क्रमशः धरण और भूतानन्दआदि इन्द्रों की व्यवस्था समझना चाहिये।

આનત, પ્રાણુત, આરણુ, અચ્યુત, આ કલ્પોના બે ઇન્દ્રોનાં નામ પ્રાણુત અને અચ્યુત કહ્યા છે ॥ ૧૦ ॥ મહાશુક્ર અને સહસ્રાર કલ્પોના વિમાનો હારિદ્ર (પીળા) અને સફેદ વર્ણુવાળાં કહ્યાં છે. ગ્રૈવેયકવાસી દેવોના શરીરનું પ્રમાણુ બે રત્નિપ્રમાણુ કહ્યુ છે.

અસુરકુમારથી લઇને સ્તનિતકુમાર સુધીના દશ ભવનપતિનિકાયોના ૨૦ ઇન્દ્રો છે મેરુની દક્ષિણુ અને ઉત્તર દિશાની અપેક્ષાએ ભવનપતિનિકાયના બે પ્રકાર પડી જાય છે. દક્ષિણુ દિશાવર્તી જે ભવનપતિ નિકાય છે તેનો ઇન્દ્ર ચમર છે અને ઉત્તર દિશાવર્તી જે ભવનપતિ નિકાય છે તેનો ઇન્દ્ર બલિ છે. એજ પ્રમાણે નાગકુમાર આદિના વિષયમાં પણુ સમજવું. દક્ષિણુ અને ઉત્તર દિશામાં રહેનારા નાગકુમારોના ઇન્દ્રોના નામ અનુક્રમે ધરણુ અને ભૂતાનંદ સમજવા. એજ પ્રમાણે બાકીના સુપર્ણુકુમાર આદિના ઉત્તર અને દક્ષિણુના ઇન્દ્રો વિષે પણુ સમજવું.

चादारभ्य गन्धर्वपर्यन्तानामष्टानां व्यन्तरनिकायानां द्विगुणत्वात् षोडशेन्द्रा १६। अणपन्निक (अणपन्निय) देवानारभ्य पतङ्गदेवान्तानामप्यष्टानामेव व्यन्तरविशेषरूप निकायानां द्विगुणत्वात् षोडशेन्द्रा इति १६। ज्योतिष्कदेवानां चन्द्रसूर्याणामसंख्यातत्वेऽपि जातिमात्रापेक्षया द्वावेव चन्द्रसूर्यास्त्याविन्द्रौ २। सौधर्माद्यच्युतपर्यन्तानां द्वादशानां कल्पानां दशसंख्यका इन्द्राः १०। इत्येष सर्वसंकलने चतुःषष्टिरिन्द्रा भवन्तीति। देवाधिकारात्तन्निवासभूतविमानवक्तव्यतामाह–'महासुक्क०' इत्यादि, सर्वं सुगमम्। नवरं हारिद्राणि पीतानि, शुक्लानि–श्वेतानि। सौधर्मादि

इसी प्रकार पिशाच से लेकर गन्धर्वतक के आठ व्यन्तरनिकायों के द्विगुण होने से इन्द्र १६ होते हैं। अणपन्निक आदि देव व्यन्तर विशेष हैं। ये भी आठ ही होते हैं। इन आठों के भी एक २ के दो २ इन्द्र होते हैं इस तरह इनके भी १६ इन्द्र होते हैं।

यद्यपि ज्योतिष्क देवरूप चन्द्र और सूर्य असंख्यात हैं फिर भी जाति मात्रकी अपेक्षासे ही एक चन्द्रको और एक सूर्यको इन्द्र कहा गया है– वैसे तो जितने चन्द्र और सूर्य है। सौधर्म से लेकर अच्युत पर्यंत १२ कल्पोंके १० इन्द्र हैं। सब मिलकर इन इन्द्रों की संख्या ६४ है।

देवों के अधिकार को लेकर सूत्रकार अब उनके निवासस्थानभूत विमानों के विषय में कथन करते हैं–क्यों कि–देव विमानों में रहा करते हैं (महासुक्क०) इत्यादि–यह सब सुगम है–हारिद्र पदसे पीला वर्ण और शुक्लपद से श्वेतवर्ण गृहीत हुए हैं। सौधर्म,आदि विमानों

એજ પ્રમાણે પિશાચથી લઈને ગંધર્વ પર્યન્તના આઠ વ્યન્તર નિકાયોમાં પણ પ્રત્યેકના બે ઇન્દ્રોને હિસાબે કુલ ૧૬ ઇન્દ્રો થાય છે અણપન્નિક આદિ દેવ વ્યન્તર વિશેષ જ છે તે આઠ પ્રકારના વ્યન્તર વિશેષોના પણ બબ્બે ઇન્દ્રો હોય છે, તેથી તેમના કુલ ૧૬ ઇન્દ્રો થાય છે

જો કે જ્યોતિષ્ક દેવો રૂપ ચન્દ્ર અને સૂર્ય તો અસંખ્યાત છે છતાં પણ જાતિમાત્રની અપેક્ષાએ જ એક ચન્દ્ર અને એક સૂર્યને ઇન્દ્ર કહેવામાં આવેલ છે બાકી તો જેટલા ચન્દ્ર અને સૂર્ય છે તે સૌ ઇન્દ્રરૂપ જ છે સૌધર્મથી લઈને અચ્યુત પર્યન્તના બાર કલ્પોના ૧૦ ઇન્દ્રો છે આ રીતે બધા મળીને ૨૦+૧૬+૧૬+૨+૧૦ =૬૪ ઇન્દ્રો થાય છે

દેવોનો અધિકાર ચાલી રહ્યો હોવાથી હવે સૂત્રકાર તેમના નિવાસ સ્થાનરૂપ વિમાનોના વિષયમાં પ્રરૂપણા કરે છે કારણ કે તેઓ વિમાનોમાં રહે છે "મહાસુક્ક૦" ઇત્યાદિ આ સૂત્રોનો ભાવાર્થ સુગમ છે, હારિદ્રપદથી પીળો વર્ણ અને શુક્લપદથી શ્વેતવર્ણ ગ્રહણ કરાયો છે સૌધર્મ આદિ

विमानवर्णविषयः क्रमश्चायम्–सौधर्मेशानयोः पञ्चवर्णानि विमानानि । ततो द्वयोः सनत्कुमारमाहेन्द्रयोः कृष्णवर्णवर्जितानि चतुर्वर्णानि । पुनर्द्वयोर्ब्रह्मलोकलान्तकयोः कृष्णनीलवर्णं विहायान्यत्रिवर्णानि । ततः पुनर्द्वयोर्महाशुक्रसहस्रारयोः पीतानि शुक्लानि च । ततोऽनन्तरं शुक्लान्येवेति, उक्तञ्च—

" सोहम्मे पंचवन्ना, एक्कगहाणी उ जा सहस्सारो ।
दो दो तुल्लाकप्पा, तेण परं पुंडरीयाइं ॥ १ ॥ "

छाया—सौधर्मे पञ्चवर्णानि, एकैकहानिस्तु यावत् सहस्रारः ।
द्वौ द्वौ तुल्यौ कल्पौ, तेन परं पुण्डरीकाणि ॥१॥ इति ।

देवाधिकारादेव द्विस्थानकानुपातिनीं तेषामवगाहनामाह—' गेवेज्जगाणं ' इत्यादि, ग्रैवेयकानां देवानामवगाहना ऊर्ध्वोच्चत्वेन द्वे रत्नी–रत्नि द्वयपरिमिता प्रज्ञप्ता भगवता ॥ सू० २६ ॥

॥ इति द्विस्थानकस्य तृतीय उद्देशकः समाप्तः ॥ २–३ ॥

के वर्ण इस प्रकार से है सौधर्म और ईशान में पांचों वर्णवाले विमान है । सनत्कुमार और माहेन्द्र इन दो कल्पों में कृष्णवर्णवर्जित चारवर्ण वाले विमान है । ब्रह्मलोक और लान्तक में कृष्ण, नील वर्ण वर्जित तीन वर्णवाले विमान है महाशुक्र और सहास्रार देवलोक में पीत और शुक्लवर्णवाले विमान है । इनके बाद शुक्लवर्णके ही विमान हैं । कहा भी है–" सोहम्मे पंचवन्ना " इत्यादि ।

यहां द्विस्थानों का प्रकरण चल रहा है इसलिये ग्रैवेयक निवासी देवों की ही यहां शरीरावगाहना कही गई है–कि–"गेवेज्जगाणं" ग्रैवेयक देवोंकी शरीरावगाहना ऊँचाईकी अपेक्षा रत्निप्रमाण है ॥ सू० २६ ॥

दूसरे स्थानकका तीसरा उद्देशा संपूर्ण ॥ २–३

વિમાનોનાં વર્ણ આ પ્રમાણે છે–સૌધર્મ અને ઇશાનમાં પાંચે વર્ણવાળાં વિમાનો છે. સનત્કુમાર અને માહેન્દ્ર કલ્પોમાં કૃષ્ણવર્ણ સિવાયના ચારે વર્ણનાં વિમાનો છે બ્રહ્મલોક અને લાન્તકમાં કૃષ્ણ અને નીલવર્ણ સિવાયના ત્રણે વર્ણનાં વિમાનો છે મહાશુક્ર અને સહસ્રાર કલ્પમાં પીત અને શુકલ વર્ણનાં વિમાનો છે. ત્યારપછીના કલ્પોમા શુકલવર્ણવાળાં જ વિમાનો છે. કહ્યુ પણ છે કે– " सोहम्मे पंचवन्ना " ઇત્યાદિ.

બે સ્થાનોનો અધિકાર ચાલતો હોવાથી ગ્રૈવેયકનિવાસી દેવોની જ શરીરાવગાહના અહીં પ્રકટ કરવામાં આવી છે. " गेवेज्जगाण ", ગ્રૈવેયકનિવાસી દેવોના શરીરનું પ્રમાણ–ઉંચાઇની અપેક્ષાએ બે રત્નિપ્રમાણ કહ્યું છે. ॥ સૂ. ૨૬ ॥

બીજા સ્થાનકનો ત્રીજો ઉદ્દેશક સંપૂર્ણ ॥ ૨–૩ ॥

अथ चतुर्थोद्देशक प्रारभ्यते—

गतस्तृतीय उद्देशकः, साम्प्रतं चतुर्थः प्रारभ्यते, अस्य च जीवाजीवनिरूपणमविषदस्य पूर्वेण सहाऽयमभिसम्बन्धः—पूर्वस्मिन्नुद्देशके पुद्गलधर्मो जीवधर्मा श्चाभिहिताः, अत्र तु 'सर्वजीवाजीवात्मक' मितिवाच्यम्, अनेन सम्बन्धेन प्राप्त स्यास्योद्देशकस्येमान्यायानि पञ्चविंशतिः सूत्राणि—'समयाइवा' इत्यादि।

एवमनन्तरसूत्रेण चाप सम्बन्धः—तृतीयोद्देशकस्यान्तिमसूत्रे जीवविशेषाणाम् स्वलक्षणो धर्मो निरूपितः, अत्र तु धर्माधिकारादेव समयादिस्थितिलक्षणो धर्मो जीवाजीवसम्बन्धी जीवाजीवतया धर्मधर्मिणोरभेदेनोच्यते, तत्र यावन्तः काल-

चौथा उद्देशेका प्रारंभ

तृतीय उद्देशा समाप्त हो चुका, अब चौथा उद्देशा प्रारंभ होता है इसमें जीव और अजीव का निरूपण हुआ है—तृतीय उद्देशे के साथ इस का संबंध इस प्रकार से है—तृतीय उद्देशे में पुद्गलधर्म और जीव धर्म कहे गये हैं यहां सब जीवात्मक है यह कहनाहै इसी संबंध से प्राप्त इस उद्देशक के ये "समयाइ वा" इत्यादि २५ सूत्र हैं।

इन सूत्रोंका भी अनन्तर सूत्रके साथ ऐसा सम्बन्ध है कि तृतीय उद्देशक के अन्तिम सूत्र में जीव विशेषों का उत्तरवरूप धर्म निरूपित हुआ है, परन्तु यहां धर्म के अधिकार को लेकर ही जीवाजीव संबंधी समयादि स्थितिरूप जो धर्म और धर्मी के अभेद की अपेक्षा से जीवा जीवरूप से कहा जाने वाला है सो इनमें जितने भी काल के प्रमाण हैं

ચોથા ઉદ્દેશક પ્રારંભ

ત્રીજુ ઉદ્દેશક પૂરો થયો, હવે ચોથા ઉદ્દેશાનો પ્રારંભ થાય છે આ ઉદ્દેશામાં જીવ અને અજીવનું નિરૂપણ થયું છે ત્રીજા ઉદ્દેશક સાથે આ ઉદ્દેશાનો સંબંધ આ પ્રમાણે છે—ત્રીજા ઉદ્દેશામાં પુદ્ગલધર્મ અને જીવધર્મનું કથન કર્યું છે અહીં એ કહેવાનું છે કે બધાં દ્રવ્યો જીવ અને અજીવરૂપ છે આ સંબંધને અનુલક્ષીને "समयाइ वा" ઇત્યાદિ ૨૫ સૂત્રો અહીં આપવામાં આવ્યાં છે

આ સૂત્રોનો આગલા સૂત્ર સાથે આ પ્રકારનો સંબંધ છે—ત્રીજા ઉદ્દેશાના છેલ્લા સૂત્રમાં જીવવિશેષોની ઉત્પત્તિરૂપ ધર્મનું નિરૂપણ થયું છે પરન્તુ અહીં ધર્મના અધિકારને અનુલક્ષીને જ જીવાજીવ સંબંધી સમયાદિ સ્થિતિરૂપ જે ધર્મ છે તેને ધર્મ અને ધર્મીના અભેદની અપેક્ષાએ જીવાજીવ રૂપે પ્રકટ કરવામાં આવવાનો છે કાળના જેટલાં પ્રમાણ છે જે જે પ્રમાણોમાં

प्रमाणास्तेषां सर्वेषामाद्यः परमसूक्ष्मः समय इति तमधिकृत्य कालप्ररूपणामाह— 'समयाइ वा' इत्यादि।

मूलम्—समयाइ वा आवलियाइ वा जीवाइ य अजीवाइ य पवुच्चइ १। आणपाणूइ वा थोवाइ वा जीवाइ य अजीवाइ य पवुच्चइ २। खणाइ वा लवाइ वा जीवाइ य अजीवाइ य पवुच्चइ ३। एवं मुहुत्ताइ वा, अहोरत्ताइ वा४, पक्खाइ वा मासाइ वा ५, उडूति वा अयणाइ वा६, संवच्छराइ वा जुगाइ वा७, वाससयाइ वा वाससहस्साइ वा८, वाससयसहस्साइ वा वासकोडीइ वा९, पुव्वंगाइ वा पुव्वाइ वा१०, तुडियंगाइ वा तुडियाइ वा ११, अडडंगाइ वा अडडाइ वा १२, अववंगाइ वा अववाइ वा१३, हूहू अंगाइ वा हूहूयाइ वा१४,उप्पलंगाइ वा उप्पलाइ वा१५, पउमंगाइ वा पउमाइ वा१६, णलिणंगाइ वा णलिणाइ वा १७, अच्छणिकुरंगाइ वा अच्छणिउराइवा१८, अउयंगाइ वा अउयाइ वा १९, णउयंगाइ वा णउयाइ वा २०, पउयंगाइ वा पउयाइ वा२१, चूलियंगाइ वा चूलियाइ वा२२, सीसपहेलियंगाइ वा सीसपहेलियाइ वा २३, पलिओवमाइ वा सागरोवमाइ वा २४, उस्सप्पिणीति वा ओसप्पिणीति वा जीवाइ य अजीवाइ य पवुच्चइ ॥ सू० ३७ ॥

छाया—समया इति वा आवलिका इति वा जीवा इति च अजीवा इति च प्रोच्यते १। आनप्राणा इति वा स्तोका इति वा जीवा इति च अजीवा इति च प्रोच्यते २। क्षणा इति वा लवा इति वा जीवा इति च अजीवा इति च प्रोच्यते ३। एवं मुहूर्ता इति वा अहोरात्र इति वा ४, पक्षा इति वा मासा इति वा ५,

अथ चतुर्थोद्देशक प्रारभ्यते—

गतस्तृतीय उद्देशकः, साम्प्रतं चतुर्थः प्रारभ्यते, अस्य च जीवाजीवनिरूपणमविषद्दस्य पूर्वेण सहाऽयमभिसम्बन्धः–पूर्वस्मिन्नुद्देशके पुद्गलधर्मा जीवधर्माश्चाभिहिताः, अत्र तु 'सर्वजीवाजीवात्मक' मितिप्राप्यम्, अनेन सम्बन्धेन प्राप्तस्यास्योद्देशकस्येमान्याद्यानि पञ्चविंशतिः सूत्राणि–'समयाइवा' इत्यादि।

एषमनन्तरसूत्रेण सार्धं सम्बन्धः–तृतीयोद्देशकस्यान्तिमसूत्रे जीवविशेषाणामुत्तत्वलक्षणो धर्मो निरूपितः, अत्र तु धर्माधिकारादेव समयादिस्थितिलक्षणो धर्मो जीवाजीवसम्बन्धी जीवाजीवतया धर्मधर्मिणोरभेदेनोच्यते, तत्र यावन्तः काल

चौथा उद्देशेका प्रारंभ

तृतीय उद्देश समाप्त हो चुका, अब चौथा उद्देशा प्रारंभ होता है इसमें जीव और अजीव का निरूपण हुआ है–तृतीय उद्देशे के साथ इस का संबंध इस प्रकार से है–तृतीय उद्देशे में पुद्गलधर्म और जीव धर्म कहे गये हैं यहाँ सब जीवात्मक है यह कहनाहै इसी संबंध से प्राप्त इस उद्देशक के ये "समयाइ वा" इत्यादि २५ सूत्र हैं।

इन सूत्रोंका भी अनन्तर सूत्रके साथ ऐसा सम्बन्ध है कि तृतीय उद्देशक के अन्तिम सूत्र में जीव विशेषों का उत्तत्वरूप धर्म निरूपित हुआ है, परन्तु यहां धर्म के अधिकार को लेकर ही जीवाजीव संबंधी समयादि स्थितिरूप जो धर्म और धर्मी के अभेद की अपेक्षा से जीवाजीवरूप से कहा जाने वाला है सो इनमें जितने भी काल के प्रमाण हैं

ચોથા ઉદ્દેશક પ્રારંભ

ત્રીજુ ઉદ્દેશક પૂરો થયો, હવે ચોથા ઉદ્દેશકનો પ્રારંભ થાય છે આ ઉદ્દેશકમાં જીવ અને અજીવનું નિરૂપણ થયું છે ત્રીજા ઉદ્દેશક સાથે આ ઉદ્દેશકનો સંબંધ આ પ્રમાણે છે–ત્રીજા ઉદ્દેશકમાં પુદ્ગલધર્મ અને જીવધર્મનું કથન કર્યું છે અહીં એ કહેવાનું છે કે બધાં દ્રવ્યો જીવ અને અજીવરૂપ છે આ સંબંધને અનુલક્ષીને "समयाइ वा" ઇત્યાદિ ૨૫ સૂત્રો અહીં આપવામાં આવ્યાં છે

આ સૂત્રોનો આગલા સૂત્ર સાથે આ પ્રકારનો સંબંધ છે—ત્રીજા ઉદ્દેશાના છેલ્લા સૂત્રમાં જીવવિશેષોની ઉત્તત્વરૂપ ધર્મનું નિરૂપણ થયું છે પરન્તુ અહીં ધર્મના અધિકારને અનુલક્ષીને જ જીવાજીવ સંબંધી સમયાદિ સ્થિતિરૂપ જે ધર્મ છે તેને ધર્મ અને ધર્મીના અભેદની અપેક્ષાએ જીવાજીવ રૂપે પ્રકટ કરવામાં આવવાનો છે કાળના જેટલાં પ્રમાણ છે એ સૌ પ્રમાણોમાં

पलक्षितः परमसूक्ष्मोऽभेद्यो निरवयवः कालविशेषः । यथा पटशाटिकापाटने पूर्वं प्रथमतन्तुच्छेदो भवति, तत्राप्येकतन्तावसंख्याताः पक्ष्मसंघाता वर्त्तन्ते, एवं चैकस्मिन् समये यावन्तः संघाताच्छिद्यन्ते तैरनन्तैः संघातैः स्थूलतर एक एव संघातो विवक्ष्यते, एतादृशाश्च स्थूलतराः संघाता एकैकस्मिन् पक्ष्मण्यसंख्याता भवन्ति, तेषां क्रमेण छेदने असंख्यातसमयैरेवोपरितनपक्ष्मच्छेदो भवत्येकस्य पक्ष्मणश्छेदने यावान् कालो व्यत्येति तस्यासंख्याततमोऽशः समय उच्यते। समयस्य विशेषव्याख्याजिज्ञासुभिरुपासकदशाङ्गसूत्रस्य प्रथमसूत्रे मत्कृतायामगारधर्मसञ्जीवनीटीकायां

शाटिका का पाटन, कमल के शतदलों (सो दल) पत्र का छेदन और तारयन्त्र शब्द संचारण आदि अनेक उदाहरण हैं-हम जब पटशाटिका को फाडते हैं तब हमें प्रतीत तो ऐसा ही होता है कि पटशाटिका बहुत ही शीघ्रता से फट गई है-परन्तु ऐसा नहीं है क्यों कि पटशाटिका जब फाडी जाती है तब उस समय उसका प्रथम तन्तु फटता है इस प्रथम तन्तु में भी असंख्यात पक्ष्म संघात होते हैं एक समय में जितने संघात छिदते हैं फटते हैं-उन अनन्त संघातों का स्थूलतर एक ही संघात विवक्षित होता है-ऐसे स्थूलतर संघात एक पक्ष्म में असंख्यात होते हैं इस क्रम से छेदन होने पर असंख्यातसमयों में ही उपरितन पक्ष्म का छेदन होता है-इस तरह एक पक्ष्म के छेदने में जितना काल लगता है उसका असंख्यातवां अंश ही समय कहा गया है इस समय की विशेष व्याख्या के इच्छुकों को उपासकदशाङ्ग की आगारसंजीवनी टीका के

શાટિકાનુ પાટન (વસ્ત્રને ફાડવાની ક્રિયા), કમલના શતદલોનું છેદન, અને તારયંત્ર શબ્દ સંચારણ આદિ અનેક ઉદાહરણ છે જ્યારે આપણે કોઈ વસ્ત્રને ફાડીયે છીએ, ત્યારે આપણને એવું લાગે છે કે તે વસ્ત્ર ઘણાં જ ઓછા સમયમાં ફાટી જાય છે, પરન્તુ તે માન્યતા બરાબર નથી, કારણ કે જ્યારે તે પટશાટિકાને (વસ્ત્રને) ફાડવામાં આવે છે, ત્યારે (તે સમયે) તો તેનો પ્રથમ તંતુ ફાટે છે તે પ્રથમ તંતુમાં પણ અસંખ્યાત પક્ષ્મ (અતિ બારીકમાં બારીક) સઘાત હોય છે એક સમયમાં જેટલા સંઘાત છેદાય છે-ફાટે છે તે અનન્ત સઘાતોનો સ્થૂલતર એક જ સઘાત વિવક્ષિત હોય છે. એવાં સ્થૂલતર સંઘાત એક પક્ષ્મમાં અસખ્યાત હોય છે આ ક્રમે છેદન થતાં થતાં અસખ્યાત સમયોમા જ ઉપરિતન (સૌથી ઉપરના) પક્ષ્મનુ છેદન થાય છે આ રીતે એક પક્ષ્મના છેદનમાં જેટલો કાળ લાગે છે તેના અસખ્યાતમાં અંશરૂપ કાળને સમય કહે છે આ સમયની વિશેષ વ્યાખ્યા જાણવાની ઇચ્છાવાળા પાઠકોએ ઉપાસકદશાંગના પહેલા સૂત્રની અગારસંજીવની ટીકા

ऋतव इति वा अयनानीति वा ६, संवत्सरा इति वा युगा इति वा ७, वर्षशतानीति वा वर्षसहस्राणीति वा ८, वर्षशतसहस्राणीति वा वर्षकोटय इति वा ९, पूर्वाङ्गानीति वा पूर्वाणीति वा १०, त्रुटिताङ्गानीति वा त्रुटितानीति वा ११, अटटाङ्गानीति वा अटटानीति वा १२, अववाङ्गानीति वा अववानीति वा १३, हूहूकाङ्गानीति वा हूहूकानीति वा १४, उत्पलाङ्गानीति वा उत्पलानीति वा १५, पद्माङ्गानीति वा पद्मानीति वा १६, नलिनाङ्गानीति वा नलिनानीति वा १७, अक्षनिकुराङ्गानीति वा अक्षनिकुराणीति वा १८, अयुताङ्गानीति वा अयुतानीति वा १९, नयुताङ्गानीति वा नयुतानीति वा २०, प्रयुताङ्गानीति वा प्रयुतानीति वा २१, चूलिकाङ्गानीति वा चूलिका इति वा २२, शीर्षप्रहेलिकाङ्गानीति वा शीर्षप्रहेलिका इति वा २३, पल्योपमानीति वा सागरोपमाणीति वा २४, उत्सर्पिण्य इति वा अवसर्पिण्य इति वा जीवा इति च अजीवा इति च प्रोच्यते।

टीका— समयाइ वा ' इत्यादि–समया इति वा।

'समयाः' इत्यत्र अतीतादिविवक्षया बहुत्वाद् बहुवचनम्। एवं सर्वत्र विज्ञेयम्। समयः–पटशाटिकापाटनक्रमस्वल्पतमप्रतिभेद–तारप्रभञ्जनसदृश्याऽनेकोदाहरणो

उन सब में सब से प्रथम परमसूक्ष्म समय है अतः इसी बात को लेकर सूत्रकार ने यहां काल की प्ररूपणा की है—

'समयाइ वा आवलियाइ वा ' इत्यादि

टीकार्थ—समय अथवा आवलिका ये जीव और अजीवरूप कहे गये हैं इसकथन का तात्पर्य ऐसा है कि यहां जो "समयाः" ऐसा बहुवचन रखा गया है यह अतीतादि समयों में बहुता होने की विवक्षा से रखा गया है इसी तरह से अन्यत्र भी जानना चाहिये यह समय परम सूक्ष्म होता है इसका खण्ड नहीं हो सकता है यह निरवयवरूप होता है-तथा यह काल विशेषरूप होता है समय की सत्ता के अनुमापक पट

સૌથી વધારે સૂક્ષ્મ સમય છે તે કારણે સૂત્રકારે સમય આદિ રૂપ કાળની નીચે પ્રમાણે પ્રરૂપણા કરે છે-"समयाइ वा आवलियाइ वा" ઇત્યાદિ

સમય અથવા આવલિકા, એ બન્નેને જીવ અને અજીવરૂપે પ્રકટ કરવામાં આવેલ છે આ કથનનું તાત્પર્ય નીચે પ્રમાણે છે—

અહીં જે "समयाः" 'સમયો' એવું બહુવચન વાપરવામાં આવ્યું છે તે અતીત (ભૂતકાળ) આદિ સમયોમાં બહુતા હોવાની અપેક્ષાએ વપરાયું છે એજ પ્રમાણે અન્યત્ર પણ સમજવું આ સમય અતિશય સૂક્ષ્મ હોય છે, તેનો વિભાગ થઈ શકતો નથી તે નિરવયરૂપ હોય છે તથા તે કાળવિશેષ રૂપ ગણાય છે સમયની સત્તાના અનુમાપક (માપવાના સાધનરૂપ) પટ

पलक्षितः परमसूक्ष्मोऽभेद्यो निरवयवः कालविशेषः । यथा पटशाटिकापाटने पूर्वं प्रथमतन्तुच्छेदो भवति, तत्राप्येकतन्तावसंख्याताः पक्ष्मसंघाता वर्त्तन्ते, एव चैकस्मिन् समये यावन्तः संघाताच्छिद्यन्ते तैरनन्तैः संघातैः स्थूलतर एक एव संघातो विवक्ष्यते, एतादृशाश्च स्थूलतराः संघाता एकैकस्मिन् पक्ष्मण्यसंख्याता भवन्ति, तेषां क्रमेण छेदने असंख्यातसमयैरेवोपरितनपक्ष्मच्छेदो भवत्येकस्य पक्ष्मणच्छेदने यावान् कालो व्यत्येति तस्यासंख्याततमोंऽशः समय उच्यते। समयस्य विशेषव्याख्याजिज्ञासुभिरुपासकदशाङ्गसूत्रस्य प्रथमसूत्रे मत्कृतायामगारधर्मसञ्जीवनीटीकायां

शाटिका का पाटन, कमल के शतदलों (सो दल) पत्र का छेदन और तारयन्त्र शब्द संचारण आदि अनेक उदाहरण हैं–हम जब पटशाटिका को फाडते हैं तब हमें प्रतीत तो ऐसा ही होता है कि पटशाटिका बहुत ही शीघ्रता से फट गई है–परन्तु ऐसा नहीं है क्यों कि पटशाटिका जब फाडी जाती है तब उस समय उसका प्रथम तन्तु फटता है इस प्रथम तन्तु में भी असंख्यात पक्ष्म संघात होते हैं एक समय में जितने संघात छिदते हैं फटते हैं–उन अनन्त संघातों का स्थूलतर एक ही संघात विवक्षित होता है–ऐसे स्थूलतर संघात एक पक्ष्म में असंख्यात होते हैं इस क्रम से छेदन होने पर असंख्यातसमयों में ही उपरितन पक्ष्म का छेदन होता है–इस तरह एक पक्ष्म के छेदने में जितना काल लगता है उसका असंख्यातवां अंश ही समय कहा गया है इस समय की विशेष व्याख्या के इच्छुकों को उपासकदशाङ्ग की आगारसंजीवनी टीका के

શાટિકાનુ પાટન (વસ્ત્રને ફાડવાની ક્રિયા), કમલના શતદલોનુ છેદન, અને તારયત્ર શબ્દ સંચારણુ આદિ અનેક ઉદાહરણુ છે જ્યારે આપણે કોઈ વસ્ત્રને ફાડીયે છીએ, ત્યારે આપણુને એવું લાગે છે કે તે વસ્ત્ર ઘણું જ ઓછા સમયમાં ફાટી જાય છે, પરન્તુ તે માન્યતા બરાબર નથી, કારણ કે જ્યારે તે પટશાટિકાને (વસ્ત્રને) ફાડવામાં આવે છે, ત્યારે (તે સમયે) તો તેનો પ્રથમ તંતુ ફાટે છે. તે પ્રથમ તતુમાં પણુ અસંખ્યાત પક્ષ્મ (અતિ બારીકમાં બારીક) સંઘાત હોય છે એક સમયમા જેટલા સંઘાત છેદાય છે-ફાટે છે તે અનન્ત સંઘાતોનો સ્થૂલતર એક જ સઘાત વિવક્ષિત હોય છે એવાં સ્થૂલતર સંઘાત એક પક્ષ્મમા અસખ્યાત હોય છે. આ ક્રમે છેદન થતાં થતા અસખ્યાત સમયોમા જ ઉપરિતન (સૌથી ઉપરના) પક્ષ્મનું છેદન થાય છે આ રીતે એક પક્ષ્મના છેદનમાં જેટલો કાળ લાગે છે તેના અસખ્યાતમાં અશરૂપ કાળને સમય કહે છે આ સમયની વિશેષ વ્યાખ્યા જાણવાની ઇચ્છાવાળા પાઠકોએ ઉપાસકદશાંગના પહેલા સૂત્રની અગારસજીવની ટીકા

विलोकनीयम्। तथा–असंख्यातसमयसमुदायात्मिकैकाऽऽवलिका, सा च क्षुल्लकभवग्रहणकालस्य षट्पञ्चाशदुत्तरद्विशततमभागभूता। समया इति वा आवलिका इति वा च कालपदार्थस्तदविरोधेन जीवा इति च जीवपर्यायत्वात् पर्यायपर्यायिणोश्च कथञ्चिद् भेदात्, तथा अजीवानां पुद्गलादीनां पर्यायत्वात् अजीवा इति च प्रोच्यते। समयादयो जीवादिव्यतिरेकभाजो न भवन्ति, तथाहि–सादि सपर्यवसानादिभेदभिन्ना या जीवाजीवादीनां स्थितिस्तद्भेदाः समयादयः सन्ति। सा च स्थितिर्जीवाजीवयोर्धर्मः, स धर्मश्च धर्मिणो नात्यन्तं भेदवान्, अतो धर्मधर्मिणोरभेदोपचारात् समया आवलिकाश्च जीवाजीवत्वेन व्यपदिश्यन्ते।

प्रथम सूत्र की टीका में अवलोकन करना चाहिये। तथा असंख्यात समयों की एक आवलिका होती है–यह आवलिका क्षुल्लकभवग्रहणरूप काल की २५६ वे भागरूप पड़ती है, समय अथवा आवलिकारूप जो कालविशेष है सो इनके साथ जीवादिका कोई विरोध नहीं है–अतः ये जीव के पर्यायरूप हैं और पर्याय और पर्यायी में कथंचित् अभेद माना हुआ है इसलिये ये जीव और अजीव आदिरूप कहे गये हैं। समयादिक जीवादिक से भिन्न नहीं हैं इस कथन का भाव ऐसा है कि सादि सपर्यवसान आदि भेदवाली जो जीवाजीवादिकों की स्थिति है उसी के भेद तो समयादिक हैं यह स्थितिजीव और अजीव की धर्म रूप है यह धर्म अपने धर्मी से अत्यन्त भेद वाला नहीं होता है इसलिये धर्म और धर्मी में अभेदोपचार से समय और आवलिका ये सब जीव और अजीवरूप से व्यपदेश को प्राप्त हो जाते हैं। यदि धर्म का धर्मी से अत्यन्त भेद माना जायगा तो वह उससे सर्वथा विप्रकृष्ट

वांची लेवी असंख्यात समयोनी એક આવલિકા થાય છે આ આવલિકા ક્ષુલ્લક ભવગ્રહણરૂપ કાળના ૨૫૬ માં ભાગપ્રમાણ હોય છે સમય અથવા આવલિકારૂપ જે કાળવિશેષ છે તેમની સાથે જીવાદિકનો કોઇ વિરોધ નથી તેથી તેઓ જીવની પર્યાયરૂપ છે અને પર્યાય અને પર્યાયીમાં કઇક અંશે અભેદ માનવામાં આવે છે, તેથી તેમને જીવ અને અજીવ આદિરૂપે કહેવામાં આવ્યા છે 'સમયાદિક જીવાદિકથી ભિન્ન નથી' આ કથનનો ભાવ નીચે પ્રમાણે છે

સાદિ સપર્યવસાન (અન્ત યુક્ત) આદિ ભેદવાળી જીવાદિકોની જે સ્થિતિ છે તેના જ ભેદ તો સમયાદિક છે આ સ્થિતિ જીવ અને અજીવના ધર્મરૂપ છે આ ધર્મ પોતાના ધર્મી કરતાં અત્યંત ભેદવાળો હોતો નથી તેથી ધર્મ અને ધર્મીમાં અભેદોપચારની અપેક્ષાએ સમય અને આવલિકા જીવ અને અજીવ રૂપ વ્યવહારને પ્રાપ્ત થઇ જાય છે જો ધર્મનો ધર્મીથી અત્યન્ત ભેદ માનવામાં આવે, તો તેના કરતાં બિલકુલ ભિન્ન થઇ જવાને

अत्यन्तभेदे हि विप्रकृष्टधर्ममात्रोपलब्धौ प्रतिनियतधर्मिविषयः संशयो न स्यात्, तदन्येभ्योऽपि तस्य भेदाविशेषात्। दृश्यते च यदा कश्चित् हरिततरुतरुणशाखा-प्रसरविवरान्तरतः किमपि शुक्लं पश्यति तदा 'किमियं पताका किं वा वलाका?। इत्येवं प्रतिनियतधर्मिविषयः संशय इति। अभेदेऽपि सर्वथा संशयानुत्पत्तिरेव, गुणग्रहणत एव तस्यापि गृहीतत्वादिति। इह त्वभेदनयाश्रयणात्--' जीवाइ य ' इत्याद्युक्तम्। इह च समयावलिकालक्षणपदार्थद्वयस्य प्रत्येकं जीवाजीवात्मकतया

-भिन्न हो जाने के कारण उसकी उपलब्धि होने पर प्रतिनियत धर्मी-विषयक जो संदेह होता है वह नहीं हो सकेगा, क्यों कि वह जिस प्रकार से विवक्षित धर्मी से भिन्न है उसी प्रकार से वह अन्य अविवक्षित धर्मी से भी भिन्न है तो फिर वह प्रतिनियतधर्मीविषयक ही संदेह को क्यों उत्पन्न करेगा अन्य धर्मीविषयक संदेह को उसी काल में वह क्यों नहीं उत्पन्न करेगा अवश्य ही उत्पन्न करेगा प्रतिनियत वस्तु विषयक संदेह होता नहीं है ऐसा तो नहीं हम जब बहूत दूर से हरे वृक्ष की शाखाओं के मध्य में कोई सफेद वस्तु देखते हैं तो हमें ऐसा संदेह होता ही है -कि क्या यह पताका है या वलाका (बगलोंकी पंक्ति) है ? यदि धर्मको धर्मी से सर्वथा अभिन्न ही माना जायगा-तभी प्रतिनियतवस्तु विषयक संदेह उत्पन्न नहीं हो सकेगा क्यों कि गुणके ग्रहणसे उससे अभिन्न उस वस्तु का ग्रहण हो ही जावेगा इसी कारण अभेदनय के आश्रयण से "जीवाइ य" इत्यादि पाठ कहा गया है। यहां ये समय आवलिकारूप पदार्थद्वय

કારણે તેની ઉપલબ્ધિ (પ્રાપ્તિ) થતાં પ્રતિનિયત ધર્મિવિષયક જે સદેહ થાય છે તે નહીં થઇ શકે, કારણ કે જે પ્રકારે તે વિવક્ષિત ધર્મીથી ભિન્ન છે એજ પ્રકારે તે અવિવક્ષિત ધર્મીથી પણ ભિન્ન છે, તો પછી તે પ્રતિનિયત ધર્મિ વિષયક જ સદેહ કેમ ઉત્પન્ન કરશે ? અન્યધર્મિવિષયક સદેહ એજ કાળે તે કેમ નહી ઉત્પન્ન કરે ? અવશ્ય ઉત્પન્ન કરશે જ પ્રતિનિયત વસ્તુવિષયક સદેહ ઉત્પન્ન ન થતો હોય એવી વાત તો બનતી નથી આપણે જ્યારે લીલા વૃક્ષની શાખાઓના મધ્યભાગમાં કોઇ સફેદ વસ્તુને દેખીએ છીએ ત્યારે આપણને એવો સદેહ થાય છે કે તે પતાકા છે કે બગલાની પંક્તિ છે ? જો ધર્મને ધર્મીથી સર્વથા અભિન્ન જ માનવામા આવે તો પણ પ્રતિનિયત વસ્તુવિષયક સદેહ ઉત્પન્ન નહીં થઈ શકે, કારણ કે ગુણના ગ્રહણથી તે ગુણથી અભિન્ન એવી તે વસ્તુ ગ્રહણ થઈ જ જશે એજ કારણે અભેદ નયને આધારે " જીવાઇ ય " ઈત્યાદિ કહેવામાં આવ્યો છે. અહીં તે સમય અને આવલિકા

मणनाद् द्विस्थानकावतारो विशेष । एवमुत्तरसूत्राण्यपि ज्ञेयानि । विशेष तु यस्यामः-' आणापाणूवि वा ' इत्यादिना आनप्राण -उच्छ्वासनिःश्वासकालः, स च सङ्ख्यातावलिकाप्रमाणः ।

उक्तञ्च—" हट्ठस्स अणवगल्लस्स, निरुवकिट्ठस्स जंतुणो ।
एगे ऊसासनीसासे एस पाणुत्ति वुच्चई ॥ १ ॥ " इति ।

छाया—हृष्टस्यानवग्लानस्य, निरुपक्लिष्टस्य जन्तोः ।
एक उच्छ्वासनिःश्वासः, एष प्राण इत्युच्यते ॥ १ ॥ इति ।

यद्वा—द्विपञ्चाशदधिकत्रिचत्वारिंशच्छत (४३५२) सङ्ख्यकावलिकापरिमित एक आनप्राण इति वृद्धाः ।

जीव अजीवरूप हैं इस प्रकार के कथन से द्विस्थानक में उनका अवतार हुआ है ऐसा जानना चाहिये इसी तरह से आगे के सूत्रों को भी जानना चाहिये १। "आणपाणूइ वा थोवाइ वा जीवाइ य अजीवाइ य" इत्यादि। श्वासोच्छ्वास अथवा स्तोक ये सब भी जीवरूप और अजीवरूप हैं उच्छ्वासनिःश्वास काल का नाम आनप्राण है। यह उच्छ्वास निःश्वास काल संख्यात आवलिका प्रमाणरूप होता है। कहा भी है– "हट्ठस्स अणवगल्लस्स" इत्यादि।

जो मनुष्य तुष्ट अर्थात् उत्साहयुक्त हो तथा अनवग्लान ग्लानिरहित अर्थात् नीरोगी हो, तथा निरुपक्लिष्ट अर्थात् मानसिक और कौटुम्बिक क्लेश से रहित हो, ऐसे मनुष्य के एक उच्छ्वास निःश्वास को प्राण कहते हैं ॥ १ ॥

अथवा—४३५२ आवलिकाप्रमाण एक आनप्राण होता है ऐसा

રૂપ છે પદાર્થોને જીવ અજીવરૂપ પ્રકટ કરવામાં આવેલ છે આ પ્રકારના કથનને લીધે દ્વિસ્થાનમાં (બે ભેદ) તેમની અવતારણા કરવામાં આવી છે એમ સમજવું એજ પ્રમાણે પછીનાં સૂત્રો વિષે પણ સમજવું ॥ ૧ ॥

" आणपाणूइ वा थोवाइ वा जीवाइ य अजीवाइ य ' ઇત્યાદિ—

શ્વાસોચ્છ્વાસ અને સ્તોક પણ જીવરૂપ અને અજીવરૂપ છે ઉચ્છ્વાસ નિશ્વાસકાળનું નામ આનપ્રાણ છે. તે ઉચ્છ્વાસ નિઃશ્વાસકાળ સંખ્યાત આવલિકાપ્રમાણ હોય છે કહ્યું પણ છે–" हट्ठस्स अणवगल्लस्स ઇત્યાદિ—

જે મનુષ્ય ઉત્સાહયુક્ત હોય અનવગ્લાન (ગ્લાનિરહિત અથવા નીરોગી) હોય, તથા નિરુપક્લિષ્ટ (માનસિક અને કૌટુંબિક ક્લેશથી રહિત) હોય, એવા મનુષ્યના એક ઉચ્છ્વાસ નિશ્વાસને પ્રાણ કહે છે ॥ ૧ ॥

उक्तश्चैतैः—" एगो आणापाणू, तेयालीसं सया उ बावन्ना ।
आवलियपमाणेणं, अणतनाणीहिं निद्दिट्ठो ॥ १ ॥ " इति ।
छाया—एक आनप्राणः त्रिचत्वारिंशच्छतानि द्विपञ्चाशत् ।
आवलिकाप्रमाणेन, अनन्तज्ञानिभिर्निर्दिष्टः ॥ १ ॥ इति ।

स्तोकः—सप्तानप्राणप्रमाणः । क्षणः-संख्यातानप्राणप्रमाणः–लवः-सप्तस्तोकप्रमाणः । एवमिति, एव–यथा प्राक्तनसूत्रत्रये ' जीवा इति च अजीवा इति च प्रोच्यते इति पाठो भणितस्तथैवेतःप्रभृति सर्वेषूत्तरसूत्रेषु बोध्य इत्यर्थः । मुहूर्त्तः–सप्तसप्ततिलवप्रमाणः,

उक्तश्च—" सत्त पाणाणि से थोवे सत्त थोवाणि से लवे ।
लवाणं सत्तहत्तरिए, एस मुहुत्ते वियाहिए ॥ १ ॥
तिण्णि सहस्सा सत्त सयाणि तेयत्तरिं चऊसासा ।
एस मुहुत्तो भणिओ, सव्वेहिं अणंतनाणीहिं ॥ १॥ " (भ०१ श० १२ उ)
छाया–सप्त प्राणाः स स्तोकः, सप्तस्तोकाः स लवः ।
लवानां सप्तसप्ततिः, एष मुहूर्त्तो व्याख्यातः ॥ १ ॥
त्रीणि सहस्राणि सप्तशतानि त्रिसप्तति श्वासोच्छ्वासाः ।
एष मुहूर्त्तो भणितः, सर्वैरनन्तज्ञानिभिः ॥ २ ॥ इति ।

वृद्धजन कहते हैं कहा भी है–" एगो आणापाणू तेयालीसं " इत्यादि ।

सात आनप्राण प्रमाण एक स्तोक होता है । संख्यात आनप्राणप्रमाण एक क्षण होता है । सात स्तोक प्रमाण एक लव होता है ।

जिस प्रकार पहिले के इन तीन सूत्रों में " जीवा इति च अजीवा इति च प्रोच्यते " ऐसा पाठ कहा गया है उसी प्रकार से " एवं मुहुत्ताइ वा अहोरत्ताइ वा, पक्खाइ वा मासाइ वा " इत्यादि २४ वें सूत्रतक " जीवा इति च, अजीवा इति च प्रोच्यते " इस पाठ का आयोजन करना चाहिये ७७ लवों का एक मुहूर्त्त है ।

અથવા ૪૪૫૨ આવલિકાપ્રમાણુ એક આનપ્રાણુ હોય છે, એવું વૃદ્ધજનો કહે છે કહ્યું પણુ છે—" एगो आणापाणू तेयालीसं " ઇત્યાદિ

સાત આનપ્રાણુ પ્રમાણુ એક સ્તોક હોય છે. સંખ્યાત આનપ્રાણુ પ્રમાણુ એક ક્ષણુ હોય છે, અને સાત સ્તોકપ્રમાણુ એક લવ હોય છે.

જે રીતે આગલા ત્રણુ સૂત્રો સાથે " जीवा इति च, अजीवा इति च प्रोच्यते " આ સૂત્રપાઠ આપવામાં આવ્યો છે, એજ પ્રમાણે " एवं मुहुत्ताइ वा अहोरत्ताइ वा, पक्खाइ वा मासाइ वा " ઇત્યાદિ ૨૪ માં સૂત્ર સુધી " जीवा इति च, अजीवा इति च प्रोच्यते " આ પાઠનું આયોજન કરવું જોઇએ. ૭૭

भणनाद् द्विस्थानकावतारो विज्ञेयः। एवमुत्तरसूत्राण्यपि ज्ञेयानि। विशेष द र्शयामः– आणापाणूति वा' इत्यादिना आनप्राण –उच्छ्वासनि श्वासकालः, स च सङ्ख्यातावलिकाप्रमाणः।

उक्तञ्च—"हट्ठस्स अणवगल्लस्स, निरुवकिट्ठस्स जतुणो।
एगे ऊसासनीसासे एस पाणुत्ति वुच्चई ॥ १ ॥" इति।

छाया—हृष्टस्यानवग्लानस्य, निरुपक्लिष्टस्य जन्तो।
एक उच्छ्वासनिःश्वासः, एष प्राण इत्युच्यते ॥ १ ॥ इति।

यद्वा—द्विपञ्चाशदधिकत्रिचत्वारिंशच्छत (४३५२) संख्यकावलिकापरिमित एक आनप्राण इति वृद्धाः।

जीव अजीवरूप हैं इस प्रकार के कथन से द्विस्थानक में उनका अव तार हुआ है ऐसा जानना चाहिये इसी तरह से आगे के सूत्रों को भी जानना चाहिये १। "अणपाणूइ वा थोवाइ वा जीवाइ य अजीवाइ य" इत्यादि। श्वासोच्छ्वास अथवा स्तोक ये सब भी जीवरूप और अजी वरूप हैं उच्छ्वासनिःश्वास काल का नाम आनप्राण है। यह उच्छ्वास निः श्वास काल सङ्ख्यात आवलिका प्रमाणरूप होता है। कहा भी है– "हट्ठस्स अणवगल्लस्स" इत्यादि।

जो मनुष्य हृष्ट अर्थात् उत्साहयुक्त हो तथा अनवग्लान ग्लानिर हित अर्थात् नीरोगी हो, तथा निरुपक्लिष्ट अर्थात् मानसिक और कौटुम्बिक क्लेश से रहित हो, ऐसे मनुष्य के एक उच्छ्वास निश्वास को प्राण कहते हैं ॥ १ ॥

अथवा—४३५२ आवलिकाप्रमाण एक आनप्राण होता है ऐसा

રૂપ બે પદાર્થોને જીવ અજીવરૂપ પ્રકટ કરવામાં આવેલ છે આ પ્રકારના કથનને લીધે દ્વિસ્થાનમાં (બે ભેદ) તેમની અવતારી કરવામાં આવી છે એમ સમજવું એજ પ્રમાણે પછીનાં સૂત્રો વિષે પણ સમજવું ॥ ૧ ॥

"आणपाणूइ वा थोवाइ वा जीवाइ य अजीवाइ य" ઇત્યાદિ—

શ્વાસોચ્છ્વાસ અને સ્તોક પણ જીવરૂપ અને અજીવરૂપ છે ઉચ્છ્વાસ નિશ્વાસકાળનું નામ આનપ્રાણ છે. તે ઉચ્છ્વાસ નિશ્વાસકાળ સંખ્યાત આવ લિકાપ્રમાણ હોય છે કહ્યું પણ છે–"हट्ठस्स अणवगल्लस्स" ઇત્યાદિ—

જે મનુષ્ય ઉત્સાહયુક્ત હોય અનવગ્લાન (ગ્લાનિરહિત અથવા નીરોગી) હોય, તથા નિરુપક્લિષ્ટ (માનસિક અને કૌટુંબિક ક્લેશથી રહિત) હોય, એવા મનુષ્યના એક ઉચ્છ્વાસ નિઃશ્વાસને પ્રાણ કહે છે ॥ ૧ ॥

पूर्वपरिमाणम् । एव त्रुटितादिषु पूर्वस्य पूर्वस्य संख्यानस्य चतुरशीतिलक्षगुणनेनोत्तरमुत्तरं संख्यानं भवति । एवं शीर्षप्रहेलिका पर्यन्तं विज्ञेयम् । तस्यां चतुर्नवत्यधिकमङ्कस्थानशतं भवति । अत्र गाथा—

८४ लाख से गुणा करने पर एक त्रुटिताङ्ग का प्रमाण होता है, ८४ लाख त्रुटितांग का एक त्रुटित होता है, ८४ लाख त्रुटितों का एक अटटाङ्ग होता है, ८४ लाख अटटांग का एक अटट होता है ८४ लाख अटट का एक अववांग होता है, ८४ लाख अववाङ्ग का एक अवव होता है चौरासी लाख अवव का एक हूहूकांग होता है, चौरासीलाख हूहूकांग का एक हूहूक होता है, चौरासी लाख हूहूक का एक उत्पलाङ्ग होता है, चौरासी लाख उत्पलांग का एक उत्पल होता है, चौरासी लाख उत्पल का एक पद्मांग होता है, चौरासी लाख पद्मांग का एक पद्म होता है, चौरासी लाख पद्म का एक नलिनांग होता है, चौरासी लाख नलिनांग का एक नलिन होता है, चौरासी लाख नलिन का एक अक्षिनिकुराङ्ग होता है, चौरासी लाख अक्षिनिकुरांग का एक अक्षिनिकुर होता है, चौरासी लाख अक्षिनिकुर का एक अयुतांग होता है, चौरासी लाख अयुतांग का एक अयुत होता है। चौरासी लाख अयुत का एक नयुतांग होता है, चौरासी लाख नयुतांग का एक नयुत होता है, चौरासी लाख नयुत का एक प्रयुतांग होता है, चौरासी लाख प्रयुतांग का एक प्रयुत होता

એટલા પ્રમાણને ૮૪ લાખ વડે ગુણવાથી એક ત્રુટિતાંગ પ્રમાણુકાળ થાય છે. ૮૪ લાખ ત્રુટિતાંગનું એક ત્રુટિત થાય છે. ૮૪ લાખ ત્રુટિતોનું એક અટટાંગ થાય છે અને ૮૪ લાખ અટટાગોનું એક અટટ થાય છે. ૮૪ લાખ અટટનો એક અવવાગ થાય છે અને ૮૪ લાખ અવવાંગનુ એક અવવ થાય છે. ૮૪ લાખ અવવનું એક હૂહૂકાગ થાય છે અને ૮૪ લાખ હૂહૂકાગનુ એક હૂહૂક થાય છે. ૮૪ લાખ હૂહૂકનુ એક ઉત્પલાંગ થાય છે અને ૮૪ લાખ ઉત્પલાંગનું એક ઉત્પલ થાય છે ૮૪ લાખ ઉત્પલનું એક પદ્માંગ થાય છે અને ૮૪ લાખ પદ્માગોનુ એક પદ્મ થાય છે ૮૪ લાખ પદ્મનુ એક નલિનાંગ થાય છે અને ૮૪ લાખ નલિનાગનુ એક નલિન થાય છે ૮૪ લાખ નલિનનું અક્ષિનિકુરાંગ થાય છે અને ૮૪ લાખ અક્ષિનિકુરાગનું એક અક્ષિનિકુર થાય છે. ૮૪ લાખ અક્ષિનિકુરનુ એક અયુતાગ થાય છે અને ૮૪ લાખ અયુતાગનુ એક અયુત થાય છે ૮૪ લાખ અયુતનુ એક નયુતાગ થાય છે અને ૮૪ લાખ નયુતાંગનું એક નયુત થાય છે. ૮૪ લાખ નયુતનુ એક પ્રયુતાગ થાય છે અને ૮૪ લાખ

अहोरात्रः—त्रिंशन्मुहूर्तप्रमाणः। पक्षः पञ्चदशाहोरात्रप्रमाणः मासः—पक्षद्वयम्। ऋतुः—मासद्वयप्रमाणः वसन्तादिरूपः। अयनम्—ऋतुत्रयपरिमितम्। संवत्सरः—अयनद्वयप्रमाणः। युगम्—पञ्चसंवत्सराणि। वर्षशतादीनि प्रसिद्धानि। पूर्वाङ्गम्—चतुरशीतिलक्षवर्षप्रमाणम्। पूर्वम्—पूर्वाङ्गेण चतुरशीतिलक्षगुणितम्। पूर्वपरिमाणं यथा—

" पुव्वस्स उ परिमाणं, सयरिं खलु होंति कोडिलक्खाओ।
छप्पन्नं च सहस्सा, बोद्धव्वा वास कोडीणं ॥ १ ॥ इति ॥

छाया—पूर्वस्य तु परिमाणं, सप्तति खलु भवन्ति कोटिलक्षाः।
षट्पञ्चाशच्च सहस्राणि, बोद्धव्यानि वर्षाणां कोटयः॥ १ ॥

अङ्कतोऽपि च—७०५६०००००००००००। सप्ततिः, तदुपरि षट्पञ्चाशत्, तदुपरि च दशशून्यानि स्थापनीयानीति। त्रुटिताङ्ग—चतुरशीति—लक्षगुणित

कहा भी है—" सत्त पाणाणि से थोवे " इत्यादि।

तीस मुहूर्तों का एक अहोरात्र होता है। १५ अहोरात्रों का एक पक्ष होता है दो पक्षों का एक मास होता है दो मास की एक वसन्तादि ऋतु होती है। तीन ऋतुओं का एक अयन होता है दो अयनों का एक संवत्सर होता है पांच संवत्सरों का एक युग होता है वर्षशत आदि प्रसिद्ध ही हैं। ८४ लाख वर्षों का एक पूर्वाङ्ग होता है, ८४ लाख पूर्वाङ्ग का एक पूर्व होता है। पूर्व का प्रमाण ऐसा ही कहा गया है—" पुव्वस्स उ परिमाणं " इत्यादि। तात्पर्य इस गाथा का ऐसा है कि ८४ लाख को ८४ लाख से गुणा किया जाता है तब इसमें वर्षों की संख्या का प्रमाण ७०५६०० ००००००० सत्तर लाख करोड़ छप्पन हजार करोड़ वर्ष जब होता है तब एक पूर्व होता है, पूर्व का जितना प्रमाण होता है उसे

લવોનું એક મુહૂર્ત થાય છે કહ્યું પણ છે– ' सत्त पाणाणि से थोवे " ઇત્યાદિ.

૩૦ મુહૂર્તોનો એક દિવસરાત (અહોરાત્ર) થાય છે ૧૫ અહોરાતોનો એક પક્ષ (પખવાડિયું) થાય છે બે પક્ષોનો એક માસ થાય છે બે માસની વસંતાદિ એક ઋતુ થાય છે ત્રણ ઋતુઓનું એક અયન થાય છે અને બે અયનનું એક સંવત્સર (વર્ષ) થાય છે પાંચ સંવત્સરોનો એક યુગ થાય છે. ૮૪ લાખ વર્ષોનું એક પૂર્વાંગ થાય છે અને ૮૪ લાખ પૂર્વાંગોનો એક પૂર્વ થાય છે પૂર્વનું પ્રમાણ ' पुव्वस्स उ परिमाणं ' ઇત્યાદિ સૂત્ર દ્વારા આ પ્રમાણે બતાવ્યું છે–૮૪ લાખને ૮૪ લાખ વડે ગુણતાં જે ૭૦૫૬૦૦૦૦૦૦૦૦૦૦ એક પૂર્વનું વર્ષ પ્રમાણ સિત્તેર લાખ કરોડ, છપ્પન હજાર કરોડ છે તે કાળને એક પૂર્વ કહે છે એક પૂર્વનું જેટલું પ્રમાણ કહ્યું છે

पूर्वपरिमाणम् । एवं त्रुटितादिषु पूर्वस्य पूर्वस्य संख्यानस्य चतुरशीतिलक्षगुणनेनोत्तरमुत्तरं संख्यानं भवति । एवं शीर्षप्रहेलिका पर्यन्तं विज्ञेयम् । तस्यां चतुर्नवत्यधिकमङ्कस्थानशतं भवति । अत्र गाथा—

८४ लाख से गुणा करने पर एक त्रुटिताङ्ग का प्रमाण होता है, ८४ लाख त्रुटितांग का एक त्रुटित होता है, ८४ लाख त्रुटितों का एक अटटाङ्ग होता है, ८४ लाख अटटांग का एक अटट होता है ८४ लाख अटट का एक अववांग होता है, ८४ लाख अववाङ्ग का एक अवव होता है चौरासी लाख अवव का एक हूहूकांग होता है, चौरासीलाख हूहूकांग का एक हूहूक होता है, चौरासी लाख हूहूक का एक उत्पलाङ्ग होता है, चौरासी लाख उत्पलांग का एक उत्पल होता है, चौरासी लाख उत्पल का एक पद्मांग होता है, चौरासी लाख पद्मांग का एक पद्म होता है, चौरासी लाख पद्म का एक नलिनांग होता है, चौरासी लाख नलिनांग का एक नलिन होता है, चौरासी लाख नलिन का एक अक्षिनिकुराङ्ग होता है, चौरासी लाख अक्षिनिकुरांग का एक अक्षिनिकुर होता है, चौरासी लाख अक्षिनिकुर का एक अयुतांग होता है, चौरासी लाख अयुतांग का एक अयुत होता है । चौरासी लाख अयुत का एक नयुतांग होता है, चौरासी लाख नयुतांग का एक नयुत होता है, चौरासी लाख नयुत का एक प्रयुतांग होता है, चौरासी लाख प्रयुतांग का एक प्रयुत होता

એટલા પ્રમાણને ૮૪ લાખ વડે ગુણવાથી એક ત્રુટિતાંગ પ્રમાણુકાળ થાય છે. ૮૪ લાખ ત્રુટિતાંગનું એક ત્રુટિત થાય છે. ૮૪ લાખ ત્રુટિતોનું એક અટટાંગ થાય છે અને ૮૪ લાખ અટટાંગોનુ એક અટટ થાય છે ૮૪ લાખ અટટનો એક અવવાંગ થાય છે અને ૮૪ લાખ અવવાંગનું એક અવવ થાય છે. ૮૪ લાખ અવવનુ એક હુહુકાંગ થાય છે અને ૮૪ લાખ હુહુકાંગનું એક હુહુક થાય છે. ૮૪ લાખ હુહુકનું એક ઉત્પલાંગ થાય છે અને ૮૪ લાખ ઉત્પલાંગનું એક ઉત્પલ થ ય છે ૮૪ લાખ ઉત્પલનું એક પદ્માંગ થાય છે અને ૮૪ લાખ પદ્માંગોનુ એક પદ્મ થાય છે ૮૪ લાખ પદ્મનુ એક નલિનાંગ થાય છે અને ૮૪ લાખ નલિનાંગનુ એક નલિન થાય છે ૮૪ લાખ નલિનનુ અક્ષિનિકુરાંગ થાય છે અને ૮૪ લાખ અક્ષિનિકુરાગનુ એક અક્ષિનિકુર થાય છે ૮૪ લાખ અક્ષિનિકુરનુ એક અયુતાગ થાય છે અને ૮૪ લાખ અયુતાગનુ એક અયુત થાય છે ૮૪ લાખ અયુતનુ એક નયુતાગ થાય છે અને ૮૪ લાખ નયુતાંગનુ એક નયુત થાય છે. ૮૪ લાખ નયુતનુ એક પ્રયુતાગ થાય છે અને ૮૪ લાખ

" इच्छिय ठाणेण गुण्ण, पणसुन्न चउरसीति गुणिय च।
फाकुणं ततारे, पुव्वंगाईण मुण सर्खं ॥ १ ॥ " इति।
छाया—इच्छितस्थानेन गुण्यं, शून्यपञ्चक चतुरशीतिगुणितं च।
पूर्वाङ्गादीनां संख्या विचारान् कृत्वा जानीहि ॥ १ ॥" इति।

शीर्षप्रहेलिकान्तः कालः सांव्यवहारिकः संख्यातः कालः प्रोच्यते। अनेन च प्रथमपृथिवीगतनारकाणां भवनपतिव्यन्तराणां, भरतैरवतेषु सुषमदुष्पमायाः पश्चिमे भागे मनुष्यतिरश्चां चायुर्मीयत इति। किञ्च—शीर्षप्रहेलिकायाः परतोऽप्यस्ति संख्यातः कालः, सचानतिशायिनां न व्यवहारविषय इति कृत्वौपम्ये

है, चौरासी लाख प्रयुत का एक चूलिकांग होता है, चौरासी लाख चूलिकांग की एक चूलिका होती है, चौरासी लाख चूलिकांग का एक शीर्षप्रहेलिकांग होता है, चौरासी लाख शीर्षप्रहेलिकांग की एक शीर्ष प्रहेलिका होती है। यहां तक लौकिक गणित है पल्योपम आदि सब लोकोत्तर गणित हैं। शीर्षप्रहेलिका में १९४ वें अङ्कस्थान होते हैं। गाथा —" इच्छिय ठाणेण गुण्ण " इत्यादि। इच्छित स्थानसे चौरासीलाख को गुणित करो जितनी वार गुणाओगे उतनी वारही पूर्वाङ्ग आदिकी संख्याको जानलो, अर्थात् पूर्वाङ्ग आदिमें जिसकी संख्या जाननी चाहे उसको चोरासी लाखसे गुणाने पर अगलेकी संख्या आजावेगी, जैसे पूर्वाङ्ग को चोरासी लाखसे गुणाने पर पूर्वकी संख्या आ जावेगी, पूर्वको चोरासी लाखसे गुणाने पर त्रुटितांगकी संख्या आवेगी, त्रुटितांगको चोरासी लाखसे गुणाने पर त्रुटितकी संख्या आजावेगी इत्यादि जान

પ્રયુતાંગનું એક પ્રયુત થાય છે ૮૪ લાખ પ્રયુતનું એક ચૂલિકાંગ થાય છે અને ૮૪ લાખ ચૂલિકાંગની એક ચૂલિકા થાય છે ૮૪ લાખ ચૂલિકાનું એક શીર્ષપ્રહેલિકાંગ થાય છે અને ૮૪ લાખ શીર્ષપ્રહેલિકાંગની એક શીર્ષપ્રહેલિકા થાય છે અહીં સુધીનું લૌકિક ગણિત છે પલ્યોપમ આદિ લોકોત્તર ગણિત (ગણતરી) છે

શીર્ષપ્રહેલિકા નામનો જે કાળ છે તે ૧૯૪ આંકડાવાળી સંખ્યા (વર્ષોની ક્રિયાએ) છે ગાથા—" ઇચ્છિય ઠાણેણ ગુણ્ણં " ઇત્યાદિ ઇચ્છિત સ્થાનથી ચોરાસી લાખનો ગુણાકાર કરો. જેટલીવાર ગુણશો તેટલીવાર પૂર્વાંગ આદિની સંખ્યા જાણાઈ આવશે. અર્થાત્ પૂર્વાંગ આદિમાં જેની સંખ્યા જાણવાની ઇચ્છા હોય તેને ચોર્યાસી લાખથી ગુણવાથી આગળની સંખ્યા આવી જશે જેમકે પૂર્વાંગને ચોરાસી લાખથી ગુણવાથી પૂર્વની સંખ્યા આવી જશે. પૂર્વને ચોર્યાસી લાખથી ગુણવાથી ત્રુટિતાંગની સંખ્યા આવી જશે ત્રુટિતાંગને ચોર્યાસી લાખથી ગુણવાથી ત્રુટિતની સંખ્યા આવી જશે. ઇત્યાદિ સમજી લેવું શીર્ષપ્રહેલિકા પર્યન્તના

प्रक्षिप्तः, अतएव शीर्षप्रहेलिकायाः परतः पल्योपमाद्युपन्यासः । तत्र पल्येनोपमा यस्य तत् पल्योपमम्—असंख्यातवर्षकोटिकोटिप्रमाणम् सागरेणोपमा यस्य तत् सागरोपमम्—पल्योपमकोटिकोटि दशकमानमिति । दशसागरोपमकोटिकोटय उत्सर्पिणी । एवमवसर्पिणीति ॥ सू० ३७ ॥

कालविशेषवद् ग्रामादिवस्तुविशेषा अपि जीवाजीवा एवेति द्विस्थानकैः सप्तचत्वारिंशत्सूत्रैः प्राह—

लेना चाहिये ॥ शीर्षप्रहेलिका तक का काल सांव्यावहारिक काल संख्यातकाल कहा है इस संख्यातकाल से प्रथमपृथिवीगत नारकों की, भवनपतियोंकी, व्यन्तरों की, भरतक्षेत्र ऐरवत क्षेत्र में सुषम दुष्षमाके पश्चिमभाग में वर्तमान मनुष्य तिर्यञ्चोंकी आयुका प्रमाण मापा जाता है।

किञ्च—शीर्षप्रहेलिका से आगे भी संख्यातकाल है परन्तु वह अतिशय ज्ञान रहित जीवों के व्यवहार का विषय नहीं होना है, ऐसा समझ कर ही उसे उपमान में प्रक्षिप्त कर दिया है इसी बात को बताने के लिये शीर्षप्रहेलिका से आगे के काल को पल्योपम आदि रूप से प्रकट किया गया है। पल्य से जिसकी उपमा हो वह पल्योपम है यह पल्योपमरूप काल असंख्यात कोटि कोटि वर्ष प्रमाण का होता है। सागर से जिसकी उपमा हो वह सागरोपम है दश कोटिकोटि पल्योपम का एक सागरोपम होता है। १० कोडाकोडी सागरोपम की एक उत्सर्पिणी और १० ही कोटाकोटी सागरोपम की एक अवसर्पिणी होती है अर्थात् बीस कोडाकोडी सागरोपम का एक काल चक्र होता है ॥ सू० ३७ ॥

કાળને સાંવ્યાવહારિક કાળ–સંખ્યાતકાળ કહ્યો છે તે સંખ્યાતકાળ દ્વારા પહેલી પૃથ્વીના નારકોના, ભવનપતિઓના, વ્યન્તરોના, ભરતક્ષેત્ર અને ઐરવત ક્ષેત્રમાં સુષમદુષમાના પશ્ચિમ ભાગમાં વર્તમાન (વિદ્યમાન) મનુષ્યો અને તિર્યંચોના આયુનુ પ્રમાણ માપી શકાય છે.

વળી શીર્ષપ્રહેલિકા પછી પણ સંખ્યાતકાળ છે, પરન્તુ તે અનતિશાયી (અતિશયજ્ઞાન વિનાના) જીવોના વ્યવહારના વિષયરૂપ હોતા નથી, એમ સમજીને જ તેને ઉપમા દ્વારા બતાવવામાં આવ્યો છે એ વાતને બતાવવાને માટે શીર્ષપ્રહેલિકાથી આગળના કાળને પલ્યોપમ આદિરૂપે પ્રકટ કરવામાં આવેલ છે પલ્યની (મોટો ખાડો) સાથે જેની ઉપમા આપી શકાય છે તેવા કાળને પલ્યોપમ કાળ કહે છે તે પલ્યોપમરૂપ કાળ અસંખ્યાત કોટિ કોટિ વર્ષપ્રમાણવાળો હોય છે. જે કાળને સાગરની ઉપમા આપી શકાય છે, એવા કાળનુ નામ સાગરોપમ કાળ છે દશ કોટિ કોટિ પલ્યોપમનો એકસાગરોપમ કાળ થાય છે. ૧૦ કોડા કોડીસાગરોપમની એક ઉત્સર્પિણી થાય છે અને એટલા જ (૧૦) કોડાકોડી સાગરોપમની એક અવસર્પિણી થાય છે. સૂ. ૩૭

" इच्छिय ठाणेण गुणं, पणसुन्न चउरसीइ गुणिय च ।
काऊणं तइवारे, पुव्वंगाईण मुण संखं ॥ १ ॥ " इति ।

छाया—इच्छितस्थानेन गुण्यं, शून्यपञ्चक चतुरशीतिगुणितं च ।
पूर्वाङ्गादीनां संख्या त्रिवारान् कृत्वा जानीहि ॥ १ ॥ " इति ।

शीर्षप्रहेलिकान्तः कालः सांव्यावहारिकः संख्यातः कालः प्रोच्यते । अनेन च प्रथमपृथिवीगतनारकाणां भवनपतिव्यन्तराणां, भरतैरवतेषु सुषमदुष्षमायाः पश्चिमे भागे मनुष्यतिरश्चां चायुर्मीयत इति । किञ्च-शीर्षप्रहेलिकायाः परतोऽप्यस्ति संख्यातः कालः, स चानतिशायिनां न व्यवहारविषय इति कृत्वौपम्ये

है, चौरासी लाख प्रयुत का एक चूलिकांग होता है, चौरासी लाख चूलिकांग की एक चूलिका होती है, चौरासी लाख चूलिकांग का एक शीर्षप्रहेलिकांग होता है, चौरासी लाख शीर्षप्रहेलिकांग की एक शीर्षप्रहेलिका होती है । यहा तक लौकिक गणित है पल्योपम आदि सब लोकोत्तर गणित है। शीर्षप्रहेलिका में १९४ वें अङ्कस्थान होते हैं । गाथा –" इच्छिय ठाणेण गुणं " इत्यादि । इच्छित स्थानसे चौरासीलाख को गुणित करो जितनी बार गुणाओगे उतनी बारही पूर्वाङ्ग आदिकी संख्याको जानलो, अर्थात् पूर्वाङ्ग आदिमें जिसकी संख्या जाननी चाहे उसको चोरासी लाखसे गुणाने पर अगलेकी संख्या आजावेगी, जैसे पूर्वाङ्ग को चोरासी लाखसे गुणाने पर पूर्वकी संख्या आ जावेगी, पूर्वको चोरासी लाखसे गुणाने पर त्रुटितांगकी संख्या आवेगी, त्रुटितांगको चोरासी लाखसे गुणाने पर त्रुटितकी संख्या आजावेगी इत्यादि जान

પ્રયુતાંગનું એક પ્રયુત થાય છે ૮૪ લાખ પ્રયુતનું એક ચૂલિકાંગ થાય છે અને ૮૪ લાખ ચૂલિકાંગની એક ચૂલિકા થાય છે ૮૪ લાખ ચૂલિકાનું એક શીર્ષપ્રહેલિકાંગ થાય છે અને ૮૪ લાખ શીર્ષપ્રહેલિકાંગની એક શીર્ષપ્રહેલિકા થાય છે અહીં સુધીનું લૌકિક ગણિત છે પલ્યોપમ આદિ લોકોત્તર ગણિત (ગણતરી) છે

શીર્ષપ્રહેલિકા નામનો જે કાળ છે તે ૧૯૪ આંકડાવાળી સંખ્યા (વર્ષોનિ પ્રમાણ) છે ગાથા–' इच्छिय ठाणेण गुणं ' ઇત્યાદિ ઇચ્છિત સ્થાનથી ચોરાસી લાખનો ગુણાકાર કરો જેટલીવાર ગુણશો તેટલીવાર પૂર્વાંગ આદિની સંખ્યા જણાઇ આવશે અર્થાત્ પૂર્વાંગ આદિમાં જેની સંખ્યા જાણવાની ઇચ્છા હોય તેને ચોરાસી લાખથી ગુણવાથી આગલાની સંખ્યા આવી જશે જેમકે પૂર્વાંગને ચોરાસી લાખથી ગુણવાથી પૂર્વની સંખ્યા આવી જશે. પૂર્વને ચોરાસી લાખથી ગુણવાથી ત્રુટિતાંગની સંખ્યા આવી જશે ત્રુટિતાંગને ચોરાસી લાખથી ગુણવાથી ત્રુટિતની સંખ્યા આવી જશે ઇત્યાદિ સમજી લેવું શીર્ષપ્રહેલિકા પર્યન્તના

प्रक्षिप्तः, अतएव शीर्षप्रहेलिकायाः परतः पल्योपमाद्युपन्यासः । तत्र पल्येनोपमा यस्य तत् पल्योपमम्—असंख्यातवर्षकोटिकोटिप्रमाणम् सागरेणोपमा यस्य तत् सागरोपमम्—पल्योपमकोटिकोटि दशकमानमिति । दशसागरोपमकोटिकोटय उत्सर्पिणी । एवमवसर्पिणीति ॥ सू० ३७ ॥

कालविशेषवद् ग्रामादिवस्तुविशेषा अपि जीवाजीवा एवेति द्विस्थानकैः सप्तचत्वारिंशत्सूत्रैः माह—

लेना चाहिये ॥ शीर्षप्रहेलिका तक का काल सांव्यावहारिक काल संख्यातकाल कहा है इस संख्यातकाल से प्रथमपृथिवीगत नारकों की, भवनपतियों की, व्यन्तरों की, भरतक्षेत्र ऐरवत क्षेत्र में सुषम दुष्षमाके पश्चिमभाग में वर्तमान मनुष्य तिर्यञ्चोंकी आयुका प्रमाण मापा जाता है।

किञ्च—शीर्षप्रहेलिका से आगे भी संख्यातकाल है परन्तु वह अतिशय ज्ञान रहित जीवों के व्यवहार का विषय नहीं होता है, ऐसा समझ कर ही उसे उपमान में प्रक्षिप्त कर दिया है इसी बात को बताने के लिये शीर्षप्रहेलिका से आगे के काल को पल्योपम आदि रूप से प्रकट किया गया है। पल्य से जिसकी उपमा हो वह पल्योपम है यह पल्योपमरूप काल असंख्यात कोटि कोटि वर्ष प्रमाण का होता है। सागर से जिसकी उपमा हो वह सागरोपम है दश कोटिकोटि पल्योपम का एक सागरोपम होता है। १० कोडाकोडी सागरोपम की एक उत्सर्पिणी और १० ही कोटाकोटी सागरोपम की एक अवसर्पिणी होती है अर्थात् बीस कोडाकोडी सागरोपम का एक काल चक्र होता है ॥ सू० ३७ ॥

કાળને સાંવ્યાવહારિક કાળ–સંખ્યાતકાળ કહ્યો છે. તે સંખ્યાતકાળ દ્વારા પહેલી પૃથ્વીના નારકોના, ભવનપતિઓના, વ્યન્તરોના, ભરતક્ષેત્ર અને ઐરવત ક્ષેત્રમાં સુષમદુષ્ષમાના પશ્ચિમ ભાગમાં વર્તમાન (વિદ્યમાન) મનુષ્યો અને તિર્યંચોના આયુનું પ્રમાણ માપી શકાય છે.

વળી શીર્ષપ્રહેલિકા પછી પણ સંખ્યાતકાળ છે, પરન્તુ તે અનતિશાયી (અતિશયજ્ઞાન વિનાના) જીવોના વ્યવહારના વિષયરૂપ હોતા નથી, એમ સમજીને જ તેને ઉપમા દ્વારા બતાવવામાં આવ્યો છે. એ વાતને બતાવવાને માટે શીર્ષપ્રહેલિકાથી આગળના કાળને પલ્યોપમ આદિરૂપે પ્રકટ કરવામાં આવેલ છે. પલ્યની (મોટો ખાડો) સાથે જેની ઉપમા આપી શકાય છે તેવા કાળને પલ્યોપમ કાળ કહે છે તે પલ્યોપમરૂપ કાળ અસંખ્યાત કોટિ કોટિ વર્ષપ્રમાણવાળો હોય છે જે કાળને સાગરની ઉપમા આપી શકાય છે, એવા કાળનુ નામ સાગરોપમ કાળ છે દશ કોટિ કોટિ પલ્યોપમનો એકસાગરોપમ કાળ થાય છે. ૧૦ કોડા કોડીસાગરોપમની એક ઉત્સર્પિણી થાય છે અને એટલા જ (૧૦) કોડાકોડી સાગરોપમની એક અવસર્પિણી થાય છે. સૂ. ૩૭

मूलम्—गामाइ वा णगराइ वा१, निगमाइ वा रायहाणीइ वा२, खेडाइ वा कब्बडाइ वा ३, मडंबाइ वा दोणमुहाइ वा ४,पट्टणाइ वा आगराइ वा ५, आसमाइ वा संवाहाइ वा ६, सन्निवेसाइ वा घोसाइ वा७, आरामाइ वा, उज्जाणाइ वा८,वणाइ वा वणसंडाइ वा ९,वावीति वा, पुक्खरणीति वा १०,सराइ वा सरपंतीति वा ११, अगडाइ वा तलागाइ वा१२, दहाइ वा णदीति वा१३, पुढवीति वा उदहीति वा १४, वायखंधाइ वा उवासंतराइ वा १५, वलयाइ वा, विग्गहाइ वा १६, दीवाइ वा, समुद्दाइ वा१७, वेलाइ वा, वेइयाइ वा१८, दाराइ वा, तोरणाइ वा १९, णेरइयाइ वा णेरइयावासाइ वा जाव २० ४२ वेमाणियाइ वा वेमाणियावासाइ वा४३, कप्पाइ वा कप्पविमाणावासाइ वा ४४, वासाइ वा, वासहरपव्वयाइ वा ४५,कूडाइ वा कूडागाराइ वा ४६, विजयाइ वा रायहाणीति वा, जीवाइ य अजीवाइ य पवुच्चइ ४७।

छायाइ वा आयवाइ वा१, दोसिणाइ वा अधगाराइ वा२, ओमाणाइ वा उम्माणाइ वा ३, अइजाणगिहाइ वा उज्जाणगिहाइ वा ४, अवलिंबाइ वा सणिप्पवायाइ वा जीवाइ य अजीवाइ य पवुच्चइ ५। दो रासी पण्णत्ता तं जहा—जीवरासी चेव अजीवरासी चेव ॥ सू० ३८॥

छाया—ग्रामा इति वा नगराणीति वा १, निगमानीति वा राजधान्य इति वा२, खेटानीति वा कर्बटानीति वा ३, मडम्बानीति वा द्रोणमुखानीति वा४, पत्तनानीति वा आकरा इति वा ५ आश्रमा इति वा संवाहा इति वा६, सन्निवेशा इति वा घोषा इति वा७, आरामा इति वा उद्यानानीति वा ८, वनानीति वा वनखण्डा इति वा९, वाप्य इति वा पुष्करिण्य इति वा १०, सरांसीति वा सरःपङ्क्तय इति वा ११, अवटा इति वा तडागा इति वा १२, ह्रदा इति वा नद्य इति वा १३ पृथिव्य इति वा उदधय इति वा १४, वातस्कन्धा इति वा अवकाशान्तराणीति वा १५, वलयानीति वा विग्रहा इति वा १६ द्वीपा इति वा समुद्रा इति वा १७, वेला इति वा वेदिका इति वा १८, द्वाराणीति वा तोरणानीति वा १९ नैरयिका इति वा नैरयिकावासा इति वा यावत् २०-४२ वैमानिका इति वा वैमानिकावासा इति वा ४३, कल्पा इति वा कल्पविमानावासा इति वा ४४, वर्षाणीति वा वर्षधरपर्वता इति वा ४५, कूटानीति वा कूटागाराणीति वा ४६, विजया इति वा राजधान्य इति वा जीवा इति च अजीवा इति च प्रोच्यन्ते ४७।

छाया-इति वा आतपा इति वा १, ज्योत्स्ना इति वा अन्धकाराणीति वा२, अवमानानीति वा, उन्मानानीति वा ३, अतियानगृहाणीति वा उद्यानगृहाणीति वा४, अवलिंवा इति वा शनैः प्रपाता इति वा जीवा इति च अजीवा इति च प्रोच्यते ५ । द्वौ राशी प्रज्ञप्तौ तद्यथा-जीवराशीश्चैव अजीवराशिश्चैव ॥ सू० ३८ ॥

टीका-'गामाइवा' इति । एषु सप्तचत्वारिंशत्सूत्रेषु प्रत्येक द्विके 'जीवाइय अजीवाइय पवुच्चइ' इत्यालापकः संयोजनीयः, तथाहि गामाइवा नगराइवा जीवाइय अजीवा इय पवुच्चइ, निगमाइवा रायहाणीइवा जीवाइय अजीवाइय पवुच्चइ" एवं सर्वत्र विज्ञेयम् । ग्रामादीनां च जीवाजीवता प्रसिद्धैव तेषु तद्वयोर्नियमतः सद्भावात् । अन्यत् सुगमम् । नवरम्-ग्रामाः-करादिगम्याः, यद्वा-ग्रसन्ति गुणानितिग्रामाः,

कालविशेष की तरह ग्रामादिवस्तुविशेष भी जीव अजीव रूप ही है इस विषय को अब सूत्रकार द्विकस्थानकवाले ४७ सूत्रों द्वारा प्रकट करते हैं-" गामाइ वा णगराइ वा निगमाइ वा " इत्यादि ।

टीकार्थ—इन ४७ सूत्रों में प्रत्येक दो दो सूत्रों में " जीवाइ य अजीवाइ य पवुचइ " ऐसा आलापक जोड़ना चाहिये जैसे-" गामाइ वा नगराइ वा जीवाइ य अजीयाइ य पवुचइ, निगमाइ वा रायहाणीइ वा जीवाइ य अजीवाइ य पवुचइ " इसी तरह से सर्वत्र जानना चाहिये ग्रामादिकों में जीवाजीवरूपता प्रसिद्ध ही है क्यों कि उनमें इन दोनों का नियम से सद्भाव रहता है। बाकी का और सब सुगम है। जिनमें टेक्स कर आदि लगता है वे ग्राम हैं अथवा गुणों का जहां ग्रसन होता है अर्थात् बोध रहित जहां की जनता होती है वे ग्राम हैं, जहां पर १८ अठारह

કાળવિશેષની જેમ ગ્રામાદિ વસ્તુવિશેષ પણ જીવ અજીવ રૂપ જ હોય છે. આ વિષયને સૂત્રકાર દ્વિસ્થાનકવાળાં ૪૭ સૂત્રો દ્વારા પ્રકટ કરે છે—

" गामाइ वा णगराइ वा निगमाइ वा " ઇત્યાદિ—

આ ૪૭ સૂત્રો દ્વારા પ્રરૂપિત પ્રત્યેક બબ્બે સૂત્રની સાથે " जीवाइ य अजीवाइ य पवुचइ " આ સૂત્રપાઠને યોજવો જોઇએ જેમકે-" गामाइ वा नगराइ वा जीवाइ य अजीवाइ य पवुचइ, निगमाइ वा रायहाणीइ वा जीवाइ य अजीवाइ य पवुचइ " આ પ્રમાણે પ્રત્યેક બબ્બે સૂત્રોની સાથે આલાપક સમજી લેવા જોઇએ. ગ્રામાદિકોમાં જીવાજીવ રૂપતા પ્રસિદ્ધ જ છે, કારણ કે તેમાં તે બન્નેનો નિયમથી જ સદ્‌ભાવ રહે છે, બાકીનો સઘળો ભાવ સુગમ છે.

જ્યાં કર આદિ લાગુ પડે છે એવા સ્થળને ગ્રામ કહે છે અથવા ગુણોનુ જ્યા ગ્રસન થાય છે-એટલે કે બોધરહિત જ્યાંની જનતા હોય છે એવા સ્થળોને ગ્રામ કહે છે જ્યાં ૧૮ પ્રકારના કર લાગતા નથી એવાં

मूलम्—गामाइ वा णगराइ वा१, निगमाइ वा रायहाणीइ वा२, खेडाइ वा कब्बडाइ वा ३, मडंबाइ वा दोणमुहाइ वा ४, पट्टणाइ वा आगराइ वा ५, आसमाइ वा संवाहाइ वा ६, सन्निवेसाइ वा घोसाइ वा७, आरामाइ वा, उज्जाणाइ वा८, वणाइ वा वणसंडाइ वा ९, वावीति वा, पुक्खरणीति वा १०, सराइ वा सरपंतीति वा ११, अगडाइ वा तलागाइ वा१२, दहाइ वा णदीति वा१३, पुढवीति वा उदहीति वा १४, वायखंधाइ वा उवासंतराइ वा १५, वलयाइ वा, विग्गहाइ वा १६, दीवाइ वा, समुद्दाइ वा१७, वेलाइ वा, वेइयाइ वा१८, दाराइ वा, तोरणाइ वा १९, णेरइयाइ वा णेरइयावासाइ वा जाव २०-४२ वेमाणियाइ वा वेमाणियावासाइ वा४३, कप्पाइ वा कप्पविमाणवासाइ वा ४४, वासाइ वा, वासहरपव्वयाइ वा ४५, कूडाइ वा कूडागाराइ वा ४६, विजयाइ वा रायहाणीति वा, जीवाइ य अजीवाइ य प०वुच्चइ ४७।

छायाइ वा आयवाइ वा१, दोसिणाइ वा अंधगाराइ वा२, ओमाणाइ वा उम्माणाइ वा ३, अइजाणगिहाइ वा उज्जाणगिहाइ वा ४, अवलिंबाइ वा सणिप्पवायाइ वा जीवाइ य अजीवाइ य प०वुच्चइ ५। दो रासी पण्णत्ता तं जहा—जीवरासी चेव अजीवरासी चेव ॥ सू० ३८॥

छाया—ग्रामा इति वा नगराणीति वा १, निगमानीति वा राजधान्य इति वा२, खेटानीति वा कर्बटानीति वा ३, मडम्बानीति वा द्रोणमुखानीति वा४, पत्तनानीति वा आकरा इति वा ५ आश्रमा इति वा संवाहा इति वा६, सन्निवेशा इति वा घोषा इति वा७, आरामा इति वा उद्यानानीति वा ८, वनानीति वा वनखण्डा इति वा९, वाप्य इति वा पुष्करिण्य इति वा १०, सरांसीति वा सरःपङ्क्तय इति वा ११, अवटा इति वा तडागा इति वा १२, ह्रदा इति वा नद्य इति वा १३ पृथिव्य इति वा उदधय इति वा १४, वातस्कन्धा इति वा अवकाशान्तराणीति वा १५, वलयानीति वा विग्रहा इति वा १६ द्वीपा इति वा समुद्रा इति वा १७, वेला इति वा वेदिका इति वा १८, द्वाराणीति वा तोरणानीति वा १९, नैरयिका इति वा नैरयिकावासा इति वा यावत् २०-४२ वैमानिका इति वा वैमानिकावासा इति वा ४३, कल्पा इति वा कल्पविमानावासा इति वा ४४, वर्षाणीति वा वर्षधरपर्वता इति वा ४५, कूटानीति वा कूटागाराणीति वा ४६, विजया इति वा राजधान्य इति वा जीवा इति च अजीवा इति च प्रोच्यते ४७।

" पत्तनं शकटैर्गम्यं, घोटकैर्नौभिरेव च ।
नौभिरेव तु यद्गम्यं पट्टनं तत्प्रचक्षते ॥ १ ॥ " इति ।

आकराः-लोहादिधातूत्पत्तिभूमयः ५ । आश्रमाः-तापसावासाः, यत्र प्रथमे तापसा वसन्ति पश्चादन्येऽपि लोका आगत्य वसन्ति ते । संवाहाः-दुर्गभूमौ यत्र कृषीवलाः समभूमौ कृषिं कृत्वा रक्षार्थं धान्यानि यत्र सवहन्ति-नयन्तीत्यर्थः ६ । सन्निवेशाः-सार्थसेनादिनिवासाः, घोषाः-आभीरपल्यः ७ । आरामाः-विविधवृक्षसंकुलानि कदलीगृहादिशोभितानि स्त्रीपुंसा क्रीडा स्थानानि, उद्यानानि उत्-उत्कृष्टानां विविधवेषभूषाऽलंकृतानां जनानां यानं-गमनं येषु तानि पुष्पफलोपेतवृक्षसमूहशोभितानि नगरप्रत्यासन्नवर्त्तिक्रीडास्थाना-

जहां जाया जाता है वह पट्टन है ऐसा इसका अर्थ होता है कहा भी है -" पत्तनं शकटैर्गम्यं " इत्यादि । लोहादि धातुओं को उत्पन्न करने वाली जो भूमि होती है वह आकर है तापस जनों का जो आवासस्थान होता है वह आश्रम है पहिले जहां तापस वसते हों और पीछे जहां आकर अन्य लोग भी वस गये हो ऐसा जो स्थान है वह आश्रम है । कृषीवल (किसान) जिस समभूमिपर खेती करके रक्षा के लिये धान्य ले आते हैं उस स्थान का नाम संवाह है । जहां सेना आदि रहती है उस स्थान का नाम सन्निवेश-छावनी है । जहां पर ग्वाला रहते हैं उसस्थान का नाम घोष है आराम नाम उस उद्यान का है कि जिसमें अनेक प्रकार के वृक्ष होते हैं और केला आदि के निकुञ्ज होते हैं तथा स्त्री पुरुषों का जो क्रीडा का स्थान होता है । " उत् उत्कृष्टानां यानं गमनम् यत्र इति उद्यानम् "

પટ્ટન કહે છે, " એવો તેનો અર્થ થાય છે. કહ્યું પણ છે કે-" पत्तन शकटैर्गम्यं " ઇત્યાદિ. લોઢું આદિ ધાતુઓને ઉત્પન્ન કરનારી જે ભૂમિ હોય છે તેને આકર કહે છે. તાપસોના જ્યા નિવાસસ્થાન હોય છે એવી જગ્યાને આશ્રમ કહે છે. અથવા પહેલા જ્યાં તાપસો વસતા હોય અને ત્યારબાદ જ્યાં અન્ય લોકો પણ આવીને વસતા હોય એવા સ્થાનને આશ્રમ કહે છે. ખેડૂતો ખેતી કરીને જે સમભૂમિપર રક્ષાને નિમિત્તે ધાન્ય લઈ આવે છે, તે સ્થાનનું નામ સવાહ છે. જ્યાં સેના આદિ રહે છે, તે સ્થાનને સન્નિવેશ (છાવણી) કહે છે. જ્યાં ગોવાળિયાઓ રહે છે તે સ્થાનને ઘોષ કહે છે જે ઉદ્યાનમાં અનેક પ્રકારનાં વૃક્ષો હોય છે, કેળા આદિના નિકુજ હોય છે અને જ્યાં સ્રીપુરુષો ફરવા જતાં હોય છે, જે તેમના ક્રીડાસ્થાન રૂપ હોય છે એવાં ઉદ્યાનને આરામ કહે છે-" उत् उत्कृष्टानां यानं गमनं यत्र इति उद्यानम् " આ વ્યુત્પત્તિ અનુ

नकराणि-नकरो येषु तानि-अष्टादशकररहितानि जननिवासस्थानानीत्यर्थः १। निगमा-वणिग्जननिवासा, राजधान्य यत्र राजानो वसन्ति २। खेटानि-धूलिप्राकारयुक्तानि, कर्वटानि-कुनगराणि ३, मडम्बानि-येषां परितोऽर्द्धयोजनात् परतोऽवस्थितग्रामाणि, द्रोणमुखानि-जलस्थलमार्गद्वयगम्यानि ४, पत्तनानि-समस्तवस्तु प्राप्तिस्थानानि, यद्वा-पत्तनं द्विविधं-जलपत्तनं स्थलपत्तन च, यत्र जलमार्गेण नावादिना गम्यते तज्जलपत्तनम्, यत्र स्थलमार्गेण शकटादिना गम्यते तत्स्थलपत्तनम्, तानि। यद्वा पतन्ति-समागच्छन्ति सर्वदिग्भ्यो जना येषु तानि। 'पट्टनानि वा' इति छाया तत्र पट्टनम् यत्रौभि' शकटैर्वा गम्यते, उक्तञ्च-

प्रकार का कर नहीं लगता है ऐसे जो जननिवास स्थान हैं वे नकर-नगर हैं। जहां वणिग्जनों का निवास रहता है वह निगम हैं। जहां राजा रहता है वह राजधानी है। धूलि के कोट से जो युक्त होते हैं वे खेट हैं। कुनगरों का नाम कर्वट है जिनके आसपास आधे योजन से आगे अढाई २ कोस आगे वसति होती है वे मडम्ब हैं। जलमार्ग से और स्थल मार्ग से जिनमें आना जाना होता है वे द्रोणमुख हैं। समस्त वस्तुओं की प्राप्ति के जो स्थान होते हैं वे पत्तन हैं अथवा पत्तन दो प्रकार के होते हैं एक जलपत्तन और दूसरा स्थलपत्तन जहां पर जलमार्ग से नौका आदि द्वारा होकर जाया जाता है वह जलपत्तन है और जहां स्थलमार्ग से गाड़ी आदि द्वारा जाया जाता है वह स्थलपत्तन है। अथवा जहां पर सर्वदिशाओं से मनुष्य आते हैं वे पत्तन हैं। अथवा "पट्टन" ऐसी जब इसकी संस्कृतछाया होती है तब नौकाओं द्वारा या गाड़ी द्वारा

જનનિવાસસ્થાનને નગર કહે છે જ્યાં વણિકો (વ્યાપારીઓ) રહેતા હોય છે એવા સ્થાનને નિગમ કહે છે જ્યાં રાજા રહે છે તે નગરને રાજધાની કહે છે ધૂળ અથવા માટીના કોટથી યુક્ત એવા નગરને ખેટ કહે છે કુનગરોને કર્બટ કહે છે જેની આસપાસમાં ૦॥ યોજનથી (૨॥, ૨॥, કોશથી) દૂર વસતિ હોય છે એવા જનનિવાસ સ્થાનને મડમ્બ કહે છે જ્યાં જળમાર્ગ અને જમીનમાર્ગે અવર જવર થાય છે એવા સ્થાનને દ્રોણમુખ કહે છે જ્યાં બધી વસ્તુઓ મળી શકે છે એવું સ્થાન પત્તન કહેવાય છે અથવા પત્તનના બે પ્રકાર છે-જળપત્તન અને સ્થળપત્તન જ્યાં જળમાર્ગે જ નૌકા આદિ દ્વારા જઈ શકાય છે એવા સ્થાનને જળપત્તન કહે છે અને જમીનમાર્ગે જઈ શકાય એવા ગામને સ્થળપત્તન કહે છે અથવા-જ્યાં બધી દિશાઓમાંથી માણસો આવે છે તેને પત્તન કહે છે અથવા જ્યારે "પટ્ટન" એવી તેની સંસ્કૃત છાયા થાય છે ત્યારે "નૌકાઓ અથવા ગાડી દ્વારા જ્યાં જવાય છે, તેને

" पत्तनं शकटैर्गम्यं, घोटकैर्नौभिरेव च।
नौभिरेव तु यद्गम्यं पट्टनं तत्प्रचक्षते ॥ १ ॥ " इति।

आकराः-लोहादिधातूत्पत्तिभूमयः ५। आश्रमाः-तापसावासाः, यत्र प्रथमं तापसा वसन्ति पश्चादन्येऽपि लोका आगत्य वसन्ति ते। संवाहाः-दुर्गभूमौ यत्र कृषीवलाः समभूमौ कृषिं कृत्वा रक्षार्थं धान्यानि यत्र संवहन्ति-नयन्तीत्यर्थः ६। सन्निवेशाः-सार्थसेनादिनिवासाः, घोषाः-आभीरपल्यः ७। आरामाः-विविधवृक्षसंकुलानि कदलीगृहादिशोभितानि स्त्रीपुंसा क्रीडा स्थानानि, उद्यानानि उत्-उत्कृष्टानां विविधवेषभूषाऽलंकृतानां जनानां यानं-गमनं येषु तानि पुष्पफलोपेतवृक्षसमूहशोभितानि नगरप्रत्यासन्नवर्त्तिक्रीडास्थाना-

---

जहां जाया जाता है वह पट्टन है ऐसा इसका अर्थ होता है कहा भी है -" पत्तनं शकटैर्गम्यं " इत्यादि। लोहादि धातुओं को उत्पन्न करने वाली जो भूमि होती है वह आकर है तापस जनों का जो आवासस्थान होता है वह आश्रम है पहिले जहां तापस वसते हों और पीछे जहां आकर अन्य लोग भी वस गये हो ऐसा जो स्थान है वह आश्रम है। कृषीवल (किसान) जिस समभूमिपर खेती करके रक्षा के लिये धान्य ले आते हैं उस स्थान का नाम संवाह है। जहां सेना आदि रहती है उस स्थान का नाम सन्निवेश-छावनी है। जहां पर ग्वाला रहते हैं उसस्थान का नाम घोष है आराम नाम उस उद्यान का है कि जिसमें अनेक प्रकार के वृक्ष होते हैं और केला आदि के निकुञ्ज होते हैं तथा स्त्री पुरुषों का जो क्रीडा का स्थान होता है। " उत् उत्कृष्टानां यानं गमनम् यत्र इति उद्यानम् "

પટ્ટન કહે છે, " એવો તેનો અર્થ થાય છે કહ્યું પણ છે કે-" पत्तनं शकटैर्गम्यं " ઇત્યાદિ. લોઢું આદિ ધાતુઓને ઉત્પન્ન કરનારી જે ભૂમિ હોય છે તેને આકર કહે છે. તાપસોના જ્યાં નિવાસસ્થાન હોય છે એવી જગ્યાને આશ્રમ કહે છે. અથવા પહેલાં જ્યાં તાપસો વસતા હોય અને ત્યારબાદ જ્યા અન્ય લોકો પણ આવીને વસતા હોય એવા સ્થાનને આશ્રમ કહે છે. ખેડૂતો ખેતી કરીને જે સમભૂમિપર રક્ષાને નિમિત્તે ધાન્ય લઈ આવે છે, તે સ્થાનનું નામ સંવાહ છે. જ્યાં સેના આદિ રહે છે, તે સ્થાનને સન્નિવેશ (છાવણી) કહે છે. જ્યા ગોવાળિયાઓ રહે છે તે સ્થાનને ઘોષ કહે છે જે ઉદ્યાનમા અનેક પ્રકારનાં વૃક્ષો હોય છે, કેળા આદિના નિકુંજ હોય છે અને જ્યાં સ્ત્રીપુરુષો ફરવા જતાં હોય છે, જે તેમના ક્રીડાસ્થાન રૂપ હોય છે એવાં ઉદ્યાનને આરામ કહે છે-" उत् उत्कृष्टानां यानं गमनं यत्र इति उद्यानम् " આ વ્યુત્પત્તિ અનુ

नीत्यर्थः ८। वनानि-एकजातीयवृक्षसंकुलानि, वनखण्डाः-अनेकजातीयवृक्षसंकुलाः ९। वाप्य -चतुरस्रा जलाशयविशेषाः, पुष्करिण्यः-ता एव वृत्ता १०। सरांसि-विस्तृतजलाशयविशेषाः, सरः पङ्क्तयः-ता एव पंक्तिबद्धानि ११। अवटाः-कूपाः, तडागाः लोकप्रसिद्धाः १२। ह्रदाः नद्यश्च प्रसिद्धा एव १३। पृथिव्य —रत्नप्रभादयः उदधय -तदधोवर्तिघनोदधयः। वातस्कन्धाः-घनवाततनुवाता इतरे वा अवकाशान्तराणि-वातस्कन्धानामधस्तादाकाशानि, जीवत्वं चैषां, सूक्ष्मपृथिवीकायि

इस व्युत्पत्ति के अनुसार जिसमें विविध प्रकार की वेषभूषा से अलंकृत हुए मनुष्यों का गमन होता है वह उद्यान है। यह उद्यान पुष्पफलों से युक्त वृक्षसमूहों से शोभित होता है और नगर के पास रहता है एक जातीय वृक्षों से जो युक्त होता है वह वन है तथा अनेक जातीयवृक्षों से जो युक्त होता है वह वनखण्ड है जो जलाशय चौकोर होता है वह वापी है तथा जो जलाशय गोल होता है वह पुष्करिणी है जो जलाशय विशेषरूप से विस्तृत होता है वह सर है ये सर ही जब पंक्तिबद्ध होते हैं तो वे सर पंक्ति के नाम से कहे जाते हैं। कूप का नाम अवट है सामान्य तालाब का नाम तडाग है। ह्रद और नदी ये प्रसिद्ध ही हैं। रत्नप्रभा आदि पृथिवियां यहां पृथिवी शब्द से गृहीत हुए हैं। तथा इनके नीचे जो घनोदधि आदि हैं वे उदधि शब्द से गृहीत हुए हैं। वातस्कन्ध-घनवात और तनुवात अथवा सामान्यवायु से वातस्कन्ध से गृहीत हुए हैं तथा वातस्कन्धों के नीचे जो आकाश है वह अवका

સાર જેમાં વિવિધ પ્રકારની વેષભૂષાથી વિભૂષિત મનુષ્યોનું ગમન થાય છે, તેનું નામ ઉદ્યાન છે તે ઉદ્યાન ફળફૂલોથી યુક્ત વૃક્ષસમૂહોથી સુશોભિત હોય છે અને નગરની પાસે હોય છે એક જાતના વૃક્ષોથી જે યુક્ત હોય છે તેને વન કહે છે અને અનેક જાતના વૃક્ષોથી યુક્ત સ્થાનને વનખંડ કહે છે. ચતુષ્કોણ આકાર જળાશયને વાપી કહે છે અને ગોળાકારના જળાશયને પુષ્કરિણી કહે છે બહુ જ વિસ્તૃત જળાશયને સર (સરોવર) કહે છે અને એવાં સરોની હારમાળાને સરપંક્તિ કહે છે અવટ એટલે કૂપ (કૂવો) તડાગ એટલે સામાન્ય તળાવ. હ્રદ અને નદી તો જાણીતાં છે પૃથ્વી પદથી અહીં રત્નપ્રભા આદિ પૃથ્વીઓ (નરકો) ગ્રહણ કરવની છે અને તેમની નીચે આવેલા ઘનોદધિ આદિને ઉદધિ પદ દ્વારા ગ્રહણ કરવાના છે વાતસ્કન્ધ એટલે ઘનવાત અને તનુવાત અથવા સામાન્ય વાયુ સમજવા. વાતસ્કંધોની નીચે જે આકાશ છે તે અવકાશાન્તર પદથી ગ્રહણ કરાયેલ છે આ બધાને ઉપરૂપ

कादि जीवव्याप्तत्वात्, अजीवत्वं च प्रसिद्धमेव १५। वलयानि-पृथिवीनां वेष्टनानि घनोदधिघनवाततनुवातरूपाणि, विग्रहाः-लोकनाडीचक्राणि, जीवत्वं चैषां सूक्ष्मपृथिव्यादि जीवव्याप्तत्वात् १६। द्वीपाः समुद्राश्च प्रतीताः १७। वेलाः-समुद्रजलवृद्धयः, वेदिकाः-जम्बूद्वीपजगत्यादि सम्बन्धिन्यः प्रसिद्धाः १८। द्वाराणि-विजयादीनि, तोरणानि - तेषामेवावयवविशेषाः १९। नैरयिकाः-नारकाः, अजीवत्वं चैषां कर्मपुद्गलाद्यपेक्षया, जीवत्वं च प्रतीतमेव, नैरयिकावासाः

शान्तर पद से गृहीत हुआ है इन सब को जो जीवरूप से कहा गया है उसका कारण ऐसा है कि ये सब सूक्ष्मपृथिवीकायिक आदि जीवों से व्याप्त होते हैं तथा इनमें अजीवता तो स्वभावतः ही है वलय शब्द से पृथिवियों के वेष्टनरूप घनोदधि, घनवात और तनुवात ये सब गृहीत हुए हैं। विग्रह शब्द से लोकनाडी चक्र गृहीत हुए हैं। इन सब में जीवता सूक्ष्मपृथिवीकायिक जीवों से व्याप्त होने के कारण कही गई है तथा अजीवता स्वभावतः कही गई है। द्वीप और समुद्र प्रसिद्ध ही हैं समुद्रजल की वृद्धि होती है वह वेला है, जम्बूद्वीप की जगति आदिरूप वेदिका होती है विजयादिक द्वार हैं, तथा इन द्वारों के जो अवयवविशेष हैं वे तोरण हैं। ये सब पूर्वोक्तरूप से ही जीव और अजीवरूप हैं। नैरयिकों में जो जीवत्व कहा गया है वह जीवाधिष्ठित होने की अपेक्षा से कहा गया है तथा अजीवत्व जो कहा गया है वह कर्म पुद्गलों से युक्त होने के कारण से कहा गया है-इसी तरह से

કહેવાનુ કારણુ નીચે પ્રમાણે છે-તે બધાં સ્થાનો સૂક્ષ્મ પૃથ્વીકાયિક આદિ જીવોથી વ્યાપ્ત હોય છે. તથા તેમાં અજીવતા તો સ્વભાવતઃ જ હોય છે. વલય પદ દ્વારા પૃથ્વીઓના વેષ્ટનરૂપ ઘનોદધિ, ઘનવાત અને તનુવાતને ગ્રહણુ કરવામાં આવેલ છે. વિગ્રહપદથી લોકનાડીચક્ર ગૃહીત થયેલ છે. તે બધાં સૂક્ષ્મ પૃથ્વીકાયિક જીવોથી વ્યાપ્ત હોવાથી તેઓમાં જીવતા પ્રકટ કરવામાં આવેલ છે અને અજીવતા સ્વભાવત પ્રકટ કરવામાં આવેલ છે.

દ્વીપ અને સમુદ્રો જાણીતા હોવાથી અહીં તેમની વ્યાખ્યા આપી નથી. સમુદ્રના પાણીની જે વૃદ્ધિ થાય છે તેને વેલા કહે છે. જંબૂદ્વીપની જગતિ આદિ રૂપ વેદિકા હોય છે વિજયાદિક દ્વારો છે અને તે દ્વારોના અવયવ વિશેષરૂપ તોરણો હોય છે. એ બધાં પહેલાં બતાવ્યા મુજબ જ જીવ અને અજીવરૂપ છે નારકોમા જે જીવત્વ પ્રકટ કરવામાં આવ્યુ છે તેનું કારણુ તેમની જીવયુકતતા છે અને તેઓ કર્મપુદ્ગલોથી યુકત હોવાથી તેમનામાં અજીવત્વ પ્રકટ કરવામાં આવ્યુ છે. એજ પ્રમાણે નૈરયિકાવાસોમા પણુ જીવત્વ અને

नीत्यर्थः ८। वनानि-एकजातीयवृक्षसङ्कुलानि, वनखण्डाः-अनेकजातीयवृक्षसङ्कुलाः ९। वाप्य -चतुरस्राजलाशयविशेषाः, पुष्करिण्य -ता एव वृत्ता १०। सरांसि-विस्तृत जलाशयविशेषाः, सरः पंक्तय -ता एव पंक्तिबद्धानि ११। अवटाः-कूपाः, तडागाः लोकप्रसिद्धाः १२। ह्रदाः नद्यश्च प्रसिद्धा एव १३। पृथिव्य --रत्नप्रभादयः उदधय -तदधोवर्त्तिघनोदधय । वातस्कन्धा -घनवाततनुवाता इतरे वा, अवका शान्तराणि-वातस्कन्धानामधस्तादाकाशानि, जीवत्वं येषां, सप्तमपृथिवीकापि

इस व्युत्पत्ति के अनुसार जिसमें विविध प्रकार की वेषभूषा से अलङ्कृत हुए मनुष्यों का गमन होता है वह उद्यान है। यह उद्यान पुष्पफलों से युक्त वृक्षसमूहों से शोभित होता है और नगर के पास रहता है एक जातीय वृक्षों से जो युक्त होता है वह वन है तथा अनेक जातीयवृक्षों से जो युक्त होता है वह वनखण्ड है जो जलाशय चौकोर होता है वह वापी है तथा जो जलाशय गोल होता है वह पुष्करिणी है जो जलाशय विशेषरूप से विस्तृत होता है वह सरः है ये सर ही जब पंक्तिबद्ध होते हैं तो वे सरः पंक्ति के नाम से कहे जाते हैं। कूप का नाम अवट है सामान्य तालाब का नाम तडाग है। ह्रद और नदी ये प्रसिद्ध ही हैं। रत्नप्रभा आदि पृथिवियाँ यहाँ पृथिवी शब्द से गृहीत हुए हैं। तथा इनके नीचे जो घनोदधि आदि हैं वे उदधि शब्द से गृहीत हुए हैं। वातस्कन्ध-घनवात और तनुवात अथवा सामान्यवायु से वातस्कन्ध से गृहीत हुए हैं तथा वातस्कन्धों के नीचे जो आकाश है वह अवका

સાર જેમાં વિવિધ પ્રકારની વેષભૂષાથી વિભૂષિત મનુષ્યોનું ગમન થાય છે, તેનું નામ ઉદ્યાન છે તે ઉદ્યાન ફળફૂલોથી યુક્ત વૃક્ષસમૂહોથી સુશોભિત હોય છે અને નગરની પાસે હોય છે એક જાતના વૃક્ષોથી જે યુક્ત હોય છે તેને વન કહે છે અને અનેક જાતના વૃક્ષોથી યુક્ત સ્થાનને વનખંડ કહે છે. ચતુષ્કોણ આકાર જળાશયને વાપી કહે છે અને ગોળાકારના જળાશયને પુષ્કરિણી કહે છે બહુ જ વિસ્તૃત જળાશયને સર (સરોવર) કહે છે અને એવાં સરોની હારમાળાને સરપંક્તિ કહે છે અવટ એટલે કૂપ (કૂવો) તડાગ એટલે સામાન્ય તળાવ હ્રદ અને નદી તો જાણીતાં છે પૃથ્વી પદથી અહીં રત્નપ્રભા આદિ પૃથ્વીઓ (નરકો) ગ્રહણ કરવાની છે અને તેમની નીચે આવેલા ઘનોદધિ આદિને ઉદધિ પદ દ્વારા ગ્રહણ કરવાના છે વાતસ્કન્ધ એટલે ઘનવાત અને તનુવાત અથવા સામાન્ય વાયુ સમજવા. વાતસ્કન્ધોની નીચે જે આકાશ છે તે અવકાશાન્તર પદથી ગ્રહણ કરાયેલ છે આ બધાને જીવરૂપ

कादि जीवव्याप्तत्वात्, अजीवत्वं च प्रसिद्धमेव १५। वलयानि-पृथिवीनां वेष्टनानि घनोदधिघनवाततनुवातरूपाणि, विग्रहाः-लोकनाडीचक्राणि, जीवत्वं चैषां सूक्ष्मपृथिव्यादि जीवव्याप्तत्वात् १६। द्वीपाः समुद्राश्च प्रतीताः १७। वेलाः-समुद्रजलवृद्धयः, वेदिकाः-जम्बूद्वीपजगत्यादि सम्बन्धिन्यः प्रसिद्धाः१८। द्वाराणि-विजयादीनि, तोरणानि - तेषामेवावयवविशेषाः १९। नैरयिकाः-नारकाः, अजीवत्वं चैषां कर्मपुद्गलाद्यपेक्षया, जीवत्वं च प्रतीतमेव, नैरयिकावासाः

शान्तर पद से गृहीत हुआ है इन सब को जो जीवरूप से कहा गया है उसका कारण ऐसा है कि ये सब सूक्ष्मपृथिवीकायिक आदि जीवों से व्याप्त होते हैं तथा इनमें अजीवता तो स्वभावतः ही है वलय शब्द से पृथिवियों के वेष्टनरूप घनोदधि, घनवात और तनुवात ये सब गृहीत हुए हैं। विग्रह शब्द से लोकनाडी चक्र गृहीत हुए हैं। इन सब में जीवता सूक्ष्मपृथिवीकायिक जीवों से व्याप्त होने के कारण कही गई है तथा अजीवता स्वभावतः कही गई है। द्वीप और समुद्र प्रसिद्ध ही हैं समुद्रजल की वृद्धि होती है वह वेला है, जम्बूद्वीप की जगति आदिरूप वेदिका होती है विजयादिक द्वार हैं, तथा इन द्वारों के जो अवयवविशेष हैं वे तोरण हैं। ये सब पूर्वोक्तरूप से ही जीव और अजीवरूप हैं। नैरयिकों में जो जीवत्व कहा गया है वह जीवाधिष्ठित होने की अपेक्षा से कहा गया है तथा अजीवत्व जो कहा गया है वह कर्म पुद्गलों से युक्त होने के कारण से कहा गया है-इसी तरह से

કહેવાનુ કારણુ નીચે પ્રમાણે છે-તે બધાં સ્થાનો સૂક્ષ્મ પૃથ્વીકાયિક આદિ જીવોથી વ્યાપ્ત હોય છે. તથા તેમાં અજીવતા તો સ્વભાવત' જ હોય છે. વલય પદ દ્વારા પૃથ્વીઓના વેષ્ટનરૂપ ઘનોદધિ, ઘનવાત અને તનુવાતને ગ્રહણુ કરવામાં આવેલ છે. વિગ્રહપદથી લોકનાડીચક્ર ગૃહીત થયેલ છે. તે બધા સૂક્ષ્મ પૃથ્વીકાયિક જીવોથી વ્યાપ્ત હોવાથી તેઓમાં જીવતા પ્રકટ કરવામા આવેલ છે અને અજીવતા સ્વભાવત. પ્રકટ કરવામાં આવેલ છે.

દ્વીપ અને સમુદ્રો જાણીતા હોવાથી અહીં તેમની વ્યાખ્યા આપી નથી. સમુદ્રના પાણીની જે વૃદ્ધિ થાય છે તેને વેલા કહે છે જ'બૂદ્વીપની જગતિ આદિ રૂપ વેદિકા હોય છે વિજયાદિક દ્વારો છે અને તે દ્વારોના અવયવ વિશેષરૂપ તોરણો હોય છે. એ બધા પહેલાં બતાવ્યા મુજબ જ જીવ અને અજીવરૂપ છે નારકોમાં જે જીવત્વ પ્રકટ કરવામાં આવ્યુ છે તેનું કારણુ તેમની જીવયુક્તતા છે અને તેઓ કર્મ'પુદ્ગલોથી યુક્ત હોવાથી તેમનામા અજીવત્વ પ્રકટ કરવામાં આવ્યુ છે. એજ પ્રમાણે નૈરયિકાવાસોમા પણુ જીવત્વ અને

नारकोत्पत्तिभूमयः, तेषां च जीवत्वं पृथिवीकायिकाद्यपेक्षया अजीवत्वं च प्रसिद्धमेव २०। इत्येवं चतुर्विंशति दण्डकोऽभिधातव्यः यावत्-वैमानिकावासा इति या ४३। कल्पा-सौधर्मादि देवलोकाः, कल्पविमानावासा -तदेकदेशा एव ४४। वर्षाणि-भरतादि क्षेत्राणि, वर्षधरपर्वताः-हिमवदादयः ४५। कूटानि-हिमवत्कूटादीनि, कूटागाराणि तेष्वेव देवभवनानि ४६। विजया -चक्रवर्तिविजेतव्यानि कच्छादीनि क्षेत्रखण्डानि, राजधान्य -तेषामेव क्षमादिकाः पुर्यः, ' जीवा इति च अजीवा इति च मोच्यते ' इति सर्वत्र सम्बन्धनमिति ४७।

येऽपि पुद्गलधर्मास्तेऽपि तथैवेत्याह—" छाया इ वा ' इत्यादि, सूत्रमेकं कण्ठयम्। नवरम्-छाया -वृक्षादीनाम्, आतपः सूर्यस्य १। ' दोसिणा '

नैरयिकावास भी जीव और अजीवरूप हैं ये नैरयिकावास नैरयिक जीवों की उत्पत्ति के स्थानरूप होते हैं-इनमें जीवत्व पृथिवीकायिक आदिरूप होने के कारण से कहा गया है और अजीवता स्वभावतः इनमें है ही-इस तरह से २४ दण्डक कहना चाहिये यावत् वैमानिक और वैमानिकावास सौधर्मादिकरूप कल्प, और कल्पविमानावास, भरतादिक्षेत्र, हिमवदादि वर्षधरपर्वत, हिमवत्कूट आदिकूट, उन्हीं में रहे हुए देवभवनादिरूप कूटागार, चक्रवर्तिविजेतव्य कच्छादिकक्षेत्रखण्डरूपविजय, तथा इनकी क्षेमादिक पुरीरूप राजधानियां ये सब भी जीव और अजीवरूप कहे गये हैं

अब सूत्रकार जो पुद्गलधर्म हैं वे भी जीव और अजीवरूप हैं ऐसा प्रतिपादन करने के निमित्त-" छायाइ वा " इत्यादि सूत्र कहते हैं-

---

અજીવત્વ સમજવું જોઈએ. તે નરકાવાસો નારક જીવોના ઉત્પત્તિ સ્થાનરૂપ હોય છે, તે નરકાવાસોમા જીવત્વ પ્રકટ કરવાનું કારણ એ છે કે તેઓ પૃથ્વી કાયિક આદિરૂપ હોય છે અને તેમનામાં અજીવત્વ તો સ્વભાવતઃ રહેલું જ છે આ પ્રમાણે ૨૪ દંડક કહેવા જોઈએ ' વૈમાનિક અને વૈમાનિકાવાસ સૌધર્મ આદિ દેવલોકરૂપ કલ્પ, કલ્પવિમાનાવાસો, ભરતાદિ ક્ષેત્રો, હિમવતાદિ વર્ષધર પર્વતો, હિમવત્કૂટ આદિ કૂટો, તેમાં રહેલા દેવભવનોરૂપ કૂટાગારો, ચક્રવર્તિ વિજેતવ્ય કચ્છાદિ ક્ષેત્રખંડરૂપ વિજય તથા તેમની ક્ષેમા આદિ રાજધાનીઓ, એ સૌને પણ જીવ અને અજીવરૂપ કહ્યાં છે

હવે સૂત્રકાર પુદ્ગલ ધર્મોને પણ જીવ અને અજીવરૂપ પ્રતિપાદિત કરવા નિમિત્તે " છાયાઇ વા " ઇત્યાદિ સૂત્રનું કથન કરે છે—

इति ज्योत्स्नाः-चन्द्रिकाः अन्धकाराः — प्रसिद्धाः २ । अवमानानि-क्षेत्रादीनां प्रमाणानि हस्तयष्ट्यादीनि, उन्मानानि तुलायाः कर्षगुञ्जा सेटिकादीनि ३ । अतियानगृहाणि-नगरादिप्रवेशे यानि गृहाणि उद्यानगृहाणि-तानि, उद्यानरूपाणि गृहाणि प्रतीतानि ४। अवलिंबाः शनैः प्रपाताश्च देशविशेषाः, एते सर्वे जीवा इति च जीव व्याप्तत्वात्, तदाधारत्वाद्वा, अजीवा इति च पुद्गलाद्यजीवस्वरूपत्वात् तदाधारत्वाद्वा प्रोच्यते-एव सूत्रपञ्चकेऽपि 'जीवाइ य अजीवाइ य' इति प्रत्येक द्विके संयोजनीयमिति ।

अथ समयादिकं सकलवस्तु जीवाजीवरूपमेवास्ति तद्भिन्नराश्यन्तराभावात्, अत एवाह-'दो रासी' इत्यादि, -द्वौ राशी प्रज्ञप्तौ-तद्यथा-जीवराशिश्चैव अजीवराशिश्चैव, द्वयमन्तरेण तृतीयराश्यभावादिति ॥ सू० ३८ ॥

वृक्षादिकों की जो छाया है वह, सूर्य का जो आतप है वह, चन्द्रमा की जो चांदनीरूप ज्योत्स्ना है वह, तथा अन्धकार एवं क्षेत्रादिकों का प्रमाण, तोला माषा आदिरूप उन्मान, अतियानगृह-नगरादि के प्रवेश में जो गृह हैं वे, तथा उद्यानगृह-उद्यानरूपगृह, अवलिंब और शनैः प्रपात ये देशविशेष हैं, ये सब भी जीव और अजीवरूप हैं-जीवों के आधारभूत होने से या जीवों से व्याप्त होने से ये जीवरूप हैं और पुद्गलादि अजीवरूप होने से या अजीव के आधारभूत होने से अजीवरूप हैं ।

समयादिरूप समस्तवस्तु जीवाजीवरूप ही है क्यों कि जीवराशि और अजीव राशि से भिन्न और तीसरी राशि का अभाव है-इसी बात को प्रकट करने के लिये सूत्रकार ने-'दो रासी' इत्यादि सूत्र कहा है ॥ सू० ३८ ॥

વૃક્ષાદિની જે છાયા હોય છે તે, સૂર્યનો તડકો, ચન્દ્રમાના પ્રકાશરૂપ જ્યોત્સ્ના, તથા અંધકાર, ક્ષેત્રાદિકોનાં પ્રમાણ, તોલા, માષા આદિરૂપ ઉન્માન (વજનના માપ), અતિયાનગૃહ (નગરાદિના પ્રવેશ સ્થાનમા જે ગૃહ હોય છે તે), ઉદ્યાનગૃહ, અવિલંબ અને શનૈઃ પ્રપાત (આ બે દેશવિશેષ છે), એ બધા જીવ અને અજીવરૂપ છે તેમને જીવરૂપ કહેવાનુ કારણુ એ છે કે તેઓ જીવોથી વ્યાપ્ત હોય છે અથવા જીવોના આશ્રયસ્થાનરૂપ હોય છે અને પુદ્ગલાદિ અજીવરૂપ હોવાથી અથવા અજીવના આધારભૂત હોવાથી તેમને અજીવરૂપ કહેવામા આવેલ છે

સમયાદિરૂપ સમસ્ત વસ્તુ જીવ અને અજીવરૂપ જ છે, કારણુ કે જીવ રાશિ અને અજીવરાશિથી ભિન્ન એવી કોઇ ત્રીજી રાશિનુ અસ્તિત્વ જ નથી એજ વાતને સૂત્રકારે "दो रासी" ઇત્યાદિ સૂત્રો દ્વારા પ્રકટ કરી છે. સૂ. ૩૮

जीवराशिश्च बद्धमुक्तभेदाद् द्विविधः, तत्र प्रथमं बद्धानां बन्धनिरूपणाय माह-

मूलम्—दुविहे बंधे पण्णत्ते त जहा-पेजबंधे चेव दोसबंधे चेव । जीवाणं दोहिं ठाणेहिं पाव कम्म बधंति, त जहा-रागेण चेव दोसेण चेव । जीवाण दोहिं ठाणेहिं पाव कम्म उदीरेंति, त जहा अब्भोवगमियाए चेव वेयणाए उवक्कमियाए चेव वेयणाए १, एव वेदेंति २। एव निज्जरेंति-अब्भोवगमियाए चेव वेयणाए, उवक्कमियाए चेव वेयणाए ३ ॥ सू० ३९ ॥

छाया—द्विविधो बन्धः प्रज्ञप्तस्तद्यथा-प्रेमबन्धश्चैव द्वेषबन्धश्चैव । जीवाः खलु द्वाभ्यां स्थानाभ्यां पापं कर्म बध्नन्ति, तद्यथा-रागेण चैव द्वेषेण चैव । जीवा खलु द्वाभ्यां स्थानाभ्यां पाप कर्म उदीरयन्ति, तद्यथा-आभ्युपगमिक्या चैव वेदनया, औपक्रमिक्या चैव वेदनया १ एव वेदयन्ति २ । एव निर्जरयन्ति आभ्युपगमिक्या चैव वेदनया, औपक्रमिक्या चैव वेदनया३ ॥ सू० ३९ ॥

टीका—'दुविहे बंधे' इत्यादि । बन्धो द्विविधः-प्रेमबन्ध , द्वेषबन्ध, तत्र प्रेम-रागो मायालोभ कषायलक्षणः, द्वेषः-क्रोधमान-कषायलक्षणः, उक्तञ्च—

" मायालोहकसाओ, इच्चेयं रागसन्नियं दंद ।
कोहो माणो दोसो, इच्चेव समासनिद्दिट्ठो ॥ १ ॥ इति ।

बद्ध और मुक्त के भेद से जीवराशि दो प्रकार की है-इनमें जो बद्ध हैं उनके बन्धनिरूपण के लिये अब सूत्रकार कहते हैं—

'दुविहे बंधे पण्णत्ते' इत्यादि ।

बन्ध दो प्रकार का कहा गया है एक प्रेम-(राग) बन्ध और दूसरा द्वेषबन्ध इनमें माया और लोभकषायरूप जो होता है वह प्रेम (राग) है, और क्रोध एवं मानकषाय जो होता है वह द्वेष है। कहा भी है

બદ્ધ અને મુક્તના ભેદથી જીવરાશિ બે પ્રકારની છે તેમાંની જે બદ્ધ રાશિ છે તેના બન્ધનિરૂપણ નિમિત્તે સૂત્રકાર ' दुविहे बंधे पण्णत्ते " ઇત્યાદિ સૂત્રનું કથન કરે છે—

બંધ બે પ્રકારના કહ્યા છે-(૧) પ્રેમ (રાગ) બંધ અને (૨) દ્વેષબંધ. માયા અને લોભકષાયને પ્રેમ કહે છે, અને ક્રોધ અને માનકષાયને દ્વેષ કહે

छाया—मायालोभकषायः, इत्येतद् रागसञ्ज्ञितं द्वन्द्वम् ।
क्रोधो मानो द्वेषः, इत्येवं समास निर्दिष्टः ॥ १ ॥

प्रेम्णः-प्रेमलक्षणचित्तविकारकारकमोहनीयकर्मपुद्गलराशेः बन्धः-जीवप्रदेशेषु योगप्रत्ययतः प्रकृतिरूपतया प्रदेशरूपतया च सम्बन्धनम्, तथा कषायप्रत्ययतः स्थित्यनुभागविशेषापादनं च प्रेमबन्धः । एव द्वेषमोहनीयस्य बन्धो द्वेषबन्ध इति, उक्तञ्च—" जोगापयडिपएस ठिति अणुभागं कसायओ कुणइ ॥ इति

'मायालोहकसाओ' इत्यादि ।

इस प्रेमरूप मोहनीय कर्मपुद्गल का जो कि चित्त को विकृतकरने वाला जो बन्ध होना यह प्रेमबन्ध है-मन वचन और कायरूप योगसे प्रकृति और प्रदेशबन्ध होना है और कषाय से स्थितिबन्ध और अनुभागबन्ध होता है कर्म पुद्गल जब केवल योगनिमित्त से आत्मा में आते हैं-सम्बन्ध को प्राप्त होते हैं-तब वे वहां प्रकृति और प्रदेशरूपसे परिणमित होकर सम्बद्धित रहते हैं और जब वे कषाय के निमित्त से आत्मा में आते है-सम्बन्धित होते हैं-तब वे वहां स्थिति और अनुभागरूप से परिणमित होकर वहां रहते हैं-तात्पर्य कहने का यही है कि कर्मपुद्गलों में आत्मा के साथ सम्बद्धित होने की मर्यादा जो है तथा मन्द, तीव्र, तीव्रतर, आदि रूप से रस देने की योग्यता इनमें आती है वह सब कषाय के निमित्त से ही आती है इस तरह प्रेम का बंध-प्रेम लक्षणचित्तविकार कारक मोहनीय कर्मपुद्गलराशीका जो बन्ध

છે. કહ્યુ પણ છે કે-" मायालोहकसाओ " ઇત્યાદિ ચિત્તને વિકૃત કરનારા આ પ્રેમરૂપ મોહનીય પુદ્ગલોનો જે બંધ થાય છે તેને પ્રેમબંધ કહે છે. મન, વચન અને કાયરૂપ યોગથી પ્રકૃતિ અને પ્રદેશબંધ થાય છે અને કષાયથી સ્થિતિબંધ અને અનુભાગબંધ થાય છે કર્મપુદ્ગલો જ્યારે યોગને કારણે આત્મામા પ્રવેશ કરે છે-આત્માની સાથે સંબંધ પામે છે, ત્યારે તેઓ ત્યાં પ્રકૃતિ અને પ્રદેશરૂપે પરિણમિત થઇને સંબદ્ધિત રહે છે, અને જ્યારે તેઓ ત્યાં સ્થિતિ અને અનુભાગરૂપે પરિણમન પામીને ત્યાં રહે છે. આ કથનનો ભાવાર્થ એ છે કે-કર્મપુદ્ગલોમા આત્માની સાથે સબદ્ધ થવાની જે મર્યાદા પડે છે તથા મંદ, તીવ્ર, તીવ્રતર આદિરૂપે રસ દેવાની જે યોગ્યતા તેમનામાં આવે છે, તે સઘળી યેગ્યતા કષાયને કારણે જ આવે છે. એજ પ્રમાણે પ્રેમલક્ષણ ચિત્તવિકારકારક મોહનીય કર્મ પુદ્ગલરાશિનો જે બંધ છે તેને પ્રેમ-

जीवराशिश्च बद्धमुक्तभेदाद् द्विविधः, तत्र प्रथमं बद्धानां बन्धनिरूपणाय माह-

मूलम्—दुविहे बंधे पण्णत्ते तं जहा पेज्जबंधे चेव दोसबंधे चेव । जीवाणं दोहिं ठाणेहिं पावं कम्मं बंधंति, तं जहा-रागेण चेव दोसेण चेव । जीवाणं दोहिं ठाणेहिं पावं कम्मं उदीरेंति, तं जहा अब्भोवगमियाए चेव वेयणाए उवक्कमियाए चेव वेयणाए १, एवं वेदेंति २। एवं निज्जरेंति-अब्भोवगमियाए चेव वेयणाए, उवक्कमियाए चेव वेयणाए ३ ॥सू० ३९॥

छाया—द्विविधो बन्धः प्रज्ञप्तस्तद्यथा-प्रेमबन्धश्चैव द्वेषबन्धश्चैव । जीवाः खलु द्वाभ्यां स्थानाभ्यां पापं कर्म बध्नन्ति, तद्यथा-रागेण चैव द्वेषेण चैव । जीवाः खलु द्वाभ्यां स्थानाभ्यां पापं कर्म उदीरयन्ति, तद्यथा-आभ्युपगमिक्या चैव वेदनया, औपक्रमिक्या चैव वेदनया १ एवं वेदयन्ति २ । एवं निर्जरयन्ति आभ्युपगमिक्या चैव वेदनया, औपक्रमिक्या चैव वेदनया३ ॥ सू० ३९ ॥

टीका—'दुविहे बंधे' इत्यादि । बन्धो द्विविध-प्रेमबन्ध, द्वेषबन्ध, तत्र प्रेम-रागो मायालोभकषायलक्षणः, द्वेषः-क्रोधमान-कषायलक्षणः, उक्तञ्च—

" मायालोहकसाओ, इच्चेयं रागसन्नियं दंदं ।
कोहो माणो दोसो, इच्चेव समासनिद्दिट्ठो ॥ १ ॥ इति ।

बद्ध और मुक्त के भेद से जीवराशि दो प्रकार की है-इनमें जो बद्ध हैं उनके बन्धनिरूपण के लिये अब सूत्रकार कहते हैं—

'दुविहे बंधे पण्णत्ते' इत्यादि ।

बन्ध दो प्रकार का कहा गया है एक प्रेम-(राग) बन्ध और दूसरा द्वेषबन्ध इनमें माया और लोभकषायरूप जो होता है वह प्रेम (राग) है, और क्रोध एवं मानकषाय जो होता है वह द्वेष है। कहा भी है

બદ્ધ અને મુક્તના ભેદથી જીવરાશિ બે પ્રકારની છે તેમાંની જે બદ્ધ રાશિ છે તેના જ બંધનિરૂપણ નિમિત્તે સૂત્રકાર " दुविहे बन्धे पण्णत्ते " ઇત્યાદિ સૂત્રનું કથન કરે છે—

બંધ બે પ્રકારના કહ્યા છે-(૧) પ્રેમ (રાગ) બંધ અને (૨) દ્વેષબંધ. માયા અને લોભકષાયને પ્રેમ કહે છે, અને ક્રોધ અને માનકષાયને દ્વેષ કહે

उक्तञ्च—" अप्पं बायरमउयं बहुं च रुक्खं च सुक्किलं चेव ।
मंदं महव्वयं तिय, सायाबहुलं च तं कम्मं ॥ १ " इति ।

छाया—अल्पं बादरं मृदुकं बहु च रूक्षं च शुक्लं चैव ।
मन्दं महाव्ययमिति च शाता बहुलं च तत्कर्म ॥ १ ॥

तत्र अल्पं स्थितिमपेक्ष्य, बादरं परिणाममाश्रित्य, मृदुकम् अनुभावापेक्षया, बहु-प्रदेशबहुत्वात्, रूक्षम्-वालुकावत्, मन्दं-लेपमपेक्ष्य, महाव्ययं-सर्वापगमेन। एतदेव दर्शयति-' जीवाणं ' इत्यादि ।

वह शेषकर्मों के बंध से विलक्षण होने के कारण अबन्ध के जैसा ही कहा गया है जिस कर्मका यह बंध होता है वह कर्म अल्पस्थितिक आदि विशेषणों वाला होता है । कहा भी है-(अप्पं बायर मउयं) इत्यादि ।

यहां जो कर्म को अल्प कहा गया है वह स्थिति की अपेक्षा लेकर कहा गया है तथा बादर जो कहा गया है वह परिणाम की अपेक्षा लेकर कहा गया है मृदुक जो कहा गया है वह अनुभव की अपेक्षा लेकर कहा गया है बहु जो कहा गया है वह प्रदेश बहुता को लेकर कहा गया है रूक्ष जो कहा गया है वह निरस होने की अपेक्षा से बालुका की तरह हो जाने से कहा गया है मन्द जो कहा गया है वह लेप की अपेक्षा लेकर कहा गया है तथा महाव्यय जो कहा गया है वह सम्पूर्णरूप से व्यय हो जाने की अपेक्षा से कहा गया है यही बात सूत्रकार ने " जीवाणं " इत्यादि सूत्र द्वारा प्रदर्शित की

क्षણ (ભિન્ન પ્રકારનો) હોવાને લીધે તેને અબંધના જેવો જ કહેવામાં આવ્યો છે જે કર્મનો આ બંધ હોય છે તે કર્મ અલ્પસ્થિતિક આદિ વિશેષણોવાળું હોય છે. કહ્યું પણ છે કે-" अप्पं वायरमउयं " ઈત્યાદિ. અહીં કર્મને જે અલ્પ કહેવામાં આવ્યું છે તે સ્થિતિની અપેક્ષાએ કહેવામાં આવ્યું છે, અને તેને જે બાદર કહેવામાં આવ્યું છે તે પરિણામની અપેક્ષાએ કહેવામાં આવ્યું છે. તેને જે મૃદુક કહેવામાં આવ્યું છે તે અનુભવની અપેક્ષાએ કહેવામાં આવ્યું છે, તેને જે બહુ વિશેષણ લગાડયું છે તે પ્રદેશબહુત્તાની અપેક્ષાએ લગાડયું છે, તેને જે રૂક્ષ કહેવામાં આવ્યું છે તે રેતીની જેમ નીરસ થઈ જવાની અપેક્ષાએ કહેવામાં આવ્યું છે, તેને જે મન્દ કહેવામાં આવ્યું છે તે લેપની અપેક્ષાએ કહેવામાં આવ્યું છે, તથા તેને જે મહાવ્યય કહેવામાં આવ્યું છે તે સંપૂર્ણરૂપે તેનો વ્યય થઈ જવાની અપેક્ષાએ કહેવામાં આવ્યું છે. એજ વાત સૂત્રકારે " जीवाणं " ઈત્યાદિ સૂત્ર દ્વારા પ્રકટ કરી છે.

छाया—योगेभ्यः प्रकृतिप्रदेशौ स्थित्यनुभागौ कषायतः करोति ॥ प्रेमद्वेषल क्षणाभ्यां कर्मभ्यामुदयमागताभ्यां जीवानामशुभकर्मबन्धो भवतीत्याह—' जीवाणं ' इत्यादि ।

अथवा पूर्वसूत्रमन्यथा व्याख्याय सम्बन्धान्तरमस्य क्रियते—' दुविहे बंधे ' इत्यादि । बन्धः सामान्येन द्विविधो भवति-प्रेमतः द्वेषतश्चेति । सचानिवृत्ति सूक्ष्मसंपरायपर्यन्तगुणस्थानवर्तामपेक्षया विज्ञेयः । यस्तु-उपशान्तमोह-क्षीणमोह-सयोगि-केवलिनां भवति स योग प्रत्यय एवातः स बन्धत्वेन न विव क्षितः । यद्योऽपि स क्षेपकर्मबन्धविलक्षणत्वाद् अबन्धसदृश एवेति, यस्य हि कर्मभोऽसौ बन्धः, तद्स्थितिकादिविशेषणमस्ति,

---

है वह प्रेमबन्ध है तथा द्वेषमोहनीय का जो बन्ध है वह द्वेषबन्ध है । कहा भी है-" जोगा पयडिपएसं " इत्यादि ।

यह जीव उदयप्राप्त प्रेमद्वेषरूप कर्मों के द्वारा अशुभकर्मों का बन्ध करता है । इसीलिये-" जीवाणं दोहिं ठाणेहिं " इत्यादि मेंसूत्र ऐसा कहा गया है कि जीव दो स्थानों से पाप कर्मका बन्ध किया करता है-एक राग से और दूसरे द्वेष से ।

अथवा—यहां बन्धशब्द से यह प्रकट किया गया है कि बन्ध दो प्रकार का होता है-एक प्रेम से और दूसरे द्वेष से यह सामान्य बन्ध अनिवृत्तिकरण से लेकर सूक्ष्मसांपराय गुणस्थानवाले जीवों की अपेक्षा से जानना चाहिये तथा-जो उपशान्तमोह, क्षीणमोह और सयोगि केवलियों के होता है वह योग प्रत्यय ही होता है इसलिये वह बंधरूप से विवक्षित हुआ है यद्यपि योगप्रत्यय बन्ध भी बन्धरूप ही है, परन्तु

બંધ કહે છે અને દ્વેષમોહનીયનો જે બંધ છે તેને દ્વેષબંધ કહે છે કહ્યું પણ છે-' जोगा पयडिपएसं " ઇત્યાદિ આ જીવ ઉદયપ્રાપ્ત પ્રેમદ્વેષરૂપ કર્મો દ્વારા અશુભ કર્મોનો બંધ કરે છે તેથી જ કહ્યું છે કે " जीवाणं दोहिं ठाणेहिं " ઇત્યાદિ-જીવ બે સ્થાનકો દ્વારા પાપકર્મનો બંધ કર્યા કરે છે-એક રાગથી અને બીજું દ્વેષથી

અથવા અહીં બંધ શબ્દથી એ પ્રકટ કરવામાં આવ્યું છે કે બંધ બે પ્રકારનો હોય છે-(૧) પ્રેમને નિમિત્તે. (૨) દ્વેષને નિમિત્તે આ સામાન્ય બંધ અનિવૃત્તિકરણથી લઈને સૂક્ષ્મસાંપરાય પર્યન્તના ગુણસ્થાનવાળા જીવોની અપેક્ષાએ સમજવો. જોઇએ તથા ઉપશાન્તમોહ ક્ષીણમોહ અને સયોગિ કેવલિઓમાં તો તે યોગપ્રત્યય જ હોય છે તેથી તેને અહીં બંધરૂપે ગણાવવામાં આવેલ નથી જો કે યોગપ્રત્યયબંધ પણ બંધરૂપ જ છે પરન્તુ તે શેષકર્મોના બંધથી વિલ

उक्तञ्च—" अप्पं वायरमउयं बहुं च रुक्खं च सुक्किलं चेव ।
मंदं महव्वयं तिय, सायाबहुलं च तं कम्मं ॥ १ " इति ।

छाया—अल्पं बादरं मृदुकं बहु च रूक्षं च शुक्लं चैव ।
मन्दं महाव्ययमिति च शाता बहुलं च तत्कर्म ॥ १ ॥

तत्र अल्पं स्थितिमपेक्ष्य, बादरं परिणाममाश्रित्य, मृदुकम् अनुभावापेक्षया, बहु-प्रदेशबहुत्वात्, रूक्षम्-वालुकावत्, मन्दं-लेपमपेक्ष्य, महाव्ययं-सर्वापगमेन । एतदेव दर्शयति-' जीवाणं ' इत्यादि ।

वह शेषकर्मों के बंध से विलक्षण होने के कारण अबन्ध के जैसा ही कहा गया है जिस कर्मका यह बंध होता है वह कर्म अल्पस्थितिक आदि विशेषणों वाला होता है । कहा भी है-(अप्पं वायर मउयं) इत्यादि ।

यहां जो कर्म को अल्प कहा गया है वह स्थिति की अपेक्षा लेकर कहा गया है तथा बादर जो कहा गया है वह परिणाम की अपेक्षा लेकर कहा गया है मृदुक जो कहा गया है वह अनुभव की अपेक्षा लेकर कहा गया है बहु जो कहा गया है वह प्रदेश बहुता को लेकर कहा गया है रूक्ष जो कहा गया है वह निरस होने की अपेक्षा से वालुका की तरह हो जाने से कहा गया है मन्द जो कहा गया है वह लेप की अपेक्षा लेकर कहा गया है तथा महाव्यय जो कहा गया है वह सम्पूर्णरूप से व्यय हो जाने की अपेक्षा से कहा गया है यही बात सूत्रकार ने " जीवाणं " इत्यादि सूत्र द्वारा प्रदर्शित की

क्षणु (भिन्न प्रकारनो) होवाने लीधे तेने अबंधना जेवो ज कहेवामा आव्यो छे. जे कर्मनो आ बंध होय छे ते कर्म अल्पस्थितिक आदि विशेषणोवाळु होय छे. कह्युं पण छे के-" अप्पं वायरमउयं " ईत्यादि. अहीं कर्मने जे अल्प कहेवामा आव्युं छे ते स्थितिनी अपेक्षाए कहेवामां आव्युं छे, अने तेने जे बादर कहेवामां आव्युं छे ते परिणामनी अपेक्षाए कहेवामा आव्युं छे. तेने जे मृदुक कहेवामा आव्युं छे ते अनुभवनी अपेक्षाए कहेवामा आव्यु छे, तेने जे बहु विशेषण लगाडयु छे ते प्रदेशबहुत्तानी अपेक्षाए लगाडयुं छे, तेने जे रूक्ष कहेवामा आव्युं छे ते रेतीनी जेम नीरस थई जवानी अपेक्षाए कहेवामा आव्यु छे, तेने जे मन्द कहेवामा आव्युं छे ते लेपनी अपेक्षाए कहेवामा आव्यु छे, तथा तेने जे महाव्यय कहेवामां आव्युं छे ते संपूर्णरूपे तेनो व्यय थई जवानी अपेक्षाए कहेवामा आव्युं छे. एज वात सूत्रकारे " जीवाणं " ईत्यादि सूत्र द्वारा प्रकट करी छे.

जीवा-प्राणिनः णमिति वाक्यालङ्कारे द्वाभ्यां स्थानाभ्यां-कारणाभ्यां पापम्-अशुभम्-अशुभभवनिबन्धनत्वात् अशुभं बध्नन्ति स्पृष्टाद्यवस्थां कुर्वन्ति न त्वनुबन्धरहितं द्विसमयस्थितिकं शुभं बध्नन्ति तस्य केवलयोगप्रत्ययत्वादिति। केन कारणद्वयेन ? इत्याह-'रागेण' इत्यादि, रागेण द्वेषेण च कषायैरित्यर्थः। ननु बन्धहेतवस्तु मिथ्यात्वाविरतिकषाययोगाः प्रोच्यन्ते तत्कथमत्र केवलं कषाया एवोक्ताः ? इति चेदुच्यते-कषायाणां पापकर्मबन्धे प्राधान्यख्यापनार्थम्। प्राधान्यं च तेषां स्थित्यनुभागबन्धकारणत्वादिति। यद्वा तेषाम

है-इस तरह जीव दो स्थानों से अशुभभव का कारण होने से अशुभ कर्म का बन्ध करते हैं-उन्हें स्पृष्ट आदि अवस्थावाला करते हैं-अनुबन्ध रहित उन्हें नहीं करते हैं अर्थात् द्विसमय की स्थितिवाले शुभ कर्म का वे बन्ध नहीं करते हैं क्यों कि जो कर्म दो समय की स्थितिवाला होता है उस कर्म का बन्ध केवल योगनिमित्तक ही होता है जीवों के अशुभ कर्मों के बन्ध के कारण राग और द्वेष हैं। यही बात (रागेण चेव दोसेण चेव) इस सूत्रपाठ द्वारा प्रकट की गई है यहां ऐसी आशंका हो सकती है कि कर्मबन्ध के कारण तो मिथ्यात्व, अविरति, प्रमाद, कषाय और योग कहे गये हैं फिर यहां केवल कषायों को ही कर्मबन्ध का कारण क्यों कहा है तो इसका समाधान ऐसा है कि यहां जो कषायों को ही कर्मबन्ध का कारण कहा गया है वह कर्मबन्ध में इनकी प्रधानता प्रकट करने के लिये कहा गया है। क्यों कि कर्मबन्ध होने पर भी जो कर्मों

આ રીતે જીવ બે સ્થાનોવડે અશુભભવના કારણરૂપ અશુભકર્મનો બંધ કરે છે, તેમને (કર્મ પુદ્ગલોને) સ્પૃષ્ટ આદિ અવસ્થાવાળાં કરે છે-તેમને અનુબંધ રહિત કરતા નથી એટલે કે બે સમયની સ્થિતિવાળાં શુભકર્મોનો બંધ તેઓ કરતા નથી, કારણ કે બે સમયની સ્થિતિવાળું જે કર્મ હોય છે, તે કર્મનો બંધ કેવળ યોગનિમિત્તક જ હોય છે જીવોના અશુભકર્મોના બંધનું કારણ રાગ અને દ્વેષ જ ગણાય છે એજ વાત સૂત્રકારે 'रागेण चेव दोसेण चेव" આ સૂત્રપાઠ દ્વારા પ્રકટ કરી છે અહીં કોઇને કદાચ એવી શંકા થાય કે કર્મબંધના કારણ તો મિથ્યાત્વ, અવિરતિ, પ્રમાદ, કષાય અને યોગ કહ્યાં છે, છતાં અહીં માત્ર કષાયોને જ શા માટે કર્મબંધના કારણરૂપ કહેવામાં આવ્યા છે? આ શંકાનું નીચે પ્રમાણે સમાધાન કરી શકાય-કર્મબંધમાં તેમની પ્રધાનતા પ્રકટ કરવા નિમિત્તે જ અહીં તેમને (કષાયોને) કર્મબંધના કારણ રૂપ બતાવવામાં આવ્યા છે, કારણ કે કર્મબંધ થાય ત્યારે કર્મોની સ્થિતિ

त्यन्तमनर्थकारित्वात् ।

आहच—" को दुःखं प्राप्नुयाल्लोके, कस्य सौख्यैश्च विस्मयः ।
को वा न लभते मोक्षं, रागद्वेषं न चेद् भवेत् ॥१॥ इति ।

यद्वा-द्विस्थानकानुरोधाद् बन्धहेतुदेशग्राहकमेवेदं सूत्रमिति न दोषः ।

पूर्वोक्तस्थानद्वयेन बद्धस्य च पापकर्मणो यथोदीरणवेदन-निर्जरणानि प्राणिनः कुर्वन्ति तथा सूत्रत्रयेणाह—'जीवाणं' इत्यादि । द्वाभ्यां स्थानाभ्यां जीवाः पापं कर्म

में स्थिति और अनुभाग की प्रकर्षता होती है उसके प्रति कारण कषायें होती है-अथवा ये कषायें अत्यन्त अनर्थकारी हैं इस बात को प्रकट करने के लिये यहां कषायों को कहा गया है ।

सो ही कहा है-" को दुःखं प्राप्नुयाल्लोके " इत्यादि

संसार में कौन दुःख पा सकता है, और सुखमिलने में कौन सा आश्चर्य है तथा कौन मोक्ष को नहीं पा सकता है जिसके अगर रागद्वेष रूप कषाय न हो ॥ १ ॥

अथवा द्विस्थान के अनुरोध से यह सूत्र बन्धहेतुओं में से एक देशबन्ध के हेतुओं का ग्राहक है । अतः इस प्रकार के कथन में कोई आपत्ति नहीं है अब सूत्रकार यह कहते हैं कि पूर्वोक्त दो स्थान से बद्धपापकर्म की जीव जिस तरह से उदीरणा करते हैं, उनका वेदन करते हैं, और उनकी निर्जरा करते हैं वे कहते हैं कि जीव दो स्थानों

અને અનુભાગની પ્રકર્ષતાના કારણરૂપ તો કષાયો જ હોય છે અથવા તે કષાયો ઘણા જ અનર્થકારી છે એ વાતને પ્રકટ કરવા માટે અહીં કર્મબંધના કારણરૂપ કષાયોને બતાવવામાં આવેલ છે. એજ વાત નીચેની ગાથા દ્વારા વ્યક્ત થાય છે-" को दुख प्राप्नुयाल्लोके ' ઇત્યાદિ—

જે જીવમાં રાગદ્વેષનો અભાવ હોય છે તે જીવને કોઈ દુઃખ ભોગવવું પડતું નથી, એવા જીવને સુખ પ્રાપ્ત થાય તો તેમાં આશ્ચર્ય શું છે ? અને એવો જીવ મોક્ષ પણ પ્રાપ્ત કરી શકે છે. ॥ ૧ ॥

અથવા દ્વિસ્થાનના અનુરોધની અપેક્ષાએ આ સૂત્ર બંધહેતુઓમાંના એક દેશબંધના હેતુઓ (કારણો) નું ગ્રાહક છે. તેથી આ પ્રકારના કથનમાં કોઇ દોષ નથી.

હવે સૂત્રકાર એ પ્રકટ કરે છે કે પૂર્વોક્ત બે સ્થાનો દ્વારા બદ્ધ પાપકર્મની જીવ કેવી રીતે ઉદીરણા કરે છે, કેવી રીતે તેમનું વેદન કરે છે, અને કેવી રીતે તેમની નિર્જરા કરે છે-જીવ બે સ્થાનોવડે પાપકર્મની ઉદીરણા કરે

जीवा-प्राणिनः खमिति वाक्यालङ्कारे आभ्यां स्थानाभ्यां-कारणाभ्यां पापम्-अशुभम्-अशुभमवनिबन्धनत्वात् अशुभं बध्नन्ति स्पृष्टावस्थं कुर्वन्ति न त्वनुबन्धरहितं द्विसमयस्थितिकं शुभं बध्नन्ति तस्य केवलयोगप्रत्ययत्वादिति। केन कारणद्वयेन ? इत्याह-'रागेण' इत्यादि, रागेण द्वेषेण च कषायैरित्यर्थः। ननु बन्धहेतवस्तु मिथ्यात्वाविरतिकषाययोगा प्रोच्यन्ते तत्कथमत्र केवलं कषाया एवोक्ताः ? इति चेदुच्यते-कषायाणां पापकर्मबन्धे भवति प्राधान्यख्यापनार्थम्। प्राधान्यं च तेषां स्थित्यनुभागप्रकर्षकारणत्वादिति। यद्वा तेषाम्

है-इस तरह जीव दो स्थानों से अशुभभव का कारण होने से अशुभ कर्म का बन्ध करते हैं-उन्हें स्पृष्ट आदि अवस्थावाला करते हैं-अनुबन्ध रहित उन्हें नहीं करते हैं अर्थात् द्विसमय की स्थितिवाले शुभ कर्म का वे बन्ध नहीं करते हैं क्यों कि जो कर्म दो समय की स्थितिवाला होता है उस कर्म का बन्ध केवल योगनिमित्तक ही होता है जीवों के अशुभ कर्मों के बन्ध के कारण राग और द्वेष हैं। यही बात (रागेण चेव दोसेण चेव) इस सूत्रपाठ द्वारा प्रकट की गई है यहां ऐसी आशंका हो सकती है कि कर्मबन्ध के कारण तो मिथ्यात्व, अविरति, प्रमाद, कषाय और योग कहे गये हैं फिर यहां केवल कषायों को ही कर्मबन्ध का कारण क्यों कहा है तो इसका समाधान ऐसा है कि यहां जो कषायों को ही कर्मबन्ध का कारण कहा गया है वह कर्मबन्ध में इनकी प्रधानता प्रकट करने के लिये कहा गया है। क्यों कि कर्मबन्ध होने पर भी जो कर्मों

આ રીતે જીવ બે સ્થાનોવડે અશુભભવના કારણરૂપ અશુભકર્મનો બંધ કરે છે, તેમને (કર્મપુદ્ગલોને) સ્પૃષ્ટ આદિ અવસ્થાવાળાં કરે છે-તેમને અનુબંધ રહિત કરતા નથી. એટલે કે બે સમયની સ્થિતિવાળાં શુભકર્મોનો બંધ તેઓ કરતા નથી, કારણ કે બે સમયની સ્થિતિવાળું જે કર્મ હોય છે, તે કર્મનો બંધ કેવળ યોગનિમિત્તક જ હોય છે જીવોના અશુભકર્મોના બંધનું કારણ રાગ અને દ્વેષ જ ગણાય છે એજ વાત સૂત્રકારે 'रागेण चेव दोसेण चेव" આ સૂત્રપાઠ દ્વારા પ્રકટ કરી છે અહીં કોઈને કદાચ એવી શંકા થાય કે કર્મબંધના કારણ તો મિથ્યાત્વ, અવિરતિ, પ્રમાદ, કષાય અને યોગ કહ્યાં છે, છતાં અહીં માત્ર કષાયોને જ શા માટે કર્મબંધના કારણરૂપ કહેવામાં આવ્યા છે ? આ શંકાનું નીચે પ્રમાણે સમાધાન કરી શકાય-કર્મબંધમાં તેમની પ્રધાનતા પ્રકટ કરવા નિમિત્તે જ અહીં તેમને (કષાયોને) કર્મબંધના કારણ રૂપ બતાવવામાં આવ્યા છે, કારણ કે કર્મબંધ થાય ત્યારે કર્મોની સ્થિતિ

पूर्वोक्तप्रकारेण स्थानद्वयेनैव जीवाः पापं कर्म वेदयन्ति-उदीरितं सद् विपाकतोऽनुभवन्ति। एवम् अनेनैव प्रकारेण च जीवाः पापं कर्म निर्जरयन्ति-आत्मप्रदेशेभ्यः शटयन्ति-पृथक्कुर्वतीत्यर्थः ॥ सू० ३९ ॥

कर्मणां देशतः सर्वथा वा निर्जरणे जीवस्य भवान्तरे सिद्धिगतौ वा गच्छतः शरीरान्निर्याणं भवतीति निर्याणवक्तव्यतां सूत्रपञ्चकेनाह—

मूलम्—दोहिं ठाणेहिं आया सरीरं फुसित्ताणं णिज्जाइ, तंजहा-देसेण वि आया सरीरं फुसित्ताणं णिज्जाइ, सव्वेणावि आया सरीरं फुसित्ता णं णिज्जाइ १। एवं फुरित्ता णं २। एवं फुडित्ता णं ३। एवं संवट्टइत्ता णं ४। एवं निव्वट्टइत्ताणं ५॥सू०॥४०

छाया—द्वाभ्यां स्थानाभ्यामात्मा शरीरं स्पृष्ट्वा खलु निर्याति, तद्यथा-देशेनापि-आत्मा शरीरं स्पृष्ट्वा खलु निर्याति, सर्वेणापि-आत्मा शरीरं स्पृष्ट्वा खलु निर्याति १। एवं स्फोरयित्वा खलु० २। एवं स्फुटित्वा खलु० ३। एवं संवर्त्य खलु० ४। एवं निवर्त्य खलु० ५ ॥ सू० ४० ॥

मिकी वेदना जन्य उदीरणा है इसी प्रकार से जीव इन्हीं दो स्थानों द्वारा पापकर्म का वेदन करते हैं-उदीरणा कर्म का विपाकतः फल से अनुभव करते हैं। इसी प्रकार से जीव पापकर्म की निर्जरा करते हैं-आत्मप्रदेशों से उन्हें पृथक् करते हैं॥ सू. ३९॥

जीव के कर्मों की जब देशतः अथवा सर्वतः निर्जरा होती है तब वह भवान्तर में या इसी भव में सिद्धिगति में प्राप्त हो जाता है सिद्धिगति में प्राप्त होने समय इसका गृहीत शरीर से निर्याण-निकलना होता है इसी लिये अब सूत्रकार निर्याण संबंधी वक्तव्यता पांच

ઉપરોક્ત બે સ્થાનો દ્વારા જ પાપકર્મોનું વેદન કરે છે ઉદીરિત કર્મના વિપાક સ્વરૂપ ફળનો અનુભવ કરે છે એજ પ્રમાણે જીવ તે બે સ્થાનો દ્વારા જ પાપકર્મની નિર્જરા કરે છે-આત્મપ્રદેશોથી તેમને અલગ કરી નાખે છે સૂ ૩૯

જીવના કર્મોની જ્યારે દેશત. (અંશત) અથવા સર્વતઃ નિર્જરા થાય છે, ત્યારે ભવાન્તરમા અથવા એજ ભવમા સિદ્ધગતિને પ્રાપ્ત કરે છે સિદ્ધિ ગતિને પ્રાપ્ત કરતી વખતે તેનુ ગૃહીત શરીરમાથી નિર્યાણ-બહાર નિકળવાનુ થાય છે. તેથી સૂત્રકાર હવે પાચ સૂત્રો દ્વારા નિર્યાણ વિષયક વક્તવ્યતા પ્રકટ કરે છે-" दोहिं ठाणेहिं आया सरीर " ઇત્યાદિ-

उदीरयन्ति–अप्राप्तावसर एवोदयावलिकायां प्रवेशयन्ति । तदेव स्थानद्वयं दर्शयति– 'अब्भोवगमियाए' इत्यादि, आभ्युपगमिकया–अभ्युपगमेन–स्वीकरणेन निर्वृत्ता, अभ्युपगमे भवा वा–आभ्युपगमिकी स्वेच्छया स्वीकृतेत्यर्थः, तया प्रव्रज्या स्वीकरणेन ब्रह्मचर्यभूमिशयन केशलुञ्चनातापनादिरूपया वेदनया–पीडया । तथा–औपक्रमिकया–उपक्रमेण कर्मोदीरणकरणेन निर्वृत्ता, कर्मोदीरणकारणे भवा वा–औपक्रमिकी –स्वयमुदयं प्राप्ता ज्वरातिसारादिजन्या, तया वेदनया । 'एव' मिति एवम्–

से पापकर्मकी उदीरणा करते हैं कर्म के उदय में आने का अवसर तो नहीं है परन्तु उसे जबर्दस्ती उदयावलिका में लाना इसका नाम उदीरणा है। उदीरणा करने के ये दो स्थान ये हैं–एक आभ्युपगमिकी वेदना और दूसरी औपक्रमिकी वेदना, आभ्युगमिकीवेदना वह है जो स्वेच्छा से स्वीकृत की जाती है जैसे प्रव्रज्या का स्वीकार करना, ब्रह्मचर्य का पालना, भूमि पर शयन करना, केशों का लुञ्चन करना और आतापना आदि लेना इन सब के करने पर जीवों को वेदना का अनुभव तो होता है पर इस वेदना को शान्तिभाव से सहन करने से कर्मों की उदीरणा होती है। अतः इस तरह की क्रियाओं से जन्य वेदना से जो कर्मों की उदीरणा होती है वह आभ्युपगमिकी वेदना जन्य उदीरणा है तथा कर्मों की उदीरणा करण से जो निर्वृत्त होती है अथवा कर्मोदीरणकारण के होने पर जो होती है वह औपक्रमिकी वेदना है जैसे ज्वरातिसारादि जन्य वेदना इस वेदना से जो कर्मों की उदीरणा होती है वह औपक्र

કર્મને ઉદયમાં આવવાનો અવસર ન હોય તો પણ જબરદસ્તીથી તેને ઉદયાવલિકામાં લાવવું તેનું નામ ઉદીરણા છે ઉદીરણા કરવાના તે બે સ્થાનો નીચે પ્રમાણે છે–(૧) આભ્યુપગમિકી વેદના અને (૨) ઔપક્રમિકી વેદના જે વેદનાનો સ્વેચ્છાએ સ્વીકાર કરવામાં આવે છે તે વેદનાનું નામ આભ્યુપગમિકી વેદના છે જેમકે પ્રવ્રજ્યા અંગીકાર કરવી, બ્રહ્મચર્યનું પાલન કરવું ભૂમિપર શયન કરવું લોચ કરવો આતાપના લેવી વગેરે. આ બધાનું સેવન કરવાથી જીવોને વેદનાનો અનુભવ થાય છે પરન્તુ તે વેદનાને શાન્તિભાવપૂર્વક સહન કરવાથી કર્મોની ઉદીરણા થાય છે આ પ્રકારની ક્રિયાઓથી જન્ય વેદનાથી કર્મોની જે ઉદીરણા થાય છે, તે આભ્યુપગમિકી વેદનાજન્ય ઉદીરણા કહેવાય છે કર્મોની ઉદીરણાકરણ દ્વારા જે નિવૃત્તિ થાય છે અથવા કર્મોદીરણાકરણ ઉપસ્થિત થવાથી જે વેદના અનુભવવી પડે છે તેને ઔપક્રમિકી વેદના કહે છે જેમકે જ્વરાદિ જન્યવેદના, તે પ્રકારની વેદના વડે કર્મોની જે ઉદીરણા થાય છે તેને ઔપક્રમિકી વેદનાજન્ય ઉદીરણા કહે છે એજ પ્રમાણે જીવ

पूर्वोक्तप्रकारेण स्थानद्वयेनैव जीवाः पापं कर्म वेदयन्ति-उदीरितं सद् विपाकतोऽनुभवन्ति। एवम् अनेनैव प्रकारेण च जीवाः पापं कर्म निर्जरयन्ति-आत्मप्रदेशेभ्यः शटयन्ति-पृथक्कुर्वन्तीत्यर्थः ॥ सू० ३९ ॥

कर्मणां देशतः सर्वथा वा निर्जरणे जीवस्य भवान्तरे सिद्धिगतौ वा गच्छतः शरीरान्निर्याणं भवतीति निर्याणवक्तव्यतां सूत्रपञ्चकेनाह—

मूलम्—दोहिं ठाणेहिं आया सरीरं फुसित्ताणं णिज्जाइ, तंजहा-देसेण वि आया सरीरं फुसित्ताणं णिज्जाइ, सव्वेणावि आया सरीरं फुसित्ता णं णिज्जाइ १। एवं फुरित्ता णं २। एवं फुडित्ता णं३। एवं संवट्टइत्ता णं४। एवं निव्वट्टइत्ताणं५॥सू०॥४०

छाया—द्वाभ्यां स्थानाभ्यामात्मा शरीरं स्पृष्ट्वा खलु निर्याति, तद्यथा-देशेनापि-आत्मा शरीरं स्पृष्ट्वा खलु निर्याति, सर्वेणापि-आत्मा शरीरं स्पृष्ट्वा खलु निर्याति १। एवं स्फोरयित्वा खलु० २। एवं स्फुटित्वा खलु० ३। एवं संवर्त्य खलु० ४। एवं निवर्त्य खलु० ५ ॥ सू० ४० ॥

मिकी वेदना जन्य उदीरणा है इसी प्रकार से जीव इन्हीं दो स्थानों द्वारा पापकर्म का वेदन करते हैं-उदीरणा कर्म का विपाकतः फल से अनुभव करते हैं। इसी प्रकार से जीव पापकर्म की निर्जरा करते हैं-आत्मप्रदेशों से उन्हें पृथक् करते हैं॥ सू. ३९ ॥

जीव के कर्मों की जब देशतः अथवा सर्वतः निर्जरा होती है तब वह भवान्तर में या इसी भव में सिद्धिगति में प्राप्त हो जाता है सिद्धिगति में प्राप्त होने समय इसका गृहीत शरीर से निर्याण-निकलना होता है इसी लिये अब सूत्रकार निर्याण संबंधी वक्तव्यता पांच

ઉપરોક્ત બે સ્થાનો દ્વારા જ પાપકર્મોનું વેદન કરે છે ઉદીરિત કર્મના વિપાક સ્વરૂપ ફળનો અનુભવ કરે છે એજ પ્રમાણે જીવ તે બે સ્થાનો દ્વારા જ પાપકર્મની નિર્જરા કરે છે-આત્મપ્રદેશોથી તેમને અલગ કરી નાખે છે સૂ. ૩૯

જીવના કર્મોની જ્યારે દેશત (અંશત) અથવા સર્વતઃ નિર્જરા થાય છે, ત્યારે ભવાન્તરમાં અથવા એજ ભવમા સિદ્ધગતિને પ્રાપ્ત કરે છે સિદ્ધિ ગતિને પ્રાપ્ત કરતી વખતે તેનું ગૃહીત શરીરમાથી નિર્યાણ-બહાર નિકળવાનું થાય છે. તેથી સૂત્રકાર હવે પાંચ સૂત્રો દ્વારા નિર્યાણ વિષયક વક્તવ્યતા પ્રકટ કરે છે-"दोहिं ठाणेहिं आया सरीर" ઇત્યાદિ—

टीका—' दोहिं ' इत्यादि ।

द्वाभ्यां प्रकाराभ्यामात्मा—जीवः शरीरं—देह स्पृष्ट्वा निर्याति—मरणकाले शरीरान्निस्सरति, सदेशाद्—देशेनापि सर्वेणापि च । तत्र देशेन—कतिपयप्रदेशाना मिलिकागत्या बहिः क्षेपणेन जीवः शरीरतो निस्सरति । यथेलिका कीटविशेषः स्वस्याग्रपादौ पूर्वमग्रे संस्थाप्य पश्चादन्यपादौ तत उत्थाप्यान्यत्र गच्छति, तथोत्पत्तिस्थानं गच्छन् जीवः कतिपयानात्मप्रदेशान् शरीराद्बहिः प्रक्षिप्य निस्सरतीति भावः । सर्वेण सर्वात्मना कन्दुकगत्या सर्वप्रदेशानां युगपत् बहि र्निस्सारणेन, यथा कन्दुकः सर्वात्मनोत्पतति तथोत्पादस्थानं गच्छन् जीवोऽपि सर्वान् स्वात्म

सूत्रों द्वारा प्रकट करते हैं—' दोहिं ठाणेहिं आया सरीरं ' इत्यादि ।

दो प्रकार से जीव देह का स्पर्श करके मरणकाल में शरीर से बाहर निकलजाता है—वे दो प्रकार ये हैं—एक एकदेश और दूसरा सर्वदेश जीव जब देश से मरणकाल में शरीर से बाहर निकलता है तब वह कितने आत्मप्रदेशों को इलिका-(कृमि विशेष) गति से उन्हें बाहर निकलता है—जिस प्रकार इलिका अपने आगे के पगों को पहिले आगे जमालेती है और बाद में वह अन्य पगों को उठाकर चलती है, इसी प्रकार उत्पाद स्थान को जाने की तैयारी वाला जीव पहिले अपने थोडे से आत्मप्रदेशों को शरीर से बाहर निकाल देता है और फिर वह समस्त आत्मप्रदेशों के साथ बाहर निकल जाता है और जब सर्वदेश से मरणकाल में आत्मप्रदेशोंको बाहर निकालता है—तब वह कन्दुकगति की तरह अपने प्रदेशों को युगपत् शरीर से बाहर निकाल देता है—अर्थात् कन्दुक जैसे सर्वात्मना उछलता है उसी तरह से उत्पाद

બે પ્રકારે જીવ દેહનો સ્પર્શ કરીને મરણકાળે શરીરમાંથી બહાર નીકળી જાય છે તે બે પ્રકારો નીચે પ્રમાણે છે– (૧) એક દેશ અને (૨) સર્વદેશ. જીવ જ્યારે દેશદ્વારા શરીરમાંથી બહાર નીકળે છે, ત્યારે તે કેટલાક આત્મ પ્રદેશોને ઇલિકા (કૃમિવિશેષ) ગતિથી બહાર કાઢે છે જેમ ઇલિકા (કૃમિ) પોતના આગલા પગોને પહેલાં જમીન સાથે દૃઢતાથી જમાવી લે છે અને ત્યારબાદ અન્ય પગોને ઉઠાવીને ચાલે છે એજ પ્રમાણે ઉત્પાદ સ્થાન તરફ જવાની તૈયારીવાળો જીવ પહેલાં પોતાના થોડા આત્મપ્રદેશોને શરીરની બહાર કાઢી લે છે અને ત્યારબાદ તે સમસ્ત આત્મપ્રદેશોની સાથે બહાર નીકળી જાય છે અને જ્યારે તે મરણકાળે સર્વદેશથી આત્મપ્રદેશોને બહાર કાઢે છે ત્યારે તે કન્દુકની (દડાની) ગતિની જેમ પોતાના પ્રદેશોને એક સાથે શરીરમાંથી બહાર કાઢે છે એટલે કે જેમ કન્દુક સર્વાત્મના (આખે આખો) ઉછળે છે, એજ પ્રમાણે

प्रदेशान् समकालं निस्सारयतीति भावः यद्वा-देशेनाऽपि-देशतोऽपि, अपिशब्देन सर्वेणापीत्यर्थः आत्मा शरीरं-शरीरैकदेशं पादादिकं स्पृष्ट्वाऽवयवान्तरेभ्य प्रदेश संहारान्निर्याति, स च संसारी जीव, सर्वेणाऽपि-सर्वतयाऽपि, अपि शब्देन देशेनापीत्यर्थः, सर्वमपि शरीरं स्पृष्ट्वा निर्याति, स च सिद्धजीवः। वक्ष्यतेच—

"पायणिज्जाणा णिरएसु 'उववज्जंति' इत्यादि यावत् "सव्वंगणिज्जाणा सिद्धेसु" इति। छाया-पादनिर्याणा निरयेषूत्पद्यन्ते, "सर्वाङ्ग निर्याणाः सिद्धेषु" १।

स्थान को जाता हुआ जीव भी एक साथ ही आत्मप्रदेशों को शरीर से बाहर निकाल देता है।

अथवा-देश से भी और सर्वरूप से भी आत्मा शरीर के एक देशरूप चरणादिकों का स्पर्श करके अवयवान्तरों (अन्य अवयवों से) से प्रदेशों का संहार करके शरीर से बाहर निकल जाता है-संहारशब्द का अर्थ यहां संकोच करना है ऐसा वह संसारी जीव है। सर्वरूप से भी समस्तशरीर को स्पर्श कर आत्मा उससे बाहर निकल जाता है ऐसा वह सिद्धजीव है। "पयणिज्जाणा णिरएसु उववज्जंति" यावत् "सव्वंगणिज्जाणा सिद्धेसु" एसा स्वयं शास्त्रकार आगे कहेंगे, जो जीव चरणनिर्याणवाले (पगकी तरफसे जीवको निकालनेवाले) होते हैं वे जीव नैरयिकों में उत्पन्न होते हैं और जो सर्वांगनिर्याणवाले होते हैं वे सिद्धों में उत्पन्न होते हैं।

ઉત્પાદસ્થાને જતો આત્મા પણ એક સાથે જ આત્મપ્રદેશોને શરીરમાંથી બહાર કાઢી લે છે

અથવા—દેશત પણ અને સર્વતઃ પણ આત્મા શરીરના એક દેશરૂપ ચરણાદિકોનો સ્પર્શ કરીને અવયવાન્તરો દ્વારા (અન્ય અવયવો દ્વારા) પ્રદેશોનો સંહાર કરીને શરીરમાંથી બહાર નીકળી જાય છે. અહીં સંહાર કરવો એટલે સંકોચવું અર્થ ગ્રહણ કરવાનો છે. એવો તે સર્વરૂપે સંસારીજીવ છે સમસ્ત શરીરનો સ્પર્શ કરીને આત્મા શરીરમાંથી બહાર નીકળી જાય છે અને દેશરૂપે પણ સમસ્ત શરીરનો સ્પર્શ કરીને આત્મા શરીરમાંથી બહાર નીકળી જાય છે, એવો તે સિદ્ધજીવ છે "पायणिज्जाणा णिरएसु उववज्जंति" યાવત "सव्वंगणिज्जाणा सिद्धेसु" એવું શાસ્ત્રકાર પોતે જ આગળ પ્રતિપાદન કરશે જે જીવો ચરણનિર્યાણવાળા (પગ તરફથી જીવને બહાર કાઢવાવાળા) હોય છે, તેઓ નારકોમા ઉત્પન્ન થાય છે અને જે જીવો સર્વાંગનિર્યાણવાળા હોય છે,

आत्मना शरीरे स्पृष्टे सति शरीरस्य स्फुरणं भवतीत्यत आह—'एव' मित्यादि, एवं-पूर्वप्रकारेणैवास्याप्यालापकः पठनीयः, तत्र देशेनापि कियद्भिरप्यात्मप्रदेशैरिलिकागतिकाले, सर्वेणापि सर्वैरप्यात्मप्रदेशैः कन्दुकगतिकाले शरीरं स्फोरयित्वा-सस्पन्दं कृत्वा निर्याति। अथवा शरीरं देशेन-देशतः शरीरैकदेशमित्यर्थः पादादि निर्याणकाले स्फोरयित्वा, सर्वेण-सर्वतः सर्वं शरीरं सर्वाङ्गनिर्याणावसर इत्यर्थः २। स्फोरणाच्च सात्मकत्वं स्फुटं भवतीत्याह-'एव'-मित्यादि, एवं-तथैव देशेन-आत्मैकदेशेन शरीरं स्फोटयित्वा सचेतनतया स्फुरणलिङ्गत्वादिलिकागतौ स्फुटं कृत्वा, सर्वेण सर्वात्मना कन्दुकगतौ स्फुटं करोति। यद्वा-शरीरं देशेन-देशतः सात्मकतया पादादिना निर्याणकाले स्फुटं कृत्वा, सर्वेण-सर्वतः-सर्वाङ्ग निर्याणकाले इति। अथवा-स्फोटयित्वा-विशीर्णं कृत्वा, तत्र देशेन-अक्ष्यादि विघातेन, सर्वेण-सर्वविशरणेन दीपवत् विद्युल्लतावच्च ३। शरीरं सात्मकतया स्फुटीकुर्वन् कश्चित्संवर्तनमपि करोतीत्याह—'एव' मित्यादि, एवं-तथैव संवर्त्य संकोच्य शरीरं देशेन-इलिकागतौ शरीरस्थितप्रदेशैः, सर्वेण-सर्वात्मना कन्दुकगतौ सर्वात्मप्रदेशानां शरीरस्थितत्वाभिप्रायेणेति। यद्वा-शरीरम्-उपचारात् दण्डयोगाद्दण्डपुरुषवत् शरीरिणमित्यर्थः तत्र देशेन देशतः संवर्तनं म्रियमाणस्य संसारिजीवस्य पादादिगतजीवप्रदेशसंहारात् सर्वेण-सर्वतस्तु निर्वाणं गच्छतः प्राणिनः। अथवा-शरीरं देशेन-हस्ताद्येकदेशसङ्कोचनेन संवर्त्य सर्वेण-शरीरसङ्कोचकपिपीलिकादि जीवविशेषवत् सर्वशरीरसङ्कोचनेन संवर्त्येति ४। आत्मनश्च संवर्तनं कुर्वन् जीवः शरीरस्य निवर्तनं करोतीत्याह—'एव' मित्यादि, एवं-पूर्वोक्तप्रकारेण

आत्मा द्वारा शरीर के स्पृष्ट होने पर शरीर का स्फुरण होता है इसी बात को अब सूत्रकार कहते हैं-इस सम्बन्ध में आलाप पूर्वोक्त रूप से ही कहना चाहिये-अर्थात् इलिका गति की तरह कितनेक आत्म प्रदेशों को स्पन्दित करके जीव शरीर से बाहर निकलता है तथा कन्दुकगति की तरह युगपत् समस्त आत्मप्रदेशों को स्पन्दित करके वह शरीर से बाहर निकलता है इसी तरह से एकदेश और सर्वदेश की

તેઓ સિદ્ધોમાં ઉત્પન્ન થાય છે આત્મા દ્વારા શરીરને સ્પૃષ્ટ કરવાથી શરીરનું સ્ફુરણ થાય છે એજ વાતને હવે સૂત્રકાર પ્રકટ કરે છે—

આ વિષયને અનુલક્ષીને પૂર્વોક્ત કથન જ પ્રકટ કરવું જોઈએ. એટલે કે ઇલિકા (કૃમિ વિશેષ) ગતિની જેમ કેટલાક આત્મપ્રદેશોને સ્પન્દિત કરીને જીવ શરીરમાંથી બહાર નીકળે છે તથા કન્દુક ગતિની જેમ એક સાથે સમસ્ત આત્મપ્રદેશોને સ્પન્દિત કરીને તે શરીરમાંથી બહાર નીકળે છે એજ પ્રમાણે

निवर्त्य-जीवप्रदेशेभ्यः शरीर पृथक्कृत्वेत्यर्थः, तत्र देशेनेलिकागतौ सर्वे। अथवा—देशेन शरीरं निवर्त्यात्मनः पादादिनिर्याणवान्। सर्वेण-सर्वाङ्गनिर्याणवानीति। यद्वा—पञ्चविधशरीरसमुदायापेक्षया देशतः शरीरम् औदारिकादिकं निवर्त्य—परित्यज्य तैजसकार्मणे त्वादायैव, तथा सर्वेण-सर्व शरीरसमुदायं निवर्त्य-परित्यज्य निर्याति-सिध्यतीत्यर्थः ५ ॥ सू० ४० ॥

पूर्वं यत् सर्वनिर्याणमुक्तं, तच्च परम्परया धर्मश्रवणलाभादिभिर्भवतीति तत्प्राप्तिप्रकारं प्रदर्शयति—

मूलम्—दोहिं ठाणेहिं आया केवलिपन्नत्तं धम्मं लभेज्जा सवणयाए तं जहा--खएण चेव, उवसमेण चेव, जाव केवलं मणपज्जवनाणं उप्पाडेज्जा, तं जहा-खएण चेव उवसमेण चेव ॥४१॥

छाया—द्वाभ्यां स्थानाभ्यामात्मा केवलिप्रज्ञप्तं धर्मंलभते श्रवणतया, तद्यथा क्षयेण चैव उपशमेन चैव, यावत् केवलं मनःपर्यवज्ञानमुत्पादयति, तद्यथा-क्षयेण चैव उपशमेन चैव ॥ सू०४१ ॥

टीका—'दोहिं' इत्यादि। सुगमम्। नवरम्-उदयप्राप्तयोर्ज्ञानावरणीय-दर्शनावरणीययोः कर्मणोर्निर्जरणेन उपशमेन-अनुदितयोस्तयोर्विपाकाननुभवनेन

अपेक्षा लेकर कथन स्फुरण के विषय में, स्फुटन के विषय में, संवर्तन के विषय में और निवर्तन के विषय में भी करना चाहिये-टीका में यह विषय स्पष्टरूप से प्रकट किया गया है॥ सू. ४० ॥

पहिले जो सर्वनिर्याण कहा गया है वह जीव को परम्परारूप से धर्मश्रवण के लाभ आदि से प्राप्त होता है अतः अब सूत्रकार उसकी प्राप्ति के प्रकार को प्रदर्शित करते हैं—

'दोहिं ठाणेहिं आया केवलिपन्नत्तं धम्मं लभेज्जा' इत्यादि।

दो स्थानों को लेकर आत्मा केवलिप्रज्ञप्त धर्म को सुनने से प्राप्त

એક દેશ અને સર્વ દેશની અપેક્ષાએ સ્ફુરણના વિષયમા, સ્ફુટનના વિષયમા, સંવર્તનના વિષયમા અને નિવર્તનના વિષયમા પણ કથન સમજવું જોઇએ. ટીકામાં આ વિષય સ્પષ્ટરૂપે પ્રકટ કરવામાં આવ્યો છે ॥ સૂ. ૪૦ ॥

આગળ જે સર્વનિર્યાણ પ્રકટ કરવામાં આવ્યું છે તે જીવને પરંપરારૂપે ધર્મશ્રવણના લાભ આદિથી પ્રાપ્ત થાય છે તેથી સૂત્રકાર હવે તેની પ્રાપ્તિના પ્રકારનું નિરૂપણ કરે છે—"दोहिं ठाणे हिं आया केवलिपण्णत्त धम्मं लभेज्जा" ઇત્યાદિ.

ટીકાર્થ—બે સ્થાનો દ્વારા (બે પ્રકારે) આત્મા કેવલિપ્રજ્ઞપ્ત ધર્મને શ્રવણ દ્વારા પ્રાપ્ત કરી શકે છે. તે બે સ્થાન નીચે પ્રમાણે છે—(૧) ક્ષયરૂપ અને (૨)

क्षयोपशमेनेत्युक्तं भवति । 'एवं जाव' इत्यादि, यावच्छब्देन–"केवलं बोहिं बुज्झेज्जा मुंडे भवित्ता अगाराओ अणगारियं पव्वएज्जा केवलं बंभचेरवास मावसेज्जा, केवलेणं संजमेणं संजमिज्जा, केवलेणं संवरेणं संवरेज्जा, केवलं आभिणिबोहियनाणमुप्पाडेज्जा" इति संग्राह्यम् ।

छाया—केवलां बोधिं बुध्यते, मुण्डो भूत्वा अगाराद् अनगारितां प्रव्रजति, केवलं ब्रह्मचर्यवासमावसति, केवलेन संयमेन संयमयति, केवलेन संवरेण संवृणुयात्, केवलमाभिनिबोधिकज्ञानमुत्पादयति ।

कर सकता है ये दो स्थान हैं एक क्षयरूप और दूसरा उपशमरूप इसी प्रकार से वह यावत् केवलज्ञान को और मन पर्यवज्ञान को उत्पन्न कर सकता है उदयप्राप्त ज्ञानावरणीय और दर्शनावरणीय कर्मों की निर्जरा से इन्हीं की अनुदित अवस्था में इनके विपाक के अननुभव से एवं इनके क्षयोपशम से जीव मतिज्ञान, श्रुतज्ञान, अवधिज्ञान और मनः पर्यवज्ञान को प्राप्त करता है तथा चक्षुदर्शन, अचक्षुदर्शन, अवधिदर्शन को प्राप्त करता है–यहां यावत् शब्द से "केवलं बोहिं बुज्झेज्जा, मुंडे भवित्ता, अगाराओ अणगारियं पव्वएज्जा, केवलं बंभचेरवासमावसेज्जा, केवलेणं संजमेणं संजमिज्जा, केवलेणं संवरेणं संवरेज्जा, केवलं आभिणिबोहियनाणमुप्पाडेज्जा" इस पाठ का संग्रह हुआ है। यहां बोधिशब्द से मतिज्ञान, श्रुतज्ञान, अवधिज्ञान और मनः पर्यव ज्ञान चार ज्ञानों का ग्रहण हुआ है। केवलज्ञान का ग्रहण इसलिये

ઉપશમરૂપ એજ પ્રમાણે (તે બે સ્થાનો દ્વારા) તે મનઃપર્યવજ્ઞાન અને કેવળજ્ઞાન પર્યન્તના જ્ઞાનોને પ્રાપ્ત કરી શકે છે ઉદયપ્રાપ્ત જ્ઞાનાવરણીય અને દર્શનાવરણીય કર્મોની નિર્જરાથી તેમની અનુદિત અવસ્થામાં તેમના વિપાકના અનનુભવથી અને તેમના ક્ષયોપશમથી જીવ મતિજ્ઞાન શ્રુતજ્ઞાન અવધિજ્ઞાન અને મનપર્યવજ્ઞાનને પ્રાપ્ત કરે છે, તથા ચક્ષુદર્શન અચક્ષુદર્શન, અને અવધિદર્શનને પ્રાપ્ત કરે છે અહીં યાવત્ (પર્યન્ત) પદ વડે નીચેના પાઠનો સંગ્રહ થયો છે એમ સમજવું

"કેવલં બોહિં બુજ્ઝેજ્જા મુંડે ભવિત્તા અગારાઓ અણગારિયં પવ્વએજ્જા, કેવલં બંભચેરવાસમાવસેજ્જા કેવલેણં સંજમેણં સંજમિજ્જા કેવલેણં સંવરેણં સંવરેજ્જા કેવલં આભિણિબોહિયનાણમુપ્પાડેજ્જા" અહીં બોધિ શબ્દ દ્વારા મતિજ્ઞાન શ્રુતજ્ઞાન અવધિજ્ઞાન, અને મન પર્યવજ્ઞાન, આ ચાર જ્ઞાનને ગ્રહણ

एवम्—अनयैवरीत्या द्वाभ्यां स्थानाभ्यामात्मा केवलां बोधिं बुध्यते, इत्यारभ्य 'केवलं मनःपर्यवज्ञानमुत्पादयति' इत्यन्तं सर्वं बोध्यम्। केवलज्ञान तु कर्मणां क्षयादेवोत्पद्यत इति तन्नात्र गृहीतम्। इह च यद्यपि बोध्यादयः सम्यक्त्वचारित्ररूपत्वात् केवलेन क्षयेण केवलेन उपशमेन च भवन्ति तथाऽप्येते क्षयोपशमेनापि भवन्ति। श्रवणादीनि मनः पर्यवपर्यन्तानि तु क्षयोपशमे नैव भवन्तीति सर्वसाधारणः क्षयोपशमः पदद्वयेनोक्त इति ॥ सू० ४१ ॥

बोधि-मतिश्रुतावधिज्ञानानि चोत्कर्षतः षट्षष्टिसागरोपमस्थितिकानि भवन्ति, सागरोपमाणि च पल्योपमाश्रितानीति तद्द्वितयप्ररूपणामाह—

मूलम्—दुविहे अद्धोवमिए पन्नत्ते, तं जहा—पलिओवमेचेव सागरोवमे चेव। से किं तं पलिओवमे?, पलिओवमे-"जं जोयणविच्छिण्णं, पल्लं एगाहियप्परूढाणं। होज्जणिरंतरणिचियं, भरियं वालग्गकोडीणं ॥ १ ॥ वाससए वाससए, एक्केक्के अवहडम्मि जो कालो। सो कालो बोद्धव्वो, उवमा एगस्स पल्लस्स ॥ २ ॥ एएसिं पल्लाणं कोडाकोडी हवेज्ज दसगुणिया तं सागरोवमस्स उ, एगस्स भवे परीमाणं ॥ ३ ॥ सू० ४२ ॥

नहीं हुआ है कि वह ज्ञान ज्ञानावरण कर्म के सर्वथा क्षय से ही उत्पन्न होता है

यद्यपि बोधि आदिक सम्यक्त्वचारित्ररूप होने से केवल क्षय से और केवल उपशम से होते हैं-परन्तु ये क्षयोपशम से भी होते हैं क्यों कि श्रवणादिक से लेकर मनः पर्यव तक ज्ञान क्षयोपशम से ही होते हैं- इसी कारण सर्व साधारण क्षयोपशम इस पदद्वय से कहा गयाहै॥सू ४१॥

કરવામા આવેલ છે. કેવળજ્ઞાનને ગ્રહણ નહી કરવાનું કારણ એ છે કે તે જ્ઞાન તો જ્ઞાનાવરણ કર્મના સર્વથા ક્ષયથી જ ઉત્પન્ન થાય છે

જો કે બોધિ આદિક સમ્યક્ત્વ ચારિત્રરૂપ હોવાથી કેવળ ક્ષય વડે અને કેવળ ઉપશમ વડે જ પ્રાપ્ત થાય છે. પરન્તુ તેઓ ક્ષયોપશમ વડે પણ પ્રાપ્ત થાય છે, કારણ કે શ્રવણાદિકથી લઇને મનઃપર્યવ પર્યન્તના જ્ઞાન ક્ષયોપશમથી જ થાય છે એજ કારણે આ પદ દ્વય (બે પદો) દ્વારા સર્વસાધારણ ક્ષયોપશમનુ જ કથન કરવામા આવ્યુ છે, એમ સમજવું. ॥ સૂ. ૪૧ ॥

छाया—द्विविधमद्धौपमिकं प्रज्ञप्तं, तद्यथा-पल्योपमं च सागरोपमं चैव। अथ किं तत् पल्योपमम्? पल्योपमम्-यद् योजनविस्तीर्णं पल्यमेकाहिकमरूढानाम्। भवेभिरन्तरनिचितं, भृतं बालाग्रकोटीनाम् ॥ १ ॥ वर्षशते वर्षशते एकैकस्मिन् अपहृते यः कालः। स कालो बोद्धव्यः, उपमा एकस्य पल्यस्य ॥ २ ॥ एतेषां पल्यानां कोटाकोटी भवेद्दशगुणिता, तत् सागरोपमस्य तु एकस्य भवेत् परिमाणम् ॥ सू० ४२ ॥

टीका—'दुविहे अद्धोवमिए' इत्यादि। उपमया निर्वृत्तम् औपमिकम्, अद्धा-कालः, तद्विषयमौपमिकम् अद्धौपमिकम्, यत्कालममायमुपमानं विना सामान्यजनेन प्रतीतुं न शक्यते तद् अद्धौपमिकमिति भावः। तच्च द्विविधम्-पल्योपमं सागरोपमं चेति। पल्यः-लाटदेशप्रसिद्धो धान्याधारविशेषः, पल्यवत् पल्यः, तेनोपमा यस्य तत् पल्योपमम्। सागरेणोपमा यस्य तत् सागरोपमम्,

---

बोधि और मति, श्रुत, अवधिज्ञान ये उत्कृष्ट से ६६ सागरोपम की स्थिति वाले होते हैं और सागरोपम पल्योपमका आश्रित होता है इस कारण सूत्रकार इन दोनों की प्ररूपणा करते हैं—

(दुविहे अद्धोवमिए पन्नत्ते) इत्यादि।

टीकार्थ—उपमासे जाना जाने वाला काल औपमिक काल होताहै क्योंकि वह उपमा से निर्वृत्त होता है औपमिक काल सामान्य जन द्वारा बिना उपमान का जाना नहीं जा सकता है इसलिये इसे अद्धोपमिक कहा गया है यह अद्धोपमिक पल्योपम और सागरोपम के भेद से दो प्रकार का होता है लाटदेशप्रसिद्ध धान्याधार विशेष का नाम पल्य है इस पल्य से जिसकी उपमा हो वह पल्योपम काल है तथा सागर से जिसकी उपमा हो वह सागरोपमकाल है अर्थात् सागर के समान जो काल

બોધિ અને મતિ શ્રુત, અવધિજ્ઞાન, તે ઉત્કૃષ્ટની અપેક્ષાએ ૬૬ સાગરોપમની સ્થિતિવાળાં હોય છે અને સાગરોપમ કાળ પલ્યોપમને આધારે જાણી શકાય છે તેથી હવે સૂત્રકાર તે બન્નેની પ્રરૂપણા કરે છે—

"દુવિહે અદ્ધોવમિએ પણ્ણત્તે" ઇત્યાદિ—

ટીકાર્થ—જે કાળને ઉપમા વડે જાણી શકાય છે તે કાળને ઔપમિક કાળ કહે છે, કારણ કે તે કાળનું પ્રમાણ ઉપમા વડે જ નીકળી શકે છે તેથી તેને અદ્ધૌપમિક (અદ્ધા એટલે કાળ ઉપમા દ્વારા જાણી શકાય તેવા કાળને અદ્ધોપમિક કહે છે) કહે છે તે અદ્ધોપમિકના પલ્યોપમ અને સાગરોપમ નામના બે ભેદ છે લાટ દેશમાં વપરાતા એવાં ધાન્યાધાર વિશેષને પલ્ય

सागरवन्महापरिमाणमित्यर्थः। तत्र पल्योपम–लक्षणमभिधित्सुराह—'से किं तं' इत्यादि, अथ किं तत् पल्योपमं यद् अद्धौपमिकतया निर्दिष्टम्? इति प्रश्नः, उत्तरमाह–'पलिओवमे' इत्यादि। पल्योपमम्–पूर्वोक्तमद्धौपमिकं पल्योपमं वक्ष्यमाणलक्षणं भवतीति गाथा द्वयेनाह—'ज' इत्यादि, यद् योजनविस्तीर्णम्, विस्तीर्णशब्दस्योपलक्षणत्वाद् यद् आयामविष्कम्भगम्भीरत्वेन सर्वतो योजनप्रमाण पल्यसदृशत्वात् पल्य'–धान्यस्थापनपात्रविशेष', स एकाहिकमरूढाभिः,'सूत्रे तृतीयार्थेषष्ठी'–एकाह एव एकाहिकस्तेन शिरसि मुण्डिते सत्येकदिवसेन याः प्ररूढाः–वृद्धिं माप्तास्ताभिः, उपलक्षणतोऽनुयोगद्वारोक्तानुसारेण यावत्ससाहप्ररूढाभिः वालाग्रकोटीभिः–वालाग्राणां कोटयः–विभागास्ताभिः सपूर्वोक्तः पल्यो भृतः–

महापरिणामवाला होता है वह सागरोपमकाल है, हे भदन्त! वह पल्योपम काल क्या है? अर्थात् पल्योपम काल का क्या स्वरूप है? हे गौतम! वह अद्धोपमिक पल्योपम काल इन दो गाथाओं द्वारा इस प्रकार के स्वरूप वाला है–वे दो गाथाएँ ये हैं–(जं जोयणवित्थिन्नं) इत्यादि।

इन गाथाओं द्वारा यह प्रकट किया गया है कि एक योजन लम्बा, एक योजन चौड़ा और एक योजन गहरा ऐसा एक खड्डा खोदा जाय और उसमें एक दिन से लेकर सात दिन तक के भीतर २ के उगे हुए बालों के अग्रभाग भरे जावें अर्थात् जिस दिन शिर को मुण्डित करा लिया जावे उसके बाद एकदिन से लेकर सात दिनतक जमे हुए बालों के अग्र विभागों से वह खड्डा इस प्रकार से भरा जावे कि जिससे उन

કહે છે તે પલ્યની સાથે જેની ઉપમા આપી શકાય એવા કાળને પલ્યોપમ કાળ કહે છે, તથા સાગરની સાથે જેને સરખાવી શકાય એવા કાળનુ નામ સાગરોપમકાળ છે એટલે કે સાગરની સમાન મહા પરિમાણુવાળા કાળનું નામ સાગરોપમકાળ છે "હે ભગવન્! તે પલ્યોપમકાળનુ સ્વરૂપ કેવું છે?"

ગૌતમ સ્વામીના આ પ્રશ્નને ઉત્તર આપતા મહાવીર પ્રભુ કહે છે કે, હે ગૌતમ! તે અદ્ધોપમિક પલ્યોપમ કાળનુ સ્વરૂપ નીચેની બે ગાથાઓમાં બતાવ્યા પ્રમાણે છે–"ज जोयणवित्थिण" ઇત્યાદિ. તે બન્ને ગાથાઓને ભાવાર્થ નીચે પ્રમાણે છે—

એક ચોજન લાંબો, એક ચોજન પહોળો અને એક ચોજન ઊંડા એક કૂવો ખોદવામાં આવે. તેમાં એકથી લઇને સાત દિવસ સુધીમાં ઉગેલા વાળના અગ્રભાગોને ભરવામાં આવે. એટલે કે માથુ મુડાવ્યા પછી એકથી લઇને સાત દિવસ પર્યન્તમાં ઉગેલા વાળના અગ્રભાગોથી તે કૂવાને એવો

छाया—द्विविधमद्धौपमिकं प्रज्ञप्तं, तद्यथा—पल्योपमं चैव सागरोपमं चैव। अथ किं तत् पल्योपमम्? पल्योपमम्-यद् योजनविस्तीर्ण पल्यमेकाहिकप्ररूढानाम्। भवेभिरन्तरनिचितं, भृतं वालाग्रकोटीनाम् ॥ १ ॥ वर्षशते वर्षशते एकैकस्मिन् अपहृते यः कालः। स कालो बोद्धव्यः, उपमा एकस्य पल्यस्य ॥ २ ॥ एतेषां पल्यानां कोटाकोटी भवेद्दशगुणिता, तत् सागरोपमस्य तु एकस्य भवेत् परिमाणम् ॥ सू० ४२ ॥

टीका—'दुविहे अद्धोवमिए' इत्यादि। उपमया निर्वृत्तम् औपमिकम्, अद्धा–कालः, तद्विषयमौपमिकम् अद्धौपमिकम्, यत्कालप्रमाणमुपमानं विना सामान्यजनेन प्रतीतुं न शक्यते तद् अद्धौपमिकमिति भावः। तच्च द्विविधम्–पल्योपमं सागरोपमं चेति। पल्यः–लाटदेशप्रसिद्धो धान्याधारविशेषः, पल्यवत् पल्यः, तेनोपमा यस्य तत् पल्योपमम्। सागरेणोपमा यस्य तत् सागरोपमम्,

---

बोधि और मति, श्रुत, अवधिज्ञान ये उत्कृष्ट से ६६ सागरोपम की स्थिति वाले होते हैं और सागरोपम पल्योपमका आश्रित होता है इस कारण सूत्रकार इन दोनों की प्ररूपणा करते हैं–

(दुविहे अद्धोवमिए पण्णत्ते) इत्यादि।

टीकार्थ–उपमासे जाना जाने वाला काल औपमिक काल होताहै क्योंकि यह उपमा से निर्वृत्त होता है औपमिक काल सामान्य जन द्वारा बिना उपमान का जाना नहीं जा सकता है इसलिये इसे अद्धोपमिक कहा गया है यह अद्धोपमिक पल्योपम और सागरोपम के भेद से दो प्रकार का होता है लाटदेशप्रसिद्ध धान्याधार विशेष का नाम पल्य है इस पल्य से जिसकी उपमा हो वह पल्योपम काल है तथा सागर से जिसकी उपमा हो वह सागरोपमकाल है अर्थात् सागर के समान जो काल

બોધિ અને મતિ શ્રુત, અવધિજ્ઞાન તે ઉત્કૃષ્ટની અપેક્ષાએ ૬૬ સાગરોપમની સ્થિતિવાળાં હોય છે અને સાગરોપમ કાળ પલ્યોપમને આધારે જાણી શકાય છે તેથી હવે સૂત્રકાર તે બન્નેની પ્રરૂપણા કરે છે—

દુવિહે અદ્ધોવમિએ પણ્ણત્તે" ઇત્યાદિ—

ટીકાર્થ—જે કાળને ઉપમા વડે જાણી શકાય છે તે કાળને ઔપમિક કાળ કહે છે, કારણ કે તે કાળનું પ્રમાણ ઉપમા વડે જ નીકળી શકે છે તેથી તેને અદ્ધૌપમિક (અદ્ધા એટલે કાળ ઉપમા દ્વારા જાણી શકાય તેવા કાળને અદ્ધૌપમિક કહે છે) કહે છે તે અદ્ધૌપમિકના પલ્યોપમ અને સાગરોપમ નામના બે ભેદ છે લાટ દેશમાં વપરાતા એવા ધાન્યાધાર વિશેષને પલ્ય

सागरवन्महापरिमाणमित्यर्थः। तत्र पल्योपम-लक्षणमभिधित्सुराह—' से किं तं ' इत्यादि, अथ किं तत् पल्योपमं यद् अद्धौपमिकतया निर्दिष्टम्? इति प्रश्नः, उत्तरमाह-' पलिओवमे ' इत्यादि। पल्योपमम्-पूर्वोक्तमद्धौपमिकं पल्योपमं वक्ष्यमाणलक्षणं भवतीति गाथा द्वयेनाह—' जं ' इत्यादि, यद् योजनविस्तीर्णम्, विस्तीर्णशब्दस्योपलक्षणत्वाद् यद् आयामविष्कम्भगम्भीरत्वेन सर्वतो योजनप्रमाणं पल्यसदृशत्वात् पल्य'-धान्यस्थापनपात्रविशेष', स एकाहिकप्ररूढाभिः,'सूत्रे तृतीयार्थेषष्ठी'-एकाह एव एकाहिकस्तेन शिरसि मुण्डिते सत्येकदिवसेन याः प्ररूढाः-वृद्धिं प्राप्तास्ताभिः, उपलक्षणतोऽनुयोगद्वारोक्तानुसारेण यावत्सप्ताहप्ररूढाभिः वालाग्रकोटीभिः-वालाग्राणां कोटयः-विभागास्ताभिः सपूर्वोक्तः पल्यो भृतः-

महापरिणामवाला होता है वह सागरोपमकाल है, हे भदन्त! वह पल्योपम काल क्या है? अर्थात् पल्योपम काल का क्या स्वरूप है? हे गौतम! वह अद्धोपमिक पल्योपम काल इन दो गाथाओं द्वारा इस प्रकार के स्वरूप वाला है-वे दो गाथाएँ ये हैं-(जं जोयणवित्थिन्नं) इत्यादि।

इन गाथाओं द्वारा यह प्रकट किया गया है कि एक योजन लम्बा, एक योजन चौड़ा और एक योजन गहरा ऐसा एक खड्डा खोदा जाय और उसमें एक दिन से लेकर सात दिन तक के भीतर २ के उगे हुए बालों के अग्रभाग भरे जावें अर्थात् जिस दिन शिर को मुण्डित करा लिया जावे उसके बाद एकदिन से लेकर सात दिनतक जमे हुए बालों के अग्र विभागों से वह खड्डा इस प्रकार से भरा जावे कि जिससे उन

કહે છે તે પલ્યની સાથે જેની ઉપમા આપી શકાય એવા કાળને પલ્યોપમ કાળ કહે છે, તથા સાગરની સાથે જેને સરખાવી શકાય એવા કાળનું નામ સાગરોપમકાળ છે એટલે કે સાગરની સમાન મહા પરિમાણવાળા કાળનું નામ સાગરોપમકાળ છે "હે ભગવન્! તે પલ્યોપમકાળનું સ્વરૂપ કેવું છે?"

ગૌતમ સ્વામીના આ પ્રશ્નનો ઉત્તર આપતા મહાવીર પ્રભુ કહે છે કે, હે ગૌતમ! તે અદ્ધોપમિક પલ્યોપમ કાળનું સ્વરૂપ નીચેની બે ગાથાઓમાં બતાવ્યા પ્રમાણે છે-" જ જોયણવિત્થિણ " ઇત્યાદિ તે બન્ને ગાથાઓનો ભાવાર્થ નીચે પ્રમાણે છે—

એક યોજન લાંબો, એક યોજન પહોળો અને એક યોજન ઊંડો એક કૂવો ખોદવામાં આવે. તેમા એકથી લઇને સાત દિવસ સુધીમાં ઉગેલા વાળના અગ્રભાગોને ભરવામાં આવે. એટલે કે માથુ મુંડાવ્યા પછી એકથી લઇને સાત દિવસ પર્યન્તમાં ઉગેલા વાળના અગ્રભાગોથી તે કૂવાને એવો

परिपूरित , कथंभूताः ? इत्याह-निरन्तर निचित्तं, निरन्तर-अन्तररहित परस्पर श्लिष्ट घन यथास्यात्तथा निचित-निबिडतया निचयचक्रुतं पुञ्जयुक्तमित्यर्थः भवेत् स्यात् । तस्मात्पल्यात 'वाससए' इत्यादि, वर्षशते, इति भीप्सायां अन्यक वर्षशते, एकैकस्मिन् वाले अपहृते-निष्कासिते सति य कालस्तस्य पल्यस्य रिक्तो भवने जायते स कालः एकस्य पल्यस्य उपमाउपमेय बोद्धव्यः-विज्ञेय । इदमुक्त भवति-पूर्वोक्तः कालो व्यावहारिक पल्योपम कथ्यते । अथ सागरोपमप्रमाणमाह-'एएसिं' इत्यादि गाथा, एतेषां पल्यानां-पल्योपमानां या कोटीकोटी दशगु णिता-दशकोटीकोटय इत्यर्थः सा एकस्य व्यावहारिकसागरोपमस्य परिमाण भवतीति । एतद्वय प्ररूपणामात्ररूपमेव ।

अथ विशेपमाह—पल्योपमम्-उद्धाराद्धा क्षेत्रभेदेन त्रिविधम् । पुनरेकैकमपि सूक्ष्मव्यावहारिकभेदात्प्रत्येक द्विविधम् । तत्र तावत् व्यावहारिकोद्धारपल्या

बालाग्रों में थोड़ा सा भी अन्तर अवकाश न रहे। इस प्रकार से वे बालाग्र खूब ठसाठस निबिडरूप में उस खड्डे में भर दिये जावें इस प्रकार से जब कूट २ कर उन बालाग्रों से वह खड्डा खूब भर जावे तब सौ सौ वर्ष के बाद उसमें से एक २ बालाग्र बाहर निकाला जावे-इस प्रकार निकालते २ जब वे समस्त बालाग्र उस खड्डे में से बाहर निकाल दिये जावें तो इनके निकालने में जितना काल समाप्त होता है वह काल एक पल्य से उपमेय कहा गया है यह पूर्वोक्त काल व्यावहारिक पल्योपम कहा गया है सागरोपम का प्रमाण इस प्रकार से है-पल्योपम कोटि कोटि को १० से गुणा करने पर एक व्यावहारिक सागरोपम का प्रमाण होता है अर्थात् १० कोडाकोडी पल्योपम का एक व्यावहारिक सागरोपम काल होता है।

ભરવો જોઈએ કે જેથી કરીને તે બાલાગ્રો વચ્ચે બિલકુલ અંતર ન રહે. એટલે કે તે કૂવાને ખૂબ ઠાંસી ઠાંસીને તે બાલાગ્રોથી ભરી દેવો જોઈએ. ત્યારબાદ દર સો સો વર્ષે તેમાંથી એક એક બાલાગ્રને બહાર કાઢવો જોઈએ આ રીતે તેમાંથી ૧૦૦-૧૦ વર્ષે એક એક બાલાગ્રને બહાર કાઢતાં કાઢતાં સમસ્ત બાલાગ્રોને બહાર કાઢવામાં જેટલાં વર્ષો વ્યતીત થઈ જાય છે તેટલાં વર્ષપ્રમાણ કાળને એક પલ્યોપમ કાળ કહે છે આ પૂર્વોક્ત કાળને વ્યાવહારિક પલ્યોપમ કહેવામાં આવે છે સાગરોપમનું પ્રમાણ આ પ્રકારનું છે-પલ્યોપમ કોટિ કોટિને ૧૦ વડે ગુણવાથી એક વ્યાવહારિક સાગરોપમનું પ્રમાણ આવે છે એટલે કે ૧૦ કોડાકોડી પલ્યોપમનો એક વ્યાવહારિક સાગરોપમકાળ થાય છે

पमं व्याख्यायते—यद्योजनायामविष्कम्भगम्भीरः पल्यो मुण्डनानन्तरमेकादिसप्तान्ताहोरात्रप्ररूढैर्वालाग्रैर्निविडतया भृतः, य प्रतिसमयमेकैकवालाग्रे निस्सारिते सति यावता कालेन निर्लेपो निष्ठितो भवति स—कालो व्यावहारिकोद्धार पल्योपमं कथ्यते । एवं व्यावहारिकोद्धारसागरोपमं पूर्वोक्तपल्यानां दशभिः कोटीकोटीभिर्भवति । एते द्वे अपि प्ररूपणामात्रविषये एव । सूक्ष्ममुद्धारपल्योपमं तु यत्—तैरेवैकादिसप्तान्ताहोरात्रप्ररूढैर्दृष्टयवगाहनातोऽसंख्येयभागमात्रैः सूक्ष्मपनकजीवस्य शरीरावगाहनातोऽसंख्येयगुणैः प्रत्येकमसंख्यातखण्डीकृतैर्वालाग्रैर्निविडतया भृतः पल्यः प्रतिसमयमेकैकस्मिन् वालाग्रे निष्कासिते सति यावताकालेन

विशेषता—उद्धार, अद्धा और क्षेत्र के भेद से पल्योपम त्रिविध कहा गया है तथा ये तीनों पल्योपम भी सूक्ष्म और व्यावहारिक के भेद से दो दो प्रकार के कहे गये हैं इनमें व्यावहारिक उद्धार पल्योपम का स्वरूप इस प्रकार से है—जो एक योजन का लम्बा, एक योजन का चौड़ा और एक योजन का गहरा खड्डा हो और उसे मुण्डनान्तर एक दिन से लेकर सात दिनतक के उगे हुए वालाग्रों से खूब दाब २ कर निविडरूप से भर दिया जावे सो अब उसमें से एक २ वालाग्र को प्रति समय बाहर निकालना चाहिये इस तरह करते २ जितने काल में वह खड्डा उन वालाग्रों से खाली हो जाता है उतने काल का नाम व्यावहारिक उद्धारपल्योपम है इस व्यावहारिक उद्धारपल्य की १० कोटि कोटि का एक व्यावहारिक उद्धार सागरोपम होता है। अर्थात् १० कोटिकोटि व्यावहारिक उद्धारपल्यों का एक व्यावहारिक उद्धारसागरो-

---

વિશેષતા—ઉદ્ધાર, અદ્ધા અને ક્ષેત્રના ભેદથી પલ્યોપમના ત્રણ પ્રકાર કહ્યા છે તથા તે ત્રણે પ્રકારના પલ્યોપમના પણ સૂક્ષ્મ અને વ્યાવહારિકના ભેદથી બબ્બે પ્રકાર કહ્યા છે. તેમાના વ્યવહારિક ઉદ્ધાર પલ્યોપમનુ સ્વરૂપ આ પ્રકારનુ છે—જે એક યોજન લાંબો, એક યોજન પહોળો અને એક યોજન ઊંડો કૂવો કહ્યો છે તેને માથું મુંડાવ્યા બાદ એકથી સાત દિવસ પર્યન્તમાં ઉગેલા કેશાગ્રોથી ખૂબ ઠાંસી ઠાંસીને ભરી દેવો જોઇએ. પછી તેમાથી પ્રતિ સમય એક એક કેશાગ્રને બહાર કાઢવામાં આવે, તો આ પ્રમાણે કરતાં કરતાં જેટલા કાળમા તે કૂવો તે કેશાગ્રોથી સંપૂર્ણ ખાલી થઈ જાય છે, એટલા કાળને “ વ્યાવહારિક ઉદ્ધાર પલ્યોપમ ” કહે છે

તે વ્યાવહારિક ઉદ્ધાર પલ્યોપમની ૧૦ કોટિ કોટિનો એક વ્યાવહારિક ઉદ્ધાર સાગરોપમ થાય છે એટલે કે ૧૦ કોટિકોટિ વ્યાવહારિક ઉદ્ધાર પલ્યોનો એક વ્યાવહારિક ઉદ્ધાર સાગરોપમ થાય છે

હવે સૂક્ષ્મ ઉદ્ધાર પલ્યોપમનુ સ્વરૂપ બતાવવામા આવે છે—પૂર્વોક્ત પ્રમાણુવાળા કૂવામા તે બાલાગ્રોના ટુકડાઓ ઠાસી ઠાંસીને ભરી દો. પ્રત્યેક

निर्लेपो निष्ठितो भवति स कालः सूक्ष्ममुद्धारपल्योपमं प्रोच्यते । तथैव च तेषां दशभिः कोटी कोटीभिः सूक्ष्ममुद्धारसागरोपमं जायते । अनेन सूक्ष्मोद्धारपल्योपमेण च द्वीपसमुद्राः परिसंख्यायन्ते १ ।

व्यावहारिकाद्धापल्योपम–सागरोपमयोः स्वरूपं तु सूत्रे प्रोक्तमेव । सूक्ष्माद्धापल्योपमं तु–असंख्येयखण्डीकृतस्यैकैकस्य वालाग्रस्य वर्षशते वर्षशते निस्सारणे

पम होता है। तथा सूक्ष्म जो उद्धारपल्योपम है उसका प्रमाण ऐसा है कि जितने वालाग्रों से वह पूर्वोक्त प्रमाण वाला खड्डा भरा गया है उन वालाग्रों में से प्रत्येक वालाग्र के सूक्ष्मपनक जीव के शरीर की जितनी अवगाहना होती है उस अवगाहना से असंख्यात गुणें टुकड़ा करो ये सब टुकड़े अपनी बुद्धि से ही कल्पित करके करना चाहिये तात्पर्य ऐसा है कि एक २ वालाग्र के असंख्यात २ टुकड़े अपनी बुद्धि से करो और फिर उस खड्डे को उनसे खूब ठांस २ कर निविडरूप में भरदो और फिर एक समय में एक २ टुकड़े को उनसे बाहर निकालो इस तरह करते २ जितने काल में वह गर्त खाली हो जाता है उतने समय का नाम सूक्ष्म उद्धार पल्योपम है इन सूक्ष्मउद्धारपल्योपम की १० कोटि कोटि का एक सूक्ष्म उद्धार सागरोपम होता है इस सूक्ष्म उद्धार पल्योपम से जन्य सागरोपम से द्वीप और समुद्रों की गिनती की जाती है।

व्यावहारिक अद्धापल्योपम और सागरोपम का स्वरूप सूत्रकार ने सूत्र में ही प्रकट कर दिया है। सूक्ष्म अद्धापल्योपम का स्वरूप इस प्रकार

વાલાગ્રના કેટલા ટુકડા કરવા તે નીચે પ્રમાણે સમજવું સૂક્ષ્મપનક જીવના શરીરની જેટલી અવગાહના હોય છે, તે અવગાહનાથી અસંખ્યાતગણાં ટુકડા તે વાલાગ્રોના કરવા જોઈએ. એવાં ટુકડાની કલ્પના વાચકે પોતાની બુદ્ધિથી જ કરવી જોઈએ, કારણ કે વ્યવહારમાં આ પ્રકારની વાત સંભવી શકતી નથી કહેવાનું તાત્પર્ય એ છે કે એવાં વાલાગ્રોના અસંખ્યાત ટુકડા કલ્પનાથી જ કરવાનું શક્ય છે

હવે તે વાલાગ્રોના તે ટુકડાઓ વડે તે કૂવાને ઠાંસી ઠાંસીને ભરી દેવો જોઈએ. ત્યારબાદ પ્રતિ સમય તેમાંથી એક એક ટુકડાને બહાર કાઢતાં કાઢતાં તે કૂવો જેટલા સમયમાં તે વાલાગ્રોના ટુકડાઓથી રહિત થઈ જાય છે, બિલકુલ ખાલી થઈ જાય છે તેટલા કાળને ‘ સૂક્ષ્મ ઉદ્ધાર પલ્યોપમ ” કહે છે તે સૂક્ષ્મ ઉદ્ધાર પલ્યોપમની ૧૦ કોટિકોટિનો એક સૂક્ષ્મ ઉદ્ધાર સાગરોપમ ’ કાળ થાય છે તે સૂક્ષ્મ ઉદ્ધાર પલ્યોપમથી જન્ય સાગરોપમ દ્વારા દ્વીપો અને સમુદ્રોની ગણતરી થાય છે

વ્યાવહારિક અદ્ધાપલ્યોપમ અને સાગરોપમનું સ્વરૂપ તો સૂત્રકારે આ સૂત્રની શરૂઆતમાં જ બતાવી દીધું છે હવે સૂક્ષ્મ અદ્ધાપલ્યોપમનું સ્વરૂપ

कृते सति भवति। एवं सूक्ष्ममद्धासागरोपमं तेषां पल्यानां दशभिः कोटीकोटीभिर्जायते। अनेन सूक्ष्माद्धापल्योपमसागरोपमेण नैरयिक-तिर्यग्योनिक-मनुष्य-देवानामायुर्मीयते २।

क्षेत्रपल्योपममप्येवमेव, नवरं प्रतिसमयं वालाग्रस्पृष्टैकैकाकाशप्रदेशनिस्सारणे कृते सति यावता कालेन पल्यो निर्लेपो निष्ठितो भवति स कालो व्यावहारिक क्षेत्रपल्योपमं कथ्यते। एवं व्यावहारिकसागरोपमं तेषां दशभिः कोटीकोटीभि-

से है असंख्यात खण्डीकृत एक एक बालाग्र को सौ सौ वर्ष जब व्यतीत हो जावें तब निकालना चाहिये इस तरह करते२ जब वह गर्त्त पूर्णरूप से उन बालाग्रों से रिक्त हो जाता है-तब इनके खाली करने में जितना काल समाप्त हुआ उतने काल का नाम सूक्ष्म अद्धापल्योपम है। सूक्ष्म अद्धापल्योपम की१० कोटिकोटि से सूक्ष्म अद्धासागरोपम निष्पन्न होता है अर्थात् १० कोटाकोटि सूक्ष्म अद्धा पल्योपम का एक सूक्ष्म अद्धासागरोपम होता है इस सूक्ष्म अद्धापल्योपमजन्य सूक्ष्म अद्धासागरोपम से नैरयिक, तिर्यग्योनिक, मनुष्य और देवों की आयु को प्रमित किया जाता है क्षेत्रपल्योपम भी इसी प्रकार से है परन्तु इसमें कथन की ऐसी विशेषता है कि बालाग्रसे स्पृष्ट एक एक आकाश प्रदेशको एक एक समय में वहांसे निकालो जितने समय में वह पल्य इस प्रकारसे करते २ उनसे खाली हो जाता है उतने काल का नाम व्यावहारिकक्षेत्रपल्योपम है इस

પ્રકટ કરવામાં આવે છે-જેના અસખ્યાત ખંડો કરવામાં આવ્યા હોય એવા બાલાગ્રો વડે ઉપર્યુક્ત પ્રમાણવાળા કૂવાને ખૂબ જ ઠાંસી ઠાંસીને ભરી દેવામાં આવે. ત્યારબાદ સો સો વર્ષે તે કૂવામાંથી એક એક બાલાગ્રખંડને બહાર કાઢવામા આવે. આમ કરતા કરતા જેટલા સમયે તે કૂવો તે બાલાગ્રખંડોથી બિલકુલ રહિત (ખાલી) થઇ જાય છે, એટલા કાળને 'સૂક્ષ્મ અદ્ધા પલ્યોપમ કહે છે' સૂક્ષ્મ અદ્ધા પલ્યોપમની ૧૦ કોટિ કોટિ પ્રમાણનો "સૂક્ષ્મ અદ્ધાસાગરોપમ" કાળ હોય છે આ સૂક્ષ્મ અદ્ધાપલ્યોપમ જન્ય સૂક્ષ્મ અદ્ધાસાગરોપમ દ્વારા નારકો, તિર્યંચોનિકો, મનુષ્યો અને દેવોના આયુષ્યના માપની ગણતરી કરી શકાય છે. ક્ષેત્રપલ્યોપમ પણ એજ પ્રકારનું છે, પરન્તુ તેના કથનમાં નીચે પ્રમાણે વિશેષતા છે—

બાલાગ્રથી સ્પૃષ્ટ એક એક આકાશપ્રદેશને પ્રતિ સમય બહાર કાઢતાં કાઢતાં જેટલા સમયમાં તે કૂવો તેમનાથી ખાલી થઈ જાય, એટલા કાળનું નામ 'વ્યાવહારિક ક્ષેત્ર પલ્યોપમ' છે. એવા વ્યાવહારિક ક્ષેત્ર પલ્યોપમની ૧૦

निर्लेपो निष्ठितो भवति स कालः सूक्ष्मोद्धारपल्योपमं प्रोच्यते। तथैव च तेषां दशभिः कोटी कोटीभिः सूक्ष्मोद्धारसागरोपमं जायते। अनेन सूक्ष्मोद्धारपल्योपमेण च द्वीपसमुद्राः परिसंख्यायन्ते १।

व्यावहारिकाद्धापल्योपम–सागरोपमयोः स्वरूपं तु सूत्रे प्रोक्तमेव। सूक्ष्माद्धापल्योपमं तु–असंख्येयखण्डीकृतस्यैकैकस्य बालाग्रस्य वर्षशते वर्षशते निस्सारणे

पम होता है। तथा सूक्ष्म जो उद्धारपल्योपम है उसका प्रमाण ऐसा है कि जितने बालाग्रों से यह पूर्वोक्त प्रमाण वाला खड्डा भरा गया है उन बालाग्रों में से प्रत्येक बालाग्र के सूक्ष्मपनक जीव के शरीर की जितनी अवगाहना होती है उस अवगाहना से असंख्यात गुणें टुकडा करो ये सब टुकडे अपनी बुद्धि से ही कल्पित करके करना चाहिये तात्पर्य ऐसा है कि एक २ बालाग्र के असंख्यात २ टुकडे अपनी बुद्धि से करो और फिर उस खड्डे को उनसे खूब ठांस २ कर निविडरूप में भरदो और फिर एक समय में एक २ टुकडे को उनसे बाहर निकालो इस तरह करते २ जितने काल में वह गर्त खाली हो जाता है उतने समय का नाम सूक्ष्म उद्धार पल्योपम है इन सूक्ष्मउद्धारपल्योपम की १० कोटि कोटि का एक सूक्ष्म उद्धार सागरोपम होता है इस सूक्ष्म उद्धार पल्योपम से जन्य सागरोपम से द्वीप और समुद्रों की गिनती की जाती है।

व्यावहारिक अद्धापल्योपम और सागरोपम का स्वरूप सूत्रकार ने सूत्र में ही प्रकट कर दिया है। सूक्ष्म अद्धापल्योपम का स्वरूप इस प्रकार

બાલાગ્રના કેટલા ટુકડા કરવા તે નીચે પ્રમાણે સમજવું. સૂક્ષ્મપનક જીવના શરીરની જેટલી અવગાહના હોય છે, તે અવગાહનાથી અસંખ્યાતગણાં ટુકડા તે બાલાગ્રોના કરવા જોઈએ. એવાં ટુકડાની કલ્પના પાઠકે પોતાની બુદ્ધિથી જ કરવી જોઈએ, કારણ કે વ્યવહારમાં આ પ્રકારની વાત સંભવી શકતી નથી. કહેવાનું તાત્પર્ય એ છે કે એવાં બાલાગ્રોના અસંખ્યાત ટુકડા કલ્પનાથી જ કરવાનું શક્ય છે.

હવે તે બાલાગ્રોના તે ટુકડાઓ વડે તે કૂવાને ઠાંસી ઠાંસીને ભરી દેવો જોઈએ ત્યારબાદ પ્રતિ સમય તેમાંથી એક એક ટુકડાને બહાર કાઢતાં કાઢતાં તે કૂવો જેટલા સમયમાં તે બાલાગ્રોના ટુકડાઓથી રહિત થઈ જાય છે, બિલકુલ ખાલી થઈ જાય છે, તેટલા કાળને "સૂક્ષ્મ ઉદ્ધાર પલ્યોપમ" કહે છે તે સૂક્ષ્મ ઉદ્ધાર પલ્યોપમની ૧૦ કોડાકોડિનો એક 'સૂક્ષ્મ ઉદ્ધાર સાગરોપમ' કાળ થાય છે તે સૂક્ષ્મ ઉદ્ધાર પલ્યોપમથી જન્ય સાગરોપમ દ્વારા દ્વીપો અને સમુદ્રોની ગણતરી થાય છે.

વ્યાવહારિક અદ્ધાપલ્યોપમ અને સાગરોપમનું સ્વરૂપ તો સૂત્રકારે આ સૂત્રની શરૂઆતમાં જ બતાવી દીધું છે હવે સૂક્ષ્મ અદ્ધાપલ્યોપમનું સ્વરૂપ

कृते सति भवति । एवं सूक्ष्ममद्धासागरोपमं तेषां पल्यानां दशभिः कोटीकोटीभिर्जायते । अनेन सूक्ष्माद्धापल्योपमसागरोपमेण नैरयिक–तिर्यग्योनिक–मनुष्य–देवानामायुर्मीयते २ ।

क्षेत्रपल्योपममप्येवमेव, नवरं प्रतिसमयं वालाग्रस्पृष्टैकैकाकाशप्रदेशनिस्सारणे कृते सति यावता कालेन पल्यो निर्लेपो निष्ठितो भवति स कालो व्यावहारिक क्षेत्रपल्योपमं कथ्यते । एव व्यावहारिकसागरोपमं तेषां दशभिः कोटीकोटीभि-

---

से है असंख्यात खण्डीकृत एक एक बालाग्र को सौ सौ वर्ष जब व्यतीत हो जावें तब निकालना चाहिये इस तरह करते२ जब वह गर्त्त पूर्णरूप से उन बालाग्रों से रिक्त हो जाता है–तब इनके खाली करने में जितना काल समाप्त हुआ उतने काल का नाम सूक्ष्म अद्धापल्योपम है। सूक्ष्म अद्धापल्योपम की१० कोटिकोटि से सूक्ष्म अद्धासागरोपम निष्पन्न होता है अर्थात् १० कोटाकोटि सूक्ष्म अद्धा पल्योपम का एक सूक्ष्म अद्धासागरोपम होता है इस सूक्ष्म अद्धापल्योपमजन्य सूक्ष्म अद्धासागरोपम से नैरयिक, तिर्यग्योनिक, मनुष्य और देवों की आयु को प्रमित किया जाता है क्षेत्रपल्योपम भी इसी प्रकार से है परन्तु इसमें कथन की ऐसी विशेषता है कि बालाग्रसे स्पृष्ट एक एक आकाश प्रदेशको एक एक समय में वहांसे निकालो जितने समय में वह पल्य इस प्रकारसे करते २ उनसे खाली हो जाता है उतने काल का नाम व्यावहारिकक्षेत्रपल्योपम है इस

પ્રકટ કરવામાં આવે છે–જેના અસંખ્યાત ખંડો કરવામાં આવ્યા હોય એવા બાલાગ્રો વડે ઉપર્યુક્ત પ્રમાણુવાળા કૂવાને ખૂબ જ ઠાંસી ઠાંસીને ભરી દેવામાં આવે. ત્યારબાદ સો સો વર્ષે તે કૂવામાંથી એક એક બાલાગ્રખંડને બહાર કાઢવામાં આવે. આમ કરતાં કરતાં જેટલા સમયે તે કૂવો તે બાલાગ્રખંડોથી બિલકુલ રહિત (ખાલી) થઇ જાય છે, એટલા કાળને ' સૂક્ષ્મ અદ્ધા પલ્યોપમ કહે છે ' સૂક્ષ્મ અદ્ધા પલ્યોપમની ૧૦ કોટિ કોટિ પ્રમાણુનો " સૂક્ષ્મ અદ્ધાસાગરોપમ " કાળ હોય છે. આ સૂક્ષ્મ અદ્ધાપલ્યોપમ જન્ય સૂક્ષ્મ અદ્ધાસાગરોપમ દ્વારા નારકો, તિર્યંચયોનિકો, મનુષ્યો અને દેવોના આયુષ્યના માપની ગણુતરી કરી શકાય છે ક્ષેત્રપલ્યોપમ પણ એજ પ્રકારનું છે, પરન્તુ તેના કથનમા નીચે પ્રમાણે વિશેષતા છે—

બાલાગ્રથી સ્પૃષ્ટ એક એક આકાશપ્રદેશને પ્રતિ સમય બહાર કાઢતાં કાઢતાં જેટલા સમયમાં તે કૂવો તેમનાથી ખાલી થઈ જાય, એટલા કાળનુ નામ ' વ્યાવહારિક ક્ષેત્ર પલ્યોપમ ' છે. એવા વ્યાવહારિક ક્ષેત્ર પલ્યોપમની ૧૦

र्नीयते । एतद्धय प्ररूपणामात्रविषयमेव । यत्तु—असंख्यातखण्डीकृतैर्वालाग्रैः स्पृष्टा अस्पृष्टा वाऽऽकाशप्रदेशाः प्रतिसमयमेकैकशो निस्सार्यन्ते, एष निस्सारिते सति यावताकालेन पल्यो निर्लेपो निष्ठितो भवति स कालः सूक्ष्मक्षेत्रपल्यो पममुच्यते । एवं सूक्ष्मक्षेत्रसागरोपमं तेषां दशभि कोटीकोटीभिर्भवति । अनेन सूक्ष्मक्षेत्रपल्योपम—सागरोपमेण दृष्टिवादे द्रव्याणि मीयन्ते३।

अत्र—उद्धारपल्योपम—क्षेत्रपल्योपमयोर्ग्रहणं न कृतम्, अनुपयोगित्वात्, सूत्रे 'अद्धे'—ति विशेषणस्योक्तत्वाच्चेति ॥ सू० ४२ ॥

पूर्वोक्तैः पल्योपमादिभिर्येषां क्रोधादीनां फलभूतकर्मस्थितिर्निरूप्यते तत्स्वरूपनिरूपणं कुर्वन्नाह—

मूलम्—दुविहे कोहे पण्णत्ते त जहा—आयपइट्ठिए चेव परप इट्ठिए चेव एव नेरइयाणं जाव वेमाणियाणं। एवं जाव मिच्छादंस णसल्ले ॥ सू० ४३ ॥

छाया—द्विविधः क्रोधः प्रज्ञप्तः, तद्यथा—आत्मप्रतिष्ठितश्चैव परप्रतिष्ठितश्चैव । एवं नैरयिकाणां यावद् वैमानिकानाम् । एवं यावत् मिथ्यादर्शनशल्यम् ॥ सू० ४३ ॥

व्यावहारिकक्षेत्र पल्योपम की १० कोटाकोटि से एक व्यावहारिक क्षेत्र सागरोपम बनता है इस सूक्ष्मक्षेत्रपल्योपमजन्य सागरोपम से दृष्टिवाद में द्रव्यों की गिनती की जाती है ३। यहां सूत्र में उद्धारप ल्योपम और क्षेत्रपल्योपमका जो ग्रहण नहीं किया गयाहै वह इनके यहां अनुपयोगी होने से नहीं किया गया है। तथा सूत्र में "अद्धा" ऐसा विशेषण कहा गया है ॥ सू०४२ ॥

पूर्वोक्तपल्योपम आदिकों द्वारा जिन क्रोधादिकों की फलभूत कर्म स्थिति का निरूपण होता है अब सूत्रकार उनके स्वरूप का निरूपण

કોટિકોટિ પ્રમાણવાળો એક 'વ્યાવહારિક ક્ષેત્ર સાગરોપમ' કાળ હોય છે આ સૂક્ષ્મ ક્ષેત્રપલ્યોપમ જન્ય સાગરોપમ દ્વારા દૃષ્ટિવાદમાં દ્રવ્યોની ગણતરી કરવામાં આવે છે. અહીં સૂત્રમાં ઉદ્ધાર પલ્યોપમ અને ક્ષેત્રપલ્યોપમને જે ગ્રહણ કરાયા નથી તેનું કારણ એ છે કે અહીં તેઓ અનુપયોગી છે. તથા સૂત્રમાં 'અદ્ધા' આ પદ વિશેષણરૂપે વપરાયું છે. ॥ સૂ. ૪૨ ॥

પૂર્વોક્ત પલ્યોપમ આદિ દ્વારા ક્રોધાદિકોની ફલભૂત કર્મસ્થિતિનું નિરૂપણ થાય છે તેથી હવે સૂત્રકાર તે ક્રોધાદિકોના સ્વરૂપનું નિરૂપણ કરે છે—

टीका—'दुविहे कोहे' इत्यादि। क्रोधो द्विविधः—आत्मप्रतिष्ठितः परप्रतिष्ठितश्चेति। तत्रात्मप्रतिष्ठित स्वापराधाद् भित्त्यादौ शिरःप्रभृतीनां स्खलनेन वस्तुविशेषविनाशेन वा स्वात्मनि प्रतिष्ठितः जनितःआत्मविषयो जात इत्यर्थः, सः तथोक्तः १। यद्वा—य आत्मना परस्मिन् प्राणिन्याक्रोशादिना प्रतिष्ठितः स तथोक्त। परप्रतिष्ठितः—यः परेणाक्रोशादिना प्रतिष्ठितः—उदीरितः, स्वात्मना वा परस्मिन् प्रतिष्ठितः—जात' उत्पन्नः स तथोक्तः २। इति। इदमुक्त भवति—स्वयमाचरितस्य ऐहिकमपायमवबुध्य यदा कश्चित्स्वात्मन्येव क्रोधं करोति तदा स क्रोध आत्मप्रतिष्ठितः कथ्यते, यदा तु परः कोऽप्याक्रोशादिना क्रोधमुदीरयति

करते हैं-(दुविहे कोहे पण्णत्ते) इत्यादि।

टीकार्थ-क्रोध दो प्रकारका कहा गया है एक आत्मप्रतिष्ठित और दूसरा परप्रतिष्ठित अपने ही अपराधसे भित्ति आदिमें शिर वगैरहके लग जाने से अथवा वस्तु के विनाश से जो क्रोध आत्मा में उत्पन्न हो जाता है वह स्वात्म प्रतिष्ठित क्रोध है अथवा जो क्रोध परप्राणी के ऊपर आक्रोश आदि के करने से अपनी आत्मा में प्रतिष्ठित हो जाता है वह आत्मप्रतिष्ठित क्रोध है तथा आक्रोश आदि के करने से दूसरों के द्वारा आत्मा में उदीरित किया जाता है वह परप्रतिष्ठित क्रोध है अथवा अपने द्वारा पर में जो क्रोध उत्पन्न कराया जाता है वह परप्रतिष्ठित क्रोध है। तात्पर्य इस कथन का ऐसा है कि स्वय आचरित किये कार्य का ऐहिक अपायरूप फल समझ कर जो अपनी निजकी आत्मा पर ही क्रोध

"दुविहे कोहे पण्णत्ते" ईत्याहि—

टीकार्थ–क्रोध બે પ્રકારનો કહ્યો છે–(૧) આત્મપ્રતિષ્ઠિત અને (૨) પરપ્રતિષ્ઠિત પોતાના જ અપરાધ (દોષ) ને લીધે દીવાલ આદિ સાથે શિર આદિ અથડાવાથી અથવા વસ્તુના વિનાશથી જે ક્રોધ આત્મામા ઉત્પન્ન થાય છે, તે ક્રોધનુ નામ સ્વાત્મપ્રતિષ્ઠિત ક્રોધ છે અથવા પર પ્રાણીના ઉપર આક્રોશ આદિ કરવાથી જે ક્રોધ પોતાના આત્મામાં પ્રતિષ્ઠિત થાય છે–ઉત્પન્ન થાય છે, તે ક્રોધનુ નામ આત્મપ્રતિષ્ઠિત ક્રોધ છે જે ક્રોધ અન્યના આક્રોશ આદિને કારણે એટલે કે અન્યના દ્વારા આત્મામાં ઉદીરિત કરાય છે, તે ક્રોધને પરપ્રતિષ્ઠિત ક્રોધ કહે છે અથવા પોતાના દ્વારા અન્ય જીવોમાં જે ક્રોધ ઉત્પન્ન કરાવાય છે, તેનુ નામ પરપ્રતિષ્ઠિત ક્રોધ છે

આ કથનનુ તાત્પર્ય એ છે કે, પોતે જ આચરેલા કાર્યનું ઐહિક અપાયરૂપ ફલ સમજીને પોતાના જ આત્મા પર જે ક્રોધ ઉદ્ભવે છે, તે ક્રોધને આત્મપ્રતિષ્ઠિત ક્રોધ કહે છે અને જ્યારે કોઈ બીજી વ્યક્તિ તેના આક્રોશ

सदा यस्तद्विषयः क्रोध उत्पद्यते स परप्रतिष्ठितः क्रोध कथ्यते, इति । एवम्-अनेनवाऽऽलापकेन यावत्-मिथ्यादर्शनशल्यस्य मानमारभ्य मिथ्यादर्शनशल्यपर्यन्तं विज्ञेयम् । तत्र 'जाव' इति

यावच्छब्देन क्रोधानन्तरं मानादीनामष्टादशानां पापस्थानानां ग्रहणं भवति । एतेषां क्रोधादीनां सर्वेषामपि स्वविकल्पजनितपरविकल्पजनितत्वाभ्यां, स्वात्मस्थितपरात्मस्थिताभ्यां वा स्वपरप्रतिष्ठितत्वमवधारणीयम् ॥ सू ४१ ॥

एवमेतानि सर्वाणि पापस्थानानि 'सिद्धे' ति वक्ष्यमाणगाथोक्तेषु सिद्धादि विपर्ययाऽसिद्धादिषु त्रयोदशस्वपि जीवेषु भवन्ति, पापस्थानानां संसारिष्वेव सद्भावादिति तद्भेदानाह—

मूलम्—दुविहा संसारसमावन्नगा जीवा पण्णत्ता, तं जहा तसा चेव थावराचेव।दुविहा सव्वजीवा पण्णत्ता तं जहा-सिद्धा चेव असिद्धा चेव । दुविहा सव्वजीवा पण्णत्ता तं जहा—सइंदिया चेव अणिंदिया चेव । एवं एसा गाहा फासेयव्वा जाव ससरीरी चेव असरीरी चेव—" सिद्धसइंदियकाए३, जोगे४, वेए५, कसाय ६, लेसा७ य। णाणुव ओगाहारे, भासंग चरिमे य ससरीरी ॥सू०४४॥

उत्पादित होता है वह क्रोध आत्मप्रतिष्ठित कहलाता है । और जब कोई दूसरा व्यक्ति अपने आक्रोश आदि के द्वारा क्रोध करवाता है तब वह परप्रतिष्ठित कहलाता है । इसी आलापक से मिथ्यादर्शनशल्य, तक अर्थात् मान से लेकर मिथ्यादर्शनशल्यतक-ऐसा ही जानना चाहिये अर्थात् क्रोध से लेकर मानादिक अठारह पापस्थानों का ग्रहण होता है सो इन सब में स्वविकल्पजनित परविकल्पजनित इन दो भेदों को लेकर अथवा स्वात्मस्थित और परात्मस्थित इन दो को लेकर स्व और पर में प्रतिष्ठितत्व जानना चाहिये ॥ सू०४१ ॥

આદિ દ્વારા આપણા આત્મામાં ક્રોધ પેદા કરાવે છે ત્યારે તે ક્રોધને પરપ્રતિષ્ઠિત કહે છે માનથી લઈને મિથ્યાદર્શનશલ્ય પર્યન્તના પાપસ્થાનકોમાં પણ આ પ્રમાણે જ સમજવું એટલે કે સ્વવિકલ્પ જનિત અને પરવિકલ્પ જનિત એ બે ભેદોની અપેક્ષાએ તે પ્રત્યેકના પણ સ્વાત્મસ્થિત (સ્વાત્મપ્રતિષ્ઠિત) અને પરાત્મસ્થિત (પરપ્રતિષ્ઠિત) નામના બબ્બે પ્રકાર સમજી લેવા ॥સૂ ૪૩॥

छाया—द्विविधाः संसारसमापन्नका जीवाः प्रज्ञप्तास्तद्यथा—त्रसाश्चैव स्थावराश्चैव । द्विविधाः सर्वजीवाः प्रज्ञप्तास्तद्यथा—सिद्धाश्चैव असिद्धाश्चैव । द्विविधाः सर्वजीवा' प्रज्ञप्तास्तद्यथा—सेन्द्रियाश्चैव अनिन्द्रियाश्चैव। एवमेषा गाथा स्पर्शनीया यावत् सशरीरिणश्चैव अशरीरिणश्चैव—" सिद्ध १, सेन्द्रिय २, कायम् ३, योगो ४, वेदः ५, कषायो ६, लेश्या च ७ । ज्ञानो ८, पयोगा ९, हारम् १०, भाषकः ११, चरमश्च १२ सशरीरी १३ ॥ सू० ४४ ॥

टीका—' दुविहा संसार० ' इत्यादि ।

संसरणं—चतुर्गतिपरिभ्रमणं संसारः—नारकतिर्यग्नरामरभवानुभवलक्षणस्तं स—सम्यग् एकीभावेन आपन्नाः—प्राप्ताः संसारसमापन्नकाः, स्वार्थे क प्रत्ययः, संसारिण इत्यर्थः । ते द्विविधाः—त्रसा. स्थावराश्चेति जीवा' संसारिण एव सन्ति उतान्येऽपिवा ? इतिचेत्—' सन्त्येवे '—ति प्रदर्शनाय सप्रतिपक्षां त्रयोदशसूत्री-

---

इस प्रकार ये सब पापस्थान आगे कहे जाने वाली (सिद्ध) इत्यादि गाथा में कहे हुए सिद्ध आदि से विपरीत असिद्ध आदि तेरह जीवों में ही पाते हैं इसलिये इनके भेद बतलाते हैं–(दुविहा संसारसमावन्नगा जावा पण्णत्ता) इत्यादि ।

चारों गतियों में परिभ्रमण करने का नाम संसार है यह संसार नारक, तिर्यक् नर और देवरभवों के अनुभव करने रूप है इस संसार को जो एकीभाव से प्राप्त कर चुके हैं वे संसार समापन्नक जीव हैं। ऐसे ये संसारसमापन्नक जीव संसारी जीव कहे गये हैं ये संसारी जीव त्रस और स्थावर के भेद से दो प्रकार के होते हैं यही द्विविधत्व की बात–" दुविहा सव्वजीवा " इस सूत्र पाठ द्वारा प्रकट की गई है तात्पर्य

આ અઢારે પાપસ્થાનકોનો સદ્ભાવ અસિદ્ધ આદિ ૧૩ જીવોમાં હોય છે " सिद्ध " ઇત્યાદિ જે ગાથા આગળ કહેવામાં આવવાની છે તે ગાથામાં જે સિદ્ધ આદિ જીવો પ્રકટ કર્યા છે, તેમના કરતાં વિપરીત આ અસિદ્ધ આદિ જીવો છે સૂત્રકાર તે અસિદ્ધ આદિ ૧૩ પ્રકારો હવે પ્રકટ કરે છે—

" दुविहा संसारसमावन्नगा जीवा पण्णत्ता " ઇત્યાદિ.

ટીકાર્થ–ચાર ગતિઓમાં પરિભ્રમણ કરવું તેનુ નામ સંસાર છે નારક, તિર્યંચ, મનુષ્ય અને દેવભવોના અનુભવ કરવા રૂપ તે સંસાર છે આ સંસારને એકીભાવથી (સંસારમાં દૂધ અને પાણીની જેમ એકરૂપ) પ્રાપ્ત કરી ચુકેલા જે જીવો છે, તેમને સંસાર સમાપન્નક જીવો કહે છે એવા સંસારસમાપન્નક જીવોને સંસારી જીવો કહ્યા છે તે સંસારી જીવો ત્રસ અને સ્થાવરના ભેદથી બે પ્રકારના છે. આ દ્વિવિધત્વની વાત જ " दुविहा सव्वजीवा "

जीयते । एतद्द्वय मरूपणामात्रविषयमेव । यत्तु–असंख्यातखण्डीकृतैर्वालाग्रैः स्पृष्टा अस्पृष्टा वाऽऽकाशप्रदेशाः प्रतिसमयमेकैको निस्सार्यन्ते, एवं निस्सारिते सति यावताकालेन पल्यो निर्लेपो निष्ठितो भवति स कालः सूक्ष्मक्षेत्रपल्योपममुच्यते । एवं सूक्ष्मक्षेत्रसागरोपमं तेषां दशभिः कोटीकोटीभिर्भवति । अनेन सूक्ष्मक्षेत्रपल्योपम–सागरोपमेण दृष्टिवादे द्रव्याणि मीयन्ते३।

अत्र–उद्धारपल्योपम–क्षेत्रपल्योपमयोर्ग्रहणं न कृतम् , अनुपयोगित्वात् , सूत्रे ' अद्धे '–ति विशेषणस्योक्तत्वाच्चेति ॥ सू० ४२ ॥

पूर्वोक्तैः पल्योपमादिभिर्येषां क्रोधादीनां फलभूतकर्मस्थितिर्निरूप्यते तस्य रूपनिरूपणं कुर्वन्नाह—

मूलम्–दुविहे कोहे पण्णत्ते तं जहा–आयपइट्ठिए चेव परप इट्ठिए चेव एवं नेरइयाणं जाव वेमाणियाणं। एवं जाव मिच्छादंस णसल्ले ॥ सू० ४३ ॥

छाया—द्विविधः क्रोधः प्रज्ञप्तः, तद्यथा–आत्मप्रतिष्ठितश्चैव परप्रतिष्ठितश्चैव । एवं नैरयिकाणां यावद् वैमानिकानाम् । एवं यावत् मिथ्यादर्शनशल्यम् ॥ सू० ४३ ॥

व्यावहारिकक्षेत्र पल्योपम की १० कोटाकोटि से एक व्यावहारिक क्षेत्र सागरोपम बनता है इस सूक्ष्मक्षेत्रपल्योपमजन्य सागरोपम से दृष्टिवाद में द्रव्यों की गिनती की जाती है ३। यहां सूत्र में उद्धारपल्योपम और क्षेत्रपल्योपमका जो ग्रहण नहीं किया गयाहै वह इनके यहां अनुपयोगी होने से नहीं किया गया है। तथा सूत्र में " अद्धा " ऐसा विशेषण कहा गया है ॥ सू०४२ ॥

पूर्वोक्तपल्योपम आदिकों द्वारा जिन क्रोधादिकों की फलभूत कर्म स्थिति का निरूपण होता है अब सूत्रकार उसके स्वरूप का निरूपण

કોટિકોટિ પ્રમાણુવાળો એક વ્યાવહારિક ક્ષેત્ર સાગરોપમ ' કાળ થાય છે આ સૂક્ષ્મ ક્ષેત્રપલ્યોપમ જન્ય સાગરોપમ દ્વારા દૃષ્ટિવાદમાં દ્રવ્યોની ગણતરી કરવામાં આવે છે. અહીં સૂત્રમાં ઉદ્ધાર પલ્યોપમ અને ક્ષેત્રપલ્યોપમને જે ગ્રહણ કરાયા નથી તેનું કારણ એ છે કે અહીં તેઓ અનુપયોગી છે તથા સૂત્રમાં " અદ્ધા " આ પદ વિશેષણરૂપે વપરાયું છે ॥ સૂ. ૪૨ ॥

પૂર્વોક્ત પલ્યોપમ આદિ દ્વારા ક્રોધાદિકોની ફલભૂત કર્મ સ્થિતિનું નિરૂપણ થાય છે તેથી હવે સૂત્રકાર તે ક્રોધાદિકોના સ્વરૂપનું નિરૂપણ કરે છે—

टीका—'दुविहे कोहे' इत्यादि। क्रोधो द्विविधः—आत्मप्रतिष्ठितः परप्रतिष्ठितश्चेति। तत्रात्मप्रतिष्ठितः स्वापराधाद् भित्त्यादौ शिरःप्रभृतीनां स्खलनेन वस्तुविशेषविनाशेन वा स्वात्मनि प्रतिष्ठितः जनितः आत्मविषयो जात इत्यर्थः, सः तथोक्तः १। यद्वा—य आत्मना परस्मिन् प्राणिन्याक्रोशादिना प्रतिष्ठितः स तथोक्त। परप्रतिष्ठितः—यः परेणाक्रोशादिना प्रतिष्ठितः—उदीरितः, स्वात्मना वा परस्मिन् प्रतिष्ठितः—जातः उत्पन्नः स तथोक्तः २। इति। इदमुक्तं भवति—स्वयमाचरितस्य ऐहिकमपायमवबुध्य यदा कश्चित्स्वात्मन्येव क्रोधं करोति तदा स क्रोध आत्मप्रतिष्ठितः कथ्यते, यदा तु परः कोऽप्याक्रोशादिना क्रोधमुदीरयति

करते हैं-(दुविहे कोहे पण्णत्ते) इत्यादि।

टीकार्थ-क्रोध दो प्रकारका कहा गया है एक आत्मप्रतिष्ठित और दूसरा परप्रतिष्ठित अपने ही अपराधसे भित्ति आदिमें शिर वगैरहके लग जाने से अथवा वस्तु के विनाश से जो क्रोध आत्मा में उत्पन्न हो जाता है वह स्वात्म प्रतिष्ठित क्रोध है अथवा जो क्रोध परप्राणी के ऊपर आक्रोश आदि के करने से अपनी आत्मा में प्रतिष्ठित हो जाता है वह आत्मप्रतिष्ठित क्रोध है तथा आक्रोश आदि के करने से दूसरों के द्वारा आत्मा में उदीरित किया जाता है वह परप्रतिष्ठित क्रोध है अथवा अपने द्वारा पर में जो क्रोध उत्पन्न कराया जाता है वह परप्रतिष्ठित क्रोध है। तात्पर्य इस कथन का ऐसा है कि स्वय आचरित किये कार्य का ऐहिक अपायरूप फल समझ कर जो अपनी निजकी आत्मा पर ही क्रोध

"દુવિહે કોહે પણ્ણત્તે" ઇત્યાદિ—

ટીકાર્થ–ક્રોધ બે પ્રકારનો કહ્યો છે–(૧) આત્મપ્રતિષ્ઠિત અને (૨) પરપ્રતિષ્ઠિત પોતાના જ અપરાધ (દોષ) ને લીધે દીવાલ આદિ સાથે શિર આદિ અથડાવાથી અથવા વસ્તુના વિનાશથી જે ક્રોધ આત્મામા ઉત્પન્ન થાય છે, તે ક્રોધનુ નામ સ્વાત્મપ્રતિષ્ઠિત ક્રોધ છે અથવા પર પ્રાણીના ઉપર આક્રોશ આદિ કરવાથી જે ક્રોધ પોતાના આત્મામાં પ્રતિષ્ઠિત થાય છે–ઉત્પન્ન થાય છે, તે ક્રોધનુ નામ આત્મપ્રતિષ્ઠિત ક્રોધ છે જે ક્રોધ અન્યના આક્રોશ આદિને કારણે એટલે કે અન્યના દ્વારા આત્મામા ઉદીરિત કરાય છે, તે ક્રોધને પરપ્રતિષ્ઠિત ક્રોધ કહે છે અથવા પોતાના દ્વારા અન્ય જીવોમા જે ક્રોધ ઉત્પન્ન કરાવાય છે, તેનુ નામ પરપ્રતિષ્ઠિત ક્રોધ છે.

આ કથનનુ તાત્પર્ય એ છે કે, પોતે જ આચરેલા કાર્યનું ઐહિક અપાયરૂપ ફલ સમજીને પોતાના જ આત્મા પર જે ક્રોધ ઉદ્ભવે છે, તે ક્રોધને આત્મપ્રતિષ્ઠિત ક્રોધ કહે છે અને જ્યારે કોઈ બીજી વ્યક્તિ તેના આક્રોશ

जायते । एतद्व्य प्ररूपणामात्रविषयमेव । यत्तु—असंख्यातखण्डीकृतैर्वालाग्रैः स्पृष्टा अस्पृष्टा वाऽऽकाशप्रदेशाः प्रतिसमयमेकैकशो निस्सार्यन्ते, एवं निस्सारिते सति यावताकालेन पल्यो निर्लेपो निष्ठितो भवति स कालः सूक्ष्मक्षेत्रपल्योपममुच्यते । एवं सूक्ष्मक्षेत्रसागरोपमं तेषां दशभिः कोटीकोटीभिर्भवति । अनेन सूक्ष्मक्षेत्रपल्योपम–सागरोपमेण दृष्टिवादे द्रव्याणि मीयन्ते३।

अत्र–उद्धारपल्योपम–क्षेत्रपल्योपमयोर्ग्रहणं न कृतम्, अनुपयोगित्वात्, सूत्रे 'अद्धे'–ति विशेषणस्योक्तत्वाच्चेति ॥ सू० ४२ ॥

पूर्वोक्तैः पल्योपमादिभिर्येषां क्रोधादीनां फलभूतकर्मस्थितिर्निरूप्यते तत्स्वरूपनिरूपणं कुर्वन्नाह—

मूलम्—दुविहे कोहे पण्णत्ते तं जहा—आयपइट्ठिए चेव परपइट्ठिए चेव एवं नेरइयाणं जाव वेमाणियाणं। एवं जाव मिच्छादंसणसल्ले ॥ सू० ४३ ॥

छाया—द्विविधः क्रोधः प्रज्ञप्तः, तद्यथा–आत्मप्रतिष्ठितश्चैव परप्रतिष्ठितश्चैव । एवं नैरयिकाणां यावद् वैमानिकानाम् । एवं यावत् मिथ्यादर्शनशल्यम् ॥ सू० ४३ ॥

व्यावहारिकक्षेत्र पल्योपम की १० कोटाकोटि से एक व्यावहारिक क्षेत्र सागरोपम बनता है इस सूक्ष्मक्षेत्रपल्योपमजन्य सागरोपम से दृष्टिवाद में द्रव्यों की गिनती की जाती है ३ । यहां सूत्र में उद्धारपल्योपम और क्षेत्रपल्योपमका जो ग्रहण नहीं किया गयाहै वह इनके यहां अनुपयोगी होने से नहीं किया गया है । तथा सूत्र में "अद्धा" ऐसा विशेषण कहा गया है ॥ सू०४२ ॥

पूर्वोक्तपल्योपम आदिकों द्वारा जिन क्रोधादिकों की फलभूत कर्म स्थिति का निरूपण होता है अब सूत्रकार उसके स्वरूप का निरूपण

કોટિકોટિ પ્રમાણવાળો એક 'વ્યાવહારિક ક્ષેત્ર સાગરોપમ' કાળ હોય છે આ સૂક્ષ્મ ક્ષેત્રપલ્યોપમ જન્ય સાગરોપમ દ્વારા દૃષ્ટિવાદમાં દ્રવ્યોની ગણતરી કરવામાં આવે છે અહીં સૂત્રમાં ઉદ્ધાર પલ્યોપમ અને ક્ષેત્રપલ્યોપમને જે ગ્રહણ કરાયા નથી તેનું કારણ એ છે કે અહીં તેઓ અનુપયોગી છે તથા સૂત્રમાં "અદ્ધા" આ પદ વિશેષણરૂપે વપરાયું છે ॥ સૂ. ૪૨ ॥

પૂર્વોક્ત પલ્યોપમ આદિ દ્વારા ક્રોધાદિકોની ફલભૂત કર્મસ્થિતિનું નિરૂપણ થાય છે તેથી હવે સૂત્રકાર તે ક્રોધાદિકોના સ્વરૂપનું નિરૂપણ કરે છે—

टीका—'दुविहे कोहे' इत्यादि। क्रोधो द्विविधः-आत्मप्रतिष्ठितः परप्रतिष्ठितश्चेति। तत्रात्मप्रतिष्ठित स्वापराधाद् भित्त्यादौ शिरःप्रभृतीनां स्खलनेन वस्तुविशेषविनाशेन वा स्वात्मनि प्रतिष्ठितः जनितःआत्मविषयो जात इत्यर्थः, सः तथोक्तः १। यद्वा-य आत्मना परस्मिन् प्राणिन्याक्रोशादिना प्रतिष्ठितः स तथोक्त। परप्रतिष्ठितः-यः परेणाक्रोशादिना प्रतिष्ठितः-उदीरितः, स्वात्मना वा परस्मिन् प्रतिष्ठितः-जात उत्पन्नः स तथोक्तः २। इति। इदमुक्त भवति-स्वयमाचरितस्य ऐहिकमपायमवबुध्य यदा कश्चित्स्वात्मन्येव क्रोधं करोति तदा स क्रोध आत्मप्रतिष्ठितः कथ्यते, यदा तु पर कोऽप्याक्रोशादिना क्रोधमुदीरयति

करते हैं-(दुविहे कोहे पण्णत्ते) इत्यादि।

टीकार्थ-क्रोध दो प्रकारका कहा गया है एक आत्मप्रतिष्ठित और दूसरा परप्रतिष्ठित अपने ही अपराधसे भित्ति आदिमें शिर वगैरहके लग जाने से अथवा वस्तु के विनाश से जो क्रोध आत्मा में उत्पन्न हो जाता है वह स्वात्म प्रतिष्ठित क्रोध है अथवा जो क्रोध परप्राणी के ऊपर आक्रोश आदि के करने से अपनी आत्मा में प्रतिष्ठित हो जाता है वह आत्मप्रतिष्ठित क्रोध है तथा आक्रोश आदि के करने से दूसरों के द्वारा आत्मा में उदीरित किया जाता है वह परप्रतिष्ठित क्रोध है अथवा अपने द्वारा पर में जो क्रोध उत्पन्न कराया जाता है वह परप्रतिष्ठित क्रोध है। तात्पर्य इस कथन का ऐसा है कि स्वय आचरित किये कार्य का ऐहिक अपायरूप फल समझ कर जो अपनी निजकी आत्मा पर ही क्रोध

"दुविहे कोहे पण्णत्ते" ईत्यादि—

टीकार्थ-क्रोध બે પ્રકારનો કહ્યો છે-(૧) આત્મપ્રતિષ્ઠિત અને (૨) પરપ્રતિષ્ઠિત પોતાના જ અપરાધ (દોષ) ને લીધે દીવાલ આદિ સાથે શિર આદિ અથડાવાથી અથવા વસ્તુના વિનાશથી જે ક્રોધ આત્મામા ઉત્પન્ન થાય છે, તે ક્રોધનુ નામ સ્વાત્મપ્રતિષ્ઠિત ક્રોધ છે અથવા પર પ્રાણીના ઉપર આક્રોશ આદિ કરવાથી જે ક્રોધ પોતાના આત્મામાં પ્રતિષ્ઠિત થાય છે-ઉત્પન્ન થાય છે, તે ક્રોધનુ નામ આત્મપ્રતિષ્ઠિત ક્રોધ છે જે ક્રોધ અન્યના આક્રોશ આદિને કારણે એટલે કે અન્યના દ્વારા આત્મામાં ઉદીરિત કરાય છે, તે ક્રોધને પરપ્રતિષ્ઠિત ક્રોધ કહે છે અથવા પોતાના દ્વારા અન્ય જીવોમા જે ક્રોધ ઉત્પન્ન કરાવાય છે, તેનુ નામ પરપ્રતિષ્ઠિત ક્રોધ છે.

આ કથનનું તાત્પર્ય એ છે કે, પોતે જ આચરેલા કાર્યનું ઐહિક અપાયરૂપ ફલ સમજીને પોતાના જ આત્મા પર જે ક્રોધ ઉદ્ભવે છે, તે ક્રોધને આત્મપ્રતિષ્ઠિત ક્રોધ કહે છે અને જ્યારે કોઈ બીજી વ્યક્તિ તેના આક્રોશ

तदा यस्तद्विषयः क्रोध उपजायते स परप्रतिष्ठितः क्रोधः कथ्यते, इति । एवम्-अनेनैवाऽऽलापकेन यावत्-मिथ्यादर्शनशल्य मानमारभ्य मिथ्यादर्शनशल्यपर्यन्तं विज्ञेयम् । तत्र ' जाव ' इति

यावच्छब्देन क्रोधानन्तरं मानादीनामष्टादशानां पापस्थानानां ग्रहणं भवति । एतेषां क्रोधादीनां सर्वेषामपि स्वविकल्पजनितपरविकल्पजनितत्वाभ्यां, स्वात्मस्थितपरात्मस्थितत्वाभ्यां वा स्वपरप्रतिष्ठितत्वमवधारणीयम् ॥ सू ४३ ॥

एवमेतानि सर्वाणि पापस्थानानि ' सिद्धे' ति वक्ष्यमाणगाथोक्तेषु सिद्धादि विपर्ययाऽसिद्धादिषु प्रयोदशस्वपि जीवेषु भवन्ति, पापस्थानानां संसारिष्वेव सद्भावादिति तद्भेदानाह—

मूलम्——दुविहा संसारसमावन्नगा जीवा पण्णत्ता, तं जहा तसा चेव थावरा चेव। दुविहा सव्वजीवा पण्णत्ता तं जहा सिद्धा चेव असिद्धा चेव । दुविहा सव्वजीवा पण्णत्ता तं जहा—सइंदिया चेव अणिंदिया चेव । एवं एसा गाहा फासेयव्वा जाव ससरीरी चेव असरीरी चेव-" सिद्धसइंदियकाए३, जोगे४, वेए५, कसाय ६, लेसा७ य । णाणुव ओगाहारे, भासग चरिमे य ससरीरी ॥सू०४४॥

उद्भावित होता है वह क्रोध आत्मप्रतिष्ठित कहलाता है । और जब कोई दूसरा व्यक्ति अपने आक्रोश आदि के द्वारा क्रोध करवाता है तब वह परप्रतिष्ठित कहलाता है । इसी आलापक से मिथ्यादर्शनशल्य, तक अर्थात् मान से लेकर मिथ्यादर्शनशल्यतक-ऐसा ही जानना चाहिये अर्थात् क्रोध से लेकर मानादिक अठारह पापस्थानों का ग्रहण होता है सो इन सब में स्वविकल्पजनित परविकल्पजनित इन दो भेदों को लेकर अथवा स्वात्मस्थित और परात्मस्थित इन दो को लेकर स्व और पर में प्रतिष्ठितत्व जानना चाहिये ॥ सू०४३ ॥

આદિ દ્વારા આપણા આત્મામાં ક્રોધ પેદા કરાવે છે ત્યારે તે ક્રોધને પરપ્રતિષ્ઠિત કહે છે આનાથી લઈને મિથ્યાદર્શનશલ્ય પર્યન્તના પાપસ્થાનકોમાં પણ આ પ્રમાણે જ સમજવું એટલે કે સ્વવિકલ્પ જનિત અને પરવિકલ્પ જનિત એ બે ભેદોની અપેક્ષાએ તે પ્રત્યેકના પણ સ્વાત્મસ્થિત (સ્વાત્મપ્રતિષ્ઠિત) અને પરાત્મસ્થિત (પરપ્રતિષ્ઠિત) નામના બબ્બે પ્રકાર સમજી લેવા ॥સૂ ४३॥

छाया—द्विविधाः संसारसमापन्नका जीवाः प्रज्ञप्तास्तद्यथा—त्रसाश्चैव स्थावराश्चैव। द्विविधाः सर्वजीवाः प्रज्ञप्तास्तद्यथा—सिद्धाश्चैव असिद्धाश्चैव। द्विविधाः सर्वजीवाः प्रज्ञप्तास्तद्यथा—सेन्द्रियाश्चैव अनिन्द्रियाश्चैव। एवमेषा गाथा स्पर्शनीया यावत् सशरीरिणश्चैव अशरीरिणश्चैव—" सिद्ध १, सेन्द्रिय २, कायम् ३, योगो ४, वेदः ५, कषायो ६, लेश्या च ७। ज्ञानो ८, पयोगा ९, हारम् १०, भाषकः ११, चरमश्च १२ सशरीरी १३ ॥ सू० ४४ ॥

टीका—' दुविहा संसार० ' इत्यादि।

संसरणं—चतुर्गतिपरिभ्रमणं संसारः—नारकतिर्यग्नरामरभवानुभवलक्षणस्तं सं-सम्यग् एकीभावेन आपन्नाः—प्राप्ताः संसारसमापन्नकाः, स्वार्थे क प्रत्ययः, संसारिण इत्यर्थः। ते द्विविधाः—त्रसाः स्थावराश्चेति जीवाः संसारिण एव सन्ति उतान्येऽपिवा ? इतिचेत्—' सन्त्येवे '—ति प्रदर्शनाय सप्रतिपक्षां त्रयोदशसूत्री-

---

इस प्रकार ये सब पापस्थान आगे कहे जाने वाली (सिद्ध) इत्यादि गाथा में कहे हुए सिद्ध आदि से विपरीत असिद्ध आदि तेरह जीवों में ही पाते हैं इसलिये इनके भेद बतलाते हैं–(दुविहा संसारसमावन्नगा जीवा पण्णत्ता) इत्यादि।

चारों गतियों में परिभ्रमण करने का नाम संसार है यह संसार नारक, तिर्यक् नर और देवरभवों के अनुभव करने रूप है इस संसार को जो एकीभाव से प्राप्त कर चुके हैं वे संसार समापन्नक जीव हैं। ऐसे ये संसारसमापन्नक जीव संसारी जीव कहे गये हैं ये संसारी जीव त्रस और स्थावर के भेद से दो प्रकार के होते हैं यही द्विविधत्व की बात–" दुविहा सव्वजीवा " इस सूत्र पाठ द्वारा प्रकट की गई है तात्पर्य

આ અઢારે પાપસ્થાનકોનો સદ્‌ભાવ અસિદ્ધ આદિ ૧૩ જીવોમાં હોય છે " सिद्ध " ઇત્યાદિ જે ગાથા આગળ કહેવામાં આવવાની છે તે ગાથામાં જે સિદ્ધ આદિ જીવો પ્રકટ કર્યા છે, તેમના કરતાં વિપરીત આ અસિદ્ધ આદિ જીવો છે સૂત્રકાર તે અસિદ્ધ આદિ ૧૩ પ્રકારો હવે પ્રકટ કરે છે—

" दुविहा संसारसमावन्नगा जीवा पण्णत्ता " ઇત્યાદિ.

ટીકાર્થ–ચાર ગતિઓમા પરિભ્રમણ કરવું તેનુ નામ સંસાર છે નારક, તિર્યંચ, મનુષ્ય અને દેવભવોના અનુભવ કરવા રૂપ તે સંસાર છે આ સંસારને એકી ભાવથી (સંસારમાં દૂધ અને પાણીની જેમ એકરૂપ) પ્રાપ્ત કરી ચુકેલા જે જીવો છે, તેમને સંસાર સમાપન્નક જીવો કહે છે. એવા સંસારસમાપન્નક જીવોને સંસારી જીવો કહ્યા છે તે સંસારી જીવો ત્રસ અને સ્થાવરના ભેદથી બે પ્રકારના છે. આ દ્વિવિધત્વની વાત જ " दुविहा सव्वजीवा "

तदा यस्तद्विषयः क्रोध उपजायते स परप्रतिष्ठितः क्रोधः कथ्यते, इति । एवम्-अनेनवाऽऽलापकेन यावत्-मिथ्यादर्शनशल्य मानमारभ्य मिथ्यादर्शनशल्यपर्यन्त विज्ञेयम् । तत्र 'जाव' इति

यावच्छब्देन क्रोधानन्तरं मानादीनामष्टादशानां पापस्थानानां ग्रहणं भवति। एतेषां क्रोधादीनां सर्वेषामपि स्वविकल्पजनितपरविकल्पजनितत्वाभ्यां, स्वात्मस्थितपरात्मस्थिताभ्यां वा स्वपरप्रतिष्ठितत्वमवधारणीयम् ॥ सू ४३ ॥

एवमेतानि सर्वाणि पापस्थानानि 'सिद्धे' ति वक्ष्यमाणगाथोक्तेषु सिद्धादि विपर्ययाऽसिद्धादिषु त्रयोदशस्वपि जीवेषु भवन्ति, पापस्थानानां संसारिष्वेव सद्भावादिति तद्भेदानाह—

मूलम्—दुविहा संसारसमावन्नगा जीवा पण्णत्ता, तं जहा तसा चेव थावरा चेव। दुविहा सव्वजीवा पण्णत्ता तं जहा-सिद्धा चेव असिद्धा चेव । दुविहा सव्वजीवा पण्णत्ता तं जहा—सइंदिया चेव अणिंदिया चेव । एवं एसा गाहा फासेयव्वा जाव ससरीरी चेव असरीरी चेव—" सिद्धसइंदियकाए३, जोगे४, वेए५, कसाय ६, लेसा७ य। णाणुव ओगाहारे, भासग चरिमे य ससरीरी ॥सू०४४॥

उद्भावित होता है वह क्रोध आत्मप्रतिष्ठित कहलाता है। और जब कोई दूसरा व्यक्ति अपने आक्रोश आदि के द्वारा क्रोध करवाता है तब वह परप्रतिष्ठित कहलाता है। इसी आलापक से मिथ्यादर्शनशल्य, तक अर्थात् मान से लेकर मिथ्यादर्शनशल्यतक-ऐसा ही जानना चाहिये अर्थात् क्रोध से लेकर मानादिक अठारह पापस्थानों का ग्रहण होता है सो इन सब में स्वविकल्पजनित परविकल्पजनित इन दो भेदों को लेकर अथवा स्वात्मस्थित और परात्मस्थित इन दो को लेकर स्व और पर में प्रतिष्ठितत्व जानना चाहिये ॥ सू०४३ ॥

આદિ દ્વારા આપણા આત્મામાં ક્રોધ પેદા કરાવે છે, ત્યારે તે ક્રોધને પરપ્રતિષ્ઠિત કહે છે માનથી લઈને મિથ્યાદર્શનશલ્ય પર્યન્તના પાપસ્થાનોમાં પણ આ પ્રમાણે જ સમજવું એટલે કે સ્વવિકલ્પ જનિત અને પરવિકલ્પ જનિત એ બે ભેદોની અપેક્ષાએ તે પ્રત્યેકના પણ સ્વાત્મસ્થિત (સ્વાત્મપ્રતિષ્ઠિત) અને પરાત્મસ્થિત (પરપ્રતિષ્ઠિત) નામના બબ્બે પ્રકાર સમજી લેવા ॥સૂ ૪૩॥

पठितव्यानीत्यर्थः। कियदवधि? इत्याह–' जाव ' इत्यादि–' सिद्ध ' इत्यारभ्य ' ससरीरीचेव असरीरीचेव ' इत्यन्तम्। तामेवगाथामाह–' सिद्ध ' इत्यादि। एषा गाथा सप्रतिपक्षा वाच्या तथाहि–सिद्धाः–सिद्धजीवाः, असिद्धाः–सिद्धविपरीताः १, सेन्द्रियाः–इन्द्रियसहिताः, अनिन्द्रियाः–इन्द्रियवर्जिताः २, एवं ' काए ' त्ति सकायाः–पृथिव्यादयस्तानाश्रित्य सर्वे जीवाः सप्रतिपक्षा वाच्याः। एवं सर्वाणि व्याख्येयानि। वाचना चैवम्–" सकायच्चेव २, अकायच्चेव, ३, सजोगच्चेव, अजोगच्चेव ४, सवेयच्चेव अवेयच्चेव ५, इत्याद्यालापकाः सर्वत्र संयोज्याः। सकायाः–पृथिव्यादिषड्विधकाय–विशिष्टा संसारिणः, अकायास्तद्भिन्नाः सिद्धाः ३। सयोगाः–संसारिणः, अयोगाः–अयोगिनः सिद्धाश्च ४। सवेदाः–संसारिणः,

---

सशरीरी होते हैं। वह गाथा इस प्रकार से है–" सिद्धसइंदियकाए " इत्यादि। यहां यह गाथा सप्रतिपक्ष कहना चाहिये अर्थात्–इस गाथा के अनुसार सिद्ध, सेन्द्रिय, आदि जीव यावत् सशरीरी तक अपने २ प्रतिपक्ष सहित कहना चाहिये–सिद्ध जीव, असिद्ध जीव, सेन्द्रिय (इन्द्रियसहित) जीव, अनिन्द्रिय–इन्द्रियवर्जितजीव इस प्रकार सकायपृथिवीकाय आदि जीव इन सब को आश्रित करके समस्त जीव सप्रतिपक्ष कहना चाहिये। जिस प्रकार सिद्ध असिद्ध १, सेन्द्रिय अनिन्द्रिय २ ये अपने २ प्रतिपक्ष सहित तेरह कहे गये हैं, इसी प्रकार से पृथिवी आदि षड्विधकायविशिष्ट संसारी जीव, और तद्भिन्न अकाय जीव–सिद्ध जीव ३ सयोग संसारी जीव, और अयोग–चौदहवें गुणस्थानवर्ती जीव और सिद्ध जीव ४, सवेद–वेदसहित संसारी जीव

બતાવવામાં આવેલ છે તે ગાથા આ પ્રમાણે છે–" सिद्ध सइंदियकाए " ઈત્યાદિ. આ ગાથા સપ્રતિપક્ષ (પ્રતિપક્ષ સહિત) કહેવી જોઇએ એટલે કે આ ગાથામાં પ્રકટ કરેલા સિદ્ધ, સેન્દ્રિય આદિ સશરીરી પર્યન્તના જીવો પોત પોતાના પ્રતિપક્ષ સહિત કહેવા જોઇએ જેમકે સિદ્ધ જીવ અને અસિદ્ધ જીવ, સેન્દ્રિય જીવ અને અનિન્દ્રિય જીવ, એજ પ્રમાણે સકાય પૃથ્વીકાય આદિ જીવોને આશ્રિત કરીને સમસ્ત જીવોનું તેમના પ્રતિપક્ષ સહિત કથન થવું જોઇએ જેમ સિદ્ધ–અસિદ્ધ, અને (૨) સેન્દ્રિય–અનિન્દ્રિય આ જીવોને પોતપોતાના પ્રતિપક્ષ સહિત પ્રકટ કરવામાં આવ્યા છે, (૩) એજ પ્રમાણે પૃથ્વી આદિ ષડ્વિધકાય વિશિષ્ટ (છકાય જીવો) સંસારી જીવો અને તેનાથી ભિન્ન એવાં અકાય જીવો–સિદ્ધ જીવો, (૪) સયોગ સંસારી જીવો અને અયોગ ૧૪ માં ગુણસ્થાનવર્તી જીવ અને સિદ્ધ જીવ, (૫) સવેદ (વેદ સહિત)

माह—' दुविहा सव्वजीवा ' इत्यादि । सर्वजीवाः-समस्तप्राणिनः द्विविधा प्रज्ञप्ताः । तदेव प्रकारद्वयमाह-सिद्धा असिद्धाश्च । तत्र सिध्यन्ति स्मेति सिद्धाः कर्मप्रपञ्च निर्मुक्ताः । असिद्धाः-तद्भिन्नाः १। पुनरपि सर्वजीवानां द्वैविध्यमाह-' दुविहे '-त्यादि स्पष्टम् । नवरम्-सेन्द्रिया अनिन्द्रियाश्चेति । तत्र सेन्द्रियाः-इन्द्रिय सहिताः संसारिणः । अनिन्द्रिया -इन्द्रियरहिता -अपर्याप्तकाः, केवलिनः, सिद्धाश्चेति २। एवम्-अनेन प्रकारेण एषा-अनुपद वक्ष्यमाणा गाथा-प्रस्तुतसप्रतिपक्षसूत्र त्रयोदशी सप्राइकपदरूपा स्पर्शनीया-अनुसरणीया-एतदनुसारेण त्रयोदशापि सूत्राणि

इस सूत्र का ऐसा है कि यहां पर किसी ने ऐसी आशंका की कि जीव संसारी ही है या और भी जीव है ? तब उत्तर दिया गया कि अन्य जीव भी हैं इसी बात को दिखाने के लिये इस सप्रतिपक्ष त्रयोदश १३ सूत्रों को सूत्रकार ने कहा है इसके द्वारा यह प्रकट किया गया है कि समस्त प्राणी दो प्रकार के कहे गये हैं जैसे एक सिद्ध और दूसरे असिद्ध इनमें जो कर्मप्रपञ्च से रहित हो चुके हैं वे सिद्ध हैं और जो कर्मप्रपञ्च से रहित नहीं हुए हैं वे असिद्ध जीव हैं इसी प्रकार से सेन्द्रिय और अनिन्द्रिय के भेद से भी सर्व जीव दो प्रकार के कहे गये हैं इनमें जो इन्द्रियसहित हैं वे सेन्द्रिय जीव-संसारी जीव हैं और जो इन्द्रियों से रहित हैं ऐसे वे अपर्याप्तक, केवली और सिद्ध इन्द्रियरहित जीव हैं २ इसी प्रकार से यहां यह गाथा अनुसरणीय है-कहां तक कि जीव

આ સૂત્રપાઠ દ્વારા પ્રકટ કરવામાં આવી છે આ સૂત્રનું તાત્પર્ય એવું છે કે કદાચ કોઇને એવી શંકા થાય કે શું જીવો સંસારી જ હોય છે કે અસંસારી પણ હોય છે ખરાં ? તો તેનો ઉત્તર એ છે કે સંસારી સિવાયના જીવો પણ છે ખરાં. એજ વાતનું પ્રતિપાદન કરવા માટે પ્રતિપક્ષ સહિતના ૧૩ સૂત્રો સૂત્રકારે કહ્યાં છે તેના દ્વારા એ પ્રકટ કરવામાં આવ્યું છે કે સમસ્ત જીવો બે પ્રકારના કહ્યા છે-જેમકે સિદ્ધ અને અસિદ્ધ જે જીવો કર્મપ્રપંચથી રહિત થઈ ચુક્યા છે તે જીવોને સિદ્ધ કહે છે અને જે જીવો કર્મપ્રપંચથી રહિત થયા નથી તેમને અસિદ્ધ જીવો કહે છે ॥ ૧ ॥ એજ પ્રકારે સેન્દ્રિય અને અનિન્દ્રિયના ભેદથી પણ જીવો બે પ્રકારના કહ્યા છે જે જીવો ઇન્દ્રિયોથી યુક્ત છે તેમને સેન્દ્રિય જીવો કહે છે સંસારી જીવોનો સેન્દ્રિયોમાં સમાવેશ થાય છે જે જીવો ઇન્દ્રિયોથી રહિત છે તેમને અનિન્દ્રિય જીવો કહે છે અપર્યાપ્તક કેવલી અને સિદ્ધનો અનિન્દ્રિય જીવોમાં સમાવેશ થાય છે ॥ ૨ ॥ એજ પ્રમાણે શરીરી અને અશરીરી જીવો પર્યન્તના પ્રકારો આ ગાથા દ્વારા

पठितव्यानीत्यर्थः। कियदवधि ? इत्याह–'जाव' इत्यादि–'सिद्ध' इत्यारभ्य 'ससरीरीचेव असरीरीचेव' इत्यन्तम्। तामेवगाथामाह–'सिद्ध' इत्यादि। एषा गाथा सप्रतिपक्षा वाच्या तथाहि–सिद्धाः–सिद्धजीवाः, असिद्धाः–सिद्धविपरीताः १, सेन्द्रियाः–इन्द्रियसहिताः, अनिन्द्रियाः–इन्द्रियवर्जिताः २, एवं 'काए' त्ति सकायाः–पृथिव्यादयस्तानाश्रित्य सर्वे जीवाः सप्रतिपक्षा वाच्याः। एवं सर्वाणि व्याख्येयानि। वाचना चैवम्–"सकायच्चेव २, अकायच्चेव, ३, सजोगच्चेव, अजोगच्चेव ४, सवेयच्चेव अवेयच्चेव ५, इत्याद्यालापकाः सर्वत्र संयोज्याः। सकायाः–पृथिव्यादिषड्विधकाय–विशिष्टा संसारिणः, अकायास्तद्भिन्नाः सिद्धाः ३। सयोगाः–संसारिणः, अयोगाः–अयोगिनः सिद्धाश्च ४। सवेदाः–संसारिणः,

---

सशरीरी होते हैं। वह गाथा इस प्रकार से है–"सिद्धसइंदियकाए" इत्यादि। यहां यह गाथा सप्रतिपक्ष कहना चाहिये अर्थात्–इस गाथा के अनुसार सिद्ध, सेन्द्रिय, आदि जीव यावत् सशरीरी तक अपने २ प्रतिपक्ष सहित कहना चाहिये–सिद्ध जीव, असिद्ध जीव, सेन्द्रिय (इन्द्रियसहित) जीव, अनिन्द्रिय–इन्द्रियवर्जितजीव इस प्रकार सकायपृथिवीकाय आदि जीव इन सब को आश्रित करके समस्त जीव सप्रतिपक्ष कहना चाहिये। जिस प्रकार सिद्ध असिद्ध १, सेन्द्रिय अनिन्द्रिय २ ये अपने २ प्रतिपक्ष सहित तेरह कहे गये हैं, इसी प्रकार से पृथिवी आदि षड्विधकायविशिष्ट संसारी जीव, और तद्भिन्न अकाय जीव–सिद्ध जीव ३ सयोग संसारी जीव, और अयोग–चौदहवें गुणस्थानवर्ती जीव और सिद्ध जीव ४, सवेद–वेदसहित संसारी जीव

બતાવવામા આવેલ છે તે ગાથા આ પ્રમાણે છે–"सिद्ध सइंदियकाए" ઈત્યાદિ. આ ગાથા સપ્રતિપક્ષ (પ્રતિપક્ષ સહિત) કહેવી જોઈએ એટલે કે આ ગાથામાં પ્રકટ કરેલા સિદ્ધ, સેન્દ્રિય આદિ સશરીરી પર્યન્તના જીવો પોત-પોતાના પ્રતિપક્ષ સહિત કહેવા જોઈએ જેમકે સિદ્ધ જીવ અને અસિદ્ધ જીવ, સેન્દ્રિય જીવ અને અનિન્દ્રિય જીવ, એજ પ્રમાણે સકાય પૃથ્વીકાય આદિ જીવોને આશ્રિત કરીને સમસ્ત જીવોનુ તેમના પ્રતિપક્ષ સહિત કથન થવુ જોઈએ. જેમ સિદ્ધ–અસિદ્ધ, અને (૨) સેન્દ્રિય–અનિન્દ્રિય આ જીવોને પોત-પોતાના પ્રતિપક્ષ સહિત પ્રકટ કરવામાં આવ્યા છે, (૩) એજ પ્રમાણે પૃથ્વી આદિ ષડ્વિધકાય વિશિષ્ટ (છકાય જીવો) સંસારી જીવો અને તેનાથી ભિન્ન એવાં અકાય જીવો–સિદ્ધ જીવો, (૪) સયોગ સંસારી જીવો અને અયોગ ૧૪ મા ગુણસ્થાનવર્તી જીવ અને સિદ્ધ જીવ, (૫) સવેદ (વેદ સહિત)

अवेदाः-अनिवृत्तिबादरसम्परायविशेषादयः षट्, सिद्धाश्च ५। सकषायाः-सूक्ष्मसम्परायान्ताः, अकषायाः-उपशान्तमोहाद्यश्चत्वारः, सिद्धाश्च ६। सलेश्याः-सयोगिगुणस्थानपर्यन्ताः संसारिणः, अलेश्याः-अयोगिनः सिद्धाश्च ७। ज्ञानिनः-सम्यग्दृष्टयः, अज्ञानिनः-मिथ्यादृष्टयः ८। उपयोगिनः-साकारोपयुक्ता, अनाकारोपयुक्ताश्चेति द्विविधाः, सह आकारेण-विशेषांशग्रहणशक्तिरूपेण वर्तते य उपयोगः स साकारोपयोगः ज्ञानोपयोग इत्यर्थः, तेनोपयुक्ताः साकारोपयुक्ताः, अनाकारस्तु तद्विलक्षण-उपयोग दर्शनोपयोग इत्यर्थः तेनयुक्ता अनाकारोपयुक्ताः९।

और अवेद-वेदरहित ९-१०-११-१२ १३ और १४ वां गुणस्थानवर्ती जीव और सिद्ध जीव ५, कषायसहित-संसारी जीव-सूक्ष्मसंपरायतक के जीव, और अकषाय जीव-उपशान्तमोहादिक चार जीव और सिद्ध ६, सलेश्य जीव-सयोगिगुणस्थानतक के जीव संसारी जीव, और अलेश्य जीव-अयोगि जीव एवं सिद्ध जीव ७, ज्ञानी जीव सम्यग्दृष्टि जीव एवं अज्ञानी जीव मिथ्यादृष्टि जीव८, उपयोग दो प्रकारका होता है एक साकारोपयोग और दूसरा अनाकारोपयोग साकारोपयोग से जो जीव युक्त होता है वह साकारोपयोग युक्त जीव है और अनाकारोपयोग से जो जीव युक्त होता है वह अनाकारोपयोग युक्त जीव है जो उपयोग विशेषोंको ग्रहण करनेकी शक्तिरूप आकारसे युक्त है वह साकारोपयोग है इसका दूसरा नाम ज्ञानोपयोग है । इस उपयोगसे भिन्न जो उपयोग है वह अनाकारोपयोग है-इस अनाकारोपयोग

સંસારી જીવ અને અવેદ (વેદ રહિત) ૯, ૧૦, ૧૧, ૧૨, ૧૩ અને ૧૪ માં ગુણસ્થાનવર્તી જીવો અને સિદ્ધ જીવો, (૬) સકષાયી સંસારી જીવો-સૂક્ષ્મ સાંપરાય પર્યન્તના જીવો અને અકષાયી જીવો-ઉપશાન્ત મોહાદિક ચાર અને સિદ્ધો, (૭) સલેશ્ય જીવો-સયોગિ ગુણસ્થાન પર્યન્તના જીવો-સંસારી જીવો અને અલેશ્ય જીવો-અયોગિ જીવો અને સિદ્ધ જીવો, (૮) જ્ઞાનીજીવો-સમ્યગ્ દૃષ્ટિ જીવો અને અજ્ઞાની જીવો-મિથ્યાદૃષ્ટિ જીવો, (૯) સાકારોપયોગ અને અનાકારોપયોગયુક્ત જીવો (ઉપયોગ બે પ્રકારના છે-એક સાકારોપયોગ અને બીજો અનાકારોપયોગ.) જે જીવ સાકારોપયોગથી યુક્ત હોય છે તેને સાકારોપયોગ યુક્ત કહે છે અને અનાકાર ઉપયોગથી યુક્ત જીવને અનાકારોપયોગયુક્ત કહે છે જે ઉપયોગ વિશેષાંશને ગ્રહણ કરવાની શક્તિરૂપ આકારથી યુક્ત હોય છે તેનુ નામ સાકારોપયોગ છે તેનું બીજુ નામ જ્ઞાનોપયોગ છે આ ઉપયોગથી ભિન્ન જે ઉપયોગ છે તેનું નામ અનાકારોપયોગ અથવા દર્શનોપયોગ છે

आहारकाः ओजोलोमकवलभेदभिन्नाहारविशेषग्राहिण, अनाहारकाः-विग्रहगतिसमापन्नादयश्चत्वारः।

उक्तश्च—" विग्गहगइमावण्णा १, केवलिणो समोहया २ अयोगी ३ य।
सिद्धा ४ य अणाहारा, सेसा आहारगा जीवा ॥

छाया-विग्रहगति मापन्नाः १ केवलिनः समवहताः (समुद्घातावस्थावर्तिनः) २, अयोगिनश्च ३। सिद्धाश्च ४ अनाहाराः,शेषा आहारका जीवाः ॥१॥ इति। भाषकाः-भाषापर्याप्ति पर्याप्ताः, अभाषकाः-भाषापर्याप्ति रहिताः अयोगिनः सिद्धाश्च ११। चरमाः-येषां चरमो भवो भविष्यति मोक्षगामिन इत्यर्थः, अचरमाः-येषां भव्यत्वे सत्यपि चरमो भवो न भविष्यति, मोक्षं न प्राप्स्यन्तीत्यर्थः १२। सशरीरिणः-सह यथासम्भव पञ्चविधशरीरेण वर्त्तन्ते ये ते सशरीरा आत्मप्रदेशाः ते विद्यन्ते येषां ते तथोक्ताः-ससारिण. अशरीरिणः-शरीररहिताः सिद्धा इत्यर्थः १३ ॥ सू० ४४ ॥

का दूसरा नाम दर्शनोपयोग है ९ आहारक-ओज आहार, रोम आहार और कवलाहार इन भेद वाले आहारविशेष को ग्रहण करने वाले जीव आहारक हैं और विग्रहगति समापन्न आदिक चार जीव अनाहारक हैं। कहा भी है-(विग्गहगइमावण्णा) इत्यादि।

विग्रहगति समापन्नक जीव १, समुद्घातावस्था युक्त केवलि जीव २ अयोगिजीव ३ और सिद्धजीव ४ ये चार जीव अनाहारक होते हैं १०। भाषक-भाषापर्याप्ति से पर्याप्त हुए जीव, अभाषक-भाषापर्याप्ति से रहित जीव, अयोगि जीव, सिद्ध जीव ११, चरमजीव-मोक्षगामी जीव, अचरमजीव-भव्यत्व भाव से विशिष्ट होने पर भी जिनका चरमभव नहीं होगा-जो मोक्ष को प्राप्त नहीं करेंगे ऐसे जीव १२, तथा

---

(१०) ઓજ આહાર, રોમ આહાર અને કવલાહાર, આ ભેદવાળા આહાર વિશેષને ગ્રહણ કરનારા જીવોને આહારક કહે છે અને વિગ્રહગતિ સમાપન્ન આદિક ચાર અનાહારક જીવો ગણાય છે કહ્યુ પણ છે-" विग्गहगइमावण्णा " ઇત્યાદિ-વિગ્રહગતિ સમાપન્નક જીવ, સમુદ્‌ઘાતાવસ્થાયુક્ત કેવલિ જીવ, અયોગી જીવ અને સિદ્ધ જીવ, આ ચાર પ્રકારના જીવો અનાહારક હોય છે (૧૧) ભાષક અને અભાષક જીવો ભાષાપર્યાપ્તિથી પર્યાપ્ત થયેલા જીવોનો ભાષકમાં અને ભાષાપર્યાપ્તિથી રહિત જીવોનો-અયોગિ જીવ અને સિદ્ધ જીવનો-અભાષકમાં સમાવેશ થાય છે (૧૨) ચરમ જીવ-મોક્ષગામી જીવ અને અચરમ જીવ ભવ્યત્વ ભાવ સંપન્ન હોવા છતાં જેમનો ચાલુ ભવ ચરમભવ નથી એવા જીવોને અચરમ જીવો કહે છે. (૧૩) સશરીરી જીવ-યથા સંભવ પાંચ

एते च संसारिणः सिद्धाश्च मरणामरणधर्मशीलाः, अप्रशस्तप्रशस्तमरणवन्तश्चैते भवन्तीति प्रशस्ताप्रशस्तमरणनिरूपणं कुर्वन् सूत्रद्वयमाह—

मूलम्—दो मरणाइं समणेणं भगवया महावीरेणं समणाणं णिग्गंथाणं णो णिच्चं वण्णियाइं, णो णिच्चं कित्तियाइं, णो णिच्चं बुइयाइं, णो णिच्चं पससियाइं, णो णिच्चं अब्भणुन्नायाइं भवन्ति, तं जहा—वलायमरणे चेव वसट्टमरणे चेव १। एवं णियाणमरणे चेव तब्भवमरणे चेव२, गिरिपडणे चेव तरुपडणे चेव३, जलप्पवेसे चेव जलणप्पवेसे चेव४, विसभक्खणे चेव सत्थोवाडणे चेव। दो मरणाइं जाव णो णिच्चं अब्भणुन्नायाइं भवंति, कारणेण पुण अप्पडिकुट्ठाइं, तं जहा—वेहाणसे चेव गिद्धपट्ठे चेव ६। दो मरणाइं समणेणं भगवया महावीरेण समणाणं निग्गंथाणं णिच्चं वण्णियाइं जाव अब्भणुन्नायाइं भवंति, तं जहा—पाओवगमणे चेव, भत्तपच्चक्खाणे चेव ७। पाओगमणे दुविहे पण्णत्ते, तं जहा—णीहारिमे चेव अणीहारिमे चेव नियमं अपडिकमे ८। भत्तपच्चक्खाणे दुविहे पण्णत्ते तं जहा णीहारिमे चेव अणीहारिमे चेव णियमं सपडिक्कमे९॥सू० ४५॥

सशरीरी जीव–यथा समय पांच प्रकार के शरीरों से जिनके आत्मप्रदेश युक्त हो रहे हैं ऐसे जीव और अशरीरीजीव–शरीररहित सिद्ध जीव ११॥ सू०४४॥

ये संसारी जीव और सिद्धजीव क्रमशः मरण धर्म और अमरण धर्मशील होते हैं मरण प्रशस्त और अप्रशस्त भेद से दो प्रकार का

પ્રકારના શરીરોથી જેમના આત્મપ્રદેશો યુક્ત થઈ રહ્યા છે એવાં જીવો, અને અશરીરી જીવ-શરીર રહિત સિદ્ધ જીવ ॥ સૂ ૪૪ ॥

તે સંસારી જીવ અને સિદ્ધ જીવ અનુક્રમે મરણધર્મ અને અમરણ ધર્મશીલ હોય છે મરણના પ્રશસ્ત અને અપ્રશસ્ત, એવા બે ભેદ છે

छाया—द्वे मरणे श्रमणेन भगवता महावीरेण श्रमणानां निर्ग्रन्थानां नो नित्यं वर्णिते, नो नित्यं कीर्त्तिते, नो नित्यं व्युदिते, नो नित्यं प्रशंसिते, नो नित्यं अभ्यनुज्ञाते भवतः, तद्यथा-वलन्मरणं चैव वशार्त्तमरणं चैव १। एवं निदानमरण चैव तद्भवमरणं चैव २, गिरिपतनं चैव तरुपतनं चैव ३, जलप्रवेशश्चैव ज्वलनप्रवेशश्चैव ४, विषभक्षणं चैव शस्त्रावपाटनं चैव ५। द्वे मरणे यावत् नो नित्यम् अभ्यनुज्ञाते भवतः, कारणेन पुनरप्रतिक्रुष्टे, तं जहा-वैहायसं चैव गृध्रपृष्ठं चैव ६। द्वे मरणे श्रमणेन भगवता महावीरेण श्रमणानां निर्ग्रन्थानां नित्यं वर्णिते यावद् अभ्यनुज्ञाते भवतः, तद्यथा-पादपोपगमनं चैव भक्तप्रत्याख्यानं चैव ७। पादपोपगमनं द्विविधं प्रज्ञप्तं, तद्यथा-निर्हारिमं चैव नियमाद् अप्रतिकर्म ८। भक्तप्रत्याख्यानं द्विविधं प्रज्ञप्तं, तद्यथा-निर्हारिमं चैव, अनिर्हारिम चैव नियमात् सप्रतिकर्म ९ ॥ सू० ४५ ॥

टीका—'दो मरणाइं' इत्यादि-सुगमम् । नवरम्-द्वे मरणे नो-नैव वर्णिते-उपादेयतया न कथिते । नो कीर्तिते-उपादेयतया न निरूपिते । नो व्युदिते-व्यक्तवाचा न निगदिते । नो प्रशंसिते-न श्लाघिते नो अभ्यनुज्ञाते-'कुरु' इति रूपेण नानुमते । तदेवाह-वलन्मरणं वशार्त्तमरणं चेति । तत्र-वलनां-संयमान्निवर्त्तमानानां मरणं वलन्मरणम् एतद् भग्नव्रतपरिणामानां व्रतिनामेव भवति

होता है सो अब सूत्रकार इसी मरण का निरूपण इस नवसूत्री से करते हैं-(दो मरणाइं समणेणं भगवया महावीरेणं) इत्यादि ।

टीकार्थ-श्रमण भगवान् महावीर ने दो मरण श्रमण निर्ग्रन्थों को उपादेय रूप से नहीं कहे हैं। उपादेय रूप से उन्हें निरूपित नहीं किया है व्यक्त वचन द्वारा उन्हें प्ररूपित नहीं किया है उनकी श्लाघा-प्रशंसा नहीं की है तुम इन्हें करो-अर्थात् इन मरणों से मरो इस प्रकार के इनकी अनुमोदना नहीं की है वे दो मरण ये हैं-एक वलन्मरण और दूसरा वशार्त्तमरण संयम से भ्रष्ट हुए जीवों का मरण होता है वह वलन्मरण है

સૂત્રકાર હવે નીચેનાં નવ સૂત્રો દ્વારા તે મરણનું નિરૂપણ કરે છે—

" दो मरणाइ समणेणं भगवया महावीरेण " ઇત્યાદિ—

ટીકાર્થ—શ્રમણ ભગવાન મહાવીરે બે પ્રકારના મરણોને શ્રમણ નિગ્રંથો માટે ઉપાદેયરૂપ કહ્યાં નથી, તે મરણોને તેમણે ઉપાદેય રૂપે નિરૂપિત કર્યાં નથી, વ્યક્ત વચનો દ્વારા તેમને પ્રરૂપિત કર્યા નથી, તેમની પ્રશંસા (શ્લાઘા) કરી નથી, તેમની અનુમોદના કરી નથી તે બે મરણો નીચે પ્રમાણે સમજવા (૧) વલન્મરણ (૨) વશાર્ત્તમરણ. સંયમથી ભ્રષ્ટ થયેલા જીવોનાં જે મરણ

एते च संसारिणः सिद्धाश्च मरणामरणधर्मशीलाः, अप्रशस्तमप्रशस्तमरणवन्त्वेते भवन्तीति प्रशस्तामप्रशस्तमरणनिरूपणं कुर्वन् नवसूत्री माह—

मूलम्—दो मरणाइं समणेणं भगवया महावीरेणं समणाणं णिग्गंथाणं णो णिच्चं वन्नियाइं, णो णिच्चं कित्तियाइं, णो णिच्चं बुइयाइं, णो णिच्चं पसंसियाइं, णो णिच्चं अब्भणुन्नायाइं भवन्ति, तं जहा—वलायमरणे चेव वसट्टमरणे चेव १। एवं णियाणमरणे चेव तब्भवमरणे चेव२, गिरिपडणे चेव तरुपडणे चेव३, जलप्पवेसे चेव जलणप्पवेसे चेव४, विसभक्खणे चेव सत्थोवाडणे चेव। दो मरणाइं जाव णो णिच्चं अब्भणुन्नायाइं भवंति, कारणेण पुण अप्पडिकुट्ठाइं, तं जहा—वेहाणसे चेव गिद्धपट्ठे चेव ६। दो मरणाइं समणेणं भगवया महावीरेणं समणाणं निग्गंथाणं णिच्चं वन्नियाइं जाव अब्भणुन्नायाइं भवंति, तं जहा—पाओवगमणे चेव, भत्तपच्चक्खाणे चेव ७। पाओगमणे दुविहे पण्णत्ते, तं जहा—णीहारिमे चेव अणीहारिमे चेव नियमं अपडिकम्मे ८। भत्तपच्चक्खाणे दुविहे पण्णत्ते तं जहा णीहारिमे चेव अणीहारिमे चेव णियमं सपडिक्कमे९॥ सू० ४५॥

सशरीरी जीव–यथा सम्भव पांच प्रकार के शरीरों से जिनके आत्मप्रदेश युक्त हो रहे हैं ऐसे जीव और अशरीरीजीव–शरीररहित सिद्ध जीव ११ ॥ सू० ४४ ॥

ये संसारी जीव और सिद्धजीव क्रमशः मरण धर्म और अमरण धर्मशील होते हैं मरण प्रशस्त और अप्रशस्त भेद से दो प्रकार का

પ્રકારના શરીરોથી જેમના આત્મપ્રદેશો યુક્ત થઈ રહ્યા છે એવાં જીવો, અને અશરીરી જીવ-શરીર રહિત સિદ્ધ જીવ ॥ સૂ. ૪૪ ॥

તે સંસારી જીવ અને સિદ્ધ જીવ અનુક્રમે મરણધર્મ અને અમરણ ધર્મશીલ હોય છે મરણના પ્રશસ્ત અને અપ્રશસ્ત, એવા બે ભેદ છે

छाया—द्वे मरणे श्रमणेन भगवता महावीरेण श्रमणानां निर्ग्रन्थानां नो नित्यं वर्णिते, नो नित्यं कीर्त्तिते, नो नित्यं व्युदिते, नो नित्यं प्रशंसिते, नो नित्यं अभ्यनुज्ञाते भवतः, तद्यथा–वलन्मरणं चैव वशार्त्तमरणं चैव १। एवं निदानमरणं चैव तद्भवमरणं चैव २, गिरिपतनं चैव तरुपतनं चैव ३, जलप्रवेशश्चैव ज्वलनप्रवेशश्चैव ४, विषभक्षणं चैव शस्त्रावपाटनं चैव ५। द्वे मरणे यावत् नो नित्यम् अभ्यनुज्ञाते भवतः, कारणेन पुनरप्रतिक्रुष्टे, तं जहा–वैहायसं चैव गृध्रपृष्ठं चैव ६। द्वे मरणे श्रमणेन भगवता महावीरेण श्रमणानां निर्ग्रन्थानां नित्यं वर्णिते यावद् अभ्यनुज्ञाते भवतः, तद्यथा–पादपोपगमनं चैव भक्तप्रत्याख्यानं चैव ७। पादपोपगमनं द्विविधं प्रज्ञप्तं, तद्यथा–निर्हारिमं चैव नियमाद् अप्रतिकर्म ८। भक्तप्रत्याख्यानं द्विविधं प्रज्ञप्तं, तद्यथा–निर्हारिमं चैव, अनिर्हारिम चैव नियमात् सप्रतिकर्म ९ ॥ सू० ४५ ॥

टीका—'दो मरणाइं' इत्यादि–सुगमम् । नवरम्–द्वे मरणे नो–नैव वर्णिते–उपादेयतया न कथिते । नो कीर्तिते–उपादेयतया न निरूपिते । नो व्युदिते–व्यक्तवाचा न निगदिते । नो प्रशंसिते–न श्लाघिते नो अभ्यनुज्ञाते–'कुरु' इति रूपेण नानुमते । तदेवाह–वलन्मरणं वशार्त्तमरणं चेति । तत्र–वलनां–संयमान्निवर्त्तमानानां मरणं वलन्मरणम् एतद् भग्नव्रतपरिणामानां व्रतिनामेव भवति

होता है सो अब सूत्रकार इसी मरण का निरूपण इस नवसूत्री से करते हैं–(दो मरणाइं समणेणं भगवया महावीरेणं) इत्यादि ।

टीकार्थ–श्रमण भगवान् महावीर ने दो मरण श्रमण निर्ग्रन्थों को उपादेय रूप से नहीं कहे हैं। उपादेय रूप से उन्हें निरूपित नहीं किया है व्यक्त वचन द्वारा उन्हें प्ररूपित नहीं किया है उनकी श्लाघा–प्रशंशा नहीं की है तुम इन्हें करो–अर्थात् इन मरणों से मरो इस प्रकार के इनकी अनुमोदना नहीं की है वे दो मरण ये हैं–एक वलन्मरण और दूसरा वशार्त्तमरण संयम से भ्रष्ट हुए जीवों का मरण होता है वह वलन्मरण है

સૂત્રકાર હવે નીચેનાં નવ સૂત્રો દ્વારા તે મરણનું નિરૂપણ કરે છે—

"दो मरणाइं समणेण भगवया महावीरेण" ઈત્યાદિ—

ટીકાર્થ–શ્રમણ ભગવાન મહાવીરે બે પ્રકારના મરણોને શ્રમણ નિર્ગ્રંથો માટે ઉપાદેયરૂપ કહ્યાં નથી, તે મરણોને તેમણે ઉપાદેય રૂપે નિરૂપિત કર્યાં નથી, વ્યક્ત વચનો દ્વારા તેમને પ્રરૂપિત કર્યા નથી, તેમની પ્રશંસા (શ્લાઘા) કરી નથી, તેમની અનુમોદના કરી નથી તે બે મરણો નીચે પ્રમાણે સમજવા (૧) વલન્મરણ (૨) વશાર્ત્તમરણ. સંયમથી ભ્રષ્ટ થયેલા જીવોનાં જે મરણ

अन्येषां संयमयोगानामेवासम्भवात् १। वशार्तानाम्–इन्द्रियवशवर्तिनां यत् स्निग्धदीपकलिकावलोकनाकुलितशलभानामिव मरण तद् वशार्त्तमरणम्, उक्तंच —

" समणजोगविसन्ना, मरंति जे तं बलाय मरण तु।
इंदिय विसयवसगया, मरंति जे त वसट्टं तु ॥ १ ॥ "

छाया–संयमयोगविषण्णा म्रियन्ते ये तद् बलमरण तु।
इन्द्रियविषयवशगता म्रियन्ते ये तद् वशार्त्तं तु ॥ १ ॥ इति।

' एवं नियाणमरणे ' इत्यादि–एवमिति पूर्वोक्तालापकानुसारेणोत्तरसूत्रे अपि विज्ञेयमिति सूचनार्थम्। निदानम्–निदायते–लूयते आनन्दरसोपेतमोक्षफल

यह मरण भग्नव्रतपरिणामवाले व्रती जीवों को ही होता है क्यों कि अन्य जीवों के संयमयोगों की ही सम्भावना नहीं होती है इन्द्रियों के वशवर्ती हुए जीवों का जो स्निग्धदीपकलिका (सतेल जलते दीपकलिका) के अवलोकन से आकुलित हुए शलभों की तरह मरण होता है वह वशार्त्तमरण है।

कहा भी है–(समणजोगविसन्ना) इत्यादि।

संजमयोग से विषण्ण (भ्रष्ट) हुए जीवों का जो मरण होता है वह मरण बलयमरण है और इन्द्रिय के विषयों से आर्त्त बने हुए जीवों का जो मरण होता है वह वशार्त्त मरण है " एवं नियाणमरणे " इसी पूर्वोक्त आलापक के अनुसारसूत्रों में भी जानना चाहिये अर्थात् निदान मरण और तद्भवमरण भी श्रमण भगवान् महावीर ने निर्ग्रन्थों के लिये अच्छा नहीं कहा है जिस प्रकार परशु (कुठार) द्वारा लता काट दी जाती है उसी प्रकार से जिस मरण के द्वारा आनन्दरसोपेतमोक्षफल

થાય છે તે મરણને વલ મરણ કહે છે આ પ્રકારના મરણ ભગ્નવ્રત પરિણામ વાળા વ્રતી જીવોના જ થાય છે કારણ કે અન્ય જીવોમાં તો સંયમયોગોની સંભાવના જ હોતી નથી સળગતા દીવાની તરફ આકર્ષાઈને મરણ પામતાં પતંગિયાઓની જેમ ઇન્દ્રિયોને અધીન બનેલાં જીવોનાં જે મરણ થાય છે તે મરણનું નામ વશાર્ત્તમરણ છે કહ્યું પણ છે કે–' સમણજોગવિસન્ના " ઇત્યાદિ

સંયમયોગથી વિષણ્ણ (ભ્રષ્ટ) થયેલા જીવોનું જે મરણ થાય છે તે મરણને વલયમરણ કહે છે, અને ઇન્દ્રિયોના વિષયોથી આર્ત્ત બનેલા જીવોનું જે મરણ થાય છે તે મરણને વશાર્ત્તમરણ કહે છે ' एवं नियाणमरणे "
આ પૂર્વોક્ત આલાપકના જેવું જ કથન હવેનાં સૂત્રોમાં પણ ગ્રહણ કરવું જોઈએ. એટલે કે નિદાન મરણ અને તદ્ભવ મરણ પણ શ્રમણ નિર્ગ્રંથોને માટે ભગવાન મહાવીરે સારાં કહ્યાં નથી. જે રીતે કુહાડી વડે લતાને કાપી

ज्ञानाद्याराधनालता येन परशुनेव देवेन्द्रादिगुणर्द्धिप्रार्थनाध्यवसायेन तत्तथोक्तम्-दिव्यमानुषऋद्धिसंदर्शनश्रवणाभ्यां तदभिलापानुष्ठानमित्यर्थः, तत्पूर्वकं मरणं निदानमरणम्। यस्मिन् भवे जीवो वर्त्तते तद्भवयोग्यमेवायुष्कं बद्ध्वा पुनर्म्रियमाणस्य यन्मरणं तत् तद्भवमरणम्। एतद्धि संख्यातायुष्ककर्मभूमिजनरतिरश्चामेव भवति, तेषामेव तद्भवायुर्बन्धसद्भावात् पुनस्तत्रैवोत्पत्तेः। तत्किं तेषां सर्वेषामेव भवति? न, येषां तद्भवोपादानुरूप एवायुष्कर्मोपचयो भवति, तेषामेव तद्भवमरणं जायते नान्येषामिति। उक्तञ्च—

वाली ऐसी ज्ञानादिरूप आराधनालता देवेन्द्रगुणर्द्धि की प्राप्ति की आकांक्षा से नष्ट कर दी जाती है वह निदानमरण है दिव्य अथवा मानुष-संबंधी ऋद्धि के दर्शन और श्रवण से आगामी भवमें इस की चाहना करना और इस चाहना पूर्वक ही मरण करना इसका नाम निदानमरण है जिस भव में जीव है तद्भव योग्य ही आयुष्क का बंध करके पुनः म्रियमाण जीव का जो मरण है वह तद्भवमरण है यह मरण संख्यातवर्ष की आयु वाले कर्मभूमिज मनुष्य-तिर्यञ्चों के ही होता है, युगलों के नहीं। क्योंकि उनके ही तद्भव की आयु के बन्ध का सद्भाव होता है। इससे वे वहीं पर उत्पन्न हो जाते हैं।

शंका—क्या यह तद्भवमरण उन सब के ही होता है?

उत्तर—ऐसा नियम नहीं है जिन जीवों के तद्भवोपादानानुरूप ही आयुष्क कर्म का उपचय होता है उनके ही यह तद्भवमरण होता है

નાખવામાં આવે છે એજ પ્રમાણે જે મરણ દ્વારા આનન્દ રસોપેત મોક્ષફલ-વાળી જ્ઞાનાદિરૂપ આરાધના લતાને દેવેન્દ્ર ગુણવૃદ્ધિની પ્રાપ્તિની અભિલાષાને કારણે નષ્ટ કરી નાખવામા આવે છે તે મરણને નિદાન મરણ કહે છે એટલે કે દિવ્ય અથવા માનુષ સંબંધી ઋદ્ધિનાં દર્શન થવાથી અથવા તેની વાત સાંભળવાથી આગામી ભવમા તેની ચાહના કરવી અને તે ચાહનાપૂર્વક મરવું તેનું નામ નિદાન મરણ છે જે ભવમાં જીવ હોય તે ભવને યોગ્ય જ આયુષ્ય-નો બંધ કરીને પુન મ્રિયમાણ (મરતા) જીવનુ જે મરણ છે તે મરણને તદ્ભવ મરણ કહે છે. આ પ્રકારનુ મરણ સંખ્યાત વર્ષના આયુષ્યવાળા કર્મ ભૂમિ જ નરતિર્યંચોના જ થાય છે—યુગલોના થતાં નથી. કારણ કે તદ્ભવના આયુના બન્ધનો સદ્ભાવ તે જીવોમા જ હોય છે, તેથી તેઓ ત્યાંજ ફરી ઉત્પન્ન થઈ જાય છે

શંકા—શું તે બધાનું તદ્ભવ મરણ જ થાય છે?

ઉત્તર—એવો નિયમ નથી જે જીવો દ્વારા તદ્ભવ ઉપાદાનને અનુરૂપ જ આયુષ્કકર્મનો ઉપચય થાય છે, તેઓ જ તે તદ્ભવ મરણે મરે છે—અન્ય

" मोत्तु अकम्मभूमि य नरतिरिए सुरगणे य नेरइए।
सेसाण जीवाणं तब्भवमरणं तु केसिंचि ॥ १ ॥ "

छाया—मुक्त्वा अकर्मभूमिजान् नरतिरश्चः सुरगणान् च नैरयिकान्।
शेषाणां जीवानां तद्भवमरणं तु केषाञ्चित् ॥ १ ॥ २।

गिरिपतन-तरुपतन ३-जलप्रवेश-ज्वलनप्रवेश ४-विषभक्षणमरणानि प्रसिद्धानि। शस्त्रावपाटनम् शस्त्रेण-करपत्रादिना अवपाटनं-स्वशरीरस्य विदारणं यस्मिन् तद्योगस्तं मरणम् ५। 'दो मरणाइं' इत्यादि। वक्ष्यमाणे द्वे मरणे श्रवणेन भगवता महावीरेण 'आव' इति 'नो निच्चवण्णिते' इत्यारभ्य यावत्

शेष जीवों के नहीं। कहा भी है-(मोत्तु अकम्मभूमि य) इत्यादि।

अकर्मभूमि के नर तिर्यञ्चों को, देवगणों को, और नैरयिकों को छोड़कर के शेष जीवों के यह तद्भवमरण होता है शेष जीवों में भी सब को यह मरण नहीं होता है किन्तु किसी २ के ही होता है इसी तरह से पर्वत से गिरने पर जो मरण हो जाता है वह गिरिपतन मरण है, वृक्ष से गिरने पर जो मरण होता है वह तरुपतन मरण है जल में डूब जाने पर जो मरण हो जाता है वह जलप्रवेशमरण है, अग्नि में प्रवेश करने से जो मरण होता है वह ज्वलनप्रवेशमरण है विषभक्षण करने पर जो मरण हो जाता है वह विषभक्षणमरण है तथा शस्त्र-करपत्र-(करवत) आदि से अपने शरीर का जो विदारण हो जाने पर मरण हो जाता है वह शस्त्रावपाटनमरण है इन मरणों से मरना भी

જીવોની બાબતમાં એવું બનતું નથી કહ્યું પણ છે કે-" मोत्तु अकम्मभूमि य " ઇત્યાદિ

અકર્મભૂમિના નર તિર્યંચો દેવગણો અને નારકો સિવાયના જીવો જ તદ્ભવ મરણથી મરે છે તે જીવોમાં પણ બધાં જીવો એ પ્રકારના મરણથી મરતાં નથી પરન્તુ કોઇ કોઇ જીવો જ એ મરણથી મરે છે

ગિરિપતન મરણ—પર્વતપરથી પડી જવાને લીધે જે મરણ થાય છે, તેને ગિરિપતન મરણ કહે છે વૃક્ષપરથી પડી જવાને લીધે જે મરણ થાય છે તેને તરુપતન મરણ કહે છે પાણીમાં ડૂબી જવાથી જે મરણ થાય છે તેને જલપ્રવેશ મરણ કહે છે અગ્નિમાં પ્રવેશ કરવાથી જે મરણ થાય છે તેને જ્વલનપ્રવેશ મરણ કહે છે ઝેર ખાવાથી જે મરણ થાય છે, તેને વિષ ભક્ષણ મરણ કહે છે કરવત આદિ શસ્ત્રો વડે શરીરનું વિદારણ થવાથી જે મરણ થાય છે તેને શસ્ત્રાવપાટન મરણ કહે છે ગિરિપતન મરણ આદિ મર ણોથી મરવું તે શ્રમણ ભગવાન મહાવીરે શ્રમણ નિગ્રંથો માટે પ્રશસ્ત કહ્યું

नो नित्यमभ्यनुज्ञाते–वक्ष्यमाणमरणद्वयेन मुनीनां मरणं निषिद्धं भगवतेत्यर्थः। अत्रापवादमाह–'कारणेणपुण' इत्यादि, किन्तु–कारणेन कारणमाश्रित्य दर्शनमालिन्य शीलभङ्गादिकारणे समुपस्थिते सति तद्रक्षणार्थमित्यर्थः, उदायिनृपानुभूततथाविधाचार्यवत् ते द्वे अपि मरणे अप्रतिक्रुष्टे–अनिवारिते–ननिषिद्धे भगवतेत्यर्थः। तदेवाह—वैहायसं-गृध्रपृष्ठं चेति। तत्र वृक्षशाखाद्युद्बद्धत्वाद् विहायसि नभसि भवं वैहायसं गलपाशेन मरणमित्यर्थ। गृध्रपृष्ठं—गृध्राः–मृतकभक्षकपक्षिविशेषा, उपलक्षणं शकुनिका शिवादीनां, तैर्भक्ष्यं पृष्ठमुपलक्षणत्वादुदरादिकं वा म्रियमाणस्य यस्मिन् तत् तथोक्तम्, अस्मिन् हि–अलक्तक (लाक्षारस) पूणिकापुटप्रदानेनापि शरीरं पृष्ठादौ गृध्रादिभिरनिवारणादिना भक्ष्यते।

मुनिजनों के लिये श्रमण भगवान् महावीर ने निषिद्ध किया है इसी प्रकार श्रमण भगवान् महावीर ने मुनिजनों के लिये इन दो मरणों से मरना भी निषिद्ध किया है. वे दो मरण ये हैं एक वैहायस और दूसरा गृध्रपृष्ठ परन्तु यदि दर्शनमालिन्य, शीलभङ्गादिरूप कारण की उपस्थिति होती है तो उनकी रक्षा के लिये उस समय ये दोनों मरण उदायिनृपानुभूततथाविध आचार्य की तरह मुनिजनों के लिये श्रमण भगवान् महावीर ने निषिद्ध भी नहीं किये हैं। गले में फांसी लगाकर मरना इसका नाम वैहायस मरण है। जो मरण वृक्षशाखा आदि में रस्सी आदि डालकर और उसका फंदा बनाकर उस फंदे को गले में डालने से म्रियमाण जीव मर जाता है वह वैहायस मरण है जिस मरण में म्रियमाण के शरीर को भक्षण करने वाले गृध्र, शकुनिका, शिवा आदि जीव खा जाते हैं वह गृध्रपृष्ठमरण है इस मरण में म्रियमाण के शरीर पर लाक्षारस की पूणिका का पुट दिया जाता है इससे वह पृष्ठादि भाग

નથી–આ મરણોથી મરવાનો પણ નિષેધ કર્યો છે શ્રમણ ભગવાન મહાવીરે નીચેના બે પ્રકારના મરણો પણ શ્રમણ નિર્ગ્રંથો માટે અનુપાદેય–નિષિદ્ધ કહ્યાં છે (૧) વૈહાયસ મરણ (૨) ગૃધ્રપૃષ્ઠ મરણ ગળામાં ફાંસો લગાવીને મરવું તેનું નામ વૈહાયસ મરણ છે જેમકે ઝાડની ડાળી આદિમાં દોરડું બાંધીને તેના ગાળિયામાં ગળું લટકાવીને ફાંસો ખાઇને મરવું, તે પ્રકારના મરણને વૈહાયસ મરણ કહે છે જે મરણમાં મરતાં જીવના ભક્ષણને માટે ગીધ, સમડી આદિ જીવો એકઠાં થાય છે તે મરણને ગૃધ્રપૃષ્ઠ મરણ કહે છે. આ પ્રકારના મરણથી મરતી વ્યકિતના શરીરપર લાખના રસની પૂણિકાનો પટ લગાડવામા આવે છે તેથી તે શરીરના પૃષ્ઠાદિ ભાગો ગીધ આદિ દ્વારા ખવાઈ જાય છે આ પ્રકારના મરણ દ્વારા મરતો જીવ આ પ્રમાણે પણ કરે છે–

यद्वा गृध्रस्पृष्टमितिच्छाया, तत्र गृध्रैः स्पृष्ट-स्पर्शनं भक्षणमित्यर्थः यस्मिंस्तत् प्रोक्तम्, महासत्त्वस्य मुमूर्षोः स्वशरीरस्य समुद्रस्यमृतकरिकरभादि कलेवरान्तः प्रवेशेन गृध्रादिभिः पृष्ठादेर्भक्षणमित्यर्थः एतच्च कर्मनिर्जरां प्रति प्रधानत्वान्महासत्त्वैरेवाचर्यते न कातरैरिति भावः ।

उक्तञ्च—"गिद्धाइभक्खणं गिद्धपिट्ठं उब्बंधणाइ वेहासं ।
एए दुन्निवि मरणा, कारणजाए अणुण्णाया ॥ १ ॥

छाया—गृध्रादि भक्षणं गृध्रपृष्ठम्, उद्बन्धनादि वैहायसम् ।
एते द्वे अपि मरणे कारणजाते अनुज्ञाते ॥ १ ॥" ४।

उक्तान्यप्रशस्तमरणानि, तदनन्तरं तानि प्रशस्तानि भव्यानां भवन्तीति प्रशस्तमरणवक्तव्यतामाह-'दो मरणाइं' इत्यादि पूर्ववदालापकः पठनीयः ।

में गृद्धों द्वारा खा लिया जाता है इस मरण में म्रियमाण जीव ऐसा भी करता है कि जब वह विशिष्ट शक्तिवाला जीव मरने की इच्छावाला हो जाता है तब वह अपने शरीर को गृध्रादिकों द्वारा भक्ष्य मृत करि-करभ आदि के कलेवर के भीतर डाल देता है इससे गृध्रादि मांस भक्षक जीव उसके पृष्ठ आदि का भक्षण करने लग जाते हैं। यह मरण कर्म निर्जरा के प्रति प्रधान कारण होता है अतः महा शक्तिशाली जीव ही इस मरण को आचरित करसकते हैं कायर पुरुष नहीं।

कहा भी है-(गिद्धाइभक्खणं) इत्यादि। ये सब अप्रशस्त मरण कहे गये हैं इन मरणों के बाद अब सूत्रकार प्रशस्तमरणों को कहते हैं-ये प्रशस्त मरण भव्य जीवोंको होतेहैं (दो मरणाइं) इत्यादि यहां पर

જ્યારે તે વિશિષ્ટ શક્તિસંપન્ન જીવ મરવાની ઇચ્છાવાળો બને છે ત્યારે તે પોતાના શરીરને મૃત હાથી આદિના કલેવરમાં નાખી દે છે ગીધ આદિ માંસભક્ષક જીવો જ્યારે તે હાથી આદિના શરીરનું માંસ ખાવા આવે છે ત્યારે તે મૃતકલેવરમાં રહેલા તે શરીરના પીઠ આદિ ભાગોનું માંસ પણ તેમના દ્વારા ખવાય છે આ પ્રકારનું મરણ કર્મનિર્જરાના મુખ્ય કારણરૂપ હોય છે મહાશક્તિશાળી પુરુષો જ આ પ્રકારના મરણથી મરી શકે છે-કાયરો તો આ મરણ મરવાની હિંમત જ કરી શકતા નથી

પરન્તુ અમુક સંજોગોમાં આ બન્ને મરણોનો નિષેધ નથી-દર્શનમાલિન્ય, શીલભંગ આદિ રૂપ કારણો ઉપસ્થિત થાય ત્યારે તેમની રક્ષાને માટે તે બન્ને પ્રકારના મરણોનો નિષેધ નથી જેમકે ઉદાયિનૃપાનુભૂત તથાવિધ આચાર્યનું મરણ કહ્યું પણ છે કે—" गिद्धाइभक्खणं " ઇત્યાદિ

આ સૂત્રમાં કહ્યા અનુસાર ગીધાદિ દ્વારા શરીરનું ભક્ષણ કરાવવાથી જે મરણ થાય છે તેને અપ્રશસ્ત કહેવામાં આવેલ છે

હવે સૂત્રકાર પ્રશસ્ત મરણોની પ્રરૂપણા કરે છે— ' दो मरणाइं " ઇત્યાદિ—

तदेवाह–पादपोपगमनं भक्तप्रत्याख्यान चेति । तत्र पादपो–वृक्षस्तम् उपगच्छति–सादृश्येन प्राप्नोतीति पादपोपगमनम्, इदमुक्तं भवति–यथैव पादपः क्वचित् कथञ्चिन्निपतितः समत्वं विषमत्वं चाविभावयन्निश्चल एवास्ते तथाऽयमपि स्वीकृत-पादपोपगमनः संयतिः स्वस्य यद् अङ्ग यथा समविषमदेशेषु समतया विषमतया वा प्रथमत एव पतितं न तत्ततश्चालयतीति । छिन्नपतिततरुवदत्यन्त निश्चेष्टतया-ऽवस्थानं यस्मिन् मरणे भवति तत्पादपोपगमनमरणमुच्यतइति भावः । प्रथम-संहननधराधीरा एवैतन्मरणं प्रतिपद्यन्ते ।

पहिले की तरह ही आलापक कहना चाहिये प्रशस्तमरणों में पादपोप-गमन और भक्तप्रत्याख्यान ये दो मरण हैं पादप नाम वृक्ष का है इस वृक्ष की तरह अवस्थान जिस मरण में रहता है वह पादपोपगमन मरण है तात्पर्य इसका ऐसा है कि जैसे वृक्ष जहां कहीं पर भी जिस किसी भी अवस्था में गिर जाता है, वह यह नहीं देखता है कि यह भूमि सम है या विषम है और गिर कर वह जैसे निश्चल ही पडा रहता है इसी प्रकार से जिस साधु ने यह पादपोपगमन मरण स्वीकार किया है उस साधु के अंग जिस किसी भी सम विषम प्रदेश में जैसी भी अव-स्था में पहिले से पड़ चुके हों वह साधु उन्हें फिर वहां से हटाता नहीं है अतः यह मरण छिन्नपतितवृक्ष की तरह अत्यन्त निश्चेष्ट रूप से अवस्थान वाला होता है इस मरण को वे ही जीव धारण करते हैं जो

ભવ્ય જીવોના મરણુ જ પ્રશસ્ત હોય છે અહીં પહેલાની જેમ જ આલાપક કહેવો જોઇએ પાદપોપગમન મરણુ અને ભકતપ્રત્યાખ્યાન મરણુને પ્રશસ્ત મરણુ કહે છે પાદપ એટલે વૃક્ષ તે વૃક્ષના જેવું અવસ્થાન જે મરણુમાં રહે છે, તે મરણુને પાદપોપગમન મરણુ કહે છે જેમ વૃક્ષ પડે છે ત્યારે એવો વિચાર કરતું નથી કે પોતે જે ભૂમિમાં પડવાનુ છે તે ભૂમિ સમ છે કે વિષમ છે, અને પડયા પછી તે નિશ્ચલ જ પડયુ રહે છે, એજ પ્રમાણે પાદપોપગમન મરણુ સ્વીકારનાર સાધુના અંગો પણુ જે કોઈ સમ વિષમ પ્રદેશમાં જે કોઇ પણુ અવસ્થામા પહેલેથી પડી ચુકેલા હોય છે, તે અવ-સ્થામાં જ પડયા રહેવા દેવામાં આવે છે તે અંગોને ત્યાથી ખસેડવામાં આવતાં નથી તે કારણે તે મરણુ તૂટી પડેલા વૃક્ષની જેમ અત્યત નિશ્ચેષ્ટ રૂપે અવસ્થાનવાળું હોય છે આ પ્રકારના મરણુથી મરવાનુ એ પુરુષો દ્વારા જ શકય બને છે કે જેઓ પ્રથમ વજ્રઋષભનારાચ સંહનનવાળા અને ધીર હોય

यद्वा गृध्रस्पृष्टमितिच्छाया, तत्र गृध्रैः स्पृष्ट-स्पर्शन भक्षणमित्यर्थः यस्मिंस्तच्च धोक्तम्, महासत्त्वस्य मुमूर्षोः स्वशरीरस्य तदुपस्पृष्टकरिकरभादि कलेवरान्तः प्रवेशेन गृध्रादिभि पृष्ठादेर्भक्षणमित्यर्थः एतच्च कर्मनिर्जरा प्रति प्रधानत्वान्महासत्त्वैरेवाचर्यते न कातरैरिति भावः ।

उक्तंच—" गिद्धाइभक्खणं गिद्धपिट्ठ उब्बधणाइ वेहासं ।
 एए दुन्निवि मरणा, कारणजाए अणुण्णाया ॥ १ ॥
छाया—गृध्रादि भक्षणं गृध्रपृष्ठम्, उद्बन्धनादि वैहायसम् ।
 एते द्वे अपि मरणे कारणजाते अनुज्ञाते ॥ १ ॥ " ३।
 उक्तान्यप्रशस्तमरणानि, तदनन्तरं तानि प्रशस्तानि भव्यानां भवन्तीति प्रशस्तमरणद्वयप्रज्ञापनायाह—' दो मरणाइं ' इत्यादि, पूर्ववदालापकः पठनीयः ।

से गृद्धों द्वारा खा लिया जाता है इस मरण में म्रियमाण जीव ऐसा भी करता है कि जब वह विशिष्ट शक्तिवाला जीव मरने की इच्छावाला हो जाता है तब वह अपने शरीर को गृध्रादिकों द्वारा भक्ष्य मृत करि करभ आदि के कलेवर के भीतर डाल देता है इससे गृध्रादि मांस भक्षक जीव उसके पृष्ठ आदि का भक्षण करने लग जाते हैं । यह मरण कर्म निर्जरा के प्रति प्रधान कारण होता है अतः महा शक्तिशाली जीव ही इस मरण को आचरित करसकते हैं कायर पुरुष नहीं ।

कहा भी है-(गिद्धाइभक्खणं) इत्यादि । ये सब अप्रशस्त मरण कहे गये हैं इन मरणों के बाद अब सूत्रकार प्रशस्तमरणों को कहते हैं-ये प्रशस्त मरण भव्य जीवोंको होतेहैं (दो मरणाइं) इत्यादि यहां पर

જ્યારે તે વિશિષ્ટ શક્તિસંપન્ન જીવ મરવાની ઇચ્છાવાળો બને છે ત્યારે તે પોતાના શરીરને મૃત હાથી આદિના કલેવરમાં નાખી દે છે ગીધ આદિ માંસભક્ષક જીવો જ્યારે તે હાથી આદિના શરીરનું માંસ ખાવા આવે છે ત્યારે તે મૃતકલેવરમાં રહેલા તે શરીરના પીઠ આદિ ભાગોનું માંસ પણ તેમના દ્વારા ખવાય છે આ પ્રકારનું મરણ કર્મનિર્જરાના મુખ્ય કારણરૂપ હોય છે મહાશક્તિશાળી પુરુષો જ આ પ્રકારના મરણથી મરી શકે છે-કાયરો તો આ મરણ મરવાની હિંમત જ કરી શકતા નથી

પરન્તુ અમુક સંજોગોમાં આ બન્ને મરણોનો નિષેધ નથી-દર્શનમાલિન્ય, શીલભંગ આદિ રૂપ કારણો ઉપસ્થિત થાય ત્યારે તેમની રક્ષાને માટે તે બન્ને પ્રકારના મરણોનો નિષેધ નથી. જેમકે ઉદાયિનૃપાનુભૂત તથાવિધ આચાર્યનું મરણ કહ્યું પણ છે કે— " ગિદ્ધાઇભક્ખણં " ઇત્યાદિ

આ સૂત્રમાં કહ્યા અનુસાર ગીધાદિ દ્વારા શરીરનું ભક્ષણ કરાવવાથી જે મરણ થાય છે તેને અપ્રશસ્ત કહેવામાં આવેલ છે

હવે સૂત્રકાર પ્રશસ્ત મરણોની પ્રરૂપણા કરે છે—" દો મરણાઇં " ઇત્યાદિ—

तेरेकदेशे ग्रहणाच्छरीरस्य तत्प्रदेशान्निर्हरणं-निस्सारण क्रियते तत्, यस्मिंस्तु गिरिकन्दरादौ गत्वा ग्रहणेन तत्प्रदेशाच्छरीरस्य निर्हरणं—निस्सारणं न क्रियते तद् अनिर्हारिमं कथ्यते । एतत् द्विविधमपि पादपोपगमनं 'णियमं' ति विभक्तिव्यत्ययेन नियमात् न तु भजनया अप्रतिकर्म—शरीरप्रतिक्रियारहितं भवति। शरीरसेवा वर्जितमित्यर्थः ८।

आह च तत्स्वरूपम्—

" णिच्चलणिप्पडिकम्मो, णिक्खिवए जं जहिं जहा अंगं ।
एयं पाओवगमं णीहारिं वा अणीहारिं ॥ १ ॥
पाओवगमं भणियं, समविसमो पायवोव्वजह पडिओ ।
णवरं परप्पओगा, कंपेज्ज जहा फलतरुव्व ॥ २ ॥

छाया—निश्चलनिष्प्रतिकर्मा निक्षिपति यद् यत्र यथा—अङ्गम् ।
एतत् पादोपगमं, निर्हारिमं वा अनिर्हारिमम् ॥ १ ॥
पादोपगमं भणितं, समविषमः पादप इव यथा पतितः ।
नवरं परप्रयोगात् कम्पते यथा फलतरुरिव ॥२॥ इति ।

एवमेव भक्तप्रत्याख्यानमपि निर्हारिमाऽनिर्हारिमभेदेन द्विविधं, व्याख्या

सूत्र द्वारा प्रकट की गई है—पादपोपगमन के दो भेद इस प्रकार से हैं —एक निर्हारिम और दूसरा अनिर्हारिम वसति के जिस एकदेश में पादपोपगमन संथारा धारण किया गया है उसी वसतीसे संथारा पूर्ण होने पर जो शरीर का बाहर निकालना होता है वह निर्हारिम पादपोपगमन है और जिस गिरिकन्दरा में जाकर यह संथारा ग्रहण किया गया है वह अनिर्हारिम पादपोपगमन संथारा है यह दोनों प्रकार का पादपोपगमनसंथारा नियम से, भजना से नहीं सेवा सुश्रूषा से रहित होता है ऐसा ही इसका स्वरूप कहा गया है—(णिच्चलणि पडिकम्मो) इत्यादि।

इसी तरह भक्तप्रत्याख्यान मरण भी निर्हारिम और अनिर्हारिम

નીચે પ્રમાણે બે પ્રકાર છે–(૧) નિર્હારિમ અને (૨) અનિર્હારિમ વસતિના જે એક દેશમા પાદપોપગમન સથારો ધારણ કરવામા આવ્યો હોય, તે પ્રદેશ માથી જ મરણ બાદ શરીરને બહાર કાઢવામા આવે છે, ત્યારે તે સથારાને નિર્હારિમ પાદપોપગમન સંથારો કહે છે. ગિરિકન્દરામા જઇને પાદપોપગમન સંથારો ગ્રહણ કરવામા આવ્યો હોય, તોએવા પ્રકારના સંથારાને અનિર્હારિમ પાદપોપગમન સથારો કહે છે આ બન્ને પ્રકારના સંથાગ નિયમથી જ (વિકલ્પે નહીં) શરીર પ્રતિક્રિયાથી રહિત હોય છે એવું જ તેનું સ્વરૂપ કહ્યુ છે— " ણિચ્ચલણિપ્પડિકમ્મો " ઇત્યાદિ

એજ પ્રમાણે ભકતપ્રત્યાખ્યાન મરણના પણ નિર્હારિમ અને અનિર્હારિમ

चिन्तयन्ति—" धीरेण वि मरियव्वं, कापुरिसेणवि अवस्स मरियव्वं ।
तम्हा अवस्समरणे, वरं खु धीरत्तणे मरिउं ॥ १ ॥ "

छाया—धीरेणापि मर्तव्यं, का पुरुषेणापि अवश्यं मर्तव्यम् ।
तस्मादवश्यमरणे वरं खलु धीरत्वे मर्तुम् ॥ १ ॥ इति ।

भक्तस्य–त्रिविधस्य चतुर्विधस्यवाऽऽहारस्यैव, उपलक्षणादुपधरपि नतु पाद पोपगमनवच्चेष्टायाः प्रत्याख्यानं वर्जनं यस्मिन् तद् भक्तप्रत्याख्यान–मरणावधि भोजनादि परित्याग इत्यर्थः ।

आह च–" तिविहं च असणपाणं चउव्विहं जाय बाहिरा उवही ।
अब्भितरं च उवहिं जावज्जीवियं च वोसिरे ॥ १ ॥ "

छाया–त्रिविधमशनपानं चतुर्विधं यश्चबाह्य उपधिः (स) ।
आभ्यन्तरं चोपधिं यावज्जीवितं च व्युत्सृजेत् ॥ इति ॥

अनयोः प्रत्येकस्य भेदद्वयं भगवतीस्याह–' पाओवगमणे दुविहे ' इत्यादि।
पादपोपगमनं द्विविधं–निर्हारिमं अनिर्हारिमं चेति । तत्र निर्हारिमं–यस्मिन् वस-

प्रथम–वज्रऋषभनाराच संहनन के धारी धीर होते हैं वे ऐसा विचार करते हैं " धीरेण वि मरियव्वं " इत्यादि। जिस मरण में चतुर्विध आहार का या त्रिविध आहार का और उपलक्षण से उपधिका भी प्रत्याख्यान होता है पादपोपगमन की समान चेष्टा का प्रत्याख्यान नहीं होता है वह भक्तप्रत्याख्यानमरण है मरणतक चतुर्विध आहार का परित्याग ही भक्तप्रत्याख्यान है

कहा भी है–(तिविहं च असणपाणं) इत्यादि। इनमें प्रत्येक मरण दो दो भेदों वाला कहा गया है यही बात " पाओवगमणे " इत्यादि

છે તેઓ એવો વિચાર કરે છે કે—'धीरेण वि मरियव्वं' ઇત્યાદિ.

જે મરણમાં ચારે પ્રકારના આહારનો અથવા ત્રણ પ્રકારના આહારનો અને ઉપલક્ષણની અપેક્ષાએ ઉપધિનો (સાધુના ઉપકરણો) પણ ત્યાગ કરી દેવામાં આવે છે–પાદપોપગમનની જેમ ચેષ્ટાનો ત્યાગ (પ્રત્યાખ્યાન દ્વારા ત્યાગ) કરાતો નથી, તે મરણને ભક્તપ્રત્યાખ્યાન મરણ કહે છે મરણ પર્યન્ત ચતુર્વિધ આહારના પરિત્યાગને જ ભક્તપ્રત્યાખ્યાન કહે છે કહ્યું પણ છે— ' तिविहं च असणपाणं ' ઇત્યાદિ.

ઉપર કહેલા બન્ને પ્રકારના મરણના પણ બબ્બે ભેદો છે. એ જ વાત " पाओवगमणे " ઇત્યાદિ સૂત્ર દ્વારા પ્રકટ કરી છે પાદપોપગમન મરણના

तैरेकदेशे ग्रहणाच्छरीरस्य तत्प्रदेशान्निर्हरणं-निस्सारणं क्रियते तत्, यस्मिंस्तु गिरिकन्दरादौ गत्वा ग्रहणेन तत्प्रदेशाच्छरीरस्य निर्हरणं-निस्सारणं न क्रियते तद् अनिर्हारिमं कथ्यते । एतत् द्विविधमपि पादपोपगमनं 'णियमं' ति विभक्तिव्यत्ययेन नियमात् न तु भजनया अप्रतिकर्म-शरीरप्रतिक्रियारहितं भवति। शरीरसेवा वर्जितमित्यर्थः ८।

आह च तत्स्वरूपम्—

"णिच्चलणिप्पडिकम्मो, णिक्खिवए जं जहिं जहा अंगं ।
एयं पाओवगमं णीहारिं वा अणीहारिं ॥ १ ॥
पाओवगमं भणियं, समविसमो पायवोव्वजह पडिओ ।
णवरं परप्पओगा, कंपेज्ज जहा फलतरुव्व ॥ २ ॥

छाया—निश्चलनिष्प्रतिकर्मा निक्षिपति यद् यत्र यथा-अङ्गम् ।
एतत् पादोपगमं, निर्हारिमं वा अनिर्हारिमम् ॥ १ ॥
पादोपगमं भणितं, समविषमः पादप इव यथा पतितः ।
नवरं परप्रयोगात् कम्पते यथा फलतरुरिव ॥२॥ इति ।

एवमेव भक्तप्रत्याख्यानमपि निर्हारिमाऽनिर्हारिमभेदेन द्विविधं, व्याख्या

सूत्र द्वारा प्रकट की गई है-पादपोपगमन के दो भेद इस प्रकार से हैं -एक निर्हारिम और दूसरा अनिर्हारिम वसति के जिस एकदेश में पादपोपगमन संथारा धारण किया गया है उसी वस्तीसे संथारा पूर्ण होने पर जो शरीर का बाहर निकालना होता है वह निर्हारिम पादपोपगमन है और जिस गिरिकन्दरा में जाकर यह संथारा ग्रहण किया गया है वह अनिर्हारिम पादपोपगमन संथारा है यह दोनों प्रकार का पादपोपगमनसंथारा नियम से, भजना से नहीं सेवा सुश्रूषा से रहित होता है ऐसा ही इसका स्वरूप कहा गया है-(णिच्चलणि पडिकम्मो) इत्यादि।

इसी तरह भक्तप्रत्याख्यान मरण भी निर्हारिम और अनिर्हारिम

નીચે પ્રમાણે બે પ્રકાર છે-(૧) નિર્હારિમ અને (૨) અનિર્હારિમ વસતિના જે એક દેશમા પાદપોપગમન સથારો ધારણ કરવામા આવ્યો હોય, તે પ્રદેશ માથી જ મરણ બાદ શરીરને બહાર કાઢવામા આવે છે, ત્યારે તે સથારાને નિર્હારિમ પાદપોપગમન સથારો કહે છે. ગિરિકન્દરામા જઇને પાદપોપગમન સંથારો ગ્રહણ કરવામા આવ્યો હોય, તોએવા પ્રકારના સંથારાને અનિર્હારિમ પાદપોપગમન સથારો કહે છે આ બન્ને પ્રકારના સથારા નિયમથી જ (વિકલ્પે નહીં) શરીર પ્રતિક્રિયાથી રહિત હોય છે એવું જ તેનું સ્વરૂપ કહ્યુ છે— "णिचलणिप्पडिकम्मो" ઇત્યાદિ

એજ પ્રમાણે ભકતપ્રત્યાખ્યાન મરણના પણ નિર્હારિમ અને અનિર્હારિમ

पूर्ववत्, नवरम्—एतद् नियमात् सप्रतिकर्म—यथासमाधि शरीरप्रतिक्रियासहितं भवति, अस्मिन् समाधिमपेक्ष्य शरीरस्य प्रतिक्रिया क्रियते इति भावः ९। इङ्गितमरणन्त्विह द्विस्थानकानुरोधान्नकथितम्। अस्मिंश्च — नियमाच्चतुर्विधाहारत्यागः, परपरिकर्मविवर्जनं च भवति। स्थण्डिले एकाकी छायात उष्णमुष्णतश्च छायां सङ्क्रामन्निङ्गितभूमौ सचेष्टः सम्यग्ध्यानपरायणः प्राणान् जहातीति।

उक्तश्च—" इंगिय देसंमि सयं, चउव्विहाहारचायनिप्फन्नं।
उव्वत्तणाइजुत्तं, नऽन्नेण उ इंगिणीमरणं ॥ १ ॥
छाया—इङ्गितदेशे स्वयं चतुर्विधाहारत्यागनिष्पन्नम्।
उद्वर्तनादियुक्तं नान्येन त्विङ्गितमरणम् ॥ इति ॥ सू० ७५ ॥

के भेद से दो प्रकार का है, निर्हारिम और अनिर्हारिम की व्याख्या पहिले जैसी ही है पादपोपगमन संथारा की अपेक्षा इस भक्तप्रत्याख्यान संथारे में विशेषता केवल इतनी सी ही है कि यह संथारा सप्रतिकर्म होता है अर्थात् समाधि के अनुसार यह शरीर की प्रतिक्रिया सहित होता है इसमें समाधि की अपेक्षा रखकर शरीर की प्रतिक्रिया की जाती है ९। एक मरण इङ्गितमरण भी है पर द्विस्थानक के अनुरोध से उसका यहां कथन नहीं किया गया है इङ्गितमरण में नियम से चारों प्रकार के आहार का त्याग रहता है, और दूसरों के द्वारा परिकर्म करने का विवर्जन रहता है अर्थात् दूसरा वैयावृत्य नहीं करता है यह स्थंडिल में अकेला रहता है छाया से धूप में और धूप से छाया में आना जाता है इङ्गित भूमि में सचेष्ट रहता हुआ वह सम्यग्ध्यान में लवलीन रहता है और इसी स्थिति में अपने प्राणों को छोड़ता है। कहा भी है—
(इंगिय देसंमि सयं) इत्यादि ॥ सू०७५ ॥

નામના બે ભેદ કહ્યા છે નિર્હારિમ અને અનિર્હારિમની વ્યાખ્યા ઉપર પ્રમાણે જ સમજવી. પાદપોપગમન સંથારા કરતાં ભક્તપ્રત્યાખ્યાન સંથારામાં એટલી જ વિશેષતા છે કે આ સંથારો સપ્રતિકર્મ હોય છે, એટલે કે સમાધિ અનુસાર તે શરીરની પ્રતિક્રિયા (સેવા સુશ્રૂષા) સહિત હોય છે તેમાં સમાધિની અપેક્ષાએ શરીરની પ્રતિક્રિયા કરવામાં આવે છે ॥ ૯ ॥

ઇંગિતમરણ નામનું બીજું એક મરણ પણ પ્રશસ્ત ગણાય છે પણ અહીં બે સ્થાનોનો અધિકાર ચાલતો હોવાથી, તેનો સમાવેશ કર્યો નથી. આ પ્રકારના મરણમાં પણ નિયમથી જ ચારે પ્રકારના આહારોનો પરિત્યાગ કરાય છે આ પ્રકારનો સંથારો કરનાર સાધુ અન્યના દ્વારા થતી વૈયાવૃત્યનો પણ પરિત્યાગ કરે છે તે સ્થંડિલમાં (બહારની ભૂમિમાં) એકલો રહે છે છાંયડામાંથી તડકામાં અને તડકામાંથી છાંયડામાં જાતે જ આવે જાય છે ઇંગિત ભૂમિમાં સચેષ્ટ

इदं च मरणादि स्वरूपं भगवता लोके प्ररूपितमिति प्रश्नोत्तररूपेण लोकस्वरूपप्ररूपणामाह—

मूलम्—के अयं लोगे? जीवच्चेव अजीवच्चेव। के अणंता लोए? जीवच्चेव अजीवच्चेव। के सासया लोए? जीवच्चेव अजीवच्चेव ॥ सू० ४६ ॥

छाया—कोऽयं लोकः? जीवाश्चैव अजीवाश्चैव। केऽनन्तालोके? जीवाश्चैव अजीवाश्चैव। के शाश्वतालोके? जीवाश्चैव अजीवाश्चैव ॥ सू० ४६ ॥

टीका—'के अयं इत्यादि। अयं लोकः कः इति प्रश्नः। अत्र 'इदम्' शब्दो देशतः प्रत्यक्षस्य आसन्नस्य च वाचकः। यत्र भगवताऽप्रशस्तप्रशस्तमरणादि समस्तवस्तुस्तोमतत्त्वमभिहितं स इत्यर्थः। लोकः—लोक्यते केवलालोकेन यः स लोकः—पञ्चास्तिकायात्मकः, सोऽय लोकः कः=कथंभूतः? इति प्रष्टुराशयः। उत्तरमाह—जीवाश्च अजीवाश्चेति जीवाजीवस्वरूपो लोक—इत्यर्थः। लोक-

---

इस प्रकार के इन मरणों का स्वरूप भगवान् ने इस श्लोक में प्ररूपित किया है अतः अब सूत्रकार प्रश्नोत्तर के रूप से लोक के स्वरूप का कथन करते हैं-(के अयं लोगे? जीवच्चेव अजीवच्चेव) इत्यादि।

टीकार्थ-यह लोक क्याहै? ऐसा यह प्रश्न है अतः भगवान् ने जहां पर अप्रशस्त और प्रशस्त मरणादिरूप समस्तवस्तुओं का स्वरूप कथन किया है ऐसा वह लोक है? इसके उत्तर में कहा गया है कि "जीवाश्चैव अजीवाश्चैव" यह लोक जीव और अजीवरूप है-अर्थात् पञ्चास्तिकायरूप यह लोक है केवलरूप आलोक (प्रकाश) के द्वारा जो देखा जाता

રહેતો એવો તે સમ્યગ્ ધ્યાનમા લીન રહે છે અને એ સ્થિતિમાં જ પોતાનાં પ્રાણ છોડે છે કહ્યુ પણ છે કે-"इंगिय देसंमि सय" ઇત્યાદિ. ॥ સૂ. ૪૫ ॥

ભગવાને આ પ્રકારના આ મરણોનું સ્વરૂપ આ લોકમાં પ્રરૂપિત કર્યું છે. તેથી હવે સૂત્રકાર 'પ્રશ્નોત્તર રૂપે લોકના સ્વરૂપનું નિરૂપણ કરે છે—

"के अयं लोगे? जीवेचेव अजीवेचेव" ઇત્યાદિ—

ટીકાર્થ-"આ લોક શુ છે?" આ પ્રકારનો પ્રશ્ન અહીં પૂછવામાં આવ્યો છે. એટલે કે ભગવાને જ્યા અપ્રશસ્ત અને પ્રશસ્ત મરણાદિરૂપ સમસ્ત વસ્તુઓના સ્વરૂપનુ કથન કર્યું છે એવો તે લોક કેવા સ્વરૂપવાળો છે તેના ઉત્તર રૂપે એવું કહેવામાં આવ્યુ છે કે-"जीवाश्चैव अजीवाश्चैव" આ લોક જીવ અને અજીવ રૂપ છે એટલે કે પંચાસ્તિકાય રૂપ આ લોક છે કેવળજ્ઞાન રૂપ આલોક (પ્રકાશ) દ્વારા જેને દેખી શકાય છે, તે લોક કહેવાય છે અને એવો તે લોક જીવાજીવસ્વરૂપ છે.

पूर्ववत् , नवरम्-एतद् नियमात् समतिकर्म-यथासमाधि शरीरप्रतिक्रियासहितं भवति, अस्मिन् समाधिमपेक्ष्य शरीरस्य प्रतिक्रिया क्रियते इति भावः ९ । इङ्गित-मरणस्विह द्विस्थानकानुरोधान्नकथितम् । अस्मिश्च — नियमाच्चतुर्विधाहारत्यागः, परपरिकर्मविवर्जनं च भवति । स्थण्डिले एकाकी छायात उष्णमुष्णतश्च छायां संक्रामन्निङ्गितभूमौ सचेष्टः सम्यग्ध्यानपरायणः प्राणान् जहातीति ।

उक्तञ्च—" इंगिय देसंमि सयं, चउव्विहाहारचायनिप्फण्णं ।
उव्वत्तणाइजुत्तं, नऽण्णेण उ इंगिणीमरणं ॥ १ ॥

छाया—इङ्गितदेशे स्वयं चतुर्विधाहारत्यागनिष्पन्नम् ।
उद्वर्तनादियुक्तं नान्येन त्विङ्गितमरणम् ॥ इति ॥ सू० ४५ ॥

के भेद से दो प्रकार का है, निर्हारिम और अनिर्हारिम की व्याख्या पहिले जैसी ही है पादपोपगमन संथारा की अपेक्षा इस भक्तप्रत्याख्यान संथारे में विशेषता केवल इतनी सी ही है कि यह संथारा सप्रतिकर्म होता है अर्थात् समाधि के अनुसार यह शरीर की प्रतिक्रिया सहित होता है इसमें समाधि की अपेक्षा रखकर शरीर की प्रतिक्रिया की जाती है ९। एक मरण इङ्गितमरण भी है पर द्विस्थानक के अनुरोध से उसका यहां कथन नहीं किया गया है इङ्गितमरण में नियम से चारों प्रकार के आहार का त्याग रहता है, और दूसरों के द्वारा परिकर्म करने का विवर्जन रहता है अर्थात् दूसरा वैयावच नहीं करता है यह स्थंडिल में अकेला रहता है छाया से धूप में और धूप से छाया में आता जाता है इङ्गित भूमि में सचेष्ट रहता हुआ यह सम्यग्ध्यान में तल्लीन रहता है और इसी स्थिति में अपने प्राणों को छोड़ता है। कहा भी है-

(इंगिय देसंमि सयं) इत्यादि ॥ सू ४५ ॥

નામના બે ભેદ કહ્યા છે. નિર્હારિમ અને અનિર્હારિમની વ્યાખ્યા ઉપર પ્રમાણે જ સમજવી. પાદપોપગમન સંથારા કરતાં ભક્તપ્રત્યાખ્યાન સંથારામાં એટલી જ વિશેષતા છે કે આ સંથારો સપ્રતિકર્મ હોય છે, એટલે કે સમાધિ અનુસાર તે શરીરની પ્રતિક્રિયા (સેવા શુશ્રૂષા) સહિત હોય છે તેમાં સમાધિની અપેક્ષાએ શરીરની પ્રતિક્રિયા કરવામાં આવે છે ॥ ૯ ॥

ઇંગિતમરણ નામનું બીજું એક મરણ પણ પ્રશસ્ત ગણાય છે પણ અહીં બે સ્થાનોનો અધિકાર ચાલતો હોવાથી, તેનો સમાવેશ કર્યો નથી. આ પ્રકારના મરણમાં પણ નિયમથી જ ચારે પ્રકારના આહારોનો પરિત્યાગ કરાય છે આ પ્રકારનો સંથારો કરનાર સાધુ અન્યના દ્વારા થતી વૈયાવૃત્યનો પણ પરિત્યાગ કરે છે તે સ્થંડિલમાં (બહારની ભૂમિમાં) એકલો રહે છે છાંયડામાંથી તડકામાં અને તડકામાંથી છાંયડામાં આવે જ આવે જાય છે ઇંગિત ભૂમિમાં સચેષ્ટ

इदं च मरणादि स्वरूपं भगवता लोके प्ररूपितमिति प्रश्नोत्तररूपेण लोक-स्वरूपप्ररूपणामाह—

मूलम्—के अयं लोगे? जीवच्चेव अजीवच्चेव। के अणंता लोए? जीवच्चेव अजीवच्चेव। के सासया लोए? जीवच्चेव अजीवच्चेव ॥ सू० ४६ ॥

छाया—कोऽयं लोकः? जीवाश्चैव अजीवाश्चैव। केऽनन्तालोके? जीवाश्चैव अजीवाश्चैव। के शाश्वतालोके? जीवाश्चैव अजीवाश्चैव ॥ सू० ४६ ॥

टीका—'के अयं इत्यादि। अयं लोकः कः इति प्रश्नः। अत्र 'इदम्' शब्दो देशतः प्रत्यक्षस्य आसन्नस्य च वाचकः। यत्र भगवताऽप्रशस्तप्रशस्तम रमरणादि समस्तवस्तुस्तोमतत्त्वमभिहितं स इत्यर्थः। लोकः—लोक्यते केवलालोकेन यः स लोकः—पञ्चास्तिकायात्मक, सोऽय लोकः कः=कथंभूतः? इति प्रष्टुराशयः। उत्तरमाह—जीवाश्च अजीवाश्चेति जीवाजीवस्वरूपो लोक—इत्यर्थः। लोक-

---

इस प्रकार के इन मरणों का स्वरूप भगवान् ने इस श्लोक में प्ररूपित किया है अतः अब सूत्रकार प्रश्नोत्तर के रूप से लोक के स्वरूप का कथन करते हैं-(के अयं लोगे? जीवच्चेव अजीवच्चेव) इत्यादि।

टीकार्थ-यह लोक क्याहै? ऐसा यह प्रश्न है अतः भगवान् ने जहां पर अप्रशस्त और प्रशस्त मरणादिरूप समस्तवस्तुओं का स्वरूप कथन किया है ऐसा वह लोक है? इसके उत्तर में कहा गया है कि "जीवाश्चैव अजीवाश्चैव" यह लोक जीव और अजीवरूप है-अर्थात् पञ्चास्तिकायरूप यह लोक है केवलरूप आलोक (प्रकाश) के द्वारा जो देखा जाता

રહેતા એવા તે સમ્યગ્ ધ્યાનમા લીન રહે છે અને એ સ્થિતિમા જ પોતાનાં પ્રાણ છોડે છે કહ્યુ પણ છે કે-" इगिय देसंमि सय " ઈત્યાદિ ॥ સૂ. ૪૫ ॥

ભગવાને આ પ્રકારના આ મરણોનું સ્વરૂપ આ લોકમાં પ્રરૂપિત કર્યું છે તેથી હવે સૂત્રકાર 'પ્રશ્નોત્તર રૂપે લોકના સ્વરૂપનું' નિરૂપણ કરે છે—

" के अयं लोगे? जीवेचेव अजीवेचेव " ઈત્યાદિ—

ટીકાર્થ-"આ લોક શુ છે?" આ પ્રકારનો પ્રશ્ન અહીં પૂછવામાં આવ્યો છે. એટલે કે ભગવાને જ્યા અપ્રશસ્ત અને પ્રશસ્ત મરણાદિરૂપ સમસ્ત વસ્તુઓના સ્વરૂપનુ કથન કર્યું છે એવો તે લોક કેવા સ્વરૂપવાળો છે તેના ઉત્તર રૂપે એવું કહેવામા આવ્યુ છે કે-" जीवाश्चैव अजीवाश्चैव " આ લોક જીવ અને અજીવ રૂપ છે એટલે કે પંચાસ્તિકાય રૂપ આ લોક છે કેવળજ્ઞાન રૂપ આલોક (પ્રકાશ) દ્વારા જેને દેખી શકાય છે, તે લોક કહેવાય છે અને એવો તે લોક જીવાજીવસ્વરૂપ છે.

स्वरूपभूतानां च जीवाजीवानां स्वरूप प्रश्नपूर्वकं सूत्रद्वयेनाह—'के अणंता' इत्यादि, 'के सासया' इत्यादि च, लोके केपदार्था अनन्ताः सन्ति, उत्तरमाह —जीवा अजीवाश्चेति। अथ च के शाश्वताः सन्ति? उत्तरयति—जीवाश्च अजीवाश्च द्रव्यार्थतयेति ॥ सू० ४६ ॥

य चैते लोके जीवा अनन्ताः शाश्वताश्च सन्ति ते बोधि-मोहलक्षणधर्मद्वय-योगाद् बुद्धा मूढाश्च भवन्तीति दर्शयितुं सूत्रचतुष्टयमाह—

सूत्रम्—दुविहा बोही पण्णत्ता तं जहा णाणबोही चेव दंसण बोही चेव१। दुविहा बुद्धा पण्णत्ता तं जहा—णाणबुद्धा चेव दंसणबुद्धा चेव २। एवं मोहे ३, मूढा ४ ॥ सू० ४७ ॥

छाया—द्विविधा बोधिः प्रज्ञप्ता, तद्यथा—ज्ञानबोधिश्चैव दर्शनबोधिश्चैव १। द्विविधा बुद्धाः प्रज्ञप्तास्तद्यथा—ज्ञानबुद्धाश्चैव दर्शनबुद्धाश्चैव २। एवं मोहः ३, मूढाः ४ ॥ सू० ४७ ॥

है वह लोक है और वह लोक जीवाजीवस्वरूप है लोक में कौन पदार्थ अनन्त हैं और कौन पदार्थ शाश्वत हैं? इसके उत्तर में कहा गया है कि लोक में जीव और अजीव ये पदार्थ अनन्त हैं और ये ही पदार्थ शाश्वत हैं। इन पदार्थों में शाश्वतता का कथन द्रव्यार्थिक नय की अपेक्षा से कहा गया जानना चाहिये ॥ सू० ४६ ॥

लोक में जो ये जीव अनन्त और शाश्वत कहे गये हैं वे बोधि और मोह के योग से क्रमशः बुद्ध और मूढ होते हैं—सो इसी बात को दिखाने के लिये अब सूत्रकार इस सूत्र चतुष्टयी का कथन कर रहे हैं—

(दुविहा बोही पण्णत्ता) इत्यादि।

' લોકમાં ક્યા ક્યા પદાર્થો અનંત છે અને ક્યા ક્યા પદાર્થો શાશ્વત છે? આ પ્રશ્નના ઉત્તર રૂપે આ પ્રમાણે કહ્યું છે—લોકમાં જીવ અને અજીવ, આ પદાર્થો અનંત છે અને એ પદાર્થો જ શાશ્વત છે. આ પદાર્થોમાં જે શાશ્વતતા બતાવવામાં આવી છે તે શાશ્વતતાનું કથન દ્રવ્યાર્થિક નયની અપેક્ષાએ જ કરવામાં આવ્યું છે એમ સમજવું ॥ સૂ. ૪૬ ॥

લોકમાં અનંત જીવો કહેલા છે તે જીવોને શાશ્વત કહેવામાં આવ્યા છે તે જીવો બોધિ અને મોહના યોગથી અનુક્રમે બુદ્ધ અને મૂઢ હોય છે એ જ વાતને સૂત્રકારે નીચેની સૂત્રચતુષ્ટયી દ્વારા પ્રકટ કરી છે—

"દુવિહા બોહી પણ્ણત્તા ઇત્યાદિ—

टीका—' दुविहा वोही ' इत्यादि । बोधनं बोधिः–प्राप्तिः । सा द्विविधा-ज्ञानबोधिः, दर्शनबोधिश्चेति । तत्र ज्ञानबोधिः ज्ञानावरणक्षयोपशमप्रभवा ज्ञान-प्राप्तिः । दर्शनबोधिः–दर्शनमोहनीयक्षयोपशमादिसम्पन्ना श्रद्धानप्राप्तिरिति १ । बोधिमन्तोबुद्धाः, तेऽपि द्विविधाः–ज्ञानबुद्धा दर्शनबुद्धाश्चेति । एते च धर्मत एव । भिन्ना न धर्मितया, ज्ञानदर्शनयोरन्योन्याविनाभूतत्वादिति २ । एवं यथा बोधिर्बुद्धाश्च–द्विविधाः प्रोक्तास्तथा 'मोहो मूढाश्च' इत्यपि वाच्याः, आलापकश्चैवम्–

' दुविहे मोहे पण्णत्ते तं जहा—णाणमोहे चेव दंसणमोहे चेव । दुविहा मूढा पण्णत्ता तं जहा—णाणमूढा चेव दंसणमूढा चेव इति ।

टीकार्थ–"बोधनं बोधिः" के अनुसार बोधि शब्दका अर्थ प्राप्ति है यह बोधि दो प्रकार की कही गई है एक ज्ञानबोधि और दूसरी दर्शनबोधि ज्ञानावरणकर्म के क्षयोपशम के प्रभाव से जो ज्ञान की प्राप्ति होती है वह ज्ञानबोधि है दर्शनमोहनीय कर्म के क्षयोपशम आदि से जो श्रद्धान की प्राप्ति होती है वह दर्शनबोधि है बोधि वाले जो जीव हैं वे बुद्ध हैं। ये बुद्ध भी दो प्रकार के होते है एक ज्ञानबुद्ध और दूसरे दर्शनबुद्ध ये धर्म की अपेक्षा से ही भिन्न हैं धर्मिरूप से भिन्न नहीं हैं। क्यों कि ज्ञान और दर्शन ये परस्पर में अविनाभावि संबंध वाले हैं।

जिस प्रकार बोधि और बुद्ध दो प्रकार के कहे गये हैं उसी प्रकार से मोह और मूढ ये भी दो प्रकार के कहे गये हैं। इस विषयक आलापक इस प्रकारसे है–"दुविहे मोहे पण्णत्ते" मोह दो प्रकार का कहा गया है (णाण मोहे चेव दंसणमोहे चेव) एक ज्ञानमोह और दूसरा दर्शनमोह

ટીકાર્થ–"બોધનં બોધિ" આ વ્યુત્પત્તિ અનુસાર બોધિ શબ્દનો અર્થ જૈનધર્મની પ્રાપ્તિ છે તે બોધિ બે પ્રકારની કહી છે-(૧) જ્ઞાનબોધિ અને (૨) દર્શનબોધિ જ્ઞાનાવરણીય કર્મના ક્ષયોપશમથી જે જ્ઞાનની પ્રાપ્તિ થાય છે, તેનું નામ જ્ઞાનબોધિ છે દર્શનમોહનીય કર્મના ક્ષયોપશમ આદિથી જે શ્રદ્ધાની પ્રાપ્તિ થાય છે, તેને દર્શનબોધિ કહે છે. બોધિવાળા જીવોને બુદ્ધ કહે છે તે બુદ્ધના પણ બે પ્રકાર છે-(૧) જ્ઞાનબુદ્ધ અને (૨) દર્શનબુદ્ધ તેઓ ધર્મની અપેક્ષાએ જ ભિન્ન છે, ધર્મીરૂપે ભિન્ન નથી કારણ કે જ્ઞાન અને દર્શન વચ્ચે અવિનાભાવી સબંધ હોય છે

જેમ બોધિ અને બુદ્ધ બે પ્રકારના કહ્યા છે, એ જ પ્રમાણે મોહ અને મૂઢ પણ બે પ્રકારના કહ્યા છે આ વિષયનું કથન નીચે પ્રમાણે છે—

"दुविहे मोहे पण्णत्ते" મોહ બે પ્રકારનો કહ્યો છે–"णाणमोहेचेव दंसणमोहेचेव" (૧) જ્ઞાનમોહ અને (૨) દર્શનમોહ. એ જ પ્રમાણે મૂઢ પણ

छाया—द्विविधो मोहः प्रज्ञप्तस्तद्यथा-ज्ञानमोहश्चैव दर्शनमोहश्चैव । द्विविधा मूढाः प्रज्ञप्तास्तद्यथा – ज्ञानमूढाश्चैव दर्शनमूढाश्चैव, इति । व्याख्या सुगमा, नवरम्-ज्ञानं मोहयति-आच्छादयतीति ज्ञानमोहः—ज्ञानावरणोदयः । एवं दर्शनं मोहयतीति दर्शनमोहः–सम्यग्ज्ञानमोहोदयः । तथा ज्ञानमूढा –उदितज्ञानावरणाः दर्शनमूढा मिथ्यादृष्टय इति ॥ सू० ४७ ॥

द्विविधोऽप्ययं मोहो ज्ञानावरणादि कर्मनिबन्धनमस्तीति सम्बन्धेन ज्ञानावरणादिकर्मणां द्वैविध्यमाह सूत्रैराह—

मूलम्——णाणावरणिज्जे कम्मे दुविहे पण्णत्ते तं जहा-देसणाणावरणिज्जे चेव सव्वणाणावरणिज्जे चेव१ । दरिसणावरणिज्जे कम्मे एवं चेव २ । वेयणिज्जे कम्मे दुविहे पण्णत्ते तं जहा–सायावेयणिज्जे चेव असायावेयणिज्जे चेव ३ । मोहणिज्जे कम्मे दुविहे पण्णत्ते तं जहा–दंसणमोहणिज्जे चेव चरित्तमोहणिज्जे चेव ४। आउए कम्मे दुविहे पण्णत्ते तं जहा–

इसी प्रकार "दुविहा मूढा पण्णत्ता" मूढ दो प्रकारके कहे गयेहैं–(णाणमूढा चेव दंसणमूढा चेव) एक ज्ञानमूढ और दूसरा दर्शनमूढ, ज्ञानावरणोदय ज्ञानमोह है क्यों कि–"ज्ञानं मोहयति आच्छादयतीति" इस व्युत्पत्ति के अनुसार यह ज्ञान को आच्छादित करता है इसी प्रकार से–"दर्शनं मोहयतीति दर्शनमोहः" दर्शनमोहनीय का उदय दर्शनमोह इस दर्शनमोह के उदय में सम्यग्दर्शन का जीव के उदय नहीं होता है जिनके ज्ञानावरण कर्म का उदय है वे ज्ञानमूढ हैं तथा जिनके मिथ्यादर्शन का उदय है ऐसे मिथ्यादृष्टि जीव दर्शनमूढ हैं । सू०४७॥

બે પ્રકારના કહ્યા છે- णाणमूढाचेव दंसणमूढ चेव (૧) જ્ઞાનમૂઢ અને (૨) દર્શનમૂઢ જ્ઞાનાવરણોદય જ્ઞાનમોહ રૂપ છે, કારણ કે " ज्ञानं मोहयति आच्छादयतीति " આ વ્યુત્પત્તિ અનુસાર તે જ્ઞાનને આચ્છાદિત કરે છે એજ પ્રમાણે " दर्शनं मोहयतीति दर्शनमोहः " દર્શન મોહનીયનો ઉદય દર્શન મોહરૂપ છે તે દર્શનમોહનો ઉદય હોય ત્યારે જીવમાં સમ્યગ્-દર્શનનો ઉદય હોતો નથી. જેમના જ્ઞાનાવરણીય કર્મનો ઉદય હોય છે એવાં જીવો જ્ઞાનમૂઢ હોય છે અને જેમના મિથ્યાદર્શનનો ઉદય હોય છે એવાં મિથ્યાદૃષ્ટિ જીવો દર્શનમૂઢ હોય છે ॥ સૂ ૪૭ ॥

अद्धाउए चेव भवाउए चेव । णामे कम्मे दुविहे पण्णत्ते तं जहा--सुभणामे चेव असुभणामे चेव ६। गोत्ते कम्मे दुविहे पण्णत्ते तं जहा- उच्चागोत्ते चेव णीयागोत्ते चेव७ । अंतराइए कम्मे दुविहे पण्णत्ते तं जहा--पडुप्पन्नविणासए चेव पिहिय आगामिपहं चेव ॥सू०४८॥

छाया—ज्ञानावरणीयं कर्म द्विविधं प्रज्ञप्तं तद्यथा – देशज्ञानावरणीयं चैव सर्वज्ञानावरणीयं चैव २ । दर्शनावरणीय कर्म एवमेव २ । वेदनीयं कर्म द्विविधं प्रज्ञप्तं, तद्यथा-सातवेदनीयं चैव असातवेदनीयं चैव ३ । मोहनीयं कर्म द्विविधं प्रज्ञप्तं, तद्यथा-दर्शनमोहनीयं चैव चारित्रमोहनीय चैव ४ । आयुष्कं कर्म द्विविधं प्रज्ञप्तं, तद्यथा-अद्धायुष्कं चैव भवायुष्कं चैव ५ । नामकं कर्म द्विविधं प्रज्ञप्तं, तद्यथा-शुभनाम चैव अशुभनाम चैव । गोत्रं कर्म द्विविधं प्रज्ञप्तं, तद्यथा-उच्चगोत्रं चैव नीचगोत्रं चैव ७ । आन्तरायिकं कर्म द्विविधं प्रज्ञप्तं, तद्यथा-प्रत्युपन्नविनाशितं चैव पिहितागामिपथं चैव ॥ सू० ४८ ॥

टीका-' णाणावरणिज्जे ' इत्यादि ।

ज्ञानमावृणोति-समाच्छादयतीति ज्ञानावरणीयम् ।

आह च-" सर उग्गयससिनिम्मल,-यरस्स जीवस्स छायणं जमिह ।
णाणावरणं कम्मं, पडोवमं होइ एव तु ॥ २ ॥ "

दोनों प्रकार का भी यह मोह ज्ञानावरणादि कर्मो का कारण होता है इस सम्बन्ध से ज्ञानावरणादि कर्मो की द्विविधता सूत्रकार इस अष्टसूत्र द्वारा प्रकट करते हैं-(णाणावरणिज्जे कम्मे दुविहे पण्णत्ते इत्यादि ।

टीकार्थ-ज्ञानावरणीय कर्म दो प्रकारका कहा गयाहै यह ज्ञानावरणीय कर्म आत्मा के ज्ञानगुण को आच्छादित करता है इसलिये इसे पट की उपमा दी गई है। कहा भी है-(सर उग्गय ससिनिम्मलयरस्स)

ઉપર કહેલ બન્ને પ્રકારનો મોહ જ્ઞાનાવરણાદિ કર્મોનું કારણ હોય છે તે કારણે સૂત્રકાર જ્ઞાનાવરણાદિ કર્મોની દ્વિવિધતા નીચેના આઠ સૂત્રો દ્વારા પ્રકટ કરે છે.

" णाणावरणिज्जे कम्मे दुविहे पण्णत्ते " ઈત્યાદિ—

ટીકાર્થ-જ્ઞાનાવરણીય કર્મના બે પ્રકાર કહ્યા છે આ જ્ઞાનાવરણીય કર્મ આત્માના ગુણને આચ્છાદિત કરી નાખે છે, તેથી તેને પટની (પડદાની) ઉપમા આપી છે. કહ્યું પણ છે કે-" सर उग्गय ससि निम्मलयरस्स " ઈત્યાદિ—

छाया—शरदुत्तरशशिनिर्मलतरस्य जीवस्याऽऽच्छादनं यदिह ।
ज्ञानावरणं कर्म, पटोपम भवत्येवं तु ॥ इति ॥

तत्कर्म द्विविधं प्रज्ञप्तं भगवता, तद्यथा—देशज्ञानावरणीयं सर्वज्ञानावरणीयं चेति । तत्र देशज्ञानावरणीय—देश— ज्ञानस्यैकदेशमाभिनिबोधिकादिकमावृणोतीति तद्यथोक्तम् । सर्वज्ञानावरणीय—सर्वज्ञानं—केवलज्ञानमावृणोतीति तद्यथोक्तम् । केवलावरणं हि—आदित्यकल्पस्य केवलज्ञानरूपस्य जीवस्याऽऽच्छादकतया सान्द्र मेघवृन्दकल्पमिति तत्सर्वज्ञानावरणम्, मत्याद्यावरणं तु घनातिच्छादितादित्येषत्प्रभा कल्पस्य केवलज्ञानदेशस्य कटकुट्यादिरूपावरणतुल्यमस्तीति तद् देशज्ञाना

इत्यादि। अर्थात् पट जिस प्रकार से वस्तु को आच्छादित कर देता है ढक लेता है उसी प्रकार से यह ज्ञानावरणीय कर्म भी शरत्काल के चन्द्रमा जैसे निर्मल जीव के ज्ञानगुण को आच्छादित कर देता है इसलिये ज्ञान का आवारक (ढकनेवाला) होने से इस कर्म को ज्ञानावरणीय कर्म कहा गया है यह ज्ञानावरणीय कर्म देशज्ञानावरणीय और सर्व ज्ञानावरणीय के भेद से दो प्रकार है जिसके द्वारा ज्ञान के एक देशभूत आभिनिबोधिक आदि ज्ञान आवृत्त किये जाते हैं वह देशज्ञानावरणीय है तथा जिसके द्वारा केवलज्ञान आवृत्त किया जाता है वह सर्वज्ञाना वरणीय है केवलावरण आदित्यतुल्य केवलज्ञान रूप जीव का आच्छादक होने के कारण सान्द्र (घन) मेघवृन्द के जैसा है इसलिये वह सर्वज्ञानावरणीय है मति आदि का आवरण घन से आच्छादित सूर्य की ईष

એટલે કે જેવી રીતે પડદો વસ્તુને ઢાંકી દે છે એજ પ્રમાણે આ જ્ઞાનાવરણીય કર્મ પણ શરત્કાળના ચન્દ્રમા જેવાં નિર્મળ જીવના જ્ઞાનગુણને પણ ઢાંકી દે છે, આ રીતે જ્ઞાનનું આવારક (ઢાંકી દેનાર) હોવાથી આ કર્મને જ્ઞાનાવરણીય કર્મ કહે છે તે જ્ઞાનાવરણીય કર્મના બે ભેદ નીચે પ્રમાણે છે-(૧) દેશ જ્ઞાનાવરણીય અને (૨) સર્વ જ્ઞાનાવરણીય. જેના દ્વારા જ્ઞાનના એક દેશ રૂપ આભિનિબોધિક આદિ જ્ઞાનોને આવૃત (આચ્છાદિત) કરી નાખવામાં આવે છે તે કર્મનું નામ દેશજ્ઞાનાવરણીય છે તથા જેના દ્વારા કેવળજ્ઞાનને આવૃત કરવામાં આવે છે, તે કર્મનું નામ સર્વ જ્ઞાનાવરણીય છે. સૂર્ય સમાન કેવળજ્ઞાનનું આવારક કેવળાવરણીય કર્મ સાન્દ્ર (ઘન) મેઘવૃન્દના જેવું છે તેથી તેને સર્વ જ્ઞાનાવરણ રૂપ કહેલ છે મતિજ્ઞાનાવરણ આદિ ઘન (વાદળાંઓ) આચ્છાદિત સૂર્યની ઈષત્પ્રભા જેવાં કેવળજ્ઞાન દેશના સહાઈ,

धरणम् २ । तथा दर्शनं-सामान्यार्थ बोधरूपमावृणोतीति दर्शनावरणीयम् , ।

उक्तञ्च—" दंसणसीले जीवे, दंसणघायं करेइ जं कम्मं ।

त पडिहारसमाणं, दंसणावरणं भवे जीवे ॥ २ ॥"

छाया—दर्शनशीले जीवे दर्शनघातं करोति यत्कर्म ।

तत्प्रतीहारसमान दर्शनावरणं भवेज्जीवे ॥ इति ।

'एवं चेव' इति-एतदपि एवमेव-देशदर्शनावरणीय-सर्वदर्शनावरणीयं चेति द्विविधम् । तत्र देशदर्शनावरणीयं-चक्षुरचक्षुरवधिदर्शनावरणीयम् , सर्वद-र्शनावरणीयं—निद्रापञ्चकं केवलदर्शनावरणीयं कर्मापि द्विविधम्-सातवेदनीयम्

त्मभा के जैसे केवलज्ञानदेश का कटकुडयादिरूप (चटाई और भींत) आवरणतुल्य है इसलिये वह देशज्ञानावरण है तथा सामान्य अर्थ बोधरूप दर्शन का आवरणकर्ता दर्शनावरणीय कर्म है। कहा भी है-(दंसणसीले जीवे) इत्यादि ।

जिस प्रकार प्रतीहार-द्वारपाल राजा आदि के दर्शन नहीं करने देता है उसी प्रकार से यह दर्शनावरणीयकर्म भी आत्मा के दर्शनगुण को रोकता है उसका दर्शन नहीं करने देता है यह दर्शनावरणीय कर्म भी देशदर्शनावरणीय और सर्व दर्शनावरणीय के भेद से दो प्रकार का कहा गया है चक्षुदर्शन, अचक्षुदर्शन और अवधिदर्शन को रोकने वाला जो दर्शनावरणीय कर्म है वह देशदर्शनावरणीय कर्म है अर्थात् चक्षुदर्शनावरणीय, अचक्षुदर्शनावरणीय और अवधिदर्शनावरणीय ये सब देशदर्शनावरणीय हैं निद्रा, निद्रानिद्रा, प्रचला, प्रचलाप्रचला स्त्यानर्द्धि और केवलदर्शनावरणीय ये दर्शनावरणीय सर्वदर्शनावरणीय हैं,

---

દિવાલ આદિ આવરણતુલ્ય છે, તેથી તે દેશ જ્ઞાનાવરણ રૂપ છે તથા સામાન્ય અર્થબોધરૂપ દર્શનનું આવરણ કર્તા દર્શનાવરણીય કર્મ છે. કહ્યું પણ છે—" દંસણસીલે જીવે " ઇત્યાદિ—

જેવી રીતે દ્વારપાલ રાજા આદિના દર્શન કરવા જનારને રોકે છે, એજ પ્રમાણે આ દર્શનાવરણીય કર્મ પણ આત્માના દર્શનગુણને રોકે છે-તેનાં દર્શન કરવા દેતું નથી તેના પણ દેશ દર્શનાવરણીય અને સર્વ દર્શનાવરણીય નામના બે ભેદ છે ચક્ષુદર્શન, અચક્ષુદર્શન અને અવધિદર્શનને રોકનારૂં જે દર્શનાવરણીય કર્મ છે, તેને દેશ દર્શનાવરણીય કર્મ કહે છે એટલે કે ચક્ષુ દર્શનાવરણીય, અચક્ષુ દર્શનાવરણીય, અને અવધિ દર્શનાવરણીય કર્મોને દેશ દર્શનાવરણીય કહે છે. નિદ્રા, નિદ્રાનિદ્રા, પ્રચલા, પ્રચલાપ્રચલા, સ્ત્યાનર્દ્ધિ અને કેવલ દર્શનાવરણીય, આ દર્શનાવરણીયને સર્વ દર્શનાવરણીય કહે છે

छाया—शरदुडुपतिविनिर्मलतरस्य जीवस्याऽऽच्छादनं यदिह ।
ज्ञानावरणं कर्म, पटोपमं भवत्येवं तु ॥ इति ॥

तत्कर्म द्विविधं प्रज्ञप्तं भगवता, तद्यथा—देशज्ञानावरणीयं सर्वज्ञानावरणीयं चेति । तत्र देशज्ञानावरणीय—देशं— ज्ञानस्यैकदेशमाभिनिबोधिकादिकमावृणोतीति तथयोक्तम् । सर्वज्ञानावरणीय—सर्वज्ञानं—केवलज्ञानमावृणोतीति तथयोक्तम् । केवलावरणं हि—आदित्यकल्पस्य केवलज्ञानरूपस्य जीवस्याऽऽच्छादकतया सान्द्र मेघवृन्दकल्पमिति तत्सर्वज्ञानावरणम्, मत्याद्यावरणं तु घनातिच्छादितादित्येषत्प्र भाकल्पस्य केवलज्ञानदेशस्य कटकुट्यादिरूपावरणतुल्यमस्तीति तद् देशज्ञाना

इत्यादि। अर्थात् पट जिस प्रकार से वस्तु को आच्छादित कर देता है ढक लेता है उसी प्रकार से यह ज्ञानावरणीय कर्म भी शरत्काल के चन्द्रमा जैसे निर्मल जीव के ज्ञानगुण को आच्छादित कर देता है इसलिये ज्ञान का आवारक (ढकनेवाला) होने से इस कर्म को ज्ञानावरणीय कर्म कहा गया है यह ज्ञानावरणीय कर्म देशज्ञानावरणीय और सर्व ज्ञानावरणीय के भेद से दो प्रकार है जिसके द्वारा ज्ञान के एक देशभूत आभिनिबोधिक आदि ज्ञान आवृत्त किये जाते हैं वह देशज्ञानावरणीय है तथा जिसके द्वारा केवलज्ञान आवृत्त किया जाता है वह सर्वज्ञाना वरणीय है केवलावरण आदित्यतुल्य केवलज्ञान रूप जीव का आच्छादक होने के कारण सान्द्र (घन) मेघवृन्द के जैसा है इसलिये वह सर्वज्ञा नावरणीय है मति आदि का आवरण घन से आच्छादित सूर्य की ईष

એટલે કે જેવી રીતે પડો વસ્તુને ઢાંકી દે છે એજ પ્રમાણે આ જ્ઞાનાવરણીય કર્મ પણ શરદકાળના ચન્દ્રમા જેવાં નિર્મળ જીવના જ્ઞાનગુણને પણ ઢાંકી દે છે આ રીતે જ્ઞાનનું આવારક (ઢાંકી દેનાર) હોવાથી આ કર્મને જ્ઞાનાવરણીય કર્મ કહે છે તે જ્ઞાનાવરણીય કર્મના બે ભેદ નીચે પ્રમાણે છે-(૧) દેશ જ્ઞાનાવરણીય અને (૨) સર્વ જ્ઞાનાવરણીય. જેના દ્વારા જ્ઞાનના એક દેશ રૂપ આભિનિબોધિક આદિ જ્ઞાનોને આવૃત (આચ્છાદિત) કરી નાખવામાં આવે છે તે કર્મનું નામ દેશજ્ઞાનાવરણીય છે તથા જેના દ્વારા કેવળજ્ઞાનને આવૃત કરવામાં આવે છે તે કર્મનું નામ સર્વ જ્ઞાનાવરણીય છે સૂર્ય સમાન કેવળજ્ઞાનનું આવારક કેવલાવરણીય કર્મ સાન્દ્ર (ઘન) મેઘવૃન્દના જેવું છે, તેથી તેને સર્વ જ્ઞાનાવરણ રૂપ કહેલ છે મતિજ્ઞાનાવરણ આદિ ઘન (વાદળાંથી) આચ્છાદિત સૂર્યની ઈષત્પ્રભા જેવાં કેવળજ્ઞાન દેશના ગ્રાહક,

वरणम् २ । तथा दर्शनं-सामान्यार्थ बोधरूपमावृणोतीति दर्शनावरणीयम्, ।

उक्तञ्च—" दंसणसीले जीवे, दंसणघायं करेइ जं कम्मं ।
तं पडिहारसमाणं, दंसणावरणं भवे जीवे ॥ २ ॥"

छाया—दर्शनशीले जीवे दर्शनघातं करोति यत्कर्म ।
तत्प्रतीहारसमानं दर्शनावरणं भवेज्जीवे ॥ इति ।

'एवं चेव' इति-एतदपि एवमेव-देशदर्शनावरणीय-सर्वदर्शनावरणीयं चेति द्विविधम् । तत्र देशदर्शनावरणीयं-चक्षुरचक्षुरवधिदर्शनावरणीयम्, सर्वदर्शनावरणीयं—निद्रापञ्चकं केवलदर्शनावरणीयं कर्मापि द्विविधम्-सातवेदनीयम्

त्मभा के जैसे केवलज्ञानदेश का कटकुडयादिरूप (चटाई और भींत) आवरणतुल्य है इसलिये वह देशज्ञानावरण है तथा सामान्य अर्थ बोधरूप दर्शन का आवरणकर्ता दर्शनावरणीय कर्म है। कहा भी है-(दंसणसीले जीवे) इत्यादि ।

जिस प्रकार प्रतीहार-द्वारपाल राजा आदि के दर्शन नहीं करने देता है उसी प्रकार से यह दर्शनावरणीयकर्म भी आत्मा के दर्शनगुण को रोकता है उसका दर्शन नहीं करने देता है यह दर्शनावरणीय कर्म भी देशदर्शनावरणीय और सर्व दर्शनावरणीय के भेद से दो प्रकार का कहा गया है चक्षुदर्शन, अचक्षुदर्शन और अवधिदर्शन को रोकने वाला जो दर्शनावरणीय कर्म है वह देशदर्शनावरणीय कर्म है अर्थात् चक्षुदर्शनावरणीय, अचक्षुदर्शनावरणीय और अवधिदर्शनावरणीय ये सब देशदर्शनावरणीय हैं निद्रा, निद्रानिद्रा, प्रचला, प्रचलाप्रचला स्त्यानर्द्धि और केवलदर्शनावरणीय ये दर्शनावरणीय सर्वदर्शनावरणीय हैं,

---

દિવાલ આદિ આવરણતુલ્ય છે, તેથી તે દેશ જ્ઞાનાવરણ રૂપ છે તથા સામાન્ય અર્થબોધરૂપ દર્શનનું આવરણ કર્તા દર્શનાવરણીય કર્મ છે. કહ્યું પણ છે—" દંસણસીલે જીવે " ઇત્યાદિ—

જેવી રીતે દ્વારપાલ રાજા આદિના દર્શન કરવા જનારને રોકે છે, એજ પ્રમાણે આ દર્શનાવરણીય કર્મ પણ આત્માના દર્શનગુણને રોકે છે-તેનાં દર્શન કરવા દેતું નથી. તેના પણ દેશ દર્શનાવરણીય અને સર્વ દર્શનાવરણીય નામના બે ભેદ છે ચક્ષુદર્શન, અચક્ષુદર્શન અને અવધિદર્શનને રોકનારૂં જે દર્શનાવરણીય કર્મ છે, તેને દેશ દર્શનાવરણીય કર્મ કહે છે. એટલે કે ચક્ષુ દર્શનાવરણીય, અચક્ષુ દર્શનાવરણીય, અને અવધિ દર્શનાવરણીય કર્મોને દેશ દર્શનાવરણીય કહે છે. નિદ્રા, નિદ્રાનિદ્રા, પ્રચલા, પ્રચલાપ્રચલા, સ્ત્યાનર્દ્ધિ અને કેવલ દર્શનાવરણીય, આ દર્શનાવરણીયને સર્વ દર્શનાવરણીય કહે છે

असातवेदनीयं चेति । तत्र वेद्यते-अनुभूयत इति वेदनीयम्, सातं, सुखं, तद्रूप तया वेद्यते यत्तत् सातवेदनीयम्, असातरूपतया-दुःखरूपतया यद् वेद्यते तद् असातवेदनीयम्, एतद्द्वयं मधुलिप्तखड्गनिशितधाराया जिह्वया लेहनवत् (आस्वादन वत्) सुखदुःखोत्पादक विज्ञेयम् ३ । उक्तञ्च—

" महुलित्तनिसियकरवालधारजीहाए जारिसं लिहणं ।
तारिसय वेयणियं सुहदुह उप्पायगं मुणह ॥ २ ॥ "

छाया—मधुलिप्तनिशितकरवालधाराया जिह्वया यादृशं लेहनम् ।
तादृशं वेदनीयं, सुखदुःखोत्पादकं जानीत ॥ इति ३ ॥

मोहयति-सदसद्विवेकविकलं करोत्यात्मानमिति मोहनीयम्, एतत् कर्मपुरुष मद्यवत् परवशं करोति, उक्तञ्च—

वेदनीय कर्म भी दो प्रकार का होता है-एक सातावेदनीय और दूसरा असातावेदनीय जो कर्म सुखरूप से वेदित किया जाता है वह सातावेदनीय कर्म है, और जो दुःखरूप से वेदित किया जाता है वह असातावेदनीय कर्म है जिस प्रकार शहद-मधु से लिप्त हुई तलवार के चाटनेसे जीभ कट जाती है तो दुःख होता है और मधुके स्वादसे सुख होताहै इसी प्रकार यह कर्म जीवोंको सुख और दुःखका उत्पादक होताहै।

कहा भी है-(महुलित्तनिसियकरवाल) इत्यादि ।

आत्मा को जो खोटे खरे के ज्ञान से विकल-रहित कर देता है वह मोहनीयकर्म है यह कर्म मद्य की तरह जीव को बेभान कर देता है अतः जीव परवश हो जाता है मोहनीय कर्म दो प्रकार का है एक दर्शनमोहनीय और दूसरा चारित्रमोहनीय इनमें दर्शनमोहनीय कर्म

વેદનીય કર્મના પણ સાતાવેદનીય અને અસાતાવેદનીય નામના બે ભેદ કહ્યા છે જે કર્મને સુખરૂપે વેદિત કરવામાં આવે છે તે કર્મને સાતાવેદનીય કહે છે અને જે કર્મને દુઃખરૂપે વેદિત કરવામાં આવે છે, તે કર્મને અસાતા વેદનીય કર્મ કહે છે જેમ મધથી લિપ્ત થયેલી તલવારને ચાટતાં ચાટતાં જીભ કપાઈ જાય તો દુઃખ થાય છે અને મધના સ્વાદથી સુખ થાય છે, એજ પ્રમાણે આ કર્મ પણ જીવોના સુખ અને દુઃખનું ઉત્પાદક હોય છે. કહ્યું પણ છે કે-" મહુલિત્ત નિસિયકરવાલ " ઇત્યાદિ—

આત્માને ખરા અને ખોટાના જ્ઞાનથી રહિત કરી દેનાર કર્મને મોહનીય કર્મ કહે છે આ કર્મ મદિરાની જેમ જીવને બેભાન કરી નાખે છે, તેને લીધે જીવ પરવશ થઈ જાય છે મોહનીય કર્મના બે પ્રકાર છે—(૧) દર્શન

" जहमज्जपाणमूढो लोए पुरिसो परव्वसो होइ ।
तह मोहेणवि मूढो, जीवो उ परव्वसो होइ ॥ २ ॥ " इति ।
छाया—यथा मद्यपानमूढो लोके पुरुषः परवशो भवति ॥
तथा मोहेनापि मूढो जीवस्तु परवशो भवति ॥ इति ।

तद् द्विविधं दर्शनमोहनीयं चारित्रमोहनीयं चेति । तत्र दर्शनमोहनीयं—मिथ्यात्वमिश्रसम्यक्त्वभेदात्मकं, चारित्रं—सामायिकादि, तद् मोहयति तद्विषयं वैपरीत्यं जनयतीति चारित्रमोहनीयं – कषाय १६ नोकषाय ९ भेदेन पञ्चविंशतिविधम् ४ । एति—प्रतिसमय गच्छतीतिआयुः, यद्वा—एति—आगच्छति प्राप्नोति प्रतिबन्धकतां स्वकृतकर्मावाप्तगतेर्निष्क्रमितुमनसोऽपि जीवस्येति—आयुः तदेव—आयुष्कं निगडरूपमेतत् यदाह—

मिथ्यात्व, सम्यग् मिथ्यात्व और सम्यक्प्रकृति के भेद से तीन प्रकार का है, सामायिक आदि चारित्र को जो मोहित कर देता है-अर्थात् उनके विषय में विपरीत अभिनिवेश को उत्पन्न करता है वह चारित्रमोहनीय है यह चारित्र मोहनीय कर्म १६ कषाय और ९ नो कषाय के भेद से २५ प्रकार का है अर्थात् दर्शनमोहनीय कर्म के तीन भेद मिलाने से अठाईस भेद होते हैं। जिसका प्रति समय विनाश होता है अर्थात् जो प्रतिसमय व्यतीत होता रहता है वह आयु है अथवा-अपने कृतकर्मके उदयानुसारप्राप्त गतिसे निकलनेकी अभिलाषा वाले भी जीव को जो उस गति से निकलने देने में प्रतिबन्धक होता है वह आयुकर्म है यह कर्म बेड़ी के जैसा होता है अर्थात् पांव में पडी हुई बेड़ी जिस प्रकार से जीव को उसी स्थान पर रोक कर रखती है इसी

મોહનીય અને (૨) ચારિત્ર મોહનીય દર્શન મોહનીયના પણ નીચે પ્રમાણે ત્રણ ભેદ કહ્યા છે-(૧) મિથ્યાત્વ (૨) મિશ્ર મોહનીય, અને (૩) સમ્યક્ પ્રકૃતિ. સામયિક આદિ ચારિત્રને જે મોહિત કરી નાખે છે એટલે કે વિષયમાં વિપરીત તેમના અભિનિવેશની ઉત્પત્તિ કરે છે, તે પ્રકારના કર્મને ચારિત્ર મોહનીય કહે છે. તે ચારિત્ર મોહનીય કર્મ ૧૬ કષાય અને ૯ નોકષાયના ભેદથી ૨૫ પ્રકારનું છે. દર્શન મોહનીય કર્મના ત્રણ ભેદોને તેમાં ઉમેરવાથી કુલ ૨૮ ભેદ થાય છે. તથા જેનો પ્રતિસમય વિનાશ થતો રહે છે. એટલે કે જે પ્રતિસમય વ્યતીત થતું રહે છે, તે આયુ છે અથવા-પોતાના કૃતકર્મના ઉદયાનુસાર પ્રાપ્ત ગતિમાંથી નીકળવાની અભિલાષાવાળા જીવને પણ જે ગતિમાંથી નીકળવા દેવામાં પ્રતિબન્ધક (રોકનાર) છે, તે કર્મનું નામ આયુકર્મ છે. તે કર્મ બેડી જેવું હોય છે પગમાં રહેલી બેડી જેમ જીવને તે સ્થાને જ રોકી રાખે છે, એજ

" दुक्ख न देइ आउ, नवि य सुहं देइ य उमुवि गईसु ।
दुक्खसुहाणाधार, धरेइ देहट्ठिय जीव ॥ २ ॥"

छाया—दुःखं न ददाति आयु, नापि च सुखं ददाति चतसृष्वपि गतिषु ।
दुःखसुखानामाधारं धरति देहस्थितं जीवम् ॥ इति ।

तद् आयुष्क कर्म द्विविधम्—अद्धायुष्कं भवायुष्कं चेति। तत्र अद्धायुष्क—कायस्थितिरूपं, तच्च मनुष्याणां पञ्चेन्द्रियतिर्यग्योनिकानां च भवति, कस्यचिचद् भवनाशेऽपि नापगच्छति। उत्कृष्टतः सप्ताष्टभवकालं यावदनुगच्छतीति। भवायुष्क—भवस्थितिरूपं, तच्च देवानां नैरयिकाणांच भवति, यद् भवात्यये नियमादपगच्छत्येव न कालान्तरमनुयातीति २। नमयति-विविधपर्यायैः परिणमयति

प्रकार से आयुकर्म भी जीव को प्राप्त शरीर में ही अपनी समाप्ति तक रोक कर रखे रहता है कहा भी है—(दुक्ख न देइ आउ) इत्यादि।

आयु कर्म जीव को न दुःख देता है और न सुख देता है किन्तु सुखदुःख के आधार भूत प्राप्त देह में वह जीव को रोक कर रखता है यह आयुकर्म दो प्रकार का है एक अद्धायुष्क और दूसरा भवायुष्क, अद्धायुष्क कायस्थिति रूप है यह अद्धायुष्क मनुष्य और पञ्चेन्द्रियतिर्यञ्चों को होता है किसी २ के यह उस भव के नाश होने पर भी नहीं जाता है-नहीं छूटता है। इसका उत्कृष्ट काल सात आठ भवग्रहण प्रमाण है अर्थात् कोई भी मनुष्य या पंचेन्द्रिय तिर्यञ्च अपनी मनुष्य जाति में या पंचेन्द्रिय तिर्यंचगति में लगातार सात आठ भव-जन्म तक रह सकताहै और उसके पश्चात् में वह उस जाति को छोड़ देताहै। भवायुष्क भवस्थितिरूप होता है यह देव और नैरयिकों को होता है यह

પ્રમાણે આયુકર્મ પણ જીવને પ્રાપ્ત શરીરમાં જ પોતાની સમાપ્તિ થાય ત્યાં સુધી રોકી રાખે છે કહ્યું પણ છે—" દુક્ખ ન દેઇ આઉ "—ઇત્યાદિ

આયુકર્મ જીવને દુઃખ કે સુખ આપતું નથી પરન્તુ સુખદુઃખના આધારરૂપ પ્રાપ્તદેહમાં તે જીવને રોકી રાખે છે તે આયુકર્મના નીચે પ્રમાણે બે પ્રકાર છે-(૧) અદ્ધાયુષ્ક અને (૨) ભવાયુષ્ક અદ્ધાયુષ્ક કાયસ્થિતિરૂપ છે મનુષ્ય અને પંચેન્દ્રિય તિર્યંચોમાં અદ્ધાયુષ્કનો સદ્ભાવ હોય છે કોઇ કોઇ જીવોના વર્તમાનભવનો નાશ થવા છતાં પણ તે જતું નથી-છૂટતું નથી તેનો ઉત્કૃષ્ટ કાળ સાત-આઠ ભવગ્રહણ પ્રમાણ છે એટલે કે કોઈ પણ મનુષ્ય અથવા પંચેન્દ્રિયતિર્યંચ પોતાની મનુષ્યગતિમાં અથવા પંચેન્દ્રિયતિર્યંચ ગતિમાં લગાતાર સાત આઠ ભવ (જન્મ) સુધી રહી શકે છે અને ત્યારબાદ તે એ ગતિને છોડી દે છે ભવાયુષ્ક ભવસ્થિતિરૂપ હોય છે દેવો અને નારકોમાં

जीवमिति नाम, ।

उक्तञ्च—" जह चित्तयरो निउणो, अणेगरूवाइं कुणइ रूवाइं ।
सोहणमसोहणाइं, चोक्खमचोक्खेहिं वण्णेहिं ॥ १ ॥
तह नामं पि हु कम्म, अणेगरूवाइ कुणइ जीवस्स ।
सोहणमसोहणाइं, इट्ठाणिट्ठाइं लोयस्स ॥ २ ॥ "

छाया—यथा चित्रकरो निपुणः अनेकरूपाणि करोति रूपाणि ।
शोभनाशोभनानि, चोक्षाचोक्षैर्वर्णैः ॥ १ ॥
तथा नामापि खलु कर्म, अनेकरूपाणि करोति जीवस्य ।
शोभनाशोभनानि, इष्टानिष्टानि लोकस्य ॥ २ ॥ इति ।

तद् द्विविधं-शुभनाम अशुभनाम चेति। शुभनाम-तीर्थकरादि, अशुभनाम-अनादेयत्वादिद । गूयते-मंशब्द्यते उच्चावचैः शब्दैर्यत्-तद्गोत्रं, तत्स्वरूपं यथा—

उस भव के व्यतीत हो जाने पर नियम से छूट ही जाता है। कालान्तर में साथ नहीं जाता है ५, ।

जो जीव को विचित्र पर्यायों से परिणमाता है वह नामकर्म है। कहा भी है-" जह चित्तयरो निउणो " इत्यादि ।

जिस प्रकार चित्र बनाने वाला चितेरा अनेक प्रकार के खिलोने लाल पीले आदि रंगों वाले बना देता है उसी प्रकार से यह नाम कर्म भी जीव को अनेक आकारों को बना देताहै लोकको चाहे वे सुन्दर लगें या नहीं लगें, इष्ट हो या इष्ट न हों यह कर्म इसका परवाह नहींकरता है।

यह कर्म शुभनामकर्म और अशुभनामकर्म के भेद से दो प्रकार का है। तीर्थंकर प्रकृति आदि रूप शुभनामकर्म है, और अनादेय आदि-

---

તેનો સદ્ભાવ હોય છે, તે ભવ વ્યતીત થતા તે નિયમથી જ છૂટી જાય છે. કાલાન્તરમાં સાથે જતું નથી. ॥ ૫ ॥

" जह चित्तयरो निउणो " ઇત્યાદિ—

જેમ ચિત્ર બનાવનાર ચિત્રકાર અનેક પ્રકારના રમકડાંઓને લાલ, પીળાં, આદિ રંગોવાળાં બનાવી દે છે, એજ પ્રમાણે આ નામકર્મ પણ જીવને વિવિધ આકારોવાળો બનાવી દે છે લોકોને ભલે તે સુંદર લાગે કે ન લાગે, ઇષ્ટ લાગે કે ન લાગે, તેની પરવા તે કરતું નથી.

તે કર્મના બે ભેદ છે—(૧) શુભ નામકર્મ અને (૨) અશુભ નામકર્મ. તીર્થંકર પ્રકૃતિ આદિરૂપ શુભ નામકર્મ છે અને અનાદેય આદિ રૂપ અશુભ

" दुक्खं न देइ आउ, नवि य सुहं देइ य चउसुवि गईसु ।
दुक्खसुहाणाधारं, धरेइ देहट्ठियं जीवं ॥ २ ॥ "

छाया—दुःखं न ददाति आयु , नापि च सुखं ददाति चतसृष्वपि गतिषु ।
दुःखसुखानामाधारं धरति देहस्थितं जीवम् ॥ इति ।

तद् आयुष्कं कर्म द्विविधम्—अद्धायुष्कं भवायुष्कं चेति । तत्र अद्धायुष्क—कायस्थितिरूपं, तच्च मनुष्याणां पञ्चेन्द्रियतिर्यग्योनिकानां च भवति, यत्खलु विवद् भवनाशेऽपि नापगच्छति । उत्कृष्टतः सप्ताष्टभवकालं यावदनुगच्छतीति । भवायुष्क—भवस्थितिरूपं, तच्च देवानां नैरयिकाणां च भवति, यत् भवात्यये नियमाद् व्यपगच्छत्येव न कालान्तरमनुयातीति । नमयति–विविधपर्यायैः परिणमयति

प्रकार से आयुकर्म भी जीव को प्राप्त शरीर में ही अपनी समाप्ति तक रोक कर रखे रहता है कहा भी है—(दुक्ख न देइ आउ) इत्यादि ।

आयु कर्म जीव को न दुःख देता है और न सुख देता है किन्तु सुखदुःख के आधार भूत प्राप्त देह में यह जीव को रोक कर रखता है यह आयुकर्म दो प्रकार का है एक अद्धायुष्क और दूसरा भवायुष्क, अद्धायुष्क कायस्थिति रूप है यह अद्धायुष्क मनुष्य और पञ्चेन्द्रियतिर्यञ्चों को होता है किसी २ के यह इस भव के नाश होने पर भी नहीं जाता है—नहीं छूटता है । इसका उत्कृष्ट काल सात आठ भवग्रहण प्रमाण है अर्थात् कोई भी मनुष्य या पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च अपनी मनुष्य जाति में या पंचेन्द्रिय तिर्यग्गति में लगातार सात आठ भव–जन्म तक रह सकता है और उसके पश्चात् में वह उस जाति को छोड़ देता है । भवायुष्क भवस्थितिरूप होता है यह देव और नैरयिकों को होता है यह

પ્રમાણે આયુકર્મ પણ જીવને પ્રાપ્ત શરીરમાં જ પોતાની સમાપ્તિ થાય ત્યાં સુધી રોકી રાખે છે કહ્યું પણ છે—' દુક્ખં ન દેઇ આઉ "—ઇત્યાદિ

આયુકર્મ જીવને દુઃખ કે સુખ આપતું નથી પરન્તુ સુખદુઃખના આધારરૂપ પ્રાપ્તદેહમાં તે જીવને રોકી રાખે છે તે આયુકર્મના નીચે પ્રમાણે બે પ્રકાર છે–(૧) અદ્ધાયુષ્ક અને (૨) ભવાયુષ્ક અદ્ધાયુષ્ક કાયસ્થિતિરૂપ છે મનુષ્ય અને પંચેન્દ્રિય તિર્યંચોમાં અદ્ધાયુષ્કનો સદ્ભાવ હોય છે કોઈ કોઈ જીવોના વર્તમાનભવનો નાશ થવા છતાં પણ તે જતું નથી–છૂટતું નથી. તેનો ઉત્કૃષ્ટ કાળ સાત–આઠ ભવગ્રહણ પ્રમાણ છે એટલે કે કોઈ પણ મનુષ્ય અથવા પંચેન્દ્રિયતિર્યંચ પોતાની મનુષ્યગતિમાં અથવા પંચેન્દ્રિયતિર્યંચ ગતિમાં લગાતાર સાત આઠ ભવ (જન્મ) સુધી રહી શકે છે અને ત્યારબાદ તે એ ગતિને છોડી દે છે ભવાયુષ્ક ભવસ્થિતિરૂપ હોય છે દેવો અને નારકોમાં

जीवमिति नाम, ।

उक्तञ्च—" जह चित्तयरो निउणो, अणेगरूवाइं कुणइ रूवाइं ।
सोहणमसोहणाइं, चोक्खमचोक्खेहिं वण्णेहिं ॥ १ ॥
तह नामं पि हु कम्मं, अणेगरूवाइं कुणइ जीवस्स ।
सोहणमसोहणाइं, इट्ठाणिट्ठाइं लोयस्स ॥ २ ॥ "

छाया—यथा चित्रकरो निपुणः अनेकरूपाणि करोति रूपाणि ।
शोभनाशोभनानि, चोक्षाचोक्षैर्वर्णैः ॥ १ ॥
तथा नामापि खलु कर्म, अनेकरूपाणि करोति जीवस्य ।
शोभनाशोभनानि, इष्टानिष्टानि लोकस्य ॥ २ ॥ इति ।

तद् द्विविधं–शुभनाम अशुभनाम चेति। शुभनाम–तीर्थकरादि, अशुभनाम–अनादेयत्वादिद। गूर्यते–संशब्द्यते उच्चावचैः शब्दैर्यत्–तद्गोत्रं, तत्स्वरूपं यथा—

उस भव के व्यतीत हो जाने पर नियम से छूट ही जाता है। कालान्तर में साथ नहीं जाता है ५, ।

जो जीव को विचित्र पर्यायों से परिणमाता है वह नामकर्म है। कहा भी है–" जह चित्तयरो निउणो " इत्यादि।

जिस प्रकार चित्र बनाने वाला चितेरा अनेक प्रकार के खिलोने लाल पीले आदि रंगों वाले बना देता है उसी प्रकार से यह नाम कर्म भी जीव को अनेक आकारों को बना देताहै लोकको चाहे वे सुन्दर लगें या नहीं लगें, इष्ट हो या इष्ट न हों यह कर्म इसका परवाह नहींकरता है।

यह कर्म शुभनामकर्म और अशुभनामकर्म के भेद से दो प्रकार का है। तीर्थंकर प्रकृति आदि रूप शुभनामकर्म है, और अनादेय आदि-

---

તેનો સદ્‌ભાવ હોય છે, તે ભવ વ્યતીત થતા તે નિયમથી જ છૂટી જાય છે. કાલાન્તરમાં સાથે જતું નથી. ॥ ૫ ॥

" जह चित्तयरो निउणो " ઇત્યાદિ—

જેમ ચિત્ર બનાવનાર ચિત્રકાર અનેક પ્રકારના રમકડાંઓને લાલ, પીળાં, આદિ રંગોવાળાં બનાવી દે છે, એજ પ્રમાણે આ નામકર્મ પણ જીવને વિવિધ આકારોવાળો બનાવી દે છે લોકોને ભલે તે સુંદર લાગે કે ન લાગે, ઇષ્ટ લાગે કે ન લાગે, તેની પરવા તે કરતું નથી.

તે કર્મના બે ભેદ છે—(૧) શુભ નામકર્મ અને (૨) અશુભ નામકર્મ. તીર્થંકર પ્રકૃતિ આદિરૂપ શુભ નામકર્મ છે અને અનાદેય આદિ રૂપ અશુભ

" जह कुंभारो भंडाई कुणइ पुज्जेयराइं लोयस्स ।
इयगोय कुणइ जियं, लोए पुज्जेयरावत्थं ॥ १ ॥

छाया—यथा कुम्भकारो भाण्डानि करोति पूज्येतराणि लोकस्य । इति (एवं) गोत्रं करोति जीवं, लोके पूज्येतरावस्थम् ॥ इति ।

तद् द्विविधम्–उच्चैर्गोत्रं माननीयनिबन्धनम्, नीचैर्गोत्रम्–अमाननीय निबन्धनमिति ७।

उक्तञ्च—संताणकमेणागय जीवायरणस्स गोयमिति सण्णा ।
उच्चं नीयं चरणं उच्चं नीयं हवेगोयं ॥

छाया—सन्तानक्रमेणागत जीवाचरणस्य गोत्रमिति संज्ञा ।
उच्चं नीचं चरणं, उच्चं नीचं भवेद् गोत्रम् ॥

रूप अशुभनामकर्म है उच्च और नीच शब्दों द्वारा जो लोक में कहा जाता है वह गोत्र कर्म है–कहा भी है–(जह कुंभारो भंडाइं इत्यादि ।

गोत्रकर्म जीव को उच्चनीच कुलों में जन्म कराने में कारण होता है यह गोत्रकर्म दो प्रकार का है एक उच्चगोत्र और दूसरा नीचगोत्र, जिसके उदयसे जीवका उच्चकुलमें–लोकमाननीयकुल में जन्म होता है वह उच्चगोत्र है और जिसके उदय से लोकनिन्दित कुल में जन्म होता है वह नीचगोत्र है उच्चगोत्र पूज्यता का कारण होता है और नीचगोत्र अपूज्यता का कारण होता है । कहीं २ ऐसा भी कहा गया है " संताणकमेणागय " इत्यादि ।

सन्तानक्रम से–गोत्रनामकर्म के उदय से प्राप्त वंशपरम्परा से–आगत जीवका जो आचरणविशेष है वह गोत्र है जहां उच्च आचरण

નામકર્મ છે ઉચ્ચ અને નીચના નામથી જે લોકોમાં ઓળખાય છે, તે ગોત્ર કર્મ છે કહ્યું પણ છે કે–" जह कुमारो भडाई ' ઇત્યાદિ—

જીવને ઉચ્ચ અથવા નીચ કુળમાં જન્મ કરાવવામાં ગોત્રકર્મ કારણભૂત બને છે તે ગોત્રકર્મના બે પ્રકાર છે–(૧) ઉચ્ચ ગોત્ર અને નીચ ગોત્ર.

જે કર્મના ઉદયથી જીવનો ઉચ્ચ કુળમાં, લોક માનનીય કુળમાં જન્મ થાય છે, તે કર્મને ઉચ્ચ ગોત્ર કર્મ કહે છે જે કર્મના ઉદયથી લોકનિન્દિત કુળમાં જીવનો જન્મ થાય છે, તે કર્મને નીચ ગોત્ર કર્મ કહે છે ઉચ્ચ ગોત્ર પૂજ્યતાનું કારણ બને છે અને નીચ ગોત્ર અપૂજ્યતાનું કારણ બને છે કોઇ કોઇ જગ્યાએ એવું પણ કહ્યું છે કે—" संताण कमेणागय ઇત્યાદિ—

સંતાનક્રમે (ગોત્ર નામ કર્મના ઉદયથી પ્રાપ્ત વંશપરમ્પરાથી) આગત જીવનું જે આચરણ વિશેષ છે તેને ગોત્ર કહે છે જ્યાં ઉચ્ચ આચરણ થાય છે તે ઉચ્ચ ગોત્ર છે અને જ્યાં નીચ આચરણ થાય છે તે નીચ ગોત્ર છે

अन्तः—दातृप्रतिग्राहकयोर्मध्ये विघ्नरूपेण आयातीति अन्तरायः, तत्र भवम् आन्तरायिकं, यथा राजा कस्मैचिद्दातुमुपदिशति तत्र भाण्डागारिकोऽन्तराले विघ्नकारको भवति तद्वदिदं कर्म दानाद्यन्तरायजनकं भवति, ।

उक्तञ्च—" जह राया दाणाई, ण कुणइ भंडारिए विकूलम्मि ।
एवं जेणं जीवो, कम्मं तं अंतरायंति ॥ १ ॥ "

छाया—यथा राजा दानादि, न करोति भाण्डारिके विकूले ।
एवं येन जीवः कर्म तदन्तरायमिति ॥ १ ॥

तद् द्विविधं—प्रत्युत्पन्नविनाशितं पिहितागामिपथं चेति । तत्र प्रत्युत्पन्नं—वर्तमानलब्धमर्थजातं विनाशितम्—उपहतं येन तत्तथोक्तम् । तथा पिहितः—आच्छादितः आगामिनो—लब्धव्यस्यार्थजातस्य पन्था—मार्गो यस्येति तत्तथोक्तम् ८ ॥ सू० ४८ ॥

होता है वह उच्च गोत्र है और जहां नीच आचरण है, वह नीचगोत्र है ।

दाता और प्रतिग्राहकके बीचमें जो विघ्नरूपसे आकर उपस्थित हो जाताहै वह अन्तरायहै इस अन्तरायमें जो कारणरूप होताहै वह आन्तरायिक है जैसे राजा किसी को दान देनेको कहता है, परन्तु भण्डारी अन्तराल में उसमें विघ्न डाल देता है उसी प्रकार से यह कर्म दानादिकों में अन्तराय का जनक होताहै । कहा भी है—"जह राया दाणाई" इत्यादि ।

यह अन्तरायकर्म दो प्रकार का होता है, एक प्रत्युत्पन्न विनाशित और दूसरा पिहितागामिपथ जिसके द्वारा वर्तमान काल में लब्ध अर्थ-द्रव्य नष्ट कर दिया जाता है वह प्रथम प्रकार है तथा जिसके द्वारा आगामीकाल मे प्राप्त होने योग्य अर्थ का रास्ता रोक दिया जाता है वह दूसरा प्रकार है ॥ सू०४८ ॥

દાતા અને પ્રતિગ્રાહકની વચ્ચે વિઘ્ન (અન્તરાય) રૂપે આવી પડનાર કર્મનું નામ આન્તરાયિક કર્મ છે. જેમકે રાજા કોઈને દાન દેવાનુ કહે છે, પણ ભંડારી તેમાં વચ્ચે વિઘ્ન ઊભું કરે તો યાચકને દાન પ્રાપ્તિમાં અન્તરાય ઊભો થાય છે, એ જ પ્રમાણે આ કર્મ દાનાદિકમાં અન્તરાયજનક હોવાથી તેને અન્તરાય કર્મ કહે છે કહ્યું પણ છે—" जह राया दाणाई " ઈત્યાદિ—

તે અન્તરાય કર્મના નીચે પ્રમાણે બે પ્રકાર છે–(૧) પ્રત્યુત્પન્ન વિનાશિત અને (૨) પિહિતાગામિપથ જેના દ્વારા વર્તમાનકાળમા પ્રાપ્ત થનાર અર્થ (દ્રવ્ય) ને નષ્ટ કરી નાખવામા આવે છે એવા અન્તરાય કર્મનું નામ પ્રત્યુત્પન્ન વિનાશિત છે તથા જેના દ્વારા ભવિષ્યમાં પ્રાપ્ત થનાર અર્થ (દ્રવ્યલાભાદિ) નો માર્ગ અટકાવી દેવામા આવે છે, તે કર્મનું નામ પિહિતાગામિપથ અન્તરાય કર્મ છે. ॥ સૂ. ૪૮ ॥

" जह कुमारो मडाई कुणइ पुज्जेयराइ लोयस्स ।
इयगोयं कुणइ जियं, लोए पुज्जेयरावत्थं ॥ १ ॥

छाया—यथा कुम्भकारो भाण्डानि करोति पूज्येतराणि लोकस्य । इति (एवं) गोत्रं करोति जीवं, लोके पूज्येतरावस्थम् ॥ इति ।

तद् द्विविधम्–उच्चैर्गोत्रं माननीयनिबन्धनम्, नीचैर्गोत्रम्–अमाननीय निबन्धनमिति ७।

उक्तञ्च—सताणकमेणागय जीवायरणस्स गोयमिति सण्णा ।
उच्च नीच चरण उच्चनीय हवेगोत्तं ॥

छाया—सन्तानक्रमेणागत जीवाचरणस्य गोत्रमिति संज्ञा ।
उच्चं नीच चरण, उच्चं नीच भवेद् गोत्रम् ॥

रूप अशुभनामकर्म है उच्च और नीच शब्दों द्वारा जो लोक में कहा जाता है वह गोत्र कर्म है–कहा भी है–(जह कुमारो मडाइ इत्यादि।

गोत्रकर्म जीव को उच्चनीच कुलों में जन्म कराने में कारण होता है यह गोत्रकर्म दो प्रकार का है एक उच्चगोत्र और दूसरा नीचगोत्र, जिसके उदयसे जीवका उच्चकुलमें–लोकमाननीयकुल में जन्म होता है वह उच्चगोत्र है और जिसके उदय से लोकनिन्दित कुल में जन्म होता है वह नीचगोत्र है उच्चगोत्र पूज्यता का कारण होता है और नीचगोत्र अपूज्यता का कारण होता है। कहीं २ ऐसा भी कहा गया है " संताणकमेणागय " इत्यादि।

सतानक्रम से–गोत्रनामकर्म के उदय से प्राप्त वंशपरम्परा से–आगत जीवका जो आचरणविशेष है वह गोत्र है जहां उच्च आचरण

नामકર્મ છે ઉચ્ચ અને નીચના નામથી જે લોકોમાં ઓળખાય છે, તે ગોત્ર-કર્મ છે કહ્યું પણ છે કે–" जह कुमारो मडाई ' ઈત્યાદિ—

જીવનો ઉચ્ચ અથવા નીચ કુળમાં જન્મ કરાવવામાં ગોત્રકર્મ કારણભૂત બને છે તે ગોત્રકર્મના બે પ્રકાર છે–(૧) ઉચ્ચ ગોત્ર અને નીચ ગોત્ર.

જે કર્મના ઉદયથી જીવનો ઉચ્ચ કુળમાં, લોક માનનીય કુળમાં જન્મ થાય છે, તે કર્મને ઉચ્ચ ગોત્ર કર્મ કહે છે જે કર્મના ઉદયથી લોકનિન્દિત કુળમાં જીવનો જન્મ થાય છે, તે કર્મને નીચ ગોત્ર કર્મ કહે છે ઉચ્ચ ગોત્ર પૂજ્યતાનું કારણ બને છે અને નીચ ગોત્ર અપૂજ્યતાનું કારણ બને છે કોઈ કોઈ જગ્યાએ એવું પણ કહ્યું છે કે—' संताण कमेणागय ' ઈત્યાદિ—

સતાનક્રમે (ગોત્ર નામ કર્મના ઉદયથી પ્રાપ્ત વંશપરંપરાથી) આગત જીવનું જે આચરણ વિશેષ છે તેને ગોત્ર કહે છે જ્યાં ઉચ્ચ આચરણ થાય છે તે ઉચ્ચ ગોત્ર છે, અને જ્યાં નીચ આચરણ થાય છે તે નીચ ગોત્ર છે

अन्तः-दातृप्रतिग्राहकयोर्मध्ये विघ्नरूपेण आयातीति अन्तरायः, तत्र भवम् आन्तरायिकं, यथा राजा कस्मैचिद्दातुमुपदिशति तत्र भाण्डागारिकोऽन्तराले विघ्नकारको भवति तद्वदिदं कर्म दानाद्यन्तरायजनक भवति, ।

उक्तञ्च—" जह राया दाणाई, ण कुणइ भंडारिए विकूलम्मि ।
एवं जेणं जीवो, कम्मं तं अंतरायंति ॥ १ ॥ "

छाया—यथा राजा दानादि, न करोति भाण्डारिके विकूले ।
एवं येन जीवः कर्म तदन्तरायमिति ॥ १ ॥

तद् द्विविधं-प्रत्युत्पन्नविनाशितं पिहितागामिपथं चेति । तत्र प्रत्युत्पन्नं-वर्त्तमानलब्धमर्थजातं विनाशितम्-उपहतं येन तत्तथोक्तम् । तथा पिहितः—आच्छादितः आगामिनो-लब्धव्यस्यार्थजातस्य पन्था-मार्गो यस्येति तत्तथोक्तम् ८ ॥ सू० ४८ ॥

होता है वह उच्च गोत्र है और जहां नीच आचरण है, वह नीचगोत्र है।

दाता और प्रतिग्राहकके बीचमें जो विघ्नरूपसे आकर उपस्थित हो जाताहै वह अन्तरायहै इस अन्तरायमें जो कारणरूप होताहै वह आन्तरायिक है जैसे राजा किसी को दान देनेको कहता है, परन्तु भण्डारी अन्तराल में उसमें विघ्न डाल देता है उसी प्रकार से यह कर्म दानादिकों में अन्तराय का जनक होताहै। कहा भी है-"जह राया दाणाई"इत्यादि ।

यह अन्तरायकर्म दो प्रकार का होता है, एक प्रत्युत्पन्न विनाशित और दूसरा पिहितागामिपथ जिसके द्वारा वर्तमान काल में लब्ध अर्थ-द्रव्य नष्ट कर दिया जाता है वह प्रथम प्रकार है तथा जिसके द्वारा आगामीकाल मे प्राप्त होने योग्य अर्थ का रास्ता रोक दिया जाता है वह दूसरा प्रकार है ॥ सू०४८ ॥

દાતા અને પ્રતિગ્રાહકની વચ્ચે વિઘ્ન (અન્તરાય) રૂપે આવી પડનાર કર્મનું નામ આન્તરાયિક કર્મ છે. જેમકે રાજા કોઇને દાન દેવાનુ કહે છે, પણ ભંડારી તેમાં વચ્ચે વિઘ્ન ઊભુ કરે તો યાચકને દાન પ્રાપ્તિમાં અન્તરાય ઊભો થાય છે, એ જ પ્રમાણે આ કર્મ દાનાદિકમા અન્તરાયજનક હોવાથી તેને અન્તરાય કર્મ કહે છે. કહ્યું પણ છે—" जह राया दाणाई " ઇત્યાદિ—

તે અન્તરાય કર્મના નીચે પ્રમાણે બે પ્રકાર છે-(૧) પ્રત્યુત્પન્ન વિનાશિત અને (૨) પિહિતાગામિપથ જેના દ્વારા વર્તમાનકાળમાં પ્રાપ્ત થનાર અર્થ (દ્રવ્ય) ને નષ્ટ કરી નાખવામા આવે છે એવા અન્તરાય કર્મનું નામ પ્રત્યુત્પન્ન વિનાશિત છે તથા જેના દ્વારા ભવિષ્યમાં પ્રાપ્ત થનાર અર્થ (દ્રવ્યલાભાદિ) નો માર્ગ અટકાવી દેવામા આવે છે, તે કર્મનું નામ પિહિતાગામિપથ અન્તરાય કર્મ છે. ॥ સૂ. ૪૮ ॥

पूर्वोक्तमष्टविधं कर्म मूर्च्छाजन्यं भवतीति मूर्च्छास्वरूपमाह—

सूत्रम्—दुविहा मुच्छा पण्णत्ता, तं जहा–पेज्जवत्तिया चेव दोसवत्तिया चेव। पेज्जवत्तिया मुच्छा दुविहा पण्णत्ता, तं जहा—माया चेव लोभे चेव। दोसवत्तिया मुच्छा दुविहा पण्णत्ता तं जहा–कोहे चेव माणे चेव॥ सू० ४९॥

छाया—द्विविधा मूर्च्छा प्रज्ञप्ता, तद्यथा–प्रेमप्रत्यया चैव द्वेष प्रत्यया चैव १। प्रेमप्रत्यया मूर्च्छा द्विविधा प्रज्ञप्ता, तद्यथा–मायाचैव लोभश्चैव २। द्वेषप्रत्यया मूर्च्छा द्विविधा प्रज्ञप्ता–तद्यथा–क्रोधश्चैव मानश्चैव ३॥ सू० ४९॥

टीका—'दुविहा मुच्छा' इत्यादि। मूर्छा–मोहः सदसद्विवेकनाशः। सा द्विविधा–प्रेमप्रत्यया द्वेषप्रत्यया चेति। प्रेम–राग तत् प्रत्ययो हेतुर्यस्याः सा प्रेमप्रत्यया। एवं द्वेषो हेतुर्यस्याः सा द्वेषप्रत्यया १। प्रेमप्रत्यया मूर्च्छा द्विविधा–मायालोभम्–मायारूपा लोभरूपा चेति २। एवं द्वेषप्रत्यया मूर्च्छाऽपि द्विविधा–क्रोधः, मानम्, क्रोधरूपा मानरूपा चेति ३॥ सू० ४९॥

पूर्वोक्त अष्टविध कर्म मूर्च्छाजन्य होता है अतः अब सूत्रकार मूर्च्छा का स्वरूप कहते हैं–(दुविहा मुच्छा पन्नत्ता) इत्यादि।

टीकार्थ–सदसद्विवेक के विनाश का नाम मूर्च्छा–मोह है यह मूर्च्छा दो प्रकार की कही गई है एक प्रेमप्रत्यया और दूसरी द्वेषप्रत्यया राग–प्रेम जिस मूर्च्छा का कारण होता है वह प्रेमप्रत्यया मूर्च्छा है, तथा द्वेष जिस मूर्च्छा का कारण होता है वह द्वेष प्रत्यया मूर्च्छा है। इनमें प्रेम प्रत्यया (प्रेमनिमित्त) मूर्च्छा भी दो प्रकार की है एक मायारूप और दूसरी लोभरूप इसी तरह से द्वेष प्रत्यया (द्वेषनिमित्त) मूर्च्छा भी दो प्रकार की है एक क्रोधरूप और दूसरी मानरूप॥ सू० ४९॥

પૂર્વોક્ત આઠે પ્રકારના કર્મ મૂર્ચ્છાજન્ય હોય છે તેથી હવે સૂત્રકાર મૂર્ચ્છાના સ્વરૂપનું નિરૂપણ કરે છે–'દુવિહા મુચ્છા પણ્ણત્તા" ઇત્યાદિ—

ટીકાર્થ–સારાં નરસાંના વિવેકનો વિનાશ થવો તેનું નામ મૂર્ચ્છા છે તેનું બીજું નામ મોહ પણ છે મૂર્ચ્છાના નીચે પ્રમાણે બે પ્રકાર છે–(૧) પ્રેમપ્રત્યયા–પ્રેમનિમિત્ત (૨) દ્વેષપ્રત્યયા. જે મૂર્ચ્છા પ્રેમ (રાગ) ને કારણે ઉદ્‌ભવે છે, તે મૂર્ચ્છાને પ્રેમપ્રત્યયા કહે છે દ્વેષને કારણે ઉદ્‌ભવતી મૂર્ચ્છાને દ્વેષપ્રત્યયા કહે છે પ્રેમ પ્રત્યયા મૂર્ચ્છાના પણ બે પ્રકાર છે–(૧) માયારૂપ અને (૨) લોભરૂપ. દ્વેષપ્રત્યયા મૂર્ચ્છાના પણ બે પ્રકાર છે–(૧) ક્રોધરૂપ (૨) માનરૂપ. ॥ સૂ. ૪૯ ॥

मूर्च्छागृहीतकर्मणश्च क्षय आराधनया भवतीत्याऽऽराधनां सूत्रत्रयेणाह—

मूलम्—दुविहा आराहणा पण्णत्ता, तं जहा--धम्मियाराहणा चेव केवलिआराहणा चेव १। धम्मियाराहणा दुविहा पण्णत्ता, तं जहा--सुयधम्माराहणा चेव चरित्तधम्माराहणा चेव२। केवलि आराहणा दुविहा पण्णत्ता, तं जहा--अंतकिरिया चे वा कप्पविमाणोववत्तिया चेव ३ ॥ सू० ५० ॥

छाया—द्विविधा आराधना प्रज्ञप्ता, तद्यथा–धार्मिकाराधना चैव केवलिकाराधना चैव २। धार्मिकाराधना द्विविधा प्रज्ञप्ता, तद्यथा–श्रुतधर्माराधना चैव, चारित्रधर्माराधना चैव २। केवलिकाराधना द्विविधा प्रज्ञप्ता, तद्यथा–अन्तक्रिया चैव, कल्पविमानोपपत्तिका चैव ३ ॥ सू० ५० ॥

टीका—' दुविहा आराहणा ' इत्यादि।

आराधनमाराधना, सा ज्ञानादिवस्तुनोऽनुकूलवर्तित्वं निरतिचारज्ञानाद्यासेवनेत्यर्थः। सा द्विविधा–धार्मिकाराधना, केवलिकाराधना चेति। तत्र धर्मेण–

मूर्च्छा से गृहीत कर्म का क्षय आराधना से होता है इसलिये सूत्रकार तीन सूत्रों द्वारा आराधना का कथन करते हैं–

(दुविहा आराहणा पन्नत्ता) इत्यादि।

टीकार्थ–आराधन–शास्त्र की रीति से पालन करने का नाम आराधना है, यह आराधना ज्ञानादिरूप वस्तु के अनुकूल रहने रूप होती है, जीव ज्ञानादिरूप वस्तु का अनुकूल अपने को तभी रख सकता है कि जब ज्ञानादिकों में अतिचार न लगावे अतः निरतिचार रूप से ज्ञानादिकों का आसेवन करना यही आराधना है। यह आराधना दो प्रकार की है एक धार्मिकाराधना और दूसरी केवलिकाराधना, श्रुतचारित्ररूप धर्म

મૂર્ચ્છા દ્વારા ગૃહીત કર્મના ક્ષય આરાધનાથી થાય છે. તેથી હવે સૂત્રકાર ત્રણ સૂત્રો દ્વારા આરાધનાનું કથન કરે છે.

" दुविहा आराहणा पण्णत्ता " ઇત્યાદિ—

ટીકાર્થ–આરાધન–શાસ્ત્રનુ શાસ્ત્રોક્ત રીતે પાલન કરવું તેનું નામ આરાધના છે તે આરાધના જ્ઞાનાદિરૂપ વસ્તુને અનુકૂળ રહેવા રૂપ હોય છે જીવ ત્યારે જ પોતાને જ્ઞાનાદિક વસ્તુને અનુરૂપ રાખી શકે છે કે જ્યારે તેને જ્ઞાનાદિકોમાં અતિચાર (દોષ) લાગી જતા નથી તે કારણે નિરતિચાર રૂપે જ્ઞાનાદિકોનું આસેવન કરવુ તેનું નામ જ આરાધના છે. તે આરાધના બે પ્રકારની કહી છે.

पूर्वोक्तमष्टविध कर्म मूर्च्छाजन्य भवतीति मूर्च्छास्वरूपमाह—

मूलम्—दुविहा मुच्छा पण्णत्ता, त जहा–पेज्जवत्तिया चेव दोसवत्तिया चेव। पेज्जवत्तिया मुच्छा दुविहा पण्णत्ता, त जहा—माया चेव लोभे चेव। दोसवत्तिया मुच्छा दुविहा पण्णत्ता त जहा–कोहे चेव माणे चेव ॥ सू० ४९ ॥

छाया—द्विविधा मूर्च्छा प्रज्ञप्ता, तद्यथा–प्रेमप्रत्यया चैव द्वेष प्रत्यया चैव १। प्रेमप्रत्यया मूर्च्छा द्विविधा प्रज्ञप्ता, तद्यथा–मायाचैव लोभश्चैव २। द्वेषप्रत्यया मूर्च्छा द्विविधा प्रज्ञप्ता–तद्यथा–क्रोधश्चैव मानश्चैव ३॥ सू० ४९ ॥

टीका—'दुविहा मुच्छा' इत्यादि। मूर्छा–मोह सदसद्विवेकनाशः। सा द्विविधा–प्रेमप्रत्यया द्वेषप्रत्यया चेति। प्रेम–राग तत् प्रत्ययो हेतुर्यस्याः सा प्रेमप्रत्यया। एव द्वेषो हेतुर्यस्याः सा द्वेषप्रत्यया १। प्रेमप्रत्यया मूर्च्छा द्विविधा—मायालोभश्च–मायारूपा लोभरूपा चेति २। एवं द्वेषप्रत्यया मूर्च्छाऽपि द्विविधा—क्रोधः, मानश्च, क्रोधरूपा मानरूपा चेति ३ ॥ सू० ४९ ॥

पूर्वोक्त अष्टविध कर्म मूर्च्छाजन्य होता है अतः अब सूत्रकार मूर्च्छा का स्वरूप कहते हैं–(दुविहा मुच्छा पत्तता) इत्यादि।

टीकार्थ–सदसद्विवेक के विनाश का नाम मूर्च्छा–मोह है यह मूर्च्छा दो प्रकार की कही गई है एक प्रेमप्रत्यया और दूसरी द्वेषप्रत्यया राग–प्रेम जिस मूर्च्छा का कारण होता है वह प्रेमप्रत्यया मूर्च्छा है, तथा द्वेष जिस मूर्च्छा का कारण होता है वह द्वेष प्रत्यया मूर्च्छा है। इनमें प्रेम प्रत्यया (प्रेमनिमित्त) मूर्च्छा भी दो प्रकार की है एक मायारूप और दूसरी लोभरूप इसी तरह से द्वेष प्रत्यया (द्वेषनिमित्त) मूर्च्छा भी दो प्रकार की है एक क्रोधरूप और दूसरी मानरूप ॥ सू० ४९ ॥

પૂર્વોક્ત આઠે પ્રકારના કર્મ મૂર્ચ્છાજન્ય હોય છે, તેથી હવે સૂત્રકાર મૂર્ચ્છાના સ્વરૂપનું નિરૂપણ કરે છે–"દુવિહા મુચ્છા પણ્ણત્તા" ઇત્યાદિ—

ટીકાર્થ–સારાં નરસાંના વિવેકનો વિનાશ થવો તેનું નામ મૂર્ચ્છા છે તેનું બીજું નામ મોહ પણ છે મૂર્ચ્છાના નીચે પ્રમાણે બે પ્રકાર છે–(૧) પ્રેમપ્રત્યયા–પ્રેમનિમિત્ત (૨) દ્વેષપ્રત્યયા જે મૂર્ચ્છા પ્રેમ (રાગ) ને કારણે ઉદ્ભવે છે, તે મૂર્ચ્છાને પ્રેમપ્રત્યયા કહે છે દ્વેષને કારણે ઉદ્ભવતી મૂર્ચ્છાને દ્વેષપ્રત્યયા કહે છે પ્રેમ પ્રત્યયા મૂર્ચ્છાના પણ બે પ્રકાર છે–(૧) માયારૂપ અને (૨) લોભરૂપ. દ્વેષપ્રત્યયા મૂર્ચ્છાના પણ બે પ્રકાર છે–(૧) ક્રોધરૂપ (૨) માનરૂપ. ॥ સૂ. ૪૯ ॥

अथवा कल्पाः—सौधर्मादयः, विमानानि—तदुपरिवर्त्तिग्रैवेयकादीनि कल्पविमानानि, तेषु उपपत्तिः—उपपातो जन्म यस्याः सकाशात् सा कल्पविमानोपपत्तिका ज्ञानाद्याराधना । एषा च श्रुतकेवल्यादीनां भवतीति । एवं फला चेयमनन्तरं—फलद्वारेणोक्ता, परम्परया त्वेषा भवान्तक्रियानुपातिन्येवेति । 'सुयधम्मे'—त्यादौ विषयभेदेनाराधनाभेदः प्रोक्तः, 'केवलि आराहणे'—त्यादौ तु फलभेदेनाराधनाभेद इति ॥ सू० ५० ॥

पूर्वं ज्ञानाद्याराधना प्रोक्ता, तत्फलभूताश्च तीर्थंकराः तैर्वा सा सम्यगाराधिता, प्ररूपिता वेति तीर्थंकरप्ररूपणां द्विस्थानकानुपातेन प्राह—

मूलम्--दो तित्थयरा नीलुप्पलसमा वन्नेणं पण्णत्ता तं जहा--मुणिसुव्वए चेव अरिट्ठ नेमी चेव । दो तित्थयरा पियंगुसमा वन्नेणं पण्णत्ता, तं जहा--मल्ली चेव पासे चेव । दो तित्थयरा पउमगोरा वण्णेणं पण्णत्ता तं जहा--पउमप्पहे चेव वासुपुज्जे चेव । दो तित्थगरा चंदगोरावन्नेणं पण्णत्ता तं जहा--चंदप्पभे चेव पुप्फदंते चेव ॥ सू० ५१ ॥

सौधर्मादिकों में चार इनके ऊपर ग्रैवेयक आदि विमान हैं उनमें जिससे जीव का जन्म होता है ऐसी वह आराधना कल्पविमानोपपत्तिका है । यह आराधना श्रुतकेवली आदिकों को होती है यह आराधना अनन्तर फलद्वारा ऐसी फलवाली कही गई है परम्पराफल की अपेक्षा तो यह आराधना भवान्तक्रियानुपातिनी ही होती है, "सुयधम्मा" इत्यादि में विषय भेद से आराधनाकाभेद कहा है और "केवलि आराहणा" इत्यादि में फलभेद से आराधनाभेद कहा है ॥ सू० ५० ॥

આદિ વિમાનોમાં જેના દ્વારા જીવનો જન્મ થાય છે એવી તે જ્ઞાનાદિ આરાધનાને કલ્પવિમાનોપપત્તિકા આરાધના કહે છે શ્રુતકેવલી આદિકોની આરાધના આ પ્રકારની હોય છે. આ આરાધના અનન્તર ફલ દ્વારા આ પ્રકારના ફલવાળી કહી છે. પરમ્પરા ફલની અપેક્ષાએ તો આ આરાધના ભવાન્તક્રિયાનુપાતિની હોય છે. "सुयधम्मा" ઇત્યાદિમાં વિષયભેદની અપેક્ષાએ આરાધનાભેદ પ્રકટ કર્યાં છે અને "केवली आराहणा" ઇત્યાદિમાં ફલભેદની અપેક્ષાએ આરાધનાનાભેદ કહ્યા છે. ॥ સૂ. ૫૦ ॥

श्रुतचारित्रलक्षणेन चरन्ति ये ते धार्मिकाः—साधवः, तेषामियं धार्मिकी, सा चा साराधना च धार्मिकाराधना। केवलिकानां श्रुतावधिमनःपर्ययकेवलज्ञानिनामय केवलिकी, सा चासावाराधना चेति केवलिकाराधना २। धार्मिकारा धना द्विविधा—श्रुतधर्माराधना चारित्रधर्माराधना चेति । व्याख्या सुगमा २। केवलिकाराधना द्विविधा—अन्तक्रिया, कल्पविमानोपपत्तिका चेति । तत्र—अन्तो—भवान्तस्तस्य क्रिया—अन्तक्रिया भवच्छेद इत्यर्थः, तद्धेतुभूता या—आराधना शैलेशीरूपा सा—अन्तक्रियेति, उपचारात् । एषा च क्षायिकज्ञाने केवलिनामेव भवति । तथा कल्पेषु—देवलोकेषु न तु ज्योतिश्चारे, विमानानि—देवावासविशेषाः

के अनुसार जो चलते हैं वे धार्मिक हैं ऐसे धार्मिक साधुजन होते हैं उन साधुजनों की आराधना धार्मिकाराधना है। श्रुतज्ञानवालों की, अवधिज्ञानवालों की, मनःपर्ययज्ञानवालों की और केवलज्ञान वालों की जो आराधना है वह केवलिकाराधना है धार्मिकाराधना दो प्रकार की है श्रुतधर्माराधना और चारित्रधर्माराधना इनकी व्याख्या सुगम है केवलिकाराधना दो प्रकार की है अन्तक्रिया और कल्पविमानोपपत्तिका भवच्छेदक शैलेशीरूप जो आराधना होती है वह अन्तक्रिया केवलिकाराधना है अन्तक्रिया नाम भवच्छेद का है परन्तु इसका हेतुरूप आराधना को जो अन्तक्रिया कहा है वह उपचारसे कहा गया है ऐसा जानना चाहिये। यह क्षायिकज्ञान के होने पर केवलियों का ही होती है कल्पों में—देवलोकों में ज्योतिश्चार में नहीं, जो देवावासविशेष हैं उनमें अथवा

(१) धार्मिक आराधना अने (२) केवलि आराधना श्रुतचारित्र रूप धर्मानुसार चाले छे, तेमने धार्मिक कहेवाय छे साधुओ एवा धार्मिक होय छे, ते साधुओनी आराधनाने धार्मिकाराधना कहे छे श्रुतज्ञानवाळानी, अवधिज्ञानवाळानी, मनःपर्यवज्ञानवाळाओनी अने केवळज्ञानवाळानी आराधनाने केवलिकाराधना कहे छे धार्मिकाराधना बे प्रकारनी छे (१) श्रुतधर्माराधना अने (२) चारित्रधर्माराधना, आ बन्ने पदो सरळ छे केवलिकाराधना बे प्रकारनी छे—(१) अन्तक्रिया (२) कल्पविमानोपपत्तिका भवछेदक शैलेशीरूप जे आराधना होय छे, तेनु नाम अन्तक्रिया केवलिकाराध । छे भवच्छेदनुं (भवनो विनाश) नाम ज अन्तक्रिया छे, परन्तु तेना हेतुरूप आराधनाने जे अन्तक्रिया कहेल छे ते औपचारिक रीते कहेल छे एम समजवुं क्षायिक ज्ञान थाय त्यारे केवलीओमां ज तेनो सद्भाव रहे छे कल्पोमां—देवलोकमां (ज्योतिश्चारमां नहीं) जे देवावास विशेष छे ते देवावासोमां अथवा सौधर्मादि विमानोमां अने ग्रैवेयक

अथवा कल्पाः-सौधर्मादयः, विमानानि-तदुपरिवर्त्तिग्रैवेयकादीनि कल्पविमानानि, तेषु उपपत्तिः-उपपातो जन्म यस्याः सकाशात् सा कल्पविमानोपपत्तिका ज्ञानाद्याराधना । एषा च श्रुतकेवल्यादीनां भवतीति । एवं फला चेयमनन्तरं-फलद्वारेणोक्ता, परम्परया त्वेषा भवान्तक्रियानुपातिन्येवेति । 'सुयधम्मे'-त्यादौ विषयभेदेनाराधनाभेदः प्रोक्तः, 'केवलि आराहणे'-त्यादौ तु फलभेदेनाराधनाभेद इति ॥ सू० ५० ॥

पूर्वं ज्ञानाद्याराधना प्रोक्ता, तत्फलभूताश्च तीर्थकराः तैर्वा सा सम्यगाराधिता, प्ररूपिता वेति तीर्थकरप्ररूपणां द्विस्थानकानुपातेन प्राह—

मूलम्--दो तित्थयरा नीलुप्पलसमा वन्नेणं पण्णत्ता तं जहा--मुणिसुव्वए चेव अरिट्ठ नेमी चेव । दो तित्थयरा पियंगुसमा वन्नेणं पण्णत्ता, तं जहा--मल्ली चेव पासे चेव । दो तित्थयरा पउमगोरा वण्णेणं पण्णत्ता तं जहा--पउमप्पहे चेव वासुपुज्जे चेव । दो तित्थयरा चंदगोरा वन्नेणं पण्णत्ता तं जहा--चंदप्पभे चेव पुप्फदंते चेव ॥ सू० ५१ ॥

सौधर्मादिकों में चार इनके ऊपर ग्रैवेयक आदि विमान हैं उनमें जिससे जीव का जन्म होता है ऐसी वह आराधना कल्पविमानोपपत्तिका है। यह आराधना श्रुतकेवली आदिकों को होती है यह आराधना अनन्तर फलद्वारा ऐसी फलवाली कही गई है परम्पराफल की अपेक्षा तो यह आराधना भवान्तक्रियानुपातिनी ही होती है, "सुयधम्मा" इत्यादि में विषय भेद से आराधनाका भेद कहा है और "केवलि आराहणा" इत्यादि में फलभेद से आराधनाभेद कहा है ॥ सू० ५० ॥

આદિ વિમાનોમાં જેના દ્વારા જીવનો જન્મ થાય છે એવી તે જ્ઞાનાદિ આરાધનાને કલ્પવિમાનોપપત્તિકા આરાધના કહે છે. તકેવલી આદિકોની આરાધના આ પ્રકારની હોય છે આ આરાધના અનન્તર ફલ દ્વારા આ પ્રકારના ફલવાળી કહી છે પરમ્પરા ફલની અપેક્ષાએ તો આ આરાધના ભવાન્તક્રિયાનુપાતિની હોય છે. "सुयधम्मा" ઈત્યાદિમાં વિષયભેદની અપેક્ષાએ આરાધનાભેદ પ્રકટ કર્યા છે અને "केवली आराहणा" ઈત્યાદિમાં ફલભેદની અપેક્ષાએ આરાધનાનાભેદ કહ્યા છે. ॥ સૂ. ૫૦ ॥

श्रुतचारित्रलक्षणेन चरन्ति ये ते धार्मिकाः—साधवः, तेषामियं धार्मिकी, सा चासावाराधना च धार्मिकाराधना। केवलिकानां श्रुतावधिमनःपर्ययकेवलज्ञानिनामयं केवलिकी, सा चासावाराधना चेति केवलिकाराधना २। धार्मिकाराधना द्विविधा—श्रुतधर्माराधना चारित्रधर्माराधना चेति। व्याख्या सुगमा २। केवलिकाराधना द्विविधा—अन्तक्रिया, कल्पविमानोपपत्तिका चेति। तत्र—अन्तो-भवान्तस्तस्य क्रिया-अन्तक्रिया भवच्छेद इत्यर्थः, तद्धेतुभूता या-आराधना शैलेशीरूपा सा—अन्तक्रियेति, उपचारात्। एषा च क्षायिकज्ञाने केवलिनामेव भवति। तथा कल्पेषु—देवलोकेषु न तु ज्योतिश्चारे, विमानानि—देवावासविशेषाः,

के अनुसार जो चलते हैं वे धार्मिक हैं ऐसे धार्मिक साधुजन होते हैं उन साधुजनों की आराधना धार्मिकाराधना है। श्रुतज्ञानवालों की, अवधिज्ञानवालों की, मनःपर्ययज्ञानवालों की और केवलज्ञान वालों की जो आराधना है वह केवलिकाराधना है धार्मिकाराधना दो प्रकार की है श्रुतधर्माराधना और चारित्रधर्माराधना इनकी व्याख्या सुगम है केवलिकाराधना दो प्रकार की है अन्तक्रिया और कल्पविमानोपपत्तिका भवच्छेदक शैलेशीरूप जो आराधना होती है वह अन्तक्रिया केवलिकाराधना है अन्तक्रिया नाम भवच्छेद का है परन्तु इसका हेतुरूप आराधना को जो अन्तक्रिया कहा है वह उपचारसे कहा गया है ऐसा जानना चाहिये। यह क्षायिकज्ञान के होने पर केवलियों का ही होती है कल्पों में—देवलोकों में ज्योतिश्चार में नहीं, जो देवावासविशेष हैं उनमें अथवा

(૧) ધાર્મિક આરાધના અને (૨) કેવલિક આરાધના. જેઓ શ્રુતચારિત્ર રૂપ ધર્માનુસાર ચાલે છે, તેઓ ધાર્મિક કહેવાય છે સાધુઓ એવા ધાર્મિક હોય છે, તે સાધુઓની આરાધનાને ધાર્મિકારાધના કહે છે શ્રુતજ્ઞાનવાળાની, અવધિજ્ઞાનવાળાની, મનઃપર્યવજ્ઞાનવાળાની અને કેવળજ્ઞાનવાળાની આરાધનાને કેવલિકારાધના કહે છે ધાર્મિકારાધના બે પ્રકારની છે (૧) શ્રુતધર્મારાધના અને (૨) ચારિત્રધર્મારાધના, આ બન્ને પદો સરળ છે કેવલિકારાધના બે પ્રકારની છે—(૧) અન્તક્રિયા (૨) કલ્પવિમાનોપપત્તિકા ભવછેદક શૈલેશીરૂપ જે આરાધના હોય છે તેનું નામ અન્તક્રિયા કેવલિકારાધના છે ભવચ્છેદનું (ભવનો વિનાશ) નામ જ અન્તક્રિયા છે પરન્તુ તેના હેતુરૂપ આરાધનાને જે અન્તક્રિયા કહેલ છે તે ઔપચારિક રીતે કહેલ છે એમ સમજવું ક્ષાયિક જ્ઞાન થાય ત્યારે કેવલીઓમાં જ તેનો સદ્ભાવ રહે છે કલ્પોમાં—દેવલોકોમાં (જ્યોતિશ્ચારમાં નહીં) જે દેવાવાસ વિશેષ છે તે દેવાવાસોમાં અથવા સૌધર્માદિ વિમાનોમાં અને ગ્રૈવેયક

अथवा कल्पाः-सौधर्मादयः, विमानानि-तदुपरिवर्त्तिग्रैवेयकादीनि कल्पविमानानि, तेषु उपपत्तिः-उपपातो जन्म यस्याः सकाशात् सा कल्पविमानोपपत्तिका ज्ञानाद्याराधना। एषा च श्रुतकेवल्यादीनां भवतीति। एवं फला चेयमनन्तरं-फलद्वारेणोक्ता, परम्परया त्वेषा भवान्तक्रियानुपातिन्येवेति। 'सुयधम्मे'-त्यादौ विषयभेदेनाराधनाभेदः प्रोक्तः, 'केवलि आराहणे'-त्यादौ तु फलभेदेनाराधनाभेद इति॥ सू० ५०॥

पूर्वं ज्ञानाद्याराधना प्रोक्ता, तत्फलभूताश्च तीर्थकराः तैर्वा सा सम्यगाराधिता, प्ररूपिता चेति तीर्थकरप्ररूपणां द्विस्थानकानुपातेन प्राह—

मूलम्--दो तित्थयरा नीलुप्पलसमा वन्नेणं पण्णत्ता तं जहा--मुणिसुव्वए चेव अरिट्ठ नेमी चेव। दो तित्थयरा पियंगुसमा वन्नेणं पण्णत्ता, तं जहा--मल्ली चेव पासे चेव। दो तित्थयरा पउमगोरा वण्णेणं पण्णत्ता तं जहा--पउमप्पहे चेव वासुपुज्जे चेव। दो तित्थगरा चंदगोरावन्नेणं पण्णत्ता तं जहा--चंदप्पभे चेव पुप्फदंते चेव॥ सू० ५१॥

सौधर्मादिकों में चार इनके ऊपर ग्रैवेयक आदि विमान हैं उनमें जिससे जीव का जन्म होता है ऐसी वह आराधना कल्पविमानोपपत्तिका है। यह आराधना श्रुतकेवली आदिकों को होती है यह आराधना अनन्तर फलद्वारा ऐसी फलवाली कही गई है परम्पराफल की अपेक्षा तो यह आराधना भवान्तक्रियानुपातिनी ही होती है, "सुयधम्मा" इत्यादि में विषय भेद से आराधनाका भेद कहा है और "केवलि आराहणा" इत्यादि में फलभेद से आराधनाभेद कहा है॥ सू० ५०॥

આદિ વિમાનોમાં જેના દ્વારા જીવનો જન્મ થાય છે એવી તે જ્ઞાનાદિ આરાધનાને કલ્પવિમાનોપપત્તિકા આરાધના કહે છે તકેવલી આદિકોની આરાધના આ પ્રકારની હોય છે. આ આરાધના અનન્તર ફલ દ્વારા આ પ્રકારના ફલવાળી કહી છે. પરમ્પરા ફલની અપેક્ષાએ તો આ આરાધના ભવાન્તક્રિયાનુપાતિની હોય છે. "सुयधम्मा" ઈત્યાદિમાં વિષયભેદની અપેક્ષાએ આરાધનાભેદ પ્રકટ કર્યા છે અને "केवली आराहणा" ઈત્યાદિમાં ફલભેદની અપેક્ષાએ આરાધનાનાભેદ કહ્યા છે. ॥ સૂ. ૫૦ ॥

छाया-द्वौ तीर्थकरौ नीलोत्पलसमौ वर्णेन प्रज्ञप्तौ, तद्यथा-मुनिसुव्रतश्चैव अरिष्टनेमिश्चैव १। द्वौ तीर्थकरौ प्रियङ्गुसमौ वर्णेन प्रज्ञप्तौ, तद्यथा-मल्लिश्चैव पार्श्वश्चैव २। द्वौ तीर्थकरौ पद्मगौरौ वर्णेन प्रज्ञप्तौ, तद्यथा-पद्मप्रभश्चैव वासुपूज्य श्चैव ३। द्वौ तीर्थकरौ चन्द्रगौरौ वर्णेन प्रज्ञप्तौ, तद्यथा-चन्द्रप्रभश्चैव पुष्प दन्तश्चैव ४ ॥ सू० ५१ ॥

टीका—'दो तित्थयरा' इत्यादि, सूत्रचतुष्टय सुगमम्। नवरम्-पियंगुसमौ' प्रियङ्गुसमौ, प्रियङ्गुः-फलिनीतरुस्तत्समौ वर्णेन नीलाविति। 'पउमगोरा' इति

पूर्व में ज्ञानादि आराधना कही गई है इसके फलभूत तीर्थंकर होते हैं उन्हों ने इसका अच्छी तरह से आराधना किया है और उन्हों ने ही इसकी प्ररूपणा की है, अतः अब सूत्रकार दिस्थानकानुपात को लेकर तीर्थंकर की प्ररूपणा करते हैं-(दो तित्थयरा नीलुप्पलसमा वन्नेण *पण्णत्ता*) इत्यादि।

टीकार्थ-मुनिसुव्रत और अरिष्टनेमि ये दो तीर्थंकर नीलकमल के वर्ण जैसे वर्णवाले कहे गये हैं मल्ली और पार्श्वनाथ ये दो तीर्थंकर प्रियङ्गु के वर्ण जैसे वर्ण वाले कहे गये हैं पद्मप्रभ और वासुपूज्य ये दो तीर्थंकर पद्म के वर्ण जैसे वर्ण वाले कहे गये हैं अर्थात् पद्म के समान गौर वर्ण वाले कहे गये हैं चन्द्रप्रभ और पुष्पदन्त ये दो तीर्थंकर चन्द्रमा के जैसे गौर वर्ण वाले कहे गये हैं। प्रियङ्गु नीलवर्ण वाला फलिनीवृक्ष होता है, अतः मल्ली और पार्श्वनाथ ये दो तीर्थंकर भी नीलवर्ण के हैं रक्त कमल का

પહેલાના સૂત્રમાં જ્ઞાનાદિ આરાધનાનું નિરૂપણ કરવામાં આવ્યું છે તેના ફલભૂત તીર્થંકર હોય છે તેમણે જ તેનું સારી રીતે આરાધન કર્યું છે અને તેમણે જ તેની પ્રરૂપણા કરી છે તેથી હવે સૂત્રકાર દ્વિસ્થાનકાનુપાતની અપેક્ષાએ તીર્થંકરોની પ્રરૂપણા કરે છે—

ટીકાર્થ—"દો તિત્થયરા નીલુપ્પલસમાવણ્ણેણં પણ્ણત્તા" ઇત્યાદિ—

મુનિસુવ્રત અને અરિષ્ટનેમી નામના બે તીર્થંકરો નીલ-કમળના જેવાં વર્ણવાળા હતા. મલ્લી અને પાર્શ્વનાથ નામના તીર્થંકરો પ્રિયંગુના જેવાં વર્ણવાળા હતા પદ્મપ્રભ અને વાસુપૂજ્ય નામના તીર્થંકરો પદ્મના જેવા ગૌર વર્ણવાળા હતા ચન્દ્રપ્રભ અને પુષ્પદન્ત નામના બે તીર્થંકરો ચન્દ્રમાના જેવા ગૌર વર્ણવાળા હતા. પ્રિયંગુ નામનું નીલવર્ણના ફળોવાળું વૃક્ષ હોય છે મલ્લી અને પાર્શ્વનાથ નામના તીર્થંકરોનો વર્ણ નીલ હોવાથી તેમને પ્રિયંગુના

पद्मगौरौ, तत्र पद्मं-रक्तकमलं, तद्वद् गौरौ रक्तावित्यर्थः। 'चंद्गोरा' इति चन्द्रगौरौ, तत्र चन्द्रवत् गौरौ-शुक्लौ श्वेतवर्णावित्यर्थः।

उक्तञ्च—"पउमाभ वासुपूज्जा, रत्ता ससिपुप्फदंत ससिगोरा।

सुव्वयनेमीकाला, पासो मल्ली पियंगाभा॥ ८॥"

छाया-पद्मप्रभ-वासुपूज्यौ, रक्तौ चन्द्रसुविधी शशिगौरौ।

सुव्रतनेमी कृष्णौ, पार्श्वमल्ली प्रियङ्ग्वाभौ॥ ७॥ इति। सू०५१॥

अनन्तरं तीर्थकरस्वरूपमुक्तम्। सर्वभावानां तीर्थकरप्ररूपितत्वात् कतिपय भावान् द्विस्थानकेनाह—

मूलम्—सच्चप्पवायपुव्वस्स णं दुवे वत्थू पण्णत्ते। पुव्वाभद्दवया णक्खत्ते दुतारे पण्णत्ते। उत्तरभद्दवया णक्खत्ते दुतारे पण्णत्ते। एवं पुव्वफग्गुणी, उत्तरा फग्गुणी। अंतो णं मणुस्स खेत्तस्स दो समुद्दा पण्णत्ता, तं जहा-लवणे चेव कालोदे चेव। दो चक्कवट्टी अपरिचत्तकामभोगा कालमासे कालं किच्चा अहे सत्तमाए पुढवीए अप्पइट्ठाणे णरए णेरइयत्ताए उववन्ना तं जहा-सुभूमे चेव बंभदत्ते चेव॥ सू० ५२॥

छाया—सत्यप्रवादपूर्वस्य खलु द्वे वस्तुनी प्रज्ञप्ते। पूर्वाभाद्रपदनक्षत्रं द्वितारं प्रज्ञप्तम्। उत्तराभाद्रपदनक्षत्रं द्वितारं प्रज्ञप्तम्। एवं पूर्वाफाल्गुनी, उत्तरा फाल्गुनी। अन्तः खलु मनुष्यक्षेत्रस्य द्वौ समुद्रौ प्रज्ञप्तौ, तद्यथा-लवणश्चैव कालोदश्चैव। द्वौ

नाम पद्म है इस पद्म के समान गौर वर्ण वाले पद्मप्रभ और वासुपूज्य हैं चन्द्रप्रभ और पुष्पदन्त चन्द्र के जैसे श्वेत वर्ण वाले हैं। कहा भी है-"पउनाभवासुपुज्जा" इत्यादि॥ ०५१॥

तीर्थंकर के रूपकथन के बाद अब सूत्रकार सर्वभाव के प्ररूपक तीर्थंकर होने के कारण उनमें से कितनेक भावों की द्विस्थानक को

समान नीलवर्णा कह्या छे रक्तकमળने पद्म कहे छे. ते पद्मना समान गौर वर्णवाળा पद्मप्रभ अने वासुपूज्य हता चन्द्रप्रभ अने पुष्पदन्तनो वर्ण चन्द्रना जेवो गोरो (श्वेत) हतो. कह्युं पण छे के-"पउनाभ वासुपुज्जा" इत्यादि सू. ५१

तीर्थंकरोना वर्णनुं कथन करीने हवे सूत्रकार केटलाक भावोनी द्विस्थानकनी अपेक्षाए प्ररूपणा करे छे. सर्वभावना प्ररूपक तीर्थंकरो होय छे, आ

चक्रवर्तिनौ मारिस्यक्तकामभोगौ कालमासे कालं कृत्वा अधः सप्तम्यां पृथिव्याम् अप्रतिष्ठाने नरके नैरयिकतया उपपन्नौ, तद्यथा–सुभूमश्चैव ब्रह्मदत्तश्चैव॥सू०५२॥

टीका—' सच्चप्पवायपुव्वस्स णं ' इत्यादि ।

सद्भ्यो–जीवेभ्यो हितं सत्यं–संयमः सत्यवचनं वा, स सभेदः सप्रति पक्षश्च प्र–प्रकर्षेण उद्यते–अभिधीयते यत्र तत् सत्यप्रवादं तच्च तत् पूर्वं च सकल-श्रुतात् पूर्वं क्रियमाणत्वादिति सत्यप्रवादपूर्वम् । तच्च चतुर्दशसु पूर्वेषु षष्ठमस्ति। तत्परिमाणं च— एकापदकोटी षट् पदाधिका । उक्तञ्च—

छाया—" एगा पयाणकोडी, छच्च पया सच्चवायंमि । "

एका पदानां कोटी षट् च पदानि सत्यवादे । इति ॥

अस्य पूर्वस्य द्वे वस्तुनी–अध्ययनादि वत्परिमागविशेषौ प्रज्ञप्ते–तीर्थकरैः कथिते । अथ द्विस्थानकेन नक्षत्रवक्तव्यतामाह—' पुव्वाभद्दवया० नक्खत्ते '

लेकर प्ररूपणा करते हैं–(सच्चप्पवायपुव्वस्स) इत्यादि ।

टीकार्थ–जीवों का हितकारक जो होता है वह सत्य है ऐसा सत्य संयम या सत्यवचन होताहै । इस सत्य की जिसमें प्ररूपणा अच्छी तरह से कही गई है वह सत्यप्रवाद है, यह सत्यप्रवाद संपूर्ण श्रुत की अपेक्षा पहिले क्रियमाण होने से " सत्यप्रवाद पूर्व " इस नाम से कहा गया है यह चौदह पूर्वों में ६ ठा पूर्व है इसका परिणाम ६ पद अधिक एक पद कोटि है । कहा भी है–" एगा पयाण कोडी छच्च पया सच्च वायंमि "॥

इस पूर्व की दो वस्तु हैं अध्ययन आदि की तरह उसका दो विभाग विशेष हैं ऐसा तीर्थकरों ने कहा है । नक्षत्र वक्तव्यता–पूर्वाभाद्रपद

સંબંધને અનુલક્ષીને હવે કેટલાક ભાવોની પ્રરૂપણા કરવામાં આવે છે

ટીકાર્થ–" સચ્ચપ્પવાયપુવ્વસ્સ " ઇત્યાદિ—

જીવોનું હિતકારક જે હોય છે તેને સત્ય કહે છે એવું સત્ય સંયમ અથવા સત્ય વચન હોય છે આ સત્યની જેમાં સારી રીતે પ્રરૂપણા કરવામાં આવી છે તેનું નામ સત્યપ્રવાદ છે આ સત્યપ્રવાદ સંપૂર્ણ શ્રુતની અપેક્ષાએ પહેલાં ક્રિયમાણ હોવાથી તેને ' સત્યપ્રવાદપૂર્વ ' કહેવાય છે તે ૧૪ પૂર્વોમાં છઠ્ઠું પૂર્વ છે તેનું પરિમાણ એક કોટિ અને ૬ લાખ અધિક પદનું છે

કહ્યું પણ છે—" એગા પયાણ કોડી છચ્ચ પયા સચ્ચ વાયંમિ " ॥

આ સત્ય પ્રવાદપૂર્વના એક કરોડ અને છ લાખ પદ છે

આ પૂર્વની બે વસ્તુ છે–અધ્યયન આદિની જેમ તેના બે વિભાગ વિશેષ છે, એવું તીર્થંકરોએ કહ્યું છે નક્ષત્ર વક્તવ્યતા–પૂર્વા ભાદ્રપદ નક્ષત્ર બે તારા

इत्यादि, नक्षत्रविषयं सूत्रचतुष्टयं सुगमम् । द्विस्थानकेन समुद्रवक्तव्यतामाह— 'अंतो णं' इत्यादि, मनुष्यक्षेत्रस्य पञ्चचत्वारिंशल्लक्षयोजनप्रमाणस्य मनुष्योत्पत्त्यादि विशिष्टाकाशखण्डस्य अन्तः-मध्ये द्वौ समुद्रौ प्रज्ञप्तौ—लवणसमुद्रः—कालोदधि समुद्रश्चेति। चक्रवर्त्ति वक्तव्यतां द्विस्थानकेनाह—'दोचक्कवट्टी' इत्यादि, चक्रेण-चक्ररत्नेन वर्त्तितुं शीलं ययोस्तौ चक्रवर्तिनौ द्वौ अपरित्यक्तकामभोगौ= अपरित्यक्ता-न त्यक्ताः कामभोगाः, कामौ शब्दरूपे, भोगाः-गन्धरसस्पर्शाः, यद्वा-काम्यन्त इति कामाः-मनोज्ञाः, भुज्यन्त इति भोगाः-शब्दादयः याभ्यां तौ तथोक्तौ, कालमासे-मरणावसरे कालं कृत्वा-मृत्वा अधःसप्तम्यां पृथिव्यां तमस्तमायामित्यर्थः अप्रतिष्ठाने पञ्चानां नरकावासानां मध्यमे नरकावासे नैर-

---

नक्षत्र दो तारों वाला कहा गया है उत्तराभाद्रपदनक्षत्र दो तारों वाला कहा गया है इसी तरह पूर्वाफाल्गुनी और उत्तराफाल्गुनी भी दो २ तारे वाले जानने चाहिये। ४५ लाख योजन प्रमाण वाले मनुष्य क्षेत्र के-मनुष्योत्पत्ति आदिविशिष्ट आकाशखण्ड के मध्य में दो समुद्र कहे गये है एक लवण समुद्र और दूसरा कालोदधि समुद्र।

चक्रवर्तिवक्तव्यता-चक्र रत्न से वर्तन (विजय प्राप्त) करने का जिनका स्वभाव होता है वे चक्रवर्ती हैं। दो चक्रवर्ती अपरित्यक्त काम-भोग की अवस्था में मरकर अधः सप्तमी पृथिवी में कहे गये हैं, काम शब्द से शब्द और रूप गृहीत हुए हैं और भोग शब्द से गन्धादिक गृहीत हुए हैं सप्तमीपृथिवी में पांच नरकावास है। उन नारकावासों के मध्य में जो अप्रतिष्ठान नामका नरकावास है उसमें ये दो चक्रवर्ती कि जिनमें से एक का नाम सुभूम चक्रवर्ती था और जो

વાળું કહ્યું છે, ઉત્તરા ભાદ્રપદ નક્ષત્ર પણ બે તારાવાળું કહ્યું છે. એજ પ્રમાણે પૂર્વા ફાલ્ગુની અને ઉત્તરા ફાલ્ગુની નક્ષત્રો પણ બબ્બે તારાવાળાં છે. ૪૫ લાખ યોજનના પ્રમાણુવાળા મનુષ્યક્ષેત્રના-મનુષ્યોત્પત્તિ આદિ વિશિષ્ટ આકાશ ખંડની મધ્યમાં બે સમુદ્રો કહ્યા છે-(૧) લવણુ સમુદ્ર અને (૨) કાલોદધિ સમુદ્ર.

ચક્રવર્તિ વક્તવ્યતા-ચક્રરત્નથી વર્તન (વિજય પ્રાપ્ત) કરવાનો જેમનો સ્વભાવ હોય છે, તેમને ચક્રવર્તી કહે છે. બે ચક્રવર્તી અપરિત્યક્ત (કામભોગ ન છોડવાથી) કામભોગની હાલતમા મરીને નીચે સાતમી નરકમાં ગયેલા છે' "કામ" પદથી શબ્દ અને રૂપ ગ્રહણુ કરાયેલ છે, અને 'ભોગ' પદથી ગન્ધ ગૃહીત થયાં છે. સાતમી નરકમાં પાંચ નરકાવાસો છે. તે નરકાવાસોની મધ્યમાં જે અપ્રતિષ્ઠાન નામનું નરકાવાસ છે તેમાં તે બન્ને ચક્રવર્તી

मिथ्यवपोत्पन्नौ, तद्यथा–सुभूमः–अष्टमचक्रवर्ती ब्रह्मदत्तश्च द्वादश । तत्र च तयो स्त्रयस्त्रिंशत्सागरोपमाणि स्थितिरस्तीति ॥ सू० ५२ ॥

स्थिति प्रसङ्गाद् भवनपत्यादीनां स्थितिं प्रतिपादयितु पञ्चसूत्रीमाह—

मूलम्–असुरिंदवज्जियाणं भवणवासीणं देवाणं देसूणाइं दो पलिओवमाइं ठिई पण्णत्ता १। सोहम्मे कप्पे देवाणं उक्कोसेणं दो सागरोवमाइं ठिई पण्णत्ता २ । ईसाणे कप्पे देवाणं उक्कोसेणं साइरेगाइं दो सागरोवमाइं ठिई पण्णत्ता ३ । सणंकुमारे कप्पे देवाणं जहन्नेणं दो सागरोवमाइं ठिई पण्णत्ता४। माहिंदे कप्पे देवाणं जहन्नेणं साइरेगाइं दो सागरोवमाइं ठिई पण्णत्ता ॥ सू० ५३ ॥

छाया—असुरेन्द्रवर्जितानां भवनवासिनां देवानां देशोने द्वे पल्योपमे स्थितिः प्रज्ञप्ता १। सौधर्मकल्पे देवानामुत्कर्षेण द्वे सागरोपमे स्थितिः प्रज्ञप्ता २। ईशाने कल्पे देवानामुत्कर्षेण सातिरेके द्वे सागरोपमे स्थितिः प्रज्ञप्ता ३। सनत्कुमारे कल्पे देवानां जघन्येन द्वे सागरोपमे स्थितिः प्रज्ञप्ता ४। माहेन्द्रे कल्पे देवानां जघन्येन सातिरेके द्वे सागरोपमे स्थितिः प्रज्ञप्ता ५ ॥ सू० ५३ ॥

आठवां चक्रवर्ती हुआ है तथा दूसरे का नाम ब्रह्मदत्तचक्रवर्ती था यह १२ वां चक्रवर्ती हुआ है नैरयिक की पर्याय से उत्पन्न हुए हैं वहां इनकी ३३ सागरोपम की स्थिति है ॥ सू०५२ ॥

स्थिति के प्रसङ्ग से अब सूत्रकार भवनपति आदिकों की स्थिति को प्रतिपादन करने के लिये इस पञ्चसूत्री का कथन करते हैं–

(असुरिंद वज्जियाणं भवणवासीणं देवाणं) इत्यादि ।

એકનુ નામ સુભૂમ આઠમો ચક્રવર્તી અને બીજાનુ નામ બ્રહ્મદત્ત ચક્રવર્તી હતું સુભૂમ આઠમો ચક્રવર્તી થઈ ગયો અને બ્રહ્મદત્ત બારમો ચક્રવર્તી થઈ ગયો. તે બન્ને સાતમી નરકમાં ઉત્પન્ન થયા છે ત્યાં તેમની સ્થિતિ ૩૩ સાગરોપમની કહી છે ॥ સૂ. ૫૨ ॥

પહેલા સૂત્રમાં સ્થિતિનો ઉલ્લેખ થયો છે આ સબંધને અનુલક્ષીને સૂત્રકારે નીચેનાં પાંચ સૂત્રોમાં ભવનપતિ આદિ દેવોની સ્થિતિનું પ્રતિપાદન કર્યું છે—" અસુરિંદવજ્જિયાણં ભવણવાસીણં દેવાણં " ઇત્યાદિ—

टीका—'असुरिंद०' इत्यादि। असुरेन्द्रौ—चमरबली, तद्वर्जितानां भवनवासिनां देवानां स्थितिरुत्कर्षतो देशोने—किञ्चिन्न्यूने द्वे पल्योपमे किञ्चिन्न्यूनपल्योपम-द्वय परिमितेत्यर्थः मज्ञप्ता १। 'सोहम्मे' इत्यादि सूत्रचतुष्टयं सुगमम्। नवरं-'साइरेगाइं' इति सातिरेके-साधिके किञ्चिदधिके इत्यर्थः ५ ॥ सू० ५३ ॥

देवस्थितिप्रस्तावाद् द्विस्थानकावतारेण देववक्तव्यतां सप्तसूत्र्या प्राह—

मूलम्—दोसु कप्पेसु कप्पत्थियाओ पण्णत्ताओ तं जहा-सोहम्मे चेव ईसाणे चेव १। दोसु कप्पेसु देवा तेउलेस्सा पण्णत्ता, तं जहा-सोहम्मे चेव ईसाणे चेव २। दोसु कप्पेसु देवा कायपरियारगा पण्णत्ता, तं जहा-सोहम्मे चेव ईसाणे चेव ३। दोसु कप्पेसु देवा फासपरियारगा पण्णत्ता तं जहा-सणंकुमारे चेव माहिंदे चेव ४। दोसु कप्पेसु देवा रूवपरियारगा पण्णत्ता तं जहा-बंभलोगे चेव लंतगे चेव ५। दोसु कप्पेसु देवा सद्दपरियारगा पण्णत्ता, तं जहा महासुक्के चेव सहस्सारे चेव ६। दो इंदा मणपरियारगा पण्णत्ता, तं जहा-पाणए चेव अच्चुए चेव ॥ सू० ५४ ॥

टीकार्थ—असुरेन्द्रों को चमर और बलि को छोड़कर भवनवासी देवों की स्थिति उत्कृष्ट रूप से कुछ कम दो पल्योपम की कही गई है। सौधर्म कल्प में देवों की उत्कृष्टस्थिति दो सागरोपम की कही गई है। ईशान कल्प में देवों की उत्कृष्टस्थिति कुछ अधिक दो सागरोपम की कही गई है। सनत्कुमार कल्प में देवों की जघन्य स्थिति दो सागरोपम की कही है माहेन्द्रकल्प में देवों की जघन्यस्थिति कुछ अधिक दो सागरोपम की कही गई है ॥ ५३ ॥

ટીકાર્થ—અસુરેન્દ્રો (ચમર અને બલિ) સિવાયના ભવનવાસી દેવોની ઉત્કૃષ્ટ સ્થિતિ બે પલ્યોપમ કરતા થોડી ન્યૂન કહી છે. સૌધર્મ કલ્પના દેવોની ઉત્કૃષ્ટ બે સાગરોપમ કરતાં સહેજ અધિક કહી છે. ઇશાન કલ્પમાં દેવોની ઉત્કૃષ્ટ સ્થિતિ બે સાગરોપમની કહી છે સનત્કુમાર કલ્પના દેવોની જઘન્ય સ્થિતિ બે સાગરોપમની કહી છે. માહેન્દ્ર કલ્પના દેવોની જઘન્ય સ્થિતિ બે સાગરોપમ કરતા થોડી અધિક કહી છે. ॥ સૂ. ૫૩ ॥

छाया—द्वयोः कल्पयोः कल्पस्त्रियः प्रज्ञप्ता, तद्यथा—सौधर्मे चैव ईशाने चैव १। द्वयोः कल्पयोर्देवाः तेजोलेश्याः प्रज्ञप्ता, तद्यथा—सौधर्मे चैव ईशाने चैव २। द्वयोः कल्पयोर्देवाः कायपरिचारकाः प्रज्ञप्ताः, तद्यथा—सौधर्मे चैव ईशाने चैव ३। द्वयोः कल्पयोर्देवाः स्पर्शपरिचारकाः प्रज्ञप्ताः, तद्यथा—सनत्कुमारे चैव माहेन्द्रे चैव ४। द्वयोः कल्पयो देवाः रूपपरिचारकाः प्रज्ञप्ताः, तद्यथा—ब्रह्मलोके चैव लान्तके चैव ५। द्वयोः कल्पयोर्देवाः शब्दपरिचारकाः प्रज्ञप्ताः, तद्यथा—महाशुक्रे चैव सहस्रारे चैव ६। द्वौ इन्द्रौ मनःपरिचारकौ प्रज्ञप्तौ, तद्यथा प्राणते चैव अच्युते चैव७॥सू०५१॥

टीका—'दोसु कप्पेसु' इत्यादि। द्वयोः कल्पयोः—देवलोकयोः प्रथमद्वितीयदेवलोकमध्ये इत्यर्थः कल्पस्त्रियः देव्यः प्रज्ञप्ताः, नान्येषु देवलोकेष्विति भावः। तद्यथा—सौधर्मे ईशाने च १। तेजोलेश्या सूत्रं सुगमम् २। एतयोरेव सौधर्मेशानदेवलोकयो देवाः कायपरिचारकाः—कायेन—शरीरेण मनुष्यस्त्रीपुंसानामिव परिचारो—मैथुनोपसेवनं येषां ते कायपरिचाराः त एव कायपरिचारकाः

देवस्थिति की वक्तव्यता को लेकर अब सूत्रकार द्विस्थानकावतार से देव संबंधी वक्तव्यता का कथन ७ सूत्र द्वारा कहते हैं—

(दोसु कप्पेसु कप्पत्थियाओ पण्णत्ताओ) इत्यादि।

टीकार्थ—दो कल्पों में प्रथम द्वितीय देवलोकों में कल्पस्त्रियों का देवियों का सद्भाव कहा गया है अर्थात् सौधर्म और ईशान इन दो कल्पों में ही देवियों की उत्पत्ति होती है अन्यकल्पों में नहीं। ऐसा तीर्थंकरों ने कहा है दो कल्पों में—सौधर्म और ईशान में तेजोलेश्यावाले देव कहे गये हैं इन्हीं दो कल्पों में काय से कायपरिचार कहा गया है—मनुष्य स्त्री की तरह शरीर से मैथुन सेवन करना कहा है दो कल्पों में—सन

દેવસ્થિતિની વક્તવ્યતાનું કથન હવે સૂત્રકાર દ્વિસ્થાનકોની અપેક્ષાએ દેવ સબંધી વક્તવ્યતાનું સાત સૂત્રો દ્વારા કથન કરે છે—

ટીકાર્થ—'દોસુ કપ્પેસુ કપ્પત્થિયાઓ પણ્ણત્તાઓ' ઇત્યાદિ—

બે કલ્પોમાં જ (પહેલા અને બીજા દેવલોકમાં જ) કલ્પસ્ત્રીઓનો (દેવીઓનો) સદ્ભાવ કહ્યો છે એટલે કે સૌધર્મ અને ઇશાન નામના બે કલ્પોમાં જ દેવીઓની ઉત્પત્તિ થાય છે બીજા કલ્પોમાં દેવીઓની ઉત્પત્તિ થતી નથી એવું તીર્થંકરોએ કહ્યું છે બે કલ્પોમાં જ (સૌધર્મ અને ઇશાન કલ્પોમાં જ) તેજોલેશ્યાવાળા દેવો હોય છે તે બે કલ્પોમાં જ કાયાદ્વારા કાયપરિચાર (મનુષ્ય અને સ્ત્રીની જેમ મૈથુન સેવન) થાય છે, એવું કહ્યું છે એટલે કે તે બે કલ્પોમાં જ દેવ-દેવીની સાથે સંયોગ કરીને પોતાની કામ

प्ताः ३। सनत्कुमारे माहेन्द्रे च स्पर्शपरिचारकाः-शरीरस्पर्शमात्रा देवोपशान्त-दोपतापाः ४। ब्रह्मलोके लान्तके च देवा रूपपरिचारकाः-रूपावलोकनमात्रत त्रोपशान्तवेदाः ५। महाशुक्रे सहस्रारे च देवाः शब्दपरिचारकाः-देवाङ्गनानां शब्दश्रवणमात्रेणैवोपशान्तवेदाः ६। प्राणतेऽच्युते च देवा मनः परिचारकाः-देवीनां मनसा स्मरणमात्रत एवोपशान्तवेदा भवन्ति ॥ सू० ५४ ॥

अनन्तरं परिचारणामोक्ता, सा च कर्मतो भवति, कर्म च जीवाः स्वहेतुभिः

त्कुमार और माहेन्द्र कल्पों में-स्पर्श से मैथुन सेवन करना कहा गया है देव देवीका स्पर्श करके अपनी कामाग्नि को शान्त कर लेता है और देवी देव का स्पर्श करके अपनी कामाग्नि को शान्त कर लेती है। दो कल्पों में ब्रह्मलोक और लान्तक कल्पों में रूप से कायपरिचार कहा गया है-अर्थात् देव देवी का रूप देखकर और देवी देव का रूप देख कर अपनी कामाग्नि को शान्त कर लेती है। दो कल्पों में-शब्द से काय परिचार कहा गया है वे दो कल्प ये हैं—महाशुक्र और सहस्रार इन दो कल्पों में देव देवी के मनोहर शब्दों को सुनकर और देवी देव के मनोहर शब्दों को सुन कर अपनी कामवासना शान्त कर लेते हैं दो इन्द्र मनसे काय परिचार करनेवाले कहे गये हैं एक प्राणत इन्द्र और दूसरा अच्युत इन्द्र अर्थात् प्राणत और अच्युत में देव मन से परिचार करनेवाले कहे गये हैं। देव देवी का मनसे स्मरण करके और देवी देवका मनसे स्मरण करके उपशान्त वेदवाली होती है ॥सू० ५४॥

ग्निने शान्त करे छे. सनत्कुमार अने माहेन्द्र कल्पमा स्पर्शथी ज मैथुन सेवन कराय छे. त्यां देव देवीनो स्पर्श करीने ज पोतानी कामाग्निने शान्त करे छे, अने देवी-देवनो स्पर्श करीने पोतानी कामाग्निने शान्त करे छे ब्रह्मलोक अने लान्तक कल्पोमां रूप द्वारा कायपरिचार कह्यो छे-एटले के त्यां देव-देवीनुं रूप जोईने तथा देवी-देवनुं रूप जोईने पोतानी कामाग्निने शान्त करे छे. महाशुक्र अने सहस्रार आ बे कल्पोमां शब्द द्वारा ज कायपरिचार कह्यो छे. ते बन्ने कल्पोमां देव-देवीना मनोहर शब्दोने सांभळीने पोतानी कामवासना शान्त करे छे प्राणत अने अच्युत कल्पना इन्द्रो अने अन्य देवो मनथी ज कायपरिचार करे छे. एटले के त्यां देव मनथी ज देवीनुं स्मरण करीने अने देवी मनथी ज देवनुं स्मरण करीने कामवासना शान्त करीने उपशान्त वेदवाळा थई जाय छे. ॥ सू. ५४ ॥

ततो द्वितीयायां स्थितौ विशेषहीनम्, एवं यावद् उत्कृष्टायां स्थितौ विशेषहीनं निषिञ्चति २। ३ चयनं—तस्यैव ज्ञानावरणीयादितया निषिक्तस्य पुनरपि कषाय परिणति विशेषात् संश्लेषणम् ३। ४ उदीरणम्—उदयमप्राप्तस्य कर्मदलिकस्य वीर्य विशेषेण समाकृष्योदयावलिकायां प्रवेशनम् ४। ५ वेदन—स्वभावेन-उदीरणाकरणेन उदयावलिकाप्रविष्टस्य कर्मणोऽनुभवनम् ५। ६ निर्जरण—कर्मणोऽकर्मताभवन जीवप्रदेशेभ्यः कर्मणां परिशटनमित्यर्थः ६। कर्मच पुद्गलात्मकमिति पुद्गल

स्थिति में विशेषहीन—चयहीन कर्मदलिका निषेक होता है, इसी तरह से यावत् उत्कृष्ट स्थिति में विशेष हीन कर्मदलिकका निषेक होता है २ चयन—ज्ञानावरणीयादिरूप से निषिक्त हुए उस कर्मपुद्गल का पुनः कषायपरिणति से जो सश्लेषण होता है वह चयन है ३ उदीरण उदय को नहीं प्राप्त हुए कर्मदलिकका वीर्यविशेष से खींचकर उदयावलिकामें लाना इसका नाम उदीरणा है ४, वेदन—स्वभाव से और उदीरणाकरण से उदयावलिका में प्रविष्ट हुए कर्मका अनुभव करना इसका नाम वेदन है ५। निर्जरणकर्मका अकर्मरूप से होना—जीव प्रदेशों से कर्म पुद्गलों का झरना नष्ट होना इसका नाम निर्जरण है। इस प्रकार से ये कर्मपुद्गलोंकी अवस्थाएं हैं। इन ६ की अवस्थाओं का यहां भूत, वर्तमान और भविष्यत्काल की अपेक्षा से सूत्रकारने कथन किया है।

कर्म पुद्गलात्मक है इसलिये सूत्रकार अब पुद्गलों का द्रव्य, क्षेत्र काल और भावकी अपेक्षा से त्रिस्थानकों का अवतार लेकर निरूपण

છે ત્યારબાદ બીજી સ્થિતિમાં વિશેષહીન—ચયહીન કર્મદલિકોનો કમ પુદ્ગલનિષેક થાય છે એજ પ્રમાણે (યાવત્) ઉત્કૃષ્ટ સ્થિતિમાં વિશેષહીન કર્મદલિકોનો નિષેક થાય છે (૨) ચયન-જ્ઞાનાવરણીય આદિ રૂપે નિષિક્ત થયેલાં (ઉપચયન પામેલાં) તે કર્મપુદ્ગલોનું પુનઃ કષાયપરિણતિથી જે સંશ્લેષણ થાય છે તેને ચયન કહે છે (૩) ઉદીરણ-ઉદય પ્રાપ્ત ન થયાં હોય એવાં કર્મદલિકોને વીર્યવિશેષ વડે ખેંચીને ઉદયાવલિકામાં લાવવા તેનું નામ ઉદીરણા છે (૪) વેદન-સ્વભાવથી અથવા ઉદીરણાકરણ દ્વારા ઉદયાવલિકામાં પ્રવેશેલાં કર્મનું વેદન-અનુભવન કરવું તેનું નામ વેદન છે (૫) નિર્જરણ-કર્મનું અકર્મરૂપ બની જવું-જીવપ્રદેશોમાંથી કર્મપુદ્ગલોનું ખરી જવું (નષ્ટ થઈ જવું) તેનું નામ નિર્જરણ છે (૬) આ પ્રમાણે આ કર્મપુદ્ગલોની ૬ અવસ્થાઓ છે આ છએ અવસ્થાઓનું સૂત્રકારે ભૂત, વર્તમાન અને ભવિષ્યકાળની અપેક્ષાએ અહીં કથન કર્યું છે કર્મ પુદ્ગલાત્મક હોય છે તેથી હવે સૂત્રકાર પુદ્ગલોનું

लान् द्रव्यक्षेत्रकालभावैर्द्विस्थानकावतारेण निरूपयन्नाह—'दुपएसिया' इत्यादि सूत्राणि त्रयोविंशतिः। सुगमानि चैतानि, नवरम् द्रव्यतो द्विप्रदेशिकाः स्कन्धा अनन्ताः प्रज्ञप्ता १। क्षेत्रतो द्विप्रदेशावगाढाः पुद्गला अनन्ताः २। एवम्—अनेनैवाभिलापेन—'जाव' इति यावच्छब्दात्—'दुसमयट्ठिइया पुग्गला अणंता पण्णत्ता इत्यारभ्य 'दुगुणलुक्खा पुग्गला अणंता पण्णत्ता' इति पर्यन्तेन कालमाश्रित्य तथा—वर्ण—गन्ध—रस—स्पर्शांश्चाश्रित्यैकविंशतिः सूत्राणि वाच्यानि। तथाहि—

"दुसमयट्ठिइया पोग्गला अणंता पण्णत्ता ३। एवं दुगुणकिण्हा जाव दुगुणसुक्किला ८। दुगुण सुब्भिगंधा दुगुण दुब्भिगंधा १०। दुगुणतित्ता जाव दुगुणमहुरा० १५। दुगुणकक्खडा जाव दुगुणलुक्खा पोग्गला अणंता पण्णत्ता २३"।

करते हैं—"दुपएसिया" इत्यादि—द्विप्रदेशिक स्कन्ध अनन्त कहे गये हैं। द्विप्रदेशावगाढ पुद्गल स्कन्ध अनन्त कहे गये हैं इसी तरह से यावत् द्विगुणरूक्षगुणवाले पुद्गल अनन्त कहे गये हैं तात्पर्य इन सूत्रोंका ऐसा है कि द्रव्य की अपेक्षा से द्विप्रदेशिक स्कन्ध अनन्त कहे गये हैं १, क्षेत्रकी अपेक्षा से द्विप्रदेशावगाढ पुद्गल अनन्त कहे गये हैं २ इसी प्रकार यावत् शब्दसे गृहीत द्विसमय स्थितिवाले पुद्गल इसी अभिलाप के अनुसार अनन्त कहे गये हैं—इस विषय में अभिलाप ऐसा है—"दुसमयट्ठिइया पोग्गला अणंता पण्णत्ता" इस अभिलाप से लगाकर "दुगुणलुक्खा पुग्गला अणंता पण्णत्ता" यहां तक काल को आश्रित करके तथा—वर्ण—गन्ध—रस—स्पर्श इनको आश्रित करके ये २१ सूत्र और कहना चाहिये। इस प्रकार से द्रव्य क्षेत्र काल और भाव को

દ્રવ્ય, ક્ષેત્ર, કાળ અને ભાવની અપેક્ષાએ બે સ્થાનકોના આધારે કથન કરે છે.

"दुपएसिया" ઇત્યાદિ—

દ્વિપ્રદેશિક સ્કન્ધ અનેક કહ્યાં છે દ્વિપ્રદેશાવગાઢ પુદ્ગલ સ્કન્ધ અનંત કહ્યાં છે. એજ પ્રમાણે દ્વિગુણરૂક્ષ પર્યન્તના ગુણવાળાં પુદ્ગલો કહ્યાં છે. આ કથનનો ભાવાર્થ નીચે પ્રમાણે છે-(૧) દ્રવ્યની અપેક્ષાએ દ્વિપ્રદેશિક સ્કન્ધ અનંત કહ્યાં છે. (૨) ક્ષેત્રની અપેક્ષાએ દ્વિપ્રદેશાવગાઢ પુદ્ગલો અનંત કહ્યાં છે (૩) એજ પ્રમાણે 'યાવત્' પદથી ગૃહીત બે સમયની સ્થિતિવાળાં પુદ્ગલો પણ આ અભિલાપ અનુસાર અનંત કહ્યા છે આ વિષય સંબંધી નીચે પ્રમાણે અભિલાપ છે-"दुसमयट्ठिइया पोग्गला अणंता पण्णत्ता" બે સમયની સ્થિતિવાળા પુદ્ગલો અનંત કહ્યા છે" આ અભિલાપથી શરૂ કરીને "दुगुणलुक्खा पोग्गला अणंता पण्णत्ता" બે ગણી રૂક્ષતાવાળાં પુદ્ગલો અનંત કહ્યા છે આ અભિલાપ પર્યન્તના અભિલાપો કાળની અપેક્ષાએ ગ્રહણ કરવા જોઇએ તથા વર્ણ, ગન્ધ, રસ અને સ્પર્શને અનુલક્ષીને ૨૧ બીજા સૂત્રો કહેવા જોઇએ.

कालत्रयेऽपि चिचायत्तस्थ कुर्वन्तीति जीवपुद्‌गलयोर्वक्तव्यतामाह—

सूत्रम्--जीवाणं दुट्ठाणणिव्वत्तिए पोग्गले पावकम्मत्ताए चिणिंसु वा चिणंति वा चिणिस्संति वा, तं जहा तसकाय णिव्वत्तिए चेव थावरकायणिव्वत्तिए चेव १। एव उवचिणिंसु वा उवचिणंति वा उवचिणिस्संति वा २। बंधिंसु वा बंधंति वा बंधिस्संति वा ३। उदीरिंसु वा उदीरेंति वा उदीरिस्संति वा ४। वेदेंसु वा वेदेंति वा वेदिस्संति वा ५। णिज्जरिंसु वा णिज्जरेंति वा णिज्जरिस्संति वा ६। दुपएसिया खंधा अणंता पण्णत्ता १। दुपएसोगाढा पोग्गला अणंता पण्णत्ता २। एवं जाव दुगुणलुक्खा पोग्गला अणंता पण्णत्ता२३ ॥सू०५५

दुट्ठाणस्स चउत्थो उद्देसो समत्तो ॥ ४ ॥

दुट्ठाणं समत्त ॥ २ ॥

छाया--जीवाः खलु द्विस्थाननिर्वर्तितान् पुद्‌गलान् पापकर्मतया अचिन्वन् वा, चिन्वन्ति वा, चेष्यन्ति वा तद्यथा--त्रसकायनिर्वर्तितान् चैव स्थावरकायनिर्वर्तितान् चैव १। एवम् उपाचिन्वन् वा उपचिन्वन्ति वा उपचेष्यन्ति वा २। अबध्नन् वा बध्नन्ति वा भन्त्स्यन्ति वा ३। उदैरयन् वा उदीरयन्ति वा उदीरयिष्यन्ति वा ४। अवेदयन् वा वेदयन्ति वा वेदयिष्यन्ति वा ५। निरजरयन् वा निर्जरयन्ति वा निर्जरयिष्यन्ति वा ६। द्विप्रदेशिका स्कन्धा अनन्ताः प्रज्ञप्ताः। द्विप्रदेशावगाढा पुद्‌गला अनन्ताः प्रज्ञप्ताः। एवं यावत् द्विगुणरूक्षा पुद्‌गला अनन्ताः प्रज्ञप्ताः ॥सू०५५॥

॥ द्विस्थानकस्य चतुर्थ उद्देशः समाप्तः ॥ ४ ॥

॥ द्विस्थानं समाप्तम् ॥ २ ॥

अभी जो परिचारणा कही गई है सो यह परिचारणा कर्मसे होती है कर्म को जीव अपने हेतुओं द्वारा कालत्रय में भी चित्तादि अवस्था वाला करते हैं अतः अब सूत्रकार जीव और पुद्गल की वक्तव्यता के

પહેલાના સૂત્રમાં જે પરિચારણાનું નિરૂપણ કરવામાં આવ્યું છે તે પરિ ચારણા કર્મથી થાય છે કર્મને જીવો પોતાના હેતુઓ દ્વારા કાલત્રયમાં ચય (ચિત્તાદિ અવસ્થાવાળુ કરે છે હવે સૂત્રકાર જીવ અને પુદ્ગલની વક્તવ્યતાના

टीका—'जीवाणं' इत्यादि, षट् सूत्राणि ।

जीवाः-केचित् प्राणिनः द्विस्थाननिर्वर्त्तितान् द्वयोः स्थानयोस्त्रसस्थावररूपयोः समाहारो-द्विस्थानम्, तस्मिन् निर्वर्त्तिताः-मिथ्यात्वाविरत्यादिभिः सामान्यत उपार्जिता वक्ष्यमाण चयनादि षडवस्थारूपेण सम्पादितास्तान् पुद्गलान् पापकर्मतया-पापकर्म-ज्ञानावरणीयादि तद्भावस्तत्ता, तया तथोक्तया 'चिणिसु' इति-अचिन्वन्-उपार्जितवन्तोऽतीतकाले, चिन्वन्ति-उपार्जयन्ति-वर्त्तमानकाले, चेष्यन्ति-उपार्जयिष्यन्ति भविष्यत्काले १ चयनं-कषायादिपरिणतस्य कर्मपुद्गलोपादानमात्रम् १। एवम् २ उपचयनं-चित्तस्याबाधाकालं विहाय ज्ञानावरणीयादितया निषेकः, सचेत्थम्-प्रथमस्थितौ बहुतरं कर्मदलिकं निषिञ्चति,

---

विषय में कथन करते हैं—'जीवाणं दुट्ठाणणिव्वत्तिए पोग्गले' इत्यादि

जीवोंने-प्राणियों ने-त्रस स्थावररूप दो स्थानों में मिथ्या—अविरति आदि रूप कारणों से सम्पादित कर्मपुद्गलों को चयनादि षडवस्थारूप में सम्पादित किया है और सम्पादित किये गये उन कर्मपुद्गलों को उन्होंने ज्ञानावरणीयादि रूप से अतीतकाल में परिणमाया है तथा वर्तमानकाल में वे उन्हें उपार्जित करके उस रूपमें परिणमाते रहते हैं, और आगामी कालमें भी वे उनका चयन-उपार्जन करके उस रूपमें उन्हें परिणमाते रहेंगे। कषायादिसे परिणत हुए जीव के जो कर्मपुद्गलों का उपादान ग्रहण होता है उसका नाम चयन है, गृहीत कर्म का अबाधाकाल को छोड़ कर जो ज्ञानावरणीयादि रूप से निषेक होता है वह उपचयन है, वह उपचयन इस प्रकार से होता है, प्रथम स्थिति में बहुतर कर्मदलिक का निषेक-उपचयन होता है इसके बाद द्वितीय

વિષયનું કથન કરે છે—" जीवाण दुट्ठाणणिव्वत्तिए पोग्गले " ઇત્યાદિ—

જીવોએ (પ્રાણીઓએ) ત્રસ અને સ્થાવરરૂપ બે સ્થાનોમાં મિથ્યા-અવિરતિ આદિ રૂપ કારણોથી સમ્પાદિત કર્મપુદ્ગલોને ચયનાદિ રૂપ છ અવસ્થા રૂપે સમ્પાદિત કર્યાં છે અને સમ્પાદિત કરવામાં આવેલાં તે પુદ્ગલોને તેમણે જ્ઞાનાવરણીય આદિ રૂપે ભૂતકાળમાં પરિણમાવ્યાં છે, તથા વર્તમાનમાં પણ તેઓ તેમને ઉપાર્જિત કરીને તે રૂપે પરિણમાવ્યા કરે છે, અને ભવિષ્યમાં પણ તેઓ તેમનું ચયન (ઉપાર્જન) કરીને તેમને તે રૂપે પરિણમાવતા રહેશે. કષાયાદિ ભાવોથી યુક્ત થયેલા જીવ દ્વારા કર્મપુદ્ગલોનું જે ઉપાદાન (ગ્રહણ) થાય છે તેનું નામ ચયન છે અબાધાકાળને છોડીને ગૃહીત કર્મનો જે જ્ઞાનાવરણીય આદિ રૂપે નિષેક થાય છે તેનું નામ ઉપચયન છે તે ઉપચયન આ પ્રકારે થાય છે-પ્રથમ સ્થિતિમાં બહુતર કર્મદલિકોનો નિષેક (ઉપચયન) થાય

कालत्रयेऽपि चितादयस्य कुर्वन्तीति जीवपुद्गलयोर्वैकल्प्यतामाह—

मूलम्--जीवाणं दुट्ठाणणिव्वत्तिए पोग्गले पावकम्मत्ताए चिणिंसु वा चिणंति वा चिणिस्संति वा, तं जहा तसकाय णिव्वत्तिए चेव थावरकायणिव्वत्तिए चेव १। एव उवचिणिंसु वा उवचिणंति वा उवचिणिस्संति वा २। बंधिंसु वा बंधंति वा बंधिस्संति वा ३। उदीरिंसु वा उदीरेंति वा उदीरिस्संति वा ४। वेदेंसु वा वेदेंति वा वेदिस्संति वा ५। णिज्जरिंसु वा णिज्जरिंति वा णिज्जरिस्संति वा ६। दुपएसिया खंधा अणंता पण्णत्ता १। दुपएसोगाढा पोग्गला अणंता पण्णत्ता २। एव जाव दुगुणलुक्खा पोग्गला अणंता पण्णत्ता२३ ॥सू०५५

दुट्ठाणस्स चउत्थो उद्देसो समत्तो ॥ ४ ॥

दुट्ठाणं समत्त ॥ २ ॥

छाया-जीवाः खलु द्विस्थाननिर्वर्तितान् पुद्गलान् पापकर्मतया अचिन्वन् वा, चिन्वन्ति वा, चेष्यन्ति वा, तद्यथा-त्रसकायनिर्वर्तितान् चैव स्थावरकायनिर्वर्तितान् चैव १। एवम् उपाचिन्वन् वा उपचिन्वन्ति वा उपचेष्यन्ति वा २। अबध्नन् वा बध्नन्ति वा भन्त्स्यन्ति वा ३। उदैरयन् वा उदीरयन्ति वा उदीरयिष्यन्ति वा ४। अवेदयन् वा वेदयन्ति वा वेदयिष्यन्ति वा ५। निरजरयन् वा निजरयन्ति वा निर्जरयिष्यन्ति वा ६। द्विप्रदेशिकाः स्कन्धा अनन्ताः प्रज्ञप्ता । द्विप्रदेशावगाढा पुद्गला अनन्ताः प्रज्ञप्ताः । एवं यावद् द्विगुणरूक्षाः पुद्गला अनन्ताः प्रज्ञप्ताः ॥सू०५५॥

॥ द्विस्थानकस्य चतुर्थ उद्देशः समाप्तः ॥ ४ ॥

॥ द्विस्थान समाप्तम् ॥ २ ॥

अभी जो परिचारणा कही गई है सो यह परिचारणा कर्मसे होती है कर्म को जीव अपने हेतुओं द्वारा कालत्रय में भी चित्तादि अवस्था वाला करते हैं अतः अब सूत्रकार जीव और पुद्गल की परतन्त्रता के

પહેલાના સૂત્રમાં જે પરિચારણાનું નિરૂપણ કરવામાં આવ્યું છે તે પરિચરણા કર્મથી થાય છે કર્મને જીવો પોતાના હેતુઓ દ્વારા કાલત્રયમાં ચય ચિતાદિ અવસ્થાવાળું કરે છે હવે સૂત્રકાર જીવ અને પુદ્ગલની પરતન્ત્રતાના

टीका—'जीवाणं' इत्यादि, षट् सूत्राणि ।

जीवाः-केचित् प्राणिनः ख द्विस्थाननिर्वर्त्तितान् द्वयोः स्थानयोस्त्रसस्थावररूपयोः समाहारो-द्विस्थानम्, तस्मिन् निर्वर्त्तिताः-मिथ्यात्वाविरत्यादिभिः सामान्यत उपार्जिता वक्ष्यमाण चयनादि षडवस्थारूपेण सम्पादितास्तान् पुद्गलान् पापकर्मतया-पापकर्म-ज्ञानावरणीयादितद्भावस्तत्ता, तया तथोक्तया 'चिणिंसु' इति-अचिन्वन्-उपार्जितवन्तोऽतीतकाले, चिन्वन्ति-उपार्जयन्ति-वर्त्तमानकाले, चेष्यन्ति-उपार्जयिष्यन्ति भविष्यत्काले १ चयनं-कषायादिपरिणतस्य कर्मपुद्गलोपादानमात्रम् १। एवम् २ उपचयनं-चितस्याबाधाकालं विहाय ज्ञानावरणीयादितया निषेकः, सचेत्थम्-प्रथमस्थितौ बहुतरं कर्मदलिकं निषिञ्चति,

विषय में कथन करते हैं—'जीवाणं दुट्ठाणणिव्वत्तिए पोग्गले' इत्यादि

जीवोंने-प्राणियों ने-त्रस स्थावररूप दो स्थानों में मिथ्या—अविरति आदि रूप कारणों से सम्पादित कर्मपुद्गलों को चयनादि षडवस्थारूप में सम्पादित किया है और सम्पादित किये गये उन कर्मपुद्गलों को उन्होंने ज्ञानावरणीयादि रूप से अतीतकाल में परिणमाया है तथा वर्तमानकाल में वे उन्हें उपार्जित करके उस रूपमें परिणमाते रहते हैं, और आगामी कालमें भी वे उनका चयन-उपार्जन करके उस रूपमें उन्हे परिणमाते रहेगे। कषायादिसे परिणत हुए जीव के जो कर्मपुद्गलों का उपादान ग्रहण होता है उसका नाम चयन है, गृहीत कर्म का अबाधाकाल को छोड़ कर जो ज्ञानावरणीयादि रूप से निषेक होता है वह उपचयन है, वह उपचयन इस प्रकार से होता है, प्रथम स्थिति में बहुतर कर्मदलिक का निषेक-उपचयन होता है इसके बाद द्वितीय

વિષયનું કથન કરે છે—"जीवाणं दुट्ठाणणिव्वत्तिए पोग्गले" ઇત્યાદિ—

જીવોએ (પ્રાણીઓએ) ત્રસ અને સ્થાવરરૂપ બે સ્થાનોમાં મિથ્યા-અવિરતિ આદિ રૂપ કારણોથી સમ્પાદિત કર્મપુદ્ગલોને ચયનાદિ રૂપ છ અવસ્થા રૂપે સમ્પાદિત કર્યા છે અને સમ્પાદિત કરવામાં આવેલાં તે પુદ્ગલોને તેમણે જ્ઞાનાવરણીય આદિ રૂપે ભૂતકાળમાં પરિણમાવ્યાં છે, તથા વર્તમાનમાં પણ તેઓ તેમને ઉપાર્જિત કરીને તે રૂપે પરિણમાવ્યા કરે છે, અને ભવિષ્યમાં પણ તેઓ તેમનુ ચયન (ઉપાર્જન) કરીને તેમને તે રૂપે પરિણમાવતા રહેશે. કષાયાદિ ભાવોથી યુક્ત થયેલા જીવ દ્વારા કર્મપુદ્ગલોનુ જે ઉપાદાન (ગ્રહણ) થાય છે તેનુ નામ ચયન છે અબાધાકાળને છોડીને ગૃહીત કર્મનો જે જ્ઞાનાવરણીય આદિ રૂપે નિષેક થાય છે તેનું નામ ઉપચયન છે તે ઉપચયન આ પ્રકારે થાય છે-પ્રથમ સ્થિતિમાં બહુતર કર્મદલિકોનો નિષેક (ઉપચયન) થાય

ततो द्वितीयायां स्थितौ विशेषहीनम्, एवं यावद् उत्कृष्टायां स्थितौ विशेषहीनं निषिञ्चति २। ३ बन्धनं-तस्यैव ज्ञानावरणीयादितया निषिक्तस्य पुनरपि कषाय परिणति विशेषात्संश्लेषणम् ३। ४ उदीरणम्-उदयमप्राप्तस्य कर्मदलिकस्य वीर्य विशेषेण समाकृष्योदयावलिकायां प्रवेशनम् ४। ५ वेदनं-स्वभावेन-उदीरणाकर णेन उदयावलिकाप्रविष्टस्य कर्मणोऽनुभवनम् ५। ६ निर्जरणं-कर्मणोऽकर्मता भवनं जीवप्रदेशेभ्यः कर्मणां परिशटनमित्यर्थः ६। कर्म च पुद्गलात्मकमिति पुद्ग

स्थिति में विशेषहीन-अपहीन कर्मदलिका निषेक होता है, इसी तरह से यावत् उत्कृष्ट स्थिति में विशेष हीन कर्मदलिकका निषेक होता है २ बन्धन-ज्ञानावरणीयादिरूप से निषिक्त हुए उस कर्मपुद्गल को पुनः कषायपरिणति से जो संश्लेषण होता है वह बन्धन है ३ उदीरण उदय को नहीं प्राप्त हुए कर्मदलिकका वीर्यविशेष से खींचकर उदयावलिकामें लाना इसका नाम उदीरणा है ४, वेदन-स्वभाव से और उदीरणाकरण से उदयावलिका में प्रविष्ट हुए कर्मका अनुभव करना इसका नाम वेदन है ५। निर्जरणकर्मका अकर्मरूप से होना—जीव प्रदेशों से कर्म पुद्गलों का झरना नष्ट होना इसका नाम निर्जरण है। इस प्रकार से ये कर्मपुद्गलोंकी अवस्थाएँ हैं। इन ६ ही अवस्थाओं का यहां भूत, वर्तमान और भविष्यत्काल की अपेक्षा से सूत्रकारने कथन किया है।

कर्म पुद्गलात्मक है इसलिये सूत्रकार अब पुद्गलों का द्रव्य, क्षेत्र, काल और भावकी अपेक्षा से त्रिस्थानकों का अवतार लेकर निरूपण

છે ત્યારબાદ બીજી સ્થિતિમાં વિશેષહીન-અપહીન કર્મદલિકોનો ક્રમ પુજનિષેક થાય છે એજ પ્રમાણે (યાવત્) છેલ્લે ઉત્કૃષ્ટ સ્થિતિમાં વિશેષહીન કર્મદલિકોનો નિષેક થાય છે (૨) બન્ધન-જ્ઞાનાવરણીય આદિ રૂપે નિષિક્ત થયેલાં (ઉપચયન પામેલાં) તે કર્મપુદ્ગલોનું પુનઃ કષાયપરિણતિથી જે સંશ્લેષણ થાય છે, તેને બન્ધન કહે છે (૩) ઉદીરણ-ઉદય પ્રાપ્ત ન થયા હોય એવાં કર્મદલિકોને વીર્યવિશેષ વડે ખેંચીને ઉદયાવલિકામાં લાવવા તેનું નામ ઉદીરણા છે (૪) વેદન-સ્વભાવથી અથવા ઉદીરણાકરણ દ્વારા ઉદયાવલિકામાં આવેલાં કર્મનું વેદન-અનુભવન કરવું તેનું નામ વેદન છે (૫) નિર્જરણ-કર્મનું અકર્મરૂપ બની જવું-જીવપ્રદેશોમાંથી કર્મપુદ્ગલોનું ખરી જવું (નષ્ટ થઈ જવું) તેનું નામ નિર્જરણ છે (૬) આ પ્રમાણે આ કર્મપુદ્ગલોની ૬ અવસ્થાઓ છે. આ છએ અવસ્થાઓનું સૂત્રકારે ભૂત, વર્તમાન અને ભવિષ્યકાળની અપેક્ષાએ અહીં કથન કર્યું છે કર્મ પુદ્ગલરૂપ હોય છે તેથી હવે સૂત્રકાર પુદ્ગલોનુ

लान् द्रव्यक्षेत्रकालभावैर्द्विस्थानकावतारेण निरूपयन्नाह—' दुपएसिया ' इत्यादि सूत्राणि त्रयोविंशतिः। सुगमानि चैतानि, नवरम् द्रव्यतो द्विप्रदेशिकाः स्कन्धा अनन्ताः प्रज्ञप्ता १। क्षेत्रतो द्विप्रदेशावगाढाः पुद्गला अनन्ताः २। एवम्–अनेनैवाभिलापेन–' जाव ' इति यावच्छब्दात्–' दुसमयट्ठिइया पुग्गला अणंता पण्णत्ता इत्यारभ्य ' दुगुणलुक्खा पुग्गला अणंता पण्णत्ता ' इति पर्यन्तेन कालमाश्रित्य तथा–वर्ण–गन्ध–रस–स्पर्शांश्चाश्रित्यैकविंशतिः सूत्राणि वाच्यानि। तथाहि—

" दुसमयट्ठिइया पोग्गला अणंता पण्णत्ता ३। एवं दुगुणकिण्हा जाव दुगुणसुक्किला ८। दुगुण सुब्भिगंधा दुगुण दुब्भिगंधा १०। दुगुणतित्ता जाव दुगुणमहुरा० १५। दुगुणकक्खडा जाव दुगुणलुक्खा पोग्गला अणंता पण्णत्ता २३"।

करते हैं—" दुपएसिया " इत्यादि—द्विप्रदेशिक स्कन्ध अनन्त कहे गये हैं। द्विप्रदेशावगाढ पुद्गल स्कन्ध अनन्त कहे गये हैं इसी तरह से यावत् द्विगुणरूक्षगुणवाले पुद्गल अनन्त कहे गये हैं तात्पर्य इन सूत्रोंका ऐसा है कि द्रव्य की अपेक्षा से द्विप्रदेशिक स्कन्ध अनन्त कहे गये हैं १, क्षेत्रकी अपेक्षा से द्विप्रदेशावगाढ पुद्गल अनन्त कहे गये हैं २ इसी प्रकार यावत् शब्दसे गृहीत द्विसमय स्थितिवाले पुद्गल इसी अभिलाप के अनुसार अनन्त कहे गये हैं—इस विषय में अभिलाप ऐसा है— " दुसमयट्ठिइया पोग्गला अणंता पण्णत्ता " इस अभिलाप से लगाकर " दुगुणलुक्खा पुग्गला अणंता पण्णत्ता " यहां तक काल को आश्रित करके तथा–वर्ण–गन्ध–रस–स्पर्श इनको आश्रित करके ये २१ सूत्र और कहना चाहिये। इस प्रकार से द्रव्य क्षेत्र काल और भाव को

દ્રવ્ય, ક્ષેત્ર, કાળ અને ભાવની અપેક્ષાએ બે સ્થાનકોના આધારે કથન કરે છે.

" दुपएसिया " ઇત્યાદિ—

દ્વિપ્રદેશિક સ્કન્ધ અનેક કહ્યાં છે. દ્વિપ્રદેશાવગાઢ પુદ્ગલ સ્કન્ધ અનંત કહ્યાં છે. એજ પ્રમાણે દ્વિગુણરૂક્ષ પર્યન્તના ગુણવાળાં પુદ્ગલો કહ્યાં છે. આ કથનનો ભાવાર્થ નીચે પ્રમાણે છે-(૧) દ્રવ્યની અપેક્ષાએ દ્વિપ્રદેશિક સ્કન્ધ અનંત કહ્યાં છે. (૨) ક્ષેત્રની અપેક્ષાએ દ્વિપ્રદેશાવગાઢ પુદ્ગલો અનંત કહ્યાં છે (૩) એજ પ્રમાણે ' યાવત્ ' પદથી ગૃહીત બે સમયની સ્થિતિવાળાં પુદ્ગલો પણ આ અભિલાપ અનુસાર અનંત કહ્યાં છે. આ વિષય સંબંધી નીચે પ્રમાણે અભિલાપ છે–"दुसमयट्ठिइया पोग्गला अणंता पण्णत्ता " બે સમયની સ્થિતિવાળાં પુદ્ગલો અનંત કહ્યા છે " આ અભિલાપથી શરૂ કરીને " दुगुणलुक्खा पोग्गला अणंता पण्णत्ता " બે ગણી રૂક્ષતાવાળાં પુદ્ગલો અનંત કહ્યાં છે આ અભિલાપ પર્યન્તના અભિલાપો કાળની અપેક્ષાએ ગ્રહણ કરવા જોઇએ તથા વર્ણ, ગન્ધ, રસ અને સ્પર્શને અનુલક્ષીને ૨૧ બી [illegible] કહેવા જોઇએ.

ततो द्वितीयायां स्थितौ विशेषहीनम्, एवं यावद् उत्कृष्टायां स्थितौ विशेषहीनं निषिञ्चति २। ३ बन्धनं-तस्यैव ज्ञानावरणीयादितया निषिक्तस्य पुनरपि कषायपरिणति विशेषात्सं श्लेषणम् ३। ४ उदीरणम्-उदयमप्राप्तस्य कर्मदलिकस्य वीर्यविशेषेण समाकृष्योदयावलिकायां प्रवेशनम् ४। ५ वेदन-स्वभावेन-उदीरणाकरणेन उदयावलिकाप्रविष्टस्य कर्मणोऽनुभवनम् ५। ६ निर्जरण-कर्मणोऽकर्मतामवनं जीवप्रदेशेभ्यः कर्मणां परिशटनमित्यर्थः ६। कर्म च पुद्गलात्मकमिति पुद्ग

स्थिति में विशेषहीन-चयहीन कर्मदलिका निषेक होता है, इसी तरह से यावत उत्कृष्ट स्थिति में विशेष हीन कर्मदलिकका निषेक होता है२ बन्धन-ज्ञानावरणीयादिरूप से निषिक्त हुए उस कर्मपुद्गल की पुनः कषायपरिणति से जो संश्लेषण होता है वह बन्धन है ३ उदीरण उदय को नहीं प्राप्त हुए कर्मदलिकका वीर्यविशेष से खींचकर उदयावलिकामें लाना इसका नाम उदीरणा है ४, वेदन-स्वभाव से और उदीरणाकरण से उदयावलिका में प्रविष्ट हुए कर्मका अनुभव करना इसका नाम वेदन है ५। निर्जरणकर्मका अकर्मरूप से होना—जीव प्रदेशों से कर्म पुद्गलों का झरना नष्ट होना इसका नाम निर्जरण है। इस प्रकार से ये कर्मपुद्गलोंकी अवस्थाएं हैं। इन ६ हों अवस्थाओं का यहां भूत, वर्तमान और भविष्यत्काल की अपेक्षा से सूत्रकारने कथन किया है।

कर्म पुद्गलात्मक है इसलिये सूत्रकार अब पुद्गलों का द्रव्य, क्षेत्र, काल और भावकी अपेक्षा से प्रस्थानकों का अवतार लेकर निरूपण

છે ત્યારબાદ બીજી સ્થિતિમાં વિશેષહીન-ચયહીન કર્મદલિકોનો કર્મ પુદ્ગલનિષેક થાય છે એજ પ્રમાણે (યાવત્) છેલ્લે ઉત્કૃષ્ટ સ્થિતિમાં વિશેષહીન કર્મદલિકોનો નિષેક થાય છે (૨) બન્ધન-જ્ઞાનાવરણીય આદિ રૂપે નિષિક્ત થયેલાં (ઉપચયન પામેલાં) તે કર્મપુદ્ગલોનું પુનઃ કષાયપરિણતિથી જે સંશ્લેષણ થાય છે, તેને બન્ધન કહે છે (૩) ઉદીરણ-ઉદય પ્રાપ્ત ન થયા હોય એવાં કર્મદલિકોને વીર્યવિશેષ વડે ખેંચીને ઉદયાવલિકામાં લાવવા તેનું નામ ઉદીરણા છે (૪) વેદન-સ્વભાવથી અથવા ઉદીરણાકરણ દ્વારા ઉદયાવલિકામાં આવેલાં કર્મનું વેદન-અનુભવન કરવું તેનું નામ વેદન છે (૫) નિર્જરણ-કર્મનું અકર્મરૂપ બની જવું-જીવપ્રદેશોમાંથી કર્મપુદ્ગલોનું ખરી જવું (નષ્ટ થઈ જવું) તેનું નામ નિર્જરણ છે (૬) આ પ્રમાણે આ કર્મપુદ્ગલોની ૬ અવસ્થાઓ છે. આ છએ અવસ્થાઓનું સૂત્રકારે ભૂત, વર્તમાન અને ભવિષ્યકાળની અપેક્ષાએ અહીં કથન કર્યું છે કર્મ પુદ્ગલરૂપ હોય છે તેથી હવે સૂત્રકાર પુદ્ગલોનું

लान् द्रव्यक्षेत्रकालभावैर्द्विस्थानकावतारेण निरूपयन्नाह—'दुपएसिया' इत्यादि सूत्राणि त्रयोविंशतिः। सुगमानि चैतानि, नवरम् द्रव्यतो द्विप्रदेशिकाः स्कन्धा अनन्ताः प्रज्ञप्ता १। क्षेत्रतो द्विप्रदेशावगाढाः पुद्गला अनन्ताः २। एवम्—अनेनैवाभिलापेन—'जाव' इति यावच्छब्दात्—'दुसमयट्ठिइया पुग्गला अणंता पण्णत्ता इत्यारभ्य 'दुगुणलुक्खा पुग्गला अणंता पण्णत्ता' इति पर्यन्तेन कालमाश्रित्य तथा–वर्ण–गन्ध–रस–स्पर्शांश्चाश्रित्यैकविंशतिः सूत्राणि वाच्यानि। तथाहि—

"दुसमयट्ठिइया पोग्गला अणंता पण्णत्ता ३। एवं दुगुणकिण्हा जाव दुगुणसुक्किला ८। दुगुण सुब्भिगंधा दुगुण दुब्भिगंधा १०। दुगुणतित्ता जाव दुगुणमहुरा० १५। दुगुणकक्खडा जाव दुगुणलुक्खा पोग्गला अणंता पण्णत्ता २३"।

करते हैं—"दुपएसिया" इत्यादि—द्विप्रदेशिक स्कन्ध अनन्त कहे गये हैं। द्विप्रदेशावगाढ पुद्गल स्कन्ध अनन्त कहे गये हैं इसी तरह से यावत् द्विगुणरूक्षगुणवाले पुद्गल अनन्त कहे गये हैं तात्पर्य इन सूत्रोंका ऐसा है कि द्रव्य की अपेक्षा से द्विप्रदेशिक स्कन्ध अनन्त कहे गये हैं १, क्षेत्रकी अपेक्षा से द्विप्रदेशावगाढ पुद्गल अनन्त कहे गये हैं २ इसी प्रकार यावत् शब्दसे गृहीत द्विसमय स्थितिवाले पुद्गल इसी अभिलाप के अनुसार अनन्त कहे गये हैं—इस विषय में अभिलाप ऐसा है—"दुसमयट्ठिइया पोग्गला अणंता पण्णत्ता" इस अभिलाप से लगाकर "दुगुणलुक्खा पुग्गला अणंता पण्णत्ता" यहां तक काल को आश्रित करके तथा–वर्ण–गन्ध–रस–स्पर्श इनको आश्रित करके ये २१ सूत्र और कहना चाहिये। इस प्रकार से द्रव्य क्षेत्र काल और भाव को

દ્રવ્ય, ક્ષેત્ર, કાળ અને ભાવની અપેક્ષાએ બે સ્થાનકોના આધારે કથન કરે છે.

"दुपएसिया" ઇત્યાદિ—

દ્વિપ્રદેશિક સ્કન્ધ અનેક કહ્યાં છે. દ્વિપ્રદેશાવગાઢ પુદ્ગલ સ્કન્ધ અનંત કહ્યાં છે. એજ પ્રમાણે દ્વિગુણરૂક્ષ પર્યન્તના ગુણવાળાં પુદ્ગલો કહ્યાં છે. આ કથનનો ભાવાર્થ નીચે પ્રમાણે છે-(૧) દ્રવ્યની અપેક્ષાએ દ્વિપ્રદેશિક સ્કન્ધ અનંત કહ્યાં છે. (૨) ક્ષેત્રની અપેક્ષાએ દ્વિપ્રદેશાવગાઢ પુદ્ગલો અનંત કહ્યાં છે (૩) એજ પ્રમાણે 'યાવત્' પદથી ગૃહીત બે સમયની સ્થિતિવાળાં પુદ્ગલો પણ આ અભિલાપ અનુસાર અનંત કહ્યાં છે આ વિષય સબંધી નીચે પ્રમાણે અભિલાપ છે-"दुसमयट्ठिइया पोग्गला अणंता पण्णत्ता" બે સમયની સ્થિતિવાળા પુદ્ગલો અનંત કહ્યા છે" આ અભિલાપથી શરૂ કરીને "दुगुणलुक्खा पोग्गला अणंता पण्णत्ता" બે ગણી રૂક્ષતાવાળાં પુદ્ગલો અનંત કહ્યા છે. આ અભિલાપ પર્યન્તના અભિલાપો કાળની અપેક્ષાએ ગ્રહણ કરવા જોઇએ તથા વર્ણ, ગન્ધ, રસ અને સ્પર્શને અનુલક્ષીને ૨૧ બીજાં સૂત્રો કહેવા જોઇએ

ततो द्वितीयायां स्थितौ विशेषहीनम्, एवं यावद् उत्कृष्टायां स्थितौ विशेषहीनं निषिञ्चति २। ३ बन्धनं-तस्यैव ज्ञानावरणीयादितया निषिक्तस्य पुनरपि कषाय परिणति विशेषात्सश्लेषणम् ३। ४ उदीरणम्-उदयमप्राप्तस्य कर्मदलिकस्य वीर्य विशेषेण समाकृष्योदयावलिकायां प्रवेशनम् ४। ५ वेदन-स्वभावेन-उदीरणाकर णेन उदयावलिकाप्रविष्टस्य कर्मणोऽनुभवनम् ५। ६ निर्जरण-कर्मणोऽकर्मता भवनं जीवप्रदेशेभ्यः कर्मणां परिशटनमित्यर्थः ६। कर्मच पुद्‌गलात्मकमिति पुद्‌ग

स्थिति में विशेषहीन-चयहीन कर्मदलिका निषेक होता है, इसी तरह से यावत् उत्कृष्ट स्थिति में विशेष हीन कर्मदलिकका निषेक होता है २ बन्धन-ज्ञानावरणीयादिरूप से निषिक्त हुए उस कर्मपुद्गल का पुनः कषायपरिणति से जो सश्लेषण होता है वह बन्धन है ३ उदीरण उदय को नहीं प्राप्त हुए कर्मदलिकका वीर्यविशेष से खींचकर उदयावलिकामें लाना इसका नाम उदीरणा है ४, वेदन-स्वभाव से और उदीरणाकरण से उदयावलिका में प्रविष्ट हुए कर्मका अनुभव करना इसका नाम वेदन है ५। निर्जरणकर्मका अकर्मरूप से होना-जीव प्रदेशों से कर्म पुद्गलों का झरना नष्ट होना इसका नाम निर्जरण है। इस प्रकार से ये कर्मपुद्गलोंकी अवस्थाएँ हैं। इन ६ हों अवस्थाओं का यहां भूत, वर्तमान और भविष्यत्काल की अपेक्षा से सूत्रकारने कथन किया है।

कर्म पुद्गलात्मक है इसलिये सूत्रकार अब पुद्गलों का द्रव्य, क्षेत्र, काल और भावकी अपेक्षा से त्रिस्थानकों का अवतार लेकर निरूपण

છે ત્યારબાદ બીજી સ્થિતિમાં વિશેષહીન-ચયહીન કર્મદલિકોનો કર્મપુદ્ગલનિષેક થાય છે એજ પ્રમાણે (યાવત્) છેલ્લે ઉત્કૃષ્ટ સ્થિતિમાં વિશેષહીન કર્મદલિકોનો નિષેક થાય છે (૨) બન્ધન-જ્ઞાનાવરણીય આદિ રૂપે નિષિક્ત થયેલાં (ઉપચયન પામેલાં) તે કર્મપુદ્ગલોનું પુનઃ કષાયપરિણતિથી જે સંશ્લેષણ થાય છે તેને બન્ધન કહે છે (૩) ઉદીરણ-ઉદય પ્રાપ્ત ન થયા હોય એવાં કર્મદલિકોને વીર્યવિશેષ વડે ખેંચીને ઉદયાવલિકામાં લાવવા તેનું નામ ઉદીરણા છે (૪) વેદન-સ્વભાવથી અથવા ઉદીરણાકરણ દ્વારા ઉદયાવલિકામાં આવેલાં કર્મનું વેદન-અનુભવન કરવું તેનું નામ વેદન છે (૫) નિર્જરણ-કર્મનું અકર્મરૂપ બની જવું-જીવપ્રદેશોમાંથી કર્મપુદ્ગલોનું ખરી જવું (નષ્ટ થઈ જવું) તેનું નામ નિર્જરણ છે (૬) આ પ્રમાણે આ કર્મપુદ્ગલોની ૬ અવસ્થાઓ છે આ છએ અવસ્થાઓનું સૂત્રકારે ભૂત, વર્તમાન અને ભવિષ્યકાળની અપેક્ષાએ અહીં કથન કર્યું છે કર્મ પુદ્ગલરૂપ હોય છે તેથી હવે સૂત્રકાર પુદ્ગલોનું

न् द्रव्यक्षेत्रकालभावैर्द्विस्थानकावतारेण निरूपयन्नाह—' दुपएसिया ' इत्यादि
त्राणि त्रयोविंशतिः। सुगमानि चैतानि, नवरम् द्रव्यतो द्विप्रदेशिकाः स्कन्धा
नन्ताः प्रज्ञप्ता १। क्षेत्रतो द्विप्रदेशावगाढाः पुद्गला अनन्ताः २। एवम्—अने-
वाभिलापेन-' जाव ' इति यावच्छब्दात्—' दुसमयट्ठिइया पुग्गला अणंता पण्णत्ता
त्यारभ्य ' दुगुणलुक्खा पुग्गला अणंता पण्णत्ता ' इति पर्यन्तेन कालमाश्रित्य
था-वर्ण-गन्ध-रस-स्पर्शांश्चाश्रित्यैकविंशतिः सूत्राणि वाच्यानि। तथाहि—

"दुसमयट्ठिइया पोग्गला अणंता पण्णत्ता ३। एवं दुगुणकिण्हा जाव दुगुण-सुक्किला ८। दुगुण सुब्भिगंधा दुगुण दुब्भिगंधा १०। दुगुणतित्ता जाव दुगुण-महुरा० १५। दुगुणकक्खडा जाव दुगुणलुक्खा पोग्गला अणंता पण्णत्ता २३"।

करते हैं—" दुपएसिया " इत्यादि—द्विप्रदेशिक स्कन्ध अनन्त कहे गये हैं। द्विप्रदेशावगाढ पुद्गल स्कन्ध अनन्त कहे गये हैं इसी तरह से यावत् द्विगुणरूक्षगुणवाले पुद्गल अनन्त कहे गये हैं तात्पर्य इन सूत्रोंका ऐसा है कि द्रव्य की अपेक्षा से द्विप्रदेशिक स्कन्ध अनन्त कहे गये हैं १, क्षेत्रकी अपेक्षा से द्विप्रदेशावगाढ पुद्गल अनन्त कहे गये हैं २ इसी प्रकार यावत् शब्दसे गृहीत द्विसमय स्थितिवाले पुद्गल इसी अभिलाप के अनुसार अनन्त कहे गये हैं—इस विषय में अभिलाप ऐसा है— " दुसमयट्ठिइया पोग्गला अणंता पण्णत्ता " इस अभिलाप से लगाकर " दुगुणलुक्खा पुग्गला अणंता पण्णत्ता " यहां तक काल को आश्रित करके तथा-वर्ण-गन्ध-रस-स्पर्श इनको आश्रित करके ये २१ सूत्र और कहना चाहिये। इस प्रकार से द्रव्य क्षेत्र काल और भाव को

દ્રવ્ય, ક્ષેત્ર, કાળ અને ભાવની અપેક્ષાએ બે સ્થાનકોના આધારે કથન કરે છે.

" दुपएसिया " ઇત્યાદિ—

દ્વિપ્રદેશિક સ્કન્ધ અનેક કહ્યાં છે દ્વિપ્રદેશાવગાઢ પુદ્ગલ સ્કન્ધ અનંત કહ્યાં છે. એજ પ્રમાણે દ્વિગુણરૂક્ષ પર્યન્તના ગુણવાળાં પુદ્ગલો કહ્યાં છે. આ કથનનો ભાવાર્થ નીચે પ્રમાણે છે-(૧) દ્રવ્યની અપેક્ષાએ દ્વિપ્રદેશિક સ્કન્ધ અનંત કહ્યાં છે. (૨) ક્ષેત્રની અપેક્ષાએ દ્વિપ્રદેશાવગાઢ પુદ્ગલો અનંત કહ્યાં છે (૩) એજ પ્રમાણે 'યાવત્' પદથી ગૃહીત બે સમયની સ્થિતિવાળાં પુદ્ગલો પણ આ અભિલાપ અનુસાર અનંત કહ્યાં છે આ વિષય સબંધી નીચે પ્રમાણે અભિલાપ છે-"दुसमयट्ठिइया पोग्गला अणंता पण्णत्ता" બે સમયની સ્થિતિવાળાં પુદ્ગલો અનંત કહ્યા છે " આ અભિલાપથી શરૂ કરીને " दुगुणलुक्खा पोग्गला अणंता पण्णत्ता " બે ગણી રૂક્ષતાવાળાં પુદ્ગલો અનંત કહ્યા છે. આ અભિલાપ પર્યન્તના અભિલાપો કાળની અપેક્ષાએ ગ્રહણ કરવા જોઇએ તથા વર્ણ, ગન્ધ, રસ અને સ્પર્શને અનુલક્ષીને ૨૧ બીજા સૂત્રો કહેવા જોઇએ.

छाया— द्वि समयस्थितिकाः पुद्गला अनन्ताः प्रज्ञप्ताः ३। एवं द्विगुणकृष्णा यावत् द्विगुणशुक्लाः ८। द्विगुणसुरभिगन्धाः ९ द्विगुणदुरभिगन्धाः १०। द्विगुणतिक्ता यावत् द्विगुणमधुराः १५। द्विगुणकर्कशा यावत् द्विगुणरूक्षाः पुद्गला अनन्ता प्रज्ञप्ताः ॥ २३ ॥ इति ॥ सू० ५९ ॥

इति स्थानाङ्गसूत्रे द्वितीयस्थानस्य चतुर्थोद्देशकः समाप्तः ॥४॥

इतिश्री विश्वविख्यात–जगद्वल्लभ–प्रसिद्धवाचक–पञ्चदशभाषाकलित
ललितकलापालापक–प्रविशुद्धगद्यपद्यनैकग्रन्थनिर्मापक–वादिमा
नमर्दक श्रीशाहूछत्रपति कोल्हापुरराजप्रदत्त 'जैनशास्त्राचार्य'पद
भूषित-कोल्हापुरराजगुरु बालब्रह्मचारि जैनाचार्य– जैनधर्म–
दिवाकर–पूज्यश्री–घासीलालव्रतिविरचितायां
स्थानाङ्गसूत्रस्य सुधाख्यायां व्याख्यायां
द्वितीयं स्थानं सम्पूर्णम् ॥२–४॥

आश्रित करके कहे गये ये सब सूत्र २३ हो जाते हैं–इनमें "द्रव्य की अपेक्षा से द्विप्रदेशिक स्कन्ध अनन्त कहे गये हैं" यह प्रथम सूत्र है। तथा "क्षेत्रकी अपेक्षा से द्विप्रदेशावगाढ पुद्गल अनन्त कहे गये हैं" ऐसा यह द्वितीय सूत्र है "दुसमयट्ठिइया पोग्गला अणंता पण्णत्ता ३" दो समय की स्थितिवाले पुद्गल अनन्त हैं—ऐसा यह सूत्र तीसरा है इसी तरह से "दुगुण किण्हा जाव दुगुण सुक्किल्ला ८" दुगुण कृष्ण से लेकर यावत् द्विगुणशुक्ल तक ८ सूत्र हो जाते हैं। इसी तरह–"दुगुण सुब्भिगंधा दुगुण दुब्भिगंधा १०" द्विगुण सुरभिगंध से लेकर द्विगुण दुरभिगंध तक के दो दो सूत्र और होते हैं इस प्रकार से ये दस सूत्र

આ પ્રકારે દ્રવ્ય, ક્ષેત્ર, કાળ અને ભાવને આધારે કહેલાં સૂત્રોની કુલ સંખ્યા ૨૩ થાય છે પહેલું સૂત્ર આ પ્રમાણે છે–દ્રવ્યની અપેક્ષાએ દ્વિપ્રદેશિક સ્કન્ધ અનંત કહ્યાં છે બીજું સૂત્ર આ પ્રમાણે સમજવું–ક્ષેત્રની અપેક્ષાએ બે પ્રદેશાવગાઢ પુદ્ગલો અનંત કહ્યાં છે–ત્રીજું સૂત્ર આ પ્રમાણે છે–"દુસમયટ્ઠિઇયા પોગ્ગલા અણંતા પણ્ણત્તા" બે સમયની સ્થિતિવાળાં પુદ્ગલો અનંત કહ્યાં છે એજ પ્રમાણે "દુગુણકિણ્હા જાવ દુગુણસુક્કિલ્લા" બે ગણાં કૃષ્ણવર્ણવાળાં પુદ્ગલો અનંત કહ્યાં છે એજ પ્રમાણે બે ગણાં શુક્લ પર્યન્તના વર્ણવાળાં પુદ્ગલો પણ અનંત કહ્યાં છે આ રીતે વર્ણની અપેક્ષાએ બનતાં પાંચ સૂત્રોને ત્રણ સૂત્રોમાં ઉમેરવાથી આઠ સૂત્ર બને છે "દુગુણ સુબ્ભિગંધા, દુગુણ દુબ્ભિગંધા ૧૦" (૯) બે ગણી સુરભીવાળાં અનંત પુદ્ગલો કહ્યાં છે (૧૦) બે ગણી દુર્ગંધવાળા અનંત પુદ્ગલો કહ્યાં છે આ રીતે ૧૦ સૂત્રો થયાં.

होते हैं " दुगुण तित्ता जाव दुगुण महुरा " ये पांच सूत्र रस सम्बन्धी होते हैं सो दस में पांच मिलानेसे पंद्रह सूत्र हो जाते हैं तथा " द्विगुण कक्खडा जाव दुगुण लुक्खा पोग्गला अणंता पण्णत्ता " इन ८ स्पर्शों के ८ सूत्रों को पंद्र में मिलाने से कुल चार वर्ण सम्बन्धी २३ सूत्र बन जाते हैं । इस तरह से ये २३ सूत्र द्विगुण रूप, रस, गंध और स्पर्श को आश्रित कर के कहे गये हैं ॥ सू० ५५ ॥

दूसरे स्थानकका चौथा उद्देशक समाप्त ॥ २-४ ॥

श्री जैनाचार्य-जैनधर्मदिवाकर-पूज्यश्री घासीलालव्रतिविरचित श्री स्थानाङ्ग सूत्रकी सुधानामक टीकार्थका दूसरा स्थानक समाप्त ॥ २॥

" दुगुण तित्ता जाव दुगुण महुरा " આ રીતે રસની અપેક્ષાએ પણ પાંચ સૂત્ર બને છે. આગલા ૧૦ સૂત્રોમાં આ પાંચ સૂત્રો ઉમેરવાથી ૧૫ સૂત્રો થાય છે. " द्विगुण कक्खडा जाय दुगुण लुक्खा पोग्गला अणंता पण्णत्ता " એજ પ્રમાણે કર્કશથી લઈને રૂક્ષ પર્યન્તના આઠ સ્પર્શો વિષેના પણ આઠ સૂત્ર બને છે. આગલા ૧૫ સૂત્રોમાં આ આઠ સૂત્રો ઉમેરવાથી કુલ ૨૩ સૂત્ર બને છે. આ પ્રકારના આ ૨૩ સૂત્રો દ્વિગુણ રૂપ, રસ, ગંધ અને સ્પર્શને અનુલક્ષીને કહેવામાં આવ્યાં છે ॥ સૂ. ૫૫ ॥

॥ બીજા સ્થાનકનો ચોથો ઉદ્દેશક સમાપ્ત ॥ ૨-૪ ॥

શ્રી જૈનાચાર્ય-જૈનધર્મદિવાકર-પૂજ્ય શ્રી ઘાસીલાલ મુનિવિરચિત સ્થાનાંગસૂત્રની સુધા નામની ટીકાર્થનું બીજું સ્થાનક સમાપ્ત. ॥ ૨ ॥

छाया— द्वि समयस्थितिकाः पुद्गलाः अनन्ताः प्रज्ञप्ताः ३। एवं द्विगुणकृष्णा यावत् द्विगुणशुक्लाः ८। द्विगुणसुरभिगन्धाः ९ द्विगुणदुरभिगन्धाः १०। द्विगुणतिक्ता यावत् द्विगुणमधुराः १५। द्विगुणकर्कशा यावत् द्विगुणरूक्षाः पुद्गला अनन्ताः प्रज्ञप्ता ॥ २३ ॥ इति ॥ सू० ५५ ॥

इति स्थानाङ्ग सूत्रे द्वितीयस्थानस्य चतुर्थोद्देशकः समाप्तः ॥४॥

इतिश्रीविश्वविख्यात–जगद्वल्लभ–प्रसिद्धवाचक–पञ्चदशभाषाकलित
ललितकलापालापक–प्रविशुद्धगद्यपद्यनैकग्रन्थनिर्मापक–वादिमा
नमर्दक श्रीशाहूछत्रपति कोल्हापुरराजप्रदत्त 'जैनशास्त्राचार्य'पद
भूषित–कोल्हापुरराजगुरु बालब्रह्मचारि–जैनाचार्य–जैनधर्म–
दिवाकर–पूज्यश्री–घासीलालव्रतिविरचितायां
स्थानाङ्गसूत्रस्य सुधाख्यायां व्याख्यायां
द्वितीयं स्थानं सम्पूर्णम् ॥२–४॥

आश्रित करके कहे गये ये सब सूत्र २३ हो जाते हैं–इनमें " द्रव्य की अपेक्षा से द्विप्रदेशिक स्कन्ध अनन्त कहे गये है " यह प्रथम सूत्र है। तथा " क्षेत्रकी अपेक्षा से द्विप्रदेशावगाढ पुद्गल अनन्त कहे गये है " ऐसा यह द्वितीय सूत्र है " दुसमयट्ठिइया पोग्गला अणंता पण्णत्ता " दो समय की स्थितिवाले पुद्गल अनन्त हैं—ऐसा यह सूत्र तीसरा है इसी तरह से " दुगुण किण्हा जाव दुगुण सुक्किला ८ " द्विगुण कृष्ण से लेकर यावत् द्विगुणशुक्ल तक ८ सूत्र हो जाते है। इसी तरह–"दुगुण सुब्भिगंधा दुगुण दुब्भिगंधा १० " द्विगुण सुरभिगंध से लेकर द्विगुण दुरभिगंध तक के दो दो सूत्र और होते है इस प्रकार से ये दस सूत्र

આ પ્રકારે દ્રવ્ય, ક્ષેત્ર, કાળ અને ભાવને આધારે કહેલાં સૂત્રોની કુલ સંખ્યા ૨૩ થાય છે પહેલું સૂત્ર આ પ્રમાણે છે–દ્રવ્યની અપેક્ષાએ દ્વિપ્રદેશિક સ્કન્ધ અનંત કહ્યાં છે બીજું સૂત્ર આ પ્રમાણે સમજવું–ક્ષેત્રની અપેક્ષાએ દ્વિ પ્રદેશાવગાઢ પુદ્ગલો અનંત કહ્યાં છે–ત્રીજું સૂત્ર આ પ્રમાણે છે–" દુસમયટ્ઠિઇયા પોગ્ગલા અણંતા પણ્ણત્તા " બે સમયની સ્થિતિવાળાં પુદ્ગલો અનંત કહ્યાં છે એજ પ્રમાણે " દુગુણકિણ્હા જાવ દુગુણસુક્કિલા " બે ગણાં કૃષ્ણવર્ણવાળાં પુદ્ગલો અનંત કહ્યાં છે એજ પ્રમાણે બે ગણાં શુક્લ પર્યન્તના વર્ણવાળાં પુદ્ગલો પણ અનંત કહ્યાં છે આ રીતે વર્ણની અપેક્ષાએ બનતાં પાંચ સૂત્રોને ત્રણ સૂત્રોમાં ઉમેરવાથી આઠ સૂત્ર બને છે. " દુગુણ સુબ્ભિગંધા, દુગુણ દુબ્ભિગંધા ૧૦ " (૯) બે ગણી સુરભીવાળા અનંત પુદ્ગલો કહ્યાં છે (૧૦) બે ગણી દુર્ગંધવાળા અનંત પુદ્ગલો કહ્યાં છે આ રીતે ૧૦ સૂત્રો થયાં.

मूलम्——तओ इंदा पण्णत्ता, तं जहा--णामिंदे ठवणिंदे दविंदे। तओ इंदा पण्णत्ता, तं जहा-णाणिंदे दंसणिंदे चरित्तिंदे। तओ इंदा पण्णत्ता, तं जहा -देविंदे असुरिंदे मणुस्सिंदे ॥सू.१॥

छाया—त्रय इन्द्राः प्रज्ञप्ताः, तद्यथा—नामेन्द्रः स्थापनेन्द्रः द्रव्येन्द्रः। त्रय इन्द्राः प्रज्ञप्ताः, तद्यथा——ज्ञानेन्द्रः दर्शनेन्द्रः चारित्रेन्द्रः। त्रय इन्द्राः प्रज्ञप्ताः, तद्यथा—देवेन्द्रः असुरेन्द्रः मनुष्येन्द्रः ॥ सू० १ ॥

टीका—'तओ इंदा' इत्यादि सूत्रत्रयं सुगमम्।

नवरम्——नामेन्द्रः सचेतनस्य यस्य कस्यचिद् गोपालदारकादेः अचेतनस्य वा वस्तुनः प्रासादादेः 'इन्द्रः' इत्ययथार्थं नाम क्रियते। स नामेन्द्रः नाममात्रेणेन्द्र इत्यर्थः १। स्थापनेन्द्रः—यद् इन्द्राद्यभिप्रायेण स्थाप्यते काष्ठकर्मादौ सद्भावस्थापनया असद्भावस्थापनया वा 'इन्द्रः' इति स्थापना क्रियते २।

टीकार्थ-तीन इन्द्र कहे गये हैं जैसे नामेन्द्र, स्थापनेन्द्र और द्रव्येन्द्र इस तरह से भी तीन इन्द्र कहे गये हैं-जैसे ज्ञानेन्द्र, दर्शनेन्द्र और चारित्रेन्द्र तथा देवेन्द्र, असुरेन्द्र और मनुष्येन्द्र

सचेतन जिस किसी गोपालदारक आदिका अथवा अचेतन प्रासाद आदि वस्तुका जो इन्द्र ऐसा नाम किया जाता है वह नाम इन्द्र है नामइन्द्र में जिस इन्द्र का नाम रखा गया है उस इन्द्र के गुण आदि उसमें नहीं होते हैं केवल व्यवहार चलाने के लिये ही यह नाम निक्षेप किया जाता है स्थापना दो प्रकार की है एक सद्भावस्थापना और दूसरी असद्भावस्थापना इन्द्र आदि के अभिप्राय के वशवर्ती हुए जीव के द्वारा जो काष्ठ पाषाण आदि में उसके आकार की अथवा विना आकार की

ઇન્દ્ર ત્રણ કહ્યા છે, જેમકે નામેન્દ્ર, સ્થાપનેન્દ્ર અને દ્રવ્યેન્દ્ર. આ રીતે પણ ત્રણ ઇન્દ્ર કહ્યા છે-જ્ઞાનેન્દ્ર, દર્શનેન્દ્ર અને ચારિત્રેન્દ્ર તથા બીજી રીતે પણ ત્રણ ઇન્દ્ર કહ્યા છે-દેવેન્દ્ર, અસુરેન્દ્ર અને મનુષ્યેન્દ્ર

સચેતન જે કોઈ ગોપાલદારક આદિનું અથવા અચેતન પ્રાસાદ (ભુવન) આદિ વસ્તુનું જે 'ઇન્દ્ર' એવું નામ અપાય છે, તેને 'નામેન્દ્ર' કહે છે. નામેન્દ્રમાં જે ઇન્દ્રનું નામ રાખવામાં આવ્યુ હોય છે તે ઇન્દ્રના ગુણ આદિનો સદા સદ્ભાવ જ હોતો નથી, પરન્તુ માત્ર વ્યવહાર ચલાવવાને માટે જ તે નામ આપવામાં આવ્યું હોય છે. સ્થાપના બે પ્રકારની કહી છે-(૧) સદ્ભાવ સ્થાપના, (૨) અસદ્ભાવ સ્થાપના. ઇન્દ્ર આદિની માન્યતાને અધીન થયેલા જીવ દ્વારા કાષ્ઠ, પાષાણ આદિમાં, તેના આકારની કે અનાકારની

अथ तृतीय स्थान प्रारभ्यते—

~ गतं द्वितीयं स्थानं, सम्प्रति चतुरुद्देशात्मकं तृतीयं स्थानमारभ्यते, अस्य च पूर्वस्थानेनायमभिसम्बन्धः — द्वितीयस्थाने द्विस्थानप्राप्ताः भावाः प्ररूपिताः, अस्मिंस्तु क्रमप्राप्ताः त्रिस्थानकाभावाः प्ररूप्यन्ते । तत्र द्विस्थानकस्यान्तिमोद्देशकगताऽन्तिमसूत्रेण सहास्य तृतीयस्थानगतप्रथमोद्देशकप्रथमसूत्रस्यायं सम्बन्धः— द्विस्थानके चतुर्थोद्देशकस्यान्तिमसूत्रे पुद्गलधर्मा उक्ताः, पुद्गलजीवयोः परस्पर सम्बन्धादत्र प्रथमसूत्रे जीवधर्मा उच्यन्ते—

तृतीयस्थान–प्रथम उद्देशक

द्वितीय स्थान कहा जा चुका है, अब चार उद्देशात्मक तृतीय स्थान प्रारम्भ होता है इसका द्वितीयस्थान के साथ ऐसा सम्बन्ध है कि द्वितीयस्थान में द्विस्थानप्राप्त भावों की प्ररूपणा की गई है और इस तृतीयस्थान में क्रमप्राप्त तीन स्थानवाले भावों की प्ररूपणा होती है। द्विस्थान के अन्तिम उद्देशक में गत अन्तिमसूत्र के साथ इस तृतीय स्थान के प्रथम उद्देशक के प्रथमसूत्र का ऐसा सम्बन्ध है कि द्विस्थानक के चतुर्थ उद्देशक के अन्तिम सूत्र में पुद्गलधर्मों की प्ररूपणा की गई है सो पुद्गल और जीव का परस्पर में अनादि काल से सम्बन्ध चला आ रहा है अतः अब इस स्थानक के प्रथम सूत्र में जीव धर्मों का कथन सूत्रकार कर रहे हैं—(तओ इंदा पण्णत्ता) इत्यादि ।

त्रीजा स्थानने–पहेलो उद्देशक

द्वितीय स्थाननी प्ररूपणा पूरी थई हवे तृतीय स्थाननी प्ररूपणाने प्रारंभ थाय छे चार उद्देशको द्वारा सूत्रकारे तृतीय स्थाननी प्ररूपणा करी छे द्वितीय स्थानमां बे स्थानोमां आवनारी प्रकारना भावोनी प्ररूपणा करवामां आवी छे हवे आ तृतीय स्थानमां क्रमप्राप्त त्रण स्थानवाळा भावोनी प्ररूपणा करवामां आवशे. द्वितीय स्थानना छेल्ला उद्देशकना छेल्ला सूत्र साथे तृतीय स्थानना पहेला उद्देशकना पहेला सूत्रने आ प्रमाणे संबंध छे— द्वितीय स्थानना छेल्ला उद्देशकना छेल्ला सूत्रमां पुद्गल धर्मोनी प्ररूपणा करवामां आवी छे पुद्गल अने जीवनो अनादिकाळथी संबंध चाल्यो आवे छे आ संबंधने अनुलक्षीने हवे सूत्रकार आ स्थानना पहेला सूत्रमां जीव धर्मोनुं कथन करे छे—" तओ इंदा पण्णत्ता " इत्यादि—

योगचन्द्रिका टीकायामवलोकनीयम् । 'अनुपयोगो द्रव्यमप्रधानं चेति, तत्र द्रव्यं चासाविन्द्रश्चेति द्रव्येन्द्रः ३ ॥

उक्ता नामस्थापना द्रव्येन्द्राः, साम्प्रतं त्रिस्थानकावतारेण भावेन्द्रमाह— 'तओ इंदा' इत्यादि, त्रय इन्द्रा· प्रज्ञप्ताः-ज्ञानेन्द्रः, दर्शनेन्द्रः, चारित्रेन्द्र इति । तत्र-इन्दनात्-दीपनात्-परमैश्वर्याद् इन्द्र, ज्ञानेन ज्ञानस्य ज्ञाने वा इन्द्रः-परमेश्वरः ज्ञानेन्द्रः-सातिशयश्रुताद्यन्यतरज्ञानवशात्प्ररूपितसकलवस्तुविस्तरः श्रुतावधिमनः पर्यवाद्यन्यतरज्ञानधरो मुनिः, केवली वा १। एवं दर्शनेन्द्रः-क्षायिकसम्यग्दर्शनी२।

इन्द्रपद को भोगेगा उसे इन्द्र कहना यह द्रव्येन्द्र निक्षेप है । नाम, स्थापना और द्रव्य इन निक्षेपों का सविस्तर वर्णन अनुयोगद्वार की अनुयोगचन्द्रिका टीका में देखना चाहिये " जो जीव इन्द्र के आगम का ज्ञाता है और वर्तमान में उसमें उपयोग से शून्य है ऐसा वह जीव आगम की अपेक्षा द्रव्येन्द्र है इस तरह त्रिकस्थानक के अवतार से नाम, स्थापना और द्रव्य इन्द्र कहे अब त्रिस्थानक के अवतार से भाव इन्द्र का कथन सूत्रकार करते हैं-" तओ इंदा " तीन इन्द्र कहे गये हैं एक ज्ञानेन्द्र, दूसरा दर्शनेन्द्र और तीसरा चारित्रेन्द्र परमऐश्वर्य का जो अनुभव करता है वह इन्द्र है ज्ञान से, अथवा ज्ञान का अथवा ज्ञान में जो इन्द्र-परमेश्वर है वह ज्ञानेन्द्र है सातिशय श्रुत आदि अन्यतर ज्ञान के वश से प्ररूपित किया है सकलवस्तु का विस्तारजिसने, ऐसा श्रुत अवधि, मनः पर्यव आदि अन्यतर ज्ञान को धारण करने वाला

જે જીવ ભવિષ્યમા ઇન્દ્રપદને ભોગવવાનો છે તેને ઇન્દ્ર કહેવો એજ દ્રવ્યેન્દ્ર નિક્ષેપ છે. નામ, સ્થાપના અને દ્રવ્ય, આ નિક્ષેપોનુ સવિસ્તર વર્ણન અનુ-યોગદ્વારની અનુયોગ ચન્દ્રિકા ટીકામાં આપવામાં આવ્યુ છે. તો જિજ્ઞાસુ પાઠકોએ તે વર્ણન ત્યાંથી વાંચી લેવું "જે જીવ ઇન્દ્રના આગમનો જ્ઞાતા છે અને વર્તમાન સમયે તેમા ઉપયોગથી રહિત છે, એવો તે જીવ આગમની અપેક્ષાએ દ્રવ્યેન્દ્ર છે આ રીતે ત્રિસ્થાનકોને આધારે નામેન્દ્ર, સ્થાપનેન્દ્ર અને દ્રવ્યેન્દ્રનું કથન અહીં પૂરૂં થાય છે

હવે સૂત્રકાર ભાવઇન્દ્રનુ નિરૂપણ કરે છે-" તઓ ઇંદા " ઇન્દ્ર ત્રણ કહ્યા છે-(૧) જ્ઞાનેન્દ્ર, (૨) દર્શનેન્દ્ર અને (૩) ચારિત્રેન્દ્ર પરમ ઐશ્વર્યનો અનુભવ કરનારને ઇન્દ્ર કહે છે. જ્ઞાનથી, જ્ઞાનનો અથવા જ્ઞાનમા જે ઇન્દ્ર (પરમેશ્વર) છે, તેને જ્ઞાનેન્દ્ર કહે છે સાતિશય શ્રુત આદિ અન્યતર જ્ઞાનને આધારે જેમણે સકલ વસ્તુની પ્રરૂપણા કરી છે એવા શ્રુત, અવધિ, મનપર્યવ આદિ અન્યતર જ્ઞાનને ધારણ કરનારા મુનિ અથવા કેવલીને જ્ઞાનેન્દ્ર કહે છે ક્ષાયિક

द्रव्येन्द्रः-प्रभृति-ग छतिवास्तान् पर्यायानिति द्रव्यम्-विवक्षितयोरतीतभविष्य-द्भावयोः कारणम्, अनुभूतविवक्षितभावमनुभविष्यद्विवक्षितभाव वा वस्त्वित्यर्थः। द्रव्यलक्षण सामान्य यत इत्थं प्रोच्यम्—

" भूतस्य भाविनो वा, भावस्य हि कारण तु यल्लोके।
तद् द्रव्य तत्त्वज्ञैः, सचेतनाचेतनं कथितम् ॥ १ ॥ " इति।

तत्र सचेतन-पुरुषादि, अचेतन काष्ठादि च भवति। एवं द्रव्यरूप इन्द्रो द्रव्येन्द्रः। नामस्थापनाद्रव्याणां सविस्तरवर्णनमनुयोगद्वारसूत्रस्य मत्कृतायामनु

यह इन्द्र है इस प्रकार की बुद्धि से स्थापना की प्रतिष्ठा की जाती है वह स्थापनेन्द्र है जो उन २ पर्यायों को प्राप्त करता है वह द्रव्य है यह द्रव्य अतीत और भविष्यत् भाव का कारण होता है जिससे विवक्षित भाव का पहिले अनुभव कर लिया है अथवा विवक्षित भाव का आगे वह अनुभव करेगा ऐसी वस्तु द्रव्य कही गई है सामान्य से द्रव्य का लक्षण ऐसा कहा गया है-(भूतस्य भाविनो वा) इत्यादि।

पुरुषादि सचेतन और काष्ठादि अचेतन होता है। इस तरह द्रव्य-रूप जो इन्द्र है वह द्रव्येन्द्र कहा गया है इसका अभिप्राय ऐसा है कि जिस प्रकार गद्दी पर से अलग किये गये व्यक्ति को लोकव्यवहार में राजा कहा जाता है और भविष्यत्काल में जिसे राज्यपद की प्राप्ति होती है ऐसे युवराज को राजा कहा जाता है इसी प्रकार से जिस जीव ने पूर्व में इन्द्रपद को भोग लिया है अथवा जो जीव भविष्यत्काल में

આ ઇન્દ્ર છે તે પ્રકારની બુદ્ધિથી જે સ્થાપના (પ્રતિમા) કરાય છે તેનું નામ સ્થાપનેન્દ્ર છે હવે દ્રવ્યેન્દ્રનો અર્થ સ્પષ્ટ કરવા નિમિત્તે પહેલાં દ્રવ્ય એટલે શું તે સમજાવવામાં આવે છે-જુદી જુદી પર્યાયોને પ્રાપ્ત કરનાર વસ્તુને દ્રવ્ય કહે છે તે દ્રવ્ય અતીત (ભૂતકાલિન) અને ભવિષ્યકાલિન ભાવનું કારણ હોય છે એટલે અમુક ભાવનો ભૂતકાળમાં અનુભવ કરી લીધો છે અથવા અમુક ભાવનો ભવિષ્યમાં અનુભવ કરવાનો છે, એવી વસ્તુને દ્રવ્ય કહેવાય છે સામાન્ય રીતે દ્રવ્યનું આ પ્રકારનું લક્ષણ કહ્યું છે—

' भूतस्य भाविनो वा " ઇત્યાદિ—

પુરુષ આદિ સચેતન હોય છે અને કાષ્ઠાદિ અચેતન હોય છે આ રીતે દ્રવ્યરૂપ જે ઇન્દ્ર છે તેને દ્રવ્યેન્દ્ર કહે છે આ કથનનો ભાવાર્થ નીચે પ્રમાણે છે—જેમ રાજગાદીથી અલગ કરાયેલ વ્યક્તિને પણ લોકો વ્યવહારમાં તો રાજા જ કહે છે અને ભવિષ્યમાં રાજા બનનાર યુવરાજને પણ રાજા જ કહે છે, એ જ પ્રમાણે જે જીવે પહેલાં ઇન્દ્રપદને ભોગવી લીધું હોય છે, અથવા

योगचन्द्रिका टीकायामवलोकनीयम् । 'अनुपयोगो द्रव्यमप्रशानं चेति, तत्र द्रव्यं चासाविन्द्रश्चेति द्रव्येन्द्रः ३ ॥

उक्ता नामस्थापना द्रव्येन्द्राः, साम्प्रतं त्रिस्थानकावतारेण भावेन्द्रमाह— 'तओ इंदा ' इत्यादि, त्रय इन्द्राः प्रज्ञप्ताः-ज्ञानेन्द्रः, दर्शनेन्द्रः, चारित्रेन्द्र इति । तत्र-इन्दनात्-दीपनात्-परमैश्वर्याद् इन्द्रः, ज्ञानेन ज्ञानस्य ज्ञाने वा इन्द्रः-परमेश्वरः ज्ञानेन्द्रः-सातिशयश्रुताद्यन्यतरज्ञानवशात्प्ररूपितसकलवस्तुविस्तरः श्रुतावधिमनः पर्यवाद्यन्यतरज्ञानधरो मुनिः, केवली वा १। एवं दर्शनेन्द्रः-क्षायिकसम्यग्दर्शनी २।

इन्द्रपद को भोगेगा उसे इन्द्र कहना यह द्रव्येन्द्र निक्षेप है । नाम, स्थापना और द्रव्य इन निक्षेपों का सविस्तर वर्णन अनुयोगद्वार की अनुयोगचन्द्रिका टीका में देखना चाहिये " जो जीव इन्द्र के आगम का ज्ञाता है और वर्तमान में उसमें उपयोग से शून्य है ऐसा वह जीव आगम की अपेक्षा द्रव्येन्द्र है इस तरह त्रिकस्थानक के अवतार से नाम, स्थापना और द्रव्य इन्द्र कहे अब त्रिस्थानक के अवतार से भाव इन्द्र का कथन सूत्रकार करते हैं-" तओ इंदा " तीन इन्द्र कहे गये हैं एक ज्ञानेन्द्र, दूसरा दर्शनेन्द्र और तीसरा चारित्रेन्द्र परमऐश्वर्य का जो अनुभव करता है वह इन्द्र है ज्ञान से, अथवा ज्ञान का अथवा ज्ञान में जो इन्द्र-परमेश्वर है वह ज्ञानेन्द्र है सातिशय श्रुत आदि अन्यतर ज्ञान के वश से प्ररूपित किया है सकलवस्तु का विस्तारजिसने, ऐसा श्रुत अवधि, मनः पर्यव आदि अन्यतर ज्ञान को धारण करने वाला

જે જીવ ભવિષ્યમા ઇન્દ્રપદને ભોગવવાનો છે તેને ઇન્દ્ર કહેવો એજ દ્રવ્યેન્દ્ર નિક્ષેપ છે. નામ, સ્થાપના અને દ્રવ્ય, આ નિક્ષેપોનુ સવિસ્તર વર્ણન અનુયોગદ્વારની અનુયોગ ચન્દ્રિકા ટીકામા આપવામાં આવ્યું છે. તો જિજ્ઞાસુ પાઠકોએ તે વર્ણન ત્યાથી વાંચી લેવું " જે જીવ ઇન્દ્રના આગમનો જ્ઞાતા છે અને વર્તમાન સમયે તેમા ઉપયોગથી રહિત છે, એવો તે જીવ આગમની અપેક્ષાએ દ્રવ્યેન્દ્ર છે આ રીતે ત્રિસ્થાનકોને આધારે નામેન્દ્ર, સ્થાપનેન્દ્ર અને દ્રવ્યેન્દ્રનુ કથન અહીં પૂરૂં થાય છે

હવે સૂત્રકાર ભાવઇન્દ્રનુ નિરૂપણ કરે છે-" તઓ इंदा " ઇન્દ્ર ત્રણ કહ્યા છે-(૧) જ્ઞાનેન્દ્ર, (૨) દર્શનેન્દ્ર અને (૩) ચારિત્રેન્દ્ર પરમ ઐશ્વર્યનો અનુભવ કરનારને ઇન્દ્ર કહે છે. જ્ઞાનથી, જ્ઞાનનો અથવા જ્ઞાનમાં જે ઇન્દ્ર (પરમેશ્વર) છે, તેને જ્ઞાનેન્દ્ર કહે છે સાતિશય શ્રુત આદિ અન્યતર જ્ઞાનને આધારે જેમણે સકલ વસ્તુની પ્રરૂપણા કરી છે એવા શ્રુત, અવધિ, મન પર્યવ આદિ અન્યતર જ્ઞાનને ધારણ કરનારા મુનિ અથવા કેવલીને જ્ઞાનેન્દ્ર કહે છે ક્ષાયિક

द्रव्येन्द्रः-द्रवति-गच्छति ताँस्तान् पर्यायानिति द्रव्यम्-विवक्षितयोरतीतभविष्य द्भावयोः कारणम् , अनुभूतविवक्षितभावमनुभविष्यद्विवक्षितभाव वा वस्तित्यर्थः। द्रव्यलक्षणं सामान्यत इत्थं बोध्यम्—

"भूतस्य भाविनो वा, भावस्य हि कारणं तु यल्लोके ।
तद् द्रव्य तत्त्वज्ञैः, सचेतनाचेतनं कथितम् ॥ १ ॥" इति ।

तत्र सचेतन-पुरुषादि, अचेतनं काष्ठादि च भवति। एवं द्रव्यरूप इन्द्रो द्रव्येन्द्रः। नामस्थापनाद्रव्याणां सविस्तरवर्णनमनुयोगद्वारसूत्रस्य मत्कृतायामनु

यह इन्द्र है इस प्रकार की बुद्धि से स्थापना की प्रतिष्ठा की जाती है वह स्थापनेन्द्र है जो उन २ पर्यायों को प्राप्त करता है वह द्रव्य है यह द्रव्य अतीत और भविष्यत् भाव का कारण होता है जिससे विवक्षित भाव का पहिले अनुभव कर लिया है अथवा विवक्षित भाव का आगे वह अनुभव करेगा ऐसी वस्तु द्रव्य कही गई है सामान्य से द्रव्य का लक्षण ऐसा कहा गया है-(भूतस्य भाविनो वा) इत्यादि ।

पुरुषादि सचेतन और काष्ठादि अचेतन होता है। इस तरह द्रव्य रूप जो इन्द्र है वह द्रव्येन्द्र कहा गया है इसका अभिप्राय ऐसा है कि जिस प्रकार गद्दी पर से अलग किये गये व्यक्ति को लोकव्यवहार में राजा कहा जाता है और भविष्यत्काल में जिसे राज्यपद की प्राप्ति होती है ऐसे युवराज को राजा कहा जाता है उसी प्रकार से जिस जीव ने पूर्व में इन्द्रपद को भोग लिया है अथवा जो जीव भविष्यत्काल में

આ ઇન્દ્ર છે તે પ્રકારની બુદ્ધિથી જે સ્થાપના (પ્રતિષ્ઠા) કરાય છે, તેનું નામ સ્થાપનેન્દ્ર છે હવે દ્રવ્યેન્દ્રનો અર્થ સ્પષ્ટ કરવા નિમિત્તે પહેલાં દ્રવ્ય એટલે શું તે સમજાવવામાં આવે છે-જુદી જુદી પર્યાયોને પ્રાપ્ત કરનાર વસ્તુને દ્રવ્ય કહે છે તે દ્રવ્ય અતીત (ભૂતકાલિન) અને ભવિષ્યકાલિન ભાવનું કારણ હોય છે જેણે અમુક ભાવનો ભૂતકાળમાં અનુભવ કરી લીધો છે અથવા અમુક ભાવનો ભવિષ્યમાં અનુભવ કરવાનો છે એવી વસ્તુને દ્રવ્ય કહેવાય છે સામાન્ય રીતે દ્રવ્યનું આ પ્રકારનું લક્ષણ કહ્યું છે—

'भूतस्य भाविनो वा" ઇત્યાદિ—

પુરુષ આદિ સચેતન હોય છે અને કાષ્ઠાદિ અચેતન હોય છે આ રીતે દ્રવ્યરૂપ જે ઇન્દ્ર છે તેને દ્રવ્યેન્દ્ર કહે છે આ કથનનો ભાવાર્થ નીચે પ્રમાણે છે—જેમ રાજગાદીથી અલગ કરાયેલ વ્યક્તિને પણ લોકો વ્યવહારમા તો રાજા જ કહે છે અને ભવિષ્યમાં રાજા બનનાર યુવરાજને પણ રાજા જ કહે છે, એ જ પ્રમાણે જે જીવે પહેલાં ઇન્દ્રપદને ભોગવી લીધું હોય છે, અથવા

त्रयाणामप्येषां देवेन्द्रादीनां वैक्रियकरणादिशक्तिसंपन्नत्वादिन्द्रत्वमिति सामान्यतो विकुर्वणा सूत्रत्रयमाह—

मूलम्--तिविहा विउव्वणा पण्णत्ता तं जहा-बाहिरए पोग्गले परियाइत्ता एगा विउव्वणा १, बाहिरए पोग्गले अपरियाइत्ता एगा विउव्वणा २, बाहिरए पोग्गले परियाइत्तावि अपरियाइत्तावि एगा विउव्वणा ३।१। तिविहा विउव्वणा पण्णत्ता, तं जहा-अब्भंतरए पोग्गले परियाइत्ता एगा विउव्वणा १, अब्भंतरए पोग्गले अपरियाइत्ता एगा विउव्वणा २, अब्भंतरए पोग्गले परियाइत्तावि अपरियाइत्तावि एगा विउव्वणा ३।२। तिविहा विउव्वणा पण्णत्ता तं जहा--बाहिरब्भंतरए पोग्गले परियाइत्ता एगा विउव्वणा१, बाहिरब्भंतराए पोग्गले अपरियाइत्ता एगा विउव्वणा२, बाहिरब्भंतरए पोग्गले परियाइत्तावि अपरियाइत्तावि एगा विउव्वणा ३।३। सू० २ ॥

छाया—त्रिविधा विकुर्वणा प्रज्ञप्ता, तद्यथा—बाह्यान् पुद्गलान् पर्यादाय एका विकुर्वणा १, बाह्यान् पुद्गलान् अपर्यादाय एका विकुर्वणा २, बाह्यान् पुद्गलान् पर्यादायापि अपर्यादायापि एका विकुर्वणा ३। २। त्रिविधा विकुर्वणा प्रज्ञप्ता, तद्यथा—आभ्यन्तरान् पुद्गलान् पर्यादाय एका विकुर्वणा १, आभ्यन्तरान् पुद्गलान् अपर्यादाय एका विकुर्वणा२, आभ्यन्तरान् पुद्गलान् पर्यादायापि अपर्यादायापि एका विकुर्वणा ३ ।२। त्रिविधा विकुर्वणा प्रज्ञप्ता, तद्यथा—बाह्याभ्यन्तरान् पुद्गलान् पर्यादाय एका विकुर्वणा१, बाह्याभ्यन्तरान् पुद्गलान् अपर्यादाय एका विकुर्वणा२, बाह्याभ्यन्तरान् पुद्गलान् पर्यादायापि अपर्यादायापि एका विकुर्वणा ३।३॥

इन तीनों देवेन्द्रादिकों में वैक्रिय करने की शक्ति से संपन्नता रहती है इसलिये इनमें इन्द्रता है इसी बात को लेकर अब सूत्रकार सामान्यरूप से विकुर्वणा संबंधी तीन सूत्र कहते हैं–(तिविहा विउव्वणा पण्णत्ता) इत्यादि ।

ઉપર્યુક્ત ત્રણે પ્રકારના ઇન્દ્રો વિકુર્વણા શક્તિવાળા હોય છે. તેથી જ તેઓમાં ઇન્દ્રતા છે એ જ સંબંધની અપેક્ષાએ હવે સૂત્રકાર સામાન્ય રૂપે વિકુર્વણા સંબંધી ત્રણ સૂત્રો કહે છે–" तिविहा विउव्वणा पण्णत्ता " ઇત્યાદિ.

चारित्रेन्द्रः—यथाख्यातचारित्रः ३। एतेषां च भावेन्द्रता सकलभावप्रधानक्षायिकलक्षणेन विवक्षितक्षायोपशमिकलक्षणेन वा भावेन, यद्वा-भावतः परमार्थतः इन्द्रत्वात्-सकलसंसार्यप्राप्यापूर्वगुणलक्ष्मीलक्षणपरमैश्वर्ययुक्तत्वाद् भावेन्द्रता विज्ञेयेति३।

उक्तमाध्यात्मिकैश्वर्यापेक्षया भावेन्द्रत्रैविध्यम्। अथ बाह्यैश्वर्यापेक्षया तदेवाह—'तओ इंदा' इत्यादि, स्पष्ट, नवरं देवाः—वैमानिका ज्योतिष्कवैमानिका वा तेषामिन्द्रा देवेन्द्राः १। असुराः—भवनपतिव्यन्तरा वा, तेषामिन्द्राः—असुरेन्द्राः २ मनुष्येन्द्राः—चक्रवर्त्यादिरिति॥ सू० १॥

मुनि या केवली ज्ञानेन्द्र है क्षायिक सम्यग्दर्शनवाला जीव दर्शनेन्द्र है यथाख्यात चारित्रशाली जीव चारित्रेन्द्र है इनमें जो भावेन्द्रता है वह सकलभावप्रधान क्षायिक भाव से अथवा विवक्षित क्षायोपशमिक भाव से अथवा परमार्थतः सकल संसारी जीवों द्वारा अप्राप्त अपूर्व गुणलक्ष्मी रूप ऐश्वर्य युक्त होने से है ऐसा जानना चाहिये ३ इस प्रकार यह भावेन्द्रता आध्यात्मिक ऐश्वर्य की अपेक्षा तीन प्रकार की कही गई है अब बाह्य ऐश्वर्य की अपेक्षा से इन्द्रता सूत्रकार कहते हैं—"तओ इंदा" इत्यादि सूत्र की व्याख्या सुगम है देव पद से यहां ज्योतिष्कदेव और वैमानिक देव गृहीत हुए हैं इनका जो इन्द्र है वह देवेन्द्र है असुरशब्द से भवनपतिविशेष अथवा सुरप्रतिषेध से भवनपति और व्यन्तरदेव ये गृहीत हुए हैं इनका जो इन्द्र है वह असुरेन्द्र है मनुष्येन्द्र से चक्रवर्ती आदि गृहीत हुए हैं॥ सू०१॥

સમ્યક્ દર્શનવાળા જીવને દર્શનેન્દ્ર કહે છે યથાખ્યાત ચારિત્રશાળી જીવને ચારિત્રેન્દ્ર કહે છે એમાં જે ભાવેન્દ્રતા કહી છે તે સકલ ભાવપ્રધાન ક્ષાયિક ભાવની અપેક્ષાએ અથવા વિવક્ષિત ક્ષાયોપશમિક ભાવની અપેક્ષાએ છે અથવા જે અપૂર્વ ગુણલક્ષ્મીરૂપ ઐશ્વર્યની પ્રાપ્તિ બીજા સામાન્ય સંસારી જીવો કરી શકતા નથી તે ઐશ્વર્યની પ્રાપ્તિ તેમણે કરી હોય છે, તે દૃષ્ટિએ પણ તેમનામાં ભાવેન્દ્રતા સંભવી શકે છે તે ભાવેન્દ્રતાના ઐશ્વર્યની અપેક્ષાએ ઉપર્યુક્ત ત્રણ પ્રકાર કહ્યા છે

હવે સૂત્રકાર બાહ્ય ઐશ્વર્યની અપેક્ષાએ ઇન્દ્રતાનું કથન કરે છે—"तओ इंदा" ઇત્યાદિ સૂત્રની વ્યાખ્યા સરળ છે "દેવ" પદથી અહીં જ્યોતિષ્ક દેવ અને વૈમાનિક દેવ ગૃહીત થયા છે, તેમના ઇન્દ્રને દેવેન્દ્ર કહે છે અસુર શબ્દ દ્વારા ભવનપતિ વિશેષ અથવા સુરપ્રતિષેધ દ્વારા ભવનપતિ અને વ્યન્તર દેવોને ગ્રહણ કરવામાં આવ્યા છે, અને તેમના ઇન્દ્રને અસુરેન્દ્ર કહેવામાં આવે છે ચક્રવર્તી આદિને મનુષ્યેન્દ્ર કહે છે ॥ સૂ. ૧ ॥

त्रयाणामप्येषां देवेन्द्रादीनां वैक्रियकरणादिशक्तिसंपन्नत्वादिन्द्रत्वमिति सामान्यतो विकुर्वणा सूत्रत्रयमाह—

मूलम्--तिविहा विउव्वणा पण्णत्ता तं जहा--बाहिरए पोग्गले परियाइत्ता एगा विउव्वणा १, बाहिरए पोग्गले अपरियाइत्ता एगा विउव्वणा २, बाहिरए पोग्गले परियाइत्तावि अपरियाइत्तावि एगा विउव्वणा ३।१। तिविहा विउव्वणा पण्णत्ता, तं जहा-अब्भंतरए पोग्गले परियाइत्ता एगा विउव्वणा १, अब्भंतरए पोग्गले अपरियाइत्ता एगा विउव्वणा २, अब्भंतरए पोग्गले परियाइत्तावि अपरियाइत्तावि एगा विउव्वणा ३ । २ । तिविहा विउव्वणा पण्णत्ता तं जहा--बाहिरब्भंतरए पोग्गले परियाइत्ता एगा विउव्वणा१, बाहिरब्भंतराए पोग्गले अपरियाइत्ता एगा विउव्वणा२, बाहिरब्भंतरए पोग्गले परियाइत्तावि अपरियाइत्तावि एगा विउव्वणा ३ ।३। सू० २ ॥

छाया–त्रिविधा विकुर्वणा प्रज्ञप्ता, तद्यथा–बाह्यान् पुद्गलान् पर्यादाय एका विकुर्वणा १, बाह्यान् पुद्गलान् अपर्यादाय एका विकुर्वणा २, बाह्यान् पुद्गलान् पर्यादायापि अपर्यादायापि एका विकुर्वणा ३ । २ । त्रिविधा विकुर्वणा प्रज्ञप्ता, तद्यथा–आभ्यन्तरान् पुद्गलान् पर्यादाय एका विकुर्वणा १, आभ्यन्तरान् पुद्गलान् अपर्यादाय एका विकुर्वणा२, आभ्यन्तरान् पुद्गलान् पर्यादायापि अपर्यादायापि एका विकुर्वणा ३ ।२। त्रिविधा विकुर्वणा प्रज्ञप्ता, तद्यथा–बाह्याभ्यन्तरान् पुद्गलान् पर्यादाय एका विकुर्वणा१, बाह्याभ्यन्तरान् पुद्गलान् अपर्यादाय एका विकुर्वणा२, बाह्याभ्यन्तरान् पुद्गलान् पर्यादायापि अपर्यादायापि एका विकुर्वणा ३।३॥

इन तीनों देवेन्द्रादिकों में वैक्रिय करने की शक्ति से संपन्नता रहती है इसलिये इनमें इन्द्रता है इसी बात को लेकर अब सूत्रकार सामान्यरूप से विकुर्वणा संबंधी तीन सूत्रकहते हैं–(तिविहा विउव्वणा पण्णत्ता) इत्यादि ।

ઉપર્યુક્ત ત્રણે પ્રકારના ઇન્દ્રો વિકુર્વણા શક્તિવાળા હોય છે તેથી જ તેઓમાં ઇન્દ્રતા છે એ જ સંબધની અપેક્ષાએ હવે સૂત્રકાર સામાન્ય રૂપે વિકુર્વણા સંબધી ત્રણ સૂત્રો કહે છે–" तिविहा विउव्वणा पण्णत्ता " ઇત્યાદિ.

टीका—'तिविहा' इत्यादि सूत्रत्रय सुगमम् ।

नवरं-विकुर्वते इति विकुर्वणा विविधरूपादि करणम् । सा त्रिविधा, तथाहि-बाह्यान्-भवधारणीय शरीरानवगाढक्षेत्रप्रदेशवर्तिनः पुद्गलान्-पर्यादाय-वैक्रिय समुद्घातेन गृहीत्वा एका-प्रथमा विकुर्वणा क्रियते १। पूर्वोक्तस्वरूपान् पुद्गलान् अपर्यादाय अगृहीत्वैव या विकुर्वणा भवधारणीयरूपैव साऽन्या २। यत्पुनर्भवधारणीयस्यैव किञ्चिद्विशेषप्रतिपादनं सा पर्यादायाऽपि अपर्यादायापि क्रियते इति तृतीया विकुर्वणा व्यपदिश्यते ३। अथवा विकुर्वणा-विभूषाकरणम्, तत्र बाह्यपुद्गलान् आभरणादीन् पर्यादाय १, अपर्यादाय-बाह्यान् आभरणादीन् अगृहीत्वा

टीकार्थ-विविध प्रकार के रूपादिकों का करना इसका नाम विकुर्वणा है यह विकुर्वणा तीन प्रकार की कही गई है एक विकुर्वणा वह है जिसमें भवधारणीयशरीर से अनवगाढ क्षेत्रप्रदेश में वर्ती पुद्गलों को वैक्रिय समुद्घात द्वारा ग्रहण करके किया जाता है तथा दूसरी विकुर्वणा वह है जो पूर्वोक्त स्वरूपवाले पुद्गलों को बिना ग्रहण करके ही की जाती है ऐसी यह विकुर्वणा भवधारणीयरूप ही होती है २ तीसरी विकुर्वणा ऐसी है कि जो पूर्वोक्त स्वरूपवाले पुद्गलों को ग्रहण करके भी और नहीं ग्रहण करके भी की जाती है ३, इस प्रकार की यह विकुर्वणा भवधारणीय शरीर में ही विशेष उत्पन्न करनेवाली होती है अथवा विकुर्वणा इस प्रकार से भी तीन प्रकार की होती है-यहां विकुर्वणा शब्द का अर्थ शरीरको विभूषायुक्त करना है। आभरणादि रूपबाह्य पुद्गलोंको ग्रहण करके

વિવિધ પ્રકારના રૂપોનું નિર્માણ કરવું તેનું નામ વિકુર્વણા છે. તે વિકુર્વણા ત્રણ પ્રકારની કહી છે પહેલા પ્રકારની વિકુર્વણા એ છે કે જે ભવધારણીય શરીર દ્વારા અનવગાઢ ક્ષેત્રવર્તી પુદ્ગલોને વૈક્રિય સમુદ્ઘાત દ્વારા ગ્રહણ કરીને કરવામાં આવે છે તથા બીજા પ્રકારની વિકુર્વણા એ છે કે જે પૂર્વોક્ત સ્વરૂપવાળા પુદ્ગલોને ગ્રહણ કર્યા વિના જ કરવામાં આવે છે એવી તે વિકુર્વણા ભવધારણીય રૂપ જ હોય છે ત્રીજા પ્રકારની વિકુર્વણા એવી છે કે જે પૂર્વોક્ત સ્વરૂપવાળાં પુદ્ગલોને ગ્રહણ કરીને પણ થાય છે અને ગ્રહણ કર્યા વિના પણ થાય છે આ પ્રકારની આ વિકુર્વણા ભવધારણીય શરીરમાં જ વિશેષતા ઉત્પન્ન કરનારી હોય છે

અથવા—વિકુર્વણાના નીચે પ્રમાણે ત્રણ પ્રકાર પણ કહ્યા છે-અહીં વિકુર્વણા એટલે શરીરને વિભૂષિત કરવું, આ પ્રકારનો અર્થ સમજવો (૧) આભરણાદિ રૂપ બાહ્ય પુદ્ગલોને ગ્રહણ કરીને શરીરને વિભૂષિત કરવું આ પહેલા પ્રકારની વિકુર્વણા છે (૨) બાહ્ય આભરણાદિને ગ્રહણ કર્યા વિના જ

केशनखसमारचनादिनैव विभूषा क्रियते साऽन्या २। तृतीया तूभयथेति । अथवा-अपर्यादाय बाह्यपुद्गलानिति कृकलाससर्पादीनां विकुर्वणा, तत्र कृकलासस्य रक्त-पीतादि वर्णपरिवर्त्तनरूपा, सर्पस्य फणादि करणलक्षणेति ३। द्वितीयसूत्रमप्येवमेव, नवरं तत्र आभ्यन्तरपुद्गलान्-भवधारणीयेनौदारिकेणवा शरीरेण ये क्षेत्रप्रदेशा अवगाढास्तेष्वेव ये वर्त्तन्ते तान् पर्यादायेति व्याख्येयम् । विभूषापक्षे तु-आभ्यन्तरपुद्गलान् निष्ठीवनादीन् पर्यादाय नेत्रादीनां मलाद्यपनयनेन विभूषाकरणम् ।

शरीरको विभूषित करना यह प्रथम प्रकार की विकुर्वणा है। तथा बाह्य आभरणादिकों को विना ग्रहण किये ही केश नख आदि कों की समा रचना द्वारा ही शरीर को विभूषित करना यह दूसरी विकुर्वणा है तृतीय प्रकार की विकुर्वणा दोनों प्रकार से होती है । अथवा-कृकलास -गिरधौला और सर्प आदिकों की जो विकुर्वणा होती है वह बाह्य पुद्गलों को विना ग्रहण किये ही होती है । कृकलास में रक्तपीत आदि वर्णों के परिवर्तनरूप यह विकुर्वणा होती है और सर्प में फणा आदि करनेरूप यह विकुर्वणा होती है द्वितीय सूत्रकी व्याख्या भी इसी प्रकार से है-विशेषता केवल ऐसी ही है भवधारणीय शरीर के द्वारा अथवा औदारिक शरीर के द्वारा जो क्षेत्रप्रदेश अवगाढ हैं उनमें ही जो अभ्यन्तर पुद्गल मौजूद हैं उनको लेकर यह विक्रिया-विकुर्वणा होती है । इस प्रकार से यहां द्वितीय सूत्र में व्याख्या करनी चाहिये विभूषा पक्ष में आभ्यन्तर पुद्गल जो निष्ठीवन आदिक हैं उनको तथा नेत्र आदिकों

કેશ, નખ આદિની સજાવટ દ્વારા જ શરીરને વિભૂષિત કરવું. આ બીજા પ્રકારની વિકુર્વણા છે (૩) ત્રીજા પ્રકારની વિકુર્વણા ઉપરની બન્ને રીતના સમન્વયથી થાય છે અથવા-કાચિંડા, સર્પ આદિની જે વિકુર્વણા થાય છે તે તે બાહ્ય પુદ્ગલોને ગ્રહણ કર્યા વિના જ થાય છે. કાચિંડામાં લાલ, પીળા આદિ વર્ણના પરિવર્તન રૂપ આ વિકુર્વણા હોય છે, અને સર્પમાં ફેણ આદિ ફેલાવવા રૂપ આ વિકુર્વણા હોય છે બીજા સૂત્રની વ્યાખ્યા પણ આ પ્રકારની જ છે, વિશેષતા કેવળ એટલી જ છે કે-ભવધારણીય શરીર દ્વારા અથવા ઔદારિક શરીર દ્વારા જે ક્ષેત્રપ્રદેશ અવગાઢ હોય છે તેમાં જે જે આભ્યન્તર પુદ્ગલો મોજૂદ હોય છે, તેમને ગ્રહણ કરીને આ વિક્રિયા (વિકુર્વણા) થાય છે. આ પ્રમાણે અહીં બીજા સૂત્રની વ્યાખ્યા કરવી જોઈએ વિભૂષા પક્ષમાં (શરીરને વિભૂષિત કરવા રૂપ વિકુર્વણાની અપેક્ષાએ) આભ્યન્તર પુદ્ગલ જે નિષ્ઠીવન આદિક છે તેમને તથા નેત્ર આદિકોના મેલને દૂર કરીને શરીરને

भपर्यादाय माभ्यन्तरानिति बाह्यपुद्गलान् पर्यादायेत्यर्थः । तृतीयपक्षे तु बाह्या भ्यन्तरपुद्गलयोगेन विभूषाकरणं विज्ञेयमिति । तथाहि–उभयेषामुपादानाद् भव धारणीयनिष्पादनं, तदनन्तरं तस्यैव केशादिरचनं च १, अनादानाच्चिरविकुर्वि तस्यैव मुखादिविकारकरणम् २, उभयतस्तु बाह्याभ्यन्तराणामनभिमतानामादा नतः, अभिमतानां चानादानतोऽनभिमतस्य भवधारणीयस्य वैक्रियस्य चेत्युभय शरीरस्य रचनामिति ३ ॥ सू० २ ॥

के मल को दूर करके शरीरको विभूषायुक्त करना होता है । आभ्यन्तर पुद्गलोंको ग्रहण नहीं करना इसका नाम अपर्यादान है और बाह्य पुद्गलों को ग्रहण करना इसका नाम पर्यादान है तथा तृतीय पक्षमें बाह्य और आभ्यन्तर पुद्गलों के योग से विभूषित करना होता है ऐसा जानना चाहिये । बाह्य और आभ्यन्तर पुद्गलों के उपादान से भवधार णीय शरीरका निष्पादन होना और तदन्तर उसीके केशादिकों की रचना होना यह प्रथम प्रकारकी विकुर्वणा है, चिरकाल से विकुर्वित शरीर के मुखादिकों का विकाररूप करना इसमें बाह्य और आभ्यन्तर पुद्गलों का अनादान होता है, यह द्वितीय प्रकार की विकुर्वणा है । तृतीय प्रकारकी विकुर्वणामें ऐसा होताहै कि अनभिमत अनिच्छित बाह्य आ भ्यन्तर पुद्गलों का आदान होता है और अभिमत (मान्य) उनका अना दान होता तथा अनभिमत (अमान्य) भव धारणीय शरीर की और वैक्रिय शरीरकी रचना होतीहै यह तृतीय प्रकारकी विकुर्वणाहै ॥सू २॥

विभूषित करवामां आवे छे आभ्यन्तर पुद्गलोने ग्रहण न करवा तेनु नाम अपर्यादान छे अने बाह्य पुद्गलोने ग्रहण करवा तेनु नाम पर्यादान छे तथा त्रीजा प्रकारनी विकुर्वणा बाह्य अने आभ्यन्तर पुद्गलोना योगथी शरीरने विभूषित करवारूप होय छे एम समजवु बाह्य अने आभ्यन्तर पुद्गलोना उपादानथी भव धारणीय शरीरनु निष्पादन (निर्माण) थवु अने त्यारबाद तेना केशादिकोनी रचना थवी, ते प्रथम प्रकारनी विकुर्वणा छे चिरकाळथी विकुर्वित शरीरना मुखादिकोमां विकार उत्पन्न करवामा बाह्य अने आभ्यन्तर पुद्गलोनु अना दान थाय छे आ बीजा प्रकारनी विकुर्वणा छे त्रीजा प्रकारनी विकुर्वणामां एवु बने छे के अनभिमत (अमान्य) बाह्य आभ्यन्तर पुद्गलोनु आदान थाय छे अने अभिमत (मा य) बाह्य आभ्यन्तर पुद्गलोनु अनादान थाय छे तथा अनभिमत (अमान्य) भवधारणीय शरीरनी अने वैक्रिय शरीरनी रचना थाय छे, आ त्रीजा प्रकारनी विकुर्वणा छे ॥ सू २ ॥

उक्ता विकुर्वणा, सा च नारकाणामपि भवतीति त्रिस्थानकेन नारकान् निरूपयति—

मूलम्—तिविहा नेरइया पण्णत्ता, तं जहा--कइसंचिया, अकइ संचिया, अवत्तव्वसंचिया । एवमेगिंदियवज्जा जाव वेमाणिया ॥ सू० ३ ॥

छाया—त्रिविधा नैरयिकाः प्रज्ञप्ताः, तद्यथा-कतिसंचिताः, अकतिसंचिताः, अवक्तव्यकसंचिताः । एवमेकेन्द्रियवर्जा यावद्वैमानिकाः ॥ सू० ३ ॥

टीका—' तिविहा ' इत्यादि सुगमम् । नवरं—कति शब्दश्चान्यत्र प्रश्नविशिष्ट संख्यावाचकतया रूढोऽपीह संख्यामात्रे द्रष्टव्यः । तत्र नैरयिकाः—कतीति- संख्याता द्व्यादि संख्यावन्तः ते च एकैकसमये ये उत्पन्नाः सन्तः संचिताश्च

ऊपर कही गई यह विकुर्वणा नारकों को भी होती है अतः अब सूत्रकार तीन स्थानों से नारकों की प्ररूपणा करते हैं —

' तिविहा नेरइया पण्णत्ता ' इत्यादि ।

इस सूत्र का अर्थ सुगम है परन्तु जो इसमें विशेषता है वह इस प्रकार से है-यद्यपि कति शब्द दूसरी जगह प्रश्न विशिष्ट संख्या के कहने में रूढ है-परन्तु वह यहां संख्यामात्र में कहा गया है प्रश्नकर्ताने जो ऐसा पूछा है कि नैरयिक कितने कहे हैं तो उत्तर में ऐसा कहा गया है कि नैरयिक तीन प्रकार के कहे गये हैं इनमें एक हैं कतिसंचित और दूसरे हैं अकति संचित तथा तीसरे हैं अवक्तव्यक संचित; कति संचित का तात्पर्य ऐसा है कि एक समय में उत्पन्न होकर जो

ઉપર જેવી વાત કરવામાં આવી છે તે વિકુર્વણા નારકોમા પણ થાય છે તેથી સૂત્રકાર ત્રણ સ્થાનોની અપેક્ષાએ નારકોની પ્રરૂપણા કરે છે—

" તિવિહા નેરઇયા પણ્ણત્તા " ઇત્યાદિ—

આ સૂત્રનો અર્થ સરળ છે, પરન્તુ તેમાં આ પ્રકારની વિશેષતા છે—જો કે ' કતિ ' પદ પ્રશ્નવિશિષ્ટ સંખ્યાને પ્રકટ કરવાને માટે સામાન્ય રીતે તો વપરાય છે, પરન્તુ અહીં તેનો પ્રયોગ સંખ્યામાત્રને પ્રકટ કરવા માટે થયો છે.

પ્રશ્ન—" નારક કેટલા પ્રકારના કહ્યા છે ? "

ઉત્તર—નારક ત્રણ પ્રકારના કહ્યા છે, તે ત્રણ પ્રકારો નીચે પ્રમાણે છે (૧) કતિસંચિત, (૨) અકતિસંચિત અને (૩) અવક્તવ્યક સંચિત.

अपर्यादाय बाह्याभ्यन्तरानिति बाह्यपुद्गलान् पर्यादायेत्यर्थः । तृतीयपक्षे तु बाह्याभ्यन्तरपुद्गलयोगेन विभूषाकरणं विधेयमिति । यद्वा-उभयपामुपादानाद् भवधारणीयनिष्पादनं, तदनन्तरं तस्यैव केशादिरचनं च १, अनादानाच्चिरविकुर्वितस्यैव मुखादिविकारकरणम् २, उभयतस्तु बाह्याभ्यन्तराणामनभिमतानामादानतः, अभिमतानां चानादानतोऽनभिमतस्य भवधारणीयस्य वैक्रियस्य चेत्युभयशरीरस्य रचनामिति ३ ॥ सू० २ ॥

के मल को दूर करके शरीरको विभूषायुक्त करना होता है । आभ्यन्तर पुद्गलोंको ग्रहण नहीं करना इसका नाम अपर्यादान है और बाह्य पुद्गलों को ग्रहण करना इसका नाम पर्यादान है तथा तृतीय पक्षमें बाह्य और आभ्यन्तर पुद्गलों के योग से विभूषित करना होता है ऐसा जानना चाहिये । बाह्य और आभ्यन्तर पुद्गलों के उपादान से भवधारणीय शरीरका निष्पादन होना और तदन्तर उसीके केशादिकों की रचना होना यह प्रथम प्रकारकी विकुर्वणा है, चिरकाल से विकुर्वित शरीर के मुखादिकों का विकाररूप करना इसमें बाह्य और आभ्यन्तर पुद्गलों का अनादान होता है, यह द्वितीय प्रकार की विकुर्वणा है । तृतीय प्रकारकी विकुर्वणामें ऐसा होताहै कि अनभिमत अनिच्छित बाह्य आभ्यन्तर पुद्गलों का आदान होता है और अभिमत (मान्य) उनका अनादान होता तथा अनभिमत (अमान्य) भव धारणीय शरीर की और वैक्रिय शरीरकी रचना होतीहै यह तृतीय प्रकारकी विकुर्वणाहै ॥सू २॥

વિભૂષિત કરવામાં આવે છે આભ્યન્તર પુદ્‌ગલોને ગ્રહણ ન કરવા તેનું નામ અપર્યાદાન છે અને બાહ્ય પુદ્‌ગલોને ગ્રહણ કરવા તેનું નામ પર્યાદાન છે તથા ત્રીજા પ્રકારની વિકુર્વણા બાહ્ય અને આભ્યન્તર પુદ્‌ગલોના યોગથી શરીરને વિભૂષિત કરવારૂપ હોય છે, એમ સમજવું બાહ્ય અને આભ્યન્તર પુદ્‌ગલોના ઉપાદાનથી ભવધારણીય શરીરનું નિષ્પાદન (નિર્માણ) થવું અને ત્યારબાદ તેના કેશાદિકોની રચના થવી તે પ્રથમ પ્રકારની વિકુર્વણા છે ચિરકાળથી વિકુર્વિત શરીરના મુખાદિકોમાં વિકાર ઉત્પન્ન કરવામાં બાહ્ય અને આભ્યન્તર પુદ્‌ગલોનું અનાદાન થાય છે આ બીજા પ્રકારની વિકુર્વણા છે ત્રીજા પ્રકારની વિકુર્વણામાં એવું બને છે કે અનભિમત (અમાન્ય) બાહ્ય આભ્યન્તર પુદ્‌ગલોનું આદાન થાય છે અને અભિમત (માન્ય) બાહ્ય આભ્યન્તર પુદ્‌ગલોનું અનાદાન થાય છે તથા અનભિમત (અમાન્ય) ભવધારણીય શરીરની અને વૈક્રિય શરીરની રચના થાય છે, આ ત્રીજા પ્રકારની વિકુર્વણા છે ॥ સૂ ૨ ॥

उक्ता विकुर्वणा, सा च नारकाणामपि भवतीति त्रिस्थानकेन नारकान् निरूपयति—

मूलम्—तिविहा नेरइया पण्णत्ता, तं जहा--कइसंचिया, अकइ संचिया, अवत्तव्वसंचिया । एवमेगिंदियवज्जा जाव वेमाणिया ॥ सू० ३ ॥

छाया—त्रिविधा नैरयिकाः प्रज्ञप्ताः, तद्यथा—कतिसंचिताः, अकतिसंचिताः, अवक्तव्यकसंचिताः । एवमेकेन्द्रियवर्जा यावद्वैमानिका ॥ सू० ३ ॥

टीका—' तिविहा ' इत्यादि सुगमम् । नवरं—कति शब्दश्चान्यत्र प्रश्नविशिष्ट संख्यावाचकतया रूढोऽपीह संख्यामात्रे द्रष्टव्यः । तत्र नैरयिकाः—कतीति-संख्याता द्व्यादि संख्यावन्तः ते च एकैकसमये ये उत्पन्नाः सन्तः संचिताश्च

ऊपर कही गई यह विकुर्वणा नारकों को भी होती है अतः अब सूत्रकार तीन स्थानों से नारकों की प्ररूपणा करते हैं —

' तिविहा नेरइया पण्णत्ता ' इत्यादि ।

इस सूत्र का अर्थ सुगम है परन्तु जो इसमें विशेषता है वह इस प्रकार से है–यद्यपि कति शब्द दूसरी जगह प्रश्न विशिष्ट संख्या के कहने में रूढ है–परन्तु वह यहां संख्यामात्र में कहा गया है प्रश्नकर्ताने जो ऐसा पूछा है कि नैरयिक कितने कहे हैं तो उत्तर में ऐसा कहा गया है कि नैरयिक तीन प्रकार के कहे गये हैं इनमें एक हैं कतिसंचित और दूसरे हैं अकति संचित तथा तीसरे हैं अवक्तव्यक संचित; कति संचित का तात्पर्य ऐसा है कि एक समय में उत्पन्न होकर जो

ઉપર જેવી વાત કરવામા આવી છે તે વિકુર્વણા નારકોમા પણ થાય છે તેથી સૂત્રકાર ત્રણ સ્થાનોની અપેક્ષાએ નારકોની પ્રરૂપણા કરે છે—

" તિવિહા નેરઇયા પણ્ણત્તા " ઇત્યાદિ—

આ સૂત્રનો અર્થ સરળ છે, પરન્તુ તેમાં આ પ્રકારની વિશેષતા છે—જો કે ' કતિ ' પદ પ્રશ્નવિશિષ્ટ સંખ્યાને પ્રકટ કરવાને માટે સામાન્ય રીતે તો વપરાય છે, પરન્તુ અહીં તેનો પ્રયોગ સંખ્યામાત્રને પ્રકટ કરવા માટે થયો છે.

પ્રશ્ન—" નારક કેટલા પ્રકારના કહ્યા છે ? "

ઉત્તર—નારક ત્રણ પ્રકારના કહ્યા છે, તે ત્રણ પ્રકારો નીચે પ્રમાણે છે (૧) કતિસંચિત, (૨) અકતિસંચિત અને (૩) અવક્તવ્યક સંચિત.

सख्यातोऽतेऽपि साधर्म्याद् बुद्ध्या राशीकृतास्ते कतिसञ्चिता १। तथा नकति न संख्याता इत्यकति-असंख्याता अनन्ता वा, अत्र असंख्यात रूपोर्थो गृह्यते तथ ये अकति-असंख्याता एकैकसमये उत्पन्नाः सन्तस्तथैव सञ्चितास्ते-अकतिसञ्चिता २। तथा यः परिमाणविशेषो न कति नाप्यकतीत्युभयमपि वक्तु मशक्यते सः अवक्तव्यकः तत् सञ्चिता अवक्तव्यक सञ्चिताः, समये समये एकत्वेनोत्पन्ना इत्यर्थः। उत्पद्यन्ते देवा नारकाश्चैकसमये एकादयोऽसंख्येयान्ताः,। उक्तञ्च देवपरिमाणम्—

नैरयिक संचित हो जाते हैं वे कतिसंचित नैरयिक हैं, और जिनका संचय संख्यातराशि से परे होता है वे अकतिसंचित-नैरयिक हैं ऐसे अकति संचित नैरयिक असंख्यात होते हैं। यहाँ अकति-संचित पद असंख्यात और अनन्त का बोधक है परन्तु यहाँ वह असंख्यात का ही बोधक है क्यों कि नारकी अधिक से अधिक असंख्यात ही होते हैं अनन्त नहीं, अकतिसंचित-असंख्यात नैरयिक वे हैं जो एक एक समय में उत्पन्न होकर असंख्यातरूप में संचित हो जाते हैं। तथा जो परिमाणविशेष कति और अकति इन दोनों रूप से नहीं कहा जा सके वह अवक्तव्यक है इस प्रकार के अवक्तव्यक से जो संचित होते हैं वे अवक्तव्यकसंचित नैरयिक हैं। ये एक २ समय में एक २ रूप से होते हैं। देव और नैरयिक एक समय में एक से लेकर असंख्यात तक उत्पन्न होते हैं उक्त च देवपरिमाणम्—

એક સમયમાં ઉત્પન્ન થઈને જે નારકો સંચિત થઈ જાય છે તે નારકોને કતિસંચિત નારકો કહે છે સંખ્યાતથી અધિક રાશિમાં જે નારકોનો સંચય થાય છે તેમને અકતિસંચિત નારકો કહે છે એવાં અકતિસંચિત નારકો અસંખ્યાત હોય છે અકતિસંચિત પદ અસંખ્યાત અને અનન્તનું બોધક હોવા છતાં પણ અહીં તેને અસંખ્યાતનું બોધક જ સમજવું જોઈએ, કારણ કે નારક જીવો અધિકમાં અધિક અસંખ્યાત જ હોય છે-અનંત હોતા નથી અકતિસંચિત-અસંખ્યાત નારકો તે છે કે જે એક એક સમયે ઉત્પન્ન થઈને અસંખ્યાત રૂપે સંચય પામતા રહે છે કતિ અને અકતિના પરિમાણ વિશેષ દ્વારા જેમને વ્યક્ત કરી શકાતા નથી તેમને અવક્તવ્યક કહે છે આ પ્રકારના અવક્તવ્યક રૂપે જેમનો સંચય થાય છે તે નારકોને અવક્તવ્યક સંચિત નારકો કહે છે તેઓ એક એક સમયે એક એક રૂપે સંચિત થાય છે દેવો અને નારકો એક સમયમાં એકથી લઈને અસંખ્યાત સુધીની સંખ્યામાં ઉત્પન્ન થાય છે દેવોનું પરિમાણ આ પ્રમાણે કહ્યું છે—

"एगो व दोव तिन्नि व, संखमसंखा व एगसमएणं ।
उववज्जनेवइया, उव्वट्टंना वि एमेव (देवा) ॥ १ ॥"

छाया—एको वा द्वौ वा त्रयो वा संख्याता वैकसमयेन ।
उत्पद्यन्ते एतावन्तः, उद्वर्त्तन्तेऽप्येवमेव (देवाः) ॥ इति ॥

एतदेव नारकपरिमाणं, यत् उक्तम्–"संखा पुण सुरवरतुल्ला" छाया–(नारकाणां) संख्या पुनः सुरवरतुल्या, इति ।

चतुर्विंशति दण्डकोक्तानामसुरादीनां कतिसंचितादिकमतिदिशन्नाह–'एवं' इत्यादि, एवं–नारकवच्छेषाश्चतुर्विंशतिदण्डकोक्ता एकेन्द्रिय–वर्जा वाच्याः, तेषु प्रतिसमयमसंख्यातानामनन्तानां वा अकतिशब्दवाच्यानामेवोत्पत्तिसद्भावात्, न त्वेकः 'संख्याता वा' इति ॥ सू० ३ ॥

(एगो व दोव तिन्नि व) इत्यादि । एक समय में एक, दो, तीन आदि प्रकार से संख्यात और असंख्यात नैरयिक उत्पन्न होते हैं और इतनेही मरतेहैं इसी तरहका कथन देवोंके विषय में भी जानना चाहिये यही नारकों का परिमाण है क्यों कि कहा है–"संख्या पुण सुर वर तुल्ला" कि नारकों की संख्या देवों के तुल्य है

अब सूत्रकार चतुर्विंशतिदण्डक में उक्त असुरादिकों के कतिसंचित आदि को अतिदेश से प्रकट करने के अभिप्राय से कहते हैं– "एवं" इत्यादि इसी तरह का कथन यावत् एकेन्द्रियवर्ज वैमानिक देवों के सम्बन्ध में भी जानना चाहिये। यहां जो एकेन्द्रिय जीवों को छोड़कर कथन किया गया है उसका कारण ऐसा है कि एकेन्द्रिय जीवों में प्रतिसमय अकतिशब्दवाच्य असंख्यात अथवा अनन्त एकेन्द्रिय

"एगो व दोव तिन्नि व" ઇત્યાદિ—

એક સમયમાં એક, બે અને ત્રણથી લઈને સંખ્યાત અને અસંખ્યાત પર્યન્તના નારકો ઉત્પન્ન થાય છે, અને એટલાં જ મરે છે આ પ્રકારનું કથન દેવો વિષે પણ સમજવું "सखा पुण सरवरतुल्ला" કહ્યું પણ છે કે નારકોની સંખ્યા દેવોની સંખ્યા બરાબર છે

હવે સૂત્રકાર ૨૪ દંડકોમાં અસુરકુમારાદિ જે અન્ય જીવોનો સમાવેશ થાય છે, તેમના કતિસંચિત આદિ ભેદોનું નિરૂપણ કરે છે–"एवं" ઇત્યાદિ નારકોના જેવું જ કથન એકેન્દ્રિય સિવાયના બાકીના વૈમાનિક પર્યન્તના જીવો વિષે પણ સમજવું અહીં એકેન્દ્રિય જીવોને નહીં ગણવાનું કારણ એ છે કે એકેન્દ્રિય જીવોમાં પ્રતિ સમય અકતિશબ્દ વાચ્ય અસંખ્યાત અથવા અનંત

उक्तो वैमानिकानां देवानां कतिसंख्यादिको धर्मः, साम्प्रतं देवाधिकारादेषामेव सामान्येन परिचारणाधर्मं निरूपयन्नाह—

मूलम्—तिविहा परियारणा पण्णत्ता, तं जहा एगे देवे अन्ने देवे अन्नेसिं देवाणं देवीओ य अभिजुंजिय२ परियारेइ, अप्पणिज्जियाओ देवीओ अभिजुंजिय२ परियारेइ, अप्पाणमेव अप्पणा विउव्विय२ परियारेइ १। एगे देवे णो अन्ने देवे णो अन्नेसिं देवाणं देवीओ अभिजुंजिय२ परियारेइ, अप्पणिज्जियाओ देवीओ अभिजुंजिय२ परियारेइ, अप्पाणमेव अप्पणा विउव्विय परियारेइ २। एगे देवे णो अन्ने देवे णो अण्णेसिं देवाणं देवीओ अभिजुंजिय२ परियारेइ, णो अप्पणिज्जियाओ देवीओ अभिजुंजियर परियारेइ, अप्पाणमेव अप्पणा विउव्वियर परियारेइ३। तिविहे मेहुणे पण्णत्ते, तं जहा-दिव्वे मणुस्सए तिरिक्खजोणिए १। तओ मेहुणं गच्छंति, तं जहा-देवा मणुस्सा तिरिक्खजोणिया२। तओ मेहुणं सेवंति, तं जहा-इत्थी पुरिसा णपुंसगा ३॥ सू० ४॥

छाया—त्रिविधा परिचारणा प्रज्ञप्ताः, तद्यथा—एको देव अन्यान् देवान्अन्येषां देवानां देवीश्च अभियुज्य२ परिचारयति, आत्मीया देवीरभियुज्य२ परिचारयति, आत्मानमेव आत्मना विकुर्वित्वा२ परिचारयति १, इति, यथा एको देवो नो अन्यान् देवान् नो अन्येषां देवानां देवीरभियुज्य२ परिचारयति, आत्मीया देवीरभियुज्य२ परिचारयति, आत्मानमेव आत्मना विकुर्वित्वा२ परिचारयति २। एको देवो नो अन्यान् देवान् नो अन्येषां देवानां देवीरभियुज्य२ परिचारयति

जीवों की ही उत्पत्ति होती रहती है, एक अथवा संख्यात एकेन्द्रियों की नहीं॥ सू १॥

એકેન્દ્રિય જીવોની ઉત્પત્તિ થતી રહે છે ત્યાં પ્રતિ સમય એક અથવા સંખ્યાત એકેન્દ્રિયોની ઉત્પત્તિ થતી નથી. તે કારણે ઉપર્યુક્ત ત્રણ ભેદ એકેન્દ્રિયોમાં સંભવી શકતા નથી ॥ સૂ ૩ ॥

नो आत्मीया देवीरभियुज्य२ परिचारयति, आत्मानमेव आत्मना विकुर्वित्वा२ परिचारयति ३। त्रिविधं मैथुनं प्रज्ञप्तं तद्यथा-दिव्यं मानुष्कं तिर्यग्योनिकम्। त्रयो मैथुनं गच्छन्ति, तद्यथा-देवा मनुष्याः तिर्यग्योनिकाः। त्रयो मैथुनं सेवन्ते, तद्यथा-स्त्रियः पुरुषा नपुंसकाः॥ सू० ४॥

टीका-' तिविहा ' इत्यादि, परिचारणासूत्रत्रयं मैथुनसूत्रत्रय चेति सूत्रपट्कं सुगमम्। नवरं-परिचारणं परिचारणा देव मैथुनसेवनरूपा। एकः-कश्चित् ऋद्धया दिसामर्थ्यसंपन्नो देवः न सर्वेऽपीति, किम्? - ' अण्णे देवे ' इति, अन्यान् देवान्-अल्पर्द्धिकान्, तथाऽन्येषां देवानां सम्बन्धिनी र्देवीश्चाभियुज्याभियुज्य-अश्लिष्याश्लिष्य-वशीकृत्य वा परिचारयति-वेदनाबाधोपशमाय परिभुङ्क्ते। इति प्रथमपरिचारणायाः प्रथमो भेदः (१-१) एवमात्मीया देवीरप्यभियुज्य२ परि-

वैमानिकों का इस प्रकार से कतिसंचित आदि धर्म कहा अब देवाधिकार से ही सूत्रकार उनके सामान्यरूप से परिचारणाधर्म का कथन करते हैं-(तिविहा परियारणा पण्णत्ता) इत्यादि।

टीकार्थ-परिचारणा तीन प्रकारकी कही गईहै परिचरणका नाम परिचारणा है यह परिचारणा देवमैथुनसेवनरूप होती है, ऋद्धयादिरूप सामर्थ्यसपन्न कोई एक देव (सब देव नहीं) अल्पर्द्धि वाले अन्यदेवों को तथा अन्य देवों की देवियों को वश में करके या उनका आलिङ्गन करके अपने वेद की बाधा को उपशान्त करने के निमित्त उनके साथ परिभोग करता है। यह प्रथम परिचारणा का पहिला भेद है (१-१) तथा इसी की देवियों को भी आलिङ्गन करके या उन्हें वश में करके वह देव

વૈમાનિકોના આ પ્રકારના કતિસંચિત આદિ ધર્મનું કથન થયું હવે દેવાધિકારની અપેક્ષાએ સૂત્રકાર તેમના પરિચારણા ધર્મનું સામાન્યરૂપે કથન કરે છે-" तिविहा परियारणा पण्णत्ता " ઇત્યાદિ—

પરિચારણા ત્રણ પ્રકારની કહી છે. પરિચરણ (મૈથુન સેવન રૂપ) નું નામ પરિચારણા છે. દેવો દ્વારા જે મૈથુન સેવન થાય છે, તે મૈથુન સેવન રૂપ પરિચારણાના ત્રણ પ્રકારો નીચે પ્રમાણે છે-અધિક ઋદ્ધિસંપન્ન (સામર્થ્ય રૂપ ઋદ્ધિસંપન્ન) કોઈ કોઈ દેવ (બધા દેવોને આ વાત લાગુ પડતી નથી) અલ્પ ઋદ્ધિસંપન્ન અન્ય દેવોને તથા અન્ય દેવોની દેવીઓને પોતાને વશ કરી લઈને તેમને આલિંગન કરીને પોતાની કામાગ્નિને ઉપશાન્ત કરવાને માટે તેમની સાથે પરિભોગ કરે છે. આ પહેલી પરિચારણાનો પહેલો ભેદ છે. (૨) પોતાની દેવીઓને વશ કરી લઈને તેમને આલિંગન કરે છે અને પોતાની કામાગ્નિને

उक्तो वैमानिकानां देवानां कल्पितविमानादिको धर्मः, साम्प्रतं देवाधिकारात्तेषामेव सामान्येन परिचारणाधर्मं निरूपयन्नाह—

मूलम्—तिविहा परियारणा पण्णत्ता, तं जहा एगे देवे अन्ने देवे अन्नेसिं देवाणं देवीओ य अभिजुंजियर परियारेइ, अप्पणिज्जियाओ देवीओ अभिजुंजियर परियारेइ, अप्पाणमेव अप्पणा विउव्वियर परियारेइ १। एगे देवे णो अन्ने देवे णो अन्नेसिं देवाणं देवीओ अभिजुंजियर परियारेइ, अप्पणिज्जियाओ देवीओ अभिजुंजियर परियारेइ, अप्पाणमेव अप्पणा विउव्विय परियारेइ २। एगे देवे णो अन्ने देवे णो अण्णेसिं देवाणं देवीओ अभिजुंजियर परियारेइ, णो अप्पणिज्जियाओ देवीओ अभिजुंजियर परियारेइ, अप्पाणमेव अप्पणा विउव्वियर परियारेइ३। तिविहे मेहुणे पण्णत्ते, तं जहा-दिव्वे मणुस्सए तिरिक्खजोणिए १। तओ मेहुणं गच्छंति, तं जहा-देवा मणुस्सा तिरिक्खजोणिया२। तओ मेहुणं सेवंति, तं जहा-इत्थी पुरिसा णपुंसगा ३॥ सू० ४॥

छाया—त्रिविधा परिचारणा प्रज्ञप्ता, तद्यथा-एको देवः अन्यान् देवान् अन्येषां देवानां देवीश्च अभियुज्य२ परिचारयति, आत्मीया देवीरभियुज्य२ परिचारयति, आत्मानमेव आत्मना विकुर्वित्वा२ परिचारयति १, इति, तथा एको देवो नो अन्यान् देवान् नो अन्येषां देवानां देवीरभियुज्य२ परिचारयति आत्मीया देवीरभियुज्य२ परिचारयति, आत्मानमेव आत्मना विकुर्वित्वा२ परिचारयति २। एको देवो नो अन्यान् देवान् नो अन्येषां देवानां देवीरभियुज्य२ परिचारयति

जीवों की ही उत्पत्ति होती रहती है, एक अथवा संख्यात एकेन्द्रियों की नहीं ॥ सू ३ ॥

એકેન્દ્રિય જીવોની ઉત્પત્તિ થતી રહે છે ત્યાં પ્રતિ સમય એક અથવા સંખ્યાત એકેન્દ્રિયોની ઉત્પત્તિ થતી નથી. તે કારણે ઉપર્યુક્ત ત્રણ ભેદ એકેન્દ્રિયોમાં સંભવી શકતા નથી. ॥ સૂ ૩ ॥

परिचारयतीति तृतीयेयं परिचारणा, अनुत्कटकामत्वाद् अल्पर्द्धिकदेव विशेषत्वाच्चेति ३। परिचारणेत्येको मैथुनप्रकारः प्रोक्तः, साम्प्रत तदेव मैथुनं सामान्यतः प्ररूपयति—'तिविहे मेहुणे' इत्यादि, प्रथमं मैथुनसूत्रं सुगमम्। नवरं मिथुनस्य—स्त्रीपुंसयुग्मस्य कर्म मैथुनं, तच्च देवमनुष्यतिरश्चामेव भवतीत्यतस्तस्य त्रैविध्यं, नारकाणां द्रव्यतस्तदसम्भवादिति चतुर्थं नास्त्येवेति, मैथुनकर्मकारकास्त्रय एवेतितानाह—'तओ' इत्यादि, त्रयो देवमनुष्यतिर्यञ्च एव मैथुनं गच्छन्ति—प्राप्नुवन्ति—सेवन्त इत्यर्थः २। तस्यैव मनुष्यविषये भेदानाह—'तओ' इत्यादि,

देवरूप से या देवी रूप से विकुर्वित करके उसके साथ परिचारणा करता है ऐसी यह परिचारणा वही देव करता है जो अनुत्कटकामवासनावाला होता है तथा अल्पऋद्धि वाला होता है। परिचारणा यह एक मैथुन सेवन करने का प्रकार सूत्रकार ने कहा है अब वे सामान्यरूप से इसी मैथुन की प्ररूपणा—"तिविहा मेहुणे पण्णत्ते" इत्यादि सूत्र द्वारा करते हैं—इसमें प्रथम मैथुन सूत्र सुगम है विशेषता जो है वह ऐसी है—स्त्री और पुरुष का दोनों का आपस में एक दूसरे के साथ शारीरिक सम्बन्ध करने से जो क्रिया होती है वह मैथुन है यह मैथुनक्रिया देव, मनुष्य और तिर्यञ्चों में ही होती है इस कारण इसे त्रिविध कहा गया है नारक जीवों में यह मैथुन कर्म द्रव्य की अपेक्षा होता नहीं है इसलिये मैथुन में चतुर्थ प्रकारता नहीं है इस मैथुनरूप क्रिया के कर्त्ता ये तीन ही होते हैं देव, मनुष्यों और तिर्यञ्च मनुष्य में भी स्त्री, पुरुष और नपुंसक ये तीन होते हैं स्त्रियों में पुरुषों की अभि-

પરિચારણા કરે છે આ પ્રકારની પરિચારણા એ દેવ જ કરે છે કે જે અનુત્કટ કામવાસનાવાળો હોય છે અને અલ્પ ઋદ્ધિવાળો હોય છે.

પરિચારણાને મૈથુન સેવનના એક પ્રકાર રૂપે પ્રરૂપિત કરીને હવે સૂત્રકાર સામાન્ય રૂપે એ જ મૈથુનની "तिविहे मेहुणे पण्णत्ते" ઇત્યાદિ સૂત્રો દ્વારા પ્રરૂપણા કરે છે. તેમાંનું પહેલું મૈથુન સૂત્ર સરળ છે સ્ત્રી અને પુરુષના બન્નેના એક બીજા સાથે શારીરિક સંબંધ કરવાથી જે ક્રિયા થાય છે તેને મૈથુન કહે છે. દેવ, મનુષ્ય અને તિર્યંચોમાં જ મૈથુન ક્રિયા સંભવી શકે છે. તે કારણે તેના ત્રણ પ્રકાર કહ્યા છે. નારક જીવોમાં આ મૈથુન કર્મ દ્રવ્યની અપેક્ષાએ થતું નથી, તે કારણે મૈથુનમાં ચાર પ્રકારો સંભવી શકતા નથી. આ મૈથુન રૂપ ક્રિયાના કર્તા પણ ત્રણ પ્રકારના જીવો જ હોય છે–(૧) દેવ, (૨) મનુષ્ય અને (૩) તિર્યંચ. મનુષ્યોમાં પણ સ્ત્રી, પુરુષ અને નપુંસક,

चारयति, इति द्वितीयो भेदः (२) तथा-आत्मना आत्मानमेव देवीत्वेन देवत्वेन वा विकुर्वित्वा २ परिचारणायोग्य विधाय२ परिचारयतीति तृतीयो भेदः (३) एव प्रकारत्रयरूपाप्यकेयं परिचारणा, समर्थोऽतिकामोऽयमेकपरिचारकत्वादिति प्रथमा परिचारणा ८। अथ द्वितीयपरिचारणामाह-एको देव आत्मीयदेवीरभियुज्य२, तथा आत्मानमेवाऽऽत्मना देवत्वेन देवीत्वेन वा विकुर्विस्वा२ परिचारयतीति द्वितीयेयं परिचारणा, असमर्थत्वाद् उचितकामपरिचारकत्वाच्चेति २। अथ तृतीय परिचारणामाह-एको देव आत्मानमेवात्मना देवत्वेन देवीत्वेन वा विकुर्वित्वा२

उनके साथ अपने वेद की बाधा को शान्त करने के निमित्त परिभोग करता है यह प्रथम परिचारणा का द्वितीय भेद है तथा-अपने आप को ही देवीरूप से या देव रूप से विकुर्वित करके और उसे परिचारणा के योग्य बना करके वह उसके साथ अपने वेद की उपशान्ति के निमित्त परिभोग करता है यह प्रथमपरिचारणा का तृतीय भेद है ३, इस प्रकार से यह एक ही परिचारणा तीन रूप वाली होती है परन्तु फिर भी यह परिचारणा की अपेक्षा से एक ही है। ऐसी इस परिचारणा को जो देव समर्थ और अधिक से अधिक कामुक होता है वही करता है यह प्रथम परिचारणा है ऐसी यह परिचारणा पहली है, द्वितीय परिचारणा इस प्रकार से है कोई एक देव अपनी देवी को आलिङ्गन करके या उसे वश में करके उसके साथ अथवा अपने आपको ही देवरूप से या देवीरूप से विकुर्वित करके उसके साथ परिचारणा करता है। तृतीय परिचारणा इस प्रकार से है कोई एक देव अपने आपको ही

ઉપશાન્ત કરવા માટે તેમની સાથે પરિભોગ કરે છે આ પ્રથમ પરિચારણાનો બીજો ભેદ છે (૩) કોઈ કોઈ દેવ પોતે જ દેવ અથવા દેવીના રૂપની વિકુર્વણા કરીને તેની સાથે પરિભોગ સેવીને પોતાની કામાગ્નિને સંતોષે છે, આ પ્રથમ પરિચારણાનો ત્રીજો ભેદ છે આ પ્રમાણે આ એક જ પરિચારણા ત્રણ પ્રકાર વાળી છે પરન્તુ પરિચારણા સામાન્યની અપેક્ષાએ તો એક જ પ્રકારની છે આ પ્રકારની પરિચારણા જે દેવ સમર્થ અને અધિકમાં અધિક કામુક હોય છે તેના દ્વારા જ કરાય છે પહેલી પરિચારણાના સ્વરૂપનું કથન કરીને હવે સૂત્રકાર દ્વિતીય પરિચારણાનું કથન કરે છે—

કોઈક દેવ પોતાની દેવીને આલિંગન કરીને અથવા તેને વશ કરીને તેની સાથે પરિભોગ કરે છે અથવા પોતાને જ દેવ અથવા દેવીરૂપે વિકુર્વિત કરીને તેની સાથે પરિચારણા કરે છે. હવે સૂત્રકાર ત્રીજા પ્રકારની પરિચારણાનું કથન કરે છે-કોઈક દેવ પોતાને જ દેવ અથવા દેવીરૂપે વિકુર્વિત કરીને તેની સાથે

परिचारयतीति तृतीयेयं परिचारणा, अनुत्कटकामत्वाद् अल्पर्द्धिकदेव विशेषत्वाच्चेति ३। परिचारणेत्येको मैथुनप्रकारः प्रोक्तः, साम्प्रत तदेव मैथुनं सामान्यतः प्ररूपयति—' तिविहे मेहुणे ' इत्यादि, प्रथमं मैथुनसूत्रं सुगमम्। नवरं मिथुनस्य-स्त्रीपुंसयुग्मस्य कर्म मैथुनं, तत्तु देवमनुष्यतिरश्चामेव भवतीत्यतस्तस्य त्रैविध्यं, नारकाणां द्रव्यतस्तदसम्भवादिति चतुर्थं नास्त्येवेति, मैथुनकर्मकारकास्त्रय एवेतितानाह–' तओ ' इत्यादि, त्रयो देवमनुष्यतिर्यञ्च एव मैथुनं गच्छन्ति–प्राप्नुवन्ति–सेवन्त इत्यर्थः २। तस्यैव मनुष्यविषये भेदानाह–' तओ ' इत्यादि,

---

देवरूप से या देवी रूप से विकुर्वित करके उसके साथ परिचारणा करता है ऐसी यह परिचारणा वही देव करता है जो अनुत्कटकामवासनावाला होता है तथा अल्पऋद्धि वाला होता है। परिचारणा यह एक मैथुन सेवन करने का प्रकार सूत्रकार ने कहा है अब वे सामान्यरूप से इसी मैथुन की प्ररूपण–" तिविहा मेहुणे पण्णत्ते " इत्यादि सूत्र द्वारा करते हैं–इसमें प्रथम मैथुन सूत्र सुगम है विशेषता जो है वह ऐसी है–स्त्री और पुरुष का दोनों का आपस में एक दूसरे के साथ शारीरिक सम्बन्ध करने से जो क्रिया होती है वह मैथुन है यह मैथुनक्रिया देव, मनुष्य और तिर्यञ्चों में ही होती है इस कारण इसे त्रिविध कहा गया है नारक जीवों में यह मैथुन कर्म द्रव्य की अपेक्षा होता नहीं है इसलिये मैथुन में चतुर्थ प्रकारता नहीं है इस मैथुनरूप क्रिया के कर्त्ता ये तीन ही होते हैं देव, मनुष्यों और तिर्यञ्च मनुष्य में भी स्त्री, पुरुष और नपुंसक ये तीन होते हैं स्त्रियों में पुरुषों की अभि-

---

પરિચારણા કરે છે આ પ્રકારની પરિચારણા એ દેવ જ કરે છે કે જે અનુત્કટ કામવાસનાવાળો હોય છે અને અલ્પ ઋદ્ધિવાળો હોય છે.

પરિચારણાને મૈથુન સેવનના એક પ્રકાર રૂપે પ્રરૂપિત કરીને હવે સૂત્રકાર સામાન્ય રૂપે એ જ મૈથુનની "तिविहे मेहुणे पण्णत्ते" ઇત્યાદિ સૂત્રો દ્વારા પ્રરૂપણા કરે છે. તેમાનું પહેલું મૈથુન સૂત્ર સરળ છે. સ્ત્રી અને પુરુષના બન્નેના એક બીજા સાથે શારીરિક સંબંધ કરવાથી જે ક્રિયા થાય છે તેને મૈથુન કહે છે દેવ, મનુષ્ય અને તિર્યંચોમાં જ મૈથુન ક્રિયા સંભવી શકે છે. તે કારણે તેના ત્રણ પ્રકાર કહ્યા છે. નારક જીવોમાં આ મૈથુન કર્મ દ્રવ્યની અપેક્ષાએ થતું નથી, તે કારણે મૈથુનમા ચાર પ્રકારો સંભવી શકતા નથી. આ મૈથુન રૂપ ક્રિયાના કર્તા પણ ત્રણ પ્રકારના જીવો જ હોય છે-(૧) દેવ, (૨) મનુષ્ય અને (૩) તિર્યંચ. મનુષ્યોમાં પણ સ્ત્રી, પુરુષ અને નપુંસક,

चारयति, इति द्वितीयो भेदः (२) तथा-आत्मना आत्मानमेव देवीत्वेन देवत्वेन वा विकुर्वित्वा परिचारणायोग्यं विधाय परिचारयतीति तृतीयो भेदः (३) एवं प्रकारत्रयरूपाप्येषा परिचारणा, समर्थत्वात् कामित्वपरिचारकत्वादिति प्रथमा परिचारणा १। अथ द्वितीयपरिचारणामाह-एको देवः आत्मीयदेवीरभियुज्य, तथा आत्मानमेवाऽऽत्मना देवत्वेन देवीत्वेन वा विकुर्वित्वा परिचारयतीति द्वितीयेयं परिचारणा, असमर्थत्वात् अतिकामपरिचारकत्वाभावादिति २। अथ तृतीयपरिचारणामाह-एको देव आत्मानमेवात्मना देवत्वेन देवीत्वेन वा विकुर्वित्वा

उनके साथ अपने वेद की बाधा को शान्त करने के निमित्त परिभोग करता है यह प्रथम परिचारणा का द्वितीय भेद है तथा-अपने आप को ही देवीरूप से या देव रूप से विकुर्वित करके और उसे परिचारणा के योग्य बना करके वह उसके साथ अपने वेद की उपशान्ति के निमित्त परिभोग करता है यह प्रथमपरिचारणा का तृतीय भेद है ३, इस प्रकार से यह एक ही परिचारणा तीन रूप वाली होती है परन्तु फिर भी यह परिचारणा की अपेक्षा से एक ही है। ऐसी इस परिचारणा को जो देव समर्थ और अधिक से अधिक कामुक होता है वही करता है यह प्रथम परिचारणा है ऐसी यह परिचारणा पहली है, द्वितीय परिचारणा इस प्रकार से है कोई एक देव अपनी देवी को आलिङ्गन करके या उसे वश में करके उसके साथ अथवा अपने आपको ही देवरूप से या देवीरूप से विकुर्वित करके उसके साथ परिचारणा करता है। तृतीय परिचारणा इस प्रकार से है कोई एक देव अपने आपको ही

ઉપશાન્ત કરવા માટે તેમની સાથે પરિભોગ કરે છે આ પ્રથમ પરિચારણાનો બીજો ભેદ છે (૩) કોઈ કોઈ દેવ પોતે જ દેવ અથવા દેવીના રૂપની વિકુર્વણા કરીને તેની સાથે પરિભોગ સેવીને પોતાની કામાગ્નિને સંતોષે છે, આ પ્રથમ પરિચારણાનો ત્રીજો ભેદ છે આ પ્રમાણે આ એક જ પરિચારણા ત્રણ પ્રકાર વાળી છે પરન્તુ પરિચારણા સામાન્યની અપેક્ષાએ તો એક જ પ્રકારની છે આ પ્રકારની પરિચારણા જે દેવ સમર્થ અને અધિકમાં અધિક કામુક હોય છે તેના દ્વારા જ કરાય છે પહેલી પરિચારણાના સ્વરૂપનું કથન કરીને હવે સૂત્રકાર દ્વિતીય પરિચારણાનું કથન કરે છે—

કોઈક દેવ પોતાની દેવીને આલિંગન કરીને અથવા તેને વશ કરીને તેની સાથે પરિભોગ કરે છે, અથવા પોતાને જ દેવ અથવા દેવીરૂપે વિકુર્વિત કરીને તેની સાથે પરિચારણા કરે છે. હવે સૂત્રકાર ત્રીજા પ્રકારની પરિચારણાનું કથન કરે છે-કોઈક દેવ પોતાને જ દેવ અથવા દેવીરૂપે વિકુર્વિત કરીને તેની સાથે

परिचारयतीति तृतीयेयं परिचारणा, अनुत्कटकामत्वाद् अल्पर्द्धिकदेव विशेषत्वाच्चेति ३। परिचारणेत्येको मैथुनप्रकारः प्रोक्तः, साम्प्रतं तदेव मैथुनं सामान्यतः प्ररूपयति—' तिविहे मेहुणे ' इत्यादि, प्रथमं मैथुनसूत्रं सुगमम्। नवरं मिथुनस्य-स्त्रीपुंसयुग्मस्य कर्म मैथुनं, तत्तु देवमनुष्यतिरश्चामेव भवतीत्यतस्तस्य त्रैविध्यं, नारकाणां द्रव्यतस्तदसम्भवादिति चतुर्थं नास्त्येवेति, मैथुनकर्मकारकास्त्रय एवेतितानाह-' तओ ' इत्यादि, त्रयो देवमनुष्यतिर्यञ्च एव मैथुनं गच्छन्ति-प्राप्नुवन्ति-सेवन्त इत्यर्थः २। तस्यैव मनुष्यविषये भेदानाह-' तओ ' इत्यादि,

---

देवरूप से या देवी रूप से विकुर्वित करके उसके साथ परिचारणा करता है ऐसी यह परिचारणा वही देव करता है जो अनुत्कटकामवासनावाला होता है तथा अल्पऋद्धि वाला होता है। परिचारणा यह एक मैथुन सेवन करने का प्रकार सूत्रकार ने कहा है अब वे सामान्यरूप से इसी मैथुन की प्ररूपणा-" तिविहा मेहुणे पण्णत्ते " इत्यादि सूत्र द्वारा करते हैं-इसमें प्रथम मैथुन सूत्र सुगम है विशेषता जो है वह ऐसी है-स्त्री और पुरुष का दोनों का आपस में एक दूसरे के साथ शारीरिक सम्बन्ध करने से जो क्रिया होती है वह मैथुन है यह मैथुनक्रिया देव, मनुष्य और तिर्यञ्चों में ही होती है इस कारण इसे त्रिविध कहा गया है नारक जीवों में यह मैथुन कर्म द्रव्य की अपेक्षा होता नहीं है इसलिये मैथुन में चतुर्थ प्रकारता नहीं है इस मैथुनरूप क्रिया के कर्त्ता ये तीन ही होते हैं देव, मनुष्यों और तिर्यञ्च मनुष्य में भी स्त्री, पुरुष और नपुंसक ये तीन होते हैं स्त्रियों में पुरुषों की अभि-

---

પરિચારણા કરે છે આ પ્રકારની પરિચારણા એ દેવ જ કરે છે કે જે અનુત્કટ કામવાસનાવાળો હોય છે અને અલ્પ ઋદ્ધિવાળો હોય છે.

પરિચારણાને મૈથુન સેવનના એક પ્રકાર રૂપે પ્રરૂપિત કરીને હવે સૂત્રકાર સામાન્ય રૂપે એ જ મૈથુનની "तिविहे मेहुणे पण्णत्ते" ઇત્યાદિ સૂત્રો દ્વારા પ્રરૂપણા કરે છે. તેમાનુ પહેલું મૈથુન સૂત્ર સરળ છે. સ્ત્રી અને પુરુષના બન્નેના એક બીજા સાથે શારીરિક સબધ કરવાથી જે ક્રિયા થાય છે તેને મૈથુન કહે છે. દેવ, મનુષ્ય અને તિર્યંચોમા જ મૈથુન ક્રિયા સંભવી શકે છે. તે કારણે તેના ત્રણ પ્રકાર કહ્યા છે. નારક જીવોમાં આ મૈથુન કર્મ દ્રવ્યની અપેક્ષાએ થતું નથી, તે કારણે મૈથુનમા ચાર પ્રકારો સંભવી શકતા નથી. આ મૈથુન રૂપ ક્રિયાના કર્તા પણ ત્રણ પ્રકારના જીવો જ હોય છે-(૧) દેવ, (૨) મનુષ્ય અને (૩) તિર્યંચ. મનુષ્યોમાં પણ સ્ત્રી, પુરુષ અને નપુંસક,

भया:—स्त्रिय पुरुषा नपुंसकाश्च मैथुन सेवन्ते। स्त्रीषु पुरुषकामिता पुरुषेषु स्त्रीकामिता, नपुंसकेषु मोहानलप्रदीपनवशात् स्त्रीपुंसयोर्द्वयोरपि कामितावर्तते। स्त्र्यादिलक्षणमाह—

" स्तनयोनिवतीस्त्रीस्याद् श्मश्रुमेहनवान् पुमान्।
उभयोरन्तर यच्च, तदभावे नपुंसकम् ॥ १ ॥ इत्यादि ॥ सू० ४ ॥

एत च योगवन्तो भवन्तीति योग प्ररूपणामाह।

मूलम्—तिविहे जोगे पण्णत्ते, त जहा मणजोगे, वयजोगे, कायजोगे। एव णेरइयाणं विगलिंदियवज्जाण जाव वेमाणियाण १। तिविहे पओगे पण्णत्ते, त जहा-मणपओगे, वइपओगे, कायपओगे जहा जोगो विगलिंदियवज्जाण तहा पओगोवि २। तिविहे करणे पण्णत्ते त जहा-मणकरणे, वइकरणे, कायकरणे। एव विगलिंदियवज्ज जाव वेमाणियाण ३। तिविहे करणे पण्णत्ते त जहा आरभकरणे सरभकरणे समारभकरणे । निरतर जाव वेमाणियाण ॥ सू० ५ ॥

लाषा रहती है और पुरुषों में स्त्रियों की अभिलाषा रहती है अर्थात् स्त्री पुरुष के साथ मैथुन सेवन करने की इच्छावाली होती है और पुरुष स्त्री के साथ मैथुन सेवन की इच्छा वाला होता है परन्तु जो नपुसक होता है उसमें मोहाग्नि की अधिक प्रदीप्ति रहती है इस कारण उसमें स्त्री के साथ और पुरुष के साथ दोनों के साथ मैथुन सेवन करने की अभिलाषा होती है। स्त्री आदि का लक्षण इस प्रकार से है–" स्तन योनिवती स्त्री " इत्यादि ॥ सू०४ ॥

આ પ્રમાણે પ્રકારે હોય છે સ્ત્રી પુરુષની સાથે મૈથુન સેવવાની ઇચ્છાવાળી હોય છે અને પુરુષ સ્ત્રીની સાથે મૈથુન સેવનની ઇચ્છાવાળો હોય છે પરન્તુ જે નપુંસક મનુષ્ય હોય છે તેમાં મોહાગ્નિ અધિક પ્રમાણમાં પ્રદીપ્ત રહે છે, તે કારણે તે સ્ત્રીની સાથે અને પુરુષની સાથે બન્નેની સાથે મૈથુન સેવનની અભિલાષા સેવે છે સ્ત્રી આદિનાં લક્ષણ આ પ્રમાણે છે– ' स्तनयोनिवती स्त्री " ઇત્યાદિ. સ્ત્રી સ્તન અને યોનિથી યુક્ત હોય છે ॥ સૂ. ૪ ॥

छाया-त्रिविधो योगः प्रज्ञप्तः, तद्यथा-मनोयोगः, वाग्योगः, काययोगः। एवं नैरयिकाणां विकलेन्द्रियवर्जानां यावद् वैमानिकानाम् ६। त्रिविधः प्रयोगः, प्रज्ञप्तः, तद्यथा-मनः प्रयोगः, वाक्प्रयोगः, कायप्रयोगः। यथा योगो विकलेन्द्रियवर्जानां तथा प्रयोगोऽपि २। त्रिविधकरणं प्रज्ञप्तं, तद्यथा-मनःकरणं, वाक्करणं कायकरणम्। एवं विकलेन्द्रियवर्जं यावद् वैमानिकानाम्। त्रिविधं करणं प्रज्ञप्तं, तद्यथा-आरम्भकरणं, संरम्भकरणं, समारम्भकरणम्। निरन्तरं यावद् वैमानिकानाम् ४ सू० ५॥

टीका-" तिविहे जोगे ' इत्यादि।

योजनं योगः-व्यापारः। इह वीर्यान्तरायक्षयक्षयोपशम-समुत्थलब्धिविशेष प्रत्ययमभिप्रायाऽनभिप्रायपूर्वमात्मनो वीर्यं योगः प्रोच्यते। उक्तञ्च

" जोगो वीरियं थामो, उच्छाह परक्कमो तहा चेट्ठा।
सत्ती सामत्थं ति य, जोगस्स हवंति पज्जाया॥ १॥

ये सब योगवाले होते हैं-इसलिये सूत्रकार अब योग की प्ररूपणा करते हैं-(तिविहे जोगे पण्णत्ते) इत्यादि।

टीकार्थ-"योजनं योगः" इस व्युत्पत्ति के अनुसार योग शब्द का अर्थ व्यापार है वीर्यान्तराय कर्म के क्षय और क्षयोपशम से समुत्थ जो लब्धिविशेष वह लब्धिविशेष है कारण जिसका ऐसा जो अभिप्राय एवं अनभप्रायपूर्वक आत्मा का वीर्य है उसका नाम योग है तात्पर्य इस कथन का ऐसा है कि आत्मप्रदेशों का जो परिस्पन्द कम्पन व्यापार होता है वह योग कहा गया है आत्मप्रदेशों में यह कम्पन व्यापार वीर्यान्तर कर्म के क्षय से या क्षयोपशम से तथा पुद्गलों के आलम्बन से होता है। कहा भी है-" जोगो वीरियं थामो इत्यादि। यह योग दो

ઉપર્યુક્ત (ઉપર કહ્યા પ્રમાણે) બધાં જીવો યોગયુક્ત હોય છે, તેથી સૂત્રકાર હવે યોગની પ્રરૂપણા કરે છે-" तिविहे जोगे पण्णत्ते " ઇત્યાદિ-

ટીકાર્થ-" योजनं योगः " આ વ્યુત્પત્તિ અનુસાર યોગ શબ્દનો અર્થ વ્યાપાર (પ્રવૃત્તિ) છે. વીર્યાન્તરાય કર્મના ક્ષય અને ક્ષયોપશમથી જન્ય લબ્ધિવિશેષ જેનુ કારણુ છે એવું જે અભિપ્રાય અને અભિપ્રાયપૂર્વક આત્માનું વીર્ય છે, તેનુ નામ યોગ છે. આ કથનનુ તાત્પર્ય નીચે પ્રમાણે છે-આત્મપ્રદેશોનુ જે પરિસ્પન્દન (કમ્પન વ્યાપાર) થાય છે, તેને યોગ કહે છે. આત્મપ્રદેશોમાં તે કમ્પન વ્યાપાર વીર્યાન્તરાય કર્મના ક્ષયથી અથવા ક્ષયોપશમથી તથા પુદ્ગલોના આલમ્બનથી થાય છે કહ્યુ પણ છે કે-" जोगो वीरियं थामो " ઇત્યાદિ.

छाया—योगो वीर्यं स्थाम उत्साहः पराक्रमस्तथा चेष्टा ।
शक्तिः सामर्थ्यमिति च, योगस्य भवन्ति पर्यायाः ॥१॥ इति ।

स च द्विधा—सकरणोऽकरणश्च, तत्रालेश्यस्य केवलिनः कृत्स्नयोर्ज्ञेय दृश्ययो र्ययोः केवलं ज्ञान दर्शन चोपयुञ्जानस्य योऽसावपरिस्पन्दोऽप्रतिघोवीर्यविशेषः सोऽकरण , अस्य नेहाधिकार', सकरणस्यैवाधिकारात् युज्यते जीवः कर्मभिर्येन स योग ' कम्मं जोगनिमित्तं बज्झइ' इति वचनात् । यद्वा—युज्यते—प्रयुज्यत च पर्याय स योगः—वीर्यान्तरायक्षयोपशमजनितो जीवपरिणामविशेष इति ।
उक्तञ्च—" मणसा वयसा काएण वावि जुत्तस्स वीरियपरिणामो ।
जीवस्स अप्पणिज्जो स जोगसन्नो जिणक्खाओ ॥ १ ॥
तेओ जोगेण जहा, रत्तत्ताई घडस्स परिणामो ।
जीवकरणप्पयोए, वीरियमवि तहप्पपरिणामो ॥ २ ॥
छाया—मनसा वचसा कायेन वाऽपियुक्तस्य वीर्यपरिणामः ।
जीवस्य आत्मीयः स योगसंज्ञो जिनाख्यातः ॥ १ ॥
तेजोयोगेन यथा रक्तत्वादिः घटस्य परिणामः ।
जीवकरणप्रयोगः, वीर्यमपि तथाऽऽत्मपरिणामः ॥ १ ॥ इति ।

प्रकार का होता है सकरण और अकरण इनमें अकरण योग जो अले- श्य केवली हैं वे जब कृत्स्न ज्ञेय और दृश्य इन दो पदार्थों में केवलज्ञान और केवल दर्शन को उपयुक्त करते हैं उस समय उनके जो अपरि स्पन्दात्मक अप्रतिघ वीर्यविशेष होता है वह अकरणयोग है, इस अकरण योग का यहां अधिकार नहीं है केवल सकरण योग का ही अधिकार है इससे जीव जिसके द्वारा कर्मों से युक्त होता है वह योग है क्यों कि " कम्मं जोगनिमित्तं बज्झइ " ऐसा वचन है अथवा " युज्यते " इति योगः' इसके अनुसार वीर्यान्तराय कर्म के क्षयोपशम से जनित जो जीवका परिणामविशेष है वह योग है। कहा भी है—" मणसा वयसा

તે યોગના બે પ્રકાર છે-(૧) સકરણ અને (૨) અકરણ

અલેશ્ય કેવલી જ્યારે કૃત્સ્ન જ્ઞેય (સંપૂર્ણ જાણવા યોગ્ય) પદાર્થ અને દૃશ્ય આ બે પદાર્થોમાં કેવલજ્ઞાન અને કેવલદર્શનને ઉપયુક્ત કરે છે તે સમયે તેમનામાં જે અપરિસ્પન્દાત્મક અપ્રતિઘ વીર્યવિશેષ હોય છે, તેનું નામ અકરણ યોગ છે તે અકરણ યોગનો અધિકાર અહીં ચાલુ નથી, અહીં તો સકરણ યોગનો જ અધિકાર ચાલી રહ્યો છે જીવ જેના દ્વારા કર્મથી યુક્ત થાય છે, તેનું નામ જ યોગ છે કારણ કે- કમ્મં જોગ નિમિત્તં બજ્ઝઇ ' એવું શાસ્ત્રનું વચન છે અથવા યુજ્યતે ઇતિ યોગ ' આ પ્રકાર કરે તેનું નામ યોગ છે આ વ્યુત્પત્તિ અનુસાર વીર્યાન્તરાય કર્મના ક્ષયોપશમથી જનિત જે જીવનું

स त्रिविधः-मनोयोगः, वाग्योगः, काययोगः। तत्र मनसा सहकारिकारणभूतेन युक्तस्य जीवस्य योगः-वीर्यपर्यायो दुर्बलस्य यष्टिकावदुपष्टम्भकारको मनोयोग इति। कुतः पुनरयं मनोयोगः? यतस्तेन ज्ञेयं जीवाजीवादि तत्त्वं मन्यते चिन्त्यतेऽतस्तस्य मनोयोगत्वमिति। स च चतुर्विधः-सत्यमनोयोगः १, मृषामनोयोगः २, सत्यमृषामनोयोगः ३, असत्याऽमृषामनोयोग ४ श्चेति। मनसो वा योगः-करणकारणानुमतिरूपो व्यापारो मनोयोगः। एवं वाग्योगोऽपि। एवं काययोगोऽपि विज्ञेयः, नवरं स सप्तविधः-औदारिकौ 'दारिकमिश्र २ वैक्रिय

काएण" इत्यादि। उस योग के तीन नाम इस प्रकार से है-मनोयोग, वचनयोग और काययोग सहकारिकारणभूत मनसे युक्त जो जीवका योग वीर्यपर्याय है वह मनोयोगहै यह मनोयोग दुर्बलको यष्टिका(लकडी) के अवलम्ब की तरह जीव को उपष्टम्भ (आधार) कारक होता है क्यों कि जीव मन से ज्ञेयरूप जीव और अजीवादि तत्व का चिन्तन करता है इस कारण इसे मनोयोग कहा गया है यह मनोयोग सत्यमनोयोग, असत्यमनोयोग, उभयमनोयोग और व्यवहार मनोयोग के भेद से चार प्रकार का है अथवा मन का जो करण कारण और अनुमतिरूप जो व्यापार है वह मनोयोग है, इसी तरह का कथन वाग्योग के सम्बन्ध में भी करना चाहिये। और इसी तरह का कथन काययोग के सम्बन्ध में करना चाहिये, काययोग सात प्रकार का होता है। औदारिक १, औदारिकमिश्र २, वैक्रिय ३, वैक्रियमिश्र ४, आहारक ५, आहार-

પરિણામ વિશેષ છે તેનુ નામ યોગ છે કહ્યું પણ છે કે-"मणसा वयसा काएण" ઇત્યાદિ

તે યોગના ત્રણ પ્રકાર આ પ્રમાણે છે-(૧) મનોયોગ, (૨) વચનયોગ અને (૩) કાયયોગ સહકારિ કારણભૂત મનથી યુક્ત જીવનો જે યોગ (વીર્ય-પર્યાય) છે, તેનું નામ મનોયોગ છે જેમ દુર્બળને લાકડી આધાર રૂપ બને છે, તેમ તે મનોયોગ જીવને આધારકારક બને છે, કારણ કે જીવ મનથી જ્ઞેયરૂપ જીવ અને અજીવાદિ તત્ત્વનું ચિન્તન કરે છે. તે કારણે જ તેને મનોયોગ કહ્યો છે. તે મનોયોગના નીચે પ્રમાણે ચાર પ્રકાર કહ્યા છે-(૧) સત્ય મનોયોગ, (૨) અસત્ય મનોયોગ, (૩) ઉભય મનોયોગ અને (૪) વ્યવહાર મનોયોગ. અથવા મનના જે કરણ, કારણ અને અનુમતિ રૂપ વ્યાપાર છે તેનુ નામ મનોયોગ છે. એજ પ્રકારનું કથન વચનયોગ અને કાયયોગના વિષયમા પણ સમજવું જોઇએ. કાયયોગ સાત પ્રકારનો કહ્યો છે-(૧) ઔદારિક, (૨) ઔદારિક મિશ્ર, (૩) વૈક્રિય, (૪) વૈક્રિય મિશ્ર, (૫) આહારક

मिश्रा ४ ऽऽहारका ५ ऽऽहारकमिश्र ६ कार्मणकाययोग ७ भेदादिति । तत्रौदारिकादयः शुद्धाः सुबोधाः, औदारिकमिश्रस्तु-औदारिक एवापरिपूर्णो मिश्र उच्यते, यथा गुडमिश्रं दधि न गुडतया नापि दधितया व्यपदिश्यते, तदाभ्यामपरिपूर्णत्वात् । एवं औदारिकं कार्मणेन मिश्रं नौदारिकतया नापि कार्मणतया व्यपदेष्टुं शक्यते, अपरिपूर्णत्वादिति तस्यौदारिकमिश्रव्यपदेशः । एवं वैक्रियाहारकमिश्रावपीति । यद्वा-औदारिकादयः शुद्धास्तत्पर्याप्तकस्य, मिश्रास्त्वपर्याप्तकस्येति । तत्रोत्पत्तावौदारिककायः कार्मणेन औदारिकशरीरिणश्च वैक्रियाहारककरणकाले वैक्रियाहारकाभ्यां मिश्रो भवतीत्येवमौदारिकमिश्रः । तथा-वैक्रियमिश्रो

कमिश्र ६, और कार्मण काययोग ७, जब तक औदारिक अपरिपूर्ण रहता है तबतक वह औदारिक मिश्र कहा गया है । जैसे गुडमिश्र दधि न गुड रूप सेही कहा जाताहै और न दधिरूपसे ही, इसी प्रकार औदारिक शरीर कार्मण से मिश्र हो कर न औदारिकरूप से कहा जा सकता है और न कार्मणरूप से ही कहा जा सकता है, क्यों कि वह अपरिपूर्ण है इस लिये उसमें औदारिकमिश्रता कही गई है । इसी प्रकार से वैक्रिय और आहारक में भी मिश्रता जाननी चाहिये। अथवा औदारिक आदि शुद्ध शरीर पर्याप्त जीवोंको होते हैं, और मिश्र अपर्याप्तक जीवको होता है, उत्पत्ति में औदारिक शरीरवाले का औदारिककाय कार्मण से और वैक्रिय, आहारक करने के कालमे वैक्रिय और आहारक इनसे मिश्र होता है । इस तरह से औदारिक में मिश्रता जाननी चाहिये । वैक्रिय

(૬) આહારક મિશ્ર અને (૭) કાર્મણ કાયયોગ ઔદારિક આદિ શબ્દોના અર્થ સરળ છે જ્યાં સુધી ઔદારિક અપરિપૂર્ણ રહે છે, ત્યાં સુધી તેને ઔદારિક મિશ્ર કહે છે જેવી રીતે ગોળમિશ્રિત-દહીં ગોળ રૂપે પણ ઓળખાતું નથી અને દહીં રૂપે પણ ઓળખાતું નથી એજ પ્રમાણે કામણની સાથે મિશ્ર એવા ઔદારિક શરીરને ઔદારિક પણ કહી શકાતું નથી અને કામણ પણ કહી શકાતું નથી, કારણ કે તે અપરિપૂર્ણ છે તેથી તેને ઔદારિક મિશ્ર કહેવામાં આવે છે એજ પ્રમાણે વૈક્રિય અને આહારકમાં પણ મિશ્રતા સમજવી.

અથવા—ઔદારિક આદિ શુદ્ધ શરીરનો સદ્ભાવ પર્યાપ્ત જીવમાં જ હોય છે, અને ઔદારિક મિશ્ર આદિ શરીરનો સદ્ભાવ અપર્યાપ્ત જીવમાં જ હોય છે ઉત્પત્તિ કાળે ઔદારિક શરીરવાળાનું ઔદારિક શરીર કાર્મણ સાથે અને વૈક્રિય શરીર આહારક કરવાને કાળે વૈક્રિય અને આહારક શરીર સાથે મિશ્ર હોય છે આ રીતે ઔદારિકમાં મિશ્રતા સમજવી દેવાદિ પર્યાયની ઉત્પત્તિમાં

देवाद्युत्पत्तौ कार्मणेन, कृतवैक्रियस्य चौदारिकप्रवेशाद्धायामौदारिकेण, आहारमिश्रस्तु साधिताहारककायप्रयोजनः पुनरौदारिकप्रवेशे औदारिकेणेति । कार्मणकाययोगस्तु विग्रहगतौ केवलि समुद्घातेवेति । सर्व एवायं योगः पञ्चदशवेति । अत्रायं संग्रहः—" सच्चं १ मोसं २ मीसं ३, असच्चमोसं ४ मणोवईचेव च
काओ उराल १ विक्किय २ आहारग ३ मीस ६ कम्मजोगोत्ति ७ ॥ १ ॥

छाया—सत्य मृषा मिश्रम् असत्यामृषा मनोवाक् चैव ।
काय औदारिक वैक्रियाहारकमिश्राः कार्मणयोग इति ॥ "

सामान्येन योगं निरूप्य विशेषतोनारकादि चतुर्विंशति दण्डकेषु तं प्ररूपयन्नाह—' एवं ' इत्यादि सुगमं, नवरमतिप्रसङ्ग निवारणायाह-' विगलिंदिय

काय देवादि पर्याय की उत्पत्ति में कार्मण से मिश्रित होने पर वैक्रिय मिश्र होता है तथा जिसने विक्रिया की है ऐसा जीव औदारिक में प्रवेश करता है उस काल में वह वैक्रिय शरीर वैक्रियमिश्र होता है । तथा आहारक शरीरवाला जीव जब आहारककाय का प्रयोजन साधित कर लेता है और फिर औदारिक शरीर मे प्रवेश करता है तब वह औदारिक से मिश्र हो जाता है इस तरह आहारक में मिश्रता जाननी चाहिये, कार्मण काययोग विग्रह गतिमें अथवा केवलि समुद्घात में होता है यह सब योग १५ प्रकारका होता है इस विषय में संग्राहक श्लोक इस प्रकार से हैं—" सच्च मोसं मीसं " इत्यादि । तात्पर्य इस श्लोक का ऐसा है कि मन के चार ४ प्रकार, वचन के ४ प्रकार और काय के ७ प्रकार सब मिल कर पंद्रह प्रकार का योग हो जाता है । इस

वैक्रियकाय कार्मणु साथे मिश्र होय छे तेथी तेने वैक्रिय मिश्र कहे छे. तथा जेणे विक्रिया करी होय एवो जीव ज्यारे औदारिकमां प्रवेश करे छे, त्यारे ते वैक्रिय शरीर वैक्रिय मिश्र होय छे. तथा आहारक शरीरवाळो जीव ज्यारे आहारककायनु प्रयोजन सिद्ध करी ले छे अने फरी औदारिक शरीरमां प्रवेश करे छे, त्यारे ते शरीर औदारिक साथे मिश्र होय छे, आ रीते आहारकमां मिश्रता समजवी. कार्मणु काययोग विग्रहगतिमा अथवा केवलि समुद्घातमां थाय छे. आ बधां योगना १५ प्रकार छे आ विषयने नीचेनी संग्रहगाथामा प्रकट करवामां आवेल छे-" सचं मोसं मीसं " ईत्यादि.

आ गाथानो भावार्थ नीचे प्रमाणे छे-मनोयोगना चार प्रकार, वचन योगना चार प्रकार अने काययोगना सात प्रकार मळीने योगना कुल १५

मिश्रः ४ ऽऽहारकः ५ ऽऽहारकमिश्रः ६ कार्मणकायप्रयोग ७ भेदादिति । तत्रौदारिकादयः शुद्धाः सुबोधाः, औदारिकमिश्रस्तु-औदारिक एवापरिपूर्णो मिश्र उच्यते, यथा गुडमिश्रं दधि न गुडतया नापि दधितया व्यपदिश्यते, ताभ्यामपरिपूर्णत्वात् । एवं मौदारिकं कार्मणेन मिश्रं नौदारिकतया नापि कार्मणतया व्यपदेष्टुं शक्यते, अपरिपूर्णत्वादिति तस्यौदारिकमिश्रव्यपदेशः । एवं वैक्रियाहारकमिश्रावपीति । यद्वा-औदारिकादयः शुद्धास्तत्पर्याप्तकस्य, मिश्रास्त्वपर्याप्तकस्येति । तथोत्पत्तावौदारिककायः कार्मणेन औदारिकशरीरिणश्च वैक्रियाहारककरणकाले वैक्रियाहारकाभ्यां मिश्रो भवतीत्येवमौदारिकमिश्रः । तथा-वैक्रियमिश्रो

कमिश्र ६, और कार्मण काययोग ७, जब तक औदारिक अपरिपूर्ण रहता है तबतक वह औदारिक मिश्र कहा गया है । जैसे गुडमिश्र दधि न गुड रूप सेही कहा जाताहै और न दधिरूपसे ही, इसी प्रकार औदारिकशरीर कार्मण से मिश्र हो कर न औदारिकरूप से कहा जा सकता है और न कार्मणरूप से ही कहा जा सकता है, क्यों कि वह अपरिपूर्ण है इस लिये उसमें औदारिकमिश्रता कही गई है । इसी प्रकार से वैक्रिय और आहारक में भी मिश्रता जाननी चाहिये । अथवा औदारिक आदि शुद्ध शरीर पर्याप्त जीवोंको होते हैं, और मिश्र अपर्याप्तक जीवको होता है, उत्पत्ति में औदारिक शरीरवाले का औदारिककाय कार्मण से और वैक्रिय, आहारक करने के कालमें वैक्रिय और आहारक इनसे मिश्र होता है । इस तरह से औदारिक में मिश्रता जाननी चाहिये । वैक्रिय

(६)આહારક મિશ્ર અને (૭) કાર્મણ કાયયોગ ઔદારિક આદિ શબ્દોનો અર્થ સરલ છે જ્યાં સુધી ઔદારિક અપરિપૂર્ણ રહે છે, ત્યાં સુધી તેને ઔદારિક મિશ્ર કહે છે જેવી રીતે ગોળમિશ્રિત-દહીં ગોળ રૂપે પણ ઓળખાતું નથી અને દહીં રૂપે પણ ઓળખાતું નથી એજ પ્રમાણે કામણની સાથે મિશ્ર એવા ઔદારિક શરીરને ઔદારિક પણ કહી શકાતું નથી અને કાર્મણ પણ કહી શકાતું નથી, કારણ કે તે અપરિપૂર્ણ છે, તેથી તેને ઔદારિક મિશ્ર કહેવામાં આવે છે એજ પ્રમાણે વૈક્રિય અને આહારમાં પણ મિશ્રતા સમજવી.

અથવા—ઔદારિક આદિ શુદ્ધ શરીરનો સદ્‌ભાવ પર્યાપ્ત જીવમાં જ હોય છે, અને ઔદારિક મિશ્ર આદિ શરીરનો સદ્‌ભાવ અપર્યાપ્તક જીવમાં જ હોય છે ઉત્પત્તિ કાળે ઔદારિક શરીરવાળાનું ઔદારિક શરીર કાર્મણ સાથે અને વૈક્રિય શરીર, આહારક કરવાને કાળે વૈક્રિય અને આહારક શરીર સાથે મિશ્ર હોય છે આ રીતે ઔદારિકમાં મિશ્રતા સમજવી દેવાદિ પર્યાયની ઉત્પત્તિમાં

देवाद्युत्पत्तौ कार्मणेन, कृतवैक्रियस्य चौदारिकप्रवेशाद्धायामौदारिकेण, आहारमिश्रस्तु साधिताहारककायप्रयोजनः पुनरौदारिकप्रवेशे औदारिकेणेति । कार्मणकाययोगस्तु विग्रहगतौ केवलि समुद्घातेवेति । सर्व एवायं योगः पञ्चदशधेति । अत्रायं संग्रहः—" सच्चं १ मोसं २ मीसं ३, असच्चमोसं ४ मणोवईचेव च
काओ उराल १ विक्किय २ आहारग ३ मीस ६ कम्मजोगोत्ति ७ ॥ १ ॥

छाया—सत्य मृषा मिश्रम् असत्यामृषा मनोवाक् चैव ।
काय औदारिक वैक्रियाहारकमिश्राः कार्मणयोग इति ॥ "

सामान्येन योगं निरूप्य विशेषतोनारकादि चतुर्विंशति दण्डकेषु तं प्ररूपयन्नाह—' एवं ' इत्यादि सुगमं, नवरमतिमसङ्ग निवारणायाह-' विगलिंदिय

काय देवादि पर्याय की उत्पत्ति में कार्मण से मिश्रित होने पर वैक्रिय मिश्र होता है तथा जिसने विक्रिया की है ऐसा जीव औदारिक में प्रवेश करता है उस काल में वह वैक्रिय शरीर वैक्रियमिश्र होता है। तथा आहारक शरीरवाला जीव जब आहारककाय का प्रयोजन साधित कर लेता है और फिर औदारिक शरीर मे प्रवेश करता है तब वह औदारिक से मिश्र हो जाता है इस तरह आहारक में मिश्रता जाननी चाहिये, कार्मण काययोग विग्रह गतिमें अथवा केवलि समुद्घात में होता है यह सब योग १५ प्रकारका होता है इस विषय में संग्राहक श्लोक इस प्रकार से हैं—" सच्च मोसं मीसं " इत्यादि । तात्पर्य इस श्लोक का ऐसा है कि मन के चार ४ प्रकार, वचन के ४ प्रकार और काय के ७ प्रकार सब मिल कर पंद्रह प्रकार का योग हो जाता है। इस

વૈક્રિયકાય કાર્મણ સાથે મિશ્ર હોય છે તેથી તેને વૈક્રિય મિશ્ર કહે છે. તથા જેણે વિક્રિયા કરી હોય એવો જીવ જ્યારે ઔદારિકમાં પ્રવેશ કરે છે, ત્યારે તે વૈક્રિય શરીર વૈક્રિય મિશ્ર હોય છે. તથા આહારક શરીરવાળો જીવ જ્યારે આહારકકાયનું પ્રયોજન સિદ્ધ કરી લે છે અને ફરી ઔદારિક શરીરમાં પ્રવેશ કરે છે, ત્યારે તે શરીર ઔદારિક સાથે મિશ્ર હોય છે, આ રીતે આહારકમાં મિશ્રતા સમજવી. કાર્મણ કાયયોગ વિગ્રહગતિમા અથવા કેવલિ સમુદ્ઘાતમાં થાય છે. આ બધાં યોગના ૧૫ પ્રકાર છે આ વિષયને નીચેની સંગ્રહગાથામા પ્રકટ કરવામાં આવેલ છે–" સચ્ચં મોસં મીસં " ઈત્યાદિ.

આ ગાથાનો ભાવાર્થ નીચે પ્રમાણે છે-મનોયોગના ચાર પ્રકાર, વચન યોગના ચાર પ્રકાર અને કાયયોગના સાત પ્રકાર મળીને યોગનાં કુલ ૧૫

वजमाण' इति, विकलेन्द्रिय वर्जानाम्, अत्र विकलेन्द्रिय शब्देन-द्वित्रिचतुरिन्द्रिया ग्राह्याः, तत्रैकेन्द्रियाणामेकः काययोग एव भवति, द्वित्रिचतुरिन्द्रियाणां तु कायवाग्रूपौ द्वौ योगौ तेषां मनसोऽसद्भावात् । मन प्रभृतियोग सम्बन्धेनेदम परमाह-' तिविहे पओगे ' इत्यादि सुगमं, मनः प्रभृतीनां व्याप्रियमाणानां जीवेन हेतु भूतेन यत् प्रकर्षेण व्यापारणं-प्रयोगमनं स प्रयोग, मनसः प्रयोगो मनः प्रयोगः । एवं वाक्प्रयोगः कायप्रयोगोऽपि । ' जहा ' यथा योगसूत्रे विकलेन्द्रि

प्रकार सामान्यतः योगकी प्ररूपणा करके अब सूत्रकार विशेषरूप से नारकादि चतुर्विंशति दण्डकों में इसकी प्ररूपणा करने के निमित्त— " एवं " इत्यादि सूत्र कहते हैं । इसके द्वारा उन्होंने ऐसा कहा है कि यह त्रिविध योग विकलेन्द्रियों को छोड़ कर बाकी के समस्त नारक से लेकर वैमानिक तक के जीवों को होता हैं । यहां विकलेन्द्रिय पद से दो इन्द्रिय तेइन्द्रिय और चौइन्द्रिय जीवों का ग्रहण हुआ है । एकेन्द्रिय जीवके केवल एक काययोग ही होता है, दो इन्द्रिय, तेइन्द्रिय और चौइन्द्रियों के काय और वचन ये दो योग होते हैं । क्यों कि इनमे मनोयोग नहीं होता है । अब सूत्रकार मन आदि योग के सम्बन्ध को लेकर ऐसा कहते हैं कि-"तिविहे पओगे पण्णत्ते " प्रयोग तीन प्रकार का कहा गया है । जीव के द्वारा मनः आदि योगों को जो प्रकर्ष रूप से व्यापारयुक्त किया जाता है, वह मन प्रयोग आदि है । मन

પ્રકાર છે-આ રીતે સામાન્યની અપેક્ષાએ યોગની પ્રરૂપણા કરીને હવે સૂત્રકાર નારકાદિ ૨૪ દંડકના જીવોને અનુલક્ષીને યોગની વિશેષ પ્રરૂપણા કરે છે, " एवं " ઇત્યાદિ

આ સૂત્ર દ્વારા સૂત્રકારે એ વાત પ્રકટ કરી છે કે વિકલેન્દ્રિયો સિવાયના નારકથી લઈને વૈમાનિક પર્યન્તના સમસ્ત જીવોમાં આ ત્રિવિધ યોગોનો સદ્ભાવ હોય છે એકેન્દ્રિય, દ્વિન્દ્રિય, ત્રીન્દ્રિય અને ચતુરિન્દ્રિય જીવોને વિકલેન્દ્રિય કહે છે એકેન્દ્રિય જીવોમાં માત્ર કાયયોગનો જ સદ્ભાવ હોય છે દ્વીન્દ્રિય ત્રીન્દ્રિય અને ચતુરિન્દ્રિય જીવોમાં કાયયોગ અને વચનયોગનો સદ્ભાવ હોય છે, પણ મનોયોગનો સદ્ભાવ હોતો નથી

મનોયોગ આદિ યોગોની પ્રરૂપણા કરીને હવે સૂત્રકાર પ્રયોગોની પ્રરૂપણા કરે છે-" तिविहे पओगे पण्णत्ते " પ્રયોગ ત્રણ પ્રકારના કહ્યા છે જીવના દ્વારા મનઃ આદિ યોગોને પ્રકર્ષરૂપે વ્યાપારયુક્ત કરવાની જે ક્રિયા થાય છે તેને પ્રયોગ કહે છે તેના ત્રણ પ્રકાર નીચે પ્રમાણે છે-(૧) મનઃપ્રયોગ,

यत्रजीनां नैरयिकादि वैमानिकान्तानां योगः प्रोक्तस्तथा प्रयोगोऽपि भावनीयः। मनोवाकायसम्बन्धेनैवकरणसूत्रमाह—'तिविहे करणे' इत्यादि, क्रियते येन तत् करणं मननादि क्रियासु प्रवर्त्तमानस्यात्मन उपकरणभूतस्तथातथा परिणामयुक्तः पुद्गलसंघात इत्यर्थः, तत् त्रिविधम्-मनःकारणं, वाक्करणं, कायकरणंचेति। तत्र मन एवकरणं-मनःकरणम्। एवमितरे अपि वाच्ये। 'एव' इत्यादि, एवम्-पूर्वोक्तप्रकारेणैव योगप्रयोगसूत्रवदत्रापि नारकादारभ्य विकलेन्द्रियवर्जवैमानिकपर्यन्तं-

को अधिक से अधिकरूप मे व्यापारयुक्त करना इसका नाम मनःप्रयोग है वचन को अधिक से अधिक रूपमें प्रयुक्त करना वचनप्रयोग है। कायको अधिक से अधिक रूप मे प्रयुक्त करना काययोग है। यह त्रिविध प्रयोग भी नैरयिक से लेकर वैमानिक तक के जीवों मे होता है। मनःप्रयोग और वचनप्रयोग एकेन्द्रिय जीव मे और मनःप्रयोग विकेन्द्रियों मे दो इन्द्रिय, तेइन्द्रिय और चौइन्द्रय जीवों में नहीं होता है। अब सूत्रकार मनोवाक्काय के सम्बन्ध से ही करण सूत्र का कथन करते हैं-"तिविहे करणे" इत्यादि—मननादि क्रियाओं में प्रवर्त्तमान आत्माको उपकरण भूत जो तथा तथा परिणामयुक्त पुद्गलसंघात है उसका नाम करण है। वह करण तीन प्रकार का है। मनःकरण, वचनकरण और कायकरण, मनरूप करण का नाम मनःकरण है, वचनरूप करण का नाम वाक्करण और कायरूप करण का नाम कायकरण है,

(૨) વચનપ્રયોગ અને (૩) કાયપ્રયોગ. મનને અધિકમાં અધિક રૂપે વ્યાપારયુક્ત કરવું તેનું નામ મનઃપ્રયોગ છે વચનને અધિકમાં અધિક રૂપે વ્યાપારયુક્ત કરવું તેનું નામ વચનપ્રયોગ છે અને કાયાને અધિકમાં અધિકરૂપે વ્યાપારયુક્ત કરવી તેનું નામ કાયપ્રયોગ છે આ ત્રણે પ્રયોગનો સદ્ભાવ પણ નારકોથી લઇને વૈમાનિકો પર્યન્તના જીવોમાં હોય છે. એકેન્દ્રિય જીવોમાં મનઃપ્રયોગ અને વચન પ્રયોગનો સદ્ભાવ હોતો નથી, તેમજ દ્વીન્દ્રિય, ત્રીન્દ્રિય અને ચતુરિન્દ્રિય જીવોમાં મનઃપ્રયોગનો સદ્ભાવ હોતો નથી.

હવે સૂત્રકાર મન, વચન અને કાયરૂપ ત્રણ કરણનું નિરૂપણ કરે છે—"तिविहे करणे" ઇત્યાદિ—

મનનાદિ ક્રિયાઓમાં પ્રવૃત્ત થયેલા આત્માને ઉપકરણભૂત એવા તે તે પરિણામયુક્ત પુદ્ગલનો જે સંઘાત થાય છે, તેનું નામ કરણ છે તે કરણના નીચે પ્રમાણે ત્રણ પ્રકાર છે-(૧) મનઃકરણ, (૨) વચન કરણ (વાક્કરણ) અને (૩) કાયકરણ મનરૂપ કરણનું નામ મનઃકરણ છે, વચનરૂપ કરણનુ નામ વાક્કરણ છે અને કાયરૂપ કરણનું નામ કાયકરણ છે. 'યોગ' અને પ્રયોગની

रुजमार्थ' इति, विकलेन्द्रिय वर्जानाम्, अत्र विकलेन्द्रिय शब्देन-द्वित्रिचतुरि न्द्रिया ग्राह्याः, तत्रैकेन्द्रियाणामेक काययोग एव भवति, द्वित्रिचतुरिन्द्रियाणां तु कायवाग्रूपौ द्वौ योगौ तेषां मनसोऽसद्भावात् । मनःप्रभृतियोग सम्बन्धेनेदम् पराह-' तिविहे पओगे ' इत्यादि सुगमं, मनः प्रभृतीनां व्याप्रियमाणानां जीवेन हेतु कर्तृभूतेन यत् प्रकर्षेण व्यापारणं-प्रयोजनं स प्रयोगः, मनसः प्रयोगो मनः प्रयोगः । एवं वाक्प्रयोगः कायप्रयोगोऽपि । ' जहा ' यथा योगसूत्रे विकलेन्द्रि

प्रकार सामान्यतः योगकी प्ररूपणा करके अब सूत्रकार विशेषरूप से नारकादि चतुर्विशति दण्डकों में इसकी प्ररूपणा करने के निमित्त-" एव " इत्यादि सूत्र कहते हैं । इसके द्वारा उन्होंने ऐसा कहा है कि यह त्रिविध योग विकलेन्द्रियों को छोड़ कर बाकी के समस्त नारक से लेकर वैमानिक तक के जीवों को होता है । यहां विकलेन्द्रिय पद से दो इन्द्रिय तेइन्द्रिय और चौइन्द्रिय जीवों का ग्रहण हुआ है । एकेन्द्रिय जीवके केवल एक काययोग ही होता है, दो इन्द्रिय, तेइन्द्रिय और चौइन्द्रियों के काय और वचन ये दो योग होते हैं । क्यों कि इनमें मनोयोग नहीं होता है । अब सूत्रकार मन आदि योग के सम्बन्ध को लेकर ऐसा कहते हैं कि-"तिविहे पओगे पण्णत्ते " प्रयोग तीन प्रकार का कहा गया है । जीव के द्वारा मनः आदि योगों को जो प्रकर्षरूप से व्यापारयुक्त किया जाता है, वह मनःप्रयोग आदि है । मन

પ્રકાર છે-આ રીતે સામાન્યની અપેક્ષાએ યોગની પ્રરૂપણા કરીને હવે સૂત્રકાર નારકાદિ ૨૪ દંડકના જીવોને અનુલક્ષીને યોગની વિશેષ પ્રરૂપણા કરે છે, " एवं " ઇત્યાદિ

આ સૂત્ર દ્વારા સૂત્રકારે એ વાત પ્રકટ કરી છે કે વિકલેન્દ્રિયો સિવાયના નારકથી લઇને વૈમાનિક પર્યન્તના સમસ્ત જીવોમાં આ ત્રિવિધ યોગોને સદ્ભાવ હાય છે એકેન્દ્રિય, દ્વિન્દ્રિય, ત્રીન્દ્રિય અને ચતુરિન્દ્રિય જીવોને વિકલેન્દ્રિય કહે છે એકેન્દ્રિય જીવોમાં માત્ર કાયયોગને જ સદ્ભાવ હાય છે. દ્વીન્દ્રિય, ત્રીન્દ્રિય અને ચતુરિન્દ્રિય જીવોમાં કાયયોગ અને વચનયોગનો સદ્ભાવ હાય છે પણ મનોયોગનો સદ્ભાવ હાતો નથી.

મનોયોગ આદિ યોગોની પ્રરૂપણા કરીને હવે સૂત્રકાર પ્રયોગોની પ્રરૂપણા કરે છે-' तिविहे पओगे पण्णत्ते " પ્રયોગ ત્રણ પ્રકારના કહ્યા છે જીવના દ્વારા મનઃ આદિ યોગોને પ્રકર્ષરૂપે વ્યાપારયુક્ત કરવાની જે ક્રિયા થાય છે તેને પ્રયોગ કહે છે તેના ત્રણ પ્રકાર નીચે પ્રમાણે છે-(૧) મનઃપ્રયોગ,

पवर्जानां नैरयिकादि वैमानिकान्तानां योगः प्रोक्तस्तथा प्रयोगोऽपि भावनीयः। मनोवाक्कायसम्बन्धेनैवकरणसूत्रमाह—'तिविहे करणे' इत्यादि, क्रियते येन तत् करणं मननादि क्रियासु प्रवर्त्तमानस्यात्मन उपकरणभूतस्तथातथा परिणामयुक्तः पुद्‌गलसंघात इत्यर्थः, तत् त्रिविधम्—मनःकारणं, वाक्करणं, कायकरणंचेति। तत्र मन एवकरणं—मनःकरणम्। एवमितरे अपि वाच्ये। 'एवं' इत्यादि, एवम्—पूर्वोक्तप्रकारेणैव योगप्रयोगसूत्रवदत्रापि नारकादारभ्य विकलेन्द्रियवर्जवैमानिकपर्यन्तं-

को अधिक से अधिकरूप मे व्यापारयुक्त करना इसका नाम मनःप्रयोग है वचन को अधिक से अधिक रूपमे प्रयुक्त करना वचनप्रयोग है। कायको अधिक से अधिक रूप में प्रयुक्त करना काययोग है। यह त्रिविध प्रयोग भी नैरयिक से लेकर वैमानिक तक के जीवों मे होता है। मनःप्रयोग और वचनप्रयोग एकेन्द्रिय जीव मे और मनःप्रयोग विकेन्द्रियों मे दो इन्द्रिय, तेइन्द्रिय और चौइन्द्रय जीवों में नहीं होता है। अब सूत्रकार मनोवाक्काय के सम्बन्ध से ही करण सूत्र का कथन करते हैं—" तिविहे करणे " इत्यादि—मननादि क्रियाओं में प्रवर्त्त-मान आत्माको उपकरण भूत जो तथा तथा परिणामयुक्त पुद्‌गलसंघात है उसका नाम करण है। वह करण तीन प्रकार का है। मनःकरण, वचन-करण और कायकरण, मनरूप करण का नाम मनःकरण है, वचनरूप करण का नाम वाक्करण और कायरूप करण का नाम कायकरण है,

(૨) વચનપ્રયોગ અને (૩) કાયપ્રયોગ. મનને અધિકમાં અધિક રૂપે વ્યાપારયુક્ત કરવું તેનું નામ મનઃપ્રયોગ છે વચનને અધિકમાં અધિક રૂપે વ્યાપારયુક્ત કરવું તેનું નામ વચનપ્રયોગ છે અને કાયાને અધિકમાં અધિકરૂપે વ્યાપાર-યુક્ત કરવી તેનું નામ કાયપ્રયોગ છે આ ત્રણે પ્રયોગનો સદ્ભાવ પણ નારકોથી લઈને વૈમાનિકો પર્યન્તના જીવોમાં હોય છે. એકેન્દ્રિય જીવોમાં મનઃપ્રયોગ અને વચન પ્રયોગનો સદ્ભાવ હોતો નથી, તેમજ દ્વીન્દ્રિય, ત્રીન્દ્રિય અને ચતુરિન્દ્રિય જીવોમાં મનઃપ્રયોગનો સદ્ભાવ હોતો નથી.

હવે સૂત્રકાર મન, વચન અને કાયરૂપ ત્રણ કરણનું નિરૂપણ કરે છે—" तिविहे करणे " ઇત્યાદિ—

મનનાદિ ક્રિયાઓમાં પ્રવૃત્ત થયેલા આત્માને ઉપકરણભૂત એવા તે તે પરિણામયુક્ત પુદ્ગલનો જે સંઘાત થાય છે, તેનું નામ કરણ છે તે કરણના નીચે પ્રમાણે ત્રણ પ્રકાર છે-(૧) મનઃકરણ, (૨) વચન કરણ (વાક્કરણ) અને (૩) કાયકરણ મનરૂપ કરણનું નામ મનઃકરણ છે, વચનરૂપ કરણનુ નામ વાક્કરણ છે અને કાયરૂપ કરણનું નામ કાયકરણ છે. યોગ અને પ્રયોગની

भाष्यमिति मात्र । अथवा–योगप्रयोगकरणशब्दाः एकार्थवाचका इति नार्थभेद, प्रयाणामप्येषामेकार्थतयाऽऽगमे यत्रुश्च प्रवृत्तिदर्शनात्। अथ प्रकारान्तरेण करणत्रैविध्यमाह— 'तिविहे' इत्यादि, आरम्भणमारम्भः–पृथिव्याद्युपमर्दन, तस्य करण, स एव वा करणमित्यारम्भकरणम् । एवं सरम्भकरणं समारम्भकरण मपि वाच्यम् । तत्र–सरम्भकरण पृथिव्यादि विषये मनसः सक्लेशकरणं, समार म्भकरण पृथिव्यादीना सन्तापकरणमिति ।

उक्तंचाचार्यै—" संकप्पो संरंभो परितावकरो भवे समारंभो ।

आरंभो उद्दवओ, सुद्धनयाण तु सव्वेसिं ॥ १ ॥

योगप्रयोग सूत्रों की तरह यहां पर भी नारक से लेकर वैमानिक तक के जीवों मे इन तीन करणों का सद्भाव कहना चाहिये। इस कथनमे एकेन्द्रिय और विकलेन्द्रिय जीवों का परिहार करना चाहिये। क्यों कि उनमे ये तीन करण नहीं होते हैं। अथवा-योग प्रयोग और करण शब्द ये सब एक ही अर्थ के वाचक हैं अतः इनमे अर्थभेद कुछ भी नहीं है। ये तीनों एकार्थक है। अब सूत्रकार प्रकारान्तर से पुनःकरण की त्रिविधता का कथन करते हैं— 'तिविहे" इत्यादि। आरम्भकरण, सरंभकरण और समारमकरण पृथिव्यादि जीवों का उपमर्दन करना यह आरंभकरण है पृथिव्यादि जीवों के विषय मे मनको सक्लेशित करना यह सरम्भकरण है तथा पृथिव्यादिक जीवों को सन्ताप पहुँचाना यह समारम्भ करण है। कहा भी है—" संकप्पो सरंभो " यह करण

એમ આ ત્રણે કરણોનો નારકથી લઈને વૈમાનિક પર્યન્તના જીવોમાં સદ્‌ભાવ છે, એમ સમજવું એકેન્દ્રિય જીવોમાં માત્ર કાયકરણનો જ સદ્‌ભાવ હોય છે અને દ્વીન્દ્રિય, ત્રીન્દ્રિય અને ચતુરિન્દ્રિયોમાં વાક્કરણ અને કાયકરણનો સદ્‌ભાવ હોય છે આ રીતે વિકલેન્દ્રિય જીવોમાં ત્રણે ત્રણ કરણોનો સંભાવ હોતો નથી, પણ ઉપર્યુક્ત વચન અને કાય એ કરણોનો જ સદ્‌ભાવ હોય છે

અથવા—યોગ, પ્રયોગ અને કરણમાં કોઈ અર્થભેદ નથી. તે ત્રણે શબ્દ એકાર્થક જ છે હવે સૂત્રકાર અન્ય પ્રકારે કરણની ત્રિવિધતા પ્રકટ કરે છે— " તિવિહે ઇત્યાદિ. કરણના નીચે પ્રમાણે પણ ત્રણ પ્રકાર પડે છે–(૧) આરંભકરણ (૨) સંરંભકરણ અને (૩) સમારંભકરણ પૃથ્વીકાય આદિ જીવોનું ઉપમર્દન કરવું તેનું નામ આરંભકરણ છે પૃથ્વીકાય આદિ જીવોના વિષયમાં મનને સંક્લેશિત (ક્લેશયુક્ત) કરવું તેનું નામ સંરંભકરણ છે, તથા પૃથ્વીકાય આદિ જીવોને સંતાપ પહોંચાડવો, તેનું નામ સમારંભકરણ છે કહ્યું પણ છે કે–" સંકપ્પો સરંભો " ઇત્યાદિ.

१—आगमे-प्रज्ञापनायां यथा-" कइविहेण भंते पओगे पण्णत्ते " इत्यादि।
आवश्यके करणतयोक्तं तथाहि-' जुंजण करणं तिविहं ' इत्यादि।

छाया—संकल्पः संरम्भः परितापकरो भवेत् समारम्भः।
आरम्भ उपद्रवतः शुद्धनयानां तु सर्वेषाम् ॥ १ ॥ इति।

इदं करणत्रयं चतुर्विंशतिदण्डकेषु भवतीत्याह-' निरंतरं ' इत्यादि। निरन्तरं-अन्तररहितं नारकादारभ्य वैमानिकपर्यन्तानां सर्वेषामपि वाच्यमिति भावः। नवरं-संरम्भकरणमसंज्ञिनां पूर्वभवसंस्कारानुवृत्तिमात्रतया विभावनीयमिति ॥सू५॥

आरम्भादिकरणस्य क्रियान्तरस्य च फलमुपदर्शयन् सूत्रचतुष्टयमाह—

मूलम्—तिहिं ठाणेहिं जीवा अप्पाउयत्ताए कम्मं पकरेंति, तं जहा--पाणे अइवाइत्ता भवइ १, मुसंवइत्ता भवइ २, तहारूवं समणं वा माहणं वा अफासुएणं अणेसणिज्जेणं असणपाणखाइमसाइमेणं पडिलाभित्ता भवइ३, इच्चेएहिं तिहिं ठाणेहिं जीवा अप्पाउयत्ताए कम्मं पकरेंति १। तिहिं ठाणेहिं जीवा दीहाउयत्ताए कम्मं पकरेंति, तं जहा-णो पाणे अइवाइत्ता भवइ १, णो मुसंवइत्ता भवइ२, तहारूवं समणं वा माहणं वा फासुएसणिज्जेणं असणपाणखाइमसाइमेणं पडिलाभित्ता भवइ ३, इच्चेएहिं तिहिं ठाणेहिं जीवा दीहाउयत्ताए कम्मं पकरेंति २।

त्रय चौवीस दण्डकों मे होता है। इसीलिये यहां-" निरंतर " ऐसा पाठ कहा गया है। नारक से लेकर वैमानिक तकके सब जीवों को यह करणत्रय होता है, यहां एकेन्द्रिय और विकलेन्द्रियों का वर्जन नहीं कहा है। असंज्ञी जीवों का संरंभकरण पूर्वभव के संस्कार की अनुवृत्ति मात्ररूप से समझना चाहिये ॥ सू०५ ॥

આ કરણત્રયનો સદ્‌ભાવ ચોવીશે દંડકોમાં હોય છે, તે કારણે અહીં " નિરંતર " શબ્દનો પ્રયોગ કર્યો છે નારકોથી લઈને વૈમાનિકો પર્યન્તના સઘળા જીવોમા આ ત્રણે કરણોનો સદ્‌ભાવ હોય છે એકેન્દ્રિય અને વિકલેન્દ્રિય જીવોમાં પણ આ કરણત્રયનો સદ્‌ભાવ રહે છે. અસંજ્ઞી જીવોમા સંરભકરણ પૂર્વભવના સંસ્કારની અનુવૃત્તિ માત્ર રૂપે સમજવુ જોઈએ ॥ સૂ. ૫ ॥

तिहिं ठाणेहिं जीवा असुभदीहाउयत्ताए कम्म पकरेंति, त जहा पाण अइवाइत्ता भवइ १, मुस वइत्ता भवइ २, तहारूव समणं वा माहण वा हीलित्ता निंदित्ता खिंसित्ता गरहित्ता अव माणित्ता अन्नयरे णं अमणुन्नेणं अपीइकारएणं असणपाणखा इमसाइमेणं पडिलाभित्ता भवइ ३, इच्चेएहिं तिहिं ठाणेहिं जीवा असुभ दीहाउयत्ताए कम्म पकरेंति ।३। तिहिं ठाणेहिं जीवा सुभदीहाउयत्ताए कम्म पकरेंति, त जहा-णो पाणे अइ वाइत्ता भवइ १, णो मुसवइत्ता भवइ २, तहारूव समणं वा माहण वा वंदित्ता नमंसित्ता सक्कारित्ता सम्माणित्ता कल्लाणं मंगलं देवयं चेइयं पज्जुवासित्ता मणुन्नेण पीइकारएण असणपाणखा इमसाइमेण पडिलाभित्ता भवइ ३, इच्चेएहिं तिहिं ठाणेहिं जीवा सुहदीहाउयत्ताए कम्म पकरेंति ।४॥ सू० ६ ॥

छाया—त्रिभिः स्थानैर्जीवा अल्पायुष्कतया कर्म प्रकुर्वन्ति, तद्यथा प्राणान् अतिपातयिता भवति १, मृषावक्ता भवति २, तथारूपं श्रमणं वा माहनं वा श्रमा

अब सूत्रकार आरम्भादि करणका और क्रियान्तर का फल दिखाते हुए सूत्रचतुष्टय (चार सूत्रों)का कथन करते हैं—

'तिहिं ठाणेहिं जीवा अप्पाउयत्ताए कम्मं पकरेंति' इत्यादि।

सूत्रार्थ–इन तीन स्थानोंसे जीव अल्प आयुष्य आदि रूपसे कर्म का बन्ध करता है। जैसे–एक यह जो प्राणों का विनाशकर्ता होता है १, दूसरा यह जो मृषावादक होता है। तीसरा यह जो तथारूपवाले श्रमण को

હવે સૂત્રકાર આરંભાદિ કરણનું અને ક્રિયાન્તરનું ફળ દર્શાવતા ચાર સૂત્રોનું કથન કરે છે-' तिहिं ठाणेहिं जीवा अप्पाउयत्ताए कम्मं पकरेंति ' ઇત્યાદિ

સૂત્રાર્થ—નીચે દર્શાવેલાં ત્રણ સ્થાનો કારણો દ્વારા જીવ અલ્પ આયુષ્ય આદિ રૂપે કર્મનો બંધ કરે છે-(૧) પ્રાણીઓનો વિનાશ કરવાથી, (૨) અસત્ય બોલવાથી અને (૩) તથારૂપ (મુહપત્તી રજોહરણ આદિ ધારણ કરનારા) શ્રમણ

सुकेन अनेषणीयेन अशनपानखाद्यस्वाद्येन प्रतिलम्भयिता भवति ३, इत्येतैस्त्रिभिः स्थानैर्जीवा अल्पायुष्कतया कर्मप्रकुर्वन्ति ॥१॥ त्रिभिः स्थानैर्जीवा दीर्घायुष्कतया कर्म प्रकुर्वन्ति, तद्यथा-नो प्राणान् अतिपातयिता भवति १, नो मृषावक्ता भवति २, तथारूपं श्रमणं वा माहनं वा प्रासुकैषणीयेन अशनपानखाद्यस्वाद्येन प्रतिलम्भयिता भवति ३, इत्येतैस्त्रिभिः स्थानैर्जीवा दीर्घायुष्कतया कर्मप्रकुर्वन्ति ॥२॥ त्रिभिः स्थानैर्जीवा अशुभदीर्घायुष्कतया कर्मप्रकुर्वन्ति, तद्यथा-प्राणान् अतिपातयिता भवति १, मृषावक्ता भवति २, तथारूपं श्रमणं वा माहनं वा हीलिता, निन्दिता, खिंसिता, गर्हिता, अपमानयिता अन्यतरेण अमनोज्ञेन अप्रीतिकारकेण

अथवा माहन को अप्रासुक एव अनेषणीय अशन, पान, खाद्य और स्वाद्यरूप आहार से प्रतिलाभित करता है। इस तरह इन तीन स्थानों से जीव अल्प आयुष्करूप से कर्म का बन्ध करता है।

इन तीन स्थानों से जीव दीर्घ आयुष्करूप से कर्म का बन्ध करता है। जैसे-जो प्राणों का विनाश करनेवाला नहीं होता है एक वह, तथा दूसरा वह जो मृषावादी नहीं होता है, तथा तीसरा वह जो तथारूप वाले श्रमण को अथवा माहण को प्रासुक एवं एषणीय अशन, पान, खाद्य और स्वाद्यरूप आहार से प्रतिलाभित करता है। इस तरह के इन तीन स्थानों से जीव दीर्घ आयुष्करूप से कर्म का बन्ध करता है२। इन तीन स्थानोंसे जीव अशुभदीर्घ आयुष्करूपसे कर्म का बन्ध करता है। जसे-जो प्राणातिपात-प्राणों का विनाशक होता है एक वह, तथा दूसरा वह जो मृषावक्ता होता है २ तथा तीसरा वह जो तथारूपवाले श्रमण

અથવા માહનને અપ્રાસુક અને અનેષણીય અશન, પાન, ખાદ્ય અને સ્વાદ્યરૂપ ચતુર્વિધ આહાર વહોરાવવાથી. આ ત્રણ સ્થાનો વડે જીવ અલ્પ આયુષ્ક રૂપે કર્મનો બંધ કરે છે.

નીચેના ત્રણ સ્થાનો (કારણો) દ્વારા જીવ દીર્ઘ આયુષ્ક રૂપે કર્મનો બંધ કરે છે-(૧) પ્રાણોનો વિનાશ નહીં કરવાથી, (૨) મૃષાવાદી નહીં બનવાથી, અને (૩) તથારૂપ શ્રમણ અને માહનને પ્રાસુક અને એષણીય અશન, પાન, ખાદ્ય અને સ્વાદ્યરૂપ આહાર વહોરાવવાથી આ ત્રણ સ્થાનોથી જીવ દીર્ઘાયુષ્ક રૂપે કર્મનો બંધ કરે છે.

નીચેના ત્રણ સ્થાનો દ્વારા જીવ અશુભ દીર્ઘ આયુષ્ક રૂપે કર્મનો બંધ કરે છે-(૧) પ્રાણોનો વિનાશ કરવાથી, (૨) મૃષાવાદી (અસત્ય બોલનાર) થવાથી અને (૩) તથારૂપવાળા શ્રમણ અને માહણની ભર્ત્સના કરવાથી,

तिहिं ठाणेहिं जीवा असुभदीहाउयत्ताए कम्म पकरेंति, तं जहा पाणं अइवाइत्ता भवइ १, मुस वइत्ता भवइ २, तहारूव समणं वा माहणं वा हीलित्ता निंदित्ता खिंसित्ता गरहित्ता अव माणित्ता अन्नयरेणं अमणुन्नेणं अपीइकारएणं असणपाणखा इमसाइमेणं पडिलाभित्ता भवइ ३, इच्चेएहिं तिहिं ठाणेहिं जीवा असुभ दीहाउयत्ताए कम्म पकरेंति ।३। तिहिं ठाणेहिं जीवा सुभदीहाउयत्ताए कम्म पकरेंति, त जहा-णो पाणे अइ वाइत्ता भवइ १, णो मुसवइत्ता भवइ २, तहारूव समणवा माहणं वा वंदित्ता नमंसित्ता सक्कारित्ता सम्माणित्ता कल्लाणं मगलं देवयं चेइयं पज्जुवासित्ता मणुन्नेणं पीइकारएण असणपाणखा इमसाइमेण पडिलाभित्ता भवइ ३, इच्चेएहिं तिहिं ठाणेहिं जीवा सुहदीहाउयत्ताए कम्म पकरेंति ।४॥ सू० ६ ॥

छाया—त्रिभिः स्थानैर्जीवा अल्पायुष्कतया कर्म प्रकुर्वन्ति, तद्यथा प्राणान् अतिपातयिता भवति १, मृषावक्ता भवति २, तथारूपं श्रमणं वा माहनं वा प्रसा

अब सूत्रकार आरम्भादि करणका और क्रियान्तर का फल दिखाते हुए सूत्रचतुष्टय (चार सूत्रों)का कथन करते हैं—

'तिहिं ठाणेहिं जीवा अप्पाउयत्ताए कम्मं पकरेंति' इत्यादि ।

सूत्रार्थ-इन तीन स्थानोंसे जीव अल्प आयुष्य आदि रूपसे कर्म का बन्ध करता है । जैसे-एक वह जो प्राणों का विनाशकर्ता होता है १, दूसरा वह जो मृषावक्ता होता है । तीसरा वह जो तथारूपवाले श्रमण को

હવે સૂત્રકાર આરંભાદિ કરણનું અને ક્રિયાન્તરનું ફલ દર્શાવતા ચાર સૂત્રોનું કથન કરે છે-' तिहिं ठाणेहिं जीवा अप्पाउयत्ताए कम्मं पकरेंति ' ઇત્યાદિ

સૂત્રાર્થ-નીચે દર્શાવેલાં ત્રણ સ્થાનો દ્વારા જીવ અલ્પ આયુષ્ય આદિ રૂપે કર્મનો બંધ કરે છે-(૧) પ્રાણોના વિનાશ કરવાથી, (૨) અસત્ય બોલવાથી અને (૩) તથારૂપ (મુહપત્તી રજોહરણ આદિ ધારણ કરનાર)શ્રમણ

सुकेन अनेषणीयेन अशनपानखाद्यस्वाद्येन प्रतिलम्भयिता भवति ३, इत्येतैस्त्रिभिः स्थानैर्जीवा अल्पायुष्कतया कर्मप्रकुर्वन्ति ॥१॥ त्रिभिः स्थानैर्जीवा दीर्घायुष्कतया कर्म प्रकुर्वन्ति, तद्यथा—नो प्राणान् अतिपातयिता भवति १, नो मृषावक्ता भवति २, तथारूपं श्रमणं वा माहनं वा प्रासुकैषणीयेन अशनपानखाद्यस्वाद्येन प्रतिलम्भयिता भवति ३, इत्येतैस्त्रिभिः स्थानैर्जीवा दीर्घायुष्कतया कर्मप्रकुर्वन्ति ॥२॥ त्रिभिः स्थानैर्जीवा अशुभदीर्घायुष्कतया कर्मप्रकुर्वन्ति, तद्यथा—प्राणान् अतिपातयिता भवति १, मृषावक्ता भवति २, तथारूपं श्रमणं वा माहनं वा हीलिता, निन्दिता, खिंसिता, गर्हिता, अपमानयिता अन्यतरेण अमनोज्ञेन अप्रीतिकारकेण

अथवा माहन को अप्रासुक एवं अनेषणीय अशन, पान, खाद्य और स्वाद्यरूप आहार से प्रतिलाभित करता है। इस तरह इन तीन स्थानों से जीव अल्प आयुष्करूप से कर्म का बन्ध करता है।

इन तीन स्थानों से जीव दीर्घ आयुष्करूप से कर्म का बन्ध करता है। जैसे—जो प्राणों का विनाश करनेवाला नहीं होता है एक वह, तथा दूसरा वह जो मृषावादी नहीं होता है, तथा तीसरा वह जो तथारूप वाले श्रमण को अथवा माहण को प्रासुक एवं एषणीय अशन, पान, खाद्य और स्वाद्यरूप आहार से प्रतिलाभित करता है। इस तरह के इन तीन स्थानों से जीव दीर्घ आयुष्करूप से कर्म का बन्ध करता है २।

इन तीन स्थानोंसे जीव अशुभदीर्घ आयुष्करूपसे कर्म का बन्ध करता है। जैसे—जो प्राणातिपात-प्राणों का विनाशक होता है एक वह, तथा दूसरा वह जो मृषावक्ता होता है २ तथा तीसरा वह जो तथारूपवाले श्रमण

અથવા માહનને અપ્રાસુક અને અનેષણીય અશન, પાન, ખાદ્ય અને સ્વાદ્યરૂપ ચતુર્વિધ આહાર વહોરાવવાથી આ ત્રણ સ્થાનો વડે જીવ અલ્પ આયુષ્ક રૂપે કર્મનો બંધ કરે છે.

નીચેના ત્રણ સ્થાનો (કારણો) દ્વારા જીવ દીર્ઘ આયુષ્ક રૂપે કર્મનો બંધ કરે છે—(૧) પ્રાણોનો વિનાશ નહીં કરવાથી, (૨) મૃષાવાદી નહીં બનવાથી, અને (૩) તથારૂપ શ્રમણ અને માહનને પ્રાસુક અને એષણીય અશન, પાન, ખાદ્ય અને સ્વાદ્યરૂપ આહાર વહોરાવવાથી. આ ત્રણ સ્થાનોથી જીવ દીર્ઘાયુષ્ક રૂપે કર્મનો બંધ કરે છે.

નીચેના ત્રણ સ્થાનો દ્વારા જીવ અશુભ દીર્ઘ આયુષ્ક રૂપે કર્મનો બંધ કરે છે—(૧) પ્રાણોનો વિનાશ કરવાથી, (૨) મૃષાવાદી (અસત્ય બોલનાર) થવાથી અને (૩) તથારૂપવાળા શ્રમણ અથવા માહણની ભર્ત્સના કરવાથી,

तिहिं ठाणेहिं जीवा असुभदीहाउयत्ताए कम्म पकरेंति, तं जहा पाण अइवाइत्ता भवइ १, मुस वइत्ता भवइ २, तहारूव समणं वा माहण वा हीलित्ता निंदित्ता खिंसित्ता गरहित्ता अव माणित्ता अन्नयरे णं अमणुन्नेणं अपीइकारएणं असणपाणखा इमसाइमेणं पडिलाभित्ता भवइ ३, इच्चेएहिं तिहिं ठाणेहिं जीवा असुम दीहाउयत्ताए कम्म पकरेंति ।३। तिहिं ठाणेहिं जीवा सुभदीहाउयत्ताए कम्म पकरेंति, त जहा-णो पाणे अइवाइत्ता भवइ १, णो मुसवइत्ता भवइ २, तहारूव समण वा माहण वा वंदित्ता नमंसित्ता सक्कारित्ता सम्माणित्ता कल्लाण मगलं देवय चेइय पज्जुवासित्ता मणुन्नेण पीइकारएण असणपाणखा इमसाइमेण पडिलाभित्ता भवइ ३, इच्चेएहिं तिहिं ठाणेहिं जीवा सुहदीहाउयत्ताए कम्म पकरेंति ।४ ॥ सू० ६ ॥

छाया—त्रिभिः स्थानैर्जीवा अल्पायुष्कतया कर्म प्रकुर्वन्ति, तद्यथा प्राणान् अतिपातयिता भवति १, मृषावक्ता भवति २, तथारूप श्रमणं वा माहनं वा अप्रा

अथ सूत्रकार आरम्भादि करणका और क्रियान्तर का फल दिखाते हुए सूत्रचतुष्टय (चार सूत्रों)का कथन करते हैं—

'तिहिं ठाणेहिं जीवा अप्पाउयत्ताए कम्मं पकरेंति' इत्यादि ।

सूत्रार्थ—इन तीन स्थानोंसे जीव अल्प आयुष्य आदि रूपसे कर्म का बन्ध करता है । जैसे—एक वह जो प्राणों का विनाशकर्त्ता होता है १, दूसरा वह जो मृषावक्ता होता है । तीसरा वह जो तथारूपवाले श्रमण को

હવે સૂત્રકાર આરંભાદિ કરવાનું અને ક્રિયાન્તરનું ફલ દર્શાવતાં ચાર સૂત્રોનું કથન કરે છે—" तिहिं ठाणेहिं जीवा अप्पाउयत्ताए कम्मं पकरेंति " ઇત્યાદિ

સૂત્રાર્થ—નીચે દર્શાવેલાં ત્રણ સ્થાનો કારણો દ્વારા જીવ અલ્પ આયુષ્ય આદિ રૂપ કર્મનો બંધ કરે છે—(૧) પ્રાણોનો વિનાશ કરવાથી, (૨) અસત્ય બોલવાથી અને (૩) તથારૂપ (સુકલ્પતી, રજોહરણ આદિ ધારણ કરનારા) શ્રમણ

सुकेन अनेषणीयेन अशनपानखाद्यस्वाद्येन प्रतिलम्भयिता भवति ३, इत्येतैस्त्रिभिः स्थानैर्जीवा अल्पायुष्कतया कर्मप्रकुर्वन्ति ॥१॥ त्रिभिः स्थानैर्जीवा दीर्घायुष्कतया कर्म प्रकुर्वन्ति, तद्यथा–नो प्राणान् अतिपातयिता भवति १, नो मृषावक्ता भवति २, तथारूपं श्रमणं वा माहनं वा प्रासुकैषणीयेन अशनपानखाद्यस्वाद्येन प्रतिलम्भयिता भवति ३, इत्येतैस्त्रिभिः स्थानैर्जीवा दीर्घायुष्कतया कर्मप्रकुर्वन्ति ॥२॥ त्रिभिः स्थानैर्जीवा अशुभदीर्घायुष्कतया कर्मप्रकुर्वन्ति, तद्यथा–प्राणान् अतिपातयिता भवति १, मृषावक्ता भवति २, तथारूपं श्रमणं वा माहनं वा हीलिता, निन्दिता, खिंसिता, गर्हिता, अपमानयिता अन्यतरेण अमनोज्ञेन अप्रीतिकारकेण

अथवा माहन को अप्रासुक एव अनेषणीय अशन, पान, खाद्य और स्वाद्यरूप आहार से प्रतिलाभित करता है। इस तरह इन तीन स्थानों से जीव अल्प आयुष्करूप से कर्म का बन्ध करता है।

इन तीन स्थानों से जीव दीर्घ आयुष्करूप से कर्म का बन्ध करता है। जैसे–जो प्राणों का विनाश करनेवाला नहीं होता है एक वह, तथा दूसरा वह जो मृषावादी नहीं होता है, तथा तीसरा वह जो तथारूप वाले श्रमण को अथवा माहण को प्रासुक एवं एषणीय अशन, पान, खाद्य और स्वाद्यरूप आहार से प्रतिलाभित करता है। इस तरह के इन तीन स्थानों से जीव दीर्घ आयुष्करूप से कर्म का बन्ध करता है २। इन तीन स्थानोंसे जीव अशुभदीर्घ आयुष्करूपसे कर्म का बन्ध करता है। जैसे–जो प्राणातिपात-प्राणों का विनाशक होता है एक वह, तथा दूसरा वह जो मृषावक्ता होता है २ तथा तीसरा वह जो तथारूपवाले श्रमण

અથવા માહનને અપ્રાસુક અને અનેષણીય અશન, પાન, ખાદ્ય અને સ્વાદ્યરૂપ ચતુર્વિધ આહાર વહોવરાવવાથી આ ત્રણ સ્થાનો વડે જીવ અલ્પ આયુષ્ક રૂપે કર્મનો બંધ કરે છે.

નીચેના ત્રણ સ્થાનો (કારણો) દ્વારા જીવ દીર્ઘ આયુષ્ક રૂપે કર્મનો બંધ કરે છે–(૧) પ્રાણોનો વિનાશ નહીં કરવાથી, (૨) મૃષાવાદી નહીં બનવાથી, અને (૩) તથારૂપ શ્રમણ અને માહનને પ્રાસુક અને એષણીય અશન, પાન, ખાદ્ય અને સ્વાદ્યરૂપ આહાર વહોરાવવાથી આ ત્રણ સ્થાનોથી જીવ દીર્ઘાયુષ્ક રૂપે કર્મનો બંધ કરે છે.

નીચેના ત્રણ સ્થાનો દ્વારા જીવ અશુભ દીર્ઘ આયુષ્ક રૂપે કર્મનો બંધ કરે છે–(૧) પ્રાણોનો વિનાશ કરવાથી, (૨) મૃષાવાદી (અસત્ય બોલનાર) થવાથી અને (૩) તથારૂપવાળા શ્રમણ અથવા માહણની ભર્ત્સના કરવાથી,

तिहिं ठाणेहिं जीवा असुभदीहाउयत्ताए कम्म पकरेंति, त जहा पाणे अइवाइत्ता भवइ १, मुस वइत्ता भवइ २, तहारूव समणं वा माहण वा हीलित्ता निंदित्ता खिंसित्ता गरहित्ता अव माणित्ता अन्नयरे णं अमणुन्नेणं अपीइकारएणं असणपाणखा इमसाइमेणं पडिलाभित्ता भवइ ३, इच्चेएहिं तिहिं ठाणेहिं जीवा असुम दीहाउयत्ताए कम्म पकरेंति ।३। तिहिं ठाणेहिं जीवा सुभदीहाउयत्ताए कम्म पकरेंति, त जहा–णो पाणे अइ वाइत्ता भवइ १, णो मुसवइत्ता भवइ २, तहारूव समण वा माहण वा वंदित्ता नमंसित्ता सक्कारित्ता सम्माणित्ता कल्लाण मगल देवय चेइय पज्जुवासित्ता मणुन्नेणं पीइकारएण असणपाणखा इमसाइमेण पडिलाभित्ता भवइ ३, इच्चेएहिं तिहिं ठाणेहिं जीवा सुहदीहाउयत्ताए कम्म पकरेंति ।४॥ सू० ६ ॥

छाया—त्रिभिः स्थानैर्जीवा अल्पायुष्कतया कर्म प्रकुर्वन्ति, तद्यथा प्राणान् अतिपातयिता भवति १, मृषावक्ता भवति २, तथारूप श्रमणं वा माहनं वा अप्रा

अब सूत्रकार आरम्भादि करणका और क्रियान्तर का फल दिखाते हुए सूत्रचतुष्टय (चार सूत्रों)का कथन करते हैं—

' तिहिं ठाणेहिं जीवा अप्पाउयत्ताए कम्मं पकरेंति' इत्यादि।

सूत्रार्थ–इन तीन स्थानोंसे जीव अल्प आयुष्य आदि रूपसे कर्म का बन्ध करता है। जैसे–एक यह जो प्राणों का विनाशकर्त्ता होता है १, दूसरा यह जो मृषावक्ता होता है। तीसरा यह जो तथारूपवाले श्रमण को

હવે સૂત્રકાર આરંભાદિ કરણનું અને ક્રિયાન્તરનું ફલ દર્શાવતાં ચાર સૂત્રોનું કથન કરે છે–" तिहिं ठाणेहिं जीवा अप्पाउयत्ताए कम्मं पकरेंति ' ઇત્યાદિ

સૂત્રાર્થ–નીચે દર્શાવેલાં ત્રણ સ્થાનો દ્વારા જીવ અલ્પ આયુષ્ય આદિ રૂપે કર્મનો બંધ કરે છે–(૧) પ્રાણીઓનો વિનાશ કરવાથી, (૨) અસત્ય બોલવાથી અને (૩) તથારૂપ (મુહપત્તી, રજોહરણ આદિ ધારણ કરનાર) શ્રમણ

टीका—'तिहिं ठाणे हिं' इत्यादि सूत्रचतुष्टयं सुगमम् ।

नवरम्—कर्म—आयुष्कादि प्रकुर्वन्ति—बध्नन्तीत्यर्थः । प्राणान्—प्राणिनः अति-पातयिता—विनाशयिता इत्यर्थः । प्रगता अपत्रः प्राणाः यस्मात्तत् प्रासुकम्—अचित्तं, तन्निषेधाद् अप्रासुक सचित्तमित्यर्थः, तेन एषणीयम्—उद्गमादिदोषर-हितं तन्निषेधाद् अनेषणीयम्—अकल्प्यमित्यर्थः, तेन प्रतिलम्भयिता—लाभवन्तं करोतीत्येवं शीलो भवति । हीलिता—जन्मकर्ममर्मोद्घाटनपूर्वकं निर्भर्त्सयिता, निन्दिता-कुत्सितशब्दपूर्वकं दोषोद्घाटनेनानादरकर्ता, खिसिता-हस्तमुखादिविकार

टीकार्थ—यहां कर्म शब्द से आयुष्कादि कर्म का ग्रहण हुआ है । जिस से प्राण प्रगत (नष्ट) हो जाते हैं । वह प्रासुक का ही दूसरा नाम अचित्त है । जो पदार्थ प्रासुक नहीं है, सचित्त है—वह अप्रासुक है । अप्रासुक होने से ही वह मुनिजनो के लिये एषणीय नहीं कहा गया है, एषणीय पदार्थ उद्गमादि दोषों से रहित होता है और जो उद्गमादि दोषों से सहित होताहै वह अनेषणीय होताहै अकल्पनीय होताहै ऐसे अप्रासुक अनेषणीय आहार से जो तथारूपधारी मुनिजन को और माहण को लाभयुक्त करनेवाला स्वभाववाला होता है, वह प्राणी अल्पायुष्क रूप से कर्म का बन्ध करता है, जन्म, कर्म, मर्म उद्घाटनपूर्वक जो निर्भर्त्सना करता है वह हीलना है, कुत्सित शब्द कहता हुआ जो दोषोद्घाटन से अनादर करता है वह निन्दना है, हस्त मुख आदिको विकृत बनाकर जो तिरस्कार करता है वह अवमन्ता है, गुरु आदि के

ટીકાર્થ—અહીં 'કર્મ' પદના પ્રયોગ દ્વારા આયુષ્કાદિ કર્મને ગ્રહણ કરવામા આવેલ છે. જેમાંથી પ્રાણ પ્રગત (નષ્ટ) થઇ ગયા હોય છે એવી વસ્તુને પ્રાસુક કહે છે. પ્રાસુકનુ જ બીજું નામ અચિત્ત છે જે પદાર્થ પ્રાસુક નથી, સચિત્ત છે—તે પદાર્થને અપ્રાસુક કહે છે એવા અપ્રાસુક પદાર્થો જ મુનિ-જનોને માટે અનેષણીય ગણાય છે જે પદાર્થ ઉદ્ગમ આદિ દોષોથી રહિત હોય છે, તે પદાર્થને એષણીય કહે છે, પરન્તુ જે પદાર્થ ઉદ્ગમ આદિ દોષોથી સહિત હોય છે, તે પદાર્થને અનેષણીય (અકલ્પ્ય) કહે છે. એવો અપ્રાસુક અને અનેષણીય આહાર તથારૂપધારી શ્રમણો અથવા માહણોને વહોરાવવાના સ્વભાવવાળો માણસ અલ્પાયુષ્ક રૂપે કર્મનો બંધ કરે છે

જન્મ, કર્મ અને મર્મના ઉદ્ઘાટન (જાહેરાત) પૂર્વક જે નિર્ભર્ત્સના (તિરસ્કાર) કરવામાં આવે છે તેનું નામ હીલના છે. કુત્સિત શબ્દોનો ઉચ્ચાર કરતાં કરતાં દોષોને પ્રકટ કરીને જે અનાદર કરવામા આવે છે તેનું નામ નિન્દા છે. હાથ, મુખ આદિને વિકૃત કરીને જે તિરસ્કાર કરવામાં આવે છે તેનુ નામ અવ-

अशनपानखाद्यस्वाद्येन प्रतिलम्भयिता भवति ३, इत्येतैस्त्रिभिः स्थानैर्जीवा अशु भदीर्घायुष्कतया कर्म प्रकुर्वन्ति ॥३॥ त्रिभिः स्थानैर्जीवाः शुभदीर्घायुष्कतया कर्मप्रकुर्वन्ति, तद्यथा-नो प्राणान् अतिपातयिता भवति १, नो मृषावक्ता भवति २, तथारूपं श्रमणं वा माहनं वा वन्दिता नमस्यिता सत्कर्ता सम्मानयिता कल्याणं मंगलं दैवतं चैत्यं पर्युपासिता मनोज्ञेन प्रीतिकारकेण अशनपानखाद्यस्वाद्येन प्रतिलम्भयिता भवति ३, इत्येतैस्त्रिभिः स्थानैर्जीवा शुभदीर्घायुष्कतया कर्म प्रकु-र्वन्ति ॥ ४ ॥ सू० ९ ॥

माहणकी भर्त्सना करता है, निन्दा करता है, अपमान करता है-तिरस्कार करता है। धिक्कार आदि शब्दपूर्वक उनका अनादर करता है और जो उनको किसी एक अमनोज्ञ, अप्रीतिकारक ऐसे अशन, पान, खाद्य एवं स्वाद्यरूप आहारसे प्रतिलाभित करता है। इस प्रकारसे इन तीन स्थानों से जीव अशुभदीर्घ आयुष्करूप से कर्म का बन्ध करता है। इन तीन स्थानों से जीव शुभ दीर्घायुष्करूप से कर्म का बन्ध करता है। जैसे एक वह जो प्राणों का विनाशक नहीं होता है। दूसरा वह जो मृषावादी नहीं होता है २, तथा तीसरा वह जो तथा रूपवाले श्रमण को तथा माहण को वन्दना करनेवाला होता है, उन्हें नमस्कार करनेवाला होता है, उनका सत्कार करनेवाला होता है, उनका सन्मान करनेवाला होता है तथा उन्हें कल्याणरूप, मङ्गलरूप, देवरूप एवं ज्ञानरूप मानकर उनकी सविधि सेवा करनेवाला होता है, और उन्हें मनोज्ञ-प्रीतिकारक अशन आदिरूप चारों प्रकारके आहारसे प्रतिलाभित करता है। ऐसा जीव शुभ दीर्घ आयुष्करूप से कर्मका बन्ध करता है।

નિન્દા કરવાથી, અપમાન કરવાથી, તિરસ્કાર કરવાથી ધિક્કાર આદિ શબ્દ પૂર્વક તેમનો અનાદર કરવાથી, અને તેમને અમનોજ્ઞ અપ્રીતિકારક અશન, પાન, ખાદ્ય અને સ્વાદ્યરૂપ આહાર વહોરાવવાથી. આ પ્રકારના ત્રણ સ્થાનોનુ સેવન કરીને જીવ અશુભ દીર્ઘ આયુષ્ક રૂપે કર્મનો બંધ કરે છે

નીચે દર્શાવેલાં ત્રણ સ્થાનો દ્વારા જીવ શુભ દીર્ઘાયુષ્ક રૂપે કર્મનો બંધ કરે છે-(૧) પ્રાણીનો વિનાશ નહીં કરવાથી, (૨) મૃષાવાદી નહીં હોવાથી અને (૩) તથારૂપ શ્રમણ અને માહણને વંદણા કરીને, નમસ્કાર કરીને, તેમનો સત્કાર કરીને, તેમનુ સન્માન કરીને તેમને કલ્યાણરૂપ, મંગલરૂપ, દેવરૂપ અને જ્ઞાનરૂપ ગણીને તેમની વિધિસહિત સેવા કરવાથી, અને તેમને મનોજ્ઞ પ્રીતિકારક અશન, પાન ખાદ્ય અને સ્વાદ્યરૂપ આહાર વહોરાવવાથી. એવો જીવ શુભ દીર્ઘ આયુષ્ક રૂપે કર્મનો બંધ કરે છે

टीका—' तिहिं ठाणे हिं ' इत्यादि सूत्रचतुष्टयं सुगमम् ।

नवरम्—कर्म—आयुष्कादि प्रकुर्वन्ति—बध्नतीत्यर्थः । प्राणान्—प्राणिनः अतिपातयिता—विनाशयिता इत्यर्थः । प्रगता असवः प्राणाः यस्मात्तत् प्रासुकम्—अचित्तं, तन्निषेधाद् अप्रासुकं सचित्तमित्यर्थः, तेन एषणीयम्—उद्गमादिदोषरहितं तन्निषेधाद् अनेषणीयम्—अकल्प्यमित्यर्थः, तेन प्रतिलम्भयिता—लाभवन्तं करोतीत्येवं शीलो भवति । हीलिता—जन्मकर्ममर्मोद्घाटनपूर्वकं निर्भर्त्सयिता, निन्दिता-कुत्सितशब्दपूर्वकं दोषोद्घाटनेनानादरकर्ता, खिंसिता-हस्तमुखादिविकार

टीकार्थ—यहां कर्म शब्द से आयुष्कादि कर्म का ग्रहण हुआ है । जिस से प्राण प्रगत (नष्ट) हो जाते हैं । वह प्रासुकका ही दूसरा नाम अचित्त है । जो पदार्थ प्रासुक नहीं है, सचित्त है—वह अप्रासुक है । अप्रासुक होने से ही वह मुनिजनो के लिये एषणीय नहीं कहा गया है, एषणीय पदार्थ उद्गमादि दोषों से रहित होता है और जो उद्गमादि दोषों से सहित होताहै वह अनेषणीय होताहै अकल्पनीय होताहै ऐसे अप्रासुक अनेषणीय आहार से जो तथारूपधारी मुनिजन को और माहण को लाभयुक्त करनेवाला स्वभाववाला होता है, वह प्राणी अल्पायुष्क रूप से कर्म का बन्ध करता है, जन्म, कर्म, मर्म उद्घाटनपूर्वक जो निर्भर्त्सना करता है वह हीलना है, कुत्सित शब्द कहता हुआ जो दोषोद्घाटन से अनादर करता है वह निन्दना है, हस्त मुख आदिको विकृत बनाकर जो तिरस्कार करता है वह अवमन्ता है, गुरु आदि के

ટીકાર્થ—અહીં ' કર્મ ' પદના પ્રયોગ દ્વારા આયુષ્કાદિ કર્મને ગ્રહણ કરવામાં આવેલ છે જેમાંથી પ્રાણ પ્રગત (નષ્ટ) થઇ ગયા હોય છે એવી વસ્તુને પ્રાસુક કહે છે. પ્રાસુકનુ જ બીજું નામ અચિત્ત છે. જે પદાર્થ પ્રાસુક નથી, સચિત્ત છે—તે પદાર્થને અપ્રાસુક કહે છે એવા અપ્રાસુક પદાર્થો જ મુનિજનોને માટે અનેષણીય ગણાય છે જે પદાર્થ ઉદ્ગમ આદિ દોષોથી રહિત હોય છે, તે પદાર્થને એષણીય કહે છે, પરન્તુ જે પદાર્થ ઉદ્ગમ આદિ દોષોથી સહિત હોય છે, તે પદાર્થને અનેષણીય (અકલ્પ્ય) કહે છે એવા અપ્રાસુક અને અનેષણીય આહાર તથારૂપધારી શ્રમણો અથવા માહણોને વહોરાવવાના સ્વભાવવાળો માણસ અલ્પાયુષ્ક રૂપે કર્મનો બંધ કરે છે

જન્મ, કર્મ અને મર્મના ઉદ્ઘાટન (જાહેરાત) પૂર્વક જે નિર્ભત્સના (તિરસ્કાર) કરવામાં આવે છે તેનું નામ હીલના છે. કુત્સિત શબ્દોનો ઉચ્ચાર કરતાં કરતાં દોષોને પ્રકટ કરીને જે અનાદર કરવામા આવે છે તેનું નામ નિન્દા છે. હાથ, મુખ આદિને વિકૃત કરીને જે તિરસ્કાર કરવામાં આવે છે તેનું નામ અવ-

पूर्वकमवमन्ता, गर्हिता-गुर्वादिसमक्ष दोषाविष्करणपूर्वकं तिरस्कर्ता, अवमानयिता-धिक्कारादि-शब्दपूर्वकमपमानकर्ता। अमनोज्ञेन-स्वरूपतोऽशोभनेन मोक्तुमयोग्येन कदशनादिना, अप्रीतिकारकेण अरुचिजनकेन विरसेन रसवर्जितेन प्रतिलम्भका जीवाः(दायकाः)अशुभदीर्घायुष्कतया कर्म प्रकुर्वन्तीति सम्बन्धः। वन्दिता वाचा स्तुतिकर्ता, नमस्यिता कायेन नम्रीभूतः, सत्कर्ता अभ्युत्थानादिनाऽऽदरकर्ता, सम्मानयिता-वस्त्रभक्तादिदानेन मानदाता। कल्याण-कल्यो-मोक्षः कर्मजनितसकलोपाधिरहितत्वात्, तम् आ-समन्तात् नयति-प्रापयति, अथवा-कल्यम् ज्ञानदर्शन-चारित्र-

समक्ष दूसरों के दोषों को जो प्रकट करता है वह तिरस्कर्ता है, धिक्कार आदि शब्दोच्चारणपूर्वक जो अपमान करता है वह अवमानयिता है, अमनोज्ञ शब्द से ऐसा आहार यहां सूचित किया गया है जो अशोभन हो, खाने के योग्य न हो, ऐसे अरुचिजनक विरस आहार से जो उन्हें प्रतिलाभित करता है, ऐसा जीव अशुभदीर्घ आयुष्करूप कर्म का बन्ध करता है। तथा वचन से स्तुति करनेवाला जीव वन्दिता कहा गया है। काय से नम्रीभूत होनेवाला जीव नमस्यिता कहा गया है अभ्युत्थान आदि क्रियाओं द्वारा आदर करनेवाला जीव सत्कर्ता कहा गया है, वस्त्र और भोजन आदि देने द्वारा मान देनेवाला जीव सम्मानयिता कहा गया है, "कल्यं नयति इति कल्याणम्" इस व्युत्पत्ति के अनुसार जो कर्मजनित सकल उपाधिरहित होने से मोक्ष की ओर जो अपने आपको और अन्य प्राणियों को ले जाता है वह कल्याण है।

मन्ता (અપમાન કરનાર) છે ગુરુ આદિની સમક્ષ અન્યના દોષોને જે પ્રકટ કરવામાં આવે છે તેનું નામ તિરસ્કાર છે ધિક્કાર આદિ શબ્દોચ્ચારણપૂર્વક જે અપમાન કરવામાં આવે છે તેનું નામ અવમાનયિતા છે અમનોજ્ઞ આહાર એટલે અશોભન આહાર અથવા ખાવાને યોગ્ય ન હોય એવો આહાર અરુચિજનક આહાર એટલે વિરસ આહાર જે જીવ સાધુજનોને આ પ્રકારનો અમનોજ્ઞ અને અરુચિકર આહાર વહોરાવે છે, તે જીવ અશુભ દીર્ઘ આયુષ રૂપ કર્મનો બંધ કરે છે વચનથી સ્તુતિ કરનાર જીવને વન્દનકર્તા કહે છે કાયાથી નમન કરનાર જીવને નમસ્યિતા (નમન કરનારો) કહે છે અભ્યુત્થાન આદિ ક્રિયાઓ દ્વારા આદર કરનાર જીવને સત્કર્તા (સત્કાર કરનારો) કહ્યો છે વસ્ત્ર અને ભોજન આદિ દ્વારા માન દેનાર જીવને સમ્માનયિતા (સન્માન કરનારો) કહે છે "કલ્યં નયતિ ઇતિ કલ્યાણમ્" આ વ્યુત્પત્તિ અનુસાર જે કર્મજનિત સકળ ઉપાધિથી રહિત હોવાથી પોતાને તથા અન્ય ભવ્યજીવોને મોક્ષની તરફ દોરી જાય છે, તે કલ્યાણરૂપ છે

लक्षणेनाऽऽरोग्येण आणयति-जीवयति संसारमोहज्वालानलज्वालावलीढान् मूढान् प्राणिनः प्रशमयतीति वा तं तथोक्तम्-मोक्षदायकमित्यर्थः, मङ्गल-मं-भवसम्बन्धि वन्धनं, तन्निबन्धनं दुःख वा गालयति-नाशयतीति तं तथोक्तम्, यद्वा-मङ्गयते-प्राप्यते स्वर्गो मोक्षो वाऽनेनेति मङ्गः-धर्मः, तं लाति-गृह्णातीति वा, तं तथोक्तं भव-भयभञ्जकमित्यर्थः दैवत-देवमेव दैवतं धर्मदेवमित्यर्थः, चैत्यम्-चितिः-सम्यग्ज्ञानं, तदेव चैत्यं-ज्ञानस्वरूपं सम्यग्ज्ञानवन्तमित्यर्थः पर्युपासिता-सविधिसेविता भवति। तथा-मनोज्ञेन प्रीतिकारकेणाशनादिना प्रतिलम्भका जीवाः शुभदीर्घायुष्कतया कर्म प्रकुर्वन्तीति सम्बन्धः ॥ सू० ६ ॥

अथवा "कल्येन आणयति" इति कल्याणं इस व्युत्पत्ति के अनुसार जो संसार के प्रति मोहशाली हुए जीवों को मोहरूप अग्नि की ज्वाला से अत्यन्त दग्ध हुए मूढ प्राणियों को शान्त करता है। उस ज्वालाकी वेदना से रहित करनेका मार्ग बताता है-अर्थात् मोक्षदायक उपदेश को जो उन्हे देता है-इस तरह से जो उन्हे सच्चे जीवन की ओर प्रेरित करता है-सच्चे जीवनसे जानेकी जो उन्हें शिक्षा देता है वह कल्याण है। मङ्गल में जो "मं" है वह इस बातका बोधक है कि जो भवका वन्ध करानेवाला कर्म है उसे अथवा वह कर्म जो दुःख का कारण है उस दुःख को जो नष्ट करता है वह मङ्गल है। अथवा-"मङ्गयते प्राप्यते स्वर्गो मोक्षो वा अनेन इति मङ्गः" जिसके द्वारा स्वर्ग अथवा मोक्ष प्राप्त किया जाता है वह मङ्ग है ऐसा वह मङ्ग धर्मरूप है इस मङ्गरूप धर्म को जो ग्रहण करता है वह मङ्गल है अर्थात् भवके भय का जो

અથવા—"कल्येन आणयति इति कल्याण" આ વ્યુત્પત્તિ અનુસાર જે સંસારના મોહમાં ડૂબેલા જીવોને-મોહરૂપી અગ્નિની જ્વાળાથી અત્યન્ત દગ્ધ થયેલા મૂઢ જીવોને તે જ્વાલાની વેદનાથી રહિત થવાનો માર્ગ બતાવે છે, એટલે કે જે તેમને મોક્ષદાયક ઉપદેશ દે છે અને આ રીતે જે તેમને સાચું જીવન જીવવાની પ્રેરણા આપે છે-સાચું જીવન જીવવાની જે તેમને શિક્ષા આપે છે, તે સાધુજનોને કલ્યાણરૂપ કહેવામાં આવે છે. હવે મંગળ શબ્દનો અર્થ સમજાવવામાં આવે છે-ભવનો બંધ કરાવનાર કર્મને નાશ કરનારને અથવા તે કર્મ જે દુઃખનું કારણ છે તે દુઃખનો નાશ કરનારને મંગળરૂપ કહે છે "मङ्गयते प्राप्यते स्वर्गो मोक्षो वा अनेन इति मङ्ग." જેના દ્વારા સ્વર્ગ અથવા મોક્ષની પ્રાપ્તિ થાય છે તેને 'મઙ્ગ' કહે છે. એવું તે મઙ્ગ ધર્મરૂપ છે. આ મઙ્ગરૂપ ધર્મને જે ગ્રહણ કરે છે તે મંગલ છે. એટલે કે ભવના ભયનો જે ભંજક છે તેને મંગલ કહે છે. ધર્મદેવનું

पूर्वकमवमन्ता, गर्हिता-गुर्वादिसमक्षं दोषाविष्करणपूर्वकं तिरस्कर्ता, अपमानयिता-धिक्कारादिशब्दपूर्वकमपमानकर्ता। अमनोज्ञेन-स्वरूपतोऽशोभनेन भोक्तुमयोग्येन वा भक्तादिना, अप्रीतिकारकेण अरुचिजनकेन विरसेन रसवर्जितेन प्रतिलम्भका जीवा(दायका)अशुभदीर्घायुष्कतया कर्म प्रकुर्वन्तीति सम्बन्धः। वन्दिता वाचा स्तुतिकर्ता, नमस्यिता कायेन नम्रीभूतः, सत्कर्ता अभ्युत्थानादिनाऽऽदरकर्ता, सम्मानयिता-वस्त्रभक्तादिदानेन मानदाता। कल्याण-कल्यो-मोक्षः कर्मजनितसकलोपाधिरहितत्वात्, तम् आ-समन्तात् नयति-प्रापयति, अथवा-कल्यम् ज्ञानदर्शन-चारित्र

समक्ष दूसरों के दोषों को जो प्रकट करता है वह तिरस्कर्ता है, धिक्कार आदि शब्दोच्चारणपूर्वक जो अपमान करता है वह अपमानयिता है, अमनोज्ञ शब्द से ऐसा आहार यहां सूचित किया गया है जो अशोभन हो, खाने के योग्य न हो, ऐसे अरुचिजनक विरस आहार से जो उन्हें प्रतिलाभान्वित करता है, ऐसा जीव अशुभदीर्घ आयुष्करूप कर्म का बन्ध करता है। तथा वचन से स्तुति करनेवाला जीव वन्दिता कहा गया है। काय से नम्रीभूत होनेवाला जीव नमस्यिता कहा गया है अभ्युत्थान आदि क्रियाओं द्वारा आदर करनेवाला जीव सत्कर्ता कहा गया है, वस्त्र और भोजन आदि देने द्वारा मान देनेवाला जीव सम्मानयिता कहा गया है, " कल्यं नयति इति कल्याणम् " इस व्युत्पत्ति के अनुसार जो कर्मजनित सकल उपाधिरहित होने से मोक्ष की ओर जो अपने आपको और अन्य प्राणियों को ले जाता है वह कल्याण है।

મન્તા (અપમાન કરનાર) છે ગુરુ આદિની સમક્ષ અન્યના દોષોને જે પ્રકટ કરવામાં આવે છે તેનું નામ તિરસ્કાર છે ધિક્કાર આદિ શબ્દોચ્ચારણપૂર્વક જે અપમાન કરવામાં આવે છે તેનું નામ અપમાનયિતા છે અમનોજ્ઞ આહાર એટલે અશોભન આહાર અથવા ખાવાને યોગ્ય ન હોય એવો આહાર અરુચિજનક આહાર એટલે વિરસ આહાર જે જીવ સાધુજનોને આ પ્રકારનો અમનોજ્ઞ અને અરુચિકર આહાર વહોરાવે છે તે જીવ અશુભ દીર્ઘ આયુષ રૂપ કર્મનો બંધ કરે છે વચનથી સ્તુતિ કરનાર જીવને વન્દનકર્તા કહે છે કાયાથી નમન કરનાર જીવને નમસ્યિતા (નમન કરનારો) કહે છે અભ્યુત્થાન આદિ ક્રિયાઓ દ્વારા આદર કરનાર જીવને સત્કર્તા (સત્કાર કરનારો) કહ્યો છે. વસ્ત્ર અને ભોજન આદિ દ્વારા માન દેનાર જીવને સન્માનયિતા (સન્માન કરનારો) કહે છે ' કલ્યં નયતિ ઇતિ કલ્યાણમ્ " આ વ્યુત્પત્તિ અનુસાર જે કર્મજનિત સકળ ઉપાધિથી રહિત હોવાથી પોતાને તથા અન્ય ભવ્યજીવોને મોક્ષની તરફ દોરી જાય છે, તે કલ્યાણરૂપ છે

लक्षणेनाऽऽरोग्येण आणयति-जीवयति संसारमोहज्वालानलज्वालावलीढान् मूढान् प्राणिनः प्रशमयतीति वा तं तथोक्तम्-मोक्षदायकमित्यर्थः, मङ्गल-मं-भवसम्बन्धि बन्धनं, तन्निबन्धनं दुःख वा गालयति-नाशयतीति तं तथोक्तम्, यद्वा-मङ्ग्यते-प्राप्यते स्वर्गो मोक्षो वाऽनेनेति मङ्गः-धर्मः, तं लाति-गृह्णातीति वा, तं तथोक्तं भव-भयभञ्जकमित्यर्थः दैवत-देवतैव दैवतं धर्मदेवमित्यर्थः, चैत्यम्-चितिः-सम्यग्ज्ञानं, तदेव चैत्यं-ज्ञानस्वरूपं सम्यग्ज्ञानवन्तमित्यर्थः पर्युपास्य-सविधिसेवित। भवति। तथा-मनोज्ञेन प्रीतिकारकेणाशनादिना प्रतिलम्भका जीवाः शुभदीर्घायुष्कतया कर्म प्रकुर्वन्तीति सम्बन्धः ॥ सू० ६ ॥

अथवा " कल्येन आणयति " इति कल्याणं इस व्युत्पत्ति के अनुसार जो संसार के प्रति मोहशाली हुए जीवों को मोहरूप अग्नि की ज्वाला से अत्यन्त दग्ध हुए मूढ प्राणियों को शान्त करता है। उस ज्वालाकी वेदना से रहित करनेका मार्ग बताता है-अर्थात् मोक्षदायक उपदेश को जो उन्हे देता है-इस तरह से जो उन्हें सच्चे जीवन की ओर प्रेरित करता है-सच्चे जीवनसे जानेकी जो उन्हें शिक्षा देता है वह कल्याण है। मङ्गल में जो " मं" है वह इस बातका बोधक है कि जो भवका बन्ध करानेवाला कर्म है उसे अथवा वह कर्म जो दुःख का कारण है उस दुःख को जो नष्ट करता है वह मङ्गल है। अथवा-" मङ्ग्यते प्राप्यते स्वर्गो मोक्षो वा अनेन इति मङ्गः " जिसके द्वारा स्वर्ग अथवा मोक्ष प्राप्त किया जाता है वह मङ्ग है ऐसा वह मङ्ग धर्मरूप है इस मङ्गरूप धर्म को जो ग्रहण करता है वह मङ्गल है अर्थात् भवके भय का जो

અથવા—" कल्येन आणयति इति कल्याण " આ વ્યુત્પત્તિ અનુસાર જે સંસારના મોહમાં ડૂબેલા જીવોને-મોહરૂપી અગ્નિની જ્વાળાથી અત્યન્ત દગ્ધ થયેલા મૂઢ જીવોને તે જ્વાલાની વેદનાથી રહિત થવાનો માર્ગ બતાવે છે, એટલે કે જે તેમને મોક્ષદાયક ઉપદેશ દે છે અને આ રીતે જે તેમને સાચું જીવન જીવવાની પ્રેરણા આપે છે-સાચું જીવન જીવવાની જે તેમને શિક્ષા આપે છે, તે સાધુજનોને કલ્યાણરૂપ કહેવામાં આવે છે હવે મંગળ શબ્દનો અર્થ સમજાવવામા આવે છે-ભવનો બંધ કરાવનાર કર્મને નાશ કરનારને અથવા તે કર્મ જે દુઃખનું કારણ છે તે દુઃખનો નાશ કરનારને મંગળરૂપ કહે છે " मङ्ग्यते प्राप्यते स्वर्गो मोक्षो वा अनेन इति मङ्ग " જેના દ્વારા સ્વર્ગ અથવા મોક્ષની પ્રાપ્તિ થાય છે તેને 'મङ્ગ' કહે છે. એવું તે મङ्ग ધર્મરૂપ છે. આ મङ્ગરૂપ ધર્મને જે ગ્રહણ કરે છે તે મંગલ છે. એટલે કે ભવના ભયનો જે ભંજક છે તેને મંગલ કહે છે. ધર્મદેવનું

प्राणातिपातादि निषेधस्य गुप्तिसद्भावे भवतीति गुप्तिप्ररूपणां तत्सम्बन्धा दण्डप्ररूपणां चाह —

मूलम्--तओ गुत्तीओ पण्णत्ताओ, तं जहा मणगुत्ती वइगुत्ती कायगुत्ती। संजयमणुस्साणं तओ गुत्तीओ पण्णत्ताओ, तं जहा-मणगुत्ती वइगुत्ती कायगुत्ती। तओ अगुत्तीओ पण्णत्ताओ तं जहा-मण अगुत्ती वइ अगुत्ती काय अगुत्ती। एवं नेरइयाणं जाव थणियकुमाराणं, पचिंदियतिरिक्खजोणियाणं, असंजतमणुस्साणं, वाणमंतराणं, जोइसियाणं, वेमाणियाणं॥ तओ दंडा पण्णत्ता, तं जहा-मणदंडे वइदंडे कायदंडे। नेरइयाणं तओ दंडा पण्णत्ता, तं जहा--मणदंडे वइदंडे कायदंडे, विगलिंदियवज्जं जाव वेमाणियाणं ॥ सू० ७ ॥

छाया-तिस्रो गुप्तयः प्रज्ञप्ताः, तद्यथा-मनोगुप्तिः, वाग्गुप्तिः, कायगुप्तिः। संयतमनुष्याणां तिस्रो गुप्तयः प्रज्ञप्ताः, तद्यथा-मनोगुप्तिः, वाग्गुप्तिः कायगुप्तिः। तिस्रो ऽगुप्तयः प्रज्ञप्ताः, तद्यथा-मनोऽगुप्तिः वागगुप्तिः, कायागुप्तिः। एवं नैरयिकाणां यावत्स्तनित कुमाराणां पञ्चेन्द्रियतिर्यग्योनिकानाम्, असंयतमनुष्याणां, वानव्यन्तराणां, ज्योतिष्काणां, वैमानिकानाम्। त्रयोदण्डाः प्रज्ञप्ताः, तद्यथा-मनोदण्डः, वाग्दण्डः, कायदण्डः। नैरयिकाणां त्रयो दण्डाः प्रज्ञप्ताः, तद्यथा-मनोदण्डः, वाग्दण्डः, कायदण्डः। विकलेन्द्रियवर्जं यावत् वैमानिकानाम् ॥ सू० ७ ॥

भजक है यह मङ्गल हैं धर्मदेव का नाम दैवत हैं, "चैत्य" यह पद "चिती संज्ञाने" धातु से बना है इसका अर्थ सम्यक् ज्ञान से जो युक्त होता है वह है ॥ सू०६ ॥

प्राणातिपात आदिका निषेध गुप्तिके सद्भावमें होता है, इस कारण अब सूत्रकार गुप्तिकी प्ररूपणा और उसके सम्बन्ध से दण्डकी प्ररूपणा करते हैं-' तओ गुत्तीओ पण्णत्ताओ ' इत्यादि ।

નામ દૈવત છે "ચૈત્ય" ચૈત્ય પદ "ચિતી સંજ્ઞાને" ધાતુમાંથી બન્યું છે જે સમ્યક્ જ્ઞાનથી યુક્ત હોય છે તેને જ ચૈત્યરૂપ માનવામાં આવે છે સૂ. ૬

ગુપ્તિના સદ્ભાવમાંજ પ્રાણાતિપાત આદિનો નિષેધ સંભવી શકે છે તે કારણે હવે સૂત્રકાર ગુપ્તિની પ્રરૂપણા કરે છે અને ત્યારબાદ તેનાથી વિપરીત એવા દંડની પ્રરૂપણા કરે છે—" તઓ ગુત્તીઓ પણ્ણત્તાઓ " ઇત્યાદિ—

टीका —' तओ गुत्तीओ ' इत्यादि सुगम, नवरं-गोपन गुप्तिः आगन्तुक-पापकचवरनिरोधः, अशुभयोगनिरोधो वा मनोवाकायानां कुशलत्वेन प्रवर्त्तन-मकुशलत्वेन च निवर्त्तनमिति भावः। एतास्तिस्रोगुप्तयः केषां भवन्तीत्याह—

टीकार्थ–गुप्तियां तीन कही गईहैं। मनोगुप्ति, वचनगुप्ति, और कायगुप्ति, संयत मनुष्यों के ये तीनों गुप्तियां होती हैं। अगुप्तियां भी तीन कही गई हैं। एक मनो अगुप्ति, दूसरी वचन अगुप्ति और तीसरी काय अगुप्ति, नैरयिक से लेकर यावत् स्तनित कुमार तक तथा पंचेन्द्रिय तिर्यञ्च, असंयत मनुष्य, वानव्यन्तर, ज्योतिषिक और वैमानिक इन सब के ये तीन अगुप्तियां होती हैं।

दण्ड तीन कहे गये हैं, एक मनोदण्ड, दूसरा वचोदण्ड और तीसरा कायदण्ड, नैरयिकों के तीन दण्ड कहे गये हैं। मनदण्ड, वचन दण्ड, और कायदण्ड, इसी तरह का कथन विकलेन्द्रियों को छोडकर यावत् वैमानिकों तक जानना चाहिये। गोपन का नाम गुप्ति है अर्थात् आगन्तुक पापरूप कचवर–(कचरा) का निरोध करना इसका नाम गुप्ति है। या कुशल मन वचन और काय का प्रवर्तन करना और अकु-शलता की ओर से उन्हे हटाना इसका नाम गुप्ति है। तात्पर्य इस कथन का ऐसा है कि मन, वचन काय की क्रिया तथा योग का सभी तरहसे निग्रह करना गुप्ति नहीं है, किन्तु प्रशस्त निग्रह ही गुप्ति है, प्रशस्त

ટીકાર્થ–ગુપ્તિયો ત્રણ પ્રકારની કહી છે–(૧) મનોગુપ્તિ, વચનગુપ્તિ અને (૩) કાયગુપ્તિ. સંયત મનુષ્યોમાં આ ત્રણે ગુપ્તિયોનો સદ્ભાવ હોય છે અગુપ્તિના પણ ત્રણ પ્રકાર છે–(૧) મનઃ અગુપ્તિ (૨) વચન અગુપ્તિ અને (૩) કાય અગુપ્તિ. નારકોથી લઇને સ્તનિતકુમારો પર્યન્તના જીવોમાં, પચેન્દ્રિય તિર્ય-ચોમાં અસંયત મનુષ્યોમાં, વાનવ્યન્તરોમાં, જ્યોતિષ્ક દેવોમાં અને વૈમાનિક દેવોમાં આ ત્રણ અગુપ્તિયોનો સદ્ભાવ હોય છે

દંડના પણ ત્રણ પ્રકાર કહ્યા છે–(૧) મનોદંડ, (૨) વચોદંડ (વાગ્દંડ) અને (૩) કાયદંડ નારકોમાં આ ત્રણે દંડનો સદ્ભાવ કહ્યો છે વિકલેન્દ્રિયો સિવાયના બાકીના વૈમાનિક પર્યન્તના સમસ્ત જીવોમાં પણ ત્રણે દંડનો સદ્ભાવ હોય છે ગોપનનુ નામ ગુપ્તિ છે એટલે કે આગન્તુક પાપરૂપ કચરાનો નિરોધ કરવો તેનુ નામ ગુપ્તિ છે અથવા અશુભ યોગનો નિરોધ કરવો તેનુ નામ ગુપ્તિ છે અથવા કુશલ મન, વચન, કાયનુ પ્રવર્તન કરવું અને અકુશલ-તાથી તેમને દૂર રાખવા તેનુ નામ ગુપ્તિ છે આ કથનનું તાત્પર્ય એ છે કે મન, વચન અને કાયાની ક્રિયા તથા યોગનો સંપૂર્ણપણે નિરોધ (નિગ્રહ) કરવો તેનુ નામ ગુપ્તિ નથી, પણ પ્રશસ્ત નિગ્રહનુ નામ જ ગુપ્તિ છે.

'संजयमणुस्साण' इत्यादि, एतामगुप्तिं प्रतिदण्डके चिन्त्यमानाः संयतमनुष्याणां संयतानां-विरतिमतां मनुष्याणां भवन्ति, नान्येषां, नापि नारकादीनामिति। उक्ता गुप्तयः, अथतद्विपक्षभूता अगुप्तीराह—'तओ अगुत्तीओ' इत्यादि सुगमं, नवरं विशेषत एतेषां चतुर्विंशति दण्डकऽविशेषमाह-' एवं ' इत्यादि, एव-सामान्य सूत्रवन्नारकादीनां सूत्रोक्तानां वैमानिकपर्यन्तानां तिस्रोऽगुप्तयो वाच्या इहैकेन्द्रियविकलेन्द्रिया नोक्ताः, तेषां वाङ्मनसयोर्यथायोगमसम्भवात्। संयतमनुष्या अपि न गृहीता गुप्तिमत्त्वात्तेषामिति। अगुप्तयश्च स्वपरेषां दण्ड

निग्रह का अर्थ है सोच समझकर तथा श्रद्धापूर्वक स्वीकार किया गया अर्थात् बुद्धि और अनुज्ञापूर्वक, मन, वचन और काय को उन्मार्ग से रोकना और सन्मार्ग में लगाना ये तीन गुप्तियां किनके होती हैं? यही "संजयमणुस्साण" इत्यादि सूत्रद्वारा समझाया गया है। जो संयमी हैं विरति से युक्त हैं ऐसे मनुष्यों के ही ये तीन गुप्तियां होती हैं। अविरतियालों के तथा नारकादिकों के नहीं होती हैं, इन गुप्तियों की विपक्षभूत जो अगुप्तियां हैं वे भी तीन ही प्रकार की होती हैं, ये तीन अगुप्तियां नारक से लेकर वैमानिक तक के जीवों में होती हैं, क्योंकि वहां विरति होने का अभाव है इस कथन में एकेन्द्रिय और विकलेन्द्रियों को ग्रहण नहीं किया गया है क्यों कि एकेन्द्रिय जीवों के मन और वचन नहीं होते हैं तथा विकलेन्द्रियों के मन नहीं होता है। जीव को दण्ड उसका अपराधी बनना पड़े इसका नाम दण्ड

પ્રશસ્ત નિગ્રહનો અર્થ આ પ્રમાણે છે-વિચાર સમજીને અને શ્રદ્ધા પૂર્વક મન, વચન અને કાયને ઉન્માર્ગે જતાં રોકવા અને સન્માર્ગે વાળવા તેનું નામ જ પ્રશસ્ત નિગ્રહ છે "સંજયમણુસ્સાણં" ઇત્યાદિ સૂત્રમાં એ પ્રકટ કરવામાં આવ્યું છે કે એ ત્રણ ગુપ્તિઓનો સદ્ભાવ સંયમી (વિરતિયુક્ત) મનુષ્યોમાં જ હોય છે. અવિરતિયુક્ત મનુષ્યોમાં તથા નારકાદિકોમાં તેમનો સદ્ભાવ હોતો નથી. આ ગુપ્તિઓની વિપક્ષભૂત અગુપ્તિઓ પણ ત્રણ પ્રકારની જ કહી છે. નારકોથી લઈને વૈમાનિક પર્યન્તના જીવોમાં આ ત્રણે અગુપ્તિઓનો સદ્ભાવ હોય છે. કારણ કે તે જીવોમાં વિરતિ સંભવી શકતી નથી. પરન્તુ આ કથન એકેન્દ્રિય અને વિકલેન્દ્રિય જીવોને લાગુ પડતું નથી. કારણ કે એકેન્દ્રિય જીવોમાં મન અને વચનનો અભાવ હોય છે તથા વિકલેન્દ્રિયોમાં મનનો અભાવ હોય છે. જેને કારણે જીવને અપરાધી બનવું પડે છે, તેના ત્રણ પ્રકાર ઉદાર બતાવવામાં આવ્યા છે. એકેન્દ્રિય અને વિક

नानि भवन्तीति दण्डन्निरूपयति-'तओ दंडा' इत्यादि सुगमं, नवरं मनसा स्वपरेषां दण्डनं मनोदण्डः। यद्वा-दण्डयतेऽनेनेति दण्डः, मन एव दण्डो मनोदण्ड इति। एवमितरावपि। चतुर्विंशति दण्डकेषु नारकादारभ्य विकलेन्द्रियवर्जमिति एकद्वित्रिचतुरिन्द्रियान् वर्जयित्वेत्यर्थः। वैमानिकपर्यन्तानां त्रयोदण्डावाच्याः। विकलेन्द्रियाणां हि दण्डत्रयं न संभवति, तेषां वाङ्मनसोर्यथायोगमभावादिति ॥ सू० ७ ॥

दण्डश्च गर्हणीयो भवतीति गर्हा, तत्सम्बन्धात् प्रत्याख्यानं च सूत्रचतुष्टयेनाह —

मूलम्-तिविहा गरिहा पण्णत्ता, तं जहा-मणसा वेगे गरिहइ, वयसा वेगे गरिहइ, कायसा वेगे गरिहइ, पावाणं कम्माणं अकरणयाए ॥१॥ अहवा गरिहा तिविहा पण्णत्ता, तं जहा-दीहं पेगे अद्धं गरिहइ, रहस्सं पेगे अद्धं गरिहइ, कायं पेगे पडिसाहरइ, पावाणं कम्माणं अकरणयाए।२। तिविहे पच्चक्खाणे पण्णत्ते, तं जहा मणसा वेगे पच्चक्खाइ, वयसा वेगे पच्चक्खाइ, कायसा वेगे पच्चक्खाइ।१। एवं जहा गरहा तहा पच्चक्खाणे वि दो आलावगा भाणियव्वा सू० ८ ॥

है ये दण्ड भी तीन होते हैं। ये भी एकेन्द्रिय और विकलेन्द्रियों को छोड कर नैरयिकसे वैमानिक तक के जीवों में तीन ही होते हैं। एकेन्द्रियमें एक और विकलेन्द्रियों में दो दण्ड होते हैं, तीन नहीं होते हैं, इसलिये यहां इनका परिहार किया गया है ॥ सू०७ ॥

दण्ड गर्हणीय होता है सो इसी अभिप्राय से सूत्रकार अब गर्हा और इसके सम्बन्ध से प्रत्याख्यान को कथन सूत्र चतुष्टय से करता हैं —'तिविहा गरिहा पण्णत्ता इत्यादि।

એન્દ્રિય સિવાયના બધા જીવોમા-નારકથી વૈમાનિક પર્યન્તના જીવોમાં ત્રણે પ્રકારના દંડનો સદ્ભાવ હોય છે એકેન્દ્રિયોમા માત્ર કાયદંડનો અને વિકલેન્દ્રિયોમા વાગ્દંડ અને કાયદંડનો સદ્ભાવ હોય છે. તે જીવોમા ત્રણે દંડનો સદ્ભાવ સંભવી શકતો નથી, તે કારણે તે જીવોને ઉપર્યુક્ત કથન લાગુ પડતું નથી સૂ. ૭

દંડ ગર્હણીય હોય છે આ સંબંધને અનુલક્ષીને સૂત્રકાર હવે ગર્હા અને પ્રત્યાખ્યાનની પ્રરૂપણા કરવા નિમિત્તે નીચેના ચાર સૂત્રો કહે છે—

'संजयमणुस्साण' इत्यादि, एताश्चतुर्विंशतिदण्डके चिन्त्यमाना संयतमनुष्याणां संयतानां-विरतिमतां मनुष्याणां भवन्ति, नान्येषां, नापि नारकादीनामिति। उक्ता गुप्तयः, अथतद्विपक्षभूता अगुप्तीराह—'तओ अगुत्तीओ' इत्यादि सुगम, नवरं विशेषतः एतेषां चतुर्विंशति दण्डकेऽतिदेशमाह—'एवं' इत्यादि, एवं-सामान्य सूत्रवन्नारकादीनां सूत्रोक्तानां वैमानिकपर्यन्तानां तिस्रोऽगुप्तयो वाच्या इहैकेन्द्रियविकलेन्द्रिया नोक्ता, तेषां वाङ्मनसयोर्यथायोगमसम्भवात्। संयतमनुष्या अपि न गृहीता गुप्तिमत्त्वादेषामिति। अगुप्तयश्च स्वपरेषां दण्ड

निग्रह का अर्थ है सोच समझकर तथा श्रद्धापूर्वक स्वीकार किया गया अर्थात् बुद्धि और श्रद्धापूर्वक, मन, वचन और काय को उन्मार्ग से रोकना और सन्मार्ग में लगाना ये तीन गुप्तियां किनके होती हैं? यही "संजयमणुस्साण" इत्यादि सूत्रद्वारा समझाया गया है। जो संयमी हैं विरति से युक्त हैं ऐसे मनुष्यों के ही ये तीन गुप्तियां होती हैं। अविरतिवालों के तथा नारकादिकों के नहीं होती हैं, इन गुप्तियों की विपक्षभूत जो अगुप्तियां हैं वे भी तीन ही प्रकार की होती हैं, ये तीन अगुप्तियां नारकसे लेकर वैमानिक तक के जीवों में होती हैं, क्यों कि यहां विरति होने का अभाव है इस कथन में एकेन्द्रिय और विकलेन्द्रियों को ग्रहण नहीं किया गया है क्यों कि एकेन्द्रिय जीवों के मन और वचन नहीं होते हैं तथा विकलेन्द्रियों के मन नहीं होता है। जीव को दण्ड उसका अपराधी बनना पड़े इसका नाम दण्ड

પ્રશસ્ત નિગ્રહનો અર્થ આ પ્રમાણે છે—વિચાર સમજપૂર્વક અને શ્રદ્ધાપૂર્વક મન વચન અને કાયને ઉન્માર્ગે (અવળે માર્ગે) જતા રોકવા અને સન્માર્ગે વાળવા તેનું નામ જ પ્રશસ્ત નિગ્રહ છે. સંજયમણુસ્સાણં ઈત્યાદિ સૂત્રમાં એ પ્રકટ કરવામાં આવ્યું છે કે એ ત્રણ ગુપ્તિયોનો સદ્‌ભાવ સંયમી (વિરતિયુક્ત) મનુષ્યોમાં જ હોય છે. અવિરતિયુક્ત મનુષ્યોમાં તથા નારકાદિકોમાં તેમનો સદ્‌ભાવ હોતો નથી. આ ગુપ્તિયોની વિપક્ષભૂત અગુપ્તિયો પણ ત્રણ પ્રકારની જ કહી છે. નારકોથી લઈને વૈમાનિક પર્યન્તના જીવોમાં આ ત્રણે અગુપ્તિયોનો સદ્‌ભાવ હોય છે કારણ કે તે જીવોમાં વિરતિ સંભવી શકતી નથી. પરન્તુ આ કથન એકેન્દ્રિય અને વિકલેન્દ્રિય જીવોને લાગુ પડતું નથી કારણ કે એકેન્દ્રિય જીવોમાં મન અને વચનનો અભાવ હોય છે તથા વિકલેન્દ્રિયોમાં મનનો અભાવ હોય છે. જેને કારણે જીવને અપરાધી બનવું પડે છે, તેના ત્રણ પ્રકાર ઉપર બતાવવામાં આવ્યા છે. એકેન્દ્રિય અને વિક

नानि भवन्तीति दण्डान्निरूपयति-' तओ दंडा ' इत्यादि सुगमं, नवरं मनसा स्वपरेषां दण्डनं मनोदण्डः। यद्वा-दण्डयतेऽनेनेति दण्डः, मन एव दण्डो मनोदण्ड इति। एवमितरावपि। चतुर्विंशति दण्डकेषु नारकादारभ्य विकलेन्द्रियवर्जमिति एकद्वित्रिचतुरिन्द्रियान् वर्जयित्वेत्यर्थः। वैमानिकपर्यन्तानां त्रयोदण्डा वाच्याः। विकलेन्द्रियाणां हि दण्डत्रयं न संभवति, तेषां वाङ्मनसोर्यथायोगमभावादिति ॥ सू० ७ ॥

दण्डश्च गर्हणीयो भवतीति गर्हां, तत्सम्बन्धात् प्रत्याख्यानं च सूत्रचतुष्टयेनाह —

मूलम्-तिविहा गरिहा पण्णत्ता, तं जहा-मणसा वेगे गरिहइ, वयसा वेगे गरिहइ, कायसा वेगे गरिहइ, पावाणं कम्माणं अकरणयाए ॥१॥ अहवा गरिहा तिविहा पण्णत्ता, तं जहा-दीहं पेगे अद्धं गरिहइ, रहस्सं पेगे अद्धं गरिहइ, कायं पेगे पडिसाहरइ, पावाणं कम्माणं अकरणयाए।२। तिविहे पच्चक्खाणे पण्णत्ते, तं जहा मणसा वेगे पच्चक्खाइ, वयसा वेगे पच्चक्खाइ, कायसा वेगे पच्चक्खाइ ।१। एवं जहा गरहा तहा पच्चक्खाणे वि दो आलावगा भाणियव्वा सू० ८ ॥

है ये दण्ड भी तीन होते हैं। ये भी एकेन्द्रिय और विकलेन्द्रियों को छोड कर नैरयिकसे वैमानिक तक के जीवों में तीन ही होते हैं। एकेन्द्रियमें एक और विकलेन्द्रियों में दो दण्ड होते हैं, तीन नहीं होते हैं, इसलिये यहां इनका परिहार किया गया है ॥ सू०७ ॥

दण्ड गर्हणीय होता है सो इसी अभिप्राय से सूत्रकार अब गर्हा और इसके सम्बन्ध से प्रत्याख्यान का कथन सूत्र चतुष्टय से करता हैं —' तिविहा गरिहा पण्णत्ता इत्यादि।

केन्द्रिय सिवायना બધા જીવોમા-નારકથી વૈમાનિક પર્યન્તના જીવોમાં ત્રણે પ્રકારના દંડનો સદ્‌ભાવ હોય છે એકેન્દ્રિયોમા માત્ર કાયદંડનો અને વિકલેન્દ્રિયોમાં વાગ્‌દંડ અને કાયદંડનો સદ્‌ભાવ હોય છે. તે જીવોમા ત્રણે દંડનો સદ્‌ભાવ સંભવી શકતો નથી, તે કારણે તે જીવોને ઉપર્યુક્ત કથન લાગુ પડતું નથી સૂ. ૭

દંડ ગર્હણીય હોય છે આ સંબંધને અનુલક્ષીને સૂત્રકાર હવે ગર્હા અને પ્રત્યાખ્યાનની પ્રરૂપણા કરવા નિમિત્તે નીચેના ચાર સૂત્રો કહે છે—

छाया—त्रिविधा गर्हा प्रज्ञप्ता, तद्यथा-मनसा एको गर्हते, वचसा एको गर्हते कायेन एको गर्हते, पापानां कर्मणामकरणतया ॥१॥ अथवा गर्हा त्रिविधा प्रज्ञप्ता, तद्यथा-दीर्घामप्येकोऽद्धां गर्हते, ह्रस्वामप्येकोऽद्धां गर्हते, कायमप्येकः प्रतिसंहरति पापानां कर्मणामकरणतया । २ । त्रिविधं प्रत्याख्यानं प्रज्ञप्तं, तद्यथा-मनसा एकः प्रत्याख्याति वचसा एकः प्रत्याख्याति, कायेन एकः प्रत्याख्याति । एवं यथा गर्हा तथा प्रत्याख्यानेऽपि द्वावालापकौ भणितव्यौ ॥ सू० ८ ॥

टीका—' तिविहा गरिहा ' इत्यादि, गर्हासूत्रद्वयं सुगमम् ।

नवरं-गर्हते-जुगुप्सते दुष्ट स्वकीयं परकीयमात्मानं वा । कथमित्याह-पापानां कर्मणामकरणतया हेतुभूतया हिंसादिवर्जनेनेत्यर्थः, कायगर्हा हि पाप कर्माऽप्रवृत्यैव भवतीति भावः १। अथवा-प्रकारान्तरेणापि गर्हा त्रिविधा भवति, तथाहि—' दीहंपेगे ' इत्यादि, एकः-कश्चित् दीर्घामप्यद्धां-दीर्घ कालं यावद् गर्हते । एवमेकः कश्चिद् ह्रस्वं कालं यावद् गर्हते । एकः कश्चित् कायमपि-

टीकार्थ-गर्हा तीन प्रकारकी कही गई है । जैसे कोइ एक मनसे गर्हा करता है कोई एक वचन से गर्हा करता है । कोई एक काय से गर्हा करता है, गर्हा किनकी करता है ! इसके लिये कहा गया है कि-"पावाणं कम्माणं अकरणयाए" कृत पापकर्मों की अकरण रूपसे गर्हा करता है अर्थात् जो पापकर्म मेरे द्वारा पहिले किये गये हैं अब मैं उन पापकर्मोंको नहीं करूँगा । इस प्रकारके उनके प्रति आत्मग्लानि करता हुआ भविष्य में उनके न करने के लिये अपने आपको तैयार करता है यही गर्हा है, कोई मन से हुए पापकर्मों पर १, कोई वचन से हुए पापकर्मों पर २,

तिविहा गरिहा पण्णत्ता ઇત્યાદિ—

ટીકાર્થ—ગર્હા ત્રણ પ્રકારની કહી છે-(૧) કોઈક જીવ મનથી ગર્હા કરે છે (૨) કોઈક જીવ વચનથી ગર્હા કરે છે અને (૩) કોઈક જીવ કાયાથી ગર્હા કરે છે તે જીવ શેની ગર્હા કરે છે ?

આ પ્રશ્નના ઉત્તર રૂપે એવું કહેવામાં આવ્યું છે કે-" पावाणं कम्माणं अकरणयाए " તે જીવ કૃત પાપકર્મોની અકરણરૂપે ગર્હા કરે છે એટલે કે પોતાના દ્વારા જે પાપકર્મોનું સેવન થઈ ગયુ છે, તે પાપકર્મોનું ભવિષ્યમાં પોતે સેવન નહીં કરે એવો નિશ્ચય કરે છે અને થઈ ગયેલાં પાપકર્મો માટે તેનો આત્મા ગ્લાની અનુભવે છે તથા ભવિષ્યમાં એવું ન કરવાને માટે પોતાને તૈયાર કરે છે આ પ્રમાણે કરવું તેનું નામ જ ગર્હા છે (૧) કોઈ મનથી થયેલા પાપકર્મો પર ઘૃણા પ્રકટ કરે છે, (૨) કોઈ વચનથી થયેલાં પાપકર્મો

स्वशरीरमपि पापानां कर्मणामकरणतया पापान्निवर्तनार्थमित्यर्थः संहरति निरुणद्धि कायेन पापप्रवृत्तिं न करोतीति भावः। गर्हाऽतीते दण्डे भवति, । भविष्यति तु प्रत्याख्यानमिति प्रत्याख्यानं सूत्रद्वयेनाह-' तिविहे ' इत्यादि सुगमं, नवरम्- ' एवं ' इत्यादि, एवं-पूर्वोक्तप्रकारेण यथा ' गरिहा ' इति गर्हायां तथा प्रत्या-

और कोई कायसे हुए पापकर्मों पर घृणा प्रकट करता है और आगे अब ऐसा नहीं करूंगा इस प्रकार से कहता है यही गर्हा है। "अहवा गरिहा तिविहा पण्णत्ता " अथवा गर्हा तीन प्रकारकी कही गई है जैसे कोई एक दीर्घकाल तक गर्हा करता है१, कोई एक थोडे काल तक गर्हा करता है २, और कोई एक पापकर्म से अपने आपको हटाने के लिये शरीर से पापप्रवृत्ति नहीं करता है।

प्रत्याख्यान तीन प्रकार का कहा गया है-कोई एक मनसे प्रत्याख्यान करता है, कोई एक वचन से प्रत्याख्यान करता है, कोई एक काय से प्रत्याख्यान करता है, इस तरह गर्हा के सम्बन्धमें जैसे दो आलापक कहे गये हैं वैसे ही वे दो आलापक प्रत्याख्यान के सम्बन्धमें भी कहना चाहिये।

गर्हा नाम जुगुप्सा का है, अपने द्वारा कृत पाप के प्रति अथवा पर के द्वारा कृत पाप के प्रति या अपनी आत्मा के प्रति जो जुगुप्सा करता है यह सब गर्हा में आता है। पाप कर्मों को अब मैं नहीं करुंगा, इस

પ્રત્યે ઘૃણા પ્રકટ કરે છે અને (૩) કોઈ કાયાથી થયેલાં પાપકર્મો પ્રત્યે ઘૃણા પ્રકટ કરે છે, અને ભવિષ્યમાં એવું નહીં કરૂ તેમ કહે છે, તેનું નામ જ ગર્હા છે. " અહવા ગરિહા તિવિહા પણ્ણત્તા " અથવા ગર્હાના નીચે પ્રમાણે ત્રણ પ્રકાર પણ કહ્યા છે-(૧) કોઈક જીવ દીર્ઘકાળ સુધી ગર્હા કરે છે, (૨) કોઇ જીવ અલ્પકાળ સુધી ગર્હા કરે છે અને (૩) કોઈ જીવ પાપકર્મથી પોતાની જાતને દૂર રાખવા માટે શરીરથી પાપપ્રવૃત્તિ કરતો નથી.

પ્રત્યાખ્યાનના પણ ત્રણ પ્રકાર કહ્યા છે-(૧) કોઈ જીવ મનથી પ્રત્યાખ્યાન કરે છે, (૨) કોઇ જીવ વચનથી પ્રત્યાખ્યાન કરે છે અને (૩) કોઇ જીવ કાયાથી પ્રત્યાખ્યાન કરે છે. ગર્હાના વિષયમાં જેવા બે આલાપક કહેવામાં આવ્યા છે, એવાં જ બે આલાપક પ્રત્યાખ્યાનના વિષયમાં પણ સમજવા જોઇએ.

ગર્હા એટલે જુગુપ્સા (ઘૃણા) પોતાના દ્વારા કરાયેલાં પાપકર્મો પ્રત્યે અથવા અન્ય દ્વારા કરાયેલા પાપકર્મો પ્રત્યે અથવા પોતાના આત્માની પ્રત્યે જે જુગુપ્સાની દૃષ્ટિથી જોવામાં આવે છે તેનું નામ જ ગર્હા છે. " પાપકર્મો

स्थानेऽपि-प्रत्याख्यानसूत्रेऽपि द्वावालापकौ-वाक्यरचनारूपौ भणितव्यौ-वाच्यौ, विशेषस्त्वयम्' 'गरिहइ' इत्यस्य स्थाने 'पच्चक्खाइ' इति वक्तव्यम्। प्रत्याख्याति पापान्निवर्तत इत्यर्थः ॥ सू० ८ ॥

पापकर्मप्रत्याख्यानाश्च परोपकारिणो भवन्तीति वृक्षदृष्टान्तेन तेषां पुरुषाणां प्ररूपणाय नव सूत्रीमाह—

मूलम्—तओ रुक्खा पण्णत्ता, त जहा पत्तोवए पुप्फोवए फलोवए१। एवामेव तओ पुरिसजाया पण्णत्ता, त जहा—पत्तोवगरुक्खसमाणा पुप्फोवगरुक्खसमाणा फलोवगरुक्खसमाणा २। तओ पुरिसजाया पण्णत्ता त जहा—नामपुरिसे ठवणपुरिसे दव्वपुरिसे ३। तओ पुरिसजाया पण्णत्ता, त जहा—नाणपुरिसे दसणपुरिसे चारित्तपुरिसे ४। तओ पुरिसजाया पण्णत्ता, त जहा—वेदपुरिसे

प्रकार के निश्चय से जो हिंसादिक का त्याग कर देता है वही कृतदण्ड के प्रति जुगुप्सा करना कहा है। पापकर्म में काय से प्रवृत्ति नहीं करना यह काय गर्हा है। इस तरह यह काय गर्हा पापकर्म में अप्रवृत्ति करने से ही होती है। इसी प्रकार से वचनगर्हा और मनोगर्हा के सम्बन्ध में भी कथन जानना चाहिये। गर्हा अतीतदण्ड-पाप में होती है और प्रत्याख्यान आगे होनेवाले दण्ड-पाप पर होता है। गर्हा के दो आलापकों के अनुसार प्रत्याख्यान के सम्बन्ध मे भी दो आलापक कहना चाहिये ऐसा जो कहा गया है सो प्रत्याख्यान के आलापक में "पच्चक्खाइ" ऐसी क्रियापद का प्रयोग "गरिहइ" इस क्रियापद के स्थान मे करना चाहिये, पाप से अपनी आत्मा को हटा लेना इस का नाम प्रत्याख्यान है ॥ सू०८ ॥

હવે હું નહીં કરું, ' આ પ્રકારના નિશ્ચયપૂર્વક જે હિંસાદિકનો ત્યાગ કરવામાં આવે છે તેનું નામ જ કૃતદંડ પ્રત્યે જુગુપ્સા કરી કહેવાય છે પાપકર્મોનું કાયાથી સેવન ન કરવું તેનું નામ કાયગર્હા છે આ રીતે પાપકર્મોમાં અપ્રવૃત્ત રહેવાથી જ કાયગર્હા થાય છે એ જ પ્રમાણે વચનગર્હા અને મનોગર્હા વિષે પણ કથન સમજવું અતીત દંડ (પાપકર્મ) ની ગર્હા કરાય છે અને ભવિષ્યમાં થનારા દંડ (પાપકર્મ) ના પ્રત્યાખ્યાન થાય છે ગર્હાના બે આલાપકો જેવાં જ બે આલાપકો પ્રત્યાખ્યાન વિષે પણ કહેવાનું જે આગળ સૂચન કર વામાં આવ્યું છે તે સૂચન અનુસાર આલાપકો બનાવતી વખતે 'ગરિહઇ" આ ક્રિયાપદને બદલે પચ્ચક્ખાઇ" આ ક્રિયાપદનો પ્રયોગ કરવો જોઈએ. પોતાના આત્માને પાપથી દૂર રાખવો તેનું નામ પ્રત્યાખ્યાન છે ॥ સૂ ૮॥

चिंधपुरिसे अभिलावपुरिसे ५। तिविहा पुरिसजाया पण्णत्ता, तं जहा--उत्तमपुरिसा मज्झिमपुरिसा जहन्नपुरिसा ६। उत्तमपुरिसा तिविहा पण्णत्ता, तं जहा--धम्मपुरिसा भोगपुरिसा कम्मपुरिसा। धम्मपुरिसा अरिहंता, भोगपुरिसा चक्कवट्टी, कम्मपुरिसा वासुदेवा ७। मज्झिमपुरिसा तिविहा पण्णत्ता, त जहा-उग्गा भोगा रायन्ना ८। जहन्नपुरिसा तिविहा पण्णत्ता, तं जहा--दासा भयगा भाइल्लगा ९ ॥ सू० ९ ॥

छाया—त्रयो वृक्षाः प्रज्ञप्ताः तद्यथा-पत्रोपगः, १ पुष्पोपगः २ फलोपगः, एवमेव त्रीणि पुरुषजातानि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा-पत्रोपगवृक्षसमानाः, २। पुष्पोपगवृक्षसमानाः फलोपगवृक्षसमानाः, त्रीणि पुरुषजातानि प्रज्ञप्तानि तद्यथा नामपुरुषः स्थापनापुरुषः, द्रव्यपुरुषः, ३। त्रीणि पुरुषजातानि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा-ज्ञानपुरुषः, दर्शनपुरुषः, चारित्रपुरुषः ४। त्रीणि पुरुषजातानि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा-वेदपुरुषः, चिह्नपुरुषः, अभिलापपुरुषः ५। त्रिविधानि पुरुषजातानि, प्रज्ञप्तानि, तद्यथा-उत्तम पुरुषाः, मध्यमपुरुषाः, जघन्यपुरुषाः ६। उत्तमपुरुषास्त्रिविधाः प्रज्ञप्ताः, तद्यथा-धर्मपुरुषाः, भोगपुरुषाः, कर्मपुरुषाः। धर्मपुरुषाः अर्हन्तः, भोगपुरुषाश्चक्रवर्त्तिनः, कर्मपुरुषा वासुदेवाः ७। मध्यमपुरुषास्त्रिविधाः प्रज्ञप्ताः, तद्यथा उग्राः, भोगाः, राजन्याः ८। जघन्यपुरुषास्त्रिविधाः प्रज्ञप्ताः, तद्यथा दासा, भृतकाः, भागिकाः९॥सू०९।

टीका—'तओ रुक्खा' इत्यादि। त्रयो वृक्षाः प्रज्ञप्ताः, ते यथा-पत्रोपगः, पुष्पोपगः, फलोपगः। तत्र पत्राणि-उपगच्छति-प्राप्नोतीति पत्रोपगः-

पापकर्म का प्रत्याख्यान करनेवाले जीव परोपकारी होते हैं। इस बात की प्ररूपणा अब सूत्रकार वृक्ष के दृष्टान्तद्वारा नौ सूत्रों से करते हैं—"तओ रुक्खा पण्णत्ता' इत्यादि।

टीकार्थ-वृक्ष तीन प्रकार के कहे गये हैं-एक पत्रोपग-पत्रबहुल, दूसरे पुष्पोपग-पुष्पबहुल और तीसरे फलोपग-फलबहुल, इसी तरह पुरुष

પાપકર્મના પ્રત્યાખ્યાન કરનારો જીવ પરોપકારી હોય છે. આ વાતની પ્રરૂપણા સૂત્રકાર વૃક્ષના દૃષ્ટાંત દ્વારા નવ સૂત્રોની મદદથી કરે છે—

"તઓ રુક્ખા પણ્ણત્તા" ઇત્યાદિ—

ટીકાર્થ-વૃક્ષો ત્રણ પ્રકારના કહ્યાં છે-(૧) પત્રોપગ (પાનની વિપુલતા સંપન્ન) (૨) પુષ્પોપગ (પુષ્પોની વિ ... ફલોપગ (ફળોની

ख्यानऽपि-प्रत्याख्यानसूत्रेऽपि प्रागालापकौ-वाक्यरचनारूपौ गमितव्यौ-वाच्यौ, विशेषस्त्वयम् ' गरिहइ ' इत्यस्य स्थाने ' पच्चक्खाइ ' इति वक्तव्यम् । प्रत्याख्याति पापाभिवर्तत इत्यर्थः ॥ सू० ८ ॥

पापकर्मप्रत्याख्यातारश्च परोपकारिणो भवन्तीति वृक्षदृष्टान्तेन तेषां पुरुषाणां प्ररूपणाय नव सूत्रीमाह—

मूलम्—तओ रुक्खा पण्णत्ता, तं जहा पत्तोवए पुप्फोवए फलोवए १। एवामेव तओ पुरिसजाया पण्णत्ता, तं जहा—पत्तोवगरुक्खसमाणा पुप्फोवगरुक्खसमाणा फलोवगरुक्खसमाणा २ । तओ पुरिसजाया पण्णत्ता तं जहा—नामपुरिसे ठवणपुरिसे दव्वपुरिसे ३ । तओ पुरिसजाया पण्णत्ता, तं जहा—नाणपुरिसे दंसणपुरिसे चारित्तपुरिसे ४ । तओ पुरिसजाया पण्णत्ता, तं जहा—वेदपुरिसे

प्रकार के निश्चय से जो हिंसादिक का त्याग कर देता है वही कृतदण्ड के प्रति जुगुप्सा करना कहा है । पापकर्म में काय से प्रवृत्ति नहीं करना यह काय गर्हा है । इस तरह यह काय गर्हा पापकर्म में अप्रवृत्ति करने से ही होती है । इसी प्रकार से वचनगर्हा और मनोगर्हा के सम्बन्ध में भी कथन जानना चाहिये । गर्हा अतीतदण्ड-पाप में होती है और प्रत्याख्यान आगे होनेवाले दण्ड-पाप पर होता है । गर्हा के दो आलापकों के अनुसार प्रत्याख्यान के सम्बन्ध मे भी दो आलापक कहना चाहिये ऐसा जो कहा गया है सो प्रत्याख्यान के आलापक में " पच्चक्खाइ " ऐसी क्रियापद का प्रयोग " गरिहइ " इस क्रियापद के स्थान मे करना चाहिये, पाप से अपनी आत्मा को हटा लेना इस का नाम प्रत्याख्यान है ॥ सू०८ ॥

હવે હું નહીં કરૂં, " આ પ્રકારના નિશ્ચયપૂર્વક જે હિંસાદિકનો ત્યાગ કરવામાં આવે છે તેનું નામ જ કૃતદંડ પ્રત્યે જુગુપ્સા કરી કહેવાય છે. પાપકર્મોનું કાયાથી સેવન ન કરવું તેનું નામ કાયગર્હા છે. આ રીતે પાપકર્મોમાં અપ્રવૃત્ત રહેવાથી જ કાયગર્હા થાય છે. એ જ પ્રમાણે વચનગર્હા અને મનોગર્હા વિષે પણ કથન સમજવું. અતીત દંડ (પાપકર્મ) ની ગર્હા કરાય છે અને ભવિષ્યમાં થનાર દંડ (પાપકર્મ) ના પ્રત્યાખ્યાન કરાય છે. ગર્હાના બે આલાપકો જેવાં જ બે આલાપકો પ્રત્યાખ્યાન વિષે પણ કહેવાનુ જે આગળ સૂચન કરવામાં આવ્યું છે તે સૂચન અનુસાર આલાપકો બનાવતી વખતે " ગરિહઇ " આ ક્રિયાપદને બદલે " પચ્ચક્ખાઇ " આ ક્રિયાપદનો પ્રયોગ કરવો જોઈએ. પોતાના આત્માને પાપથી દૂર રાખવો તેનું નામ પ્રત્યાખ્યાન છે. ॥ સૂ. ૮ ॥

पत्रवहुलः। एवं पुष्पोपगः-पुष्पवहुलः १ फलोपगः-फलवहुलः, । दार्ष्टान्तिक योजनामाह—'एवामेव' इत्यादि, एवमेव अनेनैव पत्रोपगादिवृक्षदृष्टान्तेन त्रीणि पुरुषजातानि पुरुषप्रकाराः पुरुषविशेषाः मज्ञप्तानि, तत्र-पत्र पुष्पफलवहुला वृक्षा अर्थिषु सामान्यविशिष्ट-विशिष्टतरो-पकारकारिणो भवन्ति। तथाहि-पत्रवहुला-वृक्षाश्छायादानेन, पुष्पवहुला-सुरभिगन्धदानेन, फलवहुलाः-फलप्रदानेनोपकुर्वन्त्यर्थिजनान्। एवं लोकोत्तरपुरुषा अपि शिष्यजनान् पत्रस्थानीयसूत्रदानेन, पुष्पस्थानीयार्थदानेन, फलस्थानीयोभयदानेनोपकुर्वन्तीति। एवं यथायोगमन्य-वस्तुदानादिनाऽपि लोकोत्तरपुरुषा उपकारकारिणो भवन्तीति २। अथ पुरुषप-

---

इसी प्रकारसे जिनमें पुष्पों की बहुलता होती है वे पुष्पोपगवृक्ष हैं। और जिनमें फल अधिक होते हैं वे फलोपगवृक्ष हैं। ये दृष्टान्तरूप में यहां प्रयुक्त किये गये हैं। अब दार्ष्टान्त को इन के साथ घटित करतेहुए सूत्रकार कहते हैं-कि इसी तरह से पुरुषप्रकार-पुरुषविशेष भी तीन होते हैं-एक वे जो शिष्यजनों को पत्र स्थानीय सूत्रदान से उनका उपकार करते हैं। दूसरे वे जो पुष्पस्थानीय अर्थदानसे उनका उपकार करते हैं। तीसरे वे जो फलस्थानीय उभयदान से सूत्र और अर्थ दोनों के दानसे उनका उपकार करते हैं। पत्र पुष्प और फल इनसे बहुल जो वृक्ष होते हैं वे अर्थिजनों को सामान्य रूपसे विशिष्ट रूप से और विशिष्टतररूप से उपकारी होते हैं। इसी तरह से लोकोत्तर पुरुष भी शिष्यजनों के पूर्वोक्तरूप से उपकारी होते हैं। इस तरह से अन्य वस्तु प्रदानादिद्वारा भी लोकोत्तर पुरुष जनता के उपकारी होते हैं ऐसा जानना चाहिये २।

કહે છે અને અધિક ફળોથી સંપન્ન વૃક્ષને ફલોપગ વૃક્ષ કહે છે. હવે પુરુષોના જે પત્રોપગ વૃક્ષ સમાન આદિ ત્રણ પ્રકારો ઉપર બતાવવામાં આવ્યા છે, તેની સ્પષ્ટતા કરવામા આવે છે-પોતાના શિષ્યોને પત્રસ્થાનીય સૂત્રદાન દ્વારા જેઓ ઉપકૃત કરે છે એવા પુરુષોને પત્રોપગવૃક્ષ જેવા કહ્યા છે પોતાના શિષ્યને પુષ્પસ્થાનીય અર્થદાન દ્વારા ઉપકૃત કરનારા પુરુષોને પુષ્પોપગ વૃક્ષ સમાન કહ્યા છે ફલસ્થાનીય ઉભયદાનથી-સૂત્ર અને અર્થના દાનથી શિષ્યોનો ઉપકાર કરનાર ગુરુજનોને ફલોપગ વૃક્ષ સમાન કહ્યા છે.

જેમ પાન, ફૂલ અને ફળોથી સંપન્ન વૃક્ષો અર્થિજનોને સામાન્ય રૂપે, વિશિષ્ટ રૂપે અને વિશિષ્ટતર રૂપે ઉપકારક હોય છે, એજ પ્રમાણે અન્ય વસ્તુના પ્રદાન આદિ દ્વારા લોકોત્તર પુરુષે પણ જનતને માટે ઉપકારી થઈ પડે છે, એમ સમજવુ

प्रकार भी तीन कहे गये हैं-एक पत्रोपग वृक्षसमान, दूसरे पुष्पोपग वृक्षसमान, तीसरे फलोपग वृक्षसमान इस प्रकार से भी पुरुष तीन प्रकार के कहे गये हैं—जैसे नामपुरुष, स्थापना पुरुष और द्रव्यपुरुष।

इस प्रकारसे भी पुरुष तीन प्रकार के कहे गये हैं-जैसे ज्ञानपुरुष, दर्शनपुरुष और चारित्रपुरुष।

इस प्रकारसे भी तीन पुरुष कहे गये हैं-जैसे-वेदपुरुष, चिह्नपुरुष और अभिलापपुरुष।

इस प्रकार से भी पुरुष तीन प्रकार के कहे गये हैं, उत्तमपुरुष, मध्यमपुरुष और जघन्यपुरुष, इनमें उत्तमपुरुष तीन प्रकार के कहे गये हैं-जैसे-धर्मपुरुष भोगपुरुष और कर्मपुरुष। अर्हन्त धर्मपुरुष हैं, चक्रवर्ती भोग पुरुष हैं। तथा वासुदेव कर्मपुरुष हैं, मध्यमपुरुष भी तीन प्रकारके हैं। जैसे-उग्रपुरुष, भोगपुरुष और राजन्यपुरुष।

जघन्यपुरुष भी तीन प्रकार के हैं-दास, भृतक और भागिक, वृक्षों के तीन प्रकारों में जो वृक्षपत्रों को प्राप्त किये हुए होते हैं वे पत्रोपग वृक्ष हैं अर्थात् पत्र जिनमें अधिक होते हैं ऐसे वृक्षपत्रोपग वृक्ष हैं।

વિપુલતાવાળા) એ જ પ્રમાણે માણસના પણ ત્રણ પ્રકાર છે-(૧) પત્રોપગ વૃક્ષ સમાન માણસો, (૨) પુષ્પોપગ વૃક્ષ સમાન માણસો અને (૩) ફલોપગ વૃક્ષ સમાન માણસો પુરુષના નીચે પ્રમાણે પણ ત્રણ પ્રકાર કહ્યા છે-(૧) નામ પુરુષ (૨) સ્થાપના પુરુષ અને (૩) દ્રવ્ય પુરુષ

પુરુષના નીચે પ્રમાણે પણ ત્રણ પ્રકાર કહ્યા છે-(૧) જ્ઞાન પુરુષ, (૨) દર્શન પુરુષ અને (૩) ચારિત્ર પુરુષ.

પુરુષના નીચે પ્રમાણે ત્રણ પ્રકાર પણ કહ્યા છે (૧) વેદ પુરુષ, (૨) ચિહ્ન પુરુષ અને (૩) અભિલાપ પુરુષ

આ પ્રમાણે બીજા ત્રણ પ્રકાર પણ કહ્યા છે-(૧) ઉત્તમ પુરુષ, (૨) (૨) મધ્યમ પુરુષ અને (૩) જઘન્ય પુરુષ તેમાં ઉત્તમ પુરુષના પણ ત્રણ પ્રકાર છે-(૧) ધર્મ પુરુષ (૨) ભોગ પુરુષ અને (૩) કર્મ પુરુષ. અર્હંત ધર્મ પુરુષ છે ચક્રવર્તી ભોગ પુરુષ છે અને વાસુદેવ કર્મ પુરુષ છે મધ્યમ પુરુષના પણ ત્રણ પ્રકાર કહ્યા છે-(૧) ઉગ્ર પુરુષ, (૨) ભોગ પુરુષ અને રાજન્ય પુરુષ. જઘન્ય પુરુષના પણ ત્રણ પ્રકાર કહ્યા છે-(૧) દાસ (૨) ભૃતક (૩) ભાગિક

વૃક્ષોના ત્રણ પ્રકારની સ્પષ્ટતા-જે વૃક્ષ અધિક પત્રથી યુક્ત હોય છે, તે વૃક્ષને પત્રોપગ વૃક્ષ કહે છે અધિક ફૂલોથી યુક્ત વૃક્ષને પુષ્પોપગ વૃક્ષ

पत्रबहुलः। एवं पुष्पोपगः-पुष्पबहुलः १ फलोपगः-फलबहुलः, । दार्ष्टान्तिक योजनामाह—'एवामेव' इत्यादि, एवमेव अनेनैव पत्रोपगादिवृक्षदृष्टान्तेन त्रीणि पुरुषजातानि पुरुषप्रकाराः पुरुषविशेषाः प्रज्ञप्तानि, तत्र-पत्र पुष्पफलबहुला वृक्षा अर्थिषु सामान्यविशिष्ट-विशिष्टतरो-पकारकारिणो भवन्ति। तथाहि-पत्रबहुला-वृक्षाश्छायादानेन, पुष्पबहुलाः-सुरभिगन्धदानेन, फलबहुलाः-फलप्रदानेनोपकुर्वन्त्यर्थिजनान्। एवं लोकोत्तरपुरुषा अपि शिष्यजनान् पत्रस्थानीयसूत्रदानेन, पुष्पस्थानीयार्थदानेन, फलस्थानीयोभयदानेनोपकुर्वन्तीति। एवं यथायोगमन्य-वस्तुदानादिनाऽपि लोकोत्तरपुरुषा उपकारकारिणो भवन्तीति २। अथ पुरुषप्र-

---

इसी प्रकारसे जिनमें पुष्पों की बहुलता होती है वे पुष्पोपगवृक्ष हैं। और जिनमें फल अधिक होते हैं वे फलोपगवृक्ष हैं। ये दृष्टान्तरूप में यहां प्रयुक्त किये गये हैं। अब दार्ष्टान्त को इन के साथ घटित करतेहुए सूत्रकार कहते हैं-कि इसी तरह से पुरुषप्रकार-पुरुषविशेष भी तीन होते हैं-एक वे जो शिष्यजनों को पत्र स्थानीय सूत्रदान से उनका उपकार करते हैं। दूसरे वे जो पुष्पस्थानीय अर्थदानसे उनका उपकार करते हैं। तीसरे वे जो फलस्थानीय उभयदान से सूत्र और अर्थ दोनों के दानसे उनका उपकार करते हैं। पत्र पुष्प और फल इनसे बहुल जो वृक्ष होते हैं वे अर्थिजनों को सामान्य रूपसे विशिष्ट रूप से और विशिष्टतररूप से उपकारी होते हैं। इसी तरह से लोकोत्तर पुरुष भी शिष्यजनों के पूर्वोक्तरूप से उपकारी होते हैं। इस तरह से अन्य वस्तु प्रदानादिद्वारा भी लोकोत्तर पुरुष जनता के उपकारी होते हैं ऐसा जानना चाहिये २।

કહે છે અને અધિક ફળોથી સંપન્ન વૃક્ષને ફલોપગ વૃક્ષ કહે છે. હવે પુરુષોના જે પત્રોપગ વૃક્ષ સમાન આદિ ત્રણ પ્રકારો ઉપર બતાવવામાં આવ્યા છે, તેની સ્પષ્ટતા કરવામાં આવે છે-પોતાના શિષ્યોને પત્રસ્થાનીય સૂત્રદાન દ્વારા જેઓ ઉપકૃત કરે છે એવા પુરુષોને પત્રોપગવૃક્ષ જેવા કહ્યા છે. પોતાના શિષ્યને પુષ્પસ્થાનીય અર્થદાન દ્વારા ઉપકૃત કરનારા પુરુષોને પુષ્પોપગ વૃક્ષ સમાન કહ્યા છે ફલસ્થાનીય ઉભયદાનથી-સૂત્ર અને અર્થના દાનથી શિષ્યોનો ઉપકાર કરનાર ગુરુજનોને ફલોપગ વૃક્ષ સમાન કહ્યા છે.

જેમ પાન, ફૂલ અને ફળોથી સંપન્ન વૃક્ષો અર્થિજનોને સામાન્ય રૂપે, વિશિષ્ટ રૂપે અને વિશિષ્ટતર રૂપે ઉપકારક હોય છે, એ જ પ્રમાણે અન્ય વસ્તુના પ્રદાન આદિ દ્વારા લોકોત્તર પુરુષો પણ જનતાને માટે ઉપકારી થઈ પડે છે, એમ સમજવું.

प्रकार भी तीन कहे गये हैं–एक पत्रोपग वृक्षसमान, दूसरा पुष्पोपग वृक्षसमान, तीसरे फलोपग वृक्षसमान इस प्रकार से भी पुरुष तीन प्रकार के कहे गये हैं—जैसे नामपुरुष, स्थापना पुरुष और द्रव्यपुरुष।

इस प्रकारसे भी पुरुष तीन प्रकार के कहे गये हैं–जैसे ज्ञानपुरुष, दर्शनपुरुष और चारित्रपुरुष।

इस प्रकारसे भी तीन पुरुष कहे गये हैं–जैसे–वेदपुरुष, चिह्नपुरुष और अभिलापपुरुष।

इस प्रकार से भी पुरुष तीन प्रकार के कहे गये हैं, उत्तमपुरुष, मध्यमपुरुष और जघन्यपुरुष, इनमें उत्तमपुरुष तीन प्रकार के कहे गये हैं–जैसे–धर्मपुरुष भोगपुरुष और कर्मपुरुष। अर्हन्त धर्मपुरुष हैं, चक्रवर्ती भोग पुरुष हैं। तथा वासुदेव कर्मपुरुष हैं, मध्यमपुरुष भी तीन प्रकारके हैं। जैसे–उग्रपुरुष, भोगपुरुष और राजन्यपुरुष।

जघन्यपुरुष भी तीन प्रकार के हैं–दास, भृतक और भागिक, वृक्षों के तीन प्रकारों में जो वृक्ष पत्रों को प्राप्त किये हुए होते हैं व पत्रोपग वृक्ष हैं अर्थात् पत्र जिनमें अधिक होते हैं ऐसे वृक्षपत्रोपग वृक्ष हैं।

વિપુલતાવાળાં) એ જ પ્રમાણે માણસના પણ ત્રણ પ્રકાર છે–(૧) પત્રોપગ વૃક્ષ સમાન માણસો (૨) પુષ્પોપગ વૃક્ષ સમાન માણસો અને (૩) ફલોપગ વૃક્ષ સમાન માણસો પુરુષના નીચે પ્રમાણે પણ ત્રણ પ્રકાર કહ્યા છે–(૧) નામ પુરુષ (૨) સ્થાપના પુરુષ અને (૩) દ્રવ્ય પુરુષ

પુરુષના નીચે પ્રમાણે પણ ત્રણ પ્રકાર કહ્યા છે (૧) જ્ઞાન પુરુષ, (૨) દર્શન પુરુષ અને (૩) ચારિત્ર પુરુષ

પુરુષના નીચે પ્રમાણે ત્રણ પ્રકાર પણ કહ્યા છે (૧) વેદ પુરુષ, (૨) ચિહ્ન પુરુષ અને (૩) અભિલાપ પુરુષ

આ પ્રમાણે બીજા ત્રણ પ્રકાર પણ કહ્યા છે–(૧) ઉત્તમ પુરુષ, (૨) (૨) મધ્યમ પુરુષ અને (૩) જઘન્ય પુરુષ તેમાં ઉત્તમ પુરુષના પણ ત્રણ પ્રકાર છે–(૧) ધર્મ પુરુષ (૨) ભોગ પુરુષ અને (૩) કર્મ પુરુષ અર્હંત ધર્મ પુરુષ છે ચક્રવર્તી ભોગ પુરુષ છે અને વાસુદેવ કર્મ પુરુષ છે મધ્યમ પુરુષના પણ ત્રણ પ્રકાર કહ્યા છે–(૧) ઉગ્ર પુરુષ, (૨) ભોગ પુરુષ અને રાજન્ય પુરુષ જઘન્ય પુરુષના પણ ત્રણ પ્રકાર કહ્યા છે–(૧) દાસ (૨) ભૃતક (૩) ભાગિક

વૃક્ષોના ત્રણ પ્રકારની સ્પષ્ટતા–જે વૃક્ષ અધિક પત્રથી યુક્ત હોય છે, તે વૃક્ષને પત્રોપગ વૃક્ષ કહે છે અધિક ફૂલોથી યુક્ત વૃક્ષને પુષ્પોપગ વૃક્ષ

पत्रबहुलः । एवं पुष्पोपगः-पुष्पबहुलः १ फलोपगः-फलबहुलः, । दार्ष्टान्तिक योजनामाह—'एवामेव' इत्यादि, एवमेव अनेनैव पत्रोपगादिवृक्षदृष्टान्तेन त्रीणि पुरुषजातानि पुरुषप्रकाराः पुरुषविशेषाः प्रज्ञप्तानि, तत्र-पत्र पुष्पफलबहुला वृक्षा अर्थिषु सामान्यविशिष्ट-विशिष्टतरो-पकारकारिणो भवन्ति । तथाहि-पत्रबहुला-वृक्षाश्छायादानेन, पुष्पबहुलाः-सुरभिगन्धदानेन, फलबहुलाः-फलप्रदानेनोपकुर्वन्त्यर्थिजनान् । एवं लोकोत्तरपुरुषा अपि शिष्यजनान् पत्रस्थानीयसूत्रदानेन, पुष्पस्थानीयार्थदानेन, फलस्थानीयोभयदानेनोपकुर्वन्तीति । एवं यथायोगमन्य-वस्तुदानादिनाऽपि लोकोत्तरपुरुषा उपकारकारिणो भवन्तीति २। अथ पुरुषप्र-

---

इसी प्रकारसे जिनमें पुष्पों की बहुलता होती है वे पुष्पोपगवृक्ष हैं। और जिनमें फल अधिक होते हैं वे फलोपगवृक्ष हैं। ये दृष्टान्तरूप में यहां प्रयुक्त किये गये हैं। अब दार्ष्टान्त को इन के साथ घटित करतेहुए सूत्रकार कहते हैं-कि इसी तरह से पुरुषप्रकार-पुरुषविशेष भी तीन होते हैं-एक वे जो शिष्यजनों को पत्र स्थानीय सूत्रदान से उनका उपकार करते हैं। दूसरे वे जो पुष्पस्थानीय अर्थदानसे उनका उपकार करते हैं। तीसरे वे जो फलस्थानीय उभयदान से सूत्र और अर्थ दोनों के दानसे उनका उपकार करते हैं। पत्र पुष्प और फल इनसे बहुल जो वृक्ष होते हैं वे अर्थिजनों को सामान्य रूपसे विशिष्ट रूप से और विशिष्टतररूप से उपकारी होते हैं। इसी तरह से लोकोत्तर पुरुष भी शिष्यजनों के पूर्वोक्तरूप से उपकारी होते हैं। इस तरह से अन्य वस्तु प्रदानादिद्वारा भी लोकोत्तर पुरुष जनता के उपकारी होते हैं ऐसा जानना चाहिये २।

કહે છે અને અધિક ફળોથી સંપન્ન વૃક્ષને ફલોપગ વૃક્ષ કહે છે. હવે પુરુષોના જે પત્રોપગ વૃક્ષ સમાન આદિ ત્રણ પ્રકારો ઉપર બતાવવામાં આવ્યા છે, તેની સ્પષ્ટતા કરવામા આવે છે-પોતાના શિષ્યોને પત્રસ્થાનીય સૂત્રદાન દ્વારા જેઓ ઉપકૃત કરે છે એવા પુરુષોને પત્રોપગવૃક્ષ જેવાં કહ્યા છે. પોતાના શિષ્યને પુષ્પસ્થાનીય અર્થદાન દ્વારા ઉપકૃત કરનારા પુરુષોને પુષ્પોપગ વૃક્ષ સમાન કહ્યા છે ફલસ્થાનીય ઉભયદાનથી-સૂત્ર અને અર્થના દાનથી શિષ્યોનો ઉપકાર કરનાર ગુરુજનોને ફલોપગ વૃક્ષ સમાન કહ્યા છે.

જેમ પાન, ફૂલ અને ફળોથી સંપન્ન વૃક્ષો અર્થિજનોને સામાન્ય રૂપે, વિશિષ્ટ રૂપે અને વિશિષ્ટતર રૂપે ઉપકારક હોય છે, એ જ પ્રમાણે અન્ય વસ્તુના પ્રદાન આદિ દ્વારા લોકોત્તર પુરુષો પણ જનતાને માટે ઉપકારી થઈ પડે છે, એમ સમજવું

सम्प्रति पुरुषवक्तव्यतां सप्तसूत्र्या निरूपयति—'तओ पुरिसजाया' इत्यादि, सुगमम्। नवरं पुरुषप्ररूपणा क्रियते—नामपुरुषः 'पुरुष' इति नाममात्रम्, स्थापना पुरुषः-लेप्यचित्रादिषु पुरुषाकृतिमात्रम्, पुरुषज्ञानसम्पन्नोऽप्यनुपयुक्तो द्रव्यपुरुषः 'अणुवओगो दव्वं' इति वचनात्। नामस्थापनादीनां विशेषविवरणमनुयोगद्वारसूत्रस्य मत्कृतायामनुयोगचन्द्रिकाटीकायामवलोकनीयम् १। पुनः पुरुषत्रैविध्यमाह—तत्र ज्ञानरूपभावप्रधानः पुरुषो ज्ञानपुरुषः, एवं दर्शनपुरुषश्चा

अब सूत्रकार पुनः सप्तसूत्री द्वारा इसी पुरुष वक्तव्यताका कथन करते हैं—नामपुरुष वे हैं जो नाममात्र के पुरुष हैं अर्थात् किसी भी वस्तु का पुरुष ऐसा जो नाम लोक व्यवहार चलाने के लिये रख लिया जाता है वह नामपुरुष है इस नाम पुरुष में पुरुष के जैसे कोई भी लक्षण नहीं होते हैं। लेप्य, चित्र आदिकों में जो पुरुषाकृति की स्थापना करली जाती है, वह स्थापनापुरुष है। पुरुषज्ञानसंपन्न एक भी जीव अनुपयुक्त अवस्थावाला है, तो वह द्रव्यपुरुष है क्यों कि "अणुवओगो दव्वं" ऐसा सिद्धान्त वचन है, नामस्थापना आदिका विशेष विवरण अनुयोगद्वार सूत्रकी अनुयोग चन्द्रिका टीकामें मैंने लिखा है—अतः जिज्ञासुओं को वह टीका अवश्य देखनी चाहिये। इस प्रकार से भी पुरुष तीन होते हैं—ज्ञानपुरुष आदि यहां ज्ञानपुरुष में ज्ञानरूप भावप्रधान पुरुष लिया गया है। इसी प्रकारसे दर्शनरूप भावप्रधानपुरुष दर्शनपुरुष में और

હવે સૂત્રકાર સાત સૂત્રો દ્વારા એજ પુરુષ વક્તવ્યતાનું વિશેષ કથન કરે છે-નામપુરુષ તે છે કે જે નામમાત્રની અપેક્ષાએ જ પુરુષ છે એટલે કે કોઈ પણ વસ્તુનું પુરુષ એવું જે નામ લોકવ્યવહાર ચલાવવાને માટે રાખવામાં આવે છે તે નામપુરુષ છે આ નામપુરુષમાં પુરુષના જેવાં કોઈ લક્ષણો હોતાં નથી. લેપ્ય ચિત્ર આદિમાં જે પુરુષાકૃતિની સ્થાપના કરવામાં આવે છે, તેને સ્થાપના પુરુષ કહે છે પુરુષજ્ઞાન સંપન્ન જીવ જો અનુપયુક્ત અવસ્થાવાળો હોય છે તો તેને દ્રવ્યપુરુષ કહે છે ઉપયોગ વગરનાને દ્રવ્ય કહેવાય છે કારણ કે 'અણુવઓગો દવ્વં' આ પ્રકારનું સિદ્ધાંત કથન છે નામ, સ્થાપના આદિનું વિશેષ વિવરણ અનુયોગદ્વાર સૂત્રની અનુયોગચન્દ્રિકા ટીકામાં મારા દ્વારા લખવામાં આવેલ છે તો જિજ્ઞાસુ પાઠકોને તે વાંચવા ભલામણ છે

હવે જ્ઞાનપુરુષ આદિ ત્રણ પ્રકારોનું સ્પષ્ટીકરણ કરવામાં આવે છે—જ્ઞાનરૂપ ભાવની પ્રધાનતાવાળા પુરુષને જ્ઞાનપુરુષ કહે છે, દર્શનરૂપ ભાવની પ્રધાનતાવાળા પુરુષને દર્શન પુરુષ કહે છે અને ચારિત્રરૂપ ભાવની પ્રધાનતાવાળા પુરુષને ચારિત્ર પુરુષ કહે છે

रित्रपुरुषश्चापि वाच्यः ९ । पुनः पुरुषत्रैविध्यम्, तत्र-पुंवेदानुभवनप्रधानः पुरुषो वेदपुरुषः । स च पुरुषवेदानुभूतिकाले स्त्री पुंनपुंसकेषु त्रिष्वपि भवति, "वेय-पुरिसो तिलिंगो वि पुरिसवेयाणुभूइकालम्मि" इति वचनात्, यथा—स्त्रीका-मितारूपपुरुषवेदसंपन्नानि स्त्री पुरुषनपुंसकानीति । इदमुक्तं भवति-स्त्रीकामुकी स्त्री, स्त्रीकामुकः पुरुषः, स्त्रीपुरुषकामुकं नपुंसकं चेति । यद्वा- स्त्रीनपुंसकवेषधारी पुरुषो वेदपुरुषः कथ्यते, अयं वेदेन पुरुषः वेषेणतु स्त्री, नपुंसकं वापि भवति १, चिह्नैः-पुरुषचिह्नैः श्मश्रुरोमादिभिरुपलक्षितः पुरुषश्चिह्नपुरुषः, चिह्नमात्रेण पुरुषो न तु यथार्थतया, यथा—श्मश्रुप्रभृतिचिह्नयुक्तं नपुंसकमिति । यद्वा-चिह्नेन-वेषेण पुरुषचिह्न

चारित्ररूप भावप्रधानपुरुष चारित्रपुरुषमें लिया गया है । वेदपुरुषमें पुंवेदानुभव प्रधानतावाला पुरुष गृहीत हुआ है । यह पुंवेदानुभवप्रधान पुरुष वेदानुभूति कालमें स्त्री, पुनपुंसक तीनों में भी होता है । कहा भी है—"वेयपुरिसो तिलिंगो वि पुरिसवेयाणुभूइकालम्मि" स्त्री पुं नपुंसक स्त्रीकामितारूपपुरुषवेदसंपन्न होते है । तात्पर्य इस कथनका ऐसा है कि पुरुष की चाहनावाली स्त्री होती है, स्त्रीकी चाहनावाला पुरुष होता है । और स्त्रीपुरुष दोनों की चाहनावाला नपुंसक होता है । अथवा स्त्री नपुंसक वेषधारी जो पुरुष होता है वह वेदपुरुष है । ऐसा पुरुष केवलवेद से पुरुष होताहै वेषसे तो वह स्त्री या नपुंसक होताहै । श्मश्रु, रोम दाढी-मूछ आदिरूप जो पुरुषचिह्नहै उन चिह्नोंसे उपलक्षित जो पुरुषहै वह चिह्न पुरुष है, यह चिह्न पुरुष चिह्न मात्रसे पुरुष होताहै यथार्थ रूपमें पुरुष नहीं होता ।

વેદપુરુષમા પુંવેદાનુભવની પ્રધાનતાવાળા પુરુષ ગ્રહણ કરવામાં આવેલ છે તે પુંવેદાનુભવપ્રધાન પુરુષ, પુરુષવેદાનુભૂતિકાળમા સ્ત્રી, પુ (પુરુષ) અને નપુંસક, એ ત્રણેમા પણ હોઇ શકે છે કહ્યુ પણ ખરૂ છે કે—"વેયપુરિસો તિલિંગો વિ પુરિસવેયાણુભૂઇકાલમ્મિ" સ્ત્રીનપુંનસક સ્ત્રીકામિતારૂપ પુરુષવેદ સંપન્ન હોય છે. આ કથનનુ તાત્પર્ય એ છે કે પુરુષની ચાહનાવાળી સ્ત્રી હોય છે, સ્ત્રીની ચાહનાવાળો પુરુષ હોય છે, અને સ્ત્રી અને પુરુષ, એ બન્નેની ચાહનાવાળો નપુંસક હોય છે

અથવા—સ્ત્રીનપુંસક વેષધારી જે પુરુષ હોય છે તેને વેદપુરુષ કહે છે, એવો પુરુષ કેવળ વેદની અપેક્ષાએ જ પુરુષ હોય છે, વેષની અપેક્ષાએ તો તે સ્ત્રી અથવા નપુંસક હોય છે શ્મશ્રુ, રોમ (દાઢી-મૂછ) આદિ રૂપ જે પુરુષચિહ્ન છે, તે ચિહ્નોથી ઉપલક્ષિત જે પુરુષ છે તેને ચિહ્નપુરુષ કહેવાય છે. તે ચિહ્નપુરુષ તે ચિહ્નોની અપેક્ષાએ જ પુરુષ લાગે છે, પણ યથાર્થ રૂપે તો પુરુષ હોતો

स्वाभाव् पुरुषवक्तव्यतां सप्तसूत्र्या निरूपयति—'तओ पुरिसजाया' इत्यादि, सुगमम्। नवरं पुरुषप्ररूपणा क्रियते-नामपुरुषः 'पुरुष' इति नाममात्रम्, स्थापना पुरुषः-लेप्यचित्रादिषु पुरुषाकृतिमात्रम्, पुरुषज्ञानसपत्नोऽप्यनुपयुक्तो द्रव्यपुरुष 'अणुवओगो दव्व' इति वचनात्। नामस्थापनादीनां विशेषविवरण मनुयोगद्वारसूत्रस्य मत्कृतायामनुयोगचन्द्रिकाटीकायामवलोकनीयम् २। पुनः पुरुषत्रैविध्यमाह—तत्र ज्ञानरूपभावप्रधानः पुरुषो ज्ञानपुरुषः, एवं दर्शनपुरुषश्च

अब सूत्रकार पुनः सप्तसूत्री द्वारा इसी पुरुष वक्तव्यताका कथन करते हैं-नामपुरुष वे हैं जो नाममात्र के पुरुष हैं अर्थात् किसी भी वस्तु का पुरुष ऐसा जो नाम लोक व्यवहार चलाने के लिये रख लिया जाता है वह नामपुरुष है इस नाम पुरुष में पुरुष के जैसे कोई भी लक्षण नहीं होते हैं। लेप्य, चित्र आदिकों में जो पुरुषाकृति की स्थापना करली जाती है, वह स्थापनापुरुष है। पुरुषज्ञानसपन्न हुआ भी जीव अनुपयुक्त अवस्थावाला है, तो वह द्रव्यपुरुष है क्यों कि 'अणुवओगो दव्वं" ऐसा सिद्धान्त वचन है, नामस्थापना आदिका विशेष विवरण अनुयोगद्वार सूत्रकी अनुयोग चन्द्रिका टीकामें मैंने लिखा है—अतः जिज्ञासुओं को वह टीका अवश्य देखनी चाहिये। इस प्रकार से भी पुरुष तीन होते हैं-ज्ञानपुरुष आदि यहां ज्ञानपुरुष में ज्ञानरूप भावप्रधान पुरुष लिया गया है। इसी प्रकारसे दर्शनरूप भावप्रधानपुरुष दर्शनपुरुष में और

હવે સૂત્રકાર સાત સૂત્રો દ્વારા એજ પુરુષ વક્તવ્યતાનું વિશેષ કથન કરે છે-નામપુરુષ તે છે કે જે નામમાત્રની અપેક્ષાએ જ પુરુષ છે એટલે કે કોઈ પણ વસ્તુનું પુરુષ એવું જે નામ લોકવ્યવહાર ચલાવવાને માટે રાખવામાં આવે છે તે નામપુરુષ છે આ નામપુરુષમાં પુરુષના જેવાં કોઈ લક્ષણો હોતાં નથી. લેપ્ય ચિત્ર આદિમાં જે પુરુષાકૃતિની સ્થાપના કરવામાં આવે છે તેને સ્થાપના પુરુષ કહે છે પુરુષજ્ઞાન સંપન્ન જીવ જો અનુપયુક્ત અવસ્થાવાળો હોય છે તો તેને દ્રવ્યપુરુષ કહે છે ઉપયોગ વગરનાને દ્રવ્ય કહેવાય છે કારણ કે 'અણુવઓગો દવ્વં' આ પ્રકારનું સિદ્ધાંત કથન છે નામ, સ્થાપના આદિનું વિશેષ વિવરણ અનુયોગદ્વાર સૂત્રની અનુયોગચન્દ્રિકા ટીકામાં મારા દ્વારા લખવામાં આવેલ છે તો જિજ્ઞાસુ પાઠકોને તે વાંચવા ભલામણ છે

હવે જ્ઞાનપુરુષ આદિ ત્રણ પ્રકારોનું સ્પષ્ટીકરણ કરવામાં આવે છે—જ્ઞાનરૂપ ભાવની પ્રધાનતાવાળા પુરુષને જ્ઞાનપુરુષ કહે છે દર્શનરૂપ ભાવની પ્રધાનતાવાળા પુરુષને દર્શન પુરુષ કહે છે અને ચારિત્રરૂપ ભાવની પ્રધાનતાવાળા પુરુષને ચારિત્ર પુરુષ કહે છે

रित्रपुरुषश्चापि वाच्यः ४ । पुन. पुरुषत्रैविध्यम् , तत्र-पु वेदानुभवनप्रधानः पुरुषो वेदपुरुषः । स च पुरुषवेदानुभूतिकाले स्त्री पुंनपुंसकेषु त्रिष्वपि भवति, "वेय-पुरिसो तिलिंगो वि पुरिसवेयाणुभूइकालम्मि" इति वचनात् , यथा—स्त्रीका-मितारूपपुरुषवेदसंपन्नानि स्त्री पुरुषनपु सकानीति । इदमुक्तं भवति-स्त्रीकामुकी स्त्री, स्त्रीकामुकः पुरुषः, स्त्रीपुरुषकामुकं नपु सकं चेति । यद्वा-स्त्रीनपु सकवेषधारी पुरुषो वेदपुरुषः कथ्यते, अयं वेदेन पुरुषः वेषेणतु स्त्री, नपुसकं वापि भवति १, चिह्नैः-पुरुषचिह्नै श्मश्रुरोमादिभिरुपलक्षितः पुरुषश्चिह्नपुरुषः, चिह्नमात्रेण पुरुषो न तु यथार्थतया, यथा—श्मश्रुवसृतिचिह्नयुक्तं नपुंसकमिति । यद्वा-चिह्नेन—वेषेण पुरुषचिह्न

चारित्ररूप भावप्रधानपुरुष चारित्रपुरुषमें लिया गया है। वेदपुरुषमें पुंवेदानुभव प्रधानतावाला पुरुष गृहीत हुआ है। यह पुंवेदानुभवप्रधान पुरुष वेदानुभूति कालमे स्त्री, पुनपुसक तीनों में भी होता है। कहा भी है—"वेयपुरिसो तिलिंगो वि पुरिसवेयाणुभूइकालम्मि" स्त्री पुंनपुंसक स्त्रीकामितारूपपुरुषवेदसंपन्न होते है। तात्पर्य इस कथनका ऐसा है कि पुरुष की चाहनावाली स्त्री होती है, स्त्रीकी चाहनावाला पुरुष होता है। और स्त्रीपुरुष दोनों की चाहनावाला नपुंसक होता है। अथवा स्त्री नपुसक वेषधारी जो पुरुष होता है वह वेदपुरुप है। ऐसा पुरुष केवलवेद से पुरुष होताहै वेपसे तो वह स्त्री या नपुंसक होताहै। श्मश्रु, रोम दाढी-मूछ आदिरूप जो पुरुषचिह्नहै उन चिह्नोंसे उपलक्षित जो पुरुषहै वह चिह्न पुरुष है, यह चिह्न पुरुष चिह्न मात्रसे पुरुष होताहै यथार्थ रूपमें पुरुष नहीं होता।

વેદપુરુષમા પુ વેદાનુભવની પ્રધાનતાવાળા પુરુષ ગ્રહણુ કરવામાં આવેલ છે તે પુ વેદાનુભવપ્રધાન પુરુષ, પુરુષવેદાનુભૂતિકાળમા સ્રી, પુ (પુરુષ) અને નપુંસક, એ ત્રણેમા પણ હોઇ શકે છે. કહ્યુ પણ ખરૂ છે કે—" वेयपुरिसो तिलिंगो वि पुरिसवेयाणुभूइकालम्मि " સ્રીનપુંનસક સ્રીક મિતારૂપ પુરુષવેદ સ પન્ન હોય છે. આ કથનનુ તાત્પર્ય એ છે કે પુરુષની ચાહનાવાળી સ્રી હોય છે, સ્રીની ચાહનાવાળો પુરુષ હોય છે, અને સ્રી અને પુરુષ, એ બન્નેની ચાહ નાવાળો નપુસક હોય છે

અથવા—સ્રીનપુ સક વેષધારી જે પુરુષ હોય છે તેને વેદપુરુષ કહે છે, એવો પુરુષ કેવળ વેદની અપેક્ષાએ જ પુરુષ હોય છે, વેષની અપેક્ષાએ તો તે સ્રી અથવા નપુસક હોય છે શ્મશ્રુ, રોમ (દાઢી–મૂછ) આદિ રૂપ જે પુરુષચિહ્ન છે, તે ચિહ્નોથી ઉપલક્ષિત જે પુરુષ છે તેને ચિહ્નપુરુષ કહેવાય છે. તે ચિહ્નપુરુષ તે ચિહ્નોની અપેક્ષાએ જ પુરુષ લાગે છે, પણ યથાર્થ રૂપે તો પુરુષ હોતો

पुरुषः पुरुषवेषधारी स्त्र्यादिरिति । पुरुषवेदो वा चिह्नपुरुष इति २ । अभिलप्यतेऽनेनेति-अभिलापः-शब्दः, स एव पुंलिङ्गतयाऽभिधानात् पुरुषः-अभिलापपुरुषः, शब्दमात्रेण पुरुष इत्यर्थः यथा घटः पटो वेति । उक्तश्च-" अभिलावो पुल्लिंगाभिहाणमेत्त घडोव० " इति ३ । पुनः पुरुषत्रैविध्यमाह—उत्तमपुरुषा मध्यमपुरुषा जघन्यपुरुषाः ६ । एतेऽपि-उत्तमपुरुषास्त्रिविधाः-धर्मपुरुषाः, भोगपुरुषाः, कर्मपुरुषाः । तत्र-धर्मः-क्षायिकचारित्रादि, तदर्जनपराः पुरुषाः धर्मपुरुषा अर्हन्तः भोगाः मनोज्ञशब्दादयः, तत्परायणाः पुरुषाः-भोगपुरुषाः—

जैसा कि श्मश्रु आदि पुरुष चिह्नों से युक्त नपुंसक होता है। अथवा चिह्न शब्द का अर्थ वेष है। इस वेष से जो पुरुष है वह चिह्नपुरुष है । ऐसे चिह्नपुरुष पुरुषवेषधारी स्त्री आदि होते हैं अथवा पुरुषवेदवाला चिह्न पुरुष है २ जो पुल्लिङ्ग शब्दवाला होता है वह अभिलाप पुरुष है अर्थात् पुल्लिङ्ग शब्द द्वारा जिसका अभिधान-कथन होता है वह अभिलापपुरुष है जैसे " घटः पटः " आदि, कहा भी है-" अभिलावो पुल्लिंगाभिहाणमेत्त घडोव० " इति ५ ।

इस प्रकार से भी पुरुषप्रकार तीन होते हैं-जैसे उत्तमपुरुष आदि इनमें भी उत्तमपुरुष त्रिविध होते हैं जैसे धर्मपुरुष आदि क्षायिकचारित्र आदि का नाम धर्म है इस धर्म के उपार्जन करने में तत्पर जो पुरुष हैं वे धर्मपुरुष हैं ऐसे धर्मपुरुष अर्हन्त हैं मनोज्ञशब्दादिरूप भोग हैं इन भोगों की प्रधानतावाले जो पुरुष हैं वे भोगपुरुष हैं, ऐसे भोगपुरुष चक्रवर्ती

નથી, જેમકે શ્મશ્રુ આદિ પુરુષચિહ્નોવાળા નપુંસક પણ પુરુષ હોય છે અથવા ચિહ્ન શબ્દનો અર્થ વેષ પણ થાય છે તે વેષની અપેક્ષાએ જે પુરુષ હોય છે તેને પણ ચિહ્નપુરુષ કહે છે એવા ચિહ્નપુરુષોમાં પુરુષવેષધારી સ્ત્રી આદિને ગણી શકાય છે અથવા પુરુષવેદવાળાને ચિહ્નપુરુષ કહે છે જે પુલ્લિંગ તરીકે ગણી શકાય એવો હોય તેને અભિલાપપુરુષ કહે છે એટલે કે પુલ્લિંગ (નર જાતિના) શબ્દ દ્વારા જેનું કથન થાય છે તેનું નામ અભિલાપપુરુષ છે જેમ કે ' घटः पटः ' ઘડો વગેરે કહ્યું પણ છે કે ' અભિલાવો પુલ્લિંગાભિહાણમેત્ત ઘડોવ૦ " ઇત્યાદિ—પુરુષના નીચે પ્રમાણે ત્રણ પ્રકાર પડે છે ઉત્તમ પુરુષ આદિ.

ઉત્તમ પુરુષના ત્રણ પ્રકાર પડે છે-જેમકે ધર્મપુરુષ આદિ ક્ષાયિક ચારિત્ર આદિનું નામ ધર્મ છે તે ધર્મનું ઉપાર્જન કરવાને તત્પર હોય એવા પુરુષોને ધર્મપુરુષ કહે છે એવા ધર્મપુરુષ અર્હંત છે મનોજ્ઞ શબ્દાદિરૂપ ભોગ છે તે ભોગોની પ્રધાનતાવાળા જે પુરુષો હોય છે તેમને ભોગપુરુષ કહે છે

चक्रवर्तिनः । कर्माणि—कण्टकोद्धाररूपाणि तत्परायणाः पुरुषाः कर्मपुरुषाः—वासुदेवा ७ । इति । मध्यमपुरुषा अपि—उग्रभोगराजन्यभेदात् त्रिविधाः । तत्र—उग्राः भगवत ऋषभदेवस्वामिनो राज्यकाले ये आरक्षका आसन् ते । भोगाः कुलगुरवः। राजन्याः—राजमित्राणि ८ । जघन्यपुरुषाणां त्रैविध्यमाह—'दासा' इत्यादि, दासाः—दासीपुत्रादयः । भृतका—वेतनेन कर्मकराः । 'भाइल्लग' त्ति भागिकाः भागो विद्यते कृष्यादौ येषां ते भागिनः, तएव भागिकाः शुद्धचातुर्थिकादि भागवन्त इत्यर्थः ॥ सू० ९ ॥

उक्तं मनुष्यपुरुषाणां त्रैविध्यं साम्प्रतं सामान्यतस्तिरश्चां जलचरस्थलचरखचरविशेषाणां त्रैविध्यं द्वादशसूत्र्या, तिर्यगादिस्त्रीपुंनपुंसकानां च दशसूत्र्या, एवं द्वाविंशतिसूत्र्याऽऽह—

मूलम्—तिविहा मच्छा पण्णत्ता, तं जहा--अंडया पोयया संमुच्छिया १ । अंडया मच्छा तिविहा पण्णत्ता, तं जहा--इत्थी पुरिसा नपुंसगा २ । पोयया मच्छा तिविहा पण्णत्ता, तं जहा--इत्थी पुरिसा नपुंसगा३ । तिविहा पक्खी पण्णत्ता, तं जहा--

होते है । कण्टकोद्धाररूप कर्म में परायण जो पुरुष होते हैं वे कर्मपुरुष है, ऐसे कर्मपुरुष वासुदेव होते हैं, मध्यमपुरुष के भेदों में जो उग्र पुरुष कहे गये है वे भगवान् ऋषभदेवस्वामी के राज्यकालमें जो आरक्षक (रक्षा करनेवाले) थे वे है । कुलगुरु भोग पुरुष है, राजमित्र पुरुष है । जघन्य पुरुषों की त्रिविधता में दासी पुत्रादिरूप दास, वेतन से काम करनेवाले भृतक, और खेती किसानी आदि में जिनका भाग होता है वे भागिक पुरुष है ॥ सू०९ ॥

એવા ભોગપુરુષો ચક્રવર્તીઓ હોય છે. કંટકોદ્ધાર (શત્રુરૂપી કાંટાને કઢાડનાર) રૂપ કર્મમાં પરાયણ જે પુરુષો હોય છે તેમને કર્મપુરુષો કહે છે. એવાં કર્મપુરુષ વાસુદેવ હોય છે. મધ્યમ પુરુષોનો એક ભેદ જે ઉગ્રપુરુષ કહેવામાં આવ્યો છે તેના દૃષ્ટાન્ત રૂપે ઋષભદેવ સ્વામીના રાજકાળમાં જે આરક્ષકો (રક્ષા કરનારા) હતા, તેમને ગણાવી શકાય છે. કુલગુરુને ભોગપુરુષ, રાજમિત્રને રાજન્ય પુરુષ કહે છે. ભૃતક અને ભાગિક આ ત્રણ પ્રકારના જઘન્ય પુરુષો હોય છે. દાસીપુત્રને દાસ કહે છે, વેતન લઇને કામ કરનારને ભૃતક કહે છે અને ખેતી, વાડી આદિમા જેમનો ભાગ હોય છે તેમને ભાગિકપુરુષો કહે છે ॥સૂ.૯॥

पुरुषः पुरुषवेषधारी स्त्र्यादिरिति । पुरुषवेदो वा चिह्नपुरुष इति २ । अभिलप्य-तेऽनेनेति–मभिलाप –शब्दः, स एव पुलिङ्गतयाऽभिधानात् पुरुषः–मभिलाप पुरुषः, शब्दमात्रेण पुरुष इत्यर्थ यथा घटः कूटोवेति । उक्तञ्च–" अभिलावो पुल्लिंगाभिहाणमेत्त घडोव० " इति ३, । पुन पुरुषत्रैविध्यमाह—उत्तमपुरुषा मध्यमपुरुषा जघन्यपुरुषाः ५ । एतेऽपि–उत्तमपुरुषाश्त्रिविधा –धर्मपुरुषाः, भोग पुरुषाः, कर्मपुरुषाः । तत्र–धर्मः–क्षायिकचारित्रादि , तदर्जनपराः पुरुषाः धर्म पुरुषाः अर्हन्तः भोगा मनोज्ञशब्दादयः, तत्परायणा पुरुषा–भोगपुरुषाः—

जैसा कि इमश्रु आदि पुरुष चिह्नों से युक्त नपुंसक होता है। अथवा चिह्न शब्द का अर्थ वेष है । इस वेष से जो पुरुष है वह चिह्नपुरुष है । ऐसे चिह्नपुरुष पुरुषवेषधारी स्त्री आदि होते हैं अथवा पुरुषवेदवाला चिह्न पुरुष है २ जो पुल्लिङ्ग शब्दवाला होता है वह अभिलाप पुरुष है अर्थात् पुल्लिङ्ग शब्द द्वारा जिसका अभिधान–कथन होता है वह अभिलापपुरुष है जैसे " घटः कूट " आदि, कहा भी है–" अभिलावो पुल्लिंगाभिहा णमेत्त घडोव० " इति ५ ।

इस प्रकार से भी पुरुषप्रकार तीन होते हैं–जैसे उत्तमपुरुष आदि इनमें भी उत्तमपुरुष त्रिविध होते हैं जैसे धर्मपुरुष आदि क्षायिकचारित्र आदि का नाम धर्म है इस धर्म के उपार्जन करने में तत्पर जो पुरुष हैं वे धर्मपुरुष हैं ऐसे धर्मपुरुष अर्हन्त हैं मनोज्ञशब्दादिरूप भोग हैं इन भोगों की प्रधानतावाले जो पुरुष हैं वे भोगपुरुष हैं, ऐसे भोगपुरुष चक्रवर्ती

જેવી રીતે કે શ્મશ્રુ આદિ પુરુષચિહ્નોથી નપુંસક પણ યુક્ત હોય છે અથવા ચિહ્ન શબ્દનો અર્થ વેષ પણ થાય છે તે વેષની અપેક્ષાએ જે પુરુષ હોય છે તેને પણ ચિહ્નપુરુષ કહે છે એવાં ચિહ્નપુરુષમાં પુરુષવેષધારી સ્ત્રી આદિને ગણાવી શકાય છે અથવા પુરુષવેદવાળાને ચિહ્નપુરુષ કહે છે જે પુલિંગ તરીકે ગણી શકાય એવો હોય તેને અભિલાપપુરુષ કહે છે એટલે કે પુલિંગ (નર જાતિના શબ્દ દ્વારા જેનું કથન થાય છે તેનું નામ અભિલાપપુરુષ છે જેમ કે ઘટ કૂટ ' ઘડો વગેરે કહ્યું પણ છે કે અભિલાવો પુલ્લિંગાભિહાણમેત્ત ઘડોવ " ઇત્યાદિ—પુરુષના નીચે પ્રમાણે ત્રણ પ્રકાર પડે છે–ઉત્તમ પુરુષ આદિ.

ઉત્તમ પુરુષના ત્રણ પ્રકાર પડે છે–જેમકે ધર્મપુરુષ આદિ. ક્ષાયિક ચારિત્ર આદિનું નામ ધર્મ છે તે ધર્મનું નામ ઉપાર્જન કરવાને તત્પર હોય એવા પુરુષોને ધર્મપુરુષો કહે છે એવા ધર્મપુરુષો અર્હંત છે મનોજ્ઞ શબ્દાદિરૂપ ભોગ છે તે ભોગોની પ્રધાનતાવાળા જે પુરુષો હોય છે તેમને ભોગપુરુષો કહે છે

चक्रवर्तिनः। कर्माणि—कण्टकोद्धाररूपाणि तत्परायणाः पुरुषाः कर्मपुरुषाः—वासुदेवा ७। इति। मध्यमपुरुषा अपि—उग्रभोगराजन्यभेदात् त्रिविधाः। तत्र—उग्राः भगवत ऋषभदेवस्वामिनो राज्यकाले ये आरक्षका आसन् ते। भोगाः कुलगुरवः। राजन्याः—राजमित्राणि ८। जघन्यपुरुषाणां त्रैविध्यमाह—'दासा' इत्यादि, दासाः—दासीपुत्रादयः। भृतका'—वेतनेन कर्मकराः। 'भाइल्लग' त्ति भागिकाः भागो विद्यते कृष्यादौ येषां ते भागिनः, तएव भागिकाः शुद्धचातुर्थिकादि भागवन्त इत्यर्थः॥ सू० ९॥

उक्तं मनुष्यपुरुषाणां त्रैविध्यं साम्प्रतं सामान्यतस्तिरश्चां जलचरस्थलचरखचरविशेषाणां त्रैविध्य द्वादशसूत्र्या, तिर्यगादिस्त्रीपुंनपुंसकानां च दशसूत्र्या, एवं द्वाविंशतिसूत्र्याताहाह—

मूलम्—तिविहा मच्छा पण्णत्ता, तं जहा--अंडया पोयया संमुच्छिया १। अंडया मच्छा तिविहा पण्णत्ता, तं जहा--इत्थी पुरिसा नपुंसगा २। पोयया मच्छा तिविहा पण्णत्ता, तं जहा--इत्थी पुरिसा नपुंसगा३। तिविहा पक्खी पण्णत्ता, तं जहा--

होते है। कण्टकोद्धाररूप कर्म में परायण जो पुरुष होते है वे कर्मपुरुष हैं, ऐसे कर्मपुरुष वासुदेव होते है, मध्यमपुरुष के भेदों में जो उग्र पुरुष कहे गये है वे भगवान् ऋषभदेवस्वामी के राज्यकालमें जो आरक्षक (रक्षा करनेवाले) थे वे हैं। कुलगुरु भोग पुरुष है, राजमित्र पुरुष है। जघन्य पुरुषों की त्रिविधता में दासी पुत्रादिरूप दास, वेतन से काम करनेवाले भृतक, और खेती किसानी आदि में जिनका भाग होता है वे भागिक पुरुष है॥ सू०९॥

એવા ભોગપુરુષો ચક્રવર્તીઓ હોય છે. કંટકોદ્ધાર (શત્રુરૂપી કાંટાને કહાડનાર) રૂપ કર્મમાં પરાયણ જે પુરુષો હોય છે તેમને કર્મપુરુષો કહે છે. એવાં કર્મપુરુષ વાસુદેવ હોય છે. મધ્યમ પુરુષોનો એક ભેદ જે ઉગ્રપુરુષ કહેવામાં આવ્યો છે તેના દૃષ્ટાન્ત રૂપે ઋષભદેવ સ્વામીના રાજકાળમાં જે આરક્ષકો (રક્ષા કરનારા) હતા, તેમને ગણાવી શકાય છે. કુલગુરુને ભોગપુરુષ, રાજમિત્રને રાજન્ય પુરુષ કહે છે ભૃતક અને ભાગિક આ ત્રણ પ્રકારના જઘન્ય પુરુષો હોય છે. દાસીપુત્રને દાસ કહે છે, વેતન લઇને કામ કરનારને ભૃતક કહે છે અને ખેતી, વાડી આદિમા જેમનો ભાગ હોય છે તેમને ભાગિકપુરુષો કહે છે ॥સૂ.૯॥

अडया पोयया समुच्छिमा ४। अडया पक्खी तिविहा पण्णत्ता, त जहा इत्थी पुरिसा नपुसगा ५। पोयया पक्खी तिविहा पण्णत्ता, तं जहा-इत्थी पुरिसा नपुसगा ६। एवमेतेण अभिलावेणं उरपरिसप्पावि भाणियव्वा ९, भुयपरिसप्पा वि भाणियव्वा १२। एव चेव तिविहा तिरिक्खजोणिया पण्णत्ता, त जहा-इत्थी पुरिसा नपुसगा १। तिविहा इत्थीओ पण्णत्ताओ, त जहा तिरिक्खजोणत्थीओ, मणुस्सित्थीओ, देवित्थीओ २। तिरिक्ख जोणित्थीओ तिविहाओ पण्णत्ताओ, त जहा जलचरीओ थलचरीओ, खहचरीओ ३। मणुस्सित्थीओ तिविहाओ पण्णत्ताओ, त जहा-कम्मभूमियाओ, अकम्मभूमियाओ, अतरदीवियाओ ४। तिविहा पुरिसा पण्णत्ता, त जहा तिरिक्खजोणियपुरिसा, मणुस्सपुरिसा, देवपुरिसा५। तिरिक्खजोणियपुरिसा तिविहा पण्णत्ता, त जहा जलयरा, थलयरा, खहयरा ६। मणुस्सपुरिसा तिविहा पण्णत्ता, त जहा कम्मभूमिया, अकम्मभूमिया, अतरदीवया७। तिविहा नपुसगा पण्णत्ता, त जहा णेरइयनपुसगा, तिरिक्ख जोणियनपुसगा, मणुस्सनपुसगा८। तिरिक्खजोणियनपुसगा तिविहा पण्णत्ता, त जहा जलयरा, थलयरा, खहयरा ९। मणुस्सनपुसगा तिविहा पण्णत्ता, त जहा-कम्मभूमिया अकम्म भूमिया अतरदीवया १० ॥ सू०१० ॥

इस तरह से मनुष्य पुरुषों की त्रिविधता करी अब सामान्यतः तिर्यञ्चों की जलचर, थलचर और खेचर विशेषों की त्रिविधता सूत्रकार

આ રીતે મનુષ્ય પુરુષોની ત્રિવિધતાનું પ્રતિપાદન કરીને હવે સૂત્રકાર તિર્યંચોની-જળચર, સ્થળચર અને ખેચરની-ત્રિવિધતાનું આ સૂત્ર દ્વારા

छाया— त्रिविधा मत्स्याः प्रज्ञप्ताः, तद्यथा—अण्डजाः, पोतजाः, संमूर्च्छिमाः१। अण्डजा मत्स्यास्त्रिविधाः प्रज्ञप्ताः, तद्यथा—स्त्रियः पुरुषा नपुंसकाः २। पोतजा मत्स्यास्त्रिविधाः प्रज्ञप्ताः, तद्यथा—स्त्रियः पुरुषा नपुंसकाः ३। त्रिविधाः पक्षिण. प्रज्ञप्ता', तद्यथा—अण्डजा पोतजा' संमूर्च्छिमाः ४। अण्डजाः पक्षिणस्त्रिविधाः प्रज्ञप्ताः, तद्यथा—स्त्रियः पुरुषा नपुंसकाः ५। पोतजाः पक्षिणस्त्रिविधाः प्रज्ञप्ताः, तद्यथा—स्त्रियः पुरुषा नपुंसकानि ६। एवमेतेनाभिलापेन उरःपरिसर्पा अपि भणितव्याः ९, भुजपरिसर्पा अपि भणितव्याः १२॥ एवमेव त्रिविधास्तिर्यग्योनिकाः प्रज्ञप्ताः तद्यथा—स्त्रियः पुरुषा नपुंसकानि १। त्रिविधा' स्त्रियः प्रज्ञप्ताः, तद्यथा—तिर्यग्योनिकस्त्रियः, मनुष्यस्त्रियः, देवस्त्रियः२। तिर्यग्योनिकस्त्रियस्त्रिविधाः प्रज्ञप्ताः, तद्यथा—जलचर्यः, स्थलचर्यः, खचर्यः ३। मनुष्यस्त्रियस्त्रिविधा. प्रज्ञप्ताः, तद्यथा—कर्मभूमिजाः, अकर्मभूमिजाः, अन्तरद्वीपजाः ४। त्रिविधाः पुरुषाः प्रज्ञप्ताः, तद्यथा—तिर्यग्योनिकपुरुषाः, मनुष्यपुरुषाः, देवपुरुषाः ५। तिर्यग्योनिकपुरुषास्त्रिविधा प्रज्ञप्ताः, तद्यथा—जलचराः, स्थलचराः, खचरा ६। मनुष्यपुरुषास्त्रिविधाः प्रज्ञप्ताः, तद्यथा--कर्मभूमिजाः अकर्मभूमिजाः, अन्तरद्वीपजाः ७। त्रिविधाः नपुसकाः प्रज्ञप्ताः, तद्यथा—नैरयिकनपुंसका', तिर्यग्योनिकनपुंसकाः, मनुष्यनपुंसकाः ८। तिर्यग्योनिकनपुंसकास्त्रिविधाः प्रज्ञप्ता', तद्यथा—जलचराः, स्थलचराः, खचराः ९। मनुष्यनपुंसकास्त्रिविधाः प्रज्ञप्ता', तद्यथा—कर्मभूमिजाः, अकर्मभूमिजाः, अन्तरद्वीपजाः १०॥ सू० १०॥

टीका—'तिविहा मच्छा' इत्यादि द्वादशसूत्री सुगमा।

नवरं—अण्डे—पक्ष्यादि प्रादुर्भावककोषे जायन्ते—उत्पद्यन्ते इत्यण्डजाः। पोता एव जाता न जरायवादिना वेष्टिताः पूर्णावयवा योनिनिर्गतमात्रा एव

द्वादशसूत्र द्वारा और तिर्यगादि स्त्रीपुंनपुंसकों की त्रिविधता दशसूत्र द्वारा कहते है—'तिविहा मच्छा पण्णत्ता' इत्यादि।

टीकार्थ—जलचर जीवरूप जो मत्स्य हैं वे तीन प्रकारके कहे गये हैं-जैसे अण्डज, पोतज और संमूर्च्छिम १, अण्डज मत्स्य—स्त्री, पुरुष और नपुंसक के भेद से तीन प्रकारके कहे गये हैं। खेचर पक्षी भी तीन

કથન કરે છે અને તિર્યંગાદિ સ્ત્રી, પુંનપુંસકોની ત્રિવિધતાનુ દશ સૂત્રો દ્વારા કથન કરે છે—"तिविहा मच्छा पण्णत्ता" ઈત્યાદિ—

ટીકાર્થ—જળચર જીવરૂપ જે મત્સ્ય છે તેના નીચે પ્રમાણે ત્રણ પ્રકાર કહ્યા છે. (૧) અંડજ, (૨) પોતજ અને (૩) સંમૂર્ચ્છિમ. અંડજ મત્સ્યના પણ સ્ત્રી, પુરુષ અને નપુંસક એવાં ત્રણ ભેદ કહ્યાં છે ખેચરપક્ષીના પણ નીચે પ્રમાણે

प्रकार के कहे गये है—जैसे-अण्डज, पोतज और सम्मूर्च्छिम, इनमें जो अण्डज पक्षी हैं वे स्त्री पुरुष और नपुंसक के भेद से तीन प्रकारके कहे गये है—पोतज पक्षी भी तीन प्रकारके कहे गये है—स्त्री, पुरुष और नपुंसक इस तरहसे इस अभिलापद्वारा उर परिसर्प और भुज परिसर्पके विषयमें भी कथन करना चाहिये। इसी तरह से त्रिविध तिर्यग्योनिक कहे गये हैं—जैसे-स्त्री, पुरुष और नपुंसक इनमें स्त्रियां तीन प्रकार की कही गई है। जैसे तिर्यग्योनिक स्त्रियां, मनुष्यस्त्रियां और देवस्त्रियां तिर्यग्योनिकस्त्रियां भी तीन प्रकारकी कही गई है—जलचरी, स्थलचरी और खेचरी मनुष्यस्त्रियां-कर्मभूमिजा, अकर्मभूमिजा और अन्तरद्वीपजा के भेद से तीन प्रकारकी होती है, तिर्यग्योनिक पुरुष, मनुष्य पुरुष और देवपुरुष के भेद से पुरुष तीन तरहके होते है। तिर्यग्योनिकपुरुष भी तीन प्रकार के होते है। जैसे जलचर, स्थलचर और खेचर, मनुष्य पुरुष कर्मभूमिज, अकर्मभूमिज अन्तरद्वीपज ऐसे तीन भेदवाले हैं। नपुंसक भी तीन प्रकारके होते है—नैरयिक नपुंसक, तिर्यग् नपुंसक और मनुष्यनपुंसक, तिर्यग्योनि नपुंसक भी तीन प्रकार है। जलचर,

---

ત્રણ પ્રકાર કહ્યા છે-(૧) અંડજ, પોતજ અને (૩) સમૂર્ચ્છિમ તેમાંથી જે અંડજ પક્ષી છે તેના નર નારી (માદા) અને નપુંસક એવા ત્રણ ભેદ કહ્યા છે પોતજ પક્ષીના પણ નર માદા અને નપુંસક એવા ત્રણ પ્રકાર છે આ રીતે જ–આ પ્રકારના અભિલાપ દ્વારા ઉરપરિસર્પ અને ભુજપરિસર્પના ભેદોનું કથન પણ સમજવું જોઇએ એજ પ્રમાણે તિર્યયોનિકના પણ ત્રણ પ્રકાર કહ્યા છે-(૧) સ્ત્રી (૨) પુરુષ અને (૩) નપુંસક તિર્યગ્યોનિક સ્ત્રીના નીચે પ્રમાણે ત્રણ પ્રકાર છે-(૧) તિર્યગ્યોનિક સ્ત્રીઓ (૨) મનુષ્યયોનિક સ્ત્રીઓ અને (૩) દેવસ્ત્રીઓ (દેવીઓ) તિર્યગ્યોનિક સ્ત્રીઓના ત્રણ પ્રકાર છે-(૧) જલચરી, (૨) સ્થલચરી અને (૩) ખેચરી મનુષ્ય સ્ત્રીઓના પણ ત્રણ પ્રકાર છે (૧) કર્મભૂમિજા (૨) અકર્મભૂમિજા (૩) અન્તરદ્વીપજા. પુરુષના પણ ત્રણ પ્રકાર હોય છે-(૧) તિર્યગ્યોનિક પુરુષ (૨) મનુષ્યપુરુષ અને (૩) દેવપુરુષ. તિર્યગ્યોનિક પુરુષના પણ આ પ્રમાણે ત્રણ ભેદ છે-(૧) જલચર, (૨) સ્થલચર અને (૩) ખેચર મનુષ્ય પુરુષના પણ ત્રણ પ્રકાર કહ્યા છે-(૧) કર્મભૂમિજ (૨) અકર્મભૂમિજ અને (૩) અન્તરદ્વીપજ નપુંસકના પણ ત્રણ પ્રકાર છે-(૧) નપુંસક નારકો, (૨) નપુંસક તિર્યંચો અને (૩) નપુંસક મનુષ્યો નપુંસક તિર્યંચોના પણ નીચે પ્રમાણે ત્રણ ભેદ છે-(૧) જળચર, (૨) સ્થળચર અને

परिस्पन्दादि सामर्थ्योपेताः पोतजाः। यद्वा-पोतो वस्त्र तेन तत्समार्जिता लक्ष्यन्ते। तथा च-पोता इव-वस्त्रसंमार्जिता इव गर्भवेष्टनचर्माऽनावृतत्वात् जायन्ते-उत्पद्यन्ते इति, तथा-पोतात्-गर्भवेष्टनचर्मरहितगर्भात् जायन्त इति वा पोतजाः।

स्थलचर और खेचर, मनुष्य नपुंसक भी तीन के हैं—कर्मभूमिज, अकर्मभूमिज और अन्तरद्वीपज।

पक्षी आदि जिसमें से प्रादुर्भूत होकर बाहर निकलते हैं। ऐसे कोष का नाम अण्ड है, इस अण्ड से जिनकी उत्पत्ति होती है वे अण्डज हैं, गर्भ जन्म का यह एक भेद है। अर्थात् संमूच्छिम जन्म गर्भजन्म और उपपाद जन्म इस तरह से जन्म के तीन भेद होते हैं, इनमें पोतजन्मवालों के अण्डे से जो पैदा होते हैं उनका और जो जरायु से पैदा होते हैं उनका गर्भजन्म होना है, अतः अण्डे से पैदा होनेवाले जितने जीव हैं वे सब गर्भजन्मवाले होते हैं। इसी तरह जो जरायु आदि से वेष्टित नहीं होते हैं किन्तु माताके उदर से बाहर निकलते ही परिस्पन्दादि (हलनचलनक्रिया) सहित होते हैं वे पोतज हैं अथवा पोत नाम वस्त्र का है। उत्पन्न होते ही जो ऐसे ज्ञात होवें कि मानों वे वस्त्र से ही पुछे हुए उत्पन्न हुए हैं। अतः ये पोत जन्मवाले गर्भवेष्टनचर्म से अनावृत रहने के कारण वस्त्रसे संमार्जित हुए

(૩) ખેચર મનુષ્ય નપુંસકના પણ ત્રણ પ્રકાર છે(૧)-કર્મભૂમિજ, (૨) અકર્મભૂમિજ, અને (૩) અન્તરદ્વીપજ પક્ષી આદિ જેમા પેદા થઇને બહાર નીકળે છે, એવા કોષને અંડ (ઇંડું) કહે છે. ઇંડામાથી જે જીવની ઉત્પત્તિ થાય છે, તે જીવને અંડજ કહે છે

ગર્ભજન્મનો તે એક ભેદ છે. એટલે કે સંમૂર્ચ્છિમ જન્મ, ગર્ભજન્મ અને ઉપપાદ જન્મ, આ રીતે પણ જન્મના ત્રણ પ્રકાર પડે છે પોતજન્મ વાળાના ઇંડામાથી પેદા થનાર જીવો અને જરાયુમાંથી પેદા થનાર જીવો ગર્ભ-જન્મવાળા હોય છે તે કારણે ઇંડામાંથી પેદા થનારા જે જે જીવો હોય છે, તે બધા ગર્ભજન્મવાળા જ હોય છે એજ પ્રમાણે જે જીવો જરાયુ આદિથી વેષ્ટિત (વીંટળાયેલા) હોતા નથી પણ માતાના ગર્ભમાંથી બહાર નીકળતાની સાથે જ પરિસ્પન્દાદિ (હલનચલન આદિ) ક્રિયાથી યુક્ત હોય છે, તે જીવોને પોતજ કહે છે અથવા-પોત એટલે વસ્ત્ર જન્મનાની સાથે જ જે જીવો વસ્ત્રથી લૂછ્યા હોય એવા નિર્મળ લાગે છે તે જીવોને પોતજ કહે છે પોત જન્મવાળા જીવો ગર્ભવેષ્ટન ચર્મથી અનાવૃત રહેવાને કારણે વસ્ત્રથી સંમાર્જિત

प्रकार के कहे गये है–जैसे-अण्डज, पोतज और समूर्च्छिम, इनमें जो अण्डज पक्षी हैं वे स्त्री पुरुष और नपुंसक के भेद से तीन प्रकारके कहे गये है–पोतज पक्षी भी तीन प्रकारके कहे गये है—स्त्री, पुरुष और नपुंसक इस तरहके इस अभिलापद्वारा उर' परिसर्प और भुज परिसर्पके विषयमें भी कथन करना चाहिये। इसी तरह से त्रिविध तिर्यग्योनिक कहे गये है —जैसे-स्त्री, पुरुष और नपुसक इनमें स्त्रियां तीन प्रकार की कही गई है । जैसे तिर्यग्योनिक स्त्रियां, मनुष्यस्त्रियां और देवस्त्रियां तिर्यग्योनिकस्त्रियां भी तीन प्रकारकी कही गई है–जलचरी, स्थलचरी और खेचरी मनुष्यस्त्रिया–कर्मभूमिजा, अकर्मभूमिजा और अन्तरद्वीपजा के भेद से तीन प्रकारकी होती है, तिर्यग्योनिक पुरुष, मनुष्य पुरुष और देवपुरुष के भेद से पुरुष तीन तरहके होते है। तिर्यग्योनिकपुरुष भी तीन प्रकार के होते है । जैसे जलचर, स्थलचर और खेचर, मनुष्य पुरुष कर्मभूमिज, अकर्मभूमिज अन्तरद्वीपज ऐसे तीन भेदवाले हैं। नपुंसक भी तीन प्रकारके होते है—नैरयिक नपुंसक, तिर्यग् नपुंसक और मनुष्यनपुंसक, तिर्यग्योनि नपुंसक भी तीन प्रकार है । जलचर,

---

ત્રણ પ્રકાર કહ્યા છે–(૧) અંડજ, પોતજ અને (૩) સમૂચ્છિમ તેમાંથી જે અંડજ પક્ષી છે તેના નર, નારી (માદા) અને નપુંસક એવા ત્રણ ભેદ કહ્યા છે પેતજ પક્ષીના પણ નર, માદા, અને નપુંસક એવા ત્રણ પ્રકાર છે આ રીતે જ–આ પ્રકારના અભિલાપ દ્વારા ઉરપરિસર્પ અને ભુજપરિસર્પના ભેદોનું કથન પણ સમજવું જોઇએ. એજ પ્રમાણે તિર્યગ્યોનિકના પણ ત્રણ પ્રકાર કહ્યા છે–(૧) સ્ત્રી (૨) પુરુષ અને (૩) નપુંસક તિર્યગ્યોનિક સ્ત્રીના નીચે પ્રમાણે ત્રણ પ્રકાર છે–(૧) તિર્યગ્યોનિક સ્ત્રીઓ, (૨) મનુષ્યયોનિક સ્ત્રીઓ અને (૩) દેવસ્ત્રીઓ (દેવીઓ) તિર્યગ્યોનિક સ્ત્રીઓના ત્રણ પ્રકાર છે–(૧) જલચરી, (૨) સ્થલચરી અને (૩) ખેચરી, મનુષ્ય સ્ત્રીઓના પણ ત્રણ પ્રકાર છે (૧) કર્મભૂમિજા (૨) અકર્મભૂમિજા (૩) અન્તરદ્વીપજા. પુરુષના પણ ત્રણ પ્રકાર હોય છે–(૧) તિર્યગ્યોનિક પુરુષ (૨) મનુષ્યપુરુષ અને (૩) દેવપુરુષ. તિર્યગ્યોનિક પુરુષના પણ આ પ્રમાણે ત્રણ ભેદ છે–(૧) જલચર, (૨) સ્થલચર અને (૩) ખેચર મનુષ્ય પુરુષના પણ ત્રણ પ્રકાર કહ્યા છે–(૧) કર્મભૂમિજ, (૨) અકર્મભૂમિજ અને (૩) અન્તરદ્વીપજ નપુંસકના પણ ત્રણ પ્રકાર છે–(૧) નપુંસક નારકો (૨) નપુંસક તિર્યચો અને (૩) નપુંસક મનુષ્યો નપુંસક તિર્યચોના પણ નીચે પ્રમાણે ત્રણ ભેદ છે–(૧) જલચર, (૨) સ્થલચર અને

परिस्पन्दादि सामर्थ्योपेताः पोतजाः। यद्वा-पोतो वस्त्रं तेन तत्समार्जिता लक्ष्यन्ते। तथा च-पोता इव-वस्त्रसंमार्जिता इव गर्भवेष्टनचर्माऽनावृतत्वात् जायन्ते-उत्पद्यन्ते इति, तथा-पोतात्-गर्भवेष्टनचर्मरहितगर्भात् जायन्त इति वा पोतजाः।

स्थलचर और खेचर, मनुष्य नपुंसक भी तीन के हैं—कर्मभूमिज, अकर्मभूमिज और अन्तरद्वीपज।

पक्षी आदि जिसमें से प्रादुर्भूत होकर बाहर निकलते हैं। ऐसे कोष का नाम अण्ड है, इस अण्ड से जिनकी उत्पत्ति होती है वे अण्डज हैं, गर्भ जन्म का यह एक भेद है। अर्थात् संमूर्च्छिम जन्म गर्भजन्म और उपपाद जन्म इस तरह से जन्म के तीन भेद होते हैं, इनमें पोतजन्मवालों के अण्डे से जो पैदा होते हैं उनका और जो जरायु से पैदा होते हैं उनका गर्भजन्म होता है, अतः अण्डे से पैदा होनेवाले जितने जीव हैं वे सब गर्भजन्मवाले होते हैं। इसी तरह जो जरायु आदि से वेष्टित नहीं होते हैं किन्तु माताके उदर से बाहर निकलते ही परिस्पन्दादि (हलनचलनक्रिया) सहित होते हैं वे पोतज हैं अथवा पोत नाम वस्त्र का है। उत्पन्न होते ही जो ऐसे ज्ञात होवें कि मानों ये वस्त्र से ही पुछे हुए उत्पन्न हुए हैं। अतः ये पोत जन्म-वाले गर्भवेष्टनचर्म से अनावृत रहने के कारण वस्त्रसे संमार्जित हुए

(૩) ખેચર મનુષ્ય નપુંસકના પણ ત્રણ પ્રકાર છે(૧)-કર્મભૂમિજ, (૨) અકર્મભૂમિજ, અને (૩) અન્તરદ્વીપજ પક્ષી આદિ જેમા પેદા થઇને બહાર નીકળે છે, એવા કોષને અંડ (ઇંડું) કહે છે. ઇંડામાંથી જે જીવની ઉત્પત્તિ થાય છે, તે જીવને અંડજ કહે છે

ગર્ભજન્મનો તે એક ભેદ છે. એટલે કે સમૂર્છિમ જન્મ, ગર્ભજન્મ અને ઉપપાદ જન્મ, આ રીતે પણ જન્મના ત્રણ પ્રકાર પડે છે પોતજન્મ વાળાના ઇંડામાથી પેદા થનાર જીવો અને જરાયુમાથી પેદા થનાર જીવો ગર્ભ-જન્મવાળા હોય છે તે કારણે ઇંડામાથી પેદા થનારા જે જે જીવો હોય છે, તે બધા ગર્ભજન્મવાળા જ હોય છે એજ પ્રમાણે જે જીવો જરાયુ આદિથી વેષ્ટિત (વીંટળાયેલા) હોતા નથી પણ માતાના ગર્ભમાંથી બહાર નીકળતાની સાથે જ પરિસ્પન્દાદિ (હલનચલન આદિ) ક્રિયાથી યુક્ત હોય છે, તે જીવોને પોતજ કહે છે અથવા-પોત એટલે વસ્ત્ર જન્મનાની સાથે જ જે જીવો વસ્ત્રથી લૂછયા હોય એવા નિર્મળ લાગે છે તે જીવોને પોતજ કહે છે પોત જન્મવાળા જીવો ગર્ભવેષ્ટન ચર્મથી અનાવૃત રહેવાને કારણે વસ્ત્રથી સંમાર્જિત

समूर्च्छिमा –सम्मूर्च्छनं सम्मूर्च्छ –गर्भाधानमन्तरेणैव स्वयं समुत्पत्तिस्तेन, यद्वा-समन्ततो देहस्य मूर्च्छनम् अवयवसंयोगस्तेन निर्वृत्ता समूर्च्छिमा –अगर्भजा माता पितृसंयोगं विनैव स्वयं समुत्पन्ना इत्यर्थः । समूर्च्छिमानां स्त्र्यादिभेदो नास्ति, नपुंसकत्वात्तेषामिति न सूत्रे दर्शितः। अण्डजाः पक्षिण –हंसादयः पोतजाः कुञ्जर-शल्लक–शश–नकुल मूषिक चर्म पक्षा–वल्गुली प्रभृतयः, संमूर्च्छिमाः खञ्जनकादयः एषामुद्भिज्जत्वेऽपि समूर्च्छिमत्वव्यपदेशो भवति, उद्भिज्जादीनां संमूर्च्छिमविशेषत्वा दिति ६ । ' एवं ' इत्यादि, एवं–पक्षिवत् एतेन पक्षिसूत्रोक्तेनाभिलापेन 'तिविहा

की तरह गर्भ से उत्पन्न होते हैं । अथवा गर्भ से ये उत्पन्न होते हैं वह गर्भ, गर्भवेष्टनचर्म से रहित होता है इस लिये भी ये पोतज कहे जाते है । गर्भाधान के बिनाही जिनकी स्वय उत्पत्ति हो जाती है वे जीव संमूर्च्छिम हैं। अथवा सब तरफ से जो देहका मूर्छन है–अवयव संयोग है-इस अवयव संयोग से जो निर्वृत्त होते हैं वे समूर्च्छिम है । ये अगर्भज होते हैं। माता पिता के संयोग के बिना ही ये स्वयं उत्पन्न होते है । इन समूर्च्छिम जीवों में स्त्री आदिका भेद नहीं है क्यों कि ये नपुंसक ही होते है । इस लिये सूत्र में इसे नहीं दिखलाया गया है, अण्डे से उत्पन्न पक्षी–हंसादिक है, पोतज–कुंजर (हाथी), शल्लक, शश, नकुल, मूषक और चमगादड़ आदि हैं और समूर्च्छिम खञ्जनक आदि है । इनमें उद्भिज्जता होने पर भी समूर्च्छिमत्व व्यपदेश होता है । क्यों कि उद्भिज्ज समूर्च्छिम विशेष होते है । इस पक्षी सूत्रोक्त अभिलाप से ऐसा

બચ્ચા હોય એવી રીતે ગર્ભમાંથી બહાર આવે છે અથવા જે ગર્ભમાં તેઓ ઉત્પન્ન થાય છે તે ગર્ભ ગર્ભવેષ્ટનચર્મથી રહિત હોય છે તેથી પણ તેમને પોતજ કહે છે ગર્ભાધાન વિના જ જીવોની આપોઆપ ઉત્પત્તિ થઈ જાય છે તે જીવોને સમ્મૂર્ચ્છિમ કહે છે અથવા બધી પ્રકારના અવયવ સંયોગથી જે નિવૃત્ત હોય છે એવાં જીવોને સમ્મૂર્ચ્છિમ કહે છે તે જીવો અગર્ભજ હોય છે–માતાપિતાના સંયોગ સિવાય જ તેઓ સ્વયં ઉત્પન્ન થઈ જાય છે તે સમ્મૂર્ચ્છિમ જીવોમાં નર અને નારી આદિના ભેદ હોતા નથી કારણ કે તે જીવો નપુસક જ હોય છે તે કારણે સૂત્રમા સમ્મૂર્ચ્છિમ જીવોના ત્રણ ભેદ બતાવવામાં આવ્યા નથી હંસ વગેરે પક્ષી ઇંડામાંથી ઉત્પન્ન થતા હોય છે તેથી તેમને અંડજ કહે છે હાથી સસલાં નોળિયાં ઉંદર ચામાચીડિયાં આદિ જીવોને પોતજ કહે છે ખંજનક આદિ જીવો સમ્મૂર્ચ્છિમ જ ગણાય છે તેમનામાં ઉદ્ભિજ્જતા હોવા છતાં પણ સમ્મૂર્ચ્છિમત્વનો વ્યપદેશ (વ્યવહાર) થાય છે કારણ કે ઉદ્ભિજ્જ સમ્મૂર્ચ્છિમવિશેષ હોય છે આ પક્ષિ

उरपरिसप्पा पणगा' इत्यादिरूपेण उरः परिसर्पाः भुजपरिसर्पाश्च भणितव्याः- वाच्याः। उरसा-वक्षसा परिसर्पन्ति चलन्तीति-उरः-परिसर्पाः-सर्पादयः १। भुजाभ्यां=बाहुभ्यां परिसर्पन्तीति भुजपरिसर्पाः-गोधा नकुलादयः २। अथ-स्त्री पुरुषनपुंसकानां त्रैविध्यमाह-'एवं चेव' इत्यादि-दशसूत्री सुगमा, नवरम्-एवमेव=यथा पक्षिगणस्तथैव तिर्यग्योनिकास्त्रिविधा प्रज्ञप्ताः, तद्यथा-स्त्रियः पुरुषा नपुंसका इति। कृष्यादि कर्मप्रधाना भूमिः कर्मभूमिः-भरतादिका पञ्चदशविधा, तत्र जाताः कर्मभूमिजाः। एतद्-अकर्मभूमिः-भोगभूमिः देवकुर्वादिका त्रिंशद्विधा,

---

भी जान लेना चाहिये कि उरः परिसर्प-सर्पादिक वगैरह और भुज-परिसर्प-जो दोनों भुजाओं से चलते हैं ऐसे गोधानकुल आदि ये सब भी स्त्री, पुरुष और नपुंसक के भेद से तीन भेदवाले होते हैं। उरः परिसर्पमें जो छातीके बलसे चलते हैं वे लिये गयेहैं-जैसे सर्प आदि, कृष्यादि प्रधानभूमि का नाम कर्मभूमि है। ये कर्मभूमियां भरत आदिके भेद से-पांच भरत पांच एरवत और पांच महाविदेह, इस तरह से १५ होती है। इन कर्मभूमियों में जो उत्पन्न होते हैं वे कर्मभूमिज हैं। अकर्मभूमि-भोगभूमि में जो उत्पन्न होते हैं वे अकर्मभूमिज हैं। अढाई द्वीपमें भोगभूमियों की संख्या तीस ३० है। हैमवत, हरिवर्ष, रम्यकवर्ष, देवकुरु, उत्तरकुरु और हैरण्यवत ये ६ जम्बूद्वीप में भोग-भूमियां हैं धातकी खण्ड में ये बारह हैं और पुष्करार्ध में भी इसी नाम की है। इस प्रकार से ये कुल भोगभूमियां तीस ३० हो जाती हैं।

સૂત્રોક્ત અભિલાપ દ્વારા એ પણ સમજવું જોઇએ કે ઉરપરિસર્પ (સર્પ વગેરે) અને ભુજપરિસર્પ (બન્ને ભુજાઓના બળથી ચાલનારા નોળિયા વગેરે) ના પણ નર, નારી અને નપુંસક એવાં ત્રણ જાતિભેદ હોય છે છાતીના બળથી ચાલનારા સર્પ આદિ જીવોનો ઉરપરિસર્પના વિભાગમાં સમાવેશ થાય છે કૃષ્યાદિપ્રધાન ભૂમિનું નામ કર્મભૂમિ છે પાંચ ભરત, પાંચ ઐરવત અને પાંચ મહાવિદેહ, એ રીતે કુલ ૧૫ કર્મભૂમિઓ છે તે કર્મ-ભૂમિમાં જે જીવો ઉત્પન્ન થાય છે તેમને કર્મભૂમિજ કહે છે અકર્મભૂમિ-ઓમાં (ભોગ ભૂમિઓમાં) ઉત્પન્ન થતા જીવોને અકર્મભૂમિજ કહે છે. અઢી દ્વીપમાં કુલ ૩૦ ભોગભૂમિઓ છે હૈમવત, હરિવર્ષ, રમ્યકવર્ષ દેવકુરુ, ઉત્તરકુરુ અને હૈરણ્યવત, આ ૬ જમ્બૂદ્વીપમાં આવેલી ભોગભૂમિઓ છે ધાતકી-ખંડમાં ૧૨ અને પુષ્કરાર્ધમાં પણ એજ નામની ૧૨ ભોગભૂમિઓ છે. આ રીતે કુલ ૩૦ ભોગભૂમિઓ (અકર્મભૂમિઓ) છે. સમુદ્રની મધ્યમાં જે દ્વીપો

तत्र जाता अकर्मभूमिजाः । अन्तरे-मध्ये समुद्रस्य द्वीपा ये ते अन्तरद्वीपाः, तेषु जाता अन्तरद्वीपजा ॥ सू० १० ॥

कृष्णादिपरिणतिम जीवानां लेश्यात्वतो भवतीति लेश्या प्ररूपयन् दण्डकेषु ता आह—

सूत्रम्—नेरइयाणं तओ लेस्साओ पण्णत्ताओ, तं जहा कण्हलेस्सा, नीललेस्सा, काउलेस्सा १ । असुरकुमाराणं तओ लेस्साओ संकिलिट्ठाओ पण्णत्ताओ, तं जहा-कण्हलेस्सा, नील लेस्सा, काउलेस्सा २ । एवं जाव थणियकुमाराणं ११ । एवं पुढविकाइयाणं १२ । आउ-वणस्सइकाइयाणवि १३ १४, तेउ काइयाणं १५, वाउकाइयाणं १६, बेइंदियाणं १७, तेंदियाणं१८, चउरिंदियाणवि तओ लेस्साओ जहा नेरइयाणं १९ । पंचिंदियतिरिक्खजोणियाणं तओ लेस्साओ संकिलिट्ठाओ पण्णत्ताओ, तं जहा-कण्हलेस्सा, नीललेस्सा, काउलेस्साओ२० । पंचिंदियतिरिक्खजोणियाणं तओ लेस्साओ असंकिलिट्ठाओ पण्णत्ताओ, तं जहा तेउलेस्सा, पम्हलेस्सा, सुक्कलेस्सा२१। एवं मणुस्साणवि २३ । वाणमंतराणं जहा असुरकुमाराणं २४ । वेमाणियाणं तओ लेस्साओ पण्णत्ताओ तं जहा तेउलेस्सा पम्हलेस्सा, सुक्कलेस्सा २५॥ सू ११॥

समुद्र के मध्य में जो द्वीप हैं वे अन्तरद्वीप है । इन अन्तरद्वीपों में जो उत्पन्न होते है वे अन्तरद्वीपज है । ये अन्तरद्वीप केवल लवणसमुद्र में ही हैं इनकी संख्या छप्पन है ॥ सू०१० ॥

છે તેમને અન્તરદ્વીપો કહે છે તે અન્તરદ્વીપોમાં જે જીવો ઉત્પન્ન થાય છે તેમને અન્તરદ્વીપજ કહે છે લવણ સમુદ્રમાં જ એવાં અન્તરદ્વીપો આવેલા છે અને તેમની સંખ્યા ૫૬ ની છે ॥ સૂ૦૧ ॥

छाया-नैरयिकाणां तिस्रो लेश्याः प्रज्ञप्ताः, तद्यथा-कृष्णलेश्या, नीललेश्या, कापोतलेश्या १। असुरकुमाराणां तिस्रो लेश्याः संक्लिष्टाः प्रज्ञप्ताः, तद्यथा-कृष्णलेश्या, नीललेश्या, कापोतलेश्या २। एवं यावत् स्तनितकुमाराणाम् ११। एवं पृथिवीकायिकानाम् १२, अप्-वनस्पतिकायिकानामपि १३-१४। तेजस्कायिकानां १५, वायुकायिकानां १६, द्वीन्द्रियाणां १७, त्रीन्द्रियाणां १८, चतुरिन्द्रियाणामपि तिस्रो लेश्या यथा नैरयिकाणाम् १९। पञ्चेन्द्रियतिर्यग्योनिकाना तिस्रोलेश्याः संक्लिष्टाः प्रज्ञप्ता, तद्यथा-कृष्णलेश्या, नीललेश्या, कापोतलेश्या २०। पञ्चेन्द्रितिर्यग्योनिकानां तिस्रो लेश्या असंक्लिष्टाः प्रज्ञप्ताः तद्यथा-तेजोलेश्याः, पद्मलेश्याः, शुक्ललेश्याः २१। एव मनुष्याणामपि २३। वानव्यन्तराणां यथा असुरकुमाराणां-२४। वैमानिकानां तिस्रो लेश्याः प्रज्ञप्ता, तद्यथा-तेजोलेश्या, पद्मलेश्या, शुक्ललेश्या २५॥ सू० ११॥

जीवों का स्त्री आदि के विषय में परिणति (आसक्ति) लेश्या के वश से होती है इसलिये लेश्याकी प्ररूपणा करते हुए सूत्रकार दण्डकों में उनका कथन करते हैं-' नेरइयाणं तओ लेस्साओ पण्णत्ताओ ' इ०

सूत्रार्थ-नैरयिकों के तीन लेश्याएँ कही गई हैं जो इस प्रकार से हैं-कृष्णलेश्या, नीललेश्या और कापोतलेश्या। असुरकुमारों के भी वे ही तीन लेश्याएँ संक्लिष्टरूपमें कही गई हैं इसी तरह का कथन यावत् स्तनितकुमारों तक जानना चाहिये, पृथिवीकायिकों के अप्कायिकों के और वनस्पतिकायिकों के तथा तेजस्कायिकों के, वायुकायिकों के, द्वीन्द्रियों के, तेइन्द्रियों के एवं चौइन्द्रियों के भी नैरयिकों की तरह से ही तीनों कृष्णादि लेश्याएँ जाननी चाहिये, तथा जो पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च हैं उनको संक्लिष्ट रूपमें ये कृष्णादि तीन लेश्याएँ और असंक्लिष्ट रूपमें

જીવોમા સ્ત્રી આદિના વિષયમાં જે પરિણતિ (આસક્તિ) હોય છે, તે લેશ્યાને લીધે હોય છે તેથી હવે સૂત્રકાર ૨૪ દંડકોના જીવોમા લેશ્યાઓની પ્રરૂપણા કરે છે-" नेरइयाण तओ लेस्साओ पण्णत्ताओ ઇત્યાદિ—

સૂત્રાર્થ-નારકોમાં કૃષ્ણલેશ્યા, નીલલેશ્યા અને કાપોતલેશ્યા, આત્રણ લેશ્યાઓનો સદ્ભાવ હોય છે. અસુરકુમારોમાં પણ એજ ત્રણ લેશ્યાઓનો સંકિલષ્ટ રૂપે સદ્ભાવ કહ્યો છે. આ પ્રકારનુ કથન સ્તનિતકુમારો પર્યન્તના ભવનપતિ દેવો વિષે પણ સમજવું પૃથ્વીકાયિક, અપ્કાયિક, વનસ્પતિકાયિક, તેજસ્કાયિક, વાયુકાયિક, દ્વીન્દ્રિયો, ત્રીન્દ્રિયો અને ચતુરિન્દ્રિયોમાં પણ નારકોની જેમ કૃષ્ણ, નીલ અને કાપોત લેશ્યાનો સદ્ભાવ હોય છે. પંચેન્દ્રિય તિર્યંચોમાં કૃષ્ણાદિ લેશ્યાઓનો સંકિલષ્ટરૂપે સદ્ભાવ સમજવો અને તેજોલેશ્યા, પદ્મલેશ્યા અને

टीका—'नेरइयाणं' इत्यादि सूत्रत्रयं सुगमानि। विशेषमात्र—नैरयिकाणां कृष्णनीलकापोतलेश्याः संक्लिष्टादि विशेषणरहिता उक्ताः, सम्यक्तया तासां विरोधः सद्भावादिति १। असुरकुमारेषु संक्लिष्टतेजोलेश्या सक्लिष्टामवत्लो लेश्या भवतीयम त्रिस्थानकावतारात् संक्लिष्टा इति विशेषण प्रोक्तम् २। एष स्तनितकुमारपर्यन्त विज्ञेयम् १९। 'एवं' इति—अननैव प्रकारेण असुरकुमारवदेवे

तेजोलेश्या, पद्मलेश्या, और शुक्ललेश्या ये तीन लेश्याएँ कही गई जाननी चाहिये। इसी तरह का कथन लेश्याओं के सम्बन्ध में मनुष्यों के भी जानना चाहिये, वानव्यन्तरों के लेश्याओं का कथन असुरकुमारोंके कही गई लेश्याओं के कथन के जैसा जानना चाहिये, वैमानिकों में ये तीन लेश्याएँ होतीहैं। जैसे—तेजोलेश्या पद्मलेश्या और शुक्ललेश्या।

टीकार्थ—नैरयिकोंमें जो कृष्ण, नील और कापोत ये तीन लेश्याएँ संक्लिष्ट विशेषण से रहित कही गई है सो उसका कारण ऐसा है कि वहां पर ये ही तीनों लेश्याएँ होती हैं और दूसरी नहीं। तथा असुरकुमारों में असंक्लिष्ट तेजोलेश्यासहित चार लेश्याएँ होती हैं, परन्तु यहां त्रिस्थानक के प्रकरण होने से उनमें कृष्णादि तीन लेश्याएँ संक्लिष्ट रूप में होती हैं इसीलिये "असंक्लिष्ट" ऐसा विशेषण दिया है इसी तरह का कथन स्तनितकुमार तक के भवनपतियों में इन्हीं लेश्याओं के होने

शुक्ल लेश्याने। असंक्लिष्ट रूपे सद्भाव समजवे। मनुष्यनी लेश्याओ विषेनु कथन पंचेन्द्रिय तिर्यचोनी लेश्याओना कथन प्रमाणे समजवुं वानव्यन्तरोनी लेश्याओनुं कथन असुरकुमारोनी लेश्याओना उपर्युक्त कथन प्रमाणे समजवुं वैमानिकोमां नीचे प्रमाणे त्रण लेश्याओनो सद्भाव होय छे—तेजोलेश्या, पद्मलेश्या अने शुक्ललेश्या

टीकार्थ—नारकोमां जे कृष्ण नील अने कापोत, ए त्रण लेश्याओनो सद्भाव संक्लिष्ट विशेषणथी रहित बताववामां आव्यो छे—एटले के ते त्रण लेश्याओनो असंक्लिष्ट रूपे सद्भाव होय छे—तेनुं कारण ए छे के तेओमां ए त्रण लेश्याओ ज होय छे बाकीनी एके लेश्या होती नथी असुरकुमारोमां असंक्लिष्ट तेजोलेश्या सहित चार लेश्याओ होय छे परन्तु अहीं त्रिस्थानकनो अधिकार चालतो होवाथी तेमनामां कृष्णादि त्रण लेश्याओनो सद्भाव संक्लिष्ट रूपे समजवानो छे अने तेजोलेश्यानो सद्भाव असंक्लिष्ट रूपे समजवानो छे आ प्रकारनुं कथन स्तनितकुमार पर्यन्तना देवो विषे पण

त्यर्थः पृथिव्यब्वनस्पतिषु 'संक्लिष्टाः' इति सविशेषणास्तिस्रो लेश्याः प्रोक्ताः, तेषु देवोत्पत्तिसम्भवादपर्याप्तावस्थायां चतुर्थ्यां असंक्लिष्टतेजोलेश्याया अपि सद्भावात् ।१८। तेजोवायुद्वित्रिचतुरिन्द्रियेषु नैरयिकवन्निर्विशेषणास्तिस्रो लेश्या उक्ताः, तेषु देवोत्पादस्यासद्भावात् १९। पञ्चेन्द्रियतिरश्चां मनुष्याणां च संक्लिष्टा-संक्लिष्टरूपाः षडपिलेश्या भवन्तीति सविशेषणा चतुःसूत्री २३। व्यन्तराणामसुरकुमारवत्संक्लिष्टास्तिस्रो लेश्याः वाच्याः २४। वैमानिकेषु निर्विशेषणास्तिस्रोऽसंक्लिष्टा लेश्याः सन्ति, तत्र तासामेव सद्भावात्, विशेषणं तु व्यवच्छेद्यसद्भाव एव

के संबंध में भी जानना चाहिये। जिस प्रकारसे संक्लिष्टरूपमें कृष्णादि लेश्याएँ असुरकुमारों को कही गई हैं उसी प्रकार से ये ही तीनों कृष्णादि लेश्याएँ संक्लिष्टरूप में पृथिवीकायिक में, अप्कायिक में और वनस्पतिकायिकों में कही गई जानना चाहिये। क्यों कि इनमें देवोत्पत्ति की सम्भवतासे अपर्याप्तावस्था में असंक्लिष्ट चौथी तेजोलेश्याका भी सद्भाव हो सकता है। पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्चों को और मनुष्यों को संक्लिष्ट और असंक्लिष्ट रूप छहों भी लेश्याएँ होती हैं इसलिये यह सविशेषणा चतुःसूत्री है। अर्थात्—सविशेषण चार सूत्र हैं। असुरकुमारों की तरह व्यन्तरों को संक्लिष्ट कृष्णादि तीन लेश्याएँ होती हैं। वैमानिकों में निर्विशेषण जो तेजो आदि तीन लेश्याएँ कही गई है उसका कारण उनमें इन्हीं तीनों का होना है। व्यवच्छेद्य के सद्भाव में ही विशेषण सफल होता है, इसी कारण—'वेमाणियाणं तओ लेस्साओ पण्णत्ताओ'

સમજવુ એટલે કે ભવનપતિ દેવોમા કૃષ્ણાદિ ત્રણ લેશ્યાઓ સંકિલષ્ટ રૂપે અને તેજોલેશ્યા અસંકિલષ્ટ રૂપે હોય છે એજ પ્રમાણે પૃથ્વિકાયિકો, અપ્કાયિકો અને વનસ્પતિકાયિકોમાં પણ કૃષ્ણાદિ ત્રણ લેશ્યાઓ સંકિલષ્ટ રૂપે અને તેજોલેશ્યા અસંકિલષ્ટ રૂપે હોય છે એમ સમજવુ કારણ કે તેઓમાં દેવોત્પત્તિની સંભાવનાને લીધે અપર્યાપ્તાવસ્થામા અસંકિલષ્ટ તેજોલેશ્યાનો સદ્ભાવ પણ હોઇ શકે છે, પંચેન્દ્રિય તિર્યંચો અને મનુષ્યોમા સંકિલષ્ટ અને અસંકિલષ્ટ રૂપ છએ લેશ્યાઓ હોય છે, તેથી તેમને વિષે સવિશેષણ ચાર સૂત્ર આપ્યા છે અસુરકુમારોની જેમ વ્યન્તરોમા પણ સંકિલષ્ટ કૃષ્ણાદિ ત્રણ લેશ્યાઓ હોય છે વૈમાનિકોમા આ વિશેષણથી રહિત જે તેજો, પદ્મ અને શુકલ લેશ્યાઓનો સદ્ભાવ કહ્યો છે તેનુ કારણ એ છે કે તેમનામાં એ ત્રણ લેશ્યાઓ જ હોય છે વ્યવચ્છેદ્યના સદ્ભાવમા જ વિશેષણ સફળ થાય છે, તે કારણે "वेमाणियाणं तओ लेस्साओ पण्णत्ताओ" આ પ્રકારનો સૂત્રપાઠ

युज्यते २५। ज्योतिष्केषु तेजोलेश्याया एकस्या एव सद्भावेन त्रिस्थानकावतारा ज्योतिष्कसूत्रं नोक्तमिति ॥ सू० ११ ॥

पूर्वं वैमानिकानां लेश्या द्वारेण त्रिस्थानकावतार उक्तः, ज्योतिष्काणां तु यथा तदसम्भवापलनधर्मेण त्रिस्थानकावतारमाह—

सूत्रम्–तीहिं ठाणेहिं तारारूवे चलिज्जा त जहा विकुव्वमाणे वा परियारेमाणे वा ठाणाओ वा ठाणं संकममाणे तारारूवे चलेज्जा। तीहिं ठाणेहिं देवे विज्जुयारं करेज्जा, त जहा–विकुव्वमाणे वा परियारेमाणे वा तहारूवस्स समणस्स वा माहणस्स वा इड्ढिं जुइं जसं बलं वीरियं पुरिसक्कार परक्कमे उवदंसेमाणे देवे विज्जुयारं करेज्जा। तीहिं ठाणेहिं देवे थणियसद्द करेज्जा त जहा–विकुव्वमाणेवा, एवं जहा विज्जुयारे तहेव थणियसद्दंपि ॥ सू० १२॥

छाया–त्रिभिः स्थानैस्तारारूपं चलति, तद्यथा–विकुर्वद् वा परिचारयमाणं वा स्थानाद् वा स्थानं संक्रामत् तारारूपं चलति। त्रिभिः स्थानैर्देवो विद्युत्कारं कुर्यात्, तद्यथा, विकुर्वन् वा परिचारयमाणो वा तथारूपस्य श्रमणस्य वा माहनस्य वा ऋद्धिं द्युतिं यशोबलं वीर्यं पुरुषकारपराक्रमम् उपदर्शयन् देवो विद्युत्कारं करोति। त्रिभिः स्थानैः देवः स्तनितशब्दं करोति, तद्यथा–विकुर्वन्वा, एवं यथा विद्युत्कारं तथैव स्तनितशब्दमपि ॥ सू० १२ ॥

ऐसा पाठ कहा गया है ज्योतिष्कदेवो में केवल एक तेजोलेश्या का ही सद्भाव है—अतः यहां त्रिस्थानकके प्रकरण का सम्बन्ध होने से ज्योतिष्कसूत्र सूत्रकारने नहीं कहा है ॥ सू०११ ॥

पहिले वैमानिकों के लेश्याद्वारको लेकर त्रिस्थानकका प्रकरण कहा, परन्तु ज्योतिष्कों के एक ही तेजोलेश्या होने के कारण इस

કહ્યો છે જ્યોતિષ્ક દેવોમાં માત્ર તેજોલેશ્યાનો જ સદ્ભાવ હોય છે અહીં ત્રિસ્થાનકનું પ્રકરણ ચાલતું હોવાથી સૂત્રકારે જ્યોતિષ્ક સૂત્રનું કથન કર્યું નથી. ॥ સૂ. ૧૧ ॥

પહેલાના સૂત્રમાં વૈમાનિકોના લેશ્યાદ્વારની અપેક્ષાએ ત્રિસ્થાનકના પ્રકરણનું કથન કર્યું પરન્તુ જ્યોતિષ્કોમાં માત્ર તેજોલેશ્યાનો જ સદ્ભાવ હોવાથી

टीका—' तीहिं ठाणेहिं ' इत्यादि । त्रिभिः स्थानैः—कारणैः तारारूपं तारकामात्रं चलति—स्वस्थानं त्यजति । तदेव स्थानत्रयं दर्शयति—वैक्रियं कुर्वन्, परिचारयमाणं—मैथुनार्थं संरम्भयुक्तं सत् स्थानाद्—स्वस्थानात् स्थानान्तरम्—अन्यत्स्थानं संक्रामत्—गच्छत्, यथा—क्वचिन्महर्द्धिके देवादौ चमरवद्वैक्रियादि कुर्वति सति तन्मार्गदानार्थमपि चलतीति ।

उक्तंच—" तत्थणं जे से वाघाइए अंतरे से जहन्नेणं दोन्नि छावट्ठे
जोयणसए, उक्कोसेणं बारसजोयणसहस्साइं " इति ।

छाया—तत्र खलु यतद्व्याघातिकमन्तरं तज्जघन्येन द्वे षट्षष्टिः योजनशते (षट्षष्ट्यधिके द्वे योजनशते) । उत्कर्षेण द्वादशयोजनसहस्राणि ।

सम्बन्ध में त्रिस्थानकावतार नहीं कहा—इसलिये अब सूत्रकार उनमें चलनधर्मको लेकर त्रिस्थानकके अवतार का कथन करते हैं—' तीहिं ठाणेहिं ताराख्वे चलिज्जा ' इत्यादि ।

टीकार्थ–तीन स्थानोंसे तीन कारणोंसे-तारे चलतेहै अर्थात् अपने स्थान को छोड़ते हैं—वे तीन कारण इस प्रकारसे हैं-एक कारण है विक्रिया करने का अर्थात् जब वे विक्रिया करने लगते हैं। तब अपने स्थान को वे छोडकर विक्रिया करते हैं। तथा जब वे मैथुन सेवन के अभिलाषी होते हैं—तब वे अपने स्थान को छोड़ कर ही मैथुन सेवन करते है। तथा जब कोई महर्द्धिक देव चमर की तरह वैक्रिय आदि करता है, तब उसे रास्ता देने के लिये वे अपने स्थान को छोड देते हैं। कहा भी है— " तत्थ णं जे से वाघाइए " इत्यादि ।

त्रिस्थानकनी वक्तव्यतामां तेमनी लेश्याओनुं प्रतिपादन करायुं नथी परन्तु तेओ चलनधर्मथी युक्त होय छे ते चलनधर्मनी अपेक्षाए सूत्रकार हवे त्रण स्थानकोनुं निरूपण करे छे—" तीहिं ठाणेहिं ताराख्वे चलिज्जा " ईत्यादि—

टीकार्थ–नीचे दर्शावेला त्रण स्थानोथी–त्रण कारणोने लीधे–ताराओ चाले छे, એટલે કે પોતાનું સ્થાન છોડે છે-(૧) જ્યારે તેઓ વિક્રિયા કરે છે ત્યારે પોતાનું સ્થાન છોડે છે. (૨) જ્યારે તેઓ મૈથુન સેવવાની ઇચ્છા કરે છે, ત્યારે તેઓ પોતાના સ્થાનને છોડીને જ મૈથુન સેવન કરે છે (૩) જ્યારે કોઇ મહર્દ્ધિક દેવ ચમરની જેમ વિક્રિયા આદિ કરે છે, ત્યારે તેને માર્ગ આપવાને માટે તેઓ પોતાનું સ્થાન છોડે છે કહ્યું પણ છે કે—

" तत्थणं जे से वाघाइए " ઈત્યાદિ—

तत्र व्याघातिकमन्तरं महर्द्धिकदेवस्य मार्गदानात् मन्दरपेक्षयेति व्याघातिकमन्तरं तु लक्षयोजनपरिमितमपि भवति चमरावासमये इत्येति। पूर्वं तारकदेवचलनक्रिया कारणानि प्रोक्तानि, साम्प्रतं देवस्यैव विद्युत्स्तनितक्रिययोः कारणानि सूत्रत्रयेणाह- 'तीहिं' इत्यादि सुगमं नवरं-विद्युत्-विद्युत्‌वत् सैव क्रियत इति विग्रहः-कार्यं, विद्युतो वा करणं कारः-क्रिया- विद्युत्कारस्तं-विद्युत् कुर्यात् स्यात्। वैक्रियकरणादीनि हि साभिमानस्य भवन्ति तच सगर्वस्य च दर्पोल्लासवतश्च स्तनविद्युद्गर्जना दीन्यपि भवन्तीति स्तनितविद्युत्कारादीनां वैक्रियादिक कारणतयोक्तमिति। ऋद्धि-

यहां जो व्याघातिक अन्तर है वह जघन्य से २६६ योजनका है, और उत्कृष्ट से बारह हजार योजन का है। मेरु पर्वत की अपेक्षा से, यह महर्द्धिक देव को मार्गदान देते समय व्याघातिक अन्तर होता है। तथा व्याघातिक जो अन्तर है वह तो एक लाख योजन का भी होता है। इस तरह से ये तारा देवों के चलनक्रिया के कारण कहे गये हैं।

अब सूत्रकार देवके ही विद्युत् और स्तनित क्रियाके कारणोंका कथन करते हुए कहते हैं-कि-" त हिं ठाणेहिं देवे विज्जुयार करेज्जा " इ० तीन कारणों को लेकर देव विद्युत्कार करते हैं ये तीन कारण इस प्रकार से है-जब देव विक्रिया करता है तब वह विद्युत्कार करता है। जब वह मैथुन सेवनमें प्रवृत्त होता है तब वह विद्युत्कार करता है तथा जब वह तथारूपवाले श्रमण और माहण को अपनी ऋद्धि, द्युति, यश, बल, वीर्य, पुरुषकार पराक्रम दिखाता है। तब वह विद्युत्कार करता है ये वैक्रियकरण आदिरूप कार्य साभिमान (अभिमानसहित) देवके

અહીં જે વ્યાઘાતિક અન્તર છે તે ઓછામાં ઓછું ૨૬૬ યોજનનું અને વધારેમાં વધારે બાર હજાર યોજનનું હોય છે મેરુ પર્વતની અપેક્ષાએ આ મહર્દ્ધિક દેવને માર્ગ આપતી વખતે આ વ્યાઘાતિક અન્તર થાય છે તે અન્તર ક્યારેક એક લાખ યોજનનું પણ હોય છે તારા રૂપ દેવોના ચલનના આ કારણો કહેવામાં આવ્યાં છે હવે સૂત્રકાર દેવની વિદ્યુત્ અને સ્તનિત (ગર્જન) ક્રિયાઓના કારણોનું નિરૂપણ કરતા કહે છે કે—

તિહિં ઠાણેહિં દેવે વિજ્જુયાર કરેજ્જા ઈત્યાદિ—

નીચે દર્શાવ્યા પ્રમાણેના ત્રણ કારણોને લીધે દેવ વિદ્યુત્કાર કરે છે (૧) જ્યારે દેવ વિક્રિયા કરે છે ત્યારે વિદ્યુત્કાર કરે છે જ્યારે દેવ મૈથુન સેવનમાં પ્રવૃત્ત હોય છે ત્યારે વિદ્યુત્કાર કરે છે (૩) જ્યારે તે તથારૂપવાળા શ્રમણ અથવા માહણને પોતાની ઋદ્ધિ, દ્યુતિ યશ બળ, વીર્ય અને પુરુષકાર પરાક્રમ બતાવે છે ત્યારે પણ તે વિદ્યુત્કાર કરે છે આ વૈક્રિયકરણ આદિ કાર્ય અભિ

विमानवस्त्राभूषणादिमऋद्धिं द्युतिं-शरीराभरणादिदीप्तिं, यशः-ख्यातिं, बलं-शरीरं सामर्थ्यं, वीर्यं-जीवप्रभवं बलं, तथा पुरुषकारः-पौरुषाभिमान विशेषश्च पराक्रमः-निष्पादितस्वविषयः पुरुषकार एव चेति पुरुषकारपराक्रमं, तत् सर्वम् उपदर्शयमानो देवो विद्युत्कारं स्तनितशब्दं मेघगर्जितशब्दं च करोतीति सम्बन्धः ॥ सू० १२ ॥

अनन्तरमुत्पातरूपौ विद्युत्कारस्तनितशब्दौ प्रोक्तौ, साम्प्रतमुत्पातरूपाण्येव लोकान्धकारादीनि षोडशसूत्र्या प्राह—

मूलम्-तीहिं ठाणेहिं लोगंधयारे सिया, तं जहा-अरिहंतेहिं वोच्छिज्जमाणेहिं, अरिहंतपन्नत्ते धम्मे वोच्छिज्जमाणे, पुव्वगए वोच्छिज्जमाणे १। तीहिं ठाणेहिं लोगुज्जोए सिया, तं जहा-अरिहंतेहिं जायमाणेहिं, अरिहंतेसु पव्वयमाणेसु अरिहं-

---

होते हैं. तथा इस क्रिया में प्रवृत्त जो देव होता है उसके दर्प (अहंकार) और उल्लास भी होते हैं। अतः ऐसे देव के स्वस्थान से चलनक्रिया और विद्युत्कार तथा गर्जनादि क्रियाएँ भी होती हैं। इसी से इन चलन, विद्युत्कार आदिकों का वैक्रियादिकरण को कारणरूप से कहा गया है। विमान वस्त्र आभूषण आदि समृद्धि का नाम ऋद्धि है, शरीर आभरण आदि की दीप्ति का नाम द्युति है, ख्याति का नाम यश है। शारीरिक सामर्थ्य का नाम बल है. जीव से उद्भूत बल का नाम वीर्य है, पुरुषार्थ का नाम पुरुषकार है। यह पुरुषप्रकार ही पराक्रम है. इन ऋद्धि आदि को दिखाता हुआ देव विद्युत्कार और स्तनित शब्द को मेघ की गर्जना जैसे शब्द को करता है ॥ सू०२ ॥

માનયુક્ત દેવ જ કરે છે. આ ક્રિયામાં પ્રવૃત્ત થનાર જે દેવ હોય છે તે દેવમાં દર્પ (અહંકાર) અને ઉલ્લાસ પણ હોય છે તેથી એવો દેવ પોતાને સ્થાનેથી ચલનક્રિયા, વિદ્યુત્કાર તથા ગર્જનાદિ ક્રિયાઓ પણ કરે છે તેથી જ એવું કહ્યું છે કે આ ચલન, વિદ્યુત્કાર આદિ ક્રિયાઓ વૈક્રિયકરણ આદિને કારણે થાય છે.

વિમાન, વસ્ત્ર, આભૂષણ આદિ સમૃદ્ધિનું નામ ઋદ્ધિ છે. શરીર, આભરણ આદિની દીપ્તિનું નામ દ્યુતિ છે. ખ્યાતિનું નામ યશ છે શારીરિક સામર્થ્યનું નામ બળ છે આત્મબળનું નામ વીર્ય છે. પુરુષાર્થનું નામ પુરુષકાર છે. તે પુરુષકાર જ પરાક્રમરૂપ હોય છે. પોતાની આ ઋદ્ધિ આદિનું પ્રદર્શન કરતો દેવ વિદ્યુત્કાર અને સ્તનિતશબ્દ-મેઘની ગર્જના જેવો અવાજ કરે છે. ॥ સૂ. ૧૨ ॥

तत्र व्याघातिकमन्तरं महर्द्धिकदेवस्य मार्गदानात् मेरुपेक्षयेति कादाचित्कमन्तरं तु लक्षयोजनपरिमितमपि भवति चमरचञ्चागमने इवेति। पूर्वं तारकादेवचलनक्रिया कारणानि प्रोक्तानि, साम्प्रतं देवस्यैव विद्युत्स्तनितक्रियाः कारणानि सूत्रद्वयेनाह- 'तीहिं' इत्यादि सुगमं नवरं-विद्युत्-विद्युत्त्वं यैव क्रियते इतिविग्रहः-कार्यं, विद्युतो वा करणं कारः-क्रिया- विद्युत्कारस्त-विद्युतं कुर्यादित्यर्थः। वैक्रियकरणादीनि हि साभिमानस्य भवन्ति तत्र भरवस्य च दर्पोत्साहवतश्च स्तनितविद्युदगर्जना दीन्यपि भवन्तीति स्तनितविद्युत्कारादीनां वैक्रियादिकं कारणतयोक्तमिति। ऋद्धि-

यहां जो व्याघातिक अन्तर है वह जघन्य से २६६ योजनका है, और उत्कृष्ट से बार हजार योजन का है। मेरु पर्वत की अपेक्षा से, यह महर्द्धिक देव को मार्गदान देते समय व्याघातिक अन्तर होता है। तथा कादाचित्क जो अन्तर है वह तो एक लाख योजन का भी होता है। इस तरह से ये तारा देवों के चलनक्रिया के कारण कहे गये हैं।

अब सूत्रकार देवके ही विद्युत् और स्तनित क्रियाके कारणोंका कथन करते हुए कहते हैं-कि-"तीहिं ठाणेहिं देवे विज्जुयारं करेज्जा" इ० तीन कारणों को लेकर देव विद्युत्कार करते हैं वे तीन कारण इस प्रकार से है-जब देव विक्रिया करता है तब वह विद्युत्कार करता है। जब वह मैथुन सेवनमें प्रवृत्त होता है तब वह विद्युत्कार करता है तथा जब वह तथारूपवाले श्रमण और माहण को अपनी ऋद्धि, द्युति, यश, बल, वीर्य, पुरुषकार पराक्रम दिखाता है। तब वह विद्युत्कार करता है ये वैक्रियकरण आदिरूप कार्य साभिमान (अभिमानसहित) देवके

અહીં જે વ્યાઘાતિક અંતર છે તે ઓછામાં ઓછું ૨૬૬ યોજનનું અને વધારેમા વધારે બાર હજાર યોજનનુ હોય છે મેરૂ પર્વતની અપેક્ષાએ આ મહર્દ્ધિક દેવને માર્ગ આપતી વખતે આ વ્યાઘાતિક અન્તર થાય છે તે અન્તર ક્યારેક એક લાખ યોજનનું પણ હોય છે તારા રૂપ દેવોના ચલનના આ કારણો કહેવામા આવ્યાં છે હવે સૂત્રકાર દેવની વિદ્યુત્ અને સ્તનિત (ગર્જન) ક્રિયાઓના કારણોનુ નિરૂપણ કરતા કહે છે કે—

તિહિં ઠાણેહિ દેવે વિજ્જુયારં કરેજ્જા" ઇત્યાદિ—

નીચે દર્શાવ્યા પ્રમાણેના ત્રણ કારણોને લીધે દેવ વિદ્યુત્કાર કરે છે (૧) જ્યારે દેવ વિક્રિયા કરે છે ત્યારે વિદ્યુત્કાર કરે છે જ્યારે દેવ મૈથુન સેવનમાં પ્રવૃત્ત હોય છે ત્યારે વિદ્યુત્કાર કરે છે (૩) જ્યારે તે તથારૂપવાળા શ્રમણ અથવા માહણને પોતાની ઋદ્ધિ, દ્યુતિ યશ બલ વીર્ય અને પુરુષકાર પરાક્રમ બતાવે છે ત્યારે પણ તે વિદ્યુત્કાર કરે છે આ વૈક્રિયકરણ આદિ કાર્ય અભિ

विमानवस्त्राभूषणादिसमृद्धिं द्युतिं-शरीराभरणादिदीप्तिं, यशः-ख्यातिं, बलं-शरीरं सामर्थ्यं, वीर्यं-जीवप्रभवं बलं, तथा पुरुषकारः-पौरुषाभिमान विशेषश्च पराक्रमः-निष्पादितस्वविषयः पुरुषकार एव चेति पुरुषकारपराक्रमं, तत् सर्वम् उपदर्शयमानो देवो विद्युत्कारं स्तनितशब्दं मेघगर्जितशब्दं च करोतीति सम्बन्धः ॥ सू० १२ ॥

अनन्तरमुत्पातरूपौ विद्युत्कारस्तनितशब्दौ प्रोक्तौ, साम्प्रतमुत्पातरूपाण्येव लोकान्धकारादीनि षोडशसूत्र्या प्राह—

मूलम्-तीहिं ठाणेहिं लोगंधयारे सिया, तं जहा-अरिहंतेहिं वोच्छिज्जमाणेहिं, अरिहंतपन्नत्ते धम्मे वोच्छिज्जमाणे, पुव्वगए वोच्छिज्जमाणे १। तीहिं ठाणेहिं लोगुज्जोए सिया, तं जहा-अरिहंतेहिं जायमाणेहिं, अरिहंतेसु पव्वयमाणेसु अरिहं-

---

होते हैं. तथा इस क्रिया में प्रवृत्त जो देव होता है उसके दर्प (अहंकार) और उल्लास भी होते हैं। अतः ऐसे देव के स्वस्थान से चलनक्रिया और विद्युत्कार तथा गर्जनादि क्रियाएँ भी होती हैं। इसी से इन चलन, विद्युत्कार आदिकों का वैक्रियादिकरण को कारणरूप से कहा गया है। विमान वस्त्र आभूषण आदि समृद्धि का नाम ऋद्धि है, शरीर आभरण आदि की दीप्ति का नाम द्युति है, ख्याति का नाम यश है। शारीरिक सामर्थ्य का नाम बल है. जीव से उद्भूत बल का नाम वीर्य है, पुरुषार्थ का नाम पुरुषकार है। यह पुरुषप्रकार ही पराक्रम है. इन ऋद्धि आदि को दिखाता हुआ देव विद्युत्कार और स्तनित शब्द को मेघ की गर्जना जैसे शब्द को करता है ॥ सू०२ ॥

...નયુક્ત દેવ જ કરે છે. આ ક્રિયામાં પ્રવૃત્ત થનાર જે દેવ હોય છે તે ...માં દર્પ (અહંકાર) અને ઉલ્લાસ પણ હોય છે તેથી એવો દેવ પોતાને ...ાનેથી ચલનક્રિયા, વિદ્યુત્કાર તથા ગર્જનાદિ ક્રિયાઓ પણ કરે છે તેથી જ એવું ...હ્યું છે કે આ ચલન, વિદ્યુત્કાર આદિ ક્રિયાઓ વૈક્રિયકરણ આદિને કારણે થાય છે.

વિમાન, વસ્ત્ર, આભૂષણ આદિ સમૃદ્ધિનું નામ ઋદ્ધિ છે. શરીર, આભ-...ણ આદિની દીપ્તિનું નામ દ્યુતિ છે. ખ્યાતિનું નામ યશ છે. શારીરિક સામ-...ર્થ્યનું નામ બળ છે આત્મબળનું નામ વીર્ય છે. પુરુષાર્થનું નામ પુરુષકાર ... તે પુરુષકાર જ પરાક્રમરૂપ હોય છે. પોતાની આ ઋદ્ધિ આદિનું પ્રદર્શન કરતો ... વિદ્યુત્કાર અને સ્તનિતશબ્દ-મેઘની ગર્જના જેવો અવાજ કરે છે. ॥ સૂ. ૧૨ ॥

ताण णाणुप्पायमहिमासु २ । तीहिं ठाणेहिं देवधयारे सिया, त जहा अरिहंतेहिं वोच्छिज्जमाणेहिं, अरिहतपन्नत्ते धम्मे वोच्छिज्ज माणे, पुव्वगए वोच्छिज्जमाणे ३ । तीहिं ठाणेहिं देवुज्जोए सिया, त जहा-अरिहतेहिं जायमाणेहिं, अरिहतेहिं पव्वयमाणेहि, अरिह ताण णाणुप्पायमहिमासु ४। तीहिं ठाणेहिं देवसनिवाए सिया, त जहा—अरिहतेहि जायमाणेहि, अरिहतेहि पव्वयमाणेहि, अरि हताण नाणुप्पायमहिमासु ५। एव देवुक्कलिया ६, देवकह कहए ७ । तीहिं ठाणेहि देविंदा माणुस्स लोग हव्वमागच्छति, त जहा—अरिहतेहिं जायमाणेहि, अरिहतेहि पव्वयमाणेहि अरिहताण णाणुप्पायमहिमासु ८ । तीहिं ठाणेहिं लोगतिया देवा माणुस्स लोग हव्वमागच्छति त जहा—अरिहतेहि जायमा णेहि, अरिहतेहि पव्वयमाणेहि अरिहताण णाणुप्पायमहिमासु९। एव सामाणिया १०, तायत्तीसगा ११, लोगपाला देवा १२, अग्गमहिसीओ देवीओ १३, परिसोववन्नगा देवा १४, अणि याहिवई देवा १५, आयरक्खगा देवा माणुस्स लोग हव्वमा गच्छति १६ ।

तीहिं ठाणेहि देवा अब्भुट्ठिज्जा, त जहा—अरिहतहि जाय माणेहि जाव त चेव १ । एवमासणाइ चलेज्जा२, सीहणाय करेज्जा ३, चेलुक्खेव करेज्जा ४। तीहिं ठाणेहिं देवाण चेइ यरुक्खा चलेज्जा, त जहा—अरिहतेहि त चेव ५ ॥ सू० १३॥

छाया—त्रिभिः स्थानै लोकान्धकारः स्यात्, तद्यथा—अर्हत्सु व्युच्छिद्यमानेषु अर्हत्प्रज्ञप्ते धर्मे व्युच्छिद्यमाने, पूर्वगते व्युच्छिद्यमाने १। त्रिभिः स्थानैर्लोकोद्योतः स्यात्, तद्यथा—अर्हत्सु जायमानेषु, अर्हत्सु प्रव्रजत्सु, अर्हतां ज्ञानोत्पादमहिमासु २। त्रिभिः स्थानैर्देवान्धकारं स्यात्, तद्यथा—अर्हत्सु व्युच्छिद्यमानेषु, अर्हत्प्रज्ञप्ते धर्मे व्युच्छिद्यमाने, पूर्वगते व्युच्छिद्यमाने ३। त्रिभिः स्थानैर्देवोद्योतः स्यात्, तद्यथा—अर्हत्सु जायमानेषु, अर्हत्सु प्रव्रजत्सु, अर्हतां ज्ञानोत्पादमहिमासु

उत्पातरूप विद्युत्कार और स्तनित शब्द देव करता है ऐसा कथन किया। अब उत्पातरूप ही लोकान्धकार आदि को सूत्रकार षोडशसूत्र द्वारा कहते हैं—'तीहिं ठाणेहिं लोगंधयारे सिया' इत्यादि।

सूत्रार्थ-तीन कारणोंसे लोकान्धकार-लोकमें अन्धकार होताहै, वे कारण इस प्रकार से हैं-एक जब अर्हन्त भगवन्त निर्वाण को प्राप्त होते हैं तब लोकमें अन्धकार हो जाता है, दूसरा कारण ऐसा है कि जब अर्हन्त प्ररूपित धर्मकी व्युच्छित्ति होती है-तीर्थ व्यवच्छेदकाल होता है-तब लोक में अन्धकार होता है, तथा उत्पाद आदि चौदहपूर्व जब व्युच्छिन्न होते हैं तब लोक में अन्धकार होता है।

तीन कारणों से लोक में उद्योत होता है, वे तीन कारण ऐसे हैं-एक जब अर्हन्त प्रभु उत्पन्न होते हैं तब तथा अर्हन्त भगवान् जब दीक्षा धारण करते हैं तब, और जब अर्हन्त प्रभुके ज्ञानोत्पाद की महिमा होती है तब।

દેવ દ્વારા ઉત્પાતરૂપ વિદ્યુત્કાર અને સ્તનિત શબ્દ—મેઘની ગર્જના જેવો અવાજ કરાય છે, એવું કથન પહેલાના સૂત્રમાં કરવામાં આવ્યું. હવે ઉત્પાતરૂપ લોકાન્ધકાર આદિનું સૂત્રકાર ૧૬ સૂત્રો દ્વારા કથન કરે છે—

"તીહિં ઠાણેહિં લોગધયારે સિયા" ઇત્યાદિ—

સૂત્રાર્થ–ત્રણ કારણોને લીધે લોકમાં અંધકાર થઈ જાય છે તે કારણો આ પ્રમાણે છે-(૧) જ્યારે અર્હંત ભગવાન નિર્વાણ પામે છે, ત્યારે લોકમાં અંધકાર વ્યાપી જાય છે (૨) જ્યારે અર્હંત પ્રરૂપિત ધર્મની વ્યુચ્છિત્તિ (વિનાશ) થઈ જાય છે એટલે કે જ્યારે તીર્થ–વ્યવચ્છેદકાળ આવે છે, ત્યારે લોકમાં અંધકાર વ્યાપી જાય છે. (૩) જ્યારે ઉત્પાદ આદિ ચૌદ પૂર્વો વ્યુચ્છિદ્યમાન (વિનષ્ટ) થાય છે, ત્યારે લોકમાં અંધકાર વ્યાપી જાય છે

ત્રણ કારણોને લીધે લોકમાં ઉદ્યોત (પ્રકાશ) વ્યાપી જાય છે-(૧) જ્યારે અર્હંત પ્રભુ ઉત્પન્ન થાય છે, (૨) જ્યારે અર્હંત પ્રભુ દીક્ષા અંગીકાર કરે છે, અને (૩) જ્યારે અર્હંત પ્રભુના જ્ઞાનોત્પાદનો મહિમા થાય છે, ત્યારે લોકમાં પ્રકાશ વ્યાપી રહે છે.

ताण णाणुप्पायमहिमासु २। तीहि ठाणेहि देवधयारे सिया, त जहा अरिहतेहिं वोच्छिज्जमाणेहि, अरिहतपन्नत्ते धम्मे वोच्छिज्ज माणे, पुव्वगए वोच्छिज्जमाणे ३। तीहि ठाणेहि देवुज्जोए सिया, त जहा-अरिहतेहिं जायमाणेहिं, अरिहतेहिं पव्वयमाणेहि, अरिह ताण णाणुप्पायमहिमासु ४। तीहि ठाणेहि देवसनिवाए सिया, त जहा—अरिहतेहि जायमाणेहि, अरिहतेहिं पव्वयमाणेहि, अरि हताण नाणुप्पायमहिमासु ५। एव देवुक्कलिया ६, देवकह कहए ७। तीहि ठाणेहि देविंदा माणुस्स लोग हव्वमागच्छति, त जहा—अरिहतेहिं जायमाणेहि, अरिहतेहि पव्वयमाणेहि अरिहताण णाणुप्पायमहिमासु ८। तीहि ठाणेहि लोगतिया देवा माणुस्स लोग हव्वमागच्छति त जहा—अरिहतेहि जायमा णेहि, अरिहतेहि पव्वयमाणेहि अरिहताण णाणुप्पायमहिमासु९। एव सामाणिया १०, तायत्तीसगा ११, लोगपाला देवा १२, अग्गमहिसीओ देवीओ १३, परिसोववन्नगा देवा १४, अणि याहिवई देवा १५, आयरक्खगा देवा माणुस्स लोगं हव्वमा गच्छति १६।

तीहि ठाणेहि देवा अब्भुट्ठिज्जा, त जहा—अरिहतेहि जाय माणेहि जाव त चेव १। एवमासणाइ चलेज्जा२, सीहणाय करेज्जा ३, चेलुक्खेव करेज्जा ४। तीहि ठाणेहि देवाण चेइ यरुक्खा चलेज्जा, त जहा—अरिहतेहि त चेव ५॥ सू० १३॥

छाया—त्रिभि स्थानै र्लोकान्धकारः स्यात्, तद्यथा-अर्हत्सु व्युच्छिद्यमानेषु अर्हत्प्रज्ञप्ते धर्मे व्युच्छिद्यमाने, पूर्वगते व्युच्छिद्यमाने १। त्रिभिः स्थानैर्लोकोद्द्योतः स्यात्, तद्यथा-अर्हत्सु जायमानेषु, अर्हत्सु प्रव्रजत्सु, अर्हतां ज्ञानोत्पादमहिमासु २। त्रिभिः स्थानैर्देवान्धकार स्यात्, तद्यथा-अर्हत्सु व्युच्छिद्यमानेषु, अर्हत्प्रज्ञप्ते धर्मे व्युच्छिद्यमाने, पूर्वगते व्युच्छिद्यमाने ३। त्रिभिः स्थानैर्देवोद्योतः स्यात्, तद्यथा-अर्हत्सु जायमानेषु, अर्हत्सु प्रव्रजत्सु, अर्हतां ज्ञानोत्पादमहिमासु

उत्पातरूप विद्युत्कार और स्तनित शब्द देव करता है ऐसा कथन किया। अब उत्पातरूप ही लोकान्धकार आदि को सूत्रकार षोडशसूत्र द्वारा कहते हैं—'तीहिं ठाणेहिं लोगंधयारे सिया' इत्यादि।

सूत्रार्थ-तीन कारणोंसे लोकान्धकार-लोकमें अन्धकार होताहै, वे कारण इस प्रकार से हैं-एक जब अर्हन्त भगवन्त निर्वाण को प्राप्त होते हैं तब लोकमें अन्धकार हो जाता है, दूसरा कारण ऐसा है कि जब अर्हन्त प्ररूपित धर्मकी व्युच्छित्ति होती है-तीर्थ व्यवच्छेदकाल होता है-तब लोक में अन्धकार होता है, तथा उत्पाद आदि चौदहपूर्व जब व्युच्छिन्न होते हैं तब लोक में अन्धकार होता है।

तीन कारणों से लोक में उद्योत होता है, वे तीन कारण ऐसे हैं-एक जब अर्हन्त प्रभु उत्पन्न होते हैं तब तथा अर्हन्त भगवान् जब दीक्षा धारण करते हैं तब, और जब अर्हन्त प्रभुके ज्ञानोत्पाद की महिमा होती है तब।

દેવ દ્વારા ઉત્પાતરૂપ વિદ્યુત્કાર અને સ્તનિત શબ્દ-મેઘની ગર્જના જેવો અવાજ કરાય છે, એવું કથન પહેલાના સૂત્રમાં કરવામાં આવ્યું. હવે ઉત્પાતરૂપ લોકાન્ધકાર આદિનું સૂત્રકાર ૧૬ સૂત્રો દ્વારા કથન કરે છે—

"तीहिं ठाणेहिं लोगधयारे सिया" ઇત્યાદિ—

સૂત્રાર્થ-ત્રણ કારણોને લીધે લોકમાં અંધકાર થઈ જાય છે તે કારણો આ પ્રમાણે છે-(૧) જ્યારે અર્હંત ભગવાન નિર્વાણ પામે છે, ત્યારે લોકમાં અંધકાર વ્યાપી જાય છે (૨) જ્યારે અર્હંત પ્રરૂપિત ધર્મની વ્યુચ્છિત્તિ (વિનાશ) થઈ જાય છે એટલે કે જ્યારે તીર્થ-વ્યવચ્છેદકાળ આવે છે, ત્યારે લોકમાં અંધકાર વ્યાપી જાય છે. (૩) જ્યારે ઉત્પાદ આદિ ચૌદ પૂર્વો વ્યુચ્છિદ્યમાન (વિનષ્ટ) થાય છે, ત્યારે લોકમાં અંધકાર વ્યાપી જાય છે

ત્રણ કારણોને લીધે લોકમા ઉદ્યોત (પ્રકાશ) વ્યાપી જાય છે-(૧) જ્યારે અર્હંત પ્રભુ ઉત્પન્ન થાય છે, (૨) જ્યારે અર્હંત પ્રભુ દીક્ષા અંગીકાર કરે છે, અને (૩) જ્યારે અર્હંત પ્રભુના જ્ઞાનોત્પાદનો મહિમા થાય છે, ત્યારે લોકમાં પ્રકાશ વ્યાપી રહે છે.

२। त्रिभिः स्थानैर्देवसन्निपातः स्यात्, तद्यथा–अर्हत्सु जायमानेषु, अर्हत्सु प्रव्र जत्सु, अर्हतां ज्ञानोत्पादमहिमासु ५। एवं देवोत्कलिका ६, देवकहकहक ७। त्रिभिः स्थानै र्देवेन्द्रा मानुष्य लोकं हव्यमागच्छन्ति, तद्यथा अर्हत्सु जायमानेषु, अर्हत्सु प्रव्रजत्सु, अर्हतां ज्ञानोत्पादमहिमासु ८। त्रिभिः स्थानैर्लोकान्तिका देवा मानुष्य लोकं हव्यमागच्छन्ति, तद्यथा–अर्हत्सु जायमानेषु अर्हत्सु प्रव्रजत्सु, अर्हतां ज्ञानोत्पादमहिमासु ९। एवं सामानिकाः १० त्रायस्त्रिंशकाः ११, लोक

तीन कारणों से देवलोक में अन्धेरा हो जाता है, वे तीन कारण इस प्रकार से हैं–एक जब अर्हन्तप्रभु निर्वाणगत होते हैं तब, तथा अर्हन्तप्ररूपित धर्म जब व्युच्छिन्न होता है तब, तथा पूर्वगत श्रुत जब व्युच्छिन्न होता है–तब।

तीन कारणों से देवोद्योत होता है–जैसे–जब अर्हन्तप्रभु का जन्म होता है तब, तथा जब अर्हन्तप्रभु दीक्षा धारण करते हैं तब, और जब अर्हन्तप्रभु के ज्ञानोत्पादकी महिमा की जाती है तब।

तीन कारणों से देव समागम होता है–जैसे जब अर्हन्तप्रभु का जन्म होता है तब, तथा जब अर्हन्तप्रभु दीक्षा धारण करते हैं तब, और जब अर्हन्तप्रभुके ज्ञानोत्पाद की महिमा की जाती है तब, इसी तरह से देवोत्कलिका देवोंका एक जगह एकत्रित होना होता है, इसी तरह से देवों का कहकहा होता है। आनन्दातिरेक से देवों का कलकल शब्द होता है।

ત્રણ કારણોને લીધે દેવલોકમાં અંધકાર વ્યાપી જાય છે તે ત્રણ કારણો નીચે પ્રમાણે સમજવા–(૧) અર્હંત પ્રભુ નિર્વાણ પામે છે ત્યારે (૨) અર્હંત પ્રરૂપિત ધર્મ જ્યારે વ્યુચ્છિન્ન થઈ જાય છે ત્યારે, (૩) પૂર્વગત શ્રુત જ્યારે વ્યુચ્છિન્ન થઈ જાય છે ત્યારે.

ત્રણ કારણોને લીધે દેવલોકમાં ઉદ્યોત વ્યાપી જાય છે–(૧) જ્યારે અર્હંત પ્રભુનો જન્મ થાય છે ત્યારે, (૨) જ્યારે અર્હંત પ્રભુ દીક્ષા ધારણ કરે છે ત્યારે અને (૩) જ્યારે અર્હંત પ્રભુના જ્ઞાનોત્પાદનો મહિમા થાય છે ત્યારે

ત્રણ કારણે દેવસમાગમ થાય છે–(૧) જ્યારે અર્હંત પ્રભુનો જન્મ થાય છે ત્યારે, (૨) જ્યારે અર્હંત પ્રભુ દીક્ષા લે છે ત્યારે અને (૩) જ્યારે અર્હંત પ્રભુના જ્ઞાનોત્પાદનનો (કેવળજ્ઞાન પ્રાપ્તિનો) મહોત્સવ કરવામાં આવે છે આ ત્રણ કારણોને લીધે દેવોત્કલિકા (દેવોનું એક જગ્યાએ એકઠા થવું) થાય છે એજ ત્રણ કારણોને લીધે દેવોને અતિશય આનંદ થાય છે, અને તે આનંદાતિરેકને લીધે તેઓ ખડખાટ કરે છે

पाला देवाः १२,—, अग्रमहिष्यो देव्यः १३ परिषदुपपन्नका देवाः १४, अनिकाधिपतयोदेवाः १५, आत्मरक्षका देवा मानुष्यं लोकं हव्यमागच्छन्ति १६ ।

त्रिभिः स्थानैर्देवा अभ्युत्तिष्ठन्ति तद्यथा-अर्हत्सु जायमानेषु, यावत् तदेव १। एवमासनानि चलन्ति २, सिंहनादं कुर्वन्ति ३, चेलोत्क्षेपं कुर्वन्ति ४। त्रिभिः स्थानैर्देवानां चैत्यवृक्षाश्चलन्ति, तद्यथा-अर्हत्सु तदेव ५ ॥ सू० १३ ॥

तीन कारणों को लेकर देवेन्द्र मनुष्यलोक में शीघ्रता के साथ आते हैं। जैसे जब अर्हन्तप्रभु का जन्म होता है तब, तथा अर्हन्तप्रभु जब दीक्षा धारण करते हैं तब, और जब अर्हन्तप्रभुके ज्ञानोत्पाद की महिमा की जाती हैं तब-इन्हीं तीन कारणों से लोकान्तिक देव भी बहुत जल्दी मनुष्यलोक में आते हैं। इन्हीं तीन कारणों को लेकर सामानिक देव, त्रायस्त्रिंशकदेव, लोकपाल देव, अग्रमहिषियां-देवियां, पारिषत्क देव, अनिकाधिपतिदेव और आत्मरक्षकदेव भी इस मनुष्यलोक में बहुत जल्दी आते हैं। इन्हीं तीन कारणों को लेकर देव अपने २ आसनों से सिंहासनों से उठ बैठते हैं। इन्ही तीन कारणों से लेकर शक्रादि देवों के आसन चलायमान होते हैं। इन्हीं कारणों से लेकर वे सिंहनाद करते हैं और चेलोत्क्षेप भी करते हैं। ये सब कार्य प्रमोद के वशवर्ती होकर वे करते हैं। तथा इन्हीं तीन कारणों को लेकर चैत्यवृक्ष-देववृक्ष विशेष चलायमान होते हैं।

નીચેના ત્રણ કારણોને લીધે દેવેન્દ્રો ઘણી જ શીઘ્રતાથી મનુષ્યલોકમા આવે છે-(૧) જ્યારે અર્હંત પ્રભુનો જન્મ થાય છે ત્યારે, (૨) જ્યારે અર્હંત પ્રભુ દીક્ષા લે છે ત્યારે, અને (૩) જ્યારે અર્હંત પ્રભુના જ્ઞાનોત્પાદનો મહોત્સવ કરવામાં આવે છે, ત્યારે દેવેન્દ્રો ઘણી જ શીઘ્રતાથી મનુષ્યલોકમા આવે છે આ ત્રણ કારણોને લીધે લોકાન્તિક દેવો પણ ઘણી જ ઝડપથી મનુષ્યલોકમાં આવે છે આ ત્રણ કારણોને લીધે સામાનિક દેવો, ત્રાયસ્ત્રિંશક દેવો, અગ્રમહિષી દેવીઓ, પારિષત્ક દેવો, અનીકાધિપતી દેવો અને આત્મરક્ષક દેવો પણ ઘણી જ ઝડપથી આ મનુષ્યલોકમાં આવે છે. આ ત્રણ કારણોને લીધે જ દેવો પોતપોતાના સિંહાસનોપરથી ઉઠે છે. આ ત્રણ કારણોને લીધે જ શક્રાદિ દેવોના આસનો ચલાયમાન થાય આ ત્રણ કારણોને લીધે જ તેઓ સિંહનાદ કરે છે અને ચેલોત્ક્ષેપ પણ કરે છે. આ બધા કાર્યો આનંદને કારણે જ તેઓ કરે છે આ ત્રણ કારણે જ ચૈત્યવૃક્ષ (દેવવૃક્ષ વિશેષ) ચલાયમાન થાય છે.

४। त्रिभिः स्थानैर्देवसन्निपातः स्यात्, तद्यथा-अर्हत्सु जायमानेषु अर्हत्सु प्रव्रजत्सु, अर्हतां ज्ञानोत्पादमहिमासु ५। एवं देवोत्कलिका ६, देवकहकहः ७। त्रिभिः स्थानैर्देवेन्द्रा मानुष्यं लोकं हव्यमागच्छन्ति, तद्यथा अर्हत्सु जायमानेषु, अर्हत्सु प्रव्रजत्सु, अर्हतां ज्ञानोत्पादमहिमासु ८। त्रिभिः स्थानैर्लोकान्तिका देवा मानुष्यं लोकं हव्यमागच्छन्ति, तद्यथा-अर्हत्सु जायमानेषु अर्हत्सु प्रव्रजत्सु, अर्हतां ज्ञानोत्पादमहिमासु ९। एवं सामानिकाः १० त्रायस्त्रिंशकाः ११ लोक

तीन कारणों से देवलोक में अंधेरा हो जाता है, वे तीन कारण इस प्रकार से हैं-एक जब अर्हन्तप्रभु निर्वाणगत होते हैं तब, तथा अर्हन्तप्ररूपित धर्म जब व्युच्छिन्न होता है तब, तथा पूर्वगत श्रुत जब व्युच्छिन्न होता है-तब।

तीन कारणों से देवोद्योत होता है-जैसे-जब अर्हन्तप्रभुका जन्म होता है तब, तथा जब अर्हन्तप्रभु दीक्षा धारण करते हैं तब, और जब अर्हन्तप्रभु के ज्ञानोत्पादकी महिमा की जाती है तब।

तीन कारणों से देव समागम होता है-जैसे जब अर्हन्तप्रभु का जन्म होता है तब, तथा जब अर्हन्तप्रभु दीक्षा धारण करते हैं तब, और जब अर्हन्तप्रभुके ज्ञानोत्पाद की महिमा की जाती है तब, इसी तरह से देवोत्कलिका देवोंका एक जगह एकत्रित होना होता है, इसी तरह से देवों का कहकहत होता है। आनन्दातिरेक से देवों का कलकल शब्द होता है।

ત્રણ કારણોને લીધે દેવલોકમાં અંધકાર વ્યાપી જાય છે તે ત્રણ કારણો નીચે પ્રમાણે સમજવા-(૧) અર્હંત પ્રભુ નિર્વાણ પામે છે ત્યારે (૨) અર્હંત પ્રરૂપિત ધર્મ જ્યારે વ્યુચ્છિન્ન થઈ જાય છે ત્યારે, (૩) પૂર્વગત શ્રુત જ્યારે વ્યુચ્છિન્ન થઈ જાય છે ત્યારે.

ત્રણ કારણોને લીધે દેવલોકમાં ઉદ્યોત વ્યાપી જાય છે-(૧) જ્યારે અર્હંત પ્રભુનો જન્મ થાય છે ત્યારે, (૨) જ્યારે અર્હંત પ્રભુ દીક્ષા ધારણ કરે છે ત્યારે અને (૩) જ્યારે અર્હંત પ્રભુના જ્ઞાનોત્પાદનો મહિમા થાય છે ત્યારે

ત્રણ કારણે દેવસમાગમ થાય છે-(૧) જ્યારે અર્હંત પ્રભુનો જન્મ થાય છે ત્યારે, (૨) જ્યારે અર્હંત પ્રભુ દીક્ષા લે છે ત્યારે અને (૩) જ્યારે અર્હંત પ્રભુના જ્ઞાનોત્પાદનનો (કેવળજ્ઞાન પ્રાપ્તિનો) મહોત્સવ કરવામાં આવે છે. આ ત્રણ કારણોને લીધે દેવોત્કલિકા (દેવોનું એક જગ્યાએ એકત્ર થવું) થાય છે એજ ત્રણ કારણોને લીધે દેવોને અતિશય આનંદ થાય છે, અને તે આનંદાતિરેકને લીધે તેઓ ખડખડાટ હસે છે

पाला देवाः १२,—, अग्रमहिष्यो देव्यः १३ परिषदुपपन्नका देवाः १४, अनिकाधिपतयोदेवाः १५, आत्मरक्षका देवा मानुष्यं लोकं हव्यमागच्छन्ति १६।

त्रिभिः स्थानैर्देवा अभ्युत्तिष्ठन्ति तद्यथा-अर्हत्सु जायमानेषु, यावत् तदेव १। एवमासनानि चलन्ति २, सिंहनादं कुर्वन्ति ३, चेलोत्क्षेपं कुर्वन्ति ४। त्रिभिः स्थानैर्देवानां चैत्यवृक्षाश्चलन्ति, तद्यथा-अर्हत्सु तदेव ५॥ सू० १३॥

तीन कारणों को लेकर देवेन्द्र मनुष्यलोक में शीघ्रता के साथ आते हैं। जैसे जब अर्हन्तप्रभु का जन्म होता है तब, तथा अर्हन्तप्रभु जब दीक्षा धारण करते हैं तब, और जब अर्हन्तप्रभुके ज्ञानोत्पाद की महिमा की जाती हैं तब-इन्हीं तीन कारणों से लोकान्तिक देव भी बहुत जल्दी मनुष्यलोक में आते हैं। इन्हीं तीन कारणों को लेकर सामानिक देव, त्रायस्त्रिंशकदेव, लोकपाल देव, अग्रमहिषियाँ-देवियां. पारिषत्क देव, अनिकाधिपतिदेव और आत्मरक्षकदेव भी इस मनुष्यलोक में बहुत जल्दी आते हैं। इन्हीं तीन कारणों को लेकर देव अपने २ आसनों से सिंहासनों से उठ बैठते हैं। इन्हीं तीन कारणों से लेकर शक्रादि देवों के आसन चलायमान होते हैं। इन्हीं कारणों से लेकर वे सिंहनाद करते हैं और चेलोत्क्षेप भी करते हैं। ये सब कार्य प्रमोद के वशवर्ती होकर वे करते हैं। तथा इन्हीं तीन कारणों को लेकर चैत्यवृक्ष-देववृक्ष विशेष चलायमान होते है।

નીચેના ત્રણ કારણોને લીધે દેવેન્દ્રો ઘણી જ શીઘ્રતાથી મનુષ્યલોકમા આવે છે-(૧) જ્યારે અર્હંત પ્રભુનો જન્મ થાય છે ત્યારે, (૨) જ્યારે અર્હંત પ્રભુ દીક્ષા લે છે ત્યારે, અને (૩) જ્યારે અર્હંત પ્રભુના જ્ઞાનોત્પાદનો મહોત્સવ કરવામા આવે છે, ત્યારે દેવેન્દ્રો ઘણી જ શીઘ્રતાથી મનુષ્યલોકમાં આવે છે. આ ત્રણ કારણોને લીધે લોકાન્તિક દેવો પણ ઘણી જ ઝડપથી મનુષ્યલોકમા આવે છે આ ત્રણ કારણોને લીધે સામાનિક દેવો, ત્રાયસ્ત્રિંશક દેવો, અગ્રમહિષી દેવીઓ, પારિષત્ક દેવો, અનીકાધિપતી દેવો અને આત્મરક્ષક દેવો પણ ઘણી જ ઝડપથી આ મનુષ્યલોકમાં આવે છે. આ ત્રણ કારણોને લીધે જ દેવો પોતપોતાના સિંહાસનોપરથી ઉઠે છે. આ ત્રણ કારણોને લીધે જ શક્રાદિ દેવોના આસનો ચલાયમાન થાય આ ત્રણ કારણોને લીધે જ તેઓ સિંહનાદ કરે છે અને ચેલોત્ક્ષેપ પણ કરે છે. આ બધાં કાર્યો આનંદને કારણે જ તેઓ કરે છે. આ ત્રણ કારણે જ ચૈત્યવૃક્ષ (દેવવૃક્ષ વિશેષ) ચલાયમાન થાય છે.

टीका—'तिहिं ठाणेहिं' इत्यादि—षोडशसूत्री सुगमा। नवरं-त्रिभि स्थानै-कारणै लोके-क्षेत्रलोके-ऊर्ध्वाधस्तिर्यग् रूपेऽन्धकारं लोकान्धकारं द्रव्यतो दृष्टि विघातानुभावरूपं, भावत प्रकाशकस्वभावज्ञानाभावस्वरूपं भवति। क्षेत्रलोकस्वरूपमाह—

"आगासस्स पएसा, उड्ढं च अहे य तिरियलोए य।
जाणाहि खेत्तलोयं, अणंतजिणदेसियं सम्मं ॥ १ ॥"

छाया—आकाशस्य प्रदेशा ऊर्ध्वमधश्च तिर्यग्लोके च।
जानीहि क्षेत्रलोकम्, अनन्तजिनदर्शितं सम्यक् ॥

तत्र येन कारणेनाह—'अरिहंतेहिं' इत्यादि, अर्हन्-ज्ञानावरणीय-दर्शनावरणीयमोहनीयान्तरायरूपाणि घातिकर्माणि घ्नन्ति-नाशयन्तीति अरिहन्तस्तेषु, अस्य विशेषव्याख्या-आवश्यकसूत्रस्य मत्कृतायां मुनितोषिणी टीकायां विलोकनीया। व्युच्छिद्यमानेषु निर्वाणं गच्छत्सु इति प्रथमं कारणम् १, तथा अर्हत्प्रज्ञप्ते धर्मे

टीकार्थ-ऊर्ध्वलोक, अधोलोक और तिर्यग्लोक ये तीन लोक लोक शब्दसे यहां गृहीत हुए हैं। द्रव्यान्धकार और भावान्धकारके भेदसे दो प्रकारका अन्धकार होता है, जिससे दृष्टि का विघात होता है वह द्रव्यान्धकार है। तथा प्रकाशक स्वभावरूप ज्ञान का जो अभाव है वह भावान्धकार है, क्षेत्रलोकका स्वरूप इस प्रकार से कहा गया है-'आगासस्स पएसा उड्ढं च' इत्यादि। ज्ञानावरणीय दर्शनावरणीय, मोहनीय और अन्तरायरूप चार घातिया कर्मों का जो नाश कर देते हैं वे अरिहन्त हैं। इसकी विशेष व्याख्या आवश्यक सूत्र की मुनितोषिणी टीका में देखनी चाहिये। व्युच्छिद्यमान शब्द का अर्थ है जब वे निर्वाण जाने लगते हैं ऐसा। पूर्व शब्द से यहां उत्पादपूर्व से लेकर लोकबिन्दुसार तक

ટીકાર્થ-લોક શબ્દથી ઉર્ધ્વલોક, અધોલોક અને તિર્યગ્લોક અહીં ગ્રહણ કરાયા છે અંધકારના બે ભેદ છે-(૧) દ્રવ્યાન્ધકાર અને (૨) ભાવાન્ધકાર. જેના દ્વારા દૃષ્ટિનો વિઘાત થાય છે, તેનું નામ દ્રવ્યાન્ધકાર છે, તથા પ્રકાશક સ્વભાવરૂપ જ્ઞાનનો જે અભાવ છે તેનું નામ ભાવાન્ધકાર છે ક્ષેત્રલોકનું સ્વરૂપ આ પ્રમાણે કહ્યું છે-'આગાસસ્સ પએસા ઉડ્ઢં ચ" ઇત્યાદિ—

જ્ઞાનાવરણીય, દર્શનાવરણીય, મોહનીય અને અન્તરાય, આ ચાર ઘાતિયા કર્મોનો જેમણે ક્ષય કરી નાખ્યો છે, તેમને અર્હંત કહે છે આ પદની વિસ્તૃત વ્યાખ્યા આવશ્યક સૂત્રની મુનિતોષિણી ટીકામાં આપવામાં આવેલ છે "વ્યુચ્છિદ્યમાન" એટલે "કર્મોનો ક્ષય કરીને નિર્વાણ માર્ગે વિચરતા."

व्युच्छिद्यमाने तीर्थव्यवच्छेदकाले इत्यर्थः इति द्वितीयं कारणम् २, पूर्वाणि-उत्पादादीनि लोकबिन्दुसारपर्यन्तानि चतुर्दश, तेषु गत-प्रविष्टं तदभ्यन्तरीभूतं यच्छ्रुतं तत्पूर्वगतं दृष्टिवादान्तर्गतश्रुताधिकारविशेष, तस्मिन् व्युच्छिद्यमाने सतीति तृतीयं कारणम् ३ लोकान्धकार स्यादिति सम्बन्धः। अर्हदादिषु व्युच्छिद्यमानेषु कथं लोकान्धकारं स्या ? दिति नाश ङ्कनीयम्, राजमरणदेशनगरादि भङ्गे दिशां रजस्वलतया च दृश्यते जगति लोकान्धकारं, यत्पुनर्निखिलभुवनभूतमात्रानवद्यनयनसमानेषु (त्रिलोकचक्षुः सदृशे ष्वित्यर्थः) भगवदर्हदादिषु व्युच्छिद्यमानेषु लोकान्धकार भवति तत्किमाश्चर्यमिति। १। त्रिभिः स्थानै र्लोकोद्योतः स्यात्-लोकत्रये प्रकाशो भवति, द्रव्यतो घटपटादि-प्रकाशकरूपः, भावतो लोकत्रयेऽपि सुखोत्पादकहेतुरूपः। अर्हज्जन्म १-प्रव्र-

के चौदह पूर्व लिये गये हैं इन पूर्वों में प्रविष्ट जो श्रुत है वह पूर्वगत श्रुत है। यह पूर्वगत श्रुत दृष्टिवाद के अन्तर्गत श्रुताधिकार विशेषरूप है, "अर्हदादिकों के व्युच्छिद्यमान होने पर लोक में अन्धकार कैसे हो सकता है" ऐसी आशंका नहीं करनी चाहिये। क्यों कि राजाके मरने पर एवं देशभंग तथा नगर आदिके भङ्ग होने पर दिशाओं के धूमिल रूप हो जाने से जब जगत में लोकान्धकार दिखलाई पडता है तो फिर समस्त भुवनवर्ती लोकमात्र के निर्मल नयनों में जो समभावी दिखते हों ऐसे भगवान् अर्हत आदि के व्युच्छिद्यमान होनेपर लोकमें अंधकार हो जावे तो इसमें आश्चर्य जैसी क्या बात है?। उद्योत शब्दका अर्थ-प्रकाश है यह प्रकाश भी द्रव्य और भाव के भेद से दो प्रकार का है घटपट आदिकों को प्रकाश देनेवाला जो होता है वह द्रव्यप्रकाश है-

'पूर्व' शब्दना प्रयोग द्वारा उत्पाद पूर्वथी लईने लोकबिन्दुसार सुधीना १४ पूर्व ग्रहण करवाना छे ते पूर्वोमां प्रविष्ट जे श्रुत छे तेने पूर्वगत श्रुत कहे छे पूर्वगत श्रुत दृष्टिवादना अन्तर्गत श्रुताधिकार रूप छे. "अर्हंतादिको ज्यारे निर्वाण पथे विचरे छे, त्यारे लोकमां अन्धकार केवी रीते थई शके छे," आ प्रकारनी शंका अस्थाने छे, कारण के राजा आदिनुं मृत्यु थतां अने देश तथा नगरादिनो नाश थतां चारे दिशाओमां धुंधळु वातावरण थई जवाथी जो जगतमां अन्धकार व्यापी जाय छे, तो समस्त भुवनवर्ती लोकोना निर्मळ नयनोमा जे समभावी देखाय छे, एवा अर्हंत भगवान आदिना निर्वाण काळे लोकमां अंधकार व्यापी जाय, तेमां नवाई पामवा जेवुं शुं छे? उद्योत एटले प्रकाश. ते प्रकाश पण द्रव्य अने भावना भेदथी बे प्रकारनो कह्यो छे. घट, पट आदि वस्तुओने प्रकाश आपनारी जे वस्तुओ

टीका—'तिहिं ठाणेहिं' इत्यादि—षोडशसूत्री सुगमा। नवरं-त्रिभिः स्थानैः-कारणैः लोके-क्षेत्रलोक-ऊर्ध्वाधस्तिर्यग् रूपेऽन्धकारं लोकान्धकारं द्रव्यतो दृष्टि विघातानुभावरूपं, भावतः प्रकाशकस्वभावज्ञानाभावस्वरूपं भवति। क्षेत्रलोक स्वरूपमाह—

" आगासस्स पएसा, उड्ढं च अहे य तिरियलोए य।
जाणाहि खेत्तलोयं, अणंतजिणदेसियं सम्मं ॥ १ ॥"

छाया—आकाशस्य प्रदेशा ऊर्ध्वमधश्च तिर्यग्लोके च।
जानीहि क्षेत्रलोकम्, अनन्तजिनदर्शितं सम्यक् ॥

तत्र प्रथमं कारणमाह—'अरिहंतेहिं' इत्यादि, अर्हन्ति-ज्ञानावरणीय-दर्शनावरणीयमोहनीयान्तरायरूपाणि घातिकर्माणि घ्नन्ति-नाशयन्तीति अरिहन्तास्तेषु, अस्य विशेषव्याख्या-आवश्यकसूत्रस्य मत्कृतायां मुनितोषिणी टीकायां विलोकनीया। व्युच्छिद्यमानेषु निर्वाणं गच्छत्सु इति प्रथमं कारणम् १, तथा अर्हत्प्रज्ञप्ते धर्मे

टीकार्थ-ऊर्ध्वलोक, अधोलोक और तिर्यग्लोक ये तीन लोक, लोक शब्दसे यहां गृहीत हुए हैं। द्रव्यान्धकार और भावान्धकारके भेदसे दो प्रकारका अन्धकार होता है, जिससे दृष्टि का विघात होता है वह द्रव्यान्धकार है। तथा प्रकाशक स्वभावरूप ज्ञान का जो अभाव है वह भावान्धकार है, क्षेत्रलोकका स्वरूप इस प्रकार से कहा गया है–'आगासस्स पएसा उड्ढं च' इत्यादि। ज्ञानावरणीय, दर्शनावरणीय, मोहनीय और अन्तरायरूप चार घातिया कर्मों का जो नाश कर देते हैं वे अरिहन्त हैं। इसकी विशेष व्याख्या आवश्यक सूत्र की मुनितोषिणी टीका में देखनी चाहिये। व्युच्छिद्यमान शब्द का अर्थ है जब वे निर्वाण जाने लगते हैं ऐसा। पूर्व शब्द से यहां उत्पादपूर्व से लेकर लोकबिन्दुसार तक

ટીકાર્થ-લોક શબ્દથી ઉર્ધ્વલોક અધોલોક અને તિર્યગ્લોક અહીં ગ્રહણ કરાયા છે અંધકારના બે ભેદ છે-(૧) દ્રવ્યાન્ધકાર અને (૨) ભાવાન્ધકાર. જેના દ્વારા દૃષ્ટિનો વિઘાત થાય છે, તેનું નામ દ્રવ્યાન્ધકાર છે, તથા પ્રકાશક સ્વભાવરૂપ જ્ઞાનનો જે અભાવ છે તેનું નામ ભાવાન્ધકાર છે. ક્ષેત્રલોકનું સ્વરૂપ આ પ્રમાણે કહ્યું છે- 'આગાસસ્સ પએસા ઉડ્ઢં ચ" ઇત્યાદિ—

જ્ઞાનાવરણીય, દર્શનાવરણીય, મોહનીય અને અન્તરાય, આ ચાર ઘાતિયા કર્મોનો જેમણે ક્ષય કરી નાખ્યો છે, તેમને અર્હંત કહે છે આ પદની વિસ્તૃત વ્યાખ્યા આવશ્યક સૂત્રની મુનિતોષિણી ટીકામાં આપવામાં આવેલ છે 'વ્યુચ્છિદ્યમાન" એટલે "કર્મોનો ક્ષય કરીને નિર્વાણ માર્ગે વિચરતા"

व्युच्छिद्यमाने तीर्थव्यवच्छेदकाले इत्यर्थः इति द्वितीयं कारणम् २, पूर्वाणि- उत्पादादीनि लोकबिन्दुसारपर्यन्तानि चतुर्दश, तेषु गतं-प्रविष्टं तदभ्यन्तरीभूतं यच्छ्रुतं तत्पूर्वगतं दृष्टिवादान्तर्गतश्रुताधिकारविशेषः, तस्मिन् व्युच्छिद्यमाने सतीति तृतीयं कारणम् ३ लोकान्धकारं स्यादिति सम्बन्धः। अर्हदादिषु व्युच्छिद्यमानेषु कथं लोकान्धकारं स्या ? दिति नाश ङ्कनीयम्, राजमरणदेशनगरादि भङ्गे दिशां रजस्वलतया च दृश्यते जगति लोकान्धकारं, यत्पुनर्निखिलभुवनभूतमात्रानवद्यनयनसमानेषु (त्रिलोकचक्षुः सदृशे ष्वित्यर्थः) भगवदर्हदादिषु व्युच्छिद्यमानेषु लोकान्धकारं भवति तत्किमाश्चर्यमिति ।१। त्रिभिः स्थानै र्लोकोद्योतः स्यात्-लोकत्रये प्रकाशो भवति, द्रव्यतो घटपटादि- प्रकाशकरूपः, भावतो लोकत्रयेऽपि सुखोत्पादकहेतुरूपः। अर्हज्जन्म १-प्रव्र-

के चौदह पूर्व लिये गये हैं इन पूर्वो में प्रविष्ट जो श्रुत है वह पूर्वगत श्रुत है। यह पूर्वगत श्रुत दृष्टिवाद के अन्तर्गत श्रुताधिकार विशेषरूप है, "अर्हदादिकों के व्युच्छिद्यमान होने पर लोक में अन्धकार कैसे हो सकता है" ऐसी आशंका नहीं करनी चाहिये। क्योंकि राजाके मरने पर एवं देशभंग तथा नगर आदिके भङ्ग होने पर दिशाओं के धूमिल रूप हो जाने से जब जगत में लोकान्धकार दिखलाई पडता है तो फिर समस्त भुवनवर्ती लोकमात्र के निर्मल नयनों में जो समभावी दिखते हों ऐसे भगवान् अर्हत आदि के व्युच्छिद्यमान होनेपर लोकमें अंधकार हो जावे तो इसमें आश्चर्य जैसी क्या बात है ?। उद्योत शब्दका अर्थ- प्रकाश है यह प्रकाश भी द्रव्य और भाव के भेद से दो प्रकार का है घटपट आदिकों को प्रकाश देनेवाला जो होता है वह द्रव्यप्रकाश है-

'पूर्व' शब्दना प्रयोग द्वारा उत्पाद पूर्वथी लइने लोकबिन्दुसार सुधीना १४ पूर्व ग्रहण करवाना छे ते पूर्वोमां प्रविष्ट जे श्रुत छे तेने पूर्वगत श्रुत कहे छे. पूर्वगत श्रुत दृष्टिवादना अन्तर्गत श्रुताधिकार रूप छे. "अर्हंतादिको ज्यारे निर्वाण पथे विचरे छे, त्यारे लोकमां अन्धकार केवी रीते थइ शके छे," आ प्रकारनी शंका अस्थाने छे, कारण के राजा आदिनुं मृत्यु थतां अने देश तथा नगरादिनो नाश थतां चारे दिशाओमां धुंधळु वातावरण थई जवाथी जो जगतमां अन्धकार व्यापी जाय छे, तो समस्त भुवनवर्ती लोकोना निर्मळ नयनोमां जे समभावी देखाय छे, एवा अर्हंत भगवान आदिना निर्वाण काळे लोकमां अंधकार व्यापी जाय, तेमां नवाई पामवा जेवु शु छे ? उद्योत एटले प्रकाश. ते प्रकाश पण द्रव्य अने भावना भेदथी बे प्रकारनो कह्यो छे. घट, पट आदि वस्तुओने प्रकाश आपनारी जे वस्तुओ

टीका—'तिहिं ठाणेहिं' इत्यादि—षोडशसूत्री सुगमा। नवरं-त्रिभिः स्थानैः-कारणैः लोके-क्षेत्रलोके-ऊर्ध्वाधस्तिर्यग्रूपे अन्धकारं लोकान्धकारं द्रव्यतो दृष्टिविघातानुभावरूपं, भावतः प्रकाशकस्वभावज्ञानाभावस्वरूपं भवति। क्षेत्रलोकस्वरूपमाह—

"आगासस्स पएसा, उड्ढं च अहे य तिरियलोए य।
जाणाहि खेत्तलोयं, अणंतजिणदेसियं सम्मं ॥ १ ॥"

छाया—आकाशस्य प्रदेशा ऊर्ध्वमधश्च तिर्यग्लोके च।
जानीहि क्षेत्रलोकम्, अनन्तजिनदर्शितं सम्यक् ॥

तत्र कारणमाह—'अरिहंतेहिं' इत्यादि, अर्हन्-ज्ञानावरणीय-दर्शनावरणीयमोहनीयान्तरायरूपाणि घातिकर्माणि घ्नन्ति-नाशयन्तीति अरिहन्तस्तेषु, अस्य विशेषव्याख्या-आवश्यकसूत्रस्य मत्कृतायां मुनितोषिणी टीकायां विलोकनीया। व्युच्छिद्यमानेषु निर्वाणं गच्छत्सु इति प्रथमं कारणम् १, तथा अर्हत्प्रज्ञप्ते धर्मे

टीकार्थ—ऊर्ध्वलोक, अधोलोक और तिर्यग्लोक ये तीन लोक, लोक शब्द से यहां गृहीत हुए हैं। द्रव्यान्धकार और भावान्धकार के भेद से दो प्रकार का अन्धकार होता है, जिससे दृष्टि का विघात होता है वह द्रव्यान्धकार है। तथा प्रकाशक स्वभावरूप ज्ञान का जो अभाव है वह भावान्धकार है, क्षेत्रलोक का स्वरूप इस प्रकार से कहा गया है—'आगासस्स पएसा उड्ढं च' इत्यादि। ज्ञानावरणीय, दर्शनावरणीय, मोहनीय और अन्तरायरूप चार घातिया कर्मों का जो नाश कर देते हैं वे अरिहन्त हैं। इसकी विशेष व्याख्या आवश्यक सूत्र की मुनितोषिणी टीका में देखनी चाहिये। व्युच्छिद्यमान शब्द का अर्थ है जब वे निर्वाण जाने लगते हैं ऐसा। पूर्व शब्द से यहां उत्पादपूर्व से लेकर लोकबिन्दुसार तक

ટીકાર્થ—લોક શબ્દથી ઊર્ધ્વલોક અધોલોક અને તિર્યગ્લોક અહીં ગ્રહણ કરાયા છે અન્ધકારના બે ભેદ છે—(૧) દ્રવ્યાન્ધકાર અને (૨) ભાવાન્ધકાર જેના દ્વારા દૃષ્ટિનો વિઘાત થાય છે, તેનું નામ દ્રવ્યાન્ધકાર છે, તથા પ્રકાશક સ્વભાવરૂપ જ્ઞાનનો જે અભાવ છે તેનું નામ ભાવાન્ધકાર છે ક્ષેત્રલોકનું સ્વરૂપ આ પ્રમાણે કહ્યું છે—'આગાસસ્સ પએસા ઉડ્ઢં ચ" ઇત્યાદિ—

જ્ઞાનાવરણીય, દર્શનાવરણીય, મોહનીય અને અન્તરાય, આ ચાર ઘાતિયા કર્મોનો જેમણે ક્ષય કરી નાખ્યો છે, તેમને અર્હંત કહે છે આ પદની વિસ્તૃત વ્યાખ્યા આવશ્યક સૂત્રની મુનિતોષિણી ટીકામાં આપવામાં આવેલ છે "વ્યુચ્છિદ્યમાન" એટલે "કર્મોનો ક્ષય કરીને નિર્વાણ માર્ગે વિચરતા"

मनुष्यलोकागमनं त्रिभिरेव पूर्वोक्तैः कारणै भवति, हव्यमिति शीघ्रम् ।८। देव-लोकस्य ब्रह्मलोकस्य अन्तः समीपं कृष्णराजीलक्षणं क्षेत्रनिवासो येषां ते लोका-न्तिकाः, यद्वा-लोकान्ते-औदयिकभावलोकावसाने भवा अनन्तरभवे मुक्तिग-मनादिति लोकान्तिकाः सारस्वतादयः। एतेऽपिपूर्वोक्तैस्त्रिभिः स्थानैर्मनुष्यलोकं हव्यमागच्छन्ति ।९। एवं-पूर्वोक्तेनैवालापकेन सामानिकाः-इन्द्रसमानर्द्धयः १०, त्रायस्त्रिंशका महत्तरकल्पाः पूज्यादेवाः ११, लोकपालाः-सोमादयः पूर्वादिदिक्षु नियुक्तादेवाः १२, अग्रमहिष्यः-अग्रभूताः प्रधाना महिष्यः-भार्यादेवेन्द्रपट्टराज्य इत्यर्थः १३, परिषदुपपन्नकाः-परिवारोपपन्नका देवाः १३, अनीकाधिपतयः-

द्योत, देवसंनिपात, देवोत्कलिका-देवसमूह का एक जगह एकत्रित होना, देवकहकहक देवों का प्रमोदोत्पन्न कलकलशब्द, यह सब भी पूर्वोक्त तीन कारणों के होने पर होना है "हव्यम्" यह शीघ्र अर्थ का वाचक अव्यय है देवलोक और ब्रह्मलोक के पास कृष्णराजीरूप क्षेत्र जिनका निवास स्थान है वे लोकान्तिक हैं अथवा औदयिक भाव लोक के अवसान में जो हैं वे लोकान्तिक हैं क्यों कि अनन्तरभव में इनका मुक्ति में गमन अवश्यंभावी होता है। सारस्वत आदि इनके नाम हैं सामानिक देव-इन्द्र के जैसी ऋद्धि वाले देवों का नाम सामानिक देव है, महत्तरतुल्य जो देव पूज्य होते हैं वे त्रायस्त्रिंशक देव हैं पूर्वादि-दिशाओं में नियुक्त जो सोम आदि देव हैं वे लोकपाल हैं देवेन्द्रों की जो मुख्यदेवियां है वे अग्रमहिषियां हैं परिवारोपपन्नक जो देव हैं

દેવોદ્યોત, દેવસંનિપાત (દેવોનું પોતાના દેવલોકમાથી નીકળવાનું), દેવોત્કલિકા દેવોના સમૂહનું એક જગ્યાએ એકત્ર થવાનું, અને દેવોનું ખડખડાટ હાસ્ય, પણ ઉપર્યુક્ત (અર્હંત ભગવાનનો જન્મ) આદિ ત્રણ કારણે જ થાય છે. "हव्यम्" આ પદ શીઘ્ર અર્થનું વાચક અવ્યય છે દેવલોક અને બ્રહ્મલોકની પાસે કૃષ્ણરાજીરૂપ ક્ષેત્ર નામનું નિવાસસ્થાન છે, તેમને લોકાન્તિક કહે છે.

અથવા—ઔદયિક ભાવલોકના અવસાનમાં જેઓ છે, તેમને લોકાન્તિક કહે છે, કારણ કે અનન્તર ભવમાં (પછીના ભવમાં) તેઓ ચોક્કસ મુક્તિ પામે જ છે સારસ્વત આદિ તેમનાં નામ છે ઈન્દ્રના જેવી ઋદ્ધિવાળા જે દેવો છે તેમને સામાનિક દેવો કહે છે ગુરુસ્થાનીય જે દેવો છે તેમને ત્રાય-સ્ત્રિંશક દેવો કહે છે. પૂર્વાદિ દિશાઓમાં નિયુક્ત જે સોમ આદિ દેવો છે તેમને લોકપાલો કહે છે. દેવેન્દ્રોની મુખ્ય દેવીઓને અગ્રમહિષીઓ કહે છે. પરિ-

ज्ञा २-ज्ञानोत्पादसमये २ देवकृतमहोत्सवैर्लोकोद्योतो भवतीति । २। अथ देवा-न्धकारसूत्रमाह-'तिहिं' इत्यादि त्रिभिः स्थानैर्देवान्धकारं स्यात् देवानां भवनादिषु अन्धकारं देवान्धकारं, तत्पूर्वोक्तकारणत्रयमेव भवति । ननु उक्तेऽपि लोकान्धकारे किं पुनर्देवान्धकारमुक्तं देवानामपि लोकान्तर्गतत्वादेषेति चेदाह-तत्सर्वमन्धकारव्याप्ति प्रदर्शनार्थमिति ३। तथा-देवोद्द्योतः-देवप्रकाशः ४। देवसन्निपातः-देवसमागमो भवति, मुनि देवसमवसारात् ।५। 'एव' इत्यादि, एवम्-पूर्ववत् देवोत्कलिका-देवसमुदायस्यैकत्री गमनम् ६, देवकहकहकः देवानां प्रमादोत्पन्नः कलकलशब्दः पूर्वोक्तैस्त्रिभिरेव कारणे र्भागन्त ।७। देवेन्द्राणां

तथा लोकत्रय में भी जो सुखोत्पादक का हेतुरूप होता है वह भावप्रकाश है अर्हन्त प्रभु का जब जन्म होता है और जब वे प्रव्रज्या ग्रहण करते हैं तथा उन्हें जब कैवल्य की प्राप्ति होती है, उस समय देवकृत महोत्सवों द्वारा लोक में उद्योत होता है; देवों के भवनादिकों में जो अन्धकार होता है वह देवान्धकार है यह देवान्धकार भी पूर्वोक्त कारण त्रय से ही होता है ।

शंका—जब आपने लोकान्धकार का कथन कर दिया है तो फिर स्वतन्त्ररूप से देवान्धकार के कहने की क्या आवश्यकता थी, क्यों कि देव तो लोकान्तर्गत ही होते हैं ।

उत्तर—ऐसा जो कथन किया गया है सो अन्धकार की सर्वत्र व्याप्ति हो जाती है इस बात को दिखाने के लिये किया है की देवों

છે તેમના પ્રકાશને દ્રવ્યપ્રકાશ કહે છે પરન્તુ ત્રણે લોકમાં સુખ ઉપજાવનાર જે પ્રકાશ હોય છે તે પ્રકાશને ભાવપ્રકાશ કહે છે જેમકે......

અર્હંત પ્રભુનો જ્યારે જન્મ થાય છે, જ્યારે તેઓ પ્રવ્રજ્યા અંગીકાર કરે છે તથા જ્યારે તેમને કેવળજ્ઞાનની પ્રાપ્તિ થાય છે ત્યારે દેવકૃત મહોત્સવો દ્વારા લોકમાં પ્રકાશ થાય છે આ પ્રકારના પ્રકાશને ભાવપ્રકાશ કહે છે દેવોના ભવનાદિમાં જે અન્ધકાર થાય છે તેનું નામ દેવાન્ધકાર છે અર્હંત નિર્વાણ આદિ પૂર્વોક્ત ત્રણ કારણોને લીધે તે દેવાન્ધકાર થાય છે

શંકા—જો આપે લોકાન્ધકારનું કથન કરી દીધું છે તો દેવાન્ધકારના સ્વતન્ત્ર કથનની શી આવશ્યકતા છે? લોકમાં જ દેવલોકનો પણ સમાવેશ થઈ જતો હોવાથી શું આવું કથન જરૂરી છે ખરું?

ઉત્તર—અંધકાર સર્વત્ર વ્યાપી જાય છે એમ દર્શાવવા માટે જ આ કથન કરવામાં આવ્યું છે

मनुष्यलोकागमनं त्रिभिरेव पूर्वोक्तैः कारणे भवति, हव्यमिति शीघ्रम् ।८। देवलोकस्य ब्रह्मलोकस्य अन्तः समीपं कृष्णराजीलक्षणं क्षेत्रनिवासो येषां ते लोकान्तिकाः, यद्वा—लोकान्ते—औदयिकभावलोकावसाने भवा अनन्तरभवे मुक्तिगमनादिति लोकान्तिकाः सारस्वतादयः। एतेऽपिपूर्वोक्तैस्त्रिभिः स्थानैर्मनुष्यलोकं हव्यमागच्छन्ति ।९। एवं—पूर्वोक्तेनैवालापकेन सामानिकाः—इन्द्रसमानर्द्धयः १०, त्रायस्त्रिंशका महत्तरकल्पाः पूज्यादेवाः ११, लोकपालाः—सोमादयः पूर्वादिदिक्षु नियुक्तादेवाः १२, अग्रमहिष्यः—अग्रभूताः प्रधाना महिष्यः—भार्यादेवेन्द्रपट्टराज्य इत्यर्थः १३, परिषदुपपन्नकाः—परिवारोपपन्नका देवाः १३, अनीकाधिपतयः—

द्योत, देवसंनिपात, देवोत्कलिका—देवसमूह का एक जगह एकत्रित होना, देवकहकहक देवों का प्रमोदोत्पन्न कलकलशब्द, यह सब भी पूर्वोक्त तीन कारणों के होने पर होता है "हव्यम्" यह शीघ्र अर्थ का वाचक अव्यय है देवलोक और ब्रह्मलोक के पास कृष्णराजीरूप क्षेत्र जिनका निवास स्थान है वे लोकान्तिक हैं अथवा औदयिक भाव लोक के अवसान में जो हैं वे लोकान्तिक हैं क्यों कि अनन्तरभव में इनका मुक्ति में गमन अवश्यंभावी होता है। सारस्वत आदि इनके नाम हैं सामानिक देव—इन्द्र के जैसी ऋद्धि वाले देवों का नाम सामानिक देव है, महत्तरतुल्य जो देव पूज्य होते हैं वे त्रायस्त्रिंशक देव हैं पूर्वादिदिशाओं में नियुक्त जो सोम आदि देव हैं वे लोकपाल हैं देवेन्द्रों की जो मुख्यदेवियां है वे अग्रमहिषियां हैं परिवारोपपन्नक जो देव हैं

દેવોદ્યોત, દેવસંનિપાત (દેવોનું પોતાના દેવલોકમાંથી નીકળવાનું), દેવોત્કલિકા દેવોના સમૂહનું એક જગ્યાએ એકત્ર થવાનું, અને દેવોનુ ખડખડાટ હાસ્ય, પણ ઉપર્યુક્ત (અર્હંત ભગવાનનો જન્મ) આદિ ત્રણ કારણે જ થાય છે "हव्यम्" આ પદ શીઘ્ર અર્થનું વાચક અવ્યય છે. દેવલોક અને બ્રહ્મલોકની પાસે કૃષ્ણરાજીરૂપ ક્ષેત્ર નામનું નિવાસસ્થાન છે, તેમને લોકાન્તિક કહે છે.

અથવા—ઔદયિક ભાવલોકના અવસાનમાં જેઓ છે, તેમને લોકાન્તિક કહે છે, કારણ કે અનન્તર ભવમા (પછીના ભવમાં) તેઓ ચોક્કસ મુક્તિ પામે જ છે સારસ્વત આદિ તેમનાં નામ છે ઈન્દ્રના જેવી ઋદ્ધિવાળા જે દેવો છે તેમને સામાનિક દેવો કહે છે ગુરુસ્થાનીય જે દેવો છે તેમને ત્રાયસ્ત્રિંશક દેવો કહે છે પૂર્વાદિ દિશાઓમાં નિયુક્ત જે સોમ આદિ દેવો છે તેમને લોકપાલો કહે છે. દેવેન્દ્રોની મુખ્ય દેવીઓને અગ્રમહિષીઓ કહે છે. પરિ-

गमादिसैन्याधिपतयो देवा १४, आत्मरक्षकाः-राज्ञामिवाङ्गरक्षका देवा मानुष्य लोकं हव्यमागच्छन्तीति प्रतिसूत्रे सयोजनीयम् १५।

मनुष्यलोकागमने देवानां यानि त्रीणि कारणानि सन्ति तान्येव देवाभ्युत्था नादीनां कारणानि सूत्रपञ्चकेनाह—'तीहिं' इत्यादि, सुगम, नवरं-अभ्युत्ति ष्ठन्ति-सिंहासनादुत्तिष्ठन्ति ।१। एव-पूर्वोक्ताभिलापेन आसनानि-शक्रादीनां सिंहा-सनानि चलन्ति ।२। सिंहनादश्चेलोत्क्षेपौ प्रमोदकार्यौ कुर्वन्ति ।४। एभिरेव त्रिभिः स्थाने चैत्यवृक्षाः-देववृक्षविशेषाश्चलन्ति ।५।सू० १३॥

किमर्थं मर्त्य । शक्रादिदेवा मनुष्यलोकमागच्छन्ति ? अत्राह-धर्माचार्य तथा महोपकारित्वात्सेवार्थमागच्छन्ति, अशक्यप्रत्युपकाराश्च भगवन्तो धर्मा चार्याः इति सदृष्टान्त प्रदर्शयन् सूत्रत्रयमाह—

मूलम्—तिण्हं दुप्पडियार समणाउसो !, त जहा—अम्मा पिउणो १, भट्टिस्स, धम्मायरियस्स । सपाओवि य ण केइपु रिसे अम्मापियर सयपागसहस्सपागेहिं तेल्लेहिं अब्भगेत्ता सुरभिणा गंधट्टएण उव्वट्टित्ता तिहिं उदगेहिं मज्जावित्ता सव्वा

वे परिषदुपपन्नक देव है । गजादिसेना के अधिपति जो देव हैं वे अनी काधिपति देव हैं, राजाओं के अङ्गरक्षकों की तरह जो देव होते हैं वे आत्मरक्षक देव हैं । ये सब भी इन कारणों को लेकर मनुष्यलोक में शीघ्र आते हैं ऐसा कथन प्रत्येक सूत्र में लगाना चाहिये मनुष्यलोक में आने के जो ये कारण प्रकट किये गये हैं वे ही कारण देवाभ्युत्था नादि के भी हैं, यही बात सूत्रकार ने "तीहिं" इत्यादि पांच सूत्रों द्वारा प्रकट की है ॥ सू०१३ ॥

વારોપપન્નક જે દેવો છે તેમને પરિષદુપપન્નક દેવો કહે છે ગજાદિ સેના ઓના અધિપતિ જે દેવો છે તેમને અનીકાધિપતિ દેવો કહે છે, જે દેવો રાજાઓના અંગરક્ષકોની જેમ ઈન્દ્રોના અંગરક્ષકો સમાન હોય છે, તેમને આત્મરક્ષક દેવો કહે છે આ બધાં દેવો પૂર્વોક્ત કારણોને લીધે મનુષ્યલોકમાં શીઘ્ર આવે છે, આ પ્રકારનું કથન પ્રત્યેક સૂત્રમાં સમજી લેવું. જે કારણે તેઓ મનુષ્યલોકમાં આવે છે તે કારણોને લીધે જ તેઓ પોતાના સિંહાસન પરથી ઊઠે છે, ખળભળાટ કરે છે, ઈત્યાદિ વાત સૂત્રકારે "તીહિં" ઇત્યાદિ પાંચ સૂત્રો દ્વારા પ્રકટ કરી છે ॥ સૂ ૧૩ ॥

लंकारविभूसियं करेत्ता मणुन्नं थालीपागसुद्धं अट्ठारसवंजणाउलं भोयणं भोयावेत्ता जावज्जीवं पिट्ठिवडेंसियाए परिवहेज्जा तेणावि तस्स अम्मापिउस्स दुप्पडियारं भवइ, अहेणं से तं अम्मापियरं केवलिपन्नत्ते धम्मे आघवित्ता पन्नवित्ता परूवित्ता ठावित्ता भवइ तेणामेव तस्स अम्मापिउस्स सुप्पडियारं भवइ समणाउसो ? ॥ १ ॥

केइ महच्चे दरिद्दं समुक्कसेज्जा, तएणं से दरिद्दे समुक्किट्ठे समाणे पच्छा पुरं च णं विउलभोगसमिइसमन्नागए यावि विहरेज्जा, तएणं से महच्चे अन्नया कयाइं दरिद्दीहूए समाणे तस्स दरिद्दस्स अंतिए हव्वमागच्छेज्जा, तएणं से दरिद्दे तस्स भट्टिस्स सव्वस्समवि दलयमाणे तेणावि तस्स दुप्पडियारं भवइ अहे णं से तं भट्टिं केवलिपन्नत्ते धम्मे आघवित्ता पन्नवित्ता परूवित्ता ठावित्ता भवइ तेणामेव तस्स भट्टिस्स सुप्पडियारं भवइ ॥२॥

केइ तहारूवस्स समणस्स वा माहणस्स वा अंतिए एगमवि आरियं धम्मियं सुवयणं सोच्चा निसम्म कालमासे कालं किच्चा अन्नयरेसु देवलोएसु देवत्ताए उववन्ने, तएणं से देवे तं धम्मायरियं दुब्भिक्खाओ देसाओ सुभिक्खं देसं साहरेज्जा, कंताराओ वा णिक्कंतारं करेज्जा, दीहकालिएणं वा रोगायंकेणं अभिभूयं समाणं विमोएज्जा, तेणावि तस्स धम्मायरियस्स दुप्पडियारं भवइ, अहे णं से तं धम्मायरियं केवलिपन्नत्ताओ धम्माओ भट्ठं समाणं भुज्जोवि केवलिपन्नत्ते धम्मे आघवित्ता पन्नवित्ता परूवित्ता ठावित्ता भवइ, तेणामेव तस्स धम्मायरियस्स सुप्पडियारं भवइ ॥ सू० १४ ॥

गमादिसैन्याधिपतयो देवा १४, आत्मरक्षकाः-राज्ञामिवाङ्गरक्षका देवा मानुष्य लोके हव्यमागच्छन्तीति प्रतिसूत्रं संयोजनीयम् १५।

मनुष्यलोकागमने देवानां यानि त्रीणि कारणानि सन्ति तान्येव देवाभ्युत्था नादीनां कारणानि सूत्रपञ्चकेनाह—'तीहिं' इत्यादि, सुगमं, नवरं-अभ्युत्ति ष्ठन्ति-सिंहासनादुत्तिष्ठन्ति ।१। एव-पूर्वोक्ताभिलापेन आसनानि-शक्रादीनां सिंहा सनानि चलन्ति ।२। सिंहनादचेलोत्क्षेपौ प्रमोदकार्यौ कुर्वन्ति ।४। एभिरेव त्रिभिः स्थानैः चैत्यवृक्षाः-देववृक्षविशेषाश्चलन्ति ।५।।सू० १३॥

किमर्थं भदन्त ! शक्रादिदेवा मनुष्यलोकमागच्छन्ति ? अत्राह-धर्माचार्य तया महोपकारित्वात्सेवार्थमागच्छन्ति, अशक्यप्रत्युपकाराश्च भगवन्तो धर्मा चार्याः इति सदृष्टान्तं प्रदर्शयन् सूत्रत्रयमाह—

मूलम्—तिण्ह दुप्पडियारं समणाउसो!, तं जहा-अम्मा पिउणो १, भट्टिस्स, धम्मायरियस्स । संपाओवि य णं केइपु रिसे अम्मापियरं सयपागसहस्सपागेहिं तेल्लेहिं अब्भंगेत्ता सुरभिणा गंधट्टएणं उव्वट्टित्ता तिहिं उदगेहिं मज्जावित्ता सव्वा

वे परिषदुपपन्नक देव है । गजादिसेना के अधिपति जो देव हैं वे अनी काधिपति देव हैं, राजाओं के अङ्गरक्षकों की तरह जो देव होते हैं वे आत्मरक्षक देव हैं । ये सब भी इन कारणों को लेकर मनुष्यलोक में शीघ्र आते हैं ऐसा कथन प्रत्येक सूत्र में लगाना चाहिये मनुष्यलोक में आने के जो ये कारण प्रकट किये गये हैं वे ही कारण देवाभ्युत्था नादि के भी हैं, यही बात सूत्रकार ने "तीहिं" इत्यादि पांच सूत्रों द्वारा प्रकट की है ॥ सू०१३ ॥

પારિષદ્યપન્નક જે દેવો છે તેમને પરિષદુપપન્નક દેવો કહે છે ગજાદિ સેના ઓના અધિપતિ જે દેવો છે તેમને અનીકાધિપતિ દેવો કહે છે, જે દેવો રાજાઓના અંગરક્ષકોની જેમ ઇન્દ્રોના અંગરક્ષકો સમાન હોય છે, તેમને આત્મરક્ષક દેવો કહે છે આ બધાં દેવો પૂર્વોક્ત કારણોને લીધે મનુષ્યલોકમાં શીઘ્ર આવે છે, આ પ્રકારનું કથન પ્રત્યેક સૂત્રમાં સમજી લેવું. જે કારણે તેઓ મનુષ્યલોકમાં આવે છે તે કારણોને લીધે જ તેઓ પોતાના સિંહાસન પરથી ઉઠે છે, ખડખડાટ હસે છે ઇત્યાદિ વાત સૂત્રકારે "તીહિં" ઇત્યાદિ પાંચ સૂત્રો દ્વારા પ્રકટ કરી છે ॥ સૂ. ૧૩ ॥

लंकारविभूसियं करेत्ता मणुन्नं थालीपागसुद्धं अट्ठारसवंजणाउलं भोयणं भोयावेत्ता जावज्जीवं पिट्ठिवडेंसियाए परिवहेज्जा तेणावि तस्स अम्मापिउस्स दुप्पडियारं भवइ, अहेणं से तं अम्मापियरं केवलिपन्नत्ते धम्मे आघवित्ता पन्नवित्ता परूवित्ता ठावित्ता भवइ तेणामेव तस्स अम्मापिउस्स सुप्पडियारं भवइ समणाउसो ? ॥ १ ॥

केइ महच्चे दरिद्दं समुक्कसेज्जा, तएणं से दरिद्दे समुक्किट्ठे समाणे पच्छा पुरं च णं विउलभोगसमिइसमन्नागए यावि विहरेज्जा, तएणं से महच्चे अन्नया कयाइं दरिद्दीहूए समाणे तस्स दरिद्दस्स अंतिए हव्वमागच्छेज्जा, तएणं से दरिद्दे तस्स भट्टिस्स सव्वस्समवि दलयमाणे तेणावि तस्स दुप्पडियारं भवइ अहे णं से तं भट्टिं केवलिपन्नत्ते धम्मे आघवित्ता पन्नवित्ता परूवित्ता ठावित्ता भवइ तेणामेव तस्स भट्टिस्स सुप्पडियारं भवइ ॥२॥

केइ तहारूवस्स समणस्स वा माहणस्स वा अंतिए एगमवि आरियं धम्मियं सुवयणं सोच्चा निसम्म कालमासे कालं किच्चा अन्नयरेसु देवलोएसु देवत्ताए उववन्ने, तएणं से देवे तं धम्मायरियं दुब्भिक्खाओ देसाओ सुभिक्खं देसं साहरेज्जा, कंताराओ वा णिक्कंतारं करेज्जा, दीहकालिएणं वा रोगायंकेणं अभिभूयं समाणं विमोएज्जा, तेणावि तस्स धम्मायरियस्स दुप्पडियारं भवइ, अहे णं से तं धम्मायरियं केवलिपन्नत्ताओ धम्माओ भट्ठं समाणं भुज्जोवि केवलिपन्नत्ते धम्मे आघवित्ता पन्नवित्ता परूवित्ता ठावित्ता भवइ, तेणामेव तस्स धम्मायरियस्स सुपडियारं भवइ ॥ सू० १४ ॥

छाया—त्रयाणां दुष्प्रतिकारं श्रमणायुष्मन्!, तद्यथा—अम्बापित्रोः १, भर्तुः २, धर्माचार्यस्य ३। सम्प्रातरपि च खलु कोऽपि पुरुषः अम्बापितरं शतपाकसहस्रपाकैस्तैलैरभ्यज्य सुरभिणा गन्धाट्टकेन उद्वर्त्य त्रिभिरुदकैर्मज्जयित्वा सर्वालङ्कारविभूषितं कृत्वा मनोज्ञं स्थालीपाकशुद्धम् अष्टादशव्यञ्जनाकुलं भोजनं भोजयित्वा यावज्जीवं पृष्ठयवतंसिकायां परिवहेत्, तेनापि तस्य-अम्बापित्रोर्दुष्प्रतिकारं भवति, अथ खलु स तम् अम्बापितरं केवलिप्रज्ञप्ते धर्मे आख्याय प्रज्ञाप्य प्ररूप्य स्थापयिता भवति तेनैव तस्याम्बापित्रोः सुप्रतिकारं भवति श्रमणायुष्मन्! ।१। कोऽपि महार्थः दरिद्रं समुत्कर्षयेत्, ततः खलु स दरिद्रः समुत्कृष्टः [सन्] पश्चात् पुरा च खलु विपुलभोगसमितिसमन्वागतश्चापि विहरेत्, ततःखलु स महार्थः अन्यदा कदाचित् दरिद्रीभूतःसन् तस्य दरिद्रस्यान्तिके हव्यमागच्छेत्, ततःखलु स दरिद्रस्तस्मै भर्त्रे सर्वस्वमपि ददत् तेनापि तस्य दुष्प्रतिकारं भवति। अथ खलु स तं भर्तारं केवलिप्रज्ञप्ते धर्मे आख्याय प्रज्ञाप्य प्ररूप्य स्थापयिता भवति तेनैव तस्य भर्तुः सुप्रतिकारं भवति २।

कोऽपि तथारूपस्य श्रमणस्य वा माहनस्य वाऽन्तिके एकमपि आर्य धार्मिकं सुवचनं श्रुत्वा निशम्य कालमासे कालं कृत्वाऽन्यतमेषु देवलोकेषु देवतया उपपन्न, ततः खलु स देवस्तं धर्माचार्यं दुर्भिक्षात् देशात् सुभिक्षं देशं संहरेत्, कान्ताराद् वा निष्कान्तारं कुर्यात्, दीर्घकालिकेन वा रोगातङ्केन अभिभूतं सन्तं विमोचयेत्, तेनापि तस्य धर्माचार्यस्य दुष्प्रतिकारं भवति, अथ खलु स तं धर्माचार्यं केवलिप्रज्ञप्तात्, धर्माद् भ्रष्टं सन्तं भूयोऽपि केवलिप्रज्ञप्ते धर्मे आख्याय प्रज्ञाप्य प्ररूप्य स्थापयिता भवति तेनैव तस्य धर्माचार्यस्य सुप्रतिकारं भवति। ३।॥ सू० १४॥

हे भदन्त! शक्रादि देव मनुष्यलोक में क्यों आते है? तो इसका उत्तर ऐसा है कि धर्माचार्यरूप होने से भगवान् समस्त जीवों का बहुत बड़ा उपकारक होते है इसलिये वे उनकी सेवादि करने के निमित्त से आते है। भगवान् धर्माचार्य अशक्य प्रत्युपकारवाले होते हैं सो अब इसी बात को सूत्रकार दृष्टान्तसहित प्रकट करते हुए तीन सूत्रों से कहते हैं—' तिण्ह दुप्पडियारं समणाउसो ' इत्यादि।

પ્રશ્ન—હે ભગવન્! શક્રાદિ દેવો મનુષ્યલોકમાં શા માટે આવે છે?

ઉત્તર—ધર્માચાર્ય રૂપ હોવાથી અર્હંત ભગવાનો સમસ્ત જીવોના બહુ ઉપકારક હોય છે તેથી તેમની સેવાદિ કરવાને માટે તેઓ આવે છે. તેમના ઉપકારનો બદલો વાળી શકાય તેમ નથી. તેથી તેમને અશક્ય પ્રત્યુપકારવાળા કહ્યાં છે તેમના ઉપકારનો બદલો વાળી આપવાનું કામ કેટલું બધું અશક્ય છે તે સૂત્રકારે નીચેનાં સૂત્રો દ્વારા દૃષ્ટાંત સહિત પ્રકટ કર્યું છે—

सूत्रार्थ–हे श्रमणायुष्मन्! इन तीनका प्रत्युपकार करना अशक्य है, एक माता पिता का, दूसरे भर्त्ता-पोषक का और तीसरे धर्माचार्य का, कोई सुपुत्र अपने मातापिता की प्रातः होते ही शतपाक, सहस्रपाक तैलों से मालिश कर सुगंधित गंधचूर्ण से उनका उवटन कर गंधोदक से, उष्णउदक से, और शीत उदक से उन्हें स्नान कराकर फिर सर्वालङ्कारों से विभूषित कर मनोज्ञ, तथा स्थालीपाक से शुद्ध एवं अठारह प्रकार के व्यंजन से युक्त ऐसे भोजन जिमा कर जीवनपर्यन्त अपने कंधों पर रख कर फिरता है तो भी वह अपने मातापिताके ऋण से उऋण नहीं हो सकता है। अर्थात् उनके कृत उपकारों का बदला वह नहीं चुका सकता है. यदि वह अपने मातापिता को केवलि प्रज्ञप्त धर्म कहकर अच्छी तरह से उसे समझा कर और प्ररूपित कर स्थापित कर देता है तो अवश्य ही वह उनके उपकार का बदला चुकाता है। अच्छी तरह से उनका प्रत्युपकार करता है, इसी तरह यदि कोई ऐश्वर्यशाली मनुष्य किसी दरिद्र पुरुष को धनादिप्रदानद्वारा उत्कृष्ट बना देता है और वह उस दाताके परोक्ष में या समक्षमें विपुल भोगों को भोगने लग जाता है, अब दाता भाग्यवशात् किसी समय दुर्भाग्य के चक्करमें

" तिण्हं दुप्पडियार समणाउसो " ઈત્યાદિ—

સૂત્રાર્થ—હે શ્રમણાયુષ્મન્! આ ત્રણના ઉપકારનો બદલો વાળવાનું કામ અશક્ય ગણાય છે-(૧) માતાપિતાનો, (૨) ભર્ત્તાનો (પોષકનો) અને (૩)ધર્માચાર્યનો ધારો કે કોઈ સુપુત્ર પોતાના માતાપિતાનાં અંગોને દરરોજ પ્રાતઃકાળે શતપાક અને સહસ્રપાક તેલો વડે માલિશ કરે, પછી સુગંધિદાર ગંધચૂર્ણ વડે તેમના શરીરનું ઉવટન કરે (શરીરને ચોળે), પછી ગરમ અને ઠંડા પાણીથી તેમને સ્નાન કરાવે, પછી સઘળા અલંકારોથી વિભૂષિત કરીને તેમને મનોજ્ઞ તથા શુદ્ધ ૩૨ પ્રકારના આહાર અને ૧૮ પ્રકારના વ્યંજનોથી યુક્ત ભોજન જમાડે અને જીવન પર્યન્ત પોતાના ખભાપર લઈને ફર્યા કરે, તો પણ તે માતાપિતાના ઋણને ફેડી શકતો નથી, એટલે કે તેમના ઉપકારનો બદલો વાળી શકતો નથી. જો તે તેમને કેવલિપ્રજ્ઞપ્ત ધર્મ કહે, તે ધર્મનું પ્રતિપાદન કરે, તે ધર્મની તેમની પાસે પ્રરૂપણા કરીને તેમને તે ધર્મ તરફ વાળી લે-તે ધર્મના ઉપાસક બનાવી દે, તો જ તેમના ઉપકારોનો બદલો તે ચુકવી શકે છે, આ બધુ કરવાથી જ તે માતાપિતાનું ઋણ ફેડી શકે છે.

એજ પ્રમાણે ધારો કે કોઈ ઐશ્વર્યસંપન્ન મનુષ્ય કોઈ દરિદ્ર આદમીને ધન વગેરેની મદદ કરીને તેની ઉન્નતિ કરી નાખે છે. ધારો કે તે દાતાનું નસીબ

छाया—त्रयाणां दुष्प्रतिकारं श्रमणायुष्मन् !, तद्यथा—अम्बापित्रोः १, भर्तुः २, धर्माचार्यस्य ३। संप्रातरपि च खलु कोऽपि पुरुषः अम्बापितरं शतपाक सहस्रपाकैस्तैलैरभ्यज्य सुरभिणा गन्धाट्टकेन उद्वर्त्य त्रिभिरुदकैर्मज्जयित्वा सर्वालङ्कारविभूषितं कृत्वा मनोज्ञं स्थालीपाकशुद्धम् अष्टादशव्यञ्जनाकुलं भोजनं भोजयित्वा यावज्जीवं पृष्ठयवतंसिकायां परिवहेत्, तेनापि तस्य-अम्बापित्रोर्दुष्प्रतिकारं भवति, अथ खलु स तम् अम्बापितरं केवलिप्रज्ञप्ते धर्मे आख्याय प्रज्ञाप्य प्ररूप्य स्थापयिता भवति तेनैव तस्याम्बापित्रोः सुप्रतिकारं भवति श्रमणायुष्मन्! ।१। कोऽपि महार्घः दरिद्रं समुत्कर्षयेत्, ततः खलु स दरिद्रः समुत्कृष्टः [सन्] पश्चात् पुरा च खलु विपुलभोगसमितिसमन्वागतश्चापि विहरेत्, ततःखलु स महार्घः अन्यदा कदाचित् दरिद्रीभूतः सन् तस्य दरिद्रस्यान्तिके हव्यमागच्छेत्, ततःखलु स दरिद्रस्तस्मै भर्त्रे सर्वस्वमपि ददत् तेनापि तस्य दुष्प्रतिकारं भवति। अथ खलु स तं भर्तारं केवलिप्रज्ञप्ते धर्मे आख्याय प्रज्ञाप्य प्ररूप्य स्थापयिता भवति तेनैव तस्य भर्तुः सुप्रतिकारं भवति २।

कोऽपि तथारूपस्य श्रमणस्य वा माहनस्य वाऽन्तिके एकमपि आर्यं धार्मिकं सुवचनं श्रुत्वा निशम्य कालमासे कालं कृत्वाऽन्यतमेषु देवलोकेषु देवतया उपपन्नः, ततः खलु स देवस्तं धर्माचार्यं दुर्भिक्षाद् देशात् सुभिक्षं देशं संहरेत्, कान्ताराद् वा निष्कान्तारं कुर्यात्, दीर्घकालिकेन वा रोगातङ्केन अभिभूतं सन्तं विमोचयेत्, तेनापि तस्य धर्माचार्यस्य दुष्प्रतिकारं भवति, अथ खलु स तं धर्माचार्यं केवलिप्रज्ञप्तात्, धर्मात् भ्रष्टं सन्तं भूयोऽपि केवलिप्रज्ञप्ते धर्मे आख्याय प्रज्ञाप्य प्ररूप्य स्थापयिता भवति तेनैव तस्य धर्माचार्यस्य सुप्रतिकारं भवति। ३। ॥ सू० १४ ॥

हे भदन्त! शक्रादि देव मनुष्यलोक में क्यों आते हैं? तो इसका उत्तर ऐसा है कि धर्माचार्यरूप होने से भगवान् समस्त जीवों का बहुत बड़ा उपकारक होते हैं इसलिये वे उनकी सेवादि करने के निमित्त से आते हैं। भगवान् धर्माचार्य अशक्य प्रत्युपकारवाले होते हैं सो अब इसी बात को सूत्रकार दृष्टान्तसहित प्रकट करते हुए तीन सूत्रों से कहते हैं—' तिण्ह दुप्पडियारं समणाउसो ' इत्यादि।

प्रश्न—हे भगवन्! शक्रादि देवो मनुष्यलोकमां शा माटे आवे छे?

उत्तर—धर्माचार्य रूप होवाथी अर्हंत भगवानो समस्त जीवोना घणा उपकारक होय छे, तेथी तेमनी सेवादि करवाने माटे तेओ आवे छे. तेमना उपकारनो बदलो वाळी शकाय तेम नथी. तेथी तेमने अशक्य प्रत्युपकारवाळा कह्यां छे तेमना उपकारनो बदलो वाळी आपवानुं काम केटलुं बधुं अशक्य छे ते सूत्रकारे नीचेनां सूत्रो द्वारा दृष्टांत सहित प्रकट कर्युं छे—

टीका—' तिण्ह ' इत्यादि । भगवानाह—हे श्रमणायुष्मन् । हे आयुष्मन् श्रमण ! इति कोमलामन्त्रणम् । त्रयाणामनुपदं वक्ष्यमाणानां दुष्प्रतिकरं-दुःदुःखेन प्रतिक्रियते कृतोपकारेण पुंसा प्रत्युपक्रियत इति दुष्प्रतिकरं-प्रत्युपकर्त्तुमशक्यमित्यर्थः भवति । तदेवाह-अम्बापितुः-मातापित्रोरित्यर्थः १, भर्त्तुः-पोषकस्य २, धर्माचार्यस्य धर्मगुरोः धर्मदातुः धर्मसहायकस्येत्यर्थः ।

देश में ले आता है, अथवा जब वह धर्माचार्य किसी गहन कान्तार में फंस जाताहै तो वह उसे उस कान्तार जंगलसे बाहर निकाल लेताहै, अथवा वह धर्माचार्य जब किसी रोगातंक से अभिभूत हो जाता है तो वह उसे उस रोगातंक से अपनी प्रबल शक्तिसे मुक्त करा देता है । तब भी वह ऐसी हालतमें उसका प्रत्युपकारक नहीं हो सकता है, किसी कारणवश यदि वह धर्माचार्य केवलि प्रज्ञप्त धर्मसे भ्रष्ट हो जाता है और वह उसे उस केवलि प्रज्ञप्त धर्म को कह कर, प्रज्ञापित कर और प्ररूपित कर पुनः स्थापित कर देता है तो इस से वह उस धर्माचार्यका प्रत्युपकार कर्त्ता हो जाता है ।

टीकार्थ-इस सूत्रका भावार्थ ऐसाहै-प्रभु कहतेहैं हे आयुष्मन् श्रमण ! इन तीन जनोंका का प्रत्युपकार करना जीव के लिये बड़ा मुश्किल से भरा हुआ काम है । अर्थात् इनका प्रत्युपकार करना बहुत भारी कठिन है, यही बात यहां सूत्रकारने दृष्टान्त देकर समझाई है वे तीन ये हैं-माता पिता पोषक जन और गुरु धर्म देनेवाले, धर्म में सहायक होने-

તે ધર્માચાર્ય કોઈ ગહન વનમા માર્ગ ભૂલીને અટવાય છે, તો તે તેમને તે ગહન વનમાથી બહાર લઈ જાય છે, અથવા-જ્યારે તે ધર્માચાર્ય કોઈ ભયંકર રોગથી પીડાતા હોય ત્યારે તે પોતાની પ્રબળ શક્તિથી તેમનો તે રોગ દૂર કરી નાખે છે. આટલા આટલાં ઉપકારો કરવા છતાં પણ તે દેવ તેમનું ઋણ ફેડી શકવાને સમર્થ થતો નથી. પરન્તુ કોઈ પણ કારણે તે ધર્માચાર્ય કેવલિપ્રજ્ઞપ્ત ધર્મથી ભ્રષ્ટ થઈ જાય અને ત્યારે તે દેવ જો તેને કેવલિપ્રજ્ઞપ્ત ધર્મ કહીને, તે ધર્મની પ્રજ્ઞાપના અને પ્રરૂપણા કરીને, તે ધર્માચાર્યને ફરીથી કેવલિપ્રજ્ઞપ્ત ધર્મમાં સ્થાપિત કરી દે તો જ તે ધર્માચાર્યના ઉપકારનો બદલો વાળી શકે છે.

ટીકાર્થ—આ સૂત્રનો ભાવાર્થ નીચે પ્રમાણે છે-પ્રભુ કહે છે કે હે આયુષ્મન્ શ્રમણ ! આ ત્રણ ઉપકાર કર્તાઓનો ઉપકારનો બદલો વાળવાનું કામ ઘણું મુશ્કેલ ગણાય છે. સૂત્રકારે એ જ વાતને ત્રણ દૃષ્ટાન્તો દ્વારા પ્રકટ કરી છે. (૧) માતાપિતા, (૨) પોષણકર્તા અને (૩) ધર્મમાં સહાયક થનારા ધર્માચાર્યો,

आ जाता है और बिल्कुल दरिद्र हो जाता है, इस तरह से सर्वथा दरिद्र बनी हुई अवस्था में वह अपने द्वारा धनी बनाये गये उस पुरुष के समीप आ जाता है और यह पुरुष अपने इस उपकार कर्त्ता के लिये यदि अपना सर्वस्व भी अर्पण कर देता है, तो ऐसी स्थिति में भी वह अपने उपकार करने वाले उस मनुष्य के ऋण से उऋण नहीं हो सकता है अर्थात् उसके उपकार का बदला नहीं चुका सकता है, यदि वह उसे केवलिप्रज्ञप्त धर्म की छत्रछाया में उसका कथन करके, उसे समझा करके और उसकी प्ररूपणा करके पहुँचा देता है–स्थापित कर देता है तो अवश्य ही वह उस अपने स्वामी का प्रत्युपकारक हो जाता है। इसी तरह कोई भव्य तथारूप धारी श्रमण अथवा माहण के पास एक भी आर्य धार्मिक वचन का पान कर और उस पर अच्छी तरह से विचार कर काल मास में काल करता है और कालकर वह किसी एक देवलोक में देव की पर्याय से उत्पन्न हो जाता है अब वह धर्माचार्य किसी दुर्भिक्षवाले देश में विहार करता २ आ जाता है जहां भिक्षा की प्राप्ति उसे सर्वथा असंभव जैसी हो जाती है ऐसी स्थिति देखकर वह देव उस धर्माचार्य को अपनी देवशक्ति के प्रभाव से सुभिक्ष

પહોંચાય છે, કમનસીબે તે દરિદ્રાવસ્થામાં આવી જાય છે ત્યારબાદ તે પોતાની મદદથી ધનવાન બનેલા તે મનુષ્યની પાસે જાય છે ધારો કે તે માણસ પોતાના ઉપર ઉપકાર કરનાર તે માણસને પોતાનું સર્વસ્વ ધન આપી દે છે આમ કરવા છતાં પણ તે તેના ઉપકારનો બદલો વાળી શકતો નથી. પરન્તુ જો તે તેની સમક્ષ કેવલિપ્રજ્ઞપ્ત ધર્મનું કથન કરીને, તેને કેવલિપ્રજ્ઞપ્ત ધર્મ સમજાવીને, તે ધર્મની તેની પાસે પ્રરૂપણા કરીને તેને તે ધર્મનો આરાધક બનાવી દે તો જ તે તેના ઉપકારનો બદલો અવશ્ય વાળી શકે છે

એજ પ્રમાણે કોઈ ભવ્ય તથારૂપધારી શ્રમણ અથવા માહણની પાસે એક પણ આર્ય ધાર્મિક વચનનું શ્રવણ કરીને અને તેના પર સારી રીતે વિચાર કરીને–તેમના દ્વારા ઉપદિષ્ટ માર્ગે ચાલીને કાળનો અવસર આવે કાળધર્મ પામીને કોઈ માણસ કોઈ એક દેવલોકમાં દેવની પર્યાયે ઉત્પન્ન થઈ જાય છે. હવે ધારો કે તે ધર્માચાર્ય કોઈ એવા દેશમાં જઈ ચડે છે કે જ્યાં તેમને દુર્ભિક્ષ (દુષ્કાળ) ને કારણે આહાર પ્રાપ્તિ કરવાનું સર્વથા અસંભવિત થઈ જાય છે આ પરિસ્થિતિ જોઈને તે દેવ તે ધર્માચાર્યને પોતાની દેવ શક્તિના પ્રભાવથી કોઈ સુભિક્ષ (સુકાળ) દેશમાં લઈ જાય છે, અથવા જો

टीका—'तिण्हं' इत्यादि। भगवानाह—हे श्रमणायुष्मन्। हे आयुष्मन् श्रमण! इति कोमलामन्त्रणम्। त्रयाणामनुपदं वक्ष्यमाणानां दुष्प्रतिकर—दुःदुःखेन प्रतिक्रियते कृतोपकारेण पुंसा प्रत्युपक्रियत इति दुष्प्रतिकरं—प्रत्युपकर्त्तुमशक्यमित्यर्थः भवति। तदेवाह—अम्बापितुः—मातापित्रोरित्यर्थः १, भर्त्तुः—पोषकस्य २, धर्माचार्यस्य धर्मगुरोः धर्मदातुः धर्मसहायकस्येत्यर्थः।

देश में ले आता है, अथवा जब वह धर्माचार्य किसी गहन कान्तार में फंस जाताहै तो वह उसे उस कान्तार जंगलसे बाहर निकाल लेताहै, अथवा वह धर्माचार्य जब किसी रोगातंक से अभिभूत हो जाता है तो वह उसे उस रोगातंक से अपनी प्रबल शक्तिसे मुक्त करा देता है। तब भी वह ऐसी हालतमें उसका प्रत्युपकारक नहीं हो सकता है, किसी कारणवश यदि वह धर्माचार्य केवलि प्रज्ञप्त धर्मसे भ्रष्ट हो जाता है और वह उसे उस केवलि प्रज्ञप्त धर्म को कह कर, प्रज्ञापित कर और प्ररूपित कर पुनः स्थापित कर देता है तो इस से वह उस धर्माचार्यका प्रत्युपकार कर्त्ता हो जाता है।

टीकार्थ—इस सूत्रका भावार्थ ऐसाहै—प्रभु कहतेहैं हे आयुष्मन् श्रमण! इन तीन जनोंका का प्रत्युपकार करना जीव के लिये बड़ा मुश्किल से भरा हुआ काम है। अर्थात् इनका प्रत्युपकार करना बहुत भारी कठिन है, यही बात यहां सूत्रकारने दृष्टान्त देकर समझाई है वे तीन ये हैं—माता पिता पोषक जन और गुरु धर्म देनेवाले, धर्म में सहायक होने-

તે ધર્માચાર્ય કોઈ ગહન વનમા માર્ગ ભૂલીને અટવાય છે, તો તે તેમને તે ગહન વનમાંથી બહાર લઈ જાય છે, અથવા—જ્યારે તે ધર્માચાર્ય કોઈ ભયંકર રોગથી પીડાતા હોય ત્યારે તે પોતાની પ્રબળ શક્તિથી તેમનો તે રોગ દૂર કરી નાખે છે. આટલા આટલાં ઉપકારો કરવા છતાં પણ તે દેવ તેમનું ઋણ ફેડી શકવાને સમર્થ થતો નથી પરન્તુ કોઈ પણ કારણે તે ધર્માચાર્ય કેવલિપ્રજ્ઞપ્ત ધર્મથી ભ્રષ્ટ થઈ જાય અને ત્યારે તે દેવ જો તેને કેવલિપ્રજ્ઞપ્ત ધર્મ કહીને, તે ધર્મની પ્રજ્ઞાપના અને પ્રરૂપણા કરીને, તે ધર્માચાર્યને ફરીથી કેવલિપ્રજ્ઞપ્ત ધર્મમાં સ્થાપિત કરી દે તો જ તે ધર્માચાર્યના ઉપકારનો બદલો વાળી શકે છે.

ટીકાર્થ—આ સૂત્રનો ભાવાર્થ નીચે પ્રમાણે છે—પ્રભુ કહે છે કે હે આયુષ્મન્ શ્રમણ! આ ત્રણ ઉપકાર કર્તાઓનો ઉપકારનો બદલો વાળવાનું કામ ઘણું મુશ્કેલ ગણાય છે. સૂત્રકારે એ જ વાતને ત્રણ દૃષ્ટાન્તો દ્વારા પ્રકટ કરી છે. (૧) માતાપિતા, (૨) પોષણકર્તા અને (૩) ધર્મમાં સહાયક થનારા ધર્માચાર્યો,

उक्तंच—" दुप्पडियारा मायापियरो सामी गुरू य लोएस्थ ।
तस्थ गुरू इयलोए मादुक्करतरपडीयारो ॥१॥ इति ।
छाया—दुष्प्रतिकारौ मातापितरौ स्वामी गुरुश्च लोकेऽत्र ।
तत्र गुरु इंयलोके-प्रति दुष्करतरप्रतीकारः ॥१॥

तत्र प्रथम मातापित्रोर्दुष्प्रतिकरतां प्रदर्शयति—कोऽपि पुरुषः-सुपुत्र इत्यर्थः । अम्मापितरम्-अम्बया-मात्रा सहितं पितरं मातापितरावित्यर्थः, समातरपि-स-सम्यक् प्रातः सप्रातः-प्रत्यूषसमकालमेवेत्यर्थः अम्मापितरं-स्वजननीजनक शतपाकसहस्रपाकतैलैः अभ्यज्य-तैलाभ्यक्तशरीरसंवाहनं कृत्वा सुरभिणा-सुगन्धियुक्तेन गन्धाट्टकेन गन्धचूर्णेन उद्वर्त्य-उद्वर्तन 'उबटना' इति प्रसिद्ध कृत्वा पुनस्त्रिभिरुदकैः-गन्धोदकेन उष्णोदकेन शीतोदकेन च मज्जयित्वा-स्नपयित्वा तथा सर्वालङ्कारविभूषित कृत्वा पश्चात् मनोज्ञ-सुस्वादुकं स्थालीपाकशुद्ध-पाकपात्रे सुसिद्ध विनापाकपात्रेण केवलाग्निना पाको न सुनिष्पन्नो भवतीति विशेषणमेतत् । पुन कीदृशमित्याह—'अष्टादश०' इत्यादि, अष्टादशव्यञ्जनानि रस पठमकवस्तूनि सूपादीनि, अष्टादशव्यञ्जनानि यथा—

वाले, ऐसे धर्मगुरु के यहां धर्माचार्य कहा गया है। कहा भी है—'दुप्पडियारा मायापियरो' इत्यादि।

माता पिता के प्रत्युपकार करने के पाठ में जो मनोज्ञ विशेषण आहारका आया है उसका तात्पर्य सुस्वादु भोजन से है। स्थालीपाक शब्द से यह प्रकट किया गया है कि पाकपात्रमें पकाया गया भोजन अच्छी तरह से पक जाता है, विना पाक पात्रके केवल अग्निसे निष्पन्न भोजन सुनिष्पन्न नहीं होता है जिन अठारह प्रकार के व्यञ्जनों से वह भोजन सहित होता है उनके नाम इस प्रकार से हैं यहां व्यंजन शब्द

આ ત્રણેના ઉપકાર એટલો બધો હોય છે કે તેમનો બદલો વાળવાનુ કાર્ય દુષ્કર થઈ પડે છે કહ્યું પણ છે કે-" दुप्पडियारा मायापियरो" ઇત્યાદિ.

માતાપિતાના ઉપકારનો બદલો વાળવાના કથનમા આહારની સાથે જે મનોજ્ઞ વિશેષણ વાપરવું છે, તેના દ્વારા સુસ્વાદુ ભોજન સૂચિત કર્યું છે 'સ્થાલીપાક' શબ્દ દ્વારા એ વાત પ્રકટ કરવામાં આવી છે કે પાકપાત્રમાં પકાવવામાં આવેલું ભોજન સારી રીતે પાકી (રંધાઈ) જાય છે, પાકપાત્રનો ઉપયોગ કર્યા વિના માત્ર અગ્નિથી તૈયાર થયેલું ભોજન સુનિષ્પન્ન (સારી રીતે તૈયાર થયેલું) હોતું નથી તે ભોજનની સાથે જે ૧૮ પ્રકારના વ્યજનો પીરસવા ની વાત કરી છે, તે વ્યજનોનાં નામ નીચે આપવામાં આવ્યાં છે

"सूओ १ निट्ठन्नं २ चिय, करव ३ कंजी ४ य भज्जिया ५ रब्बा ।
दुविहा ७ जूसो ८ ओसा-मणयं ९ अंबगरसो दसमं १० ॥ १ ॥
पाणगदव्वं तिविहं १३, कयलीफलमेव १४, सेचणं दव्वं १५ ।
गोरसदव्वाइ तिन्नि य १८, वंजणदव्वाइं एयाइं" ॥२॥ इति ।

छाया—सूपो १ निष्ठान्नं २ चैव करम्बः ३ कंजी ४ च भर्जिका ५ रब्बा ।
द्विविधा ७ यूपः ८ अवस्रावणं ९ आम्रकरसो दशमम् (व्यञ्जनम्) १०॥१॥
पानकद्रव्यं त्रिविधं १३ कदलीफलमेव १४ सेचनं १५ द्रव्यम् ।
गोरसद्रव्याणि त्रीणि च १८, व्यञ्जनद्रव्याणि-एतानि ॥२॥

तत्र सूपः-हिंग्वादि संस्कृता मुद्गादिदालिः १, निष्ठान्नं-'कढी' इति भाषाप्रसिद्धं द्रव्यम् । करम्बः-सुसंस्कृतं भक्तद्राक्षादिमिश्रं मिष्टं दधि ३ । कंजी-व्याघारितमम्लिकादिपानीयं 'कांजी' इति प्रसिद्धम् ४ ।

भर्जिका-पत्रशाकं 'भाजी-तरकारी' इति प्रसिद्धम् ५। रब्बा द्विविधा-गुडरब्बा तक्ररब्बा च 'रावडी' इति प्रसिद्धम् ७। यूपः-जीरकादि व्याघारितो मुद्गादि रसः ८। अवस्रामणं-व्याघारित सिद्धतन्दुलपानीयं 'कट-ओसामण'

से सूपादिक रसरूप व्यंजन लिये गये हैं—'सूओ निट्ठन्नंचिय' इत्यादि

हिंगु आदि से संस्कृत मूग आदिकी दालका नाम सूप है, कढीका नाम निष्ठान्न है, भक्त द्राक्षा आदिसे मिश्र मीठे दही का नाम करम्ब है जिसमें वघार दिया गया है ऐसे इमली आदिके पानी का नाम कांजी है, भाजी पत्र शाकका नाम भर्जिका है, गुडरब्बा और तक्र रब्बाके भेद से रब्बा दो प्रकारकी होती है, तक्र रब्बा का नाम रावडी-महेरी है । जीरे आदिके वघारसे युक्त मुद्गादि का जो रस है उसका नाम यूष है, वघारसे युक्त मांडका नाम ओसामण है, आमके रस का नाम आम-

---

અહીં વ્યંજન પદથી સૂપાદિક રસરૂપ વ્યંજન ગૃહીત થયેલ છે—

"સૂઓ નિટ્ટન્ન ચિય" ઇત્યાદિ—

હિંગ આદિ નાખીને મગ આદિની દાળને સૂપ કહે છે-કઢીને નિષ્ઠાન્ન કહે છે. દ્રાક્ષાદિથી મિશ્રિત મીઠા દહીંને કરમ્બ કહે છે, વઘારેલા આંબલી આદિના પાણીને કાંજી કહે છે ભાજી (પાદડાંવાળાં મેથી, મૂળા, તાંદળિયો) ને ભર્જિકા કહે છે. રબડી બે પ્રકારની છે-(૧) ગોળની રબડી અને (૨) મહેરી (છાશમાં રાંધેલા અનાજની એક વાનગી-ઘેંશ) જીરા આદિના વઘારથી યુક્ત મગ આદિનું જે ઓસામણ હોય છે તેને યૂષ કહે છે, વઘારથી યુક્ત માડ (ભાતનું ઓસામણ) ને ઓસામણ કહે છે. કેરીના રસને આમરસ કહે

इति प्रसिद्धम् ९। आम्ररसः-'आमरस' इति प्रसिद्धम् १०, पानक द्रव्य त्रिविधं-मिष्टपानक 'शर्बत' इति प्रसिद्धम् ११, तिक्तपानकं मरीचादि संयुक्तम् १२, अम्लपानकम्-अम्लिकादिनिष्पन्नम् १३। कदलीफल 'केला' इति प्रसिद्धम् १४। सेचन द्रव्यं 'चटनी' इति प्रसिद्धम् १५। त्रीणि गोरसद्रव्याणि दधिदुग्धतक्र रूपाणिति १८। एतैरष्टादशव्यञ्जनैः संयुक्त भोजनं द्वात्रिंशद्विध, तथाहि—

"भक्तं १ श्रीघृतपूरक २ च वटिका ३ पूरी ४ तथा पूरिका ५,
श्रीखण्ड ६ खण्डमोदकं ७ च लपसी ८ श्री कुण्डली ९ पिष्टिका १०।
सघाः ११ सूपकफोणिका १२ च पुटिका १३ वातादपस्तापुटी १४,
पूपाः १५ पर्पटिका १६ तथा दधिवटा १७ गुञ्जा १८ करञ्जा १९ मताः॥१॥
पिण्डाः २० पायससोमनं २१ मधुसितायुक्ता च वासुदिका २२,
मिष्टा पूरणपोलिका २३ च घरली २४ खुर्मा २५ च खर्जूरिका २६।
भक्तं केसरशर्करा समधिकं २७ पूपं २८ तथा जामुनम् २९,
कचोरी ३० कलकन्दको ३१ रसगुला ३२ द्वात्रिंशकं भोजनम्" ॥२॥ –

तत्र-भक्तं-'भात' इति प्रसिद्धम् १, श्रीघृतपूरक-'घेवर' इतिप्रसिद्धम् २। वटिका-'वडी' इति प्रसिद्धम् ३। पूरी-'सुकलीदाना' इति प्रसि-

रस है, पानक द्रव्य तीन प्रकारका है-जैसे मिष्टपानक शर्बत, तिक्त पानक-कालीमिर्च आदिसे युक्त पेय, और अम्लपानक-खटाई आदि डालकर तैयार किया गया पेय, कदलीफल केला, सेचनद्रव्य-चटनी और दधि, दूध और तक्र ये तीन गोरसद्रव्य, इस प्रकार से ये अठारह व्यञ्जन पदार्थ हैं, इन अठारह व्यञ्जन पदार्थों से युक्त भोजन ३२ प्रकारका होता है। जैसे—"भक्त श्रीघृतपूरक च वटिका" इत्यादि।

१ भक्त-भात, २ घेवर, ३ वटिका-बड़ी, ४ पूरी-सुकलीदाना, ५ पूरिका, ६ श्रीखण्ड, ७ मोदक, ८ लपसी, ९ श्री कुण्डली, जलेबी १० पिष्टिका-पेठा,

છે, પાનક દ્રવ્ય (પીણું) ત્રણ પ્રકારનાં છે-(૧) મિષ્ટપાનક (શરબત) (૨) તિક્તપાનક (મરી આદિથી યુક્ત પેય), અને (૩) અમ્લપાનક-ખટાશ આદિ નાખીને બનાવેલું પેય. કેળાને કદલીફલ કહે [illegible] ચટણીને સેચનદ્રવ્ય કહે છે, દૂધ, દહીં અને છાશને ગોરસદ્રવ્ય કહે છે આ પ્રમાણે આ ૧૮ વ્યંજન પદાર્થો સમજવા. આ ૧૮ વ્યંજનોથી યુક્ત ભોજન ૩૨ પ્રકારનું હોય છે જેમકે—'भक्तं श्रीघृतपूरकं च वटिका' ઈત્યાદિ—

(૧) ભક્ત-ભાત, (૨) ઘેવર (૩) વટિકા-વડી, (૪) પૂરી-સુકલીદાણા, (૫) પૂરિકા (૬) શ્રીખંડ, (૭) લાડુ (મોદક), (૮) લાપસી, (૯) શ્રીકુંડલી

द्धम् ४। पूरिका–' पूडी ' इति प्रसिद्धम् ५। श्रीखंड–(शीखंड) इति प्रसिद्धम् ६। मोदकं–लड्डु ' इति प्रसिद्धम् ७। लपसी–प्रसिद्धा ८। श्रीकुण्डली–' जलेबी ' इति प्रसिद्धम् ९। पिष्टिका–' पेठा ' इति ख्यातम् १०। खाद्याः–' खाजा ' इति प्रसिद्धम् ११। सूत्रकफीणिका–' सूतरफीणी ' इति प्रसिद्धम् १२। पुटिकासंपुट युक्ता ' पूडी ' इति प्रसिद्धम् १३। वातादपस्तापुटी–' बादामपुडी–पिस्तापुडी ' इति ख्याता १४। पूपाः ' मालपुवा ' इति प्रसिद्धम् १५। पर्पटिका–' तिलपापडी ' इति प्रसिद्धा १६। दधिवटा–' दहीवडा ' इति प्रसिद्धम् १७। गुञ्जा–प्रसिद्धाः, सितोपलगर्भा–कूर्चिकानिष्पन्नं द्रव्यम् १८। करञ्जाः–देशविशेषप्रसिद्धं मधुरद्रव्यम् १९। पिण्डाः '-पेडा ' इति प्रसिद्धाः २०। पायसभोजनं ' खीर ' इति प्रसिद्धम् २१। बहुसितायुक्ता वासुंदिका–शर्करा बहुलागाढ दुग्धरूपा 'वासुन्दी' इति प्रसिद्धा २२। मिष्टा पूरणपोलिका–मिष्टद्रव्यगर्भापुटिका ' पूरणपोली ' इति प्रसिद्धा २३। वरफी लोकप्रसिद्धा–दुग्धविकाररूपा २४। खुर्मा–देशविशेषप्रसिद्धं मिष्टद्रव्यम् २५, खर्जूरिका–मिष्टद्रव्यगर्भा गोधूमपिष्टनिष्पन्ना ' खिजूरी ' इति भाषा प्रसिद्धा २६। केशरशर्करासमधिकं भक्तं ' केशरिया भात ' इति ख्यातम् २७। यूषं–' मावा ' ' खोमा ' इति प्रसिद्धम् २८। जामुनम्–' गुलाब–जामुन ' इति प्रसिद्धम् २९। कचोरी–तिक्तद्रव्यसंपुटा पिष्टनिष्पन्ना ' कचोरी '

---

११ खाद्या–खाजा, १२ सूत्रकफीणिका–सूतरफीणी, १३ पुटिका–पुडी, १४ बातादपस्तापुटी-बादामपुडी–पिस्तापुडी, १५ पूपा–मालपूवा, १६ पर्पटिका –तिलपापडी, १७ दधिवटा–दहीवड़ा, १८ गुंजा–गोझा, १९ करंज–देशप्रसिद्ध, मधुरद्रव्यविशेष, २० पिण्ड–पेडा, २१ पायसभोजन–खीर, २२ अधिक शक्कर सेयुक्त–वासुंदिका रबड़ी, २३ मिष्ट पूरण पोलिका पूरनपुडी, २४ बरफी, २५ खुर्मा–सक्करपारे, २६ खजूरिका शक्कर डालकर गेहूं की पिटी से निष्पन्न किया गया एक जात का हलुवा खिजूरी सोहन हलुवा, २७ केशरिया भात २८ यूष–मावा–खोवा, २९ जामुन–गुलाव जामुन, ३० कचौड़ी ३१ कलाकन्द और ३२ रसगुल्ला यह

જલેબી (૧૦) પિષ્ટિકા, (૧૧) ખાજા, (૧૨) સૂતરફેણી, (૧૩) પુટિકા (પુરી) (૧૪) બદામ અને પિસ્તાની પુરી, (૧૫) માલપૂઆ, (૧૬) તલપાપડી, (૧૭) દહીંવડા, (૧૮) ગુંજા, (૧૯) કરંજ, (૨૦) પેંડા, (૨૧) પાયસભોજન–દુધપાક ખીર, (૨૨) બાસુંદી, (૨૩) પૂરણપોળી, (૨૪) બરફી, (૨૫) સક્કરપારા; (૨૬) ખર્જૂરિકા, (એક જાતનો ઘઉંના મેંદામાંથી બનતો હલવો), (૨૭) કેશરીયા ભાત, (૨૮) યૂષ–માવાની એક મિઠાઈ, (૨૯) ગુલાબજાંબૂ, (૩૦) કચૌડી, (૩૧) કલાકન્દ અને (૩૨) રસગુલ્લા, આ બત્રીસ પ્રકારનાં ભોજન ...

इति प्रसिद्धा ३०। कलकन्दकम्–'कलाकन्द' इति ख्यातम् ३१। रसगुल्ला–रस मृत गोलाकारद्रव्य स्वनाम्ना प्रसिद्धम् ३२। इति द्वात्रिंशद्विध भोजनम् भोजयित्वा, पुनः किम् ? इत्याह—'यावज्जीव' इत्यादि, यावज्जीवम्–जीवनपर्यन्त पृष्ठय वतंसिकया–पृष्ठौ–स्कन्धे अवतस इवावतंस पृष्ठिभूषणमिव, तस्य करणम् अवतंसिका पृष्ठयवतंसिका, तया पृष्ठयवतंसिकया परिवहेत् स्वाम्मापितरौ पृष्ठयारोपितौ कृत्वा यदि गच्छेत् तेनापि परिवहनेन तस्याम्मापित्रोर्दुष्प्रतिकर–प्रत्युपकार कर्तुमशक्य भवति, मनुसूक्तोपकारितया प्रत्युपकारकरणोद्यतोऽप्युक्तकार्येण प्रत्युपकर्तुं न शक्नो

३२ प्रकार का भोजन है १८ व्यंजनों से युक्त ३२ प्रकार के भोजन को कोई सुपुत्र अपने मातापिता को प्रतिदिन खिलावे तो भी वह उनका प्रत्युपकारक नहीं बन सकता है–ऐसा सम्बन्ध लगा लेना चाहिये ऐसा सब कुछ करता हुआ भी वह सुपुत्र इतना और करे कि वह उन्हें अपने पैरों से भी न चलने दे किन्तु अपने दोनों कधों पर रखकर जहां वे जाना चाहें वहां उन्हें ले जावे ऐसी यह प्रक्रिया यह उनके साथ एक दो दिन आदि समयतक लगाकर ही न करे किन्तु "यावज्जीव" अपने जीवन पर्यन्त लगातार करता रहे इतना करता हुआ भी वह यदि ऐसा समझे कि मैं इनके उपकार से रहित हो गया हू तो ऐसा समझना उसका ठीक नहीं है क्यों कि जो उपकार माता पिता के द्वारा किया गया है उसका बदला तो किसी भी पद्धति से चुकाया ही नहीं जा सकता है यही बात सूत्रकार ने–'दुष्प्रतिकरं" शब्द द्वारा प्रकट की है यद्यपि ऐसी सेवा माता पिता की कोई करता नहीं है परन्तु

१८ प्रकारनां व्यंजनोथी युक्त आ ३२ प्रकारनां भोजन मातापिताने दररोज खवराववामां आवे तो पण तेमना उपकारनो बदलो वाळी शकतो नथी, एवो सबंध अहीं आगळना वाक्य साथे समजी लेवो. वळी ते सुपुत्र तेना मातापिताने जीवन पर्यन्त पोताने खभे बेसाडीने तेमनी इच्छानुसार फेरवे–एटले के तेमने पगे चालवु ज पडे नहीं अने तेमनी इच्छा होय त्यां तेमने खभे बेसाडीने लई जाय तो पण तेमना उपकारनो बदलो ते वाळी शकतो नथी. (अहीं एक बे दिवस खभे बेसाडीने फेरववानी वात करी नथी, जीवन पर्यन्त एम करवानु कह्यु छे छतां मातापिताना उपकारनो बदलो पूरेपूरो वाळी शकातो नथी एम कहेवामां आव्यु छे)

मातापिताना उपकारनो बदलो कोई पण रीते वाळी शकतो नथी. एज वात सूत्रकारे 'दुष्प्रतिकर' पद द्वारा प्रकट करी छे. जो के मातापितानी आटली बधी सेवा करनार भाग्येज कोई सतान मळी शके छे, परन्तु यदि के

तीति भावः । एवं तर्हि कथमम्बापितुः सुप्रतिकरं भवती ? त्याह—'अहेणं से' इत्यादि, अथचेत् स सुपुत्रस्तम्—अम्बापितरं धर्मे जिनप्रणीते श्रुतचारित्ररूपे स्थापयिता—स्थापनशीलो भवेत्तदा सुप्रतिकरं भवतीति सम्बन्धः । किंकृत्वा स्थापयिता भवतीत्याह आख्याय—स्वमातापित्रे जिनधर्मं कथयित्वा, प्रज्ञाप्य—सोदाहरणं बोधयित्वा, प्ररूप्य—भेदानुभेदतो निरूप्य स्थापयिता भवति तेनैव धर्मस्थापनेनैव

यदि कोई भाग्यशाली पुत्र ऐसी भी सेवा उनकी करे तो भी वह उनके कृत उपकार के बदले में उनका प्रत्युपकारक नहीं हो सकता है—यही बात यहां "परिवहेत्" इस विध्यर्थक प्रयोग से प्रकट की गई है ।

तो फिर उनके उपकार का प्रत्युपकार कैसे किया जा सकता है ? इसके उत्तर में प्रभु ने कहा है कि-(अहे णं से) इत्यादि—उनके उपकार का प्रत्युपकार इसी से हो सकता है कि वह उन्हें जिनप्रणीत श्रुतचारित्ररूप धर्म में स्थापित कर दें, सब से पहिले वह उन्हें यह समझावे कि यह जिनधर्म जिनेन्द्र द्वारा प्रणीत है अतः इससे हितकारकता के सिवाय अहितकारता कथमपि नहीं है जन्म जन्मान्तर से छूटने की यही परमौषधिप्राप्त हो सकती है अन्यत्र नहीं जन्म, जरा और मरण रूप रोग का सच्चा इलाज सम्यग्दर्शन ज्ञान चारित्र के सेवन से ही जीव को प्राप्त हो सकता है इस प्रकार से उन्हें समझाकर फिर इसके सेवनसे किन२ जीवोंने आत्मलाभ प्राप्त कियाहै, कौन २ जीव

એવો કોઇ સુપુત્ર હોય કે જે પોતાના માતાપિતાની ઉપર દર્શાવેલી પદ્ધતિથી સેવા કરતો હોય, તો પણ તે તેના માતાપિતાએ તેના ઉપર જે ઉપકારો કર્યા હોય છે તેનો પ્રત્યુપકાર વાળી આપવાને સમર્થ થઇ શકતો નથી. એજ વાત "परिवहेत" આ વિધ્યર્થક પ્રયોગ દ્વારા વ્યક્ત કરવામાં આવી છે.

તો તેમના ઉપકારનો બદલો તે કેવી રીતે વાળી શકે ? આ પ્રશ્નના ઉત્તર રૂપે મહાવીર પ્રભુ કહે છે કે "अहेणं से" ઇત્યાદિ તેમના ઉપકારનો બદલો વાળવાનો માત્ર એક જ ઉપાય છે, તે ઉપાય નીચે પ્રમાણે છે—

તેણે તેમને શ્રુતચારિત્રરૂપ ધર્મ તરફ વાળી લેવા જોઇએ. તેણે તેમને સમજાવવું જોઇએ કે જૈન ધર્મ જિનેન્દ્ર ભગવાનો દ્વારા પ્રરૂપિત થયેલો છે તે ધર્મ જ સંસારી જીવોનું હિત કરનારો છે, આ ધર્મમાં બતાવવામાં આવેલા માર્ગે ચાલવાથી સંસારી જીવોનું કોઇ અહિત થતું નથી, જન્મમરણની જંજાળમાંથી છૂટવાની આ એક જ પરમૌષધિ છે. જન્મ, મરણ અને જરા રૂપ રોગનો ખરો ઇલાજ સમ્યગ્દર્શન, જ્ઞાન અને ચારિત્રના સેવનથી જ જીવને સાંપડી શકે છે આ પ્રકારે તેમને સમજાવીને તેણે તેમને એવાં જીવોનાં દૃષ્ટાન્તો આપવા જોઇએ કે જેમણે કેવલિ પ્રરૂપિત ધર્મની સમ્યક્ રીતે આરા-

नत्वभ्यङ्गादिभि यस्याम्यापितु' सुमतिकर-सुसुखेन मतिक्रियते-प्रत्युपक्रियत इति सुप्रतिकर-प्रत्युपकारं कर्तुं शक्य भवति भत्युपकारः कृतो भवतीत्यर्थ धर्मस्याप नस्यैव महोपकारत्वात्,

उक्तञ्च —" समत्तदायगाण, दुप्पडियारं भवेसु बहुएसु ।
सव्वगुणमेलिया हिंवि, उवगारसहस्सकोडीहिं ॥१॥

छाया—सम्यक्त्वदायकानां, दुष्प्रतिकरं भवेषु बहुकेषु ।
सर्वगुणमीलिताभिरपि, उपकारसहस्रकोटीभि ॥१॥

अनेकभवकृतसर्वगुणयुक्तोपकारसहस्रकोट्यपेक्षया सम्यक्त्वधर्मदान श्रेष्ठमिति भाव ।

निरामय (कर्मरोग रहित) बनेंगे इत्यादि रूपसे और समझावे और भेदानु भेदसे उस धर्मका निरूपण करे यदि वह इस तरहसे उन्हें समझा बुझा कर जिनप्रणीत धर्म में स्थापित कर देता है तो अवश्य ही वह उनके उपकार का प्रत्युपकार कर्ता हो जाता है क्यों कि जिनधर्म में स्थापित यह एक बहुत बड़ा उपकार है भले ही अभ्यङ्गादि लगाने से, उत्तमोत्तम भोज्यवस्तुओं के खिलाने से शरीर का पोषण हो जाय परन्तु आत्मा का पोषण नहीं होता है आत्मा का पोषण तो जिनधर्म के सेवन से ही होता है और जो ऐसा करता है वह अपना, पर का और दोनों का बहुत बड़ा उपकार करता है—यही बात इस कथन से सूत्रकार ने प्रद र्शित की है। कहा भी है—(सम्मत्तदायगाण दुप्पडियारं) इत्यादि। तात्पर्य इसका यहीहै कि सम्यक्त्वदायक पुरुषोंका अनेकभवमें सर्वगुण-

ધના કરીને આત્મલાભ (મોક્ષ) પ્રાપ્ત કર્યો હોય તેવું ભેદાનુભેદપૂર્વક તેમની પાસે આ ધર્મનું નિરૂપણ કરવું જોઈએ. આ રીતે તેમને સમજાવીને જો તે તેમને જિનપ્રણીત ધર્મમાં સ્થાપિત કરી શકે છે તો આ રીતે તે અવશ્ય તેમના ઉપકારનો બદલો વાળી શકે છે આ કારણ કે કોઈ પણ વ્યક્તિને જૈન ધર્મમાં સ્થાપિત કરવી એજ તેનાપર મોટામાં મોટો ઉપકાર કર્યો ગણાય છે ભલે અભ્યંગ આદિ લગાવવાથી અને ઉત્તમ ભોજન ખવરાવવાથી શરીરનું પોષણ થતું હોય, પણ તેના દ્વારા આત્માનું પોષણ તો નથી જ થતું આત્માનું પોષણ તો કેવલિ-પ્રરૂપિત જૈનધર્મની આરાધનાથી જ થાય છે તેથી એવું કરનાર વ્યક્તિ પોતાનું અન્યનું અને ઉભયનું કલ્યાણ કરી શકે છે એજ વાત આ કથનથી સૂત્રકારે અહીં પ્રકટ કરી છે કહ્યું પણ છે કે—

" सम्मत्तदायगाणं दुप्पडियारं " इत्यादि

આ કથનનો ભાવાર્થ નીચે પ્રમાણે છે–અનેક ભવમાં સર્વગુણયુક્ત કરોડો ઉપકારોથી પણ સમ્યક્ત્વદાયક પુરુષોના ઉપકારનો બદલો

अथ भर्त्तुर्दुष्प्रतिकरतां प्रदर्शयति—'केइ महच्चे' इत्यादि, कोऽपि न सर्वः, महती अर्चा-एश्वर्यादिरूपं तेजो यस्य स महार्चः। यद्वा-महाँश्चासौ अर्च्यश्च-अर्थपतितया पूज्य इति महार्च्यः। अथवा महात्यं-महत्त्वं, तद् योगान्माहत्यः, ऐश्वर्यसंपन्न इत्यर्थः, दरिद्रं-कञ्चिद् दरिद्रपुरुषं समुत्कर्पयेत् धनादि दानेनोत्कृष्टं कुर्यात्। ततः स समुत्कृष्टः धनादिसमृद्धः सन् पश्चात्-स्वपोषकस्य परोक्षे पुरश्च-तत्समक्षं विपुलानाम्-उदाराणां भोगानां-शब्दादिविषयानां समितिः-समुदयः सामग्रीत्यर्थः, तया समन्वागतः-युक्तश्चापि विहरेत्-तिष्ठेत्। ततः पश्चात् खलु स महार्च्यः-दरिद्रपोषकः स्वामी अन्यदा कदाचित् दरिद्रीभूतः दुर्भाग्यवशादति दुःस्थितो जातःसन् तस्य स्वपोषितस्य दरिद्रस्य अन्तिके-समीपे हव्यम्-अनन्यशरणतया शरणस्य तत्र शक्यत्वाभिसन्धेः आगच्छेत् तदा स दरिद्रः-

युक्त किये गये करोड़ो उपकार से भी प्रत्युपकार नहीं किया जा सकता है क्यों कि सम्यक्त्व दान से आत्मा की भवपरम्परा विध्वस्त (नष्ट) होजाती है अन्य उपकारों से नहीं।

अब सूत्रकार स्वामीका उपकार अन्य प्रत्युपकारों द्वारा अशक्य है यह प्रकट करते हैं—" केइ महच्चे " इत्यादि—जिसके पास ऐश्वर्यादि तेजरूप अर्चा महती है, अथवा लोक में जो विशिष्ट सम्पत्ति शाली होने से जनता से मान्य हुआ है अथवा—जो सब प्रकार के ऐश्वर्य से सम्पन्न है ऐसा कोई मनुष्य किसी दरिद्रपुरुष को धनादिप्रदान द्वारा उत्कृष्ट कर देता है, इस तरह वह दरिद्र पुरुष अपनी दरिद्रता से छूट-कर धनसंपन्न बन जाता है और कालान्तर में दरिद्रता के चक्कर में पड़े हुए अपने पोषक को प्रत्यक्ष और परोक्ष में हर तरह से सहायता

વાળી શકાતો નથી, કારણ કે સમ્યકત્વ દાનથી આત્માની ભવપરંપરા નષ્ટ થતી જાય છે-અન્ય દાનથી (ઉપકારોથી) એવું બનતું નથી.

હવે સૂત્રકાર એ વાત પ્રકટ કરે છે કે ભર્ત્તા (પોષણકર્ત્તા) ના ઉપકારનો પ્રત્યુપકાર કરવાનું કાર્ય પણ દુષ્કર છે-" केइ महच्चे " ઇત્યાદિ.

જેની પાસે ઐશ્વર્યાદિ તેજરૂપ અર્ચા મહતી (ઘણી જ) છે, અથવા જે વિશિષ્ટ સમ્પત્તિશાળી હોવાથી સંસારમાં જનતા દ્વારા માનનીય ગણાય છે, અથવા જે સઘળા પ્રકારના ઐશ્વર્યથી સંપન્ન છે એવો કોઇ મનુષ્ય, કોઇ દરિદ્ર મનુષ્યને ધનાદિ અર્પણ કરીને તેની ઉન્નતિ કરવામાં મદદરૂપ થાય છે. આ રીતે તે દરિદ્ર મનુષ્ય પોતાની દરિદ્રતામાથી મુકત થઇને ધનવાન બની જાય છે હવે કમનસીબે પેલો દાતા દરિદ્ર બની જાય છે તેની સહાયતાથી ધનવાન બનેલ માણસ તેને પ્રત્યક્ષ અને પરોક્ષ રીતે દરેક પ્રકારની મદદ કરે

भूतपूर्वदरिद्र तस्मै-पूर्वोपकारिणे स्वामिने यदि सर्वस्वमपि-स्वपार्श्वस्थितसर्वधनादिकमपि दद्यात्, तेनापि एवं सर्वस्वदानेनापि तस्य-सर्वस्वदातुः दुष्प्रतिकरं प्रत्युपकारं कर्तुमशक्यं भवति। एवं तर्हि कथं सुप्रतिकरं भवती ? त्याह-'अहेणं' इत्यादि, अथेति प्रकारान्तरद्योतकः, अथ-प्रकारान्तरेण खलु यदि स भूतपूर्वदरिद्रः त स्वोपकारकं स्वामिनं केवलिप्रज्ञप्ते धर्मे तत्स्वरूपकथनादिना स्थापयिता भवति तेनैव-धर्मस्थापनेनैव न तु सर्वस्वदानादिना तस्योपकारिणः स्वामिनः सुप्रतिकरं भवति प्रत्युपकारः कृतो भवतीत्यर्थः ॥ २ ॥

प्रदान करने लगता है इत्यादि सब कथन मूलार्थ की तरह से यहां लगाना चाहिये तो क्या वह इस प्रक्रिया का कर्ता पुरुष अपने स्वामी के उपकार का प्रत्युपकार कर सकता है ? अर्थात् नहीं कर सकता।

यदि संसार से परे कोई क्रिया है तो वह अपने को और पर को धर्म में श्रुतचारित्ररूप में स्थापन करने रूप है यही बात सूत्रकार ने इस रूप से कही है कि वह दरिद्र होकर धनसंपन्न हुआ व्यक्ति यदि अपने उपकारक को समझा बुझाकर के केवलिप्रज्ञप्त धर्म में स्थापन कर देता है तो इसके समान उसके उपकारक का प्रत्युपकार और कोई नहीं है। यही सब श्रेष्ठ मार्ग उसके कृत उपकार से छूटने का है सर्वस्वप्रदान आदि द्वारा वह उसका प्रत्युपकारक नहीं होता है। आत्मा को सच्ची शान्ति प्रदान करने वाला एक धर्म ही है और जो इस धर्म में अपने उपकारक को निरत कर देता है उसके जैसा उसका और कोई प्रत्युपकारक नहीं होता है २।

છે ધારો કે તે પોતાની સઘળી સંપત્તિ તેને અર્પણ કરી દે છે તો શું આ રીતે તે તેનું ઋણ ફેડી શકે છે ખરો ? એવું કરવા છતાં પણ તે પોતાની ઉપકારક વ્યક્તિના ઉપકારનો બદલો વાળી શકતો નથી.

કોઇ પણ પ્રકારના સાંસારિક લાભ કરાવવાથી તેના ઉપકારનો બદલો વાળી શકાતો નથી, પરન્તુ જો તે માણસ પોતાના ઉપકારકર્તાને શ્રુતચારિત્રરૂપ ધર્મમાં કોઈ પણ રીતે સ્થાપિત કરી શકે છે તો તેના ઉપકારનો બદલો જરૂર વાળી શકે છે. પોતાના સઘળા દ્રવ્યના અર્પણ દ્વારા તેના ઉપકારનો બદલો વાળી શકાતો નથી, પણ તેને દાખલા દલીલો દ્વારા સમજાવીને કેવલિપ્રરૂપિત ધર્મનો આરાધક બનાવવાથી જ તે તેનું ઋણ ફેડી શકે છે. આત્માને સાચી શાન્તિ આપનાર ધર્મ જ છે તેથી તે ધર્મમાં પોતાના ઉપકારને સ્થાપિત કરાવી દેના જેવો બીજો કયો ઉપકાર હોઇ શકે ?

अथ धर्माचार्यस्य दुष्प्रतिकरतामाह—' केइ इत्यादि । कोऽपि-कश्चित् न सर्वः तथारूपस्य=द्रव्यतो धृतसदोरकमुखवस्त्रिकादिमुनिवेषस्य, भावतो धर्मोचितस्वभावस्य श्रमणस्य-संसारविषयविरक्तस्य मुनेः, वा-अथवा माहनस्य- 'माहन' इत्येवं योऽन्यं प्रत्युपदिशति स माहन' -मूलोत्तरगुणवान् संयतः, तस्य अन्तिके समीपे एकमपि आर्यम्-पापकर्मभ्य आराद्-दूरयातमार्यम्-आर्यसम्बन्धिकं तीर्थकरसम्बन्धिकमित्यर्थः, अतएव धार्मिकं-धर्मसम्बन्धिकं सुवचनं-वाक्यं श्रुत्वा-श्रोत्रपुटाभ्यां पीत्वा निशम्य-हृद्यवधार्य कालमासे कालं कृत्वा अन्यतमेषु-देवलोकेषु-देवलोकानां मध्येऽन्यतमे कस्मिंश्चिद्देवलोके इत्यर्थ देवतया-देवपर्यायेण उपपन्नः, ततःखलु देवोपपत्त्यनन्तरं स स्वपूर्वभवे आर्यधार्मिकसुवचनश्रोता देव-

अब धर्माचार्य का जीव प्रत्युपकार कर्त्ता कैसे हो सकता है इस बात को सूत्रकार प्रदर्शित करने के अभिप्राय से कहते हैं-" केइ " इत्यादि । कोई एक भव्य जीव द्रव्य की अपेक्षा से सदोरकमुखवस्त्रिका आदि मुनिवेष वाले और भाव की अपेक्षा धर्मोचितस्वभाव वाले श्रमण जन के अथवा " मत मारो " इस प्रकार से दूसरों को उपदेश देने वाले संयत के समीप एक भी पाप कर्म से जो दूर जा चुके हैं ऐसे आर्यसम्बन्धिक-तीर्थंकर सम्बन्धिक धार्मिक सुवचन को-वाक्य को सुनकर और हृदय में उसे अवधारण कर किसी एक देवलोक में देव की पर्याय से उत्पन्न हो जाता है और फिर उत्पत्ति के बाद वह अपने अवधिज्ञान से उन धर्माचार्य के वचन से मेरी यह पर्याय हुई है अतः वे मेरे महोपकारी हैं इस प्रकार से उनके उपकार के वशवर्ती हुआ

હવે સૂત્રકાર એ વાત સમજાવે છે કે જીવ ધર્માચાર્યનો પ્રત્યુપકારકર્ત્તા કેવી રીતે બની શકે છે-" केइ " ઇત્યાદિ.

ટીકાર્થ-કોઈ એક ભવ્ય જીવ દ્રવ્યની અપેક્ષાએ સદોરકમુખવસ્ત્રિકા આદિ મુનિવેષવાળા અને ભાવની અપેક્ષાએ ધર્મોચિત સ્વભાવવાળા શ્રમણની પાસે અથવા " મા હણો, મા હણો " એવો ઉપદેશ આપનાર સંયતની પાસે, પાપકર્મથી જેઓ નિવૃત્ત થઇ ગયા છે એવાં આર્યસંબંધિક-તીર્થંકર સંબંધિક-ધાર્મિક સુવચનને શ્રવણ કરીને અને તેને હૃદયમાં અવધારણ કરીને કોઇ એક દેવલોકમાં દેવની પર્યાયે ઉત્પન્ન થઈ જાય છે આ રીતે દેવલોકમાં ઉત્પન્ન થયા બાદ તે પોતાના અવધિજ્ઞાન દ્વારા જાણી લે છે કે તે ધર્માચાર્યના ઉપદેશ અનુસાર ચાલવાથી જ મને આ દેવગતિ પ્રાપ્ત થઇ છે, તેથી તેમણે મારા ઉપર મહાન ઉપકાર કર્યો છે. મારે તેમના ઉપકારનો બદલો વાળવો જ જોઇએ.

स्व-सुवचनप्रदातारं धर्माचार्यं यदि दुर्भिक्षात्-दुष्कालपीडिताद् देशात् निष्कास्य सुभिक्ष सुकाल सस्यादि संपन्न देशं संहरेत्देवशक्त्याऽऽनयत्, वा-अथवा कान्ता रात्-निर्जनाटवीतः निष्कान्तारं जनाकुले प्रदेश कुर्यात्-नयेदित्यर्थः, वा-अथवा दीर्घकालिकेन चिरकालानस्थायिना रोगातङ्केन रोगः-कासश्वासः कुष्ठादिः, आतङ्क सद्योघाति शूलादि, अनयोर्द्वन्द्वैकत्वे रोगातङ्क, तेन, यद्वा-रोगातङ्केनेत्येकपदं-रोगदुःखेनेत्यर्थः अभिभूत-पीडित सन्त विमोचयत् देवशक्त्या मुक्त कुर्यात्, तेनापि-एव करणेनापि तस्य धर्माचार्यस्य दुष्प्रतिकर भवति स प्रत्युपकर्ता न भवतीत्यर्थः। तर्हि कथ प्रत्युपकर्ता भवती ? त्याह—' अहेण ' इत्यादि, अथ यदि खलु स त धर्माचार्यं केवलिप्रज्ञप्ताद्धर्माद् भ्रष्ट-पतित सन्त भूयोऽपि-पुन

वह देव यदि वे सयत कदाचित् किसी दुष्काल पीडित देश में विहार करते हुए आ जाते हैं, और वह देव उन्हें उस दुष्काल पीडित देश से बाहर निकालकर सुभिक्षवाले देश में अपनी देवशक्ति के प्रभाव से ले आता है अथवा जब वे किसी दुर्गम गहन कान्तार में पतित हो जाते हैं तब वह देव उस स्थान से उन्हें निकाल कर जनसमुदाय वाले प्रदेश में पहुँचा देता है या जब वे रोगातंक से-रोग से-कासश्वास कुष्ठादि से एव सद्योघाति शूलादिरूप आतक से अथवा रोगदुःख से पीडित हो जाते हैं, तब वह अपनी देवशक्ति से उन्हें निरोग कर देता है, तो इस प्रकार से उनकी सभाल करने वाला वह देव उनके कृत उपकार का बदला नहीं चुका सकता है-उनका प्रत्युपकर्ता नहीं हो सकता है तो फिर वह प्रत्युपकारकर्त्ता कैसे हो सकता है ? तो इसके उत्तर में सूत्रकार कहते हैं-" अहे ण " इत्यादि-यदि वह देव उनका

આ ભાવનાથી પ્રેરાઈને ક્યારેક કોઈ દુષ્કાળ પીડિત દેશમાં વિચરતા તે ધર્માચાર્યને તે દેવ પોતાની દેવશક્તિના પ્રભાવથી સુભિક્ષવાળા (સુકાળવાળા) દેશમાં લઈ જાય છે અથવા જ્યારે તે ધર્માચાર્ય કોઈ ગહન અટવીમાં ફસાઈ જાય છે-માર્ગ ભૂલીને ભટકતા હોય છે, ત્યારે તે તેમને ત્યાંથી જનસમુદાય વાળા કોઈ સ્થાનમાં પહોંચાડી દે છે અથવા જ્યારે તેઓ કોઈ રોગાતંક (જ્વર, કોઢ આદિ રોગથી અને અચાનક ઉત્પન્ન થયેલા શૂલાદિ રૂપ આતંક) થી પીડાતા હોય છે ત્યારે પોતાની દૈવીશક્તિથી તે તેમને નીરોગી બનાવી દે છે આ પ્રકારે તેમની સંભાળ રાખવા છતાં પણ તે દેવ તેમના ઉપકારનો બદલો વાળી શકતો નથી. હવે સૂત્રકાર એ બતાવે છે કે તે દેવ તેમનો ઉપકાર કેવી રીતે વાળી શકે છે-' અહેણં " ઇત્યાદિ.

रपि तस्मिन् धर्मे उपदेशदानादिना स्थिरीकर्त्ता भवति तदा स तस्य धर्माचार्यस्य प्रत्युपकर्त्ता भवतीत्यर्थ । एवं करणेनैव स धर्माचार्यस्य निर्ऋणो भवतीति भावः, उक्तञ्च—

" जो जेण जम्मि ठाणम्मि ठाविओ दंसणे व चरणे वा ।
सो तं तओचुयं तम्मिचेव काउं भवे निरिणो ॥१॥ " इति ।

छाया—यो येन यस्मिन् स्थाने स्थापितः दर्शने वा चरणे वा ।
स तं ततश्च्युतं तस्मिन्नेव कृत्वा भवेद् निर्ऋणः ॥ सू० १४ ॥

धर्मे स्थापनेन चास्य भवच्छेदरूपः प्रत्युपकारः कृतःस्यादिति धर्मस्य भवच्छेदकारणतामाह—

मूलम्—तीहिं ठाणेहिं संपण्णे अणगारे अणादियं अणवदग्गं दीहमद्धं चाउरंतं संसारकंतारं वीईवएज्जा, तं जहा—अणिदाणयाए, दिट्ठिसंपन्नयाए जोगवाहियाए ॥ सू० १५ ॥

छाया—त्रिभिः स्थानैः संपन्नोऽनगारः अनादिकमनवदग्रं दीर्घाद्धं चातुरन्तं संसारकान्तारं व्यतिव्रजति, तद्यथा—अनिदानतया दृष्टिसंपन्नतया, योगवाहितया ॥ ॥ सू० १५ ॥

प्रत्युपकारकर्त्ता होना चाहता है तो वह देव जब वे धर्माचार्य केवलिप्रज्ञप्त धर्म से पतित हो जावें फिर से उन्हें उस जिनप्रणीत धर्म में स्थिर कर देता है, तो इस प्रकार से वह उनके कृत उपकार का प्रत्युपकार कर्त्ता हो जाता है अर्थात् उनके कृत उपकार से वह उऋण हो जाता है। कहा भी है—"जो जेण जम्मि ठाणम्मि" इत्यादि ॥ सू०१४ ॥

धर्म में स्थापित करने से जीव का भवच्छेद रूप प्रत्युपकार हो सकता है—इस तरह धर्म भवच्छेद का कारण होता है यही बात अब

કદાચ કોઇ કારણે તે ધર્માચાર્ય કેવલિપ્રજ્ઞપ્ત ધર્મથી પતિત થઈ જાય, અને તે દેવ કોઇ પણ ઉપાયે તેમને ફરીથી તે ધર્મમાં સ્થિર કરી દે, તો જ તેના દ્વારા તેના ઉપકારનો બદલો વાળી શકાય છે કેવલીપ્રજ્ઞપ્ત ધર્મને માર્ગે તેમને વાળી લઈને જ .તે તેમના આત્માનું કલ્યાણ કરી શકે છે અને એ રીતે જ તે તેમનું ઋણ ફેડી શકે છે. કહ્યું પણ છે કે–" जो जेण जम्मि ठाणम्मि " ઇત્યાદિ. ॥ સૂ. ૧૪ ॥

ધર્મમાં સ્થાપિત કરવાથી જીવનો ભવચ્છેદરૂપ પ્રત્યુપકાર થઇ શકે છે. આ રીતે ધર્મ ભવચ્છેદમાં કારણભૂત બને છે. એજ વાત હવે સૂત્રકાર પ્રક-

सन्तं-सुश्रमणमदागारं धर्माचार्यं यदि दुर्भिक्षाद्-दुष्कालपीडिताद् देशाद् निष्कास्य सुभिक्षं सुकालं सस्यादि सपन्नं देशं संहरेत्देवशक्त्याऽऽनयत्, वा-अथवा कान्ता रात्-निर्जनाटवीतः निष्कान्तार जनाकुलं प्रदेशं कुर्यात्-नयेदित्यर्थः, वा-अथवा दीर्घकालिकेन चिरकालावस्थायिना रोगातङ्केन-रोगः-कालसहः कुष्ठादिः, आतङ्कः सद्योघाति शूलादि, तयोर्द्वन्द्वैकत्वे रोगातङ्कः, तेन, यद्वा-रोगातङ्केनेत्येकपदं-रोगदुःखेनेत्यर्थ अभिभूतं-पीडितं सन्तं विमोचयेत् देवशक्त्या मुक्तं कुर्यात्, तेनापि-एवं करणेनापि तस्य धर्माचार्यस्य दुष्प्रतिकरं भवति स प्रत्युपकर्त्ता न भवतीत्यर्थः। तर्हि कथं प्रत्युपकर्त्ता भवती ? त्याह—' अहेण ' इत्यादि, अथ यदि खलु स त धर्माचार्यं केवलिप्रज्ञप्ताद्धर्माद् भ्रष्ट-पतितं सन्तं भूयोऽपि-पुन

वह देव यदि वे सयत कदाचित् किसी दुष्काल पीडित देश में विहार करते हुए आ जाते हैं, और वह देव उन्हें उस दुष्काल पीडित देश से बाहर निकालकर सुभिक्षवाले देश में अपनी देवशक्ति के प्रभाव से ले आता है अथवा जब वे किसी दुर्गम गहन कान्तार में पतित हो जाते हैं तब वह देव उस स्थान से उन्हें निकाल कर जनसमुदाय वाले प्रदेश में पहुँचा देता है या जब वे रोगातंक से-रोग से-कालसह कुष्ठादि से एवं सद्योघाति शूलादिरूप आतंक से अथवा रोगदुःख से पीडित हो जाते हैं, तब वह अपनी देवशक्ति से उन्हें निरोग कर देता है, तो इस प्रकार से उनकी सम्भाल करने वाला वह देव उनके कृत उपकार का बदला नहीं चुका सकता है—उनका प्रत्युपकर्त्ता नहीं हो सकता है तो फिर वह प्रत्युपकारकर्त्ता कैसे हो सकता है ? तो इसके उत्तर में सूत्रकार कहते हैं-" अहे ण " इत्यादि—यदि वह देव उनका

આ ભાવનાથી પ્રેરાઈને ક્યારેક કોઈ દુષ્કાળ પીડિત દેશમાં વિચરતા તે ધર્માચાર્યને તે દેવ પોતાની દેવશક્તિના પ્રભાવથી સુભિક્ષવાળા (સુકાળવાળા) દેશમાં લઈ જાય છે અથવા જ્યારે તે ધર્માચાર્ય કોઈ ગહન અટવીમાં ફસાઈ જાય છે-માર્ગ ભૂલીને ભટકતા હોય છે, ત્યારે તે તેમને ત્યાંથી જનસમુદાય વાળા કોઈ સ્થાનમાં પહોંચાડી દે છે અથવા જ્યારે તેઓ કોઈ રોગાતંક (જ્વર, કોઢ આદિ રોગથી અને અચાનક ઉત્પન્ન થયેલા શૂલાદિ રૂપ આતંક) થી પીડાતા હોય છે ત્યારે પોતાની દૈવીશક્તિથી તે તેમને નીરોગી બનાવી દે છે આ પ્રકારે તેમની સંભાળ રાખવા છતાં પણ તે દેવ તેમના ઉપકારનો બદલો વાળી શકતો નથી. હવે સૂત્રકાર એ બતાવે છે કે તે દેવ તેમનો ઉપકાર કેવી રીતે વાળી શકે છે-" અહેણં " ઇત્યાદિ.

तया भोगसमृद्धिप्रार्थना रहिततयेत्यर्थः १। दृष्टिसंपन्नतया -दृष्टिः- सम्यग्दृष्टिस्तया संपन्नः युक्तः, तद्भावस्तत्ता, तया सम्यग्दृष्टितयेत्यर्थः २। योगवाहितया--योगेन -चित्तसमाधिना सर्वत्रानुत्सुकत्वलक्षणेन वहतीत्येवं शीलो योगवाही, समाधिस्थायीत्यर्थः, उक्तञ्च—योगवाहिलक्षणम्—

दृष्टिसंपन्नतारूप कारण और तीसरा योगवाहितारूप कारण है अव्याबाध सुखरूप रस से युक्त और मुक्तिरूप फलवाली ज्ञानादि आराधनारूप लता जिस कुठारतुल्य दिव्यमानुषऋद्धि अथवा देवलोक की ऋद्धि की चाहना से काट दी जाती है वह निदान है चारित्र की आराधना करता हुआ जीव परभव में स्वर्ग, मर्त्य आदि के भोगों की चाहना करता है इससे चारित्र मोहनीय कर्म उदय को प्राप्त होता है अर्थात् निदान (नियाणा) करने वाला जीव परभव में भोगादिकों की चाहना से प्रेरित होकर चारित्राराधन करता है इससे तपस्या उसकी निष्फल हो जाती है क्यों कि ऐसा करने से उस जीव को चारित्रमोहनीय कर्म का उदय होता है यद्यपि चारित्र की प्राप्ति जीव को चारित्रमोहनीय कर्म के क्षय क्षयोपशम से होती है परन्तु निदान बन्ध सहित चारित्राराधन सम्यक् चारित्राराधनरूप न होकर वह एक प्रकार का ढोंगरूप होता है—द्रव्यचारित्ररूप होता है इससे कर्म की निर्जरा और संवर न होकर प्रत्युत उससे चारित्रमोहनीय आदि कर्मों का बंध और उदय होता रहता है अतः ऐसे जीव का संसार घटता नहीं है उल्टा बढता रहता

અવ્યાબાધ સુખરૂપ રસથી યુક્ત અને મુક્તિરૂપ ફળવાળી જ્ઞાનાદિ આરાધનારૂપ લતા જે કુઠાર (કુહાડી) તુલ્ય દિવ્ય મનુષ્ય સબંધી ઋદ્ધિ અથવા દેવલોકની ઋદ્ધિની ચાહનાથી છેદાઇ જાય છે, તે ચાહનાનું નામ 'નિદાન' છે ચારિત્રની આરાધના કરતો જીવ જો પરભવમાં સ્વર્ગ, મર્ત્ય આદિના ભોગોની કામના કરે છે, તો તેના કારણે ચારિત્ર મોહનીય કર્મના ઉદય થાય છે એટલે કે નિદાન (નિયાણું) કરનારા જીવ પરભવના ભોગાદિકોની ચાહનાથી પ્રેરાઈને ચારિત્રારાધના કરે છે, તે કારણે તેની તપસ્યા નિષ્ફળ જાય છે, કારણ કે એવું કરવાથી તે જીવના ચારિત્રમોહનીય કર્મના ઉદય થાય છે. જો કે ચારિત્રમોહનીય કર્મના ક્ષય અને ક્ષયોપશમથી જ જીવને ચારિત્રની પ્રાપ્તિ થાય છે, પરન્તુ નિદાનબન્ધ સહિતની ચારિત્રારાધના સમ્યક્ ચારિત્રારાધન રૂપ હોતી નથી—ને તો એક ઢોગરૂપ જ હોય છે—દ્રવ્ય ચારિત્રરૂપ હોય છે, તેથી કર્મની નિર્જરા અને સંવર થવાને બદલે ચારિત્રમોહનીય આદિ કર્મોના બંધ અને ઉદય થતો રહે છે. તેથી એવા જીવનો સંસાર ઘટવાને બદલે

टीका—'तीहिं' इत्यादि सुगमं, नवरम्-अनादिकम्-न विद्यते आदिः प्रथमोत्पत्तिर्यस्येति-अनादिकं तद्-आदिरहितमित्यर्थः, अनवदग्रम्-न विद्यते अवदग्रं-पर्यन्तो यस्य तदनवदग्रं तत्तथा अपर्यवसानम् अनन्तमित्यर्थः। दीर्घाद्धं-दीर्घा अद्धा कालो यस्य तद् दीर्घाद्धं-तत्तथा दीर्घकालगम्यमित्यर्थः, यद्वा-दीर्घे अध्वा मार्गो यस्य तद् दीर्घाध्वं, तत्तथा दीर्घमार्गगम्यमित्यर्थः चातुरन्तं-चत्वारोऽन्ताः-गतयो यस्य तत्तथा चतुरन्तमेव चातुरन्तं चतुर्गतिकमित्यर्थः, एतादृशं संसारकान्तारं-संसार एव कान्तारं-निर्जलप्राणरहितो दुर्गमोऽरण्यप्रदेशः, तदिव कान्तारं-संसाराटवीमित्यर्थः व्यतिव्रजति-समुल्लङ्घते पारं प्राप्नोतीत्यर्थः। तदेव स्थानत्रयमाह—अनिदानतया निश्चितं दानं निदानं यद्वा-निदायते-लूयते ज्ञानाद्याराधनालता अत्याबाधसुखरसोपेतमोक्षफला येन परमुनेः दिव्यमानुषऋद्धि प्रार्थनाध्यवसायेन तन्निदानं चारित्राराधनेन स्वर्गमर्त्यादि भोगप्रार्थनेत्यर्थः तद्राहित्यं मोहनीयकर्मोदयमेवेति भावः, तस्य भावस्तत्ता, तद्वर्जनम् अनिदानता,

सूत्रकार प्रदर्शित करते हैं-(तीहिं ठाणेहिं संपण्णे अणगारे) इत्यादि।

टीकार्थ-जिसकी प्रथमोत्पत्ति प्रारंभ नहीं है वह अनादि है अर्थात् जो आदि रहित है तथा अवदग्र-पर्यन्त (अन्त) जिसका नहीं है वह अनवदग्र है अर्थात् जो अनन्त है तथा जिसका काल दीर्घ है वह दीर्घाद्ध है अर्थात् जो दीर्घकालगम्य है अथवा-जिसका मार्ग दीर्घ है-वह दीर्घाध्व है अर्थात् जिसका मार्ग रास्ता बहुत बड़ा लम्बा है और जो चार गति वाला है ऐसा यह संसाररूप कान्तार है इस दीर्घकान्तार को-निर्जल प्राणरहित दुर्गम अरण्यप्रदेश के जैसे संसार को-जीव तीन कारणों से पार कर देता है-इनमें एक अनिदानरूप कारण है दूसरा-

र्शित करे छे-'तीहिं ठाणेहिं संपण्णे अणगारे' इत्यादि—

टीकार्थ-जेनी प्रथमोत्पत्ति (प्रारंभ) नथी तेने अनादि कहे छे एटले के जे आदि रहित छे तेने अनादि कहे छे. अवदग्र-पर्यन्त (अन्त) नो जेमां अभाव होय छे तेने अनवदग्र अथवा अनन्त कहे छे. जेनो काळ दीर्घ छे तेने दीर्घाद्ध कहे छे एटले के जेने पार करवामां दीर्घकाळ व्यतीत थई जाय छे अथवा जेनो मार्ग दीर्घ छे तेने दीर्घाध्व कहे छे एटले के जेनो मार्ग अतिशय लांबो छे अने जे चार गतिवाळो छे एवा आ संसार रूप कान्तारने (गहन अटवीने) निर्जन प्राणरहित दुर्गम अरण्य प्रदेश जेवा संसारने जीव त्रण कारणो (उपायो) द्वारा पार करी शके छे. ते त्रण उपायो नीचे प्रमाणे छे-(१) अनिदानरूप कारण, (२) दृष्टिसंपन्नतारूप कारण अने (३) योगवाहितारूप कारण

तया भोगसमृद्धिप्रार्थना रहिततयेत्यर्थः १। दृष्टिसंपन्नतया -दृष्टिः- सम्यग्दृष्टिस्तया संपन्नः युक्तः, तद्भावस्तत्ता, तया सम्यग्दृष्टितयेत्यर्थः २। योगवाहितया--योगेन -चित्तसमाधिना सर्वत्रानुत्सुकत्वलक्षणेन वहतीत्येवं शीलो योगवाही, समाधिस्थायीत्यर्थः, उक्तञ्च—योगवाहिलक्षणम्—

दृष्टिसंपन्नतारूप कारण और तीसरा योगवाहितारूप कारण है अव्याबाध सुखरूप रस से युक्त और मुक्तिरूप फलवाली ज्ञानादि आराधनारूप लता जिस कुठारतुल्य दिव्यमानुषऋद्धि अथवा देवलोक की ऋद्धि की चाहना से काट दी जाती है वह निदान है चारित्र की आराधना करता हुआ जीव परभव में स्वर्ग, मर्त्य आदि के भोगों की चाहना करता है इससे चारित्र मोहनीय कर्म उदय को प्राप्त होता है अर्थात् निदान (नियाणा) करने वाला जीव परभव में भोगादिकों की चाहना से प्रेरित होकर चारित्राराधन करता है इससे तपस्या उसकी निष्फल हो जाती है क्यों कि ऐसा करने से उस जीव को चारित्रमोहनीय कर्म का उदय होता है यद्यपि चारित्र की प्राप्ति जीव को चारित्रमोहनीय कर्म के क्षय, क्षयोपशम से होती है परन्तु निदान बन्ध सहित चारित्राराधन सम्यक् चारित्राराधनरूप न होकर वह एक प्रकार का ढोंगरूप होता है-द्रव्यचारित्ररूप होता है इससे कर्म की निर्जरा और संवर न होकर प्रत्युत उससे चारित्रमोहनीय आदि कर्मों का बंध और उदय होता रहता है अतः ऐसे जीव का संसार घटता नहीं है उल्टा बढता रहता

અવ્યાબાધ સુખરૂપ રસથી યુક્ત અને મુક્તિરૂપ ફળવાળી જ્ઞાનાદિ આરાધનારૂપ લતા જે કુઠાર (કુહાડી) તુલ્ય દિવ્ય મનુષ્ય સંબંધી ઋદ્ધિ અથવા દેવલોકની ઋદ્ધિની ચાહનાથી છેદાઇ જાય છે, તે ચાહનાનું નામ 'નિદાન' છે ચારિત્રની આરાધના કરતા જીવ જો પરભવમા સ્વર્ગ, મર્ત્ય આદિના ભોગોની કામના કરે છે, તો તેના કારણે ચારિત્ર મોહનીય કર્મનો ઉદય થાય છે એટલે કે નિદાન (નિયાણું) કરનારો જીવ પરભવના ભોગાદિકોની ચાહનાથી પ્રેરાઈને ચારિત્રારાધના કરે છે, તે કારણે તેની તપસ્યા નિષ્ફળ જાય છે, કારણ કે એવું કરવાથી તે જીવના ચારિત્રમોહનીય કર્મનો ઉદય થાય છે. જો કે ચારિત્રમોહનીય કર્મના ક્ષય અને ક્ષયોપશમથી જ જીવને ચારિત્રની પ્રાપ્તિ થાય છે, પરન્તુ નિદાનબન્ધ સહિતની ચારિત્રારાધના સમ્યક્ ચારિત્રારાધન રૂપ હોતી નથી-ને તો એક ઢોંગરૂપ જ હોય છે-દ્રવ્ય ચારિત્રરૂપ હોય છે, તેથી કર્મની નિર્જરા અને સંવર થવાને બદલે ચારિત્રમોહનીય આદિ કર્મોનો બંધ અને ઉદય થતો રહે છે. તેથી એવા જીવનો સંસાર ઘટવાને બદલે

" नीयावित्ती अचवले अमाई अकुऊहले, विणीयविणए दंते जोगव उवहा णवं ' ॥ (उत्त अध्य १४ गा २७)

किञ्च—" पयणुकोहमाणेय, मायालोभपयण्णुए ।

पसंतचित्ते दंतप्पा, जोगव उवहाणव ॥ " (उत्त अध्य १४ गा २९)

छाया—नीचवृत्तिरचपलः अमायी अकुतूहलः । विनीतविनयो दान्तो

योगवान् उपधानवान् । तथा-प्रतनुक्रोधमानश्च, मायालोभप्रतनुकः । प्रशान्तचित्तो दान्तात्मा, योगवान् उपधानवान् । तस्य भावस्तत्ता तथा समाधि स्थायित्वमित्यर्थः है ॥ सू० १५ ॥

है इसीलिये संसार से परे होने के लिये अनिदान को एक कारण रूप से यहां गिनाया गया है। संसार से परे होने के लिये एक दूसरा और भी कारण है जिसका नाम दृष्टिसंपन्नता है सम्यग्दर्शन से युक्त होना इसका नाम दृष्टिसंपन्नता है इसी तरह से एक तीसरा कारण योगवाहिता है चित्त को समाधिस्थ रखना योगवाहिता चित्त यदि सांसारिक पदार्थों में उत्सुकता से युक्त बना रहता है तो वह चारित्रा राधन में बाधक होता है अतः निर्मल और अतीचारों से रहित चारि आराधन हो इसके लिये चित्त का समाधिस्थ होना परमावश्यक है इससे भी जीव संसार को पार कर देता है योगवाही का लक्षण इस प्रकार को कहा गया है—" णीयावित्ती अचवले अमाई " इत्यादि, (उत्तराध्य १४ गा २९) ' पयणुकोहमाणे य " इत्यादि ॥ सू०१५ ॥

બધતો જ રહે છે તે કારણે સંસાર પાર કરવાને માટે અનિદાનને એક કારણ રૂપે અહીં ગણાવવામાં આવેલ છે સંસાર પાર કરવાને માટેનો બીજો ઉપાય દૃષ્ટિસંપન્નતા છે સમ્યગ્દર્શનથી યુક્ત થવું તેનું નામ જ દૃષ્ટિસંપન્નતા છે સંસાર પાર કરવાનો એક ત્રીજો ઉપાય નીચે પ્રમાણે છે યોગવાહિતાથી પણ જીવ તરી જાય છે ચિત્તને સમાધિસ્થ રાખવું તેનું નામ યોગવાહિતા છે સાંસારિક પદાર્થોમાં જો ચિત્ત લીન રહે છે તો ચારિત્રારાધના થઇ શકતી નથી નિર્મળ અને અતિચારોથી રહિત ચારિત્રારાધન માટે ચિત્તનું સમાધિસ્થ હોવું અત્યન્ત આવશ્યક છે આ રીતે યોગવાહિતા દ્વારા પણ જીવ સંસાર કાંતારને પાર કરી નાખે છે યોગવાહિનું આ પ્રમાણે લક્ષણ કહ્યું છે— " णीयावित्ती अचवले अमाई " ઇત્યાદિ— (ઉત્તરાધ્ય ૧૪ ગાથા ૨૯) " पयणुकोहमाणे य " ઇત્યાદિ ॥ સૂ ૧૫ ॥

भवव्यतिव्रजनं च कालविशेष एव स्यादिति कालविशेषप्ररूपणामाह—

मूलम्—तिविहा ओसप्पिणी पण्णत्ता, तं जहा—उक्कोसा, मज्झिमा, जहन्ना १ । एवं छप्पि समाओ भाणियव्वाओ जाव दूसमदूसमा७ । तिविहा उस्सप्पिणी पण्णत्ता, तं जहा—उक्कोसा मज्झिमा जहन्ना ८ । एवं छप्पि समाओ भाणियव्वाओ जाव सुसमसुसमा १४ ॥ सू० १६ ॥

छाया—त्रिविधा अवसर्पिणी प्रज्ञप्ता, तद्यथा—उत्कृष्टा, मध्यमा, जघन्या १। एवं षडपि समा भणितव्याः, यावत् दुष्षमदुष्षमा ६। त्रिविधा उत्सर्पिणी प्रज्ञप्ता, तद्यथा—उत्कृष्टा, मध्यमा जघन्याच एवं षडपि समा भणितव्या यावत् सुसमसुसमा १४ ॥ सू० १६ ॥

टीका—' तिविहा ' इत्यादि—चतुर्दशसूत्री सुगमा । नवरम्—अवसर्पिणीप्रथमेऽरके उत्कृष्टा, त्रि चतुःपञ्चमरूपेषु चतुर्ष्वरकेषु मध्यमा, चरमेषष्ठेऽरके जघन्या १। एवं सुषमसुषमादिषु षट्स्वपि समासु प्रत्येकमुत्कृष्ट—मध्यमजघन्यरूपं त्रयं त्रयं कल्पनीयं यावत्—दुष्षमदुष्षमा ७। तथा—उत्सर्पिण्याः, दुष्षमदुष्षमादितद्-

संसार से पार जीव कालविशेष में ही होता है अतः अब सूत्रकार कालविशेष की प्ररूपणा करते हैं—(तिविहा ओसप्पिणी पण्णत्ता) इत्यादि।

टीकार्थ—अवसर्पिणी तीन प्रकार की कही गई गई है एक उत्कृष्ट अवसर्पिणी, दूसरी मध्यम अवसर्पिणी और तीसरी जघन्य अवसर्पिणी इनमें प्रथम अरक में उत्कृष्ट अवसर्पिणी होती है, द्वितीय, तृतीय और चौथे तथा पांचवें अरक में मध्यम अवसर्पिणी होती है और छठे अरक में जघन्य अवसर्पिणी होती है इसी तरह से सुषमसुषमा आदि छहों कालों में भी प्रत्येक काल में उत्तम, मध्यम और जघन्यरूप तीन २

કાળવિશેષમાં જ જીવ સંસાર પાર કરે છે. તેથી સૂત્રકાર હવે કાળવિશેષની પ્રરૂપણા કરે છે–" तिविहा ओसप्पिणी पण्णत्ता " ઇત્યાદિ—

ટીકાર્થ–અવસર્પિણી ત્રણ પ્રકારની કહી છે–(૧) ઉત્કૃષ્ટ અવસર્પિણી, (૨) મધ્યમ અવસર્પિણી અને (૩) જઘન્ય અવસર્પિણી પહેલા આરામાં ઉત્કૃષ્ટ અવસર્પિણી હોય છે, બીજા, ત્રીજા, ચોથા અને પાંચમાં આરામાં મધ્યમ અવસર્પિણી હોય છે અને છઠ્ઠા આરામાં જઘન્ય અવસર્પિણી હોય છે. એજ પ્રમાણે સુષમસુષમા

भेदानां चावसर्पिण्युक्तविपर्ययेणोत्कृष्टमध्यमजघन्यत्व भावनीयं योज्यं तथाहि—उत्सर्पिणी पश्चिमेऽरके उत्कृष्टा, चतुर्षु मध्यमा, प्रथमे जघन्या। एवं दुष्षमदुष्षमादिषु षट्सु समासूत्कृष्टमध्यमजघन्यरूपं त्रयं भेदमवसर्पिण्युक्तविपर्ययेण वाच्यमिति ॥ सू० १९ ॥

कालस्वरूपा अचेतनरूपधर्मा भाषिताः, तत्साधर्म्यान् पुद्गलधर्मान् निरूपयन् पञ्च सूत्राणि सदण्डकान्याह—

मूलम्—तीहिं ठाणेहिं अच्छिन्ने पोग्गले चलेज्जा, तं जहा—आहारिज्जमाणे वा पोग्गले चलेज्जा, विकुव्वमाणे वा पोग्गले चलेज्जा, ठाणाओ वा ठाणं संकामिज्जमाणे पोग्गले चलेज्जा। तिविहा उवही पण्णत्ता, तं जहा-कम्मोवही, सरीरोवही, बाहिरभंडमत्तोवही। एवं असुरकुमाराणं भाणियव्वं। एवं एगिंदियनेरइयवज्जं जाव वेमाणियाणं १। अहवा तिविहा उवही पण्णत्ता तं जहा सचित्ता अचित्ता मीसया। एवं णेरइयाणं निरंतरं जाव

भेद कल्पित कर लेना चाहिये तथा उत्सर्पिणी के दुष्षमदुष्षमादि जो भेद हैं उनमें, अवसर्पिणी में जो उत्तम मध्यम आदि कहे गये हैं उनसे विपरीतरूप में उत्कृष्टादि भेद कहना चाहिये जैसे—उत्सर्पिणी का जो पश्चिम आरक है उसमें उत्कृष्ट उत्सर्पिणी है, चार अरकों में मध्यम उत्सर्पिणी है और प्रथम अरक में जघन्य उत्सर्पिणी है इसी तरह से दुष्षमदुष्षमादि ६ कालों में उत्कृष्ट, मध्यम और जघन्यरूप तीन २ भेद अवसर्पिणी में कथन के उलटेरूप में कहना चाहिये ॥ सू० १९ ॥

આદિ છએ કાળોમાં પણ પ્રત્યેક કાળનાં ઉત્તમ, મધ્યમ અને જઘન્યરૂપ ત્રણ ભેદો સમજી લેવા જોઈએ તથા ઉત્સર્પિણીના દુષમદુષમાદિ જે ભેદો છે તેમાં, અવસર્પિણીના જે ઉત્તમ, મધ્યમ આદિ ભેદો કહ્યા છે તેના કરતાં વિપરીત રૂપે ઉત્કૃષ્ટ ભેદોનું કથન કરવું જોઈએ એટલે કે ઉત્સર્પિણીના છેલ્લા આરામાં ઉત્કૃષ્ટ ઉત્સર્પિણી હોય છે, વચ્ચેના ચાર આરામાં મધ્યમ ઉત્સર્પિણી હોય છે અને પહેલા આરામાં જઘન્ય ઉત્સર્પિણી હોય છે એમ સમજવું એજ પ્રમાણે દુષમદુષમાદિ ૬ કાળોમાં ઉત્કૃષ્ટ, મધ્યમ અને જઘન્યરૂપ ત્રણ ભેદોનું કથન અવસર્પિણીના કથન કરતાં ઉલટી રીતે કરવું જોઈએ. ॥ સૂ ૧૯ ॥

वेमाणियाणं २। तिविहे परिग्गहे पण्णत्ते, तं जहा-कम्मपरिग्गहे, सरीरपरिग्गहे, बाहिरभंडमत्तपरिग्गहे। एवं असुरकुमाराणं। एवं एगिंदियनेरइयवज्जं जाव वेमाणियाणं ३। अहवा तिविहे परिग्गहे पण्णत्ते, तं जहा--सचित्ते अचित्ते मीसए। एवं नेरइयाणं निरंतरं जाव वेमाणियाणं ४॥ सू० १७॥

छाया—त्रिभिः स्थानैरच्छिन्नः पुद्गलश्चलति, तद्यथा-आहार्यमाणो वा पुद्गलश्चलति, विक्रियमाणो वा पुद्गलश्चलति, स्थानाद्वा स्थानं संक्रमन् पुद्गलश्चलति। त्रिविध उपधिः प्रज्ञप्तस्तद्यथा-कर्मोपधिः, शरीरोपधिः, बाह्यभाण्डामत्रोपधिः। एवमसुरकुमाराणां भणितव्यम्। एवमेकेन्द्रियनैरयिकवर्जं यावद् वैमानिकानाम् २। अथवा त्रिविध उपधिः प्रज्ञप्तस्तद्यथा सचित्तः अचित्तः मिश्रकः। एवं नैरयिकाणां निरन्तरं यावद् वैमानिकानाम्। त्रिविधः परिग्रहः प्रज्ञप्तः तद्यथा-कर्मपरिग्रहः, शरीरपरिग्रहः, बाह्यभाण्डामत्रपरिग्रहः। एवमसुरकुमाराणाम्। एवमेकेन्द्रियनैरयिकवर्जं यावद् वैमानिकानाम् ३। अथवा-त्रिविधः परिग्रहः प्रज्ञप्तः, तद्यथा सचित्तः, अचित्तः, मिश्रकः। एवं नैरयिकाणां निरन्तरं यावद् वैमानिकानाम् ४॥ सू० १७॥

टीका—'तीहिं ठाणेहिं' इत्यादि।

खड्गादिना छिन्नः पुद्गलः समुदायाच्चलत्येवेत्यत आह-'अच्छिन्ने पुग्गले' इति। त्रिभिः कारणैः खड्गादिभिरच्छिन्न एव पुद्गलश्चलति। तान्येव कारणा-

---

अचेतन द्रव्यरूप जो काल है उसके धर्म इस प्रकार से कहे अब उसके साधर्म्य से सूत्रकार पुद्गल धर्मों की निरूपणा करने के निमित्त सदण्डक पांचसूत्रों का कथन करते हैं-(तीहिं ठाणेहिं अच्छिन्ने पोग्गले) इत्यादि।

टीकार्थ-खड्ग आदि द्वारा छिन्न हुआ पुद्गल समुदाय से चलायमान होती ही है अतः सूत्रकार ने यहां ऐसा कहा है कि खड्ग आदि से छिन्न नहीं हुआ पुद्गल जिन कारणों से चलायमान होता है वे कारण इस प्रकार

અચેતન દ્રવ્યરૂપ જે કાળ છે તેના ધર્મનું આ પ્રમાણે કથન કરીને હવે સૂત્રકાર તેના સાધર્મ્યની અપેક્ષાએ પુદ્ગલ, ધર્મોની પ્રરૂપણા કરવા નિમિત્તે સદંડક પાંચસૂત્રોનુ કથન કરે છે-" तीहिं ठाणेहिं अच्छिन्ने पोग्गले " ઇત્યાદિ.

ટીકાર્થ-ખડ્ગ આદિ દ્વારા છિન્ન થયેલુ પુદ્ગલ સમુદાયમાથી ચલાયમાન થાય છે જ, તેથી સૂત્રકારે અહીં એવુ કહ્યુ છે કે ખડ્ગ આદિથી છિન્ન ન થયું હોય એવું પુદ્ગલ નીચેના ત્રણ કારણોને લીધે ચલાયમાન થાય છે-(૧) જીવના

न्यादि-आहार्यमाणः-आहारतया जीवेन गृह्यमाणः पुद्गलो जीवेनाऽऽकर्षणात् स्वस्थानाच्चलति १। एवं विक्रियमाणः पुद्गलः वैक्रियकरणवशवर्तितया चलति २। तथा स्थानात्स्थानान्तरं हस्ताग्निना संक्राम्यमाणश्चलति ३। 'तिविहा उवही' इत्यादि, उपधीयते-पोष्यते, संसारे स्थाप्यते वा जीवोऽनेनेत्युपधिः। स त्रिविधः कर्मादि-कर्मोपधिः कर्मोपधिः १, शरीरमेवोपधिः शरीरोपधिः २, भाण्डानि-भाजनानि, अमत्राणि-वस्त्रादिभाजनानि भाण्डामत्राणि, तान्येवोपधिः भाण्डामत्रोपधिः, बाह्य-शरीरादिर्वर्तिवासौ भाण्डामत्रोपधिश्चेति-बाह्यभाण्डामत्रोपधिः।

से हैं-जीव के द्वारा जो पुद्गल आहाररूप से गृह्यमाण होता है उस पुद्गल का जीव के द्वारा आकर्षण होता है इसलिये वह अपने स्थान से चलायमान होता है यह प्रथम कारण है। इसी तरह से जो पुद्गल विक्रियमाण होता है वह पुद्गल विक्रिया करनेरूप क्रिया के द्वारा वशवर्ती होने के कारण अपने स्थान से चलायमान होता है यह दूसरा कारण है तथा एक स्थान से दूसरे स्थान पर जब पुद्गल जाता है-तब वह चलायमान होता है यह तीसरा कारण है, संसार में जिसके द्वारा जीव रखा जाता है उसका नाम उपधि है वह उपधि तीन प्रकार की है एक कर्मोपधि, दूसरी शरीरोपधि और तीसरी भाण्डमत्रोपधि कर्मरूप जो उपधि है वह कर्मोपधि है शरीररूप जो उपधि है वह शरीरोपधि है तथा भाजनरूप एवं वस्त्रादिभाजन रूप जो उपधि है वह बाह्यभाण्डमत्रोपधि है यह भाण्डमत्रोपधि शरीर से भिन्न होती है इस बात को प्रकट करने के लिये यहां बाह्यशब्द का प्रयोग हुआ है अथवा

દ્વારા જે પુદ્ગલને આહાર રૂપે ગ્રહણ કરવામાં આવે છે તે પુદ્ગલનું જીવના દ્વારા આકર્ષણ થાય છે તેથી તે પોતાને સ્થાનેથી ચલાયમાન થાય છે (૨) જે પુદ્ગલ વિક્રિયમાણ થાય છે તે પુદ્ગલ વિક્રિયા કરવારૂપ ક્રિયા દ્વારા-વિક્રિયાને અધીન થઈને પોતાને સ્થાનેથી ચલાયમાન થાય છે (૩) જ્યારે પુદ્ગલને એક સ્થાનેથી બીજે સ્થાને લઈ જવામાં આવે છે ત્યારે પણ તે ચલાયમાન થાય છે

સંસારમાં જેના દ્વારા જીવને રાખવામાં આવે છે તેનું નામ ઉપધિ છે તે ઉપધિ ત્રણ પ્રકારની છે (૧) કર્મોપધિ (૨) શરીરોપધિ અને (૩) બાહ્યભાંડમાત્રોપધિ. કર્મરૂપ જે ઉપધિ છે તેને કર્મોપધિ કહે છે. શરીરરૂપ જે ઉપધિ છે તેને શરીરોપધિ કહે છે. પાત્ર અને વસ્ત્રાદિ (વસ્ત્ર આદિ) ભાજનરૂપ જે ઉપધિ છે તેને બાહ્ય ભાંડમાત્રોપધિ કહે છે. આ ભાંડમાત્રોપધિ શરીરથી ભિન્ન હોય છે, એ વાતને પ્રકટ કરવાને માટે અહીં બાહ્ય પદનો પ્રયોગ કરાયો છે

अथवा 'बाह्य भाण्डमात्रोपधिः' इतिच्छाया, तत्र भाण्ड-वस्त्राभरणादि, तदेव मात्रा-परिच्छेदः, सैवोपधिः, बाह्यश्चासौ, इति कर्मधारयः। एवम्-अनेन प्रकारेण चतुर्विंशतिदण्डकचिन्तायामसुरकुमारादीनां त्रयोऽप्युपधयो वाच्याः। एवमेकेन्द्रियनारकवर्जं यावद् वैमानिकानां त्रयोऽप्युपधयो विज्ञेयाः, नारकैकेन्द्रियाणामुपकरणस्याभावात्तन्निषेधः १। द्वीन्द्रियादीनां तु-केषाञ्चिदुपकरणं दृश्यतएव, अथवेति प्रकारान्तरद्योतकः, अथवा प्रकारान्तरेणोपधिस्त्रिविधः प्रज्ञप्तः-सचित्तोऽचित्तो मिश्र इति। सचित्तोपधिः शैलहरितपत्रादिभाजनम्, अचित्तो वस्त्रादिः मिश्रः-

वस्त्राभरणादिरूप भाण्ड का जो प्रमाण कर लिया जाता है वह भाण्डमत्रोपधि है और यह भाण्डमत्रोपधि बाह्यरूप है अन्तरंग रूप नहीं है, इस तरह से चतुर्विंशतिदण्डक की चिन्ता में असुरकुमार आदिकों के यह तीनों प्रकार की उपधि होती है एकेन्द्रिय और नारकों को छोड़कर यावत् वैमानिकों के भी यह तीनों प्रकार की उपधि होती है नारक और एकेन्द्रियों के उपकरण के अभाव से तीन प्रकार की उपधि नहीं होती है इसीलिये इनका यहां निषेध किया गया है कितनेक द्वीन्द्रिय आदिकों के तो उपकरण देखा ही जाता है अथवा प्रकारान्तर से भी उपधि तीन प्रकार की है-जैसे सचित्त अचित्त और मिश्र जो उपधि सचित्त होती है वह सचित्तोपधि है जैसे-शैल, हरितपत्रादि का बनाया भाजन, जो उपधि अचित्त होती है वह अचित्तोपधि है जैसे शरीरादि और जो उपधि मिश्ररूप होती है वह मिश्रोपधि है जैसे

કરાયો છે. અથવા વસ્ત્રાભરણુ આદિરૂપ ભાડનું જે પ્રમાણુ કરી લેવામાં આવે છે તેને ભાડમત્રોપધિ કહે છે, અને તે ભાંડમત્રોપધિ બાહ્યરૂપ હોય છે-અન્તરંગ રૂપ હોતી નથી ૨૪ દંડકના અસુરકુમાર આદિ જીવોને તે ત્રણે પ્રકારની ઉપધિનો સદ્ભાવ હોય છે એકેન્દ્રિય જીવો અને નારકો સિવાયના બાકીના વૈમાનિક પર્યન્તના જીવોમા પણ આ ત્રણે પ્રકારની ઉપધિનો સદ્ભાવ હોય છે નારકો અને એકેન્દ્રિયોમાં ઉપકરણુના અભાવને લીધે ત્રણે પ્રકારની ઉપધિનો સદ્ભાવ હોતો નથી, તે કારણે અહીં તેમનો નિષેધ કરવામાં આવ્યો છે કેટલાક દ્વીન્દ્રિય આદિ જીવોના ઉપકરણુ તો જોઈ શકાય છે અથવા અન્ય રીતે પણુ ઉપધિના ત્રણુ પ્રકાર પડે છે-(૧) સચિત્ત, (૨) અચિત્ત અને (૩) મિશ્ર. જે ઉપધિ સચિત્ત હોય છે તેને સચિત્તોપધિ કહે છે. જેમકે શૈલ, હરિત પત્રાદિનુ બનાવેલુ ભાજન (પાત્ર) જે ઉપધિ સચિત્ત હોય છે તેને અચિત્તોપધિ કહે છે જેમકે શરીર વગેરે જે ઉપધિ મિશ્રરૂપ હોય છે તેને મિશ્રોપધિ કહે છે. જેમકે પરિણુતપ્રાય શૈલભાજન.

परिणतप्राय शैलभाजनमेवेति । एवम्-अनेन प्रकारेण दण्डकचिन्तायां नैरयिकाणां निरन्तरं त्रय उपधयो वाच्याः यावत्-वैमानिकानां वैमानिकपर्यन्तमित्यर्थः । तत्र नारकाणां सचित्तोपधिः शरीरम्, अचेतनउत्पत्तिस्थानम्, मिश्र शरीरमेवोच्छ्वासादिपुद्गलयुक्तम्, उच्छ्वासादीनां सचेतन चेतनत्वेन मिश्रत्वस्य विवक्षणात् । एव शेषाणामपि मिश्रत्व विज्ञेयमिति ३। परिग्रहप्ररूपणामाह- 'तिविहे परिग्गहे' इत्यादि परिगृह्यते-स्वीक्रियते इति परिग्रहः-मूर्च्छाविषय इति । इदम् 'एषाम यम्' इति व्यपदेशमात्रम् । स त्रिविधः-कर्मपरिग्रह बाह्य भाण्डामत्रपरि

परिणतप्राय शैलभाजन चतुर्विंशतिदण्डक की चिन्ता में नैरयिकों को निरन्तर ये तीनों उपधियां होती हैं-यावत् वैमानिकों को भी ये तीनों उपधियां होती हैं, नारकोंको सचित्तोपधि शरीर है अचित्तोपधि उनकी उत्पत्ति का स्थान है और उच्छ्वास आदि से युक्त शरीर ही मिश्र उपधि है क्यों कि उच्छ्वास आदिकों को सचेतन और अचेतन दोनों रूप से विवक्षित किया गया है इसी प्रकार से शेषों में भी मिश्रता जाननी चाहिये ।

परिग्रह भी तीन प्रकार का कहा गया है-जो स्वीकार किया जाता है, वह परिग्रह है अर्थात् मूर्च्छा का जो विषय होता है वह परिग्रह है वैसे तो परिग्रह मूर्च्छाभाव ही है वह परिग्रह कर्मपरिग्रह, शरीर परिग्रह और बाह्यभाण्डामत्रपरिग्रह के भेद से तीन प्रकार का कहा गया है-इनमें जीव को जो ये मेरे हैं ऐसा परिणाम होता है वही परिग्रह है परन्तु मूर्च्छाभाव के निमित्त होने से शरीरादिकों को भी परिग्रहरूप

૨૪ દંડકોની અપેક્ષાએ વિચાર કરવામાં આવે તો નારકોમાં આ ત્રણે ઉપધિઓનો સદા સદ્ભાવ રહે છે વૈમાનિક પર્યન્તના સઘળા જીવોમાં પણ આ ત્રણે ઉપધિઓનો સદ્ભાવ હોય છે નારકોમાં સચિત્તોપધિ રૂપ શરીર હોય છે, અચિત્તોપધિ તેમનું ઉત્પત્તિ સ્થાન હોય છે અને ઉચ્છ્વાસ આદિથી યુક્ત શરીર જ મિશ્રોપધિ રૂપ હોય છે, કારણ કે ઉચ્છ્વાસ આદિને સચેતન અને અચેતન એ બન્ને રૂપે વિવક્ષિત કરવામાં આવેલ છે એજ રીતે બાકીનામાં પણ મિશ્રતા સમજી લેવી

પરિગ્રહ પણ ત્રણ પ્રકારનો કહ્યો છે જેનો સ્વીકાર કરવામાં આવે છે તેને પરિગ્રહ કહે છે એટલે કે મૂર્ચ્છાનો જે વિષય છે તેને પરિગ્રહ કહે છે આમ તો પરિગ્રહ મૂર્ચ્છાભાવ રૂપ જ ગણાય છે તે પરિગ્રહના નીચે પ્રમાણે ત્રણ પ્રકાર કહ્યા છે-(૧) કર્મ પરિગ્રહ, (૨) શરીર પરિગ્રહ અને (૩) બાહ્ય ભાંડમત્ર પરિગ્રહ. 'આ મારૂં છે,' એવાં જીવના પરિણામને પરિગ્રહ કહે છે, પરન્તુ મૂર્ચ્છાભાવના નિમિત્ત રૂપ હોવાને લીધે શરીર વગેરેને પણ

ग्रहः। एवम्-अनेन प्रकारेण त्रिविधोऽपि परिग्रहोऽसुरकुमाराणां भवति। एवमेकेन्द्रियनैरयिकवर्जम्, एकेन्द्रियान् नैरयिकांश्च वर्जयित्वा यावद्वैमानिकानां-वैमानिकपर्यन्तं त्रिविधोऽपि परिग्रहो भवति। एकेन्द्रियाणां नारकाणांच कर्मादिरेव संभवति न तु भाण्डादिरिति॥ सू० १७॥

पुद्गलधर्माणां त्रित्व निरूप्य संप्रति जीवधर्माणां त्रित्वं सदण्डकैस्त्रिभिः सूत्रैराह —

मूलम्—तिविहे पणिहाणे पण्णत्ते, तं जहा-मणपणिहाणे, वयपणिहाणे, कायपणिहाणे। एवं पंचिंदियाणं जाव वेमाणियाणं। तिविहे सुप्पणिहाणे पण्णत्ते, तं जहा--मणसुप्पणिहाणे, वयसुप्पणिहाणे, कायसुप्पणिहाणे। संजयमणुस्साणं तिविहे सुप्पणिहाणे पण्णत्ते, तं जहा-मणसुप्पणिहाणे, वयसुप्पणिहाणे, कायसुप्पणिहाणे। तिविहे दुप्पणिहाणे पण्णत्ते, तं जहा-मणदुप्पणिहाणे, वयदुप्पणिहाणे, कायदुप्पणिहाणे। एवं पंचिंदियाणं जाव वेमाणियाणं॥ सू० १८॥

छाया—त्रिविध प्रणिधानं प्रज्ञप्तं, तद्यथा-मन प्रणिधानं, वचःप्रणिधानं, कायप्रणिधानम्। एवं पञ्चेन्द्रियाणां यावद् वैमानिकानाम्। त्रिविधं सुप्रणिधानं प्रज्ञप्तं, तद्यथा-मनःसुप्रणिधानं, वचः सुप्रणिधान, कायसुप्रणिधानम्। संयतमनुष्याणां त्रिविधं सुप्रणिधानं प्रज्ञप्तं, तद्यथा-मनःसुप्रणिधानं, वच सुप्रणिधान,

---

कह दिया गया है। यह तीनों प्रकार का परिग्रह एकेन्द्रिय और नैरयिक को छोड़कर यावत् वैमानिकों तक होता है एकेन्द्रियों में और नैरयिकों में कर्मादिरूप परिग्रह ही होता है भाण्डादिरूप परिग्रह नहीं इसलिये यहां इनको छोड़ दिया गया है॥ सू०१७॥

પરિગ્રહ રૂપે પ્રકટ કરવામાં આવેલ છે. આ ત્રણે પ્રકારના પરિગ્રહોનો સદ્‌ભાવ નારકો અને એકેન્દ્રિય સિવાયના વૈમાનિક પર્યન્તના સમસ્ત જીવોમાં હોય છે એકેન્દ્રિયો અને નારકોમાં કર્માદિરૂપ પરિગ્રહનો જ સદ્‌ભાવ હોય છે. ભાંડાદિ રૂપ પરિગ્રહનો સદ્‌ભાવ હોતો નથી, તે કારણે તેમને અહીં છોડી દેવાનું કહ્યું છે. ॥ સૂ. ૧૭ ॥

कायप्रणिधानम्। त्रिविध दुष्प्रणिधान प्रज्ञप्त तद्यथा-मनोदुष्प्रणिधान, वचो दुष्प्रणिधानं, कायदुष्प्रणिधानम्। एवं पञ्चेन्द्रियाणां यावद् वैमानिकानाम्॥सू०१८॥

टीका—' तिविहे पणिहाणे ' इत्यादि, सुगम, नवरम्-प्रणिहितः-प्रणिधानम् एकाग्रत्वम्, तच्च मनोवाक्कायभेदात्त्रिविधम्। तत्र मनसः प्रणिधाने मनः-प्रणिधानम्, एवमितरे अपि। तच्च चतुर्विंशतिदण्डके पञ्चेन्द्रियाणां भवति।

इस प्रकार से पुद्गलधर्मो मे त्रिरूपता का कथन करके अब सूत्रकार जीव धर्मो में दण्डकसहित तीनसूत्रों द्वारा त्रिविधता का कथन करते हैं (तिविहे पणिहाणे पण्णत्ते) इत्यादि।

सूत्रार्थ-प्रणिधान तीन प्रकारका कहा गयाहै एक मन प्रणिधान, दूसरा वचन प्रणिधान, और तीसरा कायप्रणिधान इसी तरह का कथन पचेन्द्रियों से लेकर यावत वैमानिक देवों तक करना चाहिये

सुप्रणीधान भी तीन प्रकार का कहा गया है एक मनः सुप्रणिधान, दूसरा वचनसुप्रणिधान, और तीसरा काय सुप्रणिधान, संयत मनुष्यों को यह तीनों प्रकार का सुप्रणिधान होता है दुष्प्रणिधान भी तीन प्रकार कहा गया है जैसे-मन दुष्प्रणिधान, वचन दुष्प्रणिधान और कायदुष्प्रणिधान यह दुष्प्रणिधान भी पचेन्द्रिय जीवों से लेकर यावत् वैमानिक जीवों तक होता है

टीकार्थ — एकाग्रता का नाम प्रणिधान है यह प्रणिधान, मन, वचन और काय के भेद से तीन प्रकार का कहा

આ રીતે પુદ્ગલ ધર્મોમાં ત્રિવિધતાનું કથન કરીને હવે સૂત્રકાર જીવ ધર્મોમાં દંડક સહિત ત્રિવિધતાનું કથન કરવાને માટે ત્રણ સૂત્રોનું કથન કરે છે

' तिविहे पणिहाणे पण्णत्ते " ઇત્યાદિ—

સૂત્રાર્થ-પ્રણિધાનના નીચે પ્રમાણે ત્રણ પ્રકાર કહ્યા છે-(૧) મનઃ પ્રણિધાન, (૨) વચન પ્રણિધાન અને (૩) કાય પ્રણિધાન. આ પ્રકારનું કથન પંચેન્દ્રિયોથી લઈને વૈમાનિકો પર્યન્તના જીવો વિષે સમજવું

સુપ્રણિધાનના પણ ત્રણ પ્રકાર કહ્યા છે (૧) મનઃ સુપ્રણિધાન, (૨) વચન સુપ્રણિધાન અને (૩) કાય સુપ્રણિધાન સંયત મનુષ્યોમાં આ ત્રણે પ્રકારના સુપ્રણિધાનોનો સદ્ભાવ હોય છે દુષ્પ્રણિધાનના પણ ત્રણ પ્રકાર કહ્યા છે-(૧) મનઃ દુષ્પ્રણિધાન, (૨) વચન દુષ્પ્રણિધાન અને (૩) કાય દુષ્પ્રણિધાન આ દુષ્પ્રણિધાનનો સદ્ભાવ પણ પંચેન્દ્રિયોથી લઈને વૈમાનિકો પર્યન્તના જીવોમાં હોય છે

ટીકાર્થ—એકાગ્રતાનું નામ પ્રણિધાન છે તે પ્રણિધાનને મન, વચન અને કાયાના ભેદથી ત્રણ પ્રકારનું કહ્યું છે મનની એકાગ્રતાને મનઃ

एक द्वित्रिचतुरिन्द्रियाणां तु न भवति तेषां सामस्त्येन योगाभावात्। यावद् वैमानिकानां वैमानिकपर्यन्तं त्रिविधमपि प्रणिधानं भवति। प्रणिधानं हि शुभाशुभभेदाद् द्विविध, तत्र प्रथमं शुभप्रणिधानमाह—' तिविहे ' इत्यादि, मनोवाकायभेदात्सुप्रणिधानं त्रिविधम्। सामान्यसूत्रमेतत्। विशेषमाश्रित्य तु चतुर्विंशतिदण्डकचिन्तायां त्रिविधं सुप्रणिधानं मनुष्याणामेव तत्रापि संयतानामेवेदं भवति, चारित्रपरिणामरूपत्वा दस्येति। अथाशुभमाह—' तिविहे ' इत्यादि, दुष्ट प्रणि-

गया है इनमें जो मन की एकाग्रता है वह मनः प्रणिधान है इसी प्रकार से वचन की और काय की एकाग्रता को लेकर वचनप्रणिधान और कायप्रणिधान जानना चाहिये यह तीनों प्रकार का प्रणिधान चतुर्विंशतिदण्डक में पचेन्द्रियजीवों को होता है एकेन्द्रिय दोइन्द्रिय. तेइन्द्रिय और चौइन्द्रिय जीवों को यह नहीं होता है क्यों कि इनको तीनों योग नहीं होते हैं। इसी प्रकार से यावत् वैमानिक जीवों तक में यह तीनों प्रकार का प्रणिधान होता है। प्रणिधान शुभ और अशुभ के भेद से दो प्रकार का होता है इनमें शुभप्रणिधान मनः सुप्रणिधान और वचन एवं काय के सुप्रणिधान को लेकर तीन प्रकार का है यह कथन सामान्य कथन है विशेष कथन की अपेक्षा लेकर जब चतुर्विंशतिदण्डक में इस त्रिविध सुप्रणिधान की चिन्ता की जाती है तब यह त्रिविध सुप्रणिधान संयत मनुष्यों को ही होता है क्यों कि यह सुप्रणिधान चारित्र परिणामरूप होता है अशुभप्रणिधान–दुष्टप्रणिधान अशुभ में प्रवृत्ति-

પ્રણિધાન કહે છે, વચનની એકાગ્રતાને વચન પ્રણિધાન કહે છે અને કાયાની એકાગ્રતાને કાયપ્રણિધાન કહે છે આ ત્રણે પ્રકારના પ્રણિધાનોનો સદ્ભાવ પચેન્દ્રિયથી લઇને વૈમાનિકો પર્યન્તના જીવોમાં જ હોય છે. એકેન્દ્રિય, દ્વીન્દ્રિય ત્રીન્દ્રિય અને ચતુરિન્દ્રિય જીવોમાં ત્રણે પ્રણિધાનોનો સદ્ભાવ હોતો નથી, કારણ કે તે જીવોમા ત્રણે યોગોનો સદ્ભાવ હોતો નથી

એજ પ્રમાણે વૈમાનિકો પર્યન્તના જીવોમાં આ ત્રણે પ્રકારના પ્રણિધાન હોય છે. પ્રણિધાન શુભ અને અશુભના ભેદથી બે પ્રકારનુ હોય છે તેમાથી શુભ પ્રણિધાનના નીચે પ્રમાણે ત્રણ ભેદ છે–(૧) મન સુપ્રણિધાન, (૨) વચન સુપ્રણિધાન અને (૩) કાય સુપ્રણિધાન. આ કથન સામાન્ય કથન છે. વિશેષ કથનની અપેક્ષાએ જ્યારે ૨૪ દંડકોના જીવોમાં તેનો વિચાર કરવામાં આવે, તો સંયત મનુષ્યોમા જ આ ત્રણે સુપ્રણિધાનોનો સદ્ભાઇ હોઇ શકે છે, કારણ કે આ સુપ્રણિધાન ચારિત્ર પરિણામ રૂપ હોય છે અશુભ પ્રણિધાન (દુષ્ટ પ્રણિધાન) અશુભ પ્રવૃત્તિ રૂપ હોય છે. તે પણ મન, વચન અને

धान दुष्प्रणिधानम्, अशुभमनःप्रवृत्तिरूपम्, तदपि मनोवाक्कायभेदात्त्रिविधम् । एतदपि सामान्यप्रणिधानवत् पञ्चेन्द्रियाणां यावद् वैमानिकानां भवतीति ॥ सू० १८ ॥

' जीवपर्यायाधिकाराद् योनिस्वरूपमाह—

मूलम्–तिविहा जोणी पण्णत्ता, तं जहा-सीया उसिणा सीओसिणा। एवं एगिंदियाणं विगलिंदियाणं तेउकाइयवज्जाणं समुच्छिमपंचिंदियतिरिक्खजोणियाणं समुच्छिममणुस्साणं य । तिविहा जोणी पण्णत्ता, तं जहा-सचित्ता, अचित्ता मीसया । एवं एगिंदियाणं विगलिंदियाणं समुच्छिमपंचिंदियतिरिक्खजोणियाणं समुच्छिममणुस्साणं य । तिविहा जोणी पण्णत्ता, तं जहा-संवुडा वियडा संवुडवियडा । तिविहा जोणी पण्णत्ता, तं जहा-कुम्मुन्नया संखावत्ता वंसीपत्तिया । कुम्मुन्नया णं जोणी उत्तमपुरिसमाऊणं । कुम्मुन्नयाए णं जोणीए तिविहा उत्तमपुरिसा गब्भं वक्कमंति, तं जहा-अरहंता चक्कवट्टी बलदेववासुदेवा । संखावत्ता जोणी इत्थीरयणस्स । संखावत्ताए णं जोणीए बहवे जीवा य पोग्गला य वक्कमंति, विउक्कमंति, चयंति, उववज्जंति, नो चेव णं निप्फज्जंति।

रूप होता है यह भी मन वचन और काय की अशुभप्रवृत्ति को लेकर तीन प्रकार का होता है यह प्रणिधान भी सामान्यप्रणिधान की तरह पंचेन्द्रिय जीवों से लेकर यावत् वैमानिकों तक होता है ॥ सू०१८ ॥

કાયાની અશુભ પ્રવૃત્તિની અપેક્ષાએ ત્રણ પ્રકારનું હોય છે આ ત્રણે પ્રકારના દુષ્પ્રણિધાનોનો સદ્ભાવ સામાન્ય પ્રણિધાનની જેમ પંચેન્દ્રિયથી વૈમાનિકો પર્યન્તના જીવોમાં હોય છે ॥ સૂ. ૧૮ ॥

वंसीपत्तियाणं जोणी पिहज्जणस्स । वंसीपत्तियाए णं जोणिए बहवे पिहज्जणा गब्भं वक्कमंति ॥ सू० १९ ॥

छाया—त्रिविधा योनिः प्रज्ञप्ता, तद्यथा—शीता, उष्णा, शीतोष्णा । एवमेकेन्द्रियाणां विकलेन्द्रियाणां तेजस्कायिकवर्जानां संमूर्च्छिमपञ्चेन्द्रियतिर्यग्योनिकानां संमूर्च्छिममनुष्याणां च । त्रिविधा योनिः प्रज्ञप्ता, तद्यथा—सचित्ता, अचित्ता, मिश्रका एवमेकेन्द्रियाणां विकलेन्द्रियाणां संमूर्च्छिमपञ्चेन्द्रियतिर्यग्योनिकानां संमूर्च्छिममनुष्याणां च । त्रिविधा योनिः प्रज्ञप्ता, तद्यथा—संवृताविवृता संवृत–

जीवपर्याय के अधिकार को लेकर अब सूत्रकार योनि के स्वरूप का कथन करते हैं- (तिविहा जोणी पण्णत्ता) इत्यादि ।

सूत्रार्थ-योनि-जीवों का उत्पत्ति स्थान तीन प्रकार की कही गयी है जैसे शीतयोनि, उष्णयोनि, और शीतोष्णयोनि यह योनि तेजस्कायिक वर्ज एकेन्द्रियोंको, विकलेन्द्रियोंको, संमूर्च्छिमपंचेन्द्रियतिर्यंचोंको और संमूर्च्छिममनुष्योंको होती है। इस प्रकार से भी योनि तीन प्रकार की कही गई है-सचित्त, अचित्त और मिश्र यह योनि एकेन्द्रियों को, विकलेन्द्रियों को, संमूर्च्छिमपंचेन्द्रियतिर्यंच योनियोंको और संमूर्च्छिम मनुष्यों को होती है। तथा इस प्रकार से भी योनि तीन प्रकार की कही गई है-संवृत, विवृत, और संवृतविवृत यह योनि देव, नारक, एकेन्द्रिय, गर्भजपचेन्द्रिय तिर्यञ्च और मनुष्य, विकलेन्द्रिय, अगर्भज पचेन्द्रिय मनुष्य और तिर्यच । अथवा-कूर्मोन्नत, शङ्खावर्त और

જીવપર્યાયના અધિકારની અપેક્ષાએ હવે સૂત્રકાર યોનિના સ્વરૂપનુ કથન કરે છે-" तिविहा जोणी पण्णत्ता " ઈત્યાદિ—

સૂત્રાર્થ-જીવોના ઉત્પત્તિ સ્થાનને યોનિ કહે છે. તે યોનિના ત્રણ પ્રકાર કહ્યા છે-(૧) શીતયોનિ, (૨) ઉષ્ણયોનિ, અને (૩) શીતોષ્ણયોનિ. તેજસ્કાયિક સિવાયના એકેન્દ્રિય જીવોને, વિકલેન્દ્રિય જીવોને, સમૂર્છિમપચેન્દ્રિય તિર્ય ચોને અને સંમૂર્છિમ મનુષ્યોને આ યોનિ હોય છે યોનિના નીચે પ્રમાણે ત્રણ પ્રકાર પણ પડે છે-(૧) સચિત્ત, (૨) અચિત્ત અને (૩) મિશ્ર. આ યોનિનો એકેન્દ્રિયોમા, વિકલેન્દ્રિયોમાં, સમૂર્છિમ પચેન્દ્રિય તિર્યંચ યોનિકોમા અને સમૂર્છિમ મનુષ્યોમા સદ્‌ભાવ હોય છે. યોનિના નીચે પ્રમાણે ત્રણ પ્રકાર પણ પડે છે-(૧) સવૃત, (૨ વિવૃત અને (૩) સંવૃતવિવૃત આ યોનિનો સદ્‌ભાવ દેવ, નારક, એકેન્દ્રિય, ગર્ભજ પચેન્દ્રિય તિર્યંચ અને મનુષ્ય, વિકલેન્દ્રિય, અગર્ભજ પચેન્દ્રિય મનુષ્ય અને તિર્યંચમા હોય છે.

विवृता। त्रिविधा योनिः प्रज्ञप्ता, तद्यथा-कूर्मोन्नता, शङ्खावर्त्ता, वंशीपत्रिका। कूर्मोन्नता खलु योनिः उत्तमपुरुषमातॄणाम्। कूर्मोन्नतायां खलु योनौ त्रिविधा उत्तमपुरुषा गर्भे व्युत्क्रामन्ति, तद्यथा-अर्हन्तः, चक्रवर्तिनः, बलदेववासुदेवाः। शङ्खावर्त्ता योनिः स्त्रीरत्नस्य। शङ्खावर्त्तायां खलु योनौ बहवो जीवाश्च पुद्गलाश्च व्युत्क्रामन्ति व्यवक्रामन्ति च्यवन्ते उपपद्यन्ते, नो चैव खलु निष्पद्यन्ते। वंशीपत्रिका खलु योनिः पृथग्जनस्य। वंशीपत्रिकायां खलु योनौ बहवः पृथग्जना गर्भे व्युत्क्रामन्ति ॥ सू० १९ ॥

टीका—' तिविहा जोणी ' इत्यादि।

युवन्ति-तैजसकार्मणशरीरवन्तः सन्तो जीवा औदारिकादिशरीरेण मिश्री भवन्त्यस्यामिति योनिः-जीवस्योत्पत्तिस्थानम्। सा त्रिविधा शीता, उष्णा,

वंशीपत्रिका के भेद से भी योनि तीन प्रकार की कही गई है-उत्तम पुरुषों का जन्म कूर्मोन्नतयोनि से होता है अर्थात् उत्तमपुरुषों की माताओं की कूर्मोन्नत योनि होती है कूर्मोन्नत योनि में त्रिविधता उत्तम पुरुष गर्भमें आतेहैं। तीन प्रकारके उत्तमपुरुष इस प्रकारसे है-अर्हन्त, चक्रवर्ती और बलदेव वासुदेव, स्त्री रत्नकी शङ्खावर्त योनि होतीहै, शङ्खावर्त योनि में कोई भी जीव निष्पन्न नहीं होता है। यद्यपि शांखावर्तयोनि में अनेक जीव और पुद्गल आते हैं और मरते हैं इससे अन्ययोनि में भी जाते हैं और वहां से उत्पन्न होते हैं पर गर्भरूप में वे वहां निष्पन्न नहीं होते हैं, वंशपत्र योनि सामान्यजन की होती है वंश पत्रिका योनि में अनेक पृथक् जन गर्भ में अवतरित होते हैं।

टीकाथ-तैजस और कार्मण शरीरधारी जीव औदारिक आदि शरीर के

અથવા યોનિના નીચે પ્રમાણે ત્રણ પ્રકાર પણ પડે છે- (૧) કૂર્મોન્નત, (૨) શંખાવર્ત અને (૩) વંશીપત્રિકા. ઉત્તમ પુરુષોનો જન્મ કૂર્મોન્નત યોનિ માંથી થાય છે એટલે કે ઉત્તમ પુરુષોની માતાઓની યોનિ કૂર્મોન્નત હોય છે અર્હન્ત ચક્રવર્તી અને બલદેવ વાસુદેવ, આ ત્રણે ઉત્તમ પુરુષો ગણાય છે આ ત્રિવિધ ઉત્તમ પુરુષો કૂર્મોન્નત યોનિમાં આવીને ઉત્પન્ન થાય છે સ્રીરત્નની યોનિ શંખાવર્ત હોય છે શંખાવર્ત યોનિમાં કોઇ જીવ ઉત્પન્ન થતો નથી-એ કે શંખાવર્ત યોનિમાં અનેક જીવ અને પુદ્ગલ આવે છે અને મરે છે ત્યાંથી અન્ય યોનિમાં પણ તેઓ જાય છે અને ત્યાં ઉત્પન્ન થાય છે પરન્તુ તેઓ ત્યાં ગર્ભરૂપે નિષ્પન્ન થતા નથી વંશપત્ર યોનિનો સદ્ભાવ સામાન્યજનોમાં હોય છે વંશપત્રિકા યોનિમાં અનેક પૃથક્જન (જીવ) ગર્ભ માં અવતરિત થાય છે (આવે છે)

ટીકાર્થ-તૈજસ કાર્મણ શરીરધારી જીવ ઔદારિક આદિ શરીરની સાથે જ્યાં

शीतोष्णा । तत्र शीता–शीतस्पर्शपरिणामा, उष्णा–उष्णस्पर्शपरिणामा, शीतोष्णा–उभयस्पर्शपरिणामा । एवं–यथा सामान्यतस्त्रिविधा योनिस्तथा चतुर्विंशतिदण्डकचिन्तायां तेजस्कायिकवर्जानां तेजस्कायिकान् मुक्त्वा, तेषामुष्णयोनिकत्वात्,

साथ जहां मिश्रित होते हैं उसका नाम योनि है अर्थात् जीवों की उत्पत्ति स्थान का नाम योनि है यह योनि नौ प्रकार की कही गई है सचित्त, अचित्त और सचित्ताचित्त, शीत, उष्ण और शीतोष्ण, संवृत, विवृत और संवृतविवृत यद्यपि ८४ लाख योनियां विस्तार से कही गई है इनमें पृथिवीकाय आदि जिस २ काय वाले जीवों के स्पर्श, रस, गन्ध, और वर्ण वाले जितने २ उत्पत्ति स्थान हैं वे सब मिलाकर चौरासी लाख हो जाते हैं यथा–पृथिवी, जल, अग्नि, वायु इनकी सात २ लाख, प्रत्येक वनस्पति की १० लाख, साधारण वनस्पति के १४ लाख, द्वीन्द्रिय तेइन्द्रिय और चौइन्द्रिय इनकी दो दो लाख, देव, नारकी और तिर्यंच इनकी चार २ लाख और मनुष्य की १४ लाख योनियां होती हैं। इन्हीं के यहां संक्षेप में विभाग करके ये नौ भेद प्रकट किये गये हैं ।

शीतस्पर्शपरिणामवाली शीत योनि होती है उष्णस्पर्शपरिणामवाली उष्ण योनि होती है और उभयस्पर्शपरिणामवाली शीतोष्ण योनि होती है, यह सामान्यतः योनिविषयक कथन है परन्तु चतुर्विंशति

મિશ્રિત થાય છે, તે સ્થાનનુ નામ યોનિ છે એટલે કે જીવોના ઉત્પત્તિસ્થાનને યોનિ કહે છે. તે યોની નવ પ્રકારની કહી છે–સચિત્ત, અચિત્ત અને સચિત્તાચિત, શીત, ઉષ્ણુ અને શીતોષ્ણુ, સ વૃત, વિવૃત અને સંવૃતવિવૃત. જો કે વિસ્તારપૂર્વક ૮૪ લાખ યોનિઓ કહી છે, તેમાથી પૃથ્વીકાય આદિ જે જે કાયવાળા જીવોના સ્પર્શ, રસ, ગંધ અને વર્ણવાળાં જેટ જેટલા ઉત્પત્તિસ્થાનો છે તે સૌનો સરવાળો ૮૪ લાખ થઇ જાય છે. જેમકે પૃથ્વી, જળ, અગ્નિ, અને વાયુની સાત સાત લાખ, પ્રત્યેક વનસ્પતિની ૧૦ લાખ, સાધારણુ વનસ્પતિની ૧૪ લાખ દ્વીન્દ્રિય, ત્રીન્દ્રિય અને ચતુરિન્દ્રિયની બબ્બે લાખ, દેવ, નારકી અને તિર્યંચની ચાર ચાર લાખ, અને મનુષ્યની ૧૪ લાખ યોનિઓ હોય છે. તેમનાં જ અહીં સ ક્ષિપ્તમાં વિભાગ કરીને નવ ભેદ પ્રકટ કરવામાં આવ્યા છે.

શીતસ્પર્શ પરિણામવાળી શીત યોનિ હોય છે, ઉષ્ણુસ્પર્શ પરિણામવાળી ઉષ્ણુ યોનિ હોય છે અને ઉભયસ્પર્શ પરિણામવાળી શીતોષ્ણુ યોનિ હોય છે. યોનિવિષયક આ સામાન્ય કથ

मिश्रा । त्रिविधा योनिः प्रज्ञप्ता, तद्यथा—कूर्मोन्नता, शङ्खावर्ता, वंशीपत्रिका । कूर्मोन्नता खलु योनि उत्तमपुरुषमातृणाम् । कूर्मोन्नतायां खलु योनौ त्रिविधा उत्तमपुरुषा गर्भे व्युत्क्रामन्ति, तद्यथा—अर्हन्तः, चक्रवर्तिन , बलदेववासुदेवा । शङ्खावर्ता योनिः स्त्रीरत्नस्य । शङ्खावर्तायां खलु योनौ बहवो जीवाश्च पुद्गलाश्च व्युत्क्रामन्ति व्यवक्रामन्ति च्यवन्ते उपपद्यन्ते, नो चैव खलु निष्पद्यन्ते । वंशीपत्रिका खलु योनिः पृथग्जनस्य । वंशीपत्रिकायां खलु योनौ बहवः पृथग्जना गर्भे व्युत्क्रामन्ति ॥ सू० १९ ॥

टीका—' तिविहा जोणी ' इत्यादि ।

युवन्ति-तैजसकार्मणशरीरवन्तः सन्तो जीवा औदारिकादिशरीरेण मिश्री भवन्त्यस्यामिति योनिः—जीवस्योत्पत्तिस्थानम् । सा त्रिविधा शीता, उष्णा,

---

वंशीपत्रिका के भेद से भी योनि तीन प्रकार की कही गई है—उत्तम पुरुषों का जन्म कूर्मोन्नतयोनि से होता है अर्थात् उत्तमपुरुषों की माताओं की कूर्मोन्नत योनि होती है कूर्मोन्नत योनि में त्रिविधता उत्तम पुरुष गर्भमें आते हैं । तीन प्रकारके उत्तमपुरुष इस प्रकारसे हैं—अर्हन्त, चक्रवर्ती और बलदेव वासुदेव, स्त्री रत्नकी शङ्खावर्त योनि होती है, शङ्खावर्त योनि में कोई भी जीव निष्पन्न नहीं होता है । यद्यपि शङ्खावर्तयोनि में अनेक जीव और पुद्गल आते हैं और मरते हैं इससे अन्ययोनि में भी जाते हैं और वहां से उत्पन्न होते हैं पर गर्भरूप में वे वहां निष्पन्न नहीं होते हैं, वंशपत्र योनि सामान्यजन की होती है वंश पत्रिका योनि में अनेक पृथक् जन गर्भ में अवतरित होते हैं ।

टीकार्थ—तैजस और कार्मण शरीरधारी जीव औदारिक आदि शरीर के

અથવા યોનિના નીચે પ્રમાણે ત્રણ પ્રકાર પણ પડે છે—(૧) કૂર્મોન્નત, (૨) શંખાવર્ત અને (૩) વંશીપત્રિકા ઉત્તમ પુરુષોનો જન્મ કૂર્મોન્નત યોનિ માંથી થાય છે એટલે કે ઉત્તમ પુરુષોની માતાઓની યોનિ કૂર્મોન્નત હોય છે અર્હન્ત, ચક્રવર્તી અને બલદેવ વાસુદેવ, આ ત્રણે ઉત્તમ પુરુષો ગણાય છે આ ત્રિવિધ ઉત્તમ પુરુષો કૂર્મોન્નત યોનિમાં આવીને ઉત્પન્ન થાય છે સ્ત્રીરત્નની યોનિ શંખાવર્ત હોય છે શંખાવર્ત યોનિમાં કોઈ જીવ ઉત્પન્ન થતો નથી—જો કે શંખાવર્ત યોનિમાં અનેક જીવ અને પુદ્ગલ આવે છે અને મરે છે ત્યાંથી અન્ય યોનિમાં પણ તેઓ જાય છે અને ત્યાં ઉત્પન્ન થાય છે પરન્તુ તેઓ ત્યાં ગર્ભરૂપે નિષ્પન્ન થતા નથી વંશપત્ર યોનિનો સદ્ભાવ સામાન્યજનોમાં હોય છે વંશપત્રિકા યોનિમાં અનેક પૃથક્જન (જીવ) ગર્ભમાં અવતરિત થાય છે (આવે છે)

ટીકાર્થ—તૈજસ કાર્મણ શરીરધારી જીવ ઔદારિક આદિ શરીરની સાથે જ્યાં

दण्डकचिन्तायामेकेन्द्रियादीनां पूर्वोक्तानां सचित्तादिस्त्रिविधाऽपि योनिर्भवति। शेषाणामन्यप्रकारा, उक्तञ्च—

"अचित्ता खलु जोणी, नेरइयाणं तहेव देवाणं।
मीसा य गब्भवसही, तिविहा जोणी य सेसाणं ॥ १ ॥ इति।
छाया—अचित्ता खलु योनिः, नैरयिकाणां तथैव देवानाम्।
मिश्रा च गर्भवसतीनां, त्रिविधा योनिश्च शेषाणाम् ॥ १ ॥ इति।

पुनरन्यथा योनि त्रैविध्यमाह—'तिविहा' इत्यादि, सुगमम्। नवरम्—संवृता–घटिकालयवत्, विवृता–तद्विपरीता, संवृतविवृता — उभयरूपेति। का योनिः केषां भवतीति तद्विभागो यथा—

प्रकारसे है–पांच स्थावर, तीन विकलेन्द्रिय और संमूर्च्छिम पंचेन्द्रिय तिर्यञ्च तथा मनुष्य इनको तीनों प्रकारकी योनि होती है. बाकी के जीवों को अन्य प्रकार की योनि होती है—अर्थात्–नारक और देवके अचित्त योनि होती है, गर्भज मनुष्य और तिर्यञ्चों के सचित्ताचित्त (मिश्र) योनि होती है। कहा भी है—'अचित्ता खलु जोणी' इत्यादि।

सवृत्त, विवृत्त और संवृत्तविवृत्त के भेद से भी योनि तीन प्रकार की कही गई है, इनमें नारक, देव और एकेन्द्रियों के संवृत्त योनि होती हैं। गर्भज पंचेन्द्रिय तिर्यञ्च और मनुष्य इनको संवृत्त विवृत्त (मिश्र) योनि होती है. तीनों विकलेन्द्रियोंको और संमूर्च्छिम पंचेन्द्रिय तिर्यञ्च मनुष्योंको विवृत्त योनि होती है, घटिकालयकी तरह जो योनि ढकी रहती है वह सवृत्त योनि है, जो योनि खुली रहती है

વવામા આવે છે–પાચ સ્થાવર, ત્રણ વિકલેન્દ્રિયો, અને સમૂર્ચ્છિમ પચેન્દ્રિય તિર્યંચ તથા મનુષ્યને આ ત્રણે પ્રકારની યોનિ હોય છે, બાકીના જીવોને અન્ય પ્રકારની યોનિ હોય છે. એટલે કે નારક અને દેવને અચિત્ત યોનિ હોય છે, ગર્ભજ મનુષ્ય અને તિર્યંચોને સચિત્તાચિત્ત (મિશ્ર) યોનિ હોય છે કહ્યું પણ છે કે–" अचित्ता खलु जोणी " ઇત્યાદિ—

સંવૃત, વિવૃત અને સંવૃતવિવૃતના ભેદથી પણ યોનિ ત્રણ પ્રકારની કહી છે નારક દેવ અને એકેન્દ્રિયોને સંવૃત યોનિ હોય છે ગર્ભજ પંચેન્દ્રિય તિર્યંચ અને મનુષ્યને સંવૃતવિવૃત (મિશ્ર) યોનિ હોય છે ત્રણે વિકલેન્દ્રિયોને (દ્વીન્દ્રિય, ત્રીન્દ્રિય અને ચતુરિન્દ્રિયોને) અને સમૂર્ચ્છિમ પંચેન્દ્રિય તિર્યંચો અને મનુષ્યોને વિવૃત યોનિ હોય છે. ઘટિકાલયની જેમ જે યોનિ ઢંકાયેલી (આચ્છાદિત) રહે છે, તે યોનિને સંવૃત યોનિ કહે છે. જે યોનિ

एकेन्द्रियाणां-पृथिवीकायिकादीनां, विकलेन्द्रियाणां-द्वित्रिचतुरिन्द्रियाणां सम्मूर्च्छिमपञ्चेन्द्रियतिर्यग्योनिकानां सम्मूर्च्छिममनुष्याणां च त्रिविधाऽपि योनिर्भवति, शेषाणां त्वन्यप्रकारा, उक्तश्च—

"सीओसिण जोणीया, सव्व देवा य गब्भवक्कंती ।
उसिणा य तेउकाए, दुहणिरए तिविहसेसाण ॥ १ ॥ इति ।

छाया—शीतोष्णयोनिका सर्वे देवाश्च गर्भव्युत्क्रान्तिका ।
उष्णा च तेजस्काये द्विधा नरके त्रिविधा शेषाणाम् ॥ १ ॥ इति ।

अथ प्रकारान्तरेण योनित्रैविध्यमाह—' तिविहा जोणी ' इत्यादि, सचित्ता चित्तमिश्रभेदात् योनिस्त्रिविधा प्रज्ञप्ता । एव—सामान्यतया योनित्रैविध्यवत्

दण्डकों में जब इसका विचार किया जाता है तो वह इस प्रकार से है -तैजस्कायिकों के केवल उष्णयोनि होती है, इसलिये इस कथन में इन्हें छोड़कर पृथिवीकायिकादिक एकेन्द्रियों को, विकलेन्द्रियों को द्वीन्द्रिय, तेइन्द्रिय और चौइन्द्रियों को समूर्च्छिमपचेन्द्रियतिर्यञ्चों को और सम्मूर्च्छिम मनुष्यों को तीनों प्रकार की योनि होती है । बाकी के जीवों को अन्य प्रकारकी योनि होती है । कहा भी है-" सीओसिण जोणिआ " इत्यादि ।

समस्त देव और गर्भजन्मवाले जीव शीत और उष्ण योनिवाले होते हैं, तेजस्कायिक जीव उष्ण योनिवाले होते हैं । नारक जीव भी शीत और उष्ण योनिवाले होते हैं, बाकी के और सब जीव पूर्वोक्त रूपसे शीत, उष्ण और मिश्ररूप योनिवाले होते हैं ।

सचित्त, अचित्त और मिश्रके भेद से भी योनि जो तीन प्रकार की कही गई है उसका विचार चौवीस दण्डकों की अपेक्षा से इस

પ્રકારે યોનિનો વિચાર કરવામાં આવે છે-તૈજસકાયિકોમાં માત્ર ઉષ્ણ યોનિનો જ સદ્ભાવ હોય છે તૈજસકાયિક સિવાયના પૃથ્વીકાયિક આદિ એકેન્દ્રિય જીવોમાં દ્વીન્દ્રિય, ત્રીન્દ્રિય અને ચતુરિન્દ્રિય અને વિકલેન્દ્રિય જીવોમાં, સમૂર્ચ્છિમ પંચેન્દ્રિય તિર્યંચોમાં અને સમૂર્ચ્છિમ મનુષ્યોમાં આ ત્રણે પ્રકારની યોનિઓનો સદ્ભાવ હોય છે બાકીના જીવોને અન્ય પ્રકારની યોનિ હોય છે કહ્યું પણ છે કે- સીઓસિણ જોણિયા ઇત્યાદિ—

સમસ્ત દેવો અને ગર્ભજ જન્મવાળા જીવો શીત અને ઉષ્ણયોનિવાળા હોય છે તેજસ્કાયિક જીવો ઉષ્ણ યોનિવાળા હોય છે નારકો પણ શીત અને ઉષ્ણ યોનિવાળા હોય છે બાકીના સમસ્ત જીવો પૂર્વોક્ત રૂપે શીત, ઉષ્ણ અને મિશ્ર યોનિવાળા હોય છે

યોનિના સચિત્ત, અચિત્ત અને મિશ્ર રૂપ જે ત્રણ પ્રકારો કહેવામાં આવ્યા છે, તેમની અપેક્ષાએ હવે ૨૪ દંડકના જીવોની યોનિનું સ્વરૂપ બતા

दण्डकचिन्तायामेकेन्द्रियादीनां पूर्वोक्तानां सचित्तादिस्त्रिविधाऽपि योनिर्भवति। शेषाणामन्यप्रकारा, उक्तञ्च—

" अचित्ता खलु जोणी, नेरइयाणं तहेव देवाणं।
मीसा य गब्भवसही, तिविहा जोणी य सेसाणं ॥ १ ॥ इति।

छाया—अचित्ता खलु योनिः, नैरयिकाणां तथैव देवानाम्।
मिश्रा च गर्भवसतीनां, त्रिविधा योनिश्च शेषाणाम् ॥ १ ॥ इति।

पुनरन्यथा योनि त्रैविध्यमाह—' तिविहा ' इत्यादि, सुगमम्। नवरम्—संवृता—घटिकालयवत्, विवृता—तद्विपरीता, संवृतविवृता — उभयरूपेति। का योनिः केषां भवतीति तद्विभागो यथा—

प्रकारसे है-पांच स्थावर, तीन विकलेन्द्रिय और संमूर्च्छिम पंचेन्द्रिय तिर्यञ्च तथा मनुष्य इनको तीनों प्रकारकी योनि होती है. बाकी के जीवों को अन्य प्रकार की योनि होती है—अर्थात्-नारक और देवके अचित्त योनि होती है, गर्भज मनुष्य और तिर्यञ्चों के सचित्ताचित्त (मिश्र) योनि होती है । कहा भी है—' अचित्ता खलु जोणी ' इत्यादि।

सवृत्त, विवृत्त और संवृत्तविवृत्त के भेद से भी योनि तीन प्रकार की कही गई है, इनमें नारक, देव और एकेन्द्रियों के सवृत्त योनि होती हैं। गर्भज पंचेन्द्रिय तिर्यञ्च और मनुष्य इनको संवृत्त विवृत्त (मिश्र) योनि होती है. तीनों विकलेन्द्रियोंको और संमूर्च्छिम पंचेन्द्रिय तिर्यञ्च मनुष्योंको विवृत्त योनि होती है, घटिकालयकी तरह जो योनि ढकी रहती है वह सवृत्त योनि है, जो योनि खुली रहती है

વવામાં આવે છે-પાચ સ્થાવર, ત્રણ વિકલેન્દ્રિયો, અને સમૂર્ચ્છિમ પચેન્દ્રિય તિર્યંચ તથા મનુષ્યને આ ત્રણે પ્રકારની યોનિ હોય છે, બાકીના જીવોને અન્ય પ્રકારની યેનિ હોય છે. એટલે કે નારક અને દેવને અચિત્ત યોનિ હોય છે, ગર્ભજ મનુષ્ય અને તિર્યંચોને સચિત્તાચિત્ત (મિશ્ર) યોનિ હોય છે કહ્યું પણ છે કે-" अचित्ता खलु जोणी " ઇત્યાદિ—

સંવૃત, વિવૃત અને સંવૃતવિવૃતના ભેદથી પણ યોનિ ત્રણ પ્રકારની કહી છે નારક દેવ અને એકેન્દ્રિયોને સંવૃત યોનિ હોય છે ગર્ભજ પંચેન્દ્રિય તિર્યંચ અને મનુષ્યને સંવૃતવિવૃત (મિશ્ર) યોનિ હોય છે ત્રણે વિકલેન્દ્રિયોને (દ્વીન્દ્રિય, ત્રીન્દ્રિય અને ચતુરિન્દ્રિયોને) અને સમૂર્ચ્છિમ પંચેન્દ્રિય તિર્યંચો અને મનુષ્યોને વિવૃત યોનિ હોય છે. ઘટિકાલયની જેમ જે યોનિ ઢંકાયેલી (આચ્છાદિત) રહે છે, તે યોનિને સંવૃત યોનિ કહે છે. જે યોનિ

" एगिंदिय नेरइया, संवुडजोणी हवंति देवा य ।
विगलिंदियाण वियडा, संवुडवियडा य गब्भमि ॥ १ ॥ " इति ।
छाया—एकेन्द्रियनैरयिकाः संवृतयोनिका भवन्ति देवाश्च ।
विकलेन्द्रियाणां विवृता, संवृत-विवृता च गर्भे ॥ १ ॥ इति ।

पुनरपि योनिर्भेदमाह—' तिविहा ' इत्यादि । त्रिविधायोनिस्तथाहि-कूर्मोन्नता शङ्खावर्त्ता, वंशीपत्रिका चेति । तत्र कूर्म —कच्छप, तद्वत्-तत्पृष्ठवद् उन्नता कूर्मोन्नता । शङ्खस्येवावर्तो यस्याः सा शङ्खावर्त्ता । वंशी —वंशजाल्या पत्रकमिव या सा वंशी पत्रिका । कूर्मोन्नता योनिः कासां स्त्रीणां भवतीत्याह—' कुम्मुन्नया ' इत्यादि, कूर्मोन्नता योनिरुत्तमपुरुषमातॄणां भवति। तदेव स्पष्टयति —' कुम्मुन्नयाए णं ' इत्यादि कूर्मोन्नतायां योनौ त्रिविधा उत्तमपुरुषा गर्भे व्युत्क्रामन्ति—प्राप्नुवन्ति गर्भे उत्पद्यन्त इत्यर्थः । तथया—उत्तमपुरुषा यथा अर्हन्त', चक्रवर्तिन , बलदेववासुदेवा । एतयोर्बलदेववासुदेवयोः सहचरत्वादेकत्वविवक्षणम् । शङ्खावर्त्ता योनिः स्त्रीरत्नस्य भवति । स्त्रीरत्न—पञ्चेन्द्रियरत्नविशेषः, यस्य स्पर्शमात्रेण लोहनिर्मितपुरुषो गलति द्रवितो भवति, उत्कृष्टातिशयितकामविकार जनितप्रबलोष्णतापविशेषत्वादस्यति । अत एतस्यां जीवा न निष्पद्यन्त इत्याह—

यह विवृत योनि है, और जो दोनों प्रकारकी होती है वह मिश्र योनि है । अर्थात् कुछ ढकी होती है और कुछ खुली होती है वह संवृत विवृत योनि है । कौन योनि किनको होती है । यही इस गाथा द्वारा प्रकट किया गया है—" एगिंदिय नेरइया संवुडजोणी " इत्यादि ।

इस प्रकार से भी योनि तीन प्रकार की होती है—कूर्मोन्नत, शङ्खावर्त, और वंशपत्रिका जो योनि कूर्म—कच्छप के पृष्ठ की तरह उन्नत होती है वह कूर्मोन्नत योनि है, जिसमें शंखकी तरह आवर्त होते हैं वह शंखावर्त योनि है, वंशजाली के पत्रकी तरह जो योनि होती है

ખુલ્લી રહે છે તે યોનિને વિવૃત યોનિ કહે છે થોડે અંશે ઢંકાયેલી અને થોડે અંશે ખુલ્લી હોય એવી યોનિને સંવૃતવિવૃત (મિશ્ર) યોનિ કહે છે કયા જીવને કયા પ્રકારની યોનિ હોય છે તે નીચેની ગાથામાં સમજાવ્યું છે

' एगिंदिय नेरइया संवुडजोणी ' ઇત્યાદિ—

યોનિના આ પ્રમાણે પણ ત્રણ પ્રકાર પડે છે (૧) કૂર્મોન્નત (૨) શંખાવર્ત, અને (૩) વંશપત્રિકા. જે યોનિ કાચબાની પીઠના સમાન ઉન્નત હોય છે, તે યોનિને કૂર્મોન્નત યોનિ કહે છે જે યોનિમાં શંખના જેવાં આવર્ત (વળાંક) હોય છે તે યોનિને શંખાવર્ત યોનિ કહે છે વંશજાળીના પત્રના જેવી જે યોનિ હોય છે, તે યોનિને વંશપત્રિકા યોનિ કહે છે આ યોનિઓ

'संखावत्ताएणं' इत्यादि । शङ्खावर्त्तायां योनौ बहवो जीवा पुद्गलाश्च व्युत्क्रामन्ति-आगच्छन्ति, तथा-व्यवक्रामन्ति-विनश्यन्ति । च्यवन्ते-तद्योनितो योन्यन्तरं गच्छन्ति, उत्पद्यन्ते-योन्यन्तरे समुत्पद्यन्ते, किन्तु नो चैव-नैव निष्पद्यन्ते-तत्रोत्पन्ना जीवाः परिनिष्ठिता न भवन्तीत्यर्थः । वंशीपत्रिका योनिः पृथग्जनस्य सामान्यजनस्य भवति । वंशीपत्रिकायां योनौ बहवः पृथग्जनाः-सामान्यजना गर्भं व्युत्क्रामन्ति-प्राप्नुवन्ति गर्भे उत्पद्यन्त इत्यर्थः ॥ सू० १९ ॥

अनन्तरं योनिप्ररूपणतो मनुष्याः प्ररूपिताः, अधुना मनुष्यस्य सधर्मिणो बादरवनस्पतिकायिकान् प्ररूपयति—

मूलम्-तिविहा तणवणस्सइकाइया पण्णत्ता, तं जहा-संखेज्जजीवया, असंखेज्जजीवया, अणंतजीवया ॥ सू० २० ॥

छाया—त्रिविधा तृणवनस्पतिकायिकाः प्रज्ञप्ताः, तद्यथा संख्येयजीवकाः, असंख्येयजीवकाः, अनन्तजीवकाः ॥ सू० २० ॥

वह वंशपत्रिका योनि है, ये योनियां किन २ को होती है यह सब मूलार्थ में लिख दिया गया है । टीका के ही अनुसार स्त्रीरत्न के शंखावर्त योनि होती है, स्त्रीरत्न यह पंचेन्द्रिय रत्न विशेष है, इस रत्नके स्पर्श मात्र से लोहनिर्मित पुरुष भी गल जाता है-द्रवित हो जाता है, क्यों कि यह उत्कृष्ट एवं अतिशयित काम के विकार से जनित प्रबल उष्णताप विशेषवाला होता है "न निष्पद्यन्ते"का तात्पर्य ऐसा होता है कि वहां उत्पन्न हुए जीव परिनिष्ठित (जीते) नहीं होते है । वंशीपत्रिका योनिमें सामान्य जन जन्म धारण करता है ॥ सू०१९ ॥

योनि की प्ररूपणा से मनुष्यों का प्ररूपण हो जाता है अब मनुष्यके सधर्मी बादर वनस्पतिकायिकों की सूत्रकार प्ररूपणा करते हैं—

क्या જીવોને હોય છે તે મૂલાર્થમાં બતાવવામાં આવેલ છે ત્યા લખ્યા અનુસાર સ્રીરત્નને શંખાવર્ત યોનિ હોય છે. સ્રીરત્ન એ પંચેન્દ્રિય રત્નવિશેષ છે આ રત્નના સ્પર્શ માત્રથી લોહનિર્મિત પુરુષ પણ દ્રવી (પીગળી) જાય છે, કારણ કે તે ઉત્કૃષ્ટ અને અતિશાયિત કામના વિકારથી જનિત પ્રબળ ઉષ્ણુતાપ વિશેષણવાળો હોય છે. "ननिष्पद्यन्ते" આ પદનો ભાવાર્થ એ છે કે ત્યા ઉત્પન્ન થયેલા જીવો પરિનિષ્ઠિત (જીવિત) રહેતા નથી. વંશપત્રિકા યોનિમાં સામાન્યજન જન્મ ધારણ કરે છે. ॥ સૂ. ૧૯ ॥

યોનિની પ્રરૂપણા દ્વારા મનુષ્યની પ્રરૂપણા થઈ જાય છે હવે મનુષ્યના સધર્મી બાદર વનસ્પતિકાયિકોની સૂત્રકાર પ્રરૂપણા કરે છે—

" एगिंदिय नेरइया, संवुडजोणी हवंति देवा य ।
विगलिंदियाण वियडा, संवुडवियडा य गब्भम्मि ॥ १ ॥ " इति ।
छाया—एकेन्द्रियनैरयिकाः संवृतयोनिका भवन्ति देवाश्च ।
विकलेन्द्रियाणां विकटा, संवृत-विवृता च गर्भे ॥ १ ॥ इति ।

पुनरपि योनिर्त्रैविध्यमाह—' तिविहा ' इत्यादि । त्रिविधायोनिस्तद्यथा—कूर्मोन्नता, शङ्खावर्ता, वंशीपत्रिका चेति । तत्र कूर्म—कच्छपः, तद्वत्—तत्पृष्ठवद् उन्नता कूर्मोन्नता । शङ्खस्येवावर्तो यस्यां सा शङ्खावर्ता । वंशया—वंशजाल्याः पत्रकमिव या सा वंशी पत्रिका । कूर्मोन्नता योनिः कासां स्त्रीणां भवतीत्याह—' कुम्मुन्नया ' इत्यादि, कूर्मोन्नता योनिरुत्तमपुरुषमातॄणां भवति । तदेव स्पष्टयति—' कुम्मुन्नयाए णं ' इत्यादि कूर्मोन्नतायां योनौ त्रिविधा उत्तमपुरुषा गर्भे व्युत्क्रामन्ति—प्राप्नुवन्ति गर्भे उत्पद्यन्त इत्यर्थः । तद्यथा—उत्तमपुरुषा यथा अर्हन्तः, चक्रवर्तिन , बलदेववासुदेवाः । एतयोर्बलदेववासुदेवयो सहचरत्वादेकत्वविवक्षणम् । शङ्खावर्ता योनिः स्त्रीरत्नस्य भवति । स्त्रीरत्न—पञ्चेन्द्रियरत्नविशेषः, यस्य स्पर्शमात्रेण लोहनिर्मितपुरुषो मन्वति द्रवितो भवति, उत्कृष्टातिशयितकामविकारजनितमयलोष्णतापविशेषत्वात्स्यति । अत एवास्यां जीवा न निष्पद्यन्त इत्याह—

यह विवृत्त योनि है, और जो दोनों प्रकारकी होती है वह मिश्र योनि है । अर्थात् कुछ ढकी होती है और कुछ खुली होती है वह संवृत विवृत्त योनि है । कौन योनि किसको होती है । यही इस गाथा द्वारा प्रकट किया गया है—" एगिंदिय नेरइया संवुडजोणी " इत्यादि ।

इस प्रकार से भी योनि तीन प्रकार की होती है—कूर्मोन्नत, शङ्खावर्त, और वंशपत्रिका जो योनि कूर्म—कच्छप के पृष्ठ की तरह उन्नत होती है वह कूर्मोन्नत योनि है, जिसमें शङ्खकी तरह आवर्त्त होते हैं वह शंखावर्त्त योनि है, बंशजाली के पत्रकी तरह जो योनि होती है

ખુલ્લી રહે છે તે યોનિને વિવૃત યોનિ કહે છે થોડે અંશે ઢંકાયેલી અને થોડે અંશે ખુલ્લી હોય એવી યોનિને સંવૃતવિવૃત (મિશ્ર) યોનિ કહે છે કયા જીવને કયા પ્રકારની યોનિ હોય છે તે નીચેની ગાથામાં સમજાવ્યું છે

" एगिंदिय नेरइया संवुडजोणी " इत्यादि—

યોનિના આ પ્રમાણે પણ ત્રણ પ્રકાર પડે છે-(૧) કૂર્મોન્નત (૨) શંખાવર્ત, અને (૩) વંશપત્રિકા જે યોનિ કાચબાની પીઠના સમાન ઉન્નત હોય છે, તે યોનિને કૂર્મોન્નત યોનિ કહે છે જે યોનિમાં શંખના જેવાં આવર્ત (વળાંક) હોય છે તે યોનિને શંખાવર્ત યોનિ કહે છે વંશજાળીના પત્રના જેવી જે યોનિ હોય છે, તે યોનિને વંશપત્રિકા યોનિ કહે છે આ યોનિઓ

'संखावत्ताएणं' इत्यादि । शङ्खावर्त्तायां योनौ बहवो जीवा पुद्गलाश्च व्युत्क्रामन्ति-आगच्छन्ति, तथा-व्यवक्रामन्ति-विनश्यन्ति । च्यवन्ते-तद्योनितो योन्यन्तरं गच्छन्ति, उत्पद्यन्ते-योन्यन्तरे समुत्पद्यन्ते, किन्तु नो चैव-नैव निष्पद्यन्ते-तत्रोत्पन्ना जीवाः परिनिष्ठिता न भवन्तीत्यर्थः । वंशीपत्रिका योनिः पृथग्जनस्य सामान्यजनस्य भवति । वंशीपत्रिकायां योनौ बहवः पृथग्जनाः-सामान्यजना गर्भे व्युत्क्रामन्ति-प्राप्नुवन्ति गर्भे उत्पद्यन्त इत्यर्थः ॥ सू० १९ ॥

अनन्तरं योनिप्ररूपणतो मनुष्याः प्ररूपिताः, अधुना मनुष्यस्य सधर्मिणो बादरवनस्पतिकायिकान् प्ररूपयति—

मूलम्-तिविहा तणवणस्सइकाइया पण्णत्ता, तं जहा-संखेज्ज जीवया, असंखेज्जजीवया, अणंतजीवया ॥ सू० २० ॥

छाया—त्रिविधा तृणवनस्पतिकायिकाः प्रज्ञप्ताः, तद्यथा संख्येयजीवकाः, असंख्येयजीवकाः, अनन्तजीवकाः ॥ सू० २० ॥

वह वंशपत्रिका योनि है, ये योनियां किन २ को होती है यह सब मूलार्थ में लिख दिया गया है । टीका के ही अनुसार स्त्रीरत्न के शंखावर्त योनि होती है, स्त्रीरत्न यह पंचेन्द्रिय रत्न विशेष है, इस रत्नके स्पर्श मात्र से लोहनिर्मित पुरुष भी गल जाता है-द्रवित हो जाता है, क्यों कि यह उत्कृष्ट एवं अतिशयित काम के विकार से जनित प्रबल उष्णताप विशेषवाला होता है " न निष्पद्यन्ते "का तात्पर्य ऐसा होता है कि वहां उत्पन्न हुए जीव परिनिष्ठित (जीते) नहीं होते है। वंशी पत्रिका योनिमें सामान्य जन जन्म धारण करता है ॥ सू०१९ ॥

योनि की प्ररूपणा से मनुष्यों का प्ररूपण हो जाता है अब मनुष्यके सधर्मी बादर वनस्पतिकायिकों की सूत्रकार प्ररूपणा करते हैं—

કયા જીવોને હોય છે તે મૂલાર્થમાં બતાવવામાં આવેલ છે ત્યાં લખ્યા અનુસાર સ્ત્રીરત્નને શખાવર્ત યોનિ હોય છે. સ્ત્રીરત્ન એ પંચેન્દ્રિય રત્નવિશેષ છે આ રત્નના સ્પર્શ માત્રથી લોહનિર્મિત પુરુષ પણ દ્રવી (પીગળી) જાય છે, કારણ કે તે ઉત્કૃષ્ટ અને અતિશાયિત કામના વિકારથી જનિત પ્રબળ ઉષ્ણુતાપ વિશેષણુવાળો હોય છે " નનિષ્પદ્યન્તે " આ પદનો ભાવાર્થ એ છે કે ત્યા ઉત્પન્ન થયેલા જીવો પરિનિષ્ઠિત (જીવિત) રહેતા નથી. વંશપત્રિકા યોનિમાં સામાન્યજન જન્મ ધારણુ કરે છે. ॥ સૂ. ૧૯ ॥

યોનિની પ્રરૂપણા દ્વારા મનુષ્યની પ્રરૂપણા થઈ જાય છે હવે મનુષ્યના સધર્મી બાદર વનસ્પતિકાયિકોની સૂત્રકાર પ્રરૂપણા કરે છે—

" एगिदिय नेरइया, संवुडजोणी हवंति देवा य ।
विगलिंदियाण वियडा, संवुडवियडा य गब्भमि ॥ १ ॥ " इति ।

छाया— एकेन्द्रियनैरयिकाः संवृतयोनिका भवन्ति देवाश्च ।
विकलेन्द्रियाणां विकटा, संवृत-विवृता च गर्भे ॥ १ ॥ इति ।

पुनरपि योनिशैविध्यमाह— ' तिविहा ' इत्यादि । त्रिविधायोनिस्तथाहि- कूर्मोन्नता, शङ्खावर्ता, वंशीपत्रिका चेति । तत्र कूर्मः-कच्छपः, तद्वत्-तत्पृष्ठवद् उन्नता कूर्मोन्नता । शङ्खस्येवावर्तो यस्यां सा शङ्खावर्ता । वंशया -वंशजाल्याः पत्रकमिव या सा वंशी पत्रिका । कूर्मोन्नता योनि कासां स्त्रीणां भवतीत्याह— ' कुम्मुन्नया ' इत्यादि, कूर्मोन्नता योनिरुत्तमपुरुषमातॄणां भवति । तदेव स्पष्टयति —' कुम्मुन्नयाए ण ' इत्यादि, कूर्मोन्नतायां योनौ त्रिविधा उत्तमपुरुषा गर्भं व्युत्क्रामन्ति-प्राप्नुवन्ति गर्भे उत्पद्यन्त इत्यर्थः । तद्यथा-उत्तमपुरुषा यथा अर्हन्तः, चक्रवर्तिन, बलदेववासुदेवाः । एतयोर्बलदेववासुदेवयो सहचरत्वादेकत्वविवक्षणम् । शङ्खावर्ता योनि स्त्रीरत्नस्य भवति । स्त्रीरत्नं-चक्रेन्द्रियरत्नविशेष', यस्य स्पर्शमात्रेण कोऽनिर्मितपुरुषो गलति द्रवितो भवति, उत्कृष्टातिशयितकामविकार जनितमदकोष्मतापविशेषत्वादस्येति । अत एवास्यां जीवा न निष्पद्यन्त इत्याह—

वह विवृत्त योनि है, और जो दोनों प्रकारकी होती है वह मिश्र योनि है । अर्थात् कुछ ढकी होती है और कुछ खुली होती है वह संवृत्त विवृत्त योनि है । कौन योनि किनको होती है । यही इस गाथा द्वारा प्रकट किया गया है—" एगिंदिय नेरइया संवुडजोणी " इत्यादि ।

इस प्रकार से भी योनि तीन प्रकार की होती है-कूर्मोन्नत, शङ्खावर्त, और वंशपत्रिका जो योनि कूर्म-कच्छप के पृष्ठ की तरह उन्नत होती है वह कूर्मोन्नत योनि है, जिसमें शङ्खकी तरह आवर्त होते हैं वह शंखावर्त योनि है, वंशजाली के पत्रकी तरह जो योनि होती है

ખુલ્લી રહે છે તે યોનિને વિવૃત યોનિ કહે છે. થોડે અંશે ઢંકાયેલી અને થોડે અંશે ખુલ્લી હોય એવી યોનિને સંવૃતવિવૃત (મિશ્ર) યોનિ કહે છે. કયા જીવને કયા પ્રકારની યોનિ હોય છે તે નીચેની ગાથામાં સમજાવ્યું છે

' एगिंदिय नेरइया संवुडजोणी ' इत्यादि—

યોનિના આ પ્રમાણે પણ ત્રણ પ્રકાર પડે છે (૧) કૂર્મોન્નત, (૨) શંખાવર્ત, અને (૩) વંશપત્રિકા જે યોનિ કાચબાની પીઠના સમાન ઉન્નત હોય છે, તે યોનિને કૂર્મોન્નત યોનિ કહે છે જે યોનિમાં શંખના જેવાં આવર્ત (વાંકો) હોય છે તે યોનિને શંખાવર્ત યોનિ કહે છે વંશજાલીના પત્રના જેવી જે યોનિ હોય છે, તે યોનિને વંશપત્રિકા યોનિ કહે છે આ યોનિઓ

दीवे महाविदेहे वासे एगमेगे चक्कवट्टिविजये तओ तित्था पण्ण-त्ता, तं जहा-मागहे, वरदामे, पभासे ३। एवं धायइसंडे दीवे पुरत्थिमद्धेवि ६, पच्चत्थिमद्धे वि ९, पुक्खरवरदीवद्धे पुरत्थि-मद्धे वि १२, पच्चत्थिमद्धे वि १५ ॥ सू० २१ ॥

छाया—जम्बूद्वीपे द्वीपे भारते वर्षे त्रीणि तीर्थानि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा मागधं, वरदाम, प्रभासम् १। एवमैरवतेऽपि २। जम्बूद्वीपे द्वीपे महाविदेहे वर्षे एकैकस्मिन् चक्रवर्त्तिविजये त्रीणि तीर्थानि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा-मागधं, वरदाम, प्रभासम् ३। एवं धातकीखण्डे द्वीपे पौरस्त्यार्द्धेऽपि ६, पाश्चात्यार्द्धेऽपि ९, पुष्करवरद्वीपार्द्धे पौरस्त्यार्द्धेऽपि १२, पाश्चात्यार्द्धेऽपि १५ ॥ सू० २१ ॥

टीका-'जंबुद्दीवे' इत्यादि पञ्चदशसूत्री सुगमा, नवरं-तीर्थानि जलतीर्थानि। तानि जम्बूद्वीपस्य भारते वर्षे भरतक्षेत्रे पूर्वादिक्रमेण स्वनामख्यातानि त्रीणि

पञ्चदशसूत्री का कथन करते हैं—'जंबूद्दीवे दीवे भारहे वासे' इत्यादि

सूत्रार्थ-जम्बूद्वीप नामके द्वीपमें स्थित भरतक्षेत्रमें तीन तीर्थ कहे गये हैं जैसे-मागध १, वरदाम २, प्रभास ३, इसी तरह से ऐरवत क्षेत्र में भी तीन तीर्थ कहे गये हैं, इसी तरह से जम्बूद्वीप में स्थित जो महा-विदेह क्षेत्र है उसमें एक चक्रवर्ति के विजय में तीन तीर्थ कहे गये हैं -जैसे मागध, वरदाम और प्रभास इसी तरह से धातकी खण्डद्वीप में पूर्वार्ध में भी ३, पश्चिमार्ध में भी ३, पुष्कर वर द्वीपार्ध में पूर्वार्ध में भी ३ और पश्चिमार्ध में भी ३ हैं ऐसा समझना चाहिये।

टीकार्थ-यहां तीर्थशब्दसे जलतीर्थ कहे गये हैं ये जलतीर्थ जम्बूद्वीपके

સૂત્રોનું કથન કરે છે-" जंबूद्दीवे दीवे भारहे वासे " ઇત્યાદિ—

સૂત્રાર્થ-જબૂદ્રીપ નામના દ્વીપમાં આવેલા ભરતક્ષેત્રમાં નીચે પ્રમાણે ત્રણ તીર્થ કહ્યાં છે-(૧) મગધ, (૨) વરદામ અને (૩) પ્રભાસ. એજ પ્રમાણે ઐરવત ક્ષેત્રમાં પણ ત્રણ તીર્થ કહ્યાં છે. એજ પ્રમાણે જબૂદ્વીપમાં આવેલા મહા-વિદેહ ક્ષેત્રના એક એક ચક્રવર્તીના વિજયમાં ત્રણ તીર્થ કહ્યાં છે, જેમકે માગધ, વરદામ અને પ્રભાસ. એજ પ્રમાણે ધાતકીખંડ દ્વીપના પૂર્વાર્ધમાં પણ ત્રણ અને પશ્ચિમાર્ધમાં પણ ત્રણ તીર્થો છે એ જ પ્રમાણે પુષ્કરવર દ્વીપાર્ધના પૂર્વાર્ધમાં પણ ત્રણ અને પશ્ચિમાર્ધમા પણ ત્રણ તીર્થો છે

ટીકાર્થ-અહીં તીર્થ શબ્દનો જલતીર્થના અર્થમાં પ્રયોગ થયો છે. જંબૂદ્વીપના

टीका—'तिविहा तण०' इत्यादि। तृणवनस्पतिकायिकाः बादरवनस्पतय इत्यर्थः। ते त्रिविधाः, तथाहि—संख्याता जीवा येषु ते संख्यातजीवाः, त एव संख्यातजीवकाः—नालिकाबद्धकुसुमानि जात्यादीनि १। असंख्यातजीवकाः—निम्बाम्रादीनां मूलकन्दस्कन्धत्वक्शाखाप्रवालाः २। अनन्तजीवकाः—पनकादय इति। एषां विशेषवर्णनं प्रज्ञापनासूत्रस्य प्रथमपदगतजीवप्रज्ञापनाप्रकरणतोऽवसेयम् ॥ सू० २० ॥

पूर्वं त्रिस्थानकावतारेण वनस्पतयो वर्णिताः, ते च जलाश्रया बहवो भवन्तीति सम्बन्धाज्जलाश्रयभूतानां तीर्थानां प्ररूपणाय पञ्चदशसूत्रीमाह—

मूलम्—जंबुद्दीवे दीवे भारहे वासे तओ तित्था पण्णत्ता तं जहा मागहे, वरदामे, पभासे १। एवं एरवए वि २। जंबुद्दीवे

"तिविहा तणवणस्सइकाइया पण्णत्ता" इत्यादि।

तृण वनस्पतिकायिक से तात्पर्य बादरवनस्पतिकायिक से है, बादर वनस्पतिकायिक जीव तीन प्रकार के होते हैं—जैसे—संख्यात जीवक—अर्थात् जिनमें संख्यात जीव होते हैं वे, तथा असंख्यात जीव जिनमें होते हैं वे असंख्यात जीवक—जैसे निम्ब आदिकों के मूल, कन्द स्कन्ध त्वक्, शाखाप्रवाल तथा अनन्त जीव जिनमें होते हैं वे अनन्त जीवक—जैसे—पनक फूलन आदि इनका विशेष वर्णन प्रज्ञापना सूत्रके प्रथम पद जीव प्रज्ञापना प्रकरण से जानना चाहिये ॥ सू०२०॥

तीन स्थानों के प्रकरण से वनस्पति का वर्णन किया, वनस्पतिकायिक जीव अधिकतर रूपमें जलाश्रयवाले होते हैं अतः इसी सम्बन्धको लेकर अब सूत्रकार जलाश्रयभूत तीर्थों की प्ररूपणा करने के लिये

तिविहा तणवणस्सइकाइया पण्णत्ता' ઇત્યાદિ—

બાદર વનસ્પતિકાયિકને તૃણ વનસ્પતિકાયિક કહે છે. તે બાદર વનસ્પતિકાયિક જીવ ત્રણ પ્રકારના હોય છે—(૧) સંખ્યાત જીવક—જેમાં સંખ્યાત જીવો હોય છે તે, (૨) અસંખ્યાત જીવક—જેમાં અસંખ્યાત જીવો હોય છે તે જેમકે લીમડા આદિના મૂળ, કન્દ, સ્કન્ધ છાલ શાખા અને કુંપળ (૩) અનંત જીવક—જેમાં અનંત જીવો હોય છે તેને અનંત જીવક કહે છે જેમકે પનક ફૂગ આદિ આ વિષયનું વિસ્તૃત વર્ણન પ્રજ્ઞાપના સૂત્રના જીવપ્રજ્ઞાપના નામના પહેલા પદમાંથી વાંચી લેવું. ॥ સૂ. ૨૦ ॥

ત્રણ સ્થાનોના અધિકારની અપેક્ષાએ વનસ્પતિનું વર્ણન કરવામાં આવ્યું વનસ્પતિકાયિક જીવો ખાસ કરીને જલાશ્રયવાળા હોય છે. આ સંબંધને અનુલક્ષીને હવે સૂત્રકાર જલાશ્રયભૂત તીર્થોની પ્રરૂપણા કરવા નિમિત્તે ૧૫

दीवे महाविदेहे वासे एगमेगे चक्कवट्टिविजये तओ तित्था पण्ण-त्ता, तं जहा-मागहे, वरदामे, पभासे ३। एवं धायइसंडे दीवे पुरत्थिमद्धेवि ६, पच्चत्थिमद्धे वि ९, पुक्खरवरदीवद्धे पुरत्थि-मद्धे वि १२, पच्चत्थिमद्धे वि १५ ॥ सू० २१ ॥

छाया—जम्बूद्वीपे द्वीपे भारते वर्षे त्रीणि तीर्थानि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा मागधं, वरदाम, प्रभासम् १। एवमैरवतेऽपि २। जम्बूद्वीपे द्वीपे महाविदेहे वर्षे एकैकस्मिन् चक्रवर्त्तिविजये त्रीणि तीर्थानि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा-मागधं, वरदाम, प्रभासम् ३। एवं धातकीखण्डे द्वीपे पौरस्त्यार्द्धेऽपि ६, पाश्चात्यार्द्धेऽपि ९, पुष्कर-वरद्वीपार्द्धे पौरस्त्यार्द्धेऽपि १२, पाश्चात्यार्द्धेऽपि १५ ॥ सू० २१ ॥

टीका-'जंबुद्दीवे' इत्यादि पञ्चदशसूत्री सुगमा, नवरं-तीर्थानि जलतीर्थानि। तानि जम्बूद्वीपस्य भारते वर्षे भरतक्षेत्रे पूर्वादिक्रमेण स्वनामख्यातानि त्रीणि

पञ्चदशसूत्री का कथन करते हैं—'जंबूदीवे दीवे भारहे वासे' इत्यादि

सूत्रार्थ-जम्बूद्वीप नामके द्वीपमें स्थित भरतक्षेत्रमें तीन तीर्थ कहे गये हैं जैसे-मागध १, वरदाम २, प्रभास ३, इसी तरह से ऐरवत क्षेत्र में भी तीन तीर्थ कहे गये हैं, इसी तरह से जम्बूद्वीप में स्थित जो महा-विदेह क्षेत्र है उसमें एक चक्रवर्ति के विजय में तीन तीर्थ कहे गये हैं -जैसे मागध, वरदाम और प्रभास इसी तरह से धातकी खण्डद्वीप में पूर्वार्ध में भी ३, पश्चिमार्ध में भी ३, पुष्कर वर द्वीपार्ध में पूर्वार्ध में भी ३ और पश्चिमार्ध में भी ३ हैं ऐसा समझना चाहिये।

टीकार्थ-यहां तीर्थशब्दसे जलतीर्थ कहे गये हैं ये जलतीर्थ जम्बूद्वीपके

સૂત્રોનું કથન કરે છે-" जंबूद्दीवे दीवे भारहे वासे " ઇત્યાદિ—

સૂત્રાર્થ-જ બૂદ્વીપ નામના દ્વીપમાં આવેલા ભરતક્ષેત્રમાં નીચે પ્રમાણે ત્રણ તીર્થ કહ્યાં છે-(૧) મગધ, (૨) વરદામ અને (૩) પ્રભાસ. એજ પ્રમાણે ઐરવત ક્ષેત્રમાં પણ ત્રણ તીર્થ કહ્યાં છે. એજ પ્રમાણે જ બૂદ્વીપમા આવેલા મહા-વિદેહ ક્ષેત્રના એક એક ચક્રવર્તીના વિજયમા ત્રણ તીર્થ કહ્યાં છે, જેમકે માગધ, વરદામ અને પ્રભાસ. એજ પ્રમાણે ધાતકીખ'ડ દ્વીપના પૂર્વાર્ધમાં પણ ત્રણ અને પશ્ચિમાર્ધમાં પણ ત્રણ તીર્થો છે એ જ પ્રમાણે પુષ્કરવર દ્વીપાર્ધના પૂર્વાર્ધમા પણ ત્રણ અને પશ્ચિમાર્ધમા પણ ત્રણ તીર્થો છે

ટીકાર્થ-અહી તીર્થ શબ્દનો જલતીર્થના અર્થમાં પ્રયોગ થયો છે. જ'બૂદ્વીપના

पर्यन्ते । तथाहि-मागधम् १, वरदाम २, प्रभासम् ३। एवम् ऐरवतेऽपि त्रीणि तीर्थानि सन्ति । एवं जम्बूद्वीपे महाविदेहे वर्षे चक्रवर्तिनामेकैकस्मिन् विजये एतन्नामान्येव त्रीणि तीर्थानि सन्ति । अत्राय विशेषः-विजयक्षेत्रेषु क्षेत्रमध्यभागेषु वर्षन्ते । तीर्थानि चक्रवर्तिन शीतादि महानदयवतरणरूपाणि तन्नामकदेव निवासभूतानि १५ । पञ्चदशसूत्राणि चेत्थम्-जम्बूद्वीपस्य भरतैरवतमहाविदेहचक्रवर्ति विजयविषयाणि त्रीणि सूत्राणि ३। एवं धातकीखण्डस्य पूर्वार्द्धे भरतैरवतमहाविदेहचक्रवर्तिविजयविषयं सूत्रत्रयम् ६ पश्चिमार्द्धेऽप्येवमेव सूत्रत्रयमिति नव सूत्राणि ९। तथा-पुष्करवरद्वीपार्द्धस्यापि पूर्वार्द्ध विषयाणि त्रीणि पश्चिमार्द्ध विषयाणि च त्रीणीत्येवं षट् सूत्राणि । एवं सर्वसङ्कलनया पञ्चदश सूत्राणि भवन्ति १५ ॥ सू० २१ ॥

भरतक्षेत्र में पूर्वादिक्रम से अपने २ नाम से प्रसिद्ध तीन हैं। इसी तरह से ऐरवतक्षेत्र में भी तीन क्षेत्र हैं महाविदेह में भी चक्रवर्तियों के एक २ विजय में इन्हीं नामवाले तीन तीर्थक्षेत्र हैं। विजयक्षेत्र से यहां क्षेत्र का मध्यभाग गृहीत हुआ है इस तरह विजयक्षेत्रों में-क्षेत्र के मध्य भागों में ये तीर्थक्षेत्र हैं ये चक्रवर्ती के तीर्थक्षेत्र शीता आदि महान दियों के अवतरण रूप होते हैं और जैसा-तीर्थों का नाम है उसी नाम के देव वहां रहते हैं।

पंचमदशसूत्र यहां इस प्रकार से हैं—जम्बूद्वीप के भरत, ऐरवत, महाविदेह और चक्रवर्ति विजय इनके तीन सूत्र, धातकीखण्ड के पूर्वार्ध में भरत ऐरवत, महाविदेह और चक्रवर्ति विजय इनके तीनसूत्र, पश्चिमार्ध में भी इसी तरह से तीनसूत्र, पुष्करवरद्वीपार्ध के भी

ભરત ક્ષેત્રમાં મગધ આદિ પૂર્વોક્ત નામવાળાં ત્રણ જલતીર્થો છે એજ પ્રમાણે એરવત ક્ષેત્રમાં પણ ત્રણ જલતીર્થો છે મહાવિદેહમાં પણ ચક્રવર્તિઓના એક એક વિજયમાં એજ નામવાળાં ત્રણ તીર્થક્ષેત્રો છે વિજયક્ષેત્ર એટલે ક્ષેત્રનો મધ્ય ભાગ અહીં ગ્રહણ કરાયો છે આ રીતે વિજયક્ષેત્રોમાં-ક્ષેત્રના મધ્ય ભાગોમાં તે ત્રણ તીર્થક્ષેત્રો છે તે ચક્રવર્તીના તીર્થક્ષેત્ર શીતા આદિ મહાનદીઓના અવતરણરૂપ હોય છે અને એવાં તીર્થોનાં નામ છે, એજ નામનાં દેવો ત્યાં રહે છે

અહીં ૧૫ સૂત્ર આ પ્રમાણે છે-જમ્બૂદ્વીપના ભરત, ઐરવત મહાવિદેહ અને ચક્રવર્તિ વિજયના ત્રણ સૂત્રો, ધાતકીખંડના પૂર્વાર્ધમાં આવેલા ભરત, ઐરવત મહાવિદેહ અને ચક્રવર્તિ વિજયના ત્રણ સૂત્રો, પશ્ચિમાર્ધમાં પણ એજ પ્રમાણે ત્રણ સૂત્રો, પુષ્કરવર દ્વીપાર્ધના પૂર્વાર્ધમાં આવેલા ભરતાદિના

जम्बूद्वीपादौ मनुष्यक्षेत्रे तीर्थानि प्ररूपितानि, सम्प्रति तत्रैव त्रिस्थानोपयोगिनं कालं सूत्रपञ्चदशकेन, तथा कालधर्मांश्च सूत्रद्वात्रिंशकेनाह—

मूलम्--जंबुद्दीवे दीवे भरहेरवएसु वासेसु तीयाए उस्सप्पिणीए सुसमाए समाए तिन्नि सागरोवमकोडाकोडीओ कालो होत्था १। एवं ओसप्पिणीए, नवरं पण्णत्ते २, आगमिस्साए उस्सप्पिणीए भविस्सइ ३। एवं धायइसंडे पुरत्थिमद्धे ६। पच्चत्थिमद्धे वि ९। एवं पुक्खरवरदीवद्धे, पुरत्थिमद्धे पच्चत्थिमद्धे वि ३ कालो भाणियव्वो १५।

जंबुद्दीवे दीवे भरहेरवएसु वासेसु तीयाए उस्सप्पिणीए सुसमसुसमाए समाए मणुया तिण्णि गाउयाइं उड्ढं उच्चत्तेणं तिन्नि पलिओवमाइं परमाउं पालइत्था८। एवं इमीसे ओसप्पिणीए २, आगमिस्साए उस्सप्पिणीए ३। जंबुद्दीवे दीवे देवकुरु उत्तरकुरासु मणुया तिण्णि गाउयाइं उड्ढं उच्चत्तेणं, तिन्नि पलिओवमाइं परमाउं पालयंति ४। एवं जाव पुक्खरवरदीवद्धपच्चत्थिमद्धे २०। जंबुद्दीवे दीवे भरहेरवएसु वासेसु एगमेगाए ओसप्पिणी उस्सप्पिणीए तओ वंसा उप्पज्जिंसु वा उप्पज्जंति वा उप्पज्जिस्संति वा, तं जहा-अरहंतवंसे, चक्कवट्टिवंसे, दसारवंसे २८। एवं जाव पुक्खरवरदीवद्ध पच्चत्थिमद्धे २५, जंबुद्दीवे दीवे भरहेरवएसु वासेसु एगमेगाए ओसप्पिणी

पूर्वार्ध में भरतादिकों के तीन सूत्र और पश्चिमार्ध में भी भरतादिकों के तीन सूत्र इस प्रकारसे ये सब मिलकर १५ सूत्र होते हैं ॥ सू२१ ॥

त्रणु सूत्रो अने पश्चिमार्धमा आवेला भरतादिकोना त्रणु सूत्रो आ रीते अधां भळीने १५ सूत्रो थई जाय छे. ॥ सू. २१ ॥

वर्तन्ते । तथाहि-मागधम् १, वरदाम २, प्रभासम् ३। एवम् ऐरवतेऽपि त्रीणि तीर्थानि सन्ति । एव जम्बूद्वीपे महाविदेहे सर्वे चक्रवर्तिनामेकैकस्मिन् विजये एतन्नामा येव त्रीणि तीर्थानि सन्ति । अत्राय विशेष—विजयक्षेत्रेषु क्षेत्रमध्यमा गेषु वर्तन्ते । तीर्थानि चक्रवर्तिन शीतादि महानद्यवतरणरूपाणि तन्नामकदेव निवासभूतानि १५ । पञ्चदशसूत्राणि चेत्यम्-जम्बूद्वीपस्य भरतैरवतमहाविदेहचक्र वर्ति विजयविषयाणि त्रीणि सूत्राणि ३। एव धातकीखण्डस्य पूर्वार्द्धे भरतैरवतम हाविदेहचक्रवर्तिविजयविषय सूत्रत्रयम् ३ पश्चिमार्द्धेऽप्येवमेव सूत्रत्रयमिति नव सूत्राणि ९। तथा-पुष्करवरद्वीपार्द्धस्यापि पूर्वार्द्ध विषयाणि त्रीणि पश्चिमार्द्ध वि षयाणि च त्रीणीत्येव षट् सूत्राणि । एव सकलनया पञ्चदश सूत्राणि भवन्ति १५ ॥ सू० २१ ॥

भरतक्षेत्र में पूर्वादिक्रम से अपने २ नाम से प्रसिद्ध तीन हैं। इसी तरह से ऐरवतक्षेत्र में भी तीन क्षेत्र हैं महाविदेह में भी चक्रवर्तियों के एक २ विजय में इन्हीं नामवाले तीन तीर्थक्षेत्र हैं। विजयक्षेत्र से यहां क्षेत्र का मध्यभाग गृहीत हुआ है इस तरह विजयक्षेत्रों में-क्षेत्र के मध्य भागों में ये तीर्थक्षेत्र हैं ये चक्रवर्ती के तीर्थक्षेत्र शीता आदि महान दियों के अवतरण रूप होते हैं और जैसा-तीर्थों का नाम है उसी नाम के देव वहां रहते हैं।

पञ्चदशसूत्र यहां इस प्रकार से हैं—जम्बूद्वीप के भरत, ऐरवत, महाविदेह और चक्रवर्ति विजय इनके तीन सूत्र, धातकीखण्ड के पूर्वार्ध में भरत ऐरवत, महाविदेह और चक्रवर्तिविजय इनके तीनसूत्र, पश्चिमार्ध में भी इसी तरह से तीनसूत्र, पुष्करवरद्वीपार्ध के भी

ભરત ક્ષેત્રમાં મગધ આદિ પૂર્વોક્ત નામવાળાં ત્રણ જાણવાં છે એજ પ્રમાણે ઐરવત ક્ષેત્રમાં પણ ત્રણ જાણવાં છે મહાવિદેહમાં પણ ચક્રવર્તિઓના એક એક વિજયમાં એજ નામવાળાં ત્રણ તીર્થક્ષેત્રો છે વિજયક્ષેત્ર એટલે ક્ષેત્રનો મધ્ય ભાગ અહીં ગ્રહણ કરાયો છે આ રીતે વિજયક્ષેત્રોમાં ક્ષેત્રના મધ્ય ભાગોમાં તે ત્રણ તીર્થક્ષેત્રો છે તે ચક્રવર્તીના તીર્થક્ષેત્ર શીતા આદિ મહાનદીઓના અવતરણરૂપ હોય છે અને જેવાં તીર્થોનાં નામ છે, એજ નામનાં દેવો ત્યાં રહે છે

અહીં ૧૫ સૂત્ર આ પ્રમાણે છે-જમ્બૂદ્વીપના ભરત, ઐરવત, મહાવિદેહ અને ચક્રવર્તિ વિજયના ત્રણ સૂત્રો ધાતકીખંડના પૂર્વાર્ધમાં આવેલા ભરત, ઐરવત મહાવિદેહ અને ચક્રવર્તિ વિજયના ત્રણ સૂત્રો પશ્ચિમાર્ધમાં પણ એજ પ્રમાણે ત્રણ સૂત્રો, પુષ્કરવર દ્વીપાર્ધના પૂર્વાર્ધમાં આવેલા ભરતાદિના

६। पाश्चात्यार्द्धेऽपि ९। एव पुष्करवरद्वीपार्द्धे पौरस्त्यार्द्धे पाश्चात्यार्द्धऽपि २ कालो भणितव्यः १५।

जम्बूद्वीपे द्वीपे भरतैरवतयोर्वर्षयोरतीतायामुत्सर्पिण्यां सुषम-सुषमायां समायां मनुजा त्रीणि गव्यूतानि ऊर्ध्वमुच्चत्वेन, त्रीणि पल्योपमानि परमायुरपालयन् १। एवमस्यामवसर्पिण्याम् २, आगमिष्यन्त्यामुत्सर्पिण्याम् ३। जम्बूद्वीपे द्वीपे

अतीत उत्सर्पिणी काल में सुषमा आरक में तीन सागरोपम कोडाकोडी प्रमाण काल था और वर्तमान अवसर्पिणी में भी सुषमा आरक में तीन सागरोपम कोडाकोडी प्रमाण काल है तथा आगामी उत्सर्पिणी में भी सुषमा आरक में तीन सागरोपम कोडाकोडी प्रमाण काल होगा "पच्चत्थिमद्धे वि" पश्चिमार्ध में भी ऐसा ही कथन जानना चाहिये "पुक्खरवरदीवद्धे पुरत्थिमद्धे ३ पच्चत्थिमद्धे वि ३ कालो भाणियव्वो" और ऐसा ही कथन पुष्करवरद्वीपार्ध के पूर्वार्ध में और पश्चिमार्ध में भी जानना चाहिये।

जम्बूद्वीप नामके द्वीपमें भरतक्षेत्र और ऐरवत क्षेत्र में अतीत उत्सर्पिणी में सुषमसुषमा नामके आरकमें मनुष्य तीन गव्यूतिप्रमाण ऊँचे शरीरवाले थे उनकी उत्कृष्ट आयु भी तीन पल्योपम की थी, इसी तरह से इस वर्तमान अवसर्पिणी में भी सुषमसुषमा नाम के आरक में भरतक्षेत्र और ऐरवत क्षेत्र में मनुष्य तीन गव्यूति प्रमाण शरीरवाले हुए हैं, तथा तीन पल्योपम की उनकी आयु हुई है, इसी प्रकारका कथन आगामी उत्सर्पिणी में भी जानना चाहिये।

ઉત્સર્પિણીકાળનો સુષમા આરો ત્રણ સાગરોપમ કોડાકોડી પ્રમાણ કાળનો જ હતો, ત્યાં વર્તમાન અવસર્પિણીમાં પણ સુષમા આરો ત્રણ સાગરોપમ કોડાકોડી પ્રમાણ કાળનો જ છે, તથા આગામી ઉત્સર્પિણીમા પણ ત્યા સુષમા આરો ત્રણ સાગરોપમ કોડાકોડી પ્રમાણ કાળનો જ હશે "पच्चत्थिमद्धे वि" ધાતકીખંડના પશ્ચિમાર્ધમા પણ પૂર્વાર્ધ પ્રમાણે જ કાળવિષયક કથન સમજવું

"पुक्खरवरदीवद्धे पुरत्थिमद्धे३ पचत्थिमद्धे वि३ कालो भाणियव्वो" એવું જ કથન પુષ્કરવરદ્વીપાર્ધના પૂર્વાર્ધમાં અને પશ્ચિમાર્ધમાં પણ સમજવું

જમ્બૂદ્વીપ નામના દ્વીપના ભરતક્ષેત્ર અને ઐરવત ક્ષેત્રમાં અતીત ઉત્સર્પિણીના સુષમસુષમા નામના આરામાં મનુષ્ય ત્રણ ગવ્યૂતિપ્રમાણ ઊંચા શરીરવાળા હતા. તેમનું ઉત્કૃષ્ટ આયુષ્ય પણ ત્રણ પલ્યોપમનું હતું એજ પ્રમાણે વર્તમાન અવસર્પિણીના સુષમસુષમા નામના આરામા પણ ભરતક્ષેત્ર અને ઐરવતક્ષેત્રના મનુષ્યો ત્રણ ગવ્યૂતિપ્રમાણ ઊંચા શરીરવાળા અને ત્રણ પલ્યોપમના આયુષ્ય-વાળા જ હોય છે, એ જ પ્ર:

उस्सप्पिणीए तओ उत्तमपुरिसा उप्पज्जिसु वा, उप्पज्जति वा, उप्पज्जिस्सति वा, त जहा–अरहता, चक्कवट्टी, बलदेववासुदेवा २९। एव जाव पुक्खरवरदीवड्ढपच्चत्थिमद्धे ३०। तओ अहाउय पालयति, त जहा–अरहता चक्कवट्टी बलदेव वासुदेवा ३१। तओ मज्झिममाउय पालयति, त जहा–अरहता, चक्कवट्टी, बलदेववासुदेवा ३२ ॥ सू० २२ ॥

छाया—जम्बूद्वीपे द्वीपे भरतैरवतयोर्वर्षयोरतीतायामुत्सर्पिण्यां सुषमायां समायां त्रयः सागरोपमकोटि कोटयः काल आसीत् १। एवमवसर्पिण्यां, नवर मन्नम्‌ः २। आगमिष्यन्त्यामुत्सर्पिण्यां भविष्यति ३। एव धातकीखण्डे पौरस्त्यार्द्धे

जबूद्वीप आदि मनुष्यक्षेत्र में तीर्थप्ररूपित किये जा चुके हैं अब सूत्रकार यहीं पर त्रिस्थानोपयोगी काल का कथन १५ सूत्रों से तथा कालधर्मों का कथन ३२ सूत्रों से करते हैं–(जबुद्दीवे दीवे भरहेरवएसु वासेसु) इत्यादि

सूत्रार्थ–जम्बूद्वीप नाम के द्वीप में स्थित भरतक्षेत्र और ऐरवतक्षेत्र में अतीत उत्सर्पिणी में सुषमा आरक में तीन सागरोपम कोडाकोडीप्रमाण काल था इसी तरह से वर्तमान अवसर्पिणी में सुषमा आरक में भी जानना चाहिये आगामी उत्सर्पिणी में भी भरतक्षेत्र और ऐरवत क्षेत्र में सुषमा आरक में तीन सागरोपम कोडाकोडी प्रमाण काल होगा "एवं धायइसडे पुरत्थिमद्धे" धातकीखण्ड में भी पूर्वार्द्ध भाग में

જબૂદ્વીપ આદિ મનુષ્યક્ષેત્રમાં આવેલાં તીર્થોની પ્રરૂપણા પૂરી થઇ હવે સૂત્રકાર ત્યાંના ત્રિસ્થાનોપયોગી કાળનું ૧૫ સૂત્રો દ્વારા અને કાળધર્મોનું ૩૨ સૂત્રો દ્વારા કથન કરે છે- 'જંબૂદ્દીવે દીવે ભરહેરવએસુ વાસેસુ' ઇત્યાદિ—

સૂત્રાર્થ–જબૂદ્વીપ નામના દ્વીપના ભરતક્ષેત્ર અને ઐરવત ક્ષેત્રમાં અતીત (વ્યતીત થઇ ચુકેલો) ઉત્સર્પિણીનો સુષમા આરો ત્રણ સાગરોપમ કોડાકોડી પ્રમાણ કાળનો હતો એજ પ્રમાણે વર્તમાન અવસર્પિણીના સુષમા આરાના કાળ વિષે પણ સમજવું આગામિ (ભવિષ્યના) ઉત્સર્પિણીમાં પણ ભરતક્ષેત્ર અને ઐરવત ક્ષેત્રનો સુષમા આરો ત્રણ સાગરોપમ કોડાકોડી પ્રમાણ કાળનો જ હશે. "एव धायइसंडे पुरत्थिमद्धे" ધાતકીખંડના પૂર્વાર્ધ ભાગમાં પણ અતીત

६। पाश्चात्यार्द्धेऽपि ९। एव पुष्करवरद्वीपार्द्धे पौरस्त्यार्द्धे पाश्चात्यार्द्धेऽपि २ कालो भणितव्यः १५।

जम्बूद्वीपे द्वीपे भरतैरवतयोर्वर्षयोरतीतायामुत्सर्पिण्यां सुषम-सुषमायां समायां मनुजा त्रीणि गव्यूतानि ऊर्ध्वमुच्चत्वेन, त्रीणि पल्योपमानि परमायुरपालयन् १। एवमस्यामवसर्पिण्याम् २, आगमिष्यन्त्यामुत्सर्पिण्याम् ३। जम्बूद्वीपे द्वीपे

अतीत उत्सर्पिणी काल में सुषमा आरक में तीन सागरोपम कोडाकोडी प्रमाण काल था और वर्तमान अवसर्पिणी में भी सुषमा आरक में तीन सागरोपम कोडाकोडी प्रमाण काल है तथा आगामी उत्सर्पिणी में भी सुषमा आरक में तीन सागरोपम कोडाकोडी प्रमाण काल होगा "पच्चत्थिमद्धे वि" पश्चिमार्ध में भी ऐसा ही कथन जानना चाहिये "पुक्खरवरदीवद्धे पुरत्थिमद्धे ३ पच्चत्थिमद्धे वि ३ कालो भाणियव्वो" और ऐसा ही कथन पुष्करवरद्वीपार्ध के पूर्वार्ध में और पश्चिमार्ध में भी जानना चाहिये।

जम्बूद्वीप नामके द्वीपमें भरतक्षेत्र और ऐरवत क्षेत्र में अतीत उत्सर्पिणी में सुषमसुषमा नामके आरकमें मनुष्य तीन गव्यूतिप्रमाण ऊँचे शरीरवाले थे उनकी उत्कृष्ट आयु भी तीन पल्योपम की थी, इसी तरह से इस वर्तमान अवसर्पिणी में भी सुषमसुषमा नाम के आरक में भरतक्षेत्र और ऐरवत क्षेत्र में मनुष्य तीन गव्यूति प्रमाण शरीरवाले हुए हैं, तथा तीन पल्योपम की उनकी आयु हुई है, इसी प्रकारका कथन आगामी उत्सर्पिणी में भी जानना चाहिये।

ઉત્સર્પિણીકાળનો સુષમા આરો ત્રણ સાગરોપમ કોડાકોડી પ્રમાણ કાળનો જ હતો, ત્યા વર્તમાન અવસર્પિણીમાં પણ સુષમા આરો ત્રણ સાગરોપમ કોડાકોડી પ્રમાણ કાળનો જ છે, તથા આગામી ઉત્સર્પિણીમા પણ ત્યા સુષમા આરો ત્રણ સાગરોપમ કોડાકોડી પ્રમાણ કાળનો જ હશે "पच्चत्थिमद्धे वि" ધાતકીખંડના પશ્ચિમાર્ધમા પણ પૂર્વાર્ધ પ્રમાણે જ કાળવિષયક કથન સમજવું.

"पुक्खरवरदीवद्धे पुरत्थिमद्धे३ पचत्थिमद्धे वि३ कालो भाणियव्वो" એવું જ કથન પુષ્કરવરદ્વીપાર્ધના પૂર્વાર્ધમાં અને પશ્ચિમાર્ધમાં પણ સમજવુ

જબૂદ્વીપ નામના દ્વીપના ભરતક્ષેત્ર અને ઐરવત ક્ષેત્રમાં અતીત ઉત્સર્પિણીના સુષમસુષમા નામના આરામા મનુષ્ય ત્રણ ગવ્યૂતિપ્રમાણ ઊંચા શરીરવાળા હતા. તેમનું ઉત્કૃષ્ટ આયુષ્ય પણ ત્રણ પલ્યોપમનુ હતુ એજ પ્રમાણે વર્તમાન અવસર્પિણીના સુષમસુષમા નામના આરામાં પણ ભરતક્ષેત્ર અને ઐરવતક્ષેત્રના મનુષ્યો ત્રણ ગવ્યૂતિપ્રમાણ ઊંચા શરીરવાળા અને ત્રણ પલ્યોપમના આયુષ્યવાળા જ હોય છે, એજ પ્રકારનુ કથન આગામી ઉત્સર્પિણીમાં પણ સમજવ

देवकुरूत्तरकुरुषु मनुष्यास्त्रीणि गव्यूतानि ऊर्ध्वमुच्चत्वेन, त्रीणि पल्योपमानि परमायु पालयन्ति ४। एवं यावत् पुष्करवरद्वीपार्द्धपाश्चात्यार्द्धे २०। जम्बूद्वीपे द्वीपे भरतैरवतयोरेकैकस्यामवसर्पिण्युत्सर्पिण्यां त्रयो वंशा उदपद्यन्त वा, उत्पद्यन्ते वा, उत्पत्स्यन्ते वा, तद्यथा-अर्हद्वंश, चक्रवर्तिवंश, दशारवंश २१। एवं यावत् पुष्करवरद्वीपार्द्धपाश्चात्यार्द्धे २८। जम्बूद्वीपे द्वीपे भरतैरवतवार्षयोरेकैकस्याम वसर्पिण्युत्सर्पिण्यां त्रय उत्तमपुरुषा उदपद्यन्त वा उत्पद्यन्ते वा उत्पत्स्यन्ते वा तद्यथा —अर्हन्त, चक्रवर्तिनः, बलदेववासुदेवाः २९। एवं यावत् पुष्करवरद्वीपार्द्धपा

जम्बूद्वीप नामके द्वीपमें जो देवकुरु और उत्तरकुरु हैं उनमें रहने वाले मनुष्य तीन गव्यूति प्रमाण ऊँचे शरीरवाले होते हैं, उनकी आयु तीन पल्योपम की होती है, इसी तरह से यावत् पुष्करवरद्वीपार्ध के पश्चिमार्द्ध में भी कथन जानना चाहिये, इस जम्बूद्वीप नाम के द्वीप में भरत और ऐरवत क्षेत्र में एक अवसर्पिणी में और एक उत्सर्पिणी में तीन वंश उत्पन्न हुए हैं होते हैं, आगे भी उत्पन्न होंगे। जैसे-अर्हद्वंश चक्रवर्ति वंश और दशारवंश, इसी तरह का कथन यावत् पुष्करवर द्वीपार्ध के पश्चिमार्द्ध में भी जानना चाहिये।

जम्बूद्वीप नामके द्वीपमे एक २ अवसर्पिणी और उत्सर्पिणी मे तीन उत्तम पुरुष उत्पन्न हुए हैं, उत्पन्न होते हैं और आगे उत्पन्न होंगे जैसे अर्हन्त चक्रवर्ती और बल्देव वासुदेव, इसी तरहका कथन यावत् पुष्करवरद्वीपार्द्ध के पश्चिमार्द्ध मे जानना चाहिये। ये तीन अपनी

જમ્બૂદ્વીપ નામના દ્વીપમાં જે દેવકુરુ અને ઉત્તરકુરુ નામનાં ક્ષેત્રો છે તેમાં રહેતા મનુષ્યો ત્રણ ગવ્યુતિપ્રમાણ ઊંચા શરીરવાળા હોય છે અને તેમનું આયુષ્ય ત્રણ પલ્યોપમનું હોય છે એજ પ્રમાણે પુષ્કરવર દ્વીપાર્ધના પશ્ચિમાર્ધ પર્યન્તના દ્વીપોના ક્ષેત્રોમાં વસતા મનુષ્યોની ઉંચાઇ અને આયુષ્યનું કથન પણ સમજવું આ જમ્બૂદ્વીપના ભરત અને ઐરવત ક્ષેત્રમા એક અવસર્પિણીમાં અને એક ઉત્સર્પિણીમાં ત્રણ વંશ ઉત્પન્ન થયા હતા થાય છે અને ભવિષ્યમાં પણ ઉત્પન્ન થશે. જેમકે અર્હંત વંશ, ચક્રવર્તિ વંશ અને દશાર વંશ (વાસુદેવ) એજ પ્રકારનું કથન પુષ્કરવર દ્વીપાર્ધના પશ્ચિમાર્ધ પર્યન્તના દ્વીપવર્તી ક્ષેત્રો વિષે પણ સમજવું

જમ્બૂદ્વીપ નામના દ્વીપમાં એક એક ઉત્સર્પિણી અને અવસર્પિણીમાં ત્રણ ઉત્તમ પુરુષ ઉત્પન્ન થયા હતા, થાય છે અને ભવિષ્યમાં પણ થશે. જેમકે અર્હંત ચક્રવર્તી અને બળદેવ વાસુદેવ એજ પ્રકારનું કથન પુષ્કરવર દ્વીપાર્ધના પશ્ચિમાર્ધ પર્યન્તના દ્વીપો વિષે પણ સમજવું, આ ત્રણ પોતાના

श्चात्याद्धे ३० । त्रयो यथायुष्कं पालयन्ति, तद्यथा–अर्हन्तः, चक्रवर्त्तिनः, बलदेववासुदेवाः ३१ । त्रयो मध्यममायुः पालयन्ति, तद्यथा–अर्हन्तः, चक्रवर्तिनः, बलदेववासुदेवाः ३२ ॥ २२ ॥

टीका—' जंबुद्दीवे ' इत्यादि सर्वं सुगमम् । नवरम्–'पन्नत्ते ' इति प्रज्ञप्तः, इत्यनेन — अवसर्पिणीकालस्य वर्त्तमानत्व सूचितम् । अत्र ' होत्था ' इति व्यपदेशो न कार्यः ।

' जबुद्दीवे ' इत्यादीनि ' बलदेववासुदेवा ' इत्यन्तानि द्वात्रिंशत् कालधर्मसूत्राणि सुगमानि, नवरम्–' अहाउयं पालयंति ' यथायुष्कं पालयन्ति निरुपक्रमायुष्कत्वात् , ' मज्झिमाउयं पालयंति ' मध्यमायुः पालयन्ति वृद्धत्वाभावादिति

पूरी आयु का पालन करते हैं–अर्हन्त, चक्रवर्ती और बलदेव वासुदेव, ये तीन मध्यमायु का पालन करते हैं — अर्हन्त, चक्रवर्ती और बलदेव वासुदेव ।

टीकार्थ–"नवरं प्रज्ञप्तः" ऐसा जो कहा गया है सो उसका तात्पर्य ऐसा है कि सूत्रकारने अवसर्पिणी कालमें वर्तमानता सूचित की है, इसलिये यहां " होत्था " ऐसा भूतकालका निर्देश नहीं करना चाहिये ।

" यथायुष्क का पालन करते हैं " इस कथन का तात्पर्य ऐसा है कि ये निरुपक्रम आयु वाले होते हैं अतः जितनी आयु का बंध इन्हें होता है उसे पूरी २ पालते हैं इनको अकालमरण नहीं होता है ।

"मध्यमायु का पालन करते हैं" इसका तात्पर्य ऐसा है कि ये सब वृद्धावस्था से परे रहते हैं–अर्थात् इनको वृद्धता नहीं आती है ।

પૂરેપૂરા આયુનું પાલન કરે છે–અર્હંત, ચક્રવર્તી અને બલદેવવાસુદેવ–" નવં પ્રજ્ઞપ્ત " આ કથનનો ભાવાર્થ નીચે પ્રમાણે છે–સૂત્રકારે અવસર્પિણી કાળમા વર્તમાનતા સૂચિત કરી છે, તેથી અહીં " હોત્થા " આ પ્રકારનો ભૂતકાળનો નિર્દેશ કરવો જોઈએ નહીં.

" યથાયુષ્કનું પાલન કરે છે " આ કથનનું તાત્પર્ય આ પ્રમાણે છે—તેઓ નિરુપક્રમ આયુવાળા હોય છે. તેથી તેમણે જેટલા આયુનો બંધ કર્યો હોય છે એટલુ આયુ પૂરેપૂર ભોગવે છે, તેમનુ અકાલે મરણ થતું નથી. " તેઓ મધ્યમ આયુ ભોગવે છે " આ કથનનો ભાવાર્થ એવો છે કે તેઓ વૃદ્ધાવસ્થા પ્રાપ્ત કરતા નથી. તેમનું જીવન વૃદ્ધાવસ્થાથી રહિત હોય છે.

१२। द्वात्रिंशत्सूत्राणि चेत्थम्–जम्बूद्वीपस्य भरतैरवतयोरतीतोत्सर्पिणी–वर्तमानावसर्पिण्यनागतोत्सर्पिणीकालविषयाणि त्रीणि सूत्राणि, एकं च देवकुरूत्तरकुरुविषयमिति चत्वारि ४, एवं धातकीखण्डस्य पूर्वार्धविषयाणि चत्वारि, पश्चिमार्धविषयाणि च चत्वारीत्यष्ट, एवं पुष्करवरद्वीपार्धस्य पूर्वार्ध–पश्चिमार्ध विषयाणि चाष्ट, इत्येवं षोडश, एवं पूर्वोक्तसूत्रचतुष्टयेन सह सङ्कलनेन विंशतिसूत्राणि भवन्ति २०। भरतैरवतयोर्वंशविषयमेकं सूत्रम् १। एवं धातकीखण्डस्य पूर्वार्धपश्चिमार्धविषयं सूत्रद्वयम् २। पुनः पुष्करवरद्वीपार्धस्य पूर्वार्धपश्चिमार्धविषयकं सूत्रद्वयमिति पञ्च। एवं पूर्वोक्तविंशतिसूत्रैः सह सङ्कलनेन पञ्चविंशतिसूत्राणि भवन्ति २५। जम्बूद्वीपस्य भरतैरवतयोरुत्तमपुरुषोत्पत्तिविषयमेकम् १, पुनर्धातकीखण्डस्य पूर्वार्धपश्चिमार्धविषयं सूत्रद्वयम् २, पुष्करवरद्वीपार्धस्य पूर्वार्ध–पश्चिमार्धविषयं सूत्रद्वयं २ चेति पञ्च ५। एवं पूर्वोक्तपञ्चविंशतिसूत्रैः सह सङ्कलनेन त्रिंश

यहां ३२ सूत्र इस प्रकार से हैं–जम्बूद्वीप सम्बन्धी भरत और ऐरवतक्षेत्र के अतीत उत्सर्पिणी, वर्तमान अवसर्पिणी, एवं अनागत उत्सर्पिणीकालविषयक तीन सूत्र तथा उत्तर कुरु एवं देवकुरु विषयक एकसूत्र, तथा धातकी खण्ड के पूर्वार्धविषयक ४ सूत्र और पश्चिमार्ध विषयक ४ सूत्र, इसी तरह से पुष्कर वर द्वीपार्द्ध के पूर्वार्ध और पश्चिमार्ध विषयक ८ सूत्र कुल इन सोलह सूत्रों में पहिले चार ४ सूत्र मिला देने से २० सूत्र हो जाते हैं भरत और ऐरवत क्षेत्र के वंशविषयक एक सूत्र तथा धातकी खण्ड के पूर्वार्ध और पश्चिमार्ध विषयक २ सूत्र, तथा पुष्करवरद्वीपार्ध के पूर्वार्ध, पश्चिमार्ध के २ सूत्र इस प्रकार ५ पांच सूत्र ये पूर्वोक्त २० सूत्रों में मिला देने से २५ सूत्र हो जाते हैं

અહીં ૩૨ સૂત્ર નીચે પ્રમાણે છે–જમ્બૂદ્વીપના ભરત અને ઐરવત ક્ષેત્રના ઉત્સર્પિણી, વર્તમાન અવસર્પિણી અને આગામી ઉત્સર્પિણી કાળવિષયક ત્રણ સૂત્રો, ઉત્તરકુરુ અને દેવકુરુ વિષયક એક સૂત્ર, ધાતકીખંડના પૂર્વાર્ધ વિષયક ચાર સૂત્રો અને પશ્ચિમાર્ધ વિષયક ચાર સૂત્રો એજ પ્રમાણે પુષ્કરવર દ્વીપાર્ધના પૂર્વાર્ધ અને પશ્ચિમાર્ધ વિષયક આઠ સૂત્રો આ રીતે ૩+૧+૪+૪+૮ =૨૦ સૂત્રોનો ઉપર્યુક્તમાં બતાવ્યો અહીંઆ છે

ભરતક્ષેત્ર અને ઐરવતક્ષેત્ર વંશવિષયક એક સૂત્ર ધાતકીખંડના પૂર્વાર્ધ અને પશ્ચિમાર્ધ વિષયક બે સૂત્ર તથા પુષ્કરવરદ્વીપાર્ધના પૂર્વાર્ધ અને પશ્ચિમાર્ધના બે સૂત્ર મળીને જે પાંચ સૂત્રો થાય છે તેમને પૂર્વોક્ત ૨૦ સૂત્રોમાં ઉમેરતાં ૨૫ સૂત્ર થાય છે ભરત અને ઐરવતક્ષેત્રમાં ઉત્તમ પુરુષની ઉત્પત્તિ વિષેનું એક સૂત્ર ધાતકીખંડના પૂર્વાર્ધ અને પશ્ચિમાર્ધ વિષયક બે સૂત્ર, અને પુષ્કરવર દ્વીપાર્ધના પૂર્વાર્ધ અને પશ્ચિમાર્ધ વિષયક બે સૂત્ર મળીને

त्सूत्राणि भवन्ति ३०। पुनरायुर्विषयकं सूत्रद्वयमिति सर्वसंकलनया द्वात्रिंशत्सूत्राणि भवन्ति ३२ ॥ सू० २२ ॥

आयुष्काधिकारात्स्थितिसूत्रमाह—

मूलम्—बायरतेउकाइयाणं उक्कोसेणं तिन्नि राइंदियाइं ठिई पण्णत्ता । बायरवाउकाइयाणं उक्कोसेणं तिन्नि वाससहस्साइं ठिई पण्णत्ता । अह भंते ! सालीणं वीहीणं गोधूमाणं जवाणं जवजवाणं, एएसि णं धन्नाणं कोट्ठा उत्ताणं पल्ला उत्ताणं मंचा उत्ताणं मालाउत्ताणं ओलित्ताणं लित्ताणं लंछियाणं मुद्दियाणं पिहियाणं केवइयं कालं जोणी संचिट्ठइ ? गोयमा ! जहन्नेणं अंतोमुहुत्तं,उक्कोसेणं तिण्णि संवच्छराइं, तेण परं जोणी पमिलायइ, तेण परं जोणी पविद्धंसइ, तेण परं जोणी विद्धंसइ, तेण परं बीए अबीए भवइ, तेण परं जोणी वोच्छेओ पण्णत्तो। दोच्चाए णं सक्करप्पभाए पुढवीए णेरइयाणं उक्कोसेणं तिण्णि सागरोवमाइं ठिई पण्णत्ता । तच्चाए णं वालुयप्पभाए पुढवीए णेरइयाणं जहन्नेणं तिन्नि सागरोवमाइं ठिई पण्णत्ता ॥ सू० २३ ॥

भरत ऐरवतक्षेत्र में उत्तमपुरुषोत्पत्तिविषयक १ सूत्र, तथा धातकीखण्ड के पूर्वार्ध पश्चिमार्द्ध विषयक २ सूत्र और पुष्करवरद्वीपार्ध के पूर्वार्ध और पश्चिमार्ध के २ सूत्र-ये ५ सूत्र, २५ सूत्रों के साथ मिलाने से ३० सूत्र हो जाते हैं। तथा आयु विषयक २ सूत्र और इनमें जोड़ देने से कुल ३२ सूत्र होते हैं ॥ सू०२२ ॥

જે પાચ સૂત્રો થાય છે તેમને પૂર્વોક્ત ૨૫ સૂત્રોમાં ઉમેરવાથી ૩૦ સૂત્ર થાય છે. તે ૩૦ સૂત્રોમા આયુવિષયક બે સૂત્ર ઉમેરવાથી કુલ ૩૨ સૂત્રો થઈ જાય છે. ॥ સૂ. ૨૨ ॥

छाया—बादरतेजस्कायिकानामुत्कर्षेण त्रीणि रात्रिंदिनानि स्थितिः प्रज्ञप्ता। बादर वायुकायिकानामुत्कर्षेण त्रीणि वर्षसहस्राणि स्थितिः प्रज्ञप्ता। अथ भदन्त! शालीनां व्रीहीणां गोधूमानां यवानां यवयवानाम्, एतेषां खलु धान्यानां कोष्ठा गुप्तानां, पल्याागुप्तानां, मञ्चागुप्तानां, मालागुप्तानाम्, अवलिप्तानां, लिप्तानां, लाञ्छितानां मुद्रितानां, पिहितानां कियत् कालं योनिः संतिष्ठते? गौतम! जघन्येनान्तर्मुहूर्तम्, उत्कर्षेण त्रीणि संवत्सराणि, ततः परं योनिः प्रम्लायति,

आयुष्क का अधिकार होने से अब सूत्रकार स्थिति सूत्र का कथन करते हैं-(बायरतेउकाइयाणं उक्कोसेणं) इत्यादि।

सूत्रार्थ-बादर तेजस्कायिक जीवों की उत्कृष्टस्थिति तीन अहो रात्र-(तीन दिनरात) की कही गई है, बादर वायुकायिक जीवों की उत्कृष्ट स्थिति तीन हजार वर्षकी कही गईहै, हे भदन्त! कुशूल-कोठीमें संरक्षित, पल्य में सरक्षित, मञ्च में सरक्षित, माल में सरक्षित, गोबर आदि से मुख को ढककर किसी आधारविशेष में सरक्षित, मिट्टी आदि से खूब अच्छी तरह से ढककर सरक्षित, लाख आदि से मुद्रितकर किसी आधार में संरक्षित, तथा लोहे आदि के पटिया से आच्छादित किसी आधारविशेष में सरक्षित ऐसे शाल्यादि धान्यों में कितने कालतक अङ्कुरोत्पत्ति करने की शक्ति रहती है? अर्थात् ये सब धान्य कहांतक सचित्त रहते हैं। हे गौतम! जघन्य से अन्तर्मुहूर्त तक शक्ति रहती है और उत्कृष्ट से तीन वर्षतक शक्ति

આયુષ્કનો અધિકાર ચાલી રહ્યો છે તેથી હવે સૂત્રકાર સ્થિતિસૂત્રનું કથન કરે છે-" बायरतेउकाइयाणं उक्कोसेण " ઇત્યાદિ—

સૂત્રાર્થ-બાદરતેજસ્કાયિક જીવોની ઉત્કૃષ્ટ સ્થિતિ ત્રણ અહોરાત્રની (ત્રણ દિનરાતની) કહી છે બાદર વાયુકાયિક જીવોની ઉત્કૃષ્ટસ્થિતિ ત્રણ હજાર વર્ષની કહી છે "હે ભગવન્! કુશૂલ (કોઠી) માં સરક્ષિત, પલ્યમાં સરક્ષિત મંચમાં સરક્ષિત, માલમાં સરક્ષિત, ગોમય (છાણ) આદિથી મઢું જ સારી રીતે ઢાંકી દઈને સરક્ષિત, લાખ આદિથી મુદ્રિત કરીને કોઈ પાત્રમાં સરક્ષિત, લોઢા આદિના પતરાવડે આચ્છાદિત એવા કોઈ પાત્રમાં સરક્ષિત, એવાં ડાંગર આદિ ધાન્યોમાં કેટલા કાળ સુધી અંકુરોત્પત્તિ કરવાની શક્તિ રહે છે?

ઉત્તર—" હે ગૌતમ! ઓછામાં ઓછા અંતમુહૂર્ત પ્રમાણકાળ સુધી અને વધારેમાં વધારે ત્રણ વર્ષ સુધી બીજમાં અંકુરોત્પાદન શક્તિ રહે છે

ततः परं योनिः प्रविध्वंसते, तत पर योनिर्विध्वंसते, ततः परं बीजम् अबीजं भवति, ततः परं योनिव्युच्छेदः प्रज्ञप्तः। द्वितीयायां खलु शर्कराप्रभायां पृथिव्यां नैरयिकाणामुत्कर्षेण त्रीणि सागरोपमाणि स्थितिः प्रज्ञप्ता। तृतीयायां खलु वालुकाप्रभायां पृथिव्यां नैरयिकाणां जघन्येन त्रीणि सागरोपमाणिः स्थिति प्रज्ञप्ता॥सू०२३॥

टीका—'बायरतेउ०' इत्यादि। बादरतेजस्कायिकानां स्थितिरुत्कर्षेण त्रीणि रात्रिन्दिवानि, बादरवायुकायिकानां च त्रीणि वर्षसहस्राणि-वर्षाणां सहस्रत्रयं स्थिति र्भवतीति। अथ स्थित्यधिकारात् शाल्यादि धान्यानां योनिस्थितिं प्रश्नोत्तरेण प्राह—'अह भंते' इत्यादि, 'अथ' परिप्रश्नार्थः 'भंते' इति हे भदन्त। हे-भगवन्! भदन्तशब्दस्य विशेषव्याख्या आवश्यकसूत्रस्य मत्कृतायां मुनितोषिणी टीकायां 'करेमि भंते सामाइय' इत्यत्र विलोकनीया। शाल्यादि-धान्यानाम्, कीदृशानाम्? इत्याह—कोष्ठागुप्तानां-कुशूले सरक्षिताना, पल्यागु-

---

रहती है इसके बाद अङ्कुरोत्पादन शक्ति उनमें से नष्ट हो जाती है अर्थात् बीज अबीज हो जाता है उसकी योनि विच्छिन्न हो जाती है। वर्ण गंध रस स्पर्श आदि से वह हीन हो जाती है, "विनश्यति, विध्वंसते," आदि क्रियापद इसी अर्थ का समर्थन करते हैं द्वितीय शर्करा प्रभापृथिवी में नैरयिकों की उत्कृष्टस्थिति तीन सागरोपम की कही गई है तीसरी वालुकाप्रभा पृथिवी में नैरयिकों की जघन्य स्थिति तीन सागरोपम की कही गई है।

टीकार्थ-यहां सूत्रकारके तीन स्थानकका प्रकरण होनेसे संबंध रखनेवाली बादर तेजस्कायिक आदिकों की स्थिति के विषय में कथन किया है इसमें कहा गया है कि बादर तेजस्कायिकों की स्थिति उत्कृष्ट से तीन अहोरात्र (तीन दिनरात) की है तथा बादर वायुकायिक जीवों

ત્યારબાદ તેની અંકુરોત્પાદન શક્તિ અવશ્ય નાશ પામી જાય છે એટલે કે ત્રણ વર્ષમાં તે બીજ અબીજ રૂપ થઈ જાય છે-તેની યોનિ વિચ્છિન્ન થઈ જાય છે, ગંધ, રસ, સ્પર્શ આદિથી તે રહિત થઈ જાય છે "विनश्यति, विध्वंसते" આદિ ક્રિયાપદો આ અર્થનું જ સમર્થન કરે છે. શર્કરાપ્રભા નામની બીજી નરકના નારકોની ઉત્કૃષ્ટસ્થિતિ ત્રણ સાગરોપમની કહી છે. વાલુકાપ્રભા નામની ત્રીજી નરકના નારકોની જઘન્યસ્થિતિ ત્રણ સાગરોપમની કહી છે

ટીકાર્થ-ત્રણ સ્થાનકોનો અધિકાર ચાલતો હોવાથી સૂત્રકારે અહીં ત્રણ સ્થાનો સાથે સંબંધ રાખતા બાદર તેજસ્કાયિક આદિની સ્થિતિ વિષે કથન કર્યું છે અહીં એવું કહેવામાં આવ્યું છે કે બાદર તેજસ્કાયિકોની ઉત્કૃષ્ટસ્થિતિ ત્રણ દિનરાતની હોય છે, તથા બાદર વાયુકાયિક જીવોની ઉત્કૃષ્ટસ્થિતિ ત્રણ હજાર

स्थानां, पल्यं-वंशकटकादिकृतो धान्याधारविशेषः, तत्रागुप्तानां-संरक्षितानाम्। मञ्चागुप्तानां-मञ्च-स्थूणानामुपरिस्थापितो वंशकटकादिनिर्मितो भित्तिरहितो लोकप्रसिद्धः, तत्र संरक्षितानाम्। मालागुप्तानां-मालसंरक्षितानां-मालकः-गृहस्योपरितनभाग, उक्तञ्च—

'अकुड्डो होइ मंचो, मालो य घरोवरिं होइ' इति।

छाया—अकुड्यो भवति मञ्चः, मालश्च गृहोपरि भवति। अवलिप्तानां-द्वारदेशे पिधाय गोमयमृत्तिकादिलेपेनाऽऽच्छादितानाम्। लिप्तानां-सर्वतो मृत्तिकादिनाऽऽच्छादितानाम्। लाञ्छितानां-रेखादिकरणेन कृतलाञ्छनानाम्। मुद्रितानां-लाक्षादिमुद्राङ्कितानाम्। पिहितानां-लोष्टकादिना स्थगितानां शाल्यादिधान्यानां कियत्कालं यावत् योनिः-अङ्कुरोत्पत्तिसामर्थ्यं संतिष्ठते ?। उत्तरमाह—हे गौतम ! जघन्येन अन्तर्मुहूर्तं-मुहूर्ताभ्यन्तरकालं यावत् संतिष्ठते,

की उत्कृष्ट स्थिति तीन हजार वर्ष की है तथा कोष्ठगुप्त-कोठी में भर कर रखे गये, पल्य में वंशनिर्मित धान्याधारविशेष में रखे गये तथा मञ्च-खंभे आदि के ऊपर लटकाकर घास आदि के बने हुए पिटारे में रखे गये, मालक गृह के उपरितनभाग में राशी करके रखे गये अव लिप्त-कोठि आदि का मुह गोबर आदि से बन्द करके उसमें रखे गये, लिप्त-मिट्टी आदि के द्वारा ढंक कर रखे गये, लांछित करके रखे गये, अर्थात्-एक ही जगह पार्टीशन करके वखा आदि में भरे गये तथा लाख आदि की मुहर करके किसी वर्तन में भर कर रखे गये ऐसे शाल्यादिक धानों में अङ्कुरोत्पत्ति करने की शक्ति कबतक रहती है ? तो इसके उत्तर में प्रभु कहते है कि इन में अङ्कुरोत्पन्न करने की शक्ति

वर्षनी होय छे तथा कोठीमां भरीने राखेला पल्यमां-वांसनिर्मित धान्याधार विशेषमां (पात्रमां) राखेला, मञ्च उपर राखेला-स्थंभ आदि उपर लटकावेली वास आदिनी पेटीमां राखेला मालकमां (घरना सौथी उपरना भागे) ढगलो करीने राखेला अवलिप्तकोठी आदिना मुखने छाणु, माटी आदिथी बंध करीने तेमां राखेला, लिप्त-माटी आदि द्वारा ढांकीने राखेला लंछित करीने राखेला एटले के एक ज जग्याए पार्टीशन करीने वखा (वखार) आदिमां भरेला तथा लाख आदि वडे सील लगावीने कोई पात्रमां भरी राखेला शाल्यादि (डांगर वगेरे) धा येमां अङ्कुरोत्पत्ति करवानी शक्ति केटला काळ सुधी रहे छे ?

आ प्रश्ननो उत्तर आपता महावीर प्रभु कहे छे के 'ते धान्योमां अङ्कुरोत्पत्ति करवानी शक्ति ओछामां ओछा एक अन्तमुहूर्त सुधी अने

उत्कर्षेण त्रीणि संवत्सराणि-वर्षत्रयं यावद् अङ्कुरोत्पत्तिसामर्थ्ये सतिष्ठते, इति। ततः किम्? इत्याह—'तेणपरं' इत्यादि, ततः परं-तदनन्तरं वर्षत्रयानन्तरं योनिः प्रम्लायति-वर्णगन्धरसस्पर्शादिना हीयते। प्रविध्वंसते-विनश्यति, विध्वंसते-क्षीयते। एवं च सति तद्बीज-शाल्यादि बीजम् अबीजं भवति, उप्तमपि तद्बीजं नाङ्कुरमुत्पादयतीत्यर्थः, किमुक्तं भवति? ततः पर-वर्षत्रयानन्तरं शाल्यादीनां योनिव्यवच्छेदः-उत्पादनशक्तिविनाशः प्रज्ञप्तः, मयाऽन्यैश्च केवलिभिरिति। त्रिस्थानकावतारेण नारकाणां स्थितिमाह—'दोच्चाएणं' इत्यादि स्पष्ट-नवरं-शर्करप्रभाख्यायां द्वितीया नारकाणां त्रीणि सागरोपमाणि सागरोपमत्रयपरिमितेत्यर्थः स्थितिः प्रज्ञप्ता। एवं तृतीयायां वालुकाप्रभायामपि पृथिव्यां नारकाणां स्थितिर्विज्ञेया ॥ सू० २३ ॥

कम से कम एक अन्तर्मुहूर्त तक रहती है और अधिक से अधिक तीन वर्षतक रहती है इसके बाद उनमें अङ्कुरोत्पादन शक्ति का वर्ण, गंध, रस और स्पर्श आदि की अपेक्षा ह्रास हो जाता है उस शक्ति का उनमें विनाश हो जाता है वह शक्ति उनमें से नष्ट हो जाती है अर्थात् पीछे ये सब अचित्त हो जाते हैं इस तरह की अवस्था में वह बीज अबीज हो जाता है अर्थात् अङ्कुर को उत्पन्न करने की शक्ति से रहित हो जाता है इसलिये वह योनि रूप नहीं रहता है ऐसा मेरा और अन्य केवलियों का कहना है मंच आदि के अर्थ के विषय में ऐसा लिखा है-"अकुड्डो होइ मंचो" इत्यादि। शास्त्रकारों ने ऐसा लिखा है कि पहिले २ नरकों में जो उत्कृष्टस्थिति है वह आगे २ के नरकों में जघन्य हो गई है अतः इस कथन के अनुसार वालुकाप्रभा नाम की जो तृतीय पृथिवी है उसमें नारकियों की

વધારેમાં વધારે ત્રણ વર્ષ સુધી રહે છે ત્યારબાદ તેમાં અંકુરોત્પાદન શક્તિનો વર્ણ, ગંધ, રસ અને સ્પર્શની અપેક્ષાએ હ્રાસ થઇ જાય છે-તે બીજોની તે શક્તિનો વિનાશ થઈ જાય છે આ પ્રકારની પરિસ્થિતિમાં તે બીજ અબીજ બની જાય છે એટલે કે તે અંકુરને ઉત્પન્ન કરવાની શક્તિથી રહિત થઇ જાય છે, તે કારણે તે યોનિરૂપ રહેતું નથી આ પ્રકારનું મારૂ કથન છે અને અન્ય કેવલીઓના કથનથી આ વાતને સમર્થન મળે છે મંચ આદિનો અર્થ આ પ્રમાણે લખ્યો છે-"अकुड्डो होइ मंचो" ઇત્યાદિ શાસ્ત્રકારોએ એવું લખ્યું છે કે પહેલી નરકમાં જે ઉત્કૃષ્ટસ્થિતિ હોય છે, એજ પછીની નરકમાં જઘન્યસ્થિતિ હોય છે આ સિદ્ધાંત પ્રમાણે બીજી પૃથ્વીના નારકોની જે ઉત્કૃષ્ટસ્થિતિ કહી છે, એજ જઘન્યસ્થિતિ ત્રીજી ... કહી છે. તેથી બીજી

नरकपृथिव्यधिकारान्नरक–नारक विशेषस्वरूप मरूपयन् सूत्रत्रयीमाह—

मूलम्—पंचमाएणं धूमप्पभाए पुढवीए तिन्नि निरयावाससयसहस्सा पण्णत्ता १। तिसुणं पुढवीसु णेरइयाणं उसिणवेयणा पण्णत्ता, तं जहा–पढमाए, दोच्चाए, तच्चाए २। तिसुणं पुढवीसु णेरइया उसिणवेयणं पच्चणुभवमाणा विहरंति, तं जहा—पढमाए दोच्चाए तच्चाए ३॥ सू० २४॥

छाया—पञ्चम्यां खलु धूमप्रभायां पृथिव्यां त्रीणि निरयावासशतसहस्राणि प्रज्ञप्तानि १। त्रिषु खलु पृथिवीषु नैरयिकाणामुष्णवेदना प्रज्ञप्ता, तद्यथा–प्रथमायां, द्वितीयायां, तृतीयायाम् २। त्रिषु खलु पृथिवीषु–नैरयिका उष्णवेदनां प्रत्यनुभवन्तो विहरन्ति, तद्यथा प्रथमायां द्वितीयायाम् तृतीयायाम्३ ॥सू० २४॥

टीका—'पंचमाएणं' इत्यादि नवरं–पञ्चम्यां धूमप्रभापृथिव्यां नरकावासानां त्रीणि शतसहस्राणि–त्रिलक्षनरकावासाः सन्तीति १। 'तिसुणं' इत्यादि, तिसृषु–प्रथम–द्वितीय–तृतीयासु पृथिवीषु नैरयिकाणामुष्णवेदना प्रज्ञप्ता, आसां तिसृणामुष्णस्वभावत्वात् २। ते नैरयिकास्तामुष्णवेदनामनुभवविषयी

जघन्य स्थिति तीन सागरोपम की हो गई है क्योंकि यह तीन सागरोपम की उत्कृष्टस्थिति शर्कराप्रभा के नारकियों की है ॥ सू०२३॥

नरकपृथिवी के सबंध को लेकर अब सूत्रकार नरक और नारक के विशेष स्वरूप का कथन करने के लिये सूत्रत्रयी कहते हैं–(पंचमाएणं धूमप्पभाए पुढवीए) इत्यादि।

टीकार्थ–पांचवीं धूमप्रभा पृथिवीमें तीन लाख नरकावास हैं, प्रथम नरक द्वितीयनरक और तृतीय नरक इन तीन नरकों में उष्णवेदना है क्योंकि ये तीन नरक उष्ण स्वभाववाले हैं, इन तीन नारकों में रहने वाले

શર્કરાપ્રભા નરકના નારકોની ઉત્કૃષ્ટસ્થિતિ ત્રણ સાગરોપમની હોવાથી ત્રીજી વાલુકાપ્રભા નરકના નારકોની જઘન્યસ્થિતિ પણ ત્રણ સાગરોપમની કહી છે સૂ ૨૩

નરક પૃથ્વીના સબંધને અનુલક્ષીને હવે સૂત્રકાર નરક અને નારકના સ્વરૂપનું વિશેષ કથન કરતાં ત્રણ સૂત્રોનું પ્રતિપાદન કરે છે

"પંચમાઇણં ધૂમપ્પભાએ પુઢવીએ" ઇત્યાદિ—

ટીકાર્થ–ધૂમપ્રભા નામની પાંચમી નરકમાં ત્રણ લાખ નરકાવાસ છે પહેલી, બીજી અને ત્રીજી, આ ત્રણ નરકોમાં ઉષ્ણવેદનાનો સદ્ભાવ હોય છે, કારણ કે તે ત્રણ નરકો ઉષ્ણસ્વભાવવાળી છે તે ત્રણ નરકોમાં રહેનારા નારકો ઉષ્ણ

कुर्वन्ति नवा ? इत्यत्राह—' तिसुणं ' इत्यादि, आस्वेव पूर्वोक्तासु तिसृषु पृथिवीषु नैरयिका उष्णवेदनां प्रत्यनुभवन्तः । उष्णवेदनाया अनुभवं कुर्वाणास्तिष्ठन्ति । अत्र यत्-नारकाणामुष्णवेदनां कथयित्वा पुनर्वेदनानुभवकथनं तद्वेदनायाः सातत्यप्रदर्शनार्थमिति ३ ॥ सू० २४ ॥

क्षेत्राधिकारात् क्षेत्रविशेषस्वरूपं निरूपयन् सूत्रद्वयमाह—

मूलम्—तओ लोगे समा सपक्खि सप्पडिदिसिं पण्णत्ता, तं जहा—अप्पइट्ठाणे णरए, जंबुद्दीवे दीवे, सव्वट्ठसिद्धे महाविमाणे १ । तओ लोगे समा सपक्खि सप्पडिदिसिं पण्णत्ता, तं जहा—सीमंतए णं णरए, समयखेत्ते ईसीपब्भारा पुढवी ॥सू०२५

छाया—त्रीणि लोके समानि सपक्षं सप्रतिदिक् प्रज्ञप्तानि, तद्यथा अप्रतिष्ठानो नरकः, जम्बूद्वीपो द्वीपः, सर्वार्थसिद्धं महाविमानम् १। त्रीणि लोके समानि सपक्षं सप्रतिदिक् प्रज्ञप्ता, तद्यथा—सीमान्तकः खलु नरकः, समयक्षेत्रं, ईषत्प्राग्भारा पृथिवी ॥ सू० २५ ॥

टीका—' तओ ' इत्यादि । लोके त्रीणि वस्तूनि समानि—तुल्यानि त्रयाणामपि योजनलक्षप्रमाणत्वात्, सपक्ष—पक्षाणां—दक्षिणवामादिपार्श्वानां सदृशता—समता सपक्षमित्यव्ययीभावस्तेन समपार्श्वतया समानीत्यर्थः । सप्रतिदिक्—प्रति-

---

नैरयिक उष्णवेदना का अनुभव करते हैं। यहां नारकों के उष्णवेदना का कथन करके जो पुनः इस वेदना का अनुभव उनमें कहा गया है उसका कारण उस वेदना का वहां सातत्य दिखलाना है ॥ सू०२४ ॥

क्षेत्राधिकार को लेकर अब सूत्रकार क्षेत्रविशेष के स्वरूप का निरूपण करते हैं—(तओ लोगे समा सपक्खिं इत्यादि ।

टीकार्थ—लोकमें तीन वस्तुएँ तुल्य कही गईहैं यह तुल्यता योजनलक्षणप्रमाण की अपेक्षा से जाननी चाहिये तथा पार्श्व भागों में समानता

વેદનાનો અનુભવ કરે છે. અહીં નારકોની ઉષ્ણુવેદનાનુ કથન કરીને ફરીથી તે વેદનાનો અનુભવ કરવાની જે વાત કરી છે તેનું કારણુ એ છે કે સૂત્રકાર તે વેદનાનુ ત્યા સાતત્ય પ્રકટ કરવા માગે છે ॥ સૂ ૨૪ ॥

ક્ષેત્રાધિકારના સબંધને લઇને હવે સૂત્રકાર ક્ષેત્રવિશેષના સ્વરૂપનું નિરૂપણુ કરે છે—" તઓ લોગે સમા સપક્ખિં " ઈત્યાદિ—

ટીકાર્થ—લોકમા ત્રણુ વસ્તુઓ તુલ્ય (સમાન) કહી છે. આ તુલ્યતા યોજનલક્ષ પ્રમાણુની અપેક્ષાએ, તથા પાર્શ્વભાગોમા સમાનતા અને દિશાઓ અને વિદિ-

नरकपृथिव्यधिकारान्नरक—नारक विशेषस्वरूप प्ररूपयन् सूत्रत्रयीमाह—

मूलम्—पंचमाए णं धूमप्पभाए पुढवीए तिन्नि निरयावाससयसहस्सा पण्णत्ता १। तिसु णं पुढवीसु णेरइयाणं उसिणवेयणा पण्णत्ता, तं जहा—पढमाए, दोच्चाए, तच्चाए २। तिसु णं पुढवीसु णेरइया उसिणवेयणं पच्चणुभवमाणा विहरंति, तं जहा—पढमाए दोच्चाए तच्चाए ३ ॥ सू० २४ ॥

छाया—पञ्चम्यां खलु धूमप्रभायां पृथिव्यां त्रीणि निरयावासशतसहस्राणि प्रज्ञप्तानि १। तिसृषु खलु पृथिवीषु नैरयिकाणामुष्णवेदना प्रज्ञप्ता, तद्यथा-प्रथमायां, द्वितीयायां, तृतीयायाम् २। तिसृषु खलु पृथिवीषु—नैरयिका उष्णवेदनां प्रत्यनुभवन्तो विहरन्ति, तद्यथा प्रथमायां द्वितीयायाम् तृतीयायाम् ३ ॥सू० २४॥

टीका—'पंचमाए' इत्यादि नवरं-पञ्चम्यां धूमप्रभापृथिव्यां नरकावासानां त्रीणि शतसहस्राणि-त्रिलक्षनरकावासाः सन्तीति १। 'तिसुणं' इत्यादि तिसृषु-प्रथम-द्वितीय-तृतीयासु पृथिवीषु नैरयिकाणामुष्णवेदना प्रज्ञप्ता, आसां तिसृणामुष्णस्वभावत्वात् २। ते नैरयिकास्तामुष्णवेदनामनुभवन्तिपर्यो

जघन्य स्थिति तीन सागरोपम की हो गई है क्योंकि यह तीन सागरोपम की उत्कृष्टस्थिति शर्कराप्रभा के नारकियों की है ॥ सू० २३ ॥

नरकपृथिवी के सम्बन्ध को लेकर अब सूत्रकार नरक और नारक के विशेष स्वरूप का कथन करने के लिये सूत्रत्रयी कहते हैं—(पंचमाए णं धूमप्पभाए पुढवीए) इत्यादि।

टीकार्थ—पांचवीं धूमप्रभा पृथिवीमें तीन लाख नरकावास हैं, प्रथम नरक द्वितीयनरक और तृतीय नरक इन तीन नरकों में उष्णवेदना है क्योंकि ये तीन नरक उष्ण स्वभाववाले हैं, इन तीन नारकों में रहने वाले

શર્કરાપ્રભા નરકના નારકોની ઉત્કૃષ્ટસ્થિતિ ત્રણ સાગરોપમની હોવાથી ત્રીજી વાલુકાપ્રભા નરકના નારકોની જઘન્યસ્થિતિ પણ ત્રણ સાગરોપમની કહી છે સૂ. ૨૩

નરક પૃથ્વીના સંબંધને અનુલક્ષીને હવે સૂત્રકાર નરક અને નારકના સ્વરૂપનું વિશેષ કથન કરતાં ત્રણ સૂત્રોનું પ્રતિપાદન કરે છે

"પંચમાઇએ ણં ધૂમપ્પભાએ પુઢવીએ" ઇત્યાદિ—

ટીકાર્થ—ધૂમપ્રભા નામની પાંચમી નરકમાં ત્રણ લાખ નરકાવાસ છે પહેલી, બીજી અને ત્રીજી, આ ત્રણ નરકોમાં ઉષ્ણવેદનાનો સદ્ભાવ હોય છે, કારણ કે તે ત્રણ નરકો ઉષ્ણસ્વભાવવાળી છે તે ત્રણ નરકોમાં રહેનારા નારકો ઉષ્ણ

षयो यस्याः सा ईषत्प्राग्भारा–अष्टमीपृथिवीत्यर्थः, अस्या ईषत्प्राग्भारत्वं रत्नप्रभादिशेषपृथिवीनामशीत्यादि सहस्राधिक योजनलक्षबाहल्येन महाप्राग्भारत्वात्। एषां सीमन्तकादीनां समत्वं पञ्चचत्वारिंशद् योजनलक्षप्रमाणत्वात् ॥ सू० २५ ॥

है इस नरकावास का प्रमाण ४५ लाख योजन का है। समयक्षेत्र का प्रमाण और ईषत्प्राग्भारापृथिवी का प्रमाण भी इतना ही है समय नाम काल का है इस काल की सत्ता से उपलक्षित जो क्षेत्र है वह समय-क्षेत्र–मनुष्यलोक है प्राग्भार शब्द का अर्थ पुद्गलनिचय है अन्य पृथिवियों की अपेक्षा से यह प्राग्भार जिसका अल्प है–अर्थात् बाहल्य की अपेक्षा आठ योजन का है ऐसी वह "ईषत्प्राग्भारा" नामकी आठवीं पृथिवी है इसका प्राग्भार इसलिये अल्प कहा गया है कि रत्नप्रभा आदि जो और पृथिवियां हैं वे मोटाई में इसकी अपेक्षा बहुत अधिक हैं जैसे–प्रथमपृथिवी की मोटाई १ एक लाख अस्सी हजार योजन की है, दूसरी पृथिवी की मोटाई बाहल्य एक १ लाख बत्तीस हजार योजन की है, तीसरी की मोटाई १ एक लाख अट्ठाइस हजार योजन की है, चौथी की मोटाई एक १ लाख बीस हजार योजन की है पांचवी की मोटाई एक १ लाख अठारह हजार योजन की है छठी की मोटाई एक लाख सोलह हजार योजन की है और सातवीं की मोटाई एक लाख आठ हजार योजन की है ॥ सू० २५ ॥

તે નરકાવાસનુ પ્રમાણુ ૪૫ લાખ યોજનનુ છે સમયક્ષેત્ર અને ઇષિત્પ્રાગ્ભારા પૃથ્વીનુ પ્રમાણુ પણ એટલુ જ છે સમય એટલે કાળ તે કાળની સત્તાથી ઉપલક્ષિત જે ક્ષેત્ર છે તેને સમયક્ષેત્ર કહે છે મનુષ્યલોક જ તે સમયક્ષેત્ર રૂપ છે "પ્રાગ્ભાર" એટલે 'પુદ્ગલનિચય" અન્ય પૃથ્વીઓ કરતાં આ પ્રાગ્ભાર જેનો અલ્પ છે એટલે કે બાહલ્યની અપેક્ષાએ આઠ યોજનનો છે, એવી તે "ઇષિત્પ્રાગ્ભારા" નામની આઠમી પૃથ્વી છે. તેનો પ્રાગ્ભાર અલ્પ કહેવાનું કારણુ એ છે કે રત્નપ્રભા આદિ જે અન્ય પૃથ્વીઓ છે, તેમનો વિસ્તાર ઇષત્પ્રાગ્ભારા કરતાં ઘણો વધારે છે જેમકે પહેલી રત્નપ્રભા પૃથ્વીનો વિસ્તાર ૧ લાખ ૮૦ હજાર યોજનનો છે, બીજી શર્કરાપ્રભાનો વિસ્તાર ૧ લાખ ૩૨ હજાર યોજનનો છે, ત્રીજી વાલુકાપ્રભાનો વિસ્તાર ૧ લાખ ૨૮ હજાર યોજનનો છે, ચોથી પંકપ્રભાનો વિસ્તાર ૧ લાખ ૨૦ હજાર યોજનનો છે, પાંચમી ધૂમપ્રભાનો વિસ્તાર ૧ લાખ ૧૮ હજાર યોજનનો છે, છઠ્ઠી તમઃપ્રભાનો વિસ્તાર ૧ લાખ ૧૬ હજાર યોજનનો છે અને સાતમી તમસ્તમપ્રભા પૃથ્વીનો વિસ્તાર ૧ લખ ૮ હજાર યોજનનો છે ॥ સૂ. ૨૫ ॥

दिशां विदिशां सदृशता सप्रतिदिक्, तेन सममतिदिक्तयाऽपि समानीत्यर्थः । तदेव दर्शयति-अप्रतिष्ठान-सप्तम्यां पृथिव्यां पञ्चानां नरकावासानां मध्यमो नरकावास १, जम्बूद्वीपो द्वीपः-सकलद्वीपमध्यमो द्वीपः २, सर्वार्थसिद्ध विमानं-पञ्चानामनुत्तरविमानानां मध्यमं विमानमिति ३। ११-तथा-' तओ ' इत्यादि सर्वं पूर्ववत्, नवरं सीमन्तका-प्रथमपृथिव्यां प्रथमप्रस्तटे वर्त्तमानो नरकावासः ९, समय -कालः, तस्सयोपलक्षित क्षेत्रं समयक्षेत्रं मनुष्यलोक इत्यर्थः, २। ईषद्-अल्पोऽन्यपृथिव्यपेक्षया योजनाष्टकबाहल्यत्वात्-प्राग्भारं -पुद्गलनि

और दिशाओं एवं विदिशाओं की सदृशता से जाननी चाहिये वे तीन वस्तुएँ इस प्रकार से हैं-एक अप्रतिष्ठान, दूसरा जम्बूद्वीप और तीसरा सर्वार्थसिद्ध विमान अर्थात् ये तीनों एक २ लाख योजन के प्रमाण वाले हैं इनके प्रत्येक के दक्षिण वामादि पार्श्वभाग समान है और प्रतिदिशा में एवं विदिशा में ये सदृश हैं अप्रतिष्ठान यह नरकावास है यह सातवीं पृथिवी में है और पांच नरकावासों के मध्य में स्थित है जम्बूद्वीप यह सकलद्वीपों के मध्य में रहा हुआ द्वीप है सर्वार्थसिद्ध विमान पांच अनुत्तर विमानों के बीच में है लोक में ये तीन समान हैं। यह समानता प्रमाण की अपेक्षा पार्श्वभागों की अपेक्षा और दिशा और विदिशाओं की सदृशता की अपेक्षा से है ऐसा जानना चाहिये वे तीन ये हैं-एक सीमन्तक नरक, समय क्षेत्र और ईषत्प्राग्भाराप्ृथिवी, प्रथमपृथिवी में प्रथमप्रस्तट में सीमतक नाम का यह नरकावास

શાઓની સમાનતાની અપેક્ષાએ સમજવી જોઈએ જે ત્રણ વસ્તુઓ નીચે પ્રમાણે છે (૧) અપ્રતિષ્ઠાન (૨) જમ્બૂદ્વીપ અને (૩) સર્વાર્થ સિદ્ધ વિમાન. એટલે કે તે ત્રણે એક એક લાખ યોજનના પ્રમાણવાળાં છે તે પ્રત્યેકના જમણાં ડાબાં આદિ પાર્શ્વભાગ સમાન છે અને પ્રતિદિશામાં અને વિદિશામાં સદૃશ (સમાન) છે અપ્રતિષ્ઠાન નામનો નરકાવાસ સાતમી નરકમાં આવેલો છે તે પાંચ નરકાવાસોની મધ્યમાં આવેલો છે જમ્બૂદ્વીપ સમસ્ત દ્વીપોની મધ્યમાં આવેલો એક દ્વીપ છે સર્વાર્થસિદ્ધ વિમાન પાંચ અનુત્તર વિમાનોની વચ્ચે રહેલું છે અપ્રતિષ્ઠાન જમ્બૂદ્વીપ અને સર્વાર્થસિદ્ધ વિમાન આ ત્રણે વસ્તુઓ લોકમાં સમાન છે તે સમાનતા પ્રમાણની અપેક્ષાએ પાર્શ્વભાગોની અપેક્ષાએ, દિશાઓની અપેક્ષાએ અને વિદિશાઓની અપેક્ષાએ છે એમ સમજવું જોઈએ. એજ પ્રમાણે નીચેના ત્રણમાં પણ સમાનતા પ્રકટ કરવામાં આવી છે-(૧) સીમન્તક નરક, (૨) સમયક્ષેત્ર અને (૩) ઈષત્પ્રાગ્ભારા પૃથ્વી. પહેલી પૃથ્વી (નરક) ના પહેલા પ્રસ્તટમાં સીમન્તક નામનો આ નરકાવાસ આવેલો છે

षयो यस्याः सा ईषत्प्राग्भारा-अष्टमीपृथिवीत्यर्थः, अस्या ईषत्प्राग्भारत्वं रत्नप्रभादिशेषपृथिवीनामशीत्यादि सहस्राधिक योजनलक्षबाहल्येन महाप्राग्भारत्वात्। एषां सीमन्तकादीनां समत्वं पञ्चचत्वारिंशद् योजनलक्षप्रमाणत्वात् ॥ सू० २५ ॥

है इस नरकावास का प्रमाण ४५ लाख योजन का है। समयक्षेत्र का प्रमाण और ईषत्प्राग्भारापृथिवी का प्रमाण भी इतना ही है समय नाम काल का है इस काल की सत्ता से उपलक्षित जो क्षेत्र है वह समय-क्षेत्र-मनुष्यलोक है प्राग्भार शब्द का अर्थ पुद्गलनिचय है अन्य पृथिवियों की अपेक्षा से यह प्राग्भार जिसका अल्प है-अर्थात् बाहल्य की अपेक्षा आठ योजन का है ऐसी वह "ईषत्प्राग्भारा" नामकी आठवीं पृथिवी है इसका प्राग्भार इसलिये अल्प कहा गया है कि रत्नप्रभा आदि जो और पृथिवियां हैं वे मोटाई में इसकी अपेक्षा बहुत अधिक हैं जैसे-प्रथमपृथिवी की मोटाई १ एक लाख अस्सी हजार योजन की है, दूसरी पृथिवी की मोटाई बाहल्य एक १ लाख बत्तीस हजार योजन की है, तीसरी की मोटाई १ एक लाख अट्ठाइस हजार योजन की है, चौथी की मोटाई एक १ लाख बीस हजार योजन की है पांचवी की मोटाई एक १ लाख अठारह हजार योजन की है छटी की मोटाई एक लाख सोलह हजार योजन की है और सातवीं की मोटाई एक लाख आठ हजार योजन की है ॥ सू०२५ ॥

તે નરકાવાસનુ પ્રમાણ ૪૫ લાખ યોજનનુ છે સમયક્ષેત્ર અને ઇષત્પ્રાગ્ભારા પૃથ્વીનુ પ્રમાણ પણ એટલુ જ છે સમય એટલે કાળ તે કાળની સત્તાથી ઉપલક્ષિત જે ક્ષેત્ર છે તેને સમયક્ષેત્ર કહે છે મનુષ્યલોક જ તે સમયક્ષેત્ર રૂપ છે "પ્રાગ્ભાર" એટલે ' પુદ્ગલનિચય " અન્ય પૃથ્વીઓ કરતાં આ પ્રાગ્ભાર જેનો અલ્પ છે એટલે કે બાહલ્યની અપેક્ષાએ આઠ યોજનનો છે, એવી તે "ઇષત્પ્રાગ્ભારા" નામની આઠમી પૃથ્વી છે તેનો પ્રાગ્ભાર અલ્પ કહેવાનું કારણ એ છે કે રત્નપ્રભા આદિ જે અન્ય પૃથ્વીઓ છે, તેમનો વિસ્તાર ઇષત્પ્રાગ્ભારા કરતાં ઘણો વધારે છે જેમકે પહેલી રત્નપ્રભા પૃથ્વીનો વિસ્તાર ૧ લાખ ૮૦ હજાર યોજનનો છે, બીજી શર્કરાપ્રભાનો વિસ્તાર ૧ લાખ ૩૨ હજાર યોજનનો છે, ત્રીજી વાલુકાપ્રભાનો વિસ્તાર ૧ લાખ ૨૮ હજાર યોજનનો છે, ચોથી પંકપ્રભાનો વિસ્તાર ૧ લાખ ૨૦ હજાર યોજનનો છે, પાંચમી ધૂમપ્રભાનો વિસ્તાર ૧ લાખ ૧૮ હજાર યોજનનો છે, છટ્ઠી તમઃપ્રભાનો વિસ્તાર ૧ લાખ ૧૬ હજાર યોજનનો છે અને સાતમી તમસ્તમપ્રભા પૃથ્વીનો વિસ્તાર ૧ લાખ ૮ હજાર યોજનનો છે ॥ સૂ. ૨૫ ॥

क्षेत्राधिकारादेव येऽप्रतिष्ठाने नरकक्षेत्रे, ये चाऽप्रतिष्ठानस्य स्थित्यादिभिः समाने सर्वार्थसिद्धमहाविमाने उत्पद्यन्ते तानाह—

मूलम्—तओ लोगे णिस्सीला णिव्वया णिग्गुणा णिम्मेरा णिप्पच्चक्खाणपोसहोववासा कालमासे कालं किच्चा अहे सत्तमाए पुढवीए अप्पइट्ठाणे णरए णेरइयत्ताए उववज्जंति, तं जहा—रायाणो, मंडलिया, जे य महारंभा कोडुंबी। तओ लोए ससीला सव्वया सगुणा समेरा सपच्चक्खाणपोसहोववासा कालमासे कालं किच्चा सव्वट्ठसिद्धे महाविमाणे देवत्ताए उववत्तारो भवंति, तं जहा रायाणो परिचत्तकामभोगा, सेणावई पसत्थारो। सू० २९॥

छाया—त्रयो लोके निश्शीला निर्व्रता निर्गुणा निर्मर्यादा निष्प्रत्याख्यानपौषधोपवासाः कालमासे कालं कृत्वा अधः सप्तम्यां पृथिव्यामप्रतिष्ठाने नरके नैरयिकतया उपपद्यन्ते, तद्यथा—राजानः, माण्डलिकाः, ये च महारम्भाः कुटुम्बिनः। त्रयो

क्षेत्र के अधिकार को लेकर ही सूत्रकार अब यह प्रकट करते हैं कि जो अप्रतिष्ठान नरकक्षेत्र में और जो स्थिति आदि की अपेक्षा से अप्रतिष्ठान के समान सर्वार्थसिद्ध महाविमान में उत्पन्न होते हैं वे ये हैं

(तओ लोगे णिस्सीला णिव्वया णिग्गुणा) इत्यादि।

सूत्रार्थ—लोकमें ये तीन पुरुष अधः सप्तमी पृथिवीमें अप्रतिष्ठान नामके नरकावास में नैरयिकरूप से उत्पन्न होते हैं क्यों कि ये शील से रहित होते हैं व्रत से रहित होते हैं मर्यादा से हीन होते हैं प्रत्याख्यान और पौषधोपवास से रहित होते हैं। अतः जब ये कालमास में काल करते हैं तब ये सप्तम नरक में अप्रतिष्ठान नाम के नरकावास में नारक की पर्याय से उत्पन्न होते हैं। वे तीन ये हैं—१ राजा, २ माण्डलिक और

ક્ષેત્રનો અધિકાર ચાલી રહ્યો છે તેથી હવે સૂત્રકાર અપ્રતિષ્ઠાન નરકક્ષેત્રમાં અને સર્વાર્થસિદ્ધ મહા વિમાનોમાં કયા કયા જીવો ઉત્પન્ન થાય છે, તે પ્રકટ કરે છે– 'तओ लोगे णिस्सीला णिव्वया णिग्गुणा' ઈત્યાદિ—

સૂત્રાર્થ—રાજા, માંડલિક અને મહારંભવાળા કુટુંબીજન આ ત્રણે અપ્રતિષ્ઠાન નામના નરકાવાસમાં નારકો રૂપે ઉત્પન્ન થાય છે કારણ કે તેઓ શીલથી રહિત વ્રતથી રહિત અને મર્યાદાથી વિહીન હોય છે તેઓ પ્રત્યાખ્યાન અને પૌષધોપવાસથી પણ રહિત હોય છે તે કારણે કાળનો અવસર આવતા કાળ

लोके सशीलाः सव्रताः सगुणाः समर्यादाः सप्रत्याख्यानपौषधोपवासाः काल-मासे कालं कृत्वा सर्वार्थसिद्धे महाविमाने देवतया उपपत्तारो भवन्ति, तद्यथा-राजानः परित्यक्तकामभोगाः,-१ सेनापतयः,-२ प्रशास्तारः ॥ सू० २६ ॥

टीका—'तओ' इत्यादि। लोके-मनुष्यलोके त्रयः-त्रिसंख्यकावक्ष्यमाणाः पुरुषाः, कीदृशाः ? निश्शीलाः-शीलरहिताः ब्रह्मचर्यपरिणामरहिताइत्यर्थः, निर्व्रताः-स्थूलप्राणातिपातविरमणाद्यनुव्रतरहिताः, निर्गुणाः-गुणेभ्यः-दर्शनचारि-

जो महारंभ वाले कुटुम्बीजन हैं वे, तथा ये तीन मनुष्यलोकमेंसे सर्वार्थ सिद्ध महाविमान में देव की पर्याय से उत्पन्न होते हैं-क्यों कि ये शील सहित होते हैं, व्रत सहित होते हैं, गुण सहित होते हैं, मर्यादा युक्त होते हैं, प्रत्याख्यान और पौषधोपवास से सहित होते हैं, इसलिये कालमास में ये जब मरते हैं तो सर्वार्थसिद्ध महाविमान में देव पर्याय से उत्पन्न हो जाते हैं। वे तीन ये हैं जिन्हों ने कामभोग छोड़ दिया है ऐसे राजा, सेनापति और अच्छे शासक।

टीकार्थ-इस सूत्रद्वारा सूत्रकार ने अप्रतिष्ठान नरक में और सर्वार्थसिद्ध महाविमान में किस परिस्थिति से युक्त हुए मनुष्य मरकर नारक रूप से और देवपर्यायरूप में उत्पन्न होते हैं यह कहा है कि नरक मे-अप्रतिष्ठान नारकावास में वे ही जीव जाते हैं जो चक्रवर्ती आदि पद पाकर ब्रह्मचर्य परिणाम से रहित होते

ધર્મ પામીને તેઓ સાતમી નરકમા આવેલા અપ્રતિષ્ઠાન નામના નરકાવાસમા નારકની પર્યાયે ઉત્પન્ન થઈ જાય છે

નીચે બતાવેલા ત્રણ જીવો મનુષ્યલોકમાંથી કાળનો અવસર આવતા કાળ કરીને સર્વાર્થસિદ્ધ નામના મહાવિમાનમાં દેવની પર્યાયે ઉત્પન્ન થાય છે (૧) જેમણે કામભોગનો પરિત્યાગ કરી દીધો છે એવા રાજા, (૨) સેનાપતિ અને (૩) સારા શાસકો તે ત્રણે ત્યા ઉત્પન્ન થવાનુ કારણ એ છે કે તેઓ શીલવાન હોય છે, વ્રતસહિત હોય છે, ગુણયુક્ત હોય છે, મર્યાદાથી યુક્ત હોય છે, અને પ્રત્યાખ્યાન તથા પૌષધોપવાસથી યુક્ત હોય છે આ પ્રકારના પુરુષો કાળનો અવસર આવે કાળધર્મ પામીને સર્વાર્થસિદ્ધ મહાવિમાનમાં દેવની પર્યાયે ઉત્પન્ન થઈ જાય છે.

ટીકાર્થ-આ સૂત્રમાં સૂત્રકારે એ વાત પ્રકટ કરી છે કે કેવાં જીવો મરીને અપ્રતિષ્ઠાન નામના સાતમી નરકના નરકાવાસમાં ઉત્પન્ન થાય છે, અને કેવા પુરુષો મરીને સર્વાર્થસિદ્ધ નામના મહાવિમાનમાં દેવની પર્યાયે ઉત્પન્ન થાય છે અપ્રતિષ્ઠાન નામના નરકાવાસમા એજ જીવો જાય છે કે જેઓ ચક્રવર્તી આદિ પદ પ્રાપ્ત કરીને બ્રહ્મચર્ય પરિણામથી રહિત હોય છે સ્થૂલ પ્રાણાતિ-

क्षेत्राधिकारादेव येऽप्रतिष्ठाने नरकक्षेत्रे, ये चाऽप्रतिष्ठानस्य स्थित्यादिभिः समाने सर्वार्थसिद्धमहाविमाने उत्पद्यन्ते तानाह—

मूलम्—तओ लोगे णिस्सीला णिव्वया णिग्गुणा णिम्मेरा णिप्पच्चक्खाणपोसहोववासा कालमासे कालं किच्चा अह सत्तमाए पुढवीए अप्पइट्ठाणे णरए णेरइयत्ताए उववज्जंति, तं जहा—रायाणो, मंडलिया, जे य महारंभा कोडुंबी । तओ लोए ससीला सव्वया सगुणा समेरा सपच्चक्खाणपोसहोववासा कालमासे कालं किच्चा सव्वट्ठसिद्धे महाविमाणे देवत्ताए उववत्तारो भवंति, तं जहा रायाणो परिचत्तकामभोगा, सेणावई पसत्थारो । सू २ २६॥

छाया—त्रयो लोके निःशीला निर्व्रता निर्गुणा निर्मर्यादा निष्प्रत्याख्यान पौषधोपवासाः कालमासे कालं कृत्वा अधः सप्तम्यां पृथिव्यामप्रतिष्ठाने नरके नैरयिकतया उत्पद्यन्ते, तद्यथा—राजानः, माण्डलिकाः, ये च महारम्भाः कुटुम्बिनः । त्रयो

क्षेत्र के अधिकार को लेकर ही सूत्रकार अब यह प्रकट करते हैं कि जो अप्रतिष्ठान नरकक्षेत्र में और जो स्थिति आदि की अपेक्षा से अप्रतिष्ठान के समान सर्वार्थसिद्ध महाविमान में उत्पन्न होते हैं वे ये हैं

(तओ लोगे णिस्सीला णिव्वया णिग्गुणा) इत्यादि ।

सूत्रार्थ—लोकमें ये तीन पुरुष अधः सप्तमी पृथिवीमें अप्रतिष्ठान नामके नरकावास में नैरयिकरूप से उत्पन्न होते हैं क्यों कि ये शील से रहित होते हैं व्रत से रहित होते हैं मर्यादा से हीन होते हैं प्रत्याख्यान और पौषधोपवास से रहित होते हैं। अतः जब ये कालमास में काल करते हैं तब ये सप्तम नरक में अप्रतिष्ठान नाम के नरकावास में नारक की पर्याय से उत्पन्न होते हैं। वे तीन ये हैं—१ राजा, २ माण्डलिक और

ક્ષેત્રનો અધિકાર ચાલી રહ્યો છે તેથી હવે સૂત્રકાર અપ્રતિષ્ઠાન નરક ક્ષેત્રમાં અને સર્વાર્થસિદ્ધ મહા વિમાનોમાં ક્યા ક્યા જીવો ઉત્પન્ન થાય છે, તે પ્રકટ કરે છે– "તઓ લોગે ણિસ્સીલા ણિવ્વયા ણિગ્ગુણા" ઇત્યાદિ—

સૂત્રાર્થ—રાજા, માંડલિક અને મહારંભવાળા કુટુંબીજન આ ત્રણે અપ્રતિષ્ઠાન નામના નરકાવાસમાં નારકો રૂપે ઉત્પન્ન થાય છે કારણ કે તેઓ શીલથી રહિત, વ્રતથી રહિત અને મર્યાદાથી વિહીન હોય છે તેઓ પ્રત્યાખ્યાન અને પૌષધોપવાસથી પણ રહિત હોય છે તે કારણે કાળનો અવસર આવતા કાળ-

वासे इत्यर्थः, नैरयिकतया—नारकत्वेन उत्पद्यन्ते। ते त्रयः के ? इत्याह—'तंजहे-' त्यादि, तद्यथा—ते यथा राजानः, चक्रवर्त्यादयः, माण्डलिकाः—मण्डलाधिपतयः, ये च पुन र्महारम्भाः—पञ्चेन्द्रियादि व्यपरोपणप्रभृतिकर्मकारिणः-पञ्चेन्द्रिय घातकेत्यर्थः ॥कुटुम्बिन इति। एतद्विपर्ययमाह—'तओ' इत्यादि। लोके त्रयः पुरुषाः, कीदृशाः ? इत्याह 'ससीला' सशीला शीलसंपन्नाः, सव्रताः प्राणातिपातविरमणाद्यणुव्रतयुक्ताः, सगुणाः—दर्शनचारित्ररूपगुणसहिताः क्षान्त्यादिरूपगुणसहिता वा, समर्यादाः—प्रतिपन्नपरिपालनादि मर्यादा संपन्नाः, धर्मनियमव्यवस्थायुक्ता वा, सप्रत्याख्यानपोषधोपवासा — पूर्वोक्तस्वरूपप्रत्याख्यानपोपधोपवाससहिताः,

मे सप्तमीत्व की निवृत्ति के लिये दिया है यदि यह पद इस पृथिवी के साथ नहीं दिया जाता तो इस तमस्तमा के ऊपर की रत्नप्रभापृथिवी भी सातवीं हो सकती है अतः यह सातवीं न मानी जावे इसीलिये इसके साथ अधः पद प्रयुक्त किया गया है। अप्रतिष्ठान यह नरकावास पांच नरकावासों के मध्य में स्थित है माण्डलिक पद से मण्डलाधिपतियों का ग्रहण हुआ है तथा जो जीव रातदिन महारम्भवाले होते हैं, -पचेन्द्रियादि जीवों के व्यपरोपण आदि कार्य में लगे रहते हैं, ऐसे जीव भी मरकर अप्रतिष्ठान नरकावास में नैरयिक की पर्याय से उत्पन्न हो जाते हैं। तथा जो जीव इन पूर्वोक्त मनुष्यों की अपेक्षा शीलसंपन्न होते हैं, प्राणातिपात विरमण आदि व्रतों के आराधक होते हैं, दर्शन चारित्ररूप गुणों से अथवा क्षान्त्यादि रूप गुणों से युक्त होते हैं प्रत्याख्यान सहित पौषधोपवास करते हैं ऐसे पुरुष कालमास में मरणकर सर्वार्थसिद्ध नामके महाविमान मे देव की पर्याय से उत्पन्न हो जाते

પ્રભા પૃથ્વીને પણ સાતમી પૃથ્વી ગણવાનો પ્રસંગ ઊભો થાય છે જો સાતમી તમસ્તમા પૃથ્વીને અધઃસપ્તમી ન કહેવામા આવે તો સૌથી ઉપરની રત્નપ્રભા પૃથ્વીને પણ સાતમી પૃથ્વી કહી શકાય છે અપ્રતિષ્ઠાન નામનો નરકાવાસ અધઃસપ્તમીના પાંચ નરકાવાસોની મધ્યમાં છે માંડલિક પદથી મંડલાધિપતિ ઓને ગ્રહણ કરવામા આવેલ છે તથા જે જીવો મહા આરંભવાળા હોય છે. પંચેન્દ્રિયાદિ જીવોના વધ આદિની પ્રવૃત્તિમાં રાતદિન રચ્યાપચ્યા રહે છે, તે જીવો પણ મરીને અપ્રતિષ્ઠાન નરકાવાસમા નારકની પર્યાયે ઉત્પન્ન થાય છે

જે જીવો શીલયુક્ત હોય છે, પ્રાણાતિપાત વિરમણ આદિ વ્રતોના આરાધક હોય છે, દર્શન ચારિત્રરૂપ ગુણોથી અથવા ક્ષાન્ત્યાદિ રૂપ ગુણોથી યુક્ત હોય છે, પ્રત્યાખ્યાનથી અને પૌષધોપવાસથી યુકત હોય છે, એવા જીવો મનુષ્યભવ સંબંધીનુ તેમનુ આયુષ્ય પૂરૂ કરીને સર્વાર્થસિદ્ધ નામના મહા[illegible]માં દેવની પર્યાયે ઉત્પન્ન થઈ જાય છે એવા [illegible] [illegible]વર્તી આદિ

प्ररूपेभ्यः क्षान्त्यादिलक्षणेभ्यो वा निष्क्रान्ताः । निर्मर्यादाः–प्रतिपन्नपरिपालनादि मर्यादा रहिता, धर्मनियमव्यवस्था रहिता वा, निष्प्रत्याख्यानपौषधोपवासाः–प्रत्याख्यान–परिहरणीयवस्तुपरित्यागः, नमस्कारसहितादि वा, पौषधः–अष्टम्यादि पर्वदिनानुष्ठेयः शास्त्रविहितोऽनशनादिव्रतविशेष, तत्रोपवसनमुपवासः पौषधोपवासः तौ प्रत्याख्यानपौषधोपवासौ निष्क्रान्तौ येषां ते तथा, तद्रहिता इत्यर्थः, एवं रूपाः पुरुषा कालमासे–कालावसरे कालं कृत्वा–मृत्वेत्यर्थः, अधःसप्तम्याम्–अधोभागस्थितायां सप्तम्यां पृथिव्यां तमस्तमायामित्यर्थः, अधाग्रहणं विना सप्तमी उपरिष्टाच्चिन्त्यमाना रत्नप्रभाऽपि स्यादित्यधोग्रहणम्, तत्र–अप्रतिष्ठाने–अप्रतिष्ठाननामके नरके–नरकावासे पञ्चानां नरकावासानां मध्यस्थिते नरक

हैं, तथा स्थूलप्राणातिपात विरमण आदि अणुव्रतों से रहित होते हैं तथा दर्शन चारित्र रूप अथवा क्षान्ति आदि रूप गुणों से रहित होते हैं तथा स्वीकृत व्रतादिकों के परिपालनादि रूप मर्यादा से रहित होते हैं अथवा धर्मनियमों की व्यवस्था से रहित होते हैं, परिहरणीयवस्तु का त्याग करना सो प्रत्याख्यान है और अष्टमी आदि पर्वदिनों में शास्त्र विहित अनशनादिव्रतों का पालन करना पौषध है, इन प्रत्याख्यान और अनशनादिव्रतोंका जो पालन नहीं करतेहैं। क्योंकि वे इसी तरह की परिस्थिति मे वर्तमान रहकर अपना जीवन समाप्त कर देते हैं। अत ऐसे चक्रवर्ती आदि पुरुष अध सप्तमी पृथिवी मे स्थित अप्रति ष्ठान नाम के नरकावास मे नैरयिक की पर्याय से उत्पन्न होते हैं सप्तमी पृथिवी के साथ जो अधः पद दिया है वह रत्नप्रभा पृथिवी

પાત વિરમણ આદિ અણુ વ્રતોથી રહિત હોય છે તથા દર્શન ચારિત્રરૂપ અથવા ક્ષમા આદિરૂપ ગુણોથી રહિત હોય છે તથા સ્વીકૃત વ્રતાદિકોના પરિપાલન આદિરૂપ મર્યાદાથી રહિત હોય છે અથવા ધર્મ નિયમોની વ્યવસ્થાથી રહિત હોય છે ત્યાગ કરવા યોગ્ય વસ્તુનો ત્યાગ કરવો તેનું નામ પ્રત્યાખ્યાન છે આઠમ આદિ પર્વદિનોમાં શાસ્ત્રવિહિત અનશન આદિનું પાલન કરવું તેનું નામ પૌષધ છે ઉપર્યુક્ત જીવો તે પ્રત્યાખ્યાન અને અનશનાદિવ્રતોનું પાલન કરતા નથી, કારણ કે તેઓ કામભોગોમાં જ રચ્યાપચ્યા રહીને પોતાનું આખુ જીવન સમાપ્ત કરી નાખે છે તેથી એવાં ચક્રવર્તી આદિ પુરુષો અધઃસપ્તમી પૃથ્વીમાં આવેલા અપ્રતિષ્ઠાન નામના નરકાવાસમાં નારકની પર્યાયે ઉત્પન્ન થઈ જાય છે અહીં સાતમી પૃથ્વીની સાથે 'અધઃ' પદનો પ્રયોગ કરવાનું કારણ એ છે કે જો અહીં આ 'અધઃ' પદનો પ્રયોગ ન કરવામાં આવે તો રત્ન

वासे इत्यर्थः, नैरयिकतया–नारकत्वेन उत्पद्यन्ते। ते त्रयः के ? इत्याह–' तंजहे' त्यादि, तद्यथा–ते यथा राजानः, चक्रवर्त्यादयः, माण्डलिकाः–मण्डलाधिपतयः, ये च पुन महारम्भाः–पञ्चेन्द्रियादि व्यपरोपणप्रभृतिकर्मकारिणः-पञ्चेन्द्रियघातकेत्यर्थः॥कुटुम्बिन इति। एतद्विपर्ययमाह– तओ' इत्यादि। लोके त्रयः पुरुषाः, कीदृशाः ? इत्याह 'समीला' सशीलाः शीलसपन्नाः, सव्रताः प्राणातिपातविरमणाद्यणुव्रतयुक्ताः, सगुणाः–दर्शनचारित्ररूपगुणसहिताः क्षान्त्यादिरूपगुणसहिता वा, समर्यादाः–प्रतिपन्नपरिपालनादि मर्यादा संपन्नाः, धर्मनियमव्यवस्थायुक्ता वा, सप्रत्याख्यानपोपधोपवासा – पूर्वोक्तस्वरूपप्रत्याख्यानपोपधोपवाससहिताः,

---

में सप्तमीत्व की निवृत्ति के लिये दिया है यदि यह पद इस पृथिवी के साथ नहीं दिया जाता तो इस तमस्तमा के ऊपर की रत्नप्रभापृथिवी भी सातवीं हो सकती है अतः वह सातवीं न मानी जावे इसीलिये इसके साथ अधः पद प्रयुक्त किया गया है। अप्रतिष्ठान यह नरकावास पांच नरकावासों के मध्य में स्थित है माण्डलिक पद से मण्डलाधिपतियों का ग्रहण हुआ है तथा जो जीव रातदिन महारंभवाले होते हैं, –पचेन्द्रियादि जीवों के व्यपरोपण आदि कार्य से लगे रहते हैं, ऐसे जीव भी मरकर अप्रतिष्ठान नरकावास में नैरयिक की पर्याय से उत्पन्न हो जाते हैं। तथा जो जीव इन पूर्वोक्त मनुष्यों की अपेक्षा शीलसंपन्न होते हैं, प्राणातिपात विरमण आदि व्रतों के आराधक होते हैं, दर्शन चारित्ररूप गुणों से अथवा क्षान्त्यादि रूप गुणों से युक्त होते हैं प्रत्याख्यान सहित पौषधोपवास करते हैं ऐसे पुरुष कालमास मे मरणकर सर्वार्थसिद्ध नामके महाविमान मे देव की पर्याय से उत्पन्न हो जाते

પ્રભા પૃથ્વીને પણ સાતમી પૃથ્વી ગણવાનો પ્રસંગ ઊભો થાય છે જો સાતમી તમસ્તમા પૃથ્વીને અધઃસપ્તમી ન કહેવામાં આવે તો સૌથી ઉપરની રત્નપ્રભા પૃથ્વીને પણ સાતમી પૃથ્વી કહી શકાય છે અપ્રતિષ્ઠાન નામનો નરકાવાસ અધઃસપ્તમીના પાંચ નરકાવાસોની મધ્યમા છે માંડલિક પદથી મંડલાધિપતિઓને ગ્રહણ કરવામા આવેલ છે તથા જે જીવો મહા આરંભવાળા હેય છે. પંચેન્દ્રિયાદિ જીવોના વધ આદિની પ્રવૃત્તિમાં રાતદિન રચ્યાપચ્યા રહે છે, તે જીવો પણ મરીને અપ્રતિષ્ઠાન નરકાવાસમા નારકની પર્યાયે ઉત્પન્ન થાય છે

જે જીવો શીલયુક્ત હોય છે, પ્રાણાતિપાત વિરમણ આદિ વ્રતોના આરાધક હોય છે, દર્શન ચારિત્રરૂપ ગુણોથી અથવા ક્ષાન્ત્યાદિ રૂપ ગુણોથી યુક્ત હોય છે, પ્રત્યાખ્યાનથી અને પૌષધોપવાસથી યુક્ત હોય છે, એવા જીવો મનુષ્યભવ સંબંધીનું તેમનું આયુષ્ય પૂરૂં કરીને સર્વાર્થસિદ્ધ નામના મહા વિમાનમા દેવની પર્યાયે ઉત્પન્ન થઈ જાય છે એવાં જીવો ચક્રવર્તી આદિ

१, तथा पूर्वाषाढासु माघकृष्ण द्वादश्यामुत्पन्नः २, तस्मिन्नेव नक्षत्रे तस्मिन्नेव मासे तिथौ च माघकृष्णद्वादश्यामेव निष्क्रान्तः ३, तस्मिन्नेव नक्षत्रे पौषकृष्णचतुर्दश्यां केवलज्ञान प्राप्तः ४, तस्मिन्नेव नक्षत्रे च वैशाखकृष्णद्वितीयायां निर्वृतः ।५। तथा-विमलस्य त्रयोदशतीर्थकरस्य च्यवनादि-पञ्चकल्याणकनक्षत्रम् उत्तरा भाद्रपदाः । अनन्तजिनस्य चतुर्दशतीर्थकरस्य च्यवनादि पञ्चकल्याणकनक्षत्र रेवती भवति । धर्मनाथस्य पञ्च कल्याणकनक्षत्र-पुष्यः । शान्तिनाथस्य भरणी । कुन्थुनाथस्य कृत्तिका । अरनाथस्य रेवत्यः । सुव्रतनाथस्य श्रवणः । नमिनाथस्य

देवीके गर्भमें आये पूर्वाषाढा नक्षत्रमेंही ये माघकृष्ण द्वादशीके दिन उत्पन्न हुए उसी नक्षत्रमें ये माघकृष्ण द्वादशीके दिनही दीक्षित हुए उसी नक्षत्रमें पौषकृष्ण चतुर्दशीके दिनही उन्होंने केवलवरज्ञान दर्शन प्राप्त किये और उसी नक्षत्रमेंही उन्होंने निर्वाणपद वैशाख कृष्ण द्वितीयाके दिन प्राप्त किया है। तथा १३ वे तीर्थकर विमलनाथ भगवान्‌के पांचों कल्याणकोंमें उत्तराभाद्रपदा नक्षत्र था तथा १४ वे तीर्थकर अनन्त जिनके भी पांचों कल्याणक रेवती नक्षत्रमें हुए हैं, धर्मनाथ के भी पांचो कल्याणक पुष्य नक्षत्र में हुए हैं शान्तिनाथके पांचों कल्याणक भरणी नक्षत्रमें हुए हैं। कुन्थुनाथके पांचों कल्याणक कृत्तिका नक्षत्रमें हुए हैं, अरनाथ भगवान्‌के पांचों कल्याणक रेवती नक्षत्रमें हुए हैं, सुव्रतनाथ भगवान्‌के पांचों कल्याणक श्रवण नक्षत्रमें हुए हैं, नमिनाथ भगवान्‌के पांचों कल्याणक अश्विनी नक्षत्रमें

ગર્ભમાં પૂર્વાષાઢા નક્ષત્રમાં જ ઉત્પન્ન થયા હતા એ જ નક્ષત્રમાં મહા વદી બારશે તેમનો જન્મ થયો હતો. એ જ નક્ષત્રમાં મહા વદી બારશે તેમણે પ્રવ્રજ્યા અંગીકાર કરી હતી. એ જ નક્ષત્રમાં પોષ વદી ચૌદશે તેમણે કેવળ વર જ્ઞાનદર્શન પ્રાપ્ત કર્યા હતાં અને એ જ નક્ષત્રમાં વૈશાખ વદ બીજે તેઓ નિર્વાણ પામ્યાં હતાં.

૧૩ માં તીર્થંકર વિમલનાથ ભગવાનના પાંચે કલ્યાણકો ઉત્તરાભાદ્રપદા નક્ષત્રમાં જ થયાં હતાં ૧૪ મા તીર્થંકર અનંત જિનેશ્વરના પાંચ કલ્યાણકો રેવતી નક્ષત્રમાં થયાં હતાં ધર્મનાથ જિનેશ્વરના પાંચે કલ્યાણકો પુષ્ય નક્ષત્રમાં થયાં હતાં. શાન્તિનાથ ભગવાનના પાંચે કલ્યાણકો ભરણી નક્ષત્રમાં થયા હતાં અરનાથ ભગવાનના પાંચે કલ્યાણકો રેવતી નક્ષત્રમાં થયા હતાં સુવ્રતનાથ ભગવાનના પાંચે કલ્યાણકો શ્રવણ નક્ષત્રમાં થયા હતાં હતાં નમિનાથ ભગવાનના પાંચે કલ્યાણકો અશ્વિની નક્ષત્રમાં થયા હતાં. નેમિનાથના પાંચે કલ્યાણકો ચિત્રા નક્ષત્રમાં થયા હતાં.

अश्विनी। नेमिनाथस्य चित्रा। पार्श्वनाथस्य विशाखाः। तथा—वीरः=अन्तिमतीर्थंकरो वर्द्धमानस्वामी पञ्चक हस्तोत्तरः—हस्तोपलक्षिता उत्तराः—हस्तोत्तराः, उत्तराफाल्गुन्य इत्यर्थः, च्यवनादि पञ्चकल्याणकत्वेन पञ्चकाः=पञ्चसख्यका हस्तोत्तरा यस्य स तथाऽभवत्। भगवतो महावीरस्य च्यवनादि पञ्चकल्याणकमभिलापपूर्वकमाह—'समणे भगवं.' इत्यादिना। श्रमणो भगवान् महावीरः पञ्चहस्तोत्तरोऽभवत्। यथा पञ्चहस्तोत्तरोऽभवत्तथाह—'हत्थुत्तराहिं' इत्यादिना। हस्तोत्तरासु च्युत, च्युत्वा गर्भेऽवतीर्णः १, तस्मिन्नेव नक्षत्रे गर्भात्=ब्राह्मणीगर्भात् गर्भान्तरं=क्षत्रियागर्भं संहृतः=नीतः शक्राज्ञया हरिणैगमेषिदेवेन २। एवं जन्म ३ प्रव्रज्या ४ केवलज्ञानप्राप्तिषु ५ हस्तोत्तरा बोध्याः। निर्वाणं तु भगवतः स्वाति नक्षत्रे कार्तिकामावस्यां बोध्यम्॥ सू० २४॥

इति श्री विश्वविख्यात—जगद्वल्लभ—प्रसिद्धवाचक—पञ्चदशभाषाकलितललितकलापालापक—प्रविशुद्धगद्यपद्यनैकग्रन्थनिर्मापक—वादिमानमर्दक — श्रीशाहूछत्रपति कोल्हापुरराजप्रदत्त 'जैनशास्त्राचार्य' पदभूषित—कोल्हापुरराजगुरु बालब्रह्मचारी- जैनाचार्य — जैनधर्मदिवाकर-पूज्यश्री — घासीलालव्रतिविरचितायां 'स्थानाङ्गसूत्रस्य' सुधाख्यायां व्याख्यायां पञ्चमस्थानस्य प्रथमोद्देशः सम्पूर्णः॥ ५-१॥

हुए हैं। नेमिनाथके चित्रा नक्षत्रमें पांचों कल्याणक हुए है। पार्श्वनाथके पांचों कल्याणक विशाखा नक्षत्रमें हुए हैं, तथा अन्तिम तीर्थंकर वीर प्रभुके पांचों कल्याणक उत्तराफाल्गुनी नक्षत्रमें हुए हैं। "समणे भगवं महावीरे" इत्यादि सूत्रका अर्थ स्पष्ट है—यही सब विषय इन गाथाओं द्वारा प्रकट किया गया है—"पउमप्पहस्स चित्ता" इत्यादि।

वीरनाथ भगवान् हस्तोत्तरा नक्षत्रमेंही—उत्तरा फाल्गुनी नक्षत्रमेंही चवकर गर्भमें आये, उसी नक्षत्रमें वे ब्राह्मणीके गर्भसे क्षत्रियाणीके गर्भमें रखे गये यह कार्य इन्द्रकी आज्ञासे हरिणैगमेषी देवने किया भगवान्के

પાર્શ્વનાથ ભગવાનના પાંચે કલ્યાણકો વિશાખા નક્ષત્રમાં થયા હતાં તથા અન્તિમ તીર્થંકર મહાવીર પ્રભુના પાંચે કલ્યાણકો ઉત્તરા ફાલ્ગુની નક્ષત્રમાં થયા હતાં. એ જ વાત નીચેની ગાથાઓ દ્વારા સ્પષ્ટ કરવામાં આવી છે-"સમણે ભગવં મહાવીરે" ઇત્યાદિ. આ ગાથાઓનો અર્થ સુગમ છે

"પઉમપ્પહસ્સ ચિત્તા" ઇત્યાદિ—

વીરનાથ ભગવાન હસ્તોત્તરા નક્ષત્રમાં જ—ઉત્તરા ફાલ્ગુની નક્ષત્રમાં જ ચ્યવીને માતાના ગર્ભમાં આવ્યા હતા. એ જ નક્ષત્રમાં તેમને બ્રાહ્મણીના ગર્ભમાંથી ત્રિશલા ક્ષત્રિયાણીના ગર્ભમાં મૂકવામાં આવ્યા હતા. તે કાર્ય ઇન્દ્રની આજ્ઞાથી હરિણૈગમેષી દેવે કર્યું હતું. ભગવાનના જન્મ સમયે, ભગ-

जन्मके समय प्रव्रज्याके समय केवलज्ञान प्राप्तिके समय हस्तोत्तरा नक्षत्र था, परन्तु निर्वाण प्राप्तिके समय स्वाति नक्षत्र था कार्तिक वदी अमावास्याके दिन इन्होंने मुक्ति प्राप्त की है ॥सू० २४॥

श्री जैनाचार्य श्री घासीलालजी महाराज रचित 'स्थानाङ्गसूत्र" की सुधा नामकी व्याख्याके पांचवे स्थानका पहला उद्देशा समाप्त ॥ ५-१ ॥

વાનની પ્રવ્રજ્યા સમયે અને ભગવાનને જ્યારે કેવળજ્ઞાન પ્રાપ્ત થયું ત્યારે પણ હસ્તોત્તરા નક્ષત્ર જ ચાલતું હતું પણ તેમના નિર્વાણકાળે સ્વાતિ નક્ષત્ર ચાલતું હતું કાર્તિક વદી અમાવાસ્યાને દિવસે તેમણે નિર્વાણ પ્રાપ્ત કર્યું હતું ॥ સૂ. ૨૪ ॥

શ્રી જૈનાચાર્ય શ્રી ઘાસીલાલજી મહારાજ રચિત "સ્થાનાંગસૂત્ર" ની સુધા નામની વ્યાખ્યાના પાંચમા સ્થાનનો પ્રથમ ઉદ્દેશક સમાપ્ત ॥ ૫-૧